CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

12.3

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ श्रीः ॥

कर्मकलाप ।

जन्मसे लेकर मरणपर्यन्त गृहस्थोपयोगी समस्त संस्कारों, ग्रहाश्लेषादिशान्तियों, देवप्रतिष्ठागृहारम्भादिकर्मों, आरामजलाशयोत्सर्गों, एवं महामृत्युञ्जयानुष्ठान की विधियों का सामवेद तथा यजुर्वेदकी रीतिके अनुसार अलग अलग विशद संग्रह और गृहकार्यापेक्षित सम्पूर्ण जोतिषका सविस्तर निरूपण ।

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यदण्डीस्वामी
सहजानन्दसरस्वती, काशी द्वारा
रचित तथा प्रकाशित ।

"स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः ।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः ॥" (मनु. २।२८)।

बी. एल्. पावगी द्वारा हितचिन्तक प्रेस, रामघाट,
बनारस सिटी में मुद्रित ।

प्रथमावृत्ति २००० } सम्वत् १९८३ { मूल्य सवा चार रुपये। डाक व्यय अधिक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding by IKS-MoE Grant-2

धन्यवाद ।

इस ग्रन्थ के निर्माण में जिन प्राचीन एवं अर्वाचीन ग्रन्थों से हमें सहायता मिली है, उनके तो हम ऋणी हैंही । परन्तु तैयार होने पर भी, यदि आर्थिक सहायता न मिलती तो, इसका छपना असंभव था । अतः जिन महानुभावों ने इसके प्रकाशनार्थ किसी न किसी रूप में आर्थिक सहायता की है, उनके हम हृदय से कृतज्ञ हैं । इसलिये उन्हें जो भी धन्यवाद दिया जाय, थोड़ाही है । इस सम्बन्ध में सबसे प्रथम उल्लेखनीय हैं (१) श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यदण्डी स्वामी परमानन्दसरस्वती महाराज । इस जराजीर्ण एवं व्याधि-ग्रस्त अवस्था में शीत, आतप, वर्षा का विचार न कर एतदर्थ धनसंग्रह में उनका अथक परिश्रम अनुकरणीय है । उनके बाद धन्य-वाद के पात्र ये महानुभाव हैं, (२) श्रीयुत पं. जीवूचौ०, बहादुर-नगर (दियारा), मुंगेर । (३) रंगून के कतिपय उत्साही सज्जन पं. वेनीमाधवराय के द्वारा (४) ढकाइचकलां, शाहाबाद के भूमिहार ब्राह्मण । (५) सिमरी, शाहाबाद की चारों पट्टी और दूधीपट्टी के दो चार भूमिहार ब्राह्मण पं. रामदर्शपांडे के द्वारा । (६) गाजी-पुर के भूमिहार ब्राह्मण वकील, मुखतार आदि । (७) सुहवल, गाजीपुर के भूमिहार ब्राह्मण । (८) श्रीयुत टिप्पण प्रसाद सिंह, भवानीटोला, पटना । (९) वैरिया आदि बलिया के के कई ग्रामों के भूमिहार ब्राह्मण पं. शिवशंकर पांडे और श्रीजगदेव राय दारोगा के द्वारा (१०) बलिया के श्रीराजनारायणराय मुखतार प्रभृति तीन चार सज्जन । (११) श्रीयुत वेनीप्रसाद सिंह (१२) श्रीयुत लाल बहादुर सिंह । (१३) श्रीयुत अर्जुन सिंह, सरायगोवर्धन, काशी । (१४) श्रीयुत बटुक प्रसादसिंह, नन्देसर, काशी । (१५) श्रीयुत नरेन्द्रनाथ सिंह, दहिया, मेंहदौली, मुंगेर । (१६) पं. रामदासराय, प्रोफेसर, मुजफ्फरपुर कालिज । (१७) लिलकर, सीसोटांड़, बलिया के कतिपय भूमिहार ब्राह्मण । (१८) बरिसवन, आरा के भूमिहार ब्राह्मण । (१९) पं. रामाश्रयपाण्डे, हेमदापुर, आरा । (२०) पं. सूर्यनारायण राय, सब इन्स्पेक्टर, कलकत्ता के द्वारा वहां के कुछ लोग । (२१) पं. रामनारायणराय, रेकर्डकीपर, काशी । (२२) पं. आदित्यप्रसादराय, नारायणपुर, बलिया । (२३) श्रीयुत रामकिशोर शर्म्मा, औसानगंज, काशी ।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi-Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

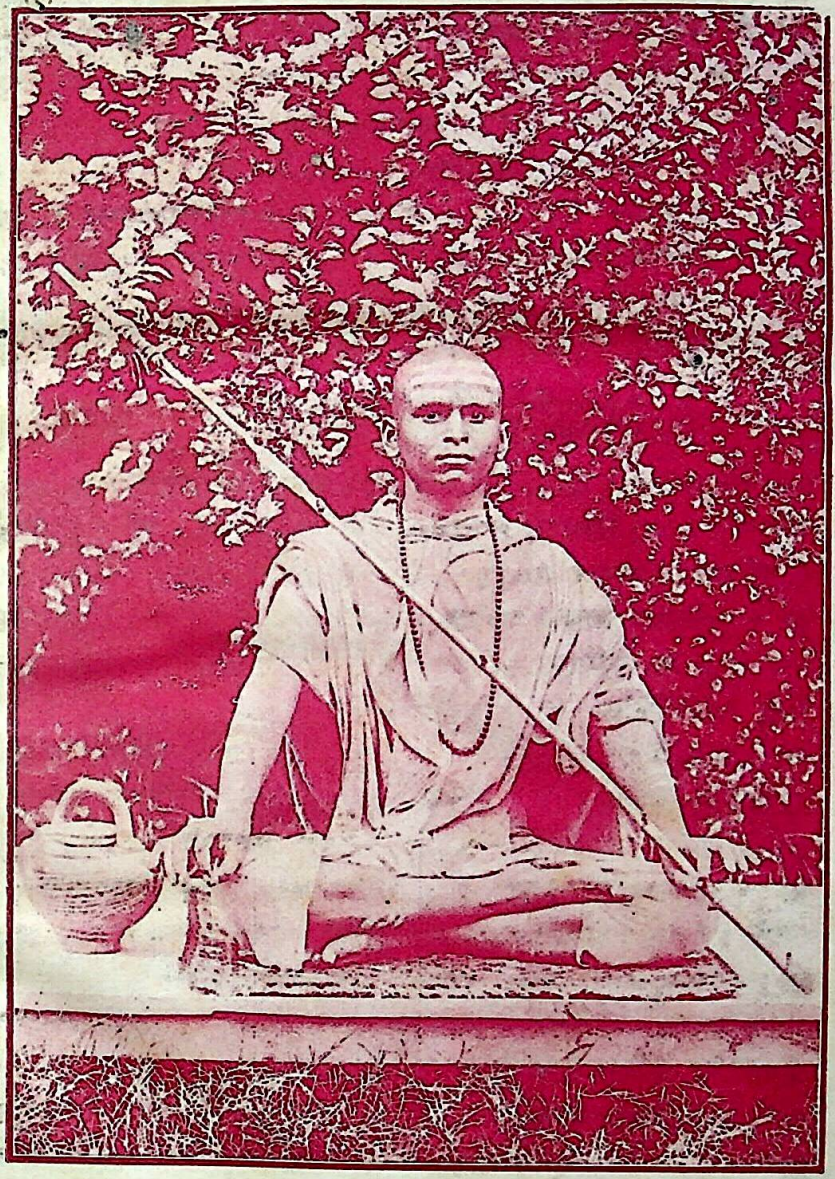

श्रीमत्परमहंसपरिव्राजकाचार्यदण्डिस्वामी
श्रीसहजानन्दसरस्वती ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ श्रीः ॥

विषयानुक्रमणिका ।

विषय	पृष्ठ
प्रस्तावना ।	
धर्म कर्म के नाशका कारण	क
शूद्रोंका वेदज्ञान, उनका संस्कृतज्ञान	ख
संस्कृत का ह्रास, पूर्व की बात	,,
त्रैवर्णिक को होमका अधिकार	,,
क्षत्रियादि की आचार्यता	ग
ब्राह्मणों में पुरोहित का अभाव	,,
पुरोहितों की दशा	घ
वर्तमान पद्धतियों की त्रुटियां	,,
इस ग्रंथ की उपयोगिता	ङ
इसके अधिकारी	च
पहला प्रकरण ।	
परिभाषा प्रकरणकी आवश्यकता	१
सामवेदी और यजुर्वेदी	,,
सामवेदी और छान्दोग्य	२
वाजसनेयी और तैत्तिरीय, शाखायें	,,
संहिता, ब्राह्मण, कौथुमीय	,,
माध्यन्दिनीय	,,
सामवेदीगोत्र, कौशिक गोत्र का वेद	३
कर्म के भेद, नित्य, प्रायश्चित्त कर्म	४
नैमित्तिक, काम्य, श्रौत, स्मार्त्त	,,
वैतानिक और गृह्य, आवसथ्य	,,
शालाग्नि, औपासन, वैवाहिक	,,
आधान का समय	,,
गृह्य, स्मार्त्त, श्रौत का अर्थ	,,
वैतानिक त्रेता, अग्न्याधेय, आहवनीय	६
गार्हपत्य, दक्षिणाग्नि, ब्रह्मौदन	७
सभ्य और अन्वाहार्य	७
स्थाली अग्नि, अन्वाहार्य का अर्थ	८
ब्राह्मण तर्पण, अग्निहोत्र	,,
औपासन या स्मार्त्त होम	,,
दर्श पूर्णमास और पक्षादिकर्म	,,
मण्डप प्रयोजन	,,
मण्डप कैसा हो, त्रिविध मण्डप	९
हाथ का परिमाण और जौ	१०
विस्तार, वृद्धि, आय ज्ञान का नियम	,,
मण्डप के द्वार	,,
तोरण और मण्डप निर्माण विधि	११
ध्वजा और पताका	१४
महाध्वजा और लोकपालों के रंग	,,
उनके नाम उनके वाहन	१५
ध्वजा पताकी विधि	,,
मण्डप का किनारा, बलिदान विचार	१६
गणेश, भूमि, कूर्म, अनन्त पूजा	,,
पूजा किस पर करे	,,
प्रधानवेदी, नवग्रहवेदी, मातृकावेदी	१७
वास्तुवेदी, क्षेत्रपालवेदी,	,,
मेखला, वप्र और कुण्डसरण	,,
निर्माणविधि, चारों वर्णों के कुंड	१८
मेखला के पक्ष, कुंड की गहराई	१९
कंठ और कंठ मेखला संबन्ध	२०
नाभि और योनि	२१
परिधि और मेखला श्रृङ्गार	२२
स्थण्डिल, योनिका स्थान	२३
कुंड की लम्बाई चौड़ाई	,,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding: KS-NMM Grant 2

विषय	पृष्ठ
क्षेत्रफल, वर्ग और वर्गफल	२४
तिकोना आदि कुंड निर्माण	२६
नाल, वरण, जापक और द्वारपाल	२७
ऋत्विक का अर्थ	,,
तुलादान की विशेषता	२८
वरुण कलश, सर्वतोभद्र का स्थान	,,
ग्रहवेदी के देवता, मातृका का रंग	,,
उनकी संख्या, दुर्गा और श्री	,,
गणेश पूजा, वास्तुचक्र	,,
क्षेत्रपाल पूजा और बलि	,,
वास्तु, वारुण, आश्लेषादि मण्डल	२९
महागणपति का स्थान, स्वस्तिक	,,
देवावाहन के पदार्थ	,,
पुरुष (पोरिसा), हाथ और अंगुल	३०
रत्नि अरत्नि, किष्कु और धनुर्दंड	,,
वितस्ति, प्रादेश, ताल, गोकर्ण,	,,
तर्जनी, मध्यमा आदि	,,
जौ, यूका, लिक्षा, बालाग्र,	,,
रथरेणु, परिमाणु निवर्त्तन, गोचर्म	३१
कट्ठाकी लम्बाई, कुडव, काष्ठा, धरण	,,
रुपक, पुराण, कर्ष, कार्षापण	,,
सुवर्ण, पल, निष्क, दीनार	,,
प्रसृति, कुडव, प्रस्थ, आढक	३२
द्रोण, कुंभ, खारी, कार्षापण के भेद	,,
वृष और अनड्वान के मूल्य	,,
धेनु, अश्व, हिरण्य, वस्त्र का मूल्य	,,
बकरी भेड़, हाथी, दोला, रथ, घर	,,
काकिणी, पण के भेद,	,,
पवित्र, यज्ञिय कुश, उसकी विधि	३३
उत्पवन, प्रोक्षणी और प्रणीतापात्र	३४
ब्रह्मग्रन्थि और विष्णुग्रन्थि	,,
पवित्रकी लम्बाई	३५
ब्रह्मयज्ञ, विष्टर, पिञ्जूली	,,
हः और परिस्तरण	,,

विषय	पृष्ठ
बर्हिःहोम और यज्ञवास्तु	३५
परिस्तरण कुशसंख्या, उनकी लम्बाई	३६
परिस्तरणविधि, सम्मार्जनकुश,	,,
उपयमनकुश, इध्म और समिध	,,
मोटक, कुशब्रह्मा या कुशबटु	३७
प्रोक्षण, अवोक्षण, अभ्युक्षण, पर्युक्षण	,,
परिसमूहन, कुशंडिका या कुशकंडिका	३८
अहत शब्दार्थ, यज्ञोपवीत विचार	,,
उपवीतके भेद, जनेऊका प्रतिनिधि	३९
निवीत, प्राचीनावीत	,,
सव्य और अपसव्य	,,
देव, पितृकार्य, ऋषिकर्म विधि	,,
देव, पितृ, प्रजापति, ब्रह्मतीर्थ	,,
यज्ञोपवीत बनाने की विधि	,,
शिखा बांधने का नियम	४०
उसके खोलने के अवसर	,,
शिखा का प्रतिनिधि	,,
गमछे के अभाव में	,,
संस्कार संख्या और उनके नाम	,,
उनकी व्याख्या	४१
पाकयज्ञ, अष्टका, पार्वण, एकोद्दिष्ट	४२
श्रावणी, उपाकर्म, आश्वयुजी आदि	,,
हविर्यज्ञ, सोमयज्ञ	,,
संस्कार का अर्थ, ब्राह्म, दैव संस्कार	४३
पञ्चोपचार, षोड़शोपचार	,,
दस, अट्ठाईस उपचार	,,
पञ्चोपचार भेद, षोडशोपचार स्वरुप	,,
आचमन का अवसर	४४
प्रदक्षिणा और दक्षिणा	,,
पदार्थ प्रति विधि, अक्षत का अर्थ	,,
नैवेद्यार्पण विधि	,,
पाद्य और अर्घ्यका अर्थ	,,
मधुपर्क, उसके अधिकारी	,,
मधुपर्क पदार्थ	४५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
दधि, मधु के प्रतिनिधि	४५
अष्टांग अर्घ	,,
दक्षिण, वामपादप्रक्षालन	,,
अर्घ्यपात्र, पञ्चगव्य	,,
पञ्चगव्यकी विधि	४६
कुम्हारका वर्त्तन आसुरी	,,
अभिमंत्रण का अर्थ, पञ्चामृत	,,
ब्रह्माका वरण, चार वेदों केऋत्विक	४७
ब्रह्मा चार वेदों का ज्ञाता	,,
तीन वेद या त्रयी	,,
ऋक्, यजुः, सामके अर्थ	,,
चतुर्मुख का अर्थ	,,
ब्रह्मग्रन्थिविमोक, प्रणीताविमोक	४८
पूर्णपात्र का परिमाण, वा पदार्थ	,,
अन्वारम्भ	,,
अध्वर्यु और होता का काम	४९
याज्या और अनुवाक्या	,,
त्यागवाक्य उसे कब बोले	,,
उद्गाता और आचार्य का काम	,,
ऋत्विक् शब्दार्थ, प्रधानसंकल्प	५०
महागणपति पूजा	,,
स्वस्ति, पुण्याहवाचन का समय	५१
स्वस्तिवाचन पुण्याहवाचनका अर्थ	,,
आघार और आज्यभाग	५२
प्रायश्चित्त आहुति, पञ्चवारुणी	,,
स्विष्टकृत का अर्थ	,,
संस्रव और संस्रवप्राशन	५३
सप्तधान्य, बीजाष्टक, सर्वौषधि	,,
सप्त और दशमृत्तिका, पञ्च पल्लव	,,
पञ्चरत्न, प्रतिनिधि, अधिवासन	५४
पत्नी बायें, दहिने, ग्रन्थिबन्धन	,,
किस देव को क्या न चढ़ावे	,,
फूलपत्ती कैसे चढ़ावे	,,
बिल्वपत्र कैसे चढ़ावे	,,
साधारण दिशायें	५४
होम के साधारण पदार्थ	,,
देवता, मंत्र और अर्घ्यस्थापन	,,
कौतुक और ककण आचमन के अवसर	५५
आसुरी धोती, नीवीबंधन	,,
धूप और दशांग	,,
कुश के अभाव में	५६
प्रतिनिधि का अर्थ, हाथघुटने के भीतर	,,
आहुति देने की विधि, आहुतिप्रमाण	,,
हविष्यपदार्थ, कृत, अकृत, कृताकृत	,,
यज्ञिय वृक्ष, अयज्ञिय काष्ठ	,,
मुख से फूंकना, आहुति योग्य अग्नि	,,
प्रधान घी, उसका प्रतिनिधि	५७
आज्य, उसका प्रतिनिधि	,,
यज्ञ से पूर्व खाने योग्य	,,
पर्यग्निकरण, चरु और पयसि चरु	,,
स्रुव कैसे पकड़े, शंखमुद्रा	,,
अग्निभेद, अग्निजिह्वा, अशुद्धकुश	,,
पदार्थासादन, उसकी विधि	५८
काण्डानुसमय, पदार्थानुसमय	,,
प्रणव और उसका उच्चारण	,,
ऋषि, छन्द, देवता, विनियोग	५९
निघण्टु और निरुक्त	६०
गायत्री के २४ अक्षर	,,
सावित्री शब्द का अर्थ	,,
वेदांगपदार्थ, छ वेदांगोंके स्वरूप	६१
कल्पसूत्र, ऊह्य, श्रौत, गृह्य, स्मार्त्तसूत्र	६२
उपवेद	६३
वसोर्द्धारा पूजा	६४
वृद्धि या अभ्युदय श्राद्ध	,,
नान्दीमुख नाम क्यों	,,
वृद्धिश्राद्ध की विशेषता	,,
क्षणदान, छ और नौ पिण्ड	६५
ब्राह्मण का प्रतिनिधि	,,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding by IKS-MoE Grant-2

विषय	पृष्ठ
अपिण्ड श्राद्ध के भेद	६६
आम और हिरण्य श्राद्ध	,,
सांकल्पिक विधि	,,
पुरोहित और पूज्य	,,
अग्रिहीं पुरोहित है	,,
पुरोहित का शब्दार्थ	,,
सगोत्र को दान, दानपात्र	६७
नाना, मामा दानपात्र	६८
मनुकी सम्मति	,,
भाई, दायाद को दे याज्ञवल्क्य	६९
ब्राह्मण परस्पर पूजें, संवर्त्त स्मृति	,,
पुत्रादिस्वजन को दे, अत्रिसंहिता	,,
माता, पिता, भाई को दे	७०
व्यासस्मृति, धर्मारण्यमाहात्म्य	,,
सगोत्रदान में युक्तियां	७१
प्राचीन व्यवहार, कौन ब्राह्मण श्रेष्ठ है	,,
पुरोहित और यजमान के व्यवहार	,,
पूजा, प्रणाम, परिभाषा अवश्य पढ़े	७२
आगे का दिग्दर्शन	,,

दूसरा प्रकरण ।

विषय	पृष्ठ
मण्डपपूजा, आचार्य की आवश्यकता	७३
आचार्यवरणविधि	७४
मण्डपप्रवेशविधि	७६
कर्मापवर्ग (रक्षा) दीप	,,
अर्घपात्र की स्थापना, कूष्माण्ड मंत्र	,,
भूतशुद्धि, सूत से मण्डपघेरना	७७
पञ्चगव्य के मंत्र	७८
उल्ले मण्डप में छिड़कना	७९
पञ्चगव्य पान मंत्र	,,
रक्षादीपपूजा, मण्डपपूजा संकल्प	,,
मण्डपपूजा विस्तार	८०
जापक, द्वारपाल वरण	८१
वास्तु पूजा	९२
वास्तु वेदी निर्माण	९३
वास्तुपुरुषपूजा, क्षेत्रपाल पूजा	१०२
महागणपति पूजा	१०३
गौरी पूजा	१०६
प्रधान संकल्प	१०८
स्वस्तिवाचन	१०९
पुण्याहवाचन, कलशस्थापन	१११
सामवेदियों का विशेष	१११
यजुर्वेदी आशीर्वाद	११६
सामवेदी आशीर्वाद	११७
अभिषेक	१२३
मातृकापूजा	१२५
प्रतिष्ठामंत्र यजुर्वेदी	१२६
,, सामवेदी	१२७
वसोर्द्धारा, घृतमातृका पूजा	१२८
स्थलमातृका पूजा	१२९
नान्दीश्राद्ध के अधिकारी	१३०
एक बार के कर्म	,,
किनका करे, नान्दीश्राद्ध कब न हो	१३१
श्राद्ध के समय, दोनों वेदों का विशेष	१३२
प्रयोग	१३३
'देवताभ्यः' मंत्र के रूप	१३५
आम या हिरण्य श्राद्ध	१४०
प्रधान कलश स्थापन	१४२
नवग्रह मण्डल	१४३
सर्वतोभद्रमण्डल	१४४
यजुर्वेदी प्रधान कलश	१४५
सामवेदी प्रधान कलश	१४९
दोनों की समान बातें	१५०
ग्रहपूजा	१५२
लोकपालावाहन	१५७
दशदिक्पालावाहन	१५८
सामवेदी का विशेष	१५९
प्रतिष्ठा और पूजा	१६०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
सर्वतोभद्रदेवताहन	१६४
मण्डल विवरण, प्रतिष्ठा और पूजा	१७१
योगिनी पूजा	१७२
क्षेत्रपाल पूजा	१७५
कंकण और रक्षाबन्धन	१७७
इन्द्रध्वजस्थापन	१८०
कुशकण्डिका	१८१
भूतशुद्धि, कुंड, विश्वकर्मा पूजा	१८२
मेखला पूजा	,,
योनिपूजा	१८३
कंठपूजा, नाभिपूजा	१८४
वास्तुपूजा	१८५
पंचभूसंस्कार, उपलेपन, परिसमूहन	,,
उल्लेखन (यजुर्वेदी, सामवेदी)	१८६
उद्धरण, अभ्युक्षण	१८७
अग्निस्थापन (यजुर्वेदी)	१८८
सप्तजिह्वापूजा, ब्रह्मवरण	१८९
कुशकण्डिका	१९१
साधारण आहुतियां	१९३
अग्निस्थापन (सामवेदी)	१९५
भूमिजप, परिसमूहन	१९६
ब्रह्मवरण	१९७
अपशब्दप्रायश्चित्त	१९८
पात्रासादन, कुशकंडिका	,,
प्रपद, विरूपाक्षजप	२०१
व्याहृति, आज्यभाग	२०२
ग्रहहोम और बलि	२०३
ग्रहसमिध	२०४
ग्रहहोम	२०५
अधिदेवताहोम	२०७
प्रत्यधिदैवत होम, लोकपालहोम	२०८
दिक्पालहोम	२०९
विश्वकर्मादिहोम, भद्रदेवताहोम	२१०
बलिदान	२१३
क्षेत्रपालबलि	२१७

तीसरा प्रकरण ।

विषय	पृष्ठ
सुखप्रसव (यजुर्वेदी)	२१८
जातकर्म	२१९
अभिषेक	२२५
तिलकदान, आशीर्वाद	२२८
विसर्जन	२२९
क्षमापनप्रार्थना, कन्या का जातकर्म	२३०
बालकरक्षाविधि	२३१
षष्ठीपूजा	२३२
द्वारमाता की पूजा	२३७
आचार्य दक्षिणा भूयसी, दक्षिणा	२३८
विसर्जनवर्जन, विशेष कृत्य	,,
नामकरण	,,
समय विचार, चार प्रकार के नाम	२३९
प्रयोग	२४०
पञ्चगव्य होम	२४१
संस्रव प्राशन, ब्रह्मा को दक्षिणादान	२४३
पणीताविमोक, पवित्रहोम, बर्हिहोम	,,
पञ्चगव्य प्रोक्षण	,,
पञ्चगव्यपान	२४४
त्र्यायुषकरण	२४५
सामवेदी सोष्यन्तीहोम	२४६
यज्ञवास्तु कर्म, वसुधारा	२४७
हिरण्यदान (भूयसी)	२४८
जातकर्म	,,
अन्नप्राशन, नामकरण	२४९
नाममें सामवेदी विशेष, उत्तर अंग	२५३
कन्याओं का विशेष	२५०

चौथा प्रकरण

विषय	पृष्ठ
चौल का अर्थ	२५७
उपनयन पदार्थ	२५८
संस्कार पदार्थ, व्रतबन्ध पदार्थ	,,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding by IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
यज्ञोपवीत शब्दार्थ, उसका परिमाण	२५९
ब्रह्मसूत्र पदार्थ, बनाने की रीति	”
त्रिगुणादि का अर्थ, प्रवर पदार्थ	२६०
समावर्तन पदार्थ, स्नातकों के भेद	”
नैष्ठिक उपकुर्वाण, उपाकर्म. उत्सर्ग	२६१
चूड़ाका समय, शिखाछेदनमीमांसा	२६२
आपस्तम्ब सम्मति, जूटिका पदार्थ	”
पारस्कर सम्मति	२६३
बौधायन, आश्वलायन	”
लघुआश्वलायनस्मृति	२६४
गोभिल. द्राह्यायण	”
शिखा प्रयोजन, गोभिल, कात्यायन	२६५
लघुविष्णु स्मृति	२६६
सशिखवपन का अर्थ वसिष्ठ, गौतम	२६८
केशान्त का अर्थ, अधिकारी	२६९
आचार्य कौन हो आपत्तिकाल	२७०
मुख्य ब्राह्मणपिता, मनु. याज्ञवल्क्य	”
गुरुतो पिताही है	२७२
मातापिता की महत्ता	”
कौन उपनयन करावे	२७३
उपनयन काल	२७४
व्रात्य	२७५
दोनों वेदोंके समानकर्म	२७६
एक ही वेदी आदि	२७७
स्तम्भारोपण	२७८
तैलाभ्यंग वा हल्दी, कंकण	२८१
कंकण बाधने का मंत्र, चुमावन	२८२
जूटिका बंधन	२८४
यजुर्वेदी चौल	२८५
गंगापूजा, कब पूर्णाहुति न हो	२८९
त्र्यायुष करण	२९०
यजुर्वेदी उपनयन	२९१
यज्ञोपवीत का संस्कार	२९५
यज्ञोपवीत का मन्त्र	२९६
गायत्री पूजा	२९९
प्रणाम करने योग्य, अयोग्य	३०३
व्रात्यप्रायश्चित्त, उद्दालकव्रत, यवागूव्रत	३०७
आमिक्षा, पयस्या, वाजिन	”
यजुर्वेदी वेदारम्भ	३०८
” समावर्तन	३१३
समावर्तन के पदार्थ	३१५
नूतन वस्त्रादि धारण	३२१
जलपूजा, कंकणत्याग	३२४
कंकणत्याग का मंत्र	३२५
सामवेदी चौल जूटिका की विशेषता	३२६
शाट्यायन होम	३३०
पूर्णाहुतिमंत्र	३३२
सामवेदी त्र्यायुषकरण, वामदेव्यसाम	”
सामवेदी उपनय	३३३
सावित्र चरुहोम का समय	३४३
सावेदी वेदारंभ	”
” समावर्तन	३४४
सामवेदी उत्तरांग	३४८
” मधुपर्क	३५५
सावित्र चरुहोम	३५८
ऐन्द्रचरुहोम	३६२

पाँचवाँ प्रकरण ।

विषय	पृष्ठ
केशान्त. विवाह विचार	३६३
विवाह की अवस्था अष्टवर्षा विचार	३६४
रजस्वला मीमांसा	”
गोभिल की सम्मति	३६५
आयुर्वेद की सम्मति	”
सुश्रुत, भाव प्रकाश	३६६
सुश्रुत के वाक्यान्तर	३६७
शार्ङ्गधरसंहिता, दीपिका	”
सबका निचोड़	३६८
पराशरादि की अमान्यता	”
सभी ऋषियों के मत	”

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
मनुकी व्यवस्था	३६९
नास्तिकताका परिहार	३७०
जैमिनि आदिकी राय, पराशरादि के भाव, चतुर्थी कर्म और कंकण	३७१ ,,
कंकण का समय, गंठजोड़ा का अर्थ	३७२
मैथिल संप्रदाय	,,
ग्रन्थिबन्धन	३७३
सुमंगलीकरण, पीढ़ा या वरासन	३७४
मण्डप आदि विचार, कौतुकागार वा कोहबर	३७५ ,,
वरपक्ष या सगाई	३७६
तिलक वा फलदान	३७७
तिलकदान का मंत्र	३८०
मण्डपादि निर्माण	३८१
वरयात्रा और द्वारपूजा	३८३
सौमाग्य कर्म (चढ़ावा)	३८५
विवाह (यजुर्वेदी)	३८७
मधुपर्क ,,	३८८
शाखोच्चार ,,	३९४
कन्यादान संकल्प	३९७
राष्ट्रभृत होम	४०२
जया होम अभ्यातान होम,	४०३
अग्नि पञ्चकहोम	४०५
लाजा होमादि	४०६
सप्तपदी	४०९
दूर्वाक्षत दान, चतुर्थी होम की अग्नि	४१३
अनादिष्ट प्रायश्चित्त,	४१४
वधूप्रवेश और द्विरागमन	,,
वर की बिदाई,	,,
द्वारमातृपूजा	४१५
जीवमातृपूजा	,,
चतुर्थीकर्म	४१६
पृथूदपात्र, चरुपात्र	४१७
अनादिष्टप्रायश्चित्त प्रयोग	४१८
वधू का नामकरण	४२०
कंकण छोड़ने का मंत्र	४२१
जल (गंगा) पूजा	४२२
द्विरागमन	४२३
अर्कविवाह का कारण	,,
अर्क विवाहप्रयोग	४२४
सामवेदी विवाह, कन्यापरीक्षा	४२८
शाखोच्चार, कन्यादान	४३१
उत्तरविवाह	४३८
समशनीयचरुहोम	४४१
विदाई और वधूप्रवेश	४४३
सामवेदी चतुर्थीकर्म	४४५
छठां प्रकरण	
अन्त्येष्टि और पितृकर्म	४४७
सपिण्डन का अर्थ	,,
पूर्व क्रिया और नवश्राद्ध	४४८
मध्य क्रिया, उत्तर क्रिया,	,,
सपिंडन के समय, षोडशी मीमांसा	,,
प्रेतकर्म में वर्जनीय	४४९
षोडशी के समय	४५१
एकोद्दिष्ट और पार्वण, पर्व	,,
दोनों के भेद, एकोद्दिष्ट किसके हों	४५२
सपिण्डन का रूप	,,
पार्वण भेद	४५३
वृद्धिश्राद्ध के भेद	४५४
विश्वेदेव कौन हैं	४५५
श्राद्धका दार्शनिक रहस्य	४५५
पुनर्जन्मवादी की बाध्यता	४५६
अग्निष्वात्तपितर	,,
विश्वेदेव के जन्म और नाम	४५७
सपात्रक और अपात्रक	,,
अपात्रक की विशेषता	४५८
पिंडदान और ब्रह्मभोज	४५९
श्राद्ध के अधिकारी	,,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
श्राद्ध में निषिद्ध पदार्थ	४६१
कौन श्राद्ध कबहो, संगवआदि संज्ञायें	४६२
अष्टका, अन्वष्टका	,,
दर्भ, कुश, कुतप, तृण	,,
कुशोत्पाटन मंत्र, कुशमीमांसा	४६३
सकृदाच्छिन्न, कुतपपदार्थ	४६४
महालय का विचार	,,
सपिंडन किसके साथ हो	,,
षोडशी, मासिक, ऊनमासिक	४६८
महैकोद्दिष्ट, त्रिपुष्कर, द्विपुष्कर	४६९
आशौच की अवधि	४७०
आशौच कबसे हो	४७१
आशौच संकर	४७२
आशौचान्त कर्म	४७३
पञ्चकशान्ति, नारायणबलि	४७४
मरण समय और बाद	,,
वैतरणी धेनुदान	,,
दशदान, महादान	,,
वैतरणी दान प्रयोग	४७५
पदार्थों के दान मंत्र	,,
गोपूजनादि	४७६
दोनों वेदों की कामस्तुति	४७७
गोमती	४७८
मरणसमय	४७९
मार्गादि कृत्य सामवेदी	४८०
,, यजुर्वेदी	४८१
चितापर कैसे रक्खे	४८३
यमगाथा, अंजलिदान	४८४
भक्तदान, पर्युषित विचार	४८५
पर्णशरदाहविधि	४८६
दशगात्रविचार	,,
घट टांगना, क्षीर जल दान	४८८
दीपदान	४८९
अस्थिचयन सामवेदी	,,
अस्थिचयन यजुर्वेदी	४९१
दशगात्र श्राद्ध	४९६
एकादशाह का शय्यादान	५०१
शय्यादानादिविचार	,,
शय्यादान प्रयोग	५०५
कांचन पुरुष दान	५०८
द्विजदम्पतिपूजा	५०९
वृषोत्सर्ग यजुर्वेदी	५१०
यमपूजा	५१२
अग्न्युत्तारण	,,
प्रेतमातृकापूजा	५१३
त्रिशूल चक्राकन	५१६
कपिलादान	५२०
महिषीदान	५२५
वृषोत्सर्ग सामवेदी	,,
एकादशाह श्राद्ध	५३५
महैकोद्दिष्ट	,,
प्रथम मासिक	५४५
वर्षाशनदान	,,
३६० पिंड दान	५४६
द्वादशाह श्राद्ध	,,
तंत्र रीति	५४७
तंत्र निषेध	५४८
प्रयोग	,,
सपिंडीकरणमीमांसा	५५३
प्रयोग	५५५
निःश्वासधेनुदान	५७५
द्वादश घटदान	५८१
वर्द्धनी दान	,,
स्त्री सपिंडन	५८२
पार्वण श्राद्ध	५८३
प्रयोग	५८५
एकोद्दिष्ट और वार्षिक	६०५
प्रयोग	६०६

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विषय	पृष्ठ
माता; भाई आदिका	६१७
सातवां प्रकरण	
शांतिसंग्रह	६१८
ग्रहशांति	,,
आहुतिविवरण	६१९
जपसंख्या	६२२
पौराणिक मंत्र	,,
तांत्रिक मंत्र और बीज	६२३
संपुट विधि	६२४
ग्रहों की औषधियां	६२५
दान के पदार्थ	६२६
ग्रहशांति प्रयोग	६२७
गोमुख प्रसव शांति	६३१
संक्षिप्त पुण्याहवाचन	६३४
मूलशांति	६३६
शांति का अभिषेक	६५२
आश्लेषाशान्ति	६५८
ज्येष्ठ शांति	६६५
नक्षत्रगंडांत शान्ति	६७१
तिथिलग्नगंडांतशान्ति	६७५
वास्तुशान्ति	६७७
शिलान्यास	६९४
गृहप्रवेश	७०३
पञ्चकशान्ति	७०५
त्रिपुष्करादिशान्ति	७१५
कुष्टि, रजस्वला प्रायश्चित्त	७१८
नारायण बलि	७२०
महामृत्युञ्जयजप	७४१
दत्तक विधि	७४५
आठवां प्रकरण ।	
जलाशयोत्सर्ग	७४९
आरामोत्सर्ग	७६७
पार्थिवेश्वरपूजा	७७२
देवप्रतिष्ठा	७७६
ब्रह्म सूक्त	८४३
नवां प्रकरण ।	
आशौच और स्नान	८४९
स्नानांग तर्पण	८५२
सन्ध्योपासन	८५३
ब्रह्मयज्ञ	८६२
तर्पण	८६५
नित्यश्राद्ध	८८४
वैश्वदेव	८८७
भोजनविधि	८९४
आशौच में कर्म	८९७
कर्मशेष मंत्रादि	८९८
वर्त्तनों के संस्कृत नाम	९३५
इन्द्रध्वज की लंबाई	,,
दसवां प्रकरण	
कुछ संकेत (परिभाषायें)	९३६
पञ्चांग मीमांसा	९६७
विवाह और वधू प्रवेशादि	१००७
उपनयन, चौलादि	१०६५
यात्रा और कृषि	१०८०
वास्तु और प्रकीर्ण विषय	१११९
चित्र	११६७
उप संहार	११७४

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीहरिः

यह क्यों ?

वर्त्तमान पुरोहितों की मूर्खता, स्वार्थपरता और अत्याचार के कारण हिन्दुओं के सम्पूर्ण धर्म कर्म मिट्टी में मिल गये हैं। धर्म कर्म के नाम पर या तो कुछ होता ही नहीं, या अगर होता भी है तो सिर्फ स्वांग किया जाता है। क्योंकि प्रायः सभी यजमान और पुरोहित मूर्ख ही होते हैं; दोनों में कोई भी नहीं जानता कि वास्तविक धर्म, क्रिया या संस्कार क्या पदार्थ है। इसीलिये स्वार्थी एवं पतित पुरोहित धार्मिक कर्त्तव्यों की नकल करके अपनी दूनी दक्षिणा वसूल कर लेते और अपने सगे सम्बन्धियों के पेट दही, चीनी, पूड़ी और मालपूआ से भर देते हैं। उन्होंने हिन्दू संसार को जानबूझकर इसी लिये धर्म कर्म के ज्ञान और उनके करने कराने की विधि से अनभिज्ञ रक्खा है कि उन मूर्ख पुरोहित, आचार्य और गुरु नामधारियों का और उनके वंशजों एवं सगे सम्बन्धियों का इसी बहाने से सदा सत्कार मान होता रहे और वे इसी के द्वारा हिन्दू समाज पर सर्वदा अपनी धाक जमाये रहें। यदि वर्त्तमान पुरोहितों के ब्राह्मण यजमान तथा इतर वर्णों के लोग संस्कृत जानेंगे, कर्मकांड में उनका प्रवेश होगा, उसके कराने की विधियां उन्हें अच्छी तरह अभ्यस्त होंगी तो फिर मूर्ख पुरोहित नामधारियों को कौन पूछेगा ? और यदि दैवात् या परम्परावश किसी ने पूछ भी लिया हो कर्म कराने के समय रोक टोक होगी और उनकी पोपलीला और ढोल की पोल खोली जाकर भरी सभा म घोर अप्रतिष्ठा की जायगी। फलतः सदा के लिये पुरोहिती आदिका द्वार ही उनके लिये बन्द हो जायगा। फिर या तो ब्रह्मचर्य के कठिन नियम का पालन करते हुए विद्याध्ययन में माथा मार कर सच्चा विद्वान बनना होगा या टुकड़े के लिये भी तरसना होगा। भला ढोंग का भण्डाफोड़ होने पर कौन यजमान मूर्ख से मूर्ख पुरोहितों और गुरुओं की जरासी भी त्योरी बदलने पर थर थर कांपेगा, गोया उसे जड़ैया आगई हो, जैसा कि आज सर्वत्र देखने में आ रहा है ? कहिये, इस प्रभुता और निष्कंटक साम्राज्य से हाथ धोना किसे इष्ट होगा ?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यद्यपि इस विषय में मतभेद है कि पहले शूद्रों को भी संस्कृत के अन्यान्य ग्रन्थों के सिवाय वेद भी पढ़ाये जाते थे। तथापि इतना तो सनातनी लोगों को भी स्वीकार है कि रथकार आदि वर्णसंकर वर्णों को, जो शूद्र श्रेणी के ही हैं, अग्नि के आधान में उपयोगी वेद मंत्रों को पढ़ने का अधिकार था और है भी। इसी प्रकार निषादस्थपति [निषादों का सरदार या निषादों में कारीगर] को तो अवेष्टि नामक वैदिक यज्ञ करने का भी अधिकार है। जैसा कि पूर्वमीमांसा के छठें अध्याय के प्रथम पाद के १२, १३ अधिकरणों [४४ से ५२ सूत्रों] से स्पष्ट है। चाहे वेदों के पढ़ने के विषय में जो हो, मगर संस्कृत पढ़ने का अधिकार तो शूद्रों को भी था ही। क्योंकि महाभारतादि ग्रन्थों तथा अन्यान्य पुराणों की रचनाहीं इसीलिये हुई कि शूद्र उन्हें पढ़ कर ज्ञान लाभ करें, यही सनातन सिद्धान्त है। क्षत्रियों और वैश्यों को तो वेदादि पढ़ने का वैसाही अधिकार था जैसा ब्राह्मणों को। पर, स्वार्थी पुरोहित वर्ग ने पहले तो शूद्रों को संस्कृत पढ़ाना बन्द किया। पीछे धीरे धीरे वैश्यों और क्षत्रियों को भी। और अब तो यहां तक नौबत आ पहुंची है कि ब्राह्मण समाज में भी उसे ही पढ़ाते हैं जिसे साक्षात् या परम्परया पुरोहिती एवं गुरुवाई से सम्बन्ध है। पुरोहित से भिन्न ब्राह्मणों को संस्कृत पढ़ाना वे लोग ऐसा ही मानते हैं जैसा सांपको दूध पिलाना। यह बात उन लोगोंने बार बार कही है। ऐसा कहते ही नहीं, वरन, जमींदार, त्यागी, पश्चिमा, भूमिहार आदि ब्राह्मण बालकों को अपनी पाठशालाओं में पहले तो जाने हीं नहीं देते और यदि किसी प्रकार वे चले भी गये तो वहाँ वे और उनके विद्यार्थी ऐसा दुर्व्यवहार करते हैं कि उन बालकों को विवश होकर वे पाठशालायें छोड़नी पड़ती हैं। आज इसके सैकड़ों उदाहरण हैं। फिर कब सम्भव है कि वे लोग इतर वर्णों को संस्कृत, वेद या कर्मकांड पढ़ावेंगे? पूर्वसमय में जब ब्राह्मण आदि यजमान संस्कृत और कर्म धर्म के ज्ञाता होते थे तो सभी संस्कार ठीक ठीक होते थे। पुरोहित लोग भी पूरे जानकार होते थे। यदि कहीं भी उनसे भूल हुई कि भरी सभा में यजमान तथा अन्यान्य लोग उन्हें रोकते थे। फिर वह क्योंकर सजग और तय्यार नहीं रहेंगे? साधारणतया होम आदि तो क्षत्रिय और वैश्य भी अपने हीं हाथों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर लेते थे। कारण होम का अधिकार तो तीनों ही वर्णों को है। सिर्फ जिन विवाहादि कर्मों में आचार्य आदिकी आवश्यकता होती थी, उसी में ब्राह्मण विद्वानों को वे लोग निमंत्रित करते थे और पुरोहित उनके धर्म कर्म को कराते थे। क्योंकि दक्षिणा स्वीकार करने का अधिकार क्षत्रिय और वैश्य को नहीं है। फिर वे लोग आचार्य आदि की दक्षिणा कैसे ले सकते थे और यदि दक्षिणा न लेते तो कर्म कैसे करातें ? विना दक्षिणा के तो "मंत्रहीनमदक्षिणम्" (गी०१७।१३) के अनुसार सभी कर्म तामस अथवा निष्फल होजाते हैं। कर्म कराने वाले और वेदादि सद्विद्या पढ़ाने वाले, ये दोनों प्रकार के आचार्य केवल ब्राह्मण हीं होते थे। अतएव उपनयन काल में गायत्री के उपदेशका अधिकार भी केवल ब्राह्मण हीं को है। जो पिता या पितामह आदिको उपनयन काल में गायत्री के उपदेश का अधिकार शास्त्रों में है वह केवल ब्राह्मण के ही लिये है। क्योंकि वही आचार्य की दक्षिणा ले सकता है। आचार्य का काम उस समय याजन [यज्ञकराना] है और उसका अधिकारी केवल ब्राह्मण हीं है। अत्रि संहिता के २० वें श्लोक और मनुस्मृति के १० वें अध्याय के ७७, ७८ श्लोकों में स्पष्ट रूप से क्षत्रिय, वैश्य के लिये याजन और अध्यापनादि का निषेध है– उनके करने से पतित होना लिखा है।

अस्तु, ब्राह्मणों के तो पुरोहित कभी होते ही न थे। रामायण, महाभारतादि से सिद्ध है कि वसिष्ठ, धौम्य और गर्ग आदि रघुवंश और यदुवंश आदि केही पुरोहित थे। न कि ब्राह्मणों के भी पुरोहितों का कहीं वर्णन मिलता है। याज्ञवल्क्य ने भी "पुरोहितं प्रकुर्वीत" [आ० ३१३] द्वारा पुरोहित रखने की विधि राजा के ही लिये लिखी है। मनु भी "पुरोहितं च कुर्वीत" [अ० ७। ७८] राजा के ही लिये लिखते हैं और यह भी लिखते हैं कि वह राजा के ही दर्श, पूर्णमासादि और उपनयन, विवाह आदि श्रौत स्मार्त्त कर्मों को करा सकता है, नकि ब्राह्मणों के। ब्राह्मण लोग स्वयं ही अपने सभी कर्म करते थे। हां, जिन बड़े बड़े यज्ञ यागों में अनेक ऋत्विजों की आवश्यकता होती थी उनमें दूसरे विद्वान ब्राह्मणों को आमंत्रित करते थे। परन्तु वह समय था जब चारों वर्णों के लोग संस्कृतज्ञ और पूर्ण विद्वान होते थे और त्रैवर्णिक का पूरा प्रवेश कर्मकांड में रहता था–वे उसमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पारंगत होते थे। यदि आज ब्राह्मण यजमान को भी भद्रा, भरणी जानने और जनेऊ बनवाने तक के लिये पुरोहित की आवश्यकता होरही है तो इसका एकमात्र कारण हमारी प्रचण्ड मूर्खता है। और विद्याओं का तो हम में अभाव है ही। पर, जिस भाषा में हमारे धर्म ग्रंथ हैं उससे भी हम अनभिज्ञ हैं। फिर कर्मकांड का तो कहना हीं क्या! उससे तो हम लाख कोस दूर हैं। हमारे पुरोहितों की भी यही दशा है। वह भी विवाह, उपनयन आदि जबानी हीं कराते हैं। पद्धतियों के देखने और पढ़ने का उन्हें सौभाग्य ही कहां मिला! यदि सौ या हजार में एकाध संस्कृत व्याकरण या ज्योतिष पढ़ते भी हैं तो भी कर्मकांड में कोरे रहते हैं!! क्योंकि ऐसे संस्कृत पढ़नेवाले पुरोहिती करनेवाले प्रायः नहीं होते। जो पुरोहित हैं उनके वंश में तो सौ में निन्यानबे या हजार में ९९९ मूर्ख हैं। क्योंकि गुरुवाई और पुरोहिती मौरूसी—बपौती—होगई है। इसीसे गुरुलोग भी "लिख लोढ़ा और पढ़ पत्थर" ही होते हैं। यदि कोई कुछ कर्मकांड सीखने की धृष्टता भी करता है तो किसी ज्ञाता के पास जाना व्यर्थ समझ ऐरे गैरों से ही कुछ अनाप सनाप सीख साखकर अनर्थ का कारण होता है। इस तरह हम देख रहे हैं कि दिन दहाड़े हिन्दूधर्म और उसके संस्कारों के निर्दयता पूर्वक बध करने की प्रक्रिया दिनों दिन प्रबल ही होती जाती है और हमलोग तटस्थ होकर तमाशा देख रहे हैं!

यही नहीं, पद्धतियां भी ठीक नहीं हैं। किसी पद्धति में कुछ लिखा है तो किसी में कुछ। सब से बड़ी बात तो यह है कि सभी पद्धतियां एक तो संस्कृत में ही 'अथ' से 'इति' तक लिखी हैं। साथ ही, उनमें बहुत सी बातें अधूरी हैं और स्पष्ट नहीं हैं। कुछ बात कहीं है तो कुछ कहीं। फलतः कर्मकाण्ड का पूर्ण विद्वान तो उनसे लाभ उठा सकता और उनका अभिप्राय समझ सकता है। मगर थोड़ी बहुत संस्कृत जाननेवालों या केवल हिन्दी जाननेवालों के लिये वे बेकार हैं। ऐसे लोग उन्हें समझ ही नहीं सकते। यद्यपि आजकल उनका हिन्दी में अनुवाद मिलने लगा है। फिर भी वही 'मक्षिकास्थाने मक्षिका' वाली बात है। एक तो हिन्दी अनुवाद करनेवाले सत्ययुगी हिन्दी लिखते हैं। दूसरे वे भी कर्मकाण्डज्ञ न होने के कारण संस्कृत शब्दों के उलटे सीधे अर्थ हिन्दी में लिख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर अपना काम खतम कर देते हैं। यद्यपि पं० भीमसेन शर्म्मा की 'षोडशसंस्कारविधि' में यह त्रुटि बहुत अंशों में नहीं है। फिर भी, उसमें भी बहुत सी बातों की कमी है। उससे भी काम उन्हीं का चल सकता है जो कर्म के जानकार हैं। कारण, वह भी इस विचार से तो लिखी ही नहीं गई है कि कर्मकांड के नितान्त अनभिज्ञ संस्कृत ज्ञाता और हिन्दी जानने वाले उस पद्धति से पूरा पूरा लाभ उठा सकें। एक बात और भी है। उत्तर भारत में और विशेष कर तिहुंत में छन्दोग और वाजसनेयी–सामवेदी और यजुर्वेदी–का विशेष झगड़ा है। झगड़ा इसलिये कि न तो दाक्षिणात्यों की तरह इधर के लोग थोड़ा या ज्यादा सामवेद ही जानते हैं और न यजुर्वेदही और न उन्हें यही ज्ञान है कि हम सामवेदी हैं या यजुर्वेदी। उन्हें छन्दोग और वाजसनेयी शब्दों के अर्थ भी प्रायः नहीं हीं मालूम हैं। फिर भी कर्म के समय, सर्वत्र नहीं तो बहुत जगहों में, तो अवश्य ही इसकी चिल्लाहट मचावेंगे और इसकी पूर्त्ति 'षोडश संस्कारविधि' नहीं कर सकती। कारण, वह तो सिर्फ यजुर्वेदियों के ही लिये है।

इसलिये ऐसी पद्धति की नितान्त आवश्यकता है जो आजकल की हिन्दी में लिखी जाय और वह भी इस विचार से कि कर्मकांड के ज्ञान से बिल्कुल शून्य हिन्दी और संस्कृत के जानकर भी उससे पूरा पूरा लाभ उठा सकें। एतदर्थ पद्धति भर में कोई भी कर्मकांड (मीमांसा) के सांकेतिक शब्द न रहें और जहां रहें वहां उनका स्पष्टीकरण भी कर दिया जावे। जिस स्थान पर ज्योतिष आदि से सम्बन्ध रखनेवाली बातें आवें वहां हीं वह भी साफ कर दीजावें। सामवेदियों और यजुर्वेदियों के लिये अलग अलग, पर, साथही साथ, पद्धतियां रहें और यह भी स्पष्ट रहे कि किन किन गोत्रों का यजुर्वेद है और किनका सामवेद। एकाध को छोड़कर अथर्ववेदी और ऋग्वेदी तो उत्तर भारत में हईं नहीं। अतः सिर्फ दोही पद्धतियों से काम चल सकता है। पद्धति इस रीति से लिखी जावे कि वैदिक, स्मार्त्त या पौराणिक मंत्रों के सिवाय समूची विधि और उसके करने की रीति शुद्ध एवं व्यावहारिक हिन्दी में लिखी जावे और कर्म की किसी भी गूढ़ बात के समझने में उपयोगी जितनी बातें हों वह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आवश्यकतानुसार साफ साफ लिख दी जावें। विना ऐसा किये न तो कर्मकांड का उद्धार ही हो सकता है, न हमारे संस्कार ही सुधर सकते हैं, न कर्म का निर्दय बध ही रुक सकता है और न वर्त्तमान पुरोहितों का मायाजाल ही हट सकता है। बस, इन्हीं विचारों को लेकर मेरी प्रवृत्ति इस काम में हुई है। पर इसमें मुझे कहां तक सफलता मिली है इसका निर्णय विज्ञ पाठक और इससे पूरा पूरा लाभ उठानेवाले कर्मकाण्डी ही कर सकते हैं।

पर, यह स्मरण रखना चाहिये कि यह ग्रन्थ विद्वानों के लिये न लिखा जाकर केवल साधारण लोगों के लिये और विशेषकर हिन्दी जाननेवालों के ही लिये लिखा गया है। इसीलिये इसमें लिखी बातों के लिये संस्कृत ग्रन्थों का प्रमाण देकर व्यर्थ ही इसका विस्तार करना हमने अनुचित समझ कर उसे प्रायः नहीं हीं किया है। यह तो संग्रह है। विद्वान लोग मूल ग्रन्थों को ही देखकर अपना संतोष कर सकते हैं। इसी लिये हमें कहीं कहीं पुनरुक्ति भी करनी पड़ी है। क्योंकि कर्मकाण्ड का विषय गहन है और विना ऐसा किये साधारण ज्ञानवालों की बुद्धि का उसमें प्रवेश करना कठिन है। अत एव यथासंभव ग्रन्थ को एकमात्र सरल और सुबोध बनाने पर ही ध्यान दिया गया है।

स्वामीसहजानन्दसरस्वती।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रीहरिः

कर्मकलाप

शङ्करं शङ्करं नत्वा कुमतीनां परं परम् ।
कर्मकाण्डकृते कर्म-कलापः क्रियतेतराम् ॥ १ ॥

(१)

परिभाषा ।

उपनयन, विवाह आदि कर्मों के प्रसंग में ऐसे ऐसे शब्द आजाया करते हैं जिनका साधारण वा व्यावहारिक अर्थ न होकर सांकेतिक या विलक्षणहीं हुआ करता है । यद्यपि यह बात वर्त्तमान पद्धतियों की है और जब कि यह पद्धति दूसरी दृष्टि से उन्हीं कठिनाइयों को दूर करने के लिखी जाती है, तो फिर इसमें प्रसंगवश भी वह कठिनाई नहीं रह सकती। तथापि साधारण रीति से मोटे मोटे संकेतों के लिये उन प्रकरणों में हीं हिन्दी के स्पष्ट शब्द या वाक्य लिख देने पर भी बहुत से सूक्ष्म संकेतों के लिये ऐसा करना असंभव है । एक तो बार बार उनकी व्याख्या करने से ग्रन्थ का व्यर्थ विस्तार होगा । दूसरे हर स्थानपर उनकी व्याख्या हो भी नहीं सकती और यदि हठवश ऐसा किया जाय तो ग्रन्थ नीरस हो जायगा और उसके समझने में कठिनाई भी होगी। सबसे बड़ी बात यह है कि ऐसा करना नये आदमियों के सिर पर आवश्यकतासे अधिक बोझ लादनेके समान होगा । इसलिये ग्रन्थ के प्रारम्भ में हीं ऐसे संकेतों (परिभाषाओं) का अर्थ समझा देना अधिक लाभदायक होगा ।

१-सामवेदी और यजुर्वेदी ।

सामवेद पढ़ने और उसमें कहे गये कर्मों के करनेवाले को सामवेदी एवं यजुर्वेद पढ़ने और उसमें कथित कर्मोंके कर्त्ता को यजुर्वेदी कहते हैं । सामवेद के वैदिक छन्दों में जिन मंत्रोंका पाठ है उनका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गान किया जाता है । इसीसे सामवेद को छान्दोग्य और सामवेदियों को छन्दोग कहते हैं । छन्दोग का अर्थ है छन्दों का गान करनेवाला और यह काम सामवेदियों का ही है । इसी प्रकार यजुर्वेद के दो विभाग हैं शुक्ल और कृष्ण । शुक्ल को वाजसनेयी संहिता और कृष्ण को तैत्तिरीय संहिता कहते हैं। संहिता नाम है वेदके मंत्र भाग का । मंत्रभाग के सिवाय जो वेदका भाग है उसे ब्राह्मण कहते हैं । इस देश में शुक्ल यजुर्वेद का ही प्रचार है । इसीसे यजुर्वेदी को वाजसनेय वा वाजसनेयी कहते हैं । हालांकि तैत्तिरीय संहिता पढ़ने वाले को भी यजुर्वेदी ही कहना चाहिये । पर, उत्तर भारत में यजुर्वेदी और वाजसनेयी (वाजसनेय) का एकही अर्थ माना जाता है ।

प्रत्येक वेद वृक्ष अनेक बड़े बड़े भागों में विभक्त है जिन्हें शाखा कहते हैं । सामवेद की १००० शाखायें, यजुर्वेद की १०१, ऋग्वेद की २० और अथर्ववेद की ९ मानी जाती हैं । पर, इस समय उनका पता नहीं । सामवेदकी प्रायः राणायनीय और कौथुमीय यही दो शाखायें प्रसिद्ध हैं, सो भी उत्तर भारतमें केवल कौथुमीय शाखाही । इसी प्रकार यजुर्वेद की भी काण्व और माध्यन्दिनीय यही दो शाखायें प्रसिद्ध हैं और उनमें भी विशेष रूपसे माध्यन्दिनीय शाखाही । इसीलिये उत्तर भारत के सामवेदियोंकी प्रायः कौथुमीय शाखा और यजुर्वेदियों की माध्यन्दिनीय शाखा है । कुथुमऋषि ने जिस शाखा का विशेष प्रचार किया वह कौथुमीय कहलाई और मध्यन्दिनऋषिने जिसका प्रचार किया वह माध्यन्दिनीय । शाखाओं के नाम उनके प्रचारक मूल ऋषियों के ही नामसे हुए हैं । जब द्विजों में चारों वेदों का प्रचार था और ब्रह्मचर्य पूर्वक उन्हें सभी पढ़ते थे तब सामवेदी और यजुर्वेदी का प्रश्न न था । लेकिन समय बीतने पर लोगों के लिये चारों वेदों का पढ़ना असंभव होगया । किन्तु कोई सामवेद पढ़ता था तो कोई यजुर्वेद और कोई ऋग्वेद पढ़ता था तो कोई अथर्ववेद । तभी से लोगों में सामवेदी आदि व्यवहार हुआ । पीछे जब एक वेद का पढ़ना भी असंभव होगया, किन्तु केवल एक शाखा ही पढ़ सकते थे, तभी से शाखा के कहने का प्रचार हुआ और जो जिस शाखा को पढ़ता था वह अपने को उसी शाखावाला कहता था और उसके गोत्र में उसी के पढ़ने का प्रचार रह गया । वही बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिर्फ कहने मात्र के लिये अभी तक है। कारण, उत्तर भारत में तो शायद ही कोई पढ़ता है।

इस प्रकार कुछ गोत्र ऐसे हैं जो केवल सामवेदी हैं और कुछ केवल यजुर्वेदी, कुछ ऋग्वेदी, कुछ अथर्ववेदी। उत्तर भारत में प्रायः सामवेदी और यजुर्वेदीही हैं। यद्यपि मथिलों के सम्प्रदाय में शाण्डिल्य के सिवाय सभी यजुर्वेदी ही हैं, केवल शाण्डिल्यही सामवेदी हैं। फिर भी उनकी भी एक वंशावली में, जो पिलखवाड़ के पंजीकार श्री जयनाथ शर्म्मा की लिखी है, लिखा है कि "कश्यप, काश्यप, वत्स, शाण्डिल्य, कौशिक, धनंजय ये छ गोत्र सामवेदी हैं"–

कश्यपौ वत्सशाण्डिल्यौ कौशिकश्च धनंजयः।
षडेते सामगा विप्रा शेषा वाजसनेयिनः॥

कान्यकुब्ज वंशावली में कौशिक के सिवाय पांच गोत्रों को सामवेदी और कौशिक को यजुर्वेदी लिखा है। जैसा कि–

कश्यपः काश्यपो वत्सः शाण्डिल्यश्च धनंजयः।
पंचैते साम गायन्ति यजुरध्यायिनोऽपरे॥

गौड़ों आदि में भी यही प्रथा है। यह बात असंभव भी मालूम होती है कि केवल शाण्डिल्य ने हीं सामवेद पढ़ा और उसका प्रचार किया, शेष ऋषियों ने नहीं किया। अतः कान्यकुब्ज, गौड़ आदि के सम्प्रदाय के अनुसार पूर्व प्रदर्शित ५ या ६ गोत्रों का सामवेदी होना हीं ठीक और विश्वसनीय मालूम होता है। इस सम्बन्ध में मैथिल सम्प्रदाय नहीं मानना चाहिये। यद्यपि कौशिक के सिवाय कश्यप आदि पांच गोत्रों का सामवेद निर्विवाद है तथापि कौशिक के विषय में विवाद है। किसी ने उसे सामवेदी लिखा है और किसी ने यजुर्वेदी। कान्यकुब्जों की वंशावलियों में भी मतभेद है और सरयूपारियों में भी। कोई सामवेदी लिखता है तो कोई यजुर्वेदी। इसलिये जिन कौशिक गोत्रियों में सामवेदी पद्धतियों के अनुसार अब कर्म होता हो वे अपने को सामवेदी मानें और जहां यजुर्वेदी व्यवहार हो वे यजुर्वेदी मानें। लेकिन जहां अब तक गड़बड़ हो उन्हें सामवेद के ही अनुसार कराना चाहिये। क्योंकि ज्यादा वंशावलियों का झुकाव उनके बारे में सामवेद कीही ओर है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

२—श्रौत और स्मार्त्त ।

कर्म तीन प्रकार के होते हैं नित्य, नैमित्तिक और काम्य। सन्ध्योपासन, अग्निहोत्र आदि, जो उपनयन से लेकर मरण पर्य्यन्त निरन्तर किये जाते हैं, नित्य कहाते हैं। पुत्र के उत्पन्न होने पर जातकर्म आदि अथवा मरने पर अन्त्येष्टि क्रिया और पितृपक्ष में विशेष श्राद्ध तर्पणादि नैमित्तिक कहलाते हैं। नैमित्तिक का अर्थ है कि जो नित्य न किया जाकर किसी निमित्त (कारण) विशेष के आजाने पर किया जावे। फल की इच्छा होने पर जो पुत्रेष्टि या तीर्थ यात्रा आदि की जाती है उसे काम्य कहते हैं। जिस कर्म के करने का कारण केवल कामना (काम) वा फल की इच्छा हो नकि और कुछ, उसे काम्य समझना चाहिये। यदि पुत्र रूप फल की इच्छा न हो तो पुत्रेष्टि याग करने की आवश्यकता नहीं है। पर, नित्य नैमित्तिक कर्म तो, फल की इच्छा रहे या न रहे, अवश्यमेव करने पड़ते हैं। प्रायश्चित्त रूप कर्म भी काम्यके ही अन्तर्गत है। यदि ब्रह्महत्या के पाप से निवृत्त होने की इच्छा हो तो उसके लिये कृच्छ्र आदि व्रत करेंगे और यदि इच्छा न हो तो न करेंगे। प्रायश्चित्त कर्म सिर्फ पापनिवृत्ति के लिये किया जाता है। काम्य कर्म भी नैमित्तिक कर्म के अन्तर्गत ही है। क्यों कि वह भी वासना या फल की इच्छारूप निमित्त रहने हीं पर किया जाता है। इस तरह तो नित्य और नैमित्तिक दोही प्रकार के कर्म सिद्ध हुए। तथापि प्राचीन रीति के अनुसार ३ या ४ प्रकार के लिखे गये हैं।

फिर यह नित्य नैमित्तिक कर्म दो प्रकार के होते हैं श्रौत और स्मार्त्त। श्रौत कर्म को ही वैतानिक कर्म और स्मार्त्त को ही गृह्य और आवसथ्य कर्म भी कहते हैं। गृह और आवसथ यह दोनों नाम घर के हैं और विना स्त्री के घर बेकार या सूना है। इसी कारण से अथवा घर में निरन्तर निवास के कारण स्त्री को गृहा कहते हैं। जिस अग्नि में गृह्य कर्म किये जाते हैं उसके भी नाम स्मार्त्त, गृह्य, आवसथ्य, शालाग्नि, औपासन और वैवाहिक ये छ हैं। इस अग्नि के स्थापन वा आधान का नियम यह है कि या तो विवाह काल में जिस अग्नि में हवन किया जाता है उसी को विवाह मण्डप से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लाकर विधिवत् कुण्ड बनाकर उसमें स्थापित करते हैं । अथवा यदि ऐसा न हो तथा और पिता जीवित था तो उसके मरने के बाद ही शुभ मुहूर्त्त में उस अग्नि का आधान [स्थापन] किया जाता है और यह काम जेठा भाई करता है, यदि पिता के कई पुत्र हों । परन्तु जब भाई जुदा जुदा होते हैं तब हरएक को अलग अलग गृह्य अग्निकी स्थापना करनी पड़ती है । इससे स्पष्ट है कि गृह्य अग्नि के आधान के तीन अवसर हैं विवाह, पिता की मृत्यु और भाइयों की जुदाई । यदि इन तीनों अवसरों पर भी न हो सके तो पीछे भी अच्छा मुहूर्त्त देखकर यह काम किया जा सकता है । परन्तु मुख्य अवसर तीन हीं हैं । इन तीनों अवसरों को देखने और उनपर विचार करने से मालूम होता है कि जभी घर [गृह या आवसथ] की वास्तविक जिम्मेदारी सिरपर पड़ती है तभी स्मार्त्त या गृह्य अग्नि का आधान किया जाता है । विवाह भी एक प्रकार से गृह की जिम्मेदारी ही है पिता की मृत्युके बाद तो ज्येष्ठ भाई पर ही गृह की जवाबदेही रहती है और जुदा होने पर तो हरेक पर अपने घर का बोझ पड़ता है । इसीलिये उस अग्नि का नाम गृह्य, शालाग्नि और आवसथ्य है । शाला भी घर को ही कहते हैं । उस अग्नि का वैवाहिक नाम तो इस लिये पड़ा कि विवाह काल में ही पहले उसका आधान किसी समय किया जाता था और पीछे विवाह समय में भी और उसके बाद भी किया जाने लगा । उस अग्नि में हवन आदि के द्वारा अग्नि की और उसके द्वारा अन्य देवताओं की उपासना की जाती है । इसी से ही उसे औपासन कहते हैं ! स्मार्त्त नाम तो उस अग्नि का केवल इसी लिये पड़ा कि श्रौत कर्मों के सिवाय विवाह आदि जितने स्मार्त्त कर्म हैं सब के सब उसी अग्नि में या उसे ही मण्डप आदि में ला कर उसमें किया करते थे और वैश्वदेव होम आदि भी उसी में किये जाते थे । विवाह, उपनयन आदि कर्मों को स्मार्त्त इसलिये कहते हैं कि उनका सविस्तर प्रतिपादन और निरूपण स्मृतियों में ही पाया जाता है । श्रुति नाम है वेद का और वेदों के सिवाय धर्मशास्त्र, इतिहास, पुराणादि जितने भी धर्मग्रन्थ हैं वे सभी स्मृतियों के अन्तर्गत हैं । अतः उन सभी में प्रतिपादित कर्मों को स्मार्त्त ही कहते हैं । हां, धर्मशास्त्रों और पुराणों में जहां परस्पर विरोध होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है वहां केवल धर्मशास्त्रों को ही प्रमाण मानते हैं न कि पुराणों को। इसलिये ऐसे स्थानों पर स्मृति शब्दसे केवल मनु आदि धर्मशास्त्रों का ही ग्रहण होता है।

जिन कर्मों का प्रतिपादन और विशेष निरूपण केवल श्रुतियों [वेदों] में ही है वह श्रौत कहे जाते हैं। जैसे स्मार्त्त शब्द का अर्थ है स्मृति प्रतिपादित, उसी तरह श्रौत का अर्थ श्रुतिपादित है। श्रौतको वैदिक भी कह सकते हैं, यद्यपि आजतक वैदिक कर्म कहने से उन सभी श्रौत स्मार्त्त कर्मों का बोध होता है जो वेदोक्त या वेद की अविरोधिनी विधियों से किये जाते हैं। श्रौत कर्मों को वैतानिक इसलिये कहते हैं कि वे वितान में किये जाते हैं। वितान नाम है अग्निसमूह का। आहवनीय, गार्हपत्य और दाक्षिणाग्नि, इन्हीं तीन अग्नियों को वितान कहते हैं। इन्हीं तीनों का नाम श्रौत अग्नि और त्रेता अग्नि भी है। त्रेता नाम है तीन का। इन्हीं तीनों अग्नियों में जो अग्निहोत्र, दर्श, पूर्णमास, ज्योतिष्टोम आदि कर्म किये जाते हैं वे श्रौत वा वैतानिक कहे जाते हैं। स्मार्त्त अग्नि के आधान के बाद ही श्रौत अग्नियों का भी आधान किया जाता है, जिसे अग्न्याधेय कहते हैं। इन अग्नियों के स्थापन के लिये अलग अलग कुण्ड बनाये जाते हैं और जिस कुण्ड में जो अग्नि स्थापित की जाती है वह कुण्ड उसीके नाम से बोला जाता है, जैसे गृह्य कुण्ड, आहवनीय कुण्ड आदि। इन चार अग्नियों के अतिरिक्त पांचवीं अग्नि भी होती है जिसे सभ्य कहते हैं। इन पांच अग्नियों के पांच कुण्डों में दाक्षिणाग्नि कुण्ड अर्द्ध वृत्त के आकार का (आधा चन्द्रमा के आकार जैसा] और गार्हपत्य का कुण्ड पूर्ण वृत्ताकार [चन्द्रमा की तरह] होता है। शेष तीन अग्नियों के कुण्ड चौकोने होते हैं। गृह्य अग्नि में से ही अग्नि ले जाकर घर की रसोई आदि की जाती है और वैश्वदेव होम आदि सभी स्मार्त्त कर्म भी किये जाते हैं। तात्पर्य यह है कि सभी तरहके घरेलू कामों में उसीका उपयोग होता है। फिर वह काम चाहे लौकिक हों या परलोक सम्बन्धी। इसीसे उसका गृह्य नाम भी चरितार्थ होता है। शेष चार श्रौत अग्नियों में से आहवनीय अग्नि में अग्निहोत्र आदि होम या हवन बार बार किये जाते हैं। इसीसे उसका नाम आहवनीय है। आहव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नीय कुण्ड में निरन्तर अग्नि नहीं रहती। किन्तु गार्हपत्य कुण्ड से ही ले जाकर होम के लिये उस कुण्ड में जला लिया करते हैं और पीछे फिर बुझ जाती है। हाँ, गार्हपत्य कुण्ड में निरन्तर अग्नि रक्खी जाती है और घर का मालिक (गृहपति) उसके लिये दिन रात सजग रहता है कि कहीं बुझने न पावे। गृहपति के साथ इसीलिये उस अग्नि का शारीरिक और मानसिक दोनों प्रकार का सम्बन्ध दिन रात बना रहता है। क्योंकि उस अग्नि के बुझ जाने पर प्रायश्चित्त करना पड़ता है। इसी कारण उस अग्नि का नाम गार्हपत्य पड़ा है। वह सदा व्यवहार में आने वाली श्रौत अग्नियों का खजाना है। उसमें प्रायः कभी होम नहीं किया जाता। हां, होम के लिये घृत आदि उसी पर पिघलाये जाते हैं और खीर पकाई जाती है। अग्निहोत्र या यज्ञ के लिये जो मण्डप वा मकान बना रहता है और जिसे अग्निहोत्रशाला वा यज्ञशाला कहते हैं, उसके पश्चिमी किनारे के निकट मध्य में ही गार्हपत्य कुण्ड और उससे ठीक पूर्व की ओर पूर्वी किनारे के निकट मध्य में ही आहवनीय कुण्ड होता है। गार्हपत्य से दक्षिण की ओर मण्डप के नैर्ऋत्य कोण में दाक्षिणाग्नि कुण्ड रहता है, जिसमें ब्रह्मा, अध्वर्यु, होता और उद्गाता के भोजन भर के लिये भात पकाया जाता है। उस भात का नाम ब्रह्मौदन है और वह उन चार ऋत्विजों की एक प्रकार की दक्षिणा है। जहाँ चार से ज्यादा ऋत्विक् होंगे वहाँ उनके लिये भी पकाया जायगा। इसी दक्षिणा स्वरूप भात के पकाये जाने के कारण और गार्हपत्य से दक्षिण में रहने से भी, उस अग्नि का नाम दाक्षिणाग्नि है। आहवनीय से उत्तर मण्डप के अग्निकोन में गृह्य कुण्ड और गार्हपत्य से उत्तर मण्डप के वायव्य कोण में सभ्य कुण्ड होता है। सभ्य अग्नि को ही अन्वाहार्य अग्नि भी कहते हैं। कहीं कहीं अन्वाहार्यपचन भी लिखा रहता है। पचन का भी अर्थ अग्नि हीं है, कारण, उसमें अन्न पकाया जाता है। सभ्य का अर्थ है सभा में रहने योग्य। अध्वर्यु आदि ऋत्विजों के सिवाय जितने विद्वान ब्राह्मण यज्ञशाला में रहते हैं उनको विधिवत् निमंत्रित किया जाता है कि वे आकर यज्ञ का निरीक्षण (देख भाल) करें और यदि कहीं प्रमादवश किसी से भूल हो जावे तो उसे सजग कर दिया करें। उन सभी को सभ्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहते हैं । यज्ञान्त में उनके भोजन के लिये जो अन्न पकाया जाता है उसके लिये सभ्य कुण्ड की अग्नि हीं काम में लाई जाती है । इसीसे उसे सभ्य कहते हैं । उसका केवल यही काम है । उसमें हवन आदि कुछ भी नहीं होते और गार्हपत्य अग्नि की ही तरह सभ्य अग्नि भी सदा प्रज्वलित रक्खी जाती है, कभी बुझने नहीं पाती । उसीमें से आग लेजाकर ब्राह्मणभोजन का पाक तैयार किया जाता है । इस तरह आवसस्थ्य, गार्हपत्य, सभ्य, आहवनीय और दाक्षिणाग्नि इन पांच अग्नियों में प्रथम की तीन तो निरन्तर अपने अपने कुंड में स्थित रहती हैं, बुझने नहीं पातीं । पर, आहवनीय और दाक्षिणाग्नि का कोई नियम नहीं है । कभी कभी बुझ भी जाती हैं, तो हवन आदि के समय फिर गार्हपत्य से लाकर ठीक कर ली जाती हैं और इस बुझने के कारण कोई प्रायश्चित्त नहीं करना पड़ता । मगर आवसथ्य आदि तीनके बुझ जाने पर प्रायश्चित्तका विधान है । कहीं कहीं दाक्षिणाग्नि को ही अन्वाहार्य या अन्वाहार्यपचन कहा है । वह भी इसीलिये कि ऋत्विजों के भोजन का अन्न उसमें पकाया जाता है । अन्वाहार्य शब्द दो शब्दों से बना है, जिनमें अनु का अर्थ है पीछे और आहार्य का अर्थ आहार या भोजन के योग्य । कर्म के आरम्भ होने के पीछे या कर्म के अन्त में जो भोजन कराया जाता है उसे ही अन्वाहार्य और ब्राह्मणतर्पण कहते हैं । श्रौत अग्नि में जो नित्य प्रातःकाल एवं सायंकाल हवन किया जाता है उसे अग्निहोत्र कहते हैं और आवसथ्य अग्नि में किये गये होम को औपासन या स्मार्त्त होम कहते हैं । इसी प्रकार प्रत्येक अमावास्या और पूर्णमासी को जो हवनादि श्रौत अग्नि में किये जाते हैं उन्हें क्रम से दर्श और पूर्णमास कहते हैं । इन्हीं दोनों की जगह स्मार्त्त अग्नि में हरेक पक्ष की प्रतिपदा को जो होम आदि होते हैं उन्हें पक्षादि कर्म कहते हैं । दर्श नाम है अमावास्या का और पक्षादि कहते हैं प्रतिपदा को । क्योंकि वही पक्षकी आदि है–प्रतिपदा से ही पक्ष शुरू होता है ।

३–मण्डप, वेदी, कुण्ड और स्थंडिल ।

विना मण्डप के हवनादि क्रिया निर्विघ्न हो नहीं सकती । क्योंकि कुत्ता, बिल्ली और कौवे आदि जन्तु यज्ञ और होम के पदार्थों को एवं यज्ञभूमि को भी स्पर्श द्वारा जूठी करके खराब कर देंगे । इसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिवाय हवा पानी से भी बचना आवश्यक है। आंधी आवे तो अग्नि इधर उधर उड़ जावे और आग लगने की संभावना हर घड़ी रहे। याद पानी आवे तो अग्नि हीं बुझ जावे तथा यज्ञ के सभी सामान नष्ट हो जावें। इसीलिये विवाह प्रभृति सभी नित्य नैमित्तिक आदि कर्मों में मण्डप की आवश्यकता होती है और उसके बनाने की विधि भी है। हां, यह दूसरी बात है कि किसी कारण से विवश होकर यदि मण्डप न बना सके तो छाया का प्रबन्ध तो किसी प्रकार करही लेवे, या प्रथम से ही छाये हुये किसी मकान में ही उसका प्रबन्ध करे। पर, भरसक यह न होना चाहिये। छाया भी यदि की जाय तो ऐसी कि जिसमें धूप और पानी का बचाव हो सके, नकि आजकल की तरह केवल रस्म पूरा करले और हवा पानी के समय वह निरा बेकार हो जावे।

मण्डप की भूमि आस पास की भूमि से एक हाथ या आधा हाथ ऊंची होनी चाहिये। यद्यपि पांच से लेकर बत्तीस हाथ तक लम्बे और उतने हीं चौड़े मण्डपों का वर्णन अनेक ग्रन्थों में भिन्न भिन्न कामों के लिये मिलता है। तथापि साधारण रूप से तीन प्रकार के मण्डप माने गये हैं कनिष्ठ [हीन], मध्यम, उत्तम। १० और १२ हाथ का हीन; १२, १४ हाथ का मध्यम और १६ तथा १८ हाथ का उत्तम माना जाता है। तुला दान में २० हाथ का भी उत्तम माना जाता है। यही नियम है कि मण्डप की लम्बाई और चौड़ाई बराबर ही होती है। लम्बाई और चौड़ाई में जितने हाथ बताये गये हैं वही रहेंगे। हां, यदि कुछ और बढ़ाना हो तो उक्त हाथों के सिवाय कुछ अंगुल और कुछ जौ [यव] बढ़ा सकते हैं। मगर यह कदापि नहीं हो सकता कि १० हाथ की जगह ११ या १२ की जगह १३ कर सकें। हाँ, १० हाथ, १० या १२ अंगुल और २ या ४ जौ [यव] आदि कर सकते हैं। यदि आवश्यकता हो तो अंगुल आदि घटा भी सकते हैं। जैसे १० हाथ की जगह चाहें तो ९ हाथ और १० अंगुल आदि कर सकते हैं। इस घटाने या बढ़ाने की आवश्यकता का अभिप्राय यह है कि मण्डप के बनाने में वृष नामक आय उत्तम माना जाता है। इसलिये जहां तक हो सके वृष आय के लाने का यत्न करना चाहिये। मण्डप की लम्बाई को चौड़ाई से गुणा कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गुणन फल में ८ का भाग देने से यदि ५ बच जावे तो यह माना जायगा कि वृष आय आगया । उसी ५ शेष का सांकेतिक नाम घर बनाने की विधिवाले ग्रन्थों में वृष आय लिखा है । इसीलिये ऐसी लम्बाई चौड़ाई रखनी पड़ती है जिस के गुणन फल में ८ का भाग देने पर अवश्य ही ५ बचे । १०, १२, १४, १६, या १८ हाथ रखने से तो यह बात हो नहीं सकती । इसीलिये कुछ अंगुल घटा बढ़ा कर रखनाहीं पड़ता है । २४ अंगुल का हाथ और अंगुल का आठवां हिस्सा जौ (यव) कहाता है । २२॥ अंगुल का भी हाथ मानाजाता है । कर्त्ता की इच्छा पर है । पर, २४ ही का अच्छा है । मगर यह स्मरण रहे कि यह घटाना या बढ़ाना मनमाना नहीं होसकता । किन्तु कम से कम जितने अंगुल बढ़ाने या कम करने से काम चल जाय उतनाहीं घटाया बढ़ाया जासकता है, न कि उससे अधिक भी । यह भी जान लेना चाहिये कि यदि लम्बाई चौड़ाई केवल हाथों में हो तब भी हाथों के अंगुल बना करही गुणा करना और उसमें ८ का भाग देकर आय निकालना चाहिये । क्योंकि नियम यही है कि जहां दंड या लट्ठे से भूमि नापी जाती है वहां उस दंड के हाथ बनाकर लंबाई चौड़ाई को परस्पर गुणा करते और ८ का भाग देकर आय निकालते हैं और जहां हाथ से नापी जाती है वहां हाथों के अंगुल बनाकर ही गुणा करना और आठ का भाग देना चाहिये । दृष्टान्त के लिये यदि १० हाथ लंबाई और चौड़ाई हो तो १० का १० से गुणाकर १०० गुणनफल में ८ का भाग देने की जगह १० को २४ से गुणाकर पहले उसके २४० अंगुल बना लेने चाहियें । फिर २४० कोही २४०से गुणा कर ८ का भाग देना और इस तरह आय निकालना चाहिये । मण्डप के बनाने में पूर्व आदि दिशाओं का पूरा विचार कर लेना चाहिये, ताकि उसके द्वार ठीक पूर्व आदि दिशाओं में हों, न कि ईशान, अग्नि आदि कोनों में । ऐसा होना हानिकारक माना जाता है । मण्डप के चारों दिशाओं में चार दरवाजे होते हैं और उन दरवाजों को छोड़कर चारों दिशाओं का शेष भाग बांस वगैरह से घेर दिया जाता है ताकि कोई भी दरवाजे के सिवाय दूसरे रास्ते से भीतर घुस न सके । अधम मण्डप का द्वार २ हाथ चौड़ा, मध्यम का २ हाथ ४ अंगुल और उत्तम का २ हाथ ८ अंगुल होता है । यह द्वार बीच में रहते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं नकि कोने की ओर । प्रत्येक द्वार के आगे एक हाथ की दूरी पर मण्डप से बाहर एक और द्वार बनाया जाता है जिसे तोरण कहते हैं । यह तोरण अधम मण्डप में ५ हाथ ऊंचा और २ हाथ चौड़ा, मध्यम मंडप में ६ हाथ ऊंचा, सवा दो हाथ चौड़ा और उत्तम मण्डप में ७ हाथ ऊंचा, ढाई हाथ चौड़ा होता है । यदि होसके तो पूर्व का तोरण पीपल का, दक्षिण में गूलरका, पश्चिम पाकड़ का और उत्तर बरगद का बनावे । नहीं होसके तो सब के सब इन चार लकड़ियों में से किसी एक केही बनावे और यदि चार में से एक भी लकड़ी न मिल सके तो शमी, जामुन और खैर की लकड़ी काम में लावे ।

मण्डप की भूमि के किनारे तीन तीन बराबर हिस्सों में बांटकर हरेक विभाग पर छोटी छोटी खूंटी गाड़दे । इस प्रकार किनारे किनारे चारों दिशाओं में १२ खूँटियां होजांयगी । फिर आमने सामने की सभी खूटियों में कस कस कर रस्सी बांध देवे । ये रस्सियां मण्डप भूमि के भीतर जिन चार स्थानों पर एक दूसरे को छूवें वहां भी चार खूँटियां गाड़े । इस तरह १६ खूंटियां हो जायंगी और मण्डप भूमि के ९ बराबर हिस्से हो जायंगे । इन्हीं सोलह खूँटियों की जगह १६ खम्भे मण्डप बनाने के लिये गाड़े जावेंगे । बीच की ४ खूँटियों की जगह तो ८-८ हाथ के और बाहरी १२ की जगह ५-५ हाथ के । हरेक खम्भे का पांचवां हिस्सा भूमि में गड़ा रहता है और ४ हिस्से ऊपर रहते हैं । पहली खूंटी अग्निकोन में गाड़ी जाती है, खम्भा गाड़ने का पहला गढ़ा भी वहीं खोदा जाता है और पहला खम्भा भी वहीं गाड़ा जाता है । इसके बादही और खम्भों के गढ़े खोदे जाते या खम्भे गाड़े जाते हैं । सभी खम्भे पलाश, पीपल, बड़, पाकड़, गूलर, बिल्व, खैर, साल और देवदार आदि किसी यज्ञिय वृक्ष के होते हैं, नकि आम आदि के । मण्डप के जो ४ द्वार होते हैं उनके खम्भों और तोरण के खम्भों का भी पांचवां हिस्सा जमीन में अवश्य गड़ा रहता है । दृष्टान्त के लिये यदि ५ हाथ का खम्भा हो तो १ हाथ जमीन में रहेगा और ४ हाथ ऊपर । चारों द्वार तो ४ हो हाथ ऊंचे होंगे, क्योंकि बाहर के खम्भे ४ ही हाथ जमीन से बाहर रहते हैं । मगर तोरण अधिक ऊंचा होगा; कारण, यद्यपि अधम मण्डप में तोरण का खम्भा भी ५ हाथ काही होता है, तथापि मध्यम और उत्तम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में ६ और ७ हाथ का होने से उसका पांचवां हिस्सा गाड़ने पर भी ४ और ५ हाथ से ज्यादा ही ऊंचा रहेगा ।

मण्डप के भीतरी चारों खम्भों के सिरों को चूर (चूल) दार बना और चारों के सिरों पर चार बल्लियां लगाकर सिरों को मिला देना चाहिये । बल्लियों के किनारे पर सूराख करके उनमें खम्भों के चूलों को डाल देना चाहिये । इसी प्रकार बाहरी खम्भों के चूलों पर भी बल्लियां रखकर और उनमें सूराख करके खम्भों के चूलों को उन सूराखों में पहना देना होगा । बीच के चार खम्भों में से हरेक के सिरे पर तीन तीन और बल्लियां लगती हैं । एक एक बाहरी चार कोने के चार खम्भों तक; एक एक कोने के खम्भों के दाहिने वाले खम्भे तक और एक एक बायें वाले खम्भों तक । इस प्रकार हर एक खम्भों के सिरे आमने सामने या कोने के खम्भों के सिरों से बल्लियों द्वारा मिल जायंगे और कोई भी हिल डोल न सकेगा । इसीलिये ऐसा किया जाता है । सोलह खम्भों के सिरों पर या तो चूल (चूर) होवें जिनको बल्लियों के सूराखों में डाल देवें, या सूराख ही होवें जिनमें बल्लियों के चूल ठोंक दिये जावें । जहां जहां एक बल्लीको दूसरे खम्भे या बल्ली से मिलाना हो वहां सर्वत्र एक में सूराख और दूसरे के किनारे चूल बना कर ठोंक देना चाहिये, जैसा कि मकानों की छाजन के लिये किया जाता है । इसके सिवाय मजबूती के लिये बीच बीच में और भी बल्लियां लगा कर एक दूसरे में ठोंक दी जावें । जिससे हिले डोले न । फिर उनके ऊपर फूस या चटाई वगैरः से मजबूत छाजन कर देनी चाहिये ताकि पानी बरसने पर चू न सके । बीच के चार खम्भों के मध्य का हिस्सा अभी खुला ही रहेगा । इस छाजन के बाद बीच वाले खम्भों के ऊपर दी गई चार बल्लियों के ऊपर चारों दिशाओं में आधा हाथ या एक हाथ चौड़ा बांस के छड़ों का टट्टर देकर उसके ऊपर शिखर या चोटी बनाना और उस शिखर को भी फूस या चटाई से छा देना चाहिये । शिखर वैसा ही बनाया और छाया जायगा जैसा कि कैंची पर छाया मकान । नीचे की छाजन और शिखर की छाजन के बीच में जो एक हाथ या आधा हाथ चौड़ा बांस का टट्टर बल्लियों पर दिया गया है वह ऊपर से प्रकाश आने और हवन के समय धूआं निकलने के लिये है । मण्डप के भीतर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छाजन के नीचे रंग बिरंगे खद्दर वगैरः की चांदनी और झालर आदि लगाकर शीशे आदि मांगलिक पदार्थों और फूल पत्तियों से उसे सजा देना चाहिये। मण्डप के खम्भों में भी रंगीन खद्दर लपेटकर केले के खम्भे, पत्ते और आम वगैरः के पत्ते से सजाना और चारों ओर बन्दनवार लगाना चाहिये। चारों दर्वाजों के बाहर जो चार तोरण बनाये गये हैं उनमें हरेक में जो दो दो खम्भे हैं उनकी लम्बाई क्रमशः ५, ६, ७ हाथ पहले ही कही गई है। उन खम्भों के सिरों को एक काठ से मिलाना चाहिये। उस काठ की लम्बाई खम्भों की आधी होगी। सारांश, यदि ५ हाथ के खंभे हैं तो वह ढाई हाथ का होगा, ६ हाथ के हैं तो ३ हाथ का और सात हाथ के हैं तो साढ़े तीन हाथ का। उस काठ के दोनों किनारे थोड़ा थोड़ा छोड़ कर ऐसे दो सूराख बनाने चाहियें जिन में उन तोरणों के खम्भों के चूल ठोंके जा सकें। इस तरह उस लकड़ी का थोड़ा सा, लेकिन बराबर, भाग खम्भों के बाहर दोनों ओर निकला रहेगा। इस प्रकार जो ये चार लकड़ियां चारों तोरणों के खम्भों के ऊपर लगाई गई हैं उनके ऊपर ठीक मध्य में उसी काठ का ही त्रिशूल लगावे जिसका तोरण बना हो। यह काम उस याग में करना चाहिये जिसमें किसी न किसी प्रकार से शिव की प्रधानता हो। पर, यदि विष्णु की प्रधानता हो तो पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर के तोरणों के ऊपर क्रम से शंख, चक्र, गदा और कमल लगाना चाहिये। त्रिशूल की तीन कीलों में से बीच की जो कील नीचे तक बढ़ी रहती है वही तोरण में सूराख करके ठोंक दी जाती है। उसकी लम्बाई अधम, मध्यम, उत्तम मण्डपों में क्रम से ९, ११, १३ अंगुल और शंखादि की लम्बाई क्रम से १०, १२, १४ अंगुल होती है। त्रिशूल या शंख आदि की चौड़ाई अपनी अपनी लंबाई की चौथाई होती है। सभी तोरणों के काठों में उन कीलों के क्रमशः दो, तीन और चार अंगुल गाड़े जाते हैं जो त्रिशूल या शंख के नीचे इसीलिये बनी होती हैं। त्रिशूल के ऊपर जो तीन कीलें दीखती हैं उन में बीच की सीधी होती है और बगल की दोनों तरफ जरा जरा बाहर झुकी रहती हैं। उन्हीं तीनों की लम्बाई ९, ११ या १३ अंगुल ऊपर लिखी गई है। क्योंकि तीनों कीलें बराबर ही होती हैं न कि छोटी बड़ी और जिस काठ पर वे तीनों निकली रहती हैं उसकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लंबाई कील की लंबाई की चौथाई होती है । शंख आदि की चौड़ाई बीचों बीच नापी जायगी । सिर्फ तोरण में गाड़ने केही लिये त्रिशूल या शंखादिके नीचे छोटी छोटी कीलें लकड़ी की ही लगी रहती हैं ।

मण्डप के शिखरपर और चारों ओर खद्दरकी ध्वजायें और पताके लगे रहते हैं । साधारणतः यही नियम है कि ध्वजा और पताका को लोग एकही अर्थ में कहा करते हैं । मगर मण्डप के बनाने में ध्वजाओं और पताकाओं का अलग अलग वर्णन आया है । इसलिये ऐसे स्थानों में ध्वजा और पताका में भेद माना जाता है। ध्वजा तिन-कोनी होती है और पताका चौकोनी । बस इतनाहीं भेद है । शेष बातों में समानता है । मण्डप के शिखर पर जो ध्वजा लगाई जाती है वह १० हाथ लम्बी और ३ हाथ चौड़ी होती है । उसका कपड़ा पंचरंगा होता है—कई रंगों में रंगा रहता है और उसपर बैलकी आ-कृति बनी रहती है । पर, यदि विष्णुयाग होवे तो बैल की जगह गरुड़ की आकृति बनानी चाहिये । यही महाध्वजा कहाती है । इसे दस हाथके बांसमें पहनाना चाहिये । बांसके सिरेपर चमर लगाना चाहिये और ध्वजा के किनारे (अन्तिम नोंक) पर घुंघुरू लगा रहता है । इस महाध्वजाको मण्डप के शिखरपर लगा-कर दृढ़ बांधना चाहिये जिससे इधर उधर डोल या गिर न सके । इसके बाद दस दिशाओं में दस दिकपालों की १० ध्वजाएं और १० पताकायें खड़ीकरे । बीसों के बांस दस दस हाथ केही रहेंगे और दो दो हाथ जमीन में गाड़ दिये जायंगे । केवल ८ हाथ ऊपर रहेंगे। ध्वजाओंकी लम्बाई ५ हाथ और चौड़ाई दो हाथ एवं पताकाओंकी लम्बाई ७ हाथ तथा चौड़ाई एक हाथ होती है । ८ पताकायें और ८ ध्वजायें क्रमसे पूर्व, अग्नि, दक्षिण आदि ८ दिशाओं में १० हाथ के बांसों में पहनाकर खड़ी की जाती हैं, ९ वीं पताका एवं ९ वीं ध्व-जा पूर्व और ईशान कोन के मध्यमें और दसवीं पश्चिम और नै-र्ऋत्य के बीचमें खड़ी होती है । इन दसों ध्वजा-पताकाओं के रंग क्रमसे वही होते हैं जो दस लोकपालों के हैं और दस लोकपालों का रंग क्रमसे पीला, लाल, काला, नीला, श्वेत, काला, हरा, श्वेत, लाल, और नीला है । लोकपालों (दिक्पालों) का स्थान पूर्व दिशासे प्रारम्भ होकर अग्नि, दक्षिणादि ८ दिशाओं और कोनों में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आठ, पूर्व और ईशान के बीच में ९ वां और पश्चिम, नैर्ऋत्य के बीच में १० वां है। उनके नाम क्रमसे इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुवेर, रुद्र, ब्रह्मा और अनन्त हैं। ब्रह्माका स्थान पूर्व, ईशानके बीच और अनन्तका पश्चिम, नैर्ऋत्यके मध्यमें है। शेष आठ क्रम से पूर्व आदि आठ दिशाओं में रहते हैं। इन्द्र, अग्नि, यम, निर्ऋति और वरुण के रंगों के बारे में तो मत भेद नहीं है। मगर वायु और कुबेर के बिषय में मतभेद है। किसी किसी ने वायु को हरा और कुवेरको पञ्चरंगा भी कहा है और कुवेरको सफेद भी कहीं कहीं लिखा है। इसी तरह ब्रह्माको भी सफेद लिखा है। मगर ब्रह्माका लाल वर्णहीं ठीक है और वायु का काला एवं कुबेर का हरा ही अधिक मान्य है, जैसा कि ऊपर गिना दिया है। फिर भी, यदि दूसरे रङ्ग भी लगावें तो विरोध की बात नहीं है। क्योंकि वैसा भी किसी का मत है। इन पूर्वोक्त रंगों में ही ध्वजा पताका को रंगते हैं। इसके सिवाय दस ध्वजाओं पर अलग अलग दस लोकपालों के बाहनों के चित्र एवं पताकाओंपर उनके अस्त्रोंके आकार गेरू या और चीजों से बनाये जाते हैं। लोकपालों के बाहन क्रमसे हाथी, भेड़ा (मेष), भैंसा, सिंह, मछली, हरिण, घोड़ा, बैल, हंस और गरुड़ हैं। उनके अस्त्रभी क्रमशः वज्र, शक्ति (बरछी), दण्ड, खड्ग, (तलवार) पाश (फांसा या जाल), अंकुश, गदा, त्रिशूल, कमण्डलु और चक्र हैं। पूर्वद्वार से आरम्भ कर अग्नि, दक्षिण आदि दिशाओं में दक्षिणावर्त्त क्रमसे पताकाएं और ध्वजाएं गाड़ी जाती हैं। उनमें भी पहले पताका उसके बाद ध्वजा, फिर पहले पताका उसके बाद ध्वजा यही क्रम दसोंमें होता है। पूर्व के द्वारके उत्तर बगल में पताका और दक्षिण में ध्वजा। इसी तरह अग्निकोन में उत्तर ओर पताका दक्षिण ओर ध्वजा। यही क्रम सर्वत्र रहता है। पूर्व, ईशान के बीच में ब्रह्मा की पताका गाड़ कर उसके दक्षिण ध्वजा गाड़ते है। निर्ऋति, पश्चिम के मध्य में अनन्त की पताका पहले गाड़ते है, उसके उत्तर उनकी ध्वजा। ध्वजा पताकाओं के गाड़ने में दसों लोकपालों के मंत्रों के पढ़ने की भी विधि है। कहीं कहीं उन्हें विना मंत्र के ही गाड़ देते हैं और मंत्रों को पढ़कर पीछे पूजा के समय पूजा कर देते हैं। यही ठीक भी है। ध्वजा आदि तो मण्डप के शृंगार भी हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसलिये मण्डप बनाने के साथ ही उन्हें भी खड़ा कर देना चाहिये। फिर जैसे मण्डप के खम्भों आदि की पूजा करते हैं उसी तरह ध्वजा प्रभृति के पास भी पूजा कर देना चाहिये और उसी समय मंत्र भी पढ़ना उचित है। फिर भी लोगों की जैसी मर्जी। ध्वजा खड़ी करने में पढ़ना भी अच्छा ही है। इस प्रकार मण्डप तैयार होता है। मण्डप के बीच की भूमि से किनारे की भूमि जरा सी ढालू होनी चाहिये। शीशे की तरह चौरस न होनी चाहिये। कहीं कहीं पूर्व और उत्तर में जरासी ढालू लिखा है। जिससे जल आदि गिरे तो बह जावे। दस लोकपालों की ध्वजाओं और पताकाओं के पास एक एक कलश भी स्थापित किये जाते हैं और लोकपालों को उड़द, भात, दही और अक्षत की बलि भी दी जाती है। मगर यह सब काम पूजा के समय किया जाता है। किसी के मत से पूजा के आरम्भ में ही दस लोकपालों के २१ कलश स्थापित किये जाते और बलि दी जाती है और किसी के मत से पूजन और कलश स्थापन पहले करते हैं और बलि पीछे दी जाती है यज्ञ के अन्त में पूर्णाहुति कर चुकने से पहले। मगर पूजन के साथही बलि देना चाहिये। क्योंकि बलि तो भेंट या नजर ठहरी। फिर पूजा के साथ ही उसे अर्पण कर देना युक्ति संगत है। फिर भी जैसी इच्छा हो। इसी प्रकार चार तोरणों के पास भी चार कलश स्थापित किये जाते हैं जिनमें नव ग्रहों का आवाहन पूजन होता है। जैसे मकान बनाने के लिये भूमि का संशोधन किया जाता है उसी तरह मण्डप की भूमि का भी संशोधन उचित है। पुण्याहवाचन करके गणेश का पूजन "ॐ महागणपतये नम" इस मंत्र से चन्दन, पुष्प, धूप, दीप और नैवेद्य चढ़ा कर करना चाहिये। इसका नाम पञ्चोपचार पूजन कहलाता है। उसके बाद "ॐ भूम्यैनमः" मंत्र से भूमि का, "ॐ कूर्मायनमः" मंत्र से कूर्म का और "ॐ अनन्तायनमः" से अनन्त का पूजन पञ्चोपचार विधि से करना चाहिये। इसके बाद मण्डप का आरम्भ करना चाहिये। यदि दो या अधिक मण्डप बनाने हों तो एक मण्डप के बाद मण्डप जितनी जगह छोड़ कर दूसरा बनाना चाहिये न कि पास पास ही। आरम्भ में गणेश आदि देवताओं का पूजन सुपारी या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

किसी फल फूल में आवाहन करके उसी पर करना चाहिये ।

मण्डप के बीच के जो चार खम्भे हैं उन्हीं के बीच में प्रधान वेदी बनाई जाती है जिस पर उस यज्ञ के प्रधान देवता का स्थापन करके पूजन किया जाता है । मण्डप के खम्भों के गाड़ने से उसके नौ बराबर भाग हो जाते हैं और बीच के भाग में प्रधान वेदी बनाई जाती है। मध्य के भाग की लम्बाई चौड़ाई भर ही वेदी लम्बी चौड़ी होती है । वह चौकोनी, चौरस और एक हाथ ऊँची होती है । लेकिन तुलादान के लिये जो मंडप बनता है वहाँ अधम और मध्यम मंडप में ५ हाथ और उत्तम में ७ हाथ लम्बी चौड़ी प्रधान वेदी होती है। इसके सिवाय मंडप के नौ भागों में जो ईशान कोनवाला होता है उसमें नवग्रहों की वेदी रहती है । यह २४ या ३४ अंगुल लम्बी चौड़ी और १२ या १६ अंगुल ऊँची तथा चौरस होती है । मातृकापूजन के लिये ऐसी ही वेदी अग्निकोन में; वास्तुदेवता की नैर्ऋत्य में और क्षेत्रपाल की वायुकोन में रहती है । प्रधान वेदी के ऊपर पंचरंगे खद्दर का वितान या चन्दोवा लगा रहता है जिसके किनारे पत्ते, फूल और फल आदि से सजाये होते हैं । ग्रहों की वेदी के बाहर चारों ओर दो मेखलायें होती हैं जिन्हें वप्र भी कहते हैं । मेखला एक प्रकार की सीढ़ी है और उसी तरह की बनाई जाती है । वेदी के बाहर चारों ओर ४ अंगुल चौड़ी और २ अंगुल ऊँची पहली मेखला होती है । फिर उस मेखला के ऊपर ही बाहर की तरफ २-२ अंगुल छोड़कर शेष २ अंगुल पर दूसरी मेखला ३ अंगुल ऊँची और २ अंगुल चौड़ी बनती है । इस प्रकार वेदी के चारों ओर दो दो सीढ़ियों की आकृति बन जाती है और उनके ऊपर सात अंगुल ऊँची, एक हाथ लम्बी और एक हाथ चौड़ी ग्रहवेदी प्रतीत होती है । क्योंकि वेदी की १२ अंगुल की ऊँचाई में से ५ अंगुल तो दो मेखलाओं की ऊँचाई से ही ढंक जाते हैं। और किसी वेदी पर मेखला बनाने का वर्णन नहीं मिलता।

प्रधान वेदी के चारों ओर कुण्ड बनाये जाते हैं । कुण्ड बनाने में तीन पक्ष हैं अधम, मध्यम और उत्तम । साधारणतः अधम पक्ष वही है जब कि केवल एक ही कुण्ड होता है और उसी में सम्पूर्ण हवन होता है । मध्यम पक्षमें ५ कुंड और उत्तम पक्ष में नौ कुंड बनाये जाते हैं । हां, तुलादान आदि जो सोलह प्रकार के दान हैं उनमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्यम पक्ष में सिर्फ चारही कुंड बनाये जाते हैं न कि पांच । उत्तम पक्षमें नौ और कनिष्ठ पक्षमें एक तो वहां भी बनते ही हैं । जितने कुंड बनाये जाते हैं, सभी प्रधान वेदी से सवा हाथ के फासिले पर। या जितनी लम्बी वेदी हो उसका चौथाई फासिला कुंड और वेदी के बीचमें रहता है । कहीं कहीं यह भी लिखा है कि वेदी से १३ अंगुल की दूरी पर ही कुण्ड बनाये जावें । पूर्वोक्त इन तीन बातों में से कोई कर सकते हैं । पर, देखना यह होगा कि मण्डप कितना लंबा है । उसी के अनुसार १३ अंगुल, सवा हाथ, वा वेदी का चौथाई फासिला रक्खा जायगा ।

जब केवल एकही कुंड बनाया जाता है तो वह प्रधान वेदी से उत्तर, पश्चिम वा ईशान कोन में रहता है । वह या तो सभी वर्णों के लिये चौकोन होता है या गोला (वृत्ताकार) । अथवा ब्राह्मण के लिये चौकोना, क्षत्रिय के लिये गोला, वैश्य के लिये अर्धवृत्त वा अर्द्धचन्द्राकार और शूद्र के लिये तिकोना । यदि स्त्री यजमान हो तो चाहे किसी वर्णकी हो उसका कुंड योनिके आकार का, यानी पान या पीपल के पत्ते की सूरत का बनाना चाहिये ।

जब मध्यम पक्षमें ४ या ५ कुंड बनते हैं तब प्रधान वेदी से पूर्व में चौकोना, दक्षिण में अर्धचन्द्रके आकार का, पश्चिम में गोला और उत्तर में अष्टदल (आठ पत्ते वाले) कमल के आकार का बने और पांचवां ईशान कोनमें चौकोना या गोला बनाया जावे ।

जब उत्तम पक्षमें ९ कुंड बनें तब पूर्वोक्त चार दिशाओं के चार कुंडों के सिवाय अग्नि कोन में योनि के आकार का, जैसा पहले कहा है, नैर्ऋत्य में तिकोना, वायव्य में छकोना और ईशान में अठकोना बनावे । इस तरह आठ कुंड हो जाने पर नवां पूर्व और ईशान कोन के कुंड के बीच में चौकोना या गोला बनावे । यही आचार्य का कुंड कहाता है । पांच कुंड वाले मध्यम पक्षमें यही कुंड ईशान कोन में बनाया जाता है ।

जैसे ग्रहवेदी के चारों ओर सीढ़ी की तरह मेखला बनती है उसी तरह कुण्डों के बाहर भी मेखला बनती है । जैसा कुंड होगा गोला, चौकौन या अर्धचन्द्राकार, उसकी मेखला भी उसी प्रकार की होगी । कुंड का बाहरी घेरा जैसा टेढ़ा या सीधा होगा वैसीही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेखला भी होगी। मेखला के बारे में दो सिद्धान्त हैं। पहला यह कि यदि एकही मेखला रहे तो वह अधम, दो रहें तो मध्यम और तीन रहें तो उत्तम पक्ष कहाता है। दूसरा यह कि यदि दो रहें तो अधम, तीन से मध्यम और पांच से उत्तम। अतः चाहे १, २, ३ मेखला वाला पक्ष मानिये या २, ३, ५ वाला। किसी किसी ने यह भी लिखा है कि एक मेखला वैश्य के कुंड में बनाई जाती है, दो क्षत्रिय के और तीन ब्राह्मण के और शूद्र के कोई नहीं होती। अब रहीं कर्त्ता की मर्जी। चाहे जिस पक्ष को मान कर काम करे।

चौकोना कुंड जितना लम्बा चौड़ा हो उतनीहीं गहराई भी कुंड की होनी चाहिये। यानी लम्बाई, चौड़ाई और गहराई तीनों बराबर ही रहनी चाहिये। यह बात बहुतों ने मानी है। लेकिन कुछ लोगों का कहना है कि मेखलायें तो भूमिके ऊपर बनेंगी। इसलिये मेखलाओं की ऊंचाई को कुंड की गहराई में शामिल न करके जितना लम्बा या चौड़ा कुंड हो उतनाहीं गहरा जमीन में खोदा जावे। इसपर पहले पक्षका कथन है कि ऐसा नहीं, मेखलाओं की ऊंचाई को भी कुंड की गहराई में सम्मिलित करके ही कुंड की गहराई उसकी लंबाई चौड़ाई के बराबर होती है। इसलिये मेखलाओं की ऊंचाई को बाद देकर ही शेष जमीन में खोदना चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि एक हाथ लंबा कुंड होतो चौड़ा भी एक ही हाथ होगा यह तो निर्विवाद है। मगर ऐसे कुंडों में तीनों या पांचों मेखालाओं की ऊंचाई कुल ९ अंगुल होगी। यहां पर पहले पक्षके अनुसार भूमिमें सिर्फ १५ अंगुल ही खोद कर मेखला के साथ एक हाथ (२४ अंगुल) गहरा कुंड बनावेंगे और दूसरे मत के अनुसार पूरा एक हाथ भूमि में खोदेंगे। इस तरह ३३ अंगुल गहरा कुंड होगा। अब इसमें करनेवाले की मर्जी है चाहे जैसा करे। मगर यदि आहुति अधिक देनी हो तो एक हाथ खोदे और यदि कम देनी हो तो १५ ही अंगुल, यही समझ रखना चाहिये। चौकोन कुंडके सिवाय और कुंडों की लम्बाई चौड़ाई एकसी नहीं होती। इसलिये गहराई का हिसाब चौकोन कुंड से ही लगाया जाता है। अर्थात् जितना गहरा वह होगा उस के साथ बने हुए और भी तिकोने आदि कुंड उतने हीं गहरे होंगे। नियम भी यही है कि चौकोन कुंड की लम्बाई

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चौड़ाई और गहराई के अनुसार उसका क्षेत्रफल जितना होगा, उसके साथ के अन्य कुंडों काभी उतनाहीं होगा । एतदर्थ उनकी गहराई को न घटा बढ़ाकर सिर्फ लम्बाई और चौड़ाई कोही घटाते बढ़ाते हैं । ऐसा नहीं हो सकता कि एक मण्डप के अन्दर बने हुए कुण्डों की गहराई या क्षेत्रफल में जराभी अन्तर हो । कुंड की दीवार और बाहरी भाग एक समान होता है न कि टेढ़ा सीधा होना, कहीं ऊपर निकला और कहीं भीतर घुसा रहना ठीक है । जितनी लम्बाई चौड़ाई ऊपर हो पेंदी में भी ठीक उतनीहीं चाहिये । इसलिये ठीक नाप करना और ईंट आदि से बनाना चाहिये ।

कुंड खोदा जाता है भूमिमें और उसकी मेखला बनती है जमीन के ऊपर । जितना लम्बा चौड़ा खोदा गया हो उसके बाहर चारों ओर एक एक या दो दो अंगुल छोड़कर मेखला की भीतरी दीवार बनती है । यह जो एक या दो अंगुल चारों तरफ छोड़ा जाता है उसको कंठ कहते हैं । ज्यादातर एकही अंगुल का कंठ होता है । पर कहीं कहीं दो अंगुलका भी लिखा है । मेखलाओंकी ऊंचाई का यही नियम है कि यदि २४ अंगुल चौड़ा कुंड हो तो तीनों या पांचों मेखलायें मिल कर ९ अंगुल ही ऊँची होंगी । इसलिये उन सभी की भीतरी दीवार सीधी ९ अंगुल होगी और एक अंगुल वाले कंठ से मिली खड़ी रहेगी। क्योंकि सीढ़ी का आकार तो बाहर की ओर रहेगा न कि कुंड के भीतर । पर, यदि एकही मेखला बनावें तो वह ६ अंगुल ऊंची और ६ ही अंगुल चौड़ी होगी । किसी किसीने यह भी लिखा है कि जब तीन मेखलायें बनें तो हरेक ४ अंगुल चौड़ी और ४ अंगुल ऊंची हो । इस पक्षमें तीनों की भीतरी दीवार मिला कर १२ अंगुल ऊंची होगी । परन्तु ९ अंगुल वाला पहले बताया गया पक्षही ज्यादा माना जाता है । कुंडकी लम्बाई या गहराई जितने अंगुल हो उसका चौबीसवाँ हिस्सा कंठकी चौड़ाई होती है । इसलिये यदि एक हाथ से अधिक २ या ३ हाथ चौड़ा कुंड हो तो उसी हिसाब से २ या ३ अंगुल चौड़ा कंठ होगा और उसी कंठकी नौगुनी मेखलाओंकी ऊंचाई होगी । इसलिये जब कि एक हाथ के कुंड में मेखलाओंकी भीतरी दीवार ९ अंगुल ऊंची होगी तो दो हाथ वाले में १८ अंगुल और ३ हाथ वाले में २७ अंगुल । हां, मेखलाकी चौड़ाई में अन्तर होता है । जब तीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेखला बनाते और तीनों मिलकर ९ अंगुल ऊंची मानते हैं तो तीनों की चौड़ाई भी ९ ही अंगुल होती है । मगर जब ५ मेखलायें बनाते हैं तब उन सबों की ऊंचाई मिलकर यद्यपि ९ ही अंगुल होती है मगर चौड़ाई कुल मिलाकर २० अंगुल होती है । क्योंकि सब से ऊपर की ६ अंगुल, उसके नीचेकी ५, उसके नीचेकी ४, उसके नीचे की ३ और उसके नीचेकी २ अंगुल चौड़ी रहती है । और ९ अंगुलकी ऊंचाई जो पांचों की मिलकर है उसमें पांचों का बराबर भाग है । इसलिये हरेक की ऊंचाई १ अंगुल और लगभग साढ़े नौ जौ के बराबर यानी करीब करीब पौने दो अंगुल से जरासा अधिक होती है । इस तरह सबों की चौड़ाई मिलकर २० अंगुल और ऊंचाई ९ अंगुल है । पर, जब ३ हीं मेखला बनाते हैं तो सबसे ऊपर वाली ४ अंगुल चौड़ी और २ अंगुल ऊंची होती है; उसके नीचेकी ३ अंगुल चौड़ी और ३ अंगुल ऊंची और उसके नीचेकी २ अंगुल चौड़ी और ४ अंगुल ऊंची होती है । दो, तीन आदि हाथ लम्बे कुंडों में इसी ऊंचाई और चौड़ाई को दूना तिगुना करने से मेखला की ऊंचाई और चौड़ाई होगी ।

सभी कुण्डों में दो अंगुल ऊंची और ४ अंगुल लम्बी चौड़ी नाभि होती है । केवल कमलाकार कुण्ड में नाभि नहीं रहती । नाभि कुंड की पेंदी में बनाई जाती है और वह या तो जैसी आकृति का कुंड होता है उसी तरह की होती है या सभी कुण्डों में आठ पत्ते वाले कमल के आकार की रहती है ।

योनि कुंड को छोड़ कर सभी कुण्डों में योनि बनाई जाती है जो पीपल के पत्ते या पान के आकार की होती है । कुंड में जिस तरफ योनि बनी होती है उसी तरफ बैठकर हवन किया जाता है । पूर्व, अग्नि और दक्षिण के कुण्डों में और आचार्य का जो कुंड ईशान एवं पूर्व के बीच में बनता है उसमें भी योनि दक्षिण तरफ ही बनाई जाती है । इस लिये हवन कर्त्ता दक्षिण ओर उत्तर मुख बैठ कर होम करता है । शेष पांच कुण्डों में, जो नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायु, उत्तर और ईशान कोन में बनाये जाते हैं, पश्चिम ओर बनाई जाती है । जिस से हवन करने वाला पश्चिम की तरफ पूर्वमुख बैठकर आहुति देवे । किसी किसी ने यह भी लिखा है कि जिन तीन कुंडों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की योनि दक्षिण ओर बनाने को कहा गया है वह नौ कुण्ड वाले उत्तम पक्ष में हीं । पर, यदि १, ४ या ५ कुंड ही बने हों तो कुण्ड चाहे किसी दिशा में हों, उनकी योनि पश्चिम तरफ ही बनाई जाती है । परन्तु यह सर्वमान्य पक्ष नहीं है । जब १२ अंगुल ऊंची मेखला होती है तब योनि की लम्बाई १५ अंगुल और चौड़ाई १० अंगुल होती है । पर, ९ अंगुल वाली मेखला रहने पर वह १२ अंगुल लम्बी और ८ अंगुल चौड़ी होती है । यह मेखला के ऊपर बनाई जाती है । इसका अगला भाग क्रमशः पतला होते होते नोकदार हो जाता है और कुंड के भीतर एक अंगुल घुस जाता है । योनि की ऊंचाई एक अंगुल होती है और इस के ऊपर एक अंगुल चौड़ी और एक अंगुल ऊंची मेखला बनाई जाती है जिसे परिधि कहते हैं । यह परिधि उसके किनारे किनारे चारों ओर होती है और इस परिधि को मिला कर योनिका आकार पूरा होता है नकि यह योनि से बाहर होती है । योनि का पिछला भाग जो कुण्ड से बाहर की ओर होता है क्रमशः चौड़ा होता हुआ पीपल के पत्ते या पान के आकार का हो जाता है और इस प्रकार समूची योनि का आकार ही उस पत्ते का सा हो जाता है । जैसे पत्ते के बीच में नस की तरह एक डांटी लगी रहती है और पत्ता बीच में कुछ दबा सा प्रतीत होता है ठीक उसी तरह योनि की लम्बाई में भी बनाते हैं जिस से बीच में वह दबी मालूम पड़ती है । योनि के बीचों बीच एक इतना चौड़ा सूराख रखते हैं जिस पर घी से भरा स्रुक् रक्खा जासके । योनि का यह सब परिमाण २४ अंगुल के कुंड के लिये कहा है । पर यदि कुंड का विस्तार दूना तिगुना आदि होवे तो उसी हिसाब से योनि की भी लम्बाई चौड़ाई वगैरः बनाना चाहिये ।

कुण्ड की सब से ऊपर वाली मेखला श्वेत पुष्प, चूर्ण, और चावल आदि से सजाई जावे, उसके नीचे की लाल से और उसके नीचे की काले से । तीन मेखला वाला पक्ष ही प्रधान है । इसीलिये तीनका लिखा है । यदि एक ही हो तो उसी पर तीनों रंग देना और यदि ५ हों तो चौथी को पीले और पांचवीं को हरे से रंगना चाहिये । योनि को भी लाल रंग, चूर्ण, फूल, चावल और वस्त्र से सजाना चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि किसी कारण से कुंड न बना सकें और ज्यादा आहुति न देनी हो तो एक हाथ लम्बी और एक हाथ चौड़ी एवं १ या ४ अंगुल ऊंची चौकोनी वेदी बनावें जो उत्तर और पूर्व ओर ढालू हो। इसे ही स्थण्डिल कहते हैं। ज्यादा आहुति में इससे काम नहीं चलता। किन्तु जितनी आहुति के लिये एक हाथ का कुंड बनाते हैं ज्यादा से ज्यादा उतनी हीं के लिये स्थण्डिल भी बनाया जा सकता है नकि अधिक के लिये। हां, न हो सकने पर तो बात ही दूसरी है। तब तो चाहे जितनी भी आहुति के लिये स्थंडिल बना सकते हैं। पीली, चिकनी मिट्टी या महीन बालू से यह स्थण्डिल बनाया जाता है। इसमें योनि या मेखला बनाने की चाल नहीं है। परन्तु किसी किसी का कहना है कि जब कुण्ड की जगह पर ही बनाते हैं तो फिर योनि और मेखला भी क्यों न बनावेंगे? इसलिये दोनों पक्ष होगये, यद्यपि अधिक माननीय यही है कि मेखला और योनि न बनाई जावे। कोई कोई स्थण्डिल की ऊंचाई ५ और ८ अंगुल भी कहते हैं। पर ज्यादातर लोग एक या चार अंगुल ऊंचा ही बनाते हैं। योनि बनाने में यह ध्यान हमेशा रहे कि कुण्ड के कोन में वह न बनाई जावे, किन्तु दक्षिण या पश्चिम दिशा के बीचों बीच बने।

कुण्ड की लंबाई चौड़ाई के बारे में यही सामान्य नियम है कि १ से ९९ आहुतियों तक के लिये २२ अंगुल हो; १०० से ९९९ तक २२॥ अंगुल; १००० से ९९९९ तक २४ अंगुल (एक हाथ); १०००० से ९९९९९ तक ३४ अंगुल; १००००० से ९९९९९९ तक ४८ अंगुल; १०००००० से ९९९९९९९ तक पौने ५९ अंगुल और १००००००० या इससे ऊपर के लिये एक जौ कम ६७ अंगुल, एक जौ कम ७६ अंगुल वा ९६ अंगुल इन तीनों में से कोई होना चाहिये। किसी का कहना है कि १ लाख आहुति के लिये १ हाथ का; दो लाख के लिये दो हाथ का और तीन लाख के लिये तीन हाथ का। इसी प्रकार बढ़ते बढ़ते १० लाख के लिये १० हाथ का कुण्ड होवे। तीसरे का कहना है कि ५० हजार के लिये ३ हाथ का; १ लाख के लिये ४ हाथ का; १० लाख के लिये ५ हाथ का; २० लाख के लिये ६ हाथ का और ५० लाख के लिये ७ हाथ का कुंड होना चाहिये। इन पीछेके दो मतो में भी यह समझ लेना चाहिये कि यदि दो लाख के लिये २ हाथ का कुण्ड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहा है तो उससे एक आहुति भी कम होने पर १ हाथ का ही होगा। इसी तरह ५० हजार या उससे अधिक के लिये यदि ३ हाथ का है तो एक भी आहुति कम होने पर दोही हाथ का होगा और वह दस हजार तक के लिये रहेगा। इससे कम होने पर वही २२॥ अंगुल और २२ अंगुल का। ऐसे ही जितने के लिये जितने अंगुल का कुण्ड बताया गया है उससे कम के लिये कम वाला होगा। मगर उससे ज्यादा के लिये वहां तक वही रहेगा जहां से दूसरा कुण्ड बताया गया है। दृष्टान्त के लिये जब तीसरे मत में १० लाख के लिये ५ हाथ का और २० लाख के लिये ६ हाथ का कहा गया है तो १० लाख से १ आहुति कम होने पर भी ५ हाथ का नहीं बन कर ४ ही हाथ का बनेगा। इसी प्रकार सर्वत्र समझना चाहिये। पर, कुण्ड के मामिले में पीछे के दो मतों को प्रायः लोग नहीं मानते, किन्तु पहले का ही मत माना जाता है। फिर भी कर्त्ता चाहे जो कर सकता है।

एक हाथ, दो हाथ या अधिक लम्बा लिखने से एक भ्रम होगा। लोग समझेंगे कि जैसे एक हाथ का कुण्ड २४ अंगुल लम्बा होता है, उसी तरह दो हाथ का ४८ अंगुल इत्यादि। मगर बात ऐसी नहीं है। दो या तीन हाथ कहने से लम्बाई दो या तीन गुनी नहीं हो जाती, किन्तु केवल क्षेत्रफल दो या तीन गुना होता है। जैसे, यदि एक हाथ या २४ अंगुल के कुण्ड का क्षेत्रफल ५७६ वर्ग अंगुल है तो दो हाथ वाले का ११५२ (५७६ × २) और ३ हाथ वाले का १७२८ (५७६ × ३) वर्ग अंगुल होगा। इसी तरह चार आदि का भी जानना चाहिये। कुण्ड की लम्बाई चौड़ाई को गुणा कर देने से क्षेत्रफल आ जाता है। कुण्ड की लम्बाई चौड़ाई तो बराबर ही रहती है। इसलिये या तो दोनों को गुणा करें या किसी का वर्ग करें, फल एक ही होता है। किसी अंक को उसी अंक से गुणा करने को वर्ग करना कहते हैं और इस तरह जो गुणन फल (गुणा करने से फल) आता है वह वर्गफल कहाता है। इस लिये २४ अंगुल के कुण्ड का क्षेत्रफल निकालने में २४ का वर्ग करने से जो फल आवेगा ५७६, वह वर्ग अंगुल कहलावेगा न कि केवल अंगुल। इसी तरह गज को गज से गुणा करने से वर्ग गज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होगा । इसी प्रकार और भी जानना चाहिये । जब दो हाथ के कुण्ड का क्षेत्रफल ५७६ का दूना ११५२ वर्ग अंगुल होगा, तब यह देखना चाहिये कि कितने अंगुल की लम्बाई चौड़ाई रखने से ११५२ आजाता है । बस, उतने हीं अंगुल दो हाथ वाले कुंड की लंबाई चौड़ाई होगी। अर्थात् ११५२ का वर्गमूल निकालना होगा; यह देखना होगा कि किस अंक को उसी अंक से गुणा कर देने से ११५२ आ जाता है। इसी को वर्गमूल निकालना कहते हैं । यहां पर ११५६ का वर्गमूल ३४ है नकि ११५२ का। इसलिये ३४ अंगुल से जरासा कम कुंड की चौड़ाई होगी। इसी तरह ३ हाथ वाले में ५७६ को ३ गुना करने पर १७२८ आता है। उसका वर्गमूल निकालने पर साढ़े एकतालीस अंगुलसे कुछ ज्यादा लंबाई आवेगी । इसी प्रकार ४ हाथ वाले में ४८, ५ हाथ वाले में साढ़े तिरपन से कुछ ज्यादा, ६ में पौने ५९, सात में साढ़े ६३, आठमें एक जौ कम ६८, नौ में ७२, १० में एक जौ कम ७६ अंगुल और १६ में ९६ अंगुल समझना चाहिये । इसीलिये हमने पहले पहल लिखी लंबाई में जो २४ और ३४ आदि अंगुल लिखे हैं उनका अभिप्राय एक और दो आदि हाथ सेही है । केवल भ्रम न होने देने के ही लिये वैसा लिखा है ।

यह तो पहलेही लिखाजा चुका है कि एक मण्डप में जितने भी कुंड होंगे, चाहे उनके आकार कैसे भी हों मगर, सभी का क्षेत्रफल और गहराई यह दो बातें बराबरही होंगी और एक, दो या अधिक जितनी मेखलायें एक कुंड में होंगी उतनी हीं दूसरों में भी । ऐसा न होगा कि किसी में एक हो तो किसी में दो और किसी में तीन आदि। साथही, एक की मेखला जितनी चौड़ी या ऊंची होगी दूसरों की भी उतनी हीं चौड़ी ऊंची होगी । सभी कुंडों की पेंदी या दीवारें बराबर और देखने में सीधी एवं सुन्दर मालूम होंगी । इसका यह अर्थ नहीं है कि छकोने, अठकोने या कमलाकार कंड की भी दीवारें चौकोने कीही तरह बराबर रहेंगी । नहीं नहीं, उनकी दीवारों के देखने से ६ या ८ कोन अथवा कमल का आकार स्पष्ट प्रतीत होना चाहिये । पर, इससे अधिक टेड़ा या भद्दापन नहीं होना चाहिये । नाभि की ऊंचाई छोड़कर शेष पेंदी चौरस रहे। इन सब बातों में या कुंडों के क्षेत्रफलों में कमी वेशी रहने, ठीक दिशाओं में न बनाकर कोनाकानी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बनाने, अथवा गहराई की गडबड़ी रहने पर बड़ा दोष लिखा है। इसी से यह ताकीद करनी पड़ती है। इसीलिये स्केल और परकार वगैरः लेकर और गणित की रीति से प्रत्येक कुंड की लंबाई, चौड़ाई या गोलाई वगैरः ठीक ठीक निकालकर वैसाही बनाना चाहिये। यद्यपि चौकोना कुंड बनाने में कम परेशानी होती है, क्योंकि उसकी भुजायें या दीवारें वगैरः सीधी होती हैं। तथापि चौकोने के क्षेत्रफल के बराबरही तिकोना, छकोना, अठकोना, कमलाकार, गोलर, योनि और अर्धगोला कुंड बनाने में बड़ाही कष्ट होता है। विशेषतः उन लोगों को जिनको रेखागणित आदि का ज्ञान नहीं है। अतएव उनके लिये आसान तरीका यह है कि चाहे जो भी कुंड बनाना हो उस स्थान पर पहले आहुति की संख्या के हिसाब से २४ अंगुल या ३४ आदि अंगुल लम्बे चौड़े चौकोने कुंड का चिन्ह गाढ़े रंग आदि से बना लेवें और जितनी जगह में चौकोने का चिन्ह बना हो उस स्थान पर चावल, सरसों या छोटी मटर आदि चीजें रखकर उन्हें कुंड के रूप में फैला देवें ताकि देखने से मालूम होजाय कि कुंड के आकारकी एक वेदी जैसी चीज उन्हीं चावल आदि की बनी है। उनके फैलाने में दो बातों का विशेष ध्यान रहे। एक तो यह कि एक चावल या सरसों वगैरः दूसरे से इतने सटे हों कि उनके बीच में जहां तक होसके खाली जगह न हो। सारांश, वे ठसाठस भरे हों। दूसरी यह कि एक भी चावल या सरसों दूसरे के ऊपर न रहे। सभी उस समतल भूमि परही रहें। इसके बाद इस ग्रन्थ के अन्त में बने कुंडों के आकारों को देखकर जिस आकार का कुंड बनाना हो उसी स्थान पर उसी आकार में उन सरसों या चावलों को फैलादे। ऐसा करने में चौकोने चिन्ह के भीतर कहीं से उन चावलों को हटा लेना होगा और कहीं चिन्ह के बाहर भी फैलाना होगा। तभी अभीष्ट कुंड की सूरत बनेगी। मगर इस फैलाने में भी उन्हीं दो बातों पर ध्यान रखना होगा कि न तो एक चावल दूसरे के ऊपर चढ़ जावे और न उनके बीच में जरा भी जगह खाली हो। सभी एक दूसरे से मिले हुए ठसाठस भरे हों। इस प्रकार जब कुंड के आकार में चावल फैलजावें तो जिस तरह फैले हों उसी तरह किसी गाढ़े रंग से उस भूमि पर चारों ओर निशान बनाकर उन चावलों को वहां से हटाले और फिर जितना गहरा खोदना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हो खोदकर और मेखला, कंठ, योनि आदि बनाकर कुंड तैयार करले । योनि बनाने में इस बात का भी ध्यान रहे कि उसका चौड़ा भाग, जो कुंडके बाहर पीछे (दक्षिण या पश्चिम) की ओर मेखलासे भी बाहर निकला रहता है, जरा सा ठेस लगने से कभी टूट न जावे । इसके लिये उसके नीचे कमल के नाल (डांटी)की तरह उससे मिला हुआ भूमि तक मिट्टी का नाल वैसाही बनारहता है जैसा गायों के गले में नीचे मांस और रोम सहित पतला चमड़ा लटका रहता है, जिसे सास्ना कहते हैं ।

साधारण होम में ब्रह्मा, आचार्य, अध्वर्यु और होता आदि का वरण किया जाता है । वरण कहते हैं प्रार्थना करने या निमंत्रण देने को । उनसे यह प्रार्थना की जाती है या उन्हें निमन्त्रित किया जाता है कि हमारे यज्ञ में आप ब्रह्मा, आचार्य, होता आदि बनिये । कहीं कहीं तो सिर्फ ब्रह्मा केही वरण से काम चल जाता है, जैसे उपनयन काल में ब्राह्मण पिता आदि अपने पुत्रके उपनयन में स्वयं आचार्य बनकर होम आदि करते हैं । केवल निरीक्षण या देखभाल के लिये ब्रह्मा का वरण करते हैं । हां, कहीं कहीं अनेक कुण्ड रहने पर या घृत के सिवाय तिल, चरु आदि की पृथक आहुति देने की आवश्यकता पड़नेपर आचार्य, होता और अध्वर्यु का भी वरण होता है । ब्रह्मा, अध्वर्यु और होता को ऋत्विक् कहते हैं । तीनके सिवाय भी उद्गाता आदि ऋत्विक् उन बड़े बड़े यागों में होते हैं जहां बहुतसे कुंड होते हैं और साम के गान की आवश्यकता होती है । फिरभी, जहां मण्डप बन ये जाते हैं वहां ऋत्विजों के सिवाय द्वारपालों और जापकों का भी वरण होता है । मण्डप के चारों द्वारों के इधर उधर दो दो द्वारपाल और दो दो जापक वरण करके बैठाये जाते हैं । यदि दो दो न हों तो एक एक जापक और एक एक द्वारपाल रहते हैं । इस तरह ८ या ४ जापक और इतनेहीं द्वारपाल होते हैं । पूर्वद्वार के द्वारपाल और जापक ऋग्वेद के ज्ञाता, दक्षिणके शुक्लयजुर्वेद के, पश्चिम के सामवेद के और उत्तर के अथर्ववेदके ज्ञाता होते हैं । द्वारपाल ब्राह्मणों का काम होता है कि अपने अपने वेदों के कुछ चुने सूक्तों और अध्यायों का पाठ करें और सामवेदी कुछ चुने सामों का गान करें । इसी प्रकार जापकों का काम होता है अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने वेदों की शान्तिका पाठ करना । हां, तुलादान में केवल जापक ही रहते हैं । वहां द्वारपाल नहीं रहते । यदि अत्यन्त अशक्त होवे तबभी कमसे कम एक जापक का वरण अवश्य करे ।

द्वार और तोरण के कलशों के सिवाय वरुण देवता का प्रधान कलश भी होता है जो होमकुंडके ईशान में स्थापित किया जाता है और उसी में वरुण का आवाहन कर पूजन करते हैं । यदि एक से अधिक कुण्ड हों तो प्रत्येक कुण्ड के ईशान में एक एक कलश की स्थापना की जाती है । और अगर ऐसा न करें तो नवग्रह की वेदी के ईशान कोन में केवल एकही कलश स्थापन करके काम चलाते हैं ।

प्रधान वेदीपर सर्वतोभद्र मण्डल बनाकर बीचमें अष्टदल कमल बनाते हैं और उसीपर प्रधान देवता की पूजा होती है । परन्तु शिव की स्थापना आदि में आवश्यकतानुसार लिंगतोभद्र भी बनाते हैं । ग्रहवेदीपर ग्रहों की स्थापना करने के लिये उसपर अष्टदल कमल बनाकर उसके बीचमें सूर्य की स्थापना और पत्तोंपर शेष ग्रहों की स्थापना होती है । सभी ग्रहों के साथही उनके देवता और प्रत्यधिदेवता आदि की भी स्थापना होती है । यह सब रचना सफेद और रंगे चावलों या चूर्ण से की जाती है जैसा कि ग्रन्थ के अन्त में चित्रमें दिखलाया गया है । मातृकावेदी पर लाल रंग, चूर्ण या चावलों से सोलह मातृकाओं की स्थापना की जाती है । पर, सामवेदियों के यहां कहीं कहीं १४ ही मातृकायें लिखी हैं । मिथला में मातृका के साथ दुर्गा और श्री की भी स्थापना एवं पूजा की जाती है । सोलह या १४ मातृकाओं के साथ साथ गणेश की भी पूजा होती है जो मातृका वेदीपर ही की जाती है । यह गणेशपूजा उस महागणपतिपूजा से भिन्नहीं है जो कर्म के आरम्भमें सबसे पहले की जाती है । मातृकापूजन के साथ की गणेशपूजा मातृकापूजा का अंग है और आरम्भवाली स्वतंत्र है । मण्डपके भीतर जो वास्तुवेदी है उसपर भी रंगीन चूर्ण या चावलों से ६४ घर भरे जाते हैं । यह ६४ घर लकीर खींचकर बनाये जाते हैं । क्षेत्रपाल की वेदीपर क्षेत्रपति वा क्षेत्रपाल की पूजा की जाती और बलि दीजाती है । यह बलि मण्डप के देवताओं के पूजन के आरम्भ में दी जाती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। जो क्षेत्रपाल की बलि अन्त में दी जाती है वह तो श्मशान या चौराहे पर रक्खी जाती है। मण्डप के बाहर जो वास्तु-पूजा होती है वहां तो ८१ घर बनाये जाते हैं। तुलादान और वापी (बावड़ी), कूआं, तालाब के उत्सर्ग में (जिसे साधारण बोलचाल में आजकल विवाह कहते हैं) और उनके दान में प्रधान वेदी परही ६४ घरों वाला मण्डल बनाकर बीच के १६ घरों की जगह एक दूसरे से बाहर रहने वाले चार वृत्तों का चक्र बनाया जाता है और उसके भीतर आठ पत्तों वाला कमल का आकार बनाते हैं तथा हरेक पत्ते के दो हिस्से कर देते हैं। इस प्रकार १६ हिस्से हो जाते हैं जिन्हें षोडश आर कहते हैं। चक्र कहते हैं पहिया को और धुरी के चारों ओर घूमनेवाली छिद्रसहित जो मोटी लकड़ी होती है उसे बाहरी चक्र से जोड़ने के लिये जो थोड़ी थोड़ी दूर पर पतली लकड़ियां लगाई जाती हैं उन्हें ही आर कहते हैं। इस चक्र में वे आर १६ सोलह होते हैं। इसी से यह षोडश आर वाला चक्र कहलाता है। दो दो आर मिलकर कमल के पत्ते ऐसे हो जाते हैं इसी से कमलाकार भी हो जाता है। मगर पत्ते की आकृति अधिकतर जौ से मिलती जुलती है। चक्र के बाहर चारों ओर पांच लकीरें विभिन्न रंगों की होती हैं। यह सब मिलकर वारुण मण्डल कहाता है। इसका भी चित्र अन्त में मिलेगा। आश्लेषा आदि की शान्ति में प्रधान वेदी पर ही २४ पत्तों वाला कमल बनाया जाता है जिस पर २४ नक्षत्र और बीच में ३ नक्षत्र स्थापित किये जाते हैं। इन सबों का विस्तृत विचार आगे और चित्र ग्रन्थ के अन्त में मिलेगा।

मण्डप में महागणपति की पूजा के लिये ग्रहों की वेदी की तरह एक वेदी या एक काठ आदि का आसन रहना चाहिये। प्रधान वरुण कलश के आगे पश्चिम दिशा में गणेश की पूजा करने की रीति है। इसलिये जहां उस कलश की स्थापना करनी हो उसी के निकट पश्चिम ओर ऐक वेदी का बनाया जाना ठीक है। उस वेदी पर स्वस्तिक (卐) की आकृति हरदी से बनाकर या अक्षत, सुपारी, फूल या फल ही रखकर उसी पर गणेश का आवाहन किया जाता है। सामान्यतः सभी देवताओं के सम्बन्ध में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यही नियम है कि पत्र, पुष्प, फल या अक्षत रख कर उसपर उनका आवाहन किया जाता है, न कि केवल भूमि पर ही ।

४—अरत्नि, कर्ष, पल आदि ।

पुरुष (जिसे मोटी बोली में पोरिसा कहते हैं) पांच हाथ का होता है । समान भूमिपर दोनों हाथों को ऊपर करके खड़ा होने से मनुष्य पांव से हाथ की अंगुली के सिरे तक पांच हाथ ऊंचा होता है । इसी से पुरुष परिमाण का अर्थ पांच हाथ होता है । इस स्थान पर दो मत हैं । एक तो यही जो अभी कहा है । दूसरा यह है कि सम भूमि पर एड़ी उठा कर पांव के पंजों पर खड़ा होवे और दोनों हाथों को ऊपर उठावे तब पांच हाथ का पुरुष कहाता है । केवल पांव से खड़ा होने पर पांच हाथ ऊंचा नहीं होता ।

पुरुष का पांचवां हिस्सा हाथ कहाता है और हाथ का २४ वां भाग अंगुल होता है । इस प्रकार पुरुष के १२० अंगुल होते हैं । पर जब वह पंजे पर खड़ा होता है तभी । लेकिन जब पांव पर खड़ा होता है तब ११२½ अंगुल ही होते हैं जिनके पांचवें हिस्से में २२½ अंगुल होते हैं । इसलिये हाथ के भी दो अर्थ हो जाते हैं । साधारणतः तो हाथ २४ अंगुल का ही माना जाता है । पर, कहीं कहीं २२½ अंगुल का भी लिखा रहता है । इसका अभिप्राय ऊपर स्पष्ट है । रत्नि २१ अंगुल की और अरत्नि २२½ अंगुल की होती है । इसी अरत्नि को ही कहीं कहीं हाथ कह देते हैं । कुहनी से लेकर कनिष्ठिका (सब से छोटी) अंगुली तक के नाप को रत्नि और मुट्ठी बांध कर उसके ऊपरी सिरे से कुहनी तक को रत्नि कहते हैं । दो रत्नियों (४२ अंगुल) को किष्कु और ९६ अंगुल को धनुर्दंड (धनुष का दण्ड) कहते हैं । आधा हाथ (१२ अंगुल) को वितस्ति (वित्ता) कहते हैं । अंगूठे के सिरे से तर्जनी अंगुली के सिरे तक को प्रादेश, मध्यमा के सिरे तक को ताल, अनामिका तक गोकर्ण और कनिष्ठिका तक वितस्ति कहते हैं । अंगूठे की पास की अंगुली तर्जनी, उसके पास की मध्यमा, उसके पास की अनामिका और उसके पास की कनिष्ठिका कहाती है । एक अंगुल का आठवां भाग जौ; जौ का आठवां भाग यूका, यूका का आठवां लिक्षा; लिक्षा का आठवां बालाग्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(बालका अगला भाग); बालाग्र का आठवां रथरेणु; रथरेणुका ८ वां त्रसरेणु और त्रसरेणु का ८ वां परमाणु कहाता है। ३०० हाथका एक निवर्त्तन और १० निवर्त्तन का एक गोचर्म कहाता है। किसी ने कहा है कि १५० हाथ लम्बी और इतनी हीं चौड़ी भूमि को गोचर्म कहते हैं। कोई कहते हैं कि जितनी भूमि की पैदावार को एक आदमी साल भर में खा सकता है वही गोचर्म है। दूसरा मत है कि २१० हाथ का निवर्त्तन और १८० हाथ का गोचर्म कहाता है। २१० से अभिप्राय इतने हीं लम्बे चौड़े से है। इसी तरह ३०० हाथ वाले निवर्त्तन में भी जानना चाहिये। इसी प्रकार गोचर्म को भी १८० हाथ लम्बा और इतना हीं चौड़ा मानना चाहिये। पहले में भी इसी तरह समझना होगा। १०० गायें और एक साँड़ जितनी भूमि में अच्छी तरह खड़े रहकर इधर उधर घूम फिर सकें उसे भी किसी किसी ने गोचर्म कहा है। जब कई प्रकार के गोचर्म हैं तो फिर दान के समय दाता की सामर्थ्य के अनुसार ही या उसकी इच्छा से ही छोटा या बड़ा गोचर्म माना जायगा। जमीन नापने के दण्ड को कहीं कट्ठा, कहीं लग्गी, कहीं लट्ठा और कहीं बांस कहते हैं। वह देशभेद से ५, ६, ७, ८, ९ या १० हाथ का होता है। उसी दण्ड से २० दंड लम्बी और २० ही दंड चौड़ी भूमि को कुडव (बीघा) कहते हैं। २० दंड लम्बी और १ दंड चौड़ी भूमि काष्ठा या (कट्ठा) कहाती है और १ दंड लम्बी १ दंड चौड़ी धूली (धूल या धूर) कही जाती है।

आजकल अंग्रेजी राज्य में जो चांदी का रुपया है इसे ही रूपक, रूप्यक, पुराण, कर्ष और कार्षापण इन पांच नामों से व्यवहार करते हैं। इतने हीं वजन (८० रत्ती) की पहले भी कोई मुद्रा थी। कहीं कहीं सुवर्ण भी इसे हीं कहा है। आजकल जो रुपये की सूरत का आध आने का ताम्बे का पैसा कहीं कहीं मिलता है वही पण कहाता है। चार रुपये भरको निष्क कहते हैं और दीनार भी कहीं कहीं ४ रुपये भर को कहा जाता है। जहाँ निष्क दण्ड देने को कहा है वहां ४ रुपया समझना चाहिये। जहाँ एक पल और अक्ष लिखा है वहाँ तौल में ४ रुपये भर समझना चाहिये। दक्षिणा दान के समय कहीं कहीं लिखा रहता है कि ब्रह्मा या आचार्य को यजमान वर देता है। वह वर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४ कार्षापण का होता है, अर्थात् चार ४ रुपये या उतने दाम की चीज।

४ रुपये भर का पल, दो पल की प्रसृति (पसर), दो प्रसृति का कुडव (पौवा) और चार कुडव का प्रस्थ (सेर) माना जाता है। चार प्रस्थ का आढक (अढ़ैया), ४ आढक का द्रोण, २ द्रोण का कुम्भ और ४ द्रोण की खारी होती है। खारी एक प्रकार का मन और द्रोण उसका चौथाई है।

कार्षापण पांच प्रकार का लिखा है। पहला ऐसा है कि ८० कौड़ी का पण और १६ पण का कार्षापण कहाता है। इस तरह १२८० कौड़ी का पहला कार्षापण हुआ। ५ रत्ती का मासा (माष), १६ मासे का ताम्बेका पण और १६ ताम्रपण का कार्षापण। इस प्रकार २५६ मासा ताम्बे का दूसरा कार्षापण कहाता है। एक रत्ती और ३ सरसों भर सोना तीसरा कार्षापण होता है। २० मासा सोना (मासा ५ रत्ती का) चौथा कार्षापण और १६ मासे का कर्ष होता है। ४० रत्ती चांदी का पांचवां कार्षापण लिखा गया है। इन सबों में से यथाशक्ति मानना चाहिये। जो गरीब हो वह छोटे को माने और जो धनी हो वह क्रमशः बड़े को। या जैसी मर्जी हो वैसा ही करे।

वृष का शास्त्रीय मूल्य छ कार्षापण और अनड्वान का ८ है। जब तक जोता न गया हो तभी तक वृष कहाता है। जोते जाने पर वही अनड्वान् कहाता है, मगर तभीतक जब तक जवान हो। धेनुका मूल्य यथाशक्ति १०, ५, ३, २, आदि कार्षापण है और गौ का १, २ आदि। बछड़े सहित और अधिक दूध वाली गौ को धेनु कहते हैं। घोड़े का दाम १५ कार्षापण; हिरण्य का १ कार्षापण, नौ पण; वस्त्रका १ कार्षापण, बकरी का ८ पण और भेड़ी का १२ पण होता है। हाथी का ५०० कार्षापण, दोले (झुलुवा) का ५, रथ का ६ और घर का दाम ८ कार्षापण होता है। यदि ऊपर कही चीजों को दे सकने में असमर्थ हो तो उनकी जगह उनका दाम देने की विधि है।

२० कौड़ी की काकिणी और ४ काकिणी का पण होता है। यह कौड़ीवाला पण है। जैसे कार्षापण ५ प्रकार का है उसी तरह पण भी ५ प्रकार का है। ताम्बे का दूसरा है जो ८० रत्ती का है। रूपेका तीसरा पण एक राई और एक सरसों भर सोने का होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। सवा ६ रत्ती सोने का चौथा और ढाई रत्ती चांदी का पांचवां होता है। हर हालत में १६ पण का एक कार्षापण होता है। इस प्रकार जब इन पांचों के सिवाय केवल रुपये को कार्षापण कहेंगे तो पण एक आने के बराबर होगा। इस तरह यद्यपि कई प्रकार की परिभाषा पण और कार्षापण के बारे में मिलती है। तथापि किसी एक को मान कर काम कर सकते हैं।

५-पवित्र, विष्टर आदि।

साधारणतया कुश को ही पवित्र कहते हैं। फिर पूजा के संकेत में पवित्र दो प्रकार का माना गया है। जो कुश जड़ सहित रहता है वही यज्ञ के काम के योग्य माना जाता है। यदि जड़ टूट जावे तो वह बेकार होता है। हां, ऐसे कुशका काम केवल पिण्डदान के समय पिण्ड के नीचे आस्तरण (बिछाने) में लगता है और उसी पर पिंड दिया जाता है। वहां विशेष रूप से ऐसे ही कुशों की विधि है। अस्तु, एक पवित्र तो वह है जो मूल सहित कुश के ऊपर के सब पत्ते छुड़ाकर केवल तीन पत्ते रहने के बाद बीच या गर्भ का भी एक पत्ता निकाल कर शेष दो पत्तों को जड़से प्रादेश मात्र नाप कर तोड़ देने से बनता है। यह पवित्र प्रादेश भर लंबा होता है और इसके दोनों पत्ते जड़में मिले रहते है। प्रादेश भर पर जो तोड़ा जाता है वह भी अंगूठे, नख या दूसरी चीज से नहीं, किन्तु उसके लिये दूसरे ही तीन कुश लेकर उन्हें उसी नाप पर लगाकर ऐसा मोड़ लेते हैं जिससे पवित्र वाला कुश उन तीनों के भीतर आ जाता है। मोड़े हुए तीन कुशों के दोनों भागों को एक हाथ में पकड़ लेते हैं और नाप पर से ही पवित्र के कुश को मोड़ कर उसके दोनों भागों को दूसरे हाथ में पकड़कर ऐसा झटका लगाते हैं जिससे पवित्र वाला कुश नाप परसे ही टूटजावे। जैसे किसी पतली, पर मजबूत, रस्सी के तोड़ेने के लिये दूसरी रस्सी के फन्दे में उसे डालकर और तोड़ने की जगह मोड़ कर पकड़ के झटका लगाते हैं जिससे आसानी से वह टूट जाती है वही रीति यहां भी है। इस प्रकार प्रादेश भरका जो पवित्र तैयार होता है वह प्रोक्षणी पात्र में रक्खा जाता है और उससे पूजा और होम की चीजों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शुद्ध करने के लिये जल छिड़कते हैं और हवन के घी को उसीसे उछालते हैं । प्रोक्षणी पात्र के जल को भी उसी पवित्र से उछालते हैं । उछालने का अर्थ यही है कि पवित्र का वह किनारा जहां से वह प्रादेश भर नाप कर तोड़ा गया है, घी या पानी में डुबोकर ऊपर फेंक देते हैं । इसे ही उत्पवन कहते हैं । प्रोक्षणीपात्र और प्रणीता-पात्र वरना, शमी (विकंकत) या किसी यज्ञिय काठ के १२ अंगुल लम्बे होते हैं और बीचमें हाथ के तलवे की तरह गहरे होते हैं । अथवा प्रणीतापात्र की गहराई ३ अंगुल और चौड़ाई चार अंगुल होती है और प्रोक्षणीपात्र चार अंगुल चौड़ा बन्द कमल के आकार का होता है । बीचमें पानी रखने की जगह होती है । प्रणीता कोही चमस कहते हैं । कुंड के पास उसीमें पहले जल लाकर रखते और पीछे उसी जलको प्रोक्षणीपात्र में डालते हैं । चमस में जल लाते हैं, इसी से उसका नाम प्रणीतापात्र है । प्रणीत का अर्थ है लाया हुआ । प्रोक्षणीपात्र के जल से यज्ञ के पदार्थों का प्रोक्षण करते या उसे उनपर छिड़कते हैं । इसीसे उस जल को प्रोक्षणी और पात्र को प्रोक्षणीपात्र कहते हैं । प्रणीतापात्र को पकड़ने के लिये उसमें चार अंगुल का दण्ड उसकी बगलमें किनारे पर लगा रहता है । कोई कोई प्रोक्षणीपात्र को चारही अंगुल का मानते हैं । उसमें से जल गिराने के लिये किनारे पर चोंच की तरह बना रहता है या नालीसी रहती है । प्रणीतापात्र में एक प्रस्थ जल अंटता है ।

दूसरा पवित्र वह होता है जिसे कर्म के करने के समय दोनों हाथों की अनामिका में पहनते हैं । पहले कीही तरह दो पत्ते वाले कुश को मोड़कर और दोनों किनारों को मिलाकर गांठ दे देने से यह तैयार होजाता है । गांठ के बाद जो अधिक बच जाता है उसे तोड़ देते हैं । तोड़ने में यह ख्याल रहे कि कुशकी जड़ न टूटे, किन्तु केवल ऊपर वाला ही हिस्सा । इसीलिये उसे ऐसी जगह मोड़ते हैं जिस से जड़ का किनारा गांठ से जराही ऊपर पड़े । गांठ भी दो प्रकार की होती है ब्रह्मग्रन्थि और विष्णुग्रन्थि । गांठ देने के समय दाहिनी ओर घुमाकर अपने सामने की ओर से नीचे की तरफ से किनारे को डाल कर ऊपर खींचकर कस देने से ब्रह्मग्रन्थि होती है और पीछे ले जाकर ऊपर की ओर से डाल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर खींच लेने और कस देने से विष्णुग्रन्थि होती है। गांठ देने के समय एकही फेरा घुमाया जाता है न कि दो या अधिक फेरा। ब्रह्मयज्ञ और जप में ब्रह्मग्रन्थि वाला पवित्र पहना जाता है। शेष कामों में विष्णुग्रन्थि वाला। नित्यकर्म में दो, पितृकर्म में तीन, शान्तिकर्म में चार और पौष्टिककर्म में पांच कुशों का पवित्र हाथ की अनामिका अंगुली में पहनने के लिये बनाना चाहिये। किसी का मत है कि सभी कामों में ब्राह्मण चार का, क्षत्रिय तीन का, वैश्य दो का और शूद्र एक कुश का पवित्र बनावे। हरेक कुश में दोही पत्ते होवें और बीच (गर्भ) का पत्ता निकाला हुआ हो। पवित्र की लम्बाई के बारे में ऐसा नियम है कि उसे बीचमें से मोडकर रस्सीकी तरह दो अंगुली बटकर उसके बाद एक अंगुल की गांठ देनी चाहिये और गांठ के बाद चार अंगुल और भी निकला रहना चाहिये। नित्य के वेदपाठ और उसके साथ अन्यान्य स्तोत्रादि के पाठको ब्रह्मयज्ञ कहते हैं।

पचीस, अड़तालीस या उससे कम वेश कुशों को दोहरे सूत से जब जड़से अग्र भाग तक लपेट कर एक जगह बांध दिया जाता है और सिरे पर जटा की तरह बायीं ओर घुमाके बांध दिया जाता है तो उसे विष्टर कहते हैं। चरखे या हाथ कते कच्चे सूतको दोहरा करके उसी से विष्टर के कुशों को लपेटना चाहिये। विष्टर में कुश की कोई निश्चित संख्या नहीं है। कहीं २५, कहीं ४८ और कहीं अनिश्चित कुश लिखे हैं।

सात कुशों को एक जगह लपेट कर जो गुच्छा बना लेते हैं उसे पिंजूली कहते हैं। इसकी आवश्यकता पिंड दान के समय पिंडवेदीके ऊपर रेखा खींचने में होती है। अग्निके चारों ओर बारह अंगुल छोड़कर कुंड, वेदी को मेखला सहित जिन कुशों से आच्छादित करते हैं वे परिस्तरण कुश या बर्हिः कहाते हैं। परिस्तरण का अर्थ है बिछाना या फैलाना। कुण्ड और मेखला के चारों ओर वे कुश फैला दिये जाते हैं ताकि वह ढंक जावे। होम के बाद इन्हीं कुशों में से एक मुट्ठी उठा-और उन में घी लगा कर अग्नि में होम कर देते हैं। इसे ही बर्हिःहोम कहते हैं और इसी को सामवेदी लोग यज्ञवास्तु कर्म कहते हैं। कितने कुशों का यह हवन होता है यह नियम नहीं है। एक मुट्ठी में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जितने आजावें उतने हीं का होम करना ठीक है । पर, बहुतसी पद्धतियों में यह लिखा है कि जिस क्रम से बर्हिः का परिस्तरण होता है उसी क्रम से सभी को उठाकर अग्नि में होम कर देना चाहिये । यह होम पूर्णाहुति से पहले किया जाता है । परिस्तरण के कुश कितने हों इसका भी नियम नहीं है । किसीने ८० लिखा है तो किसीने ६४ और अन्योंने ४८ ही कहा है । सामवेदियों के यहां तो कुछ भी संख्या नहीं लिखी गई है ।

कहीं कहीं जो १६ या १२ लिखा है वह प्रत्येक दिशा के लिये है न कि सब मिला कर । लेकिन बहुतों का यह मत है कि १६ या १२ कुशों से ही चारों दिशाओं में परिस्तरण होता है । परिस्तरण के कुश २२॥ अंगुल या कर्त्ता की बांह भर के और पिंजूली के कुश पवित्र की तरह प्रादेश भर के होते हैं। परिस्तरण का आरम्भ कुण्ड या वेदी के ईशान कोन से होता है और उत्तर में पूरा होता है। यह परिस्तरण अग्नि का वस्त्र माना जाता है । पूर्व और पश्चिम में बिछाये कुशों की जड़ दक्षिण और अग्रभाग उत्तर होता है । दक्षिण उत्तर वालों की जड़ पश्चिम और अग्रभाग पूर्व रहता है । हरेक दिशा के कुशों का मेल कोनों में होता है । बिछाने के समय इस बात का ध्यान रहे कि पहले बिछाये हुए की जड़ बाद के फैलाये हुए से ढंक जावे । यजुर्वेदियों के यहां तो एक ही बार प्रतिदिशा में परिस्तरण करने की रीति है। मगर सामवेदियों के यहां पहली बार चारों ओर बिछाने के बाद फिर दोबारा और तेबारा भी बिछाते हैं और कोई कोई पांच बार तक ऐसा करते हैं ।

स्रुवको अग्निपर तपाने के बाद उसमें लगी हुई राखको झाड़ने के लिये जो तीन या पांच कुशों का एक गुच्छा होता है उसे सम्मार्जन कुश कहते हैं और होम से पहले अग्नि में समिध (इध्म) डालने के समय बायें हाथ में जिन कुशों को रखते हैं उन्हें उपयमन कुश कहते हैं । वे ३, ५ या ७ होते हैं और एक जगह बंधे रहते हैं । होम से प्रथम अग्नि को प्रज्वलित करने के लिये उस में कुछ लकड़ियों को घी में डुबोकर डालते हैं । यह काम खड़ा होकर किया जाता है और इसी समय बायें हाथ में उपयमन कुश रखते हैं । उन लकड़ियों को इध्म कहते हैं । कहीं कहीं समिध या समिधा भी लिखा है । मगर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समिध तो यज्ञ में हवन के लिये जो लकड़ी लगाई जाती है वह सभी कहलाती है। वह इध्म यजुर्वेदियों के यहां तीन और सामवेदियोंके यहां २० होती है अन्य होमों में और १८ होती है दर्शपूर्णमास में। मुख्य इध्म पलाश की होती है और पलाश के अभाव में शमी, बिल्व, गूलर और खैर की होती है। यजुर्वेदियों की इध्म प्रादेश भरकी (११। अंगुल की) और सामवेदियों की उससे दूनी लम्बी २२॥ अंगुल या अरत्नि भर की रहती है। दूसरे यज्ञिय वृक्षों की भी इध्म और समिध होती है, मगर आम, नीम आदि की नहीं। समिध अंगूठे से मोटी न होवे और न उसका छिलका निकाल लिया गया हो; न सड़ी गली कीड़े वाली हो और न उसमें पत्ते लगे हों।

मोटक नाम है उस कुशका जिसे बीच में ही मोड़कर जड़ और अग्र भाग को एक में लपेट देते हैं। पितृकर्म में इसकी आवश्यकता होती है।

यदि योग्य और विद्वान ब्राह्मण ब्रह्मा बनाने योग्य न मिले तो कुश का ही ब्रह्मा बनाकर ब्रह्मा के आसनपर रक्खा जाता है। कहीं कहीं लिखा है कि ५० कुशों का ब्रह्मा बनावे और कहीं कहीं लिखा है कि कोई नियम नहीं है कि इतने का ही बनावे। कुशों के अग्रभाग को एकत्र करके सभी की एक ही ब्रह्मग्रन्थि दे देने से कुशका ब्रह्मा बन जाता है। ब्रह्माके कुशों की ग्रन्थि बायें घुमाकर दीजाती है। इसे ही कुश बटु और कहीं कहीं कुशचटु भी कहते हैं। ऐसी परिपाटी है कि किसी पात्र में चावल आदि अन्न थोड़ा सा रख कर उसी में इस कुशबटु को रखते और फिर उस पात्र को ही ब्रह्मा के आसन पर रख देते हैं। श्राद्ध के भी समय जब योग्य ब्राह्मण न मिलने पर अपात्रक श्राद्ध करते हैं तो इसी तरह कुश का ब्राह्मण बनाकर उसे अवश्य ब्राह्मण के स्थान पर रखते हैं। उसके विना श्राद्ध हो नहीं सकता। हां, योग्य ब्राह्मण मिलने पर यदि सपात्रक करें तब तो कुश के ब्राह्मण की आवश्यकता न होगी।

हाथ को उतान करके चिल्लू में जल लेकर जब किसी पदार्थ पर गिराते हैं तो उसे प्रोक्षण कहते हैं। तिरछे हाथ से गिराने को अवोक्षण और उलटा हाथ करके (हथेली को नीचे करके) गिराने को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभ्युक्षण या पर्युक्षण कहते हैं । पर्युक्षण का अक्षरार्थ है चारों ओर गिराना ।

परिसमूहन के दो अर्थ हैं। यदि अग्नि का परिसमूहन हो तो उसका अर्थ है उसके अंगारों पर से राखको हटाकर उसे साफ कर देना और यदि वेदी या कुंड का परिसमूहन हो तो वहां झाड़ना अर्थ है, अर्थात् परिसमूहन कुशों से धूल वगैरः को झाड़ कर वेदी से अलग कर देना। परिसमूहन से लेकर अन्त में प्रोक्षणापात्र के पवित्र को प्रणीतापात्र में रख देने तक की समूची क्रियाको कुशंडिका या कुशकंडिका कहते हैं। कहीं कहीं कुशंडी या कुशकंडी भी लिखा रहता है। इसी के बाद हवन शुरू होता है। कुशकंडिका का विस्तृत रूप होम के प्रकरण में मिलेगा।

विवाह आदि मंगल कार्यों और यज्ञ यागादि पारलौकिक एवं श्राद्धादि कर्मों में अहत वस्त्र धारण कर क्रिया करने का नियम है। वह अहत दो प्रकार का है। एक तो तुरन्त बिन कर ज्यों का त्यों आया हुआ जिसे मंगल कार्यों में पहनते हैं। दूसरा वह है जिसे अपने हाथों या धोबी के सिवाय किसी और से थोड़ा धुलाकर रखते हैं। मगर वह भी बिल्कुल नया और कभी का पहना न हो और उसके दोनों छोरों पर क्षीर हो—दस पांच सूतों की जगह छोड़कर फिर दस बीस सूत बिने हों। इसे श्राद्ध यागादि में पहनते हैं। दोनों में अन्तर यही है कि पहला बिना धोया होता है और यह एक बारका थोड़ा सा धोया रहता है। पर, बिना धोया पहनना ठीक नहीं है, कारण उसमें मांड़ी लगी रहती है और वह सड़े और जूठे फल या अन्न आदि की होती है।

बायें कन्धे पर से पीठ की हड्डी (रीढ़) और नाभि होता हुआ कमर तक जो पहुंच जाता है वही ठीक यज्ञोपवीत है। न तो उससे छोटा होना चाहिये और न बड़ा। यही यजुर्वेदियों की रीति है। मगर सामवेदी लोग कहते हैं कि नाभि तक ही यज्ञोपवीत जाना चाहिये न कि उससे नीचे भी। इस तरह नाभि और कमर के बीच में कहीं तक भी पहुंचने पर यजुर्वेदियों के लिये जनेऊ ठीक माना जाता है और यदि नाभि से ऊपर या कमर से नीचे हो जावे तो वह अशुद्ध समझा जाता है। मगर सामवेदियों का जनेऊ नाभि और स्तन के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बीच में कहीं तक भी पहुंचना चाहिये। परन्तु नाभि से नीचे और स्तन से ऊपर रहने पर अशुद्ध होगा। इस प्रकार ही साधारणतया सदा जनेऊ पहना जाता है और यज्ञादि देवकार्य में भी ऐसे ही पहने रहते हैं। शास्त्रीय परिभाषा में इसको उपवीत कहते हैं। यह त्रैवर्णिक के लिये है। मगर एक और उपवीत है जो चारों वर्णों के लिये है। वह है किसी वस्त्रको उपवीत की तरह बांध लेना। यह तो चारों वर्णों को सदा धारण करना चाहिये। यदि जनेऊ कहीं ऐसी जगह अशुद्ध हो या टूट जावे जहां दूसरा न मिल सके तो कुश को जनेऊ की तरह गले में बांध लेने से काम चल जावेगा। यदि कुश भी न मिले तो वही जनेऊ की तरह बांधा हुआ वस्त्र काफी होगा और यदि वह वस्त्र पहले से बंधा न हो, जैसा कि आज कल देखा जाता है, तो फिर तुरन्त बांध लेना चाहिये। मगर ज्योंही जनेऊ मिल जावे उसे पहन लेना चाहिये। ब्रह्मचारी को एक जनेऊ पहनना उचित है और गृहस्थ को दो। पर, यदि गमछा न हो तो उसके स्थान पर एक और पहन लेना चाहिये। गृहस्थों के दो जनेउओं में से एक सम्भवतः स्त्री के लिये है, क्योंकि आज कल वह जनेऊ नहीं पहनती हैं। हालां कि पहले पहनती थीं। मनुष्य या ऋषियों के लिये तर्पण आदि करने के समय जनेऊ या उस तरह बंधे वस्त्र को गले में माला की तरह लटका देते हैं। इसे निवीत कहते हैं। पितृ और प्रेत कार्य में उपवीत के ठीक उलटा पहन लेते हैं जो दहिने कन्धे से बाईं कमर तक रहता है। इसे प्राचीनावीत कहते हैं। इसका नाम अपसव्य और उपवीत का सव्य भी है। दहिना घुटना टेककर और पूर्व मुख होकर देवतीर्थ से देवकार्य किया जाता है। बायां घुटना टेककर और दक्षिण मुख होकर पितृतीर्थ से पितृकर्म और दोनों घुटना टेककर उत्तरमुख होकर प्रजापतितीर्थ से मनुष्य और ऋषिकर्म करते हैं। हाथ की अंगुलियों के अग्रभाग में देवतीर्थ; अंगूठे और तर्जनी के बीच में पितृतीर्थ; कनिष्ठा अंगुली की जड़ में प्रजापतितीर्थ और अंगूठे की जड़ में कलाई के पास ब्रह्मतीर्थ कहाता है। दहिने हाथ को गाय के कान की तरह बनाकर उसमें जल लेकर ब्रह्मतीर्थ से आचमन करे।

जनेऊ बनाने की रीति यह है। हाथ से कता हुआ सूत लेकर पहले उसे तिगुना (तीन फेरा) करना चाहिये। फिर दहिने हाथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की चारों अंगुलियों को परस्पर सटाकर यजुर्वेदी लोग उनके बीच के पोरों के चारों ओर और सामवेदी उनकी जड़के चारो ओर ९६ बार घुमा कर उसे तकली या चरखे पर धीरे धीरे ऐंठ लेवें । फिर इस समूचे का तीन फेरा कर उसे भी ऐंठ लेवें । बादको उसका तीन फेरा कर प्रवर की गांठ के साथ ब्रह्मग्रन्थि देकर जनेऊ तैयार करलें । इस तरह सामवेदियों का जनेऊ जरासा छोटा होगा जो नाभि तक ही होगा और यजुर्वेदियों का जरा सा बड़ा होगा जो कमर तक होगा । यदि यह ऊपर बताया संपूर्ण काम सावधानी से किया जावे तो न तो इससे बड़ा होगा और न छोटा । मगर बहुतों का यह सिद्धान्त है कि सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों के जनेऊ एक ही नाप के और कमर तक ही होते हैं । अब रही बनाने वाले की इच्छा ।

शिखा में भी ब्रह्मग्रंथि देकर ही उसे बांधना और बांधने के बाद ही कर्म करना चाहिये । साधारणतया सदा ही शिखा बंधी रहनी चाहिये । सिर्फ शौच, शयन, दतवन, स्नान और भोजन के समय खुली रहती है । जिसके सिरपर शिखा न हो वह कुश की शिखा (चोटी) बना कर और उस में ब्रह्मग्रन्थि देकर दहिने कान पर धर ले ।

यदि कर्म के समय चद्दर या गमछा न हो तो आधी धोती कोही कन्धे पर रख लेना चाहिये ।

६–संस्कार ।

साधारणतया लोगों की यही धारणा है कि द्विजों के सोलह ही संस्कार होते हैं और यही ठीक भी है । यद्यपि आंगिरस स्मृतिमें २५ संस्कार गिनाये गये हैं और गौतम ने तो ४० संस्कारों और आत्मा के आठ गुणों को गिना कर कहा है कि जिनमें यह ४८ न हों उस ब्राह्मण का कल्याण हीं नहीं होता । इसी से कहीं कहीं ४८ संस्कार भी कहे गये हैं । मगर व्यासस्मृति में केवल सोलह ही संस्कारों को गिनाया है और एक तरह से उन्हीं के भीतर शेष सभी संस्कार आजाते भी हैं । इसीलिये प्रधानता सोलह संस्कारों की ही है । वे सोलह संस्कार यह हैं—गर्भाधान,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म, नामकरण, निष्क्रमण, अन्नप्राशन, चूडाकरण (मुंडन), कर्णवेध, उपनयन, वेदारम्भ, केशान्त, समावर्त्तन, विवाह, स्मार्त्त अग्निका आधान और श्रौत अग्निका आधान। किसी ने इन में निष्क्रमण, कर्णवेध और दोनों अग्नियों का आधान इन चारों को निकालकर उन की जगह एक तो अन्त्येष्टि (मृतकसंस्कार) को रक्खा है और वेदारम्भ को एक की जगह चार माना है। क्योंकि जब चार वेद हैं तो उनका आरम्भ भी चार प्रकार का होवेगा ही। दूसरों ने फिर अन्त्येष्टि को भी निकालकर उसकी जगह निष्क्रमण रख दिया और आग्रयण, अष्टका, श्रावणी कर्म (रक्षाबन्धन), आश्वयुजी कर्म, प्रत्यवरोहण, दर्शश्राद्ध (पिंडपितृयज्ञ), वेदारम्भ, वेदोंका उत्सर्ग और पञ्चयज्ञ इन नवोंको जोड़कर २५ कर दिया है। सोलहके भीतर वे वेदारम्भ को नहीं मान कर वेदों के चार प्रकार के व्रतों को मानते हैं जो ब्रह्मचारियों को करने पड़ते हैं। गौतम भी पूर्व के सोलह मेंसे विवाह पर्य्यन्त १४ संस्कारों में से निष्क्रमण, कर्णवेध, वेदारम्भ और केशान्त इन चारों को निकाल कर शेष दश को मानते हैं और इन चार की जगह चार वेद व्रतों को जोड़कर १४ कर देते हैं। फिर उन में नित्य किये जाने वाले पांच महायज्ञों को भी मिलाकर १९ कर देते हैं। अष्टका, पार्वण श्राद्ध, अन्य श्राद्ध, श्रावणी, आग्रहायणी, चैत्री, आश्वयुजी यह सात पाकयज्ञ; अग्न्याधेय, अग्निहोत्र, दर्श पूर्ण मास, चातुर्मास्य, आग्रयणेष्टि, निरूढपशुबन्ध, सौत्रामणि यह सात हविर्यज्ञ; अग्निष्टोम, अत्यग्निष्टोम, उक्थ्य, षोडशी, वाजपेय, अतिरात्र, आप्तोर्याम यह सात सोमयज्ञ; इन इक्कीस और यज्ञों को मिलाकर संस्कारों की संख्या ४० कर देते हैं। फिर पीछे से सर्वभूतदया, क्षमा, अनसूया, शौच, अनायास, मंगल, अकृपणता, अस्पृहा इन आठ आत्मगुणोंको और भी जोड़कर ४८ कर देते हैं।

सन्तानोत्पत्तिके लिये स्त्रीसंयोग के पूर्व किया गया संस्कार गर्भाधान संस्कार कहाता है। गर्भ के तीसरे मास में पुंसवन और चौथे, छठे या आठवें में सीमन्त या सीमन्तोन्नयन संस्कार होता है। सन्तान होने पर उसी समय नाल छेदने से पूर्व जातकर्म होता है। दसवें, ग्यारहवें, बारहवें या किसी दूसरे दिन लड़के का नाम रक्खा जाता है जिसे नामकरण कहते हैं। सूतीघरसे बाहर निकालने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के दिन निष्क्रमण, पहली बार अन्न खिलाने के दिन अन्नप्राशन, मुंडन के दिन चूडा या चौलकर्म, कान छिदाने के दिन कर्णवेध, जनेऊ के दिन उपनयन, उसी दिन वेदों के पढ़ने के आरम्भ के समय वेदारम्भ, सोलहवें वर्ष में दाढ़ी मूंछों के बनवाने के समय केशान्त (केश नाम यहां दाढ़ी और मूंछ का है । उसी का अन्त या कटवाना केशान्त कहाता है), वेद पढ़ चुकने के बाद गुरु के यहां से विदाई के दिन समावर्त्तन या स्नान कर्म होता है। पाक नाम है अल्प या छोटेका । पाकयज्ञ छोटे छोटे यज्ञों को कहते हैं । इन में अष्टका नाम है उस कर्म का जो पूस, माघ और फागुनके कृष्ण पक्षकी तीनों अष्टमियों और आश्विन की कृष्ण अष्टमी को किया जाता है । पार्वण श्राद्ध वह है जो अनेक के लिये किया जाता है और एकोद्दिष्ट सिर्फ एक के लिये । पार्वण में विश्वेदेव की पूजा होती है, मगर एकोद्दिष्ट में नहीं। श्रावणी कर्म श्रावण की पूर्णिमाके दिन किया जाता है, जिसे उपाकर्म भी कहते हैं । गुरु और शिष्य मिलकर साल भर वेद पाठ में भूल से की गई अशुद्धियों के प्रायश्चित्तके लिये उसे करते हैं । अब उसकी जगह केवल रक्षाबन्धन रह गया है । यह रक्षाबन्धन तो उस कर्म के अन्त में या बीच में ही होता था । आश्विन (कुआर) की पूर्णिमा को आश्वयुजी, अगहन की पूर्णिमाको आग्रहायणी, चैत्र की पूर्णिमाको चैत्री कर्म होता था । इन्हीं सात को पाकयज्ञ कहते हैं । ये सभी स्मार्त्त अग्नि में किये जाते हैं और छोटे छोटे कर्म हैं । इन में एक दिन से अधिक नहीं लगता । सात हविर्यज्ञ श्रौत अग्नियों में किये जाते हैं और सात सोमयज्ञ भी उन्हीं में होते हैं । सिर्फ घी, दूध, दही या खीर आदि हवियों की आहुतियां उनमें दी जाती हैं। इसी से वे हविर्यज्ञ कहाते हैं। पर, हविके सिवाय जिन में सोम लता के रस से भी हवन होता है उन्हें सोमयज्ञ कहते हैं । यह २१ यज्ञ श्रौत स्मार्त्त अग्नि में होते हैं । इसलिये उन दोनों अग्नियों के आधान में हीं एक तरह से इनका भी समावेश हो जाता है । कारण, उक्त अग्नियों के आधान के बाद इनका करना आवश्यक है । बल्कि अग्न्याधेय तो श्रौत अग्नि के आधान कोही कहते हैं । इसी तरह पंचयज्ञ भी स्मार्त्त अग्नि में हीं किये जाने के कारण उसी में आजाते हैं । वेद पढ़ने के समय जो चारों वेदों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिये अलग अलग चार व्रत हैं वे वेदारम्भ मेंहीं आगये और अन्त्येष्टि भी श्रौत अग्नि साध्यही है। इसीलिये प्रधान संस्कार सोलह ही हैं जिन्हें व्यासस्मृति में गिनाया है। संस्कार का अर्थ है मैल, दुर्गुण या बुराई को हटाकर अच्छे गुणों को लाना या उत्पन्न करना। इन कर्मों के करने से आत्मा में अच्छे अच्छे गुण आते हैं और उसके पापों एवं दुर्गुणों का नाश हो जाता है। इसीसे यह संस्कार कहाते हैं। सोलह संस्कारों को ब्राह्म संस्कार और पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ तथा सोमयज्ञरूप २१ को दैव संस्कार भी कहते हैं। ब्राह्म इसलिये कहते हैं कि उनके करने से ही पूर्ण या पूजनीय और माननीय ब्राह्मण होता है। इसीसे उनकी प्रधानता है। २१ को दैव इसलिये कहते हैं कि उनके करने से देवसदृश अथवा देवस्थान की प्राप्ति के योग्य होता है।

७—षोडशोपचार और पञ्चोपचार।

कर्म करने के समय देवताओं के पूजन बार बार आया करते हैं। कहीं लिखा रहता है कि पञ्चोपचार से पूजन करो और कहीं षोडशोपचार से। साधारण रीति से तो पञ्चोपचार ही से पूजन किया जाता है। मगर जब जरा विशेष रीति से करना होता है तो षोडशोपचार से करते हैं। उपचार नाम है सेवा, सत्कार या पूजा का। जब पांच तरह से उस सेवा या सत्कार को करते हैं तो उसे पञ्चोपचार और जब १६ प्रकार से करते हैं तब षोडशोपचार कहते हैं। इसके सिवाय दस और अट्ठाईस उपचार भी हैं। पर, वे अप्रसिद्ध हैं। पंचोपचार दो प्रकार का है। पहला वह है जिसमें ध्यान, आवाहन, भक्तिपूर्वक नैवेद्य चढ़ाना, आरती और प्रणाम यह पांच बातें की जाती हैं। दूसरे में चन्दन, फूल, धूप, दीप और नैवेद्य (भोग के लिये खाने योग्य पदार्थ) यही पांच बातें की जाती हैं और अधिकतर इसीका प्रचार है। यह स्पष्ट भी है। पर करने वाले की इच्छा, चाहे जिसे करे। षोडशोपचार में आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन, स्नान, वस्त्र, उपवीत (जनेऊ), चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, नमस्कार, प्रदक्षिणा और विसर्जन यह सोलह बातें की जाती हैं और जब विष्णु या शिव का षोडशोपचार पूजन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुरुषसूक्त पढ़कर करना होता है तो क्रमसे यही सोलह बातें क्रमशः सोलह मंत्रों को पढ़कर की जाती हैं। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि यद्यपि षोडशोपचार में एक आचमन भी है, तो भी इसके सिवाय स्नान, वस्त्र और नैवेद्य के बाद भी आचमन कराया जाता है जो स्नान, वस्त्र और नैवेद्य का ही अंग माना जाता है। नैवेद्य के बाद आचमन कराकर पान और सुपारी (ताम्बूल, पूगीफल) भी देते हैं और वह भी नैवेद्य का ही अंग समझा जाता है। प्रदक्षिणा और नमस्कार के बीच में पुष्पांजलि चढ़ाने की भी रीति है। आजकल प्रदक्षिणा को बिगाड़कर पुरोहितों ने दक्षिणा रखदी है। प्रदक्षिणा का 'प्र' उड़ा दिया और दक्षिणा कहकर कमसे कम एक पैसा तो अवश्य ले लेंगे। यह भी रीति चली आती है कि पूजा के समय यदि कोई पदार्थ घट जाता है तो उसके स्थानपर अक्षतों को चढ़ाकर काम चला लेते हैं। चन्दन के साथ भी अक्षत चढ़ाने का नियम है और वह अक्षत चावल ही हैं न कि और कुछ। नैवेद्य का अर्पण किसी पत्ते आदि में रखकर करना चाहिये। इस तरह अब पूजा करने का क्रम यह है और उसमें क्रम से यह बातें की जाती हैं--आवाहन, आसन, पाद्य, अर्घ्य, आचमन या आचमनीय, स्नान, स्नानान्ते आचमन, वस्त्र, वस्त्रान्ते आचमन, उपवीत, चन्दन, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, (फल मीठा या सिद्धान्न), नैवेद्यान्ते आचमन, ताम्बूल पूगीफल (पानसुपारी), नमस्कार, पुष्पांजलि, प्रदक्षिणा और विसर्जन। पाद्य पांव धोने के जल को और अर्घ्य हाथ धोने के जल को कहते हैं। इसके सिवाय यदि कोई पैसा या द्रव्य भेंट करना चाहे तो वह भी किया जाता है। पर, वह पूजा का आवश्यक अंग नहीं है।

८—मधुपर्क।

पूजा के प्रसंग में मधुपर्क देने या अर्पण करने का भी वर्णन आता है। विवाह की पद्धतियों में तो वरको मधुपर्क देने की विधि आती है, यद्यपि शास्त्रीय रीति से मधुपर्क के अधिकारी ये छ हैं, यज्ञ कराने के लिये आया हुआ ऋत्विक्, वर, राजा, मित्र, समावर्त्तन करने वाला विद्यार्थी और आचार्य। इनकी पूजा मधुपर्क विधिसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करना चाहिये। पूजा के बीचमें ही मधुपर्क भी आता है। इसीसे उसे पूजाका एक अंग मानते हैं। एक में मिलाकर तथा कांसे के बर्त्तन में कांसे के ही बर्त्तन से ढंक कर रक्खे हुए दही, मधु और घी को मधुपर्क कहते हैं। मधुपर्क का शब्दार्थ है मधु मिला हुआ। यदि दही न मिलसके तो उसकी जगह पानी या दूध और मधु न मिलने पर गुड़ या घी मिलादेना चाहिये। मधुपर्क में आसन देने के बाद उसी पर एक विष्टर देते हैं। फिर बैठने पर पाद्य देते हैं। यह पांव धोने का जल जरासा गर्म रहना चाहिये। फिर पांव के नीचे रखने को दूसरा विष्टर देते हैं। बाद को अर्घ्य देते हैं। अर्घ्य के जल में चन्दन, पुष्प, अक्षत, कुश, तिल, पीली सरसों, दूब और दही यह आठ चीजें मिली रहती हैं। इसी से वह अष्टांग कहाता है। जिसे अर्घ्य दिया जाता है वह उस जल में से कुछ अपने सिर पर डाल कर शेष भूमिपर गिरा देता है। फिर आचमन देकर मधुपर्क दिया जाता है और वह पुरुष उसे लेकर अंगूठे और अनामिका से उसे तीन बार ऊपर उछालकर उसका कुछ अंश या समूचा खा जाता है। यदि समूचा नहीं खाता तो, पुत्र या शिष्य को जो उत्तर तरफ खड़ा रहता है, दे देता है या एकान्त में रखदेता है। फिर आचमन कराने के बाद उसे गाय दी जाती है। आसन के सिवाय यही छ बातें मधुपर्क में की जाती हैं। मधुपर्क के समय ब्राह्मण का दाहिना पांव पहले धुलाया जाता है और क्षत्रिय का बायां। अर्घ्य शंख या सोने के पात्र में और आचमन ताम्बे आदि के पात्र में दिया जाता है।

९—पंचगव्य और पञ्चामृत।

साधारणतया शुद्धि के लिये, बहुत से पापों के प्रायश्चित्त के लिये और श्राद्ध, पूजा आदि के स्थान मण्डप वगैरः को पवित्र करने के लिये भी पञ्चगव्यकी आवश्यकता होती है। गव्य नाम है गौके शरीर से उत्पन्न हुए या निकले पदार्थ का। गौ के गोबर, मूत्र, दूध, दही और घी इन्हीं पांच को पंचगव्य कहते हैं। भरसक ताम्बे के बर्त्तन में इन पांच चीजों को मिलाकर ऊपर से कुश से जल डाल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देने पर पञ्चगव्य तैयार होता है। पञ्चगव्य के बनाने में यह नियम है कि भरसक सफेद (शुक्ल) गौ का मूत्र, काली का गोबर, लाल का दूध, भूरी (कपिला) का घी और श्वेत का दही लिया जावे। अत्यन्त सफेद को शुक्ल और जरासा कम सफेद को श्वेत कहते हैं। भूरी गाय कुछ पीलापन लिये रहती है। लेकिन पराशर ने लिखा है कि खूब लाल गौ का दही, काली का मूत्र, सफेद का गोबर, जरा कम लाल का दूध और कपिला (भूरी) का घी लेना चाहिये। अत्रि ने लिखा है कि जितना गोबर हो उसका दूना मूत्र, चौगुना घी, आठ गुना दूध और उतनाहीं दही मिलाकर मूत्र के बराबरही कुशका जल मिलावे। पराशर ने लिखा है कि आधा पल (दो रुपये भर) गोबर, एक पल मूत्र, एक पल घी, एक पल कुश का जल, ३ पल दही और ७ पल दूध मिलाने से पंचगव्य होता है। कहीं कहीं लिखा है कि आधा पल या २० रत्ती गोबर, उसका दूना मूत्र, मूत्र के बराबर ही कुशोदक (कुशकाजल), मूत्रसे दूना दही और घी और मूत्रसे ही तिगुना दूध मिलाने से पञ्चगव्य होता है। इसलिये इन तीनों में से किसी एक के अनुसार करना चाहिये। पर अत्रि वाला पक्षही सबसे आसान और ठीक मालूम होता है। सोने, ताम्बे आदि के बर्तन या कमल, पलाश आदि के पत्तों के दोने में पञ्चगव्य बनाना चाहिये नकि मिट्टी के बर्तन में। यह सदा स्मरण रखना चाहिये कि कुम्हार के चक्र (चाक) पर बनाया मिट्टी का बर्त्तन आसुरी कहलाता है। इस लिये उसे देव पितृ कार्य में कभी भी काम में न लावे। हां, यदि केवल हाथ से बनाये गये हों तो कोई हर्ज नहीं है। दीया भी हाथ सेही बना हुआ रहना चाहिये। इस तरह छओं चीजों को मिलाकर और हाथ में पीपल आदि यज्ञिय काष्ठ लेकर ॐकार पढ़ते हुए उनको अच्छी तरह मिला देना और पुनः ॐकार पढ़कर अभिमंत्रण कर देना चाहिये। अभिमंत्रण का अर्थ है किसी पदार्थ को हाथ में लेकर और हाथ सेही ढँककर मंत्र पढ़ना और उसे पवित्र और शक्ति सम्पन्न बनाना। गोबर आदि प्रत्येक चीज के मिलाने के लिये अलग अलग मंत्र हैं जो कर्म के प्रकरण में लिखे जाँयगे।

गौ का दूध, दही, घी और मधु तथा शक्कर इन पांचों को किसी पात्र में एक जगह मिला देने से पञ्चामृत बनता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१०—ब्रह्मा, आचार्य आदि ।

साधारण रीति से सभी होमों में ब्रह्मा का वरण होता है और अग्नि कुंड से उत्तर किसी आसन पर बैठाकर उसकी पूजा करके फिर पूर्व होकर अग्नि से दक्षिण तरफ एक आसन पर उसे बिठादेते हैं। उसका प्रधान काम यही समझा जाता है कि देखता रहे, ताकि किसी काम में कोई त्रुटि या अशुद्धि न होने पावे और जहां ऐसा हो तुरन्त बता दे। यह माना जाता है कि चार वेदों के ज्ञाता चार प्रधान ऋत्विक् होते हैं। उनमें सामवेद का उद्गाता, ऋग्वेद का होता, यजुर्वेद का अध्वर्यु और अथर्ववेद का ब्रह्मा होता है। तथापि ब्रह्मा को चारों वेदों का ज्ञाता होना चाहिये। क्योंकि पहले तो वेद ही तीन हैं, नकि चार। तीन प्रकार के मंत्रों की प्रधानता के कारण तीन वेद हैं। मंत्र तीनहीं प्रकार के हैं ऋक्, यजुः और साम। जिस वेद में ऋक् मंत्रों की प्रधानता है वह ऋग्वेद, जिसमें यजुः मंत्रों की प्रधानता है वह यजुर्वेद और जिसमें साम मंत्रों की प्रधानता है वह सामवेद कहाता है। इस प्रकार तीनहीं वेद हुए। इसीलिये त्रयी या वेदत्रयी का उल्लेख मिला करता है। त्रयी का अर्थ है तीन। तीनों प्रकार के मंत्रों की जिसमें प्रधानता हो वही अथर्ववेद कहाता है। इसीलिये वह स्वतंत्र वेद नहीं है और इसीलिये अथर्ववेद के ऋत्विक् ब्रह्मा को सभी वेदों का जानकार होना पड़ता है। जैसे पिंगल के नियमानुसार श्लोकों के चरण और अक्षर या मात्रा का नियम होता है कि इतने हीं चरण या इतने हीं अक्षरों के अमुक श्लोक या दोहा चौपाई आदि होते हैं उसी तरह जिन मंत्रों में चरण आदि का नियम है उन्हें ऋक् कहते हैं। जिन में यह नियम नहीं है उन्हें यजुः कहते हैं और जिनका गान किया जाता है वे साम कहाते हैं। दूसरी बात यह है कि जब ब्रह्मा को सभी के कामों की निगरानी करनी है, तो जब तक ऋग्वेद को न जाने होता के काम की देखरेख कैसे कर सकता है? इसी प्रकार यजुर्वेद के ज्ञान विना अध्वर्यु के और सामवेद के जाने विना उद्गाता के काम की देखभाल असंभव है। इसीलिये चारों वेदों का ज्ञाता ब्रह्मा होता है। इसीसे पुराणों में ब्रह्मा के चार मुख कहे भी गये हैं। अतएव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2'

जब ऐसा वेदज्ञ नहीं मिलता तो कुशों के अग्रभाग को जटा की तरह लपेटकर ब्रह्मग्रन्थि देते और उन्हीं कुशों काही ब्रह्मा बनाते हैं। और इसीलिये पद्धतियों में ब्रह्मा को दक्षिणा देने के बाद 'ब्रह्मग्रन्थिविमोक' लिखा रहता है, जिसका यही अर्थ है कि ब्रह्मा के कुशों की ब्रह्मग्रन्थि खोल दीजाती है। ठीक उसी के बाद 'प्रणीताविमोक' लिखा रहता है। प्रणीतापात्र को ईशान कोन में उलट (औंध) देने को प्रणीता-विमोक कहते हैं, अस्तु।

पूर्णपात्र या वर इस ब्रह्मा की दक्षिणा लिखी गई है। यद्यपि यह भी कहीं कहीं लिखा है कि यजमान की मुट्ठी से २५६ मुट्ठी चावलों से भरा बांस का सूप या कोई ऐसाही पात्र पूर्णपात्र कहाता है। तथापि यह नियम नहीं है। कात्यायन स्मृति (खंड १५), गोभिल गृह्यसूत्र (१ प्र० ९ खं० ७ सू०), गृह्यासंग्रह (१ प्र० ४३श्लोक) और गोभिलीय गृह्य कर्म प्रकाशिका (पृ० १४) आदि के देखने से स्पष्ट है कि पूर्णपात्र वाली दक्षिणा दो प्रकार की है, एक परार्ध्य और दूसरी अवरार्ध्य या अपरार्ध्य। परार्ध्य के विषय में यजमान की ६४, १२८ और २५६ मुट्ठी यह तीन मत हैं। लेकिन अपरार्ध्य के विषय में लिखा है कि पूरा भोजन करने वाले किसी दूसरे पुरुष या ब्रह्मा के ही भोजन के लिये जितने चावल या फल आदि काफी हों उन्हीं चावलों या फलादि से भरकर चमस या कोई कांस्य पात्र रक्खा जाता है और उसे ही पूर्णपात्र कहते हैं। वर तो गौ को कहते हैं। ब्राह्मण का वर गौ, क्षत्रिय का गांव और वैश्य का वर घोड़ा कहाता है। अथवा ब्रह्मा या आचार्य आदि को सन्तुष्ट करने के लिये दक्षिणा के रूप में जो ही वस्त्रादि दिये जाते हैं उन्हें ही वर कहते हैं।

आघार, आज्यभाग, व्याहृति होम, पंचवारुणी और स्विष्ट-कृत् की १३ या १४ आहुतियों को अग्नि में देने के समय आहुति देनेवाले यजमान या अध्वर्यु वगैरः का ब्रह्मा अन्वारम्भ करता है। अन्वारम्भ का अर्थ है छूए रहना। नियम यह है कि ब्रह्मा दहिने हाथ से, या उसमें कुश लेकर उसीसे, होम करने वाले के कन्धे को स्पर्श किये रहे।

अध्वर्यु यजुर्वेद का ज्ञाता ऋत्विक् है। उसका प्रधान काम है श्रौत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्मों में होता को याज्या और अनुवाक्या पढ़ने की आज्ञा देना और उसके याज्या पढ़नेपर तथा यजमान के 'नमम' कहनेपर अग्नि में आहुति को छोड़ना । मगर स्मार्त्त कर्मों में तो सिर्फ आहुति देना हीं उसका काम है ।

होता ऋग्वेद का ज्ञाता ऋत्विक् है । अनुवाक्या और याज्या मंत्र ऋग्वेद में हीं पढ़े हैं और अध्वर्यु की आज्ञा पाकर होता उन्हीं को श्रौत कर्मों में पढ़ता है । अध्वर्यु के 'अनुब्रूहि' कहनेपर जो मंत्र पढ़ा जाता है वह अनुवाक्या और 'यज' कहने के बाद जो पढ़ा जाता है वह याज्या कहाता है । याज्या के बाद ही 'इदममुक देवाय नमम' यह त्याग वाक्य यजमान बोलता है और उसी के बाद आहुति अग्नि में दी जाती है । त्याग वाक्य पढने का अधिकार केवल यजमान को ही है, क्योंकि आहुति के पदार्थ उसी के हैं । फिर उनका त्याग कौन करे ? अतः त्याग वाक्य के विना आहुति छोड़ना ठीक नहीं है । उस वाक्य का अर्थ है कि 'मैंने इस आहुति के पदार्थ को अमुक देवता के लिये दे दिया, अब यह मेरा नहीं रह गया' । हां, यह दूसरी बात है कि बहुत ज्यादा आहुतियां देनी हैं और किसी कारण वश यजमान प्रत्येक आहुति के साथ त्याग बोल नहीं सकता । ऐसी दशा में होम के आरम्भ मेंहीं हरेक देवताओं के नाम से त्याग कर देना यजमान का कर्त्तव्य हो जाता है। फिर तो बार बार त्याग बोलने की आवश्यकताही नहीं रह जाती । स्मार्त्त कर्मों में भी यदि और कोई आचार्य न हो तो होता काही काम है कि हवन के मंत्रों को पढ़कर प्रत्येक देवता के नाम के साथ 'स्वाहा' अन्त में बोला करे । परन्तु, यदि दूसराही आचार्य हो तो होता को आवश्यकता ही नहीं होती और यदि वह रहता भी है तो अध्वर्यु की तरह वह भी आहुति ही देता है ।

उद्गाता सामवेद का ज्ञाता है । इसका काम है श्रौत कर्मों में, या श्राद्धादि में, जहां आवश्यकता हो, साम का गान करे । दूसरा काम उस के लिये नहीं है । फिर भी यदि इसका वरण स्मार्त्त कर्मों में हो गया हो तो वह भी आहुति ही देगा, यदि उसके लिये साम गान की आवश्यकता न हो ।

आचार्य का काम तो है सभी ऋत्विजों या यजमान को कर्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करने का क्रम बताना कि अब यह करो, फिर यह करो इत्यादि। प्रसंग के अनुसार विधियों और मंत्रों को भी बोलना और बताना उसी का काम है। अग्नि होत्र, पञ्च यज्ञ और उपनयन आदि में तो स्वयं यजमान हीं आचार्य होता है। मगर यदि वह पूर्ण ज्ञाता न हो तो चारों वेदों के पूर्ण ज्ञाता आचार्य का वरण इसलिये कर लेवे कि वह यजमान का पथदर्शक बने और उससे ठीक ठीक कर्म करावे।

इनके सिवाय आग्नीध्र, मैत्रावरुण आदि और भी ऋत्विक् बड़े बड़े श्रौत स्मार्त्त कर्मों में होते हैं। इनका काम विवाहादि कर्मों में नहीं पड़ता। ऋत्विक् शब्द का अर्थ है ऋतु या समय समय पर देवताओं का यजन करने कराने वाला। यह काम ब्रह्मा आदि चारों का है। इसीसे वे चार और शेष दूसरे भी ऋत्विक् कहे जाते हैं।

११—स्वस्तिवाचन, पुण्याहवाचन, प्रधानसंकल्प।

जो विवाहादि कर्म करना हो उसके करने का संकल्प कर्म काल में पहले किया जाता है। इसेही प्रधानसंकल्प वा प्रतिज्ञा भी कहते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि कर्त्ता वचनबद्ध हो जाता है, ताकि हजार विघ्न होने पर भी भरसक उसे बीच में अधूराही न छोड़कर पूरा करे। संकल्प के समय हाथ में तिल, कुश (जहांतक हो सके ३ कुश), जौ या चावल, सुपारी और जल लेकर संकल्प पढ़ा जाता है। आजकल पैसा भी रखने की चाल है। मगर यह बात पद्धतियों या धर्म ग्रन्थों में नहीं मिलती। संकल्प के समय देश, काल, मास, तिथि, वार, नक्षत्र आदिको कहकर फिर कर्त्ता अपना नाम कहता है और अन्तमें जिस कर्म को करना हो उसका नाम लेता है और 'करिष्ये' कहकर कुशादिको भूमिपर रख देता है। कर्म के दिन जो महीना, पक्ष, तिथि, वार, नक्षत्रादि हों उन्हीं का नाम उच्चारण करना चाहिये। पर, इससे भी पहले कर्म की निर्विघ्न पूर्ति के लिये गणपति (महागणपति या गणेश) के पूजन का संकल्प करके उनके लिये जो स्थान या वेदी आदि हो वहांपर उनका षोडशोपचार से पूजन करना चाहिये। गणेश पूजा के समय पहले कुलदेवता, इष्टदेवता और विष्णु आदि का भी स्मरण करना चाहिये, यही परिपाटी है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गणेशपूजा के बाद ही प्रधान संकल्प करके तथा स्वस्तिवाचन और पुण्याहवाचन कराके फिर मातृकापूजा और उसके बाद वृद्धिश्राद्ध करना चाहिये, ऐसा बहुतों का सिद्धान्त है। पर, प्रायः यह भी देखा जाता है कि जहां तहां पद्धतियों में यजुर्वेदियों और सामवेदियों के यहां मातृपूजा और वृद्धिश्राद्ध के बादही पुण्याह-वाचन कराते हैं और स्वस्ति वाचन या शान्तिपाठ गणेश पूजा के बादही कराते हैं। कहीं कहीं तो पहले स्वस्तिवाचन या शांतिपाठ करा करही गणेशपूजा कराते हैं और कहीं कहीं स्वस्तिवाचन एवं पुण्याहवाचन एक साथही कराते हैं। सभी प्रकार के मत हैं। जैसी कर्त्ता की इच्छा। पर, हमारे जानते पहले मण्डप की पूजा और वास्तुशान्ति करके गणेशपूजा करे। फिर प्रधान संकल्प करके शा-न्तिपाठ या स्वस्तिवाचन और पुण्याहवाचन करावे। तब मातृका-पूजा और वृद्धिश्राद्ध करके नवग्रहादिका पूजन और शेष कार्य करे। हां, जहां नवीन मण्डप न बना हो वहां मण्डपपूजा या वास्तुशान्ति की आवश्यकता नहीं। पर, जो ही पूजा करे उससे पूर्व उसका संकल्प अवश्य करे यही नियम है। 'स्वस्ति' और 'शान्ति,' शब्द वाले, और उनके साथ कुछ और भी, मंत्रों के पाठ को शान्तिपाठ और स्वस्ति वाचन कहते हैं। उनमें प्रधानता स्वस्ति और शान्ति की है। इसीलि-ये स्वस्तिवाचन और शान्तिपाठ नाम पड़ा। उसके बाद एक कर्म किया जाता है जिसमें कलशस्थापन और उसमें वरुण की पूजा करके उसे हाथ में लेते और उसका जल दो पात्रों में या एक पात्र में और उससे बाहर क्रमसे गिराते हैं और ब्राह्मण लोग मंत्र पढ़ते जाते हैं। इस पुण्याहवाचन में दो, चार आदि सम संख्या वाले ब्राह्मण रहते हैं नकि एक या तीन आदि। इस कर्म में एक जगह पुण्याह शब्द भी आता है और यजमान 'पुण्याहवाचन कराऊँगा', ऐसी प्रतिज्ञा ब्राह्मणों से कराता है। बस, इसीसे समूचे कर्म का ही नाम पुण्याह-वाचन पड़गया है। बहुत जगह तो इसी कोही स्वस्तिवाचन भी कहते हैं। क्योंकि स्वस्ति शब्द भी 'पुण्याह' की ही तरह एक जगह आता है और उसके भी वाचन की प्रतिज्ञा कराई जाती है। इसलि-ये पूर्व कर्म का नाम केवल शान्तिपाठ ही माना गया है। स्वस्ति का अर्थ है कल्याण और पुण्याह का अर्थ है शुभदिन वा अच्छा सम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

य । वाचन कहते हैं पाठ कराने या पढ़ाने को । उस कर्म और उसमें पठित मंत्रों का अभिप्राय यही है कि मुझे शान्ति की प्राप्ति हो, मेरा कल्याण हो और मेरे अच्छे दिन हों ।

१२–आघार, आज्यभाग, पंचवारुणी ।

होम के आरम्भ में प्रजापति और इन्द्र के नाम से दो आहुतियां सर्वत्र दी जाती हैं । इन्हें आघार कहते हैं । फिर अग्नि और सोमके नाम से दो दी जाती हैं । इन्हें आज्यभाग कहते हैं । यह मीमांसकों का संकेत है । यही नाम वैदिक ग्रन्थों में मिलते हैं । ऐसा नियम है कि आघार की पहली आहुति अग्नि के उत्तरभाग में और दूसरी दक्षिण भाग में दी जाती है । इसी प्रकार आज्य भाग की पहली आहुति उत्तर पूर्व (ईशान) में और दूसरी दक्षिण पूर्व (अग्नि) कोन में दी जाती है । अथवा मध्य में हीं सभी (चारों) आहुतियां दी जाती हैं या जहां पर अग्नि खूब प्रज्वलित वहीं पर । आघार की पहली आहुति प्रजापति का मनमें ध्यान कर और मन से ही मन्त्र पढ़कर दी जाती है नकि बोलकर । इन चारों के बाद भूः, भुवः, स्वः, इन तीन महाव्याहृतियों को पढ़कर क्रम से अग्नि वायु और सूर्य को आहुति दी जाती है । इन्हें प्रायश्चित्त आहुति कहते हैं । ऋक्, यजुः, साम, इन तीनों वेदों में कहे गये कर्मों या मंत्रों की त्रुटि के प्रायश्चित्त के लिये क्रमशः वे तीन आहुतियां हैं । कहीं कहीं तीनों व्याहृतियों को एक साथ पढ़कर प्रजापति के नाम से आहुति दी जाती है । इसका भाव यह है कि जब यह मालूम न हो कि किस वेद के कर्म या मंत्र में त्रुटि हुई है तो यह चौथी आहुति दी जाती है । इसके बाद पांच वेद मंत्रों से पांच आहुतियां दी जाती हैं । उनका नाम पञ्चवारुणी है । उनमें से चार मंत्रों में तो वरुण का नाम आता है, पर एक में नहीं । वह इन चारों के बीच में है । इधर उधर के मंत्रों में वरुण का नाम है और उनकी संख्या भी ज्यादा है । इसलिये पांचों मंत्रों से दी गई आहुतियां वारुणी (वरुणकी) हीं कही जाती हैं । उनकी संख्या पांच होनेसे पंचवारुणी नाम पड़ा । अन्तिम आहुति स्विष्टकृत् की आहुति कही जाती है । यद्यपि वह आहुति भी अग्नि की ही है । पर, अग्निका विशेषण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्विष्टकृत् देकर उसी नाम से वह आहुति कही जाती है। इस प्रकार यह १३ या १४ आहुतियां सभी होमों के प्रारम्भ में दी जाती हैं और प्रत्येक आहुति के बाद स्रुवमें जो शेष घी लगा रहता है उसे प्रोक्षणीपात्र में टपका देते हैं, ताकि एक देवता का भाग दूसरे को न चला जावे। इस प्रकार जो टपकाया घी प्रोक्षणी में है उसका नाम संस्रव है। ब्रह्मा को दक्षिणा देने के पहले या तो उस संस्रव को पी लेते या सूंघ लेते हैं। इसी का नाम संस्रवप्राशन है।

१३—सप्तमृत्तिका, पञ्चपल्लव आदि।

जौ, गेहूं, तिल, कंगनी, जिसे कहीं कहीं टांगुन भी कहते हैं, मूंग, सावां और चना इनका नाम सप्तधान्य है। कहीं कहीं कंगनी की जगह धान और चना की जगह नीवार (तेनी) और चीना को रक्खा है। इन्हीं आखिरी सात में सरसों मिलाकर बीजाष्टक कहाते हैं। बीजाष्टक का अर्थ है आठ बीज। कूट, जटामांसी, दोनों हलदी, शिलाजीत, मुरा, (तालिसपात), चन्दन, बच, चम्पा, नागरमोथा, यही दस सर्वौषधि हैं।

हाथी, घोड़ा और गौ के रहने की तीन जगहों की मिट्टी और चौराहा, तालाब, वल्मीक (बेमौट) और गली इन चार जगहों की मिट्टी, इन्हीं सात को सप्तमृत्तिका कहते हैं। कहीं कहीं गोशाला, गली और तालाब की जगह राजा के द्वार की, नदी के किनारे की और सूअर की खोदी, यह तीन मिट्टी ली गई है। पहली सात में तीर्थ और अग्निशाला की और सूअर की खोदी मिट्टी मिलाकर दशमृत्तिका कहाती है।

पीपल, गूलर, बरगद, पकड़ी और आम के पल्लव को पञ्च पल्लव कहते हैं। कहीं कहीं आम, जामुन, कैथ, बिजौरा नींबू और बेल इन पांचों की पत्तियों को पञ्चपल्लव कहा है। तांत्रिक लोग कटहल, आम, पीपल, बड़ और मौलसिरी के पत्तों को पंच-पल्लव कहते हैं।

सोना, चांदी, लाजावर्त्त, मूंगा और मोती को पंचरत्न कहते हैं। सोना, हीरा माणिक, नीलम और मोती को भी पंचरत्न कहते हैं। सभी रत्नों के न रहने या न मिलने पर सभी की जगह सोने से काम चल जाता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रधान कर्म के आरम्भ के पहले दिन या उसी दिन प्रातः काल चन्दन माला आदि से मण्डप, और उसके देवता आदि का संस्कार करना अधिवासन कहलाता है ।

कर्म के समय स्त्री को भी साथ बैठाना चाहिये, अकेले पति को ही कर्म न करना चाहिये । आशीर्वाद लेने के समय, अभिषेक के समय, ब्राह्मणों के पाद धोने, सोने और भोजन के समय स्त्री पति से बायें रहती है । कन्यादान, श्राद्ध, उपनयनादि सभी शेष कार्यों में उसे पति से दहिने रहना चाहिये । यदि किसी कारण से साथ न बैठ सके तो किसी कपड़े आदि से दोनों का सम्बन्ध जोड़ लेना चाहिये। इसे ही गांठबांधना (ग्रन्थिबन्धन) कहते हैं ।

विष्णु को अक्षत, गणेश को तुलसी, दुर्गा को दूब और शंकर को शंख का जल कभी न चढ़ावे ।

सभी फूलों और फलों को देवताओं पर चढ़ाने में यही नियम है कि जिस तरह पैदा हों उसी तरह चढ़ाना चाहिये, अर्थात् पत्ते या फूल का जो हिस्सा वृक्ष में ऊपर की ओर रहता है देवता पर भी वहीं ऊपर की ओर और नीचे का नीचे की ओर रहना चाहिये । सिर्फ बिल्वपत्र के ऊपर का हिस्सा नीचे और नीचे का ऊपर रहता है । अर्थात् जिधर पत्ते मुड़े रहते हैं वही नीचे रहता है ।

कर्मकाल में जब किसी दिशा का नाम न लिखा हो तो पूर्व, ईशान या उत्तर समझना चाहिये । जब होममें किसी पदार्थ का वर्णन न हो तो घी समझना और किससे हवन करे यह न लिखा हो तो बहने वाली चीजों के लिये स्रुव और खीर आदि ठोस चीजों के लिये हाथ ही समझना उचित है । जहां किसी देवता और मंत्र का नाम न हो वहां प्रजापति देवता और 'ॐ प्रजापतये स्वाहा' यही मंत्र समझ लेवें । जिस कर्म को खड़ा या बैठ कर करने को न कहा हो उसे बैठ कर ही करे । जहां यह न लिखा हो कि दहिने हाथ से करें या बायें से वहां दहिना हीं समझा जाना चाहिये ।

कर्म के आरम्भ करने से प्रथम उसमें साधारणतया खर्च होने के लिये पानी की जरूरत होती है । उस पानी से जब लोटे आदिको भरते हैं तो उसे कर्मपात्रपूरण या अर्घ्यस्थापन कहते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उस जल में तुलसीदल, चन्दन, अक्षत, जौ, फूल और कुश डाल और कूष्माण्ड मंत्रों को पढ़ कर उसे कुश से हिलाते हैं। इस सम्पूर्ण क्रिया का नाम कर्मपात्रपूरण या अर्घ्यस्थापन है।

दूब, जौ या जौ का अंकुर, खस, आम का पल्लव, साधारण हलदी, आमीहलदी, सफेद सरसों, मोरपंख और सांप की केंचली, इन नौ चीजों को कौतुक कहते हैं और इन्हीं का कंकण विवाह में बनाया जाता है। कहीं कहीं उपनयन के समय भी कंकण बांधते हैं। उसमें लोहे की मुद्रिका (मुंदरी वा छल्ला) भी बांधने की रीति है जो सम्भवतः द्रव्य की जगह है।

पितर सम्बन्धी मंत्र पढ़ने, हृदय का स्पर्श करने, उसे देखने, अपान वायु छोड़ने, जोर से हंसने, झूठ बोलने, बिड़ाल या चूहे के छूने, कड़ा शब्द बोलने या क्रोध करने पर कर्म के समय आचमन कर लेना या हाथ से जल छू लेना चाहिये। छींकने, नासिका का मैल निकालने, आसू गिराने, खून या बाल छूने, अग्नि, गौ, ब्राह्मण को छूने, अपवित्र वस्तु के लगने या कमर की धोती बांधने पर आचमन करे। यदि आचमन की संभावना न हो तो जल या गीले तृणादि को छूवे और वह भी न कर सकने पर दहिना कान छू लेवे।

धार्मिक कामों के समय धोती के किनारे से कमर बांधकर धोती पहनना और धोती का किनारा आगे या पीछे लटकाना या पताका की तरह रखना आसुरी है। अतः न तो कमर बांधना और न किनारा ही लटकाना चाहिये।

साधारण श्राद्ध के समय धोती के एक किनारे में मोटक, तिल और नान्दीमुख में जौ, दूब बांध कर उसे बाईं या दहिनी कमर में लगा लेने को नीवीबंधन कहते हैं।

धूप को दशांग इस लिये कहते हैं कि उसके दस अंग होते हैं, यानी उसमें दस चीजें मिली रहती हैं। उन दसों का नाम और उनके मिलाने का हिसाब यह है:—६ भाग कूट, १२ भाग गुड़, लाक्षा ३ भाग, नखी ५ भाग, हरैं १ भाग, जटामांसी १ भाग, राल १ भाग, शिलाजीत ३ भाग, नागरमोथा ४ भाग, गुग्गुल १ भाग। इस तरह कुल ३७ भाग हुए। इस प्रकार यदि कुल मिलकर ३७ सेर या ३७ रुपये भर हों तो ६ सेर या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६ रुपये भर कूट रहेगा । इसी तरह और भी जानना चाहिये ।

कुशके न मिलने पर काश, सरपत, दूब, जौ, गेहूं (या जौ गेहूँ का डंठल), लवा, सोना, चांदी, ताम्बा इन नवों में से किसी से काम चलाया जा सकता है और उसी का पवित्र आदि बनाया जा सकता है । कारण, यह नौ कुश के प्रतिनिधि हैं और शास्त्रों में इन्हें भी कुशों में गिना है । किसी पदार्थ के न रहने पर उसकी जगह जो दूसरा काम में लाया जाता है उसे प्रतिनिधि कहते हैं ।

हरेक काम में बैठने पर घुटनों के बाहर हाथ रख कर वह काम कभी न करना चाहिये । हाथ घुटने के भीतर ही रहें ।

आहुति डालने के समय हथेली ऊपर करके अंगूठे और अंगुलियों को अपनी अपनी जगह विधिवत् सटाकर देवतीर्थ से आहुति डाली जावे । अंगुलियों के बारहों पोर जितने से ढंक या भर जावें उतने की एक आहुति और जितने से स्रुव भर जावे उतने घृतादि की एक आहुति होती है ।

एक सेर धान या एक ही सेर जौ की ६४ आहुति होती है; एक सेर तिल की १२८ और घी की २५६ आहुति होगी । इसलिये साकल्य में जितना घी हो उसका दूना तिल और चावल, गुड़ या शक्कर और तिलका दूना जौ और उतना ही धान दिया जावे । जौ न मिलने पर गेहूँ और धान न मिलने पर साठी दी जाती है । इनके सिवाय उड़द, मूंग, तेनी, ऊख, दूध, दही और मधु भी यज्ञिय या हविष्य पदार्थ हैं । खीर, भात आदि कृत, चावल कृताकृत और धान, जौ आदि अकृत अन्न कहाते हैं ।

पलाश, गूलर, बड़, पकड़ी, पीपल, शमी, बेल, चन्दन, देवदारु साल, खैर यही यज्ञिय वृक्ष हैं। वरणा और विकंकत भी यज्ञिय ही हैं मगर नीम, आम, सेमल, कैथ, बहेड़ा, लिसोढ़ा, कचनार, अमलतास सोनापाठा, बबूल, सिहोर, तिन्दुक, (तेंदुआ) और धवल के सिवाय अन्य वृक्षों की भी लकड़ी यज्ञ में काम आ सकती है, यदि मुख्य यज्ञिय काष्ठ मिल न सकें ।

यदि होम के समय अग्नि धधकती न हो तो उसमें आहुति डालने से दरिद्र और रोगी होता है । इस लिये यदि अग्नि तेज न हो तो सूप या हाथ से उसे न जला कर पंखे या मुख से फूंक कर जला लेना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिये। यदि बांस की नली लगा कर मुख से फूंका जावे तो और भी अच्छा। क्योंकि केवल मुख से फूंकने में थूक पड़ने का डर रहता है। मुख से अग्नि फूंकने का निषेध साधारण अग्नि के लिये है न कि यज्ञ और होम में भी।

जहां जहां घृत का नाम हो वहां गौ का ही घी प्रधान है। यदि वह न मिले तो क्रमसे भैंस, बकरी, भेड़ी का घी, तिल का तेल; तीसी का तेल, कुसुम का तेल और सरसों का तेल लेवे। यदि यह भी न मिलें तो, धान या सांवा का तेल काम में लावे। वृक्षों के तेलों को भी काम में ला सकते हैं, जैसे महुवा वगैरः का। मगर जब कोई न मिले तभी। जहां जहां आज्य शब्द हो वहां भी घी लेना चाहिये। मगर घी न मिलने पर तेल, दूध, दही वा जौ की लपसी या दलिया से भी काम चला सकते हैं।

यदि कर्त्ता रोगी, दुर्बल अथवा बालक हो तो पानी, दूध, कन्द, मूल. फल, ऊख, पान और दवा खाकर भी स्नान, दान, यज्ञादि कर सकता है।

तृण, कुश या लकड़ी जला कर किसी के चारों ओर घुमाने को पर्यग्निकरण कहते हैं।

चावल को पानी में डाल कर पकाने पर साधारण चरु और दूध मिला कर पकाने पर विशेष या पयसिचरु होता है।

होम के समय २४ अंगुल के स्रुव के मूल में चार अंगुल छोड़कर बाद के सिर्फ चार अंगुल को ही पकड़ना चाहिये। आगे के १६ अंगुल भी छूटे ही रहें। स्रुव को शंखमुद्रा से पकड़ना चाहिये। यानी कनिष्ठा और तर्जनी अलग रख कर, अंगूठा और मध्यमा, अनामिका से पकड़ कर उसकी जड़ अंगूठे तर्जनी के बीच में होकर बाहर आने देना चाहिये। आहुति देने के समय स्रुव का मुँह औंधा देना (नीचे कर देना) चाहिये।

हरेक कर्म में होमके लिये जो अग्नि होती है उसके भिन्न भिन्न नाम हैं जो कर्म के अवसर पर ही लिखे जावेंगे। होम से पूर्व अग्नि की सात जिह्वाओं का भी पूजन होता है। चिता एवं रास्ते में पड़े, यज्ञभूमि में और आसन के लिये बिछे, परिस्तरण किये गये और पिंड के नीचे या ऊपर दिये गये और प्रेत कार्य में लगाये गये, इन सात प्रकारके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुशों के सिवाय और कोई कुश अशुद्ध तथा बेकार नहीं होते ।

कुशकंडिका के समय होम के उपयोगी पात्रादि पदार्थों को आगे पीछे क्रम से रक्खा जाता है। इसे पात्रासादन या पदार्थासादन कहते हैं। आसादन का अर्थ है रखना । पात्रों या पदार्थों का आसादन पात्रासादन है । इसमें नियम ऐसा है कि या तो वे अग्निकुंड के पश्चिम रक्खे जावें या उत्तर । यदि पश्चिम रक्खे जावें तो सब से प्रथम जो रक्खा जावे वही सबसे पश्चिम रहे और उसके बाद क्रमशः पूर्व रक्खे जावें । उनमें पात्रों का मुंह पूर्व की ओर और अग्रभाग उत्तर तरफ रहे । इसी तरह यदि उत्तर रक्खे जावें तो पहले के उत्तर दूसरा और उसके उत्तर तीसरा इत्यादि रीति से । उनका मुंह (बिल या सूराख) उत्तर तरफ और सिर या अग्रभाग पूर्व ओर रहे ।

पूजा के समय दो क्रम माना जाता है । जहां अनेक देवताओं या मनुष्यों आदि की पूजा करनी हो वहां, जब एक की पूजा समाप्त करके दूसरे की और बाद को तीसरे की, इस क्रम से की जाती है तो उसे काण्डानुसमय कहते हैं । पर, जब एक एक चीज पारी पारी से सभी में कर के फिर दूसरी और तीसरी आदि की जाती है। जैसे आवाहन करना हुआ तो क्रमसे सभी का कर लिया । तब फिर आसन देना शुरू किया । वह सभी को दे कर पाद्य दिया इत्यादि। इसे पदार्थानुसमय कहते हैं । पदार्थ कहते हैं पूजा की एक एक चीज को और अनुसमय नाम है क्रमका । काण्ड है पूजा के सभी पदार्थों का प्रकरण या समुदाय ।

१४—प्रणव, ऋषि, छन्द आदि ।

ओंकार को ही प्रणव कहते हैं और उसे सब वेदों का सार एवं सब मंत्रों का राजा मानते हैं । ऐसा लिखा गया है कि तीनों वेदों के मथने से क्रमशः भूः, भुवः, स्वः निकले और इन तीनों के मथने से क्रम से अ, उ, म तीन अक्षर निकले जिनसे ओंकार बना है । इसी लिये यजुर्वेदियों के यहां प्रत्येक मंत्र के बोलने से प्रथम प्रणव बोला जाता है और सामवेदी यद्यपि ऐसा नहीं करते, तो भी एक प्रकार के सम्पूर्ण मंत्रों के प्रारम्भ में ओंकार अवश्य बोलेंगे और यदि उ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi/Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकरण के बीच में भी आचमन आदि के लिये किसी कारण रुकना पड़ा तो फिर जिस मंत्र को पहले बोलेंगे उसके आरम्भ में प्रणव अवश्य लगावेंगे । स्वस्ति आदि कहकर दान लेने के समय भी 'ॐ स्वस्ति' कहने की रीति तीन वर्णों के यहां है और शूद्र के यहां केवल 'स्वस्ति' कहते हैं ।

प्रत्येक वैदिक मंत्र से कोई कर्म करने के पहले उनके ऋषि, छन्द, देवता और विनियोग इन चार बातों के जानने की परिपाटी है और इनके जाने विना जप आदि को निष्फल बताया है ।

पहले वेद का कोई ग्रन्थ नहीं था । किन्तु समाधि द्वारा एकाग्र चित्त से जिन जिन ऋषियों ने जिन जिन मंत्रों का साक्षात्कार किया या देखा कि यह मंत्र ऐसा है; अथवा जिस मंत्र की उपासना, अनुष्ठान आदि द्वारा जिस ऋषिको सिद्धि प्राप्त हुई, वही उस मंत्र का ऋषि कहा जाता है और ऐसेही मंत्रों का संग्रह वेद है । ऋषि शब्द का अर्थ है ज्ञानी और वेद मंत्रों का द्रष्टा (प्रत्यक्ष करने वाला) ।

मंत्रों के पढ़ने में क्लेश न होकर आसानी हो और वे ठीक ठीक पढ़े जावें इसी लिये प्रत्येक मंत्र का पिंगल की रीति के अनुसार कोई न कोई छन्द है और प्रत्येक छन्द का नियम है कि इतने अक्षर, चरण या मात्रा का होगा । इसके जाने विना ठीक उच्चारण असंभव है । यही छन्द कहाता है ।

जिस मंत्र में जिस विषय का प्रतिपादन या निरूपण रहता है या जिसकी स्तुति आदि की जाती है वही उसका देवता कहा जाता है । देवता का यहां अर्थ है प्रधान या प्रतिपाद्य विषय ।

प्रत्येक मंत्र का जप होम आदि कोई न कोई प्रयोजन है । विनियोग का यही तात्पर्य है कि कौन मंत्र किस काम में लगाया जाने योग्य है यह मालूम हो जावे, ताकि दूसरे मंत्र से दूसरा काम न लिया जा सके ।

इससे स्पष्ट है कि ऋषि आदि के ज्ञानकी कितनी आवश्यकता है । जैसे ऊंचे कोठे पर विना सीढ़ी के चढ़ना या अन्धेरे में विना चिराग के जाना खतरे और धोखे से खाली नहीं है, उसमें गिरने या मरने का भय रहता है । ठीक यही बात वेद के मंत्रों के भी विषय में है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छन्दों का ज्ञान सीढ़ी का काम देता है जिससे मंत्रोच्चारणरूपी ऊंचे कोठे पर निर्विघ्न पहुंच सकें—उनका उच्चारण शुद्ध शुद्ध करें। और उन्हें अंग भंग न करें। ऋषि, देवता और विनियोग का ज्ञान दीपक का काम करता है जिससे मंत्रों के अर्थों के विषय में अन्दाजी टटोल करना न पड़े, उनका अन्धकार दूर हो जावे। प्रत्येक ऋषि का कोई न कोई प्रधान विषय हुआ करता है और उसके विषय प्रतिपादन की शैली भी निराली ही होती है। यह बात हरेक आदमी के विषय में कही जा सकती है। अतएव ऋषियों का ज्ञान भी मंत्रार्थ जानने में सहायक होता है। यदि उस मंत्र के अनुष्ठान द्वारा उस ऋषिको सिद्धि मिली तो वह कैसी थी, यह देख कर मंत्र के विषय का अन्दाज लगाया जा सकता है। देवता से तो विषय स्पष्ट ही है। विनियोग भी इस बातकी सहायता करता है कि जब अमुक काममें यह मंत्र लगाया जाता है तो उसका प्रतिपादन इस मंत्र में किसी न किसी रूप में अवश्य होगा। इस तरह हम वैदिक मंत्रों के शुद्ध उच्चारण और उनके अर्थ समझने में सफल हो सकते हैं। हां, इतने से कहीं कहीं क्लिष्ट या सांकेतिक शब्दों के अर्थ फिर भी नहीं जाने जा सकते। इसी लिये वैदिक कोष निघण्टु और निरुक्त के रूप में बनाया गया है। निघण्टु में ऐसे शब्दों के और निरुक्त में वाक्यों के अर्थ बताये गये हैं। निरुक्त के अन्तर्गत ही निघण्टु भी माना जाता है। इस प्रकार वेद मंत्रों का अर्थ जाना जाता है। दृष्टान्त के लिये परम प्रसिद्ध गायत्री मंत्र को लीजिये। वस्तुतः गायत्री नामका कोई मंत्र हो ही नहीं सकता। गायत्री तो एक प्रकार का छन्द है जिस में वेदके सैकड़ों मंत्र लिखे हैं। इस छन्द के २४ अक्षर होते हैं और इस मंत्र में भी २४ ही अक्षर हैं। इसलिये गायत्री छन्द में लिखे या पढ़े जाने के कारण हीं इस मंत्रको गायत्री कहते हैं। छन्द में चरण या पाद होते हैं। इस में भी ८–८ अक्षर के तीन पाद हैं। अक्षर से तात्पर्य यहां केवल स्वर से है न कि व्यञ्जन से भी। यद्यपि तीन व्याहृतियों के सिवाय गायत्री मंत्र में २३ ही स्वर हैं। तथापि 'वरेण्यम्' में जो 'ण्यम्' उसे 'णियम्' पढ़ने की रीति है। इससे २४ अक्षर पूरे हो जाते हैं। इस मन्त्र का देवता सविता (परमात्मा वा सूर्य) है। इसीसे सावित्री कहाती है। वस्तुतः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह एक ऋक् मंत्र है। इसके ऋषि विश्वामित्र हैं। उन्होंने इसीके द्वारा ब्रह्मतेज की प्राप्ति की। इससे पता चलता है कि अवश्यमेव इसमें ब्रह्मतेज का निरूपण होगा और बात यही है भी। परमात्मा या ब्रह्म के तेज वा ज्योतिः स्वरूप (भर्ग) का निरूपण तो इसमें हुई है।

१५—वेदांग और उपवेद ।

जिस तरह अनेक अंगों से बने होने के कारण शरीर की अनेक प्रकार से पुष्टि उन्हीं अंगों के द्वारा होती है, पांव से चल, दौड़कर, हाथ से काम करके, मुख से भोजन करके, नाक से सांस लेकर आदि आदि और यदि उन अंगों को अलग करलें तो शरीर बेकार और मृतक हो जाता है। ठीक उसी तरह व्याकरण आदि के विना न तो वेदों की पुष्टि ही हो सकती, न मंत्रों के अर्थ ही समझे जा सकते और उनका ठीक ठीक उच्चारणहीं हो सकता है। यदि ये अंग न हों तो वेद बेकार कागज का समूह हो जायगा। इसीलिये व्याकरण, शिक्षा आदि को वेदों का अंग माना है। वेदांग छ हैं—शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, निरुक्त और छन्द। इनमें निरुक्त और छन्द का निरूपण अभी कर चुके हैं और दिखला चुके हैं कि वे किस प्रकार वेदों के पोषक एवं उनके अर्थ समझने में उपयोगी हैं। निरुक्त के रचयिता यास्काचार्य और छन्दः शास्त्र के रचयिता पिंगलाचार्य माने जाते हैं। शिक्षा के आचार्य पाणिनि, याज्ञवल्क्य आदि कई ऋषि हैं। व्याकरण भी पाणिनि के सिवाय शाट्यायन आदि कई महर्षियों के हैं, यद्यपि इस समय प्रचार और प्रसिद्धि पाणिनि के ही व्याकरण की है। कल्प शास्त्र या कल्प सूत्रों के रचयिता भी पारस्कर, गोभिल आदि बहुत से मुनिगण हैं। ज्योतिष के भी आचार्य ब्रह्मा, वसिष्ठ, गर्ग आदि अनेक हैं और आज कल के प्रचलित ज्योतिष ग्रन्थ उन्हीं के ग्रन्थों के आधार पर बने माने जाते हैं।

जैसे वेद के सम्पूर्ण मंत्रों के उच्चारण की विधि छन्द शास्त्र से जानी जाती है, उसी तरह उनके अक्षरों और उनके अनुस्वार, विसर्ग, ह्रस्व, दीर्घ, प्लुत, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि के उच्चारण का ज्ञान विना शिक्षा के हो ही नहीं सकता। जिन अक्षरों से मंत्र बनते हैं उन्हें कब कैसे बोलना चाहिये और कहां विराम करना चाहिये कहां नहीं, इत्यादि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बातों के ज्ञान के लियेही शिक्षायें बनी हैं । शिक्षा के मानी हीं हैं उपदेश । वह ग्रन्थ ऐसे ही उपदेशों से भरे हैं ।

इस प्रकार अक्षरों की शुद्धि के बाद शब्दों (पदों) की शुद्धि का प्रसंग आता है और उन्हीं के बाद मंत्रों का । बस, यही पदों की शुद्धि व्याकरण का काम है । कहां ह्रस्व होगा और कहां दीर्घ; कहां श होगा और कहां ष या स; कहां आत्मनेपद होगा और कहां परस्मैपद, इत्यादि बातें सिवाय व्याकरण के दूसरे से जानी नहीं जा सकतीं। वैदिक कर्मकांड में एक बात प्रायः हुआ करती है जिसे ऊह कहते हैं । बात यह है कि एक विषय का एक मंत्र है और उस में किसी एक देवता का नाम है और उसी मंत्र को दूसरी देवता के कर्म में भी लगाना है । ऐसी दशा में यदि उसमें लिखी देवता को ही पढ़ते हैं तो सारा काम हीं बिगड़ जाता है । क्योंकि उस देवता का उस कर्म में कोई प्रसंग है ही नहीं । इसीलिये उस शब्द को निकाल कर उसकी जगह जो देवता वहां हो उसीका नाम देना पड़ता है । जैसे यदि अग्नि हो तो उसे निकाल कर उसकी जगह सूर्य को या किसी और को पढ़ देंगे । इस प्रकार यदि 'अग्नये' होगा तो उसकी जगह 'सूर्याय' करके शेष मंत्र ज्यों का त्यों पढ़देंगे । इसे ही ऊह कहते हैं । इस का काम है प्रकरण के अनुसार मंत्र वा वाक्य का अर्थ करने में सहायता करना । यह काम व्याकरण जाने विना कैसे होगा ? 'अग्नये' की जगह 'सूर्याय' पढ़ें या 'सूर्यस्य' या और कुछ, यह सिवाय व्याकरण के और कैसे जानें ?

इस प्रकार मंत्रोच्चारण के ठीक होने पर उसके अर्थ के समझने में जिस विनियोग की सहायता का वर्णन प्रथम किया है उसी का विस्तार कल्पसूत्रों में है । कल्प नाम है कर्म करने के प्रकार या विधि का । इसीका सविस्तर वर्णन जिन सूत्र रूपमें लिखे ग्रन्थों में हैं उन्हें ही कल्पसूत्र या कल्पशास्त्र कहते हैं । विभिन्न वेदों की भिन्न भिन्न शाखाओं में कहे गये सम्पूर्ण श्रौत स्मार्त्त कर्मों के लिये अलग अलग ऋषियों द्वारा बनाये गये पृथक् पृथक् कल्पसूत्र हैं । श्रौत कर्मों के श्रौत और स्मार्त्त कर्मों के स्मार्त्त या गृह्यसूत्र कहाते हैं । साधारणतया यजुर्वेदियों के लिये कात्यायन का श्रौत और पारस्कर का गृह्यसूत्र माना जाता है । इसी प्रकार सामवेदियों के लिये गोभिल के ही श्रौत और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गृह्यसूत्र, ऋग्वेदियों के लिये आश्वलायन के और अथर्ववेद वालों के लिये कौशिक के सूत्र हैं और आजकल उन्हीं कल्पसूत्रों के अनुसार अलग अलग वेदों की पद्धतियां बनी हैं। इन कल्प सूत्रों में कर्म की पूरी विधि है और कहां किस मंत्र को लगाना चाहिये यह भी लिखा है। इससे स्पष्ट ही है कि ये कल्पसूत्र वेदों के अर्थ समझने में कितने सहायक हैं।

अब रह गया सिर्फ एक अंग ज्योतिष। साधारण रीति से तो यही माना जाता है कि वैदिक कर्मकांड के करने के समय आदि का निर्णय ज्योतिष शास्त्र करता है। वह बताता है कि कौनसा कर्म किस महीने, किस दिन और किस मुहूर्त्त में करना चाहिये। यह तो नियम है ही कि सूर्य चन्द्र आदि ग्रहों और नक्षत्रों की गति और भिन्न भिन्न स्थानों की स्थिति से ही समय में परिवर्त्तन होता है, ऋतु बदलती है और दिन रात होते हैं और यह समय ही प्रत्येक पदार्थ की पुष्टि एवं परिवर्त्तन का प्रधान कारण है। इसीलिये जैसे समय में कार्य किया जायगा वैसाही फल भी होगा। यदि यज्ञादि उत्तम समय देखकर किये जावंगे तो उनका फल ठीक होगा और उसी फल को देखकर वेद शास्त्र की प्रामाणिकता का भी निश्चय करेंगे और यह भी निश्चय करेंगे कि जो अमुक कर्म अमुक मंत्र से किया गया है ठीक उस मंत्र का वही अर्थ है। इस प्रकार मंत्रार्थ के दृढ़ करने में सहायक प्रमाण उपस्थित करना और उसमें सहायता करना ज्योतिष का काम है। यदि ज्योतिष की सहायता न लेकर और विना शुभाशुभ समय का विचार किये ही कर्म किये जावें तो फिर उनके बार बार निष्फल होने पर वेदों को कौन मानेगा?

इन छ वेदांगों के सिवाय प्रत्येक वेद के एक एक उपवेद भी हैं, जिन्हें वेदों का परिशिष्ट कहना चाहिये और जो वेदों में साधारणतया प्रतीत न होनेवाली आवश्यक बातों की पूर्त्ति करते हैं। ऋग्वेद का उपवेद धनुर्वेद है जिसमें अस्त्र शस्त्र विद्या की शिक्षा है। यजुर्वेद का आयुर्वेद है जिसमें औषधियों और रोगों का विचार है। सामवेद का गान्धर्व वेद है जिसमें गायनकला पर सूक्ष्म से सूक्ष्म विचार है। अथर्ववेद का अर्थवेद या अर्थशास्त्र है जिसे आजकल का अर्थ नीतिशास्त्र भी कह सकते हैं। उसमें धन के अर्जन, उसके उपयोग और प्रबन्ध आदि का वर्णन है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१६—मातृकापूजा, अभ्युदयश्राद्ध ।

सभी शुभ और मांगलिक कर्मों में गणेशपूजा, प्रधान संकल्प एवं पुण्याहवाचन के बाद मातृकापूजा, वसोर्द्धारापूजन और अभ्युदय-श्राद्ध करके ही उन कर्मों का प्रारम्भ करते हैं। मातृकापूजा की बात पहले लिखही चुके हैं। मातृपूजा के बादही उसी के अन्तर्गत वसोर्द्धारापूजा भी है। यह काम मातृपूजा की पुष्पाञ्जलि, प्रदक्षिणा और नमस्कार से पहले और ताम्बूल चढ़ाने के बाद होती है। बात यह है कि मातृकावेदी के निकट पूर्व के खम्भे या दीवार पर, जो ठीक मातृकावेदी से मिली हो, केवल घी या गुड़ और घी मिलाकर सुपारी, फूल या फल से, मंत्र पढ़कर ३, ५ या ७ ऐसी धारायें गिराते हैं जो प्रादेश भर से अधिक लम्बी न हों और जिनका चिन्ह दीवार या खम्भे पर अलग अलग हो। साथही उनका घी मातृकावेदी पर भी कुछ न कुछ गिरे। इसीसे न तो वेदी से नीचेही गिराते हैं और न ज्यादा ऊँचे ही। धारा भी ज्यादा लम्बी नहीं करते हैं। फिर पञ्चोपचार से वसोर्द्धारा की पूजा करके मातृकाओं को पुष्पाञ्जलि आदि समर्पण करते हैं। वसोर्द्धारा बनानेका मंत्र प्रकरण में लिखेंगे। मातृकावेदी से पूर्व या तो छोटी शिला रक्खे या ईंट की छोटी दीवार प्रथम हीं बना रक्खे जिसपर वसोर्द्धारा बनाई जावे।

इसीके बाद वृद्धिश्राद्ध करते हैं। यह श्राद्ध पुत्रादि होने पर या मन्दिर की प्रतिष्ठा में और कूआं, घर आदि के बनवाने पर तथा अन्यान्य मंगल एवं वृद्धि या उन्नति (अभ्युदय) के कामों में किया जाता है। इसीसे यह अभ्युदयश्राद्ध और वृद्धिश्राद्ध कहाता है। मंत्र बोलने के समय जब जब पिता, पितामहादि को कोई वस्तु समर्प्पित करते हैं तब प्रत्येक बार अन्त में 'वृद्धि' शब्द भी बोला जाता है। इस लिये भी वृद्धिश्राद्ध नाम पड़ा है। जिन पितरों का श्राद्ध किया जाता है उनको शास्त्रों में नान्दीमुख कहा है और यहां भी प्रत्येक बार नांदीमुख शब्द का उच्चारण किया जाता है और स्त्रियों के लिये नान्दीमुखी या नान्दीमुखा का। इसी लिये इस का नाम नान्दीमुख श्राद्ध भी है।

वृद्धिश्राद्ध में देवकार्य की ही तरह सम्पूर्ण क्रिया होती है नकि पितृ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कार्य की तरह । इसीलिये न तो मोटक की आवश्यकता होती है न-तिलकी या अपसव्य होने की । सीधे कुशों से काम किया जाता है और तिल की जगह जौ रहता है । यह सपिण्डक और अपिण्डक दो प्रकार का होता है । जिस में पिण्डदान होता है उसे सपिण्डक और जहां नहीं होता उसे अपिण्डक कहते हैं । पिण्ड में विशेषता यह होती है कि पिण्ड के लिये जो पक्वान्न या पदार्थ साधारण पिण्ड दान में होते हैं उन्हीं में दही, बैर और जौ मिला देते हैं और मधु नहीं देते । श्राद्ध के लिये यथासंभव प्रातःकालही ब्राह्मणों को निमंत्रित करते हैं। निमंत्रण करके ये नियम उन्हें सुनाये जाते हैं कि आप लोग दूसरे काम में न फँसे इत्यादि । इसेही श्राद्ध में क्षणदान कहते हैं । उन्हें या तो पूर्वमुख बैठाते हैं या उत्तरमुख । जब वे पूर्वमुख बैठें तो कर्त्ता उत्तर मुख और जब वेही उत्तरमुख हों तो कर्त्ता पूर्वमुख बैठे । पितरों के आवाहन के मंत्रों को तो पढ़ते हैं, मगर भोजन के समय पितृ मंत्रों का जप नहीं होता । पिता आदि के तीन पिंडों के उत्तर माता-महादि के पिंड रक्खे जाते हैं और यदि माता आदि हों तो पहले उनके पिंड और उनके उत्तर पिता आदि के पिंड होते हैं। पिण्डदान में यह भी विवाद है कि माता, पितामही, प्रपितामही; पिता, पितामह, प्रपितामह और मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह इन नौ को पिंड दिये जावें और मातामहादि को जो पिंड हों वह सपत्नीक (पत्नी-सहित) को रहें न कि केवल को। दूसरा मत है कि जैसे मातामहादि सपत्नीक कोही पिंड दिये जाते हैं उसी प्रकार पिता आदि को भी सपत्नीक कोही पिंड दिये जावें नकि माता आदि को अलग । यह बात युक्तियुक्त भी है । कात्यायन और गोभिल के अनुसार यजुर्वेदियों और सामवेदियों को यही मानना भी चाहिये । क्योंकि उन लोगों ने यही लिखा है। यदि पिंड न भी हो तो भी दोनों वर्गों का सपत्नीक काही पूजन आदि करना चाहिये । इस प्रकार ६ ही पिंड और ६ ही पितरों का पूजन होता है । हां, दोनों के लिये विश्वेदेवों का भी एक स्थान पर निमंत्रण और पूजन होता है । इस प्रकार एक ब्राह्मण विश्वेदेव के लिये और दो पिता आदि और मातामहादि के लिये रहें । यदि ब्राह्मण न भी होगा तो भी कुश के तीन ब्राह्मण रहेंगे । पहले विश्वदेवों का ब्राह्मण, फिर पिता आदि का और बाद को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मातामह आदि का, एक से पश्चिम दूसरा और उससे पश्चिम तीसरा या एक से उत्तर दूसरा और उससे उत्तर तीसरा, रहेगा । यदि माता आदि का पृथक रहे तो विश्वेदेव के बाद पहले वही होगा ।

परन्तु प्रायः अपिण्ड श्राद्ध कीही रीति है । जब पिंडदान करना होता है तो पहले ब्राह्मणों को भोजन कराकर शेष अन्न से पिंडदान करते हैं । मगर अपिंड श्राद्ध में तीन रीतियां हैं । एक तो यह है कि केवल विश्वेदेवादि ब्राह्मणों को भोजन कराकर उन्हें दक्षिणा दे देते हैं । यह रीति मिथिला में प्रायः है । दूसरी यह है कि भोजनादि न कराकर भोजन के लिये काफी या उससे चौगुना कच्चा अन्न दान कर संकल्प कर देते हैं और उसे देकर फिर दक्षिणा दान करते हैं । इसे आमश्राद्ध या आमान्नश्राद्ध कहते हैं । यदि यह भी न हो तो भोजन पर्याप्त, उससे चौगुना या जितना होसके सुवर्ण देकर काम खतम करते हैं । इसे हिरण्यश्राद्ध कहते हैं । यह आमश्राद्ध के अन्तर्गत ही है । कच्चा अन्न या सुवर्ण आदि संकल्प करके ब्राह्मणों को देदिये जाते हैं । इसलिये श्राद्ध की इस विधि को सांकल्पिक विधि कहते हैं ।

१७—पुरोहित और पूज्य ।

अब यहां पर प्रश्न उठता है कि तो फिर श्राद्धादि में किसे पूजें, भोजन कराकर दान दक्षिणा दें और पुरोहित आचार्य बनावें ? यद्यपि भूमिका में इस विषय पर प्रकाश डाला गया है, फिर भी यह विषय बहुत विवादयुक्त है और इसीके निर्णय पर धर्म कर्म बहुत कुछ निर्भर है । इसीलिये इस विषय पर प्रमाणयुक्त थोड़ासा भी विचार परम आवश्यक है । यह तो पहले ही कह चुके हैं कि ब्राह्मणों के पुरोहित होते ही न थे । उनका पुरोहित तो अग्नि है, जैसा कि ऋग्वेद के प्रारम्भ में ही लिखा है कि अग्नि रूप पुरोहित की स्तुति करता हूं—'अग्निमीळे पुरोहितम्' । पुरोहित का अर्थ है आगे स्थापित या रक्खा हुआ और हवन काल में अग्नि आगेही स्थापित की जाती है । इसीसे ब्राह्मणों का प्रधान पुरोहित वही है और जो कुछ देना होता था उसी के आहुति दी जाती थी । हरेक ब्राह्मण श्रौत स्मार्त्त अग्नियों की स्था-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पना करके उनमें प्रतिदिन आहुति दिया करते थे । समय पाकर उन अग्नियों का आधान लोप होगया और सभी लोग अग्नि शून्य होने से वास्तविक पुरोहित शून्य होगये । पूर्व समय में ऐसा होता था कि सभी लोग अग्नि का आधान करते थे । इसीलिये व्यास, वसिष्ठ, मनु, याज्ञवल्क्य, कश्यप, पराशर, शाण्डिल्य, गौतम, गर्ग आदि किसी भी ब्राह्मण के घर किसी ब्राह्मण पुरोहित के रक्खे जाने का कहीं भी प्रसंग या वर्णन नहीं आया है । जैसे मुख्य ब्राह्मण या ब्रह्मा के अभाव में उसका प्रतिनिधि कुश का ब्राह्मण या ब्रह्मा बनाया जाता है, ठीक उसी तरह अग्निरूप मुख्य पुरोहित के न रहने पर उसका प्रतिनिधि ब्राह्मण रूप पुरोहित बना लिया गया । पर, यह नियम न था और न होना चाहिये कि जो पुरोहित इस तरह एक बार बना लिया जावे वह और उसके वंशज सदा के लिये पुरोहित बने रहें । जैसे एक बार कुश का ब्राह्मण बनाने पर सदा के लिये वही नहीं रह जाता, किन्तु हर बार दूसरा बनाया जाता है । यही नियम पुरोहित के बारे में था और होना भी चाहिये कि समय पर जिसेही योग्य और विद्वान देखा उसेही बना लिया और काम होजाने पर वह पुरोहित खतम होगया । प्रतिनिधि के लिये तो यह नियम है ही कि सदा के लिये एकही नहीं रह सकता । आज गुरुवाई और पुरोहिती को मौरूसी (पुश्तैनी) बनाने का फल यह हुआ है कि प्रायः सभी के सभी गुरु पुरोहित मूर्खही होते हैं ।

पुरोहित, आचार्य या पूज्य दानपात्र के बारे में एक बात यह भी कही जाती है और इस पर बार बार जोर भी दिया जाता है, विशेषतः मिथिला में, कि वे विगोत्री–भिन्न गोत्र के–ही होने चाहियें, अपनेहीं गोत्रवाले को दान लेने या देने का अधिकार नहीं है । हालां कि, यह सिर्फ कहनाहीं कहना है, इसमें किसी प्रकार का शास्त्रीय प्रमाण नहीं दिया जाता । फिर भी यह भारी रूढ़ि है । अतएव इस का दूर करना नितान्त आवश्यक है । गीता में दान के विषय में लिखा है कि 'देश, काल और पात्र देखकर दान देना चाहिये'–'देशे काले च पात्रे च' (गी० १७।२०) । पात्र किसे कहते हैं इसके बारे में भी लिखते हैं कि " सिर्फ वेद शास्त्र का ज्ञाता या तपस्वी होने से ही कोई भी ब्राह्मण दानपात्र नहीं हो सकता। किन्तु जिसमें इन दो बातों के सिवाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सत्य, अहिंसा, दया, सदाचार आदि शीलगुणों वही दानपात्र है।" (या० आ० २००)–

न विद्यया केवलया तपसा वापि पात्रता ।
यत्रवृत्तमिमे चोभे तद्धि पात्रं प्रकीर्त्तितम् ॥

फिर इसके बाद के श्लोक में लिखते हैं,–"जो जानकार आदमी अपना कल्याण चाहे वह गौ, भूमि, तिल और सोना चांदी आदि पदार्थों को दानपात्र की पूजा करके उसे देवे न कि अपात्र को"—

गोभूतिलहिरण्यादि पात्रे दातव्यमर्चितम् ।
नापात्रे विदुषा किञ्चिदात्मनः श्रेय इच्छता ॥

इनमें न तो गोत्र का विचार है और न प्रवर आदि कि समान गोत्रवाले को दे या भिन्न गोत्रवाले को। यही नहीं, पारस्कर, कात्यायन, गोभिल, द्राह्यायण, आश्वलायन और आपस्तम्ब आदि श्रौत गृह्य सूत्रों और धर्मशास्त्रों या पुराणों में कहीं भी इस बात का विचार नहीं है कि समान गोत्रवाले को दे या भिन्न गोत्रवाले को। सभी यही लिखते हैं कि पात्र को देना चाहिये। बल्कि उन्होंने भरसक अपने भाई, दायाद शिष्य या सम्बन्धी को ही देने को लिखा है। श्राद्ध में ही इस बात पर विशेष जोर दिया जाता है कि अपने कुलगोत्र वाले को पूजना या दक्षिणा आदि न देना चाहिये। पर, मनु और याज्ञवल्क्य स्मृति तथा पूर्वोक्त ग्रन्थों के देखने से स्पष्ट झलकता है कि श्राद्ध के समय निमंत्रण देकर विश्वेदेव या पितरों की जगह जिन ब्राह्मणों की पूजा की जाती है और पहले भोजन कराकर पीछे से पिण्डदान करते और उन्हीं को दक्षिणा आदि देते हैं, वे ब्राह्मण कैसे हों। इसपर बहुत विचार किया है और अन्त में लिखा है कि यदि दूसरे योग्य ब्राह्मण न मिलें तो चाहे योग्य हों या अयोग्य, मूर्ख हों या पढ़े लिखे, फिर भी "अपने नाना, मामा, भांजा (भगिना), ससुर, गुरु, लड़की के लड़के, दामाद, मौसी के लड़के, भाई दायाद और यज्ञ करने कराने वाले को खिलाना चाहिये" (म० ३। १४८)–

मातामहं मातुलं च स्वस्त्रीयं श्वशुरं गुरुम् ।
दौहित्रं विट्पतिं बन्धुमृत्विग्याज्यौ च भोजयेत् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यहां पर 'बन्धु' का अर्थ है भाई दायाद और मौसी के लड़के आदि। मगर कुल्लूकभट्ट ने भ्रमवश सिर्फ मौसी का लड़का अर्थ किया है। क्योंकि याज्ञवल्क्य तो स्पष्ट लिखते हैं (आ० २२०)—

स्वस्त्रीयऋत्विग्यामातृयाज्यश्वशुरमातुलाः।
त्रिणाचिकेतदौहित्रशिष्यसम्बन्धिबान्धवाः॥

इस श्लोक में मनु के कहे भांजा आदि के सिवाय त्रिणाचिकेत, शिष्य, सम्बन्धी और बान्धव ये चार और आये हैं। इनमें त्रिणाचिकेत का अर्थ है यजुर्वेद के त्रिणाचिकेत नामक एक प्रकरण का ज्ञाता और शिष्य का अर्थ प्रसिद्ध ही है। सम्बन्धी का अर्थ है मौसी, फूआ आदि के लड़के और भाई, चचा, भतीजा, दादा वगैरः तथा बान्धव का अर्थ है सहभोजी, दायाद वगैरः। फिर यह कहने का क्या अवसर आया कि समान गोत्र को न पूजें और दान न देवें? काका, दादा, भाई और दायाद शिष्य वगैरः क्या समान गोत्र के नहीं होते? इतनाहीं नहीं, संवर्त्त स्मृति में लिखा है कि "ब्राह्मण लोग तो आपस में ही एक दूसरे को अन्नदान करते, आपसमें हीं एक दूसरे को पूजते, आपसमें ही एक दूसरे का दान प्रतिगृह लेते और आपस में ही एक दूसरे को तारते और दूसरे वर्णों को भी तारकर स्वयं तर जाते हैं" (संवर्त्त ८९)—

अन्योन्यान्नप्रदा विप्रा अन्योन्यप्रतिपूजकाः।
अन्योन्यं प्रतिगृह्णन्ति तारयन्ति तरन्ति च॥

अत्रिसंहिता में लिखा है कि "पुत्र, भाई आदि अपने हीं आदमियों को दान देना चाहिये और यदि दूसरे ब्राह्मणको देवे तो देख ले कि वह ठग और धूर्त्त तो नहीं है। इस तरह का दान यदि किसी कामना से करेगा तो स्वर्ग में जायगा और यदि निष्काम होकर करेगा तो मोक्ष प्राप्त करेगा" (अत्रि० ३३८)—

पुत्रादिस्वजने दद्याद्विप्राय च न कैतवे।
सकामः स्वर्गमाप्नोति निष्कामो मोक्षमाप्नुयात्॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्यासस्मृति में लिखा है " माता, पिता, भाई, ससुर, स्त्री और लड़कों को जो कुछ दान देते हैं उससे अक्षय स्वर्ग मिलता है। पिता को दिया दान सौगुना, माता को दिया हजार गुना, बहिन को दिया दस हजार गुना और सगे भाई को दिया अक्षय होता है। पिता को अमावस्या, माता को तिथिक्षय, बहिन को संक्रान्ति और सगे भाई को व्यतीपात के समान समझना चाहिये " (४ । ३०-३२ ;-

मातापितृषु यद्दद्याद् भ्रातृषु श्वशुरेषु च ।
जायापत्येषु यद्दद्यात्सोऽनन्तः स्वर्गसंक्रमः ॥
पितुः शतगुणं दानं सहस्रं मातुरुच्यते ।
भगिन्यां शतसाहस्रं सोदरे दत्तमक्षयम् ॥
इन्दुक्षयः पिता ज्ञेयो माता चैव दिनक्षयः ।
संक्रान्तिर्भगिनी चैव व्यतीपातः सहोदरः ॥

संवर्त्त ने हीं (२१०, २११) अमावास्या, व्यतीपात, तिथिक्षय और संक्रान्ति के दान का फल अक्षय लिखा है और पिता आदि को अमावास्या आदि माना है। इससे स्पष्ट है कि उनको दिया भी अक्षय होता है-उसका कभी नाश ही नहीं होता। संवर्त्त का वचन यह है-

अयने विषुवे चैव व्यतीपाते दिनक्षये ।
चन्द्रसूर्यग्रहे चैव दत्तं भवति चाक्षयम् ॥
आमावास्यां च द्वादश्यां संक्रान्तौ च विशेषतः ।

धर्मारण्यमाहात्म्य में लिखा है कि " ब्राह्मणों का तो यह नियम है कि आपस में ही जिसमें विद्या और तप अधिक हो उसीको पूजना चाहिये "—

अन्योन्यपूजकास्ते स्युस्तपोविद्याविशेषतः ॥

इतने से यह स्पष्ट हो गया कि विभिन्न गोत्री कोही दान देने पूजने या आचार्य पुरोहित बनाने की बात केवल भ्रान्त धारणा और ठगने के लिये ही है। गोत्र प्रवर का विचार तो केवल कन्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दान में किया जाता है न कि और दानों में भी। यही परिपाटी भी है। क्या विद्यादान में गोत्र का विचार किया जाता है कि अपने गोत्रवाले को न पढ़ाया जावे ? क्या गया आदि तीर्थों के पण्डों और विश्वनाथ, रामेश्वर आदि मन्दिरों के पुजारियों का गोत्र पूछ कर उन्हें सैकड़ों या लाखों रुपये प्रतिदिन दिये जाते हैं ? प्रायः भूमिहार, पश्चिमा, त्यागी, जमींदार, जगन्वंशी, गौड़, कान्यकुब्जादि सभी ब्राह्मणों में देखाजाता है कि एक भाई के वंशज पुरोहित हैं और दूसरे के यजमान। फिर यह निर्मूल और अशास्त्रीय दुराग्रह कैसा ? इसलिये भरसक अपने हीं कुल, गोत्र, भाई बन्धु और समाज के गुरु, पुरोहित और आचार्य बनाने चाहियें। जोही पढ़ालिखा और विचारवान हो वही पूजनीय हो सकता है, चाहे अवस्था और दर्जे में वह छोटा ही क्यों न हो। क्यों कि मनु ने कहा है कि ब्राह्मणों में बड़ा वही होता है जिसमें विद्या, तप और सदाचार हो, अवस्था की बड़ाई शूद्रों के लिये है—

न हायनैर्न पलितैर्न वित्तेन न बन्धुभिः।
ऋषयश्चक्रिरे धर्मं योऽनूचानः स नो महान् ॥

" अवस्था अधिक होने, चमड़ा लटकने या सिकुड़ने और अधिक धन या परिवार होने से ब्राह्मणों में कोई बड़ा नहीं माना जाता। किन्तु ऋषियों ने यही धर्म मान रक्खा था कि ब्राह्मणों में जो ही अनूचान यानी विद्या, तप और सदाचार से युक्त हो वही बड़ा है " (मनु० २ । १५४)। इसलिये जिससे जो अधिक पढ़ा लिखा होगा वही उससे बड़ा होगा और वही उसका पूज्य होगा। यह दूसरी बात है कि पूजा के बाद फिर दण्डप्रणाम या नमस्कार आशीर्वाद आदि अवस्था देखकर ही किये जावें। यदि पुरोहित अवस्था और नाते में छोटा हो तो यजमान को प्रणाम या नमस्कार करे और यदि यजमान छोटा हो तो पुरोहित को करे। इसी प्रकार पुरोहित के भाई बन्धु और यजमान के भाई बन्धु में भी यही बर्त्ताव होना चाहिये। फिर वह पुरोहित चाहे अपने कुल, गोत्र, समाज का हो या दूसरे कुल, गोत्र, समाज का और जो ऐसा न करे वह कदापि पुरोहित बनाने योग्य नहीं है। बहुत जगहों में अभी तक पुरोहितों के साथ नमस्कार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रणाम की यह परिपाटी सभी ब्राह्मणों में पाई जाती है। मगर जहां नहीं है वहां भी इसी का प्रचार होना चाहिये। यह दावा तो गलत है कि जब दान देने के समय पुरोहित की पूजा की और प्रणाम किया तो पीछे छोटा होने पर भी वह कैसे प्रणाम करेगा ? क्योंकि कन्यादान के समय दामाद की और एकादशाह के दिन महापात्र की पूजा करने और उसे प्रणाम करने पर भी पीछे दामाद ही ससुर को प्रणाम करता है। उस पूजा से दामाद या महापात्र सदा के लिये बड़े नहीं माने जाते। दान के समय पूजा करके देना यह हिन्दुओं का सदा का नियम है, न कि उतने हीं मात्र से कोई सदा के लिये बड़ा होने का दावा कर सकता है। यहां तो वाममार्गियों की वही भैरवीचक्रवाली दशा है। जैसे वह कहते हैं कि भैरवीचक्र में जाने पर सभी वर्ण एकसे हो जाते हैं और उससे बाहर आने पर फिर ज्यों के त्यों हो जाते हैं--

प्रविष्टे भैरवीचक्रे सर्वे वर्णा द्विजातयः ॥
निवृत्ते भैरवीचक्रे सर्वे वर्णाः पृथक् पृथक् ॥

उसी तरह दान के समय छोटे या बड़े सभी पूजनीय हो जाते हैं। मगर उसके बाद फिर ज्यों के त्यों हो जाते हैं।

१८—उपसंहार ।

इस प्रकार इस परिभाषा प्रकरण द्वारा साधारणतया कर्मकांड की मोटी मोटी बातों पर प्रकाश डालने का यत्न किया गया है और यह इतना आवश्यक है कि इसके विना एक कदम भी आगे बढ़ना असंभव है। अतएव जो लोग आगे के प्रकरणों से यथार्थ लाभ उठा कर साधारण कर्मकांडी बनना चाहते हैं उनके लिये यह नितान्त आवश्यक है कि सब से पहले इस परिभाषा प्रकरण का अच्छी तरह अभ्यास करलें। नहीं तो आगे चलकर बड़ी बड़ी कठिनाइयों का सामना करना होगा जिनसे घबड़ाकर समूचा काम छोड़ बैठने का डर है। यह प्रकरण एक प्रकार से समूचे ग्रन्थ की कुंजी है।

इसके बाद अगले प्रकरण में सभी कर्मों में किये जाने वाले मण्डप-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूजन, वास्तुशान्ति, गणेशपूजा, प्रधानसंकल्प, स्वस्ति और पुण्याहवाचन, मातृपूजा, नांदीश्राद्ध और ग्रहपूजा रूप साधारण कर्मों के करने की विधि (प्रयोग) लिखी है। फिर उसके आगे के प्रकरणों में जातकर्म आदि मुख्य मुख्य संस्कारों को और अन्त में मृतक कर्म, पितृकर्म और लग्न मुहूर्त्तादि लिखकर इसे पूरा किया है। हमारा विचार है कि सामवेद और यजुर्वेद के कर्मों में जहां बहुत अन्तर हो वहां दोनों की प्रयोगविधि अलग अलग लिखें। पर, जहां दोनों मिलजावें वहां एकही रक्खें।

(२)

साधारण कर्म ।

१–मंडपपूजा ।

सभी श्रौत स्मार्त्त कर्मों में मण्डप बनाने की विधि और रीति है। जहां विधिवत् मण्डप, जैसा परिभाषाप्रकरण में लिखा है, नहीं भी बनाते वहां भी किसी प्रकार की साधारण छाया मण्डप के स्थान में अवश्य की जाती है और की जानी चाहिये। अत्यंत छोटे छोटे कर्मों को घर में कर सकते हैं। मगर बड़े बड़े कर्मों को खुले मैदान में या घर के भीतर बैठ कर करना ठीक नहीं है। इसलिये सभी कर्मों में काम आने के लिये मण्डपपूजा की विधि लिखना जरूरी है। क्योंकि सबसे पहले वही करके फिर दूसरा काम करते हैं। मण्डप पूजा और वास्तुशान्ति की विधि सामवेदियों और यजुर्वेदियों की एकसी ही है। वह यों है:—

परिभाषाप्रकरण के १६ वें पृष्ठ में कहे गये गणेश, भूमि, कूर्म और अनन्त के पूजन पूर्वक ८ से १६ पृष्ठों में लिखी विधि के अनुसार मण्डप वा कूट बना लेने पर जात कर्म, विवाह, देवप्रतिष्ठा आदि प्रधान कर्म के पूर्व दिन अथवा उसी दिन प्रातःकाल स्नान, प्राणायाम और सन्ध्योपासनादि नित्यकर्म कर चुकने के उपरान्त सबसे पहले कर्म करने और कराने के लिये आचार्य का वरण करे। आजकल तो इस आचार्य के वरण की इसलिये और भी आवश्यकता है कि यजमान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायः मूर्ख हैं । मण्डप के समीप उत्तर या पूर्व दिशा में वेद, शास्त्र तथा कर्मकांड के पूर्ण ज्ञाता किसी कुलीन ब्राह्मण को किसी कुश आदि के आसन पर उत्तरमुख बैठाकर और यजमान स्वयं पूर्वमुख बैठकर उसका पूजनादि करे । उसकी विधि यह है कि पहले यजमान स्वयं हाथ में कुश, तिल, जौ और जल लेकर संकल्प करे-ॐ तत्सत् अद्य अमुकमासस्य अमुकपक्षीयामुकतिथौ अमुकवासरे अमुककर्मार्थनिर्मितमण्डपदेवतास्थापनपूजनादिसमस्त कर्म कर्त्तुं कारयितुं च आचार्यवरणममुकशर्म्माऽहं करिष्ये। मास से पहले अमुक शब्द की जगह उस महीने का नाम पढ़े । इसी प्रकार यहां और आगे भी पक्ष तिथि आदि के पहलेवाले अमुक शब्द की जगह पक्ष तिथि आदि के नाम का उच्चारण करना चाहिये । फिर आसन रख कर उस ब्राह्मण से यजमान कहे कि-अस्मिन् आसने आस्यताम् इस पर आचार्य होनेवाला वह ब्राह्मण यह कह कर कि—आस्ये उस आसन पर उत्तरमुख बैठ जावे । अनन्तर लोटा या किसी बर्तन में जल लेकर यजमान उस आचार्य का पांव धोवे और यह मंत्र पढ़ता रहे—ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ १ ॥ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च । जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ॥ २ ॥ फिर किसी ताम्बे के बर्त्तन या पलाश आदि पत्तों के दोने में चन्दन, पुष्प, अक्षत, तिल आदि को रखकर और उसमें जल डालकर आचार्य के हाथ में उस अर्घ्यपात्र को जल सहित देता हुआ मंत्र पढ़े कि—

ॐ भूमिदेवाग्रजन्मासि त्वं विप्र पुरुषोत्तम ।
प्रत्यक्षो यज्ञपुरुषो ह्यर्घोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥

तब आचार्य उस जल अक्षतादि में से कुछ हाथ में लेकर अपने सिर पर रख कर शेष को बाईं ओर गिरादेवे । बाद को यजमान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचार्य के हाथ में-ॐ आचार्यायनमः आचमनीयं समर्पयामि-कहकर जल देवे और आचार्य उसे पीकर हाथ धो डाले। फिर यजमान-गन्धं समर्पयामि-कहकर आचार्य के पांव पर चन्दन,-पुष्पं समर्पयामि-कहकर फूल,-धूपं समर्पयामि- कहकर धूप,-दीपं समर्पयामि-कहकर दीप और-नैवेद्यं समर्पयामि कहकर किसी पत्ते में नैवेद्य चढ़ावे। फिर-नैवेद्यान्ते आचमनीयं समर्पयामि-कहकर आचमन के लिये जल डाले। आचमन, गन्ध आदि के चढ़ाने में सर्वत्र-ओं आचार्याय नमः-यह नाम मन्त्र बोलता जावे। इस प्रकार पञ्चोपचार पूजा करने के बाद आचार्य के ललाट में तिलक करके अपनी हथेली में अक्षत लेकर तिलक पर चिपका देवे। अथवा तिलक पहले न करके हथेली परही चन्दन और अक्षत लेकर आचार्य के ललाट में चिपकावे और उसी के साथ मंत्र पढ़ता रहे कि-ॐ युञ्जन्तिब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचनादिवि ॥ १ ॥ युञ्जन्त्यस्यकाम्या हरी विपक्षसा रथे। शोणा धृष्णू नृवाहसा ॥ २ ॥ इसके बाद दोनों हाथों में माला, धोती, गमछा, दो यज्ञोपवीत और कमण्डलु आदि लेकर-ओं अद्य अमुककर्मणि तत्सम्बन्धिमण्डपदेवतास्थापनपूजनादि समस्तकर्म कर्त्तुं कारयितुं च एभिर्गन्धाक्षतपुष्पमाल्ययज्ञोपवीतकमण्डलुवस्त्रादिभिः अमुकगोत्रममुकशर्म्माणममुकवेदाध्यायिनं त्वामाचार्यत्वेनाहं वृणे-पढ़े और आचार्य के हाथ में उन चीजों को दे देवे। फिर आचार्य-वृतोऽस्मि-कहकर,-ॐ व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्। दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते-यह मंत्र पढ़ता हुआ कुशों से यजमान के सिर पर जल छिड़के। अनन्तर यजमान हाथ जोड़कर आचार्य की प्रार्थना करे कि--

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यथा शक्रस्य वागीश आचार्यः सर्वकर्मसु ।
तथा मया त्वमाचार्यो वृतोऽस्मिन्यज्ञकर्मणि ॥ १ ॥
आचार्यस्तु यथा स्वर्गे शक्रादीनां बृहस्पतिः ।
तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्नाचार्यो भव सुव्रत ॥ २ ॥

फिर यजमान जल से भरा घड़ा हाथ में लेकर और आचार्यादि के सहित मंगल सूचक शब्द और बाजा गाजा पूर्वक—

ॐ भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः-

मंत्र पढ़कर मण्डप की प्रदक्षिणा करता हुआ मण्डप के पश्चिम द्वार से उसके भीतर प्रवेश करे और पश्चिम ओर पूर्वमुख अपने आसन पर बैठकर एक बड़ा दीया घी या तिलके तेल अथवा दोनों के न रहने पर सरसों के तेल से भरकर जलवावे । यह कर्मापवर्ग दीप कहाता है और कर्म की समाप्ति पर्यन्त जलता रहता है । बीच में इसे बुझने न देना चाहिये । फिर आचमन करके गणेश, विष्णु, शिवादि का स्मरण करे और ५४,५५ पृष्ठों में कही गई रीति के अनुसार चन्दन, अक्षत, पुष्प, जौ और कुश आदि किसी लोटे वगैरः के शुद्ध जल में डालकर कर्मपात्र या अर्घ की स्थापना करे । पहले भूमि पर कुश या दूब रखकर उसके ऊपर पात्र रक्खे और पात्र में —ओं पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ—मंत्र से कुश डाल—ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः—से जल भरे; ओं यवोऽसि यवयास्मद् द्वेषो यवयारातीः— पढ़कर जल और चन्दन, पुष्प अक्षतादि तूष्णीं डालकर उसे तैयार करे । यही जल समय समय पर सभी कामों में आता है । उस पात्र के जल में चन्दन आदि डालने के बाद गायत्री को और यदि हो सके तो कूष्माण्ड मंत्रों को भी पढ़कर उस जल को कुश से चलाता रहे । वे मंत्र ये हैं —

ॐ यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमा वयम् ।
अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हंसः ॥१॥
यदि दिवा यदिनक्तमेना ँ सि चकृमा वयम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हंसः ॥२॥
यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एना ँ सि चकृमा वयम् ।
सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥३॥

बाद को हाथ में पीली सरसों और अक्षत लेकर भूत आदि के हटाने के लिये मण्डप में चारों ओर छींटे और यह मंत्र पढ़ेः—

ॐ अपक्रामन्तु भूतानि पिशाचाःसर्वतो दिशः ।
सर्वेषामविरोधेन ब्रह्मकर्म समारभे ॥ १ ॥
अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः ।
ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया ॥ २ ॥

मन्त्र पढ़ने के बाद तीन बार ताली बजावे । फिर हाथ के कते सूत को तीन बार मण्डप के चारों ओर लपेटता हुआ ये मंत्र पढ़े—

ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ १ ॥ ओं गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनांत्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् ॥ २ ॥ ओं जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेदः । सनः पर्षदति दुर्गाणि विश्वानावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः ॥ ३ ॥ ओं सप्त ऋषयः प्रतिहिताः शरीरे सप्त रक्षन्ति सदमप्रमादम् । सप्तापः स्वपतो लोकमीयुस्तत्र जागृतोऽअस्वप्नजौ सत्रसदौचदेवौ ॥ ४ ॥ ओं न तद्रक्षा ँ सि न पिशाचास्तरन्ति देवानामोजः प्रथमज ँ ह्येतत् । यो बिभर्त्ति दाक्षायण ँ हिरण्य ँ स देवेषु कृणुते दीर्घमायुः स मनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥ ५ ॥ यदाबध्नन्दाक्षायणा हिरण्य ँ शतानीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म आबध्नामि शतशारदायायुष्मान् जरदष्टिर्य-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

थासम् ॥ ६ ॥ रक्षोहणं वलगहनं वैष्णवीमिदमहं तं वल-
गमुत्किरामि यं मे निष्ट्यो यममात्यो निचखानेदमहं तं
वलगमुत्किरामि यं मे समानो यमसमानो निचखानेदम-
हं तं वलगमुत्किरामि यं मे सबन्धुर्यमसबन्धुर्निचखानेदमहं
तं वलगमुत्किरामि यं मे सजातो यमसजातो निचखा-
नोत्कृत्यां किरामि ॥ ७ ॥ स्वराडसि सपत्नहा सत्रराड-
स्यभिमातिहा । जनराडसि रक्षोहा सर्वराडस्यमित्रहा
॥ ८ ॥ रक्षोहणो वो वलगहनः प्रोक्षामि वैष्णवान् रक्षो-
हणो वो वलगहनोऽवनयामि वैष्णवान् रक्षोहणो वो वल-
गहनोऽवस्तृणामि वैष्णवान् रक्षोहणौ वां वलगहना
उपदधामि वैष्णवी रक्षोहणौ वां वलगहनौ पर्यूहामि
वैष्णवी वैष्णवमसि वैष्णवाः स्थ ॥ ९ ॥ मानः श ँ सो
अररुषो धूर्त्तिः प्रणङ् मर्त्यस्य । रक्षाणो ब्रह्मणस्पते ॥१०॥
प्रत्युष्ट ँ रक्षःप्रत्युष्टा अरातयो निष्टप्त ँ रक्षो निष्टप्ता
अरातयः । उर्वन्तरिक्षमन्वेमि ॥ ११ ॥ रक्षोहा विश्वच-
र्षणिरभियोनिमयोहते । द्रोणे सधस्थमासदत् ॥ १२॥

इसके बाद ४५, ४६ पृष्ठमें बताई रीति के अनुसार पंचगव्य बनावे। साधारण रीति से तांबे के पात्र या दोने में थोड़ा गौ का गोबर—ॐ तत्स-वितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्-पढ़कर रक्खे । फिर उसी में—ॐ गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपु-ष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्-पढ़कर गोबर का दूना गोमूत्र डाले । ॐआप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवा वाजस्य संगथे—पढ़कर गोमूत्र का चौगुना गौ का दूध ले । ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जि-ष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभि नो मुखाकरत्प्रणआयू ँ षि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तारिषत्—पढ़कर दूध के बराबर ही गौ का दही;—ॐ तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि। प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमास—पढ़कर दूध का आधा गोघृत;—ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्—पढ़कर गोमूत्र के बराबर ही कुश का (जिसमें कुश डाला हो वह) जल डाले। अनन्तर "ॐ" पढ़कर हाथ से सभी को मिलाने के बाद "ॐ" कहकर ही किसी पलाशादि यज्ञिय लकड़ी से खूब चलावे और हाथ से ढंककर "ॐ" पढ़े। यही अभिमंत्रण कहाता है। फिर—ॐ आपो हिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन। महेरणायचक्षसे॥ १॥ यो वः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः। उशतीरिव मातरः॥ २॥ तस्मा अरं गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ। आपो जनयथा च नः॥ ३॥ पढ़कर उस पञ्चगव्य को मण्डप में चारो कुश से छिड़के। देवप्रतिष्ठा के समय मूर्त्तिको इसी पञ्चगव्य से स्नान कराते हैं और यजमान की पवित्रता तथा प्रायश्चित्त के लिये उसे पिलाते भी हैं। पीने के समय यजमान यह मंत्र पढ़े—

ॐ यत्त्वगस्थिगतं पापं देहे तिष्ठति मामके।
प्राशनात्पञ्चगव्यस्य दहत्यग्निरिवेन्धनम्॥

यदि पीने वाला दूसरा और मंत्र पढ़नेवाला दूसरा आदमी हो तो और सब तो ज्योंका त्यों पढ़े, केवल 'मामके' की जगह 'तावके' पढ़े। फिर जो कर्मापवर्गदीप नामक बड़ा दीप जलाया था उसे प्रधान वेदी से पूर्व पूर्वमुख रखकर—ॐ भो दीप त्वं ब्रह्मरूप अन्धकारनिवारक। इमां मया कृतां पूजां गृह्णन् तेजः प्रवर्धय—से प्रार्थना करके—ॐ दीपाय नमः गन्धं समर्पयामि—इत्यादि पञ्चोपचार पूजा करे। इसके अनन्तर कुश तिलादि लेकर मण्डपपूजा का संकल्प करे—ॐ अद्य यथोक्तविशेषणयुक्तायां तिथौ करिष्यमाणामुक (विवाहादि) कर्मसम्बन्धितया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मण्डपदेवतास्थापनपूजनादि करिष्ये । फिर मण्डप के सोलह खम्भों में सोलह देवताओं का आवाहन पूजनादि करने में सब से पहले बीचकी प्रधान वेदी के चारों तरफ के खम्भों की पूजा करके पीछे किनारेवालों की करना चाहिये । पूजन अग्निकोन से आरम्भ होता है और दक्षिणावर्त्त चलता है । अतः पहले वेदीके अग्निकोन के खम्भे में-ॐ वसुदायै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः वसुदामावाहयामि-मंत्र पढ़कर आवाहन करे और—ॐ वसुदायै नमः गन्धं समर्पयामि । ॐ वसुदायैनमः पुष्पं समर्पयामि । ॐ वसुदायै नमः धूपं समर्पयामि । ॐ वसुदायै नमः दीपं समर्पयामि । ॐ वसुदायै नमः नैवेद्यं समर्पयामि । नैवेद्यान्ते ॐ वसुदायै नमः आचमनीयं समर्पयामि-पढ़कर पञ्चोपचार से पूजन करे । आवाहन मंत्र में जो 'नमः' पर्यन्त भाग है वही नाम मंत्र है । उसी को सर्वत्र बोलकर गन्धादि चढ़ाना चाहिये । इसेही मूलमंत्र भी कहते हैं । आगे भी ऐसाही जानना चाहिये । फिर वेदी के नैर्ऋत्यस्तम्भमें-ॐ भद्रायै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः भद्रामावाहयामि—पढ़कर आवाहन और-ॐ भद्रायै नमः गन्धं समर्पयामि-आदि कहकर पूर्ववत् पूजन करे । इसी तरह वेदी के वायव्य स्तम्भ में-ॐ अदित्यै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः अदितिमावाहयामि-पढ़कर और ईशानस्तम्भ में-ॐ नन्दायै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दामावाहयामि-पढ़कर क्रमसे आवाहन पूजनादि करे । पहले वायव्यका पूजन करके फिर ईशान का करे । फिर मण्डप के किनारेवाले स्तम्भों में भी अग्निकोन से ही शुरूकर आवाहन पूजन दक्षिणावर्त्त क्रमसे (दाहिने क्रमसे) करता जावे । अग्निकोन में—ॐ भूत्यै नमः ॐ ॐभूर्भुवः स्वः भूतिमावाहयामि । फिर दक्षिण ओर के पहले स्तम्भ में—ॐ सरस्वत्यै नमः ॐ भूर्भुवः स्वः सरस्वती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मावाहयामि । दक्षिण के दूसरे में--ओं पूर्वसन्ध्यायै नमः ओं भूर्भुवः स्वः पूर्वसन्ध्यामावाहयामि । नैर्ऋत्य में-ओं मध्यसन्ध्यायै नमः ओं भूर्भुवः स्वः मध्यसन्ध्यामावाहयामि । पश्चिम के प्रथम में--ओं पश्चिमसन्ध्यायै नमः ओं भूर्भुवः स्वः पश्चिमसन्ध्यामावाहयामि । दूसरे में-ओं गायत्र्यै नमः ओं भूर्भुवः स्वः गायत्रीमावाहयामि वायव्य में-ओं सावित्र्यै नमः ओं भूर्भुवः स्वः सावित्रीमावाहयामि । उत्तर के प्रथम में-ओं बृहस्पतये नमः ओं भूर्भुवः स्वः बृहस्पतिमावाहयामि । दूसरे में-ओं अदित्यैनमः ओं भूर्भुवः स्वः अदितिमावाहयामि । ईशान में-ओं विततायै नमः ओं भूर्भुवः स्वः विततामावाहयामि । कहीं कहीं--ओं उन्नतायै नमः ओं भूर्भुवः स्वः उन्नतामावाहयामि-ऐसा भी सामवेदियों के यहां है । पूर्वके पहले में-ओं पौर्णमास्यैनमः ओं भूर्भुवः स्वः पौर्णमासीमावाहयामि । सामवेदियां के यहां कहीं कहीं-ओं विनतायैनमः ओं भूर्भुवः स्वः विनतामावाहयामि-ऐसा भी है । पूर्व के दूसरे में-ओं सिनीवाल्यैनमः ओं भूर्भुवः स्वः सिनीवालीमावाहयामि । पढ़कर क्रम से आवाहन और पूर्वोक्त रीतिसेही पंचोपचार पूजन करता जावे । एक का आवाहन पूजनादि करके फिर दूसरे का करे । इस तरह सोलहों की पूजा के बाद-ओं नागमात्रे नमः-मंत्रसे १६ हों के पास पत्ते में रखकर दही और अक्षत या उड़द और भात की बलि देवे ।

फिर पश्चिम के द्वार से बाहर निकलकर मण्डप के पूर्व आवे और पूर्व के तोरण को दहिने हाथ से स्पर्श कर मंत्र पढ़े-ओं अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देव हूतमम् । होतारं रत्नधातमम्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद-ओं सुदृढतोरणाय नमः ओं भूर्भुवः स्वः सुदृढतोरणमावाहयामि-मंत्र से आवाहन करके-ओं सुदृढतोरणाय नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से पूर्ववत् पञ्चोपचार पूजा करे। फिर तोरण के दोनों स्तम्भों में एक पर-ओं राहवेनमः ओं भूर्भुवः स्वः राहुमावाहयामि—से राहुका और दूसरे पर ओं बृहस्पतये नमःओं भूर्भुवः स्वःबृहस्पतिमावाहयामि-से बृहस्पति का आवाहन कर क्रम से दोनों का पूर्ववत् पूजन करे। अनन्तर तोरण के बीच में सप्तधान्य अथवा जौ या धान वगैरः के ऊपर कलश रखकर उसमें जल, सुपारी, दूब, कुश, पान और पंच पल्लव आदि डालकर और उसको ऊपर से सूत से लपेटकर उसमें-ओं ध्रुवायनमः ओं भूर्भुवः स्वः ध्रुवमावाहयामि-से ध्रुव का आवाहन कर के पूर्ववत् उनकी पूजा करे। फिर त्रिशूल के तीनों नोकों पर या शंखपर क्रम से एक दूसरे से दक्षिण-ओं इन्द्राय नमः ओं भूर्भुवःस्वः इन्द्रमावाहयामि। ओं धात्रे नमः ओं भूर्भुवः स्वः धातारमावाहयामि। ओं भगायनमः ओं भूर्भुवः स्वः भगमावाहयाम-पढ़कर इन्द्र, धाता, भगका आवाहनकर उनकी पूर्ववत् पूजा करे। इस तरह पूर्व के तोरण की पूजा के बाद पूर्व द्वार की पूजा करे। द्वार के उत्तर दक्षिण खम्भों में क्रम से-ओं ध्रुवाय नमः ओं भूर्भुवः स्वः ध्रुवमावाहयामि। ओं अध्वराय नमः ओंभूर्भुवः स्वः अध्वरमावाहयामि-मंत्रों से ध्रुव और अध्वर का आवाहन कर उनका पूजन करें। फिर उन दोनों के पास ही सप्त धान्य या जौ आदि के ऊपर पूर्ववत् जल, कुश आदि युक्त दो कलशों की स्थापना करके दोनों में-ॐ ऐरावताय नमः ओंभूर्भुवः स्वः ऐरावतमावाहयामि-इस मंत्र से एकही साथ ऐरावत का आवाहन कर पूजा करे। फिर द्वार के बीच में कलश रख उसमें ओं इन्द्रायनमः ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्रमावाहयामि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से इन्द्र का आवाहन कर के उनका पूजन करे और-ॐ इन्द्रायाहि चित्रभानो सुता इमे त्वायवः । अण्वीभिस्तना पूतासः- मंत्र से द्वार के उत्तर और दक्षिण खड़ी ध्वजा तथा पताका स्पर्श करे। इसके बाद-ॐ इन्द्रः सुरपतिः श्रेष्ठो वज्रहस्तो महाबलः। शतयज्ञाधिपो देवस्तस्मै नित्यं नमोनमः-पढ़कर इन्द्रको प्रणाम करे और-ॐ सांगाय सपरिवाराय इन्द्राय एष बलिर्नमः- पढ़कर उड़द, भात, दही, अक्षत या घी भात की बलि देवे। फिर— ॐ अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवहूतमम्। होतारं रत्नधातमम्-मंत्र पढ़कर ऋग्वेद का उसी मध्य कलश में ध्यान करे और-ओंऋग्वेदायनमः ओंभूर्भुवःस्वः ऋग्वेदमावाहयामि- मंत्र से उसका आवाहन कर पूजन करे । इसके बाद यदि द्वारपाल और जापक ब्राह्मणों का भी वरण करना हो तो जैसे आचार्य का वरण किया था उसी प्रकार करे। यदि दो दो हों तो मण्डप के भीतर द्वार के दोनों ओर एक एक और यदि एक एकही हों तो एक का इधर और एक का उधर और यदि एक ही हो तो किसी तरफ द्वार के पास आसन रखकर-अस्मिन्नासने आस्यताम्-पढ़कर बैठावे और ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय०-इत्यादि से पांव धोकर पञ्चोपचार पूजनादि आचार्य कीही तरह करे। यहां पूजन में नाम मंत्र-ॐ जापकायनमः। ॐ द्वारपालायनमः-होगा। फिर हाथ में वस्त्रादि लेकर-ओं अद्यकरिष्यामाणामुककर्मणि ऋग्वेदीयसूक्तशान्तिपाठाय भवन्तं (यदि एक हो), भवंतौ (यदि दोहों, वा) भवतः (यदि बहुत हों) द्वारपालजापकत्वेन वृणे--पढ़कर उन्हें दे देवे। यदि अनेक हों तब भी सभी वस्त्रादि का संकल्प एक ही साथ करके पृथक् पृथक् दे देवे। फिर वे अलग अलग उत्तर देव-वृतोऽस्मि। तब उन के माथे पर-ॐ युञ्जन्ति ब्रध्न० पढ़कर चन्दन अक्षत लगावे और वे लोग अलग अलग-ॐव्रतेनदीक्षामाप्नोति०-पढ़कर यजमान के सिर पर कुश से जल छिड़के। फिर उन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से यजमान अलग अगल प्रार्थना करे कि-ओं ऋग्वेदः पद्मपत्राक्षो गायत्रः सोमदैवतः । अत्रिगोत्रस्तु विप्रेन्द्र शान्तिपाठं मखे कुरु ।

इसके बाद अग्नि कोन के खम्भे के पास जाकर पूर्ववत् सप्तधान्य या जौ आदि के ऊपर जल आदि से पूर्ण कलश की स्थापना करके उसमें- ॐ पुण्डरीकाय नमः ॐ भूर्भुवः स्वः पुण्डरीकमावाहयामि । ॐ अमृताय नमः ॐ भूर्भुवः स्वः अमृतमावाहयामि-मंत्रोंसे पुण्डरीक और अमृत का क्रम से आवाहन कर उसी क्रमसे पूजा करे । फिर उसी कलश में अग्नि का ध्यान करके ॐ अग्नये नमः ॐ भूर्भुवः स्वः अग्निमावाहयामि-मंत्र से अग्नि का आवाहन कर पूजन करे और-ओं अग्निं दूतं पुरोदधेहव्यवाहमुपब्रुवे । देवा ँ २॥ आसादयादिह-पढ़कर अग्निकोन वाली पताका एवं ध्वजा का क्रम से स्पर्शकरे और -ओं आग्नेयः पुरुषो रक्तः सर्वदेवमयोऽव्ययः । धूमकेतुरजोऽध्यक्षस्तस्मै नित्यं नमो नमः-पढ़कर प्रणाम करके-ॐ अग्नये सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः-मंत्र से उड़द भात, घी भात या दही अक्षत की बलि देवे ।

फिर मण्डप के दक्षिण द्वार को ओर जाकर पहले तोरण को दहिने हाथ से स्पर्श कर मंत्र पढ़े-ॐ इषे त्वोर्जेत्वा वायव स्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्रायभागं प्रजावतरिनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघश ँ सो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि । अनन्तर-ॐ सुभद्रतोरणाय नमः ॐ भूर्भुवः स्वः सुभद्रतोरणमावाहयामि-से आवाहन कर ॐ सुभद्रतोरणाय नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से पूजा करे। और तोरण के दोनों स्तम्भों पर क्रमसे-ॐ सूर्याय नमः ॐ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूर्भुवः स्वः सूर्यमावाहयामि। ॐ मंगलाय नमः भूर्भुवः स्वः मंगलमावाहयामि–मंत्रों से सूर्य और मंगल का आवाहन कर पूजन करे। फिर तोरण के बीच में सप्तधान्य पर पूर्ववत् एक कलश रखकर उसमें–ॐ धरायै नमः ॐ भूर्भुवः धरामावाहयामि– मंत्र से पृथ्वी का आवाहन कर पूजन करे। तब ऊपर बने त्रिशूल की तीनों नोकों या चक्र पर क्रम से–ॐ पूष्णे नमः भूर्भुवः स्वः पूषणमावाह यामि। ॐ मित्रायनम भूर्भुवः स्वः मित्रमावाहयामि; ॐ वरुणाय नमः भूर्भुवः स्वः वरुणमावाहयामि–इन तीन मन्त्रों से पूषा, मित्र और वरुण का आवाहन कर उन्हें पूजे। फिर दक्षिण द्वार के दोनों स्तम्भों को स्पर्श कर उनमें क्रम से–ॐ सोमाय नमः भूर्भुवः स्वः सोममावायामि। ॐ आपाय (अद्भ्यो) नमः भूर्भुवः स्वः आपं- (अपः) आवाहयामि—इन दो मंत्रों से सोम तथा जल (आप) का आवाहन कर पूजा करे। तब उन्हीं खम्भों के पास जलादि पूर्ण दो कलश रख कर उनमें पारी पारी से वामन दिग्गज का–ॐ वामनायनमः भूर्भुवः स्वः वामनमावाहयामि–मंत्र से आवाहन पूजन करे। जहां जहां कलश स्थापन हो वहां वहां पूर्ववत् सप्तधान्य या जौ आदि के ऊपर ही और कुश, पल्लव, जलादि से भरकर ही। तथा जहां जहां पूजा का विशेष मन्त्र न हो वहां ॐ पूर्वक देवता के नामके आगे चतुर्थीविभक्ति लगाकर उसके आगे 'नमः' जोड़ दे, जैसे, ॐ सोमायनमः इत्यादि। इसे मूलमन्त्र या नाममंत्र कहते हैं। फिर द्वार के बीच में कलश रख उसमें–ओं यमायनमः भूर्भुवः स्वः यममावाहयामि–से यम का आवाहन कर पूजा करे। तब–ॐ यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः। यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः–पढ़कर क्रम से वहां की पताका और ध्वजा को स्पर्श करदे। और–ॐ दंडहस्तः कृष्णवर्णो धर्मा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ध्यक्षो महाबलः। प्रजाधिपतये तुभ्यं यमराजाय ते नमः-पढ़कर यम को प्रणाम करे। फिर-ओं यमाय सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः-मन्त्र से उड़द भात आदि की बलि देवे। तब फिर उसी-ॐ इषे त्वोर्जे त्वा०- मन्त्र को पढ़कर यजुर्वेद का ध्यान करे और उसी मध्य कलश में-ओं यजुर्वेदाय नमः भूर्भुवः स्वः यजुर्वेदमावाहयामि-से यजुर्वेद का आवाहन कर पूजन करे। इसके बाद यदि द्वारपाल, जापक हों तो पूर्ववालों की तरह उनका वरण कर उन से प्रार्थना करे-ॐ कातराक्षो यजुर्वेदस्त्रैष्टुभो विष्णुदैवतः। काश्यपेयस्तु विप्रेन्द्र शांतिपाठं मम कुरु। वरण के अन्त में जो संकल्प होगा वही जरा भिन्न होगा उसमें और सब तो ज्यों का त्यों होगा; केवल 'ऋग्वेदीय' की जगह 'यजुर्वेदीय' शब्द पढ़ना होगा।

तब मण्डप के नैर्ऋत्य कोन में जाकर कलश स्थापित कर उसमें ॐ कुमुदाय नमः भूर्भुवः स्वः कुमुदमावाहयामि। ॐ दुर्जयाय नमः भूर्भुवः स्वः दुर्जयमावाहयामि- मन्त्रों से कुमुद और दुर्जय का क्रम से पूर्ववत् आवाहन पूजन करे। फिर उसी कलश में निर्ऋति का ध्यान कर-ॐ निर्ऋतयेनमः भूर्भुवः स्वः निर्ऋतिमावाहयामि-मंत्र से निर्ऋति का आवाहन कर पूजा करे। और ॐ मो षूण इन्द्रात्र पृत्सु देवैरस्ति हिष्माते शुष्मिन्नवयाः महश्चिद्यस्य मीढुषो यव्या हविष्मतो मरुतो वन्दते गीः मन्त्र से वहां की पताका और ध्वजा को स्पर्श कर-ॐ सर्वरक्षोधिपो देवो निर्ऋतिर्नीलविग्रहः। महाखड्गधरो देवस्तस्मै नित्यं नमो नमः-से प्रणाम करे और-ॐ निर्ऋतये सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः-मन्त्र से बलि देवे।

फिर पश्चिम ओर जाकर पहिले तोरण को स्पर्श कर मंत्र पढ़े ॐ अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये। निहांत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सत्सि बर्हिषि। फिर- ॐ सुभीम (सुकर्म) तोरणाय नमः भूर्भुवः स्वः सुभीम (सुकर्म) तोरणमावाहयामि- मन्त्र से पूर्ववत् आवाहन पूजन करे । तब तोरण के स्तम्भों में क्रम से ॐ शुक्राय नमः भूर्भुवः स्वः शुक्रमावाहयामि। ॐ बुधाय नमः भूर्भुवः स्वः बुधमावाहयामि-इन दो मन्त्रों से शुक्र बुध का आवाहन कर पूजा करे और तोरण के बीच में कलशस्थापन करके उसमें-ॐ बृहस्पतयेनमः भूर्भुवः स्वः बृहस्पतिमावाहयामि-पढ़कर बृहस्पति का आवाहन करे और फिर पूजा करे । अनन्तर तोरण पर बने त्रिशूल की तीनों नोकों या गदा पर क्रम से ॐ अर्यम्णे नमः भूर्भुवः स्वः अर्यमणमावाहयामि । ॐ अंशवे नमः भूर्भुवः स्वः अंशुमावाहयामि। ॐ विवस्वते नमः भूर्भुवः स्वः विवस्वन्तमावाहयामि-इन तीन मन्त्रों से अर्यमा, अंशु, विवस्वान् का आवाहन कर क्रम से पूजा करे। फिर पश्चिम द्वार के दोनों स्तम्भों को स्पर्श कर उनमें क्रम से- ॐ अनिलाय नमः भूर्भुवः स्वः अनिलमावाहयामि । ॐ अनलाय नमः भूर्भुवः स्वः अनलमावाहयामि- इन दो मन्त्रों से अनिल और अनल का आवाहन कर पूजन करे और उन्हीं के पास दो कलश रखकर उनमें-ॐ अंजनाय नमः भूर्भुवः स्वः अंजनमावाहयामि-मन्त्र से अंजन दिग्गज का आवाहन पूजन पूर्ववत् करे । फिर द्वार के बीचमें कलश रख उसमें- ओं वरुणाय नमः भूर्भुवः स्वः वरुणमावाहयामि-से वरुण का आवाहन और पूजन करके-ओं इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके-मंत्र से पताका, ध्वजा को स्पर्श करे। तब-ॐ पाशहस्तं च वरुणमर्णसांपतिमीश्वरम्। आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन् वरुणाय नमोनमः-पढ़कर प्रणाम करके-ओं वरुणाय सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंत्र से बलि देवे । अनन्तर मध्य कलश में—ओं अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सिबर्हिषि- मंत्र पढ़कर सामवेद का ध्यान करे और—ओं सामवेदाय नमः भूर्भुवः स्वः सामवेदमावाहयामि—पढ़कर सामवेद का आवाहन करके पूजन करे । फिर यदि द्वारपाल, जापक होवें तो पूर्ववत् उनका वरण कर उनकी प्रार्थना अलग अलग करने के समय मंत्र पढ़े- ओं सामवेदस्तु पिंगाक्षो जागतः शाक्रदैवतः । भारद्वाजस्तु विप्रेन्द्र शान्तिपाठं मखे कुरु । यहां वरण के संकल्प में 'ऋग्वेदीय' की जगह 'सामवेदीय' पढ़ाजायगा, और शेष सब काम ज्यों का त्यों होगा ।

अनन्तर वायव्य कोन में जाकर कलश स्थापित कर उसमें-ओं पुष्पदन्ताय नमः भूर्भुवः स्वः पुष्पदन्तमावाहयामि । ओं सिद्धार्थाय नमः भूर्भुवः स्वः सिद्धार्थमावाहयामि—इन मन्त्रों से क्रमशः पुष्पदन्त और सिद्धार्थ का आवाहन कर पूजन करे । फिर उसमें ॐ वायवे नमः भूर्भुवः स्वः वायुमावाहयामि—मंत्र से वायु का आवाहन और पूजन करे और—ओं वातो वा मनो वा गन्धर्वा सप्तविंशतिः । तेअग्रेऽश्वमयुजँस्त अस्मिञ्जवमादधुः मंत्र से पताका, ध्वजा को स्पर्श करे । पुनः ॐ अनाकारो महाजाश्च यश्चादृष्टगतिर्दिवि । तस्मै पूज्याय जगतो वायवे प्रणमाम्यहम्—से प्रणाम कर—ओं वायवे सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः—मंत्र से बलि देवे ।

मण्डप के उत्तर के तोरण को—ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः—मन्त्र से स्पर्श करे ओं सुहोत्र (सुप्रभ, शुभ) तोरणाय नमः भूर्भुवः स्वः सुहोत्र (सुप्रभ, शुभ) तोरणमावाहयामि—मन्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection, Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से आवाहन पूजन पूर्ववत् करे । अनन्तर तोरण के दोनों स्तम्भों में और ऊपर क्रम से ॐ सोमाय नमः भूर्भुवः सोममावाहयामि । ॐ केतवे नमः भूर्भुवः स्वः केतुमावाहयामि । ओं शनैश्चराय नमः भूर्भुवः स्वः शनैश्चरमावाहयामि–मंत्रों से सोम, केतु और शनि का आवाहन कर पूजन करे और तोरण के मध्य में कलश स्थापित कर उसमें–ओं गणेशाय नमः भूर्भुवः स्वः गणेशमावाहयामि–से गणेश को आवाहन करके पूजन करे । फिर तोरण पर बने त्रिशूल की तीनों नोकों या पद्म पर क्रम से–ओं त्वष्ट्रे नमः भूर्भुवः स्वः त्वष्टारमावाहयामि । ओं सवित्रे नमः भूर्भुवः स्वः सवितारमावाहयामि । ओं विष्णवे नमः भूर्भुवः विष्णुमावाहयामि–इन मंत्रों से त्वष्टा, सविता और विष्णु का आवाहन कर पूजन करे । तब उत्तर द्वार के दोनों स्तम्भों को स्पर्श कर उनमें क्रम से ओं प्रत्यूषाय नमः भूर्भुवः स्वः प्रत्यूषमावाहयामि । ओं प्रभासाय नमः भूर्भुवः स्वः प्रभासमावाहयामि । इन दो मंत्रों से प्रत्यूष और प्रभास का आवाहन कर उसी तरह पूजा करे और उन्हीं के पास दो कलश रख उनमें–ओं सार्वभौमाय नमः भूर्भुवः स्वः सार्वभौममावाहयामि । मत्र से सार्वभौम का आवाहन पूजन करे । फिर द्वार के बीच में कलश रख–ओं सोमाय नमः (किसी के मत से) कुबेराय नमः भूर्भुवः स्वः सोम (कुबेर) मावाहयामि–मंत्र से सोम या कुबेर का आवाहन कर पूजा करे और ओं आप्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवा वाजस्य संगथे–मंत्र से पताका और ध्वजा को स्पर्श करे । फिर–ओं सर्वनक्षत्रमध्ये तु सोमो राजा व्यवस्थितः । तस्मै सोमाय देवाय नक्षत्रपतये नमः–पढ़कर नमस्कार करके–ओं सोमाय (कुबेराय) सांगाय स-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परिवाराय एष बलिर्नमः—मंत्र से बलि देवे । कहीं कहीं यहां पर कंगनी के भात की या कंगनी कीही बलि देने को लिखा है । अनन्तर उसी मध्य कलश में—ओं शन्नो देवीरभि०—इत्यादि पूर्वोक्त मंत्र पढ़कर अथर्ववेद का ध्यान करे और—ओं अथर्ववेदाय नमः भूर्भुवः स्वः अथर्ववेदमावाहयामि—मंत्र से अथर्ववेद का आवाहन कर पूजन करे । तब, यदि द्वारपाल और जापक हों तो, पूर्ववत् उनका वरण कर उनसे प्रार्थना करे—ॐ बृहन्नेत्रोऽथर्ववेदोऽनुष्टुभो रुद्रदैवतः । वैशम्पायन विप्रेन्द्र शान्तिपाठं मंग्वे कुरु । यहां पर संकल्प में 'ऋग्वेदीय' की जगह 'अथर्ववेदीय' शब्द रहेगा और बाकी ज्यों का त्यों होगा ।

मण्डप के ईशानकोन में कलश स्थापित कर उसमें—ॐ सुप्रतीकाय नमः भूर्भुवः स्वः सुप्रतीकमावाहयामि । ओं मंगलायनमः भूर्भुवः स्वः मंगलमावाहयामि । इन दो मंत्रों से सुप्रतीक और मंगल का आवाहन कर विधिवत् पूजन करे। फिर उसी में—ओं ईशानाय नमः भूर्भुवः स्वः ईशानमावाहयामि—मंत्र से ईशान का आवाहन पूजन कर—ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथावेदसामसद्वृधे रक्षिता वायुरदब्धः स्वस्तये—इस मंत्र से ईशानकोन की पताका और ध्वजा का स्पर्श करे । पुनः ॐ सर्वाधिपो महादेव ईशानः शुक्ल ईश्वरः । शूलपाणिर्विरूपाक्षस्तस्मै नित्यं नमोनमः—पढ़कर नमस्कार करके ओं ईशानाय मांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः—मंत्र से बलि देवे । कहीं कहीं यह बलि जंगली गेहूँ की लिखी है ।

ईशान और पूर्व के बीच में गड़ी हुई पताका और ध्वजा के पास एक कलश स्थापित कर उसमें—ओं ब्रह्मणे नमः भूर्भुवः स्वः ब्रह्माणमावाहयामि—मंत्र से ब्रह्मा की आवाहन पूर्वक पूजा कर—ओं ब्रह्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः । स बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः । इस मंत्र से उस पताका, ध्वजा को छूवे और–ओं पद्मयोनिश्चतुर्मूर्त्तिर्वेदावासः पितामहः । यज्ञाध्यक्षश्चतुर्वक्त्रस्तस्मै नित्यं नमोनमः–मंत्र से प्रणाम कर–ओं ब्रह्मणे सांगाय सपरिवाराय एषबलिर्नमः– पढ़कर बलि देवे । कोई कहते हैं कि यह बलि खीर की होती है ।

फिर पश्चिम और नैर्ऋत्य के बीच की पताका, ध्वजा के पास एक कलश स्थापन कर उसमें–ओं अनन्तायनमः भूर्भुवःस्वः अनन्तमावाहयामि—इस मंत्र से अनन्त की पूजा कर—ओं नमोऽस्तु सर्पेभ्योयेके च पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः–इस मंत्र से पताका, ध्वजा को छूवे और–ओं योऽसावनन्तरूपेण ब्रह्माण्डं सचराचरम् । पुष्पवद्धारयेन्मूर्ध्नि तस्मै नित्यं नमो नमः—इसे पढ़कर अनन्त को प्रणाम करके–ओं अनन्ताय सांगाय सपरिवाराय एष बलिर्नमः–यह मंत्र पढ़ने के साथ बलि देकर आचमन करे । इसके बाद–ओं इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां मरुताᳬशर्ध उग्रम् । महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात्–यह मंत्र पढ़कर मण्डप की चोटी पर लगी महाध्वजा को हाथ,कुश या जलादि फेंककर स्पर्श करे और उसमें–ओं ब्रह्मणेनमः भूर्भुवः स्वः ब्रह्माणमावाहयामि–इसे पढ़कर ब्रह्माका आवाहन करके पूजन करे ।

अनन्तर मण्डप में पूर्व की ओर एक स्थान पर–ओं गणेशाय नमः भूर्भुवः स्वःगणपतिमावाहयामि–इस मंत्रसे गणेशका आवाहन पूजन कर मण्डप से बाहर दसों दिशाओं में–ओं रुद्रेभ्यो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नमः भूर्भुवः स्वः रुद्रानावाहयामि–इस मंत्र से रुद्रों की पूजा करे और–ओं रुद्रेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्य एष बलिर्नमः–मंत्र से उन्हें बलि देकरके मण्डप के स्तम्भों में–ओं सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः सर्वान्देवानावाहयामि—इस मंत्र से, उसके बांसों में–ओं किन्नरेभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः किन्नरानावाहयामि–इससे और मण्डपकी छतपर ओं पन्नगेभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः पन्नगानावाहयामि। इस मंत्र से क्रम से आवाहन करके और आवाहन क्रम सेही पूजा करके मण्डप के ईशान कोन में थोड़ी सी भूमि लीपकर हाथ जोड़ करके प्रार्थना करे कि–ओं त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च । ब्रह्मविष्णुशिवैः सार्द्धं रक्षां कुर्वन्तु तानि मे ॥१॥ देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः । ऋषयो मनवो गावो देवमातर एवच ॥ २॥ सर्वे ममाध्वरे रक्षां प्रकुर्वन्तु मुदान्विताः । ब्रह्मा विष्णुश्च रुद्रश्च क्षेत्रपालगणैः सह। रक्षन्तु मण्डपं सर्वे घ्नन्तु रक्षांसि सर्वतः॥३॥फिर एकही साथ –ओं त्रैलोक्यस्थस्थावरचरभूतब्रह्मविष्णुशिवदेव दानवगन्धर्वयक्षराक्षसपन्नगऋषिमनुष्यगोदेवमातृभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः एतान्सर्वानावाहयामि–यह पढ़कर सभी का आवाहन करके पूजन करे और पूजा के बाद–ओं एष बलिर्वोनमः–से एक ही साथ सब को बलि देकर आचमन कर डाले । इति मण्डपपूजा ।

२–वास्तुपूजा ।

मण्डपपूजा के बाद वास्तुशान्ति या वास्तुपूजा करे जो मंडपपूजा का अंगही माना जाता है। पर, गृहप्रवेश आदि के समय में भी वास्तुपूजा की जाती है । यद्यपि सविस्तर वास्तुपूजा में पूजा, होम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और बलि की जाती है । तथापि यहां संक्षेप से सिर्फ पूजाही लिखते हैं । इतने से भी काम चल जाता है, अस्तु । पूर्वद्वार से मण्डप में प्रवेश कर मण्डप के नैर्ऋत्य कोन में बनी वास्तु वेदी के पूर्व कुश के आसन पर बैठकर प्राणायाम करके यजमान जल तिल कुशादि लेकर संकल्प करे—

ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभ तिथौ वास्तुसम्भ्रातसकलदोषापनुत्तयेऽमुककर्मार्थकृतमण्डपपूजांगतया वास्तुपदनिर्माणतत्पूजाद्यहं करिष्ये । फिर वास्तुवेदी में चारों ओर २४ अंगुल में से ४—४ अंगुल छोड़कर बीचकी चौकोनी जगह के चारों कोने पर हलदी या अन्य रंग का चिन्ह दे देवे । स्मरण रहे कि उस वेदी पर वेदी जितना लम्बा चौड़ा खद्दर का टुकड़ा बिछाकर उसी पर ४-४ अंगुल छोड़दे और बीच के कोने पर निशान कर देवे । फिर सोने या चांदी का पतला तार या हाथ कते सूत का जरा मजबूत धागा लेकर और केसर या हलदी में डुबोकर अग्नि और ईशान तथा नैर्ऋत्य और वायु कोन के चिन्हों के बीच की जगह के नौ भाग करके करीब पौने दो दो अंगुल पर निशान बनाकर पहली रेखा अग्नि से नैर्ऋत्यकोन तक खींचकर उसके उत्तर के नौ निशानों से नौ रेखायें और खींचे । फिर नैर्ऋत्य कोन से अग्नि कोन के निशान तक की जगह को नौ हिस्सों में बांटकर पौने दो दो अंगुल पर एक एक निशान बनावे । इसी तरह वायु से ईशान कोन के निशान तक की जगह के भी ९ हिस्से करके चिन्ह बना दे । तब नैर्ऋत्य से वायुकोन तक पतली रेखा खींचकर उसके पूर्व दूसरे चिन्ह से दूसरी और तीसरे से तीसरी इत्यादि रीति से कुल दस रेखायें खींचे इस तरह बीच की चौकोनी जगह में ८१ छोटे छोटे घर या खाने होगये। फिर वेदी के किनारे किनारे चारों ओर एक रेखा खींचकर बीच वाली १०-१० रेखाओं में से प्रत्येक किनारे वाली पहली और दसवीं रेखा को दोनों ओर बढ़ाकर वेदी के किनारे वाली रेखाओं में चारों ओर मिलादेवे। इस तरह बीचके ८१ घरों के बाहर चारों दिशाओं में एक एक और चारों कोनों में एक एक घर होगये । फिर बाहर वाले चारों दिशाओं के चारों घरों को चार चार हिस्सों में बांटकर १६ अंगुल लम्बे १ अंगुल चौड़े सोलह घर करदे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और कोन के चारों घरों में से हरेक के दो दो घर कोनाकोनी इस तरह करे कि भीतर के ८१ घरवाले मण्डल केही कोनसे बाहरी कोन तक एकएक रेखा खींच दे । इसतरह उन आठोंको मिलाकर सम्पूर्णवेदीपर कुल १०५ घर बनगये । भीतरके ८१ घरों कोही ८१पद कहते हैं और समूचे घरोंको मिलाकर मण्डल कहते हैं । इस तरह इसका नाम एकाशीति-पद वास्तुमण्डल है । एकाशीति नाम है इक्यासी का । सर्वत्र वास्तुपूजा में यही बनाया जाता है ।

फिर पहले उन ८१ घरों में से सबके मध्य में जो नौ घर हैं उन्हें पीले चूर्ण या चावल से भरे । इन कुल नौ घरों का एकपद ब्रह्मा का स्थान और वास्तुभूमि कहाती है । फिर इसके चारों ओर मिलाकर जो १६ घर हैं उनमें ३-३ दिशाओं में और १-१ कोने में हैं । उनमें ईशानकोन वाले को सफेद से और शेष अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु कोन वाले तीन को लाल से भर दे । फिर पूर्व के तीन को काले, दक्षिण के तीन को सफेद, पश्चिम के तीन को सफेद और उत्तर के तीन को लालसे भरे । इन सोलह के बाहर चारों ओर दो दो पंक्तियां और हैं और उन दोनों को मिलाकर प्रत्येक कोन में ४-४ घर और दिशाओं में १०-१० घर शेष हैं । इनमें से ईशान कोन के चार में से जो बाहरी कोन (ईशान) में है उसे लाल, उससे दक्षिणवाले को पीले, पीले से पश्चिमवाले को सफेद और सफेद से उत्तरवाले को पीले से भर दे । इसी तरह अग्नि कोन के ४ में से बाहरी कोन (अग्नि) वाले को नीले, उससे पश्चिम को लाल, लाल से उत्तर को सफेद, सफेद से पूर्व को काले से भरे । नैर्ऋत्य के चार में से बाहरी नैर्ऋत्य को लाल, उससे उत्तर को भी लाल, उससे पूर्व को श्वेत और उससे दक्षिण को पीले से भरे । वायुकोन के चार में से बाहरी वायु वाले को लाल, उससे पूर्व को भी लाल, उससे दक्षिण को भी लाल, और उससे पश्चिम को पीले से भर देवे । अब शेष रहे बीच के १०-१० जो दो पंक्तियों में मिल कर हैं । पूर्व की दो पंक्तियों के १० में जो सबसे उत्तर दो हैं उन्हें पीले, उनके बाद के दो पीले, उनके बाद के भी दो पीले, उनके बाद के दो श्वेत और उनके बाद के दो काले से भरे । दोनों पंक्ति के आमने सामने के एक एक घर एक एक रंग के हैं और उन दो दो के एक एक पद होते हैं । यही बात शेष दसों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में भी है। दक्षिण के दस में सबसे पूर्व के दो श्वेत, उनके बाद के दो पीले, उनके बाद के दो काले, उनके बाद के दो लाल और उनके बाद के दो काले हैं। पश्चिम के १० में सबसे दक्षिण के दो श्वेत, उनके बाद दो लाल, उनके बाद दो श्वेत, फिर दो पीले, फिर दो काले। इसी तरह उत्तर के १० में सबसे पश्चिम के दो लाल, फिर दो काले, फिर दो श्वेत, फिर दो काले, फिर दो पीले। इस तरह बाहरी कोनों के चार चार और उनके बीच के पाँच पाँच, कुल ३६ और इनके भीतर के चार कोने के चार और उनके बीच के ३-३ घरों के एक एक तथा मध्य के ९ घरों का एक। इस तरह कुल ४५ पद हो गये। ग्रन्थ के अन्त की चित्र संख्या में देख लेना चाहिये। फिर इन ८१ के बाहर पूर्व में जो चार हैं उन सबों को लाल से, दक्षिण के चारों को काले से, पश्चिम के चारों को लाल से और उत्तर के चारों को पीले से भरे। ईशान के दोनों नीले, अग्नि के दोनों लाल, निर्ऋति के पीले और वायु के नीले से भरे। इस तरह पूर्ण मंडल तैयार होता है। इसके बाहर केवल पूर्व और ईशान के बीच में ब्रह्मा की और पश्चिम नैर्ऋत्य के बीच में अनन्त की पूजा की जाती है।

पूजा के समय पहले जलपात्र या लोटे के गन्ध अक्षतादि युक्त जल को-ओं अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा। यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं सबाह्यान्तरः शुचिः-मंत्र से अपने ऊपर, वास्तुवेदी पर और पूजा सामग्री पर छिड़के। तब पश्चिम से पूर्व खींची गई दस रेखाओं में पहले सबसे दक्षिण वाली में, फिर क्रमशः उत्तर उत्तर वालियों में, दस देवताओं का इस तरह आवाहन कर नाममंत्रों से पञ्चोपचार पूजन करेः—(१) ओं शान्तायै नमः भूर्भुवः स्वः शान्तामावाहयामि। (२) ओं यशोवत्यै नमः भूर्भुवः स्वः यशोवतीमावाहयामि। ३) ओं कान्तायै नमः भूर्भुवः स्वः कान्तामावाहयामि। (४) ओं विशालायै (विमलायै) नमः भूर्भुवः स्वः विशाला (विमला) मावाहयामि। (५) ओं प्राणवाहिन्यै नमः भूर्भुवः स्वः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्राणवाहिनीमावाहयामि। (६) ओं सत्यैनमः भूर्भुवः स्वः सतीमावाहयामि । (७) ओं सुमनायै (सुमत्यै) नमः भूर्भुवः स्वः सुमना (सुमति) मावाहयामि । (८) ओं नन्दायै नमः भूर्भुवः स्वः नन्दामावाहयामि । (९) ओं सुभद्रायै नमः भूर्भुवः स्वः सुभद्रामावाहयामि । (१०) ओं सुरथायै (सुमुखायै) नमः भूर्भुवः स्वः सुरथा (सुमुखा) मावाहयामि । कोष्ठ में जो तीन देवताओं को लिखा है कहीं कहीं वही मिलते हैं। इसलिये चाहे उनके नामसे करे या कोष्ठ के बाहर वालों के नाम से। इन दस आवाहनमंत्रों में जो 'नमः' पर्यन्त भाग हैं वही नाममंत्र हैं। उन्हीं से पूजा की जाती है। आगे भी जहां जहां ऐसा हो समझ लेना चाहिये। फिर दक्षिण से उत्तर तक खींची दश रेखाओं में भी सबसे पश्चिम वाली से आरम्भ कर दस देवताओं का आवाहन नीचे लिखे मंत्रों से करके नाममंत्र से पूर्ववत् पूजा करेः—(१) ओं हिरण्यायै नमः भूर्भुवः स्वः हिरण्यामावाहयामि । (२) ओं सुव्रतायैनमः भूर्भुवः स्वः सुव्रतामावाहयामि । (३) ओं लक्ष्म्यै नमः भूर्भुवः स्वः लक्ष्मीमावाहयामि । (४) ओं विभूत्यै नमः भूर्भुवः स्वः विभूतिमावाहयामि । (५) ओं विमलायै नमः भूर्भुवः स्वः विमलामावाहयामि । (६) ओं प्रियायै नमः भूर्भुवः स्वः प्रियामावाहयामि । (७) ओं जयायै नमः भूर्भुवः स्वः जयामावाहयामि (८) कलायै (ज्वालायै) नमः भूर्भुवः स्वः कला (ज्वाला) मावाहयामि (९) ॐ विशोकायै नमः भूर्भुवः स्वः विशोकामावाहयामि । (१०) ओं इडायै (विशदायै) नमः भूर्भुवः स्वः इडा (विशदा) मावाहयामि । यहां भी तीन देवताओं में भेद है जो कोष्ठ में लिखना पड़ा है। यहां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दस दस का अलग अलग आवाहन पूजनादि या तो काण्डानुसमय (पृ० ५८) के अनुसार करना या पदार्थानुसमय के अनुसार पहले दसोंका आवाहन, फिर दसों को गन्धादि चढ़ाना इत्यादि रीति से करना चाहिये। कर्त्ता की इच्छा पर है। आगे भी सर्वत्र यही बात है। पूजा भी या तो षोडशोपचार (पृ० ४३) करे या पञ्चोपचार, जैसा अवकाश हो। हमने संक्षेप के लिये पञ्चोपचार ही लिखा है। यदि षोडशोपचार करना हो तो प्रत्येक देवता के नाममंत्र के बाद आसन, पाद्यादि को द्वितीयान्त आसनं, पाद्यं, आदि बोलकर उसके आगे 'समर्पयामि' सर्वत्र बोलता जावे। जैसे आसनं समर्पयामि, पाद्यं समर्पयामि, गन्धं समर्पयामि, अक्षतं समर्पयामि इत्यादि। जैसा कि प्रथम कह चुके हैं, वास्तुमंडल के ८१ घरों के ४५ पद हैं जो ४५ देवताओं के हैं। यदि संभव हो तो उन उन देवताओं की सुवर्ण आदि की मूर्तियों को भी अपने अपने घरों (पदों) में स्थापित करके पूजा करना चाहिये; नहीं तो सुपारी, फल या अक्षतादि रखकर उसीमें। पूजा का आरम्भ कहां से करना चाहिये इसमें दो रीतियां हैं। या तो मध्य के ब्रह्मा के पद से ही शुरू करके फिर क्रमशः ऊपर आना चाहिये, या सबसे बाहर ईशान कोन के शिखी देवता से आरम्भ कर क्रमशः जाते जाते अन्त में ब्रह्मा से पास पहुंचना चाहिये। पूजा भी केवल ४५ पदों में ४५ देवताओं की ही होती है नकि ८१ घरों में अलग। हम यहां पर ऊपर से ही शिखी से आरम्भ करके लिखते हैं। पूजा के समय चित्र संख्या देखकर करना चाहिये।

(१) सबसे आखिरी ईशान कोन के १ घरवाले पहले लालपद में

ओं शिखिने नमः भूर्भुवः स्वः शिखिनमावाहयामि।

पढ़कर शिखी का आवाहन कर नाममंत्र से पूजन करे। आगे भी ऐसा ही करे। (२) शिखी से दक्षिण एक घरवाले पीले में-

ओं पर्जन्याय नमः भूर्भुवः स्वः पर्जन्यमावाहयामि। (३) उसके दक्षिण दो पीले घर वाले तीसरे में-**ओं जयन्ताय नमः भूर्भुवः स्वः जयन्तमावाहयामि।** (४) ऐसे ही दो दो घर वाले आगे चार हैं। चौथे पीले में-**ओं इन्द्राय नमः भूर्भुवः स्वः**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन्द्रमावाहयामि । (५) पांचवें पीले में–ओं सूर्याय नमः भूर्भुवः स्वः सूर्यमावाहयामि। (६) छठे श्वेत में–ओं सत्याय नमः भूर्भुवः स्वः सत्यमावाहयामि ।(७) सातवें काले में ओं भृशाय नमः भूर्भुवः स्वः भृशमावाहयामि । (८) आठवें एक घर वाले काले में ओं आकाशाय नमः भूर्भुवः स्वः आकाशमावाहयामि । (९) नवें वायुकोन के एक घर वाले नीले में–ओं वायवे नमः भूर्भुवः स्वः वायुमावाहयामि । (१०) इससे पश्चिम एक घरके लाल में–ओं पूष्णे नमः भूर्भुवः स्वः पूषणमावाहयामि । (११) इसके बाद क्रमशः पश्चिम पांच पद दो दो घर के हैं। ग्यारहवें दो घर के श्वेत में–ओं वितथाय नमः भूर्भुवः स्वः वितथमावाहयामि । (१२) फिर पीले में–ओं गृहक्षताय नमः भूर्भुवः स्वः गृहक्षतमावाहयामि । (१३) काले में–ओं यमाय नमः भूर्भुवः स्वः यममावाहयामि । (१४) लाल में–ओं गन्धर्वाय नमः भूर्भुवः स्वः गन्धर्वमावाहयामि । १५) काले में–ओं भृंगराजाय नमः भूर्भुवः स्वः भृंगराजमावाहयामि । (१६) फिर क्रमशः पश्चिम एक एक घर के दो हैं । सोलहवें पीले में–ओं मृगाय नमः भूर्भुवः स्वः मृगमावाहयामि । (१७) नैर्ऋत्य कोन के लाल में–ओं पितृगणेभ्यो नमः भूर्भुवःस्वः पितृगणानावाहयामि । (१८) उससे उत्तर एक घरवाले लाल में–ओं दौवारिकाय नमः भूर्भुवः स्वः दौवारिकमावाहयामि । (१९) इसके बाद क्रमशः उत्तर दो दो घर के पांच हैं । पहले श्वेत में–ओं सुग्रीवाय नमः भूर्भुवः स्वः सुग्रीवमावाहयामि । (२०) लाल में–ओं पुष्पदन्ताय नमः भूर्भुवः स्वः पुष्पदन्तमावाहयामि । (२१) श्वेत में–ओं वरुणाय नमः भूर्भुवः स्वः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वरुणमावाहयामि । (२२) पीले में–ओं असुराय नमः भूर्भुवः असुरमावाहयामि । (२३) काले में–ओं शेषाय नमः भूर्भुवः स्वः शेषमावाहयामि । इसके बाद २४, २५, २६ एक एक घर के हैं । (२४) पीले में–ओं एकपदाय नमः भूर्भुवः स्वः एकपदमावाहयामि।(२५) वायु कोनके लाल में–ओं रोगाय नमः भूर्भुवः रोगमावाहयामि । (२६) उससे पूर्व लाल में–ओं अहये नमः भूर्भुवः स्वः अहिमावाहयामि । इसके बाद क्रमशः पूर्व दो दो घर के पांच हैं । (२७) लाल में–ओं मुख्याय नमः भूर्भुवः स्वः मुख्यमावाहयामि । (२८) काले में–ओं भल्लाटाय नमः भूर्भुवः स्वः भल्लाटमावाहयामि । (२९) सफेद में–ओं सोमाय नमः भूर्भुवः स्वः सोममावाहयामि । (३०) काले में–ओं सर्पेभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः सर्पानावाहयामि । (३१) पीले में–ओं अदित्यैनमः भूर्भुवः स्वः अदितिमावाहयामि । इसके बाद एक घर वाले (३२) पीले में–ओं दित्यैनमः भूर्भुवः स्वः दितिमावाहयामि । फिर इसी से दक्षिण एक घर वाले (३३) श्वेत में–ओं अद्भ्योनमः भूर्भुवः स्वः अप आवाहयामि । फिर इसी के सामने १० वें से पूर्व एक घर वाले (३४) श्वेत में–ओं सावित्राय नमः भूर्भुवः स्वः सावित्रमावाहयामि। इसी के सामने १० वें से पूर्व एक घर वाले (३५) श्वेत में ओं जयाय नमः भूर्भुवःस्वः जयमावाहयामि । इसी के सामने २६ वें से दक्षिण एक घर वाले (३६) लाल में–ओं रुद्राय नमः भूर्भुवः स्वः रुद्रमावाहयामि । ४, ५, ६ से पश्चिम के तीन घर वाले (३७) काले में–ॐ अर्यम्णे नमः भूर्भुवः स्वः अर्यमणमावा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हयामि । उससे दक्षिण एक घर वाले (३८) लाल में-ओं सवित्रे नमः भूर्भुवः स्वः सवितारमावाहयामि। उससे पश्चिम के तीन घरों वाले (३९) सफेद में-ओं विवस्वते नमः भूर्भुवः स्वः विवस्वन्तमावाहयामि। उससे पश्चिम के एक घर वाले (४०) लाल में-ओं विबुधाधिपायनमः भूर्भुवः स्वः विबुधाधिपमावाहयामि। उससे उत्तर के ३ घरों वाले (४१) श्वेत में-ओं मित्राय नमः भूर्भुवः स्वः मित्रमावाहयामि । उसके उत्तर के एक घर वाले (४२) लाल में-ओं राजयक्ष्मणेनमः भूर्भुवः स्वः राजयक्ष्माणमावाहयामि । उससे पूर्व के तीन घरों वाले (४३) लाल में-ओं पृथ्वीधराय नमः भूर्भुवः स्वः पृथ्वीधरमावाहयामि। उससे पूर्व के एक घर वाले (४४) श्वेत में-ओं आपवत्सायनमः भूर्भुवः स्वः आपवत्समावाहयामि। अन्त में मध्य के शेष नौ घरों वाले (४५) पीले में ओं ब्रह्मणेनमः भूर्भुवः स्वः ब्रह्माणमावाहयामि । उसी में ब्रह्मा से उत्तर (४६)-ओं पृथिव्यै नमः भूर्भुवः स्वः पृथिवीमावाहयामि-मंत्र से पृथिवी का और पृथिवी से उत्तर कम से कम ५ रत्ती चांदी या सोने की सर्पाकार मूर्त्ति में या अक्षत में ही सर्पाकार बनाकर उसी में (४७)-ओं वास्तोष्पतयेनमःभूर्भुवःस्वःवास्तोष्पतिमावाहयामि-मंत्र से आवाहन करे।

फिर इस ८१ घरों के मण्डल से बाहर और वेदी के किनारे की रेखा के बीच में जो चारों कोनों में दो दो तिरछे घर हैं उनमें एक एक में ईशान कोन से आरम्भ कर चार देवताओं का यों आवाहन करे-(४८) ईशान में नीला-ओं चरक्यै नमः भूर्भुवः स्वः चरकीमावाहयामि । (४९) अग्नि में लाल-ओं विदारक्यै नमः भूर्भुवः स्वः विदारकीमावाहयामि। (५०) नैर्ऋत्य में पीला-ओं पूतनायै नमः भूर्भुवः स्वः पूतनामावाहयामि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(५१) वायु में नीला—ओं पापराक्षस्यै नमः भूर्भुवः स्वः पापराक्षसीमावाहयामि । फिर पूर्व आदि के चारचार में से क्रमशः एक एक में करे । (५२) पूर्व के पहले लाल में—ओं स्कन्दाय नमः भूर्भुवः स्वः स्कन्दमावाहयामि । (५३) दक्षिण के पहले काले में—ओं अर्यम्णे नमः भूर्भुवः स्वः अर्यमणमावाहयामि । (५४) पश्चिम के प्रथम लाल में—ओं जृंभकाय नमः भूर्भुवः स्वः जृंभकमावाहयामि । (५५) उत्तरके प्रथम पीले में—ओं पिलिपिच्छायनमः भूर्भुवः स्वः पिलिपिच्छमावाहयामि । (५६) फिर पूर्व के दूसरे में—ओं उग्रसेनाय नमः भूर्भुवः स्वः उग्रसेनमावाहयामि । (५७) दक्षिण के दूसरे में—ओं डामराय नमः भूर्भुवः स्वः डामरमावाहयामि । (५८) पश्चिम में—ओं महाकालायनमः भूर्भुवः स्वः महाकालमावाहयामि । (५९) उत्तर—ओं अश्विभ्यां नमः भूर्भुवःस्वःअश्विनावावाहयामि । (६०) फिर पूर्व के तीसरे में—ओं गणेशायनमः भूर्भुवः स्वः गणेशमावाहयामि । (६१) दक्षिण—ओं दुर्गायै नमः भूर्भुवः स्वः दुर्गामावाहयामि । (६२) पश्चिम—ओं वाताय नमः भूर्भुवः स्वः वातमावाहयामि । (६३) उत्तर—ओं बीभत्सायनमः भूर्भुवः स्वः बीभत्समावाहयामि । (६४) फिर पूर्व के शेष में—ॐ इन्द्रायनमः भूर्भुवः स्वः इन्द्रमावाहयामि । (६५) अग्नि कोन के शेष में—ओं अग्नयेनमः भूर्भुवःस्वः अग्निमावाहयामि । (६६) दक्षिण के शेष में—ओं यमाय नमः भूर्भुवः स्वः यममावाहयामि । (६७) नैर्ऋत्य में—ओं निर्ऋतये नमः भूर्भुवः स्वः निर्ऋतिमावाहयामि । (६८) पश्चिम—ओं वरुणाय नमः भूर्भुवः स्वः वरुणमावाहयामि । (६९) वायु-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं वायवे नमः भूर्भुवः स्वः वायुमावाहयामि। (७०) उत्तर-ओं कुबेराय नमः भूर्भुवः स्वः कुबेरमावाहयामि। (७१) ईशान-ओं ईशानाय नमः भूर्भुवः स्वः ईशानमावाहयामि। (७२) सब से बाहरी रेखा पर ईशान पूर्व के बीच में-ओं ब्रह्मणे नमः भूर्भुवः स्वः ब्रह्माणमावाहयामि। (७३) नैर्ऋत्य पश्चिम के बीच-ओं अनन्तायनमः भूर्भुवः स्वः अनन्तमावाहयामि। अन्त में सभी के उत्तर मण्डल से बाहर (७४) ओं क्षेत्रपालाय नमः भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपालमावाहयामि। इस प्रकार मण्डल के बाहर और भीतर क्षेत्रपाल को लेकर ७४ देवताओं का क्रम से आवाहन करके अलग अलग नाम लेकर आवाहनक्रमसे-ओं शिखिने नमः—इत्यादि से अथवा एक ही बार-ॐ शिख्यादि त्रिसप्ततिदेवेभ्यो नमः—कह कर 'गन्धं समर्पयामि' इत्यादि पञ्चोपचार से पूर्ववत्, अथवा 'आसनं समर्पयामि,' 'पाद्यं समर्पयामि' इत्यादि आसनं, पाद्यं, अर्घ्यं, आचमनीयं, स्नानीयं, वस्त्रं यज्ञोपवीतं, गन्धं, पुष्पं, धूपं, दीपं, नैवेद्यं, नैवेद्यान्त आचमनीयं ताम्बूलं पूगीफलं, नीराजनं (आरती), नमस्कारं, पुष्पाञ्जलिं, प्रदक्षिणां, के अन्त में हरबार 'समर्पयामि' लगाकर ७३ की षोडशोपचार से पूजा करे। केवल वास्तोष्पति या वास्तुपुरुष की पूजा में ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो भवानः। यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे—इस मंत्रके साथ 'ओं वास्तोष्पतये नमः' यह नाममंत्र लगाकर पूजा करना चाहिये, यदि अलग अलग करते हों तब और यदि साथ ही एक ही बार करते हों तो भी पीछे से वास्तुपुरुष की अलग भी पूजा करे। फिर क्षेत्रपालकी-ओं क्षत्रस्य योनिरसि क्षत्रस्य नाभिरसि। मात्वा हिंसीन्मामा हिंसीः इस मंत्र के साथ 'ॐ क्षेत्रपालाय नमः' लगाकर पूजा करे। ओं पूजा के अन्त में हाथ जोड़कर सभी की एक साथ मानसिक प्रार्थना करें। इति वास्तुपूजा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

३—महागणपतिपूजा ।

इसके अनन्तर महागणपतिपूजा की जाती है । यदि मण्डपपूजा और वास्तुशान्ति न भी हो तो भी गणेशपूजा तो होती ही है । यदि मण्डप होगा तब तो मण्डप में ही गणेश के लिये एक वेदी होगी । यदि न हो तो किसी नवीन पीढ़ा, मूर्त्ति, अक्षत या सुपारी आदि फल में हीं गणपतिपूजा की जाती है । मगर यदि कोई आसन न हो तो पत्ते का आसन देकर उसी पर अक्षतादि रख उसमें आवाहन कर पूजा करना चाहिये । यदि मण्डपपूजा के बाद करे तब तो क्रम हीं लगा है । इसलिये कुछ कहना हीं नही हैं । पर, यदि गणेशपूजासे ही कार्य शुरू करना हो और इससे पहले कोई कर्म न हुआ हो तो, यजमान स्नान नित्य क्रियादि करने के बाद भस्म चन्दनादि के तिलक से युक्त हो और हाथों की अनामिका में पवित्र (पैंती) पहनकर स्त्री को दहिने बैठावे और यदि स्त्री किसी कारण से साथ न बैठसके तो दूरसे ही उसके वस्त्र के साथ किसी लम्बी रस्सी या वस्त्र से ग्रन्थिबन्धन करके पूर्वमुख कुशासन या दूसरे किसी आसन पर बैठा हुआ ७६ पृष्ठ में कही रीति के अनुसार कर्मापवर्ग वा रक्षादीप जलाकर उसे पूर्वमुख रख उसका पूजन (पृ०७९) करके सबसे पहले गणेश कुलदेवता आदिका ध्यान दोनों हाथ जोड़कर इस प्रकार करेः—ॐ यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति, परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये । विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ॥ १ ॥ विघ्नध्वान्तनिवारणैकतरणिर्विघ्नाटवीहव्यवाट्, विघ्नव्यालकुलोपमर्दगरुडो विघ्नेभपञ्चाननः ॥ विघ्नोत्तुंगगिरिप्रभेदनपविर्विघ्नाब्धिकुम्भोद्भवो, विघ्नाघौघघनप्रचंडपवनो विघ्नेश्वरः पातु नः ॥ २ ॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ ३ ॥ धूमकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ ४ ॥ विद्या-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ५ ॥ विघ्नवल्लीकुठाराय गणाधिपतये नमः । वक्रतुंड महाकाय सूर्यकोटिसमप्रभ । अविघ्नं कुरु मे देव सर्वकार्येषु सर्वदा ॥ ६ ॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ७ ॥ लाभस्तेषां जयस्तेषां कुतस्तेषां पराजयः । येषामिन्दीवरश्यामो हृदयस्थो जनार्दनः ॥८॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराबलं चन्द्रबलं तदेव । विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तेंऽघ्रियुगं स्मरामि ॥ ९ ॥ या कुन्देन्दुतुषारहारधवला या शुभ्रवस्त्रावृता या वीणावरदंडमंडितकरा या श्वेतपद्मासना । या ब्रह्माच्युतशंकरप्रभृतिभिर्देवैः सदा वन्दिता, सा मां पातु सरस्वती भगवती निःशेषजाड्यापहा ॥ १० ॥ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः । उमामहेश्वराभ्यां नमः । शचीपुरन्दराभ्यां नमः । वाणीहिरण्यगर्भाभ्यां नमः । मातापितृभ्यां नमः । इष्टदेवताभ्यो नमः । कुलदेवताभ्यो नमः । वास्तुदेवताभ्यो नमः । ग्रामदेवताभ्यो नमः । स्थानदेवताभ्यो नमः । सर्वेभ्योदेवेभ्यो नमः । सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः ॥

इस प्रकार ध्यान, प्रणाम करनेके बाद प्राणायाम करके, यदि मण्डप पूजा आदि न की हो तो ५०,७४ पृष्ठोंमें कही रीतिके अनुसार देश, कालादि का नाम लेकर और यदि मण्डप पूजा के बाद ही हो तो—ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ करिष्यमाणस्यामुककर्मणः निर्विघ्नपरिसमाप्तिकामो महागणपतिपूजां करिष्ये—पढ़कर संकल्प करे । सर्वत्र संकल्प के समय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुश, तिल, जौ, जल हाथ में लेना चाहिये । यदि मण्डपपूजा के बाद यह कार्य होगा तब तो ७६ पृष्ठ में बताये कर्मपात्र के जल के होने से उसी से काम चलेगा । पर यदि वह घट जावे या गणेश पूजा से ही कर्म शुरू होने वाला हो तो उक्त की रीति के अनुसार ही चन्दनादि युक्त लोटे के जल को कूष्मांड मंत्रों से या गायत्री से या दोनों से अभिमंत्रण करके-आ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थांगतोऽपिवा । यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरे शुचिः—मंत्र से उस जल को यजमान सभी पूजा के पदार्थों, वेदी और अपने पर छिड़के । यदि यजमान मंत्र न पढ़ सकता हो तो उसका प्रतिनिधिस्वरूप आचार्य उसकी तरफ से पढ़कर छिड़के । इसी तरह अन्यत्र भी आचार्य ही पढ़े और वह काम कर दे जो यजमान से न होसके । नहीं तो मंत्र आचार्य पढ़े और जल छिड़कने आदि का काम यजमान करता जावे । अस्तु, यजमान दोनों हाथों में फूल लेकरके पहले हाथ जोड़कर गणेश का ध्यान करे और मंत्र पढ़े—ओं गणानां त्वा गणपतिꣳहवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् । ओं महागणपतये नमः भूर्भुवः स्वः महागणपतिमावाहयामि । मंत्र पढ़कर फूल को आवाहन की मूर्त्ति या अक्षतादि पर रखदे । फिर-ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञꣳ समिमं दधातु । विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ । ओं भूर्भुवः स्वः महागणपतये नमः महागणपते इहागच्छ सुप्रतिष्ठितो वरदो भव-से अक्षत से प्रतिष्ठा करके-ओं भूर्भुवः स्वः महागणपतये नमः इदमासनम्-से आसन देवे । ओं भूर्भुवः स्वः महागणपतये नमः इदं पाद्यम्—से पाद्य । इसी तरह, ओं भू० इदमर्घ्यम् । ओं भू० इदमाचमनीयम् । ओं भू० इदं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्नानीयम् । ओं भू० इदं स्नानान्त आचमनीयम् । ओं भू० इदं वस्त्रम् । ओं भू० यज्ञोपवीतम् । ओं भू० अयं गन्धः । ओं भू० इदं पुष्पम् । ओं भू० अयं धूपः । ओं भू० अयं दीपः । ओं भू० इदं नैवेद्यम् । ओं भू० इदं नैवेद्यान्त आचमनीयम् । ओं भू० इदं ताम्बूलं सपूगीफलम् । ओं भू० इदं दूर्वा (दूब का अंकुर) । ओं भू० इदं नीराजनम् (आरती) । ओं भू० इयं पुष्पाञ्जलिः । पुष्पांजलि देने के समय मंत्र पढ़े-ॐ राजाधिराजाय प्रसह्यसाहिने नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे । समे कामान् कामकामाय मह्यं कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु । कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः । इस मंत्र से पुष्पांजलि अर्पण कर प्रणाम करके तीन बार प्रदक्षिणा करे । फिर प्रार्थना करे-ॐ वक्रतुंड महाकाय कोटिसूर्यसमप्रभ । अविघ्नं कुरु मे देवे सर्वकार्येषु सर्वदा । अनया पूजया श्रीमहागणपतिः प्रीयताम् ॥

गणेशपूजा के बाद गौरी की भी पूजा की रीति परम्पराप्राप्त है और वासिष्ठी आदि में लिखी भी है । इस लिये गौरी पूजन भी कर लेना चाहिये । गौरी की मूर्त्ति प्रायः गौ के गोबर की बनाई जाती है । इसलिये गणेश के पास ही एक वेदी या काठ के आसन पर गोबर की मूर्ति या फूल, सुपारी या अक्षत रखकर उसमें गौरी का आवाहन हाथ में अक्षत लेकर करेः— ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्मइषाण सर्वलोकम्म इषाण । ओं भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः गौरीमावाहयामि—पढ़कर वह अक्षत मूर्त्ति पर या सुपारी आदि पर डाल देवे । फिर-ओं मनोजूति०—इत्यादि मंत्र पढ़कर और उसके अन्त में-भूर्भुवः स्वः गौर्यैनमः गौरि इहागच्छ सुप्रतिष्ठिता वरदाभव—कह गौरी के उपर फूल या अक्षत डालकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनकी प्रतिष्ठा करे। फिर- ओं भूर्भुवः स्वः गौर्यैनमः-मंत्र से गणेश पूजा की तरह साधारण षोडशोपचार या पञ्चोपचार पूजा करके गौरी के उपर नीचे लिखी विशेष वस्तुओं को क्रमशः चढ़ावे- (१) केसर—ओं कुंकुमं कामदं दिव्यं कामनाकाम संभवम् । कुंकुमेनार्चिते देवि गृहाण परमेश्वरि । (२) हलदी—ओं हरिद्रानिर्मितं देवि सौभाग्यंसुखसंपदा । अतस्त्वां पूजयिष्यामि गृहाण परमेश्वरि ॥ (३) अबीर, (४) गुलाल, (५) चन्दन—ओं अबीरं च गुलालं च चोवाचन्दनमेवच । अबीरणार्चिता देवि ततः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ (६) सिन्दूर-ओं सिन्दूरं शोभनं रक्तं सौभाग्यंप्रियवर्द्धनम् । सुखदं मोक्षदं चैव सिन्दूरं प्रतिगृह्यताम् ॥ (७) केसर मिलेअक्षत-ओं अक्षताश्च सुरश्रेष्ठे कुंकुमाक्ताः सुशोभनाः । मयानिवेदिताभक्त्या गृहाण परमेश्वरि ॥ (८) माला फूल—ओं माल्यादीनि सुगन्धीनिमालत्यादीनिचेश्वरि । मयाहृतानि पूजार्थं पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् । (९) धूप—ॐ वनस्पतिरसोत्पन्नः सुगन्धाढ्यो मनोहरः आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ (१०) दीप आरती-ओं साज्यं च वर्तिसंयुक्तं वह्निनायोजितं मया ॥ दीपं गृहाण देवेशि त्रैलोक्यतिमिरापहम् । (११) नैवेद्य—ओं शर्करा-खंडखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च । आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम् (१२) आचमन-ओं गंगाजलं समानीतं सुवर्णकलशोद्धृतं । देवेश्याचमनीयं ते प्रीत्यर्थं प्रतिगृह्यताम् ॥ (१३) फल- ओं इदं फलं मया देवि स्थापितं पुरतस्तव । तेन मे सुफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनिजन्मनि । (१४) द्रव्य-ॐ हिरण्यगर्भगर्भस्थंहेमबीजं विभावसोः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥१५॥ प्रदक्षिणा-ओं यानिकानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च । तानि तानि विनश्यन्ति प्रदक्षिणपदे पदे ॥ (१६) पुष्पाञ्जलि, नमस्कार-ओं सर्वमंगलमांगल्ये शिवेसर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यंबकेगौरिनारायणिनमोऽस्तुते ॥ फिर-ओं अनया पूजया महागौरी प्रीयताम्-यह कहकर हाथ जोड़कर प्रार्थना करे । इति महागणपति गौरी पूजा ।

४-प्रधानसंकल्प ।

इसके बाद या गणेशपूजा से प्रथमहीं प्रधान कर्म का संकल्प करे । इसे प्रधान संकल्प कहते हैं । उपनयन, विवाहादि जो प्रधान कर्म होवे उसी का नाम इसमें लिया जाता है । इसी से इसे प्रधान संकल्प कहते हैं । भरसक गणेश पूजा के बादही करना चाहिये । वह इस प्रकार हैः-ओं विष्णुर्विष्णुर्विष्णुर्नमः परमात्मने श्रीपुराणपुरुषोत्तमाय ओं तत्सदत्र जम्बूद्वीपे भारतवर्षे कुमारिकाखंडे आर्यावर्त्तैकदेशे अविमुक्ते वाराणसीक्षेत्रे महाश्मशाने आनन्दवने गौरीमुखे त्रिकंटकविराजिते पुण्यक्षेत्रे ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणेऽमुकसंवत्सरेऽमुकायनेऽमुकऋतौ अमुकमासेऽमुकपक्षेऽमुकराशिस्थिते सूर्येऽमुकराशिस्थितेचन्द्रेऽमुकराशिस्थिते देवगुरौ शेषेषु ग्रहेषु यथाराशिस्थानस्थितेषु एवं गुणविशिष्टायाममुकपुण्यतिथौ अमुकवासरेऽमुकनक्षत्रेऽमुकगोत्रोऽमुकराशिरमुकशर्म्माऽहं श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तये अमुककर्म करिष्ये । इस तथा अन्यान्य संकल्प में जिस जिसके पूर्व अमुक शब्द आया है उस उससे पहले अमुक शब्द की जगह उस उसका नाम बोलना चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५--स्वस्तिवाचन (स्वस्त्ययन), पुण्याहवाचन ।

प्रधान संकल्प के बाद स्वस्ति (शान्ति) पाठ और पुण्याह वाचन करावे। पहले दो, चार, छ आदि समसंख्य ब्राह्मणों को कुश के या अन्य आसन पर पूर्व या उत्तर मुख बैठाकर और स्वयं यजमान पूर्व या उत्तर मुख बैठ कर संकल्प करेः—ओं अद्ययथोक्त विशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यातिथौ अमुकशर्म्माऽहममुककर्मांगतया स्वस्तिपुण्याहवाचनं करिष्ये तदंगतयाऽमुक संख्यकानां ब्राह्मणानां वरणं करिष्ये। अमुकशब्द जो 'संख्यकानां' के पहले है उसकी जगह जितने ब्राह्मण हों उतनी संख्या का वाचक द्वि, चतुः' षट् इत्यादि शब्द देना चाहिये। फिर जैसे ७४ पृष्ठ में आचार्य का वरण है उसी तरह प्रत्येक का वरण कर लेवे। सिर्फ अन्तमें जो वस्त्रादि हाथ में लेकर संकल्प किया जाता है वहां 'अमुक कर्म कर्तुं कारयितुं च' की जगह 'पुण्याहवाचनार्थं' कहना चाहिये। शेष आगे पीछे के काम और मंत्र ज्यों के त्यों रहेंगे। कहीं कहीं गणेश पूजा से प्रथम हीं शान्तिपाठ मिलता है और कहीं कहीं यह लिखा है कि यदि पहले शान्तिपाठ न कराया होवे तो मातृपूजा के बाद आयुःशान्ति पाठ के नाम-से वही पाठ करना चाहिये। परन्तु पहले पाठ करने में बाधा यह है कि केवल शान्ति पाठ के ही लिये ब्राह्मणों का पृथक वरण करना पड़ता है और बार बार वरण करना एक तो व्यर्थ ही विस्तार करना है। दूसरे जब उस शान्ति पाठ को भी लोग स्वस्ति वाचन हीं मानते हैं तो फिर स्वस्तिवाचन और पुण्याहवाचन के ही क्रम में उसे भी क्यों न रक्खा जावे? इससे ब्राह्मणों का पृथक वरण भी न करना पड़ेगा। इसलिये उन्हीं ब्राह्मणों से पहले शान्ति पाठ करावे और साथ में यजमान स्वयं भी बोलता जावे। मंत्र यह हैंः—ओं स्वस्ति नो मिमीतामश्विना भगः स्वस्ति देव्यदितिरनर्वणः। स्वस्ति पूषा असुरो दधातु नः स्वस्ति द्यावापृथिवी सुचेतना ॥ १ ॥ स्वस्तये वायुमुपब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्प-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिः । बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः ॥ २ ॥ विश्वेदेवानो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुरग्निः स्वस्तये । देवा अवन्त्वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रुद्रः पात्वꣳहसः ॥ ३ ॥ स्वस्ति मित्रावरुणा स्वस्ति पथ्ये रेवति । स्वस्ति न इन्द्रश्चाग्निश्चस्वस्ति नो अदिते कृधि ॥ ४ ॥ स्वस्ति पन्थामनुचरेम सूर्याचन्द्रमसाविव। पुनर्ददताऽघ्नताजानता संगमेमहि ॥५॥ स्वस्त्ययनं तार्क्ष्यमरिष्टनेमिं महद्भूतं वायसं देवतानाम् । असुरघ्नमिन्द्रसखं समत्सु बृहद्यशोनावमिवारुहेम ॥ ६ ॥ अंहोमुंचमांगिरसं गयंच स्वस्त्यात्रेयम्मनसाचतार्क्ष्यम्। प्रयत पाणिः शरणं प्रपद्ये स्वस्ति सम्बाधेष्वभयन्नो अस्तु ॥७॥ ॐ आनो भद्राः क्रतवोयन्तु विश्वतोऽदब्धासो अपरीतास उद्भिदः । देवानो यथा सदमिद्वृधे असन्नप्रायुवो रक्षितारो दिवेदिवे ॥ ८ ॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ रातिरभि नो निवर्त्तताम् । देवानाꣳ सख्यमुपसेदिमा वयं देवा न आयुः प्रतिरन्तु जीवसे ॥९॥ तान्पूर्वया निविदा हूमहे वयं भगम्मित्रमदितिं दक्षमस्त्रिधम् । अर्यमणँन्वरुणꣳसोममश्विना सरस्वती नः सुभगा मयस्करत् ॥ १० ॥ तन्नोवातो मयोभु वातु भेषजं तन्माता पृथिवी तत्पिता द्यौः । तद्ग्रावाणः सोमसुतो मयोभुवस्तदश्विना श्रृणुतं धिष्ण्या युवम् ॥ ११ ॥ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषा नो यथा वेदसामसद् वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ १२ ॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्प-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिर्दधातु ॥ १३ ॥ पृषदश्वा मरुतः पृश्निमातरः शुभं यावानो विदथेषु जग्मयः । अग्निजिह्वा मनवः सूरचक्षसो विश्वे नो देवा अवसा गमन्निह ॥ १४ ॥ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः । स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ १५ ॥ शतमिन्नु शरदो अन्ति देवा यत्रा नश्चक्रा जरसं तनूनाम् । पुत्रासो यत्र पितरो भवन्ति मानो मध्या रीरिषतायुर्गन्तोः ॥ १६ ॥ अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥१७॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शान्तिःपृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिःसामाशान्तिरेधि ॥ १८ ॥ ॐ सुशान्तिर्भवतु ॥ इति स्वस्त्ययन ।

इसके बाद पुण्याहवाचन के लिये दो कलश दक्षिण उत्तर स्थापन करे । पहले—ओं मही द्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षतां म् । पिपृतान्नो भरीमाभिः—इससे भूमि का स्पर्श हाथों से करके उसपर दक्षिण उत्तर दो जगह सप्तधान्य, जौ या चावल की राशि—ओं ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्त ꣳ राजन् पारयामसि—यह मंत्र पढ़कर बनावे। तब—ओं आजिघ्रकलशं मह्यात्वा विशन्त्विन्दवः । पुनरूर्जा निवर्त्तस्व सानः सहस्रधुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः—इस मंत्र से पहले दक्षिण, पीछे उत्तर राशि पर कलश रक्खे । इसी क्रम से आगे के भी सभी काम करे । फिर—ओं वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुण-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋत सदनमासीद–इस मंत्र से क्रम से दोनों जल से भरे । ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणाम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम्–यह मंत्र पढ़कर उसमें चन्दन डाले । ओं या औषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा । मनैनु बभ्रूणामह ँ शतं धामानि सप्त च–इस मंत्र से सर्वौषधि डाले ॥ ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च–मंत्र से दूब । ओं अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता । गो भाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम्–मंत्र से पञ्चपल्लव । ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथाः–मंत्र से सप्तमृत्तिका । ओं याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पति प्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व ँ हसः–से सुपारी तथा अन्य फल । ओं प्राणाय स्वाहा ऽपानाय स्वाहा–से पान । ओं परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे–से पञ्चरत्न । ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम–इससे सोना । ओं युवा सुवासाः परिवीत आगात् स उ श्रेयान्भवति जायमानः । तं धीरासः कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः–इससे कलश में वस्त्र वा दोहरा लाल सूत लपेटे । ओं पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज ँ शतक्रतो–इससे अन्न से भरी कटोरी या दोना वगैरः कलशों पर रक्खे । सामवेदियों की पद्धति में कहीं कहीं कलश स्थापन में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमि के स्पर्श करने का मंत्र यह है:—ओं इदं भूमेर्भजामह इदं भद्राँ सुमंगलम् । परा सपत्नान् बाधस्व अन्येषां विन्दते धनम् । इसी तरह धान की राशि बनाने का:— ओं धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् । इन्द्रप्रातर्जुषस्वनः । उन राशियों पर कलश रखने का मंत्र-ओं आविशन् कलश ँ सुतो विश्वा अर्षन्नभिश्रियः । इन्दुरिन्द्राय धीयते । उन में जल डालने का मंत्र-ओं इमंमे वरुण श्रुधी हवमद्याच मृडय । त्वामवस्युराचके । पूगी फलादि डालने का—ओं अयमूर्जावतो वृक्ष ऊर्जीव फलिनी भव । पर्णवनस्पतेऽनुत्वा सूयत ँ रायिः ॥ पंच रत्न डालने का-ओं अग्निमीडेपुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्वजम् । होतार ँ रत्नधातमम् ॥ सप्तमृत्तिका डालने का- ओं स्योनापृथिविनोभवानृक्षरानिवेशनी । यच्छानः शर्म सप्रथो देवान्मा भयात् । सर्वौषधि डालने का—ओं ओषधे त्रायस्वैनम् । पंच पल्लव का-ॐ वनस्पते वीड्वंगोहि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः । गोभिः सन्नद्धो असि वीडयस्व आस्थाता ते जयतु जेत्वानि । वस्त्र या लालसूत लपेटने का-ओं अभिवस्त्रा सुवसनान्वर्षाभिधेनूः सुदुघाः पूयमानयः । अभिचंद्रा भर्त्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान् रथिनो देवसोम ॥ अन्न से पूर्ण पात्र कलश पर रखने का-ओं सघातं वृषण ँ रथमधितिष्ठाति गोविदम् । यः पात्र ँ हारियोजनं पूर्णमिन्द्रा चिकेतति योजान् विन्द्रते हरी ॥ शेष मंत्र वही हैं जो पहले लिखे हैं । कर्ता की मर्जी चाहे जिस रीति से कर सकता है । चाहे सामवेदी भी पूर्व रीति से करे या इस रीति से । जो मंत्र जल डालने का सामवेदियों की पद्धति में कहीं लिखा है उसीसे वरुण का आवाहन कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूजन करना भी लिखा है। अस्तु, इस प्रकार कलश स्थापन करने के बाद अक्षत लेकर वरुण का आवाहन करे-ओं तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेहबोध्युरुश ँ समानआयुः प्रमोषीः । ओं वरुणायनमः भूर्भुवः स्वः वरुणमावाहयामि । फिर पूर्ववत् पंचोपचार से या षोडशोपचार से पूजा करके-ओं तत्त्वायामि० इत्यादि मंत्र पढ़कर पुष्पांजलि देवे और प्रार्थना करे-ॐ अनया पूजया वरुणः प्रीयताम् ॥ वरुण का आवाहन पूजन क्रम से पहले दक्षिण फिर उत्तर कलश में करे । इस के बाद कलशों में हीं अक्षतसे गंगा आदि का आवाहन करे-ओं सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः । आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ फिर अनामिका अंगुली की नोंक से कलश को छूकर इस मंत्र से अभिमंत्रण करे-ओं कलशस्यमुखे विष्णुः कण्ठेरुद्रः समाश्रितः । मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥१॥ कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदोह्यथर्वणः ॥ अंगैश्चसहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥ २॥ अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा । आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारिकाः ॥३॥ अनन्तर कलश की प्रार्थना करे-ॐ देवदानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ । उत्पन्नोऽसि तदाकुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥ १ ॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयिप्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥ २ ॥ शिवः स्वयंत्वमेवासि विष्णुस्त्वंच प्रजापतिः । आदित्या वसवो रुद्राः विश्वेदेवाः सपैतृकाः ॥३। त्वयितिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफलप्रदाः ॥४॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव। सानिध्यं कुरुमे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ ५ ॥ इस प्रकार कलश स्थापन करे। इसके बादही कहीं कहीं पुण्याहवाचन के ब्राह्मणों का वरण लिखा है। पूर्वोक्त विधि के अनुसार चाहे पहले या अभी ब्राह्मणों का वरण करके उन्हें उत्तर या पूर्वमुख बैठावे। वे ब्राह्मण लोग सपत्नीक यजमान को आशीर्वाद देवें कि-ॐ मातृदेवो भव। आचार्य देवो भव। अतिथिदेवो भव फिर यजमान भूमिमें दोनों घुटने टेक कर बन्द कमल की तरह हाथों को मिला कर सिरपर रक्खे। उसके बाद दहिने हाथ से उत्तर कलशको उठाकर मंत्र पढ़े-ॐ त्रीणि पदा विचक्रमे विष्णुर्गोपा अदाभ्यः। अतो धर्माणि धारयन् ॥ दीर्घा नागानद्यो गिरयस्त्रीणि विष्णु पदानि च। तेनायुष्प्रमाणेन पुण्याहं दीर्घमायुरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ऐसा कह चुकने पर ब्राह्मण लोग कहें कि--ॐ पुण्यं पुण्याहं दीर्घायुरस्तु ॥ इसी बीच में यजमान हाथ के कलश को अपनी पत्नी और विवाह, उपनयनादि में बालक बालिका के सिर पर स्पर्श कराके अपने स्थानपर रखदे। फिर दोबारा और तेबारा ऐसाही करे। तब यजमान ब्राह्मणों का हाथ धोने के लिये-ॐ सुप्रोक्षितमस्तु—कह कर जल देवे। अनन्तर-ॐ शिवा आपः सन्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु-पढ़कर यजमान ब्राह्मणों के हाथ में जल देवे और ब्राह्मण-ॐ शिवाः आपः सन्तु-पढ़कर यजमान के सिर पर वह जल छिड़क देवें। इसी तरह आगे भी मंत्र पढ़कर यजमान ब्राह्मणों के हाथ में चन्दन आदि देवे और वे मंत्र पढ़कर यजमान पर उसे छिड़क दिया करें। चन्दन, यजमान-ॐ गन्धाः पान्तु सुमंगल्यं चास्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु। ब्राह्मण-गन्धाः पान्तु सुमंगल्यं चास्तु। अक्षत, यजमान-ॐ अक्षताः पान्तु आयुष्यमस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु। ब्राह्मण-ॐ अक्षताः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पान्तु आयुष्यमस्तु । पुष्प, यज०-ॐ पुष्पाणि पान्तु सौ-श्रियमस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्म०-ॐ पुष्पाणिपान्तुसौ-श्रियमस्तु । ताम्बूल (पान), य०-ॐताम्बूलानिपान्तुऐश्वर्यमस्तु इति भवन्तो ब्रवन्तु । ब्रा०-ओं तांबूलानिपान्तु ऐश्वर्यमस्तु। दक्षिणा, य०-ओं दक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्तु इति भवन्तो ब्रवन्तु । ब्रा०-ओं दक्षिणाः पान्तु बहुदेयं चास्तु-कह दक्षिणा रख लेवें । फिर जल, यज०-ओं दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयं बहु पुत्रं बहु-धनं चास्तु इति भवन्तो ब्रवन्तु । ब्राह्मण-ओं दीर्घमायुः श्रेयः शान्तिः पुष्टिस्तुष्टिः श्रीर्यशो विद्या विनयं बहुपुत्रं बहुधनं चास्तु-कहकर यजमान के सिर पर जल गिरा देवें। फिर यजमान हाथ में अक्षत लेकर कहे-ओं यं कृत्वा सर्ववेदक्रि-याकरणकर्मारम्भाः शुभाः शोभनाः प्रवर्त्तन्ते तमहमों-रकामादिं कृत्वा ऋग्यजुःसामाशीर्वचनं बह्वृषि सम्मतं संविज्ञातं भवद्भिरनुज्ञातः पुण्यं पुण्याहं वाचयिष्ये ॥ ब्राह्मणों के-ॐ वाच्यताम्, कहने पर वह अक्षत उनके हाथों में दे देवे । ब्राह्मण आगे के मंत्रों को पढ़ पढ़ कर उसे यजमान पर डालें:-

ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्य-जत्राः । स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहिदेवहितं यदायुः ॥ १ ॥ देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयतां देवानाꣳ राति रभिनो निवर्त्तताम् । देवानाꣳसख्यमुपसेदिमावयं देवा न आयुः प्रतिरन्तुजीवसे ॥ २ ॥ नतद्रक्षाꣳसि न पिशाचास्तरन्तिदेवानोमोजः प्रथमजꣳह्येतत् । यो बिभर्त्ति दाक्षायण ꣳ हिरण्यꣳ सदेवेषु कृणुते दीर्घमायुः समनुष्येषु कृणुते दीर्घमायुः ॥ ३ ॥ दीर्घायुस्त ओषधे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम् । अथोत्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतवल्शाविरोहतात् ॥ ४ ॥ द्रविणोदा द्रविणसस्तुरस्य द्रविणोदाः सनरस्य प्रयꣳसत् । द्रविणोदा वीरवती मिषंनो द्राविणोदा रासते दीर्घमायुः ॥ ५ ॥ सविता पश्चात्सवितापुरस्तात्सवितोत्तरात्तात्सविताऽधरात्तात् । सविता नः सुवतु सर्वतातिं सवितानो रासतां दीर्घमायुः ॥६॥ नवो नवो भवति जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेत्यग्रम् । भागं देवेभ्यो विदधात्यायन् प्रचन्द्रमास्तिरते दीर्घमायुः ॥ ७ ॥ उच्चादिवि दक्षिणावन्तो अस्थुर्ये अश्वदाः सहते सूर्येण । हिरण्यदा अमृतत्वं भजन्ते वासोदाः सोमप्रतिरन्त आयुः ॥८॥ आप उन्दन्तुजीवसे दीर्घायुत्वाय वर्चसे । यस्त्वा हृदो कीरिणा मन्यमानो मर्त्यं मर्त्या जोहवीमि ॥ ९ ॥ जातवेदा यशो अस्मासुधेहि प्रजाभिरग्ने अमृतत्वमश्याः । यस्मै त्वं सुकृते जातवेद उलोक मग्ने कृणवः स्योनम् ॥ १० ॥ अश्विनं सपुत्रिणं वीरवन्तं गोमन्तं रयिन्नुशते स्वस्ति । ११ ॥ सामवेदियों का आशीर्वाद मंत्र यह है:-ॐ देवोवो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्वासिचम् । उद्वा सिञ्चध्वमुपवा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते ॥ १ ॥ ओं अद्यनो देव सवितः प्रजावत्सावीः सौभगम् । परा दुष्वप्न्यꣳसुव ॥ २ ॥ ओं चन्द्रमा अप्स्वन्तरा सुपर्णो धावते दिवि । नवो हिरण्यनेमयः पदं विन्दन्ति विद्युतो वित्तं मे अस्य रोदसी ॥३॥ ओं उच्चाते जातमन्धसोदिविषद्भूम्याददे । उग्रंशर्ममाहिश्रव ॥ ४ ॥ ओं उपास्मै गायतानरः पवमानायेन्दवे । अभिदेवा ꣳ इयक्षते ॥५॥ इसके बाद यजमान ब्राह्मणों से कहे-ॐ व्रत नियमतपःस्वाध्याय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऋतुदमदानविशिष्टानां ब्राह्मणानां मनः समाधीयताम्। इसपर ब्राह्मण उत्तर दें-ॐ समाहितमनसःस्मः। फिर यजमान कहे-ॐ प्रसीदन्तु भवंतः। ब्राह्मण कहें-ॐ प्रसन्नाः स्मः। तब यजमान उत्तर वाले कलश को दहिने हाथ में लेकर सामने दो पात्र दक्षिण उत्तर या पूर्व पश्चिम रख कर आगे लिखे संकेत के अनुसार पारी पारी से उन में जल गिरावे। अथवा यदि एकही पात्र हो तो दूसरे की जगह उस पात्र से बाहर गिरावे। जिस समय यजमान यह करता हो ब्राह्मण लोग मन्त्र पढ़ते रहें और यजमान भी साथ साथ बोलता रहे। जल गिराने के समय यजमान दोनों घुटने टेक कर बैठे। प्रथम पहले पात्र में गिरावे-ओं शान्तिरस्तु। ओं पुष्टिरस्तु। ओं तुष्टिरस्तु। ओं वृद्धिरस्तु। ओं अविघ्नमस्तु। ओं आयुष्यमस्तु। ओं शिवंकर्मास्तु। ओं लोकसमृद्धिरस्तु। ओं वेदसमृद्धिरस्तु। ओं शास्त्रसमृद्धिरस्तु। ओं पुत्रपौत्रसमृद्धिरस्तु। ओं धनधान्यसमृद्धिरस्तु। ओं इष्टसम्पदस्तु। फिर दूसरे पात्र में या उसके अभाव में बाहर गिरावे-ओं अनिष्टनिरसनमस्तु। ओं यत्पापमनारोग्यमशुभमकल्याणंतद्दूरे प्रतिहतमस्तु। फिर पहले पात्र में-ओं यच्छ्रेयस्तदस्तु। ओं उत्तरोत्तरमहरहराभिवृद्धिरस्तु। ओं उत्तरोत्तराः क्रियाः शुभाः शोभनाः सम्पद्यन्ताम्। ओं तिथिकरणमुहूर्त्तग्रहलग्नसम्पदस्तु। ओं तिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रग्रहलग्नाधिदेवताः प्रीयन्ताम्। ओं तिथिकरणे समुहूर्त्ते सनक्षत्रे सग्रहे सलग्ने साधिदैवते प्रीयेताम्। ओं दुर्गापाञ्चाल्यौ प्रीयेताम्। ओं अग्निपुरोगा विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्। ओं इन्द्रपुरोगा मरुद्गणाः प्रीयन्ताम्। ओं माहेश्वरी पुरोगा उमामातरः प्रीयन्ताम्। ओं अरुन्धतीपुरोगा एकपत्न्यः प्रीय-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्ताम् । ओं विष्णुपुरोगाः सर्वेदेवाःप्रीयन्ताम् । ओं ब्रह्मपुरोगाः सर्ववेदाः प्रीयन्ताम् । ओं ब्रह्मच ब्राह्मणाश्च प्रीयन्ताम् । ओं श्रीसरस्वत्यौ प्रीयेताम् । ओं श्रद्धामेधे प्रीयेताम् । ओं भगवती कात्यायनी प्रीयताम् । ओं भगवती माहेश्वरी प्रीयताम् । ओं भगवती ऋद्धिकरी-प्रीयताम् । ओं भगवती सिद्धिकरी प्रीयताम् । ओं भगवती पुष्टिकरी प्रीयताम् । ओं भगवती तुष्टिकरी प्रीयताम् । ओं भगवन्तौ विघ्नविनायकौ प्रीयेताम् । ओं सर्वाः कुलदेवताः प्रीयन्ताम् । ओं सर्वाग्रामदेवताः प्रीयन्ताम् । फिर दूसरे में या बाहर–ओं हताश्च ब्रह्मद्विषः । ओं हताश्च परिपन्थिनः । ओं हता अस्य विघ्नकर्त्तारः । ओं शत्रवः पराभवं यान्तु । ओं शाम्यन्तु घोराणि । ओं शाम्यन्तु पापानि । ओं शाम्यन्त्वीतयः ॥ फिर पहले में –ओं शुभानि वर्द्धन्ताम् । ओं शिवा आपः सन्तु । ओं शिवा ऋतवः सन्तु । ओं शिवा अग्नयः सन्तु । ओं शिवा आहुतयः सन्तु । ओं शिवा ओषधयः सन्तु । ओं शिवा वनस्पतयः सन्तु । ओं शिवा अतिथयः सन्तु । ओं निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् । ओं शुक्राङ्गारकबुधबृहस्पतिशनैश्चरराहुकेतुसोमसहिता आदित्यपुरोगाः सर्वग्रहाः प्रीयन्ताम् । ओं भगवान्नारायणः प्रीयताम् । ओं भगवान्पर्जन्यः प्रीयताम् । ओं भगवान् स्वामी महासेनः प्रीयताम् । ओं पुरोनुवाक्यया यत्पुण्यं तदस्तु । ओं याज्यया यत्पुण्यं तदस्तु । ओं वषट्कारेण यत्पुण्यं तदस्तु । ओं प्रातः सूर्योदये यत्पुण्यं तदस्तु ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद यजमान कलश को भूमि में रखकर प्रथम पात्र के जल में से जरासा सिरपर डालकर शेष पत्नी पुत्र गृहादि पर छिड़क देवे । यदि दूसरा जलपात्र हो तो उस पात्र में गिराये जल को कहीं एकान्त में गिरवा देवे । इसके बाद यजमान ब्राह्मणों से कहे—ओं पुण्याहकालान् वाचयिष्ये । ब्राह्मण उत्तर दें—ओं वाच्यताम् । तब यजमान फिर कहे—ओं ब्राह्मंपुण्यमहर्यच्च सृष्ट्युत्पादनकारकम् । वेदवृत्तोद्भवं पुण्यं तत्पुण्याहं ब्रुवन्तु नः । भोब्राह्मणा मह्यंसकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्षमाणायास्यकर्मणः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु । तब ब्राह्मण कहें-ओं पुण्याहम् । ओं पुनन्तुमा देवजनाः पुनन्तुमनसाधियः । पुनन्तु विश्वाभूतानिजातवेदः पुनीहिमा । पुण्याहसमृद्धिरस्तु ॥ सामवेदी-ओं पुनानः सोमधारयापोवसानो अर्षसि । आरत्नधायोनिमृतस्य सीदस्युत्सो देवहिरण्ययः । पुण्याहसमृद्धिरस्तु । फिर दो बार ऐसा ही यजमान और ब्राह्मण कहें । आगे भी सर्वत्र इसी तरह तीन बार दोनों कहें । पहली बार मन्द स्वर से, दूसरी बार मध्यम स्वर से और तीसरी बार ऊंचे स्वर से दोनों सर्वत्र बोलें, अस्तु । फिर यजमान—ओं पृथिव्यामुद्धृतायांतु यत्कल्याणं पुराकृतम् । ऋषिभिः सिद्धगन्धर्वैस्तत्कल्याणं ब्रुवन्तु नः । भो ब्राह्मणा मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्षमाणायास्यकर्मणः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मणों का उत्तर-ओं कल्याणम् । ॐ यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः । ब्रह्मराजन्याभ्या ँ शूद्रायचार्यायच स्वायचारणायच । प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं मे कामः समृध्यतामुपमादोनमतु । सामवेदी-ओं कयानश्चित्र आभुव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूती सदा वृधः सखा । कयाशचिष्ठयावृता । कल्याणसमृद्धिरस्तु ॥ इसी तरह दूसरी और तीसरी बार भी । पुनः यजमान कहे—ओं सागरस्यतु या ऋद्धिर्महालक्ष्म्यादिभिः कृता । सम्पूर्णा सुप्रभावाच्च तांच ऋद्धिं ब्रुवन्तुनः । भो ब्राह्मणा मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्षमाणायास्यकर्मणः ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ब्राह्मणों का उत्तर— ओं ऋध्यताम् । ओं सत्रस्य ऋद्धिरस्यगन्मज्योतिरमृता अभूम । दिवं पृथिव्या अध्यारुहामाविदाम देवान् स्वर्ज्योतिः । ऋद्धिसमृद्धिरस्तु ॥ इसी तरह और भी दो बार । फिर यजमान—ओं स्वस्तिस्तुयाऽविनाशाख्या पुण्यकल्याणवृद्धिदा । विनायकप्रिया नित्यं तां च स्वस्तिं ब्रुवन्तुनः । भो ब्राह्मणा मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्षमाणायास्य कर्मणः स्वस्तिं भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मण—ओं आयुष्मते स्वस्ति । ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु । सामवेदी—ओं त्राता रमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवे सुहवꣳशूर मिन्द्रम् । ह्वयामिशक्रं पुरुहूतमिद्रं स्वस्तिनो मघवा दधात्विन्द्रः । स्वस्तिसमृद्धिरस्तु ॥ फिर और भी दो बार । तब यजमान—ओं समुद्रमथनाज्जाता जगदानन्दकारिका । हरिप्रिया च मांगल्या तां श्रियंच ब्रुवन्तु नः । भो ब्राह्मणा मह्यं सकुटुम्बिने महाजनान्नमस्कुर्वाणायाशीर्वचनमपेक्षमाणायास्यकर्मणः श्रियंभवन्तो ब्रुवन्तु ॥ ब्राह्मण—ओं अस्तु श्रीः । ओं श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इषाण सर्वलोकं म इषाण । सामवेदी-ओं श्रायन्त इव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत । वसूनिजातेजनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम । श्रीसमृद्धिरस्तु ॥ इसी तरह दो बार और भी । फिर आगे के मन्त्रोंसे यजमान को आशीर्वाद देवें-ओं मंगलानि भवन्तु । वर्षशतं पूर्णमस्तु । गोत्राभिवृद्धिरस्तु । प्रजापतिर्लोकपालो धाता ब्रह्मा च देवराट् । भगवान् शाश्वतो नित्यः स नो रक्षतु सर्वतः । भगवान् प्रजापतिः प्रीयताम् । ओं प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥ फिर यजमान सहित प्रार्थना करें— ओं प्रतिपन्थाम पद्महि स्वस्ति गामनेहसम् । येन विश्वाः परिद्विषो वृणक्ति विन्दते वसु ॥ अनेन पुण्याहवाचनेन प्रजापतिः प्रीयताम् । इसके बाद यजमान प्रार्थना करे कि-ॐ अस्मिन् पुण्याहवाचने न्यूनातिरिक्तो यो विधिः स उपविष्टब्राह्मणानां वचनान्महागणपतिप्रसादाच्च परिपूर्णोस्तु ॥ ब्राह्मण उत्तर देवें-ओं अस्तु परिपूर्णः । इसके बाद यजमान उत्तर कलश को दहिने हाथ में और दक्षिण कलश को बायें हाथ में लेकर एक पात्र में दोनों का जल लगातार धारा गिरावे और यह मन्त्र पढ़ता जावे-ओं वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणा सत्रं सोम्यानाम् । द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥ १ ॥ ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवानः । यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ २ ॥ ओं वास्तोष्पते प्रतरणो नएधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो । अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रतिनो जुषस्व ॥ ३ ॥ वास्तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ष्पते शग्मयासꣳसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या। पाहि क्षेम उतयोगे वरंनो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ ४ ॥ शिव शिवम् ॥ इसके उपरान्त ब्राह्मण लोग खड़े होकर यजमान के बायें उसकी पत्नी को बैठाकर उसी पात्र में गिराये जल से दूब और आम के पल्लव से सपत्नीक यजमान का इन मन्त्रों से अभिषेक करें (मन्त्र पढ़कर उस पर जल छिड़कते जावें)—ओं पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ १ ॥ ओं पंच नद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः । सरस्वती तु पंचधा सो देशेऽभवत् सरित् ॥ २ ॥ ओं पुनन्तु मा देवजनाः पुनंतु मनसा धियः । पुनन्तु विश्वाभूतानि जातवेदः पुनीहि मा ॥ ३ ॥ ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रिये दधामि बृहस्पतेष्ट्वा साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ ४ ॥ ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ ५ ॥ ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णोहस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चाम्यसौ । सरस्वत्यैभैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चाम्यसौ ॥ इन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चाम्यसौ ॥ ६ ॥ ओं विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रंतन्न आसुव ॥ ७ ॥ ओं धामच्छदग्निरिन्द्रो ब्रह्मा देवो बृहस्पतिः । सचेतसो विश्वेदेवा यज्ञं प्रावन्तु नः शुभे ॥ ८ ॥ ओं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः । रक्षातोकमुत त्मना ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ ९ ॥ ओं अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः । प्रप्रदातारन्तारिष ऊर्जं नो धेहि द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१०॥ ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामा शान्तिरेधि ॥ ११ ॥ ओं यतो यतः समीहसे ततो नो अभयं कुरु । शन्नः कुरु प्रजाभ्योऽभयं नः पशुभ्यः। अमृताभिषेकोऽस्तु । शान्तिः शान्तिः शान्तिः सुशान्तिर्भवतु ॥ इसके बाद ब्राह्मण यजमान को तिलक कर– ओं भद्रमस्तु शिवंचास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु । रक्षन्तु त्वा सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा । सपत्नादुर्ग्रहाः पापाः दुष्टसत्त्वाद्युपद्रवाः । तमालपत्रमालोक्य निष्प्रभावाभवन्तुते ॥ फिर–ओं युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं० (पृ०७५) से तिलक अक्षत लगावें। सामवेदियों के अभिषेक मंत्र ये हैं:—ओं यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः संभृतँरसम् । सर्वँसपूतमश्नातिस्वदितम्मातरिश्वना ॥ १ ॥ पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतँरसम् । तस्मै सरस्वती दुघे क्षीरँसार्पिर्मधूदकम् ॥ २ ॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीः सुदुघाहि घृतश्च्युतः । ऋषिभिः संभृतोरसो ब्राह्मणेष्वमृतँहितम् ॥ ३ ॥ पावमानीर्दिशन्तु न इमं लोकमथो अमुम् । कामान्त्समर्द्धयन्तु नो देवीर्देवैः समाहृताः ॥ ४ ॥ येनदेवाः पवित्रेणात्मानं पुनते सदा । तेन सहस्रधारेण पावमानीः पुनन्तु नः ॥५॥ पावमानीः स्वस्त्ययनीस्ताभिर्गच्छति नान्दनम् ॥ पुण्याँश्च भक्षान्भक्षयत्यमृतत्वंचगच्छति ॥६॥ ओं योरोचनस्तमिह गृह्णामि तेनाहं मामभिषिञ्चामि । यशसे तेजसे ब्रह्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर्चसायबलायेन्द्रियाय वीर्यायान्नाद्यायरायस्पोषाय त्विष्या अपाचित्यै ॥ ७ ॥ येन स्त्रियमकृणुतं येनापामृशतꣳ सुरा । येनान्नानभ्यषिञ्चतं येनेमां पृथिवीं महीम् । यद्वां तदश्विना यशस्तेन मामभिषिञ्चतम् ॥ ८ ॥ शन्नोदेवीरभिष्टये शन्नोभवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ ९ ॥ ओं अमृताभिषेकोऽस्तु ॥ इसके बाद पुण्याहवाचक ब्राह्मणों को यजमान यथाशक्ति दक्षिणा देवे । दक्षिणा का संकल्प—ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ नानानामगोत्रेभ्यः पुण्याहवाचकेभ्योब्राह्मणेभ्यो यथाशक्ति हिरण्यादिरूपां दक्षिणां विभज्य संप्रददे ॥ फिर उनसे प्रार्थना करे कि—ओं पुण्याहवाचनफलसमृद्धिरस्तु इति भवन्तो ब्रुवन्तु । इस पर ब्राह्मण बोलें—ओं पुण्याहवाचनफलसमृद्धिरस्तु ॥ यद्यपि पुण्याहवाचन में सामवेदियों के यहां कुछ दूसरे मंत्रों का भी पाठ है, तथापि इससे भी काम चल जाता है । इसी से उन मंत्रों को अलग नहीं लिखा है । इति पुण्याहवाचन ।

६—मातृपूजा, वसोर्द्धारापूजा ।

पुण्याहवाचन के बाद मातृपूजा और वसोर्द्धारा पूजा का प्रसंग आता है । वसोर्द्धारापूजा तो मातृपूजा का एक प्रकार से अंगही है। इसीसे उसके अन्त में यह पूजा लिखी है । पर अधिकतर पद्धतियों में मातृपूजा के ताम्बूल अर्पण और पुष्पाञ्जलि के बीच में हीं वसोर्द्धारापूजा लिखी है । हम भी ऐसा ही करेंगे । मातृकाओं की संख्या कहीं सोलह और कहीं चौदह है यह २८ पृष्ठ में लिख चुके हैं । जहां १४ है वहां भी लोग श्री और दुर्गा को मिलाकर १६ और १६ को १८ कर देते हैं । साथ ही, पहले गणेश भी हैं । इससे १९ की पूजा हो जाती है । पर, हम गणपति को साथ मिलाकर १७ की पूजा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही लिखेंगे । यदि मिथिला वाले श्री और दुर्गा को भी चाहें तो १७ के अन्त में उनका भी आवाहन कर लेवें । अग्निकोन में बनी मातृकावेदी पर कपड़ा फैलाकर उसी पर मोटे धागे या तारसे १७ या १९ घर बनाकर उन घरों में गणेश का पीले और शेष का लाल चावलों या चूर्ण से चित्र के अनुसार, जो अन्त में है, भरदे । गणेश का सबसे ऊपर रक्खे । यदि वेदी न हो तो किसी नवीन पीढ़े पर थाली वगैरः में केवल हल्दी आदि से गणेश की पूजा के लिये तथा मातृकाओं के लिये आकृति बनाले। अथवा अलग अलग अक्षत, फूल या सुपारी आदि ही पत्ते पर या थाली में रख लेवे और उसी में आवाहन करे । पूजा के लिये संकल्प करेः-ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुककर्मांगत्वेन गणपतिसहित षोडशमातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनं च करिष्ये। यदि श्री और दुर्गा की भी पूजा करनी हो तो 'गणपतिश्रीदुर्गासहित' ऐसा कह देना चाहिये । आगे भी जहां जहां ऐसा आवे इसीतरह बोलना चाहिये । फिर दहिने हाथ से क्रमशः हरेक को स्पर्श करना और मंत्र बोलते जाना चाहिये-(१) ॐ गणपतिरासि । (२) ॐ गौर्यसि । (३) ॐ पद्मासि । (४) ॐ शच्यसि । (५) ॐ मेधासि । (६) ॐ सावित्र्यसि । (७) ॐ विजयासि । (८) ॐ जयासि । (९) ॐ देवसेनासि । (१०) ॐ स्वधासि । (११) ॐ स्वाहासि । (१२) ॐ मातरःस्थ । (१३) ॐ लोकमातरःस्थ । (१४) ॐ धृतिरासि । (१५) ॐ पुष्टिरासि । (१६) ॐ तुष्टिरासि । (१७) ॐ आत्मकुलदेवतासि । यदि श्री और दुर्गा हों तो (१८) ॐ दुर्गासि । (१९) ॐ श्रीरासि । जो लोग 'मातरः' और 'लोकमातरः' को १४ मातृकाओं का विशेषण मानते हैं वे १४ मातृकाओं की ही पूजा करते हैं । इसके बाद हाथ में अक्षत लेकर एकही साथ सबकी प्राणप्रतिष्ठा करनी चाहिये । उसका मंत्र यजुर्वेदियों का यह है-ॐ मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्प-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिर्यग्भिमं तनोत्वरिष्टम् । यज्ञ ँ समिमं दधातु विश्वे देवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ । सामवेदियों का मंत्र— ओं वाङ्मनःप्राणःप्राणोऽपानो व्यानश्चक्षुः श्रोत्रं शर्म्म वर्म भूतिःप्रतिष्ठाः । यह मंत्र पढ़कर—ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतिसहितगौर्यादिमातर इहागच्छन्तु इह तिष्ठन्तु सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु—कह करके हाथ के अक्षत को उनपर छिड़क देवे । इसके अनन्तर ध्यान करे- ॐगौरी पद्माशची-मेधा सावित्री विजया जया । देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥१॥ धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता। गणेशेनाधिकाह्येता वरदाभयपाणयः ॥ २॥ फिर अक्षत लेकर प्रत्येक का क्रमसे आवाहन पूजनादि नाममंत्र से करे और यदि उससे पूर्व ओंकार पूर्वक तीनों व्याहृतियों को भी लगालेवे तो और भी ठीक । पूजा भरसक षोडशोपचार से, नहीं तो, पंचोपचारसे करे । हरेक का व्याहृति सहित नाममंत्र यह है:— (१) ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः । (२) ॐ भू० गौर्यैनमः । (३) ॐ भू० पद्मायै नमः । (४) ॐ भू० शच्यै नमः । (५) भू० मेधायै नमः । (६) ॐ भू० सावित्र्यै नमः । (७) ॐ भू० विजयायै नमः । (८) ॐ भू० जयायै नमः । (९) ॐ भू० देवसेनायै नमः । (१०) ॐ भू० स्वधायै नमः । (११) ॐ भू० स्वाहायै नमः । (१२) ॐ भू० मातृभ्यो नमः । (१३) ॐ भू० लोकमातृभ्यो नमः । (१४) ॐ भू० धृत्यैनमः । (१५) ॐ भू० पुष्ट्यै नमः । (१६) ॐ भू० तुष्ट्यै नमः । (१७) ॐ भू० आत्मकुलदेवतायै नमः । यदि दुर्गा और श्री हों तो (१८) ॐ भू० दुर्गायै नमः । (१९) ॐ भू० श्रियैनमः । षोडशोपचार में- (१) आवाहयामि (२) आसनं सम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्पयामि (३) पाद्यं समर्पयामि (४) अर्घ्यं० (५) आचमनम् (६) स्नानम् (७) आचमनम् (८) वस्त्रम् (९) यज्ञोपवीतम् (१०) गन्धम् (११) अक्षतम् (१२) पुष्पम् (१३) धूपम् (१४ दीपम् (१५) नैवेद्यम् (१६) आचमनम् (१७) ताम्बूलम् (१८) पूगीफलम् । इतना करने के बाद और पञ्चोपचार में गन्धं, पुष्पं, धूपं, दीपं नैवेद्यं, आचमनं, के बाद ही वसोर्द्धारा की पूजा करे । पहले मातृकाओं के निकट की दीवार या खम्भे (पृ० ६४) पर केवल घी से या गुड़ घी से क्रमशः उत्तर ऐसी तीन, पांच या सात धारायें गिरावे कि दीवार या खम्भेपर उनका चिन्ह हो जावे और यथासंभव मातृका पर उनका कुछ अंश चूवे भी । इसेही वसोर्द्धारा कहते हैं । इसे घृतमातृका भी कहते हैं । उसके बनाने का मंत्र यह है सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों के लिये- ॐ वसोःपवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥ आज्यं यतोऽस्ति देवानामशनं मंगलात्मकम् । ततो मातृः समुद्दिश्य घृतधारा ददाम्यहम् ॥ कहीं कहीं सामवेदियों के लिये दूसरा मंत्र लिखा है । वह इस प्रकार है-ॐ एतमुत्यं मदच्युत ँ सहस्रधारं वृषभं दिवोदुहुः । विश्वावसूनि बिभ्रतम् ॥ १ ॥ कहीं कहीं इसके साथ एक और भी है-सहस्रधारं वृषभं पयोदुहं प्रियं देवाय जन्मने । ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजादेव ऋतं बृहत् ॥ जहां दूसरा मंत्र पहले के साथ दिया है तहां पहले में ' शतधारं ' ' सहस्रधारं ' की जगह लिखा है । लेकिन यह गलत है । अब करनेवालेकी मर्जी है । चाहे तो एकही पहले मन्त्र से दोनों वेदों का करे या सामवेदी का दूसरे मन्त्र से या दूसरे और तीसरे को साथ ही पढ़कर । इसके बाद-ओं वसोर्द्धा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रादेवताभ्योनमः आवाहयामि–से आवाहन कर–ओं वसोर्द्धारा देवताभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि–इत्यादि पञ्चोपचार से पूजा करे। इसके बाद मातृका आदि सभी की आरती करके पुष्पाञ्जलि के लिये दोनों हाथ जोड़कर फूल लेवे और पढ़े–ॐ गौरी पद्मा शची मेधा सावित्री विजया जया। देवसेना स्वधा स्वाहा मातरो लोकमातरः ॥ १ ॥ धृतिः पुष्टिस्तथा तुष्टिरात्मनः कुलदेवता। गणेशेनाधिका ह्येता वृद्धौ पूज्याश्च षोडश ॥ २ ॥ हरात्मज चतुर्बाहो वारणास्य महोदर। प्रसन्नो भव मह्यं त्वं गौरीपुत्र नमोस्तु ते ॥ ३ ॥ इसके उपरान्त–ॐ गणपतयेनमः। ओं गौर्यैनमः–इत्यादि नाममन्त्रों को क्रम से पढ़ पढ़ कर पुष्पाञ्जलि को समर्पण करता हुआ प्रणाम करता जावे। और–ओं अनया पूजया गणपतिवसोर्द्धारादेवतासहितगौर्यादिषोडशमातरः प्रीयन्ताम्–कहकर मातृकाओं को प्रार्थना करे। इसके बाद मातृकावेदी के किसी भाग में ब्राह्मी आदि सात स्थलमाताओं का भी पूजन कहीं कहीं लिखा है। उनका आवाहन–(१) ॐ ब्राह्म्यैनमः भूर्भुवः स्वः ब्राह्मीमावाहयामि (२) ओं माहेश्वर्यैनमः भूर्भुवः स्वः माहेश्वरीमावाहयामि ॥३॥ ओं कौमार्यैनमः भू० कौमारी०। (४) ओं वैष्णव्यैनमः भू० वैष्णवी०। (५) ओं वाराह्यैनमः भू० वाराही०। (६) ओं इन्द्राण्यैनमः भू० इन्द्राणी०। (७) ओं चामुण्डायैनमः भू० चामुण्डा०–इस रीति से करके–ओं मनोजूति० (पृ० १२६) से प्राणप्रतिष्ठा और–ओं भूर्भुवः स्वः ब्राह्म्यादि मातृभ्योनमः गन्धं समर्पयामि–इत्यादि रीति से पंचोपचार या षोडशोपचार पूजा करे। अन्त में–ओं अनया पूजया ब्राह्म्यादिसप्तमातरः प्रीयन्ताम्–कह कर प्रार्थना करे। फिर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मातृकापूजा की दक्षिणा का संकल्प करे और उसे कर्म करानेवाले को देवे-ओं तत्सदद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभ पुण्यतिथौ अमुककर्मांगभूतगणपत्यादिसहितषोडशमातृकापूजनदक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय (यदि दो तीन हों तो-गोत्राभ्यां ब्राह्मणाभ्यां, गोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः) दास्ये । इतिमातृकावसोर्द्धारापूजा ।

७-नान्दीश्राद्ध ।

मातृपूजा के बाद अभ्युदय वा वृद्धिश्राद्ध का क्रम है जिसे नान्दीमुख भी कहते हैं। यह माता आदि नौ का या पिता आदि छ का ही किया जाता है। इस पर ६४-६६ पृष्ठों में विचार किया जा चुका है और इसे कितने प्रकार से करते हैं इसकी भी मीमांसा वहीं की गई है। पर, इसे करेगा कौन, किस दशा में, कैसे, इन तीन बातों पर विचार करना शेष है। अतः इस विचार के बाद प्रयोग लिखेंगे। साधारण नियम यही है कि उपनयन, प्रथम विवाह आदि संस्कार में पिता ही इसे करता है और यदि वह न हो तो पितामह, जेठा भाई, चचा, मामा आदि क्रम से करें। उपनयन में जो आचार्य होता है वही करता है और आचार्य बनने का अधिकार भी क्रमसे पिता आदि को ही है। यही बात चूड़ाकरण आदि में भी और प्रथम विवाह में भी जानना चाहिये। दूसरे विवाह के समय तो जिसका विवाह होता है वही करेगा; क्योंकि पहला ही विवाह संस्काररूप था न कि दूसरा। इसलिये संस्कार के बाद स्वयं करेगा। समावर्तन के समय भी पिता का ही अधिकार है कि श्राद्ध करे। क्योंकि वही आचार्य बनता है। यदि वह न हो तो पितामह, भाई आदि करें और यदि समय पर कोई न हो तो समावर्त्तन करने वाला स्वयं करें। आज कल जहां विपरीत कालचक्रके कारण चूड़ा, उपनयन, वेदारम्भ और समावर्त्तन साथही होते हैं वहां तो जो एक का होगा वही सब के लिये होगा। क्योंकि यह भी नियम है कि जितने संस्कार या कर्म एक साथ किये जाते है उनके आदि में एकही बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गणेशपूजा, शान्तिपाठ, पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, नान्दीश्राद्ध, कलश स्थापन और नवग्रहपूजा की जाती है न कि बारबार।

यदि पिता जीवित हो और उसकी माता, पिता और नाना मर गये हों तो पुत्र के संस्कार में तीनों का श्राद्ध करे। यदि उसके पिता जीवित हों तो केवल माता आदि और मातामह आदि का ही करे। यदि माता जीवित हो तो पिता आदि और मातामहादिका; यदि माता पिता दोनों हों तो केवल मातामहादिका; यदि पिता और मातामह भी जीवित हों तो केवल माता का ही करे। मगर उस दशा में विश्वेदेव का आवाहनादि कुछ न होगा—वे न रहेंगे और यदि तीनों जीते हों तो किसी का न करे। श्राद्ध में, माता, पिता और मातामह के वर्ग हैं और अपने अपने वर्ग के आदि यही तीन हैं। यदि ये जीवित हों तो वृद्धिश्राद्ध होगा ही नहीं। केवल उनकी पूजा की जावेगी और वस्त्र आदिसे सन्तुष्ट किये जावेंगे। परन्तु पिता यदि जीवित रहने पर भी अपने पुत्र के संस्कार में किसी कारण से न रह सके तो उसकी जगह पर जो श्राद्ध करेगा वह पिता की ही तरह करेगा, अर्थात् जिन जिनका पिता श्राद्ध करता उन्हींका वह भी करेगा। यदि पिता ही श्राद्ध करने का अधिकारी हो मगर मर गया हो तो उसकी जगह जो चचा आदि श्राद्ध करें वे उस मृत पिता की माता का श्राद्ध न करें, किन्तु जिसका संस्कार हो रहा हो उस पुत्र की माता आदि का ही करें। यह हुई पिता के अधिकार की बात। लेकिन द्वितीय विवाह आदि में, जहां स्वयं पुत्रादिही अधिकारी हैं, वह उन्हीं का श्राद्ध करेंगे जिनका उनके पिता करते। तात्पर्य यह है कि यदि पिता जीता हो और माता तथा मातामह मरगये भी हों तो भी पिता की ही माता, पिता और मातामह का श्राद्ध किया जावेगा न कि श्राद्ध करनेवाले पुत्र की माता आदि का। यदि पिता का पिता भी जीता हो तो उसी पितामह के पिता, मातामह और माता से ही आरम्भ करके होगा। उनसे पहले के छूट जावेंगे चाहे मरही क्यों न गये हों। यदि प्रपितामह जीवित हो तो उसीके पिता, माता, पितामहादि से शुरू किया जायगा। पर, यदि पिताकी तरह पिताकी माता (पितामही) भी जीवित हो तो फिर उसका श्राद्ध होगा ही नहीं, छूट जायगा। इसी तरह पितामह और प्रपितामह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के जीवित रहने के साथ उनकी माताओं के भी जीवित रहने पर वह छूट ही जाता है । मातामह पक्षकी भी वही दशा होती है जो माता की । पर, यदि पिता ही मरगया हो और माता तथा मातामह जीवित हों तो केवल पिता के ही वर्ग का श्राद्ध होगा, शेष का नहीं होगा । इसमें एक बातका और भी विचार करलेना चाहिये कि यदि माता, पिता, या मातामह के वर्ग के आदि के मरे हों तबतो उनसे लेकर तीन तक का श्राद्ध होगा । मगर यदि आदिके और अन्तके मरेहों और बीच के जीवित हों तब कैसे होगा । जैसे, पिता मराहो, पितामह जीवित हो और फिर प्रपितामह चाहे जीवित हो या मृत हो । ऐसी दशा में तो सपिंडन आदि की तरह यही ठीक प्रतीत होता है कि जो जीवित हो उसीके बादके तीन का किया जावे ।

काल के बारे में यही नियम है कि साधारणतया तो वृद्धिश्राद्ध प्रातः सूर्योदय के दो दण्ड बाद ही होना चाहिये, एकोद्दिष्ट मध्याह्न में और पार्वण आदि दो पहर के बाद । आम या हिरण्यश्राद्ध में यही नियम है कि दोपहर से पहले करलिया जावे । हां, यदि रातमें ही पुत्रादि उत्पन्न हो जावें या ऐसा ही कोई वृद्धिश्राद्ध का निमित्त आजावे या दोपहर से कुछ पहले या बाद को ही, तब तो उसमें कोई नियम नहीं है । उसी समय करलेना चाहिये ।

अभ्युदय श्राद्ध यजुर्वेदियों और सामवेदियों का प्रायः एकसा ही होता है । केवल कहीं कहीं मंत्र और विभक्ति बोलने में अन्तर पड़ता है । इस बातको प्रसंग के अनुसार लिखदेंगे । सामवेदियों के यहां पितरों को आसन देने में स्वाहा कहने की रीति है और चतुर्थी विभक्ति और यजुर्वेदियों के यहां नमः कहने की चाल है और षष्ठी विभक्ति । मगर कहीं कहीं स्वाहा और चतुर्थी भी मिलती है। इसीलिये हम दोनों का एकसाही लिखेंगे । सर्वत्र इस समय यही रीति है कि यह श्राद्ध अपिण्डक ही किया जाता है और सभी श्राद्ध अपात्रकही होते हैं, सिवाय एकादशाह के एक श्राद्ध के जिसमें महापात्र रहता है । पर, अपात्रक में भी कुशका ब्राह्मण बनाकर उसेही ब्राह्मण की जगह बैठाना और समूची क्रिया सपात्रक की तरह करना चाहिये । यजमान उसी कुश ब्राह्मण को निमंत्रित करे और निमंत्रण के स्वीकार का उत्तर भी स्वयं दे लेवे । इसी तरह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और भी समझना चाहिये । कुशके ब्रह्मा की तरह ही कुशका ब्राह्मण बनाना चाहिये । इसे ही कुशबटु और कहीं कहीं कुशचटु भी कहते हैं (पृ० ३७) । यहां पर सपत्नीक पिता आदि तीन और सपत्नीक मातामहादि तीन के ही श्राद्ध की विधि लिखेंगे। पर, यदि कोई माता आदि तीन को पितादि से अलग करके करना चाहे, अर्थात् श्राद्ध में छ की जगह नौ देवता बनावे तो पहले ही मातादि को रखे और पितादि के साथ सपत्नीक शब्द न लगावे। पर, मातामहादि के साथ तो सदाही सपत्नीक शब्द रहता है। इन सभी पितरों के लिये कमसे कम एक विश्वेदेवका ब्राह्मण और एक एक दोनों दल केलिये पितर ब्राह्मण या उसकी जगह कुशबटु रहेगा। यदि माता आदि को अलग करलेवें तो एक और भी रहेगा। यदि इन तीन या चार में से एकाध ब्राह्मण रहे तो शेष को ही कुशबटु से करना चाहिये। इस श्राद्ध में अपसव्य तो कभी होगा नहीं और न बायां घुटना भूमिपर टेकना पड़ेगा जैसा कि साधारण पितृकर्म में होता है। बल्कि दाहिना घुटना टेकना और जनेऊ अपनी जगह पर (सव्य) ही रहने देना होगा। दक्षिण मुख भी न बैठना होगा, किन्तु यदि ब्राह्मणों के आसन उत्तरमुख होगये तो पूर्वमुख स्वयं और यदि पूर्वमुख ब्राह्मण हों तो स्वयं उत्तरमुख बैठे।

आसन पर बैठ कर आचमन करके. गणेश और विष्णु को प्रणाम करे-ॐ यं ब्रह्म वेदान्तविदो वदन्ति परं प्रधानं पुरुषं तथान्ये। विश्वोद्गतेः कारणमीश्वरं वा तस्मै नमो विघ्नविनाशनाय ॥ १ ॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः। सर्वविघ्नच्छिदे तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ २ ॥ शुक्लाम्बरधरं विष्णुं शशिवर्णं चतुर्भुजम्। प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ३ ॥ फिर पहले विश्वेदेव और फिर पिता आदि के ब्राह्मण को निमंत्रित करे। यद्यपि निमंत्रित करने की चाल पहले ही दिन थी, मगर अब यह बात नहीं है। इस लिये उसी दिन उसी समय यह भी काम कर लिया जाता है। पहले हाथ में जौ लेकर विश्वेदेव ब्राह्मण या कुशबटु से कहे—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्रसपत्नीक पित्रादित्रयपितामहादित्रयश्राद्धसम्बन्धिनां सत्यवसु संज्ञकानां विश्वेदेवानां कृत्ये भवान् निमंत्रितो मया। यह पढ़ कर उस आसन पर या हाथ में जौ रख देवे । यदि दो या अधिक हों तो 'भवान्' की जगह 'भवन्तौ निमंत्रितौ' वा 'भवन्तः निमन्त्रिताः' कहे। यदि ब्राह्मण हो तो उत्तर देवे-निमंत्रितोऽस्मि। दो या अधिक हों तो 'निमंत्रितौ स्वः' और 'निमन्त्रिताःस्मः' कहें। यदि न हों तो स्वयं यजमान यह कहे। यही बात आगे के निमंत्रण में भी होगी। फिर दोबारा जौ लेकर-ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धेयथानामगोत्राणां पित्रादित्रयाणां सपत्नीकानां कर्त्तव्ये भवान् निमंत्रितोमया-इसे पढ़ कर दूसरे के आसन या हाथ पर जौ रख देवे और पुनः जौ लेकर—ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्राणां मातामाहादित्रयाणां सपत्नीकानां कर्त्तव्ये भवान्निमन्त्रितोमया-कहकर तीसरे का निमंत्रण करे। यदि माता का वर्ग पृथक् हो तो पहले उसी का करे। इसके बाद पहले विश्वेदेव ब्राह्मण का पांव धोने के लिये और पीछे पितादि के ब्राह्मण के लिये पांव धोने का जल लेकर उनके पांव क्रमशः धोवे (पृ० ७४)। और यदि ब्राह्मण न हों तो कोई बात ही नहीं। फिर किसी दोना या पात्र में चन्दन, जौ कुशादि सहित जल लेकर वैश्वदेव ब्राह्मण पूर्वक पादार्घ देवे। मंत्र यह है- ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्र सपत्नीकपित्रादित्रयमातामहादित्रयसम्बन्धिनो सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवा एषवो पादाऽर्घ्यः स्वाहासम्पद्यतां वृद्धिः । मंत्र पढ़कर पांव पर वह जल गिरा देवे। फिर वैसे ही दूसरा जल लेकर-ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्राः सपत्नीकाः पितृपितामहप्रपितामहा एष पादार्घ्यः स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः-पढ़े और पितादि के ब्राह्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के पांव पर गिरा कर तीसरी बार फिर वैसाही जल लेवे और-ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्राः सपत्नीकाः मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा एष वः पादार्घ्यः स्वाहा सम्पद्यतांवृद्धिः-मंत्र पढ़ कर उस ब्राह्मण के पांव पर गिरा देवे। फिर स्वयं आचमन करके उन ब्राह्मणों को श्राद्ध स्थान में लावे। क्योंकि यह काम पहले ही कर लिया जाता है। यदि कुश बटु हों तो भी ऐसा ही करना चाहिये। श्राद्ध स्थल में आसन पर बैठा कर उन्हें आचमन करावे और कर्मपात्र के जल को और यदि वह जल न हो तो ७६ पृष्ठोक्त रीति से बनाकर श्राद्ध सामग्री पर और अपने ऊपर भी छिड़कता हुआ पढ़े-ॐ अपवित्रः पवित्रोवा सर्वावस्थां गतोऽपिवा। यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः। साथ ही विष्णु का स्मरण भी करता रहे। फिर-ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एवच। नमः स्वधायै स्वाहायै नित्यमेव नमोनमः-श्लोक को तीन बार पढ़े। इस श्लोक का उत्तरार्द्ध कई प्रकार से पढ़ा जाता है। कहीं कहीं लिखा है कि पूर्वरीति से यजुर्वेदी पढ़ते हैं और सामवेदी-नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः-ऐसा पढ़ते हैं। कोई कहते हैं कि नहीं. पहली रीति सामवेदियों की है और दूसरी रीति यजुर्वेदियों की। कुछ लोगों का कहना है कि उत्तरार्द्ध ऐसा है-नमः स्वधायै स्वाहायै नित्यमेव भवन्त्विति। (या) नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव भवन्त्विति। कुछ लोग तो ऐसे हैं जो स्वधा शब्द पढ़ते ही नहीं। वह कहते हैं कि-नमः स्वाहायै स्वाहायै नित्यमेव नमो नमः-ऐसा ही है। ऐसी दशा में कर्त्ता की इच्छा है कि चाहे जो पढ़े। इसमें सामवेदी यजुर्वेदी का कोई नियम रही नहीं जाता। इसके बाद पढ़े--ओं सप्तव्याधा दशार्णेषु मृगाः कालञ्जरे गिरौ। चक्रवाकाः शरद्वीपे हंसाः सरसि मानसाः ॥ १ ॥ तेऽपिजाताः कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेदपारगाः । प्रस्थिता दीर्घमध्वानं यूयं किमवसीदथ ॥ ॥ २ ॥ श्राद्धकाले गयां ध्यात्वा ध्यात्वा देवं गदाधरम् । मनसा च पितॄन्ध्यात्वा नान्दीश्राद्धं समारभे ॥ ३ ॥ इसके उपरान्त ५५ पृष्ठ के लेखके अनुसार धोती के एक किनारे में जौ और ३ कुश या दूब ले कर कमर की दाहिनी तरफ लपेट लेवे । इसे नीवीबन्धन कहते हैं । इसका मन्त्र यह है-ॐ सोमस्य नाविरसि विष्णोः शर्म्मासि शर्म यजमानस्येन्द्रस्य योनिरसि सुशस्याः कृषीस्कृधि । फिर पीली सरसों, जौ और दूब या कुश एक पात्र में रखकर आगे के मन्त्र को पढ़कर क्रम से पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर, अग्नि, नैर्ऋत्य, वायु, ईशान, ऊपर और नीचे सर्वत्र फेंके। इसे दिग्बंधन कहते हैं-ॐ आग्निष्वात्ता पितृगणाः प्राचीं रक्षन्तु मे दिशम् । तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरस्तथा ॥ १ ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः । विदिशश्च गणाः सर्वे रक्षन्तूर्ध्वमधोऽपि वा ॥ २ ॥ रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः । सर्वतश्चाधिपस्तेषां यमोरक्षांकरोतु मे ॥ ३ ॥ यवारक्षन्तु दितिजाद्दर्भारक्षन्तु राक्षसात् । पंक्तिं वै श्रोत्रियोरक्षेत्तिथिः सर्वरक्षकः ॥ ४ ॥ अनन्तर ॐ शूद्रादिदृष्टिनिपातदोषादामान्नादीनां पवित्रताऽस्तु-कहकर कर्मपात्र के जल को श्राद्ध के अन्नादिपर छिड़क दे । इसके बाद संकल्प-करे- ॐ अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ यथानामगोत्राणां पितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणां नांदीमुखानां तथा मातामह प्रमातामह वृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणां नांदीमुखानां प्रीतयेऽमुककर्मांगं सत्यवसंज्ञकविश्वेदेवपूर्वकं संक्षिप्तसंकल्पविधिना नान्दी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मुखश्राद्धमहं करिष्ये । ब्राह्मण उत्तर दें-ॐ कुरुष्व । फिर विश्वेदेव ब्राह्मण के क्रमसे तीन कुश या दूब के आसन हरेक को देवे और यह मंत्र पढ़े-ॐ अद्येहामुककर्मांगश्राद्धे यथानामगोत्रपितृपितामहप्रपितामहानां सपत्नीकानां नान्दीमुखानां तथा यथानामगोत्रमातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां सपत्नीकानां नान्दीमुखानां सम्बन्धिभ्यो विश्वेदेवेभ्यः सत्यवसुसंज्ञकेभ्य इदमासनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । फिर पिताआदि के लिये-ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्रेभ्यः पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो नान्दीमुखेभ्यः सपत्नीकेभ्य इदमासनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । पुनः मातामहादि के लिये-- ओं अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्रेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यः सपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्य इदमासनं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । इस तरह तीन बार पढ़कर अलग अलग आसनों पर तीन तीन कुश या दूब उत्तर ओर अग्र भाग करके रख देवे । यद्यपि यहां पर किसी किसी पद्धति में सामवेदियों के मन्त्र में कुछ फर्क है । मगर किसी किसी में ऐसा ही लिखा है । इसलिये आसानी के वास्ते हम ने भी एक प्रकार का ही लिखा है ।

इसके उपरान्त-ॐ सत्यवसुसंज्ञकेभ्यो विश्वेदेवेभ्योनान्दीमुखेभ्योऽयं गन्धः यथाविभागं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः- इत्यादि पढ़कर गन्ध, अक्षत, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य, वस्त्रादि से उनकी पूजा करे । इसी तरह-ॐ पित्रादिभ्यः सपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्योऽयं गन्धः यथाविभागं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः-इत्यादि, तथा-ॐ मातामहादिभ्यः सपत्नीकेभ्यो नान्दीमुखेभ्योऽयं गन्धः यथाविभागं स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः-इत्यादि से अलग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अलग पितादि तथा मातामहादि की पूजा करे। मन्त्र तो यही हर वार रहेगा। सिर्फ 'अयं गन्धः' की जगह। 'इमेअक्षताः, इदंपुष्पं, अयंधूपः, अयंदीपः, इदं नैवेद्यं, इदं वस्त्रं, इत्यादि पढ़ा जायगा। इसके बाद यजमान कहे कि- ॐ अर्चन-विधिः परिपूर्णोऽस्तु। ब्राह्मण होवें तो उत्तर देवें। नहीं तो स्वयं यजमानहीं उत्तर देलेवे कि- ॐ अस्तु परिपूर्णः। इसके बाद यदि पक्वान्न पूड़ी आदि तैयार हो तो वही हरेक ब्राह्मण के आगे परोसे। परन्तु परोसने से पहले हरेक भोजनपात्र के और आसन के चारों ओर आटा, भस्म या जल से ब्राह्मण चौकोना, क्षत्रिय तिकोना और वैश्य शूद्र वृत्ताकार (गोला) मण्डल बनावे। यानी इसी तरह आसन सहित भोजनपात्र को घेर देवे। यदि दूसरे की भूमि में श्राद्ध करता हो तो दक्षिणमुख होकर अपसव्यविधि से मोटक, तिल, जल लेकर संकल्प करके किसी पत्ते आदिपर उसी अन्न में से थोड़ा अन्न देवे। मन्त्र यह है-ॐ इदमन्नमेतद्भूस्वामिपितृभ्यो नमः

इसके बाद फिर सव्य होकर आचमन करके पहले विश्वेदेव के पात्र में और फिर पितादि के पात्र में अन्न परोसे। तथा उनपर जौ देवे और हरेक के पास एक एक दोने में घृत और जल भी परोसे। फिर दोनों हाथों को उतान करके विश्वेदेव के पात्र को छूकर मंत्र पढ़े-ॐ पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा ॥ इसके बाद ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्। समूढमस्य पा ँ सुरे। कृष्ण हव्यमिदं रक्ष मदीयम्-यह मंत्र पढ़ने के बाद-ॐ इदमन्नम्-कहकर दहिने हाथ का अंगूठा अन्न में लगादेवे। इसी तरह-ॐ इमा आपः-कहकर दोने के जलमें और -ॐ इदमाज्यम्- कहकर घी में और- ॐ इदं हविः कहकर पुनः अन्न में भी अंगूठा लगावे। किसी किसी का मत है कि जल और घी में अंगूठा न लगावे। सिर्फ-ॐ इमा आपः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इत्यादि पढ़भर देवे। अनन्तर हाथ में जौ लेकर—ॐ यवोऽसि यवयास्मद्द्वेषो यवयारातीः—यह मन्त्र पढ़ता हुआ जौ को भोजनपात्र पर और इधर उधर छींट देवे। और बायें हाथ से भोजनपात्र को स्पर्श किये हुए दहिने हाथ में कुश, जौ, जल लेकर मन्त्र पढ़े—ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्रसपत्नीकनान्दीमुखपित्रादित्रयमातामहादित्रयश्राद्धसम्बन्धिनो विश्वेदेवा इदमन्नं वः स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। इस प्रकार उन्हें अन्न समर्पित कर हाथ के कुशादि को उनके आसन के पास रखदेवे। फिर पिता आदि के पात्र को भी दोनों हाथ उतान कर पूर्ववत् छूवे और—ॐ पृथिवी ते पात्रं०—इत्यादि मन्त्र पूर्ववत् पढ़े। फिर ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे०—इत्यादि मंत्र को पूर्ववत् पढ़कर उसी तरह भोजन के अन्नादि में अंगूठे को लगावे। इसके उपरान्त हाथ में जौ लेकर—ॐ अपहता असुरारक्षाꣳसि वेदिषदः—इस मंत्र से अन्न के ऊपर उसे छींट देवे। इसके बाद बायें हाथ से भोजन पात्र को छूकर दहिने हाथ में कुश, जौ, जल, लेकर पढ़े—ॐ अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहा इदमन्नं वः स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः। और अन्त में आसन के पास कुशादि को रख देवे। ठीक इसी तरह मातामहादि के अन्नपात्र को छूकर मंत्र पढ़े, अंगूठा लगावे, जौ छींटे और अन्त में—ओं अद्येहामुककर्मांगनान्दीश्राद्धे यथानामगोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखा मातमहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा इदमन्नं वः स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः—पढ़कर अन्न को समर्पण कर देवे। फिर हाथ जोड़कर प्रार्थना करे—ओं अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत् तत्सर्वमाच्छिद्रमस्तु। इसके बाद तीन बार गायत्री जप कर कुशासन पर बैठा हुआ—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं मधुमधुमधु–तीन बार कहे ।

यहां तक की विधि अपिण्डक नान्दीश्राद्ध की मिथिलादि में प्रचलित रीति के अनुसार लिखी गई है । मगर और जगह सिद्ध अन्न पूड़ी आदि भी न बनाकर केवल कच्चा अन्न या उसकी जगह सोना या दूसरा द्रव्य देने की भी रीति है । इसे ही आमश्राद्ध और हिरण्यश्राद्ध भी कहते हैं । अतः जो इस तरह आमश्राद्ध करना चाहते हैं वे विश्वेदेवादि के पूजन के बाद 'अस्तु परिपूर्णः' कहला वा या कह चुकने पर कच्चा अन्न दही, जल और घृत के सहित, या उसके न रहने पर सुवर्ण या अन्य द्रव्य कोही, सामने रखकर उस का विभाग करें और जितने ब्राह्मण या कुशबटु हों उतनी जगह अलग अलग रखकर हाथ में तीन कुश जौ, जल लेकर पहले विश्वेदेव के लिये मंत्र पढ़ें–ओं अद्येहामुककर्मांग नान्दीश्राद्ध यथानामगोत्राणां सपत्नीकानां नांदीमुखानां पित्रादित्रय मातामहादित्रयाणां सम्बन्धिभ्यो विश्वेभ्योदेवेभ्य इदम मान्नं दधिघृतादिसहितं तन्निष्क्रयीभूतं हिरण्यादि द्रव्यं वा स्वाहा संपद्यतां वृद्धिः । इसी तरह पितादि तीन के लिये कुशादि लेकर मंत्र पढ़े–ओं अद्येहामुककर्मांगनांदीश्राद्धे यथानाम गोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखाः पितृपितामहप्रपितामहा इदमामान्नं दधिघृतादिसहितं तन्निष्क्रयीभूतं हिरण्यादि द्रव्यं वा यथाविभागं वः स्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः । फिर मातामहादि के लिये–ॐ अद्येहामुककर्मांगनांदीश्राद्ध यथा नामगोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखा मातामहप्रमातामहवृद्ध प्रमातामहा इदमामान्नं दधिघृतादिसहितं तन्निष्क्रयीभूतं हिरण्यादिद्रव्यं वा यथाविभागं वःस्वाहा सम्पद्यतां वृद्धिः फिर हाथ जोड़कर वही–ॐ अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं यद्भवेत् तत्सर्वमाच्छिद्रमस्तु–पढ़कर प्रार्थना करे और तीन बार गायत्री का जप करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद चाहे सिद्धान्न का श्राद्ध हो या आमान्न, अथवा हिरण्यादि द्रव्यका श्राद्ध हो-ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च-इत्यादि-यूयंकिमवसीदथ-(१३५-१३६) पर्य्यन्त पढ़े और जौ एवं दूध जल में मिलाकर कुश लेकर देवतीर्थ से तर्पण करे और मंत्र पढ़े—ॐ नान्दीमुखाः सत्यवसुसंज्ञका विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् । ओं यथानामगोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखाः पितृपितामह प्रपितामहाः प्रीयन्ताम् । ओं यथानामगोत्राः सपत्नीका नान्दीमुखा मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः प्रीयन्ताम् । फिर ब्राह्मणों से आशीर्वाद ग्रहण करे । यजमान प्रार्थना करता जावे और ब्राह्मण उत्तर देते जावें । यजमान—ओं गोत्रं नो वर्द्धताम् । ब्राह्मण—ओं वर्द्धतां वो गोत्रम् । यज० । ओं दातारो नोभिवर्द्धन्ताम् । ब्राह्मण—ओं वर्द्धन्तां वो दातारः । यजमान—ओं वेदाश्चनोऽभिवर्द्धन्ताम् । ब्राह्म० ओं वर्द्धन्तांवोवेदाः । यजमान—ओं सन्ततिर्नोऽभिवर्द्धताम् । ब्राह्मण—ओं वर्द्धतां वः सन्ततिः । यजमान—ओं श्रद्धा च नो माव्यपगमत् । ब्राह्मण- ओं माव्यपगमद्वः श्रद्धा । यजमान—ओं बहुदेयं च नोऽस्तु । ब्राह्मण—ओं अस्तु वो बहु देयम् । यजमान—ओं अन्नं च नो बहु भवेत् । ब्राह्मण—ओं बहुभवेद्वोऽन्नम् । यजमान—ओं अतिथींश्च लभामहै । ब्राह्मण—ओं लभन्तां वोऽतिथयः । यजमान—ओं याचितारश्च नः सन्तु । ब्राह्मण—ओं सन्तु वो याचितारः । यजमान—ओं एता आशिषः सत्याः सन्तु । ब्राह्मण—ओं सन्त्वेताः सत्या आशिषः । इसके बाद दक्षिणादान करे । एकही वार तीनों की दक्षिणा का द्रव्य हाथ में लेकर और उसे धोकर संकल्प करे—ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मककर्मांगनांदीश्राद्धे यथानामगोत्राणां नान्दीमुखा-
नां सपत्नीकानां पितृपितामहप्रपितामहानां माता-
महप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानां तत्सम्बंधिनां सत्यवसु
संज्ञकानां विश्वेदेवानां च प्रीतये कर्मसाङ्गुण्यार्थं तत्स
लाप्तये च इमां दाधिद्राक्षाऽमलकार्द्रकनिष्क्रयिणीं द
क्षिणां यथाविभागं दातुमहमुत्सृजे । इसे पढ़कर सब
के हाथ में दक्षिणा दे देवे । विप्र कहें 'ॐ स्वस्ति' । इसके बाद
यजमान कहे-ओं नान्दीश्राद्धं सम्पन्नम् । ब्राह्मण उत्तर दें
ओं सुसम्पन्नम् । यदि ब्राह्मण न हों तो स्वयं कहे । फि
पूर्व बांधी हुई नीवी को खोलदेवे । इसके बाद यह मंत्र पढ़क
ब्राह्मणों को उठाकर और कर्म पात्र को उनके चारों ओर घुमा
कर ब्राह्मणों का विसर्जन करे या कुशबटु की ग्रन्थि खोले-
ओं वाजे वाजे वत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः
इसके बाद आचमन करके- ओं प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवे
ताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रु
तिः ॥ १ ॥ यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु
न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ २ ॥ ओं
विष्णवेनमः । ओं विष्णवेनमः । ओं विष्णवेनमः
तीन बार कहें । इति नान्दीश्राद्ध ।

८—प्रधानकलशस्थापन और ग्रहपूजा ।

नान्दीश्राद्ध के बाद प्रधानकलशस्थापन और ग्रहपूजा
प्रसंग आता है । यह दोनों काम भी सभी कर्मों में साधारण हैं। इन
के बाद किसी भी प्रधान कर्म विवाह, उपनयनादिका आरम्भ हो
चाहिये और जानकार लोग सर्वत्र ऐसाही करते भी हैं। जैसे मा
तृकापूजा आजकल प्रायः नष्ट हो गई है और उसकी जगह के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जीवित माता की पूजा करके ही इति श्री कर दी जाती है और नान्दीमुखश्राद्ध की जगह भी केवल स्त्रियों द्वारा पितर निमंत्रण नामक एक रस्म भर रह गया है जिसमें औरतें गीत मात्र गाती हैं और दो चार पीढ़ियों के नाम ले लेती हैं। ठीक उसी तरह ग्रहपूजा और उसके प्रथम किया गया प्रधानकलशस्थापन भी नष्टप्राय हो गया है। एक बार यदि कहीं कलश का स्थापन हो गया तो फिर उसी से सदा काम चलाया जाता है। यह अत्यंत अनुचित है। प्रत्येक प्रधानकर्म का एक प्रधान कलश होना चाहिये और उसकी स्थापना उस कर्म के समय ही होनी चाहिये। चाहे आगे पीछे हजारों कलश स्थापित किये जाचुके हों तोभी यह काम अवश्य होना चाहिये। पहले नवग्रहकी वेदीपर रंगीन चूर्ण या चावल आदि से ग्रहमण्डल बनाकर उसके ईशान में प्रधान कलश की स्थापना करनी चाहिये। इसी ग्रन्थ के अन्त में नवग्रह मण्डल के दो चित्र दियेगये हैं। उन्हें देखकर जैसी इच्छा हो ग्रहमण्डल की रचना करे। पहला चित्र आसान है और अधिकतर उसका वर्णन भी नहीं मिलता और न लोग उसके अनुसार विशेष काम करते हैं। उसकी रचना की रीति यह है कि वेदीपर शुद्ध खद्दर फैलाकर उसे ढंक देवे। फिर उसपर अष्टदल (आठ पत्तोंवाला) कमल बनावे, जिसके बीच में कमलगट्टे की तरह १२ अंगुल का एक वृत्त हो और उसके किनारे किनारे फूलके आठ पत्ते या पँखुड़ियां प्रायः तिकोने आकार की हों। बीच का वृत्त सूर्य का, पूर्वका पत्ता नौ अंगुल का शुक्र का, अग्निकोन का चार अंगुलवाला चन्द्रका, दक्षिण का तीन अंगुल वाला मंगलका, नैर्ऋत्य में दस अंगुल वाला राहुका, पश्चिम में दो अंगुलवाला शनिका वायुमें छ अंगुल वाला केतु का, उत्तर में उतना हीं बड़ा गुरु का, ईशान में चार अंगुलवाला बुध का रहता है। हरेक ग्रहों के साथ उनके देवता और प्रत्यधिदेवता भी रहते हैं। सूर्य पूर्वमुख और शेष ग्रह सूर्य के सन्मुख मुखवाले माने जाते हैं। इससे ग्रहों के दहिने और बायें का पता लग जाता है। फिर हरेक के दहिने उसकी अधिदेवता और बायें प्रत्यधिदेवता स्थापित करते हैं। सूर्य के १२ अंगुल के वृत्त के चारों ओर एक अंगुल से कमहीं दूरी पर एक और वृत्त बनाकर उसीपर पत्ते बनाये जाते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी बीच की जगह में सूर्य से दक्षिण और उत्तर उनके देवता और प्रत्यधिदेवता की स्थापना की जाती है। सूर्य और मंगल लाल से चन्द्रमा, शुक्र श्वेत से; बुध, गुरु पीले से (कहीं कहीं बुध को हरा लिखा है; शनि, राहु काले से और केतु नीले से बनाया जावे नीले में कालापन कम होता है जैसे आकाश या तीसी के पत्ते में होता है। जितने बड़े हरेक पत्ते बनाये गये हैं, असल में उतने बड़े उन ग्रहों के मण्डल होते हैं। अतः पत्ते तो उनसे बड़े होने चाहियें मगर एक हाथ की वेदी में उससे अधिक स्थान न होने के कारण ऐसे ही पत्ते लिखदिये हैं। वस्तुतः तो जब १२ अंगुल का राहु मंडल पत्ते पर ही होगा तो कमसे कम हरेक पत्ता १२ अंगुल का होना चाहिये। क्योंकि फूलके सभी पत्ते बराबर ही होते हैं। इससे तो २४ अंगुल से कम लम्बी वेदी बन ही नहीं सकती। पर लोगोंने २४ अंगुल की ही लिखी है। कहीं कहीं ३४ अंगुल की भी लिखी है। इसलिये यदि ठीक ठीक मण्डल बनाना हो तो ४० अंगुल से कमकी वेदी नहीं बननी चाहिये, अस्तु। सूर्य गोलाः चन्द्र चौकोना, या अर्द्ध चन्द्राकार; मंगल तिकोना, बुध बाण के आकार का, बृहस्पति चौकोना, शुक्र पंचकोना, शनि धनुषाकार, राहु शूर्पाकार और केतु ध्वजा के आकार का होता है। जिस वर्ण का ग्रह हो उसकी पताका और उसकी पूजा के अक्षत फूल भी उसी रंग के चाहियें पर अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता के लिये सर्वत्र सफेद फूल और सफेद ही अक्षत की आवश्यकता होती है। अधिदेवता आदि के लिये पताकायें प्रायः नहीं बनाई जाती हैं। मगर यदि बनावें तो कोई हर्ज भी नहीं है। अच्छा ही है। इसके बाद उस ग्रहवेदी पर अष्टदल कमल के चारों ओर रंगसे मोटी लकीर बनाकर घेर देवें क्योंकि इसी लकीर पर दशों दिक्पालों का अपनी अपनी दिशा में आवाहन पूजनादि होता है।

कहीं कहीं वासिष्ठी आदि पद्धतियों में सर्वतोभद्र मण्डल बनाने और उसपर मण्डल की देवताओं के पूजन की बात लिखी है। देव प्रतिष्ठा में तो प्रधान वेदी पर ही सर्वतोभद्रमण्डल बनाने की रीति है और उसी पर प्रधान देवता की स्थापना की जाती है। सर्वतोभद्र मण्डल के बीच में आठदल वाला कमल बनाया जाता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर विना अष्टदल कमल के भी सर्वतोभद्र बनता है। दोनों प्रकार के चित्र ग्रन्थ के अन्त में हैं। प्रायः सर्वतोभद्र की वेदी के किनारे पर थोड़ा थोड़ा छोड़कर शेष वेदी के, जिसपर खद्दर बिछा है, १८-१८ भाग चारों ओर १६-१६ रेखाएँ पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण खींचकर करदिये जाते हैं। इस तरह कुल ३२४ घर बनजाते हैं। फिर उन्हें चित्र देखकर रंगों से भर देनेपर भद्रमण्डल तैयार हो जायगा। रंग भरने का सीधा उपाय है कि पहले चारों कोनों के तीन तीन घरों (एक कोनका और दो इधर उधर के) को श्वेत से भरकर चारों कोन वाले चार घरों के ठीक सामने कोन के ही ५-५ घरों को काले से भरे। फिर जड़ या किनारे के एक एक काले को छोड़ कर भीतर के शेष चार चार कालों के पूर्व पश्चिम उत्तर दक्षिण दो दो घर हरे से भरे। अनन्तर मण्डल के बीच के चार घरों को सफेद से भरे और उनके चारों ओर के एक एक को लाल से भर कर उन्हें घेर दे। फिर लाल के बाहर सभी ओर एक एक घर पीले से भरें। अब मण्डल के प्रत्येक कोने के तीन तीन श्वेत के बाद जो एक एक हरे हो गये हैं उन हरेक के बाद ५-५ घर लाल से भरे और फिर इन पांच पांच के ऊपर हरे से मिले तीन तीन और फिर उनके ऊपर के एक एक घर भी लाल से ही भरे। शेष चार दिशाओं के २४-२४ घरों को श्वेत से भर देने से मण्डल तैयार हो जाता है। बीच के चार घरों में अष्टदल कमल बना देते हैं तो दूसरे प्रकार का भद्र मण्डल हो जाता है। सर्वतोभद्र की वेदी मध्यवाली प्रधान वेदी ही होती है और लिंगतोभद्र की भी।

इस तरह ग्रहमण्डल और यदि सम्भव हो तो भद्रमण्डल की भी रचना करने के बाद ग्रहवेदी के ईशानकोन में प्रधान कलश की स्थापना करनी चाहिये। पहले संकल्प करना चाहिये- **ॐ अद्य यथोक्तपुण्यतिथौ प्रधानकलशस्थापनं तत्र वरुणादिदेवतावाहनपूजनं च करिष्ये।** फिर पुण्याहवाचनोक्त रीति के अनुसार ही जो १११ पृष्ठ में कलश स्थापन विधि है उसी के अनुसार यहां भी कलश स्थापन होता है। चाहे तो किसी धातु का हो या हाथ से बना मिट्टी का पात्र हो। उसके बाहर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दही, अक्षत, चन्दन से शृंगार कर के पूर्वोक्त रीति से उसे स्थापित करे। जिस भूमि पर कलश स्थापन करना हो उस पर रंग, चन्दन, हल्दी या चूर्ण से २४ दल वाला या अष्टदल कमल बनाकर उसी पर धान्यराशि आदि करे। भूमि स्पर्श करने आदि के जो जो मन्त्र वहां दिये गये हैं उन्हीं मन्त्रों से यजुर्वेदी और अपने मन्त्रों से या उन्हीं से सामवेदी सप्तधान्य की राशि करे और कलश को उस पर स्थापन आदि करे। वहां दो धान्यराशि थी। यहां एक ही रहेगी। हां, पृथिवी का स्पर्श चाहे पूर्वोक्त-ओं महीद्यौ० इत्यादि मंत्र से करे या—ओं भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृंह पृथिवीं माहिंसीः—इस मन्त्र से। परन्तु पहले उस या इस मंत्र से पृथिवी का पूजन—ओं पृथिव्यैनमः—नाम मन्त्र के साथ पञ्चोपचार से करके तब उसका स्पर्श हाथ से करे। इसके बाद वासिष्ठ में लिखा है कि कलश में गौ का गोबर लगावे, जिसका मन्त्र यह है-ओं मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः। मानो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदामित्त्वा हवामहे। पर अन्य पद्धतियों में नहीं लिखा है। इसलिये इच्छा पर निर्भर है। इसके बाद चाहे पहिले के मन्त्र-ओं ओषधयः०— से या-ओं धान्यमसि धिनुहि देवान्प्राणाय त्वोदानाय त्वा व्यानाय त्वा। दीर्घामनु प्रसितिं आयुषेधां देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोसि—इस मन्त्र से सप्तधान्य या धान जौ आदि कलश स्थापन की भूमि पर रक्खे। फिर उस पर —ओं आजिघ्र कलशं मह्या त्वा विशान्त्विन्दवः। पुनरूर्जा निवर्त्तस्व सानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्मा विशताद्रयिः— मन्त्र पढ़ कर कलश रक्खे तब कलश में जल भरे-ओं वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्यस्कम्भ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

म्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसद-नमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद। इसके उपरान्त-ओं पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसव उत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः- मन्त्र से कलश में कुश डाले। कुछ लोगों ने लिखा है कि कुश का ब्रह्मा बनाकर कलश में डाले न कि कुश और यह मन्त्र पढ़े-ओं आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः। सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्। तब चन्दन-ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्- इस मन्त्र से डालकर दूब डालने का मन्त्र-ओं काण्डात्काण्डात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि। एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च। इसके बाद सर्वौषधि और उसके न रहने पर हल्दी डालने का मन्त्र-ओं या औषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा। मनैनुबभ्रूणामह ँ शतं धामानि सप्त च। सुपारी या उसके अभाव में नारियल डालने का मंत्र-ओं याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः। बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वँहसः। फिर दूध डाले-ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः। पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम्। दही डाले-ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं जिष्णोरश्वस्य वाजिनः। सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूँषितारिषत्॥ तब घी डाले-ॐ घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मधु दुघे सुपेशसा । द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्म्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥ कलश में यह दूध, दही और घी डालना किसी किसी के मत से है । इसके उपरान्त पंच पल्लव डाले- ओं अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता । गोभाज इत्किलासथ यत्सनवथ पूरुषम् ॥ सप्तमृत्तिका डाले- ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्म सप्रथाः ॥ पंचरत्न-ओं परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे । यदि पञ्चरत्न न हो तो सोना ही डाला जाता है । फिर सोना या उसके अभाव में दूसरा द्रव्य डाले- ओंहिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्यजातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम फिर नवीन धोये वस्त्र या दोहरे लाल तागे को कलश में लपेटे और मन्त्र पढ़े-ओं यदश्वायवास उपस्तृणन्त्यधीवासं या हिरण्यान्यस्मै । सन्दानमर्व्वन्तं पड्वीशं प्रियादेवेष्वायाम यन्ति अथवा पहले का-ओं सुजातो ज्योतिषा०-मंत्र ही पढ़े । इसके बाद- ओं पूर्णा दर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्ज ५ शतक्रतो-इस मन्त्र को पढ़कर अन्न से भरा कोई छोटा पात्र या दोना कलश के ऊपर रक्खे यद्यपि वासिष्ठी आदि में कलश के पास दीप जलाने की भी बात लिखी है । पर, वह कलश का अंग नहीं है । इसीसे वहां भी कलश पर रखने को नहीं लिखा है । जो प्रधान कर्मापवर्ग दीप जलाया जाता है उसीसे वहां भी तात्पर्य है । इसके बाद वरुण का आवाहन हाथ में अक्षत या फूल लेकर करे-ओं तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः । अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश ५ समान आयुः प्रमोषीः । ओं भूर्भुवः स्वः वरुणायनमः अस्मिन्कलशे सांगं सपरि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वारं सशक्तिकं वरुणमावाहयामि । यह मन्त्र पढ़ कर अक्षत या फूल कलश पर छोड़दे । सामवेदियों केलिये कलश के स्थापनमें विशेषता है । यद्यपि पूर्वोक्त विधि से भी काम चल जाता है । फिर भी जो अलग करना चाहते हैं उनके लिये स्पष्ट विधि लिख देना आवश्यक है । पूर्ववत् संकल्प करके कलश को पूर्ववत् दधि, अक्षत, चन्दनादि से सुसज्जित कर और यदि उचित तथा आचारप्राप्त होतो उसमें-ओं मानस्ताक०-इत्यादि पूर्वोक्त मन्त्र से गोबर का स्पर्श कर स्थापन की भूमिपर अष्टदल कमल चूर्ण या हल्दी आदि से बनावे । फिर-ॐ इदं भूमेर्भजामहे इदं भद्राँ सुमंगलम् । परासपत्नान्बाधस्व अन्येषां विन्दतेधनम्-इस मन्त्र को-ओं भूम्यैनमः-इस नाम मन्त्र के साथ मिलाकर भूमि की पञ्चोपचार पूजा करके इसी-ओं इदं भूमे० मन्त्र से भूमिका स्पर्श करे । फिर उसी भूमि पर सप्तधान्य या जौ आदि जमा करे और मन्त्र पढ़े-ओं धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् । इन्द्र प्रातर्जुषस्व नः । तब उसी अन्न राशिपर कलश रक्खे-ओं आविशन्कलश ँ सुतो विश्वो अर्षन्नभिश्रियः । इन्दुरिन्द्राय धीयते ॥ उसमें जल भरे-ॐ इमंमे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके । फिर यदि कुश डालना हो तो १४१ वें पृष्ठ के-ओं पवित्रे स्थो० मन्त्र से उसमें डालदेवे । और-ओं गंधद्वारां० आदि वहीं के मन्त्र से चन्दन और-ओं काण्डात्काण्डात्० मन्त्र से दूब डालकर-ओं अयमूर्जावते वृक्ष ऊर्जीव फलिनी भव । पर्णं वनस्पतऽनु त्वामूयत ँ रयिः-इस मन्त्र से सुपारी या और कोई फल डाले । फिर-ओं अग्निमीडे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतार ँ रत्नधातमम्-इस मन्त्र से पञ्चरत्न और उसके अभाव में सुवर्ण डाले । फिर यदि सुवर्ण या उसके अभाव में और द्रव्य डालना हो तो पूर्वका-ओं हिरण्यगर्भः०-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्त्र पढ़कर डाले। तब-ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म सप्रथो देवान्मा भयात्- इस मन्त्र से सप्तमृत्तिका डालकर-ओं ओषधेत्रायस्वैनम्- इसे पढ़ कर सर्वौषधि और उसके अभाव में हल्दी डाले। ओं वनस्पते वीड्वंगो हि भूया अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः। गोभिः सन्नद्धो असि वीडयस्व आस्थाता ते जयतु जेत्वानि- इससे पंच पल्लव डालकर-ओं अभिवस्त्रा सुवसनान्यर्षानिधेनूः सुदुघाः पूयमानः। अभिचन्द्राभर्त्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान् रथिनो देवसोम-इस मन्त्र को पढ़ कर वस्त्र या लाल सूत से दो बार कलश को लपेटे। ओं सघातं वृषणं रथमधितिष्ठातिगोविदम्। यः पत्रं हारियोजनं पूर्णमिन्द्राचिकेतति यो जान् विन्द्रते हरी-इस मंत्र से कलश के ऊपर अन्न से पूर्ण कोई छोटा बर्त्तन या दोना रख देना चाहिये। फिर वरुण का आवाहन करे। पहले विनियोग पढ़े-इमम्मेवरुणेति प्रस्कण्व ऋषिर्गायत्री छन्दो वरुणो देवता वरुणावाहने विनियोगः। विनियोग तो केवल पढ़ ही लिया जाता है। फिर अक्षत लेकर वरुण का आवाहन करे-ओं इमंमे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके। ॐ वरुणाय नमः भूर्भुवः स्वः वरुणं सांगं सपरिवारं सशक्तिकमंत्रावाहयामि-इतना पढ़ कर कलश पर अक्षत छोड़ देवे।

इसके बाद के आवाहन पूजनादि में कोई अन्तर नहीं है। इसलिये दोनों की एक ही विधि लिखते हैं। वरुण के आवाहन के बाद कलश के अधिष्ठाता देवों का आवाहन करे और अनामिका अंगुली से छूकर कलश का अभिमन्त्रण करे। परन्तु बहुत सी पद्धतियों में इसे भी कलश के देवताओं का आवाहन हीं लिखा है। इसलिये हाथ में अक्षतादि लेकर और अनामिका से कलश को छूकर पढ़े-ओं सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ १ ॥ कलशस्यमुखे विष्णुः कंठे रुद्रः समाश्रितः । मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः॥२॥ कुक्षौ तु सागराः सर्वे सप्तद्वीपा वसुन्धरा । ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ॥ अंगैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥ ३ ॥ अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा । आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरितक्षयकारिकाः ॥४॥ गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे सिन्धुकावेरि कलशं सन्निधिं कुरु ॥ ५ ॥ ओं कलशाधिष्ठातृदेवताभ्योनमः भूर्भुवः स्वः कलशाधिष्ठातृदेवता आवाहयामि । इतना पढ़कर उस अक्षत को कलश में डाल देवे । यदि नवग्रहों की वेदी न हो तो अधिदेवता प्रत्यधिदेवता के साथ उनका भी कलश में ही—ओं अधिदेवताप्रत्यधिदेवतादिसहितेभ्य आदित्यादिनवग्रहेभ्यो नमः भूर्भुवः स्वः अधिदेवताप्रत्यधिदेवतादिसहितानादित्यादिनवग्रहानावाहयामि—पढ़कर अक्षत से आवाहन करलेवे । फिर हाथ में अक्षत या पुष्प लेकर उन देवताओं की स्थापना करे—ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु । विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ । ओं भूर्भुवः स्वः वरुणसहिताः कलशाधिष्ठातृदेवता इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु—यह मंत्र पढ़कर फूल या अक्षत कलश में डाल देवे । फिर— ओं भूर्भुवः स्वः वरुणादिकलशाधिष्ठातृदेवताभ्यो नमः—इस मंत्र से पूर्व के महागणपतिपूजनादि में प्रदर्शित षोडशोपचार से—इदमासनम्, (या) आसनं समर्पयामि—इत्यादि पूजा करे । अथवा—एषगन्धः, (या) गन्धं समर्पयामि—इत्यादि पञ्चोपचार पूजा करे । फिर कलश के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देवताओं द्वारा उसकी प्रार्थना करे-ओं देवदानवसम्वादे मथ्यमाने महादधौ । उत्पन्नोसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥ १ ॥ त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः । त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥ २ ॥ शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवाः सपैतृकाः । त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि ये च कामफलप्रदाः ॥३॥ त्वत्प्रसादादिमं यज्ञं कर्तुमीहे जलोद्भव । सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥ ४ ॥ इति प्रधानकलशस्थापन ।

इसके बाद ग्रहों का स्थापन पूजनादि करना चाहिये । यदि कलश में हीं ग्रहों का आवाहन किया हो तब तो जिस तरह से उनका आवाहन किया हो उसी तरह उनका पूजन भी ओं भूर्भुवः स्वः आदित्याय साधिदैवतप्रत्यधिदैवताय नमः । ओं भूर्भुवः स्वः चन्द्राय साधिदैवतप्रत्यधिदैवताय नमः-इत्यादि नाममंत्रों से क्रमशः कलशाधिष्ठात देवताओं की पूजा के बाद कर लेवे । परन्तु यदि ग्रहों की वेदी अलग होवे तो उस वेदी पर अलग अलग ग्रहों का आवाहन और पूजन करना ठीक है । ग्रहों की पूजा की दो रीति है । एक तो यह कि अधिदेवता प्रत्यधिदेवता के साथ एक ही बार एक एक ग्रह का आवाहन किया जाता है । दूसरा यह कि पहले प्रत्येक ग्रहों का; फिर उनकी अधिदेवता का, फिर उनकी प्रत्यधिदेवता का । इनमें दूसरी रीति अधिक दीर्घ और कष्टसाध्य है । इस लिये हम पहली ही रीति के अनुसार प्रत्येक ग्रह का आवाहन लिखना चाहते हैं । हां, विनायकादि षोडश लोक पाल और इन्द्रादि दस दिकपाल का आवाहन दोनों पक्ष में अलग ही किया जाता है । इस लिये हम भी वैसाही करेंगे पहले संकल्प करे-ओं अद्ययथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभ पुण्यतिथौ अमुककर्मणः निर्विघ्नसमाप्तये तदंगत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदित्यादिनवग्रहाणामधिदैवतप्रत्यधिदैवतलोकपालदिक्पालसहितानामावाहनपूजनादि करिष्ये । फिर एक हाथ में लाल फूल और अक्षत और दूसरे में सफेद लेकर ग्रह मण्डल के मध्य में सूर्य और उनकी अधिदेवता प्रत्यधिदेवता का आवाहन करे—ॐ सप्तम्यां विशाखान्वितायां कलिंगे जातं कश्यपगोत्रं लोहितवर्णं वर्त्तुलाकृतिं मण्डलमध्यस्थं प्राङ्मुखं द्विभुजं पद्महस्तं सप्ताश्वरथवाहनं क्षत्रियाधिपतिमीश्वराधिदैवताग्निप्रत्यधिदैवतसहितं सूर्यमावाहयामि ॐ भूर्भुवः स्वः ईश्वराग्निसहितसूर्याय नमः इहागच्छ । ओं आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च । हिरण्ययेन सविता रथेना देवोयाति भुवनानि पश्यन् । ईश्वराग्निसहितसूर्य इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष । यह पढ़कर सूर्य मण्डल पर लाल पुष्प और अक्षत गिरा कर उनके दहिने ईश्वर और बायें अग्नि पर सफेद फूल और अक्षत गिरावे । आवाहन के समय एक हाथ में लाल रक्खे और एक में सफेद । इसी तरह आगे भी सर्वत्र एक हाथ में सफेद ही रहेगा । क्योंकि अधिदेवता प्रत्यधिदेवता के लिये श्वेत ही सर्वत्र रहता है ॥१॥ फिर दोनों हाथों में श्वेत पुष्प और अक्षत लेकर सूर्य से अग्नि कोनमें चन्द्र का और उनके अधिदैवत उमा और प्रत्यधिदैवत जल का आवाहन करे—ॐ चतुर्दश्यां कृत्तिकान्वितायां समुद्रेजातमत्रिगोत्रं श्वेतवर्णं चतुरस्राकृतिमर्द्धचन्द्राकृतिं वा मण्डलात्पूर्वदक्षिणदिक्स्थं पश्चिमाभिमुखं दशाश्वरथवाहनं विशांपतिमुमाधिदैवतजलप्रत्यधिदैवतसहितंचन्द्रमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः उमाजलसहितचन्द्रायनमः इहागच्छ । ॐ इमं देवा असपत्नꣳ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यैष्ठ्याय महते जान-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

राज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इममसुष्य पुत्रमस्यै विश एष
वोऽमी राजा सोमोऽस्माकं ब्राह्मणाना ँ राजा
उमाजलसहितचन्द्र इहातिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष–यह म
पढ़ पहले चन्द्र पर, फिर दहिने उमा और बायें जल पर पु
अक्षत, रखदेवे । सर्वत्र अधिदैवत प्रत्यधिदैवत के लिये
अक्षत, सुपारी या फूल रख देना चाहिये और उसी पर आवाह
करना चाहिये, जैसी रीति अन्यत्र बताई गई है ॥ २ ॥ फिर
हाथ में लाल और दूसरे में सफेद फूल और अक्षत लेकर सूर्यसे दहि
अधिदैवत स्कन्द, प्रत्यधिदैवत पृथ्वी सहित मंगल का आवाहन
ओं दशम्यां पूर्वाषाढान्वितायामवयन्त्यां जातं भारद्वा
गोत्रं रक्तवर्णं त्रिकोणं मण्डलाद् दक्षिणदिग्विभाग
उत्तराभिमुखं मेषवाहनं क्षत्रियाधिपतिं स्कन्दा
दैवतक्षितिप्रत्यधिदैवतसहितं भौममावाहयामि
भूर्भुवः स्वः स्कन्दक्षितिसहितभौमायनमः इहागच्छ
ओं अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम
अपा ँ रेता ँ सि जिन्वति– यह मंत्र पढ़कर भौम पर ल
और उनके दहिने बायें सफेद पुष्प, अक्षत रख देवे ॥ ३ ॥ पीले
हरे और सफेद पुष्प, अक्षत लेकर सूर्य के ईशान में नारायण
विष्णु अधिदैवत प्रत्यधिदैवत सहित बुध का आवाहन करे–
द्वादश्यां धनिष्ठान्वितायां मगधदेशे जातमात्रिगोत्रं ह
द्वर्णं पीतवर्णं वा बाणाकृतिं मण्डलात् पूर्वोत्तरस्थं सू
भिमुखं शूद्राधिपतिं नारायणाधिदैवतविष्णुप्रत्य
दैवतसहितं बुधमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः ना
यणविष्णुसहितबुधायनमः इहागच्छ । ओं उद्बुध्यस्व
ग्नेप्रतिजागृहि त्वमिष्टापूर्त्ते स ँ सृजेथामयं च । अस्मि
न्सधस्थे अध्युत्तरस्मिन्विश्वेदेवा यजमानश्च सीद
नारायणविष्णुसहितबुध इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह पढ़कर बुध पर पीला या हरा और दहिने बायें श्वेत पुष्प, अक्षत रख देवे ॥ ४ ॥ पीले और सफेद पुष्प, अक्षत को लेकर ब्रह्मा अधिदेवता, इन्द्र प्रत्यधिदेवता के सहित सूर्य से उत्तर बृहस्पति का आवाहन करे—ओं एकादश्यामुत्तराफाल्गुनीयुतायां सिन्धुदेशेजातमांगिरसगोत्रं गोरोचनाभं दीर्घचतुष्कोणाकृतिं मण्डलादुत्तरस्थितं सूर्याभिमुखम् सिंहवाहनं ब्रह्माधिदैवतेन्द्रप्रत्यधिदैवतसहितं गुरुमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मेन्द्रसहितगुरवेनमः इहागच्छ । ओं बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभातिक्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् । ब्रह्मेन्द्रसहितगुरो इहतिष्ठ इमंयज्ञमभिरक्ष— यह मंत्र पढ़कर बृहस्पति पर पीला और उनके दहिने बायें श्वेत पुष्प अक्षत रख देवे ॥ ५ ॥ श्वेत पुष्प अक्षत लेकर इन्द्र अधिदैवत और इन्द्राणी प्रत्यधिदैवत के साथ सूर्य से पूर्व शुक्र का आवाहन करे—ओं नवम्यां पुष्ययुतायां भोजकदेशजातं भार्गवगोत्रं शुक्लवर्णं पञ्चकोणंमण्डलात्पूर्वदिक्स्थं सूर्याभिमुखं श्वेताश्ववाहनमिंद्राधिदैवतेन्द्राणीप्रत्यधिदैवतसहितंशुक्रमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्रेन्द्राणी सहितशुक्रायनमः भगवन् इहागच्छ । ओं अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मणा व्यपिबत्क्षत्रंपयः सोमंप्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रियं विपानं शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतम्मधु । इन्द्रेन्द्राणीसहितशुक्र इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष— यह मंत्र पढ़कर शुक्र, इन्द्र और इन्द्राणी पर अक्षत रख देवे ॥ ६ ॥ बिल्वपत्र काला और श्वेत पुष्प अक्षत लेकर यम अधिदैवत प्रजापति प्रत्यधिदैवत के सहित सूर्य से पश्चिम शनैश्चर का आवाहन करे—ओं अष्टम्यां रेवतीयुतायां सौराष्ट्रेजातं काश्यपगोत्रं लोहवर्णं धनुरा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृतिं मण्डलात्पश्चिमस्थं सूर्याभिमुखं गृध्रवाहनं संकर-जातिं यमाधिदैवतप्रजापतिप्रत्यधिदैवतसहितं शनिमा-वाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः यमप्रजापतिसहितशनयेनमः भगवन्निहागच्छ । ओं शन्नोदेवीरभिष्टय आपो भव-न्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः । यमप्रजापतिसहितशने इहातिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष—यह पढ़कर बिल्वपत्र, काला अक्षत और फूल शनि पर और सफेद यम, प्रजापति के ऊपर रख देवे ॥ ७ ॥ काला सफेद पुष्प और अक्षत लेकर काल अधिदैवत सर्प प्रत्यधिदैवत के सहित राहु का सूर्य के नैऋत्य कोन में आवाहन करे—ओं पौर्णमास्यां भरणीयुतायां बर्बरे जातं पैठीनसिगोत्रं कृष्णवर्णं शूर्पाकृतिं मण्डलात्पश्चिमदक्षिण-दिक्स्थं सूर्याभिमुखं शूद्राधिपतिं कालाधिदैवतसर्पप्रत्य-धिदैवतसहितं राहुमावाहयामि ओं भूर्भुवः स्वः काल-सर्पसहितराहवेनमः भगवन्निहागच्छ । ओं कयान-श्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा। कयाशचिष्ठया वृता। कालसर्पसहित राहो इहातिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष-पढ़कर काला अक्षत राहु पर और श्वेत काल, सर्प पर रख देवें ॥ ८॥ नीला, श्वेत फूल और अक्षत लेकर सूर्य से वायु में केतु का आवाहन करे।यदि नीला न हो तो काला ही सही । केतु का अधिदैवत चित्रगुप्त और प्रत्यधिदैवत ब्रह्मा है-ॐअमावास्यायामाश्लेषान्वि-तायामन्तर्वेद्यां जातं जैमिनिगोत्रं धूम्रवर्णं ध्वजाकृतिं कपो-तवाहनमंत्यजाधिपतिंमण्डलात्पश्चिमोत्तरस्थं सूर्याभिमु-खं चित्रगुप्ताधिदैवतब्रह्मप्रत्यधिदैवतसहितकेतुमावाहया-मि ॐ भूर्भुवः स्वः चित्रगुप्तब्रह्मसहितकेतवेनमः केतो इहा-गच्छ । ओं केतुंकृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे। समुष-द्भिरजायथाः । चित्रगुप्तब्रह्मसहितकेतो इहातिष्ठ इ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यज्ञमभिरक्ष–पढ़कर काला (नीला) अक्षत केतु पर और श्वेत चित्रगुप्त तथा ब्रह्मा पर क्रमशः रख देवे ॥ ९ ॥ इति ग्रहावाहन ॥

फिर विनायकादि पञ्चलोकपाल और वास्तोष्पति, क्षेत्रपाल का आवाहन उसी ग्रहमण्डल में करे। हाथमें अक्षत और फूल लेकर राहु के उत्तर विनायक का आवाहन सुपारी या अक्षतादि में करे–ओं गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणां त्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनां त्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम। आहमजानिगर्भधमा त्वमजासि गर्भधम्। ओं भूर्भुवः स्वः विनायकायनमः विनायक इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥१॥ शनि से उत्तर दुर्गाका आवाहन करे–ओं अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काम्पीलवासिनीम्। ओं भूर्भुवः स्वःदुर्गायैनमः दुर्गेइहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥२॥ सूर्य से उत्तर वायुका–ॐ वातो वा मनो वा गन्धर्वा सप्तविँ शतिः। ते अग्रे अश्वमयुञ्जँस्ते आस्मिञ्जवमादधुः। ओं भूर्भुवः स्वः वायवेनमः वायो इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ३ ॥ राहु से दक्षिण आकाश का–ओं ऊर्ध्वा अस्य समिधो भवन्त्यूर्ध्वा शुक्रा शोचीँ ष्यग्नेः। द्युमत्तमा सुप्रतीकस्य सूनोः। ॐ भूर्भुवः स्वः आकाशायनमः आकाश इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥४॥ केतु से दक्षिण अश्विनीकुमारोंका–ॐ यां वां कशा मधुमत्यश्विनामूनृतावती। तया यज्ञं मिमिक्षतम्। ओं भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यांनमः अश्विनौ इहागच्छतम् इह तिष्ठतम् इमं यज्ञमभिरक्षतम् ॥५॥ गुरु से उत्तर वास्तोष्पतिका–ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान् स्वावेशो अनमीवो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भवानः । यत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शन्ना भव द्वि
शं चतुष्पदे । ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः वास्तो
ष्पते इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ६
वास्तोष्पति से उत्तर क्षेत्राधिपति का-ओं भूर्भुवः स्व
क्षेत्राधिपतयेनमः क्षेत्राधिपते इहागच्छ इहतिष्ठ इ
यज्ञमभिरक्ष ॥ ७ ॥ सभी का आवाहन श्वेत पुष्प और अक्ष
से ही करना चाहिये । आगे भी ऐसा ही सर्वत्र होगा । ज
विशेष प्रकार का अक्षत होगा वहां कह देंगे । इति लोका
लाद्यावाहन ।

ग्रहमण्डल के चारों ओर वेदीपर जो रेखा खींची गई है उसी
दसों दिशाओं में दस दिक्पालों का अक्षत पुष्प लेकर क्रम
आवाहन करना चाहिये । पूर्व में इन्द्रका- ओं त्रातारमि
मवितारमिन्द्र ँ हवे हवे सुहव ँ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि
शक्रं पुरुहूतमिन्द्र ँ स्वस्ति नो मघवा दधात्विन्द्र
ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ इ
यज्ञमभिरक्ष ॥१॥ अग्नि में अग्निका-ॐ अग्निं दूतं पुरोद
हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँ आसादयादिह । ॐ भूर्भुवः स्वः अ
ग्नयेनमः अग्ने इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥
दक्षिण में यमका-ॐ असियमो अस्यादित्योऽअर्वन्नसि वि
तो गुह्येन व्रतेन । असि सोमेन समया विपृक्त आहु
त्रीणि दिवि बन्धनानि । ओं भूर्भुवः स्वः यमाय न
यम इहागच्छ इह तिष्ठ इम यज्ञमभिरक्ष ॥ ३
नैर्ऋत्य में निर्ऋतिका-ॐ एष ते निर्ऋते भागस्तं जुषस्व
ओं भूर्भुवः स्वः निर्ऋतयेनमः निर्ऋते इहागच्छ इहति
इमं यज्ञमभिरक्ष ॥४॥ पश्चिम में वरुण का-ओं इमंमे वरु
श्रुधी हवमद्याच मृडय । त्वामवस्युराचके । ओं भूर्भु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वः वरुणाय नमः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ इमंयज्ञमभिरक्ष ॥५॥ वायव्य में वायु का-ओं वातो वा मनोवा गन्धर्वाः सप्तवि ँ शतिः । ते अग्रे अश्वमयुञ्जँस्ते अस्मिन् जवमादधुः । ॐ भूर्भुवः स्वः वायवेनमः वायो इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ६ ॥ उत्तर में कुवेर या सोम का-ओं वयं सोमव्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि । ओं भूर्भुवः स्वः कुबेरायनमः कुबेर इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥७॥ ईशानमें ईश (महादेव)का-ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषा नो यथा वेद सामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये । ओं भूर्भुवः स्वः ईशायनमः ईश इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥८॥ पूर्व और ईशानके बीचमें ब्रह्माका-ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोवेन आवः। सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्च विवः । ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमाभिरक्ष ॥ ९ ॥ पश्चिम, नैर्ऋत्य के मध्य में अनन्त का-ओं नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्प्पेभ्यो नमः। ओं भूर्भुवः स्वः अनन्त इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥१०॥ इति दशदिक्पालावाहन ।

इसी तरह सब का आवाहन सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों करते हैं । सिर्फ किसी किसी सामवेदी पद्धति में लोकपालों के आवाहन में भेद है । वहां चारही लोकपाल लिखे हैं । सो भी, उग्रसेन, डामर, महाकाल और अश्विनीकुमार इन चारों को क्रम से ग्रहमण्डल की पूर्व आदि दिशाओं में मानते हैं । इसलिये यदि उसके मुताबिक किसी को करना हो तो ग्रहमण्डल के किनारे की रेखा पर चारों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिशाओं में -ओं भूर्भुवः स्वः उग्रसेनायनमः उग्रसेनमावाहयामि । ओं भूर्भुवः स्वः डामरायनमः डामरमावाहयामि । ओं भूर्भुवः स्वः महाकालायनमः महाकालमावाहयामि । ओं भूर्भुवः स्वः अश्विभ्यांनमः अश्विनौ आवाहयामि- इन्हीं चार मन्त्रों से क्रम से पूर्व, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर चारों का आवाहन करे और सब मंत्रों के अन्त में- इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष- कहता जावे शेष वास्तोष्पति आदिका ज्यों का त्यों रहेगा ।

इस तरह सभी का आवाहन करने के बाद हाथ में अक्षत लेकर एकही बार नवग्रह से लेकर दिक्पाल तक सभी की प्राणप्रतिष्ठा करे । उसका मन्त्र-ओं एतन्त देव सवितर्यज्ञं प्राहुर्बृहस्पतये ब्रह्मणे । तेन यज्ञमव तेन यज्ञपतिं तेन मामव । मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञं समिमं दधातु । विश्वेदेवास इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ ओं भूर्भुवः स्वः आदित्यादिनवग्रहाः सांगाः सपरिवाराः सवाहना अधिदेवताप्रत्यधिदेवताविनायकादि पञ्चलोक (यदि सामवेदियों ने चार का किया हो तो-उग्रसेनादि चतुर्लोक-ऐसा कहें) पालवास्तोष्पतिक्षेत्राधिपतीन्द्रादिदशदिक्पालसहिताः सुप्रतिष्ठितावरदा भवन्तु यह पढ़कर सभी पर उस अक्षत को डाले । फिर सभी देवताओं का ध्यान करे-ओं पद्मासनः पद्मकरो द्विबाहुः पद्मद्युतिः सप्ततुरंगवाहनः । दिवाकरो लोकगुरुः किरीटी मयि प्रसादं विदधातु देवः ॥ १ ॥ ओं श्वेताम्बरः श्वेतविभूषणश्च श्वेतद्युतिर्दण्डधरो द्विबाहुः । चन्द्रोऽमृतात्मा वरदः किरीटी श्रेयांसि मह्यं विदधातु देवः ॥ २ ॥ ओं रक्ताम्बरो रक्तवपुः किरीटी चतुर्भुजो मेषगमो गदाभृत् । धरा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुतः शक्तिधरश्च शूली सदा मम स्याद्वरदः प्रशान्तः ॥३॥ ओं पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दण्डधरश्च हारी । चर्मासिभृत्सोमसुतः सदा मे सिंहाधिरूढो वरदो बुधोऽस्तु ॥ ४ ॥ ओं पीताम्बरः पीतवपुः किरीटी चतुर्भुजो देवगुरुः प्रशान्तः । दधाति दण्डं च कमण्डलुं च तथाऽक्षसूत्रं वरदोऽस्तु मह्यम् ॥ ५ ॥ ओं श्वेताम्बरः श्वेतवपुः किरीटी चतुर्भुजो दैत्यगुरुः प्रशान्तः । तथाक्षसूत्रं च कमण्डलुं च दण्डं च बिभ्रद्वरदोऽस्तु मह्यम् ॥६॥ ओं नीलद्युतिः शूलधरः किरीटी गृध्रस्थितस्त्रासकरो धनुष्मान् । चतुर्भुजः सूर्यसुतः प्रशान्तः सदास्तु मह्यं वरमन्दगामी ॥ ७ ॥ ओं नीलाम्बरो नीलवपुः किरीटी करालवक्त्रः करवालशूली । चतुर्भुजश्चर्मधरश्च राहुः सिंहाधिरूढो वरदोऽस्तु मह्यम् ॥ ८ ॥ ओं धूम्रो द्विबाहुर्वरदो गदाभृत् गृध्रासनस्थो विकृताननश्च । किरीटकेयूरविभूषितांगः सदास्तु मे केतुगणः प्रशान्तः ॥ ९ ॥

इस प्रकार नवग्रहों का ध्यान करने के बाद शेषका एकही साथ ध्यान करे–ओं अन्ये किरीटिनः कार्या वरदाभयपाणयः ।

इस प्रकार सबका ध्यान कर चुकने के बाद–ओं भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्योनमः आसनं समर्पयामि । ओं भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्योनमः पाद्यं समर्पयामि । इत्यादि रीति से, आचमनं समर्पयामि, स्नानं०, आचमनं०, वस्त्रं०, यज्ञोपवीतं०, गन्धं०, अक्षतं०, पुष्पं०, धूपं०, दीपं, नैवेद्यं०,आचमनं०, फलं०, ताम्बूलं०, नीराजनं समर्पयामि–पूजा करे और–ओं भूर्भुवः स्वः आदित्यादिनवग्रहेभ्योनमः तत्तद्वर्णपताकाः समर्पयामि–इस मंत्र से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिस रंग का जो ग्रह हो उस रंग की पताका उसे समर्पित करदे। अथवा ग्रहों और दिक्पालादि के जो वैदिक मन्त्र होम प्रकरण में पढ़े हैं उन मंत्रों से अलग अलग पूजन करे। परन्तु हरेक वैदिक मंत्र के अन्त में- ॐ भूर्भुवः स्वः आदित्याय नमः—इत्यादि व्याहृति सहित नाम-मंत्र लगादेवे या केवल ही नाम मंत्र लगावे। अथवा हरेक ग्रह तथा अन्यान्य देवताओं का केवल—ओं आदित्याय नमः। (या)—ओं भूर्भुवः स्वः आदित्याय नमः—इत्यादि मंत्रों से ही पूजन करे। ग्रहों के साथ उनके अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता का भी आवाहन करते गये हैं। इसलिये हरेक ग्रहकी पूजा के साथही उसके अधिदेवता प्रत्यधिदेवता की भी पूजा करता जावे जैसा आगे लिखा है। तात्पर्य यह है कि जिस क्रम से आवाहन करे उसी क्रम से पूजा भी करे। हां, यदि पहले केवल ग्रहों का आवाहन करे, तब तो फिर प्रत्येक के अधिदेवता का आवाहन करके पीछे हरेक के प्रत्यधिदेवता का आवाहन करे। और जब ऐसा करे तो फिर उसी क्रम से पूजा भी करे। पहले जो आवाहन लिखा है वह अधिदेवतादि के साथ ही प्रत्येक ग्रह का है। इसलिये प्रत्येक का नाममंत्र भी साथ साथ लिखते हैं और जिस क्रमसे लिखते हैं पूजा भी वैसे ही करे। यदि चाहे तो नाम मंत्र के पहले व्याहृति-(भूर्भुवः स्वः) लगालेवे। नवग्रहों के नाममंत्र—(१) ओं आदित्याय नमः। (२) ओं ईश्वराय नमः। (३) ओं अग्नये नमः। (१) ओं सोमाय नमः। (२) ओं उमायै नमः। (३) ओं जलाय नमः। (१) ओं भौमाय नमः। (२) ओं स्कन्दाय नमः। (३) ओं भूम्यै नमः। (१) ओं बुधाय नमः। (२) ओं नारायणाय नमः। (३) ओं विष्णवे नमः। (१) ओं गुरवे नमः। (२) ओं ब्रह्मणे नमः। (३) ओं इन्द्राय नमः। (१) ओं शुक्राय नमः। (२) ओं इन्द्राय नमः। (३) ओं इन्द्राण्यै नमः। (१) ओं शनैश्चराय नमः। (२) ओं यमाय नमः। (३) ओं प्रजापतये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नमः। (१) ओं राहवे नमः। (२) ओं कालाय नमः। (३) ओं सर्पेभ्यो नमः। (१) ओं केतवे नमः। (२) ओं चित्रगुप्ताय नमः। (३) ओं ब्रह्मणे नमः॥ पंच लोकपाल—(१) ओं विनायकाय नमः (२) ओं दुर्गायै नमः (३) ओं वायवे नमः (४) ओं आकाशाय नमः (५) ओं अश्विभ्यां नमः॥

(१) ओं वास्तोष्पतये नमः (२) ओं क्षेत्राधिपतये (क्षेत्रपालाय) नमः॥ दशदिक्पाल—(१) ओं इन्द्राय नमः (२) ओं अग्नये नमः (३) ओं यमाय नमः (४) ओं निर्ऋतये नमः (५) ओं वरुणाय नमः (६) ओं वायवे नमः (७) ओं कुबेराय (सोमाय) नमः (८) ओं ईशानाय नमः (९) ओं ब्रह्मणे नमः (१०) ओं अनन्ताय नमः। इन्हीं मंत्रों से चाहें तो पञ्चोपचार पूजा कर सकते हैं या षोडशोपचार पूजा।

इसके बाद दोनों हाथ जोड़ और उसमें फूल लेकर सभी ग्रहों के लिये पुष्पाञ्जलि देवे—ओं ब्रह्मा मुरारिस्त्रिपुरान्तकारी भानुः शशी भूमिसुतो बुधश्च। गुरुश्च शुक्रः शनिराहुकेतवः सर्वेग्रहाः शान्तिकराभवन्तु॥ १॥ सूर्यः शौर्यमथेन्दुरुच्चपदवीं सन्मंगलं मंगलः। सद्बुद्धिं च बुधो गुरुश्च गुरुतां शुक्रःशुभं शं शनिः। राहुर्बाहुबलं करोतु सततं केतुःकुलस्योन्नतिं। नित्यं प्रीतिकरा भवन्तु मम ते सर्वेऽनुकूला ग्रहाः॥ २॥ इतना पढ़कर हाथ का फूल नवग्रहों तथा अन्यान्य देवताओं पर रखदेवे और दोनों हाथ जोड़ प्रार्थना करके प्रणामकरे—ओं आयुश्च वित्तं च तथा सुखं च धर्मार्थलाभौ बहुपुत्रतां च। शत्रुक्षयं राजसु पूज्यतां च तुष्टाग्रहाः क्षेमकरा भ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वन्तु ॥ अनया पूजया आवाहिता देवाः प्रीयन्ताम् ।
फिर ग्रहपूजा की दक्षिणा का संकल्प करे-ओं अद्य पूर्वोक्तवि-
शेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकशर्म्माहम् अ-
मुककर्मणि सवरुणादित्यादिग्रहाणामधिदैवतप्रत्यधिदैव-
तविनायकादिपंचलोकपालवास्तोष्पतिक्षेत्रपालेन्द्रादिद-
शादिक्पालसहितानां पूजायाः सांगतासिद्धये इमां
दक्षिणाममुकपरिमितां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय
दास्ये ओं तत्सन्नमम । यह पढ़कर पूजा कराने वाले को दक्षिणा
दे देवे और वह लेकर कहे- ओं स्वस्ति । दक्षिणा दान के बाद
यजमान कहे—ओं एतद्ग्रहाद्यर्चनं परिपूर्णमस्तु । ब्राह्मण
का उत्तर-ओं अस्तु परिपूर्णम् । इति नवग्रह पूजा ।

यदि सर्वतोभद्रमण्डल हो तो उसकी देवताओं की पूजा ग्रह
पूजा के बाद करे । पहले संकल्प करे-ओं अद्ययथोक्तविशेषण
विशिष्टायां तिथौ सर्वतोभद्रमण्डलदेवतानामावाहन
पूजनादि करिष्ये । तब हाथ में अक्षत और फूल ले-
(१) मध्यमें ब्रह्मा का इस मंत्र से आवाहन और स्थापन करे-
ओं त्वं वै चतुर्मुखो ब्रह्मा सत्यलोके पितामहः । आगच्छ
मण्डले चास्मिन्मम सर्वार्थसिद्धये ॥ ओं भूर्भुवः स्व
ब्रह्मन् इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ १
फिर आठ दिक्पालों में से ब्रह्मा के सामने उत्तर किनारे पर
(२) सोमका अक्षत पुष्प से आवाहन करे- ओं क्षीरोदा-
र्णवसम्भूत लक्ष्मीबन्धो निशाकर । मण्डले स्था-
पयाम्यत्र सोमं सर्वार्थसिद्धये ॥ ओं भूर्भुवः स्व
सोम इहागच्छ इह तिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ १
हरबार मन्त्र पढ़कर पुष्प अक्षत आवाहन के स्थान पर रख दे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिये । मण्डल के ईशान कोन में सोम की ही सीध में (३) ईशानका-ओं ईशानीपालकं श्रेष्ठं सर्वलोकभयंकरम् । मण्डले स्थापयामीह ईशानं सर्वसिद्धये ॥ ओं भूर्भुवः स्वः ईशान इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ३ ॥ ब्रह्मा के सामने पूर्व किनारे पर (४) इन्द्रका—ओं सर्वलोकाधिकं श्रेष्ठं देवर्षीणां च पालकम् । पूर्वदिक्पालकं देवराजानं स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ४ ॥ अग्निकोन में (५) अग्निका—ओं त्रिपादं मेषवाहं च त्रिशिखं च त्रिलोचनम् । आग्नेय्यां स्थापयाम्यत्र ह्यग्निं पुरुषमुत्तमम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः अग्ने इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ५ ॥ ब्रह्मा के सामने दक्षिण में (६) यमका—ओं अन्तकः सर्वलोकानां धर्मराज इति श्रुतः । अतस्त्वां स्थापयाम्यत्र दक्षिणस्यां स्थिरोभव ॥ ओं भूर्भुवः स्वः यम इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ६ ॥ नैर्ऋत्य कोन में (७) निर्ऋति का—ओं नैर्ऋत्यां वसतिर्यस्य घोररूपी सदा हि यः । निर्ऋतिं स्थापयाम्यत्र नैर्ऋत्यां मण्डले शुभे ॥ ओं भूर्भुवः स्वः निर्ऋते इहागच्छ इहतिष्ठ इमं यज्ञमभिरक्ष ॥ ॥ ७ ॥ ब्रह्मा के सामने पश्चिम में (८) वरुण का—ओं अपां पतिं पाशधरं यादसां पतिमुत्तमम् । वरुणं स्थापयाम्यत्र वारुण्यां मण्डले शुभे ॥ ओं भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ८ ॥ वायु कोन में—(९) वायु का—ओं आशुगं स्पर्शबोधं च गन्धवाहं सुशीतलम् । मण्डले स्थापयामीह वायव्यां वायुमुत्तमम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः वायो इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ९ ॥ इस प्रकार ब्रह्मा के सहित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आठ दिक्पालों के आवाहन और स्थापन के बाद अब हरदो दि-
क्पालों के बीच में एक एक देवता का आवाहन करे । पहले वायु
और सोम के बीच में (१०) आठ वसुओं का-ओं धरोध्रुवश्च
सोमश्चाप्याशुगश्चानलो नलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च व-
स्वष्टकमिह स्थिरम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः वसव इहागच्छत
इहतिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ १० ॥ सोम ईशान के बीच में
(११) रुद्र का-ओं त्रिनेत्राय त्रिरूपाय त्रिजटाय महात्मने।
नमस्कृत्य स्थापयामि मण्डलोपरि मध्यतः ॥ ओं भूर्भुवः
स्वः रुद्र इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ११ ॥ ईशान इन्द्र के
बीच में (१२) द्वादश आदित्यों का-ओं आदित्यं भास्करं
चैव प्रभाकरादिवाकरौ । सूर्य ग्रहपतिं चैव ब्रध्नं तेजो हि-
डारिम् । सप्ताश्वंवेदमूर्त्तिंच त्रिदैवत्यं क्रमेणच । इत्यादि
द्वादशादित्यान्मण्डले स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः
आदित्या इहागच्छत इहतिष्ठत०॥१२॥ इन्द्र, अग्नि के बीच में
(१३) अश्विनीकुमारों का-ओं अश्विनौ देववैद्यौ च सर्ग-
स्थित्यंतकारकौ । मण्डले स्थापयित्वा तु पूजयामीष्ट
सिद्धये ॥ ओं भूर्भुवः स्वः अश्विनौ इहागच्छतम् इह
तिष्ठतम् इमं यज्ञमभिरक्षतम् ॥ १३ ॥ अग्नि, यम के मध्य में
(१४) विश्वेदेव का- ओं दैवे कर्माणि पित्र्ये च ये मुख्या
सर्वदा शुभाः । मण्डले स्थापयामीह सुखानुष्ठानसिद्ध
ये ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विश्वेदेवा इहागच्छत इह तिष्ठत
इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ १४ ॥ यम निर्ऋति के मध्य में (१५
यक्षों का-ओं यदृच्छया पर्यटन्ति यक्षराजा महातले
कौतुकं प्रेक्षितुं चास्मिन्मण्डले सन्तु सुस्थिराः । ओं
भूर्भुवः स्वः यक्षा इहागच्छत इहतिष्ठत० ॥ १५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निर्ऋति, वरुण के मध्य में (१६) नागों का-ओं अनन्तो वासुकिश्चैव कालीयो मणिभद्रकः । शंखश्च शंखपालश्च कर्कोटकधनंजयौ । धृतराष्ट्रश्च नागेशा प्रगृह्णन्तु ममार्चनम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः नागा इहागच्छत इहतिष्ठत० ॥ १६ ॥ वरुण वायु के मध्य में (१७) गन्धर्व और अप्सराओं का-ओं उर्वशीप्रमुखाः सर्वाः स्वर्वेश्याः शक्रपूजिताः । गन्धर्वैश्च सहायान्तु मण्डलेऽस्मिन्सुशोभनाः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः गन्धर्वाप्सरस इहागच्छत इहतिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ ॥ १७ ॥ ब्रह्मा और सोम के बीच वाले सफेद के मध्य में (१८) स्कन्द का-ओं षडाननं चतुर्हस्तं स्कन्दं गौरीसुतं शुभम् । इहैव पूजयिष्यामि सर्वकामार्थसिद्धये । ॐ भूर्भुवः स्वः स्कन्द इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ १८ ॥ स्कन्द के पास ही उत्तर ओर (१९) नन्दी का-ओं महादेवासने मुख्ये सर्वसिद्धिप्रदायकम् । आवाहयाम्यहं देवं वृषभं सर्व पूजितम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः नन्दिन् इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ १९ ॥ नन्दी से उत्तर पास में ही (२०) त्रिशूल का-ॐ दुष्टारिघातने दक्षं शिवबाहुविराजितम् । आवाहयामि तं शूलं शस्त्रराजं महोज्ज्वलम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः शूल इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ २० ॥ शूल से उत्तर पास में ही (२१) महाकाल का-ओं नित्यं च शाश्वतं शुद्धं ध्रुवमक्षरमव्ययम् । सर्वव्यापिनमीशानं रुद्रं वै विश्वरूपिणम् । ओं भूर्भुवः स्वः महाकाल इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥२१॥ ब्रह्मा और ईशान के मध्य के हरे में (२२) दक्षका-ओं दक्षोऽसि सर्वकार्येषु महायज्ञकरः प्रियः । ऋषिश्च सर्वदा दक्ष मण्डलेऽस्मिन् स्थिरो भव ॥ ओं भूर्भुवः स्वः दक्ष इहागच्छ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इहतिष्ठ० ॥ २२ ॥ ब्रह्मा और इन्द्रके मध्यके श्वेतमें (२३) दुर्गा का-ओं तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं सर्वदा शुभाम् भक्तानां वरदां नित्यं दुर्गामावाहयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः दुर्गे इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ २३ ॥ दुर्गा से पूर्व (२४) विष्णु (कृष्ण) का-ओं कृष्णाय गोपीनाथाय चक्रिणे मुरवैरिणे । नमस्तुभ्यं जगद्धातर्मण्डलेऽस्मिन् स्थिरो भव ॥ ओं भूर्भुवः स्वः कृष्ण इहागच्छ इहतिष्ठ०॥२४॥ ब्रह्मा और अग्नि के बीच के हरे में (२५) स्वधा का-ओं कव्यमादायसततं पितृभ्यो या प्रयच्छति । तिष्ठत्युदीच्यां दिश्यर्कछविमावाहयाम्यहम्॥ओं भूर्भुवः स्वः स्वधे इहागच्छ इहतिष्ठ०॥२५॥ ब्रह्मा और यम के मध्य के श्वेत में (२६) मृत्यु, रोगों का-ओं मृत्युरोगानन्तकस्य प्रेष्यान्प्राणहरान् गणान् । मण्डले स्थापयामीह पूजार्थं लोकनाशनान् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः मृत्युरोगा इहागच्छत इहतिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ २६ ॥ ब्रह्मा और निर्ऋति के मध्य के हरे में(२७) गणेश का-ओं कुंकुमाभं सदानन्दं भक्तसंकटनाशनम् । चतुर्बाहुं त्रिनेत्रंच मण्डले स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः गणेश इहागच्छ इह तिष्ठ इमंयज्ञमभिरक्ष ॥ २७ ॥ ब्रह्मा और वरुण के मध्य के श्वेत में (२८) आप (जल) का—ओं पावनाः सर्वलोकानां निमग्नाः शुद्धिकारकाः । सर्वपापहराः श्रेष्ठा मण्डले स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः आप इहागच्छत इह तिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ २८ ॥ ब्रह्मा और वायु के बीच के हरे में (२९) मरुतों का-ओं सुगन्धिनश्च शैलाग्रा मन्दमन्दवहाः सदा । तानहं स्थापयामीह मरुतो मण्डले शुभे ॥ ओं भूर्भुवः स्वः मरुत इहागच्छत इह तिष्ठ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ २९ ॥ ब्रह्मा के पांव के मूल में (ब्रह्मा के ही श्वेत और लाल मण्डल में उत्तर ओर) (३०) पृथ्वी का-ओं पृथिव्याधार्यते सर्वं दुर्ग्रहं सागरैर्नरैः। अतस्त्वां स्थापयामीह ब्रह्मणो मण्डले पदे ॥ ओं भूर्भुवः स्वः पृथिवि इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ३०॥ पृथिवी से उत्तर ब्रह्मा के मण्डल में ही (३१) नदियों का-ओं गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति। नर्मदे सिन्धुकावेर्यौ मण्डले स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः सप्तसरित इहागच्छत इह तिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥ ३१ ॥ नदियों से उत्तर (३२) सप्तसागरों का-ओं क्षारेक्षुरसमद्योदान्घृतोदक्षीरकोदकौ । दधिमण्डोदशुद्धोदौ सप्तैतान्स्थापयाम्यहम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः सप्तसागरा इहागच्छत इहातिष्ठत इमं यज्ञमभिरक्षत ॥३२॥ सागरों के पास ही उत्तर ओर (३३) मेरु का-ओं भूर्भुवःस्वः मेरवे नमः मेरो इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ३३ ॥ फिर बाहर क्रम से हरेक दिक्पाल के पास उसके अस्त्र गदा आदिका आवाहन करे। (३४) उत्तर में गदा का- ओं भूर्भुवः स्वः गदायै नमः गदे इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ३४ ॥ ईशान कोन में त्रिशूल का-ओं भूर्भुवः स्वः त्रिशूलायनमः त्रिशूल इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ (३५) पूर्व में वज्र का-ओं भूर्भुवः स्वः वज्रायनमः वज्र इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ (३६) अग्नि में शक्ति का-ओं भूर्भुवः स्वः शक्त्यैनमः शक्ते इहागच्छ इह तिष्ठ० ॥ (३७) दक्षिण में दण्ड का-ओं भूर्भुवः स्वः दण्डायनमः दण्ड इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ (३८) नैर्ऋत्य में तलवार का-ओं भूर्भुवः स्वः खड्गायनमः खड्ग इहागच्छ इह तिष्ठ० ॥ (३९) पश्चिम में पाश (सर्पाकार फांसे) का-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं भूर्भुवः स्वः पाशाय नमः पाश इहागच्छ इ
तिष्ठ० ॥ (४०) वायव्य में अंकुश का-ॐ भूर्भुवः स्
अंकुशाय नमः अंकुश इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ फि
अस्त्रों के बाहर क्रम से सप्तर्षि और अरुन्धती का आवाहन करे
उत्तर में (४१) गौतम का-ओं भूर्भुवः स्वः गौतमाय नम
गौतमइहागच्छइहातिष्ठ० ॥ ईशान में (४२) भारद्वाज क
ओं भूर्भुवः स्वः भारद्वाजायनमः भारद्वाज इहागच्छइ
तिष्ठ० ॥ पूर्व में (४३) विश्वामित्र का-ओं भूर्भुवः स्वः वि
श्वामित्राय नमः विश्वामित्र इहागच्छ इहातिष्ठ०
अग्नि में (४४) कश्यप का-ॐ भूर्भुवः स्वः कश्यपाय न
कश्यपइहागच्छ इहातिष्ठ० ॥ दक्षिण में (४५) जमदग्नि क
ओं भूर्भुवः स्वः जमदग्नये नमः जमदग्ने इहाग
इहातिष्ठ० ॥ नैर्ऋत्य में (४६) वसिष्ठ का-ओं भूर्भुवः स्
वसिष्ठाय नमः वसिष्ठ इहागच्छ इहातिष्ठ० ॥ पश्चिम
(४७) अत्रि का-ओं भूर्भुवः स्वः अत्रये नमः अत्रे इह
गच्छ इहातिष्ठ० ॥ वायव्य में (४८) अरुन्धती का-
भूर्भुवःस्वः अरुन्धत्यै नमः अरुन्धति इहागच्छ इहातिष्ठ०
फिर इन ऋषियों से भी बाहर पूर्व से लेकर क्रमशः आठ शक्तियों
आवाहन करे । पूर्व में (४९) ऐन्द्री का-ओं भूर्भुवः स्
ऐन्द्र्यै नमः ऐन्द्रि इहागच्छ इहातिष्ठ० ॥ अग्नि में (५
कौमारीका-ओं भूर्भुवः स्वः कौमार्यैनमः कौमारि इह
गच्छ इहातिष्ठ० ॥ दक्षिण में (५१) ब्राह्मीका-ओं भूर्भु
स्वः ब्राह्म्यै नमः ब्राह्मि इहागच्छ इहातिष्ठ० ॥ नैर्ऋत्य
(५२) वाराही का-ओं भूर्भुवः स्वः वाराह्यै नमः वा
हि इहागच्छ इह तिष्ठ० ॥ पश्चिम में (५३) चामुण्डा क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं भुर्भुवः स्वः चामुण्डायै नमः चामुण्डे इहागच्छ इह तिष्ठ० ॥ वायव्य में (५४) वैष्णवी का-ओं भूर्भुवः स्वः वैष्णव्यै नमः वैष्णवि इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ उत्तर में (५५) माहेश्वरी का-ओं भूर्भुवः स्वः माहेश्वर्य्यै नमः माहेश्वरि इहागच्छ इहतिष्ठ० ॥ ईशान में (५६) वैनायकी का-ओं भूर्भुवः स्वः वैनायक्यै नमः वैनायकि इहागच्छ इह तिष्ठ० ॥ इस प्रकार ५६ देवताओं का आवाहन और स्थापन करे। यद्यपि उनकी संख्या ५६ हो गई है तथापि २० वां और ३५ वां एकही देवता त्रिशूल है। इसलिये २० वें और ३५ वें को, एक नाम होने से, एकही न समझने से ५६ हीं रहजाते हैं। आवाहन के समय चित्र से काम लेना चाहिये। भद्रमण्डल में मध्यके श्वेत चार और उनके चारों ओर के रक्त १२ यही १६ ब्रह्माका मण्डल है। कहीं कहीं इन्हीं १६ या श्वेत चार मेंहीं अष्टदल कमल बना देते हैं। ब्रह्ममण्डल के चारों ओर पीली परिधि कहाती है। किनारे किनारे कोने में तीन श्वेत घर अर्द्धचन्द्र या खण्डेन्दु कहाते हैं। हर अर्द्धचन्द्र और परिधि के बीच के ५-५ काले घरोंका नाम शृंखला और उनके इधर उधर जो दो दो घर हरे हैं उनको वल्ली कहते हैं। वल्ली के इधर उधर ९-९ लाल घर भद्र और शेष चार दिशाओं के २४-२४ श्वेत घर वापी कहाते हैं। दूसरे भद्रों में भी यह संज्ञा काम करेगी। जहां जहां देवताओं का आवाहन करना है चित्र में वहां वहां देख लेना चाहिये। इससे आसानी होगी। वासिष्ठीमें जो देवताओं का आवाहन लिखा है वह ठीक नहीं मालूम होता है। इसीसे अन्यान्य ग्रन्थों को मिलाकर उसी आधार पर यहां लिखा है।

आवाहन और स्थापन के बाद हाथ में पुष्प और अक्षत लेकर एकही बार सबकी प्राण प्रतिष्ठा करे-ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमं दधातु। विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ। ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मादि षट्पंचाशद्देवताभ्यो नमः इमा देव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ताः इहागच्छन्तु सुप्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु ॥ फिर—ओं भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो ब्रह्मादिदेवताभ्यो नमः आसनं समर्पयामि । पाद्यं समर्पयामि । अर्घ्यं० । आचमनं० स्नानं० । आचमनं० । वस्त्रं० । यज्ञोपवीतं० । गन्धं० अक्षतं० । पुष्पं० । धूपं० । दीपं० नैवेद्यं० । आचमनं० ताम्बूलं० । पूगीफलं० । पुष्पांजलिं० ॥ इस रीति से एकत्र साथ सबकी पूजा करे । प्रत्येक वस्तु के अर्पण में-ओं भूर्भुवः देवताभ्योनमः । यह व्याहृति सहित अथवा उससे रहित केवल नाम मंत्र बोले और ५६ स्थानों में हरेक वस्तु चढ़ाता जाय । फिर ओं यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च । तानि तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिणपदेपदे । ओं भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्यो नमः—कहकर प्रदक्षिणा करे और अन्त में—ओं अनया पूजया ब्रह्मादिषट्पञ्चाशद्देवताः प्रीयन्ताम्—कहकर दोनों हाथ जोड़कर प्रणाम करे । इसके बाद दक्षिणा का संकल्प करे— ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां तिथौअमुककर्मांगतया सर्वतोभद्रदेवतापूजासांगतार्थं अमुकपरिमितां दाक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दास्ये ॥ और उसे पूजा करने कराने वाले को देकर-ओं एतत्सर्वतोभद्रदेवतापूजनं परिपूर्णमस्तु—ऐसा कहे और ब्राह्मण उत्तर देवें कि-ओं अस्तु परिपूर्णम् ॥ विष्णुआदि की प्रतिष्ठा में वा सर्वतोभद्र और रुद्रआदि की प्रतिष्ठा में लिंगतोभद्र रहता है । उसकी भी पूजा प्रायः इसी रीतिसे होती है । इति सर्वतोभद्रपूजा ।

इसके उपरान्त मण्डप के वायव्यकोन में बनी हुई क्षेत्रपाल की वेदीपर ६४ योगिनी और ४९ क्षेत्रपालों की पूजा भी कहीं कहीं लिखी है । परन्तु सर्वत्र क्षेत्रपाल की अलग पूजा नहीं लिखी गई है इसलिये यदि क्षेत्रपाल की वेदी हो तो उसकी पूजा की विधि योगिनी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

की पूजा के सहित जानलेना आवश्यक है। क्षेत्रपाल की वेदी के दो भाग करके पूर्वके आधे में ६४ योगिनियों के ६४ घर और पश्चिम के आधे में ४९ क्षेत्रपालों के ४९ घर बनावे। योगिनी के लिये वेदी का जो भाग है उसके उत्तर दक्षिण और पूर्व पश्चिम प्रत्येक किनारे को ८-८ भाग में बांट कर हर भाग पर से एक एक रेखा खींच दे। इस तरह हर ओर से ९-९ रेखाएं होंगी और कुल ६४ घर। इसी तरह क्षेत्रपालवाले भाग के प्रत्येक किनारे को ७-७ भाग में बांटकर हर भाग से रेखाएं खींचे। इसमें हर ओर ८-८ रेखायें होंगी और कुल ४९ घर। चित्र रचना ग्रन्थ के अन्त में देखलेना चाहिये। वेदी के चारों ओर किनारे पर थोड़ी थोड़ी जगह छोड़ देनी चाहिये। पहले योगिनीपूजा और फिर क्षेत्र-पालपूजा होती है। पहले दोनों का संकल्प एकही साथ करे-ओं अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुककर्मा-गतया योगिनीक्षेत्रपालानां पूजनममुकशर्माहं करिष्ये ॥ फिर पहले योगिनियों का नाममंत्र से आवाहन करें और हरेक के साथ ॐ के बाद महाव्याहृति लगालेवे-(१) ओं भूर्भुवः स्वः दिव्ययोगिन्यै नमः दिव्ययोगिनीमावाहयामि (२) ओं भूर्भुवः स्वः महायोगिन्यैनमः महायोगिनीमावाहयामि। (३) ॐ भूर्भुवः स्वः सिद्धयोगिन्यैनमः सिद्धियोगिनीमा-वाहयामि (४) ओं-गणेश्वर्य्यैनमः गणेश्वरीमा० (५) ओं प्रेताक्ष्यैनमः प्रेताक्षीमा० (६) ओं डाकिन्यै नमः डाकिनीमा० (७) ओं काल्यैनमः कालीमा० (८) ॐ कालरात्र्यै नमः कालरात्री० (९) ॐ निशाचर्य्यै-नमः निशाचरी० (१०) ॐ हंकार्यैनमः हंकारी० (११) ॐ सिद्धिवेताल्यैनमः सिद्धिवेताली० (१२) ॐ हींकार्यैनमः हींकारी० (१३) ॐ भूतडामर्यैनमः भूतडामरी० (१४) ॐ ऊर्ध्वकेश्यै नमः ऊर्ध्वकेशी० (१५) ओं विरूपाक्ष्यैनमः विरूपाक्षी० (१६) ओं शुष्कांग्यैनमः शुष्कांगी० (१७)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं नरभोजिन्यैनमः नरभोजिनी० (१८) ओं फूत्का
र्यैनमः फूत्कारी० (१९) ओं वीरभद्रायैनमः वीरभद्रा
(२०) ओं धूम्राक्ष्यैनमः धूम्राक्षी० (२१) ओं काल
प्रियायैनमः कालप्रिया० (२२) ओं राक्षस्यैनमः राक्ष
सी० (२३) ओं घोरराक्षस्यैनमः घोरराक्षसी० (२४
ओं विश्वरूपिण्यैनमः विश्वरूपिणी० (२५) ओं भय
कर्यैनमः भयंकरी० (२६) ओं विशालाक्ष्यैनमः विशाला
क्षी० (२७) ओं वीरकौमार्यैनमः वीरकौमारी० (२८
ओं चण्ड्यैनमः चण्डी० (२९) ओं वाराह्यैनमः वारा
ही० (३०) ओं मुण्डधारिण्यैनमः मुण्डधारिणी० (३
ओं भैरव्यै नमः भैरवी० (३२) ओं चक्रिण्यै नमः
चक्रिणी० (३३) ओं क्रोधायैनमः क्रोधा० (३४
ॐ दुर्मुख्यैनमः दुर्मुखी० (३५) ॐ प्रेतवाहिन्यैनमः
प्रेतवाहिनी० (३६) ॐ कुरंग्यैनमः कुरंगी० (३७
ओं प्रलम्बोष्ठ्यैनमः प्रलम्बोष्ठी० (३८) ओं मालिन्यै
नमः मालिनी० (३९) ओं मंत्रयोगिन्यैनमः मंत्रयोगिनी
(४०) ओं कालाग्र्यैनमः कालाग्री० (४१) ओं मोहि
न्यैनमः मोहिनी० (४२) ओं वक्रायैनमः वक्रा० (४३)
कुंडलिन्यैनमः कुंडलिनी० (४४) ओं बालक्यैनमः बाल
की० (४५) ओं कौमार्यैनमः कौमारी० (४६) ओं यमदू
नमः यमदूती० (४७) ओं करालिन्यैनमः करालिनी
(४८) ओं कौशिक्यैनमः कौशिकी० (४९) ओं
याक्षिण्यैनमः याक्षिणी० (५०) ओं भक्षिण्यैनमः भक्षि
णी० (५१) ओं कुमारिकायैनमः कुमारिका० (५२
ओं यंत्रवाहिन्यैनमः यंत्रवाहिनी० (५३) ओं विश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लाक्ष्यैनमः विशालाक्षी० (५४) ओं कामुक्यैनमः कामुकी० (५५) ओं व्याघ्र्यैनमः व्याघ्री० (५६) ओं रक्ताक्ष्यैनमः रक्ताक्षी० (५७) ओं प्रेतभक्षिण्यैनमः प्रेतभक्षिणी० (५८) ओं धूर्जट्यैनमः धूर्जटी० (५९) ओं विकटायैनमः विकटा० (६०) ओं घोरायैनमः घोरा० (६१) ओं कपालिन्यैनमः कपालिनी० (६२) ओं विमलायैनमः विमला० (६३) ओं मालायैनमः माला० (६४) ओं सर्वसिद्धायैनमः सर्वसिद्धामावाहयामि ॥

फिर अक्षत लेकर—मनोजूतिर्जुषता०—मन्त्र से एकसाथही प्राणप्रतिष्ठा करके अलग अलग आवाहन क्रम से ही—ॐ भूर्भुवः स्वः दिव्ययोगिन्यै नमः—इत्यादि नाममन्त्रों से षोडशोपचार या पंचोपचार पूजा करे और—ॐ अनया पूजया चतुःषष्ठियोगिन्यः प्रीयन्ताम्—इस मन्त्र से प्रार्थना करके प्रणाम करे। इति योगिनीपूजा।

फिर क्षेत्रपालों का आवाहन प्रत्येक नाममंत्रों से ही करे और ॐ के बाद सर्वत्र—भूर्भुवः स्वः—लगालेवे और अन्त में 'आवाहयामि' लगाताजावे—(१) ॐ भूर्भुवः स्वः अजरायनमः अजरमावाहयामि (२) ॐ आपकुंभायनमः आपकुम्भ० (३) ॐ इन्द्रस्तुतयेनमः इन्द्रस्तुति० (४) ॐ ईडाचारायनमः ईडाचार० (५) ॐ उक्तसंज्ञायनमः उक्तसंज्ञ० (६) ॐ ऊष्मादायनमः ऊष्माद० (७) ॐ ऋषिसूदनायनमः ऋषिसूदन० (८) ओं ऋमुक्तायनमः ऋमुक्त० (९) ॐ लृप्तकेशायनमः लृप्तकेश० (१०) ॐ लृपकायनमः लृपक० (११) ॐ एकदंष्ट्रायनमः एकदंष्ट्र० (१२) ॐ ऐरावतायनमः ऐरावत० (१३) ॐ ओघबंधवेनमः ओघबन्धु० (१४) ॐ औषधीशायनमः औषधीश०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१५) ॐ अंजनायनमः अंजन० (१६) ॐ अस्त्रवा
रायनमः अस्त्रवार० (१७) ॐ कवलायनमः कवल
(१८) ॐ खरुखानलायनमः खरुखानल० (१९) ॐ
गामुख्यायनमः गामुख्य० (२०) ॐ घंटादायनम
घटाद० (२१) ॐ डमनसेनमः डमनस० (२२
ॐ चण्डवारणायनमः चण्डवारण० (२३) ॐ छटाटो
पायनमः छटाटोप० (२४) ॐ जटलायनमः जटल
(२५) ॐ झंगीवायनमः झंगीव० (२६) ॐ अडश्वरा
नमः अडश्वर० (२७) ॐ टंकपाणयेनमः टंकपाणि
(२८) ॐ ठानबन्धवेनमः ठानबन्धु० (२९) ॐ डामरा
यनमः डामर० (३०) ॐ ढक्कारवायनमः ढक्कारव
(३१) ॐ णवार्णवायनमः णवार्णव० (३२) ॐ तडि
देहायनमः तडिद्देह० (३३) थिरायनमः थिर० (३४
ॐ दन्तुरायनमः दन्तुर० (३५) ओं धनदायनमः धनद
(३६) नात्तिक्तांतायनमः नात्तिक्तांत० (३७) ओं प्रच
डकायनमः प्रचंडक० (३८) ओं फट्कारायनमः फट
कार० (३९) वीरसंघायनमः वीरसंघ० (४०) ओं
भृंगायनमः भृंग० (४१) ओं मेघभासुरायनमः मेघ
भासुर० (४२) युगांतायनमः युगांत० (४३) रौद्र
वायनमः रौद्रव० (४४) ओं लम्बोष्ठायनमः लम्बोष्ठ
(४५) ओं वसवायनमः वसव० (४६) ओं शूकनदा
नमः शूकनद० (४७) ओं षडालायनमः षडाल० (४
ओं सुनाम्नेनमः सुनामान० (४९) ओं हंब्रुकायनम
हंब्रुकमावाहयामि ॥

फिर—ओं मनोजूति०—मन्त्र से प्राणप्रतिष्ठा करके—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूर्भुवः स्वः क्षेत्रपालेभ्योनमः—इस नाम मंत्र से एक ही साथ सबकी पूजा करे, या अलग अलग पूर्वोक्त नाममन्त्रों से ही करे। भरसक षोडशोपचार करे। नहीं तो पंचोपचार ही करे। तब—ॐ भ्राजच्चन्द्रजटाधरं त्रिनयनं नीलांजनाद्रिप्रभं, दोर्दण्डात्तगदाकपालमरुणस्रग्गन्धवस्त्रोज्ज्वलम्। घंटामेखलघर्घरध्वनिलसज्झंकारभीमं विभुं, वन्दे संहितसर्पकुण्डलधरं श्रीक्षेत्रपालं सदा—इसे पढ़कर प्रार्थना करे। अन्त में ज्यादा उड़द और भात की बलि लेकर एकही बार योगिनी और क्षेत्रपाल को बलि देता हुआ पढ़े—ॐ योगिन्यः क्षेत्रपालाश्च सर्वे यत्र समागताः। नगरे वाथ ग्रामे वा ह्यटव्यां सरितस्तथा ॥ १ ॥ ते सर्वे चैव सन्तुष्टा बलिं गृह्णन्तु मे सदा। शरणागतोऽस्म्यहं तेषां सर्वे ते मम सुप्रदाः॥ २ ॥ बलिदानेन सन्तुष्टाः प्रयच्छन्तु ममेप्सितम्। सर्वकार्याणि कुर्वन्तु दोषांश्च घ्नन्तु मे सदा। ३ ॥ फिर दक्षिणा का संकल्प करे—ओं अद्य यथोक्त विशेषणविशिष्टायां तिथौ अमुककर्मांगतया कृतयोगिनीक्षेत्रपालपूजासांगतासिध्यर्थममुकपरिमितां दक्षिणाममुकशर्म्माहं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दास्ये ॥ दक्षिणा देकर—ॐ एतद्योगिनीक्षेत्रपालपूजनं परिपूर्णमस्तु—ऐसा कहे। ब्राह्मण उत्तर दें—ओं अस्तु परिपूर्णम्। इति क्षेत्रपालपूजा ॥

९—रक्षाबन्धन वा रक्षाविधान।

पुण्याहवाचन के अन्त में और ग्रहपूजा के अन्त में भी रक्षाविधान या रक्षाबंधन की रीति है। अन्यान्य अवसरों पर भी ऐसा किया जाता है। उपनयन या विवाह के समय जो कंकण बांधने की चाल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है वह भी रक्षाबन्धन हीं है। भेद सिर्फ इतना हीं है कि साधार रक्षाबन्धन में हल्दी या लाल रंग में रंगा हाथ कता केवल सू रहता है और कंकण में कौतुक नाम की नौ औषधियों की एक पोट भी लोहे के छल्ले के साथ उस सूत में बँधी रहती है। शेष क्रिया दोनों कामों में ज्यों की त्यों की जाती है। यह रक्षाविधान ग्रहपूजा आदि का एक प्रकार का अंग ही है। इसलिये इसके वास्ते पृथक् संकल्प करने की आवश्यकता नहीं है। किसी ताम्बे के पात्र या पलाश के पत्ते आदि के दोने में जौ, कुश, दूब, पीली सरसों, चन्दन, अक्षत गौ का गोबर और दही रखकर ऊपर से रक्षा का सूत या कंकण रख देने और उसे हाथ में लेकर और हाथ से छूकर ये श्लोक पढ़ें

ॐ गणाधिपं नमस्कृत्य नमस्कृत्य पितामहम्। विष्णुं रुद्रं श्रियं देवीं वन्दे भक्त्या सरस्वतीम्॥ १॥ स्थाणुं क्षेत्रं नमस्कृत्य दिननाथं निशाकरम्। धरणीगर्भसंभूतं शशिपुत्रं बृहस्पतिम्॥ २॥ दैत्याचार्यं नमस्कृत्य सूर्यपुत्रं महाग्रहम्। राहुं केतुं नमस्कृत्य यज्ञारम्भे विशेषतः॥ ३॥ शक्राद्या देवताः सर्वा नमस्कृत्य मुनींस्तथा। गर्गं मुनिं नमस्कृत्य नारदं मुनिसत्तमम्॥ ४॥ वसिष्ठं मुनिशार्दूलं विश्वामित्रं महामुनिम्। व्यासं कविं नमस्कृत्य सर्वशास्त्रविशारदम्॥ ५॥ विद्याधिका मुनय आचार्याश्च तपोधनाः। सर्वे ते मम यज्ञस्य रक्षां कुर्वन्तु विघ्नतः॥ ६॥ इस क्रिया का नाम अभिमंत्रण है। इसके बाद एक हाथ में उस पात्र या दोने को लेकर उसमें सरसों अक्षतादि उठा उठाकर आगे के श्लोकों को पढ़ता हुआ क्रम से पूर्व, अग्नि आदि और ऊपर नीचे दसों दिशाओं में छींटा जावे। पहले के तीन श्लोकों में से ढाई के आधे आधे में क्रम से पूर्व आदि दसों दिशायें आ जाती हैं। इसलिये आधे आधे श्लोक पर एक एक दिशामें छींटे। शेष आधे में इसी का उपसंहार है अतः उससे कुछ न करे। फिर आगे के श्लोक के चार चरणों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम से यज्ञशाला के आगे, पीछे, बायें, दहिने की रक्षा लिखी है। फिर आधे में ब्रह्मा की और आधे में आचार्य की रक्षा लिखी है। फिर एक श्लोक में ऋक्, यजुः, साम, अथर्ववेद की रक्षा लिखी है, जो क्रम से पूव, दक्षिण, पश्चिम और उत्तर में रहते हैं। फिर आधे में ब्राह्मणों की और आधे में यजमान की रक्षा लिखी है और शेष आधे में बची खुची जगह की। इसलिये जब जिसकी रक्षा का नाम आवे तब उसी पर उसी ओर सरसों अक्षतादि छींटे। श्लोक के ऊपर दिये गये अंकों से स्थानों का पता लगा करेगा। वे श्लोक ये हैं-ॐ प्राचीं रक्षतु गोविन्द आग्नेयीं गरुडध्वजः। याम्यां रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैर्ऋतीम् ॥ ५ ॥ केशवो वारुणीं रक्षेद्वायवीं मधुसूदनः । उदीचीं श्रीधरो रक्षेदैशानीं तु गदाधरः ॥ २ ॥ ऊर्ध्वं गोवर्धनधरो ह्यधस्ताद्धरणीधरः । एवं दश दिशो रक्षेद्वासुदेवो जनार्दनः ॥ ॥ ३ ॥ यज्ञाग्रे रक्षताच्छंखः पृष्ठे पद्मं तथोत्तमम् । वामपार्श्वे गदा रक्षेद्दक्षिणे तु सुदर्शनः ॥ ४ ॥ उपेन्द्रः पातु ब्रह्माणमाचार्यं पातु वामनः । अच्युतः पातु ऋग्वेदं यजुर्वेदमधोक्षजः ॥ ५ ॥ कृष्णो रक्षतु सामानि ह्यथर्वं माधवस्तथा। उपविष्टाश्च ये विप्रास्तेऽनिरुद्धेन रक्षिताः ॥ ॥ ६ ॥ यजमानं सपत्नीकं पुण्डरीकविलोचनः । रक्षाहीनं तु यत्स्थानं तत्सर्वं रक्षताद्धरिः ॥७॥ इसके बाद फिर ७७ वें पृष्ठ में लिखे गायत्री आदि १२ वेद मन्त्रों से रक्षासूत्र वा कंकण को हाथ से छूकर अभिमंत्रण करे। तब रक्षासूत्रको पुरुषके दहिने और स्त्री के बायें हाथ में बांधे। कंकण की भी यही दशा है स्त्री के बायें और पुरुष के दहिने हाथ में। रक्षा या कंकण बांधने का मंत्र-ॐ येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः। तेन त्वामभिबध्नामि रक्षे माचल माचल ॥ त्वँय्याविष्ठ दाशुषो नॄंः पाहि शृणुधी गिरः रक्षातोकमुतत्मना ॥ रक्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुरक्षा भूयात् ॥ वासिष्ठी में लिखा है कि कर्म के आरम्भ में ही आचार्य आदि के वरण के बाद ही रक्षाबन्धन करे । मगर अन्य पद्धतियों में अनेक स्थानों पर लिखा है । कहीं कहीं लिखा है कि कर्म के अन्त में अभिषेक के बाद तिलक देकर रक्षासूत्र बांधे और उसके बाद आशीर्वादादि देकर देवताओं का विसर्जन करे । कर्म का अर्थ प्रधान कर्म भी हो सकता है और उसके अंगभूत ग्रहपूजा आदि भी । यदि ग्रहपूजा आदि के बाद ही बांधना हो तो कोई बात नहीं है। यदि प्रधान कर्म विवाहादि के बाद बांधना हो ता अभिमंत्रण करके कलश पर रक्षा सूत्र को रख देवे और अन्त में बाँधे । बहुत जगह ग्रहपूजा के बाद ही लिखा देखकर हमने भी ऐसा हीं लिखा है और हमारा विचार भी ऐसा ही है कि इसी समय अर्थात् होमादि से प्रथम हीं यह काम कर लेवे । परन्तु जहां जैसा व्यवहार हो उस के अनुसार चाहे जब बाँधे । इसमें कोई आपत्ति नहीं है । वासिष्ठी में यह भी लिखा है कि आचार्य की रक्षा के सूत्र की लम्बाई यजमान के शरीर की लम्बाई भर की होनी चाहिये । इति रक्षाविधान ।

सर्वतोभद्र की देवताओं आदि की पूजा के बाद कहीं कहीं इन्द्र-ध्वज की पूजा और स्थापना की बात लिखी है और लिखा है कि यज्ञस्थान के ईशान कोन में उसे गाड़ देवे । खूब मोटे और लम्बे बांस पर एक खादी की ध्वजा लगावे और उसमें वज्र या हस्ती की आकृति बनवावे । पताका पीली होवे । क्योंकि इन्द्र का पीला वर्ण और उसका वाहन हाथी तथा अस्त्र वज्र है । फिर उसमें—ॐ त्रातारमिन्द्रम-वितारमिन्द्र ँ हवे हवे सुहव ँ शूरामन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र ँ स्वस्तिनो मघवा दधात्विन्द्रः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्र इहागच्छ इहतिष्ठ—ऐसा पढ़ कर इन्द्र का आवाहन करके-ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इस मंत्र से गन्ध आदि पञ्चोपचार पूजा करे और उसके बाद ध्वजा की लम्बाई का पांचवाँ हिस्सा गहरा गढ़ा खोदकर उसमें उस ध्वजा को गाड़े । ध्वजा खड़ी करने का मंत्र-ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीना ँ । संक्र-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्दनोऽनिमिषएकवीरः शत ँ सेना अजयत्साकमिन्द्रः ॥ ध्वजा गाड़ने के गढ़े में सुपारी और पैसा डालने की रीति है और जल भी डाल देते हैं । वस्तुतः यह भूमि की पूजा है । इसलिये "ॐ भूम्यै नमः" से गढ़े की भूमि की पञ्चोपचार पूजा करके उसमें सुपारी और पैसा रख देनाचाहिये । इति इन्द्रध्वजस्थापन ।

१०—कुशकण्डिका वा कुशण्डिका ।

देवताओं की पूजा के बाद कुशकण्डिका की आवश्यकता होती है । क्योंकि होम की आवश्यकता सर्वत्र होती है और ग्रहों के लिये भी होम किया जाता है तथा अन्यान्य देवताओं के लिये भी । होम कुशकण्डिका विना हो सकता नहीं । होम की वेदी या कुण्ड के परिसमूहन से लेकर पलाशादि की इध्म नामक तीन या २० समिधों को अग्नि में डालकर प्रोक्षणीपात्र के जल को हाथ में लेकर अग्निवेदी या कुण्ड के चारों ओर गिराने तक की क्रिया का नाम कुशकण्डिका है और गृह्य सूत्रों के आरम्भ में ही इसका वर्णन मिलता है । क्यों कि सभी होमों में यह क्रिया की जाती है । मगर इसके बाद आघार की दो आहुतियां, आज्यभाग की दो आहुतियां, व्याहृति की तीन, पंचवारुणी की पांच और इनके बाद अन्त में प्रजापति और स्विष्टकृत् की दो, ये चौदह आहुतियां भी सभी होमों में की जाती हैं । इस लिये इनको भी लोग कुशकण्डिका में हीं शामिल कर लेते हैं । परन्तु प्रजापति और स्विष्टकृत् की दो आहुतियां सभी होम के अन्त में की जाती हैं । इसलिये कुशकण्डिका के क्रम में बारह ही आहुतियां रहजाती हैं, अस्तु ।

अग्निस्थापन से पहले कुण्ड आदि की पूजा भी करने की रीति है, विशेषरूप से प्रतिष्ठा आदि स्मार्त्त कर्मों में । आचार्य को कुण्ड से पश्चिम बैठाकर स्वयं यजमान दक्षिण ओर उत्तर मुख बैठकर पहले संकल्प करे—ॐ अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुककर्मण्यग्निस्थापनं तदंगतया कुंड-मेखलादीनां संमार्जनपूजनादि च करिष्ये । फिर आचमन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और प्राणायाम करके हाथ में पीली सरसों लेवे और-ॐ अपसर्पन्तु ते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः । ये भूता विघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया-पढ़कर उसे कुण्ड में छींट कर पंचगव्य भी कुण्ड में छिड़के और-ॐ आपोहिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन। महेरणाय चक्षसे॥ यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीरिवमातरः॥ तस्मा अंरगमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथा च नः- यह मंत्र पढ़ता रहे । फिर कुशों से कुण्ड को झाड़ कर उन्हें ईशान में फेंके और उसमें कुश से जल छिड़के । तब अंजलीमें फूल लेकर कुण्ड को स्पर्शकिये हुए कुण्ड का आवाहन करे ॐ आवाहयामि तत्कुंडं विश्वकर्मविनिर्मितम् । शारीरं यच्च ते दिव्यमग्न्याधिष्ठानमद्भुतम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः कुण्डाय नमः कुंड इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ और-ओं भूर्भुवः स्वः कुण्डाय नमः । इस नाममंत्र से ही कुण्ड की पंचोपचार पूजा करके हाथ जोड़कर प्रार्थना करे-ओं ये च कुंडे स्थिता देवाः कुंडांगे याश्च देवताः । ऋद्धिं यच्छन्तु ते सर्वे यज्ञसिद्धिमुदान्विताः ॥ १ ॥ हे कुंड तव निर्माणं राचितं विश्वकर्मणा । आस्तीकवांछितां सिद्धिं यज्ञसिद्धिं ददातु भोः ॥२॥ इसके बाद कुण्ड के मध्यमें विश्वकर्मा का—ओं भूर्भवः स्वः विश्वकर्मणे नमः विश्वकर्मन्निहागच्छ इह तिष्ठ-से आवाहन और-ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे नमः-से पंचोपचार पूजा करके प्रार्थना करे-ओं अज्ञानाज्ज्ञानतो वापि दोषास्युः खननोद्भवाः । नाशय त्वं हि तान् सर्वान् विश्वकर्मन्नमोऽस्तुते ॥ उपरान्त सबसे ऊपरवाली श्वेत रंग आदि से सजाई मेखला में विष्णु का-ओं विष्णो यज्ञपते देव दुष्टदैत्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

निषूदन । विभां यज्ञस्य रक्षार्थं कुण्डे सन्निहितो भव ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ- इस मंत्र से आवाहन करके-ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा ँ सुरे । ओं विष्णवे नमः- इसमंत्र से पूजा करे और उस मेखला की भी- ओं भूर्भुवः स्वः प्रथममेखलायै विष्णुदैवत्यै श्वेतवर्णालंकृतायै नमः- मंत्र से पंचोपचार पूजा करे । तब लाल रंग से सजी दूसरी मेखला- में ब्रह्माका आवाहन करे-ओं हंसपृष्ठसमारूढ देव देवग- णावृत । रक्षार्थं मम यज्ञस्य कुण्डेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्मन्निहागच्छ इहतिष्ठ ॥ फिर- ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वे- न आवः । सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनि- मसतश्च विवः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणेनमः-इसमंत्र से पंचोपचार पूजा करके-ओं मध्यममेखलायै ब्रह्मदैवत्यै रक्तवर्णालंकृतायै नमः-इसमंत्र से दूसरी मेखला की पूजा करे । अनन्तर काले वर्ण से सुसज्जित तीसरी मेखला में रुद्र का आवाहन करे-ओं गंगाधर महादेव वृषारूढ महेश्वर । आगच्छ भगवन् रुद्र कुंडेऽस्मिन्सान्निधोभव ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रइहागच्छइहतिष्ठ ॥ और-ओं नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः—इस मंत्र से रुद्रकी पंचोपचार पूजा करके-ओं तृतीयमेखलायै रुद्रदैवत्यै कृष्णवर्णालंकृतायै नमः-मंत्र से तीसरी मेखला की पूजा करे । फिर योनि का आवाहन करे- ओं भूर्भुवः स्वः जगदुत्पत्तिहेतुकायै मनोभवयुतायै यो- यैनमः योने इहागच्छ इहतिष्ठ । और-ओं क्षत्रस्य योनि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रासि क्षत्रस्यनाभिरसि। मा त्वा हिꣳसीन्मा मा हिꣳसीः
ओं भूर्भुवः स्वः योन्यै नमः–से पंचोपचार पूजा करके प्रार्थना करे-
ओं सेवन्ते महतीं योनिं देवर्षिसिद्धमानवाः । चतुरशी-
तिलक्षाणि पन्नगाद्याः सरीसृपाः ॥ १ ॥ पशवः पक्षि-
णः सर्वे संसरन्ति यतो भुवि । योनिरित्येव विख्याता
जगदुत्पत्तिहेतुका ॥ २ ॥ मनोभवयुता देवी रतिसौ-
ख्यप्रदायिनी । मोहयन्ती सुरान्सर्वान् जगद्धात्रि नमो
नमः ॥ ३ ॥ योने त्वं विश्वरूपासि प्रकृतिर्विश्वधारिणी ।
कामस्था कामरूपा च विश्वयोन्यै नमो नमः ॥ ४ ॥ इस
के बाद कंठ का आवाहन करे-ओं जीवनं सर्वजंतूनां स्रगादि
स्थानमुत्तमम् । उत्तमांगस्य चाधारं कंठमावाहयाम्यहम्
ॐ भूर्भुवः स्वः कंण्ठाय नमः कंठ इहागच्छ इहतिष्ठ
फिर–ओं नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिवः रुद्रा उपश्रिताः
तेषा ꣳ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि । ओं कण्ठाय
नमः– मंत्र से पंचोपचार पूजा करके प्रार्थना करे-ओं कं
मंगलरूपणे सर्वकंठप्रतिष्ठितः । परितो मेखलास्त्वत्त
रचिता विश्वकर्मणा ॥ इसके उपरान्त नाभिका आवाहन करे
ओं पद्माकाराऽथवा कुण्डसदृशाकृतिबिभ्रती । आधार
सर्वकुण्डानां नाभिमावाहयाम्यहम् । ओं भूर्भुवः स्व
नाभे इहागच्छ इहतिष्ठ ॥ और–ओं नाभिर्मे चि
विज्ञानं पायुर्मेपचितिर्भसत् । आनन्दनन्दावाण्डौ
भगः सौभाग्यं पसः । जंघाभ्यां पद्भ्यां धर्मोऽसि
विशि राजा प्रतिष्ठितः ॥ ओं भूर्भुवः स्व नाभे
नमः––इस मंत्र से पंचोपचार पूजा करके–ओं नाभे
कण्डमध्ये तु देवैः सह प्रतिष्ठिता । अतस्त्वं पूजि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ता देवि शुभदा ऋद्धिदाभव–इससे प्रार्थना करे । फिर कुण्ड में ही नैर्ऋत्य कोन में वास्तुपुरुष का आवाहन करे–ओं आवाहयामि देवेशं पुरुषं च महाबलम् । देवदेवं गणाध्यक्षं पातालतलवासिनम् । ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतयेनमः वास्तोष्पते इहागच्छ इहातिष्ठ ॥ और–ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवानः । यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे । ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः–इसमंत्र से पूजा करके–ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः इमां बलिं समर्पयामि–मंत्र से उड़द भात की बलि देवे । फिर प्रार्थना करे–ओं यस्य देहे स्थिता क्षोणी ब्रह्माण्डं विश्वमण्डलम् । व्यापितं भीमरूपं च सुरूपं विश्वरूपिणम् । पितामहसुतो मुख्य तुभ्यं वास्तुपते नमः ॥

फिर पंच भूसंस्कार यानी होम के कुण्ड या स्थण्डिल के पांच संस्कार किये जाते हैं । यह बात यजुर्वेदी और सामवेदी दोनों हीं करते हैं । अन्तर इतनाहीं है कि यजुर्वेदी कुण्ड में या स्थंडिलपर तीन रेखायें खींचते हैं और सामवेदी पांच और यजुर्वेदी स्फ्य (काठकी तलवार) या स्रुव से वे रेखायें बनाते हैं और सामवेदी फल, फूल, पत्ते या कुश से । इन दोनों का भेद ग्रन्थ के अंत के चित्र देखने से स्पष्ट होगा । रेखा खींचने से लेकरे अग्निस्थापन पर्यन्त बायें हाथ से कुण्ड या स्थंडिल छूए रहने की भी रीति सामवेदियों की किसी किसी पद्धति में मिलती है । मगर सबों में यह बात नहीं लिखी है । फिर दहिने हाथ में तीन परिसमूहन कुशों को लेकर उस स्थंडिल या कुण्ड को पश्चिम से आरम्भ कंर पूर्व पर्यन्त तीन बार झाड़े और उन कुशों को ईशान कोन में फेंक दे । इसे परिसमूहन कहते हैं । फिर गौ के गोबर और जल से जिस तरफ से झाड़ा था उसी तरफ से तीन बार लीपे । झाड़ने और लीपने की रीति दाक्षण से उत्तर भी है । यही बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रेखा खींचने में भी है। लीपने को उपलेपन कहते हैं। तब यजुर्वेदी स्रुव की जड़ या उसके न रहने पर कुश, फल, पत्र या फूल से भी स्थंडिल कुण्ड का आधा हिस्सा पश्चिम में छोड़ कर शेष आधे में पहली रेखा पश्चिम से पूर्व १२ अंगुल लम्बी किनारे तक खींचे। उसके उत्तर उसी तरह उतनी हीं बड़ी दूसरी और उसके उत्तर तीसरी भी पश्चिम से पूर्व को ही किनारे तक दूसरी से उतनी हीं दूरी पर खींचे जितनी दूरी पर पहली से दूसरी रेखा होवे। इस प्रकार १२-१२ अंगुल की तीन रेखायें कुण्ड के मध्य से पूर्व किनारे तक हुईं, जिनमें एक के उत्तर दूसरी और उससे उत्तर तीसरी है। इसे उल्लेखन कहते हैं।

कर्मपात्र के जलको कुशपर रख और ऊपर कुश से ढंक पूर्ववत् परिसमूहन और उपलेपन के बाद बायें हाथ से कुण्ड या स्थंडिल को छूकर सामवेदी फूल या कुश लेकर कुंड का पश्चिम आधा भाग छोड़कर पूर्ववत् ही शेष आधे में दक्षिण किनारे से ए अंगुल भीतर १२ अंगुल की एक रेखा पश्चिम से पूर्वके किनारे त खींचते हैं। इसे श्वेत या पीले रंगकी और पृथिवी देवता की समझ ऐसा ही ध्यान भी करते हैं। फिर इस पहली के पश्चिमी किनारे सीधे उत्तर को २१ अंगुल की दूसरी रेखा खींचते हैं और उसे अ देवता की और लाल रंग की ध्यान करते हैं। तब पहली से ७ अंगु उत्तर दक्षिण उत्तर वाली २१ अंगुल की रेखा से शुरू कर १० अंगु की तीसरी रेखा प्रजापति देवता की और काले रंग की ध्यान क खींचते हैं। फिर उसके ७ ही अंगुल उत्तर उसी तरह की १० अंगु वाली चौथी इन्द्र देवता की नीले रंग की ध्यान करके खींचते हैं अन्त में चौथी से उत्तर ७ अंगुल पर ही २१ अंगुल वाली दूस रेखा के उत्तरी किनारे से आरम्भ कर सीधे पूर्व किनारे तक अंगुल की सोम देवता की पीले या श्वेत वर्णकी ध्यान करके पांच खींचते हैं। इस तरह कुण्ड या स्थंडिल के बीचों बीच उत्तर दक्षि की एक रेखा २१ अंगुल की हो जाती है और उसके किनारे कुण्ड उत्तर दक्षिण किनारे से क्रम से दो और एक अंगुल हट कर भी हैं। फिर उसके ही तीन बराबर हिस्से करके दोनों किनारों से और बीच से दो, कुल चार रेखायें पूर्वपश्चिम लम्बी हैं जिनमें कि की दोनों १२-१२ अंगुल की और बीच की १०-१० अंगुल की हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं लिखा है कि इन रेखाओं को उक्त रंगों से बनाना चाहिये। मगर यह गलत है। क्योंकि रेखा खींचने के बाद वहां की मृत्तिका हटाई जाती है। यह बात रंग से खींचने पर असंभव होगी। हां, मृत्तिका हटा कर रेखाओं पर जल छिड़कने के बाद यदि पीछे से वे रंग दी जावें तो हो सकता है। मगर इससे अच्छा तो ध्यान कर लेना हीं है। उन रेखाओं में कहे गये वर्णों का ध्यान देवताओं की ही तरह कर लेंगे। बस काम हो गया। या यदि इच्छा हो तो पहले ही रंग से खींचे। पहली और पांचवीं दानों के वर्ण पीले या श्वेत लिखे हैं। कई जगह पहली का पीला और पांचवीं का श्वेत लिखा है। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि पहली १२ और दूसरी २१ अंगुल वाली के बाद शेष तीनों १०-१० अंगुल की हैं और इनका एक दूसरे से अन्तर ७-७ अंगुल न होकर ६-६ अंगुल है। इसका तात्पर्य यह है कि पांचवीं रेखा के बाद उत्तर ओर २१ अंगुल वाली रेखा ३ अंगुल निकली रहेगी और उसके बाद दो अंगुल पर कुण्ड का किनारा होगा। जब दोनों पक्ष हैं तब कर्त्ता की इच्छा, या तो ६ अंगुल पर खींचे या ७ पर और शेष तीनों को ही १०-१० अंगुल की बनावे या बीच की दो को ही और अन्तवाली को १२ अंगुल की ही रक्खे।

इन तीन कामों के बाद यजुर्वेदी और सामवेदी दोनों ही दहिने हाथ की अनामिका अंगुली और अंगूठा, इन दोनों से उन रेखाओं की मिट्टी को उठा उठा कर ईशान कोन में २१ या २२॥ अंगुल की दूरीपर फेंकें। रेखाओं से मिट्टी उठाने की रीति यह है कि जिस क्रम से रेखाएं खींची गई हैं उसी क्रम से उठावे, पहली का प्रथम, दूसरी का उसके बाद इत्यादि। उसके फेंकने का स्थान रत्नि या अरत्नि भर पर बताया है और रत्नि २१ अंगुलों की तथा अरत्नि २२॥ अंगुलों की होती है। इसी से दोनों लिखा है। अब रही फेंकने वाले की इच्छा। इसे उद्धरण कहते हैं। फिर दोनों वेद वाले कर्मपात्र के जल से उन रेखाओं का और उनके द्वारा समस्त स्थंडिल या कुंड का अभ्युक्षण करें। अभ्युक्षण का अर्थ है हाथ में जल लेकर उसे किसी जगह गिराते समय हाथ को औंधा करना या उलट देना। कर्मपात्र के जल को कुश आदि से ढंक कर रखना यद्यपि सामवेदियों के यहां हीं लिखा है, तथापि यजुर्वेदियों को भी ढंका ही रखना चाहिये, क्यों-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0, In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि ढंकने का अभिप्राय केवल मलिन वस्तु पड़ने से रोकना और दुष्टों की दृष्टि बचाना है और यह दोनों को ही इष्ट है । कहीं कहीं तो यजुर्वेदियों की पद्धतियों में भी लिखा है कि कर्मपात्र को कुश से ढंक कर रक्खे इस तरह परिसमूहन, उपलेपन, उल्लेखन, उद्धरण और अभ्युक्षण ये पंचभूसंस्कार हुए जो अग्निस्थापन से पूर्व अवश्य कर्त्तव्य हैं ।

पंचभूसंस्कार के बाद अग्नि लाई और स्थापित की जाती है । यह अग्नि या तो वैश्य के घरकी हो या भड़भूंजे के भाड़ की या बहुत सोमयज्ञ करनेवाले ब्राह्मण या क्षत्रिय के घर की । या मथकर निकाली गई हो । मगर यह सब तब होगा जब श्रौत या स्मार्त अग्नि न हो । सोने, ताम्बे, कांसेके पात्र या मिट्टी के कसोरेमें अग्नि लाई जाती है और जैसे बर्तन में रक्खीहो वसेही दूसरे बर्त्तनसे ढंकीहो न कि ताम्बेके बर्तनमें काँसेके बर्त्तन या कसोरेसे ढँकी । मगर सूखे गोबर (उपले या गोइंठे), कच्चे या फूटे बर्तन, घड़े वगैरः के टुकड़े में तो कभी भी न लाई जावे । उसे लाकर अग्नि कोनमें कुण्ड से बाहर ही रखकर यजुर्वेदी लोग—ओं हुंफट् स्वाहा—मंत्र पढ़कर अग्निका कुछ अंश, जिसे क्रव्यादका अंश कहते हैं, नैर्ऋत्य कोन में फेंकते और गायत्रीमंत्र पढ़कर-ओं अग्नयेनमः से पंचोपचार पूजा करते हैं और जिस ओर कुंड की योनि हो उसी तरफ से लाकर कुंड में रेखाओं पर रखते हुए मंत्र पढ़ते हैं-ॐ अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँ आसादयादिह । इसे पढ़कर अपने सामने अग्नी की स्थापना कर और वह बुझने न न पावे इसकी ताकीद के लिये किसी को कहकर चुपचाप अग्नि लाने के बर्त्तन में अक्षत, जल डाल देते हैं और फिर अग्नि का ध्यान इन मंत्रों से करते हैं-ओं चत्वारि शृंगास्त्रयो अस्यपादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासो अस्य । त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महादेवो मर्त्याँ आविवेश ॥ १ ॥ रुद्रतेजःसमुद्भूतं द्विमूर्धानं द्विनासिकम् । षण्नेत्रं च चतुःश्रोत्रं द्विपादं सप्तहस्तकम् ॥ २ ॥ याम्यभागे चतुर्हस्तं सप्तभागे त्रिहस्तकम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्रुवं स्रुचं च शक्तिं च त्र्यक्षमालां च दक्षिणे ॥ ३ ॥ तोमरं व्यजनं चैव घृतपात्रं तु वामके । बिभ्रतं सप्तभिर्हस्तैर्द्विमुखं सप्तजिह्वकम् ॥ ४ ॥ दक्षिणे च चतुर्जिह्वं त्रिजिह्वमुत्तरे मुखम् । द्वादशकोटिमूर्त्याख्यं द्विपञ्चाशत्कलायुतम् ॥ ५ ॥ स्वाहास्वधावषट्कारैरंकितं मेषवाहनम् । रक्तमाल्याम्बरधरं रक्तपद्मासनस्थितम् ॥ ६ ॥ रौद्रं तु वह्निनामानं वह्निमावाहयाम्यहम् । त्वं मुखं सर्वदेवानां सप्तर्चिरमितद्युते । आगच्छ भगवन्देवं यज्ञेऽस्मिन्सन्निधो भव ॥ ७ ॥ और–ओं भूर्भुवः स्वः अग्ने वैश्वानर शाण्डिल्यगोत्र शाडिल्यासितदेवलत्रिप्रवरान्वित भूमिमातः वरुणपितः मेषध्वज प्राङ्मुख मम सन्मुखो भव–इस मंत्र से अक्षत डालकर उसकी प्रतिष्ठा करके बाहर की ओर वायव्यकोन में–ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः–इस नाम मंत्र से गंधादि पंचोपचार द्वारा अग्नि की पूजा करे। फिर–ॐ अग्निं प्रज्वलितं वन्दे जातवेदं हुताशनम् । हिरण्यवर्णमनलं समृद्धं विश्वतो मुखम्–यह पढ़कर अग्नि की प्रार्थना करे । तब अग्नि की सप्त जिह्वाओं की पूजा करे । सात में चार दक्षिण और तीन उत्तर ओर रहती हैं । यह पूजा नाम मंत्र से और पंचोपचार से कीजाती है। वे मंत्र यह हैं। दक्षिण में—(१) ॐ कनकायैनमः।(२)ॐ रक्तायैनमः (३)ॐ कृष्णायैनमः (४) ओं उद्गारिण्यैनमः । उत्तर में–(५)ओं सुप्रभायैनमः (६) ओं बहुरूपायैनमः (७) ओं अतिरिक्तायैनमः ॥ कुण्ड में इन सप्तजिह्वाओं की आकृति भी चित्र के अनुसार बना लेनी चाहिये ।

इसके बाद ब्रह्मा के वरण का संकल्प करे; क्योंकि आचार्य का वरण पहले ही ७४ पृष्ठ में लिखा जा चुका है–ओं अद्यामुक-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शर्म्माहममुकर्मणि ब्रह्मणो वरणं करिष्ये । फिर अग्नि कुंड से उत्तर ओर किसी आसन को रखकर ब्रह्मा से कहे कि- आस्मिन्नासने आस्यताम् । ब्रह्मा उस पर बैठकर कहे-आस्ये। फिर यजमान आचार्य का पाँव धोवे और यह मंत्र पढ़ता रहे-ॐ आपद्धनध्वान्तसहस्रभानवः समीहितार्थार्पणकामधेनवः। अपारसंसारसमुद्रसेतवः पुनन्तु मां ब्राह्मणपादरेणवः॥ अथवा ७४ पृष्ठ में कहे गये-ओं नमोस्त्वनन्ताय०-मंत्र कोही पढ़े। तब ताम्बे के पात्र या दोने में चन्दन, अक्षत और फूल आदि मिलाकर जल रक्खे और-ओं भूमिदेवाग्रजन्मासि त्वं विप्र पुरुषोत्तम । प्रत्यक्षो यज्ञपुरुषो ह्यर्घ्योऽयं प्रतिगृह्यताम्- मंत्र पढ़कर पात्र सहित जल ब्रह्मा के हाथ में देवे और ब्रह्मा उसका कुछ अंश अपने सिरपर डालकर शेष बाईं ओर गिरादेवे । फिर- ओं ब्रह्मणे नमः आचमनीयं समर्पयामि-मंत्र से ब्रह्मा को आचमन देवे और ब्रह्माके उसे पीकर अपना हाथ धो डालने पर- ओं ब्रह्मणे नमः गन्धं समर्पयामि, पुष्पं समर्पयामि, धूपं समर्पयामि, दीपं समर्पयामि, नैवेद्यं समर्पयामि, आचमनीयं समर्पयामि-इस रीति से नाममंत्रों से पंचोपचार पूजा करके ब्रह्मा के मस्तक में चन्दन अक्षत से तिलक लगावे और यह मंत्र पढ़े-ओं युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि ॥ फिर दोनों हाथों में माला, दो वस्त्र, दो जनेऊ, कमण्डलु आदि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुक कर्मणि एभिर्गन्धाक्षतपुष्पमालायज्ञोपवीतकमण्डलुवस्त्रादिभिरमुकगोत्रामुकवेदाध्यायिनममुकशर्माणं त्वामहं ब्रह्मकर्म कर्त्तुं ब्रह्मत्वे न वृणे। इसे पढ़कर सभी वस्तुएं ब्रह्माके हाथ में दे देवे और उन्हें लेकर ब्रह्मा उत्तर देवे कि- वृतोऽस्मि । तदनन्तर-ओं व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रोति दक्षिणाम् । दक्षिणा श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्य-माप्यते–यह मंत्र पढ़कर ब्रह्मा यजमान के सिरपर कुशसे जल छिड़के । फिर यजमान ब्रह्माकी प्रार्थना करे– ओं यथा चतुर्मुखो ब्रह्मा सर्ववेदविदां वरः । तथा त्वं मम यज्ञेऽस्मिन्ब्रह्मा भव द्विजोत्तम ॥ इसके बाद अग्नि के कुण्ड से पूर्व होकर दक्षिण ओर जाकर ब्रह्माके लिये एक आसन रख उसपर पूर्व अग्रभाग करके तीन कुश रखकर यजमान पश्चिम ओर से ब्रह्माके पास आवे और उसे फिर पूर्व ओर से लिवाजाकर उसी आसन पर उत्तर मुख बैठावे । यदि कुशका ब्रह्मा हो तो भी पूर्वोक्त सारी क्रियायें करे । हां, इसमें इतनी विशेषता होगी कि जहां ब्रह्मा को 'आस्ये या वृतोऽस्मि' इत्यादि बोलना पड़ता है वहां वह भी यजमान हीं कहे और ब्रह्मा की तरफ से स्वयं कुश से जल छिड़के । यदि यजमान नहीं बोल सकता हो तो आचार्य उसका प्रतिनिधि होकर सब कुछ बोलता वा पढ़ताही है ।

इसके बाद आचार्य का आसन कुण्ड से पश्चिम ओर और उससे उत्तर यजमान का आसन पूर्वाग्र कुशोंका रखकर अपने आसन पर यजमान बैठजावे । फिर अपने से उत्तर दो कुश के आसन पश्चिम और पूर्व बनावे जिनके कुश भी पूर्वाग्र हों । पुनः प्रणीता-पात्र को बायें हाथमें लेकर और दहिने हाथ से कर्मपात्र या दूसरा शुद्धजलपात्र उठाकर उससे उसे भरे और उसपर तीन कुश रखकर उसे ढंक देवे । तब ब्रह्मा के मुख की ओर देखकर प्रथम पश्चिम वाले आसन पर रखकर फिर पूर्व वाले पर रखदेवे । फिर परिस्तरण कुशों को लेकर (पृष्ठ ३५–३६) उनका एक चौथाई कुण्ड के बाहर ईशान कोन से अग्नि कोन तक फैलावे । इन की जड़ दक्षिण और सिरा उत्तर रहे । फिर इनकी जड़ से अग्रभाग मिलाकर चौथाई कुशों को अग्नि से नैर्ऋत्य कोन तक फैलावे । इनके अग्रभाग से पहलेवालों की जड़ को ढंक देना चाहिये । तब इनकी जड़पर जड़ रखकर चौथाई को नैर्ऋत्य से वायव्य तक फैलावे और फिर इन तीसरे कुशों के सिरेपर जड़ रखकर शेष चौथाई कुशों को वायव्य से ईशान कोन तक फैलावे, जहां पहले वालों के सिरों से इनके सिरे मिलजावें । ऐसाही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यथा संभव एक, तीन या पांच बार करे। यह परिस्तरण कहाता है। इसके उपरान्त होम और यज्ञ की सम्पूर्ण सामग्री को कुण्ड से पश्चिम या उत्तर ५८ पृष्ठ में उक्त नियम, क्रमके अनुसार रक्खे। पात्रों के रखने में विशेषता यह होगी कि यदि पश्चिम में होंगे तो उनका अग्रभाग पूर्व और उनकी बिल उत्तर ओर रहेगी। यदि उत्तर रहेंगे तो अग्र उत्तर और बिल पूर्व होगी। पश्चिम में रक्खेंगे तो क्रमशः पूर्व बढ़ेंगे और उत्तर में क्रमशः उत्तर। क्रम यह है कि (१) सबसे पहले पवित्रच्छेदन के तीन कुश, उनके बाद पूर्व पूर्व या उत्तर उत्तर क्रमसे (२) पवित्र के कुश के दो मिले पत्ते जिनके बीच का पत्ता निकाल लिया गया हो, (३) प्रोक्षणीपात्र, (४) आज्यस्थाली (होम करने का बर्त्तन), (५) यदि खीर होतो खीर के होम का बर्त्तन(चरुस्थाली), (६) पांच सम्मार्जन कुश, (७) उपयमन कुश ३, ५ या ७ आदि, (८) पलाश की तीन समिध १०-१० अंगुल की, (९) स्रुव, (१०) घी, (११) यदि चरु हो तो धान के चावल, (१२) ६४, १२८, २५६ मुट्ठी या पूरे भोजन भर अन्न से पूर्ण पात्र, (१३) दक्षिणा या गौ। यह तो साधारण वस्तुएं हैं। इनके सिवाय उपनयन, चूड़ा, विवाहादि में जो विशेष पदार्थ अस्तुरा (छुरा), गोबर या पत्थर आदि हैं उन्हें इन पूर्वोक्तों के बाद क्रमशः रखते हैं। यह बात प्रसंगानुसार वहां भी लिखेंगे।

फिर ३३ पृष्ठोक्त रीति के अनुसार एक हाथ में पवित्र के कुश और दूसरे में उसके छेदन करने के कुशोंको लेकर-ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ-पढ़कर पवित्र बनावे और-ॐ विष्णोर्मनसा पूतेस्थः-पढ़कर उनपर जल छिड़क कर उन का मार्जन करे। तब प्रोक्षणी-पात्र को प्रणीतापात्र के निकट रख कर उसमें प्रणीता का जल किसी और छोटे बर्त्तन मे निकाल या हाथ से ही उठाकर डाले और पवित्र से उस प्रोक्षणी के जल को दो बार उछाले। पवित्र को दहिने हाथ की अनामिका और अंगूठे से पकड़ कर यह काम करे। फिर पवित्र को प्रोक्षणीपात्र में हीं डालदे और दहिने हाथ से प्रोक्षणीपात्र को उठाकर बांये हाथ में रखलेवे और दहिने हाथ को उतान कर मध्यमा तथा अनामिका के बिचले पोरों से प्रोक्षणी के जल को उछाले एवं उस जल पर प्रणीता का जल छिड़क देवे। इसके बाद आज्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थाली, चरुस्थाली, सम्मार्जन कुश, उपयमन कुश, समिध, स्रुव, घी, पूर्णपात्र और दक्षिणा पर पवित्र से जल छिड़के । आज्यस्थाली में घी लेकर अग्निकुंड से उत्तर अलग आग जलाकर उसपर ब्रह्मा घी गरम करे और उसके उत्तर दूसरी जगह यजमान या आचार्य चावल को पानी में मिलाकर आग पर चरु पकावे । जब घी थोड़ा गर्म हुआ हो और चरु भी आधी ही पकी हो तभी जलती लकड़ी या कुश उनके चारों तरफ घुमा कर उसे अग्निमें डालदे । फिर दहिने हाथ में स्रुव लेकर उसका अग्र पूर्व और पेट नीचे कर अग्निमें तपावे और बायें हाथ में लेकर सम्मार्जन कुशों के अग्र भाग से स्रुवका भीतरी भाग और उन्हीं कुशों की जड़से स्रुवका बाहरी हिस्सा सिर से जड़ तक झाड़दे और उन कुशों को अग्नि में डालदेवे । फिर प्रणीता के जल से स्रुव को तर करके या धोकर पुनरपि अग्निमें तपावे और हाथ से ही बाहर भीतर पोंछकर अपनी दहिनी ओर कुशों पर रखदेवे । घी को अग्निपर से उतार कर उत्तर रखकर पीछे कुण्ड से पश्चिम ले जावे । पर, यदि चरु भी हो तो पहले घी को आग से उतार कर चरु के पूर्व से होकर उत्तर लावे । फिर चरुको उतार कर घी से पश्चिम होकर उत्तर लावे । तब पहले घी को कुंड से पश्चिम ले जाकर बाद को चरु को ले जावे और वहां भी घी से उत्तर ही रक्खे । दहिने हाथ के अंगूठे और अनामिका को मिलाकरऔर उनका अग्र भाग उत्तर करके घी को उछाले, अच्छी तरह देखकर यदि उसमें कोई कीड़ा या कूड़ा करकट हो तो उसे साफ करे और प्रोक्षणी के जल को फिर उसी पवित्र से उछाल कर उसीमें पवित्र रखदेवे । तब उपयमन कुशों को दहिने हाथ से उठा कर बायें हाथ में रखलेवे, स्वयं खड़ा होकर चुपचाप तीनों समिधों को क्रम से घी में डुबो डुबो कर प्रजापति का ध्यान कर अग्नि में उनका अग्र पूर्व करके छोड़ देवे और दहिने चिल्लू में पवित्र के साथ प्रोक्षणी का जल लेकर ईशान से उत्तर पर्य्यन्त अग्नि के चारों ओर गिरावे ; इसे पर्युक्षण कहते हैं । फिर उस पवित्र को प्रणीतापात्र में रखदेवे और प्रोक्षणी पात्र को अग्नि कुंड एवं प्रणीता पात्र के मध्य में रक्खे । यहां तक यजुर्वेदियों की कुशकण्डिका है । इसके बाद दहिना घुटना टेककर अग्नि में होम किया जाता है । उसमें पंचवा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रुणी पर्य्यन्त १२ और अन्त की प्रजापति और स्विष्टकृत् की आहुति को डालने के समय यजमान के दहिने कन्धे पर ब्रह्मा अपने दहि हाथ में कुश लेकर रक्खे रहता है । इसेही अन्वारम्भ कहते हैं । अ इन्हीं आहुतियों को अग्नि में छोड़ने के बाद उनका शेष हर क प्रोक्षणीपात्र ही में गिरा दिया जाता है । इसेही संस्रव कहते हैं यदि यजमान के सिवाय दूसरा आहुति डाले तो यजमान उस अन्वारम्भ करे ।

वे चौदह आहुतियां यह हैं-(१)(चुपचाप मन से)-ओं प्रजा पतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम । (२) बोलकर-ओं इ न्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमम । यही दो आघार हैं । (३ ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम । (४) ओ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम । यही दो आज्यभाग हैं (५) ओं भूः स्वाहा इदमग्नये नमम । (६) ओं भुः स्वाहा इदं वायवे नमम । (७) ओं स्वः स्वाहा इदं सू र्याय नमम । यही तीन व्याहृति या महाव्यहृति होम कहाते हैं इसके बाद-ओं यथा बाणप्रहाराणां कवचं वारकं भवेत् तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारिका ॥ शान्ति रस्तु पुष्टिरस्तु यत्पापं तत्प्रतिहतमस्तु द्विपदे चतुष्प सुशान्तिर्भवतु—यह पढ़कर यजमान पर जल छिड़के । फि (८) ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हे अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो वि श्वाद्वेषां ँसि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां नमम । (९) ओं सत्वन्नो अग्नेऽवमो भवोती नेदि अस्या उषसोव्युष्टौ । अवयक्ष्वनो वरुण ँ रराणो वी मृडीक ँ सुहवोनएधि स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां नमम (१०) ओं अयाश्चाग्नेऽस्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमि मया असि । अयानो यज्ञं वहास्ययानो धेहि भेषज

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाहा इदमग्नये नमम । (११) ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्तः । तेभिर्नो अद्य सवितोत विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च नमम । (१२) ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाधमं विमध्यम ५ श्रथाय । अथा वयमादित्यव्रते तवानागसो आदितयेस्याम स्वाहा इदं वरुणायनमः ।

इन्हीं को पंचवारुणी या प्रायश्चित्त होम कहते हैं । (१३) ओंप्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम । यही प्राजापत्य आहुति है । (१४) ओंअग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम।

यह स्विष्टकृत् आहुति है । इन्हीं चौदह आहुतियों की यजुर्वेदियों के यहां सर्वत्र कर्मों में आवश्यकता होती है । इसलिये इन्हें बार बार न लिखेंगे और न कुशकण्डिका आदि को । अतः इनका यहीं अभ्यास कर लेना ठीक होगा । नहीं तो कर्म कराने वाले को कठिनाई हुआ करेगी । प्रसंगवश इन्हीं का संकेत कर दिया करेंगे । इसी तरह सामवेदियों की कुशकंडिका और व्याहृति होम या आज्यभाग भी अब यहीं लिख देते हैं जिससे आगे सर्वत्र यहीं के अभ्यास से आसानी से काम चले । फिर आगे न लिखेंगे ।

सामवेदियों के यहां अग्निस्थापन भी आसानहीं है और यह सब शेष प्रपंच उनकी पद्धतियोंमें इतना विस्तृत नहीं है । फिर भी उन्हें भी इसे करनाहीं चाहिये । इसलिये इसे भी अलग लिखना आवश्यक समझते हैं । कुंडका पूजन और परिसमूहनाद पंचभूसंस्कार तो दोनों वेदवालों के एक से ही हैं और पंचभूसंस्कार में जो विशेषता है उसे दिखलाया ही है । अग्निकुंड के समीप अग्नि उसी तरह लाते और रखते हैं जैसे यजुर्वेदी लाते हैं और बाहर रख कर उस अग्नि में से एक जलती लकड़ी या अग्निका कुछ अंश निकाल कर नैर्ऋत्य कोन में फेंकते हैं । पहले विनियोग पढ़ते हैं । फिर मंत्र पढ़ने के साथ वह लकड़ी या अग्नि का कुछ अंश हटाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नैर्ऋत्य में फेंकते हैं। विनियोग—ओं क्रव्यादित्यस्य प्रजापति ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवताऽग्निसंस्कारे विनियोगः मंत्र—ओं क्रव्यादग्निं प्रहिणोमि दूरं यमराज्यं गच्छतु रिप्रवाहः। फिर आगे के मंत्र को पढ़कर कुंड या वेदी की रेखाओं पर अपने सामने अग्नि रखने से पहले—ओं व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्बृहती छन्दो बृहस्पतिर्देवताऽग्निस्थापने विनियोगः—इसे पढ़ कर मंत्र पढ़े—ॐ भूर्भुवः स्वः। और अग्नि को रेखाओं पर देवे। तब हाथ जोड़ कर अग्नि की प्रार्थना करे—ॐ इहैवायमितरोजातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतुप्रजानन्। फिर कुछ समिधों को अग्नि में पूर्व ओर उनका अग्रभाग करके छोड़े। तब पश्चिम ओर पूर्व मुख बैठ कर अपने आगे भूमि में बायां हाथ औंध कर रक्खे और उस पर औंधाहुआ दहिना हाथ रख कर मंत्र पढ़े—ॐ इदम्भूमेरित्यस्य परमेष्ठी ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता भूमिजपे विनियोगः। ओं इदं भूमेर्भजामह इदं भद्रा ँ सुमंगलम्। परासपत्नान्नाशयस्वान्येषां विन्दते वसु। अन्येषां विन्दते धनम्। इसके बाद हाथ में कुश लेकर विनियोग पढ़ के कुण्ड को क्रम से उत्तर, पूर्व और दक्षिण ओर झाड़े। वायु कोन से आरम्भ कर नैर्ऋत्य कोन में खतम करे—तिसृणां प्रजापतिर्ऋषिर्जगतीछन्दोऽग्निर्देवता परिसमूहने विनियोगः। (उत्तर)—ओं इमां स्तोममर्हते जातवेदसे रथमिव संमहेमामनीषया। भद्राहिनः प्रमतिरस्य स ँ सद्यग्ने सख्ये मा रिषामा वयं तव॥ (पूर्व)—ओं भरामेध्मं कृणवामाहवींषि ते चिंतयन्त पर्वणा पर्वणा वयम्। जीवातवे प्रतरां साधया धियोग्ने सख्ये मारिषामा वयन्तव॥ (दक्षिण) ओं शकेम त्वा समिधँ साधयाधियस्त्वे देवा हविः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्त्याहुतम् । त्वमादित्या २ आवह तान् ह्युश्मस्यग्ने सख्ये मारिषामावयंतव॥ अनन्तर कुण्ड से उत्तर ओर एक आसन रखकर -अस्मिन्नासने आस्यताम्-कह कर उस पर ब्रह्मा को बैठावे और वह-आस्ये-कह कर बैठ जावे । तब यजमान-ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ १ ॥ नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहितायच । जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दायनमो नमः॥ २ ॥-यह मंत्र पढ़ता हुआ ब्रह्मा का पांव धोवे और ताम्रपात्र या दोने में चन्दन, अक्षत, पुष्पादि संयुक्त जल लेकर-ओं भूमिदेवाग्रजन्मासि त्वं विप्र पुरुषोत्तम । प्रत्यक्षो यज्ञपुरुषो ह्यर्घ्योऽयं प्रतिगृह्यताम्-मंत्र पढ़े और उसे ब्रह्मा के हाथ में दे देवे । ब्रह्मा उसका कुछ अंश अपने सिर पर छिड़क कर शेष वाम भाग में गिरा देवे । फिर-ओं ब्रह्मणे नमः आचमनीयं समर्पयामि-मंत्र से ब्रह्मा को आचमन कराकर हाथ धुलावे । तब-ओं ब्रह्मणे नमः गन्धं समर्पयामि । पुष्पं समर्पयामि । धूपं समर्पयामि । दीपं समर्पयामि । नैवेद्यं समर्पयामि । आचमनं समर्पयामि-इस तरह नाममंत्र से पञ्चोपचार पूजा करके हाथ में माला, दो यज्ञोपवीत, दो वस्त्र, कमण्डलु, कटिसूत्रादि लेकर कुश, तिल, जल से संकल्प करे-ओं यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यामुकतिथौ अमुककर्मणि ब्रह्मकर्मकर्त्तुमेभिश्चन्दनपुष्पताम्बूलमालाकमण्डलुवस्त्रादिभिरमुकगोत्रममुकशर्माणं त्वां ब्रह्मत्वेनाहंवृणे । इतना पढ़ कर सभी वस्तु ब्रह्मा को देवे और ब्रह्मा-ओं वृतोऽस्मि-कह कर सब चीजें लेलेवे । फिर ब्रह्मासे कहे कि-ॐ यथा विहितंकर्म कुरु-ब्रह्मा कहे-ॐ करवाणि । तब ब्रह्मा को पूर्व ओर से कुण्ड के दक्षिण लिवा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding-IKS-MoE-Grant-2

जाकर काष्ठ आदि का ब्रह्मा का आसन रख कर अग्नि कुण्ड से
तक लगातार जलधारा गिरावे और ब्रह्मा के आसन पर कम से
तीन पूर्वाग्र कुश रख देवे । फिर ब्रह्मा आसन से पूर्व और पश्चि
मुख खड़ा होकर आसन के कुशों में से एक कुश बायें हाथ की अ
मिका और अंगूठे से उठा कर-अस्य मंत्रस्य प्रजापतिर्ऋषिर्
परावसुर्देवता तृणनिरसने विनियोगः-इतना पढ़े और-
निरस्तः परावसुः-मंत्र से उसे नैर्ऋत्य कोन में फेंक दे
फिर ब्रह्मा और यजमान दोनों आचमन करें और-अस्य मंत्र
प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः परावसु देवतोपवेशेन विनियोगः-
कर ब्रह्मा का दाहिना हाथ यजमान पकड़ कर-ओं आवसोः स
सीद-कह कर आसन पर उत्तर मुख बैठावे और- ओं सीदा
कह कर ब्रह्मा उस पर बैठ जावे । इसके बाद संस्कृत भाषा
अतिरिक्त अन्य भाषा के उच्चारण का प्रायश्चित्त स्वरूप आचार्य,
और यजमान तीनों या केवल आचार्य ही आगे का मंत्र जपें
ब्रह्मा, यजमान उसे कुश से छूवे रहें। मंत्र यह है-ॐ इदंविष्णु
काण्वोमेधातिथिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दो विष्णुर्देवता जपेवि
योगः । ॐ इदंविष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । स
मस्य पा ँ सुरे । कुश का ब्रह्मा होने पर भी उक्त सभी कि
करे । फिर कुण्ड से पूर्व होकर उत्तर ओर आकर यजमान उत्त
पूर्व ओर अग्रभाग करके कुश फैला देवे और उन्हीं पर नीचे लिखे
के पात्र और अन्यान्य पदार्थों को क्रम से एक के बाद दूसरा रख
पहला सबसे पश्चिम और फिर क्रम से उसके पूर्व पूर्व । वे यह
(१) शुद्ध जल से पूर्ण एक पात्र कुश से ढंका हुआ, (२) जि
बीच का गर्भ निकाल लिया गया है ऐसे दो पत्तों वाले
और परिस्तरण कुश का एक पूला, (३) यदि हवि (चरु)
तो उसके पकाने के लिये धातु या मिट्टी का बर्तन जिसे
स्थाली कहते हैं, (४) चरुका चावल और पूर्णमासादि में
की जगह (५) ओखली, (६) मुसल, (७) कांसे का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(८) धान के सहित बांस का सूप; क्योंकि दर्शपूर्णमासादि में वहीं पर कूट कर चावल बनाते हैं। साधारण होमों में केवल चावल ही रखलेना चाहिये यदि चरु का होम करना हो। (९) काठ की कलछी जिसे मेक्षण कहते हैं और जिसका काम पकाते समय चरु को चलाना है। (१०) २० इध्म २०-२० अंगुलों की पलाश आदि की या किसी यज्ञिय वृक्ष की, (११) घी, (१२) घी का बर्त्तन जिसमें वह गर्म किया जावे, (१३) स्रुव, (१४) सम्मार्जन के ५ कुश, (१५) जलसे भरा चमस या दूसरा पात्र जिसे प्रणीतापात्र कहते हैं, (१६) दो समिध १०-१० अंगुल की पलाश आदि की, (१७) एक आदमी के भरपूर खाने भर अन्न से भरा (पूर्ण) पात्र, (१८) दक्षिणा। यदि हवि न बनानी हो तो चावल या उसके बर्त्तन वगैरः कोई भी न होंगे और प्रायः विवाहादि में (३) से (९) तक के पदार्थों के रखने की आवश्यकता ही नहीं होती। इसके सिवाय चूड़ा, उपनयन के समय और विवाह आदि में बैल का गोबर या लावा आदि जिन विशेष पदार्थों की आवश्यकता होती है वे पूर्वोक्त पदार्थों के बाद उसी क्रम से रक्खे जाते हैं यज्ञ में जिस क्रम से उनकी आवश्यकता पड़ती जाती है। बर्त्तनों को औंध कर रखना चाहिये। घी का बर्तन और स्रुव आदि ही बर्त्तन हैं।

इस तरह सभी वस्तुओं के रख चुकने पर स्रुव, आज्यस्थाली आदि पात्रों का, जो औंधे मुंह थे, मुह ऊपर करके चमस या प्रणीता के जल से हाथ में जल लेकर उन पर औंधे हाथ गिरा गिरा कर उनका अभ्युक्षण करे और देखे कि उन में कुछ लगा तो नहीं है। फिर १० अंगुल वाली दो समिधों को चुपके से अग्नि में देकर पवित्र के कुशों को छोड़ परिस्तरण कुशों में से एक मुट्ठी लेकर कुण्ड या वेदी के चारों ओर उन्हें बिछावे। ईशान कोन से शुरू कर कि उत्तर यानी ईशान कोन तक पहुंच कर परिस्तरण पूरा करते हैं। जो कुश पूर्व, पश्चिम ओर होंगे उनकी जड़ दक्षिण और सिरा उत्तर रहेगा। जो उत्तर दक्षिण होंगे उनका सिरा पूर्व ओर रहेगा। पहले बिछों की जड़ पर से दूसरे बिछाये जाते हैं ताकि पहली जड़ दूसरी जड़ या सिरे से छिपजावे। नैर्ऋत्य में तो दक्षिण पश्चिम वालों की जड़ें तले ऊपर रहेंगी। मगर वायु कोन में पश्चिम वालों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिरे के नीचे उत्तर वालों की जड़ें रहनी चाहियें । इस तरह
बार बिछाकर इसे ऐसे ही बस करे या तीन अथवा पांच
तक बिछावे । यह बात कुश की संख्या पर निर्भर है और परिस्
के कुशों का कोई नियम है नहीं कि इतने हीं हों, जैसा कि ३५-३६
से स्पष्ट है । तदनन्तर २० इध्मों को घी में डुबो डुबो कर और
होकर प्रजापति का ध्यान करता हुआ अग्नि में छोडे । इसके
पवित्र के कुश को एक हाथ में लेकर जड़ से १० अंगुल पर
कुशों या तृणों को लगाकर उन्हीं से पवित्रवाले कुश के भाग
दो टुकड़े कर दे । इस तरह जो १० अंगुल का टुकड़ा होगा
पवित्र है । उसके बनाने के समय मन्त्र पढ़े—अस्य मंत्रस्य प्रजा
तिर्ऋषिर्यजुः पवित्रे देवते पवित्रछेदने विनियोगः ।
पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ ॥ नख से या अंगुली से तोड़कर
कभी न बनावे । फिर आचमन करके बायें हाथ में पवित्र की
पकड़ कर—प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः पवित्रे देवतेअनुमार्जने
नियोगः । ॐ विष्णोर्मनसा पूते स्थः— इस मन्त्र से
हाथ से उस पर जल गिरा कर उसको धोवे । फिर अपने आगे
पात्र (आज्यस्थाली) में पवित्र का अग्रभाग उत्तर रखकर रक्खे
उसी पर घी डाले। इसे सम्पवन करते हैं । इसके बाद औंधे हुए
हाथ पर या उससे मिलाकर औंधाही दहिना हाथ रख कर
हाथों की अनामिका और अंगूठे से उस पवित्र को उसी
उत्तराग्रही पकड़ कर एक बार उस घी को अगले मन्त्र से पूर्व
ऊपर को उछाले और दो बार चुपचाप ही उछाले । मन्
प्रजापतिर्ऋषिर्यजुराज्यं देवता आज्योत्पवने विनियो
ओं देवस्त्वासवितोत्पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेणवसोः
स्य रश्मिभिः ॥ तब पवित्र को हाथ में लिये हुए ही
औंधे हाथ से जल गिराकर उसे अग्नि में डालदेना चाहिये ।
उस घी को अग्नि पर रख कर गर्म करे और उतार कर उत्तर
रखदेवे । अनन्तर स्रुव को जल से धोकर और सम्मार्जन
उसकी जड़ से सिरे तक पूर्व ओर करके झाड़ कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तपावे और फिर जल से धोकर दोबारा तपावे और घी के वर्त्तन (आज्यस्थाली) से उत्तर रक्खे। तब यदि घी और चरु दोनों हों तो फिर उत्तर से उठाकर पश्चिम ओर कुशों पर घी रखकर उससे पश्चिम चरुको रक्खे। यदि केवल घी हो तो उसे ही पश्चिम ओर कुशपर रख कर उस से उत्तर कुश पर ही स्रुव रक्खे। पुनः चुपचाप अग्नि में १० अंगुल वाली समिध डालकर उसे दीप्त करे और चुपचाप अग्नि के उत्तर, पूर्व, दक्षिण ओर परिसमूहन कुशों से झाड़ कर दहिने घुटने को भूमि में टेक देवे और चमस या प्रणीता के जल को अंजली में लेकर कुण्ड के दक्षिण ओर नैर्ऋत्य कोन से अग्निकोन तक निरन्तर जलधारा इस मंत्र से गिरावे- प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दोऽदितिर्देवतोदकाञ्जलिसेचने विनियोगः। ॐ अदितेऽनुमन्यस्व ॥ फिर अग्नि से पश्चिम ओर नैर्ऋत्य से वायु कोन तक दूसरी अंजली से वैसे ही गिरावे और मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दोऽनुमतिर्देवतोदकाञ्जलिसेचने विनियोगः। ओं अनुमतेऽनुमन्यस्व ॥ अंत में उत्तर ओर वायव्य से ईशान तक गिरावे और मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दस्सरस्वती देवतोदकाञ्जलिसेचने विनियोगः। ओं सरस्वत्यनुमन्यस्व ॥ इसके बाद अंजली में जल ले कर होम के पदार्थों के साथ अग्नि के चारों ओर दक्षिणावर्त्त क्रम से एक या तीन बार गिरावे। पहली और दूसरी बार होम के पदार्थों के भी बाहर बाहर पानी गिरावे। मगर तीसरी बार उन्हें बाहर कर के केवल अग्नि को ही जल से घेरे। इसका मंत्र-प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दः सविता देवताऽग्निपर्युक्षणे विनियोगः। ओं देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्योगन्धर्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु ॥ फिर चुका मुका बैठ कर हाथ में कुश, अक्षत, फूल, फल और १० अंगुल वाली एक लकड़ी लेकर लकड़ी को आगे खड़ा करके उसके नीचे बायां और ऊपर दहिना हाथ लगाकर मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

षिर्निगदो रुद्ररूपोऽग्निर्देवता जपेविनियोगः । ओं त
श्चतेजश्च श्रद्धाच ह्रीश्च सत्यश्चाक्रोधश्च त्यागश्च धृति
श्च धर्मश्च सत्वञ्च वाक्चमनश्चात्मा च ब्रह्म च तानि प्रप
तानिमामवन्तु भूर्भुवः स्वरोम् महान्तमात्मानं प्रपद्ये
विरूपाक्षोऽसि दन्तांजिस्तस्यते शय्यापर्णे गृहा अन्त
रिक्षे विमत ँ हिरण्ययं तद्देवाना ँ हृदयान्ययस्मये कुम
अन्तः सन्निहितानि तानि बलभृच्च बलसाच रक्षतो प्रमर्
अनिमिषतः सत्यं यत्ते द्वादश पुत्रास्ते त्वा संवत्स
संवत्सरे कामप्रेण यज्ञेन याजयित्वा पुनर्ब्रह्मचर्यमुपयन्
त्वं देवेषु ब्राह्मणोऽस्यहं मनुष्येषु ब्राह्मणो वै ब्राह्मणमुपयं
वत्युपत्वाधावामि जपन्तं मा मा प्रतिजापीर्जुह्वन्तं मा
प्रतिहौषीः कुर्वन्तं मामा प्रतिकार्षीस्त्वां प्रपद्ये त्व
प्रसूत इदं कर्म करिष्यामि तन्मे राध्यतां तन्मे समृध्यत
तन्म उपपद्यता ँ समुद्रो मा विश्वव्यचा ब्रह्माऽनुजाना
तुथो मा विश्ववेदा ब्रह्मणः पुत्रोऽनुजानातु श्वात्रो मा प्र
तामैत्रावरुणोऽनुजानातु तस्मै विरूपाक्षाय दन्ताञ्ज
समुद्राय विश्वव्यचसे तुथाय विश्ववेदसे श्वात्रायप्रचेत
सहस्राक्षाय ब्रह्मणः पुत्रायनमः ॥ इस के बाद कुशको नैऋ
त्य कोन में फेंक कर अक्षत, फल, फूल दक्षिणावर्त्त घुमाकर ब्रह्मा
देवे और समिध को घी में डुबो कर अग्नि में डालदे । इस समूचे
के पढ़ने को प्रपदजप और विरूपाक्षजप कहते हैं । इसमें प
'प्रपद्ये' तक को, जहां से आगे 'विरूपाक्षोऽसि' है और जिसे प्रपद
कहते हैं, विना श्वास लिये अर्थ पर ध्यान कर पढ़े और 'विरूपा
ऽसि' से लेकर अन्त तक श्वास को केवल बाहर निकालता हुआ
फिर आज्यस्थाली के घी को स्रुव में ले कर व्याहृति होम करना
हिये । कहीं कहीं तीन व्याहृतियों से तीनहीं आहुति लिखी है
कहीं कहीं तीनों मिला कर चौथी भी । लेकिन जहां पर चरुका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहता है वहां प्रारम्भ में व्याहृति होम न करके केवल आज्यभाग की दो आहुतियां ही देते हैं । व्याहृति होम केवल घृत होम में होता है। पर वहाँ आज्य भाग नहीं होता। आघार होम तो कहीं भी नहीं होता। व्याहृति होम या आज्यभाग में प्रत्येक आहुति के बाद संस्रव किसी पात्र में रखना चाहिये । इसे सामवेदी सम्पात कहते हैं। व्याहृति होम-ओं व्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजा ऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दांसि अग्निवायुसूर्यादेवता आज्यहोमे विनियोगः । (१) ओं भूः स्वाहा इदमग्नये नमम । (२) ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम । (३) ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ यदि चौथी आहुति देनी हो तो-प्रजापतिर्ऋषिर्बृहती छन्दो बृहस्पतिर्देवता महाव्याहृतिहोमे विनियोगः-पढ़ कर (४) ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं बृहस्पतये नमम-से उसे देवे । आज्यभाग का होम स्रुव से स्रुक् में घी ले कर किया जाता है और यदि स्रुक् न हो तो स्रुव से ही। वे आहुतियां यह हैं-प्रजापतिर्ऋषिरग्निः सोमश्च क्रमेण देवते आज्यहोमे विनियोगः । (१) ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२) ओं सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम ॥ इसके बाद अब दोनों वेद वालोंका साधारण कर्म ग्रह होम और बलि जुदा जुदा न लिख कर एक ही प्रकार से लिख यह प्रकरण पूरा करते हैं । आगे के प्रकरणों में चूडाकरण आदि विशेष कर्म दोनों के अलग अलग लिखे हैं ।

११-ग्रहहोम और बलि ।

ग्रहों की पूजा दो प्रकार से की जाती है । एक वह जिसमें होम और बलि दी जाती है और दूसरा वह जिसमें यह बातें नहीं की जाती हैं । अथवा बलि तो दे देते हैं मगर होम नहीं करते । परन्तु अधिकतर यही बात है और प्रायः यही नियमसा है कि बलि और होम साथी हैं । इसलिये यदि होम न हो तो बलि भी नहीं करते ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अतएव इन बातों को भी साधारण कर्मों में ही लिख देना आवश्यक है। बलिपदार्थ प्रत्येक ग्रह का अलग अलग है। मगर यह भी लिखा है कि अभाव में केवल खीर की, उसके भी अभाव में दही, अक्षत मिला कर या दही, भात, उड़द मिलाकर बलि दी जा सकती है। होम के सम्बन्ध में कई बातें स्मरण रखने की हैं। यदि चौल उपनयनादि अनेक कर्म करने हों और उनकी अलग अलग वेदी या कुण्ड हों और ग्रह होम भी यदि करना हो तो उसके लिये अलग वेदी या कुण्ड बनावे और होम की सम्पूर्ण क्रिया करके उसकी पूर्णाहुति कर लेवे। परन्तु हमारी राय में ग्रह होम के लिये अलग कुश कण्डिका और ब्रह्मा का वरण एवं शेष कर्म के लिये अलग करना यह ठीक नहीं है। किन्तु एक ही वेदी या कुण्ड पर कुशकण्डिका करके ब्रह्मा का वरण करना और ग्रह होम करके शेष सभी कर्मों को समाप्त कर अन्त में पूर्णाहुति करके ब्रह्मा को द्रव्य सहित पूर्ण पात्र दान करना चाहिये। यदि पूर्णाहुति प्रत्येक प्रधान होम के बाद ही कर लें तो ग्रहहोम के बाद न करेंगे; क्योंकि वह प्रधान होम नहीं है। हां, जब ग्रह शान्ति करनी हो तो दूसरी बात है। वहां वही प्रधान कर्म है। परन्तु एकबार ब्रह्मा का वरण करके अन्त में ही सभी की पूर्णाहुति ही हमारे मत से ठीक है। फिर भी हम हर बार की पूर्णाहुति का विरोध नहीं करते। परन्तु ब्रह्मा का वरण, कुशकण्डिका, पंचभूसंस्कार, बर्हिहोमादि सभी क्रियाओं के बारबार करने के हम विरोधी हैं, यद्यपि परिपाटी ऐसी ही है। मैथिलों की पद्धतियों में तो हम देखते हैं कि बहुतेरों में एक ही होमवेदी मान कर भी बार बार पंच भूसंस्कारादि करने को लिखा है। यह नितान्त अनुचित है। अस्तु, दूसरी बात यह स्मरण रखने की है कि ग्रहों के होम से पहले उनकी समिधों का होम कर लिया जाता है। ग्रहों की समिधायें यह हैं—अर्कः पलाशः खदिरस्त्वपामार्गोऽथ पिप्पलः। औदुम्बरः शमीदूर्वा कुशश्च समिधः क्रमात्। मदार, पलाश, खेर, चिचिड़ी, पीपल, गूलर, शमी (एक प्रकार का बबूल), दूब और कुश यथा क्रमशः सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि, राहु और केतु की समिधायें हैं। परन्तु यदि ये न मिल सकें तो सभी की पलाश की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समिध हो सकती है। यदि पलाश भी न मिल सके तो समिध की जगह तिल और घी मिला कर ही होम कर देना चाहिये। पर, इसका यह अर्थ नहीं है कि समिधाओं के ढूंढ़ने का यत्न हीं छोड़ दिया जावे। यह तो न मिलने पर काम चलाने की रीति है। समिध १० अंगुल की होती है और अंगूठे के समान मोटी। न बहुत पतली और न बहुत मोटी हो। तीन दूब और तीन कुशों की एक समिध मानी जाती है। समिध को घी में डुबोकर होम करना चाहिये। यद्यपि ग्रहोंके सिवाय उनके अधिदेवता आदि की भी समिधायें हैं और वह केवल पलाश की ही हैं। परन्तु हम यहां केवल ग्रहों की समिधाओं का होम लिख देंगे। यदि कोई चाहे तो अन्यों का भी समिधहोम कर सकता है। क्योंकि मंत्र तो एक ही प्रकार का है। चाहे उससे समिधहोम कीजिये या घृतहोम।

पहले १८५ पृष्ठोक्त रीति से पंचभूसंस्कार करने से प्रथम ग्रहहोम का संकल्प करे—ॐ **अद्येहामुककर्मांगतयानुष्ठितग्रहपूजनांगतया होममहं करिष्ये**। फिर पंचभूसंस्कार पूर्वक वरद नामक अग्नि की स्थापना और पूजा आदि वहीं लिखी विधि से करे और ब्रह्मा का वरण तथा कुशकण्डिका की शेष क्रिया कर डाले। सारांश, अग्नि और प्रणीताके मध्य में प्रोक्षणीपात्र की स्थापना कर चुकने पर ब्रह्माको अन्वारम्भ करना चाहिये और यजमान दहिना घुटना टेककर पहले आघार और आज्यभाग की चार आहुतियां देकर ग्रहहोम करे और व्याहृति आदि की आहुतियां ग्रहादि के होम के बाद देवे ऐसा किसी का मत है। ग्रहों की आहुति के समय अन्वारम्भ न रहेगा और फिर अन्त में व्याहृति होम शुरू होने पर होगा। संस्रव भी अन्वारम्भ होने पर ही होगा। परन्तु जहां ग्रहों की शान्ति करनी हो वहां भले ही अन्त में व्याहृति होम हो। मगर और जगह तो पहले सभी आज्यभागादि १४ आहुतियां दी जावें और उनके बाद ग्रहहोम होवे। अतः ब्रह्मा के अन्वारम्भ पूर्वक चौदह आहुतियां देकर उनका संस्रव प्रोक्षणीपात्र में रख चुकने पर अन्वारम्भ छोड़कर और संस्रव रखना भी बन्द कर पहले समिध का होम करे (मदार)—**ओं आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवे-**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शयन्नमृतं मर्त्यं च । हिरण्ययेन सविता रथेनादेवोया
ति भुवनानि पश्यन्स्वाहा इदं सूर्यायनमम ॥१॥ (पलाश)
ॐ इमं देवा असपत्न ँ सुवध्वं महते क्षत्राय महते ज्यै
ष्ठ्याय महते जानराज्यायेन्द्रस्येन्द्रियाय । इमममुष्यपुत्र
ममुष्यै पुत्रमस्यैविश एषऽवो ऽमी राजा सोमोऽस्माक
ब्राह्मणानां ँ राजा स्वाहा इदं सोमायनमम ॥ २
(खैर)-ओं अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम
अपा ँ रेता ँ सि जिन्वति स्वाहा इदं भौमाय नमम
॥ ३ ॥ (चिचिड़ी)- ओं उद्बुध्यस्वाग्ने प्रतिजागृहि
त्वमिष्टापूर्त्ते सँ सृजेथामयं च । अस्मिन्त्सधस्थे
अध्युत्तरस्मिन् विश्वेदेवा यजमानश्च सदीत स्वाहा इ
बुधाय नमम ॥ ४ ॥ (पीपल)-ओं बृहस्पते अति यदर्यो
अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवसऋत
प्रजात तदस्मासुद्रविणंधेहि चित्र ँ स्वाहा इदं बृहस्पते
नमम ॥ ५ ॥ (गूलर)-ओं अन्नात्परिस्रुतो रसं ब्रह्मण
व्यपिबत्क्षत्रं पयः सोमं प्रजापतिः । ऋतेन सत्यमिन्द्रि
विपान ँ शुक्रमन्धस इन्द्रस्येन्द्रियमिदं पयोऽमृतं मधु
स्वाहा इदं शुक्राय नमम ॥ ६ ॥ (शमी)-ओं शन्नो देवी
रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु
स्वाहा इदं शनैश्चराय नमम ॥ ७ ॥ (दूब)-ओं कयानश्चित्र आभुवदूती सदा वृधः सखा । कयाशचिष्ठ
वृता स्वाहा इदं राहवे नमम ॥ ८ ॥ (कुश)-ओं केतुं
कृण्वन्नकेतवे पेशो मर्या अपेशसे । समुषद्भिरजायथा
स्वाहा इदं केतव नमम ॥ ९ ॥ इस प्रकार समिधहोम
बाद इन्हीं मंत्रों से घृत का होम भी करलेवे और यदि खीर भ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होवे तो उसका भी होम इन्ही मंत्रों से करके यदि इच्छा हो तो आगे के मंत्रों से अधिदेवता आदि का भी पलाश की समिध से प्रत्येक का होम करके फिर उन्हीं मंत्रों से घृत आदि का होम करे। पर, यदि न चाहे तो केवल घृत होम हीं करे या घृत और चरु का होम करे। पहले अधिदेवताओं का होम-ओं त्र्यम्बकं यजामहे-सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्स्वाहा इदं रुद्राय नमम ॥१॥ ओं श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्मइषाण स्वाहा इदमुमायै नमम ॥ २ ॥ ओं यदक्रन्दः प्रथमं जायमान उद्यन्समुद्रादुत वा पुरीषात् । श्येनस्य पक्षा हरिणस्य बाहू उपस्तुत्यं महिजातंतेऽअर्वन्स्वाहा इदं स्कन्दाय नमम ॥ ३ ॥ ओं विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसिवैष्णवमसि विष्णवे त्वा स्वाहा इदं विष्णवे नमम ॥ ४ ॥ ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोवेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्यविष्ठाः सतश्च योनिमसतश्चविवः स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम ॥ ५ ॥ ओं सजोषाइन्द्र सगणोमरुद्भिः सोमं पिब वृत्रहा शूर विद्वान् । जहि शत्रूँरप मृधो नुदस्वाथाभयं कृणुहि विश्वतोनः स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ ६ ॥ ओं असियमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितो गुह्येन व्रतेन । असिसोमेन समयाविपृक्त आहुस्ते त्रीणि दिवि बन्धनानिस्वाहा इदं यमाय नमम ॥ ७ ॥ इसके बाद भरसक किसी पल्लवादि से डालकर हाथ से जरा जल छूले। फिर-ओं कार्षिरसिसमुद्रस्यत्वा क्षित्या उन्नयामि। समापो अद्भिरग्मत समोषधीभिरोषधीः स्वाहा इदं कालाय नमम ॥८॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर जल छूवे । ओं चित्रावसो स्वस्ति पारमशीय स्वाहा इदं चित्रगुप्ताय नमम ॥ ९ ॥ फिर प्रत्यधिदेवताओंका होम ओं अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँ आसादयादिह स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ओं अप्सुमे मृतमप्सुभेषजमपामुत प्रशस्तिष्वश्वा भवत वाजिनः । देवीरापो योव ऊर्मिः प्रतूर्तिः ककुन्मान् वाजसस्तेनायं वाज ँ सेत्स्वाहा इदमद्भ्यो नमम ॥ २ ॥ ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरानिवेशनी । यच्छा नः शर्म सप्रथाः स्वाहा इदं पृथिव्यै नमम ॥ ३ ॥ ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा ँ सुरे स्वाहा इदं विष्णवे नमम ॥ ४ ॥ ओं त्रातारमिन्द्रमवितारमिद्र ँ हवे हवे सुहव ँ शूरमिन्द्रम् ह्वयामि शक्रं पुरुहूतमिन्द्र ँ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥५॥ ओं अदित्यै रास्नासीन्द्राण्या उष्णीषः पूषासि घर्माय दीष्व स्वाहा इदमिन्द्राण्यै नमम ॥ ६ ॥ ॐ प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्त्वयममुष्य पिताऽसावस्यपिता वय ँ स्याम पतयो रयीणा ँ स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ ७ ॥ ॐ नमोस्तुसर्पेभ्यो ये केच पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा इदं सर्पेभ्यो नमम ॥ ८ ॥ ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्यविष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्च विवः स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम॥९॥ फिर पञ्चलोकपालोंका होम ओं गणानां त्वा गणपति ँ हवामहे प्रियाणांत्वा प्रिय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पति ँ हवामहे निधीनांत्वा निधिपति ँ हवामहे वसो मम । आहमजानि गर्भधमा त्वमजासि गर्भधम् स्वाहा इदं गणपतये नमम ॥ १ ॥ ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मा नयति कश्चन । ससस्त्यश्वकः सुभाद्रिकां काम्पीलवासिनीम् स्वाहा इदं दुर्गायै नमम ॥ २ ॥ ॐ वातो वा मनो वा गन्धर्वाः सप्तवि ँ तिः । ते अग्रेअश्वमयुञ्जँस्तेऽ अस्मिन् जवमादधुः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ ३ ॥ ओं ऊर्ध्वा अस्य समिधो भवन्त्यूर्ध्वाशुक्रा शोचीँ ष्यग्नेः । द्युमत्तमा सुप्रतीकस्यसूनोः स्वाहा इदमाकाशाय नमम ॥ ४ ॥ ओं या वां कशामधुमत्यश्विना सूनृतावती । तया यज्ञं मिमिक्षतम् स्वाहा इदमश्विभ्यां नमम ॥ ५ ॥

इसके बाद दशदिक्पालों का होम-ओं त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्र ँ हवेहवे सुहव ँ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामिशक्रं पुरुहूतमिन्द्र ँ स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ १ ॥ ओं अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुपब्रुवे । देवाँ आसादयादिह स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ २ ॥ ओं असियमो अस्यादित्यो अर्वन्नसि त्रितोगुह्येन व्रतेन । असिसोमेन समया विपृक्त आहुस्तेत्रीणि दिविबन्धनानि स्वाहा इदं यमाय नमम ॥ ३ ॥ यहाँ जल स्पर्श करे। ओं एषते निर्ऋते भागस्तं जुषस्व स्वाहा इदं निर्ऋतये नमम ॥ ४ ॥ फिर जलस्पर्श । ओं इमम्मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके स्वाहा इदं वरुणाय नमम ॥ ५ ॥ ओं वातो वा मनोवा गन्धर्वाः सप्तवि ँ शतिः । तेअग्रे अश्वमयुञ्जँस्तेऽअस्मिञ्जवमादधुः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ ६ ॥ ओं वय ँ सोमव्रते तवमनस्तनूषु बिभ्रतः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रजावन्तः सचेमहि स्वाहा इदं कुबेराय नमम ॥ ७॥ ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम्। पूषानो यथा वेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये स्वाहा इदमीशानाय नमम ॥ ८ ॥ यहां जल स्पर्श। ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः। सबुध्न्या उपमाअस्य विष्ठाः सतश्चयोनिमसतश्च विवः स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम ॥ ९ ॥ ओं नमोस्तुसर्पेभ्यो येकेच पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा इदमनन्ताय नमम ॥ १० ॥ इसके अनन्तर विश्वकर्मादि की आहुति-ओं विश्वकर्मन्हविषावर्द्धनेन त्रातारमिन्द्रमकृणोरवध्यम्। तस्मैविशः समनमन्तपूर्वीरयमुग्रो विहव्यो यथाऽसत् स्वाहा इदं विश्वकर्मणे नमम ॥ १ ॥ ॐ वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवानः। यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा इदं वास्तोष्पतये नमम॥ ओं क्षेत्रपालाय स्वाहा इदं क्षेत्रपालाय नमम ॥ ३ ॥ अन्त की ये तीन आहुतियां कहीं कहीं नहीं लिखी हैं और कोई दोही मानते हैं। विश्वकर्मा की नही मानते।

जब सर्वतोभद्र मण्डल के देवताओं की पूजा की जाती है तो उनका भी होम किया जाता है। इसलिये उनकी भी आहुति लिखते हैं। वह यह हैं-(१) ॐ गणपतये स्वाहा इदं गणपतये नमम (२) ओं दुर्गायै स्वाहा इदं दुर्गायै नमम (३) ओं ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम। आगे भी सर्वत्र नामसे पहले 'ओं' और अन्त में 'स्वाहा इदं० नमम' लगा लेना चाहिये। संक्षेप के लिये सब जगह न लिखेंगे। (४) सोमाय० (५) ईशानाय० (६) इन्द्राय० (७) अग्नये० (८) यमाय० (९) नि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रतये० (१०) वरुणाय० (११) वायवे० (१२) ध्रुवाय० (१३) अध्वराय० (१४) सोमाय० (१५) अद्भ्यः० (१६) अनिलाय० (१७) नलाय० (१८) प्रत्यूषाय० (१९) प्रभासाय (२०) अजाय० (२१) एकपदे० (२२) अहिर्बुध्न्याय० (२३) विरूपाक्षाय० (२४) रैवताय० (२५) रहाय० (२६) बहुरूपाय० (२७) त्र्यम्बकाय० (२८) सुरेश्वराय० (२९) सवित्रे० (३०) जयन्ताय० (३१) पिनाकिने० (३२) रुद्राय० (३३) धात्रे० (३४) मित्राय० (३५) यमाय० ३६) रुद्राय० (३७) वरुणाय० ३८) सूर्याय० (३९) भगाय० (४०) विवस्वते० (४१) पूष्णे० (४२) सवित्रे० (४३) त्वष्ट्रे० (४४) विष्णवे० (४५) अश्विभ्यां० (४६) क्रतवे० (४७) दक्षाय० (४८) वसवे० (४९) सत्याय० (५०) कालाय० (५१) कामाय० (५२) अध्वराय० (५३) रोचनाय० (५४) पुरूरवसे० (५५) आर्द्रवाय० (५६) सोमपाय० (५७) अग्निष्वात्ताय० (५८) बर्हिषदे० (५९) सुकालाय० (६०) एकशृंगाय० (६१) शूद्राय० (६२) सोमाय० (६३) कश्यपाय० (६४) अत्रये० (६५) भारद्वाजाय० (६६) विश्वामित्राय० (६७) गौतमाय० (६८) जमदग्नये० (६९) वसिष्ठाय० (७०) अनन्ताय० (७१) वासुकये० (७२) शेषाय० (७३) तक्षकाय० (७४) कर्कोटकाय० (७५) पद्माय० (७६) महापद्माय० (७७) शंखपालाय० (७८) कंबलाय० (७९) पिशाचेभ्यः० (८०) गुह्यकेभ्यः० (८१) सिद्धेभ्यः० (८२) भूतेभ्यः० (८३) सर्पेभ्यः० (८४) विश्वावसवे०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(८५) गन्धर्वाय० (८६) हाहै० (८७) हूहै० (८८
घृताच्यै० (८९) मेनकायै० (९०) रंभायै० (९१
उर्वश्यै० (९२) तिलोत्तमायै० (९३) सुकेश्यै० (९४
मञ्जुघोषायै० (९५) रुद्रेभ्यः० (९६) स्कन्दाय० (९७
नन्दीश्वराय० (९८) शूलाय० (९९) महादेवाय०
(१००) रुद्राय० (१०१) श्रियै० (१०२) विष्णवे०
(१०३) मरुद्गणाय० (१०४) पितृभ्यः० (१०५
रोगाय० (१०६) मृत्यवे० (१०७) वसुभ्यः० (१०८
विघ्नराजाय० (१०९) अद्भ्यः० (११०) समीराय०
(१११) मारुताय० (११२) मरुते० (११३) जगत्प्र
णाय० (११४) समीरणाय० (११५) मातरिश्वने
(११६) मेदिन्यै० (११७) गंगायै० (११८) सरस्वत्यै
(११९) सरय्वै० (१२०) कौशिक्यै० (१२१) वेत्र
वत्यै० (१२२) गोदायै० (१२३) ताप्यै० (१२४
रेवायै० (१२५) पयोदायै० (१२६) कृष्णायै० (१२७
भीमरथ्यै० (१२८) तुंगभद्रायै० (१२९) क्षुद्रनदीभ्यः
(१३०) लवणसमुद्राय० (१३१) इक्षुसमुद्राय० (१३२
सुरासमुद्राय० (१३३) सर्पिःसमुद्राय० (१३४
दधिसमुद्राय० (१३५) क्षीरसमुद्राय० (१३६) जल
वनसमुद्राय० (१३७) आदित्याय० (१३८) सोमाय०
(१३९) भौमाय० (१४०) बुधाय० (१४१) बृहस्प
तये० (१४२) शुक्राय० (१४३) शनैश्चराय० (१४४
राहवे० (१४५) केतवे० (१४६) ब्राह्म्यै० (१४७
माहेश्वर्यै० (१४८) कौमार्यै० (१४९) वैष्णव्यै
(१५०) वाराह्यै० (१५१) इन्द्राण्यै (१५२) चामुण्डायै

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१५३) वज्राय० (१५४) शक्तये० (१५५) दण्डाय० (१५६) खड्गाय० (१५७) पाशाय० (१५८) अंकुशाय० (१५९) गदायै० (१६०) त्रिशूलाय० (१६१) पद्माय० (१६२) चक्राय० (१६३) श्रीमहाविष्णवे स्वाहा इदं० ॥ अन्त में फिर तीन व्याहृति होम करके होम पूरा करना चाहिये। (१) ओं भूः स्वाहा इदमग्नये नमम (२) ॐ भुवः स्वाहा इदंवायवे नमम (३) ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥

इसके बाद बलि देना चाहिये। हमारे विचार से फिर अन्त में बलि देने की कोई आवश्यकता नहीं है, जैसा कि कहीं कहीं लिखा है। बात यह है कि लोग कर्म की समाप्ति के बाद भी ग्रहादि की पूजा किया करते हैं। जिसे उत्तरपूजा कहते हैं। जो लोग उत्तर पूजा करें वह अन्त में भी बलिदेवें। मगर हमने उत्तर पूजा नहीं लिखी है। अतएव अन्त में बलि की आवश्यकता नहीं है। बता ही चुके हैं कि (१) खीर, (२) दही, भात, उड़द या (३) दही अक्षत इन तीन में से कोई भी बलि दी जा सकती है। ग्रह वेदी के उत्तर जगह साफ करके फिरसे गोबर से लीप देवे और उसी जगह पहले ग्रहों की बलि उत्तर उत्तर क्रम से रक्खे। उसके पूर्व उनकी अधिदेवताओं की भी उत्तर उत्तर क्रमसे ठीक सामने सामने। इसी तरह उससे पूर्व प्रत्यधिदेवताओं की। फिर पंच लोकपालों की और अन्त में दश दिक्पालों की। सबसे पूर्व वास्तोष्पति वा वास्तु पुरुष की बलि रक्खी जायगी। किसी के मतसे होमवेदी या कुण्ड की दसों दिशाओं में दिक्पाल बलि दी जानी चाहिये और किसी के विचार से मण्डप की दसों दिशाओं में जहां दिक्पालों के कलशादि हैं और वास्तुबलि, यदि वास्तुवेदी हो तो उसके निकट। मगर हमारे विचार से सर्वत्र के लिये एकही नियम है और ग्रह वेदी से उत्तर ही पूर्वोक्त रीतिसे देना उचित है। प्रत्येक बलि के साथ एक एक दीप भी चाहिये। अब रहगई एक क्षेत्रपाल की बलि। उसके लिये चार बत्तियोंवाला दीप चाहिये और बलि के साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पान, द्रव्य चाहिये । उसकी बलि तिल मिले भात (कृसर) से होती है जिसमें सिन्दूर, कज्जल और दही भी ऊपर से मिलादेते हैं यह बलि चौराहे पर रक्खी जाती है और इसका लेजाने वाला तो पतित वा वर्णसंकर ब्राह्मण होता है या शूद्र । किसी बर्त्तन दोने में सभी चीजें रखकर भेजते हैं ।

बलिदेने में जो वाक्य बोलाजायगा उसमें हरेक देवता के नाम ॐ सहित चतुर्थी विभक्ति लगाकर पहले बोलेंगे, जैसे ॐ सूर्या ॐ चन्द्राय इत्यादि । हम भी प्रत्येक बलि के समय इसे लिखदेंगे मगर इसके बाद– **नांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एषसदीपोबलिर्नमः**—इतना हरबार कह कर उस दी सहित बलि को उसके स्थान पर रख देते हैं । इसलिये इतना बार हम एक बार लिख कर छोड़ देंगे । बार बार उसे ही देखकर पढ़ना या याद करके कहना चाहिये । फिर बलि और दीप रखदेने पर उ पर जल छिड़कने के लिये जो वाक्य हर बार बोला जायगा उस ' भोः ' शब्द के साथ देवता का नाम ' भोः सूर्य, भोः चन्द्र इत्यादि पहले कहेंगे और हम भी इसे बार बार लिख दिया करेंगे परन्तु इसके बाद जो वाक्य बोला जायगा वह–**एतं सदीपं बलिं गृहाण अस्य यजमानस्य मम सपरिवारस्य आयुष्कर्त्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता वरदो भव**–यह है । इसे भी हम एक ही बार लिखेंगे । उससे बारबार काम चलाना चाहिये अर्थात् उसे ही बार बार कहकर बलि पर जल छिड़कना चाहिये सब से प्रथम ग्रहों की बलि दी जा५– (१) **ओं सूर्याय सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एष सदीपो बलिर्नमः** ॥ यह पढ़कर बलि रक्खे और— **भोः सूर्य एतं सदीपं बलिं गृहाण अस्य यजमानस्य मम सपरिवारस्य आयुष्कर्त्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता वरदोभव**–इस मंत्र से उस पर जल छिड़के आगे भी हरबार इसी तरह करे । (२) ॐ चन्द्राय० ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चन्द्र० ॥ (३) ॐ भौमाय० ॥ भो भौम० ॥ (४) ॐ बुधाय० ॥ भो बुध ॥ (५) ॐ गुरवे० ॥ भो गुरो० ॥ (६) ॐ शुक्राय० ॥ भोः शुक्र० ॥ (७) ॐ शनैश्चराय० ॥ भोः शनैश्चर० ॥ (८) ॐ राहवे० ॥ भोः राहो० ॥ (९) ॐ केतवे० ॥ भोः केतो० ॥ तब अधिदेवता की बलि— (१) ॐ ईश्वराय० ॥ भो ईश्वर० ॥ (२) ॐ उमायै सांगायै सपरिवारायै सायुधायै सशक्तिकायै एष सदीपो बलिर्नमः ॥ भो उमे एतं सदीपं बलिं गृहाण अस्य यजमानस्य मम सपरिवारस्य आयुष्कर्त्री क्षेमकर्त्री शान्तिकर्त्री तुष्टिकर्त्री पुष्टिकर्त्री वरदा भव ॥ स्त्रीलिङ्ग में कहीं कहीं विशेषता थी। इसीलिये लिख दिया। आगे जब जब आवश्यकता हो तो इसी तरह काम चलेगा। (३) ॐ स्कन्दाय० ॥ भोः स्कन्द० ॥ (४) ओं विष्णवे० ॥ भो विष्णो० ॥ (५) ओं ब्रह्मणे० ॥ भो ब्रह्मन्० ॥ (६) ओं इन्द्राय० ॥ भो इन्द्र० ॥ (७) ओं यमाय० ॥ भो यम० ॥ इसके बाद हाथ धोले या जल स्पर्श करले। (८) ॐ कालाय० ॥ भोः काल० ॥ फिर जल स्पर्श। (९) ओं चित्रगुप्ताय० ॥ भोः चित्रगुप्त० ॥ प्रत्यधिदेवता की बलि—(१) ओं अग्नये० ॥ भो अग्ने० ॥ (२) भों अद्भ्यः सांगाभ्यः सपरिवाराभ्यः सायुधाभ्यः सशक्तिकाभ्यः एष सदीपोबलिर्नमः ॥ भो आप एतं सदीपं बलिं गृहणीत सपरिवारस्यास्य यजमानस्य मम आयुष्कर्त्र्यः क्षेमकर्त्र्यः शान्तिकर्त्र्यः तुष्टिकर्त्र्यः पुष्टिकर्त्र्यो वरदा भवत ॥ स्त्रीलिङ्ग बहुवचन होने से भेद था। अतएव लिख दिया। आगे इसी से काम चलाना होगा। (३) ओं भूम्यै० ॥ भो भूमे० ॥ यहां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'उमा' की ही तरह पढ़े। (४) ओं विष्णवे० ॥ भो विष्णो०
(५) ओं इन्द्राय० ॥ भो इन्द्र० ॥ (६) ओं इन्द्राण्यै०
भो इन्द्राणि०॥ यहां भी 'उमा' की तरह पढ़े। (७) ॐ प्रजा
तये०॥ भोः प्रजापते० (८) ओं सर्पेभ्यः सांगेभ्यः सप
वारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः० ॥ भोः सर्पाः एतं स
दीपं बलिं गृह्णीत सपरिवारस्य अस्य यजमानस्य म
आयुष्कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्ता
पुष्टिकर्त्तारः वरदा भवत॥ पुल्लिङ्ग बहुवचन होने से लिखा है
(९) ओं ब्रह्मणे० ॥ भो ब्रह्मन्० ॥ पंच लोकपाल की बलि
(१) ओं विनायकाय० ॥ भो विनायक० ॥ (२) ओं
दुर्गायै० ॥ भो दुर्गे० ॥ यहां भी 'उमा' ही की तरह पढ़े। (३
ओं वायवे० ॥ भो वायो० ॥ (४) ओं आकाशाय० ॥ भो
आकाश०॥ (५) ओं अश्विभ्यां सांगाभ्यां सपरिवाराभ्
सायुधाभ्यां सशक्तिकाभ्यां एष सदीपो बलिर्नमः
भो अश्विनौ एतं सदीपं बलिं गृह्णीतं सपरिवारस्या
यजमानस्य मम आयुष्कर्त्तारौ क्षेमकर्त्तारौ शान्ति
कर्त्तारौ तुष्टिकर्त्तारौ पुष्टिकर्त्तारौ वरदौ भवतम् ॥
दिक्पालबलि- (१) ओं इन्द्राय० ॥ भो इन्द्र० ॥ (
ओं अग्नये० ॥ भो अग्ने० ॥ (३) ओं यमाय० ॥
यम० ॥ यहां जलस्पर्श करे। (४) ओं निर्ऋतये० ॥ भो नि
ते० ॥ यहां भी जलस्पर्श। (५) ओं वरुणाय० ॥ भो
ण० ॥ (६) ओं वायवे० ॥ भो वायो० ॥ (७)
कुबेराय० ॥ भोः कुबेर० ॥ (८) ओं ईशाय० ॥
ईश० ॥ (९) ओं ब्रह्मणे० ॥ भो ब्रह्मन्० ॥ (१०)
अनन्ताय० ॥ भो अनन्त० ॥ वास्तुपुरुषबलि-ओं वास्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ष्पतये० ॥ भो वास्तोष्पते० ॥ अन्त में क्षेत्रपाल की बलि के लिये एक पात्र वा दोना लाकर उसमें भात, तिल, उड़द रख ऊपर से दही डाल कर सिन्दूर और कज्जल डाल देवे । फिर उसी पर चार बत्तियों वाला दीपक जलाकर उसी के निकट पान और द्रव्य रखकर एक स्थान पर रक्खे और मन्त्र पढ़े-ॐ क्षेत्रपालाय भूतप्रेतपिशाचडाकिनीशाकिनीवेतालदिपरिवारयुताय एष सदीपः सताम्बूलदक्षिणो बलिर्नमः ॥ फिर-भोः क्षेत्रपाल दिशो रक्ष बलिं भक्षय सपरिवारस्य यजमानस्य मम आयुष्कर्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता वरदो भव-इसे पढ़कर ऊपर जल छिड़क देवे । इसके बाद जब पतित या वर्णसंकर ब्राह्मण या शूद्र लेकर चौराहे पर उसे रखने चले तो यह मन्त्र पढ़कर उस आदमी पर अक्षत छिड़कताजावे-ओं भूताय त्वा नारातये स्वरभि विख्येषं दृꣳहन्तांदुर्याः पृथिव्याम् । उर्वन्तरिक्षमन्वेमि-पृथिव्यास्त्वानाभौ सादयाम्यदित्या उपस्थेऽग्ने हव्यꣳ रक्ष ॥ इसके बाद आचमन करके जहां वह बलि रक्खी थी वहं स्थान पोते या उसपर जल छिड़के । जल छिड़कने का मन्त्र-ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयःशान्तिर्विश्वेदेवाःशान्ति-र्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ शान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ इसके बाद यदि और होमों के लिये दूसरी वेदी आदि होवें या एक वेदी होने पर भी अलग अलग पूर्णाहुति की जाने को हो तब तो पूर्णाहुति कर डाले । पर, यदि एकही कर्म करना हो चौल या उपनयन आदि, तब तो उसी के साथ पूर्णाहुति होगी । या यदि कई कर्मों की एक साथ ही पूर्णाहुति करनी हो तब भी अन्त में ही पूर्णाहुति होगी । पूर्णाहुति करने पर तो होम के अन्त में संस्रवप्राशन और बर्हिः होम आदि भी करना होगा और ब्रह्मा को दक्षिणा भी वहीं देनी होगी । इन सबों की विधि समावर्तन के अन्त में मिलेगी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हम यहां इसलिये नहीं लिखते कि हमारे मत से एक ही बार
में पूर्णाहुति होनी चाहिये ।

(३)

जातकर्म और नामकरण ।

१—सुखप्रसव (यजुर्वेदीय) ।

अन्यान्य गर्भाधानादि संस्कार प्रायः होते ही नहीं और प्रायः
कोई जानता भी नहीं । इसी लिये इस समय उनकी आवश्यक
नहीं हीं पड़ती है । अतः इस अवसर पर उन्हें, संभव हुआ तो
कभी लिखने की आशा पर, छोड़ कर जातकर्म और उसके
नामकरण (नाम रखना) इन्हीं दो संस्कारों को एक ही प्रक
में लिखते हैं । सो भी पहले यजुर्वेदियों की विधि लिखकर पीछे
सामवेदियों की लिखेंगे । पहले यह देखकर कि गर्भवती के सन्
उत्पन्न होने में देर हो रही है और उसे कष्ट भी हो रहा है, उस
के दूर करने का प्रयत्न कर लेना चाहिये । इसे ही सुखप्रसवो
या सोष्यन्तीकर्म कहते हैं । इसके लिये पहला उपाय यह है
दूब की २१ नवीन फुनगियां लेकर चार रुपये भर तिल के तेल
डाले फिर गर्भिणी के ऊपर तेल का बर्तन हाथ में रख कर दूब
फुनगियों को तेल में हाथ से घुमावे और १०८ बार यह मंत्र पढ़

**ओं हिमवत्युत्तरे पार्श्वे शबरी नाम यक्षिणी । तस्या
पुरशब्देन विशल्या स्यात्तु गर्भिणी स्वाहा ॥** फिर

८	१
३	५
४	६

तेल का कुछ अंश गर्भिणी को पिलाकर शेष उसके
पेट पर लगावे । दूसरा उपाय पन्द्रहा नामका यंत्र
है । इसे गर्भिणी की आंखों के सामने लिखना
चाहिये । बस इतना हीं काम है । इसीसे उसे
लाभ होगा । तीसरी बात यह है कि—ओं एजतु
मास्यो गर्भो जरायुणा सह । यथायं वायुरेजति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समुद्र एजति । एवायं दशमास्या अस्रजरायुणा सह-
यह मन्त्र पढ़ पढ़कर तीन बार उस स्त्री पर जल छिड़के और उसके समीप बैठकर भरसक पति, नहीं तो कोई विज्ञ पुरुष, यह मंत्र पढ़े-
ओं अवैतु पृश्निशेवलं ५ शुने जराय्वात्तवे नैवमा ५ सेन पीवरि। नकस्मिँश्चनायतमव जरायु पद्यताम्। इतिसुखप्रसव।

पुत्र के उत्पन्न होने पर कुलदेवता और वृद्धों को प्रणाम करके पुत्र का मुख देखे और नदी आदि के या कूंए से निकाले सोना मिले ठंडे जल से शरीर पर के सभी वस्त्रों के साथ स्नान करे। पर यदि बालक मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा नक्षत्रों या गण्डान्त मूल और व्यतीपात आदि अनिष्ट समय में उत्पन्न हुआ हो तो उसका मुख देखे विनाहीं स्नान करे। परन्तु स्नान से पूर्व संकल्प करलेवे-ओं अद्यामुकतिथौ अमुकशर्म्माहं पुत्रजन्मनिमित्तकं सचैलस्नानं करिष्ये। मूल ज्येष्ठा आदि अनिष्ट समय का विचार अन्तिम प्रकरण में मिलेगा। स्नान के बाद नवीन वा धोया वस्त्र पहन तिलक लगाकर पूर्व मुख बैठे और आचमन प्राणायाम के बाद ७६ पृष्ठोक्त रीतिसे कर्मपात्र चन्दन, अक्षत, पुष्प, जलादि से सम्पन्न करे। पुत्रोत्पत्ति के १२ या १६ दण्ड (प्रायः ५ या ६ घंटे) के बादही उसका नाल काटा जाता है और नालच्छेदन के बादही आशौच लग जाता है, जिसमें प्रायः सभी धर्मकार्य वर्जित हैं। इसलिये नालछेदन से पूर्वही जातकर्म नाम का संस्कार पूरा हो जाना चाहिये। पूजा की सभी सामग्री को एकत्र करके पहले कुश तिल जल हाथ में लेकर १०८ पृष्ठोक्त प्रधान संकल्प करे। उसमें विशेषता इतनी रहेगी कि सम्पूर्ण देश कालादि के कहने के बाद-
अमुक कर्मकरिष्ये-की जगह-अस्य कुमारस्य गर्भवासजनितसकलदोषनिवृत्तिपूर्वकमायुर्मेधाभिवृद्धये बीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणद्वारा परमेश्वरप्रीत्यर्थं जातकर्म करिष्ये, तस्य निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं गणपतिपूजनं तन्निमित्तकं पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं वसोर्धारापूजनं हेम्ना नान्दीश्राद्धं नवग्रहादिपूजनं च करिष्ये। फिर १०३ पृष्ठोक्त रीति से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गणपतिगौरीपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, वसोर्द्धारापूजा नान्दीश्राद्ध और कलश स्थापन करके उसी में वरुण और ग्रहों की पूजा करे या ग्रहों की अलग ही पूजा करे। जातकर्म में जो नान्दीश्राद्ध किया जाता है वह केवल सोने से किया जाता है जिसे हेमश्राद्ध कहते हैं। वह आम अन्न के मूल्य के बराबर, दूना चौगुना या यथा शक्ति दिया जाता है। उसके संकल्प में—अमुक कर्माङ्गतया। इत्यादि की जगह-पुत्रजननिमित्तं नान्दीश्राद्धं हेम करिष्ये-'ऐसा कहना चाहिये। पुण्याहवाचन में जहाँ अनेन लिखा है कि-अनेन पुण्याहवाचनेन प्रजापतिः प्रीयताम्-वहाँ अनेन पुण्याहवाचनेन सविता प्रीयताम्-ऐसा कहना चाहिये। स्मरण रहे कि आगे वाली मंत्र जपने की क्रिया पिता की है पर, यदि पिता असमर्थ हो, न जपसके तो उसका प्रतिनिधि आचार्य जपेगा। अतएव ७४ पृष्ठोक्त विधि के अनुसार आचार्य का वरण करना होगा। फिर मेधाजनन नामक क्रिया करने के लिये सोने अथवा किसी धातु के पात्र में मधु और घी मिलाकर या केवल मधु लेकर तथा दाहिने हाथ की अनामिका अंगुली के आगे सोने की अंगूठी या पत्तर लगाकर उसी से उस घी या मधु मिले घी को बालक की जीभ में लगावे और ये मंत्र एक या तीन बार पढ़े-ओं भूस्त्वयि दधामि। ओं भुवस्त्वयि दधामि। ओं स्वस्त्वयि दधामि। ओं भूर्भुवः स्वः सर्वन्त्वयि दधामि। इसके बाद आयुष्यकरण नामक कर्म करने के लिये बालक के दहिने कान या नाभि के समीप मुख लगाकर इन मंत्रों को जपे- ओं अग्निरायुष्मान्स वनस्पतिभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषायुष्मन्तं करोमि ॥ १ ॥ ओं सोम आयुष्मान्त्स ओषधीभिरायुष्माँस्तेन त्वाऽऽयुषाऽऽयुष्मन्तंकरोमि ॥२॥ ॐ ब्रह्मायुष्मत्तद्ब्राह्मणैरायुष्मत्तेनत्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥३॥ ओं देवा आयुष्मन्तस्तेऽमृतेनायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि॥ ओं ऋषयआयुष्मन्तस्ते व्रतैरायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करोमि ॥५॥ ओं पितर आयुष्मन्तस्ते स्वधाभिरायुष्मन्तस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ६ ॥ ओं यज्ञ आयुष्मान्त्स दक्षिणाभिरायुष्माँस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ७ ॥ ओं समुद्र आयुष्मान्त्स स्रवन्तीभिरायुष्माँस्तेन त्वायुषायुष्मन्तं करोमि ॥ ८ ॥ फिर आगे के मंत्र को एक या तीन बार जपे-ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम् ॥ तदनन्तर कुमार के दीर्घायु होने के लिये आगे के ग्यारह मंत्रों को जपता हुआ बालक के सभी अंगों पर हाथ फेरे-ओं दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निरस्मद् द्वितीयं परिजातवेदाः । तृतीयमप्सु नृमणा अजस्रमिन्धान एनं जरते स्वाधीः ॥ १ ॥ विद्मा ते अग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्माते धाम विभृता पुरुत्रा। विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यत आजगन्थ ॥२॥ समुद्रेत्वानृमणा अप्स्वन्तर्नृचक्षाईधे दिवो अग्न ऊधन् । तृतीयेत्वा रजसितस्थिवांसमपामुपस्थे महिषाअवर्द्धन् ॥ ३ ॥ अक्रन्ददग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामारेरिहद्वीरुधः समञ्जन् । सद्यो जज्ञानो विहीमिद्धो अख्यदारोदसी भानुनाभात्यन्तः ॥ ४ ॥ श्रीणामुदारो धरुणोरयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ॥ वसुःसुनुःसहसो अप्सुराजा विभात्यग्र उषसामिधानः ॥ ५ ॥ विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ आरोदसी अपृणाज्जायमानः । वीडुं चिदद्रिमभिनत्परायन् जना यदग्निमयजन्त पञ्च ॥ ६ ॥ जाशकृपावको अरतिःसुमेधा मर्त्येष्वग्निरमृतो निधायि । इयर्त्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषाद्यामिनक्षन् ॥ ७ ॥ दृशानो रुक्म उर्व्या व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्रियेरुचानः । आग्निरमृतो अभवद् वयोभिर्यदेनं द्यौरज
नयत्सुरेताः ॥८॥ यस्तेअद्यकृणवद्भद्रशोचे पूषन्देवघृतवन्
मग्ने । प्र तंनय प्रतरंव यो अच्छाभिसुम्नं देवभक्तं यविष्ठ॥
आ तं भज सौश्रवसेष्वग्न उक्थ उक्थ आभज शस्यमाने
प्रियः सूर्ये प्रियो अग्ना भवात्युज्जातेन भिनदद्युज्जनित्वै
॥ १० ॥ त्वामग्ने यजमाना अनुद्यून् विश्वावसु दधि
रे वार्याणि । त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमन्तमुशिजो
विवव्रुः ॥ ११ ॥ इन मन्त्रों के जपको वात्सप्रजप कहते हैं । क्योंकि
इनका ऋषि वात्सप्री है । फिर कुमारकी ओर देखनेवाले पूर्व, दक्षिण
पश्चिम और उत्तर चार ब्राह्मणों को और बीच में या नैर्ऋत्य
कोन में ऊपर देखने वाले पांचवें को बैठाकर उनसे पिता या उनके
प्रतिनिधि आचार्य कहे कि– " इममनुप्राणित "–फिर पूर्ववाले
ब्राह्मण "प्राण" दक्षिण का "व्यान" पश्चिम का "अपान"
उत्तर का "उदान" और नैर्ऋत्य का या मध्य वाला "समान"
ऐसा कहे। सभी कुमार को देखकर ही ऐसा बोलें । यदि पांच ब्राह्मण
हों तो पिता ही पांचों स्थानों पर जाकर वैसा ही बोले । यदि
पिता ही ऐसा करे तब उसको यह कहने की आवश्यकता नहीं कि
" इममनुप्राणित " । इसके बाद जिस भूमिपर बालक गर्भ से बाहर
आया हो उसे दहिने हाथ की अनामिका से छूकर यह मन्त्र पढ़े
ओं वेद ते भूमि हृदयं दिवि चन्द्रमसि श्रितम् । वेदाहं
तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं
शृणुयाम शरदः शतम् । इसके अनन्तर बालकके समूचे शरीर
पर हाथ फेरता हुआ मन्त्र पढ़े–ओं अश्मा भव परशुर्भव हि
रण्यमस्तृतं भव । आत्मा वै पुत्रनामासि स जीव शरदः
शतम् । यदि किसी कारण से यहां तक की क्रियायें जन्मकाल
में न की गई हों तो पीछे भी किसी शुभ मुहूर्त्त में की जा सकती हैं
क्योंकि ये सभी संस्कार हैं और संस्कार दूसरे समय में भी किये
जा सकते हैं यदि कोई कारण आपड़े । फिर बालक की माता की ओर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देखकर मन्त्र पढ़े-ओं इडासि मैत्रावरुणी वीरे वीरमजीजनथाः। सा त्वं वीरवती भव याऽस्मान्वीरवतोऽकरत्। तब माता के दहिने स्तन को धोकर बालक के मुँह में लगावे और मन्त्र पढ़े-ओं इमꣳ स्तनमूर्ज्जस्वन्तं धयापां प्रपीनमग्रे शरीरस्य मध्ये। उत्संजुषस्व मधुमन्तमर्वन्त्समुद्रियꣳ सदनमाविशस्व। पुनः बायें को धोकर बालक के मुह में देते समय भी ऊपर वाला मन्त्र तो पढ़ेंगे ही। मगर पहले यह पढ़े-ओं यस्ते स्तनः शशयो यो मयोभूर्यो रत्नधावसुविद्यः सुदत्रः। येन विश्वा पुष्यसि वार्याणि सरस्वति तमिह धावतेऽकः॥ फिर ऊपर वाला पढ़े। अनन्तर बालक की माता की खाट के सिरहाने जल से भरा घड़ा यह मन्त्र पढ़कर रक्खे-ओं आपो देवेषु जाग्रथ यथा देवेषु जाग्रथ। एवमस्याꣳ सूतिकायाꣳ सपुत्रायां जाग्रथ। यह घड़ा १० दिन तक वहीं संरक्षित रहना चाहिये। ग्यारहवें दिन हटाया जाता है। तब सूतीगृह के द्वार पर एक किनारे में एक हाथ लम्बी चौड़ी और चार अंगुल ऊँची पूर्वोक्त रीति से वेदी बनाकर उस पर १८५ पृष्ठोक्त पंचभूसंस्कार करके अग्नि क स्थापना पूर्ववत् करे। जातकर्म के अग्नि का नाम प्रगल्भ है। इस लिये पूर्वोक्त रीति से अग्नि की स्थापना, प्रतिष्ठा, पूजा आदि ज्यों की त्यों करे। हां, सिर्फ जहां जहां 'अग्नये', या 'अग्ने' आदि पद आवें वहां उनसे पहिले 'प्रगल्भ' पद जोड़ कर 'प्रगल्भाग्नये -प्रगल्भाग्ने' इत्यादि बोले। फिर चावल के कण और पीली सरसों को मिला कर उसी की दो आहुति उस समय देवे और आगे प्रत्येक सायं और प्रातः काल उसी तरह दो आहुतियां दस दिन तक देता रहे। इस आहुति को हाथ से देते हैं। इसीलिये दस दिन तक अग्नि को निरन्तर रखते हैं और बुझने नहीं देते। दोनों आहुतियों के मन्त्र यह हैं-(१) ओं शण्डामर्का उपवीरः शौण्डिकेय उलूखलः। मलिम्लुचो द्रोणासश्च्यवनो नश्यतादितः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२) ओं आलिखन्ननिमि
किंवदन्त उपश्रुतिः । हर्य्यक्षः कुम्भो शत्रुः पात्रपा
नृमणिः । हन्त्रीमुखः सर्षपारुणश्च्यवनो नश्यतादितः
हा इदमग्नये नमम ॥ यदि बालक अधिक रोवे तो समझ
चाहिये कि कुमार नामका ग्रह उसे दिक कररहा है। अतः उसकी निवृ
के लिये बालक को मछली की जाल या चदरे से ढँक कर अप
गोद में रक्खे और यह मन्त्र पढ़े-ॐ कूर्कुरः सुकूर्कुरः कूर्कु
बालबन्धनः । चेचेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो ल
ताह्वर ॥ १ ॥ तत्सत्यं यत्ते देवावरमदुः स त्वं कुमार
वाऽवृणीथाः । चेचेच्छुनक सृज नमस्ते अस्तु सीसरो ल
ताह्वर ॥ २ ॥ तत्सत्यं यत्ते सरमा माता सीसरः पि
श्यामशबलौ भ्रातरौ । चेचेच्छुनक सृज नमस्ते अ
सीसरो लपेताह्वर ॥ ३ ॥ इन मंत्रों के पढ़ने के बाद फि
दहिने हाथ को बालक के समूचे शरीर पर फेरता हुआ यह मंत्र प
ओं न नामयति न रुदति न हृष्यति न ग्लायति । यत्र क
वदामो यत्र चाभिमृशामसि ॥ यदि दूसरे दिन भी ऐ
उपद्रव हो तो यही क्रिया करे । इसके बाद दक्षिणा का संकल्प क
ओं अद्य यथोक्ततिथौ अमुकशर्म्माहं जातस्य पुत्र
कृतैतज्जातकर्माख्यसंस्कारकर्मणः साङ्गतासिध्द्यर्थं
इमां दाक्षिणां यथानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दा
ओं तत्सन्नमम ॥ और उसे काम कराने वालों को देकर फि
अन्यान्य ब्राह्मणों को देने के लिये भी कुछ संकल्प करे । इसे भूय
दक्षिणा कहते हैं और पहली को कर्मदक्षिणा । इसका भी संक
पूर्ववत् ही होगा । केवल 'दक्षिणां' से पहले 'भूयसीं' और ल
देंगे । ऐसाही सर्वत्र होगा । फिर तीसरा संकल्प दस या य
शक्ति ब्राह्मण सूतक के अन्त में खिलाने का करे । उसमें और
पहले का सा ही रहेगा । केवल 'इमां दाक्षिणां०' इत्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

समूचे के स्थान में—सूतकान्ते दश ब्राह्मणान् यथाशक्ति वा भोजयिष्ये—ऐसा कहे । इसके बाद स्थापित कलश के जल को किसी वर्त्तन में ढालकर उससे यजमान का अभिषेक कराया जावे और उधर नालच्छेदन भी होवे । अभिषेक के मंत्र ये हैं—ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै वाचो यन्तुर्यन्त्रेणाग्नेः साम्राज्येनाभिषिञ्चामि ॥ १ ॥ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । अश्विनोर्भैषज्येन तेजसे ब्रह्मवर्चसायाभिषिञ्चामि ॥ ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । सरस्वत्यै भैषज्येन वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि ॥ ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम् । इन्द्रस्येन्द्रियेण बलाय श्रियै यशसेऽभिषिञ्चामि ॥ २ ॥ ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ३ ॥ ओं पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः । पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ ४ ॥ ओं विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोऽसि वैष्णवमसि विष्णवे त्वा ॥ ५ ॥ ओं अग्निर्देवता वातो देवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवोदेवता रुद्रादेवता ऽऽदित्यादेवता मरुतोदेवता विश्वेदेवादेवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥ ६ ॥ ॐ प्रातरग्निं प्रातरिन्द्र ँ हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना । प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्र ँ हुवेम ॥ ७ ॥ ॐ भगप्रणेतर्भग सत्यराधो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भगेमां धियमुदवाददन्नः । भग प्रनो जनय गोभिरश्वै
प्रनृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ ८ ॥ ओं त्रातारमिन्द्रमविता
मिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम् । ह्वयामि शक्रं पु
हूतमिन्द्रꣳ स्वस्ति नो मघवा धात्विन्द्रः ॥ ९ ॥ ॐ
रुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुण
ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्यऋतस
नमासीद ॥ १० ॥ ओं मूर्द्धाऽसिराड् ध्रुवाऽसि धर
धर्त्र्यसि धरणी । आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षे
म त्वा ॥ ११ ॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षꣳ शा
पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पत
शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्वꣳ शा
शान्तिरेव शान्तिः सा मा शान्तिरेधि ॥ १२ ॥
मुशान्तिर्भवतु । ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरित
परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ १३ ॥ ओं आपोहि
मयोभुवस्तान ऊर्ज्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥ १
ओं यो वः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीरि
मातरः ॥ १५ ॥ ओं तस्मा अरंगमामवो यस्य क्षय
जिन्वथ । आपो जनयथाच नः ॥ १६ ॥ ओं समुद्रज्ये
सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः । इन्द्रो
वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥ १
ओं या आपोदिव्या उतवा स्रवन्ति खनित्रिमा उत
याः स्वयंजाः । समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आ
देवीरह मामवन्तु ॥ १८ ॥ ओं यासां राजा व
याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् । मधुश्च
शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह माम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ १९ ॥ यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वे-देवा यासूर्जं मदन्ति । वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥ २० ॥ ओं गणाधिपोऽर्कश्च शशी धरासुतो बुधो गुरुर्भार्गवसूर्यनन्दनौ । राहुश्च केतुश्च परं नवग्रहाः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा ॥ २१ ॥ उपेन्द्र इन्द्रो वरुणो हुताशनो धर्मो यमो वायुहरी चतुर्भुजः । गन्धर्वयक्षोरगसिद्धचारणाः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा ॥ २२ ॥ नलो दधीचिः सगरः पुरूरवाः शाकुन्तलेयो भरतो धनञ्जयः ॥ रामत्रयं वैन्यबली युधिष्ठिरः कुर्वन्तु वः पूर्णमनोरथं सदा ॥ २३ ॥ मनुर्मरीचिर्भृगुदक्षनारदाः पराशरो व्यासवसिष्ठभार्गवाः । वाल्मीकिकुम्भोद्भवगर्गगौतमाः कुर्वन्तु वः० ॥ २४ ॥ रम्भा शची सत्यवती च देवकी गौरी च लक्ष्मीश्च दितिश्च रुक्मिणी । कूर्मो गजेन्द्रः सचरा धराधराः कुर्वन्तु० ॥ २५ ॥ गंगा च क्षिप्रा यमुना सरस्वती गोदावरी वेत्रवती च नर्मदा । सा चन्द्रभागा वरुणा त्वसी नदी कुर्व० ॥ २६ ॥ तुंगं प्रभासो गुरुचक्रपुष्करं गया विमुक्ता बदरी वटेश्वरः । केदारपंपासरसी च नैमिषं कुर्व० ॥ २७ ॥ शंखश्च दूर्वासितपत्रचामरं मणिः मदीपो वररत्नकांचनम् । सम्पूर्णकुम्भः सुहुतो हुताशनः कुर्व० ॥ २८ ॥ प्रयाणकाले यदिवा सुमंगले प्रभातकाले च नृपाभिषेचने । धर्माय कामाय जयाय भाषितं व्यासेन कुर्यात्तु मनोरथं हि तत् ॥ २९ ॥ ओं शान्तिरस्तु पुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु यच्छ्रेयस्तदस्तु ॥३०॥

यहां तक के मंत्रों से यजमान के सिरपर और जहां विवाह आदि में पत्नी और बच्चे के साथ हो वहां उन सबों पर दूब और आम के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पल्लव से ब्राह्मण जल छिड़कें। फिर-ओं यत्पापं रोगः शोक कष्टं दुःखं दारिद्र्यं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु-पढ़कर या हर जल गिरावें और-ओं भूर्भुवः स्वः अमृताभिषेकोऽस्तु शान्तिर्भवतु-कह कर पुनः उस पर छिड़कें। यजमान के उत्तर स्त्री और उसके उत्तर बच्चे आदि रहें। यदि स्त्री न हो तो यजमान के ही उत्तर बच्चे रहें। यजमानादि पूर्व मुख और ब्राह्मण पश्चिम या उत्तर मुख रहें। फिर सभी ब्राह्मण यजमान आदि को तिलक देवें ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति० ॥ १ ॥ ओं भद्रमस्तु शिवं चास्तु महालक्ष्मीः प्रसीदतु। रक्षन्तु त्वां सदा देवाः सम्पदः सन्तु सर्वदा ॥ २ ॥ सपत्ना दुर्ग्रहाः पापा दुष्टसत्त्वाद्युपद्रवाः। तमालपत्रमालोक्य निष्प्रभाव भवन्तु ते ॥ ३ ॥ तब सभी हथेली पर अक्षत लेकर उसी तिलक पर इस मंत्र से चिपका देवे-ओं युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः। रोचन्ते रोचना दिवि ॥ फिर सभी ब्राह्मण आशीर्वाद देवें-ओं आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम् ॥ १ ॥ ओं दीर्घायुस्ते ओषधे खनिता यस्मै च त्वा खनाम्यहम्। अथो त्वं दीर्घायुर्भूत्वा शतं वल्शा विरोहतात् ॥ २ ॥ ओं पुनस्त्वादित्या रुद्रा वसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः। घृतेन त्वं तन्वं वर्द्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥ ३ ॥ ॐ शतं जीव शरदो वर्द्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान्। शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥ ४ ॥

RajGuru Math, Shivala; Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं आहार्षं त्वाऽविदं त्वा पुनरागाः पुनर्नव । सर्वांग सर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्च तेऽविदम् ॥ ५ ॥ ओं मंत्रार्थाः सफलाः सन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः । शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणां मुदयोऽस्तु वः ॥ ६ ॥

इसके बाद देवताओं को २१४ पृष्ठ में लिखी विधि से बलि देकर उनका संक्षेप से विसर्जन हाथ में अक्षत लेकर उनके वेदी कलशादि स्थानों पर छिड़कता हुआ इस तरह करे–ओं यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् । इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च ॥ यदि विस्तार से करना हो तो इस तरह करे–ॐ भूमिमध्ये गच्छ सिद्ध गोलोके त्वं प्रजापते । वरुण त्वं जले गच्छ सागरे कलशा व्रज ॥ १ ॥ होमान्ते गच्छ गणप ब्रह्माण्डे त्वं पितामह । विष्णो त्वं गच्छ वैकुण्ठे कैलाशे त्वं महेश्वर ॥ २ ॥ लक्ष्मि त्वं हि महाविष्णुं स्वभर्त्तारमनुव्रज । रवे गच्छ कलिंगे त्वं चन्द्र त्वं यमुनातटे ॥ ३ ॥ अवन्तीं गच्छ भौम त्वं बुध त्वं मगधे व्रज । सिन्धुदेशे जीव गच्छ कवे भोजकटे व्रज ॥४॥ शने त्वं गच्छ सौराष्ट्रे राहो राठीनकं व्रज । अवन्तीं गच्छ केतो त्वं स्वं स्वं स्थानं नवग्रहाः ॥५॥ इन्द्रामरावतीं गच्छ तथाग्नेयीं च पावक । व्रज संयमिनीं धर्म नैर्ऋतौ व्रज निर्ऋते ॥ ६ ॥ वरुणांभोनिधौ गच्छ सर्वत्र व्रज मारुत । गच्छालकां कुबेर त्वमीशैशानीं दिशं व्रज ॥७॥ माहेन्द्रे त्वं व्रजागस्त्य ध्रुव त्वं मेरुपर्वते । तथा भवद्भिर्ऋषयो गन्तव्यमृषिमण्डले ॥ ८ ॥ वसवोऽष्टौ-तु गंगायां रुद्र रुद्रपुरीं व्रज । गन्धर्वाः किन्नराः सर्वे स्वं स्वं स्थानं च गच्छत ॥ ९ ॥ यान्तु देवगणाः सर्वे पुजा मादाय मामिकाम् । इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गमनाय च ॥ १० ॥ परन्तु यह सविस्तर विसर्जन वहां ही जहां सर्वतोभद्र मण्डल आदि के सभी देवता और ऋषियों आवाहन किया हो । फिर दोनों हाथ जोड़कर पढ़े-ओं यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ १ ॥ रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषोजहि । पुत्रान् देहि धनं देहि सर्वान्कामांश्च देहि मे ॥ २ ॥ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ ३ ॥ कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मनावाऽनुसृतस्वभावात् । करोमि यद्यत्सकलं परस्मै नारायणायेति समर्पयामि तत् ॥४॥ चतुर्भिश्च चतुर्भिश्च द्वाभ्यां पञ्चभिश्च च । हूयते च पुनर्द्वाभ्यां स मे विष्णुः प्रसीदतु ॥ ५ ॥ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ ५ ॥ मया यत्कर्म यथा कालदेशशक्ति कृतं तेन परमेश्वरः प्रीयताम् ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ ६ ॥ इतना कहकर परमात्मा को प्रणाम करे । फिर आचार्यादि से कहे-मयेदं यत्कृतं तत्सर्वं भवतामनुकम्पया श्रीमहाविष्णोः प्रसादाच्च परिपूर्णमस्तु वे उत्तर देवें-ओं अस्तु परिपूर्णम् ॥ फिर उन्हें तथा अन्य दीन अनाथों को अन्नादि द्वारा सन्तुष्ट करके भोजनादि करे । इस प्रकार कन्या का भी जातकर्म संस्कार करना चाहिये । अन्तर केवल इतना हीं होगा कि उस के सभी कर्मों में वैदिक मन्त्रों का प्रयोग न कर केवल नाममन्त्र या यदि संभव हो तो पौराणिक मन्त्रों का ही प्रयोग करे । सोष्यन्तीकर्म तो प्रत्येक दशा में किया जायगा । क्योंकि उसमें तो पता नहीं कि पुत्र है या पुत्री और पुत्री या पुत्र का संस्कार है भी नहीं । परन्तु जातकर्म में गर्भाधानादि सभी क्रिया केवल नाममंत्र या पौराणिक मन्त्र से होंगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जातकर्म में मधु घी चटाने आदि की किया भी लिखे मन्त्रों से ही की जावे। क्योंकि वे संहिता के मन्त्र नहीं हैं, गृह्य सूत्र के मन्त्र हैं। फिर आयुष्यकरण जप भी करे। अथवा गणेश पूजनादि सभी कर्म वैदिक मन्त्रों से ही करे। केवल प्रधान कर्म नाम मन्त्र या पौराणिक मन्त्र से करे। हां, सिर्फ दीर्घायु वाला वात्सप्र जप छोड़ दे, बिलकुल ही न करे। शेष सभी आगे की क्रियायें ज्यों की त्यों करे और अन्त के अभिषेक में तथा आशीर्वाद आदि में वैदिक मन्त्रों को छोड़कर केवल पौराणिक श्लोकों से ही काम चलावे। जातकर्म के प्रायः सभी मन्त्र सूत्रकार के लिखे हैं। वे वेदों की संहिताओं में नहीं मिलते। फिर उन्हें पुत्र पुत्री दोनों के काम में क्यों न लावेंगे? वे वैदिक मन्त्र तो ठहरे नहीं, किन्तु स्मार्त्त सूत्रों के स्मार्त्त या पौराणिक ठहरे। हां, वात्सप्र जप के मंत्र यजुर्वेद के हैं। इसीलिये उन्हें और उस कर्म को ही छोड़ देंगे। क्योंकि उसमें तो सिर्फ उनका जपमात्र करना है। अभिषेक करनेके भी शुरू के मन्त्र वैदिक हैं। आशीर्वाद का केवल अन्तिम श्लोक पौराणिक है। विसर्जन तो पौराणिक ही है। समर्पण भी ऐसा ही है। इति जातकर्म।

२—बालकरक्षाविधि।

यदि किसी की खराब नजर पड़ जाने आदि कारणों से बालक बीमार हो जावे तो हाथ में शुद्ध भस्म लेकर मंत्र पढ़े—ओं वासुदेवो जगन्नाथः पूतनातर्जनो हरिः। रक्षति त्वरितं बालं मुञ्च मुञ्च कुमारकम् ॥ १ ॥ कृष्ण रक्ष शिशुं शंखमधुकैटभमर्दन। प्रातःसंगवमध्याह्ने सायान्हेषु च सन्धयोः ॥ २ ॥ महानिशि सदा रक्ष कंसारिष्टनिषूदन। यद्गोरजः पिशाचाँश्च ग्रहान्मातृग्रहानपि ॥ ३ ॥ बालग्रहान् विशेषेण छिन्धि छिन्धि महाभयान्। त्राहि त्राहि हरे नित्यं त्वद्रक्षाभूषितं शिशुम् ॥ ४ ॥ फिर उसी भस्म को शिशु के सभी शरीर में लगा देवे।

दूसरा उपाय यह है कि भोजपत्र पर चन्दन आदि पवित्र पदार्थ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

से यह मन्त्र लिखे-ओं रक्ष रक्ष महादेव नीलग्रीवजट
धर । ग्रहैस्तु सहितो रक्ष मुञ्च मुञ्च कुमारक
और उसकी तावीज बनवाकर या केवल हाथकते सूत में हीं बांध
बालक की दहिनी बांह में बांध देवे । इति बालकरक्षा ।

३—षष्ठीपूजा ।

जन्म के छठे दिन, और कहीं कहीं पांचवें दिन भी, षष्ठी दे
की पूजा की जाती है । षष्ठी का ही नाम जीवन्ती भी है । इ
पूजा सदा संध्या के समय प्रदोष काल में ही शुरू होती है
पिता उस दिन उपवास करे और यदि पिता न हो तो उसकी ज
जो कर्त्ता हो वही उपवास करे । तीसरे पहर सूतिकाघर के द्वार
दो भाग को दक्षिण ओर (पैठने के समय दाहिनी ओर) छोड़
तीसरे भाग में भूमि को पोतकर एक वेदी बनावे या काठ पर
गोबर या कज्जल से विघ्नेश (गणेश), जन्मदा, षष्ठीदेवी, श
गर्भा देवी की मूर्त्तियां एक से उत्तर दूसरी और उससे उत्तर ती
इत्यादि क्रम से बनावे । षष्ठी के कानों में दूब की बाली (कुण्डल
पहनावे और शरीर में जहां तहां १६ कौड़ियां चिपका देवे । यदि का
पर मूर्त्तियां रक्खे तब तो कोई बात नहीं । पर, यदि वेदी पर ब
तब भी सफेद चावल या जौ रखकर उसी पर प्रतिमायें रक्खे । प्रा
के समय स्नान करके अहत वस्त्र (पृ०३८) धारण कर तिलक, आच
और प्राणायाम करके पहले सूती गृह में गौका घी, सरसों, न
नीम का पत्ता, सांप की केंचली इन सब को जलाकर सूति
के समीप धूप देवे । तब प्रधान संकल्प करे । इसमें और स
१०८ पृष्ठोक्त ही रहेगा, केवल ' अमुककर्म करिष्ये ' की ज
—अनयोः सूतिकाबालकयोरायुरारोग्याभिवृद्ध्यर्थं
कलारिष्टशान्तिद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं विघ्ने
स्य जन्मदानां जीवन्त्यपरनाम्न्याः षष्ठीदेव्याः
गर्भाभगवत्याश्च यथामिलितोपचारैः पूजनं षष्ठीम
त्सवे करिष्ये । तदंगतया गणपतिपूजनं पुण्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वाचनं मातृकापूजनं वसोर्द्धारापूजनं वरुणनवग्रहादिपूजनं च करिष्ये। फिर आचार्यवरण और गणपति पूजनादि सभी क्रियायें जातकर्म की तरह करे। वरुण और ग्रहों तथा दिक्पाल आदि का पूजन भी कलश में ही आवाहन करके पूर्ववत् ही करे। हां, नान्दीश्राद्ध न करे। फिर पूर्व बनाई गणेश आदि चार प्रतिमाओं के निकट जाकर चारों देवताओं का एक साथ ही आवाहन कर पूजन की सम्पूर्ण क्रिया एक साथही करे। एक ही बार सभी मंत्र पढ़के चारों की पूजा प्रत्येक वस्तु से करता जावे। पहले हाथ में अक्षत और फूल लेकर उनकी प्रतिष्ठा करे—ओं आयाहि वरदे देवि षष्ठीदेवीति विश्रुता। शक्तिभिः सह पुत्रं मे रक्षरक्ष वरानने। ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमंतनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमं दधातु। विश्वेदेवास इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ। ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशजन्मदाषष्ठीशस्त्रगर्भाभ्योनमः भगवत्य इहागच्छत इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत॥ ध्यान—ॐ देवीमञ्जनसंकाशां चन्द्रार्द्धकृतशेखराम्। सिंहारूढां जगद्धात्रीं कौमारीं भक्तवत्सलाम्॥ १॥ खड्गं खेटं च बिभ्राणामभयां वरदां तथा। तारकाहारभूषाढ्यां चिन्तयामि नवांशुकाम्॥ २॥ ॐ श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम्। इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृदेवताभ्योनमः ध्यायामि॥ ३॥ आवाहन—ॐ आगच्छ वरदे देवि स्थाने चात्र स्थिराभव। आराधयामि भक्त्या त्वां रक्ष बालं च सूतिकाम्॥ १॥ ओं हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो मम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वह ॥२॥ ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृदेवताभ्यो नम
आवाहयामि ॥ ३ ॥ आसन-ओं सन्ध्यारागनिभं रक्तम
सनं स्वर्णनिर्मितम् । गृहाण सुमुखी भूत्वा रक्ष बालं
सूतिकाम् ॥ १ ॥ ॐ ताम्मआवह जातवेदो लक्ष्मीम
पगामिनीम् । यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वंपुरुषानह
॥२॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृदेवताभ्योनमः आ
सनं समर्पयामि ॥३॥ पाद्य-ॐ गंगाजलं समानीतं सुवर्
कलशे स्थितम् । पाद्यं गृहाण मे बालं सूतिकाञ्चैव पा
य ॥ १ ॥ ॐ अश्वपूर्णां रथमध्यां हस्तिनादप्रमोदिनीम
श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवी जुषताम् ॥२॥ ॐ भूर्भुवः
विघ्नेशादिचतसृदेवताभ्यो नमः पाद्यं समर्पयामि ॥
अर्घ्य--ॐ अक्षतैः पुष्पगन्धैश्च युतमर्घ्यं विनिर्मलम् । गृहा
पाहि मे पुत्रं सूतिकां भयहारिणि ॥१॥ ओं कांसोऽस्मि
हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । प
स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥२॥ ओं भूर्भुवः
विघ्नेशादिचतसृदेवताभ्योनमः अर्घ्यं समर्पयामि ॥
आचमन-ओं गृहाणाचमनीयन्तु कर्पूरैलादिवासितम् ।
बालां सूतिकां पाहि जगन्मातर्नमोऽस्तुते ॥१॥ ओं च
प्रभासांयशसाज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदारा
तां पद्मनेमिं शरणमहं प्रपद्ये अलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृ
मि ॥ २ ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृभ्यो देवता
नमः आचमनीयं समर्पयामि ॥ ३ ॥ स्नान-ओं नर्म
चन्द्रभागादिगंगासंगमजैर्जलैः । स्नापितासिमया
पाहि बालं समातृकम् ॥ ओं भूर्भुवःस्वःविघ्नेशादिच
देवताभ्यो नमः स्नानीयं समर्पयामि ॥ वस्त्र-ओं दुकूल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मयं देवि नाना रत्नैः परिष्कृतम् । परिधत्स्वामलं वासो रक्ष मे सुतसूतिके ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृ-देवताभ्यो नमः वासः समर्पयामि ॥ पुनः आचमन-ओं भूर्भुवःस्वःविघ्नेशादिदेवताभ्योनमःआचमनं समर्पयामि ॥ यज्ञोपवीत-ओं नानारत्नमयं दिव्यं मुक्ताहारमयं शुभम् । गृहाण कालरात्रि त्वं रक्ष मे सुतसूतिके ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः उपवीतालंकारादि समर्पयामि ॥ चन्दन-ओं कर्पूरागुरुकस्तूरीकंकोलादिसमन्वितम् । चन्दनं स्वीकुरु त्वं मे रक्ष बालं च सूतिकाम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिभ्योनमः चन्दनं समर्पयामि ॥ पुष्प-ओं चतुर्वर्णानि पुष्पाणि सुगन्धीनि विशेषतः । गृहाण वरदे देवि रक्ष बालं च सूतिकाम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नशादि-देवताभ्योनमः पुष्पाणि समर्पयामि ॥ धूप-गुग्गुलं घृत-संयुक्तं दशांगेन समन्वितम् । षष्ठिदेवि गृहाण त्वं रक्ष मे सुतसूतिके ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः धूपं समर्पयामि ॥ आठ दीपक-ओं गव्येनाज्येन संयुक्तान् वर्त्या कर्पूरगर्भया । षष्ठि देवि गृहाणेमान् रक्ष मे सुत-सूतिके ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः दीपान्समर्पयामि ॥ इसके बाद द्वारपर आकर खानेके बड़ों (वटक) की माला एक बकरी के बच्चे के गले में डालकर उसके कान को ऐसा मले या वहां तमाचा लगावे कि वह में में करे । तब नैवेद्य चढ़ावे-ओं मोदकानि विचित्राणि शुक्लतण्डुलकं दधि । वि-चित्रपक्वान्नयुतं तथाऽपूपसमन्वितम् । गृहाण वरदे देवि रक्ष सूतीं सबालकाम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्ने-शादिदेवताभ्यो नमः नैवेद्यं समर्पयामि ॥ नैवेद्यान्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचमन-ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिचतसृर्देवताभ्यो नमः आचमनं समर्पयामि ॥ ताम्बूल, पूगीफल-ओं नागवल्लीदलं रम्यं पूगीफलसमन्वितम् । भद्रे गृहाण ताम्बूलं रक्ष बालं च सूतिकाम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्व विघ्नेशादिदेवताभ्योनमः ताम्बूलं समर्पयामि ॥ कपूर की आरती-ॐ कदलीगर्भसंभूतं कर्पूरं च प्रदीपितम् । आरार्त्तिकं गृहाण मे रक्ष बालं च सूतिकाम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः नीराजनं समर्पयामि ॥ नमस्कार-ओं जगद्देवि जगन्मातर्जगदानन्दकारिणि। प्रसीद मम कल्याणि रक्षेमे सुतसूतिके ॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्योनमः नतिं समर्पयामि ॥ पुष्पाञ्जलि-ॐ देवानां च ऋषीणां च मनुष्याणां च वत्सले। अमुं मम सुतं रक्ष पाहि देवि नमोऽस्तुते ॥ १ ॥ पुरा देवैः पूजितासि ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः । मयापि च महादेवि पूज्यसे भक्तिपूर्वकम् । देह्यस्य बालकस्यायुर्दीर्घं तुभ्यं नमोस्तुते ॥२॥ ॐ भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि ॥ प्रदक्षिणा करे-ओं यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतान्यपि। तानि तानि विनश्यन्तु प्रदक्षिणं पदे ॥ १॥ ओं सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिसप्त समिधः कृताः देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥२॥ ओं भूर्भुवः स्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमः ॥ फिर प्रार्थना करे-षष्ठि देवि नमस्तुभ्यं सूतिकागृहशालिनी । पूजिता या भक्त्या दीर्घमायुः प्रयच्छ मे ॥१॥ जननी सर्वभूतानां बालानां च विशेषतः । नारायणीस्वरूपेण बालं रक्ष सर्वतः ॥ २ ॥ शक्तिस्त्वं सर्वदेवानां लोकानां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तकारिणी । मातृवद्रक्ष मे बालं महाषष्ठि नमोऽस्तुते ॥३॥ रुद्राणी रुद्ररूपेण महाविघ्नविनाशिनी । प्राणदे वरदे देवि रक्ष बालं स्वपुत्रवत् ॥ ४ ॥ अमुं मम कुलोत्पन्नं रक्षत्वं देवि बालकम् । पूजितासि महाभागे चिरं जीवतु बालकः ॥ ५ ॥ रक्षोभूतपिशाचेषु डाकिनीशाकिनीषु च। मातेव रक्ष मे बालं पन्नगश्वापदेषु च ॥ ६ ॥ जननी सर्वसौख्यानां वर्द्धिनी कुलसम्पदाम् । साधनी सर्वसिद्धीनां जन्मदे त्वां नता वयम् ॥ ७ ॥ स्वस्ति मेऽस्तु गृहे नित्यं त्वत्प्रसादात्सुरेश्वरि । पुत्रोत्सवमहं नित्यं पश्येयं त्वदनुग्रहात् ॥८॥ गौर्याः पुत्रो यथा स्कन्दः शिशुः संरक्षितस्त्वया । तथा ममाप्ययं बालो रक्ष्यतां षष्ठिके नमः ॥ ९ ॥ सर्वविघ्नानपाकृत्य सर्वसौख्यप्रदायिनि । जीवन्तिके जगन्मातः पाहि नः परमेश्वरि ॥ १० ॥ ओं भूर्भुवःस्वः विघ्नेशादिदेवताभ्यो नमो नमः अनया पूजया विघ्नेशजन्मदाषष्ठीशस्त्रगर्भाभगवत्यः प्रीयन्ताम् ॥ इसके बाद सूतिकागृह में पक्वान्न की बलि देवे । किसी पात्र में भोजन की सभी वस्तुओं को रखकर मंत्र पढ़े- ॐ क्षेत्रस्याधिपते देवि सर्वारिष्टविनाशिनि । बलिं गृहाण मे रक्ष क्षेत्रं सूतीं च बालकम् ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः क्षेत्राधिपतिदेव्यैनमः इमां सोपस्करं बलिं समर्पयामि ॥ फिर काजल या कालिख से सूतीद्वार के दोनों ओर धिषणा, वृद्धिमाता तथा गौरी, पूतना इन दो दो माताओंको बनावे और यह पढ़तारहे- ॐ धिषणा वृद्धिमाता च तथा गौरी च पूतना। आयुर्दात्र्यो भवन्त्वेता अद्य बालस्य मे शिवाः॥ फिर-ॐ भूर्भुवः स्वः धिषणादिभ्यश्चतसृभ्यो मातृभ्यो नमः आवाहयामि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पढ़कर उनका आवाहन करके- ॐ धिषणादिभ्यश्चतसृभ्यो मातृभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि- इत्यादि रीति से पञ्चो पचार पूजा करे। फिर सौभाग्यवती स्त्रियों को भोजन कराके बालक को कंकण आदि से भूषित करके अपनी गोद में रक्खे और आचार्य की वस्त्र आदि से पूजा करके दक्षिणा का संकल्प करे- ॐ अद्य यथोक्तविशेषणविशिष्टायां शुभपुण्यतिथौ अमुकशर्मा हमस्य पुत्रस्य दीर्घायुरारोग्यावाप्तये कृतायाः सांगोपांग षष्ठीपूजायाः साङ्गुण्यार्थमिमां दक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यं दास्ये ॐ तत्सन्नमम ॥ इस संकल्प के बाद आचार्य की दक्षिणा देकर भूयसी दक्षिणा की जगह संकल्प करे- ॐ अद्य०-इत्यादि कहने के बाद 'इमां दक्षिणां' इत्यादि की जगह इमां भूयसीं दक्षिणां ब्राह्मणेभ्योऽन्येभ्यश्च दीनानाथेभ्यो दास्ये ॐ तत्सन्नमम-ऐसापढ़े और सभी उपस्थित ब्राह्मण तथा अन्यों को बांट देवे। इसके अनन्तर २२५ पृष्ठोक्त रीति से अभिषेकादि करवाकर विसर्जन करे (२२९)। विसर्जन में गणेश, जन्मदा, षष्ठी, शस्त्रगर्भा और चार द्वारमाताओं को छोड़कर शेष पर अक्षत छिड़ककर उनका ही विसर्जन करना चाहिये। इन आठों का विसर्जन आशौच के अन्तिम दिन होता है। उस दिन रात भर जागरण करना और स्त्रियों को गीत गाते रहना चाहिये। पूर्वोक्त धूप भी जलता रहे और अग्नि भी धधकती रहे। अस्त्र, शस्त्र जल और विभूति ये सब चीजें सूतिकागृह में उस दिन रहें और घर में सफेद सरसों छींटना चाहिये। पूर्वोक्त १०९ पृष्ठ का शान्तिपाठ भी करना चाहिये। मुरा, सांपकी केंचली, बच, कुट, सरसों, बेलपत्र और सेन्दुवार (निर्गुंडी) इन की धूप भी दीजावे। इससे बालक की आयु बढ़ती है। जौ बोने की भी रीति कहीं कहीं है, जिसे अकुंरारोपण कहते हैं। इति षष्ठीपूजा।

४-नामकरण ।

सूतक की निवृत्ति के बाद ही अर्थात् ग्यारहवें दिन बालक का नाम रखना चाहिये। इस बात में मतभेद है कि दो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मरण का आशौच चारों वर्णों को अलग अलग होता है उसी तरह जन्म का भी होता है। बहुत जगह लिखा है कि सभी वर्णों का जन्म का आशौच, जिसे सूतक कहते हैं, दस ही दिन लगता है। जो भी हो, ब्राह्मण का तो दस दिन बाद ग्यारहवें दिन हीं नामकरण होना चाहिये। सन्तान का कोई नाम रखनाहीं नामकरण कहाता है। यदि ग्यारहवें दिन न होसके तो क्रमसे १८, १९, १०० वे दिन, ६ मास या एक वर्ष बीतने के बाद अवश्य करलेना चाहिये। यह नाम चार प्रकार के होते हैं। (१) कुलदेव या आराध्यदेव सम्बन्धी; जैसे शिवभक्त, विष्णुभक्त या शैव, वैष्णव आदि। (२) मासके अनुसार जिस महीने में जिसका जन्म हुआ वही नाम उसका होवे। परन्तु इस अवसर के लिये मासों के नामों का सांकेतिक रूप है; जैसे चैत्र को कृष्ण और वैशाख को अनन्त इत्यादि कहते हैं। यही नाम उन महीनों में उत्पन्न होनेवालों के भी होंगे। इस संकेत का श्लोक ऐसा है—कृष्णोऽनन्तोऽच्युतश्चक्री वैकुण्ठोऽथ-जनार्दनः। उपेन्द्रो यज्ञपुरुषो वासुदेवस्तथाहरिः। योगीशः पुण्डरीकाक्षो मासनामान्यनुक्रमात् ॥ (३) नक्षत्र के अनुसार। इसकी दो रीति है। एक तो जिस नक्षत्र में उत्पन्न हो उस नक्षत्र के देवता का ही नाम रख लेवे। दूसरी यह कि हरेक नक्षत्र के चार चार चरण या पाद होते हैं और ज्योतिष ग्रन्थों में उनके संकेत के चू, चे आदि शब्द रक्खे गये हैं। बस जिस नक्षत्र के जिस चरण में जन्म हुआ हो उस चरण का सूचक जो चू, चे आदि हैं उन्हें आदि में रख कर चूड़ामणि आदि नाम रख लेते हैं। इस तरह ये तीन प्रकार के नाम किसी विशेष प्रयोजन के लिये रहते हैं और इनसे जन्म के समय के महीने या उपास्यदेव का पता लगता है। (४) मगर चौथे प्रकार का जो नाम होता है उसी से प्रायः आदमी को पुकारते हैं। इसीसे वह व्यवहार या पुकारने का नाम कहाता है और तीसरे प्रकार का जो नाम नक्षत्रों के चरण के अनुसार रक्खा जाता है उसे ही आजकल राशि का नाम कहते हैं। क्योंकि नक्षत्रों के चरणों से ही मेष आदि राशियों का ज्ञान होता है और नाम से नक्षत्र के चरण जाने जाते हैं। अस्तु,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह जो चौथे प्रकार का नाम है उसी के बारे में प्राचीन आचार्यों ने बहुत नियम बनाये हैं कि ऐसे हों, वैसे हों। पिछले तीन नामों के बारे में कोई नियम नहीं है। क्योंकि वे तो एक एक नियम से बंधे ही हैं फिर दूसरा नियम वहां कैसे लागू हो सकता है? व्यवहार के नाम के बारे में लिखा है कि दो या चार अक्षरों का हो, उसके आदि में या तो हकार हो या क से म तक २५ अक्षरों के जो कवर्ग, चवर्ग आदि पांच वर्ग हैं उनमें प्रत्येक वर्ग के अन्त के ग घ ङ आदि तीन अक्षरों में कोई हों; बीच में य र ल व में कोई हों और अन्त में कृत्प्रत्यय हो नहीं तद्धित; अन्तका अक्षर दीर्घ हो; उसमें पिता, पितामह और प्रपितामह के नामों के कुछ चिन्ह हों और वह नाम शत्रुका न हो। जहांतक संभव हो इन नियमों का पालन करना चाहिये। कन्याओं के नाम में ३, ५ आदि विषम (ताक) अक्षर हों और अन्तमें आकार तद्धित या ईकार हो। ब्राह्मण के नाम के अन्तमें शर्म्मा वा देव लगावे; क्षत्रिय के अन्तमें वर्मा या पाल; वैश्य के अन्तमें गुप्त या भूति और शूद्र के अन्तमें दास रहना चाहिये। यद्यपि ग्यारहवां दिन नामकरण के लिये नियत है, फिर भी ज्योतिष के अनुसार भद्रा, व्यतीपात, वैधृति, ग्रहण, अमावास्या, संक्रान्ति और श्राद्ध का दिन इत्यादि निषिद्ध दिनों में नहीं करना चाहिये। हाँ, शुक्र या बृहस्पति के अस्त, उदयादि की कोई पर्वाह नहीं की जानी चाहिये। नामकरण उस समय या तो पिताही करे, या यदि किसी कारण से वह न कर सके या न हो तो घरका कोई भी पितामह, चाचा आदि वृद्ध पुरुष करे। नामकरण के समय गणेशपूजनादि सभी साधारण कर्म किये जाते हैं। पर, नान्दीश्राद्ध के बारे में मतभेद है। एक मत है कि जातकर्म और नामकरण में एकही बार नान्दीश्राद्ध होता है और यदि जातकर्म में होचुका हो तो फिर नामकरणमें न होगा। हाँ, यदि उस समय न हुआ हो तो होगा। दूसरा मत है कि दोनों बार पृथक् पृथक् होगा। इसलिये कर्त्ता की इच्छा है चाहे करे या न करे पर मातृकापूजा आदि तो सभी करने को कहते हैं।

पहले बालक के सहित माता को नहलाकर बालक का पिता या दूसरा कर्त्ता स्नान, नवीन वस्त्र धारण और सन्ध्योपासनादि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर तिलक करके पवित्र आसन पर बैठे और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचमन करके प्राणायाम करे । फिर कर्मपात्र में जल का सम्पादन करके पहले प्रधान संकल्प करे—ॐ अद्य०—इत्यादि ज्यों का त्यों कहने के उपरान्त-अस्य शिशोरायुर्वृद्धिव्यवहारसिद्धि-वीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये नामकर्म करिष्ये तन्निमित्तकगणेशगौरीपूजां पुण्याहवाचनं मातृकापूजां वसोर्धारापूजां कलशे वरुणादिपूजामादित्यादिपूजां च करिष्ये । यदि नान्दीश्राद्ध भी करना हो तो 'वसोर्धारापूजां' के बाद 'नान्दीश्राद्धं' भी पढ़देवे। और इन कर्मों को विधिवत् कराकर तीन ब्राह्मण भोजन कराने का संकल्प करे-ॐ अद्ययथोक्तविशेषणविशिष्टायां तिथावमुकशर्म्माहं नामकरणाधिकारसम्पत्तये त्रीन्ब्राह्मणान्भोजयिष्ये ।

तब तीन ब्राह्मणों को भोजन करावे या भोजनभर पक्वान्न, कच्चा अन्न या द्रव्य दे देवे । नामकरण संस्कार में पंचगव्य पिलाने और उसके लिये घी और पञ्चगव्य के होम की भी रीति कहीं कहीं है । इसलिये होम में आचार्य और ब्रह्माका वरण और कुशकंडिका करना यह आवश्यक हैं । उनमें आचार्य का वरण तो पहलेही कर्म के आरम्भमें ही हो जाता है । यदि कर्त्ता स्वयं होम करसके तब तो आचार्यवरण की आवश्यकता है ही नहीं । यदि अन्यान्य क्रियायें भी स्वयं करसके तो आरम्भ में भी उसका वरण क्यों करेगा ? यदि आवश्यकता हो ता वरण करलेवे। फिर ब्रह्माका वरण १८९ पृष्ठोक्तरीति से करे । वरण के संकल्प में—अमुककर्मणि—की जगह-शिशोः कारिष्यमाणशुद्ध्यर्थपञ्चगव्यपानांगहोमकर्मणि—ऐसा पढ़े । शेष क्रिया ज्यों की त्यों । फिर कुशकण्डिका करके ७८ पृष्ठोक्तरीति से पञ्चगव्य बनाकर सात कुशों से लेकर उसका होम करे । यदि पञ्चगव्य की सब चीजें न मिलसकें तो ऐसा भी लिखा है कि घृत, दूध और कुश के जलसे भी पञ्चगव्य का काम चलजाता है । अग्नि स्थापन के समय 'विधि' नामक अग्निकी स्थापना करे और जो नाममंत्र प्रतिष्ठा पूजा आदिके समय बोले उसमें 'अग्नि' 'अग्नये' की जगह 'विधिनामाग्नि', 'विधिनामाग्नये' इत्यादि बोले । होम भरसक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यजमानहीं करे और "इदंप्रजापतये नमम, इदमिन्द्राय नमम इत्यादि अन्त के त्याग वाक्यों को वही बोले । यदि दू होम करे तब भी त्याग यजमानहीं बोले और त्यागवाक्य के स ही आहुति दीजानी चाहिये । अथवा यदि आचार्य-जो अपना प्र निधि बना लिया हो तो फिर वही त्याग भी बोले । होम से प संकल्प करे-ॐ अद्य यथोक्ततिथौ पञ्चगव्यपानांगहो कर्माहं करिष्ये । पहले आघार और आज्यभाग की चार आ तियां घी से देकर फिर पाँच आहुतियां पञ्चगव्य से दीजाती और अन्त में व्याहृति, पंच वारुणी और प्रजापति की ये नौ से देकर स्विष्टकृत् की घी और पञ्चगव्य मिलाकर दी ज है । घी की आहुतिमें ब्रह्मा यजमान का अन्वारंभ किये रहता (४८ पृष्ठ) । और यदि आचार्य होम करे तो उसीके दक्षि कन्धे को अपने दहिने हाथ के कुश से ब्रह्मा छूए रहेगा । आघा आज्यभाग और व्याहृति आदि की आहुतियां और उनके म तो १९४ पृष्ठ में ही लिखे जा चुके हैं । वैसाही करना चाहिये । म आघार, आज्यभाग की चार आहुतियों के बाद और शेष के प ही जो अन्वारम्भ के विना पञ्चगव्य होम होगा उसके मंत्र ये (१) ॐ इरावती धेनुमती हि भूत ँ सूयवसिनी म वे दशस्या । व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवे ते दाध पृथिवीमभितो मयूखैः स्वाहा इदं विष्णवे नमम । (ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढम पाँसुरे स्वाहा इदं विष्णवे नमम । (३) ॐ मा नस्त तनये मा न आयुषि मा नो गोषु मा नो अश्वेषु रीरिष मा नो वीरानुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तःसदमित्त्वा ह महे स्वाहा इदं रुद्राय नमम । (४) ॐ शन्नोदेवीरभि आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः स्वा इदमद्भ्यो नमम । (५) ॐ प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो वि श्वारूपाणि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वयꣳस्याम पतयो रयीणां स्वाहा इदं प्रजापतये नमम॥ इन पांचों में न तो ब्रह्मा का अन्वारंभ होगा और न संस्रव रहेगा। फिर व्याहृति की आहुतियां घी की होंगी और उनमें अन्वारंभ और संस्रव दोनों होंगे। संस्रव प्रोक्षणीपात्र में गिराये जावेंगे। इसके बाद परिस्तरण कुशों को जिस क्रम से बिछाया था उसी क्रम से उठा कर और उनमें घी लगाकर होम करते हैं। इसे बर्हिःहोम कहते हैं। बर्हिः नाम उन्हीं कुशों का है। परन्तु होम से पहले प्रोक्षणीपात्र में डाले हुए आहुति के शेष घृत को पी लेते हैं। यदि पी न सकें तो सूंघ लेते हैं। इसे संस्रवप्राशन कहते हैं। फिर ब्रह्मा की पूर्णपात्र वाली तथा अन्य दक्षिणा का संकल्प करे-ॐ अद्य यथोक्तातिथावमुक-शर्म्माहमस्मिन्पञ्चगव्यहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूप-ब्रह्मकर्मदक्षिणात्वेनेदं सद्रव्यं पूर्णपात्रं यथानाम-गोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ओं तत्सन्नमम। "ॐ स्वस्ति" कहकर ब्रह्मा दक्षिणा लेलेवें। फिर दहिने हाथ में पवित्र लेकर उससे प्रणीता का जल सिर पर डाले और यह मंत्र पढ़े-ॐ सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु। और-ॐ दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः-पढ़ कर उस प्रणीता को ईशान कोन में उलट देवे और उस पवित्रको-ओं स्वाहा इदं प्रजापतये नमम-कहकर अग्नि में डाल देवे। फिर परिस्तरण के कुशों को एकत्र कर उनमें घी लगाकर उन्हीं का होम करे-ॐ देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देवयज्ञꣳ स्वाहा वातेधाः स्वाहा इदंवाताय नमम॥ कहीं कहीं-ॐ स्वाहा इदं वाताय नमम-कह कर उन्हें अग्नि में डालने को लिखा है। यह संस्रवप्राशन से लेकर यहां तक (बर्हिः होम तक) को क्रिया सभी होमों में स्विष्टकृत् आहुति के बाद की जाती है। अतः इसे भी यहां ही ठीक स्मरण कर लेना चाहिये।

इसके बाद हवन से बचे पञ्चगव्य में से कुछ-ॐ आपोहि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ष्ठा०—इत्यादि तीन मंत्रों से ७६ पृष्ठोक्त विधि से प्रसूती घर में छिड़
और शेष प्रसूती स्त्री को पीने को देवे और वह ब्रह्मतीर्थ (पृष्ठ० ३
से तीन बार पीवे । पीने का मंत्र—ओं यत्त्वगस्थिगतं पापं दे
तिष्ठति देहिनाम्। ब्रह्मकूर्चो दहेत्सर्वं तत्तदग्निरिवेन्धनम
इसी तरह का एक मंत्र ७६ पृष्ठ में भी लिखा है । शब्दों में थो
अन्तर है । ब्रह्मकूर्च और पञ्चगव्य एक ही वस्तु के नाम हैं
इसके बाद सूतिका बालक को गोद में लेकर अग्नि की प्रदक्षि
करती हुई पति की बाईं ओर बैठ जाती है, मगर यदि पति नामकर
का करनेवाला हो तभी । फिर गणेश और नवग्रहों को—ॐ भूर्भु
स्वः गणेशनवग्रहेभ्यो नमः पुष्पाञ्जलिं समर्पयामि
कहकर पुष्पांजलि दोनों हाथों से विधिवत् अर्पित करे और शु
मुहूर्त में कांसे के बर्तन में चावल या पीठा फैलाकर उस पर सोने
चन्दन की सीख या कलम से या नवीन वस्त्र पर हलदी आदि
क्रम से देवतानाम विष्णुभक्त रामदास आदि; मासनाम कृष्ण
अनन्त आदि; नक्षत्रनाम चूड़ामणि आदि और व्यवहार का नाम
हरिवंश शर्म्मा आदि जो जो रखने हों उन्हीं को लिखे । फिर
ॐ अद्य यथोक्ततिथौ अस्य शिशोर्बह्वायुष्यप्राप्तये नाम
देवतापूजनं करिष्ये—ऐसा संकल्प करके—ॐ मनोजूतिर्ज
षता०—(पृ० १७१) इत्यादि मंत्र पढ़कर—ॐ भूर्भुवः स्वः नामदे
वताभ्यो नमः नामदेवता इहागच्छत सुप्रतिष्ठिता वरदा
भवत—इस नाममंत्र से उनकी प्रतिष्ठा अक्षत फूलों से करे और
फिर इसी नाममंत्र से ' आवाहयामि, आसनं समर्पयामि
इत्यादि षोडशोपचार या पञ्चोपचार पूजा करके माता की गोद
में स्थित शिशुके दहिने कान में धीरे से प्रत्येक नामों को क्रमशः इस
तरह सुनावे—शिशो त्वममुक (विष्णु, शिव) भक्तोऽसि
दीर्घायुर्भव; त्वं मासनाम्ना अमुकोऽसि (कृष्णोऽसि
चिरायुर्भव; त्वं नक्षत्रनाम्ना चूडामणिरसि चिरायुर्भ
व्यवहारनाम्ना च त्वं हरिवंशशर्म्मासि चिरायुर्भव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतना कहकर फिर–ॐ मनोजूतिर्जुषता० इत्यादि मंत्र का पाठ कान के पास ही करे। तब ब्राह्मण लोग इसके बाद कहें कि–ॐ नाम सुप्रतिष्ठितमस्तु। फिर बालक की ओर से पिता या कर्त्ता धीरे से प्रणाम करता जावे और ब्राह्मण आशीर्वाद देते जावें–(१) पिता–हे कुमार त्वं विष्णुभक्तशर्माऽसि सर्वान्ब्राह्मणानभिवादय। ब्राह्मण–आयुष्मान्भव सौम्य विष्णुभक्तशर्म्मन्। (२) पिता–हे कुमार त्वं कृष्णशर्म्माऽसि ब्राह्मणानभिवादय। ब्राह्मण–आयुष्मान्भव सौम्य कृष्णशर्म्मन्। (३) पिता–हे कुमार त्वं चूडामणिशर्म्मासि ब्राह्मणानभिवादय। ब्राह्मण–आयुष्मान्भव सौम्य चूडामणिशर्म्मन्। (४) पिता–हे कुमार त्वं हरिवंशशर्म्माऽसि ब्राह्मणानभिवादय। ब्राह्मण– आयुष्मान्भव सौम्य हरिवंशशर्म्मन्। फिर सभी ब्राह्मण एक ही साथ इस मंत्र को पढ़ कर आशीर्वाद देवें–ॐ वेदोऽसि येन त्वं देव वेद देवेभ्यो वेदोऽ भवस्तेन मह्यं वेदो भूयाः॥ इसके बाद यजमान कर्म की दक्षिणा का संकल्प करे–ॐअद्य यथोक्ततिथौ अमुकशर्म्माहमस्य कुमारस्य नामकरणकर्मणः साङ्गुण्यार्थमिमां दक्षिणामाचार्याय तुभ्यं दास्ये ॐ तत्सन्नमम। फिर वह दक्षिणा देकर भूयसी दक्षिणा का संकल्प करे। उसी संकल्प में 'दक्षिणां' से पहले 'भूयसीं' और "आचार्याय" की जगह "ब्राह्मणेभ्यो दीनानाथेभ्यश्च" कहे। उसे भी बांटदेवे। फिर–ॐ अस्य नामकरण कर्मणः सांगतार्थं यथाशक्ति ब्राह्मणान्भोजयिष्ये–ऐसा संकल्प करके उधर ब्राह्मण भोजन की तैयारी करे और इधर–ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः–से लालाट में–ओं कश्यपस्य त्र्यायुषम्– से कंठ में–ओं यद्देवेषुत्र्यायुषम्–से दहिनी बाहु के मूल में और–ॐ तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्–से हृदय में कुंड का भस्म लगावे और बच्चे को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी लगावे। उसमें 'तन्नोअस्तु' की जगह 'तत्तोअस्तु' पढ़े। फिर पू
अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद और देवताओं या विसर्जन करे।
प्रकार कुमारी के भी नाममंत्रों या पौराणिक मंत्रों से सभी कृत्य
इति यजुर्वेदी नामकरण।

(सामवेदीय)

इस तरह यजुर्वेदियोंके जातकर्म और नामकरण आदि संस्
की विधि लिखने के बाद सामवेदियों की भी लिखी जानी चाहि
यजुर्वेदियों की तरह सोष्यंतीकर्ममें केवल मंत्र जप नहीं होता, कि
सामवेदी लोग होम करते हैं, जिसे सोष्यंती या सुखप्रसव होम
हैं। जब पति को पता लगे कि स्त्री के पेट में पीड़ा है और
शीघ्रता से बाहर नहीं आरहा है तो पति पूर्वोक्त विधि से आचा
वरण करके प्रसूतीगृहमें ही होम करे। प्रथम एक हाथ लंबी चौड़ी
चार अंगुल ऊंची वेदी बनाकर अग्निस्थापन का संकल्प करे। उ
१८५ पृष्ठोक्त पञ्चभूसंस्कार करके उसमें अग्नि की स्थापना और
की पूजा करे (१९५)। इसके सिवाय कुशों का परिस्तरण करके
अग्नि पर गर्म करे और चुपचाप अग्निके उत्तर, पूर्व और दक्षिण पर
मूहन कुशों से झाड़कर—ॐ देवसावितः-इत्यादि मंत्रसे अग्निके
ओर जल गिरा कर २०१ पृष्ठोक्त पर्युक्षण करे। इसमें ब्रह्मा का
या समिधों और इध्मों का आधानादि नहीं किया जाता है। कु
ण्डिका में से ऊपर कही बातें ही की जाती हैं। हां, घृत के संस्का
लिये पवित्र भी बनावेंगे और उससे घृत का उत्पवन या सम्पवन
पूर्व रीतिसे (२००)ही करेंगे। फिर उनपर जल छिड़क कर उन्हें
में छोड़ देंगे। सारांश, कुशकण्डिका के बर्हिः परिस्तरण के लि
केवल घृत के संस्कार से सम्बन्ध रखने वाले ही कर्म करेंगे। शेष
देंगे। अतः पूर्व प्रदर्शित कुशकंडिका देखकर उसीसे आवश्यक
करके संकल्प करे—ॐ अद्य शुभपुण्यतिथौ पत्न्याः
सुखप्रसवार्थं होमं करिष्ये। इसके बाद विनियोग
मंत्रद्वयस्य प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दः संराजि
धातरौ यथाक्रमं देवते सुखप्रसवहोमे विनियो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर आहुति देवे--(१) ॐ या तिरश्ची निपद्यते अहं विधरणी इति । तां त्वा घृतस्य धारया यज्ञे स ँ राधिनीमहं स ँ राधिन्यै देव्यै दैष्ट्र्यै स्वाहा इदं संराधिन्यै देव्यै नमम । (२) ॐ विपश्चित्पुच्छमभरत्तद्धाता पुनराहरत् । परे हि त्व विपश्चित्पुमानयं जनिष्यतेऽसौ नाम स्वाहा इदं धात्रे नमम ॥ इस दूसरी आहुति में जो 'असौ नाम' है वह उत्पन्न होने वाले के नाम के लिये है । इसलिये उसकी जगह कोई कल्पित नाम रख कर 'अमुकनामा' ऐसा पढ़ना चाहिये । फिर अन्त में भी अंजली में जल लेकर दक्षिणावर्त क्रम से एक या तीन वार अग्नि के चारों ओर गिरावे जैसे शुरू में गिराया था और वही "देवसवितः" इत्यादि मंत्र पढ़े । और अग्नि के चारों ओर फैलाये कुश को जिस क्रम से फैलाया था उसी क्रमसे समूचे को जमा कर के या उसमें से एकही मुट्ठी लेकर उसका अग्र, मध्य और मूल घी में डुबोवे और मंत्र पढ़े—ॐ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्विश्वेदेवा देवता बर्हिरभ्यञ्जने विनियोगः । ॐ अक्तु ँ रिहाणा व्यन्तु वयः ॥ इसे तीन बार पढ़कर तीन जगह घी में डुबोना चाहिये । फिर उस कुशका अंजली के जल से अभ्युक्षण करके इन मंत्रों से होम करे—ॐ प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दो रुद्रो देवता बर्हिर्होमे विनियोगः । ॐ यः पशूनामधिपतीरुद्रस्तन्तिचरो वृषा । पशूनस्माकं माहि ँ सीरेदस्तु हुतं तव स्वाहा इदं पशूनामधिपतये रुद्राय तन्तिचराय नमम ॥ फिर आचमन करके एक आहुति देवे—ॐ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वसवोदेवता होमे विनियोगः । ॐ वसुभ्यः स्वाहा इदं वसुभ्यो नमम ॥ फिर शेष घी को उत्तर तरफ रख कर अग्निकी प्रदक्षिणा करे—ॐयानि कानि च० इत्यादि मंत्रों से (२३६) तब अग्नि को प्रणाम करके प्रार्थना करे—ॐ आरोग्यमायुरैश्वर्यंधीर्धृतिः शंबलं यशः । ओजो वर्च्चः पशून्वीर्यं ब्रह्म ब्राह्मण्यमेवच ॥१॥ सौ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाग्यं कर्मसिद्धिं च कुलज्यैष्ठ्यं सुकर्तृताम् । सर्वमेतत्स
साक्षिन्द्रविणोद रिरीहि नः ॥ २ ॥ इसके बाद आचार्य
दक्षिणा का संकल्प करे-ॐ अद्य शुभपुण्यतिथौ सोष्यन्ती
होमकर्मणः प्रतिष्ठार्थं तत्सांगतासिद्ध्यर्थं चाचार्याय
दक्षिणां सम्प्रददे ॐ तत्सन्नम । और वह दक्षिणा आचा
को देकर हिरण्य दानका संकल्प करे। यही हिरण्यदान भूम
दक्षिणा की जगह है-ओं अद्य शुभपुण्यातिथौ अनुष्ठितक
र्णोऽगवैकल्यदोषपरिहाराय साद्गुण्यसिद्धये च यथा
शक्ति हिरण्यं तन्निष्क्रयीभूतं द्रव्यान्तरं वा नाम
नामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्योऽन्येभ्यश्च संप्रददे ओं तत्सन्नम
अन्त में-ॐ विष्णो विष्णो विष्णो-तीन बार कह—ओं प्रम
दात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेवतद्विष्णो
सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः-पढ़े । इति सोष्यन्तीहोम ।

सामवेदियों के यहां जातकर्म और अन्नप्राशन एक ही स
होते हैं और बहुत ही संक्षेप से । इन दोनों के बाद ही नालच्छे
और पिता का वस्त्रों के सहित स्नान विहित है न कि पहले ह
पुत्र या पुत्री का जन्म सुनकर तुरन्त पिता जावे और कहे कि
नालच्छेदनं स्तन्यदानं चान्नप्राशनसमाप्तेः पूर्वं मा कुरु
फिर चुपचाप बच्चे को अपनी दहिनी गोद में पूर्व मुख करके
लेवे और प्रधान संकल्प करे— ओं अद्य०— इत्यादि १०८ पृष्ठ
सभी कुछ कह कर 'अमुक कर्म' इत्यादि की जगह- अस्य शिशो
र्भजलपानसंजातदोषापनुत्तये वैजिकगार्भिकपापनिव
णाय चेमं शिशुं जातकर्मणा संस्करिष्यामि-यह पढ़
तब धान और जौ को जल से पिसवाकर दहिने हाथ की अ
मिका और अंगूठे से उसे उठा लेवे और बच्चे की जीभ में प्रग
नामक अग्निका ध्यान करके उसी में उस धान और जौ के लेप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगावे और यह मन्त्र पढ़े-ॐ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरन्नं देवता मार्जने विनियोगः। ॐइयमाज्ञेदमन्नमिदमायुरिदममृतम् ॥ यदि कन्या होतो विना मंत्र पढ़ेही लगावे और संकल्प में "अस्य-शिशोः" की जगंह "अस्याः कुमार्याः" "इमं शिशुं" की "इमां कुमारीं" पढ़े। बस इतनाहीं जात कर्म है। इसके बाद अन्नप्राशन का संकल्प करे-ॐ अद्य०-इत्यादि पूर्वोक्त सभी कहकर केवल "जातकर्मणा" की जगह "अन्नप्राशनकर्मणा" कहे, शेष सब ज्यों का त्यों कहे। फिर बालक की जिह्वा में शुचि नामक अग्नि का ध्यान करके दहिने हाथ की अनामिका और अंगूठे से सोना पकड़ कर या उनमें सोनेकी अंगूठी आदि लगा कर उसी से घी उठावे और बालक की जिह्वा पर आगे के दो मंत्रों से दो बार गिरावे-अनयोः यथाक्रमं प्रजापतिमेधातिथी ऋषी गायत्री छन्दः मित्रावरुणादिसदसस्पती देवते सर्पिः-प्राशने विनयोगः। (१) ॐ मेधां ते मित्रावरुणौ मेधा-मग्निर्दधातुते। मेधां ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ स्वाहा। (२) ॐ सदसस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्य काम्य-म्। सनिं मेधामयासिषं स्वाहा ॥ इसके बाद नाल काट कर स्तन पिलाया जावे। इसलिये पिता बच्चे को माता की गोदमें देकर देह पर के समूचे वस्त्रों के सहित स्नान करने का संकल्प करे-ओं अद्य शुभपुण्यतिथौ जातकर्मनिमित्तकसचैल-स्नानमहं करिष्ये ॥ और स्नान करके विष्णु का स्मरण करे। यदि कन्या का अन्नप्राशन करना हो तो मंत्र के विनाहीं योहीं उसकी जिह्वा पर घी गिरावे और संकल्प जातकर्म के संकल्प कीही तरह 'इमां' इत्यादि शब्दों के साथ पढ़े। इति सामवेदी जातकर्म, अन्नप्राशन कर्म।

सामवेदी लोग जन्म के ग्यारहवें दिन नामकरण करते हैं और यदि किसी कारण से उस दिन न हो सके तो सौ दिन के बाद १०१ वें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिन और उस समय भी न होने पर पूरा वर्ष बीतने पर दूसरे वर्ष पहले दिन करते हैं । पिता या उसके अभाव में अन्यकर्त्ता नामकरण के दिन प्रातःकाल स्नान के बाद अहत वस्त्र पहन तिलक धारण पूर्वक सन्ध्यादि नित्यकर्म करके पूर्वोक्त रीति से कर्मपात्र का सम्पादन करे और पवित्र धारण कर आचमन, प्राणायाम, प्रधानसंकल्प कर गणेशपूजा, पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, नान्दीश्राद्ध, कलशस्थापन और ग्रहपूजा आदि १०३ पृष्ठोक्त रीति से करे । १०८ पृष्ठोक्त प्रधान संकल्प —अस्य कुमारस्य (कन्या हो तो) अस्याः कुमार्याः वैदिकगार्भिकदोषापनुत्तये व्यवहारसिद्धये च नामकरणं करिष्ये तदंगतया गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृपूजां वसोर्धारापूजां नान्दीश्राद्धं कलशस्थापनं तत्र वरुणादि देवतानां ग्रहाणां पूजनं च करिष्ये—इतना वाक्य " अमुककर्म करिष्ये " की जगह पढ़े । परन्तु संकल्प से भी पहले ही कर्म करने के लिये पृष्ठोक्त रीति के अनुसार आचार्य का वरण करलेना चाहिये । क्योंकि आज कल के यजमान प्रायः संकल्प भी पढ़ना नहीं जानते । इस संकल्प के समय स्त्री यजमान के दहिने रहे और उससे दहिने गोद में बालक रहे । उसदिन बालक को सिर के सहित समूचे शरीर का स्नान करा लेना चाहिये । फिर अपने सामने हीं कुंड या स्थंडिल में १८५ पृष्ठोक्त पंचभूसंस्कार पूर्वक अग्नि की विधिवत् स्थापना कर कुशकण्डिका की समूची क्रिया करे । केवल चरु सम्बन्धी क्रिया आदि का रखना या पकाना छोड़ दे । और क्रमशः सभी क्रिया करते हुए घी का सम्पवन, उत्पवनादि संस्कार करके पवित्र अग्नि में डालने तक की क्रिया कर चुकने पर माता बालक के शरीर को छोड़ कर अहत वस्त्र से शेष शरीर ढंककर उत्तर सिर करके पिता की गोदमें देवे और पति के पीछे से उसके उत्तर जाकर उसकी तरह पूर्वमुख बैठ जावे । इसके बाद पति स्रुव को पानी से धोने से लेकर व्याहृति होम तक की कुशकण्डिका की शेष क्रियाओं (१९९) पूरा करके चुपचाप-(१) ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम—इस मंत्र से घृतकी एक आहुति देवे । फिर-(२) ओंकुम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जन्मतिथये स्वाहा इदं जन्मतिथयेनमम। (३) ॐ जन्मतिथि देवतायैस्वाहा इदं जन्मतिथिदेवतायै नमम । (४) ॐ कुमारजन्मनक्षत्राय स्वाहा इदं जन्मनक्षत्राय नमम । (५) ॐ जन्मनक्षत्रदेवतायै स्वाहा इदं नक्षत्रदेवतायै नमम ॥ इस तरह चार आहुतियां और देवे। मगर इस तरह तब होम होगा जब जन्म की तिथि, जन्म का नक्षत्र और उन के देवताओं का स्मरण न हो सके। लेकिन भरसक स्मरण करके तिथियों और देवताओं के नामों से ही आहुतियां दीजानी चाहियें। आगे प्रत्येक तिथि और उनकी देवता तथा प्रत्येक नक्षत्र और उनकी देवताओं के नाम से आहुति देने के नाममंत्र आसानी के लिये लिख देते हैं। इन में से बालक के जन्म सम्बन्धी जो हों उन्हीं की आहुतियां उनके मंत्र देखकर दे, ताकि एकही कर्म में सबकी आहुति न दोजावे। वह यों हैं-(१) ॐ प्रतिपदे स्वाहा इदं प्रतिपदे नमम। (२) ॐ द्वितीयायै स्वाहा इदं द्वितीयायै नमम । इसी तरह से आगे भी-(३) ॐ तृतीयायै० (४) चतुर्थ्यै० (५) पञ्चम्यै० (६) षष्ठ्यै० (७) सप्तम्यै० (८) अष्टम्यै० (९) नवम्यै० (१०) दशम्यै० (११) एकादश्यै० (१२) द्वादश्यै० (१३) त्रयोदश्यै० (१४) चतुर्दश्यै० (१५) पौर्णमास्यै० (१६) अमावास्यायै० ॥ फिर तिथियों की देवताओं के क्रमशः-(१) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम (२) त्वष्ट्रे० (३) विष्णवे० (४) यमाय० (५) सोमाय० (६) कुमाराय० (७) मुनिभ्यः० (८) वसुभ्यः० (९) पिशाचेभ्यः० (१०) धर्माय० (११) रुद्राय० (१२) रवये० (१३) मन्मथाय० (१४) यक्षेभ्यः० (१५) पितृभ्यः० (१६) विश्वेभ्योदेवेभ्यः० ॥ नक्षत्रों के-(१) ॐ अश्विनीभ्यः स्वाहा इदमश्विनीभ्यो नमम (२) भरणीभ्यः० (३) कृत्तिकाभ्यः०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

(४) रोहिणीभ्यः० (५) मृगशिरसे० (६) आर्द्रा
(७) पुनर्वसवे० (८) पुष्याय० (९) आश्लेषाभ्यः०
मघाभ्यः० (११) पूर्वाभ्यां फाल्गुनीभ्यां० (१२)
राभ्यां फाल्गुनीभ्यां० (१३) हस्ताय० (१४) चित्रा
(१५) स्वात्यै० (१६) विशाखाभ्यः० (१७) अनु
धाभ्यः० (१८) जेष्ठायै० (१९) मूलाय० (२०) पू
भ्योऽषाढाभ्यः० (२१) उत्तराभ्योऽषाढाभ्यः०
श्रवणाय० (२३) धनिष्ठायै० (२४) शतभिषग
(२५) पूर्वाभ्यां प्रौष्ठपदाभ्यां० (२६) उत्तराभ्यां प्रौ
दाभ्यां० (२७) रेवत्यै०॥ नक्षत्रों की देवताओं के क्रमशः-
ओं अश्विभ्यां स्वाहा इदमश्विभ्यां नमम (२) यमा
(३) अग्नये० (४) प्रजापतये० (५) सोमाय०
रुद्राय० (७) अदितये० (८) बृहस्पतये० (९) स
भ्यः० (१०) पितृभ्यः० (११) भगाय० (१२) अ
म्णे० (१३) सवित्रे० (१४) त्वष्ट्रे० (१५) वायु
(१६) इन्द्राग्नीभ्यां० (१७) मित्राय० (१८) इन्द्रा
(१९) निर्ऋतये० (२०) अद्भ्यः० (२१) विश्वे
देवेभ्यः० (२२) विष्णवे० (२३) वसुभ्यः० (२४)
णाय० (२५) अजायैकपदे० (२६) अहिर्बुध्न्या
(२७) पूष्णे० ॥

इस तरह होम कर चुकने पर बालक का मुख, दोनों नेत्र,
नाक कान को छू कर कान के पास यह मंत्र जपे- ॐ प्रजापति
र्ऋषिर्यजुरादित्यो देवता नामकरणे विनियोगः । ओं को
कतमोऽस्येषोऽस्यमृतोऽसि आहस्पत्यं मां संप्रविशासौ
स त्वाऽह्ने परिददात्वहस्त्वा रात्र्यै परिददातु रात्रिस्त्वा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रात्राभ्यां परिददात्वहोरात्रौ त्वाऽर्धमासेभ्यः परिदत्तामर्द्धमासास्त्वा मासेभ्यः परिददतु मासास्त्वर्तुभ्यः परिददत्वृतवस्त्वा संवत्सराय परिददतु संवत्सरस्त्वायुषे जरायै परिददात्वसौ ॥ २ ॥ दोनों मंत्रों के अन्त में जो 'असौ' पद है उसकी जगह बालक का रक्खाजाने वाला नाम दे देना चाहिये। नाम कैसा हो इसके विषय में प्रायः यजुर्वेदियों का ही नियम है। पुरुष के नाम के अक्षर दो चार आदि सम हों और स्त्री के एक तीन आदि विषम रहें। स्त्रियों के अन्त में दा रहे। शेष में समानता ही है। सब से पहले माता को बालक के नाम बता कर पीछे सगे सम्बन्धियों को बतावे। फिर अन्त में उन्हीं तीन व्याहृतियों का होम घी से करके (कहीं कहीं चार होम होता है; चौथा तीनों से) चुपचाप अग्नि में समिध देकर फिर प्रायश्चित्त के लिये व्याहृतियों से चार आहुति दे। तीनों से तीन और तीनों मिलाकर चौथी जैसा कि २०३ पृष्ठ में लिखा है। फिर अन्त में पूर्ववत् विनियोग सहित 'देवसवितः' इत्यादि मंत्र से अग्नि के चारों ओर प्रदक्षिण क्रम (दक्षिणावर्त)से तीनबार अंजली से जल गिराकर पर्युक्षण करे। इसके बाद पूर्ववत्ही जलकी तीनों अंजली गिरावे जो देवसवितः से पर्युक्षण के बाद पहले भी की गई है। यहां विनियोग तो वही है, मगर मन्त्र में थोड़ा अन्तर है। दक्षिण, पश्चिम और उत्तर ओर पूर्ववत् ही अंजली गिरावे। मन्त्र यह है-ॐ प्रजापतिर्ऋषिरेकपदागायत्री छन्दोऽदित्यनुमतिसरस्वत्यो देवता उदकाञ्जलिसेचने विनियोगः। (दक्षिण) ॐ अदितेऽन्वमंस्थाः। (पश्चिम) ॐ अनुमतेऽन्वमंस्थाः। (उत्तर) ॐ सरस्वत्यन्वमंस्थाः ॥ फिर चारों ओर बिछाये कुश को उठाकर बर्हिः होम करे। पहले जिस क्रम से बिछाया था उसी क्रमसे उठाकर हाथ में सभी को या उसमें से एक मुट्ठी लेकर और अगला मंत्र तीन बार पढ़कर क्रम से कुशों के अग्र, मध्य और मूल में घी लगावे-ॐ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्विश्वेदेवादेवता बर्हिरभ्यञ्जने विनियोगः। ओं अक्तु ँ रिहाणा व्यन्तु वयः ॥ फिर जल से उनका अभ्युक्षण करके इस मंत्र से उनका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

होम करे-ॐ प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दो रुद्रोदेवताबर्हिह
विनियोगः । ओं यः पशूनामधिपती रुद्रस्तान्तिचरोरु
पशूनस्माकं माहि ँ सीरेतदस्तु हुतंतव स्वाहा इदं पशू
मधिपतये रुदाय तन्तिचरायनमम ॥ फिर आचमन क
वसुहोम की धारा अग्नि में गिरावे-ॐ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वे
देवताहोमे विनियोगः । ॐ वसुभ्यःस्वाहा इदं वसुभ्योनमम
बाद को हवन का शेष घी उत्तर ओर रखकर ब्रह्माको सद्रव्य पूर्ण
दक्षिणा देने का संकल्प करे-ओं अद्यकृतैतन्नामकरणकर्म
सांगतासिध्यर्थमिमांप्रजापतिदैवतांपूर्णपात्रदक्षिणां
ताकृतावेक्षकायब्रह्मणे सम्प्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर
को दक्षिणा देकर २४५ पृष्ठोक्त त्र्यायुष करके अग्नि की परिक्रमा क
ओं सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिसप्तसमिधः कृताः । दे
यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ अथवा-ओं या
कानि तु पापानि जन्मान्तरकृतानि च । तानि सर्वा
नश्यन्तु प्रदक्षिण पदे पदे ॥ इसके उपरान्त प्रणीतापात्र
ही जगह कुश कण्डिका के समय जल से भर कर स्थापित चमस
यदि वह हो तो, बाहर उठा कर ले जावे और यदि दूसरा प्रणी
पात्र हो तो उसे ही ले जाकर उसका जल गिरा कर दूसरे जल से
धोवे और उसमें नया जल भर कर अपने स्थान पर ही
देवें । अब होम स्थान में उसे रखने की आवश्यकता नहीं है । प
आगे उसके जल से काम लेगें । इसलिये निकट ही रक्खे, जहां से का
सके । तब अग्नि के पास आकर उसकी प्रार्थना करे-ओं आयु
रोग्यमैश्वर्यं धीर्धृतिः शं बलं यशः । ओजोवर्चः पशू
र्यं ब्रह्म ब्राह्मण्यमेव च ॥ १ ॥ सौभाग्यं कर्मसि
कुलज्यैष्ठ्यं सुकर्तृताम् । सर्वमेतत्सर्वसाक्षिन् द्रविणोद
रीहि नः ॥ २ ॥ फिर गोदान का संकल्प करके आचा
दक्षिणा का संकल्प करे-ओं अद्य कृतैतन्नामकरणक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सांगतासिद्ध्यर्थमाचार्यायेमां यथाशक्ति दक्षिणां सम्प्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ दक्षिणा देकर कर्म के अंगो की त्रुटि की पूर्ति के लिये हिरण्य दक्षिणा का संकल्प कर उसे शेष ब्राह्मणों तथा अन्यान्य दीनों अनाथों को बांटे । यही भूयसी दक्षिणा सामवेदियों की है । यदि सोना (हिरण्य) न हो तो उसकी जगह और ही द्रव्य का संकल्प करे-ओं अद्यानुष्ठितैतन्नामकरणकर्मणोंऽगवैकल्यदोषपरिहाराय तत्साद्गुण्यसिद्ध्यै च यथाशक्ति हिरण्यदानं तन्निष्क्रयीभूतद्रव्यदानं वा करिष्ये । तच्च नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्योऽन्येभ्यश्च दीनानाथेभ्यः संप्रदास्ये ओं तत्सन्नमम ॥ फिर-ओं हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमवीजं विभावसोः । अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे-पढ़ कर लोगों को बांट देवे । अनन्तर यदि ब्रह्मभोज कराना हो तो उसका भी संकल्प करके उसकी तैयारी करे-ओं अद्यकृतैतन्नामकरणकर्मणोंऽगं यथाशक्ति यथासम्भवं ब्राह्मणभोजनं कारयिष्ये ॥ फिर इन मंत्रों से वामदेव्य सामका गान करावे-ओं वामदेव्यस्य वामदेव ऋषिर्गायत्री छन्द इन्द्रो देवता शान्तिकर्मणि जपे विनियोगः ॥ ओं कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कया शचिष्ठयावृता ॥ १ ॥ कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढ्णाचिदारुजे वसु ॥ २ ॥ अभीषुणः सखीनामविता जरितॄणाम् । शतं भवा स्यूतिभिः ॥ ३ ॥ तब भगवान के स्मरण का संकल्प कर उनका स्मरण करे-ओं अद्यास्मिन्कर्मणि मध्ये सम्भावितमंत्रलोपक्रियालोपन्यूनातिरिक्तविपर्यासविस्मृतांगाविध्यपराधप्रायश्चित्तार्थं विष्णोः स्मरणं करिष्ये । संकल्प करके बहुत बार-ओं विष्णो विष्णो विष्णो-कहकर-ॐप्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः
ऐसा कहे । अनन्तर किये कर्म को कृष्णार्पण या ब्रह्मार्पण करे-
ॐ ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौब्रह्मणा हुतम् । ब्रह्मैव तेन
गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥१॥ ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सं
त्यक्त्वा करोति यः । लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवांभसा
॥२॥ मयानुष्ठितं कर्म ओं तत्सद् ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ फिर कलश
जल से उक्तरीति से यजमान के उत्तर पत्नी, कुमार को बैठाकर
पृष्ठोक्तरीति से ब्राह्मण दूब और आम के पल्लव से उसका अभिषेक करे
यदि आवश्यकता समझें तो अन्त में २२७ पृष्ठोक्त २१-२९ तक
पौराणिक श्लोक भी जोड़ लेवें। फिर २२८ पृष्ठोक्त तिलक कर चुकने
बाद यजमान की ओर से आचार्य सभी ब्राह्मणों से प्रार्थना करे-
ओं स्वस्ति मन्त्रार्थाः सफलाः सन्त्विति भवन्तो महान्तो
नुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मण उत्तर दें—ओं तथास्तु ॥ फिर आचार्य-
ओं अस्य यजमानस्य सकुटुम्बस्य वेदोक्तं दीर्घमायुर्भूय
दिति भवन्तो महान्ताऽनुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मण०-ओं तथास्तु
आचार्य-ओं अनेनानुष्ठितमिदं कर्म यथोक्तं यथाशास्त्र
मच्छिद्रमविकलं सांग सुगुणं भूयादिति भवन्तो महा
न्तोऽनुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मण-ओं तथास्तु ॥ आचार्य-ओं
अनुष्ठितेऽस्मिन्कर्मणि मंत्रतंत्रद्रव्यक्रिय लोपश्रद्धाज
ड्यादयः सर्वेदोषाःशान्ता भूयासुरिति भवन्तो महान्तो
नुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मण-ओं तथास्तु ॥ ओं अनेन कर्मणा परमे
श्वरः सुतृप्तःसुप्रसन्नो भूत्वाऽस्य यजमानस्य झटित्येव वां
च्छितार्थसिद्धिप्रदो भूयादिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्ण
न्तु ॥ ब्राह्मण-ओंतथास्तु ॥ आचार्य-ओं अस्य यजमानस्य
द्विपदां चतुष्पदाञ्चारोग्यं दीर्घमायुश्च भूयादिति भवन्तो
महान्तोऽनुगृह्णन्तु । ब्राह्मण-ओं तथास्तु ॥ फिर-ओं यान्तु दे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् । इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च–यह मंत्र पढ़ अक्षत छिड़ककर संक्षेप से एकही साथ सभी देवताओं का विसर्जन कर डाले। यदि विस्तार से अलग अलग विसर्जन करना हो तो २२६ पृष्ठोक्तरीति से मंत्रों को पढ़ पढ़कर विसर्जन करे । इसी प्रकार कन्या का भी नामकरण करे । हां, वैदिक मंत्र की जगह चुपचापही उसके मुख आदि को छूकर नाम सुनादे। संकल्पमें 'अस्य कुमारस्य' की जगह 'अस्याः कुमार्याः' बोले । शेष ज्यों का त्यों । सामवेदियों के यहां पद्धतियों में षष्ठीपूजन या बालकरक्षा आदि कुछ भी नहीं लिखा है । इसलिये इन कर्मों को यजुर्वेदियोंकेही अनुसार कर सकते हैं । दूसरा चारा नहीं है । हां, यदि कोई न करना चाहे या उसके घर में षष्ठी पूजा की रीति ही न हो तो बातही दूसरी है । मगर संभवतः यह बात न होगी । फिर बालकरक्षा तो करनी हीं होगी । लड़के तो प्रायः रोते या बीमार पड़ जाया करतेही हैं । अतः शेष कर्म यजुर्वेदियों केही करने चाहियें । इति सामवेदी जातकर्म, नामकरण विधि ।

---

(४)

चौल, उपनयन, वेदारम्भ, समावर्त्तन ।

नामकरण के बाद और भी बालक को सूती के गृह से बाहर निकालने का निष्क्रमण तथा अन्नप्राशन संस्कार होते हैं । परन्तु सामवेदियों के यहां अन्नप्राशन अलग होताही नहीं और निष्क्रमण भी वे लोग नहीं करते । हां, चन्द्र दर्शन भलेही करते हैं । इसलिये एक तो इनमें विवाद है। दूसरे इस समय ये लुप्त प्राय हैं। कोई भी इन्हें शायदही करता हो । इसीसे अभी इन्हें छोड़कर चूड़ाकरण आदि की विधि लिखते हैं । चूड़ाकरण का अर्थ है चोटी या शिखा रखना । अब तक बालक के सिर पर समान लंबाई के बाल थे, कोई छोटा बड़ा न था । अब शेष बालों का मुण्डन करके केवल चोटी या शिखा छोड़ते हैं । चूड़ा नाम है ही चोटी या शिखा का और उसी का बनाना या रखना चूडाकरण या चूडाकर्म कहाता है । इसी का नाम आज कल मुण्डन हागया है और यही साधारण रूप से लोगों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में प्रचलित है, परन्तु अत्यन्त विकृत रूप में। हाँ, उपनयन के साथ उसी समय पहले शास्त्रीय रीति से चूड़ा या मुण्डन संस्कार, जिसे चौल भी कहते हैं, करके फिर उपनयन की क्रिया आजकल की जाती है। वेदारम्भ और समावर्त्तन तो प्रायः लुप्त ही हैं। इसीसे उपनयन के साथ ही वेदारम्भ करके तुरन्तही समावर्तन भी करा देते और इस तरह किसी प्रकार से चारों संस्कारोंको नाम मात्र के लिये लोगोंने जिला रक्खाहै।इसीसे हमेंभी चारोंकी पद्धतियाँ एकही प्रकरण में लिखनी पड़ रही हैं। हालांकि ऐसा करना ठीक नहीं। उचित तो यही है कि उपनयन के बाद श्रावण या भाद्रपद की पूर्णिमा के समय या कभी कुछ इधर उधर, जैसा कि यजुर्वेदियों और सामवेदियों की पद्धतियों में अलग अलग लिखा है कि यजुर्वेदी श्रावण की पूर्णिमा को और सामवेदी भाद्रपद की पूर्णिमा या शुक्ल पक्ष हस्त नक्षत्र में रक्षाबन्धन और उपाकर्म करे, उपाकर्म नामक कर्म करके वेदारम्भ करे और फिर कम से कम एक वेद और व्याकरण आदि वेदांगों को पढ़ कर समावर्त्तन करे। उपनयनका अर्थ है वेद आदि के पढ़ाने वाले आचार्य के पास ले जाना या स्वयं आचार्य का ब्रह्मचारी को अपने पास ले जाना ताकि उसे वेद वेदांग पढ़ाया जाय। यह जो उपनयन की क्रिया आज कल की जाती है उसी का रूप है और नाम मात्र के लिये है। वस्तुतः ब्रह्मचारी आचार्य के पास जब जाता था तो आचार्य पहले उसका संस्कार करता था। संस्कार का अर्थ है धोना, मलना, साफ करना या मैल और दोषों को दूर करना और अच्छे गुणों को दुर्गुणों की जगह स्थापित करना। इस संस्कार द्वारा ब्रह्मचारी की बाल्यावस्था के कितने हीं पापों और दुर्गुणों को हटाकर उनकी जगह सद्गुणों के स्थापित करने का श्रीगणेश होता था। आजकल जो यज्ञोपवीत या जनेऊ के नाम से यह संस्कार है यज्ञोपवीत या जनेऊ संस्कार कहाता है, उसे पहले व्रतबंध कहते थे और आज भी कहीं कहीं कहते हैं। व्रतबन्ध का अर्थ व्रतों या नियमों के करने का बन्धन। अर्थात् उसी दिन से भूमि पर सोना, ब्रह्मचर्य पालन आदि अनेक नियमों (व्रतों) के नियमित रूप से पालन करने के बन्धन से ब्रह्मचारी अपने को स्वेच्छा से बांध देता था, जिससे भविष्य में विद्वान, सदाचारी, वीर्यवान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और प्रतिभा सम्पन्न पुरुष बन सके। जो यज्ञोपवीत पहनाने की रीति है वह भी उसी नियम का सूचक है। यज्ञ और उपवीत इन दो शब्दों से यज्ञोपवीत शब्द बना है । उपवीत कहते हैं उस वस्त्र, सूत या रस्सी को जो बायें कंधे और पीठ की रीढ़ एवं नाभि से होकर दहिनी बगल में कमर तक पहुंच जावे या थोड़ा सा उससे ऊपर ही रहे। आज कल का जनेऊ ऐसा नहीं होता! वह तो कमर के नीचे चला जाता है! यह ठीक नहीं है । यह उपवीत इस बात का चिह्न है कि यह ब्रह्मचारी आज से ही यज्ञ करने का अधिकारी हुआ है, इससे पूर्व न था। इसी से इसे यज्ञोपवीत कहते हैं। यज्ञों का करना भी तो वेद वेदांगों के ज्ञान के विना नहीं हो सकता। क्योंकि कृष्ण के कथनानुसार ही यज्ञों का विस्तार और उनकी विधि वेदों में ही है-"एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे" (गीता ४।३२)। इसे ब्रह्मसूत्र भी कहते हैं । ब्रह्म नाम है वेदका और सूत्र कहते हैं सूचक, चिह्न या जनानेवाले को । यह इस बात की सूचना करता है कि ब्रह्मचारी का धर्म है वेदों और उसके सहायक अंगों का पढ़ना एवं उनका यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना। परन्तु आज कल तो उसका काम साधारणतया केवल चाभी बांधना और दिशा पेशाब के समय कान बांधना रह गया है! यह इन्हीं दो बातों का सूचक हमारी बद-किस्मती से है! हां, एक इस बात का भी सूचक है कि पहननेवाला द्विज-ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य-है जैसा कि तुलसी दास ने कहा है कि "द्विज चिन्ह जनेउ उघार तपी"। जनेऊ के बनाने में, जो हाथ कते सूतको पहले त्रिगुण वा तेहरा करके फिर उससे दहिने हाथ की चारों अंगुलियों को एक दूसरी में सटा कर उनके मध्य या मूल में सबों को ९६ बार लपेटते हैं और इस तरह जितना सूत लपेटा जाता है उसी का एक जनेऊ बनाते हैं, उससे भी यही अभि-प्राय प्रगट होता है। अतएव त्रिगुण का अर्थ ही है ऋक्, यजुः, साम मंत्रात्मक चारों वेद। कारण, मंत्र तीन हीं प्रकार के हैं। चारों अंगुलियों में लपेटने का, जिसे चौवा भी कहते हैं, अर्थ है उन्हीं तीनों प्रकार के मंत्रों को पदपाठ, क्रमपाठ, घनपाठ और जटापाठ इन चार तरीकों से पढ़ना। या उन्हे सुनना (श्रवण), उन पर विचारकरना (मनन), उनके अर्थों का चित्त की एकाग्रता द्वारा निश्चय करना (निदिध्यासन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा साक्षात्कार) और अन्त में तदनुसार कामकरना या लोगों प्रचार करना। ९६ बार का अर्थ यह है कि वेद मंत्रों की जो एक लाख संख्या मानी जाती है, जैसा कि कहते हैं कि "लक्षं तु वेदाश्चत्वारः उन में चार हजार ज्ञानकांड, सोलह हजार उपासनाकांड और अस्सी हजार कर्म कांड है। उनमें ज्ञानकांड के चार हजार संन्यासाश्रम के लिये छोड़ कर शेष ९६ (८० + १६) हजार ही सम्बन्ध में पूर्वोक्त चारों बातों की आशा यज्ञोपवीतधारी से जाती है। प्रत्येक मंत्र के सम्बन्ध में उसे चारों काम करना चाहिये शेष ४ हजार का अभ्यास तो यज्ञोपवीत हटाने पर, विधिवत् त्यागने पर, संन्यासी लोगही ठीक ठीक करेंगे। जनेऊ में प्रवर की ग्रन्थि दी जाती है वह भी इसी अभिप्राय से है प्रवर का अर्थही है श्रेष्ठ। सारांश, जिस गोत्र का ब्रह्मचारी उस गोत्र के मूल ऋषि कश्यप, गौतम प्रभृति के वंश में सर्व श्रे ऋषियों के स्मरण केही लिये प्रवर का चिन्ह दिया जाता है। क्यों कि उन्हीं सर्वश्रेष्ठ ऋषियों को ही प्रवर कहते हैं। ऋषि का अर्थ ही है वेद मंत्रों को प्रगट करने वाला, उनका व्याख्याता और मूल प्रचारक ऐसे सर्व श्रेष्ठ ऋषियों के स्मरण से ब्रह्मचारी के दिल में यह भावना होगी कि मैं उन्हीं ऋषियों के वंश में हूं जिन्होंने वेद व्याख्यान और प्रचार में अत्यन्त ख्याति प्राप्त की थी। अतएव मुझे भी योग्य वेद होना चाहिये इत्यादि। इसी प्रकार अन्यान्य बातों का भी कुछ कुछ अभिप्राय है।

समावर्त्तन का अर्थ है वापस आना। तात्पर्य यह है कि गुरुके कुल में वेदादि सच्छास्त्रों के अध्ययन के बाद ब्रह्मचारी फिर अपने घर आता है। इसे ही स्नान संस्कार भी कहते हैं। कारण, उस दिन ब्रह्मचारी सभी कृत्य कर चुकने पर अन्तिम स्नान विशेष रूप से करता है। इसीसे उसे स्नातक भी कहते हैं। वह स्नातक तीन प्रकार का होता है; विद्यास्नातक, व्रतस्नातक और विद्याव्रतोभयस्नातक। जिसे ब्रह्मचर्य के सम्पूर्ण नियमों का यथेष्ट पालन न हो सके, परन्तु विद्या अध्ययन विधिवत् करके जो समावर्त्तन करे वही विद्यास्नातक है जिसके विद्याध्ययन में त्रुटि रह जावे, जो पूर्ण योग्यता न प्राप्त कर सके, हालां कि अत्यन्त परिश्रम करे, पर रोग, व्याधि या मन्द बु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के कारण पूरी सफलता न प्राप्त करके भी नियमों का यथेष्ट पालन करे और अन्त में समावर्त्तन करे वही व्रतस्नातक है। परन्तु जो नियमों के विधिवत् पालन पूर्वक वेदादि के ज्ञान में पूर्ण योग्यता प्राप्त करके समावर्त्तन करे वही विद्याव्रतोभयस्नातक कहाता है। इनके अतिरिक्त ब्रह्मचारियों के दूसरे भी दो भेद हैं नैष्ठिक और उपकुर्वाण या उपकुर्वाणक। जो कभी भी समावर्त्तन करता ही नहीं, किन्तु गुरुकुल या जंगल में वेदादि के विचार और ब्रह्मचिन्तन द्वारा तथा लोगों को सदुपदेश प्रदान द्वारा अखंड ब्रह्मचर्य का पालन करता हुआ विवाह न करे वही नैष्ठिक कहाता है। निष्ठा का अर्थही है उसी में पर्यवसान या समाप्ति। इस कोटिके ब्रह्मचारी सनकादि, शुकदेव, हनुमान और भीष्मपितामहादि हुए हैं। पर, उपकुर्वाण उसे कहते हैं जो नियमपूर्वक वेदाध्ययन करके समावर्त्तन द्वारा गृहस्थाश्रम में प्रवेश करता है और विवाह करके सन्तानोत्पत्ति करता है।

वेदों के अध्ययन के सम्बन्ध में द्विजातियों को प्रति वर्ष दो कर्म करने पड़ते हैं जिन्हें उपाकर्म और उत्सर्ग कहते हैं। यह भी एक प्रकार के संस्कारही हैं। श्रावण या भाद्रपद में वेद के पठन पाठन का आरम्भ करने से पहले जो संस्कार या कर्म किया जाता है उसे उपाकर्म कहते हैं, जिसके स्थान पर आजकल केवल रक्षाबन्धन हीं रह गया है, जिसे राखी भी कहते हैं और काशी आदि विशेष स्थानों या कुछ विशेष पुरुषों के सिवाय उत्तर भारत में प्रायः उसका लोप ही हो रहा है। यह एक प्रकार से वेदों का और उसके पढ़ने पढ़ाने वालों का संस्कार है, जिसे दूसरे शब्दों में यह कह सकते हैं कि साल भर में जो भी भूल चूक वेदों के पढ़ने के समय उच्चारण आदि में हुई हो या होगी उसका प्रायश्चित्त है ताकि भविष्य में उस दोष से मुक्त रहें। इसी तरह उत्सर्ग भी संस्कार ही है, जो ५ या ६ मास निरन्तर पढ़ने के बाद पौष या माघ में किया जाता है। यह एक प्रकार से वेदांके अनध्याय का श्रीगणेश है। इसके बाद कुछ विशेष दशाओं को छोड़ कर सदा वेदों के पढ़ने की मनाही है जो श्रावणी या उपाकर्म के बाद हट जाती है और फिर नियमित रूप से अध्ययन शुरू होजाता है।

सबसे अवनत दशा चूड़ा या मुण्डन की है और उसीके साथ साथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उपनयन की भी। आजकल प्रायः यही नियम है कि साधारण रीति से कोई अच्छा मुहूर्त्त देखकर बच्चे के सिर के बाल किसी नदी आदि नदी या देवता के स्थान पर कटा दिये जाते हैं और एक पैसे भर घी का मामूली होम करा दिया जाता है! बस, मुण्डन हो गया !! खूबी तो यह है कि इसी बाल कटाने के साथ चोटी भी रक्खी जाती, वह भी काट ली जाती और सभी सिर एकसां मैदान साफ किया जाता है! घर की स्त्रियां इस बात की मन्नत करती हैं कि बच्चे का बाल अमुक देवता पर चढ़ेगा। इसका यही है कि वहीं सिर से उतारा जायगा। देवस्थान पर या नदी किनारे यह संस्कार करना अत्युत्तम है। मगर आजकल का नहीं। खूबी तो यह होती है कि बहुधा बच्चों के सिर के बाल से पहले ही काट दिये जाते हैं! उस दिन केवल स्वांग मात्र किया है! यह अनुचित है। यह सब इसलिये किया जाता है कि आज मुण्डन में देर होती है। पर, यह ठीक नहीं है। यह तो जन्म के वर्ष के भीतर ही किया जा सकता है या दो वर्ष बीतने पर भी। अधिक विलम्ब की आवश्यकता ही क्या है, जिससे सिरपर कतरनी लगानी पड़े? साथ ही, चोटी पर कतरनी फेरना अच्छा नहीं यह नितान्त अनुचित और पाप कर्म है। सभी गृह्यसूत्रकारों स्मृतिकारों ने शिखा रखने का आदेश दिया है। बल्कि उन लोगों तो यहां तक कहा है कि जैसे प्रवर की ग्रन्थि यज्ञोपवीत में दी जा है प्रवरके स्मरण के लिये। अर्थात् प्रवर के जितने ऋषि हों उतनी बार ग्रन्थि के निकट सूत्र को लपेटते हैं। उसी तरह जितने प्रवर उतनी ही शिखायें भी रक्खी जावें "यथर्षि शिखा निदधाति (आप. १६।६)। फिर इस अनर्थ के लिये स्थान कहां है? मुण्ड के समय तो किसी के भी सिद्धान्त से शिखाच्छेदन न होना चाहि पर, आजकल तो शास्त्रीय मुण्डन होता है उपनयन के साथ और उसमें जिस जूटिका के काटने का उल्लेख है वह उस स रहती ही नहीं। इसी से शिखा को ही जूटिका समझ उसी सफाई की जाती है। वस्तुतः जूटिका नाम तृण, घास या बाल गुच्छे का जो एक में एक मिले हों। ऐसा होता भी है कि बाल वस्था में मुण्डन से पहले बच्चों के सिर पर तेल वगैरः बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगाने से सिर के बालों के गुच्छे हो जाते हैं जिन्हें लट कहते हैं। यही जूटिका है। इसके बाल एक दूसरे में चिपके और उलझे रहते हैं जिनका सुलझाना एक प्रकार से असंभव सा है। इसीसे उन बालों को अलग अलग करने के लिये साही के नोकीले कांटे की जरूरत होती है। अतएव उसी से जूटिका के बालों को अलग अलग करने की विधि और परिपाटी है। यदि शिखा ही जूटिका हो तो फिर उस कांटे की कौन आवश्यकता थी? किसी किसी सूत्रकार ने लिखा है कि-"**यथामंगलं केशशेषकरणम्**" (पार०२।१।२१)। इसका अर्थ किया जाता है कि जैसा कुलाचार हो तदनुसार ही शिखा के लिये बालों को बचा लेवे। परन्तु इसका भी वही अभिप्राय है कि जिस गोत्र के कुल में जितने प्रवर हों उतनी शिखायें रक्खे। दूसरी बात यह भी है कि किसी कुल में सिर के मध्य में शिखा रखने की चाल है तो किसी में इधर उधर और किसी में बीच में भी और इधर उधर भी। यह बात प्राचीन ग्रन्थकारों ने भी लिखी है। इसलिये किस कुल में सिर की किस ओर शिखा रक्खी जाती है और कितनी यह विचार कर उसी हिसाब से बालों को बचाकर शेष को काटे। यही अभिप्राय उसका है। परन्तु आजकल की रीति है कि शिखा रखते ही नहीं। यह बात सभी गोत्रों और कुलों की है। अतएव उस सूत्र का अर्थ लगाया जाता है कि जैसी रीति हो वैसा करे और शिखा रखने की रीति नहीं है, इसलिये ऐसा ही करते हैं। पर, यह ठीक नहीं है। क्योंकि ऐसी दशा में सूत्रकार को ऐसे द्रविड़ प्राणायाम की क्या आवश्यकता थी? इस तरह घुमा फिराकर क्यों कहा? जब किसी कुल में शिखा रखने की रीति है ही नहीं तो फिर साफ ही क्यों न कह दिया कि शिखा रक्खे ही न? आखिरकार उस टेढ़े मेढ़े वाक्य का भी तो यही अर्थ होता है। सूत्रकार को यह बात मालूम नहीं थी कि सभी लोग शिखा कटवा डालते हैं, यह तो कही नहीं सकते। और यदि ऐसा कहें भी तो फिर किसी न किसी कुल में सूत्रकार के ही विचारानुसार शिखा रहनी चाहिये। साथ ही, शिखा रखने की विधि या आदेश देने वाला दीखते हुये सूत्रवाक्य का उसके न रखने की विधि अर्थ करना बड़ी लम्बी, अनुचित और नियमविरुद्ध रीति है। बौधायन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने तो स्पष्ट ही लिख दिया है कि **एकशिखस्त्रिशिखः पञ्चशि-खो वा**—एक, तीन या पाँच शिखायें रक्खे । आश्वलायन ने भी साफ ही कहा है कि जैसी कुलरीति हो वैसेही बालों की स्थापना करे—**यथाकुलधर्मं केशवेशान्कारयेत्** (१।१७।१७)। लघु आश्वलायन स्मृति में, लिखा है कि जितने प्रवर हों उतनी ही शिखायें रक्खे । इसी से एक प्रवर वाले की शिखा बीच में, दो की दोनों बगल में, तीन की दोनों बगल और बीच में, एवं पांच की एक मध्य में और चार चारों ओर—**यावन्तः प्रवरास्तस्य शिखामध्ये च पार्श्वयोः । पश्चात्पूर्वे तथा पञ्चप्रवराणां शिखाः स्मृताः** (८।१७)। वस्तुतः तो 'यथामंगलं' शब्द का ठीक वैसाही अर्थ करना चाहिये जैसा 'यथाशक्ति' का । मंगल शब्द का अर्थ है उत्सव, प्रसन्नता, खुशी, शोभा, कान्ति । सारांश जैसे शक्ति का विचार करके काम करने को यथाशक्ति कहते हैं, उसी तरह मंगल या उत्सव शोभा आदि का विचार करके शिखा रक्खी जावे, कुछ बाल सिर पर रख दिये जावें । वे इस तरह रक्खे जावें जिससे शोभा हो । शिखा के साथ ही शृङ्गार, उत्सव और शोभा है । अतएव शिखारहित संन्यासी के यहां कुछ भी नहीं रहता और न रहना चाहिये । इसीलिये आश्वलायन, द्राह्यायण, गोभिल आदि ने चूड़ा तथा उपनयन के प्रकरण में '**कुशलीकारयन्ति, कुशलीकृतम्**' आदि लिखा है । कुशल का भी अर्थ है अच्छा, सुन्दर । तात्पर्य यह है कि संन्यासी की तरह मुण्डन करके सिरको शोभारहित न बनाकर शिखायुक्त रखते हुए शोभित करते हैं और शिखा भी शोभा के विचार से इतनी रक्खी जाती है जिससे अच्छी मालूम हो । थोड़ी सी शिखा भद्दी और बुरी मालूम होती है और ज्यादा हो तो अच्छी लगती है, यह देखी बात है । कुशल का अच्छा और सुन्दर अर्थ प्रसिद्ध ही है । जब कोई काम अच्छी तरह या सुन्दरता के साथ किया जाता है तो 'कुशलं करोति' कहते हैं । आदमी भी इसी से कुशल कहाता है । घरबार की शोभा और भलाई के लिये कुशल शब्द का प्रयोग करते हैं और 'कुशल मंगल' भी कभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहा करते हैं। इससे सिद्ध है कि मंगल और कुशल शब्द समानार्थक हैं। जो आनन्द से और अच्छी तरह कोई काम कर लेता है उसे कहते हैं कि उसने कुशल से या कुशल मंगल से काम कर लिया। हम शिखा को शोभा या उत्सव का चिन्ह केवल अपनी हीं बुद्धि से नहीं कहते। शुक्ल यजुर्वेद के १९ वें अध्याय के ९२ वें मंत्र में सिर के शेष बालों को यशका और शिखा को शोभा (श्री) का साधन लिखा है-केशा न शीर्षन्यशसे श्रियै शिखा। इस जगह न का अर्थ च है, जिससे-केशाश्च शीर्षन् यशसे श्रियै शिखा यह अर्थ होता है। शीर्षन् का अर्थ है सिर पर के। आज कल विज्ञान से भी यह बात कही जाती है कि सिर की शिखा बाहरी बिजली पड़ने से रोकने और भीतरी बिजली के स्तम्भन के कारण शरीर के कुशल मंगल का साधन है। पूर्वनिर्दिष्ट सूत्रों के भावों से इस उक्ति का मेल तो खा रहा है। इसलिये यह बात संभव मालूम होती है कि प्राचीन लोगों ने इसीलिये इसकी परिपाटी निकाली हो और संन्यासी को स्वयं योगबल के कारण यह खतरा न होने से उसकी शिखा के छेदन का नियम रक्खा हो। दूसरे मत या देश के लोगों को न रखना और फिर भी उनका सकुशल रहना इस युक्ति के विरोध में कोई युक्ति नहीं हो सकती है। क्योंकि सभों को एक ही युक्ति, उपाय या औषधि नहीं सूझती, फिर भी कोई उपाय या औषधि हम झूठी मानने को तैयार नहीं हैं। सारांश, मुण्डन में शिखा अवश्य रक्खी जानी चाहिये। इसी लिये पूर्वप्रदर्शित सूत्रों के भाष्यकारों और वृत्तिकारों ने भी सर्वत्र यही कहा है।

रहगई उपनयन के समय शिखाच्छेदन की बात। यद्यपि इसमें भी सूत्रकारों और स्मृतिकारों ने कहीं भी यह स्पष्ट नहीं लिखा है कि किसी वेद या किसी शाखा वाले शिखाच्छेदन पूर्वक ब्रह्मचर्य का पालन करें और न किसी गोत्र के ही लिये उनका यह आदेश है। प्रत्युत कात्यायन और गोभिल ने अपनी स्मृतियों के प्रारम्भ में ही लिख दिया है कि सर्वदा ही यज्ञोपवीत धारण करना और शिखा बांधे रहना चाहिये, विना शिखा और यज्ञोपवीत के जो कुछ भी किया जाता है वह व्यर्थ हो जाता है-सदोपवीतिना भाव्यं स-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दा बद्धशिखेन च । विशिखो व्युपवीतश्च यत्करोति तत्कृतम् (गो. का. १ । ४) । इस श्लोक में शिखा और सू के विषय में दो बातें कही गई है । एक यह कि, शिखा और सू (जनेऊ) हमेशा ही रहना चाहिये, नहीं तो उनके विना सभी क कार्य व्यर्थ हो जायँगे । दूसरी बात यह है कि साधारणतः शिख को बांधे ही रहना चाहिये और जनेऊ को बायें कंधे से दाहि बगल की ओर रखना चाहिये जिसे उपवीत कहते हैं । पहली बात बारे में तो सदा के लिये नियम है और दूसरी के बारे में साधार नियम है । क्योंकि स्नानादि के समय शिखा खोलने और पि आदि के तर्पण के समय जनेऊ को उलटा रखने का नियम है । लोग इस एकही श्लोक में जनेऊ के बारे में तो यही विधि मानते कि सदा उसे धारण किये रहे, फिर चाहे बायें कन्धे पर हो दाहिने पर, इससे यहां कुछ मतलब नहीं है, उपवीत का अर्थ केवल जनेऊ है न कि बायें कन्धे पर रक्खा जनेऊ । साथ ही, शि के बारे में उसके बांधने की विधि मानते हैं । अतएव जब वह रहे त बंधी रहे यही अभिप्राय यहां के वाक्य का मानते हैं, उनकी बु की बलिहारी है ! श्लोक में जो 'सदा' शब्द है यह जैसा ही य पवीत के लिये आया है वैसा ही शिखा के लिये । अतएव दो लिखना पड़ा है । फिर किसी भी दशा में जब जनेऊ का त कभी भी नहीं कर सकते तो शिखा का कैसे करेंगे ? हां, यह दू बात है कि जब कर्मों के फलों की न तो इच्छा ही हो और न श्यकता ही तब संन्यास लेकर दोनों का त्याग कर दें । पर, इ रहते एक को सदा रक्खे और दूसरी को नहीं, यह बात कात्यायन गोभिल के उक्त वचन से सिद्ध नहीं हो सकती । जब शिखा रहे बँधी रहे यह भी कथन निर्मूल है । स्नानादि के समय रहने पर खुली ही रहती है । इसी लिये हमने जो अभिप्राय बताया है ठीक है । लघु विष्णु स्मृति में भी लिखा है कि चौल के समय तीन शिखायें रक्खी गई है उनमें इधर उधर की दो तो उपनयन में काट दे, मगर बीचवाली रहने देवे—चौलांगस्थापिते शिखे द्वे तेऽपि वापयेत् । सकेशेऽपि कुमारस्य हि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्यमस्थिताम् (१०।४) । जिन लोगों का कहना है कि कात्यायन या गोभिल के ही द्वारा उनकी ही स्मृतियों के अन्त में जो आदेश दिया गया है कि " समावर्त्तन तक ब्रह्मचारी शिखा के साथ ही अन्य केशों का मुण्डन करे, अर्थात् शिखा भी मुँड़ा ले, यदि उसे जीवन भरके लिये (नैष्ठिक) ब्रह्मचर्य का पालन करना न हो "—

सशिखं वपनं कार्यमास्नानाद्ब्रह्मचारिणः । आशरीर-विमोक्षाय ब्रह्मचर्यं न चेद्भवेत् (३ प्र० ८९) ।

इसी के अनुसार सामवेद की कौथुमी और राणायनी शाखावालों को उपनयन के समय शिखाच्छेदन कराना चाहिये । अतएव ऐसी परिपाटी है । उनसे भी हमें कुछ कहना है । यदि उस वचन का ऐसा ही अर्थ मानलें तो भी अन्य वेदों की अन्यान्य शाखाओं के माननेवाले क्यों आजकल ऐसा कर रहे हैं ? क्यों कि गोभिल स्मृति या कात्यायनस्मृति तो गोभिल के गृह्यसूत्रों को परिशिष्ट है और दोनों अक्षरशः मिलती भी हैं । और गोभिल सूत्र केवल सामवेद की कौथुमी शाखा का है । राणायनी शाखा तो कौथुमी के ही अन्तर्गत है । एक बात और है । जब उन दो शाखावालों के भी शिखा होती ही नहीं तो फिर शिखा सहित केश कटवाने का अर्थ क्या होगा ? बात यह है कि जब कौथुमी और राणायनी शाखावाले चूड़ा के समय भी शिखा नहीं रखते और वही शिखा रखने का समय है । उससे पहले तो शिखा रहती ही नहीं । सभी बाल बराबर रहते हैं । फिर उपनयन के समय कहां से शिखा आ गई जिस के कटवाने की आज्ञा स्मृतिकारों ने दी है ? यदि कहा जावे कि शिखा रखने की संभावना से उन्हों ने ऐसा कह दिया है । क्योंकि शायद कोई शिखा रख ही लेवे । तथापि यह भी अनुचित है । स्पष्ट ही क्यों न कह दिया कि ब्रह्मचारी को शिखा रखने का अवसर ही नहीं है । इस द्रविड़ प्राणायाम की क्या आवश्यकता थी ? फिर जब प्रारम्भ में ही हमेशा शिखा को उसी तरह रखने को कहते हैं जिस तरह जनेऊ को, तो फिर उसके विपरीत यह कैसी बात ? यदि यह विशेष वचन उस सामान्य वचन का अपवाद मान लिया जाय, ऐसा कहा जावे, तो यह भी ठीक नहीं है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

असल में इस श्लोक के अर्थ करने में ही लोगों को भ्रम होगया। इसलिये पहले वचन की भी दुर्दशा इसी भ्रमपूर्ण अर्थ के आधार हुई है। उस श्लोक में लिखा है कि " सशिखं वपनं कार्यम् यहां 'वपनं' या 'वपनं कार्यम्' यह क्रिया है और उस विशेषण है 'सशिखम्'। इसका अर्थ है 'शिखा के सहित साथ'। तात्पर्य यह है कि वपन करना या केश कटाना ऐसा जिसमें शिखा का साथ रहे। यहां पर वपन करने या केश क की क्रिया का साथ शिखा से बताया गया है। जिस से स्पष्ट हो है कि जब तक वपन होता रहेगा तब तक, अन्तिम क्षणतक, कि अवश्यमेव बनी रहेगी। नहीं तो फिर शिखा और उस क्रिया साथ क्योंकर रह सकेगा? ज्योंहीं शिखा कटी कि साथ मि इससे तो उलटी बात सिद्ध होती है कि शिखा अवश्यमेव र जावे। यदि 'सशिखान्केशान् वपेत् या छिन्द्या ऐसा रहता तो केशों का साथ शिखा से होता और अर्थ हो कि शिखा के साथ केशों को कटावे। फिर जब केश कटो शिखा भी कट जाती और [illegible] क्रिया का [illegible] शंका हो कि तो [illegible] श्लोक के उत्तरार्द्ध से इसका क्या होगा? तो इसका उत्तर आसान है। स्मृतिकार का यदि नैष्ठिक ब्रह्मचर्य न रखना हो तब तो नियमित रूप से सिर कभी जटा न रक्खे। हमेशा ही शिखा छोड़कर शेष बालों कटवा डाले। हां, यदि जीवन भरके लिये (नैष्ठिक) ब्रह्मचारी हो तब कोई नियम नहीं है, चाहे तो जटा रक्खे या शिखा रख शेष केश कटादिया करे। इसी बात को स्पष्ट रूपसे वसिष्ठ ने स्मृति में कहा है कि "गुरु के आधीन रह कर या तो सम्पूर्ण पर जटा रक्खे या जटा की जगह केवल शिखाही रक्खे और केश मुंड़वा लेवे-" गुर्वधीनो जटिलः शिखाजटो वा (वसि० ७)। इसी के अनुसार गौतम के "मुण्डजटिलशि जटाश्च" (अ० १) का भी अर्थ है। यहां पर पहले दो प्रकार व्यवस्था की गई है कि या तो केवल शिखाही रक्खे या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिर पर जटा रक्खे। फिर शिखा में भी दो बात है। या तो शेष केशों के साथ दाढ़ी और मूंछ को भी मुंड़ा लिया करे या दाढ़ी मूंछको छोड़ कर केवल सिर केही शेष केशों को कटवाया करे। यद्यपि मुंड़वाना और जटा रखना यही पक्ष हैं; तथापि मुंड़वाने में किसी को कभी यह भ्रम न हो जावे कि शिखा भी मुंड़वालेवें, इसीसे शिखाजट कह दिया है। जिसका अर्थ यह है कि यदि बाल कटवावगे तब भी शिखा अवश्य रहेगी। अब रही दाढ़ी और मूंछ। चाहे इसे हरवार कटवाया कीजिये या रखिये। इसमें कोई आग्रह नहीं है। यद्यपि जटिल और शिखाजट कह देनेसे ही काम चल सकता था। फिर भी जैसा आजकल के शौकीन लोग शिखा रख कर भी अस्तुरे से समूचे बाल न कटवा कर कैंची से सैकड़ों प्रकार की रचना करवाते हैं वैसाही ब्रह्मचारी भी करने न लग जावें, इसी विचार से सिर का मुंडन अस्तुरे से कराने के लिये मुण्ड भी लिखना पड़ा और सयाने होने पर मोंछुन्दरनाथ बन न जावें, इसीलिये भी कहना पड़ा कि दाढ़ी मूंछ भी साफ कराया करें। यद्यपि केशान्त संस्कार के विना दाढ़ी मूंछ का मुंड़ाना ठीक नहीं है। क्यों कि १६ वें वर्ष में जो केशान्त संस्कार कहा गया है उसका अभिप्रायही यही है कि दाढ़ी, मूंछ और बगल यह तीनों भी बनाये जावें। फिर भी, मनुने १६ वर्ष में केशान्त कहा है और १६ वर्ष तक ब्राह्मण के उपनयन का अन्तिम समय भी रक्खा है। ऐसी दशा में जो देर से उपनीत होगा उसके तो उपनयन और केशान्त साथही होंगे। अर्थात् उसी दिन से वह दाढ़ी, मूंछ भी मुँड़ाने लगेगा। या यह भी होसकता है कि जटा रखने या केवल शिखा रखने का काम सभी ब्रह्मचारियों का सदा के लिये नहीं है। किन्तु जो चाहे वह इनमें एक करे। फिर यदि शिखा रख लिया और शेष सिर का मुण्डन करने लगा तो कुछ दिन तक यही चलेगा और यही एक पक्ष है भी। परन्तु बीस पच्चीस वर्ष तक ब्रह्मचर्य रखने पर बीच मेंही केशान्त संस्कार भी कर लेगा। उसके बाद तो दाढ़ी बनवाने का अधिकारी होही जायगा। फिर भी यदि कोई व्यसनवश केवल सिर के केश कटाकर औरदाढ़ी मूंछ रखकर मोंछुन्दरनाथ बनने को तैयार हो जावे, तो उसके लिये आदेश है कि नहीं, दाढ़ी मूंछ भी कटवानीहीं होगी। वस्तुतः तो हमारे विचार से केशा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्तसंस्कार केवल उन्हीं लोगों के लिये था जो जटायें रखते
उनके बाल एक में दूसरे मिलकर गुच्छेदार होजाते थे । इसीसे
अलग करने के लिये केशान्त की पद्धति में भी साही के काँटे
आवश्यकता होती थी और प्रायः सभी जंगलों में रहने के
जटा धारीही होते थे । नाऊ के पीछे कौन हैरान होता था । इस
यह सभी का संस्कार समझा जाता था । फिर भी यह स्वतंत्र वि
है । साधारण विचार के अनुसार तो १६ वर्ष में, या उसके बाद
दाढ़ी मूंछ निकलने लगें तभी से उनको भी कटवाते रहने का
शुरू कर देनाहीं केशान्त कहाता है । पहले लोग ऐसाही करते
न कि आजकल की तरह दाढ़ी तो बनवा लेते मगर मूंछ रखते
केशान्त का समय भी १६ वर्ष और उसके बाद का भी स्मृतियों में
गया है । इसमें अनेक स्मृतिकारों के अनेक मत समय के सम्बन्ध
हैं । मगर १६ वर्ष से पहले किसी का नहीं हैं । जो अभिप्राय
के उक्त वचन का है वही मनु के–मुंडो वा जटिलो वा स्यादथ
स्याच्छिखाजटः (२।२१९) का भी है। जैसा वह है वैसाही यह
है । यह भी देख रहे हैं कि सभी गृह्यसूत्रकार इस विषय में
मत हैं। किसीने भी शिखाच्छेदन का नाम नहीं लिया है। किन्तु
उसी चौल की ही तरह केश कटवाने की बात कहते हैं । केश कट
के लिये जिन "कुशलीकारयन्ति" या "कुशलीकृत
आदि शब्दों का प्रयोग चूड़ा में किया है उन्हीं का उपनयन में
उनके भाष्यकारों, वृत्तिकारों और टीकाकारों की भी यही धार
सिवाय किसी किसी सामवेदी टीकाकार के जिसका उत्तर देखु
सभी शिखा रखने को लिखते हैं । गर्गनारायण, गदाधर, ह
कर्क, विश्वनाथ, रुद्रस्कन्द आदि सभीने पारस्कर, आश्वल
आपस्तम्ब, द्राह्यायण और गोभिल सूत्र की विवृतियों और
में ऐसाही लिखा है । इसीलिये जो आधुनिक पद्धतियों में
शिखक्षौर' लिखा रहता है और जिसका अभिप्राय यह है कि ब्रह्म
का क्षौर ऐसा कराया जावे जिस में शिखा भी न रहे, वह
भ्रममूलक, अतएव मिथ्या है । ऐसा कभी न होना चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मवेदी ऐसा करें और न यजुर्वेदीही । ऋग्वेदियों और अथर्ववेदियों का तो कहनाहीं क्या ।

अब रहगई आचार्य और ब्रह्मा की बात। निस्सन्देह आचार्य और ब्रह्मा ब्राह्मणहीं बन सकता है दूसरा नहीं, जैसा कि भूमिका में लिखा जाचुका है । हां, यह दूसरी बात है कि जब ब्राह्मण गुरु मिलेही नहीं तब आपत्ति काल समझ कर ब्राह्मणादि सभी वर्णों के लोग क्षत्रिय या वैश्य को भी आचार्य बना कर उनसे ही विद्याध्ययन करें । जैसा कि बौधायन स्मृति के प्रथम प्रश्न के प्रथम अध्याय में लिखा है- **अब्राह्मणादध्ययनमापदि ॥ ४० ॥ शुश्रूषाऽनुव्रज्याच यावदध्ययनम् ॥ ४१ ॥** गौतम ने ७ वें अध्याय में यही कहा है- **आपत्कल्पो ब्राह्मणस्याब्राह्मणाद्विद्योपयोगोऽनुगमनं शुश्रूषा, समाप्तेर्ब्राह्मणो गुरुः ।** इसका अभिप्राय यह है कि जब किसी कारण से ब्राह्मण अध्यापक (आचार्य) न मिल सके तो क्षत्रिय या वैश्य गुरु से भी वेदादि सद्विद्याओं को सीखना ब्राह्मणादि का धर्म है और जब तक पढ़ें तब तक उसकी सेवा करें और उसके अनुकूल चलें । परन्तु ज्योंही पढ़ना पूरा हुआ कि फिर ब्राह्मणहीं गुरु होता है । क्षत्रियादि की गुरुवाई पढ़ाने तकही रहती है । अस्तु, फिर भी ब्राह्मणका मुख्य आचार्य या गुरु उसका पिताही है और उसके अभावमें क्रमसे पितामह, बड़ा भाई, चचा, कुलवाले या कुलीन कोईभी ब्राह्मण । मनुने गुरुका ऐसाही लक्षण किया है जिससे मुख्य गुरु उनके सिद्धान्तानुसार पिता ही सिद्ध होता है । वे लिखते हैं कि "जो ब्राह्मण गर्भाधानआदि संस्कारों को विधिवत् करे और पुत्र के उत्पन्न होने पर अन्न वस्त्रादि द्वारा उसका भरण पोषण करे, वही गुरु कहाता है"- **निषेकादीनि कर्माणि यः करोति यथाविधि । संवर्धयति चान्नेन स विप्रो गुरुरुच्यते (२ । १४२)।** आचार्य का भी लक्षण लिखते हैं कि " जो शिष्यको अपने पास ला कर कल्पसूत्रों और कर्मकांड एवं उपनिषत् के सहित वेद को पढ़ावे उसे आचार्य कहते हैं—**उपनीय तु यः शिष्यं वेदमध्यापयेद् द्विजः । सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्यं प्रचक्षते**

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

(२।१४०) । याज्ञवल्क्य ने और भी स्पष्ट लिखा है कि "ब्राह्मण गर्भाधानादि से लेकर उपनयन पर्यन्त सभी कर्म करके पढ़ावे उसे गुरु कहते हैं और जो केवल उपनयन ही करके पढ़ावे वह आचार्य कहाता है"—स गुरुर्यः क्रियाः कृत्वा मस्मै प्रयच्छति । उपनीय ददद्वेदमाचार्यः स उ हृतः (आचा० ३४) । गर्भाधान तो केवल पिता ही गा । इसलिये स्पष्ट है कि जो गर्भाधान करे और सन्तान होने उसे पालपोस कर सयाना करे और उपनयन कर वेद पढ़ावे गुरु है । परन्तु जो सिर्फ उपनयन करके वेद पढ़ावे वह आचार्य इससे सिद्ध है कि पिता गुरु और आचार्य दोनों है, और दोनों सकता है । परन्तु यदि किसी कारण से वह आचार्य और गुरु हो सके, मर गया हो या दूर देश में स्थित हो, तो दूसरा आ आचार्य तो हो सकता है, मगर गुरु नहीं हो सकता । गुरु तो पिता ही है । लेकिन आजकल तो पिता को कोई पूछताही किन्तु गुरु के नाम से कान फूंकने वाले दूसरे ही लोग घर घर सा ना फेरी लगाते हैं ! तिस पर भी तुर्रा यह कि पुरुषों और स्त्रियों दोनों के ही-कान फूंकते हैं ! इस अन्धेर का कोई ठिकाना है ! उन्होंने कान न फूँका तो स्वर्ग की सीढ़ी लगेगी ही नहीं ! नरक सड़ना होगा । सब धर्म कर्म और तीर्थ व्रत निष्फल हो जायँगे का छूवा पानी भी अपवित्र होगा और जिस भूमि पर बैठेगा भूमि खोद कर रसातल फेंकने योग्य हो जायगी ! कारण निगुरा जो ठहरा ! इन्हीं ठग और डाकू गुरुओं के अर्थ " बिनु गुरु भव निधि तरै न कोई । जो विरंचि शंकर सम होई यह चौपाई भी लगा लीजाती है ! आजकल उन्हीं का बाजार है और उनके विरुद्ध एक शब्द भी बोलना घोर पाप समझा है ! चाहे माता और पिता को प्रतिदिन बावन गंडे गालियां दो रहो और यमयातना से भी घोर दण्ड देते रहो ! यह है कलिकाल महिमा ! हालां कि, मनु और याज्ञवल्क्य कहते हैं कि आचार्य सौगुना पिता और पिता की हजार गुना माता समझी चाहिये—उपाध्यायान्दशाचार्य आचार्याणां शतं पि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0, In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सहस्रं तु पितॄन्माता गौरवेणातिरिच्यते (मनु० २।१४५)। एते मान्या यथापूर्वमेभ्यो माता गरीयसी (या० ३५)। कलियुगी गुरुओं की निन्दा सुनकर लोग कान बन्द कर लेते हैं और उनका नाम बोल नहीं सकते! मगर माता पिता की निन्दा करने और उनके ही नहीं, उनके सात पुरुषों तक के नाम लेकर गाली देने में कोई हर्ज नहीं माना जाता! यह है हमारे अधःपात की पराकाष्ठा! अस्तु, मनु स्मृति के समावर्त्तन प्रसंग में लिखते हैं कि "ब्रह्मचारी के धर्म को पूर्णतया पालन करके अपने पितासे ही वेदका दायभाग लेनेवाले अर्थात् पिता से ही वेदों के पढ़ने वाले उस ब्रह्मचारी की पहले गोदान पूर्वक मधुपर्क से पूजा करे"- तं प्रतीतं स्वधर्मेण ब्रह्मदायहरं पितुः। स्रग्विणं तल्प आसीनमर्हयेत्प्रथमं गवा (३।३)। मनु के कथन का भाव यह है कि जैसे पिताकी भूमि और धन सम्पत्ति का हिस्सा या दायभाग उसके लड़के लेते हैं उसी तरह उसके वेद के ज्ञान का भी दायभाग ब्रह्मचर्यपूर्वक लेवें। इससे तो स्पष्ट हो जाता है कि पिता ही मुख्य आचार्य है और उसके न रहने पर ही पितामह, चचा आदि आचार्य हो सकते हैं। पर, जब वंश या कुल गोत्र में कोई भी न मिल सके तभी दूसरे कुल गोत्र के पुरोहित या कोई योग्य ब्राह्मण आचार्य बनाये जा सकते हैं। यद्यपि आजकल के आचार्य का काम केवल गायत्री का उपदेश देना मात्र रह गया है, और तो कुछ उपनयन में या उसके बाद होता ही नहीं। फिर भी प्रसंगवश यह विवेचन आवश्यक था। जो भी करना हो पिता आदि ही करें। यही बात पारस्कर गृह्यसूत्र के द्वितीय कांड की प्रथम कण्डिका के भाष्य में गदाधर ने वृद्धगर्ग की स्मृति का वचन लिखकर इस प्रकार कही है- पितैवोपनयेत्पूर्वं तदभावे पितुः पिता। तदभावे पितुर्भ्राता तदभावे तु सोदरः॥१॥ पिता पितामहो भ्राता ज्ञातयो गोत्रजाग्रजाः। उपायनेऽधिकारी स्यात्पूर्वाभावे परः परः॥२॥ हां, मनु आदि के कथन से और गदाधर आदि के लेखों से भी सिद्ध है कि क्षत्रिय, वैश्य आदि का पिता आचा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

र्य नहीं हो सकता। उसका आचार्य ब्राह्मण हीं होगा। यह भूमिका में भी सिद्ध कर चुके हैं। यद्यपि पूर्व विहार में-मिथिला पिता आदिही आचार्य बनते हैं और क्षत्रिय आदि के यहां पुरोहित या कोई दूसरे ब्राह्मण। मगर पश्चिमी बिहार और यु प्रान्त के जिलों में प्रायः यह बात नहीं है। ऐसी परिपाटी हो है कि प्रायः सभी के घर पुरोहित या दूसरे ही ब्राह्मण आच बनते और गायत्री का उपदेश करते हैं। घरके लोग-पिता आदि नहीं बनते। यह रीति ठीक नहीं है। इसे सबसे पहले दूर करने यत्न होना चाहिये। रह गई ब्रह्मा की बात। यह तो ब्राह्मणम का धर्म है। जोही अपने को ब्राह्मण मानता हो वही ब्रह्मा हो सक है। इस में विशेष विवेचन या मीन मेष की जरूत नहीं।

उपनयन के समय की भी बात विचारणीय है। पूर्व विहार में ठीक है। वहां तो कमही अवस्था में उपनयन हो जाया करता है। म पश्चिमी विहार और युक्तप्रान्त में गड़बड़ है। वहां प्रायः विवाह समय ही उपनयन के नकल की चाल है! यदि १८ या २० वर्षमें विव हो तो भी उसी समय उपनयन होगा! यह अनर्थ है! ब्राह्मणों के महापाप है! धर्म शास्त्रकारों ने यही कहा है कि यदि ब्राह्मण पुत्र ब्रह्मतेज की इच्छा रखता हो तो ५ वर्ष के ही बालक का; क्षत्रिय में बल चाहता हो तो ६ वर्ष के ही पुत्र का और वैश्य उसे धनसम्प बनाना चाहता हो तो ८ वर्ष की ही अवस्था में उपनयन कर डा यही कारण है, कि पहले के ब्राह्मण ब्रह्मतेजसम्पन्न; क्षत्रिय शूरव पराक्रमी और वैश्य धनाढ्य होते थे। मनु का स्पष्ट ही यह आ है- ब्रह्मवर्चसकामस्यकार्यं विप्रस्य पञ्चमे। राज्ञो बल नःषष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥ २। ३६ ॥ परन्तु यह विशेष दशा है। कर्त्ता की इच्छा पर है चाहे तो इसके अनुसार या न करे। मगर साधारण नियम यह बताया है कि ब्राह्मण उपनयन उस के गर्भ या जन्म के दिन से ८ वें वर्ष में; क्षत्रिय का वें और वैश्य का १२ वर्ष में करे। यदि किसी कारण से देर हो और उक्त समय टल जावे तो अधिक से अधिक दूने समय टाल सकते हैं। अर्थात् ब्राह्मण का अधिकसे अधिक१६ वर्षकी अव तक, क्षत्रिय का २२ और वैश्य का २४ वर्ष की अवस्था तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तरह ले जा सकते हैं । जब कोई महान् संकट आ पड़े तभी यह किया जा सकता है । मगर इस के बाद तो ज्योंही ब्राह्मण ने १७ व, क्षत्रिय ने २३वें और वैश्य ने २५ वें वर्ष की अवस्था में पदार्पण किया और फिर भी उपनयन न हुआ हो, कि त्योंहीं वे पतित–व्रात्य–होगये; फिर तो जब तक तीन प्राजापत्य या व्रात्यस्तोम यज्ञ आदि करा कर उनका प्रायश्चित्त न कर लिया जावे तब तक किसी भी दशा में न तो उनका उपनयन हीं हो सकता है और न उन्हें जाति में रखकर उनके साथ खान पान, विवाहसम्बन्ध या वेदादि का पठन पाठनादि ही किया जा सकता है । जैसा कि मनु ने लिख दिया है–गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मस्योपनायनम् । गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः ॥ २ ॥ ३६ ॥ आषोडशाद् ब्राह्मणस्य गायत्री नातिवर्त्तते । आद्वाविंशात्क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः ॥ ३८ ॥ अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः । सावित्र्यापतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः ॥ ३९ ॥ नैतैरपूतैर्विधिवदापद्यपि हि कर्हिचित् । ब्राह्म्यौनाँश्च सम्बन्धानाचरेद् ब्राह्मणः सह ॥ ४० ॥ येषां द्विजानां सावित्री नानूच्येत यथाविधि । ताँश्चारयित्वा त्रीन्कृच्छ्रान्यथाविध्युपनाययेत् ॥ ११ । १९२ ॥ यही बात अन्यान्य धर्म ग्रन्थोंमें भी लिखी गई है ।

इसी तरह आजकल एक यह भी चाल काशी के निकटवर्त्ती स्थानों में और विन्ध्याचल के इधर उधर विशेष रूप से एवं अन्यत्र सामान्यरूप से चल पड़ी है और विशेषकर पुरोहितवर्ग में, कि वे लोग बालक को विन्ध्याचल की देवी या किसी प्रसिद्ध देवमन्दिर के पास ले जाते हैं और उस के सिर के सभी बालों को, जिन में शिखा भी सम्मिलित है, बनवाकर और उसी देवी देवता के पनाले या नादान में जनेऊको डुबोकर बालक के गले में डाल देते हैं ! इस के बाद एक दो पैसे भर घी को होम के नाम से अग्नि में डालकर यह उपनयन का नाटक खतम करते हैं ! देखते हैं, यह अनर्थ देखा देखी बढ़ता जा रहा है और यह बीमारी औरों में फैलती जा रही है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इसे शीघ्रातिशीघ्र रोकना चाहिये । यह अत्यन्त अनर्थकारिणी है रसातल ले जानेवाली है ।

यद्यपि इस ग्रन्थ का यह लक्ष्य है ही नहीं कि धर्म ग्रन्थों का प्रमाण देकर कोई बात लिखी जाय । तो भी यज्ञोपवीत के सम्बन्ध में पूर्वोक्त बात बहुत ही विवादग्रस्त और अनर्थकारिणी हो रही है इसी से वाध्य होकर ऐसा करना पड़ा है ।

१–चौल में दोनों वेदों के समान कर्म ।

पूर्वप्रदर्शित रीति के अनुसार मण्डप तो प्रत्येक कर्मों में रहना चाहिये । विशेष रूप से चूड़ा, उपनयन आदि कर्मों में । मिथिला यह रीति है भी और नहीं भी है । मगर युक्त प्रान्त में तो केवल कन्या का विवाह छोड़कर किसी और संस्कार में मण्डप नहीं है और वह भी मण्डप बेकार सा होता है । हां, एक बात की जाती है हलकी हलीस (हरीस) को स्तम्भ की जगह मान कर एक रस्सा गाड़ने की रीति रहगई है और उसके बाद लड़के को हल्दी लगाते हैं । सो भी जब उपनयन के साथही चौल करते हैं तभी यह होता जाता है । हालां कि यह भी काम चौल मात्र में होना चाहिये, उपनयन जब किया जावे । कहीं कहीं बालक के हाथ में कंकण बांधने की रीति है । अतएव इन सब बातों की विधि लिखना आवश्यक है साधारणतया चौल और उपनयन के दिन से पहले ही यह कर्म करना चाहिये । पर, स्मरण रहे कि उससे पूर्वके तीसरे, छठें या दिन कोई काम न हो । बालक के सिर पर आजकल जूटिका बांधने की भी रीति है । क्योंकि स्वयंसिद्ध जूटिका तो रहने पाती पहले ही काट लीजाती है । इसलिये यदि कल्पित जूटिका (बालों का गुच्छा) भी न बनाया रहे तो उस समय छेदन किस होगा ? यदि पहलीही जूटिका हो तो भी उसमें कुछ संस्कार किया है जिसे आगे चलकर लिखेंगे । यदि केवल चौल हो तो एक वेदी यदि चौल और उपनयन दोनों हों तो दो वेदी । इसी तरह वेदारंभ भी लिये एक और समावर्त्तन के लिये भी एक बनावे । ऐसी आजकल है । परंतु हमारा विचार है कि जब दो या अधिक संस्कार एक साथ किये जावें, जैसा कि प्रायः आजकल चौल, उपनयन,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रम्भ और समावर्त्तन की रीति है, तो फिर चारों के लिये होमवेदी एकही हो और एकही बार पंचभूसंस्कार आदि हों। समाप्ति के समय की स्विष्टकृत् आदि आहुति भी एकही होवे । जैसे मातृकापूजा, नान्दीश्राद्ध या पुण्याहवाचन आदि एकही बार होते हैं। जिस तरह उनके एकही बार करने की विधि कात्यायनस्मृति में है उसी तरह गोभिलीय गृह्यसूत्र के प्रथम प्रपाठक के ८ वें खंड के– **गणेष्वेकं परिसमूहनमिध्मो बर्हिः पर्युक्षणमाज्यमाज्यभागौ च ॥१७॥ सर्वेभ्यः समवदाय सकृदेव सौविष्टकृतं जुहोति ॥ १८ ॥**

इन दो सूत्रों और इनके भाष्य से कुण्ड या वेदी आदि के भी एकही रखने का बात सिद्ध होजाती है । न्याय और तर्क भी दोनों में समानहीं हैं। इसीलिये बर्हिः होम भी एक ही बार अन्त में होना चाहिये। पर, यदि अलग अलग कुंड या वेदी बनानी हों हो तो चारों दक्षिण उत्तर क्रमसे रहनी चाहिये, न कि पूर्व पश्चिम क्रम से। आजकल तो प्रायः यह भी चाल है कि एकही दिन में सब कुछ कर लेते हैं। फिर जी चाहे जैसे करे । मगर क्रियायें सब कर डाले । कम से कम एक दिन पहले - शुरू कर दे तो अच्छा है। अस्तु, स्तम्भ गाड़ने (जिसे हरीस गाड़ना भी कहते हैं उस) से पहले मण्डप या आंगन को लीप लेवे और कर्त्ता स्वयं स्नान आदि नित्यक्रिया करके अहत वस्त्र (३८), तिलक आदि धारण कर पूर्व मुख आसन पर बैठे और आचमन प्राणायाम करके अर्घ्य या कर्मपात्र का सम्पादन ७६ पृष्ठोक्त रीति से करे। बालकको भी स्नान कराके अपने से दक्षिण ओर रक्खे और कर्मापवर्ग दीप जलाकर उसकी ७९ पृष्ठोक्त पूजा करके उसे पूर्वमुख पूर्व ओर रक्खे। फिर सबसे पहले प्रधान संकल्प करे-ॐ अद्य० इत्यादि (१०८) कह कर "**अमुककर्म करिष्ये**" की जगह–**अमुक कुमारस्य बीजगर्भसमुद्भवैनोनिवर्हणबलायुर्वर्चोमेधाऽभिवृद्धिद्वारा परमेश्वरप्रीत्यर्थं चौलकर्म करिष्ये**–कहे । यदि उपनयनादि भी साथही करना हो तो–'चौलकर्म' के बाद-**द्विजत्वसिद्ध्या वेदाध्ययनाद्यधिकारसिद्धिद्वारा परमेश्वरप्रीत्यर्थं उपनयनं च**–ऐसा कह देवे। यदि तीनों या चारों को साथ ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

करना हो तो उसके बाद-श्रौतस्मार्त्तकर्मानुष्ठानाधिकारसि-
द्धिद्वारा परमेश्वरप्रीत्यर्थं वेदारम्भं गृहस्थाश्रमार्हता-
सिद्धिद्वारा परमेश्वरप्रीत्यर्थं समावर्त्तनं च करिष्ये-
इत्यादि कह कर-तदंगतया गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं
मातृपूजां नान्दीश्राद्धं स्तम्भारोपणादिकर्माणि च
करिष्ये-कहे। फिर पहले ७४ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य का वरण
करने के बाद गणपति गौरी पूजा से लेकर नान्दीश्राद्ध तक के सभी
कृत्य करके (देखो द्वितीय प्रकरण) स्तम्भारोपण करे । स्तम्भ या
हरीस को गेरूसे रंगदेने की भी चाल कहीं कहीं है। इसलिये उसे
गेरू में रंग देने की इच्छा हो तो रंग दे और यदि परिपाटी न हो
तो न भी करे। मगर कर लेना अच्छा है । यदि पुण्याहवाचन
के समय ब्राह्मणों का वरण न किया हो, पुण्याहवाचन हीं किसी
कारण से न किया हो या पुण्याहवाचन के ब्राह्मणों की संख्या ३
या ४ से कम हो तो आचार्य और विप्र यजमान को मिला कर कुल
५ या ७ ब्राह्मणों की संख्या पूरा करने के लिये कुछ और भी
ब्राह्मणों का वरण करले। क्योंकि स्तम्भ के खड़ा करने में ५ या ७
ब्राह्मणों की एक साथही आवश्यकता होती है। वरणकी रीति
सब वही रहेगी जो आचार्य की है । मगर संकल्प के अन्त में कहेंगे
कि-स्तम्भारोपणकर्मणि युष्मान् वृणे । एकही साथ
संकल्प और पूजा आदि करके अन्त में एकही साथ-स्तम्भारोपण-
कर्मणि युष्मान्वृणे-कह कर वरण करलेंगे। आचार्य के वरणमें भी
-चौलाद्यंगकर्म कर्त्तुं कारयितुं वा-यह-अमुक कर्म
कर्त्तुं कारयितुंवा-की जगह बोलेंगे। तब हरीस या स्तम्भ
गाड़ने के पहले जो उसके लिये गढ़ा खोदा जायगा वह अग्नि व कुण्ड या
वेदी से ईशानकोन में रहेगा। पहले यजमान या उसका प्रतिनिधि
आचार्य ही हाथ में कुदाल लेवे और मंत्र पढ़े-ॐ देवस्य त्वा
सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्
आददे नार्यसि ॥ फिर-ॐ इदमह ँ रक्षसां ग्रीवा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपि कृन्तामि-यह मंत्र पढ़ कर जितना चौड़ा गढ़ा खोदना हो उसके लिये चारों ओर से उसी कुदाल से भूमि पर जराजरा खोद कर निशान बनादे और आचमन करके पूरा गढ़ा खोद डाले। स्मरण रहे कि हरीस या स्तम्भ जितना लम्बा हो उस का पांचवां हिस्सा भूमि में गड़ा रहता है। अतः उसी हिसाब और नाप-जोख से गढ़े की गहराई होनी चाहिये। अर्थात् ५ हाथ की हरीस हो तो एक हाथ गहरा गढ़ा होगा। गढ़े की मिट्टी पूर्व ओर फेंकी जानी चाहिये। फिर-ॐ अद्य यथोक्ततिथौ वाराहकूर्मानन्तानांपूजां स्तम्भारोपणकर्मणि करिष्ये-- यह संकल्प करके वाराह, कूर्म और अनन्त का पूजन उसी गढ़े में करे। वाराहपूजन कोही भूमिपूजन और अनन्तपूजाको ही शेष की पूजा भी कहते हैं। पहले वाराह का आवाहन करे-ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳह पृथिवीं माहिꣳसीः ॥१॥ ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्। समूढमस्य पाꣳसुरे ॥२॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वाराहाय नमः इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ फिर- ॐ भूर्भुवः स्वः वाराहाय नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से पञ्चोपचार पूजा करके-ॐ भूर्भुवः स्वः कूर्माय नमः कूर्म इहागच्छ इह तिष्ठ-इत्यादि आवाहन पूर्वक नाम मंत्रसे ही कूर्मकी पञ्चोपचार पूजा करे। फिर-ओं नमोऽस्तु सर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥ ओं भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः अनन्त इहागच्छ इहतिष्ठ-इस मंत्र से अनन्त का उसी गर्त (गढ़े) में आवाहन करके-ओं भूर्भुवः स्वः अनन्ताय नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि पञ्चोपचार पूजा करे। इसके बाद उस गर्त में नूतन खद्दर या सूत, हल्दी या केसर, अक्षत, सुपारी, फल और द्रव्य डालकर पांच ब्राह्मण अपने हाथों से स्तम्भ या हरीसको उस गर्त (गढ़े) में खड़ा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

करते हुए मंत्र पढ़ें- ओं इमामुच्छ्रयामि भुवनस्य नाभि वसोर्धारां प्रतरणीं वसूनाम् । इहैव ध्रुवां निमिनोमि शालां क्षेमे तिष्ठतु घृतमुच्चमाणा ॥१॥ अश्वावती गोमती सूनृतावत्युच्छ्रयस्व महते सौभगाय । आत्वा शिशुराक्रन्दत्वा गावो धेनवो वाश्यमानाः ॥२॥ आत्वा कुमारस्तरुण आवत्सो जगदैः सह । आत्वा परिस्रुतः कुम्भ आदध्नः कलशैरुप । क्षेमस्य पत्नी बृहती सुवासा रयिं नो धेहि सुभगे सुवीर्यम् ॥ ३ ॥ अश्वावद्गोमदूर्जस्वत् पर्णं वनस्पतेरिव । अभि नः पूर्यता ँ रयिरिदमनुश्रेयो वसानः ॥ ४ ॥ फिर हरीस के साथही उसी गर्त्त में सरपत या कोई और तृण, बांस की हरी पतली शाखा, आम और गूलर की पतली डाल भी पत्ते सहित गाड़ें और ऊपर से मिट्टी डालकर ऐसा दृढ़ करके मूंज से सबों को पांच जगह बांध दें ताकि इधर उधर लटकने या ढीले होने न पावें । फिर-ओं अद्य स्तम्भस्य तत्र ब्रह्मादीनां तदधिष्ठातृदेवतानां च पूजनं करिष्ये-यह संकल्प करके ओं भूर्भुवः स्वः स्तम्भाय नमः स्तम्भ इहागच्छ इहतिष्ठ ॐ भूर्भुवः स्वः स्तम्भाधिष्ठातृदेवताभ्यो नमः इहागच्छ इहतिष्ठत-ऐसा पढ़कर एक साथही स्तम्भपर जल अक्षत गिराकर आवाहन करे और-ओं भूर्भुवःस्वः स्तम्भ स्तम्भाधिष्ठातृदेवताभ्योनमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीतिसे एकही वार पञ्चोपचार पूजा करे । फिर स्तम्भ के ऊपरी भाग में-ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्मन्निहागच्छ इहतिष्ठ-इस मंत्र से ब्रह्मा का आवाहन करके-ओं भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे नमःगन्धं समर्पयामि इत्यादि पञ्चोपचार पूजा करे । हरीस या स्तम्भ के मध्य में-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम् । समूढमस्य पा सुरे ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णो इहागच्छ इहतिष्ठ–से विष्णु का आवाहन कर नाममंत्र से उसी तरह पूजा करे। हरीस की जड़ में–ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुतते नमः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः शिवा-यनमः इहागच्छ इह तिष्ठ–से शिवका आवाहन कर नाम मंत्र से पूर्ववत् पूजन करे। अन्त में तृण के गुच्छे में–ॐ भूर्भुवः स्वः यक्षेभ्यो नमः इहागच्छत इहतिष्ठत–इस मंत्र से यक्षों का आवाहन कर–ॐ भूर्भुवः स्वः यक्षेभ्यो नमः–इस मंत्रसे पञ्चोपचार पूजा करके स्तम्भारोपण क्रिया को पूरा करे। फिर पूर्वोक्त १४५ पृष्ठ की विधि से कलश की स्थापना कर उसी में वरुण का आवाहन और पूजन करे और यदि नवग्रहादि की अलग वेदी न हो तो नवग्रह, दश दिक्पाल, पंचलोकपाल, वास्तुपुरुष और क्षेत्रपति का भी उसी कलश में ही आवाहन करके पूजन करे। परन्तु याद अलग ग्रह वेदी और सर्वतोभद्र आदि की वेदी हो तो वेदी पर पृथक ही पूजन करे। पूजनकी विधि पहले ही कलशस्थापन के अवसर पर कही गई है। फिर–अनया पूजया आवाहिता गणेशगौरी-वरुणादित्यादिग्रहादयो देवाः प्रीयन्ताम्–कह कर उनकी प्रार्थना करे। इसके बाद जल में पीसे चावल से, जिसे पेपन भी कहते हैं, हरीस या स्तम्भ पर पांच या सात थाप हाथ से लगावे। प्रायःयह देखा जाता है कि यह थाप पहले से ही लगा रखते हैं, जब कि उसे गेरु या हल्दी से रंगते हैं। जैसी प्रथा हो वैसाही कर ले।

इसके बाद तैलाभ्यंग या हल्दी लगाने की क्रिया करे। पहले संकल्प करे–ॐ अद्य शुभपुण्यतिथौ तैलाभ्यंगकर्म करिष्ये । फिर बालक को काठ के पीढ़े या किसी आसन पर बैठाकर आचमन करे और यदि कंकण बांधने की रीति हो तो उन्हें पूर्वोक्त १७८ पृष्ठकी रीति से बनाकर अभिमंत्रण करे और वहीं लिखे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मंत्रों से एक हरीस में, एक कलश में, एक नये पीढ़े में (अगर हो तो) एक बालक की माता के बायें हाथ में और एक लड़के के दहिने हाथ बांधे । यदि माता के हाथ में बांधने की चाल न हो तो न बांधे कंकण में जो नौ चीजें डाली जाती हैं उनका वर्णन और लोहे अंगूठी की बात पहले ही उसी जगह कह चुके हैं । पर आजकल प्रा यह रीति देखी जाती है कि किसी नवीन पीले वस्त्र के टुकड़े में का चोकर, पीली सरसों, चावल और हल्दी रखकर नवीन पीले से उसक एक पोटली बनाते हैं और उसी पोटली के साथ बाहर लोहे की अंगूठी बांध देते हैं । बस, कंगन या कंकण हो गया कहीं कहीं छल्ले या अंगूठी के साथ आमका पल्लव भी मोड़कर बांध की रीति है । मगर, शास्त्रीय रीति में दूब, जौ या उसका अंकु खस, आमका पल्लव, साधारण हल्दी, आमीहल्दी, पीली सरस मोरपंख और सांप की केंचली यह नौ चीजें कंकण में दी जा हैं जिन्हें पहले बताचुके हैं । कंकण के बांधने का मंत्र यद्यपि प बता चुके हैं तथापि ७७ पृष्ठमें उसके अभिमंत्रण के लिये वैदि मंत्रों में जो एक मन्त्र—ओं यदाबध्नन्दाक्षायणाहिरण्य ५ शत नीकाय सुमनस्यमानाः । तन्म आबध्नामि शतशारदाय युष्मान् जरदष्टिर्यथासम्—यह लिखा गया है, उसीसे कं बांधने की विधि दो एक पद्धतियों में लिखी है । चाहे उससे या इससे या दोनों को मिलाकर साथ ही पढ़े और बांधे । इस अनन्तर लड़के को चुका मुका बैठाकर उसकी अंजली में चा या जौ आदि अन्न भरते हैं और उसके ऊपर सुपारी और पैसा कोई द्रव्य रखकर माता पीछे से आरती साजकर बैठती है आचार्य आदि पांच ब्राह्मण पहले तेल मिली हल्दी में से पल्लव थोड़ी सी लेकर कलश और गौरी गणेश को स्पर्श कराके बालक पांव से आरम्भ कर घुटने, पीठ, कन्धे, बांह और कान सभी अंगों में लगाते, आरती करके सिर में तिलक लगाते, फूल की माला पहनाते हैं । फिर कुमारी कन्यायें दूब से तेल मि हल्दी निकाल निकाल कर उसी से बालक के समूचे शरी लगावें और आचार्य यह मंत्र पढ़े—ॐ काण्डात्काण्डात्प्ररोह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परुषः परुषस्परि । एवा नो दूर्वे प्रतनु सहस्रेण शतेन च ॥

अनन्तर सौभाग्यवती स्त्रियां भी बालकको हलूदी लगाती, हलदी में पैसा डालती, जिसे प्रायः नाऊ लेता है और आरती एवं चुमावन करती हैं । चुमावन का अभिप्राय यह है कि दोनों हाथों की अँगुलियों में आमकी हरी पत्ती के टुकड़े लेकर उन्हीं से बालक के अंजली का अन्न उठा कर दोनों हाथों से उसके पांव, घुटने, कन्धे पर छुवाकर और फिर दोनों हाथों को सिर के चारों ओर घुमाकर पल्लव के टुकडों कों अंजली पर ही रख देती हैं। इसी तरह दूसरी तीसरी आदि भी करती हैं । फिर लोटे का जल बालक के चारों ओर गिराकर उसे उठाती हैं। इसे ही अर्घ देना कहते हैं और यदि कोहबर हो तो वहां या किसी पवित्र स्थान में आगे आगे जल गिराती बालक को लिवा जाकर अंजली का अन्न वहीं रखवा देती हैं। इन सब बातों में जहां जैसी परिपाटी हो करना चाहिये। यह लोकाचारमात्र है । इसी तरह यद्यपि सप्तमृत्तिका कलश में डाली जाती है,यही शास्त्रीय विधि है जैसाकि कलशस्थापन में हमने भी लिखदिया है और चौराहे आदि जिन जिन सात स्थानोंकी मृत्तिका लाई जावे वहां वहां भूमिका या भूमि, कूर्म और अनन्त का पूजन कर विधिवत् मृत्तिका खोदी और लाई जानी चाहिये । लाने के समय स्वस्त्ययनादि मंगल शब्द और बाजा गाजा भी रहना चाहिये। मगर अब यह कुछ नहीं होता । सिर्फ कुछ औरतें गाती और बजाती एकाध जगह जाती हैं और मिट्टी खोदकर लाती हैं । बस, खतम ! वह मिट्टी भी कहां रक्खी जाती है ठीक पता नहीं । यह भी एक रस्मसी होगई है । वह मिट्टी भी कलश में डाली जानी और उसके नीचे रक्खी जानी चाहिये । अस्तु, हलूदी लगा चुकने के बाद इस स्तम्भारोपण और तैलाभ्यंग (हलूदी लगाने के) कर्म कं द-क्षिणा देने का संकल्प कर उन ब्राह्मणों को देना चाहिये जिनका वरण हुआ है-ओं अद्य शुभपुण्यतिथौ करिष्यमाणचौलांगतया (चौलाद्यंगतया) स्तम्भारोपणतैलाभ्यंगकर्मणोः सांगतासिद्ध्यर्थमिमां यथाशक्तिदक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दास्ये ओं तत्सन्नमम ॥ यदि यह समूचा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कर्म कमसे कम एक दिन भी पहले हुआ हो तो यहींतक उसकी पूर्त्ति करके अन्त में भूयसी दक्षिणा का भी संकल्प कर उसे देना चाहिये। संकल्प पूर्ववालाही होगा केवल 'दक्षिणां' से पहले 'भूयसी' जोड़देंगे और-"ब्राह्मणेभ्यः" की जगह "ब्राह्मणादिभ्यः" पढ़ेंगे क्योंकि भूयसी दक्षिणा गरीबों और अनाथों को भी दी जाती है।

इसके बाद रात में जूटिकाबंधन किया जाता है जिसे केशाधिवासन भी कहते हैं। परन्तु यदि चौलकेही दिन यह सब पूर्वोक्त कृत्य भी कियेगये हों तब तो भूयसी दक्षिणा अन्त में देंगे। लेकिन और कुछ भी न करें तो न सही, जूटिकाबन्धन तो चौल के पहले दिन सन्ध्या के बाद रात में हीं करलेना चाहिये और यदि किसी कारण से न किया हो तो उसी दिन सबसे प्रथम या हल्दी लगने के बाद अवश्य करलेना चाहिये। सबसे पहले हो तो और भी अच्छा नहीं तो, अन्तमेंहीं सही। पर, उसका सर्वथा लोप तो कथमपि ठीक नहीं। उसकी रीति यह है कि पहले संकल्प करे-ओं अद्य शुभपुण्यतिथौ अस्य कुमारस्य करिष्यमाणचूडाकर्मसिद्ध्यर्थं केशाधिवासनं (जूटिकाबन्धनं वा) करिष्ये। तदंगतया गणपतिपूजनं च निर्विघ्नतासिद्ध्यै करिष्ये। फिर उक्त रीति (१०३) से गणेश का पञ्चोपचार पूजन करके नये पीले शुद्ध खद्दर के दस टुकड़े यजुर्वेदियों के लिये और चार समवेदियों के लिये लेकर प्रत्येक पर चन्दन, अक्षत, हरी दूब, पीली सरसों, हल्दी आदि कंकण की चीजें रख और नये त्रिगुण धागे से पोटलियाँ बनाकर १७० पृष्ठोक्त रक्षाबन्धन की रीति से उनका अभिमंत्रण करके पुरुषसूक्त की सोलह ऋचाओं को तीन वार पढ़कर शिखा छोड़कर शेष केशों की तीन जूटिकायें साही के काँटों से पहले बनावे, जिनमें एक शिखा से पीछे हो और एक एक दहिने बांयें। यदि जूटिकायें पहले सेही हों तो केवल शिखा अलग करले और इधर उधर उन्हें छोड़दे। यदि पहले से न हों तो शिखा के ही केशों में से कुछ तो शिखा के लिये अलग करके शेष की इधर उधर तीन जूटिकायें बनावे। फिर एक एक के तीन तीन हिस्से यजुर्वेदी कर डालें नकि सामवेदी और पूर्वोक्त दस और चार पोटलियों में से एक शिखा में खूब कसकर बाँधे और दो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीन या नौ से जूटिकाओं के नौ भागों को यजुर्वेदी और सामवेदी अलग अलग बांधें और—ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमंदधातु । विश्वेदेवासइहमादयन्तामोम्प्रतिष्ठ—मंत्र को पढ़कर उनपर अक्षत डाल कर उनकी प्रतिष्ठा करें। फिर किसी नई पीली खादी की पगड़ी या कपड़े से सिर को बांध दें जिससे उक्त पोटलियाँ छूटकर गिर न जावें। अनन्तर बालक के बायें कन्धे से आरम्भ कर दहिनी बगल, पीठ और नाभि होती हुई चन्दन से एक लकीर जनेऊ के आकार की बनादें। शरीर में जैसे जनेऊ रहता है वैसेही लकीर बनानी चाहिये। अनन्तर आचार्य को दक्षिणा देकर पूरा करें। इति समानकर्म।

यहां तक जो कुछ विधि कही गई है वह दोनों वेदों वालों के लिये साधारण है। अब पहले यजुर्वेदियों की शेष क्रिया कह कर सामवेदियों की पीछे कहेंगे। यदि एकही दिन में सभी काम करना हो तब तो जो कर्म कहे जा चुके हैं उनके बाद चौलोक्त शुभ मुहूर्त्त में माता बच्चे को स्नान करा अहत वस्त्रों (३८) को ओढ़ा पहना कर उसे गोद में लेवे और अग्नि से पश्चिम ओर जा बैठें। यदि उक्त क्रियायें पहिले दिन की गई हों तो दूसरे दिन पिता भी नित्य क्रिया संध्यादि करके तिलकादि धारण कर पूर्व मुख किसी आसन पर बैठ कर आचमन प्राणायाम करके कर्मपात्र का सम्पादन करे और अपवर्ग दीप जलाकर उसकी पूजा करके उसे पूर्व ओर पूर्व मुख रक्खे। फिर—ओं अद्य चूडाकर्माधिकारसिद्ध्यर्थं त्रीन्ब्राह्मणान्भोजयिष्ये—ऐसा संकल्प कर पहले तीन ब्राह्मण भोजन करावे या उन्हें अन्न द्रव्यादि ही दे। तब १८५–१८८ पृष्ठोक्त कुशकण्डिका की विधि करे। यहां पर सभ्य नामक अग्नि की स्थापना पूजा होती है। इसलिये मन्त्र और संकल्प आदि में 'अग्नि' शब्द की जगह 'सभ्याग्नि' शब्द का प्रयोग करे। पंचभूसंस्कार पूर्वक अग्नि की स्थापना कर लेने पर कुमार को गोद में लिये माता पिता से उत्तर (बाईं ओर) अग्नि से पश्चिम ओर बैठ जावे। तब कुशकण्डिका की शेष क्रिया ब्रह्मावरण आदि करे और अग्नि से उत्तर या पश्चिम कुशकण्डिका की सभी साधारण वस्तुओं के रख चुकने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के बाद चौल की विशेष वस्तुओं को उसी क्रम से रक्खे जिस क्रम से इतर वस्तुए रक्खी गई हैं। अर्थात् जो पूर्णपात्र अन्त में आया है, उसके बाद एक ताम्रपात्र में थोड़ा गर्म और उसके बाद दूसरे में शीतल जल रख उसके बाद घी, दही और मक्खन (नवनीत) इन तीनों में किसी एक का छोटा सा पिण्ड किसी पात्र में रखकर, उसके बाद १० या १२ अंगुल लम्बा और बीच बीच में तीन जगह श्वेत साही का कांटा, फिर १०-१० या १२-१२ अंगुल लम्बे और अग्रभागवाले २७ कुश के पत्ते (होसके तो तीन तीन को एक एक जगह हातकते सफेद सूत से बांध कर), तांबा लगा हुआ लोहे का क्षुरा, नाऊ, आँड़ू बैलका गोवर कांसेके वर्त्तनमें और आचार्य की दक्षिणा इन सभी को क्रम से रक्खे। इसके बाद कुशकण्डिका की पवित्र बनाने आदि की शेष क्रियाओं को करके ब्रह्मा के अन्वारम्भ करनेपर दहिने घुटने को टेककर घृत से ही आघार से लेकर स्विष्टकृत् पर्य्यन्त की पूर्वोक्त १९४ पृष्ठ वाली आहुतियाँ दे और प्रोक्षणीपात्र में संस्रव रखता जावे। फिर यदि एक ही वेदी हो और चौल उपनयनादि साथ ही करने हों तो ब्रह्मा की पूर्णपात्र वाली दक्षिणा और बर्हिःहोम इन दो को छोड़कर शेष २४३ पृष्ठोक्त संस्रव प्राशन से प्रणीताविमोक पर्य्यन्त क्रियायें कर डाले। पर यदि केवल चौल ही करना हो या उपनयन आदि के करने पर भी चार वेदियां या कुण्ड बने हों तो ब्रह्मा को पूर्णपात्र का दान और बर्हिःहोम भी कर डाले। पूर्णपात्र के दान के बाद ब्रह्मा को हाथ पकड़कर जरा सा उठा देते हैं या यदि कुश का ही ब्रह्मा हो तो उसकी ब्रह्मग्रन्थि ही खोल देते हैं। फिर शीतल जल में गर्म जल इस मन्त्र से मिलावे-ओं उष्णोवाय उदकेनेह्यदिते केशान्वप ॥ तब उसी जल में मक्खन, घी या दही के पिण्ड को, जो इसी लिये रक्खा गया था, चुपचाप डाल, कर घोल दे। और उत्तरमुख होकर बालकको माता की गोद में ही दक्षिण ओर पूर्व मुख कराके दक्षिण, पश्चिम, उत्तर तीन जूटिकाओं में जो एक एक के तीन भाग किये गये हैं उनमें से दक्षिण जूटिका के एक निचले भाग को उसी जल से भिगोवे और यह मंत्र पढ़े-ओं सवित्रा प्रसूता दैव्या आप उन्दन्तु ते तनुम् दीर्घायुत्वाय बलाय वर्चसे ॥ फिर साही का कांटा लेकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसी से चुपचाप उसके केशों को फैलाकर २७ कुशपत्रों में एक जगह बँधे तीन पत्तों को लेकर उनका अग्र भाग उन फैलाये बालों के बीच में इस मन्त्र से लगावे—ओं ओषधे त्रायस्व ॥ तब उन तीन कुशपत्रों के सहित सभी बालों को बायें हाथ में पकड़ कर दहिने हाथ से क्षुरे को उठाता हुआ मन्त्र पढ़े—ॐ शिवोनामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा माहिꣳसीः ॥ और उस क्षुरे को कुशों वाले केशों की जड़ में यह मन्त्र पढ़कर लगावे—ओं निवर्त्तयाम्यायुषेऽन्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥ फिर उसी जूटिका या उन कुश वाले बालों को उसी क्षुरे से काटे और यह मन्त्र पढ़े—ॐ येनावपत्सविता क्षुरेण सोमस्य राज्ञो वरुणस्य विद्वान्। तेन ब्रह्माणो वपतेदमस्यायुष्यं जरदष्टिर्यथासत् ॥

और काटने के बाद कुशों सहित बालों का अग्र भाग पूर्व ओर करके बालक की माता को पकड़ावे और वह अपनी बाईं या उत्तर ओर कांसे के बर्त्तन में रक्खे आंडू बैल के गोबर पर उसी तरह रख दे। या नहीं तो काटनेवाला पिता ही स्वयं रखदेवे। फिर हाथ धो कर दक्षिण जूटिका के दो भागों को भी क्रम से उसी तरह चुपचाप भिगोकर कांटे से अलग अलग करे, उनमें कुश के तीन पत्ते लगावे, क्षुरा पकड़े, जूटिका में उसे लगावे, कुशों के सहित उस जूटिका को काटे और गोबर पर रक्खे। पहले दूसरे भाग का सब काम करके तब तीसरे भाग का करे। मगर इन दोनों में कोई भी मंत्र न पढ़ा जाय। सभी काम विना मंत्र के ही चुपचाप किये जावें। आगे भी शेष दो पश्चिम और उत्तर वाली जूटिकाओं के तीन भागों के काटने आदि में ठीक इसी तरह काम करेंगे। पहली बार मंत्र से, शेष दो बार विना मंत्र के। अब पहले पश्चिम जूटिका को लेंगे और उसके तीन भागों में प्रथम दक्षिण वाले भागको पूर्व वाले मंत्र से ही भिगोवेंगे, चुपचाप कांटे से अलग अगल करेंगे, पूर्व मंत्र से ही कुश के तीन पत्ते लगावेंगे, क्षुर को पूर्व के ही मंत्र से हाथ में लेंगे। मगर किसी किसी का कहना है कि अब मंत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। पहले ही बार में छुरे का संस्कार होगया। अस्तु, उस छुरे को पूर्व के ही मंत्र से बालों की जड़ में लगावे। सभी मंत्र ज्यों के त्यों रहेंगे। सिर्फ केशों के छेदन करने का मंत्र इस बार यह होगा-ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्॥ फिर पूर्ववत् गोबरपर रखकर हाथ धो ले। शेष दो भागों की सब क्रिया पहले की ही तरह विना मंत्र के ही क्रम से करे। अनन्तर उत्तर की जूटिका के पहले भाग के भिगोने आदि की क्रिया उन्हीं उन्हीं मंत्रों से करके इस मंत्र से उसे काटे-ओं येन भूरिश्रवा दिवं ज्योक्च पश्याद्धि सूर्यम्। तेन ते वपामि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय सुश्लोक्याय स्वस्तये॥ फिर गोबर पर रख कर हाथ धो ले। स्मरण रहे कि जब जब केश काटे तब तब क्षुरा रख कर हाथ धो लिया करे। शेष भागों की सब क्रियायें क्रम से अमंत्रक ही पूर्ववत् करे। मैथिलों की पद्धतियों में हरेक बार मंत्र से ही सब क्रियायें लिखी हैं और यह भी लिखा है कि माता अपने अंचल में गोबर रक्खे रहे और केश काट कर बार बार उसीपर रक्खे जावें। परन्तु यह बातें ठीक नहीं हैं। पारस्करगृह्यसूत्र में एक बार तो सभी काम मंत्र से और दो बार चुपचाप करने को लिखा है और यह भी लिखा है कि गोबर उत्तर ओर रक्खा रहे। पर यदि सूत्र के 'म्रियमाणे' शब्द का किसी तरह यह अर्थ कर भी लेवें तो इसमें कोई विशेष आपत्ति नहीं है। परन्तु बार बार तीनों की सभी क्रियायें समंत्रक करना तो कभी भी उचित नहीं है। एक बात यह भी स्मरण रखना चाहिये कि यदि प्रमाद वश पहले से ही जूटिका बन्धन करके हरेक जूटिका के तीन तीन भाग न किये गये हों तो छेदन के समय उसी कांटे से या तो पहले ही तीन भाग करले तब भिगोवे या पहले भिगो कर पीछे तीन भाग करे। मगर पहले भाग करके भिगोना ही अधिक संगत है। फिर भी जैसी परिपाटी हो करे।

इस तरह जूटिका छेदन कर चुकने पर समूचे सिर को उसी जल से भिगो कर सिरके चारों ओर उसी क्षुरे को दक्षिणावर्त्त क्रम से तीन बार घुमावे। क्षुरा दहिने हाथ में रहना चाहिये। पहले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बार घुमाने में यह मंत्र पढ़े-ॐ यत्क्षुरेण मज्जयता सुपेशसा वप्त्रा वावपति केशाँश्चिच्छन्धि शिरोमास्यायुःप्रमोषीः ॥ फिर दो बार और विना मंत्र के ही घुमाकर उसी जल से फिर भी समस्त सिर को भिगोवे और-ॐ अक्षिण्वन्परिवप-यह मंत्र पढ़ कर क्षुरा नाऊ को दे देवे । ॐ परिवपामि-कह कर नाऊ क्षुरा हाथमें ले और शिखा को छोड़ शेष सम्पूर्ण सिर के केशों को धीरे धीरे काट कर माता के अंचल में दे । इसे ही कहीं कहीं लापर लेना कहते हैं । और माता किसी नये वस्त्र में उन बालों को लेकर उसी गोबर के पिंड पर रक्खे । किसी किसी ने लिखा है कि गोबरके पिंड पर ही रक्खे । किसी दूसरे ने लिखा है कि गोबर के पिंड पर दही दूध डाल कर उस पर ये बाल रक्खे । जैसी रीति हो वैसा करे । क्योंकि यह कुलाचार और देशाचार है । इसमें शास्त्र की कोई आज्ञा नहीं है कि ऐसाही किया जावे । इसके बाद बालों सहित वह गोबर गोशाले में गाड़ दे या नदी, तालाब आदि में बहा दे । यदि कंकण बांधा गया हो तो चौथे दिन मातृकाओं का विसर्जन और जल पूजन, जिसे कहीं कहीं गंगापूजा कहते हैं, करके उसी दिन कंकण को छोड़कर गंगाजी या तालाब में डाल दे और गोबर सहित केशोंको भी बहा दे । अथवा जभी गंगापूजन करे और कंकण खोले तभी मातृकाओं का विसर्जन करे और केशों को गाड़े या जल में डाले । यदि उसी दिन करे तो उसी दिन सही । यदि कंकण न हो तब तो उसी दिन मातृकाओं का तथा अन्य देवताओं का भी विसर्जन करही दे । परन्तु विवाह में चौथे दिन से पहले जलपूजा नहीं होती और न कंकण ही छूटना चाहिये । अस्तु, कुमार के सिर के बालों के बना चुकने पर उसे अच्छी तरह स्नान करा और खादी वस्त्र माला, पुष्प, चन्दनादि से विभूषित करके पिता या कर्त्ता अपने समीप अग्नि से पश्चिम ओर बैठावे । बालक पिता से उत्तर ही बैठे । तब यजमान आचार्य को दक्षिणा देने का संकल्प करे । परन्तु दक्षिणा संकल्प से पूर्व पूर्णाहुति होनी चाहिये । इस पूर्णाहुति में मतभेद है । बहुत लोग इसे नहीं मानते और किसी किसी पुराने वचन को उद्धृत कर यह सिद्ध करते हैं कि विवाह,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उपनयन, चौल (चूडाकर्म), वास्तुशान्ति और गर्भाधानादि संस्कारों में पूर्णाहुति न करे-विवाहे व्रतबन्धे च शालायां चौलकर्मणि । गर्भाधानादिसंस्कारे पूर्णाहुतिं न कारयेत् ('गोभिल गृह्यसूत्र भाष्य) । परन्तु प्रायः सर्वत्र यह शिष्टाचार है और पद्धतियों में लिखा भी है कि पूर्णाहुति करनी चाहिये । इसीलिये हम भी पूर्णाहुति लिख देते हैं । मिथिला में इसे 'मूर्द्धान' कहते हैं । कारण 'मूर्द्धानं' इत्यादि मंत्र सेही वे लोग तथा दूसरे भी पूर्णाहुति करते हैं । परन्तु कहीं कहीं "पूर्णादर्वि०" आदि दूसरे दूसरे मंत्र भी लिखे गये हैं । अस्तु, यदि उपनयन आदि भी साथही किये जावें और एकही वेदी हो तब तो सभी उत्तर अंगों को, जिनमें संस्रवप्राशन से लेकर पूर्णाहुति पर्यन्त की क्रियायें आ जाती हैं, एकही बार अन्त मेंही करना चाहिये । परन्तु जब केवल चौल हो तब जो लोग पूर्णाहुति मानते हैं उनके मत से पूर्णाहुति करने की विधि यह है कि पहले उसका संकल्प करे-ओं अद्य यथोक्ततिथौ अनुष्ठितचूडाकर्मांगहोमसांगतासिद्ध्यर्थं पूर्णाहुतिहोममहं करिष्ये । फिर पान, सुपारी, अक्षत और घृत आदि या यदि नारियल हो तो घृत से पूर्ण नारियल को स्रुव के अग्र भाग में रखकर खड़ा होकर आचार्य के कन्धे को स्पर्श किये हुए अग्नि में इस मंत्र से छोड़े-ॐ मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम् । कवि ँ सम्राजमतिथिञ्जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः स्वाहा ॥ अनन्तर बैठकर स्रुव से अग्नि का भस्म उठाकर उसमें से दहिने हाथ की अनामिका के अग्रभाग से उठा उठाकर नीचे लिखे मंत्रों से अपने ललाट आदि अंगों में लगावे । इसे त्र्यायुष करण वा भस्म वंदन कहते हैं-ललाट में-ॐत्र्यायुषं जमदग्नेः। गले में-ॐकश्यपस्य त्र्यायुषम् । दहिनी भुजा की जड़ में-ओं यद्देवेषु त्र्यायुषम् । हृदय में-ओं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥ इन्हीं मंत्रों से इन्हीं स्थानों में अन्य बालक को भी लगावे । परन्तु यदि स्वयं यजमान मंत्र पढ़ता हो तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्त के मंत्र में 'तन्नो' की जगह 'तत्ते' पढ़ें । लेकिन यदि आचार्य ही पढ़ता हो तो यजमान या बालक दोनों के लगाने के समय केवल 'तत्ते' यही पढ़े । अथवा यदि यजमान को आचार्य का प्रतिनिधि मानलें तो पहली बार ज्यों का त्यों पढ़कर दूसरी बारही 'तत्ते' पढ़े । परन्तु यजमान या पिता को भी पुत्र का प्रतिनिधि मानलें तब तो सभी बार ज्यों का त्यों मंत्र पढ़ा जाना चाहिये । 'तत्ते' पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं है। कर्त्ता की इच्छा चाहे जसा करे । तब आचार्य को दक्षिणा दे- ओं अद्य यथोक्ततिथौ अनुष्ठितचौलकर्मणः सांगफलाप्त्ये साद्गुण्यार्थं चेमां दक्षिणामाचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर भूयसी दक्षिणा का संकल्प कर उसे भी देकर यदि ब्राह्मणभोजन कराना हो तो उसका संकल्प भी करे- ओं अद्यानुष्ठितचूडाकर्मणः सांगतायै यथाशक्ति ब्राह्मणान्भोजयिष्ये । और उनके खिलाने का प्रबन्ध करे और अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद और विसर्जन आदि कर्म २२५ पृष्ठोक्तरीति से कर के कर्म समाप्त करे । परन्तु यदि चौल के बाद ही उपनयन करना हो तो भोजन संकल्प और अभिषेकादि न करे । यह सब समूचे कर्म के अन्तमें किया जाय । स्मरण रहे कि चौल का कर्ता या यजमान पिता ही होता है और उसके अभाव में घर के और कोई । उपनयन की भी यही दशा है। आचार्य की दक्षिणा और भूयसी दक्षिणा भी यदि चाहें तो सब के अन्त में एकही बार दे सकते हैं। इसमें आसानी होगी और हमारी राय भी ऐसीही है, पर कर्ता की इच्छा। इति यजुर्वेदी चौल ।

२—उपनयन ।

यदि चौल के साथ उपनपयन किया जावे तब तो आचार्य को दक्षिणा देकर उपनयन की क्रिया का आरम्भ करे । पर, यदि चौल पहले पूर्वोक्त विधि से होचुका हो और कुछ दिन बाद उपनयन करना हो तब तो ग्रन्थान्तमें लिखे उपनयन मुहूर्त्त का चौल से अलग विचार कर स्नान नित्य कर्मादि के उपरान्त अहत वस्त्र, तिलक धारण करके आसनपर बैठ आचमनपूर्वक प्राणायाम करे और ७६पृष्ठोक्त कर्मपात्रका सम्पादन कर चौलोक्तप्रधान संकल्प करे, केवल विशेषता यह होगी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कि इसमें चौल शब्द न बोलेंगे और यदि वेदारम्भ समावर्त्तन भी साथही करना होगा तो उनका भी नाम लेंगे जैसाकि २७८ पृष्ठ में कहा है। यदि उन्हें न करना हो तो उनका अंश छोड़ देंगे। या उनमें केवल वेदारंभ करना हो तो उसको भी कहेंगे। प्रायः चारों एकही साथ किये जाते हैं। इसलिये एकही जगह चौलप्रकरण मेंही चारों का संकल्प साथ ही लिख दिया है। फिर आचार्यवरण, गणेशपूजनादि से लेकर स्तम्भारोपण, तैलाभ्यंगादि सभी क्रियायें, जो चौल में की गई हैं, की जायँगी। अनन्तर उपनयन का कार्य आरम्भ होगा। हां, यदि चौल के बाद होगा तब तो आचार्य को दक्षिणा देकर यजमान स्त्री को अपने से दक्षिण और बालका को उससे भी दक्षिण बैठावे। यदि स्त्री न हो तो कर्त्ता (यजमान जो आचार्य है उस) के दक्षिण बालक बैठे और दोनों अग्नि से पश्चिम रहें। सबसे पहले यजमान आचार्य होने का अधिकारी बनने के लिये और बालक अबतक किये मनमाने कामों के लिये प्रायश्चित्त का संकल्प करे। यजमान का संकल्प तीन कृच्छ्र के लिये हो और यदि कृच्छ्र न कर सकता हो तो उसकी जगह तीन गोदान या गोदान का निष्क्रय द्रव्य देवे। यही बालक के लिये भी प्रायश्चित्त बताया गया है यदि वे प्राजापत्य करसकते हों, जिसे कृच्छ्र भी कहते हैं, तबतो उपनयन के दिन से पहले ही उसे करके उन्हें शुद्ध हो जाना चाहिये। परन्तु यदि किसी कारण से उसे न करसकें तभी उस दिन गोदान या उसका निष्क्रय का संकल्प करें। यह भी लिखा है कि यजमान भी १२००० गायत्री गोदान के अतिरिक्त जपे या जपावे और बालक दूसरे से जपवावे

यजमान का संकल्प-ॐ अद्यामुकशर्म्माहं स्वस्योपनेतृत्वाधिकाराय कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चित्तप्रत्याम्नायगोत्रयनिष्क्रयं यथाशक्ति द्रव्यं ब्राह्मणाय दास्ये ॐ तत्सन्नमम द्वादशसहस्रगायत्रीजपं च ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये

इसी तरह बालक भी-ॐ अद्यामुकशर्म्माहं स्वस्योपनयनयोग्यतासिद्ध्यर्थं कृच्छ्रत्रयात्मकप्रायश्चित्तप्रत्याम्नायगोत्रयनिष्क्रयं यथाशक्ति द्रव्यं दास्ये ॐ तत्सन्नमम ब्राह्मणद्वारा द्वादशसहस्रगायत्रीजपं च कारयिष्ये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर गोदान करके गायत्रीजप केलिये उसी समय इतने ब्राह्मण बैठावे कि शीघ्र बारह बारह हजार संख्या पूरी हो जाय। यह सम्पूर्ण क्रिया मध्याह्न से पहले होजानी चाहिये। क्योंकि उपनयन का उत्तम काल मध्याह्न ही है। फिर-ॐ अद्य कुमारस्योपनयनाधिकारसिद्ध्यै त्रीन्ब्राह्मणान्भोजयिष्ये तान्निष्क्रयं वा दास्ये- यह संकल्प करके तीन ब्राह्मणों को या तो भोजन करावे या भोजनप्रयोप्त अन्न द्रव्यादि दे। अनन्तर यदि चौल के साथ उपनयन न हो तो बालक की शिखा रखके शेष सिर का मुण्डन करावे और स्नानोत्तर उसे भी भोजन करावे। भरसक फल और दुग्धादिही करावे तो अच्छा। फिर यजमान से दक्षिण बालक को वस्त्रादि से भूषित कर बैठाने से पहले १८५ पृष्ठोक्त पंचभूसंस्कार करके समुद्भवनामक अग्निको स्थापित करे। यदि दूसरी वेदी हो तब पंचभूसंस्कार होगा। यदि पहली ही वेदी हो तब तो अग्निस्थापित है ही। केवल उसमें समुद्भव नामकी भावना करलेने से ही काम चल जायगा, जैसे पूर्णाहुति के समय पूर्वस्थापित अग्नि में ही उसके मृड नाम का ध्यान मात्र करलेते हैं, न कि मृडनामक दूसरी अग्नि की स्थापना कीजाती है। ऐसी दशा में तो अग्नि की पूजा आदि भी न होगी। केवल उसके समुद्भव नामका स्मरण करेंगे। बालक को यजमान (आचार्य) से दक्षिण आचार्य के ही आदमी लाकर अग्नि की प्रदक्षिणा कराते हुए बैठा दें बैठाने के समय ब्राह्मण लोग आशीर्वाद पढ़ें-ॐ आब्रह्मन्ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामाराष्ट्रे राजन्यः शूरइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्रीधेनुर्वोढाऽनड्वानाशुः सप्तिः पुरन्ध्रिर्योषा जिष्णूरथेष्ठाः। सभेयो युवाऽस्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्पताम्॥ इसके बाद उसी अग्नि की वेदी या कुण्ड के समीप ही ब्रह्मचारी के लिये कटिसूत्र, कौपीन, पहनने ओढ़ने के अन्य खद्दर, मूंजआदि की तीन लड़ीवाली मेखला की रस्सी, यज्ञोपवीत, मृगचर्म, पलाशआदि का दण्ड, भिक्षा मांगने का पात्र ये सब चीजें क्रमशः रखदी जावें।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तब आचार्य (पिता वा अन्य) बालक से कहे—ॐ ब्रह्मचर्यमा
गामिति ब्रूहि ॥ बालक उत्तर देवे—ॐ ब्रह्मचर्यमागाम्।
फिर आचार्य कहे-ओं ब्रह्मचार्यसानीति ब्रूहि॥ बालकका उत्तर
ओं ब्रह्मचार्यसानि ॥ अनन्तर बालक को खड़ा कर उसकी कम
में चुपचाप कटिसूत्र बांधकर कौपीन आदि वस्त्रों को पहना
समय मन्त्र पढ़े-ओं येनेन्द्राय बृहस्पतिः वासः पर्यदधा
मृतम्। तेनत्वा परिदधाम्यायुषे दीर्घायुत्वायबलायवर्चसे
फिर ब्रह्मचारी दो बार आचमन करे। तब आचार्य मूंज की
सूत वाली चिकनी रस्सी, जो मेखला के लिये है, हाथ में ले
ब्रह्मचारी की कमर में दहिने से (दक्षिणावर्त्त) घुमा घुमाकर
बार अगले मन्त्र से लपेटे और जिस तरह जनेऊ में प्रवर की
दी जाती है वैसे ही उसमें भी अन्त में प्रवर की ग्रन्थि देवे। मो
का आकार भी जनेऊ का साही हो जाता है। अतएव किसी कि
को भ्रम हो जाता है। जिससे आजकल प्रायः जनेऊ की ही तरह
में पहनाने की रीति बहुत जगह हो गई है। हनुमानचालीसा
"कांधे मूंज जनेऊ छाजै" वाक्य इस भ्रम में और भी सहायक हो
है। परन्तु यह है अनर्थ। वस्तुतः कमर में ही मेखला बांधी
चाहिये और उसी में लगाकर कौपीन पहनावे। भविष्य में ब्रह्मचा
को ऐसा ही करने के लिये वह है। मेखला लपेटने और बांधने
मन्त्र यह है-ओं इयं दुरुक्तं परिबाधमाना वर्णं पवि
पुनती म आगात्। प्राणापानाभ्यां बलमादधाना स्व
देवी सुभगा मेखलेयम्॥ तब गायत्री मन्त्र से वा क की
बांधी जावे और ब्रह्मचारी मिट्टी के छोटे या बड़े ८ या २४ वर्त्तनों
चावल आदि अन्न,द्रव्य और एक एक जोड़ा जनेऊ रखकर ब्राह्मणों
देनेका संकल्प करके दे-ॐ अद्यामुकशर्म्माहं स्वकीयोपनय
कर्मविषयकसत्संस्कारप्राप्त्यर्थमिदं भंडाष्टकं (कत्रयं)
ज्ञोपवीतान्नदक्षिणं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः स
ॐ तत्सन्नमम॥ अनन्तर ब्रह्मचारी के ९६ चतुरंगुल (चौवा) से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर बनाये जनेऊ की ग्रन्थिको स्पर्शकर आचार्य मंत्र पढ़े-ॐ प्राणानां ग्रन्थिरसि रुद्रो मा विशान्तकः । तेनान्नेनाप्यायस्व ॥ यह मंत्र जनेऊ में ग्रन्थि देने का है। इसके बाद कलश या किसी अन्य पात्रपर उसे-ओं भूर्भुवः स्वरोम्-पढ़कर रक्खे और-ओं यज्ञोपवीतं प्रतिष्ठापयामि-यह कहकर-ओं मनो जूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञ ँ समिमंदधातु । विश्वेदेवास इह मादयन्तामोम्प्रतिष्ठ- इस मंत्र से उसपर अक्षत छिड़ककर उसकी प्रतिष्ठा करे। इसके बाद उसके नौ सूत्रों में नौ देवताओं की स्थापना और पूजा इस प्रकार करे-ओं ओंकारदैवत्यायप्रथमतन्तवे नमः । ओं अग्निदैवत्याय द्वितीयतन्तवे नमः । ओं नागदैवत्याय तृतीय० । ओं सोमदैवत्याय चतुर्थ० । ओं पितृदैवत्याय पंचम० । ओं प्रजापतिदैवत्याय षष्ठ० । ओं वायुदैवत्याय सप्तम तन्तवे नमः । ओं सूर्यदैवत्याय अष्टमतन्तवे नमः ओं सर्व दैवत्याय नवमतन्तवे नमः ॥ फिर-ओं हरये नमः । ओं ब्रह्मणेनमः । ओं ईश्वराय नमः-इन तीन मंत्रों से तीन ग्रन्थियों के देवताओं की स्थापना और पूजा करके समूचे जनेऊ के अधिपति की पूजा-ओं यज्ञोपवीताकारस्याधिपाय परब्रह्मणे नमः-इस मंत्र से करे। पुनः उसे दोनों हाथ में लेकर-ओं आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यञ्च । हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन्-मंत्र पढ़ता हुआ सूर्य को दिखलावे। फिर कलशपर रखकर दहिने हाथ की अनामिका से छूकर सौ बार प्रणव और एकबार गायत्री जपे। तब प्राणायाम करके दहिने हाथ से छूवे और मंत्र पढ़े-ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥ और अन्तमें दस बार गायत्री और-ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय च क्षसे ॥ १ ॥ योवः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेह नः उशतीरिवमातरः ॥ २ ॥ तस्माअरंगमामवो यस्यक्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथाच नः ॥ ३ ॥ इन मंत्रों को पढ़ कर उसपर पल्लव या कुशसे जल डालता जावे । इस तरह संस्कार कर चुकने पर ब्रह्मचारी को वह जनेऊ देवे और वह-ओं यज्ञोपवीतंपरमंपवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात् । आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुञ्चशुभ्रंयज्ञोपवीतं बलमस्तुतेजः ॥ ओं यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि–पढ़कर पहनले । इसके बाद दो आचमन करके एक पतला अहत (पृ० ३८) वस्त्र जनेऊ की तरह ही गलेमें पहने और मंत्र पढ़े-ओं युवा सुवासाः परिवीत आगात्सउश्रेयान्भवतिजायमानः । तं धीरासः कवयउन्नयन्ति स्वाध्योमनसा देवयन्तः ॥ पुनः आचार्य ब्रह्मचारी (नैष्ठिक) को ऊपर से ओढ़ने और बिछाने के लिये मृगचर्म दे और वह–ओं मित्रस्य चक्षुर्धरुणंवलीयस्तेजो यशस्विवर्च समिद्धम् । अनाहनस्यं वसनं जारिष्णु परीदं वाजिनं दधेऽहम्–इस मंत्रसे उसे ओढ़ ले । ब्राह्मण के लिये कृष्णमृग का, क्षत्रिय के लिये चित्रमृग का और वैश्य के लिये गौ या बकरे का चर्म होना चाहिये और यदि न मिलसके तो सभी के लिये गौ का चर्म रहे । परन्तु वह बड़ा हो ताकि उसे ओढ़ सकें, नकि आजकल की तरह केवल धागे या जनेऊ की तरह से गले में पहनाया जावे या एक टुकड़ा कहीं बांध दिया जावे । यह सब रीति नितान्त अनुचित है । उपरान्त चुपचाप दण्ड उठकर ब्रह्मचारी को देना आचार्य का काम है और ब्रह्मचारी उसके पकड़ने के समय यह मंत्र पढ़े

ओं यो मे दण्डः परापतद्वैहायसोऽधिभूम्याम् । तमहं राददे आयुषे ब्रह्मणे ब्रह्मवर्चसाय ॥ ब्राह्मण का दण्ड बिल्व या पलाशका पांव से चोटीतक लम्बा रहे । क्षत्रिय का बरगद,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

या खैर का ललाट तक ऊंचा हो और वैश्य का गूलर या पीलू का नासिका तक ऊंचा रक्खा जाय। परन्तु न मिलने पर इन किसी भी वृक्षों के दण्ड किसी जाति के ब्रह्मचारी के काम आसकते हैं। वे दण्ड या लाठी की तरह जरा मोटे, सीधे, चिकने, सुन्दर और छिलके सहित हों। सड़े गले या जले न हों। फिर आचार्य अपनी अंजली में जल लेकर आगे के प्रत्येक मंत्र से ब्रह्मचारी की अंजली में दे और ब्रह्मचारी उसी जल से सूर्य को अर्घ देवे। (पहली) ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऊर्जे दधातन । महेरणायचक्षसे ॥ १ ॥ (दूसरी)-ओं योवः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीरिवमातरः ॥२॥ (तीसरी) ओंतस्मा अरंगमामवोयस्यक्षयायजिन्वथ। आपोजनयथाचनः॥३॥ तब आचार्य ब्रह्मचारीसे कहे कि-ओंसूर्यमुदीक्षस्व। ब्रह्मचारी खड़ा होकर और दोनों हाथ उठाकर सूर्य की ओर देखता हुआ यह मन्त्र पढ़े-ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ इसके उपरान्त ब्रह्मचारी के दहिने कन्धे पर होता हुआ उसके हृदय पर अपना दहिना हाथ आचार्य ले जावे और यह मन्त्र पढ़े-ओं मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनु चित्तं ते अस्तु । मम वाचमेकमना जुषस्व बृहस्पतिष्ट्वानियुनक्तुमह्यम् ॥ बाद को आचार्य अंगूठे के सहित उसका दहिना हाथ पकड़कर पूछे-ओं को नामासि । ब्रह्मचारी नाम बतावे-ओं अमुकशर्म्माहं भोः ॥ फिर आचार्य का प्रश्न--ओं कस्य ब्रह्मचार्यसि । ब्रह्मचारी का उत्तर-ओं भवतः । तब आचार्य पढ़े-ओं इन्द्रस्य ब्रह्मचार्यस्यग्निराचार्यस्तवाहमाचार्यस्तव अमुकशर्मन् ॥ यहां 'अमुकशर्म्मन्' जो अन्त में आया है उसमें 'अमुक' के स्थान पर ब्रह्मचारी का नाम पढ़ना चाहिये। इसके बाद आगे के मन्त्रों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

को आचार्य पढ़कर हाथ जोड़े हुये ब्रह्मचारी को पूर्व आदि दिशा
ओं की ओर घुमावे। (पूर्व)-ओं प्रजापतये त्वा परिददामि।
(दक्षिण)-ओं देवाय त्वा सवित्रे परिददामि ॥ (पश्चिम)-
ओं अद्भ्यस्त्वौषधीभ्यः परिददामि ॥ (उत्तर)-ओं द्या
वापृथिवीभ्यां त्वा परिददामि ॥ (नीचे की ओर)-ओं
विश्वेभ्यस्त्वा देवेभ्यः परिददामि ॥ (ऊपर की ओर -ओं सर्वे
भ्यस्त्वा भूतेभ्यः परिददामि ॥ तब ब्रह्मचारी अग्नि की
प्रदक्षिणा करके आचार्य से उत्तर बैठ जावे और आचार्य अग्नि से
उत्तर ब्रह्मा का वरण करके उसे दक्षिण ओर बैठाकर कुशकण्डिका
की शेष क्रिया १९१ पृष्ठोक्त रीति से करे। परन्तु यदि चौल के साथ
ही उपनयन हो और एकही कुण्ड या वेदी हो तब तो इन सब
कामों की कोई आवश्यकता है नहीं। पहले से ही सब ठीक है। हां
जब दूसरी वेदी या कुण्ड हो या चौल के साथ न हो तब तो सब
करना हीं चाहिये। फिर ब्रह्मा के अन्वारम्भ (पृ० ४८) करने पर आ
घार से स्विष्टकृत् तक की चौदह आहुतियां १९४ पृष्ठोक्त रीति से
और संस्रव को प्रोक्षणी पात्र में रखता जावे। स्मरण रहे कि
चौदहों में जो दो आहुतियां प्रजापति की हैं उन्हें चुपचाप मन से
मंत्र स्मरण कर देना चाहिये। फिर संस्रव प्राशन से लेकर
होम पर्यन्त के और अंग (बाद की क्रियायें) तभी करे जब उपनयन
के बाद वेदारम्भ न करना हो या यदि करना भी हो तो दूसरी वेदी
हो। परन्तु यदि उसी वेदी पर करना हो तब यह सब न करके
अन्त में ही सभी किये जायँगे। फिर आचार्य ब्रह्मचारी को आज्ञा
देश देवे। आचार्य-ओं ब्रह्मचार्यसि। ब्रह्मचारी-ओं अग्ने
नि। आचार्य-ओं अपोऽशान। ब्रह्मचारी-ओं अश्नानि
आ०-ओं कर्म कुरु। ब्र०-ओं करवाणि। आ०-ओं मा
वा सुषुप्थाः। ब्रह्म०-ओं न स्वपानि। आ०-ओं
यच्छ। ब्र०-ओं यच्छानि। आ०-ओं अध्ययनं सम्पाद
ब्रा०-ओं सम्पादयानि। आ०-ओं समिधमाधेहि।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं आदधानि । आ०-ओं अपोऽशान । ब्र०-ओं अश्नानि। इसके बाद ब्रह्मचारी किसी किसीके मत से अग्नि के दक्षिण चला जावे। परन्तु अधिकतर यही माना जाता है कि उत्तर ओर जावे और पश्चिममुख बैठकर पहले कांसे के बर्त्तन में चावल फैला-कर उस पर सोने के तार या कुशादि पवित्र तृण या लकड़ी से-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्-यह पूरा गायत्रीमन्त्र गायत्री, व्याहृति और प्रणव सहित लिखकर पूजा का संकल्प करे-ओं अद्य मम ब्रह्मवर्चसवेदाध्ययनाधिकारसिध्यर्थं गायत्र्युपदेशांग-विहितगायत्रीसावित्रीसरस्वतीपूजनपूर्वकमाचार्यपूजनं करिष्ये । और-ओं मनोजूति० (पृ० २८५) इत्यादि मन्त्र से उस पर अक्षत फूल डालकर गायत्री, सावित्री, सरस्वती की प्रतिष्ठा करके-ओं श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रेपार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्व-लोकम्म इषाण ॥ ओं भूर्भुवः स्वः गायत्रीसावित्री-सरस्वतीभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि पञ्चोपचार पूजा करे। फिर आचार्य की भी-ओं भूर्भुवः स्वः आचार्याय नमः-इस नाममन्त्र से पञ्चोपचार पूजा करके पूर्वमुख बैठाकर माला पहनावे, दोनों औंधे हाथों को बैलगाड़ी की तरह तले ऊपर करके दहिने से आचार्य का दहिना और बायें से बायां पांव पकड़े और ब्रह्मचारी आचार्य की ओर देखे एवं आचार्य ब्रह्म-चारी की ओर। फिर शंख और सभी प्रकार के बाजे गाजे तथा अन्यान्य शब्द बन्द कर दिये जावें जिससे ब्रह्मचारी अच्छी तरह सुन सके । ऐसा होने पर आचार्य गायत्री का उपदेश ब्रह्मचारी को तीन बार करे। उसकी रीति यह है कि पहली बार उपदेश करने में गायत्री के तीनों चरणों का अलग अलग उपदेश करता जाय और ब्रह्मचारी से कहवाता जाय। दूसरी बार मन्त्रको दो भागों में बांट कर दो चरणों का एकबार उपदेश करे और तीसरे का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उसके बाद । इसबार भी ब्रह्मचारी से कहवाता जावे । तीसरी बा
सम्पूर्ण मंत्र का एक ही बार उपदेश करे और उससे कहवावे
जिसमें अबोध ब्रह्मचारी भी ठीक ठीक उच्चारण कर सके, इसके लि
एक एक दो दो अक्षर या एक एक पद बोल बोल कर उससे उच्चा
रण कराता जावे । सबका निचोड़ यह हुआ कि पहली बार-(१) ओं
भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ (२) भर्गोदेवस्य धी
महि ॥ (३) धियो योनः प्रचोदयात् ॥ दूसरी बा
(१) ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्
धीमहि ॥ (२) धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ तीसरी बार
ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीम
धियोयोनः प्रचोदयात्॥ आचार्य यह करे कि पहले जितना सुना
हो सुना देवे । फिर उसके एक एक दो दो अक्षरों या पदांका क्रम
उच्चारण ब्रह्मचारी से करावे । तीनों वर्णों के ब्रह्मचारियों को इ
गायत्री मंत्र का ही उपदेश किया जाता है । अथवा क्षत्रिय
सावित्री नाम की इस त्रिष्टुप् ऋचा का उपदेश करे-ओं दे
सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय । दिव्यो गन्ध
र्वः केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु
वैश्य को जगती नाम की-ओं विश्वारूपाणि प्रतिमुञ्चते कवि
प्रसावीद्भद्रं द्वि[illegible] । विनाकमस्यत्स्त्रिवा
प्योऽनुप्रयाण[illegible] ॥ [illegible]
है । इस लिये सावित्री तो तीनों है । परन्तु पहली [illegible]
दूसरी का त्रिष्टुप् और तीसरी का जगती है । उपदेश के बाद ब्र
चारी आचार्य को यथाशक्ति दक्षिणा देवे-ओं अद्यामुकशर्म
कृतैतद्गायत्र्युपदेशाकर्मणः साद्गुण्याय इमां यथाशक्ति
दक्षिणामाचार्याय तुभ्यं संप्रददे ओं तत्सन्नमा
इस संकल्प के बाद गुरु के चरण पर मस्तक रख वहीं दक्षि
रख देवे और गुरु आशीर्वाद देकर दक्षिणा ले लेवे । तब ब्रह्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मध्याह्न काल की सन्ध्या करे और यदि देरी होगई हो तो प्रायश्चित्त स्वरूप पहले सूर्य को एक अर्घ्य देकर सन्ध्या शुरू करे ।

इसके उपरान्त ब्रह्मचारी उस अग्नि में समिधों का आधान करे। एतदर्थ अग्नि से पश्चिम ओर पूर्व मुख आचार्य और उसके दक्षिण ब्रह्मचारी पूर्वमुख बैठे । तथा पहले पांच लकड़ियां (यज्ञिय काष्ठ) या सूखे और कीड़े मकोड़े से रहित उपले (गोइंठे), पर्युक्षण के लिये जल, पलाश की तीन समिध, फिर पांच लकड़ियां या उपले और अभ्युक्षण का जल अपने पास रख लेवे। तब आगे के पांच मंत्रों से पहली पांच लकड़ियों या उपलोंको अग्नि में डाले। इसे परिसमूहन या सन्धुक्षण कहते हैं। इस समय वाम हस्त में कम से कम तीन कुश रखना चाहिये। (१) ओं अग्ने सुश्रवः सुश्रवसं मा कुरु स्वाहा। (२) ओं यथा त्वग्ने सुश्रवः सुश्रवा असि स्वाहा ॥ (३) ओं एवं मा ँ सुश्रवः सौश्रवसं कुरु स्वाहा ॥ (४) ओं यथा त्वमग्ने देवानां यज्ञस्य निधिपा असि स्वाहा ॥ (५) ओं एवमहं मनुष्याणां वेदस्य निधिपो भूयास ँ स्वाहा ॥ पश्चात् पर्युक्षण वाले जल को हाथ में लेकर ईशानकोन से आरंभ कर अग्नि के चारों ओर प्रदक्षिण क्रमसे गिरावे और खड़ा होकर तीन समिधों को हाथ में लेकर क्रम से एक एक को घी में डुबो कर अग्नि में आगे के मंत्र को पढ़ पढ़कर डाले—ओं अग्नयेसमिधमाहार्षं बृहते जातवेदसे । यथात्वमग्ने समिधा समिध्यस एवमहमायुषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन समिन्धे । जीवपुत्रो ममाचार्यो मेधाव्यहमसान्यनिराकरिष्णुर्यशस्वी तेजस्वी ब्रह्मवर्चस्यन्नादो भूयासम् ॥ एषाते अग्नेसमित्तया वर्द्धस्व चाचप्यायस्व वर्द्धिषीमहि च वयमाचप्यासिषीमहिस्वाहा ॥ फिर बैठजावे और दूसरी पांच लकड़ियों या उपलों में से एक एक को फिर पूर्व के "ओं अग्ने०"

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

इत्यादि पांचों मंत्रों से अग्नि में क्रमशः डालकर उसी तरह जल लेकर ईशान कोन से प्रदक्षिण क्रमसे अग्नि के चारों ओर गिरावे। तब चुपचाप दोनों हाथों को अग्नि पर सेककर आगे के ७ मन्त्रों से प्रत्येक बार ललाट, आंख, नासिका, दाढ़ी सहित मुख पर फेरे-

ओं तनूनपा अग्नेऽसि तन्वं मे पाहि ॥ १ ॥ ओं आयुर्दा अग्नेऽस्यायुर्मे देहि ॥ २ ॥ ओं वर्चोदा अग्नेऽसि वर्चो मे देहि ॥ ३ ॥ ओं अग्ने यन्मे तन्वा ऊनन्तन्म आपृण ॥ ४ ॥ ओं मेधां मे देवः सविता आदधातु ॥ ५ ॥ ओं मेधां मे देवी सरस्वती आदधातु ॥ ६ ॥ ओं मेधां मे श्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥ ७ ॥ पश्चात् ब्रह्मचारी हो आगे के सभी मंत्रों से अपने अंगों पर स्वयं हाथ फेरे—(सर्वअंग) ओं अंगानि च म आप्यायन्ताम् ॥ (मुख) ओं वाक् च म आप्यायताम् ॥ (नासिका) ओं प्राणश्च म आप्यायताम् ॥ (दोनों आँखें एक साथ) ओं चक्षुश्च म आप्यायताम् । (कान) ओं श्रोत्रं च म आप्यायताम् ॥ इस मंत्र से पहले दहिना कान छूकर फिर इसीसे बायां छूवे । (बाहु) ओं यशो बलं च म आप्यायताम् ॥ इससे एकही बार दोनों बाहु परस्पर छूवे । पश्चात् स्रुव से अग्नि का भस्म लेकर दहिने हाथ की अनामिका के अग्रभाग से उसमें से ले लेकर ललाट आदि अंगों में लगावे-(ललाट), ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः ॥ (गला) ओं कश्यपस्य त्र्यायुषम् ॥ (दहिनी बाहु की जड़) ओं यद्देवेषु त्र्यायुषम् ॥ (हृदय) ओं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् । इसमें मंत्र पढ़ने की व्यवस्था और उसमें हेर फेर पूर्व २९१ पृष्ठ में लिखा है । उसे देख लेना चाहिये । इसके उपरान्त सावधान चित्त से पढ़े अग्नि को ऐसा कह कर अभिवादन (प्रणाम) करे-ओं अमुक कगोत्रोऽमुकप्रवरो यजुर्वेदीयमाध्यन्दिनशाखाध्यायी अमुकशर्माहं वैश्वानर त्वामभिवादये भोः ॥ फिर ह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को प्रणाम करे-ओं अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरो यजुर्वेदीयमाध्यन्दिनशाखाध्यायी अमुकशर्म्माहं सूर्यदेव त्वामभिवादये भोः ॥ तब- ओं अमुक गोत्रोऽमुकप्रवरो यजुर्वेदीय माध्यन्दिनशाखाध्यायी अभिवादयेऽमुकशर्म्माऽहंभोः-

कहकर पहले अपने दोनों कानों को छूवे और कैंची की तरह तले ऊपर औंधे हाथ करके दहिने से गुरु का दहिना और बायें से बायां चरण पकड़ भूमि में सिर लगाकर गुरु को प्रणाम करे। और गुरु का- आयुष्मान्भव सौम्यामुकशर्म्मन्-यह आशीर्वाद लेकर अन्यान्य वृद्धों को पूर्वोक्त रीति से ही प्रणाम करे और उनका भी आशीर्वाद गुरु कीही तरह ले। यहां गुरु से अभिप्राय पिता आदि आचार्य से है जो गायत्री का उपदेश करते और शुरू से यजमान का काम करते हैं, नकि कर्म करने वाले आचार्य को गुरु समझना चाहिये। प्रणाम करने योग्य व्यक्ति यह हैं:-ततोऽभिवादयेद् वृद्धानसावहमिति ब्रुवन् । मातुलाश्च पितृव्याश्च श्वशुरास्तत्स्त्रियस्तथा । प्रत्युत्थायाभिवाद्याः स्युः ज्येष्ठभ्रातर एव च ॥ १ ॥ गुरुर्माता स्तन्यदात्री पित्रादित्रयमेवच। अन्नदाता भयत्राता मंत्रविद्योपदेशकः ॥ २ ॥

मामा, चाचा, ससुर, सास, ज्येष्ठभ्राता, गुरु, माता, धाई, पिता, पितामह, प्रपितामह, अन्नदाता, भय से रक्षा करने वाला, मंत्रोपदेशक और विद्योपदेश इनको इनकी स्त्रियों के सहित अपना नाम लेकर प्रणाम करे। ये लोग प्रणाम के अयोग्य हैं-उदक्यां सूतिकां नारीं भर्तृघ्नीं गर्भघातिनीम्। पाखण्डं पतितं व्रात्यं महापातकिनं शठम् ॥ १ ॥ नास्तिकं कितवं स्तेनं कृतघ्नं नाभिवादयेत्। मत्तंप्रमत्तमुन्मत्तं धावन्तमशुचिं नरम् ॥ २ ॥ वमन्तं जृम्भमाणं च कुर्वन्तं दन्तधावनम्। अभ्यक्तं शिरसिस्नानं कुर्वन्तं नाभिवादयेत् ॥३॥ जपयज्ञस्थलस्थंच समित्पुष्पकुशानलान्। उदपात्रार्घभैक्षान्नं वहन्तं नाभि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वादयेत् ॥ ४ ॥ रजस्वला, प्रसूती स्त्री, पतिको मार डालने वाली, गर्भ गिराने वाली, पाखंडी, पतित, समय पर गायत्री आदि संस्कार से रहित, महापापी, शठ, नास्तिक, धूर्त्त, चोर, कृतघ्न, नशे के मतवाला, अपने कर्त्तव्य से चूकनेवाला, उन्मादरोगवाला, दौड़ने वाला, अपवित्र, उबटन या तेल लगाये हुए, सिर सहित स्नान कीया हुआ, जपस्थानस्थित, यज्ञशाले में स्थित, समित्, पुष्प, कुश और अग्नि लिये हुए, जलपात्र, अर्घपात्र और भिक्षा का अन्न लिए हुए, वमन करते हुए, जंभाई लेते हुए और दन्तधावन करते हुए, इतने लोगों को कदापि प्रणाम न करे ।

तदनन्तर मृगचर्म, दण्डादि को धारण किये हुए नवीन पीले खद्दर का ऐसा थैला लेकर, जो दहिने कन्धे पर दोनों ओर लटकाया जासके, भिक्षा मांगने जावे । पहले माता से, तब बहिन और मौसी, चाची आदि से भिक्षा मांगे । आजकल पुरुषों से भी भिक्षा मांगते हैं । परन्तु स्मृतियों में यह बात नहीं लिखी है । केवल स्त्रियों से अपने और आचार्य के भोजन भर मांगकर लावे और आचार्य को समर्पण करे उनकी आज्ञा से स्वयं भी भोजन करे । भिक्षा मांगने के समय ब्राह्मण ब्रह्मचारी 'भवति' शब्द को पहले बोले, क्षत्रिय बीच में और वैश्य अन्त में । जैसे-भवति भिक्षां देहि । भिक्षां भवति देहि । भिक्षां देहि भवति । और माता आदि फल, या पक्वान्न, द्रव्य सहित चावल आदि वस्तुएं किसी धातु के पात्र या बांस की डालो में करके दें तो अपने कंधे के थैले में ब्रह्मचारी 'ॐ स्वस्ति' कहकर ले लेवे और एकही वार सब भिक्षा मांगकर आचार्य को समर्पण करे । पर मिथिला में यह रीति है कि एक एक से भिक्षा मांगकर आचार्य के पास रख जाया करते हैं । यद्यपि यह ठीक नहीं है । फिर भी, जैसी इच्छा हो करे । कहीं कहीं यह भी रीति है कि ब्रह्मचारी के दण्ड में ही दोनों ओर छोटे छोटे दो मिट्टी के पात्र या कपड़े के टुकड़े उनमें कुछ बांध कर लटका देते हैं और ब्रह्मचारी बहँगी की तरह कन्धे पर रख कर भिक्षा मांगने जाता है । यह भी ठीक नहीं है । एक थैला होना चाहिये जैसा पहले कहा है । प्रायः सर्वत्र पुरुषों से जो भिक्षा मांगने की रीति है वह आजकल के लोभी पुरोहितों की चलाई हुई है । क्योंकि भिक्षा को प्रायः वही लिया करते हैं । यह ठीक नहीं है । भिक्षा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो आचार्य और ब्रह्मचारी की है। दो बार भिक्षा मांगने की भी रीति बहुत जगह है। जिनमें पहली बार वाली पुरोहित और दूसरी बार वाली आचार्य या घरवाले लेते हैं। इसीलिये दूसरी बार वाली में लोग रुपये और अशर्फियां भी देते हैं। यह भी केवल मूर्खता और अज्ञानलीला है। शास्त्रों में यह कहीं नहीं है। कहीं कहीं यह रीति है कि जब पुरुष लोग भिक्षा में पैसे देते हैं तो उसके बदले में पुरोहित से जनेऊ वसूल करते हैं। यह तो और भी चौपट है। इन सभी बातों को बन्द कर देना चाहिये और यही प्रथा चलानी चाहिये कि ब्रह्मचारी पक्वान्न या फलादि उतनाहीं मांग लावे जितने में उसका और आचार्य का भोजन हो सके। यही शास्त्रीय रीति है। आचार्य की की पत्नी और उनके बच्चों के लिये भी रहे। मगर इससे अधिक नहीं। अस्तु, भिक्षा लाकर आचार्य को समर्पण करे—**भो गुरो इयं भिक्षा।** तब आचार्य के यह कहने पर कि—**भैक्षं भुंक्ष्व**—ब्रह्मचारी भिक्षान्न में से कुछ लेकर उसी समय खाले। इसके बाद से शाम तक ब्रह्मचारी मौन रहे, यह भी किसी किसी ने लिखा है। फिर शाम को सन्ध्योपासन करके उन्हीं पूर्वोक्त '**ओं अग्ने सुश्रवः०**' इत्यादि पांच मंत्रों से पांच लकड़ियां या उपले क्रमशः अग्नि में डालने से लेकर अग्नि, सूर्य और आचार्य को प्रणाम करने तक की सभी क्रियायें ज्यों की त्यों पुनरपि करके आचार्य के आशीर्वाद के बाद मौन व्रत तोड़े। इसके बाद ब्रह्मचारी के प्रतिदिन के कर्त्तव्यों और नियमों का उपदेश आचार्य कर दे। वे नियम और कर्त्तव्य यह हैं—(१) भूमि में सोना (२) नमक या दूसरे खारों को न खाना (३) दण्ड धारण करना (४) प्रति दिन जंगल से स्वयं टूट कर गिरी हुई लकड़ियों को लाकर सायं और प्रातः काल सन्ध्योपासन के बाद—**ओं अग्ने सुश्रवः०**—इत्यादि रीतिसे अग्नि के परिसमूहन से लेकर त्र्यायुषकरण पर्यन्त की सभी क्रियाओं को नित्य करना। इसे अग्निपरिचरण या परिचर्या कहते हैं। कहीं कहीं समिदाधान भी कहा है। (५) गुरुकी सेवा (६) भिक्षाचर्या वा भिक्षा मांगना (७) मधु और मांस कभी न खाना, (८) नदी आदि जलाशय में पैठकर स्नान न करना (९) कूवें या जलाशय से पानी भर कर अलग स्नान करना (१०) खाट आदि ऊंचे आसन पर न बैठना सोना (११) ब्रह्मचर्य की रक्षा करते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुए स्त्री प्रसंग से बचना (१२) कभी भी स्त्रियों के साथ नहीं बैठना। इनके सिवाय इतर फुलेल आदि सुगंध, फूल की माला विविध रस, बासी अन्न या सिरका आदि जिन्हें शुक्त कहते हैं सभी, किसी प्रकार की हिंसा, शरीर में तेल या उबटन लगाना सुरमा या अंजन लगाना, छाता और जूते का धारण, काम, क्रोध लोभ, नाचना, गाना, बजाना, जूआ, चौपड़ आदि का खेलना, किसी की निन्दा, स्तुति करना, बकबाद, मिथ्या भाषण, स्त्रियों को देखना वा छूना, किसी को पीटना, ये सभी बात ब्रह्मचारी छोड़दे, कभी न करे। एकान्त में अकेलाही सोवे और वीर्य की रक्षा करे, कभी भी वीर्य गिरने न दे। पान, दन्तधावन, दिन का सोना, तैरना, दोनों टांगों को बटोर कर उनमें और पीठ में गमछा आदि बाँधकर बैठना आईने में मुख देखना, कांसा, लोहा, सीसा और मिट्टी [illegible] भोजन, खड़े होकर मूतना, उठा[illegible] आदि बातों से [illegible] चाहिये। भिक्षा का साधारण [illegible] है कि जिस जाति [illegible] चारी हो उसी जाति के यहाँ मां[illegible] अभाव में अपने से ऊंची जाति के यहां भी मांग सकते हैं। अस्तु, [illegible] बाद मैथिल पद्धतियों में पूर्णाहुति भी लिखी है, और त्र्यायुषकरण भी, जो २९० पृष्ठोक्तरीति से की जाती है। परन्तु और किसी [illegible] पद्धति में पूर्णाहुति नहीं है और [illegible] पृष्ठ में वचन भी दिखलाचुके हैं कि उपनयन में पूर्णाहुति नहीं होती और जब वेदारंभ साथही करेंगे तब तो उसके बादही, यदि होती हो तो, होनी चाहिये। वस्तुतः तो पूर्णाहुति करना ठीक ही नहीं है और पूर्णाहुति न करेंगे तो उसके साथ का ही त्र्यायुषकरण भी नहीं होगा इसके बाद कर्म करानेवाले आचार्य को दक्षिणा देने का संकल्प यजमान करे-ओं अद्यतैस्य कुमारस्य उपनयनकर्मणः सांगोपांगतासिद्ध्यर्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणामाचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर भूयसी दक्षिणा का भी संकल्प करके उसे ब्राह्मणों तथा अन्यों को देकर अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद और विसर्जन आदि की क्रिया २९० पृष्ठोक्त रीति से करे। भूयसी दक्षिणा का संकल्प भी वहीं लिखा है। उसे देखकर तदनुसार ही करना चाहिये। केवल 'उपनयनकर्मणः' ऐसा पद बोलेंगे। परन्तु यदि वेदारंभ करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हो तो अभिषेकादि क्रियाओं को वहीं करना चाहिये। जैसे चौल के अन्त में दस वा यथाशक्ति कम भी ब्राह्मण भोजन कराने की विधि है उसी तरह उपनयन के अन्त में पचास को वा यथाशक्ति भोजन कराने का संकल्प करना चाहिये—ओं अद्यानुष्ठितोपनयनकर्मणः प्रतिष्ठार्थं पञ्चाशद्ब्राह्मणान्यथाशक्ति वा भोजयिष्ये। भोजन तो अन्त में ही होता है।

यदि २७५ पृष्ठोक्त व्रात्यों का कोई उपनयन करना चाहे तो उसके लिये यह आवश्यक है कि व्रात्यकी दशा का विचार कर उसका प्रायश्चित्त करले। अतएव प्रसंग से उस प्रायश्चित्त का भी थोड़ासा विवरण देना आवश्यक है। जिसकी गरीबी या बीमारी आदि के कारण असमर्थ होने से उपनयन का उक्त समय टल गया हो और वह व्रात्य हो गया हो उसे उचित है कि चान्द्रायण, महीने भर प्राजापत्य वा कृच्छ्र, व्रात्यस्तोम नामक यज्ञ या तीन दिन उपवास करके एक बैल और दस गौ का दान, इन चारों में से कोई एक करके शुद्ध होजावे। परन्तु ऊपर कही गई असमर्थता के न होने पर और सुभीता होने पर भी समय टल जाने पर तो मनुस्मृति के ११ वें अध्याय के १०८ से ११६ तक के श्लोकों में बताये हुए त्रैमासिव्रकत से जो गोहत्या के लिये है, शुद्ध हो सकता है। परन्तु यदि उसके करने में असमर्थ हो तो शिखासहित समस्त सिर को मुँड़ाकर एक पसर (प्रसृति वा चिल्लू भर) जौ का आटा या सत्तू पानी में पतला घोल कर निरन्तर २० दिन तक पीवे और प्रति दिन पांच ब्राह्मणों को भोजन करावे। यह सब केवल उन लोगों के लिये है जिन्होंने समय बीतने के थोड़े ही दिन बाद तक उपनयन न किया हो। परन्तु जो जान बूझकर विना किसी आपत्ति के कई वर्ष योंहीं बितादे और संस्कार न करे वह उद्दालक व्रत से शुद्ध होता है। उसकी विधि यह है कि दो महीने तक निरन्तर चार रुपये भर जौ का सत्तू या आटा घोलकर पीवे। तब एक महीने भर प्रतिदिन उतना ही गौ का दूध पीकर, उसके बाद १५ दिन गौ की उतनी हीं आमिक्षा और ८ दिन गौ का उतनाहीं घी प्रतिदिन पीवे। गर्म दूध में मट्ठा डालने से फटकर जो टुकड़े होते हैं उसे आमिक्षा वा पयस्या कहते हैं और पानी को वाजिन। फिर छ दिन तक प्रतिदिन विना माँगे जो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिले उसे खाकर, बाद के [illegible] दिन केवल जल पीकर और अन्त [illegible] एक दिन उपवास करके उ[illegible] व्रत को ४ महीने और ३ दिन [illegible] पूरा करे। जिस बालक के पिता और पितामह विना उपनयन [illegible] ही मर गये हों वह तो [illegible] निरन्तर गुरु के पास रहक [illegible] उसकी सेवा करने, भीख [illegible] कर खाने और ब्रह्मचारी के नियम [illegible] के पालन करने से शुद्ध होता है। फिर उसका उपनयन किया [illegible] सकता है। परन्तु जिसके पितामह आदि के भी उपनयन होने [illegible] निश्चय नहीं है वह पूर्वोक्त [illegible] बारह वर्ष तक गुरु की से[illegible] करके शुद्ध हो सकता है [illegible] उसके बाद ही उसका उपनय[illegible] हो सकता है। इन सभी प्र[illegible] के करने की विधि अन्य ग्र[illegible] में लिखी है। इति यजुर्वेदी उप[illegible]।

३—[illegible]रम्भ ।

यदि उपनयन के बाद ही [illegible]दारम्भ करना हो तब तो [illegible] सामान ठीक ही है। यदि दू[illegible] या कुण्ड हो तो उसमें १८५ पृष्ठ [illegible] पंचभूसंस्कार पूर्वक हरि[illegible] अग्नि की स्थापना करके ब्रह्मच[illegible] को अग्नि से पश्चिम ओर [illegible] और ब्रह्मा का वरण करके [illegible] कण्डिका की शेष क्रिया क[illegible] करेंगे। संकल्प या गणपति पू[illegible] आदि की आवश्यकता ह[illegible] है। सभी पहले एक ही बार [illegible] चुके हैं। पर, यदि उपनयन [illegible] वेदारम्भ न किया जाता [illegible] तो कर्त्ता (यजमान) स्नान, [illegible] क्रिया कर, तिलक, खद्दर, पा[illegible] आदि धारण करके आसन [illegible] पूर्व मुख बैठे और आचमन प्रा[illegible] याम करके कर्मपात्र (७६ पृष्ठ) [illegible] सम्पादन करे। फिर कर्मदी[illegible] जिसे प्रधान दीप भी कहते हैं, [illegible] कर और उसकी पूजा करके [illegible] पूर्व ओर पूर्वमुख रखकर प्रधा[illegible] संकल्प करे—ओं अद्य०—इत्य[illegible] १०८ पृष्ठोक्त सभी कहकर 'अ[illegible] कर्म करिष्ये' की जगह—अ[illegible] ब्रह्मचारिणः अमुकश[illegible] वेदारंभं करिष्ये तदंग[illegible] महागणपतिपूजनं पुण्य[illegible]नं मातृका पूजनं नान्दी[illegible] कलशस्थापनं वरुणनव[illegible] दिदेवतापूजनं च करिष्ये[illegible] पढ़े। फिर १०३ आदि पृष्ठो[illegible] से सभी कर्म करके पञ्चभूस[illegible]

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वक हरिनामक अग्नि की स्थापना, प्रतिष्ठा और पूजनादि करे और ब्रह्मचारी को अपने से उत्तर, अग्नि से पश्चिम पूर्वमुख बैठावें। कहीं कहीं समुद्भवं नामकी ही अग्नि यहां भी लिखी है। तब ब्रह्मवरण से लेकर हवन से पूर्व की प्रणीता पात्र में पवित्र को रखकर अग्नि और प्रणीता के मध्य में प्रोक्षणी पात्र रखने तक की कुशकण्डिका वाली शेष क्रिया करडाले। यदि उपनयन के बाद हो तबतो स्थापित अग्नि में केवल 'हरि' नामका ध्यान करके ब्रह्मचारी को अपने उत्तर बैठा कर अपना दहिना घुटना भूमि में टेक दे और ब्रह्मा के अन्वारम्भ करने पर आघार और आज्य भाग की चार आहुतियां देवे और संस्रव प्रोक्षणीपात्र में रखता जावे। मंत्र ये हैं—१—ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम। २—ओं इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमम। ३—ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम। ४—ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम॥ इसके बाद अन्वारंभ छोड़ देना चाहिये और संस्रव भी न रक्खा जायगा। केवल वेदों की आहुतियां दी जायँगी। क्रम यह होगा—यजुर्वेद, ऋग्वेद, सामवेद, अथर्ववेद। यदि चारों वेदों का आरंभ एक ही साथ करना हो तो प्रथम प्रत्येक वेदों की अलग अलग आहुतियां देकर सबों की साधारण नौ आहुतियां इस तरह दे। यजुर्वेद की—१—ओं अन्तरिक्षाय स्वाहा इदमन्तरिक्षाय नमम॥ २—ओं वायवे स्वाहा इदं वायवे नमम॥ ऋग्वेद की—१—ओं पृथिव्यै स्वाहा इदं पृथिव्यै नमम॥ २—ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम॥ सामवेद की—१—ओं दिवे स्वाहा इदं दिवे नमम॥ २—ओं सूर्याय स्वाहा इदं सूर्याय नमम॥ अथर्ववेद की—१—ओं दिग्भ्यः स्वाहा इदं दिग्भ्यो नमम॥ २ ओं चन्द्रमसे स्वाहा इदं चन्द्रमसे नमम॥ इसके बाद सर्व साधारण—१—ओं ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम॥ २—ओं छन्दोभ्यः स्वाहा इदं छन्दोभ्यो नमम॥ ३—ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजाप-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तये नमम ॥ ४–ओं [illegible] स्वाहा इदं देवेभ्यो नमम
५–ओं ऋषिभ्यः स्वाहा [illegible]दमृषिभ्यो नमम ॥ ६–[illegible]
श्रद्धायै स्वाहा इदं श्रद्धायै [illegible]म ॥ ७–ओं मेधायै स्वाहा [illegible]
मेधायै नमम ॥ ८–ओं [illegible]स्पतये स्वाहा इदं सदस[illegible]
तये नमम ॥ ९–ओं अनु[illegible] स्वाहा इदमनुमतये नमम

परन्तु यदि केवल यजुर्वेद या [illegible]सी एक वेद का आरंभ करना [illegible]
तो सिर्फ उसी की दो आहुतियां [illegible] देकर सर्वसाधारण नौ आहुति[illegible]
दे । इसी तरह यदि दो [illegible] वेदों का आरम्भ करना हो [illegible]
उन्हीं की आहुतियां देकर साधा[illegible] नौ दे । अतएव यजुर्वेदी पद[illegible]
में यदि यजुर्वेदी का ही आरंभ [illegible]खना हो तो यजुर्वेद की दो और [illegible]
साधारण यही ग्यारह लिखी [illegible]की जायंगी । परन्तु जानकारी [illegible]
लिये और वेदों की भी लिखी [illegible] इसके बाद फिर अन्वारंभ का [illegible]
शेष १९४ पृष्ठोक्त तीन व्याहृति [illegible] की, पञ्चवारुणी, प्राजापत्य [illegible]
स्विष्टकृत् की ये दस आहु[illegible]र उनका संस्रव प्रोक्षणी में रख[illegible]
जावे । इसके बाद यदि [illegible]मावर्त्तन न करना हो या [illegible]
करना भी हो तो उसकी क्रि[illegible]री वेदी पर करनी हो, तो सं[illegible]
प्राशन, ब्रह्मा को पूर्णपात्र [illegible] प्रणीता का विमोक और [illegible]
होमादि कृत्य २४३ पृष्ठोक्त रीति [illegible]कर डाले । पर यदि उसी वेदी [illegible]
करना हो तो न करे । ब्रह्मा की [illegible]णा के संकल्प में 'वेदारम्भ[illegible]
कर्मणि' इतना पद 'पञ्चगव्य[illegible]कर्मणि' की जगह पढ़ लेना [illegible]
हिये । शेष २४३ पृष्ठोक्त ही रहेगा ॥ इसके उपरान्त वेदों का आरम्भ [illegible]
से पहले ब्रह्मचारी अग्नि [illegible]स्तर जाकर गणेश, विष्णु, सरस्व[illegible]
लक्ष्मी और स्वविद्या इन पांच [illegible] देवताओं की पूजा तांबे आदि के [illegible]
में या पवित्र स्थान पर अक्षत [illegible] या सुपारी आदि पांच जगह रख[illegible]
आवाहन आदि करके एक सा[illegible] ही करे । पहले पांच जगह [illegible]
या अक्षत रखकर संकल्प करे[illegible]ओं अद्य वेदारम्भकर्मणः [illegible]
ङ्गत्वेन गणेशविष्णुस[illegible]लक्ष्मीस्वविद्यानामावा[illegible]
पूजनादि करिष्ये । फि[illegible] दही और अक्षत, फूल [illegible]
अक्षत या केवल अक्षत ले[illegible] नाम मंत्रों से आवाहन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१) ओं भूर्भुवः स्वः गणेशाय नमः गणेश इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (२) ओं भूर्भुवः स्वः विष्णवे नमः विष्णो इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (३) ओं भूर्भुवः स्वः सरस्वत्यै नमः सरस्वति इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (४) ओं भूर्भुवः स्वः लक्ष्म्यै नमः लक्ष्मि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (५) ओं भूर्भुवः स्वः स्वविद्यायै नमः स्वविद्ये इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ फिर ओं मनोजूतिर्जुषतां० (पृ० २८[illegible]) मंत्र को पढ़ कर उसके आगे— ओं भूर्भुवः स्वः गणेशादिभ्यो नमः इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत— इतना और कह कर उनकी प्राणप्रतिष्ठा एक ही साथ करे और—ओं भूर्भुवः स्वः गणेशादिभ्यो नमः—इसी नाम मंत्र से—गन्धं समर्पयामि—इत्यादि पञ्चोपचार अथवा—आसनं समर्पयामि—इत्यादि षोडशोपचार पूजा करके गुरु की भी चन्दन, अक्षत, पुष्पमाला आदि से पूजा कर ३०३ पृष्ठोक्त रीति से उनके चरणों को पकड़ कर प्रणाम करे। ब्रह्मचारी पश्चिम मुख और गुरु पूर्व मुख किसी आसन पर बैठे होवें। ब्रह्मचारी कछुआमुक्ता बैठकर अपने दोनों हाथों को घुटनों पर से लेजाकर गुरु के चरण पकड़े। पीछे पाँव छोड़कर उनके मुख की ओर देखता रहे। जैसी किसीने लिखा है कि ब्रह्मचारी उत्तर मुख या पूर्व मुख रहे। जहां जैसी परिपाटी हो करे। पहले प्रणव व्याहृति सहित गायत्री पढ़ावे— ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॥ इसके बाद यजुर्वेद के आरम्भ के लिये उसका पहला मंत्र पढ़ावे—ओं इषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्रायभागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघश ँ सो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ फिर ऋग्वेद के लिये—ओं अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम्। होतारं रत्नधातमम् ॥ सामवेदकेलिये—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहो सत्सि बर्हिषि ॥ अथर्व वेद के लिये-ओं शन्नो देवीरभि ष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः इस प्रकार एक एक मंत्र पढ़ाकर चारों वेदों का संक्षेप में आ कराके फिर अन्त में-ओं भूर्भुवः०-इत्यादि गायत्री मंत्र पढ़ावे यदि केवल यजुर्वेद या किसी दूसरे एक या दो वेदों का ही आ करना हो तो उन्हीं के मंत्रों को पढ़ावे । परन्तु सर्वत्र आदि अन्त में गायत्री को अवश्य पढ़ावे । इसके बाद गुरु को ओं विरामोऽस्तु । बस, इतना सुनकर ब्रह्मचारी गुरु के चरणों को उसी तरह पकड़ कर प्रणाम करके चुप होजावे । तदनन्तर अ त्यानिराकरण नामक इन मंत्रों को पढ़े-ओं प्रतीकम्मे विचर्ष जिह्वा मे मधु यद्वचः । कर्णाभ्यां भूरि शुश्रुवे मा त हार्षीच्छ्रुतं मयि । ब्रह्मणः प्रवचनमसि ब्रह्मणः प्रति नमसि ब्रह्मकोशोऽसि सनिरासि शान्तिरस्यनिराक मसि ब्रह्मकोशं मे विश वाचा त्वापिदधामि । वाचा पिदधामि । तिष्ठतिष्ठ स्वरकरणकण्ठयौरसदन्त्यौ ग्रहणधारणोच्चरण शक्तिर्मयि भवतु । आप्यायन्तु ङ्गानि वाक्प्राश्चणक्षुः श्रोत्रं यशोबलम् । यन्मे श्रुतम तन्मे मनसि तिष्ठतु तिष्ठतु ॐ ॥ इसके बादही ब्रह्मचारी को के लिये वाराणसी भेजने का अनुकरण करने की परिपाटी आ कहीं कहीं है और जब वह काशी चलता है तो आचार्य उसे यह कर लौटा लेता है कि-मा गच्छ काशीमत्रैव त्वामध्याप ष्यामि वेदान् । परन्तु यह सब आजकल मिथ्या प्रतिज्ञा है । अतएव इस नकल की कोई आवश्यकता नहीं है । इसके उप यदि तुरन्त समावर्तन न करना हो तो पूर्णाहुति करते हैं । स्रुव में घृत, पान, सुपारी, अक्षत, नारियल आदि लेकर और ब्रह्म से भी स्पर्श कराके खड़ा होकर पूर्णाहुति करे-ओं मूर्द्धानं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रातिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम् । कवि ५
ब्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः स्वाहा
दमग्नये वैश्वानराय नमम ॥ फिर बैठकर स्रुव से कुंड का
स्म लेकर आचार्य स्वयं दहिने हाथ की अनामिकाके अग्र से अपने
ी लगावे और ब्रह्मचारी का भी लगावे। इसे ही त्र्यायुषकरण कहते हैं।
ललाट में) ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः। (गले में)-ओं कश्य-
स्यत्र्यायुषम्।(दहिनी भुजा की जड़ में) ओं यद्देवेषु त्र्यायु-
म्। (हृदय में) ओं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम् ॥ फिर कर्म
राने वाले आचार्य को दक्षिणा देने का संकल्प करके उसे दे-
ों अद्याहमस्य ब्रह्मचारिणो वेदारम्भकर्मणः सांगतायै
मां यथाशक्ति दक्षिणां तुभ्यमाचार्याय संप्रददे ओं तत्स-
नमम ॥ इसी तरह भूयसी दक्षिणा का भी संकल्प करके देवे।
कल्प के अन्तमें-भूयसीं दक्षिणां सम्प्रददे ओं तत्सन्नमम-
ह कहे। फिर यदि तुरन्त समावर्त्तन न करना हो तो कलश के जल
अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद और विसर्जनादि भी कर डाले २२५
ोक्त रीति से। यदि समावर्त्तन कर लेना हो तो अभिषेकादि न करे।
र ब्राह्मण भोजन का संकल्प करे-ओं अद्येहास्य वटोः वेदा-
म्भकर्मणः प्रतिष्ठार्थं दश यथाशक्ति वा ब्राह्मणान्भोज-
ष्ये ॥ भोजन तो अन्त में ही कराया जाय। इति वेदारम्भ।

४-समावर्त्तन।

यदि वेदारम्भ के बाद ही समावर्त्तन भी किया जाय और अग्नि का
ड या वेदी भी एक ही हो तब तो २७७ पृष्ठोक्त रीति से एकही संकल्प
या जा ही चुका होगा। अतएव गणेशपूजनादि तथा कुशकण्डिका,
स्थभूसंस्कारादि की भी कोई आवश्यकता नहीं है। केवल स्थापित
ग्नि में वैश्वानर या सूर्य नामका ध्यान कर ले। किसी किसीने इस
ग्नि का नाम राजपुत्र भी लिखा है। परन्तु यदि वेदारंभ के बाद ही
होकर स्वतंत्र रूप से किया जाय और वेदी अलग होवे तो भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुशकण्डिका की सब क्रिया करनी हीं होगी जो १८५ पृष्ठ में कही है । परन्तु केवल वेदी पृथक् होने पर गणेशपूजनादि या संकल्प का काम नहीं है । वह तो एक ही बार आरम्भ में ही होजाता हां, जब केवल समावर्त्तन हीं करना हो और इससे पहले कोई संस्कार न किया गया हो, तब तो गुरु प्रातःस्नान, नित्यक्रिया करके श्वेत वस्त्र,पवित्र, तिलकादि धारण पूर्वक आसन पर पूर्व मुख बैठकर मन प्राणायाम करके पहले संकल्प करे-ओं अद्यास्य वटोरः शर्मणो गृहस्थाश्रमाधिकारासिद्ध्यर्थं समावर्त्तनाख्यं कर्म करिष्ये तदंगतया गणपतिगौरीपूजां पुण्याहवाचनं मातृकापूजनं नान्दीश्राद्धं कलशस्थापनं वरुणनवग्रहादिदेवतानां पूजनं च करिष्ये ॥ फिर ७४ आदि पृष्ठोक्त रीति से दीप की स्थापना, कर्मपात्र की स्थापना, आचार्य वरण और गणेश पूजनादि समस्त क्रिया करडाले । पुण्याहवाचन के अन्त में "प्रजापतिःप्रीयताम्" कहा जाता है, वहां "सुश्रवः प्रीयताम्" कहे । शेष सब ज्यों का त्यों रहेगा । फिर स्नान, नित्यक्रिया श्वेत अहत वस्त्र, तिलक, पवित्रादि धारण पूर्वक आचमन प्राणायाम करके ब्रह्मचारी आचार्य (गुरु) से आज्ञा मांगे-ओं भो आचार्य अहं स्नास्यामि ॥ आचार्य आज्ञा दे-ओं स्नाहि । फिर आचार्य से दक्षिण ओर अग्नि से पश्चिम पूर्व मुख ब्रह्मचारी जाय । इसके अनन्तर पंचभूसंस्कार पूर्वक सूर्य या वैश्वानर अग्नि की स्थापना, प्रतिष्ठा और पूजा करके ब्रह्मवरण से लेकर पूर्ण रखने तक की क्रियायें पूर्वोक्त रीति से करडाले । जहां 'अग्नि' पद आया हो वहाँ वहाँ 'सूर्यनामाग्नि' या 'वैश्वानरनामाग्नि' ऐसा पद बोलता जावे । परन्तु यदि पहली ही वेदी तब तो केवल अग्नि के वैश्वानर या सूर्य नाम का ध्यान करके पात्र के बाद ही समावर्त्तन के विशेष पदार्थों को रक्खे । जिस से पूर्व पूर्व या उत्तर उत्तर पूर्णपात्रादि रक्खे गये हों उसी से उनके बाद आगे लिखे पदार्थ रक्खे जावें । किसी किसी ने लिखा है पूर्णपात्र से पहले ही ये सब चीजें रख कर पूर्ण पात्र रक्खा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु एक तो यह ठीक नहीं है । सर्वत्र यही नियम है कि जो पीछे आता है वह अन्त में ही रक्खा जाता है-आगन्तुकानामग्रे सन्निवेशः । ऐसा ही उपनयन आदि में किया भी गया है । अत एव यहाँ भी वैसा ही होना चाहिये । और भी, यदि स्वतंत्र समावर्तन हो तो यह संभव भी है। पर, जब वेदारम्भादि के साथ ही होता है, जैसी आजकल रीति है और उसमें भी जब एक ही वेदी है, तब तो अन्त में ही रखना उचित है, अस्तु । वे पदार्थ क्रमसे यह हैं- उपनयन के समय परिसमूहन के लिये जैसी थीं वैसीही पाँच लकड़ियाँ या उपले, पर्युक्षण का जल, तीन समिध, वैसी ही पांच लकड़ियां या उपले, पर्युक्षण का जल । दोनों पर्युक्षण का जल यदि एक ही पात्र में हो तब भी काम चलजायगा । अथवा कर्मपात्र के ही जल से काम चल सकता है । स्नान के समय के लिये बिछाने को हरे कुश, सर्वौषधि मिला पवित्र गंगादि का जल आठ घड़ों में जो क्रमशः उत्तर उत्तर पूर्वाग्र कुशों पर, मुख पर पल्लव डालकर, रक्खे हों, सहस्रधारा (हजार सूराखवाला घड़ा), खादी की धोती, भोजनार्थ दही, नाऊ, स्नान के लिये शीतल जल, गूलर की दतवन, देह में लगाने का उबटन या पीसा आंवला आदि. स्नान का गर्म जल, चन्दन, दो अहतवस्त्र, यज्ञोपवीत, फूलों की माला, पगड़ी, मिर्जई कुर्त्ता आदि, कुण्डल, अंगूठी, दर्पण, छाता, जूते और बाँसकी लाठी या दंड । इन सब चीजों को रख चुकने पर यदि वेदारंभ की ही वेदी होगी तब तो पवित्रादि बनाने का काम है ही नहीं, केवल होम शुरू होगा । पर, यदि नवीन वेदी हो या नये सिरे से आरम्भ हुआ हो तबतो कुशकंडिका की पवित्र बनाने से लेकर प्रोक्षणी को अग्नि और प्रणीता के मध्य में रखने तक की शेष क्रियायें कर डाले। इसके बाद दहिना घुटना टेक कर वही सब आहुतियाँ ठीक उसी तरह देवे जिस तरह इसी ब्रह्मचारीके वेदारंभ के समय ३०९ पृष्ठ में दी गई हैं । उनमें जरा भी अन्तर पड़ने न पावे। हाँ, इतना अवश्य ध्यान रखना चाहिये कि जितने वेदों की समाप्ति करके समावर्त्तन करना हो उतने हीं की आहुतियाँ दी जावें। यदि कुछ भी समाप्त न किया हो तब तो जैसे वहाँ दी गई हैं वैसे ही यहाँ भी दे, कुछ भी विचार न करे । और अन्त की महाव्याहृति, पञ्चवारुणी, प्राजापत्य और स्विष्टकृत् की आहुतियों के दे चुकने पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रोक्षणीपात्र में १४ आहुतियों के चुवाए संस्रव को या तो पी लेया सूंघले इसके बाद ब्रह्माकी दक्षिणा का संकल्प करे। यदि केवल समावर्त्तन किया हो या अन्य संस्कारों के साथ करने पर भी अलग अलग वेदी पर हवन करके अलग अलग पूर्ण पात्र की दक्षिणा दी जा चुकी हो तो तो संकल्प में कहे कि-ओं अद्येहानुष्ठिते समावर्त्तनकर्मणि कृताकृतावेक्षणरूपब्रह्मकर्मणः प्रतिष्ठार्थमिदं पूर्णपात्रं सद्रव्यं प्रजापतिदैवतं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ परन्तु यदि चौल से लेकर समावर्त्तन तक के कर्मों की या दो तीन कर्मों की एक ही साथ दक्षिणा देनी हो तब तो उसमें समावर्त्तन से पहले 'चौलोपनयनवेदारम्भ' 'उपनयनवेदारम्भ' या 'वेदारंभ' इनमें से किसी एक पद को जोड़ दे। जितने कर्म एक साथ किये गये हों उनके ही सूचक पद जोड़ दिये जावें यही अभिप्राय है। पूर्णपात्र के ही साथ साथ यथाशक्ति कुछ द्रव्य भी चाहिये। फिर ब्रह्मा "ओं स्वस्ति" यह आशीर्वाद देकर दक्षिणा ले लेवे। इसके बाद आचार्य ब्रह्मा का हाथ पकड़ कर जरा सा आसन से उठा दे। पर, यदि कुश का ब्रह्मा हो तो उसकी ब्रह्मग्रंथि खोल दे और उसके बदले यदि चाहे तो स्वयं 'ओं स्वास्ति' कह दे। अनन्तर प्रणीता पात्र में रक्खे पवित्र से उसका जल अपने सिर पर छिड़कें-ओं सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु ॥ फिर-ओं दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः-मंत्र पढ़कर प्रणीता पात्र को ईशान कोन की ओर औंधा कर दे। तब जिस क्रम से बिछाया था उसी क्रम से उठाकर कुशों में घी लगावे और हाथ में ही रख कर-ओं देवगातुविदो गातुं वित्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देवयज्ञं स्वाहा वातेधाः स्वाहा इदं वाताय नमम-इस मंत्र से अग्नि में होम कर दे। फिर पूर्ववत् गुरुचरणों को पकड़ कर प्रणाम करे और अग्नि से पश्चिम, परन्तु गुरुसे उत्तर, बैठ जावे और उपनयन ३०१ पृष्ठोक्त 'ॐ अग्ने सुश्रवः०' इत्यादि मंत्रों से पाँच लकड़ियों या उपलों के अग्नि में रखने की क्रिया से लेकर त्र्यायुषकरण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तक की सभी क्रियायें ज्यों की त्यों करके उसी तरह, जैसा कि वहां लिखा है, वैश्वानर, वरुण और आचार्य को प्रणाम करे। वहां वैश्वानर (अग्नि) के बाद सूर्य का प्रणाम लिखा है, उसकी जगह यहाँ पर वरुण को प्रणाम करना चाहिये। केवल सूर्य के प्रणाम वाक्य में 'सूर्य' की जगह 'वरुण' पद पढ़ देना होगा। आचार्य का प्रणाम तो वैसा ही होगा। कहीं कहीं लिखा है कि आचार्य के प्रणाम के समय जिस तरह तले ऊपर हाथ करते हैं उसी तरह अग्नि और वरुण आदि के समय भी करना चाहिये और जैसे सूर्य के प्रणाम के समय पश्चिम ओर मुख करना होता है, क्योंकि उस समय सूर्य प्रायः पश्चिम हीं रहते हैं, उसी तरह वरुण के समय भी पश्चिम मुख होना चाहिये। फिर गुरुके—ओं आयुष्मान्भव सौम्य अमुक शर्म्मन्—यह आशीर्वाद देने पर अग्नि से उत्तर पूर्वाग्र कुशों पर जो एक दूसरे से उत्तर आठ घड़े आम आदि के पल्लव डाल कर रक्खे गये हैं उनके पूर्व स्थापित हरे कुशों को पूर्व में अग्र करके बिछा देवे और उन्हीं पर उत्तर मुख होकर ब्रह्मचारी बैठ जावे। घड़ों सहित ब्रह्मचारी के नहाने की जगह चटाई वगैरः से घेरी रहे तो अच्छा। ब्रह्मचारी उन आठों घड़ों के जल को सब से दक्षिण वाले से प्रारम्भ कर क्रमशः अपने सिर पर पल्लव से डालेगा। प्रत्येक घड़े से जल लेने के समय यही एक मंत्र बार बार पढ़ा जाय—ॐ येऽअप्स्व-न्तरग्नयः प्रविष्टा गोह्य उपगोह्यो मयूखो मनोहास्खलो विरुजस्तनूदूषुरिन्द्रियहा तान् विजहामि यो रोचन-स्तमिह गृह्णामि ॥ जल पल्लव से ही लेना चाहिये। किसी किसी ने चिल्लू से लेने को कहा है। परन्तु पल्लव से ही लेने में अधिकांश पद्धतियों की सम्मति है। अतएव यही उचित है। परन्तु सिर पर डालने के मंत्र अलग अलग हैं। पहले पांच घड़ों के जल डालने में नीचे लिखे क्रमशः पांच मंत्र हैं और अन्त के शेष तीन घड़ों का जल पूर्वोक्त मंत्र से ही लेकर चुप चाप सिर पर डाला जाता है। पांच मंत्र—(१) ओं तेन मामभिषिञ्चामि श्रियै यश-से ब्रह्मवर्चसाय ॥ (२) ओं येनश्रियमकृणुतां येनाव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृताश ँ सुराम् । येनाक्ष्याभ्यवषिञ्चता यद्वां तदश्वि
यशः॥ (३) ओं आपोहिष्ठा मयोभुवस्तान ऊर्जेदधात
महेरणायचक्षसे ॥ (४) ओं योवः शिवतमोरसस्त
भाजयतेहनः । उशतीरिव मातरः ॥ (५) ओं तस्मा
गमामवो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपो जनयथाच नः
शेष तीन घड़ों के जलों को विना मंत्र के ही सिर पर डालने के
किसी किसी पद्धति में लिखा है कि हजार छिद्र वाले किसी घड़े
जो पहले से तैयार कराया हो, उन आठों घड़ों का जल डाल कर
से स्नान करे । परन्तु सब पद्धतियों में ऐसा नहीं है । इसलिये
परिपाटी हो करे या यदि न चाहे तो न करे ।

इसके बाद कमर में बँधी मेखला सिर की ओर से निकाल
हुआ यह मंत्र पढ़े-ओं उदुत्तमं वरुण पाशमस्मदवाध
विमध्यम ँ अथाय । अथावयमादित्यव्रते तवानाग
आदित्ये स्याम ॥ फिर दण्ड और मृगचर्म चुपचाप उ
ओर अग्रभाग करके भूमि पर रख कर पहले रक्खी खादी की धो
को पहन उसी का कुछ अंश कन्धे पर गमछे की जगह रख ले
दूसरा गमछा रख ले । सारांश, पहलेका कपड़ा छोड़कर यहाँ न
कपड़ा पहने । अन्त में फिर दूसरी धोती और गमछा पहन
इसे भी छोड़ देना होगा और वही अन्तवाला शरीर पर रह जाय
अस्तु, कपड़ा पहनने पर दो बार आचमन करके दोनों हाथ ऊपर उ
कर सूर्य की स्तुति खड़ा होकर करे-ओं उद्यन्भ्राजभृष्णुरि
मरुद्भिरस्थात्प्रातर्यावभिरस्थादशसानिरासि दशसनिं मा
र्वाविदन्मा गमय । उद्यन्भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरुद्भिरस्था
वा यावभिरस्थाच्छतशानिरासि शतसनिं माकुर्वा विद
गमय । उद्यन्भ्राजभृष्णुरिन्द्रो मरुद्भिरस्थात्सायंयावभि
स्थात्सहस्रसानिरासि सहस्रसनिं मा कुर्वाविदन्मागम
इसके उपरान्त दही या तिल दहिने हाथ की हथेली के मध्य में
कर खावे । हथेली के मध्य को ही सोमतीर्थ कहते हैं । और आच

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करके शिखा के अतिरिक्त शेष जटा या बाल, दाढ़ी, मूंछ और नख आदि कटवावे। यदि उपनयन के बाद तुरन्तही समावर्त्तन करना हो तब तो सिर्फ नख आदिही कटवावे और मूंछ भी यदि हो तो उसे भी बनवाले। सारांश जो हो वही बनवावे। यह किसी का मत है और दूसरा मत है कि चाहे केश हो या न हो, सर्वत्र क्षुरा घुमा देना चाहिये। इसलिये जैसी मर्जी हो कर सकता है। फिर ठंडे जल से स्नान के बाद आचमन करके भीगे कपड़े सेही ब्राह्मण ब्रह्मचारी १२ अंगुल की, क्षत्रिय १० और वैश्य ८ अंगुल की दतवन करे। करने का मंत्र-ओंअन्नाद्याय व्यूहध्वꣳसोमोराजाऽयमागमत्। समे मुखं प्रमार्ज्यते यशसा च भगेन च ॥ फिर मुंह धोकर सुगन्धि पदार्थों और आमले आदि के पीसे उबटन में कड़वा तेल मिलाकर और होसके तो जौ या चने का आटा उसमें और भी मिलाकर उससे शरीर मले और गर्म जल से सिर सहित स्नान कर के चन्दन केसर आदि को हाथों में लगाकर नीचे के मंत्रों से क्रमशः नासिका आदि में छुवावे। (नासिका)-ओं प्राणापानौ मे तर्पय॥ (आँख)-ओं चक्षुर्मे तर्पय॥ (कान)-ओं श्रोत्रं मे तर्पय॥ तब हाथों को धो, अपसव्य होकर और बायें घुटने को भूमि में टेक कर, दक्षिण ओर मुंह करके, भूमि में दक्षिण ओर अग्र करके तीन मोटक (बीच से मोड़े कुश) बिछा कर और हाथ में तीन मोटक, तिल, जल लेकर पितृ तीर्थ से उन्हीं बिछाये कुशों पर इस मंत्र से गिराकर पितृतर्पण करे-ओं पितरः शुन्धध्वम्॥ किसी किसी ने हाथ धोकर उसी जल को यहां गिराने को लिखा है। पर, वह ठीक नहीं मालूम होता। फिर सव्य होकर आचमन करे और शरीरमें चन्दनादि से तिलक लगाकर यह मंत्र पढ़े-ॐ सुचक्षा अहमक्षीभ्यां भूयासꣳसुवर्चा मुखेन।सुश्रुत्कर्णाभ्यां भूयासम्॥ उपरान्त इस मंत्र से खादी की धोती पहने-ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुत्वाय शरदष्टिरस्मि। शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्ययिष्ये॥ धोती के विषय में यह स्पष्ट लिखा है कि खादी की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हो और धोबी की धोई न होवे। फिर आचमन करके एक और जनेऊ पहने
ओं यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापतेर्यत्सहजं पुरस्तात्
आयुष्यमग्र्यं प्रतिमुंच शुभ्रं यज्ञोपवीतं बलमस्तु तेजः
ओं यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनोपनह्यामि
किसी किसी ने लिखा है कि पहला जनेऊ निकाल कर दो जनेऊ एक
साथ पहने, क्योंकि स्नातक को दो और ब्रह्मचारी को एक चाहिये
परन्तु, अन्यों का कहना है कि जब पहला जनेऊ अशुद्ध नहीं हुआ
और न उसके निकालने का कोई कारणहीं आगया है तो क्यों निकाला
जावे ? अतएव एक और पहनने से ही काम होजायगा। यही ठीक
है। खासकर, जब उपनयन के साथही समावर्त्तन होता हो तब
पहले को निकालने का कोई कारण नहीं है। इसके बाद इस मंत्र
गमछा या चदरा ओढ़े-ॐ यशसामाद्यावापृथिवी यशसेन्द्र
बृहस्पती। यशो भगश्च मा विन्दद्यशो मा प्रतिपद्यताम्
यदि एक ही धोती हो तो उसे ही पहले आधी पहन कर इसी में
से आधी ओढ़ले। तब दो बार आचमन करके फूल की माला
हाथ में लेकर पढ़े—ॐ या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै
धायै कामायेन्द्रियाय। ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा
भगेन च॥ और इस मंत्र से उसे गले में डाले-ओं यद्यशो
प्सरसामिन्द्रश्चकार विपुलं पृथु। तेन संग्रथिताः सुमनस
बध्नामियशोमयि॥ पश्चात् सिर पर पगड़ी बांधे-ॐ युवा सुवास
परिवीत आगात् सउश्रेयान्भवति जायमानः। तं धीराः
कवय उन्नयन्ति स्वाध्यो मनसा देवयन्तः॥ और आगे
मंत्र को दो बार पढ़कर क्रम से दहिने तथा बायें कान में कुण्डल
(बाली) पहने-ओं अलंकरणमसि भूयोऽलंकरणं भूयात्
इसके बाद इस मंत्र को भी दोबार पढ़कर पहले बांई पीछे दहिनी
आँख में अंजन या सुरमा लगावे—ओं वृत्रस्यासि कनीन
श्चक्षुर्दा असि चक्षुर्मेदेहि॥ फिर हाथ में आईना लेकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंत्र से उसमें मुँह देखे-ओं रोचिष्णुरासि ॥ इसके पश्चात् ओं बृहस्पतेश्छादिरासि पाप्मनो मामन्तर्धेहि—इस मन्त्र से छाता लगाकर—ओं प्रतिष्ठे स्थो विश्वतो मा पातम्—मन्त्र से दोनों पांव में एक ही साथ जूते पहने। अन्त में बांसकी लाठी या दण्ड लेने का मन्त्र-ओं विश्वाभ्यो मानाष्ट्राभ्यस्परिपाहि सर्वतः ॥

यहाँ यह समझलेना चाहिये कि स्नातक के दन्तधावन आदि करने में जिन मंत्रों का प्रयोग हुआ है वह प्रतिदिन आज के बाद पढ़े जायँगे। परन्तु दण्ड, वस्त्र, छाता और जूता जब जब नये पहनेंगे तब तब पूर्वोक्त मंत्रों से ही। एक बात यह भी ध्यान देने योग्य है कि प्रधान संकल्प से लेकर मातृकापूजा, नान्दीश्राद्धादि जो भी ऐसी क्रियायें हैं वे सब की सब बर्हिः होम पर्यन्त आचार्य के करने की हैं। ब्रह्मचारी तो उसके बाद के अग्निपरिसमूहन से लेकर दण्ड धारण तक की क्रियाओं को ही करता है।

इसके अनन्तर गुरु स्नातक के नियमों और धर्मों का उसे उपदेश करे। वे धर्म यह हैं-न तो स्वयं शौक से नाचे, गावे, बजावे और न दूसरों के नाच गाने आदि में जावे। यदि कोई आपत्ति न हो तो रात में कहीं न आवेजाय। दौड़े न जब तक कि कोई ऐसी ही आवश्यकता न आपड़े। कूएं में झांके न। यदि गौ अपने बच्चे को पिलाती हो तो उसे देखकर उसके मालिक से कभी न कहे। बोये खेत में या कुशआदि वाली भूमि में मल मूत्र न त्यागे। न पेड़ पर चढ़े और न फल तोड़े। बुरे रास्ते से न जावे। नंगा न नहावे। सूर्योदय और सूर्यास्त के समय (सन्धि में) न तो सोवे और न निकलते या डूबते सूर्य को देखे। जल में भी सूर्य की छाया न देखे और न अपनी छाया ही देखे। विना आपत्ति के पानी बरसते समय कहीं न आवे जाय। गाली गलौज न करे और न दिल्लगी करे। विशेष ऊंची नीची भूमि को पार न करे। पागल, पुरुष के आकारवाली, हिजड़ी और जिसके शरीर पर रोम न हों ऐसी स्त्री से संभोग न करे इत्यादि। यदि और कोई नियम न हो सके तो नियम के रूप में केवल सत्य बोलने की ही प्रतिज्ञा करावे। इसके बाद स्नातक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ब्रह्मचारी) गुरु को गौ दक्षिणा देवे और यदि गौ न दे सके तो यथाशक्ति उसका निष्क्रय द्रव्य दे । पहले विधिवत् चन्दन, पुष्प माला आदि से गुरु की पूजा और आरती करके पूर्ववत् प्रणाम करे । तब गौ की पूंछ छू कर या निष्क्रय द्रव्य हाथ में लेकर और उसी में कुश, तिल, अक्षत और जल आदि लेकर यह संकल्प करे-

ओं अद्येहामुकशर्माहं मम स्नातकत्वसिद्धयेऽनुष्ठितस्य समावर्त्तनकर्मणः सांगतासिद्धये इमां गां तन्निष्क्रयीभूतं यथाशक्तिद्रव्यं वा वररूपेण आचार्याय तुभ्यं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर पूर्णाहुति का संकल्प गुरु करे । यदि चार कर्मों (चूड़ा से समावर्त्तन तक) को एक साथ करने पर भी पूर्णाहुति अन्त में एक ही बार की जावे और संकल्प भी एक ही बार शुरू में ही किया गया हो, एवं बीच बीच में पूर्णाहुति न की गई हो तो ऐसा संकल्प करे-**ॐ अद्य अमुकशर्मणश्चूडोपनयनवेदारंभसमावर्तनकर्मणां न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं सर्वाभ्युदयप्राप्तये च मृडनामाग्नौ पूर्णाहुतिमहं करिष्ये** हमारी राय में सब की पूर्णाहुति एक ही बार होनी चाहिये । यदि दो कर्म साथ करे तो दो की या तीन करे तो तीन की ही करे और उन्हीं का नाम संकल्प में पढ़दे । परन्तु यदि अलग अलग कुण्ड या वेदी रक्खी गई हो; एक वेदी या कुण्ड होने पर भी पृथक् पृथक् पूर्णाहुति की गई हो या केवल समावर्त्तन कर्म हीं किया गया हो तो इस संकल्प में भी केवल 'समावर्त्तन' पढ़ना चाहिये । और 'चूडोपनयनवेदारंभ' शब्द निकाल देना चाहिये । इसके बाद मृड नामक अग्नि की-**ॐ भूर्भुवःस्वः मृडाग्नयेनमः**-इस नाम मंत्र से **आवाहयामि, प्रतिष्ठापयामि**-इत्यादि आवाहन, प्रतिष्ठा करके पञ्चोपचार पूजा करे, स्रुक् या स्रुव में हीं घी के बर्तन (आज्य स्थाली) से थोड़ा थोड़ा करके १२ बार घी डाले और उसके अन्दर रक्खे घी से पूर्ण नारियल, पुष्प, अक्षत, पान, सुपारी आदि लाल खद्दर से ढंक कर और स्रुव को हाथ से पकड़ कर खड़ा हो फिर ब्रह्मचारी के दहिने हाथ से स्रुव के छूने पर यह मन्त्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर घी की धारा अग्नि में छोड़ता हुआ सभी वस्तुओं को छोड़ दे— ॐ मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम्। कवि ँ सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाःस्वाहा इदमग्नये वैश्वानरायनमम॥ फिर बैठकर त्र्यायुष करे। स्रुवसे भस्म लेकर दहिने हाथ की अनामिका से लगावे-(ललाट)-ॐ त्र्यायुषंजमदग्नेः। (गला)-ॐ कश्यपस्यत्र्यायुषम् (दहिनी भुजा की जड़)-ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्। (हृदय)-ॐ तन्नोअस्तुत्र्यायुषम्॥ स्नातक को भी इसी तरह लगावे। इसबार मन्त्र पढ़ने के विषय में २९० पृष्ठ देखले। वहाँ विशेष विचार किया है। इसके बाद कर्म कराने वाले आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करने से पूर्व चौलाद समस्त अनुष्ठित कर्मों की की न्यूनता की पूर्त्ति के लिये गोदान का संकल्प करे-ओं अद्येह चौलोपनयनवेदारम्भसमावर्त्तनकर्मणां न्यूनतादिपूर्त्यर्थमिमां गां तन्निष्क्रयं यथाशक्ति द्रव्यं वा यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ओं तत्सन्नमम॥ यदि एक, दो, यातीन हीं कर्म हों तो उन्हीं का नाम इस संकल्प में ले। प्रायः हरेक यज्ञ में इसको करना चाहिये। इसे चाहे जिसे दे सकते हैं। तब कर्म करानेवाले आचार्य की पूजा करके उसकी दक्षिणा का संकल्प द्रव्य, कुश, जलादि लेकर करे-ओं अद्येह चौलोपनयनवेदारम्भसमावर्त्तनकर्मणामनुष्ठितानां सांगफलाप्तये इमां यथाशक्तिदक्षिणामाचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ओं तत्सन्नमम॥ यदि चौल आदि में अलग अलग दक्षिणा दी जा चुकी हो तब केवल-समावर्त्तनकर्मणोऽनुष्ठितस्य- यही पढ़े। इसी तरह यदि तीन हीं कर्म एक साथ किये गये हों तो उन तीन का ही नाम ले और यदि दो ही साथ किये गये हों तो उन दो को ही कह कर उसके बाद- कर्मणोरनुष्ठितयोः- कहे-कर्मणामनुष्ठितानां-यह न पढ़े। फिर भूयसी दक्षिणा का भी संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करे-ओं अद्येह चौलोपनयनवेदारम्भसमावर्त्तनकर्मण
सांगतार्थं तन्न्यूनतापूर्तये चेमां यथाशक्ति भूयसीं दक्षि
णां नानानामगोत्रेभ्यो जनेभ्यः सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम।
भूयसी दक्षिणा तो सभी कर्म के अन्त में एक ही बार दीजाना
चाहिये। परन्तु यदि अलग अलग दी गई हो तो इसके संकल्प को भी
ठीक उसी तरह पढ़ना चाहिये और उन्हीं शब्दों के साथ जिन्हें आचार्य
आदि की दक्षिणा के बारे में कहा है । अर्थात् जितने कर्मों की यह
दक्षिणा एक साथ हो उन्हीं को साथ पढ़े। यदि अकेले समावर्त्तन की
हो तो उसे ही पढ़े । एक में 'कर्मणः' दो में 'कर्मणोः' और इससे
अधिक होने पर 'कर्मणां' कहे। परन्तु यदि ८-१७ पृष्ठोक्त रीतिसे मण्डप
निर्माण और उसकी पूजा करके उसके प्रत्येक द्वारों पर जापक और
द्वारपाल रक्खे गये हों (८३), तो उन्हें भी दक्षिणा देकर उसके बाद
भूयसीदक्षिणा का संकल्प करे। द्वारपाल और जापक की दक्षिणा का
एक ही साथ संकल्प इस प्रकार करे-ॐ अद्येहानुष्ठितकर्मसांग
तार्थं निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं च कृतनानाविधपाठजपा
दिप्रतिष्ठार्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो
भवद्भ्यो यथाभागं विभज्य संप्रददे ॐ तत्सन्नमम
फिर अन्त में ब्राह्मणभोजन का संकल्प करे-ॐअद्येहानुष्ठित
कर्मणः सांगतासिद्ध्यर्थं तत्प्रतिष्ठार्थं च दश यथाशक्ति
ब्राह्मणान्भोजयिष्ये॥ इसके उपरान्त अभिषेक, आशीर्वाद और
विसर्जन की क्रिया २२५ पृष्ठोक्त रीति से करे और अन्त में ब्राह्मण
और भाई बन्धुओं तथा अन्यों को खिला कर स्वयं भोजन करे।

फिर चौथे दिन या जब कंकण छोड़ना हो तभी जिसका उपनयन
हुआहो उसकी माता तथा अन्य सौभाग्यवती स्त्रियां किसी बांस की
टोकरी या बर्त्तन में मातृकास्थापन के अक्षत आदि और चौल के केश
तथा अन्य पूजा की सामग्री रख कर ऊपर से शुद्ध लाल खद्दर से
उसे ढंककर दासी के सिरपर रक्खें और बाजे गाजे के साथ किसी
नदी या जलाशय के किनारे जाकर टोकरी को शुद्ध स्थान में
स्थापित करें। फिर किनारे के वृक्ष, ऊँचे टीले, या भूमि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चन्दन या किसी और चीज से जलमातृका के चिन्ह बनाकर-(१) ॐ भूर्भुवः स्वः मत्स्यैनमः आवाहयामि । (२) ॐ भूर्भुवः स्वः कूर्म्यै नमः आवाहयामि । (३) ॐ भूर्भुवः स्वः वाराह्यैनमः आवाहयामि । (४) ॐ भूर्भुवः स्वः कुक्कुट्यैनमः आवाहयामि । (५) ॐ भूर्भुवः स्वः दर्दुर्यैनमः आवाहयामि । (६) ॐ भूर्भुवः स्वः जलूक्यै नमः आवाहयामि-(७) ॐ भूर्भुवः स्वः सोमायै नमः आवाहयामि-इन नाम मन्त्रों से अक्षत डाल डाल कर अगल अलग आवाहन करें और एक ही बार हाथ में अक्षत और फूल या दही अक्षत लेकर-ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तजलमातृभ्यो नमः प्रतिष्ठापयामि-इस मंत्र से प्रतिष्ठा करके-ॐ भूर्भुवः स्वः सप्तजलमातृभ्यो गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीतिसे पञ्चोपचार या षोडशोपचार पूजा करके आचमन करे और यदि कंकण बांधा गया हो तो उस कंकण को-ॐ कंकणं मोचयाम्यद्य रक्षोघ्नं रक्षणं मम । मयि रक्षां स्थिरां कृत्वा स्वस्थानं गच्छ कंकण-इस मंत्र से खोलकर उसे और चौल के केशको जलाशय के किनारे गाड़ दें या जल में फेंक दें । फिर वहां रहने वाले मंगन या औरों को मिठाई वगैरः बांट कर किसी घड़े में जल भरें और उसे आगे आगे करके गाजे बाजे के साथ घर आवें । कहीं कहीं ऐसी भी चाल है कि ग्राम के अनेक देवस्थानों पर जा जा कर होम करके घर में आते हैं और कलश के निकट होम करके कंकण छोड़ते हैं । परन्तु यह सब पहले करके पीछे जलाशय के ही किनारे जाना और वहीं कंकण छोड़कर रख देना चाहिये । कहीं कहीं ऐसा लिखा मिलता है कि विवाह में आंगन में ही कंकण छोड़ते हैं । मगर उसके बाद फिर जलाशय के किनारे जाते हैं और जलाशय के किनारे या तो उसे गाड़ देते या जल में फेंक देते हैं । न कि घर में रखते हैं या घर के किसी आदमी को बांध देते हैं, जैसी रीति कहीं कहीं पाई जाती है कि माता के हाथ में या ऐसे ही किसी के हाथ में बांध कर रख छोड़ते हैं और कम से कम एक वर्ष उसे बचाते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह ठीक नहीं है । कंकण तो माता के भी हाथ में शुरू में ही बांध जाता है और अन्त में वह भी खोल दिया जाता है । इति यजुर्वेदि समावर्त्तन ।

१—सामवेदीय चूडाकर्म ।

पहले २७६ से २८५ पृष्ठ तक जो दोनों वेदों के लिये साधारण विधि कही है उसके अनुसार सभी क्रियायें प्रधान संकल्प, आचार्य वरण, गणपतिगौरीपूजन, पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, वसोर्धारापूजा नान्दीश्राद्ध, कलशस्थापन, ग्रहादिपूजन, स्तम्भारोपण, तैलाभ्यंग और जूटिका बन्धन आदि करके विशेष क्रिया शुरू करना चाहिये। इन सब के करने की विधि उन्हीं पृष्ठों से विदित होगी । जैसा वहाँ लिखागया है या तो भरसक उपनयन से पहलेही दिन यह क्रियायें कर ली जावें या यदि ऐसा न होसके तो उपनयन केही दिन प्रातःकाल ही आरंभ कर दोपहर से पहले ही चौल का कार्य शुरू करने के लिये उससे प्रथम इन सबों से फुर्सत होजावे । हां, सामवेदियों के जूटिकाबन्धन में विशेषता यही होगी कि शिखा के अतिरिक्त उसके दहिने, बायें और पीछे यह तीनहीं जूटिकायें रहेंगी और उन्हीं का बन्धन होगा न कि एक एक की तीन तीन करके नौ बना डालेंगे । अतएव उन्हें यहाँ चारही पोटलियां जूटिकाबन्धन के लिये बनेंगी और वही तीन जूटिका एवं एक शिखा इन्हीं चार में बाँधी जायँगी, नकि यजुर्वेदि की तरह दस पोटलियाँ । वहाँ यह बात लिखी भी है। बायें दहिने जूटिका को कपुष्णिका और पीछे वाली को कपुच्छल कहते हैं । यह सब क्रियायें चौल केही दिन हुई हों तब तो १९५ पृष्ठोक्त रीति इनके बाद पंचभूसंस्कार पूर्वक अग्नि की स्थापना करेंगे । परन्तु यदि पहले दिन हुई हों तो दूसरे दिन कर्त्ता पिता और पत्नी स्नान कर अहत वस्त्र धारण करें और नित्य क्रिया के उपरान्त तिल पवित्रादि धारण करके पूर्व मुख अग्निस्थान से पश्चिम बैठकर फिर आचमन, प्राणायाम करके कर्मपात्र की स्थापना कर उसे कुशों से ढ़ांक दे और कर्मदीपकका पूजन ७९ पृष्ठोक्त रीति से कर डाले । इसके बाद यदि पहले ग्रहहोमादि के लिये अग्नि की स्थापना और कुश कंडिका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न की गई हो, या चौल के लिये अलग वेदी होतो १९५ पृष्ठोक्त रीति से पंचभूसंस्कारपूर्वक सभ्यनामक अग्नि की स्थापना और पूजा आदि करे। उपरान्त १९८ पृष्ठोक्त रीति से कुशकण्डिका की सम्पूर्ण क्रियायें व्याहृति होम से पूर्व तक की कर डाले । यहाँ केवल दो बातों का ध्यान रक्खे । एक तो पदार्थों के स्थापन के समय ही दक्षिणार्थ पूर्ण-पात्र और द्रव्य के अग्नि से उत्तर रख चुकने पर अग्नि से दक्षिण चौल के विशेष पदार्थों को उत्तर ओर अग्रवाले कुशों पर रखकर आगे की क्रिया करे । वह पदार्थ यह हैं–सात सात कुशों की धागे से बँधी तीन पूलियां, अर्थात् २१ कुश तीन जगह बाँधकर अलग अलग ७–७, गर्म जल से भरा कोई काँसेका वर्त्तन, जिसमें ताम्बा लगा हो ऐसा क्षुरा या दर्पण, और क्षुरा हाथमें लिये नाऊ। इतनी चीजें अग्नि से दक्षिण क्रमशः पूर्व पूर्व स्थापित कीजावें और आँडू बैल का गोबर और तिल मिला भात उत्तर ओर एक दूसरे से पूर्व रक्खा जावे । यह भात शुरू मेंहीं उसी जगह बना ले । अग्नि से पूर्व ओर एक पात्र में जौ और धान या चावल और दूसरेमें उड़द और तिल मिलाकर पूर्व पूर्व रक्खे । मैथिल पद्धतियों में कुश और गर्म जल वगैरः को भी उत्तर ओर रखने को लिखा है। परन्तु यह ठीक नहीं है । गोभिल ने दक्षिण कहा है । २१ कुशों का अर्थ है १०–१० या १२–१२ अंगुल के कुशों के अग्र भाग के टुकड़े जिन्हें पिंजूली कहते हैं। रखने के समय इनका अग्रभाग उत्तर ओर रहेगा । दूसरी बात यह ध्यान रखने की है कि जब घी को गर्म करके उसका उत्पवन कर चुकेंगे और उसे उत्तर ओर रक्खेंगे उसी समय बच्चे को थोड़ासा गर्म जल से स्नान कराके और अहत (३८) वस्त्र से ढंककर माता गोद में लिये अग्नि से पश्चिम ओर पिता से उत्तर पूर्व मुख बैठजायगी । माता के आसन पर उत्तर ओर अग्र करके कुश रखदिये जावें । इसके बाद शेष क्रिया करके कुशकण्डिका की पूर्त्ति कर चुकने पर २०३ पृष्ठोक्त चार व्याहृति होम भी कर लेंगे । यदि पहले सेही ग्रहहोमादि के लिये कुशकण्डिका हुई रहेगी तो केवल पूर्वोक्त विशेष पदार्थों को रख और माता को बैठाकर व्याहृति होम करेंगे । इसके उपरान्त माता के पीछे पिता या कर्त्ता यजमान खड़ा हो जावे । यदि माता न हो तो माताकी जगह लड़काही केवल बैठाया जायगा और उसी के पीछे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यजमान आचार्य खड़ा हो और सूर्य का ध्यान मनसे करके नाऊ
ओर देखकर यह मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सविता देवता
जपे विनियोगः । (मैथिल पद्धति में-चूडाकरणे नापि
प्रेक्षणे विनियोगः-ऐसा लिखा है । इसी तरह आगे भी
परन्तु सूत्र का स्वरस है कि केवल जप किया जाता है । इसीलिये
विनियोग ही ठीक है) ॐ आयमगात्सविता क्षुरेण ॥ पश्चा
गर्म जल के पात्र को देखकर वायुका मनसे चिन्तन करता हु
यह मन्त्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वायुर्देवता जपे विनियोग
ॐ उष्णेन वाय उदकेनैधि ॥ तब पूर्व मुख होकर गर्म जल ले
बालक की दक्षिणवाली जूटिका को उसीसे भिगोता हुआ मंत्र प
प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरापोदेवता क्लेदने विनियोगः ॥ ॐ आ
उन्दन्तुजीवसे ॥ फिर ताम्बे का क्षुरा या दर्पण देखकर मंत्र पढ़े-ॐ
जापतिर्ऋषिर्यजुर्विष्णोर्दंष्ट्रोदेवता प्रेक्षणेविनियोगः ।(मैथि
पद्धति का "क्षुरोदेवता" ठीक नहीं है । क्योंकि दर्पण को भी इसी
देखते हैं) ॐ विष्णोर्द ँ ष्ट्रोसि ॥ तब सात कुशों की पूली ले
उसका अग्रभाग दक्षिण जूटिका में लगावे और मन्त्र पढ़े-प्रजापा
र्ऋषिर्यजुरोषधिर्देवता सप्तपिञ्जलीस्थापने विनियोगः
ॐ ओषधेत्रायस्वैनम् ॥ पुनः बायें हाथ से कुशों सहित दक्षि
जूटिका पकड़कर दहिने हाथ में क्षुरा या दर्पण लेकर उस जूटि
में इस मंत्र से लगावे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः स्वधितिर्देवता क्षु
दर्शयोः स्थापने विनियोगः । ॐ स्वधिते मनँ हि
सीः ॥ और अगले मन्त्र से क्षुरा या दर्पण को पूर्व ओर इस
तीन बार हटावे जिसमें बाल न कटे । मैथिल पद्धति में जूटिका पर क्षु
को लिखा है । एकबार तो इस मंत्र से हटावे और दोबार चुपचा
प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः पूषा देवता प्रोहणे विनियोगः ॥
येन पूषा बृहस्पतेर्वायोरिन्द्रस्य चावपत् । तेन ते व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मि ब्रह्मणा जीवातवे जीवनाय दीर्घायुष्ट्वाय वर्चसे ॥ इसके बाद नाऊ के हाथ से लोहे का क्षुरा लेकर उसी से कुशों के अग्रभाग सहित जूटिका को चुपचाप काटकर उत्तर ओर वाले बैल के गोबर पर चुपचापही रखदे । कसी किसी ने लिखा है कि- ॐ भूर्भुवः स्वः-पढ़कर काटे और रक्खे। इसके बाद हाथ धो कर जिस तरह दक्षिण की जूटिका (कपुष्णिका) को काटा है और प्रारम्भ से जो जो क्रियायें जिन जिन मंत्रों से की हैं, ठीक उसीतरह पश्चिम जूटिका (कपुच्छल) और उत्तर जूटिका (कपुष्णिका) की भी वे सब क्रियायें उन्हीं उन्हीं मंत्रों से करके उसी तरह काटे और हरवार हाथ धो डाले। यह स्मरण रखना होगा कि नाऊ या गर्म जल को देखने की क्रिया जो सब से पहले की गई थी अब बार बार न की जायगी । किन्तु गर्म जलसे भिगोने की क्रिया से लेकर बाद की सभी क्रियायें होंगी। इसके उपरान्त यजमान दोनों हाथों को फैलाकर बालक का सिर पकड़े हुये मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः प्रजापतिर्देवता (मैथिल पद्धति के अनुसार-उष्णिक् छन्दो जमदग्न्यादयो देवता) जपे विनियोगः । ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषमगस्त्यस्य त्र्यायुषं यद्देवानांत्र्यायुषं तत्ते अस्तु त्र्यायुषम् ॥ मैथिल पद्धति में-अगस्त्यस्य त्र्यायुषम्-नहीं लिखा है । वह ठीक नहीं है । इसके बाद अग्नि से उत्तर लेजाकर बालक का केश नाऊ से कटवा दिया जावे । केवल शिखा छोड़ दी जावे । जैसी यजुर्वेदियों की रीति है कि माता उन बालों को नये वस्त्र में लेकर उसी गोबर पर, जिसपर जूटिकायें काट कर रक्खी थीं, रखदेती है, यदि कोई आपत्ति न हो या दूसरी रीति वहां प्रचलित न हो तो सामवेदियों के यहाँ भी वही कियाजावे। इसे कहीं कहीं लापर लेना भी कहते हैं । इसके बाद बालकको नहला और खद्दर पहनाकर यजमान अपने पास रखले। फिर उत्तर तंत्र (उत्तर अंग या शेष कर्म) नामकरण प्रकरण में कहे गये २५३ आदि पृष्ठोक्त प्रकार से पूरा करना चाहिये । परन्तु यहाँ एक बात विशेष समझनी चाहिये कि २५३ पृष्ठ में जो तीन या चार व्याहृति होम के बाद अग्नि में समिध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

डालकर फिर चार व्याहृति होम लिखा है और जिसे प्रायश्चित्त हो
सामवेदी मानते हैं उसकी जगह कहीं कहीं शाट्यायन होम करने
रीति है । अतएव जैसा कि मैथिल पद्धतियों में लिखा भी है उसे
लिख देते हैं।पहले तीन या चार व्याहृतिहोम २०३ पृष्ठोक्त रीति से
आगे लिखी रीति से करके अग्निमें एक समिध घी लगाकर डाले
उसके बाद फिर व्याहृति होम की जगह शाट्यायनहोम का संकल्प

ॐ अद्येहास्य कर्मणः समयाद्यतिक्रमोपजातवैगुण्य
समाधानार्थं शाट्यायनहोममहं करिष्ये । फिर घी
आहुति देवे-व्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वा
भृगव ऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहत्यश्छन्दां
अग्निवायुसूर्यप्रजापतयो देवता आज्यहोमे विनियोग
(१) ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२)
भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ (३) ॐ स्वः स्वा
इदं सूर्याय नमम ॥ (४) ॐ भूर्भुवः स्वः स्वा
इदं प्रजापतये नमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्दे
प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः ॥ (५) ॐ पाहिनो अ
एवसे स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ प्रजापतिर्ऋषि
र्विश्वेदेवा देवताः प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः ॥ (
ॐ पाहिनो विश्ववेदसे स्वाहा इदं विश्वेभ्योदेवे
नमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्विश्वेदेवा देवताः प्रायश्चि
होमे विनियोगः ॥ (७) ॐ यज्ञंपाहि विभावसो स्वा
इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः
क्रतुर्देवता प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः ॥ (८) ॐ सर्वं
शतक्रतो स्वाहा इदं शतक्रतवेनमम ॥ प्रजापतिर्ऋषि
यत्रीछन्दोऽग्निर्देवताप्रायश्चित्तहोमेविनियोगः ॥ (
ॐ पुनरूर्जानिवर्त्तस्व पुनरग्नइषायुषा । पुनर्नः पाहि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

श्वतः स्वाहा इदमग्नयेनमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्री छन्दोऽग्निर्देवता प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः । (१०) ॐ सह रय्या निवर्त्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया । विश्वप्स्निया विश्वतस्परिस्वाहा इदमग्नयेनमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽग्निर्देवता प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः । (११) ॐ आज्ञातं यदनाज्ञातं यज्ञस्य क्रियते मिथु । अग्ने तदस्य कल्पय त्वं हि वेत्थ यथायथं स्वाहा इदमग्नये नमम॥ प्रजापतिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दः प्रजापतिर्देवता प्रायश्चित्तहोमेविनियोगः । (१२) प्रजापतेनत्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव । यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयꣳस्याम पतयो रयीणां स्वाहा इदं प्रजापतयेनमम ॥ (१३) ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्यायनमम ॥ (१४) ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमायनमम ॥ (१५) ॐ कुजाय स्वाहा इदं० ॥ (१६) ॐ बुधाय स्वाहा इदं० ॥ (१७) ॐ बृहस्पतये स्वाहा० ॥ (१८) ॐ शुक्राय स्वाहा० ॥ (१९) ॐ शनैश्चराय स्वाहा० ॥ (२०) ॐ राहवे स्वाहा० ॥ (२१) ओं केतुभ्यः स्वाहा इदं केतुभ्यो नमम ॥ प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहत्यश्छन्दाँसि अग्निवायुसूर्यप्रजापतयो देवता व्याहृतिहोमे विनियोगः । (२२) ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२३) ओं भुवः स्वाहा इदं वायवेनमम ॥ (२४) ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ (२५) ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥

यही शाट्यायन होम कहाता है। किसी किसी पद्धति में (११) से (२१) तक की आहुतियां नहीं दीगई हैं। अतः जहां जैसी व्यवस्था हो समझ लेवे। इसके बाद कहीं कहीं एक समिध फिर अग्नि में डाल कर २०१ पृष्ठोक्त 'देव सवितः' इत्यादि पर्युक्षण और उसके बाद अञ्जली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सेचन करके (२५३) बर्हिः होम वसेही करते हैं। उसके बाद यद्यपि कर्म में पूर्णाहुति का निषेध है फिर भी कहीं कहीं पूर्णाहुति भी लिखी है। वह इस तरह है। स्रुव में घृत, फल, पुष्प, घृतपूर्ण नारियल अक्षतादि लेकर नारियल को लाल वस्त्र से ढंककर पूर्णाहुति करे। बालक उस स्रुव को स्पर्श किये रहे। विनियोग के सहित मंत्र यह है प्रजापतिर्ऋषिर्विराड् गायत्री छन्द इन्द्रो देवता यशस्कामस्य यजनीयप्रयोगे विनियोगः। ॐ पूर्णहोमं यशसे जुहोमि योऽस्मै जुहोति वरमस्मै ददाति वरं वृणे यशसा भाति लोके स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ इस मंत्र से पूर्णाहुति करके फिर पूर्वोक्त (२५४) वसुहोम की धारा अग्नि में देकर ब्रह्मा को पूर्णपात्र देते हैं। यह बात वहां भी लिखी है। वह रीति दूसरी है नहीं। वही रीति है। दक्षिणा के बाद वहां त्र्यायुष करने को लिखा है। उसकी विधि यह है कि स्रुव में भस्म लगाकर उसपर जल छिड़के और दहिने हाथ की अनामिका के अग्र भाग से उसे उठा उठाकर क्रम से अपने अंगों में आगे के मंत्रों से स्वयं लगावे और बालक को भी लगावे। १–(हृदय में) ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः। २–(दक्षिण बाहु के मूल में)-ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्। ३–(वामबाहु के मूल में) ॐ अगस्त्यस्य त्र्यायुषम्। ४–(ललाट में) ॐ यद्देवानां त्र्यायुषन्तन्मे अस्तु त्र्यायुषम् ॥ जब बालक को लगावे तो 'तन्मे' जो अन्त में है उसकी जगह 'तत्ते' पढ़े। और सब ज्यों का त्यों रहेगा। इसके बाद अग्नि की प्रदक्षिणा और जलपात्र या चमस में धोकर दूसरा जल रखके यह काम पूर्ववत् करके और गोदान का संकल्प भी करके शेष कर्म उसी तरह करे (२५४)। गोदान का संकल्प यह है-ॐ अद्य कृतैतत्कर्मणः प्रतिष्ठार्थमिमां गां रुद्रदैवतां तन्निष्क्रयीभूतं यथाशक्ति द्रव्यं वा यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ शेष सभी क्रियायें पूर्ववत् करे। वामदेव्य सामगान के लिये वहां हीं तीन मंत्र दिये गये हैं। कहीं कहीं और भी मंत्र लिखे हैं। वे ये हैं-ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥ १ ॥ ॐ प्राजापत्यं वै वामदेव्यं प्रजापत्यवेव प्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥ २ ॥ ओं पशवो वै वामदेव्यं पशुष्वेव प्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥ ३ ॥ ॐ शान्तिर्वै वामदेव्यं शान्तावेव प्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥४॥

शेष क्रियायें करके कर्म समाप्त करे।

यह सब इसलिये लिखा है कि लोग पूर्णाहुति प्रत्येक कर्म में करते हैं और यदि चौल के साथ उपनयन आदि भी होता हो तो भी पूर्णाहुति प्रत्येक वार करते हैं। परन्तु हमारा मन्तव्य है कि पूर्णाहुति और वहिः होम तथा पूर्णपात्र दानादि समस्त क्रियायें, जिन्हें उत्तर तंत्र या उत्तर अंग कहते हैं, अन्त में ही एकही साथ कीजावें और सभी दक्षिणा ब्रह्मभोज आदि भी अन्त में हीं हों। गोदान, वामदेव्य गान और शाट्यायन होम आदि सभी क्रियायें एकही वार करने की हैं और वह अन्त में ही की जावें। इसीलिये हम सिद्धान्तरूपसे समावर्तन के साथ ही लिखेंगे। इति सामवेदी चौल।

२—सामवेदीय उपनयन।

चौलके वाद सामवेदीय उपनयन का प्रसंग आता है। इसके लग्न, मुहूर्त्तादि ग्रन्थान्त में लिखे हैं। यदि चौल के साथही हो तो कर्मपात्र (जलपात्र) आदि की आवश्यकता है ही नहीं। सभी पहले सेही ठीक है और न प्रधान संकल्प की ही आवश्यकता है। फिर कर्म कराने वाले आचार्य के वरण या गणपतिपूजन से लेकर कलशस्थापन और ग्रहादिपूजन तक की तो बात ही क्या कहना? कारण, ये सभी एक ही वार आरम्भ में ही हो चुके हैं। हां, यदि गणपतिपूजन आदि पूर्व कर्म (पूर्वाङ्ग) पहले दिन हुए हों तो कर्मदीपक जलाने और कर्मपात्र (जलपात्र) सम्पादन की आवश्यकता होगी। परन्तु यदि उपनयन स्वतंत्ररूप से किया जाता हो, न कि चौल के साथ तब तो संकल्प से लेकर ग्रहपूजनान्त सभी कर्म करने हीं होंगे। अतएव कर्त्ता पिता या पितामहादि प्रातःस्नान, नित्यकर्मादि करके कर्म-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूमि में अहत वस्त्र, तिलक और पवित्रादि धारण कर पूर्वमुख
जावे; आचमन, प्राणायाम करके कर्मदीप जला उसका पू
कर पूर्वमुख रख दें और कर्मपात्र में गन्धादि सहित
रख कुश से ढंक देवे। फिर यदि उपनयन कराने के अधिकार
सम्पादन के लिये पिता आदि रूप आचार्य ने तीन कृच्छ्र और
हजार गायत्री जप कर लिया हो और बालक से भी तीन कृच्छ्र
कर उसके लिये भी स्वयं या दूसरे ब्राह्मण से गायत्री जप करा
हो तब तो कोई बात ही नहीं। परन्तु दुर्बलता या और कारणों
पहले न कराया हो और न स्वयं कर सकता हो, तो उसी
तीन कृच्छ्र की जगह तीन गोदान और गायत्री जप का संकल्प
के अन्य ब्राह्मणों से करा डाले। आचार्य का संकल्प-ॐ अद्

ममोपनेतृत्वाधिकारसिद्धयेऽस्य कुमारस्यकामचारका
वादकामभक्षणादिदोषापनुत्तये च प्रत्येकं कृच्छ्रत्रयप्रत
न्नायगोत्रयं तन्निष्क्रयीभूतं यथाशक्ति द्रव्यंवा य
नामगोत्राय ब्राह्मणाय दातुमुत्सृजे प्रत्येकंद्वादशसह
गायत्रीजपं च ब्राह्मणद्वारा कारयिष्ये (स्वयं करिष्ये)

इसके बाद प्रधान संकल्प करे-ॐ अद्येहास्य माणवकस्य

दाध्ययनाद्यधिकारासिद्धये उपनयनं करिष्ये तदंगतया
गणपतिपूजनादिनवग्रहादिपूजनान्तं कर्मजातं करिष्ये

फिर १०३ आदि पृष्ठोक्त रीति से गणपतिपूजा से लेकर नवग्रह
पर्यन्त सभी कर्म कर डाले। इसके अतिरिक्त २७८ पृष्ठोक्त स्तम्भारो
तैलाभ्यंगादि कर्म भी दोपहर से पूर्व ही खतम कर डाले। इन
को कराने के लिये कर्मपटु आचार्य का सबसे प्रथम हीं वरण
चाहिये। फिर यदि उपनयन चौल के साथ हो तो माणवक (बाल
का क्षौर कराके स्नान पूर्वक अहत वस्त्र अलंकारादि से सुस
कर भोजन (भरसक दुग्ध, फलादि) कराके और स्त्री को
कराके अहत वस्त्रादि से सुसज्जित कर अग्निस्थान से पूर्व
अपने से दक्षिण पूर्वमुख बैठा दे। यदि स्त्री न हो तो बालक
ही बैठावे। स्त्री के रहने पर बालक स्त्री से दक्षिण रहता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं लिखा है कि पंचभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना करके अपने दक्षिण माणवक को बैठावे । चाहे जैसा करे। बैठाने के बाद उसे कटि-सूत्र पहनाकर वस्त्र पहनावे और आचमन करावे । फिर १८५-१९५ पृष्ठोक्त रीति से पंचभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना से लेकर घृत के उत्पवन तक की क्रिया करके घी को उत्तर ओर रखकर होम के पात्रों और पदार्थों की स्थापना करे। उसमें विशेषता इतनी हीं होगी कि पूर्णा-पात्र के बाद कौपीनादि का खद्दर, मृगचर्म, मेखला (मूंज की तीन सूतवाली चिकनी रस्सी), दण्ड और भिक्षापात्र इन सबों को पूर्व पूर्व रक्खेंगे। फिर हवन से पूर्व तक की सम्पूर्ण क्रियायें करके घी से व्या-हृति होम भी कर डाले । तब विशेष होम करे । इस होम में माणवक आचार्य के दहिने कन्धे को दहिने हाथ में कुश लेकर उसीसे छूए रहेगा-प्रजापतिर्ऋषिर्निगदः अग्निवायुसूर्यचन्द्रेन्द्रा देवता उपनयनाज्यहोमे विनियोगः। (१) ओं अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमितच्छकेयं तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा इदमग्नये व्रतपतयेनमम ॥ (२) ॐ वायो व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयं तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमिस्वाहा इदं वायवे व्रतपतये नमम ॥ (३) ॐ सूर्य व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयं तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा इदं सूर्यायनमम ॥ (४) ओं चन्द्र व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयं तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमि स्वाहा इदं चन्द्रायनमम ॥ (५) ॐ व्रतानां व्रतपतेव्रतंचरिष्यामि तत्ते प्रब्रवीमि तच्छकेयं तेनर्ध्यासमिदमहमनृतात्सत्यमुपैमिस्वाहा इदमिन्द्रायनमम ॥ इसके बाद आचार्य अग्नि से पश्चिम ओर ही उत्तर अग्रवाले कुशों पर खड़ा होकर माणवक को अग्नि और अपने बीच में अपनी ओर मुख करके उत्तराग्र कुशों ही पर खड़ा करे। तब आचार्य की अंजली के ऊपर माणवक अपनी अंजली रक्खे और उससे दक्षिण दिशा में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्तरमुख खड़ा होकर कोई वेदपाठी ब्राह्मण पहले माणवक की और फिर आचार्य की अंजली जल से भर दे। यह अंजली वाला जल नाम बताने तक रहेगा। फिर आचार्य माणवक की ओर देखता हुआ मन्त्र पढ़े--प्रथमस्य प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दोऽग्निर्देवता, द्वितीयस्य प्रजापतिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दोऽग्न्यादयो देवता माणवकप्रेक्षणे विनियोगः। आगन्त्रा समगन्महि प्रसुमर्त्यं युयोतन। अरिष्टाः सम्रेमहि स्वस्ति चरतादयम् ॥ १ ॥ अग्निष्टे हस्तमग्रहीत्सविता हस्तमग्रहीदर्यमा हस्तमग्रहीन्मित्रस्त्वमिन्द्रकर्मणाऽग्निराचार्यस्तव ॥२॥ इसके पश्चात् आचार्य माणवक को पढ़ावे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुराचार्यो देवता माणवकवाचने विनियोगः। ॐ ब्रह्मचर्यमागामुपमानयस्व ॥ इस आदि त्यादि मन्त्रको पढ़ाकर उससे नाम पूछे-ॐ कोनामासि ॥ माणवक उत्तर देवे-ॐ अमुकशर्मास्मि । इसमें 'अमुक' की जगह अपना नाम बोले। तब दोनों अंजली का जल गिरादेवें और आगे का मंत्र पढ़ता हुआ आचार्य अपने दहिने हाथ से माणवक के दहिने हाथ को अंगूठे सहित पकड़े। यह स्मरण रखना चाहिये कि आगे के मंत्रों में जहां जहां 'अमुक' शब्द आया है वहाँ वहाँ माणव का नाम 'विष्णु' 'भागवत' इत्यादि जो हो वही बोले। प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सविता देवता हस्तग्रहणे विनियोगः। ॐ देवस्य ते सवितुः प्रसवेऽश्विन्नोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां हस्तं गृह्णामि अमुकशर्म्मन् ॥ किसी किसी मैथिल पद्धति में लिखा है कि पहले का 'अग्निष्टे हस्तमग्रहीत्' इत्यादि मन्त्र भी यहीं ऊपर वाले मंत्र के बाद ही पढ़ाजावे। यह ठीक भी प्रतीत होता है। परन्तु निर्मूल है। इसके बाद उसी स्थान पर हाथ पकड़े ही अगले मन्त्र को पढ़कर प्रदक्षिण क्रम से (उत्तर की ओर से) पश्चिम मुख माणवक को पूर्वमुख कर देवे-प्रजापति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्षिर्यजुः सूर्योदेवता माणवकसमावर्त्तने विनियोगः । ॐ सूर्यस्यावृतमन्वावर्त्तस्व अमुकशर्म्मन्॥ अनन्तर वस्त्रादि पहने हुए माणवक के दहिने कन्धे पर चुपचाप दहिना हाथ रख कर आचार्य उस हाथ को नाभितक बढ़ाकर उसे छूवे और मन्त्र पढ़े— प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरन्तको देवता नाभिस्पर्शने विनियोगः। ॐ प्राणानां ग्रन्थिरसि माविस्रंसोऽन्तक इदन्ते परिददामि अमुकशर्माणम् ॥ मैथिल पद्धति में जो यहां पर 'नाभ्यन्तकौ देवते' लिखा है वह भ्रम है। इसके बाद उस हाथ को खसका कर नाभि से ऊपर पेट पर लेजावे और मन्त्र पढ़े- प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वायुर्देवता जठराभिमर्शने विनियोगः। ॐ अहुर इदंते परिददामि अमुक शर्म्माणम्॥ फिर थोड़ा और ऊपर लेजाकर हृदयमें लगाकर मन्त्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता हृदयस्पर्शने विनियोगः। ॐ कृशन इदन्ते परिददामि अमुकशर्म्माणम् ॥ तब दहिने कन्धे को छूकर मन्त्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः प्रजापतिर्देवतादक्षिणस्कन्धस्पर्शने विनियोगः। ॐ प्रजापतयेत्वा परिददामि अमुकशर्म्मन्॥ पश्चात् दहिने कन्धे को छूए हुए ही बांये हाथ से उसका बायां कन्धा छूकर पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सविता देवता वामांसस्पर्शने विनियोगः। ॐ देवाय त्वा सवित्रे परिददामि अमुकशर्म्मन् ॥ और दोनों कन्धों को पकड़े हुए ही उस से पूछे- प्रजापतिर्ऋषिर्यजुराग्निर्देवताऽऽदेशने विनियोगः। ॐ ब्रह्मचार्यसि अमुकशर्म्मन् ? माणक आचार्य को देखकर कहे- ॐ बाढम्। तब आचार्य उसे उपदेश करे और वह 'बाढम्' बोलता जावे। आचार्य-ॐ समिधमाधेहि। ब्र०-ओं बाढम्। आ०- ॐ अपोऽशान। ब्रह्म०-ॐबाढम्। आ०-ॐ कर्म कुरु। ब्र०-ॐ बाढम्। आ०-ॐ मादिवास्वाप्सीः। ब्र०-ॐ बाढम्।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं कहीं आचार्य के सब उपदेश के बाद एक ही बार सब उत्तर ब्रह्मचारी दे, ऐसा लिखा है। वह ठीक नहीं है। फिर अग्नि से उत्तर जावें और उत्तराग्र कुश बिछाकर उनपर पूर्वमुख आचार्य बैठे और दहिना घुटना टेकर आचार्य के आगे कुछ दूर पश्चिम मुख ब्रह्मचारी। तब आचार्य मेखला की रस्सी लेकर अगले भाग से उसे माणवक की कमर में दहिनी (उत्तर) ओर से घुमाकर तीन बार लपेटे और अन्त में प्रवर की गांठ दे-प्रजापतिर्ऋषिष्णिक्छन्दोमेखला देवता मेखलापरिधापने विनियोगः। ॐ इयं दुरुक्तात्परिबाधमाना वर्णं पवित्रं पुनीमा आगात्। प्राणापानाभ्यां बलमाहरन्ती स्वसादेवीसुभगामेखलेयम् ॥ १ ॥ ॐ ऋतस्यगोप्त्री तपसः परस्पत्नतीरक्षः सहमाना अरातीः। सामा समन्तमभिपर्येहि भद्रेधर्त्तारस्ते मेखले मारिषाम ॥ २ ॥ पश्चात् आचार्य चुपचाप उसी मेखला में लगाकर माणवक को कौपीन पहनादे और वह आचमन करके आठ बर्त्तनों में अन्न भरकर और उनपर जनेऊ सुपारी और द्रव्य रखकर उन्हें ब्राह्मणों के देने का संकल्प करे ॐ अद्येहाहं स्वकीयोपनयनविषयकसत्संस्कारप्राप्त्यर्थमिमाण्डाष्टकंसफलान्नदक्षिणायज्ञोपवीतं नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ और आचार्य प्रवर ग्रन्थि के सहित यज्ञोपवीत को २९५ पृष्ठोक्त रीति से विधिवत् अभिमन्त्रित कर ब्रह्मचारी के हाथ में दे और वह इस मन्त्र से उसे पहने पजापतिर्ऋषिर्यजुर्यज्ञोपवीतं देवता यज्ञोपवीतधारणे विनियोगः। ॐ यज्ञोपवीतमसि यज्ञस्यत्वोपवीतेनोपनह्यामि ॥ इसके बादही मृगचर्म भी धारण करने को मैथिलपद्धति लिखा है। परन्तु वह ठीक नहीं है। फिर माणवक आचार्य के निकट खसककर उन्हें ३०३ पृष्ठोक्त रीति से प्रणाम करे और हाथ जोड़कर प्रार्थना करे-ॐ अधीहिभोः सावित्रीं मे भवाननुब्रवीतु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तब आचार्य पहले विनियोग पढ़कर गायत्रीका उपदेश करे। उपदेश का नियम यह है कि पहले गायत्री के तीनों चरणों को अलग अलग पढ़कर उपदेश करे। फिर दो चरण एकबार और तीसरा दूसरी बार कहे। अंत में सम्पूर्ण गायत्री पढ़कर उसे पढ़ावे। इसतरह गायत्री का उपदेश करचुकनेपर पीछे से-ॐकार और महाव्याहृतियों का अवसर आता है। तीनों महाव्याहृतियां अलग अलग पढ़े और हरेक के अन्तमें ॐ कार पढ़े। न तो व्याहृतियों के पहले ॐ कार लगावे और न आगे पीछे दोनों ओर। गायत्री के प्रारम्भ में भी ॐ कार न लगावे। मैथिलपद्धति में जो इसके विपरीत लिखा है वह अत्यन्त विपरीत और अमान्य है। गायत्री का विनियोग-विश्वामित्रऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवतोपदेशे विनियोगः। पहली बार-(१) तत्सवितुर्वरेण्यम्। (२) भर्गोदेवस्य धीमहि। (३) धियोयोनः प्रचोदयात्॥ दूसरी बार-(१) तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि। (२) धियोयोनः प्रचोदयात्॥ तीसरी बार-तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्॥ इसके बाद महाव्याहृतियों का विनियोग पढ़कर उनका उपदेश करे। विनियोग-व्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजाऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दाँस्यग्निवायुसूर्या देवता उपदेशे विनियोगः। प्रणवस्य ब्रह्मा ऋषिः परमात्मा देवता दैविगायत्री छन्दः उपदेशे विनियोगः। (१) भूः ॐ। (२) भुवः ॐ। (३) स्वः ॐ। इसके बाद २९६ पृष्ठोक्त रीति के अनुसार पलाश आदिके दण्ड बनवाकर माणवक को आचार्य दे और देनेके समय उसे आगे का यह मंत्र पढ़ावे-प्रजापतिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दो दण्डोदेवता दण्डग्रहणे विनियोगः। ॐ सुश्रवः सुश्रवसं माकुरु यथा त्वꣳ सुश्रवः सुश्रवा देवेष्वेवमहꣳ सुश्रवः सुश्रवा ब्राह्मणेषु भू-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यासम् ॥ पश्चात् आचार्य ब्रह्मचारी को मृगचर्म दे और उसे
पढ़ाकर धारण करावे-प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दोऽजि
देवताऽजिनधारणे विनियोगः । ॐ मित्रस्य चक्षुर्ध
बलीयस्तेजोयशास्विस्थविर ँ समृद्धम् । अनाहन
वसनं जरिष्णु परीदं वाज्यजिनं दधेऽहम् ॥ यह मृग
ओढ़नेके लिये होता है नकि जनेऊ बनाने को, जैसा कि आजकल
तमाम पद्धतियों में लिखा है । तब आगे के साधारण बारह उप
माणवक को करे और उनका अर्थ समझाता जावे । हरबार माण
'ॐ बाढम्' कहाकरे । आचार्य-ॐ आचार्याधीनो
अन्यत्राधर्माचरणात् ॥ माणवक-ॐ बाढम् ॥ १ ॥ आ
ॐ क्रोधानृते वर्जय ॥ मा०-ॐ बाढम् ॥ २ ॥ आ०-
मैथुनं वर्जय ॥ मा०-ॐ बाढम् ॥ ३ ॥ आ०-ॐ उपरि
ग्यांवर्जय ॥ मा०-ॐ बाढम् ॥४॥ आ०-ॐ कौशीलवगन्धा
नानिवर्जय ॥ मा०-ॐ बाढम् ॥५॥ आ०-ॐ स्नानं वर्ज
मा०-ॐ बाढम् ॥ ६ ॥ आ०-ॐ अवलेखनदन्तप्रक्षाल
पादप्रक्षालनानिवर्जय ॥ मा०-ॐ बाढम् ॥ ७ ॥ आ०-
क्षरकृत्यंवर्जय ॥ मा०-ओं बाढम् ॥८॥ आ०-ओं मधुमां
वर्जय ॥ मा०-ओं बाढम् ॥ ९ ॥ आ०-ओं गोवाहनारोह
वर्जय॥ मा०-ओं बाढम् ॥ १० ॥ आ०- ओं अन्तर्ग्राम
पानहोर्धारणं वर्जय ॥ मा०-ओं बाढम् ॥ ११ ॥ आ०
ओं स्वयमिन्द्रियमोचनं वर्जय ॥ मा०-ओं बाढम् ॥ १२
इसके बाद ब्रह्मचारी के विशेष धर्मों का उपदेश करे । आ०-ओं मे
लाधारणभैक्ष्यचर्यादण्डधारणसमिदाधानोदकोपस्पर्श
तरभिवादाः कर्त्तव्याः ॥ मा०-ओं बाढम् ॥ उपदेश
जो नहाने का निषेध है उसका अभिप्राय नदी तालाब के स्नान से
पानी अलग निकालकर नहाने में कोई हर्ज नहीं है । अथवा अ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तैरने और देह में उबटन आदि लगाकर स्नान करने का निषेध है। अवलेखनादि का अर्थ है कंघी से बाल झाड़ना, दतवन करना और शौक से पांव धोना या पांव से पांव धोना। क्षौर के निषेध का अभिप्राय है बाल रचना के निषेध करने का। स्वयमिन्द्रियमोचन का अर्थ है जान बूझकर इन्द्रियों को विषयों के भोगने में लगादेना। शेष उपदेश स्पष्ट हैं।

इसके बाद माणवक चुपचाप सूर्य को प्रणाम और अग्नि की प्रदक्षिणा करके भिक्षा का पात्र या थैला, जो ३०४ पृष्ठ में कहा गया है, लेकर और दण्डादि के सहित जाकर भिक्षा मांगे। पहले माता से फिर बहिन आदि दो और से। बस तीन की ही भिक्षा काफी है। अथवा जितनी स्त्रियां प्रेमसे देनेवाली वहां हों सभी से मांगे। भिक्षा मांगने की रीति ३०४ पृष्ठ में कही गई है। उसे देखलेना चाहिये। सभी भिक्षा को एकसाथ लाकर आचार्य को समर्पण करे-ॐ भो भगवन् गृहाणेदं भैक्ष्यम्॥ तब आचार्य के यह कहने पर कि-ओं भुंक्ष्व-उस भिक्षा को लेकर पूर्व मुख होकर खावे और हाथ मुंह धोकर आचमन करलेवे। न तो बार बार भिक्षा मांगकर आचार्य के पास लायाकरें और न पहली भिक्षा दो चार से मांगकर अपने लिये रखले और फिर दूसरी बार स्त्री पुरुष सभी से मांगकर आचार्य के लिये या औरों के लिये जमा कर रक्खे, जैसी रीति आजकल हो रही है। यह सब निर्मूल है। मैथिल पद्धतियों में जो लिखा है कि एक बार मा से मांग कर आचार्य को दे, फिर दूसरी और तीसरी आदि से मांग कर बारबार लाया करे, वह ठीक नहीं है। पुरुषों से मांगना भी ठीक नहीं है, क्योंकि सभी सूत्र और स्मृतिग्रन्थों में स्त्रियों से ही मांगना लिखा है। यद्यपि भिक्षा को रख लेने को यहां पद्धतियों में लिखा है। मगर सूत्रकार ने कुछ नहीं लिखा है। अतएव अन्य ग्रन्थों के अनुसार ब्रह्मचारी को उनकी आज्ञा से उसका कुछ अंश खा लेना चाहिये। खाने का समय आगे आ रहा है। फिर ब्रह्मचारी मौन होकर शाम तक रहे और सूर्यास्त के बाद मौन भंगकर दे। यदि मध्याह्न की सन्ध्या का समय हो तो मध्याह्नसन्ध्या भी कर ले। पर यदि शाम हो रही हो या हो गई हो तो सायं संध्योपासन करके ब्रह्मचारी समिध का आधान उसी अग्नि में करे। ऐसी दशा में तो पंचभूसंस्कार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि की कोई आवश्यकता नहीं है । केवल १० या १२ अंगुल
एक लकड़ी अग्नि में डाल कर समिदाधान करते हैं । उसकी
यह है । प्रथम आचमन और प्राणायाम करके ब्रह्मचारी संकल्प को
ओं अद्य समिधमाधास्ये । फिर खड़ा होकर १० या
अंगुल की एक समिध को घी में डुबोकर विना मन्त्र के ही अ
में डाल दे और फिर दो समिधों में घी लगाकर अगले म
से उन्हें अग्नि में डाले-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता स
दाधाने विनियोगः । ओं अग्नये समिधमाहार्षं बृह
जातवेदसे यथा त्वमग्ने समिधा समिध्यस्येवमह
युषा मेधया वर्चसा प्रजया पशुभिर्ब्रह्मवर्चसेन धनेन
न्नाद्येन समेधिषीय स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ फि
उसके बाद चुपचाप एक और समिध अग्नि में, खड़ा होकर एवं घी
कर, डालदे और आचार्य २०१, ३३१ पृष्ठोक्त रीति से सभी उत्तर
को करके उपनयन कृत्य को पूरा करे । उपनयन करने वाले आ
की दक्षिणा गौ होती है । उसका संकल्प ब्रह्मचारी
ॐ अद्य कृतैतत्कर्मणः प्रतिष्ठार्थमिमां गां रुद्रदैवतां
निष्क्रयीभूतं द्रव्यं वा आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे
तत्सन्नमम ॥ परन्तु यह बात तभी करे जब या तो उपनयन
साथ वेदारम्भ आदि न करना हो या करना भी हो तो अलग
पर । परन्तु जैसा कि, हम कह चुके हैं कि एकही वेदी पर
चाहिये, ऐसी दशा में सभी उत्तरांग सब के अन्त में ही
उचित है । इस प्रकार उपनयन पूरा होता है । परन्तु यदि
हुई हो तो उपनयन क्रिया के बाद फिर नई वेदी पर ब्रह्म
सन्ध्योपासन के बाद समिदाधान करे । एतदर्थ पूर्व का संकल्प
पूर्वोक्त ही पंचभूसंस्कारादि क्रियापूर्वक अग्नि स्थापन और
करिडकाकी विधि करके पूर्वोक्त मन्त्र से ही समिधाओं का होम
और उत्तर अंग को ३३२ पृष्ठोक्त रीति से पूरा कर डाले । सा
समूची होम की क्रियायें करनी होंगी । इसके बाद प्रतिदिन
सायंकाल सन्ध्योपासन के बाद इसी तरह समिदाधान ब्रह्मचा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करना होगा । इसके बाद भिक्षाभोजन करे । कम से कम तीन दिन तक कोई खार या नमक न खावे । उपनयन में जो आचार्य को दक्षिणा दी जायगी वह गोदान है । यह गौ उपनयन करानेवाले आचार्य को दी जायगी । कर्म कराने वाले आचार्य की दक्षिणा तो अलग ही होगी । किसी किसी पद्धति में सावित्र चरु होम की विधि अन्त में लिखी है और किसी में भिक्षा के बाद या तीन दिन के बाद लिखी है । परन्तु यह ठीक नहीं है । सावित्रचरु होम तो सावित्र व्रत की समाप्ति के बाद होता है और आजकल वह व्रत लुप्त हो गया है । ब्रह्मचारी के अनेक व्रतों में एक सावित्रव्रत भी है । परन्तु जब आजकल कोई भी व्रत नहीं होते तो सावित्र व्रत कैसे होगा ? फिर सावित्र चरु होम का प्रसंग ही क्या है ? यह व्रत ८ वर्ष या कम से कम ८ महीने या ८ दिन तक किया जाता है । इसे ही आदित्यव्रत भी कहते हैं । इसके लिये फिर से उपनयन किया करते हैं । उसमें एक ही वस्त्र धारण करने का नियम है । छाता लगाना मना है । कमर से अधिक पानी में जाने की मनाही है । इसी से हमने यहां नहीं लिखा है । परन्तु यदि कोई परिपाटी वश करना हीं चाहे तो समावर्त्तन के अन्त में हमने उसका प्रयोग लिख दिया है । उसे ही देख कर कर ले । इति सामवेदी उपनयन ।

३–सामवेदीय वेदारम्भ ।

सामवेदियों के यहां अलग वेदारम्भ की पद्धति नहीं है । सारांश पूर्व में यजुर्वेदियों का जो वेदारम्भ प्रयोग लिखा है उसी में सामवेदियों के भी सामवेद के आरम्भ की विधि लिखी है । इसलिये उसमें जो सामवेद की आहुतियां हैं उन्हें ही करके सामवेद का आरम्भ करे । हां, यदि प्रथम संकल्प न किया होतो संकल्प यों करले– ॐ अद्याहं सामवेदारम्भं करिष्ये । इसी प्रकार नान्दीश्राद्धादि सभी क्रियायें भी करनी होंगी, यदि उपनयन के साथ वेदारम्भ न हो । परन्तु जब उपनयन के साथ वेदारम्भ होगा तब तो केवल संकल्प करके १८५, १९५ पृष्ठोक्त रीति से सामवेदी कुशकण्डिका पूर्वक समुद्भव नामक अग्नि की स्थापना करके कुश कण्डिका को पूरा करे और महाव्याहृति होम भी कर ले । फिर सामवेद की–(१) ॐ दिवे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाहा इदं दिवेनमम। (२) ॐ सूर्याय स्वाहा इदं सूर्यायनमम
ये दो विशेष आहुतियां देकर ३०९ पृष्ठोक्त–ॐ ब्रह्मणे स्वाहा–इत्या
नौ आहुतियां दे और फिर वहीं लिखी रीति से सामवेद
आरंभ गायत्री पढ़ाकर–ॐ अग्न आयाहि०–इत्यादि मन्त्रसे
और अन्त में पूर्वोक्त रीति से उत्तर अंग की क्रियायें करके वे
रम्भ का कर्म पूरा करे। परन्तु अच्छा है कि यदि समावर्त्तन
करना हो तो समावर्तन की क्रिया करके तभी समस्त उत्तर अंग
क्रियायें करे। इति सामवेदी वेदारम्भ।

४–सामवेदीय समावर्त्तन।

ब्रह्मचर्य व्रत की समाप्ति के बाद ऐन्द्रचरु होम करके स
वर्त्तन करना चाहिये। ऐन्द्रचरु होम और सावित्र चरु होम
अन्तर इतनाहीं है कि इसके मंत्रों में 'ऐन्द्रं या इन्द्राय' पढ़ेंगे
उसमें 'सवित्रे या सावित्रं' पढ़ेंगे। इसकी विधि अन्त में समाव
की क्रिया के बाद लिखेंगे। दोनों में उक्त भेद के अतिरिक्त और
अन्तर नहीं है। परन्तु यहां इसलिये नहीं लिखते कि जब उपनयन
साथ ही समावर्तन करने की चाल आजकल है तो कौन सा ब्रह्म
व्रत पूरा होता है जिससे ऐन्द्रचरु होम करने की आवश्यकता हो
अन्त में तो इसलिये लिखेंगे कि जो कोई कभी भी ब्रह्मचर्य का
पालन करके समावर्त्तन करेगा वह उसे देखकर पहले ऐन्द्र
होम करलेगा, तब शेष कृत्य आरम्भ करेगा, अस्तु।

यदि समावर्त्तन वेदारंभ या उपनयन के साथ ही हो तब
प्रधान संकल्प या नान्दीश्राद्धादि किसी भी पूर्व क्रिया की आवश्यक
नहीं है। परन्तु यदि पीछे हो तब तो आचार्य स्नान, नित्य क्रिया
करके कर्माचार्य का वरण, संकल्प और महागणपतिपूजन से
ग्रहपूजा तक की वे सभी पूर्व क्रियायें कर लेगा जो साधारण प्र
में लिखी हैं। संकल्प में तो–ॐ अद्येहाहं गृहस्थाश्रम
शाधिकारसिद्ध्यै समावर्त्तनं करिष्ये– इतना हीं ब्रह्म
कहेगा। पर, उपनयन के दिन यह कुछ न करके यदि संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न किया हो तो संकल्प करके ब्रह्मचारी आचार्य से हाथ जोड़कर आज्ञा मांगे-ॐ भो आचार्य स्नास्यामि । आचार्य आज्ञा दे-ॐ स्नाहि । तब आचार्य के गृह से पूर्व या उत्तर की ओर मंडप बनाकर पूर्व ओर अग्रवाले कुशों पर आचार्य बैठे और उसके आगे उत्तराग्रकुशों पर पूर्व मुख ब्रह्मचारी बैठे और किसी पात्र में जल रखकर उसमें धान, साठी, मूंग, सरसों, गेहूँ, तिल और चन्दन सहित सर्वौषधि डालकर या केवल सर्वौषधि और चन्द हीं डालकर उसे पकावे। क्योंकि सूत्र में केवल सर्वौषधि ही लिखी गई है। परन्तु और और पद्धतियों के अनुसार हमने धान वगैरः लिखे हैं । फिर उसे छान कर किसी पात्र में रक्खे और उस में शीतल जल मिलाकर आगे के मंत्र से ब्रह्मचारी आचार्य की आज्ञा लेकर उस जल को अंजली में ले और भूमि में गिरावे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता भूमौ जलप्रक्षेपणे विनियोगः। ॐ ये अप्स्वन्तरग्नयः प्रविष्टा गोह्य उपगोह्यो मरूको मनोहाः । खलो विरुजस्तनूदूषिरिन्द्रियहा अतितान्सृजामि ॥ फिर दोबारा उसी तरह जल लेकर गिरावे और मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता भूमौ जलप्रक्षेपणे विनियोगः। ॐ यदपां घोरं यदपां क्रूरं यदपामशान्तमति तत्सृजामि ॥ पुनः उसी तरह जल लेकर अपने माथे पर डाले-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता समावर्त्तनाभिषेके विनियोगः।ॐ योरोचनस्तामिह गृह्णामि तेनमामभिषिञ्चामि ॥ फिर पूर्ववत् जल लेकर सिर पर छोड़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्देवता समावर्त्तनाभिषेके विनियोगः।ॐ यशसे तेजसे ब्रह्मवर्चसाय बलायेन्द्रियाय वीर्यायाद्यायरायस्पोषायत्विष्या अपाचित्यै॥ तीसरी बार जल लेकर सिर पर डाले-प्रजापतिर्ऋषिः षडष्टका महापंक्तिश्छन्दोऽश्विनौ देवते अभिषेके विनियोगः । ॐ येन स्त्रियमकृणुतं येनापामृषत ँ सुराम् । येनाक्षानभ्यषिञ्चतं येनेमां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पृथिवीं महीम् । यद्वांतदश्विना यशस्तेनमामाभिषिञ्चतम् ॥ चौथी वार जल लेकर चुपचाप सिर पर डालदे । इसके बाद ब्रह्मचारी खड़ा होकर सूर्य के सन्मुख हाथ जोड़ कर या हाथ उठा कर आगे के चार मंत्रों में जो पहले के तीन हैं उनमें एक एक मंत्र क्रम से प्रातः, मध्याह्न और दोपहर को पढ़े और चौथे को प्रत्येक के साथ पढ़े । अर्थात् उस समय प्रातः, मध्यान्ह या शाम जैसी वेला हो उस के अनुसार एक मंत्र पढ़ कर दूसरा उसके बाद पढ़ दे । क्योंकि चौथा तीनों काल के लिये है । त्रयाणां प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सूर्योदेवता सूर्योपस्थाने विनियोगः । चतुर्थस्य प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दः सूर्योदेवता सूर्योपस्थाने विनियोगः ॐ उद्यन्भ्राजभृष्टिरिन्द्रो मरुद्भिरस्थात्प्रातर्यावभिः स्थात् । दशसनिरासि दशसनिं मा कुर्वात्वा विशाम्यामाविश ॥ १ ॥ ॐ उद्यन्भ्राजभृष्टिरिन्द्रो मरुद्भिः स्थात् सांतपनेभिरस्थात् शतसनिरसि शतसनिं मा कुर्वात्वा विशाम्यामाविश ॥ २ ॥ ॐ उद्यन्भ्राजभृष्टिरिन्द्रो मरुद्भिरस्थात् सायं यावभिरस्थात् सहस्रसनिरासि सहस्रसनिं मा कुर्वात्वा विशाम्यामाविश ॥ ३ ॥ ये तीनों अलग अलग वेला की हैं और यह चौथा सब के साथ की है—ॐ चक्षुरासि चक्षुष्ट्वमस्यव मे पापानं जहि सोमस्त्वा राजाऽवतु नमस्तेऽस्तु मामा हिंसीः ॥ ४ ॥ फिर मेखला को पांव के रास्ते कमर से निकाल हुआ मंत्र पढ़े—प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो वरुणो देवता मेखलामोचणे विनियोगः । ॐ उदुत्तमं वरुणपाशमस्मदवाधमं विमध्यमꣳ श्रथाय । अथादित्यव्रते तवानागसो अदितये स्याम ॥ इसके उपरान्त चुप चाप और मृगचर्म भूमि पर रख दे । तब तीन ब्राह्मणों को भोजन के स्वयं भी भोजन करे और शिखा को छोड़कर समस्त सिर,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूँछ आदि के बाल और नख कटवा डाले और स्नान के बाद दो अहत वस्त्र (धोती गमछा या अभाव में धोती ही तले ऊपर) पहन कर पगड़ी, टोपी आभूषणादि भी पहने। फिर माला सिर पर रक्खे और मंत्र पढ़े—प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः श्रीर्देवता स्रग्बन्धने विनियोगः। ॐ श्रीरसि मयि रमस्व ॥ परन्तु मैथिलपद्धति में माला पहनने से पहले तीन ब्राह्मण भोजन, केशादि कटाना यह दो बातें न लिख उन की जगह महाव्याहृतियों से २०३ पृष्ठोक्त रीति से चार आहुतियां देकर केवल ब्रह्मचारी को दही और तिल भोजन कराना, आचमन कराना, वस्त्र और पगड़ी या टोपी पहनाना और ३३८ पृष्ठोक्त रीति से दूसरा जनेऊ पहनाने को लिखकर फिर और भी नवीन वस्त्र पहनना लिखा है। इसके बाद माला पहनने की उक्त विधि है। इनमें ब्राह्मण भोजन और केशादि कटाने का त्याग तो गोभिल सूत्रके विरुद्ध है। परन्तु यद्यपि दूसरा जनेऊ पहनने को वहां नहीं लिखा है, फिर भी स्नान के लिये उस की आवश्यकता हम मानते हैं। शेष व्याहृति होमादि की बात व्यर्थ है। अतः ब्राह्मणभोजन, स्वयं भोजन के बाद केशादि कटा कर स्नान, वस्त्रादि धारण, आचमन, पूर्वोक्त रीति से द्वितीय यज्ञोपवीत धारण करके पुष्पमाला सिर पर रक्खे। यही ठीक है। परन्तु जिन्हें परम्परा या रूढ़ि की भक्ति हो उनके लिये तो कुछ कहना हीं नहीं है। चाहे जैसा करें। इसी से वह भी लिख दिया है। अस्तु, उक्त विधि से माला पहनने के बाद नया जूता पहने—प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरुपानहौ देवते आबन्धने विनियोगः। ॐ नेत्र्यौ स्थो नयतं माम्॥ इसके बाद मैथिल पद्धति में खड़ाऊँ पहनना भी लिखा है। पर, यह निर्मूल, बेकार और असंभव है। तब बांस की लाठी या दण्ड यह मंत्र पढ़ कर हाथ में ले—प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्दण्डो देवता दण्डग्रहणे विनियोगः। ओं गन्धर्वोऽस्युपाव उप मामव ॥ फिर कहीं कहीं चुपचाप ही छाता लेना भी लिखा है। तब जहां इतर लोगों के साथ आचार्य बैठे हों वहां जाकर सभी लोगों के साथ आचार्य को देखता हुआ मंत्र पढ़े—प्रजापतिर्यजुराचार्यो देवता प्रेक्षणे विनियोगः। ओं यत्तमिव चक्षुषः प्रियो वो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भूयासम् ॥ फिर आचार्य के समीप बैठकर स्नातक अपने मु
नासिका, आँखें और कानों के छिद्रों को स्पर्श करता हुआ मंत्र प
प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दो नकुली देवता मुखादिस्पर्श
विनियोगः । ॐ ओष्ठापिधाना नकुली दन्तपरिधि
पविः । जिह्वे मा विह्वलो वाचं चारु माद्येह वादय
इसके बाद आगे लिखी (३५५) विधि के अनुसार स्नातक को आच
मधुपर्क दे । फिर स्नातक बैल जुते रथ या गाड़ी के निकट जा
उसके दोनों पहियों और जूए को इस मंत्र से स्पर्श करे-प्रजाप
र्ऋषिस्त्रिष्टुप छन्दो वनस्पतिर्देवता पादत्रयेणाभिम
चतुर्थपादेनास्थाने विनियोगः । ॐ वनस्पते वीड्वंगो
या अस्मत्सखा प्रतरणः सुवीरः । गोभिः सन्नद्धो
सिवीडयस्व ॥ फिर चुपचाप उस पर चढ़ जावे और इसे प
उस पर बैठे-ॐआस्थाता ते जयतु जेत्वानि ॥ और कुछ
उत्तर या पूर्व जाकर प्रदक्षिण क्रम से लौट कर आचार्य के
आ जावे और उतर कर अन्य ब्राह्मणों तथा आचार्य की ओर
कर सभी को प्रणाम करे-ॐ अभिवादयेऽहं भोः । सभी आ
र्वाद दें-ॐ आयुष्मान्भव सौम्य ॥ इसके बाद उतरांग
उत्तर तंत्र व्याहृति होम से लेकर वामदेव्यगान और विसर्ज
पर्यन्त २५३ और ३३२ पृष्ठों के अनुसार करे । ब्रह्मा को पूर्णपात्रके
द्रव्य दक्षिणा और आचार्य को गौ या उसका निष्क्रय द्रव्य दक्षि
देकर कर्माचार्य को भी दक्षिणा दे और अन्त में भूयसी दक्षिणा
दे । इन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिये ।

सौकर्य के लिये उत्तरांग कर्म स्पष्ट रूप से लिखते हैं । घी से चार व्याहृतियों की आहुति दे-विश्वामित्रजमदग्नि
रद्वाजभृगव ऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहत्यश्छन्दा
ग्निवाय्वादित्यप्रजापतयो देवता होमे विनियोगः ।
ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२) ॐ भुवः स्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इदं वायवे नमम ॥ (३) ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ (४) ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥

फिर १०-१२ अंगुल की एक समिध लेकर उसे घी में डुबोवे और खड़ा होकर अग्नि में चुपचाप छोड़ दे । अनन्तर ऊपर कहे गये चार व्याहृतिहोम ज्यों का त्यों प्रायश्चित्तार्थ करे । परन्तु किसी किसी ने प्रायश्चित्त होम के लिये केवल चार व्याहृतियों का होम नहीं माना है । किन्तु उनको मिलाकर जो शाट्यायन होम किया जाता है उसे ही माना है । इसलिये प्रायश्चित्तार्थ व्याहृति होम की जगह यदि शाट्यायन होम करना हो तो पहले उसका संकल्प करे-ओं अद्येहास्मिन्कर्माणि समयाद्यतिपातक्रमोपजातवैगुण्यसमाधानार्थं शाट्यायनहोममहं करिष्ये । तव उक्तरीति से चार व्याहृति होम करके-चतुर्णां प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निविश्वदेवविभावसुशतक्रतवो देवताः, ततः स्तिसृणां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दोऽग्निर्देवता, तत एकस्य प्रजापतिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दः प्रजापतिर्देवता, ततो नवानां प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सूर्यादिनवग्रहा देवताः प्रायश्चित्तहोमे विनियोगः । (५) ओं पाहिनो अग्न एवसे स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (६) ओं पाहिनो विश्ववेदसे स्वाहा इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमम ॥ (७) ओं यज्ञं पाहि विभावसो स्वाहा इदं विभावसवे नमम ॥ (८) ओं सर्वं पाहि शतक्रतो स्वाहा इदं शतक्रतवे नमम ॥ (९) ओं पुनरूर्जा निवर्त्तस्व पुनरग्नइषायुषा । पुनर्नः पाहि विश्वतः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (१०) ओं सह रय्या निवर्तस्वाग्ने पिन्वस्व धारया । विश्वप्स्निया विश्वतस्परि स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (११) ओं आज्ञातं यदनाज्ञातं यज्ञस्य क्रियते मिथु । अग्ने तदस्य क-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ल्पय त्वं हि वेत्थ यथायथं स्वाहा इदमग्नये नमम (१२) ओं प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वाजात परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वय स्या म पतयोरणीया ँ स्वाहा इदं प्रजापतये नमम॥ (१३) ओं सूर्याय स्वाहा इदं सूर्यायनमम॥ (१४) ओं चन्द्राय स्वाहा इदं चन्द्राय नमम॥ (१५) ओं भौमाय स्वाहा इदं भौमाय नमम॥ (१६) ओं बुधाय स्वाहा इदं बुधाय नमम॥ (१७) ॐ गुरुवे स्वाहा इदं गुरुवे नमम (१८) ॐ शुक्राय स्वाहा इदं शुक्राय नमम॥ (१९) ॐ शनये स्वाहा इदं शनयेनमम॥ (२०) ॐ राहवे स्वाहा इदं राहवे नमम॥ (२१) ॐ केतवे स्वाहा इदं केतवेनमम

इससे बाद फिर चार व्याहृति होम पूर्ववत् करके शाट्यायन होम करे। फिर १०-१२ अंगुल की लकड़ी पूर्ववत् अग्नि में डाल अंजली (चिल्लू) के जल से एक या तीन बार होम के पदार्थों को के लिये प्रदक्षिण क्रमसे पर्युक्षण (अनुपर्युक्षण) करे। यदि एक करे तब तो कुछ कहनाहीं नहीं। परन्तु यदि तीनबार करे तो पहि बार पदार्थों को बाहर रखकर उनसे पहले जल गिरावे। दूसरी उन्हींपर और तीसरी बार उनसे बाहर उनके चारों ओर, जिससे घिर जावें। मंत्र यह है-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सविता देवता अनुपर्युक्षणे विनियोगः। ॐ देवसवितः प्रसुव प्रसुव यज्ञपतिं भगाय दिव्यो गन्धर्वः। केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पतिर्वाचं नः स्वदतु॥ इसके बाद अंजलि संकल्प करे। चिल्लू में जल ले लेकर अग्नि से दक्षिण, पश्चिम, उत्तर क्रम आगे के मंत्रों से गिरावे। दक्षिण में नैर्ऋत्य कोन से लेकर अग्नि तक-और पश्चिम में नैर्ऋत्य से वायु तक। उत्तर में वायुसे ईशान तक— प्रजापतिर्ऋषिरेकपदा गायत्रीछन्दोऽदित्यनुमतिसरस्वत्यो देवता उदकाञ्जलिसेचने विनियोगः। दक्षिण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ अदितेऽन्वमꣳस्थाः ॥ पश्चिम-ॐ अनुमतेऽन्वमꣳस्थाः ॥ उत्तर- ॐ सरस्वत्यन्वमꣳस्थाः ॥ फिर अग्नि के चारों ओर के कुशों को जैसे बिछाया था वैसे ही उठाकर सभी को या उनमें से एक मुट्ठी लेकर बर्हिः होम करे । इसे सामवेदी यज्ञवास्तु कर्म कहते हैं । चुपचाप कुशों को उठाकर सबों को या उन में से एक मुट्ठी लेकर उनके अग्र, मध्य और मूल में क्रमसे घी लगावे और प्रत्येक बार मन्त्र पढ़े । विनियोग बार बार न पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्विश्वेदेवा देवता बर्हिरभ्यञ्जने विनियोगः । ॐ अक्तुꣳरिहाणा व्यन्तु वयः ॥ तब उनको जलसे अभ्युक्षण (३७) कर इस मन्त्र से अग्नि में डाले-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दो रुद्रो देवता बर्हिर्होमे विनियोगः । ॐ यः पशूनामधिपतीरुद्रस्तन्तिचरो वृषा । पशूनस्माकं माहिꣳसीरेतदस्तु हुतं तव स्वाहा इदं पशूनामधिपतये रुद्राय तन्तिचराय नमम ॥ फिर आचमन करके पूर्णाहुति करे । उसकी विधि यह है कि स्रुच् या स्रुव में घी डालकर उसके ऊपर घी से भरा नारियल या खप्पर के टुकड़े से ढंक कर और नारियलपर सुपारी, पान, फूल, अक्षत आदि रखकर और उसे दहिने हाथ से पकड़कर, एवं स्नातक को भी पकड़ाकर आचार्य खड़ा हो जावे और धीरे धीरे अगला मन्त्र पढ़ता हुआ पहले घृत की धारा गिरावे और अन्त में सभी वस्तु अग्नि में डाल दे-प्रजापतिर्ऋषिर्विराड् गायत्री छन्द इन्द्रो देवता यशस्कामस्य यजनीयप्रयोगे विनियोगः । ओं पूर्णहोमं यशसे जुहोमि योऽस्मैजुहोति वरमस्मै ददाति वरं वरेण यशसा भामि लोके स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ पश्चात् स्रुव में घी भरकर धारारूप से एकबार अग्नि में गिरावे । इसका मन्त्र यह है-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वसवो देवता होमे विनियोगः । ओं वसुभ्यः स्वाहा इदं वसुभ्यो नमम ॥ द्रव्य सहित पूर्णपात्र लेकर ब्रह्मा को दक्षिणा देने का संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करके देवे—ओं अद्येहानुष्ठितसमस्तकर्माणि कृताकृत
वेक्षणरूपब्रह्मकर्मप्रतिष्ठार्थमिदं सद्रव्यं पूर्णपात्रं
जापतिदैवतं ब्रह्मणे तुभ्यं यथानामगोत्राय अहं स
ददे ओं तत्सन्नमम ॥ ब्रह्मा "ॐस्वस्ति" कहकर दक्षिणा
और आचार्य ब्रह्मा का हाथ पकड़ कर अग्नि की प्रदक्षिणा क
उसे वहां से उठावे । यदि कुश का ब्रह्मा हो तो उसकी ब्रह्मग्रं
खोल दे तथा स्वयमेव उसकी ओर से "ॐ स्वस्ति" बोल दे
न भी बोले । इसके उपरान्त आचार्य स्रुव से भस्म लेकर दो
हाथ की अनामिका के अग्र भाग से आगे लिखे मंत्रों से उन
अंगों में लगाने से पहले स्रुव के भस्म पर जल छिड़ककर
का प्रोक्षण करे । लगानेका मंत्र-(हृदय)-ॐ त्र्यायुषं जमदग्नेः
(दहिनी भुजा का मूल)-ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम् । (
भुजा का मूल)-ॐ अगस्त्यस्यत्र्यायुषम् । (ललाट
ॐ यद्देवानां त्र्यायुषन्तन्मे अस्तु त्र्यायुषम् ॥ इसी
स्नातक को भी लगावे । परन्तु मंत्र भी स्नातक ही पढ़े ।
आचार्य या और कोई पढ़े तो अन्त के 'तन्मे' की जगह 'तत्ते'
शेष सब ज्यों का त्यों पढ़े । फिर चुपचाप अग्नि की प्रदक्षिणा
चमस, प्रणीता पात्र या जलपात्र का जल गिराकर उसे धो
और उसमें नया जल रख ले । पुनः अग्नि के पास आकर उ
प्रार्थना करे-ॐ आयुरारोग्यमैश्वर्यं धीर्धृतिः शं बलं य
ओजो वर्चः पशून्वीर्यं ब्रह्म ब्राह्मण्यमेव च ॥ १ ॥ सौ
ग्यं कर्मसिद्धिं च कुलज्यैष्ठ्यं सुकर्त्तृताम् । सर्व
त्सर्वसाक्षिन्द्रविणोद रिरीहि नः ॥ २ ॥ अनन्तर आ
र्य के गोदान का संकल्प करे-ॐ अद्येहानुष्ठितकर्म
प्रतिष्ठार्थं गामेकां रुद्रदैवतां तन्निष्क्रयं यथा
द्रव्यं वा आचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ओं तत्सन्नम
फिर कर्माचार्य की दक्षिणा का संकल्प करके हिरण्यदान वा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दक्षिणा का संकल्प करे। कर्माचार्य की दक्षिणा का संकल्प-ॐ अद्येहानुष्ठितकर्मप्रतिष्ठार्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणां यथानामगोत्राय कर्माचार्याय तुभ्यमहं सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ हिरण्य दक्षिणा-ॐ अद्येहानुष्ठितकर्मणोंगवैकल्यादिदोषापनुत्तये सांगफलाप्तये चेमं हिरण्यं वह्निदैवतं तन्मूलद्रव्यं वा नानानामगोत्रेभ्यो जनेभ्यः सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ अन्त में ब्रह्मभोज का संकल्प करे—ओं अद्येहानुष्ठितस्य कर्मणः प्रतिष्ठार्थं यथाशक्तिब्राह्मणान्भोजयिष्ये—फिर उधर भोजन की तैयारी करावे और उधर वामदेव्यसाम का गान करे-वामदेवऋषिर्गायत्रीछन्दइन्द्रोदेवताऽग्निष्टोमादौ द्वितीयपृष्ठे शान्तिकर्मणि च जपे विनियोगः । ओं कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कयाशचिष्ठयावृता ॥ १ ॥ कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढाचिदारुजे वसु ॥ २ ॥ अभीषुणः सखीनामाविताजरितॄणाम् । शतं भवा स्यूतिभिः ॥ ३ ॥ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥ ४ ॥ ओं प्राजापत्यं वै वामदेव्यं प्रजापतावेव प्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥ ५ ॥ ओं पशवो वै वामदेव्यं पशुष्वेव प्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥ ६ ॥ ओं शान्तिर्वै वामदेव्यं शान्तावेवप्रतिष्ठायोत्तिष्ठन्ति ॥७॥ फिर १२४ पृष्ठोक्त रीतिसे कलशके जलसे आचार्य का अभिषेक करे। तब संकल्प करके विष्णु स्मरण करे-ओं अद्यास्मिन्कर्मणि मध्ये सम्भावितक्रियालोपमंत्रलोपन्यूनातिरिक्तविपर्यासविस्मृतांगविध्यपराधप्रायश्चित्तार्थं विष्णोः स्मरणं करिष्ये । और कम से कम तीन बार " ओं विष्णुः ३ " कहकर पढ़े-ओं प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

देव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ पुनः यह कहकर कर्म को कृष्णार्पण करे—ओं ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ १ ॥ ब्रह्मण्याधाय कर्माणि संगं त्यक्त्वा करोति यः लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवांभसा ॥२॥ मयानुष्ठितं कर्म ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ फिर १२४ पृष्ठोक्त रीतिसे सपत्नीक एवं स्नातक सहित आचार्य का अभिषेक ब्राह्मण लोग करें और यदि चाहें तो उसमें २२७ पृष्ठोक्त २१ से २९ तकके श्लोक जोड़ लें । पुनः वहीं लिखे तिलक के बाद, कर्म के आचार्य उन लोगों की ओर से समस्त ब्राह्मणों से प्रार्थना करें-ओं स्वस्ति मन्त्रार्थाः सफलाः सन्तु नि भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मणों का उत्तर- ओं तथास्तु ॥ आचार्य—ओं अस्य सकुटुम्बस्य यजमानस्य वेदोक्तं दीर्घमायुर्भूयादिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु ॥ ब्राह्मण—ओं तथास्तु ॥ आचार्य-ओं अनेनानुष्ठितमिदं कर्म यथोक्तं यथाशास्त्रमच्छिद्रं विकलं सांगं सुगुणं भूयादिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु॥ ब्रा०- ॐ तथास्तु ॥ आ०-ॐ अनुष्ठितेऽस्मिन्कर्मणि मंत्रतंत्रद्रव्यक्रियालोपश्रद्धाजाड्यादयः सर्वे दोषाः शान्ता भूयासुरिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु॥ ब्रा०-ओं तथास्तु॥ आ०—अनेन कर्मणा परमेश्वरः सुतृप्तः सुप्रसन्नो भूत्वास्य यजमानस्य झटित्येव वाञ्छितार्थसिद्धिप्रदो भूयादिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु॥ ब्रा०-ओं तथास्तु॥ आ०-ओं अस्य यजमानस्य गृहे द्विपदां चतुष्पदां चारोग्यं दीर्घमायुश्च भूयादिति भवन्तो महान्तोऽनुगृह्णन्तु ॥ ब्रा०-ओं तथास्तु ॥ फिर हाथ में अक्षत लेकर- ओं यान्तु देवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् । इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्थं पुनरागमनाय च—यह पढ़ कर सभी वेदियों पर और अग्नि-कुंड पर भी छिड़क कर संक्षेप से सभी देवताओं का विसर्जन करे। यदि विस्तार से करना हो तो २२९ पृष्ठ देख कर करे। अन्त में याद कोई लोकाचार होता हो तो करके ब्राह्मण एवं बन्धुवर्ग आदि को भोजन कराके विश्राम करे। इति सामवेदी समावर्त्तन।

५—सामवेदीय मधुपर्क विधि।

भरसक पुत्र स्त्री आदि के सहित, नहीं तो अकेला भी, यजमान (मधुपर्क देने वाला) दो विष्टर (३५ पृ०), पाद्य, अर्घ्य, आचमन का जल, मधुपर्क, धोती, गमछा और यथाशक्ति आभूषण आदि लेकर जहां मधुपर्क देना हो वहीं रक्खे। मधुपर्क के इन पदार्थों के लिये ४५ पृष्ठ देख लेना चाहिये। फिर उस जगह से उत्तर एक गौ बाँध कर यजमान अपने पुत्रादि के साथ उसकी स्तुति करे—प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽर्हणीयो देवता धेनूपस्थाने विनियोगः। ॐ अर्हणा पुत्र वासमा धेनुरभवद्यमे। सा नः पयस्वती दुहा उत्तरामुत्तराꣳ समाम्॥ तब जिसे मधुपर्क दिया जाने को हो वह किसी आसन पर बैठता हुआ यह पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरर्हणीयोदेवता जपे विनियोगः। ॐ इदमहमिमां पद्यां विराजमन्नाद्यायाधितिष्ठामि॥ अनन्तर यजमान एक या दो विष्टरों को लेकर उसे देने के समय पढ़े-ॐ विष्टरो विष्टरो विष्टरः प्रतिगृह्यताम्॥ यदि दो हों तो-ॐ विष्टरौ ३ प्रतिगृह्येताम्-ऐसा कहे। आगे भी पाद्य आदि जो भी देवे उसका तीन बार उच्चारण करे। यजमान पूजक और मधुपर्क लेनेवाला पूज्य कहाता है। आगे हम यही शब्द लिखेंगे। तब पूज्य विष्टर को लेकर अगले मन्त्र से अपने आसन पर उत्ताराग्र रख कर उस पर बैठे। यदि दो हों तो एक को पहला मन्त्र पढ़कर (मंत्र विनियोग के अलावे है। जहाँ से ॐ लिखा है वहीं से मंत्र समझना चाहिये) आसन पर और दूसरे को दूसरे मन्त्र से पाँव के नीचे रक्खे। दोनों का अग्र उत्तर रहेगा और पूज्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वमुख बैठेगा या उत्तर मुख भी । विष्टर रखने का मन्त्र-
प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्द ओषधयो देवताः पूर्वविष्टरा
सादने उत्तरस्य पादयोरधस्तादास्तरणे विनियोगः। पहला
मंत्र-ॐ या औषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः शतविचक्षणाः। ता
मह्यमस्मिन्नासन्नेऽच्छिद्राः शर्म यच्छत ॥ दूसरा मंत्र-ॐ
या औषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताःपृथिवीमनु। तामह्यमस्मि
न्पादयोरच्छिद्राःशर्म यच्छत ॥ यदि एक ही विष्टर हो तो केवल
पहला ही पढ़कर आसन पर रखले । फिर पूजक पाद्य का जल
लेकर कहे-ओं पाद्यम् ३ प्रतिगृह्यताम् ॥ पूज्य उस जल को
देखता हुआ पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्विराट्छन्द आपो देवता
पाद्यप्रेक्षणे विनियोगः । ओं यतोदेवीः प्रतिपश्याम्यापः
स्ततोमाराड्डिरागच्छतु ॥ फिर पाद्य लेकर आगे के मंत्रों से क्रम
शः बायां और दहिना पांव जल से धोले और कुछ जल शेष भी रक्खे
प्रजापतिर्ऋषिर्निगदोऽर्हणीयश्रीर्देवता सव्यदक्षिणपाद
प्रक्षालने विनियोगः। (वाम)- ओं सव्यं पादमवनेनिजे
ऽस्मिन्राष्ट्रे श्रियं दधे ॥ (दक्षिण)-ओं दक्षिणं पादमवने
निजेऽस्मिन् राष्ट्रे श्रियमावेशयामि ॥ बाद को बचे जल
से फिर क्रमशः बांया और दहिना पांव आगे पीछे एक ही बार मन्त्र
पढ़ कर धोवे-प्रजापतिर्ऋषिर्निगदोऽर्हणीयश्रीर्देवतापादद्व
यप्रक्षालने विनियोगः । ॐ पूर्वमन्यमपरमन्यमुभे
पादाववनेनिजे । राष्ट्रस्यर्द्ध्या अभयस्यावरुद्ध्यै
तब पूजक अर्घ्य जल लेकर-ॐ अर्घ्यम् ३ प्रतिगृह्यताम्-कह
कर पूज्य की अंजली में उसे दे देवे और वह यह मन्त्र पढ़कर उसे ले
प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरर्घ्यदेवता अर्घ्यप्रतिग्रहणे विनियोगः
ॐ अन्नस्यराष्ट्रिरसि राष्ट्रिस्ते भूयासम् ॥ यह जल हाथ
धोने को होता है। परन्तु आजकल कहीं कहीं लिखा है कि उसको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुछ अंश सिर पर डालकर शेष गिरादे । पर, सामवेदीय पद्धति में कुछ लिखा नहीं है । इसलिये हाथ ही धो डालना ठीक है । या यदि चाहे तो कुछ सिरपर भी छिड़क ले ॥ फिर पूजक आचमनीय जल लेकर-ॐ आचमनीयम् ३ प्रतिगृह्यताम्-पढ़ कर पूज्य को दे और वह लेकर अगले मंत्र से एक बार आचमन करके दो बार विना मंत्र के ही आचमन करे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुराचमनीयं देवताऽऽचमने विनियोगः । ॐ यशोऽसि यशो मयि धेहि ॥ यहां तीन बार आचमन लेकर एक बार मंत्र से और दो बार विना मंत्र के ही आचमन करना होगा । काँसे के वर्त्तन में दही, मधु और घी मिले हुए (मधुपर्क) लेकर और ऊपर से बड़े काँसे के वर्त्तन से ढँक कर पूजक कहे-ओं मधुपर्कः ३ प्रतिगृह्यताम् ॥ पूज्य इस मन्त्र से बांये हाथ पर उसे लेलेवे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्मधुपर्कोदेवता मधुपर्कग्रहणेविनियोगः । ओं यशसोयशोऽसि॥ हाथ पर वर्तन लेकर केवल मधुपर्क लेना चाहिये । फिर अगले मंत्र से तीन बार उसे खा कर चौथी बार चुपचाप खावे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्मधुपर्को देवता मधुपर्कभक्षणे विनियोगः । ओं यशसो भक्षोऽसि महसो भक्षोऽसि श्रीभक्षोऽसि श्रियं मयि धेहि ॥ फिर हाथ धोकर दो बार आचमन करे और बचे मधुपर्क को ब्राह्मण को दे देवे । तब पूजक पूज्य को चुपचाप वस्त्र आभूषणादि देवे । इसके बाद वहीं खड़ा नाऊ कहे-ओं गौर्गौर्गौः ॥ तब पूज्य कहे-प्रजापतिर्ऋषिर्बृहतीछन्दो गौर्देवता गोमोक्षणे विनियोगः ॐ । मुञ्च गां वरुणपाशाद् द्विषन्तं मेऽभिधेहि । तं जह्यमुष्यचोभयोरुत्सृज गामत्तु तृणानि पिबतूदकम् ॥ अन्तमें गौको स्पर्शकर पूज्य यह मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दो गौर्देवता गवानुमंत्रणे विनियोगः । ओं माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसाऽऽदित्यानाममृतस्यनाभिः । प्रनुवोचं चिकितुषे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥ यह गौ पूज्य की होती है । इति सामवेदी मधुपर्क विधि ।

६–सावित्रचरुहोम विधि ।

कर्ता स्नानादि करके ओखली, मुसल और बांस के सूप को धो कर ठीक करे और चमस या अन्य पात्र में पुष्प चन्दनादिमिश्रित जल रख कर उसे कुशों से ढंक दे । फिर संकल्प करे–ओं अद्येह सावित्रचरुहोममहं करिष्ये । तदंगतया नान्दीश्राद्धादिकं करिष्ये। फिर १०३ आदि पृष्ठोक्त रीति से महागणपति पूजा से नान्दी श्राद्ध पर्यन्तकी क्रिया कर डाले और इन सबों के लिये कर्माचार्य का वरण भी आवश्यकता होने के कारण करे, यदि स्वयं ज्ञाता न हो तो । फिर १८५, १९५ पृष्ठोक्त पंचभूसंस्कार, अग्निस्थापन आदि से लेकर ब्रह्मा के वरण तक की क्रियायें पूरी करके अग्नि से उत्तर पूर्वाग्र कुशों पर पूर्ववत् पात्रों को रक्खे । वही चमस या जलपात्र जो पहले रक्खा था, परिस्तरण आदि के कुश, खीर (चरु) पकाने की हँड़िया या बर्त्तन, ओखली, मुसल, कांसे का बर्त्तन, धान सहित सूप, काठ की कलछी चरु चलाने को, जिसे मेक्षण कहते हैं, २० इध्म, घी का बर्त्तन, स्रुच्, स्रुव, गर्म जल, सम्मार्जन कुश और पूर्णपात्र इन सभी को वहीं बताई रीति से रक्खे और वहीं कही रीति से इनका प्रोक्षण आदि भी कर ले । फिर अग्नि से पश्चिम पूर्वमुख बैठे और वहीं आगे पूर्वाग्र कुश रख कर उनपर ओखली और उसके पास मुसल को रक्खे। ओखली इस तरह रक्खे कि कूटने के समय वह हिले डोले न । फिर धान को चरुस्थाली या कांसे के बर्त्तन से उठाकर एक बार डाले और मन्त्र पढ़े–ॐ सावित्रे त्वा जुष्टं निर्वपामि ॥ पुनः दो बार चुपचाप डाले । तब खड़ा होकर दहिना हाथ ऊपर और बायां नीचे करके कमसे कम तीन बार इतने जोर से कूटे कि भूसी अलग और चावल अलग हो जावे । कूटने के समय ओखली से पश्चिम ओर पूर्व मुख खड़ा रहे । यदि तीन बार में भूसी अलग न हो तो और भी कूटे, ताकि चावल अलग हो जावे । तीन हीं बार कूटना आवश्यक नहीं है । बहुत लोग तीन हीं बार का नियम मान कर और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उससे चावल निकलना असम्भव जान कर चावल ही पहले से रखते हैं। पर, यह ठीक नहीं है। धान, जौ आदि अपने असली रूप में ही रक्खे जावें यही नियम है। फिर ओखली में से निकाल कर सूप से भूसी अलग और चावल अलग करले और चावल को तीन बार पानी से धो डाले। क्योंकि देवताओं की चीज तीन बार, मनुष्यों की दो बार और पितरों की एक ही बार धोई जाती है। इसके बाद २०० पृष्ठोक्त रीति से ही पवित्र बनाकर उसका मार्जनादि कर डाले, चरु बनाने के वर्त्तन (चरुस्थाली) में उत्तर तरफ अग्र करके पवित्र रख उसमें चावल डाले, पवित्र को उठाके और जगह रखकर चावलों में जल डाले और अग्निस्थान से उत्तर ओर अलग अग्नि रखकर उसे खूब पकावे। कहीं कहीं कुंड या वेदी की अग्नि पर ही पकाने को लिखा है, परन्तु यह ठीक नहीं है। फिर भी जैसी रीति हो करे। जब चरु अग्नि पर ही रहे तभी मेक्षण से प्रदक्षिण क्रम से उसे चला कर मिलादे और उसपर पवित्र रखकर स्रुवसे उसीपर घी डाले। फिर पवित्र सहित ही उतार कर अग्नि से उत्तर पूर्वाग्र कुशोंपर रक्खे और स्रुव से उसमें दोबारा घी डाले। पहली बार के डालने को अभिघारण और दूसरीबार को प्रत्यभिघारण कहते हैं। फिर अग्नि में एक लकड़ी १०-१२ अंगुल की घी में डुबोकर चुपचाप डाल दे और भूमिजप पूर्ववत् १९६ पृष्ठोक्त रीति से करे। पुनः वहीं लिखी रीति से परिसमूहन और परिस्तरण करके घृत सम्बन्धी सम्पवन आदि क्रियाओं से लेकर अंजलि दान और पर्युक्षण तक की क्रियायें उसी रीति से करे। फिर प्रपद और विरूपाक्ष जप २०१ पृष्ठोक्त रीति से कर डाले। तब आचार्य का अन्वारम्भ ब्रह्मचारी करे और आचार्य दहिना जंघा गिराकर घृतकी आहुति देवे। यहां इतना समझ लेना चाहिये कि पहले जो कुशकण्डिका की विधि सामवेदी लोगों के लिये १९५ पृष्ठ में लिखी है उसकी सभी बातें यहां की गई हैं। सिर्फ चरु सम्बन्धी कार्य अधिक हुआ है। इसी से एकाध बातें इधर उधर हुई हैं। जैसे जो पवित्र वहाँ परिस्तरणके बाद बनानेको लिखा है वह यहाँ पहले ही बनाया है। और सब क्रियायें प्रायः ज्यों की त्यों हैं, अस्तु। इसके बाद स्रुवमें से घी लेकर हवन करते हैं। तात्पर्य यह है कि आज्यभागकी आहुति के समय ब्रह्मचारी का अन्वारंभ तो रहेगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही । उसके होम के भी दो प्रकार हैं और वही बात चरुहोम की भी है । बात यह है कि प्रायः सामवेदियों के यहां यह नियम सा है और वह नियम अन्य वेद वालों के भी लिये है कि घी या चरु आदि जो होम का पदार्थ हो वह किसी पात्र आज्यस्थाली, चरुस्थाली आदि में रक्खा रहता है और उसमें से थोड़ा थोड़ा निकाल कर स्रुक् या और पात्र में रखकर उसीसे हवन करते हैं । चरुको पूर्वोक्त काठ के मेरुक से और घी को स्रुव से प्रायः निकालते और स्रुक् आदि में रखते हैं । इसी निकालने और रखने को अवदान कहते हैं । साधारण नियम यही है कि जिनके पांच प्रवर हों ऐसे गोत्रवाले पांच अवदान करके एक आहुति देवें । अर्थात् स्रुक् आदि में घी और चरु वगैरह पांच वार थोड़ा थोड़ा रख कर उसकी एक आहुति दें । इसीसे उसे पञ्चावत्ती कहते हैं । शेषके लिये चार अवदानका नियम है । वे चारवार रख कर उसकी एक आहुति देते हैं । इसीसे वे चतुरवत्ती कहाते हैं । साधारणतः यह नियम है कि भृगु के वंश में जो जमदग्नि, वत्स, विद और आर्ष्टिषेण यह चार गोत्र हैं और उन चार के भीतर के और भी जो गोत्र हैं वही पञ्चावत्ती हैं । शेष गोत्र वाले चतुरवत्ती । जैसे कि स्मृत्यर्थसार में लिखा है कि—जामदग्न्या विदा वत्सा आर्ष्टिषेणास्तथैव च । पञ्चावत्तिन एते स्युरन्ये चतुरवत्तिनः ॥ परन्तु घीके पंच अवदान और चतुरवदानमें तो कोई गड़बड़ नहीं है । पाँच वार स्रुवसे निकाल निकाल कर रखने पर पञ्चावदान और चार वार में चतुरवदान हो जायगा । लेकिन खीर (चरु) आदि में केवल चरु को ही पांच या चार बार नहीं रखते । बल्कि पहले स्रुव में कभी एक वार या दो वार घी रख कर तब चरु आदि तीन दो या एक वार रख कर फिर ऊपर से भी घी रख कर पंचावदान या चतुरवदान बनाते हैं । यह भिन्न भिन्न आहुति में भिन्न भिन्न प्रकार का है । अतएव प्रसंगवश आगे ही लिखेंगे । मैथिल पद्धति में चरुहोम में भी पहले व्याहृति होम लिख कर आज्य भाग की आहुति देने को लिखा है । यह बात ठीक नहीं है । चरु होम पहले व्याहृति होम नहीं होता और व्याहृति होम या आज्यभाग कभी भी घी के सिवाय दूसरे से किये ही नहीं जाते । इसी से उसका नाम आज्यभाग है । अस्तु, स्रुव से स्रुक् में चार बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रख कर आज्यभाग की पहली आहुति अग्नि के उत्तर और पूर्व के आधे भाग में और दूसरी दक्षिण पूर्व के आधे भाग में देते हैं। अर्थात् पहली ईशान भाग में और दूसरी अग्नि कोन में दी जाती है। यदि यजमान पञ्चावत्ती होगा तो पांच वार रख कर आहुति देंगे। आहुति-प्रजापतिर्ऋषिरग्निः सोमश्च क्रमेण देवते आज्यभाग-होमे विनियोगः। (१) ईशान- ॐ अग्नये स्वाहा इद-मग्नये नमम ॥ (२) अग्नि-ॐ सोमाय स्वाहा इदं सो-माय नमम ॥ फिर अन्वारंभ छोड़ कर चरु की आहुति देंगे। पहले चरुपात्र में चरु को बराबर करके मेक्षण से उस पर उत्तर दक्षिण दो दो और पूर्व पश्चिम दो दो ऐसी रेखायें कीजिये जिससे उसके बराबर नौ भाग हो जावें। फिर चतुरवत्ती के लिये स्रुक् में पहले स्रुव से घी डालिये। इसका नाम उपस्तरण है। पुनः चरु का बीच वाला भाग मेक्षण से लेकर स्रुक् में रख कर पूर्व का भाग भी उसी तरह रखिये। पञ्चावत्ती के लिये तीसरी बार पश्चिम का भाग रक्खेंगे। फिर स्रुव में घी लेकर स्रुक् की खीर पर डाल देंगे और जहां जहां से चरुपात्र की खीर उस पात्र से उठाये रहेंगे वहां वहां भी एक एक बार स्रुव से घी डालदेंगे। स्रुक् में पीछे से घी डालने को अभिधारण और चरुपात्र में खाली जगह डालने को प्रत्यभिधारण कहते हैं। यह तो पहला चतुरवदान या पञ्चावदान हुआ। फिर इसका होम करेंगे। यह आहुति अग्नि के बीच में दी जायगी—प्रजापतिर्ऋषिः सविता देवता सावित्र-चरुहोमे विनियोगः। (३) ओं सवित्रे स्वाहा इदं सवित्रे नमम ॥ फिर चतुरवत्ती के लिये स्रुव से स्रुक् में एकवार घी डालेंगे और पंचावत्ती के लिये दो बार और खीर का ईशान कोनवाला हिस्सा लेकर मेक्षण से स्रुक् में रखकर ऊपर से दो दो बार दोनों के लिये घी डालेंगे। बस, चतुरवदान और पञ्चावदान होगया। इस बार चरु पात्र में चरु की खाली जगह पर घी नहीं डालते। फिर होम करेंगे—प्रजापतिर्ऋषिरग्निः स्विष्टकृत् देवता होमे विनियोगः। (४) ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृ-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ते नमम ॥ फिर पूर्वोक्त रीति से महाव्याहृति का होम करके क्रियायें ३४८ पृष्ठोक्त रीति से ज्यों की त्यों पूरा करे। हां, इसमें इतनी विशेषता होगी कि वसु होम के बाद, जो बर्हिः होम के बाद होता है बचे चरु को उत्तर ओर रख देना, फिर मेक्षण से उसे दूसरे पात्र में निकाल कर रखना और ब्रह्मा को खाने के लिये देना चाहिये। ब्रह्मा चुपचाप खाकर हाथ धोवे और दो बार आचमन करके अन्त दक्षिणा लेवे। शेष क्रिया में कुछ भी अन्तर नहीं है। मेक्षण के विषय में यह नियम है कि उसे धोकर या तो रखले या अग्नि में डाल देवे साधारण रीति से तो अग्नि में डाल देनाहीं ठीक है।

ठीक यही रीति ऐन्द्रचरुहोम की है। अन्तर केवल इतना होगा कि जहाँ जहाँ संकल्प या मंत्र में "सवित्रे या सावित्र" पद आया है वहां वहां 'सवित्रे' की जगह 'इन्द्राय' और 'सावित्र' की जगह 'ऐन्द्र' पद बोलना होगा। शेष बातें अक्षरशः ज्यों की त्यों रहेंगी।

परन्तु यह जो सावित्रचरुहोम की विधि लिखी है वह आज कल की मैथिलपद्धतियों के अनुसार है, जो सावित्र व्रत के बाद सावित्र चरु होम नहीं मानकर भिक्षा के बाद या उपनयन के अन्त करने के लिये है। यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जो लोग सावित्र व्रत के अन्त में सावित्र होम करते हैं वे चरु की पूर्वोक्त आहुतियों के बाद घी की पांच आहुतियाँ मानते हैं और फिर शेष क्रिया की पूर्ति करते हैं। वे पांच आहुतियाँ वही हैं जो उपनयन में व्याहृति होम के बाद ३३५ पृष्ठ में 'अग्ने व्रतपते' इत्यादि मंत्रों से दीगई हैं विनियोग और मंत्र वगैरः ज्यों के त्यों हैं। केवल 'चरिष्यामि' जहां जहां आया है उसकी जगह 'अचारिषम्' पद बोलते हैं। यह भी याद रखना चाहिये कि यदि भिक्षा मांगने के बाद ही विवाह जायगा तब तो न अलग अग्निस्थापन की ही आवश्यकता होगी न स्विष्टकृत् होम के बाद जो महाव्याहृति होम होता है उसे न उसके बाद के कर्मों के करने की अलग आवश्यकता होगी। केवल चरु बनाने की क्रिया और उसका होम और आदि के अज्यभाग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्त के व्याहृति होम के ही कर देने से काम चल जायगा । शेष उत्तर अंग तो अन्त में पूरे होंगे ही । इति सावित्रऐन्द्रचरुहोमविधि ।

(५)

विवाहविधि ।

यद्यपि उपनयन और समावर्त्तनके मध्य में केशान्त नामक संस्कार किया जाता है । परन्तु एक तो आजकल वह लुप्त होगया है । दूसरे उसमें और चौल में कोई अन्तर नहीं है । केवल मंत्र आदि में एकाध शब्द अधिक कर दिया जाता है । जहां 'केशान्' पद है वहां 'श्मश्रुकेशान्' ऐसा कह देते हैं और जहाँ चौल में अग्नि से पूर्व रक्खे जो तिल आदि नाऊ को दक्षिणा में दिये जाते हैं तहाँ केशान्त में एक बकरा देने को कहा है और गोदान हो सके तो एक की जगह दो गौ का करना चाहिये। इसीसे उसके लिखने की आवश्यकता न समझ अब विवाह की पद्धति लिखना चाहते हैं । उसमें भी पहले यजुर्वेदियों की और पीछे सामवेदियों की लिखेंगे । हाँ, जो बातें दोनों के लिये एकसी हैं उन्हें सब से पहले लिखेंगे । परन्तु विवाह का प्रयोग और विधि लिखने से प्रथम उसके सम्बन्ध में चौल, उपनयन की तरह कुछ आवश्यक विचार करना अनिवार्य है । कारण, आजकल अन्यान्य संस्कारों और कर्मों की तरह इसकी भी दुर्गति सैकड़ों प्रकार से की जा रही है और वह विशेष हानिकारक है । क्योंकि चौल, उपनयन आदि के बिगड़ने बनने से एक व्यक्ति का हानि लाभ है। पर, विवाह के बिगड़ने से गृहस्थाश्रम और उसके द्वारा समस्त समाज के नष्ट होने की नौबत आगई है । यही नहीं, सभी नष्ट हो रहे हैं। पुरुष, स्त्री और उसकी सन्तान का निर्भर इस संस्कार पर है । इसी को नष्ट कर माता, पिता और सन्तान दुर्बल, रोगी, निस्तेज, दुर्बुद्धि और भगवती भारतभूमि के भारभूत हो रहे हैं। विधवाओं की संख्या और उनके ऊपर किये गये अत्याचारों की वृद्धि एवं तद्द्वारा हिन्दू समाज की छिन्नभिन्नता दिनों दिन द्रुतगति से बढ़रही है । सारांश, इस विवाह जैसे पवित्र संस्कार को चौपट कर हम अपने पांव में हीं कुल्हाड़ी मार रहे हैं। फलतः हमारा शीघ्र सर्वनाश अवश्यम्भावी है, यदि शीघ्रता के साथ हमने इसे न सुधारा ।

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विवाह के सम्बन्ध में सब से अन्यायपूर्ण वार्ता अवस्था सम्बन्ध की है। इसके बारे में हिन्दुओं की भ्रान्तरूढ़ि बहुतही हानि कारक होरही है। यद्यपि परिस्थिति और समय की गति के कारण हम में से कट्टर से कट्टर रूढ़ि के समर्थक और पंडित नामधारी लोग अपनेहीं दांतों पकड़े नियमों को काट रहे हैं, उनका उल्लंघन करते हैं। तथापि जहां की परिस्थिति बाध्य नहीं करती वहां यह अत्याचार निष्कंटक राज्य कर रहा है और हमारी दाम्भिकता हमें सर्वनाशके पथ पहुँचारही है। आजकल–अष्टवर्षा भवेद् गौरी नववर्षाचरोहिणी। दशवर्षा भवेत्कन्या अतऊर्ध्वं रजस्वला ॥६६॥ माता चैव पिता चैव ज्येष्ठो भ्राता तथैव च ॥ त्रयस्ते नरकंयांति दृष्ट्वा कन्यां रजस्वलाम् ॥ ६७ ॥ तस्माद्विवाहयेत्कन्यां यावन्नर्तुमती भवेत्। विवाहो ह्यष्टवर्षायाः कन्यायास्तु प्रशस्यते ॥ ६८ ॥ इत्यादि वचनों पर, जो संवर्त स्मृति में मिलते हैं और पराशरस्मृति के सातवें अध्याय में तथा अन्य भी जिनको देख सकते हैं, बहुत जोर देकर आठ वर्ष की कन्या का विवाह की बड़ी भारी महिमा गाई जाती है। शीघ्रबोध नामक नन्हे से ज्योतिष ग्रन्थ ने इस विषय में बड़ा भारी चौका लगाया है। कारण, उसका प्रचार बहुत है और उसने इसकी भरपेट महिमा गाई है। परन्तु यदि विचार से देखा जाय तो साधारणतः इन स्मृति वाक्यों के मानने को कोई भी बाध्य नहीं है। इसके कई कारण हैं। पहली बात तो यह है कि इन्हों ने रजःप्रवृत्ति या रजोदर्शन की जो व्याख्या करडाली है वह ठीक नहीं है। वे कहते हैं कि दस वर्ष के बाद कन्या रजस्वला हो जाती है। परन्तु यह स्मरण रखने की बात है कि रजस्वला होना प्रकृति और उसके द्वारा शरीरका धर्म है न कि किसी के कहने से वह हो सकता है। जब जल वायु की अवस्था के प्रभाव से रज का परिपाक स्त्री में होता है तो वह बाहर निकलता है। वह तो एक प्रकार से शरीर का सार या रस है। जिस तरह नीबू आम आदि फलों के परिपाक होनेपर ही उनमें से रस निकल सकता है उसी तरह जब स्त्री की युवा अवस्था आ जाती या उसका आरम्भ हो जाता है तभी रज की प्रवृत्ति होती है। कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तरह पुरुष में वीर्य है उसी तरह स्त्री में रज। यदि वीर्य के लिये जवानी और परिपक्व अवस्था की आवश्यकता है तो फिर रज के लिये क्यों न होगी ? फिर वर्षों की कैद कैसे लगाई जा सकती है कि इतने ही वर्षों में स्त्री रजस्वला हो जायगी ? इसीलिये गृह्यसूत्रकारों ने, जिनके आधार पर विवाह आदि कर्मों की पद्धतियां तय्यार की गई हैं और जिन्हों ने सभी संस्कारों की विधि लिखी है, अवस्था का कोई नियम नहीं बांधा है और न इसी पर जोर दिया है कि रजस्वला होने पर विवाह करना हीं नहीं चाहिये, नहीं तो नरक में जाना होगा। गोभिल ने अपने गृह्यसूत्र के तीसरे प्रपाठक के चौथे खंड के सातवें सूत्र " नग्निका तु श्रेष्ठा " में केवल इतनाहीं लिखा है कि जब तक रजस्वला न हो तबतक का विवाह सर्वोत्तम है। इससे स्पष्ट है कि एक तो वे वर्षों की मर्यादा नहीं करते कि इतने हीं वर्ष में रजस्वला होती है या इतने हीं में विवाह करे। दूसरे उसको सर्वोत्तम वे अवश्य कहते हैं, नकि वही विवाह की निश्चित अवस्था है। मध्यम और निकृष्ट अवस्था का भी तो आखिरकार उसमें समावेश हो ही जाता है। फिर हम लोग जब और बातों के लिये आपद्धर्म और कलिकाल का सहारा लेते हैं, तो कन्या के विवाह के विषय में भी क्यों न मध्यम या निकृष्टपक्ष से काम चलावें ?

हां, इतना अवश्य हो सकता है कि देश की प्रकृति और जल वायु तथा वहां के लोगों की सामान्य शरीररचना देखकर यह मोटा-मोटी साधारण निश्चय कर दिया जावे कि इतने समय तक रजस्वला होने का साधारण नियम हो सकता है, और इससे पहले नहीं हो सकता है। इस निश्चय में भी एक बात का ध्यान रखना होगा कि भारतवर्ष की प्रकृति सर्वत्र एकसी नहीं है। इसलिये इतने हीं वर्ष में रजस्वला हो जायगी यह नियम बनाया नहीं जा सकता। किन्तु यही नियम बन सकता है कि इतने वर्ष तक तो रजस्वला होना सम्भव नहीं। परंतु इसके बाद हो सकता है। इससे जहां का जैसा जल वायु होगा उसके अनुसार स्त्रियां आगे पीछे रजस्वला हुआ करेंगी न कि एक ही अवस्था में सभी प्रान्तों में। परन्तु इस शरीर विचार और प्रकृति प्रभाव के चिन्तन के ही लिये जो आयुर्वेद ग्रन्थ हैं उन्हें छोड़कर इसका समुचित निर्णय दूसरा नहीं कर सकता। हां, यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरी बात है कि कोई अनुभवी ऋषि मुनि उनकी सी ही बातें
या उन्हीं के आधार पर ही कुछ लिखें। परन्तु उनके विपरी
लिखने वालों की भी बातें यदि मानी जावें तो फिर आयुर्वेद
उसके ग्रन्थों के लिये कौनसा स्थान और काम होगा? क्या
विषय में भी हस्तक्षेप करना अनधिकार चेष्टा और दूसरे के काम
हस्तक्षेप करना न होगा? अतएव स्मृतिकारों को अवस्था परिणा
या शरीरदशा के विषय में ठीक उसी तरह स्वतंत्र प्रमाण न
मान सकते जिसतरह आत्मा और परमात्मा के विचार
आयुर्वेद को। कारण, जैसे उसका मुख्य विषय प्रकृति या
का विचार करना है उसीतरह स्मृतियों का काम सन्ध्या
अग्निहोत्रादि धर्मकर्मों का विचार करना है और उसीके सम्बन्ध
में आत्मा तथा परमात्मा का चिन्तन भी उन्हें हीं करना चाहिये
अब, देखना यह है कि आयुर्वेदाचार्यों का रजस्वला के सम्बन्ध
एवं विवाह या सन्तानोत्पत्ति के लिये समय निश्चित करने
क्या मत है। सब से पहले धन्वन्तरि के सुश्रुत को देखिये
शारीरस्थान नामक प्रकरण के तीसरे अध्याय गर्भावक्रान्ति
लिखते हैं कि "स्त्रियों की अवस्था के बारह वर्ष बीतने पर
रज की प्रवृत्ति होती है और वृद्धावस्था के कारण शरीर जीर्ण होने
पचास वर्ष के बाद उसका नाश हो जाता है—तद्वर्षाद् द्वादश
त्काले वर्त्तमानमसृक् पुनः । जरापक्वशरीराणां या
पञ्चाशतः क्षयम् ॥ यही श्लोक थोड़ा सा हेरफेर के साथ भा
प्रकाश के गर्भप्रकरण में इसतरह लिखा है—रसादेव र
स्त्रीणां मासि मासि त्र्यहं स्रवेत् । तद्वर्षाद् द्वादशादू
याति पञ्चाशतः क्षयम् ॥ २४४ ॥ इसमें अधिकता इस
हीं है कि वह यह स्पष्ट कहे देते हैं कि स्त्रियों के शरीर में जो
है उसी के कारण प्रत्येक मास में तीन दिन तक रज बाहर गिरा करता
है। इस प्रकरण के आरम्भ में भी भावप्रकाशकार यही कहते हैं कि
द्वादशाद्वत्सरादूर्ध्वमापञ्चाशत्समाः स्त्रियः । मा
मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्त्तवं स्रवेत् ॥ १ ॥ इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"प्रकृत्यैवार्त्तवं स्रवेत्" वाक्य इस बात को स्पष्ट करता है कि बारह वर्ष के बाद ही रजस्वला होने की प्रकृति है। इसके अतिरिक्त सुश्रुत ने हीं शारीरस्थानप्रकरण के गर्भिणीव्याकरण नामक दसवें अध्याय में स्पष्ट ही लिखा है कि २५ वर्ष के बालक का १२ वर्ष की स्त्री से विवाह करने पर ही पितृ, धर्म, अर्थ और काम के कर्मों की साधक सन्तति होती है। यदि सोलह वर्ष से कम अवस्थावाली स्त्री में २५ वर्ष से कम अवस्था का पुरुष गर्भाधान करे तो वह गर्भ ठहरताही नहीं, गिर जाता है। अथवा यदि किसी तरह ठहर गया और बच्चा उत्पन्न हुआ तो अल्पायु होता है। यदि कुछ अधिक दिन भाग्यवश्य जी भी गया तो उसकी देह और सभी इन्द्रियां शिथिल और रोगाक्रान्त होती हैं। इसी तरह अत्यन्त वृद्ध या रोग आदि कारणों से अभिभूत स्त्री में भी गर्भाधान न करे। यही बात पुरुष के भी लिये लागू है—अथास्मै पञ्चविंशतिवर्षाय द्वादशवर्षां पत्नीमावहेत् पित्र्यधर्मार्थकामप्रजाः प्राप्स्यतीति। ऊनषोडशवर्षायामप्राप्तः पञ्चविंशतिम्। यद्याधत्ते पुमान्गर्भं कुक्षिस्थः स विपद्यते॥ जातो वा न चिरंजीवेज्जीवेद्वा दुर्बलेन्द्रियः। तस्मादत्यन्तबालायां गर्भाधानं न कारयेत्॥ अतिवृद्धायां दीर्घरोगिण्यामन्येन वा विकारेणोपसृष्टायां गर्भाधानं नैव कुर्वीत। पुरुषस्याप्येवंविधस्य तएव दोषाः सम्भवन्ति॥ शार्ङ्गधरसंहिता के प्रथम खंड के छठें अध्याय के "विंशतेश्चैव मैथुनम्" (१९) श्लोक पर उसकी दीपिका में २० वर्ष की अवस्था में गर्भाधान की बात लिखकर वहीं पर किसी दूसरे वैद्यक ग्रन्थ को इस तरह उद्धृत किया है—पंचविंशतमे वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे। समत्वागतवीर्यौ तु जानीयात्कुशलोभिषक्॥ इसका अभिप्राय है कि चतुर वैद्य पुरुष के २५ वें और स्त्री के सोलहवें वर्ष में यह जान जावे कि दोनों में समता आगई और वीर्य हो गया है। वीर्य से अभिप्राय है पुरुष के शुक्र (धातु वा वीर्य) से और स्त्री के रज से।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऊपर के इन आयुर्वेदीय प्रामाणिक वाक्यों से विदित हो गया कि भारत की प्रकृति पर विचारकर उन्होंने कैसी व्यवस्था की है। यह भी निश्चय होगया कि वे लोग १२ वर्ष से पहले रजस्वला होना संभव ही नहीं मानते। अतएव १२ वर्ष तक या इससे पहले स्त्री के रजस्वला होने और विवाह के वे लोग कट्टर विरोधी हैं। वे इस बात को मानते हैं कि १२ वर्ष के बाद ही प्रदेशों के जलवायु और गर्मी सर्दी के अनुसार स्त्रियां रजस्वला होती हैं और देश की विभिन्न प्रकृति के अनुसार यह सिलसिला १६ वर्ष या उसके बाद तक चलाजाता है। अतएव सोलह वर्ष से पहले स्त्री का गर्भाधान नहीं होना चाहिये, ऐसी उनकी सम्मति है। साधारणतया स्त्री की अवस्था २० वर्ष की और पुरुष की २५ वर्ष से अधिक चाहिये, वे ऐसा ही मानते हैं। विवाह के लिये भी पुरुषकी अवस्था कम से कम २५ वर्ष की होनी चाहिये।

अब यदि इस कसौटी पर पूर्वोक्त पराशर या संवर्त के वचनों को रखते हैं तो वे कहां खरे उतरते हैं? वे तो १० वर्ष के बाद स्त्री को रजस्वला बता देते हैं और आठ वर्ष में ही विवाह करने की कड़ी आज्ञा देते हैं! इसके बाद तो नर्क का द्वार ही खोलते हैं! यह भी तो स्मरण रखने की बात है कि सभी गृह्यसूत्रों में इस बात की ताकीद की गई है कि बिवाह के बाद तीन दिन तक-चतुर्थी तक-स्त्रीसंभोग न करे। यह बात सबने लिखी है। इसमें किसी का भी न तो विरोध है और न किसी ने इस बात को छोड़ा ही है। यह सभी को बराबर स्मरण रही है। अतएव सभी ने लिखी है। इससे क्या यह स्पष्टतया विदित नहीं हो जाता कि सभी सूत्रकार महर्षियों के दिल और दिमाग में यही एक धारणा थी कि विना प्रौढ़ या गर्भाधान के योग्य अवस्था हुए-जवान हुए-न तो स्त्री का और विवाह होगा और न पुरुष काही। इसीसे बीच मेंहीं स्त्री प्रसंग हो जाने का सभी को भय था। अतएव सभीने यह एक स्वर से कहा है कि तीन दिनोंतक तो अवश्यमेव ब्रह्मचारी रहे। इससे, यदि यह कहा जाता कि यद्यपि पराशरादिने विवाहका समय ८ या १० वर्ष रक्खा है फिर भी गर्भाधान का समय वह भी सोलह वर्ष के बाद साधारणतः बीस वर्ष तक मानते हैं। अतएव असली बात जो सन्तान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नोत्पत्ति या गर्भाधान की है उसका विरोध पराशर के वाक्य में भी नहीं है । उसका भी निराकरण हो गया । ऋषिलोग विवाह की अवस्था प्रौढ़ अवस्थाकोही मानते थे। फिर इस टीका टिप्पणी से कैसे काम चलसकता है ?

यही नहीं कि प्रकृति के नियम और पूर्वोक्त महर्षियों के सूत्र-ग्रन्थों तथा आयुर्वेदीय वचनों के विरुद्ध उक्त पराशरादि के वचन हैं। उनमें मनुस्मृति से भी विरोध स्पष्टरूप में पाया जाता है और यह नियम है कि मनुके विपरीत वचनों को नहीं मानना चाहिये, ऐसे वचनों वाली स्मृतियाँ प्रमाण नहीं हो सकती हैं । क्योंकि मनुने जो कुछ भी कहा है वह औषधि के समान है । अतएव मनु को उसी तरह प्रमाण मानना चाहिये जैसा कि वेदों को मानते हैं । यह बात मनु के टीकाकार कुल्लूक स्वयं स्वीकार करते हैं । जैसा कि पहले श्लोक में हीं पूर्वोक्त अभिप्राय के श्लोकों और वचनों को बृहस्पति स्मृति, छान्दोग्य ब्राह्मण और महाभारत से इस तरह उद्धृत करते हैं– "मन्वर्थविपरीता या सा स्मृतिर्न प्रशस्यते", "मनुर्वै यत्किंचिदवदत्तद्भेषजं भेजतायाः", "पुराणं मानवो धर्मो सांगो वेदश्चिकित्सितम् । आज्ञासिद्धानिचत्वारि नहन्तव्यानिहेतुभिः" इत्यादि । अब देखिये, मनुकी राय विवाह की अवस्था के विषय में क्या है । वे पुरुष के बारे में तीसरे अध्याय में लिखते हैं कि तीन वेद पढ़ने के लिये ३६ वर्ष गुरु के पास नियम-पूर्वक रहे, १८ ही वर्ष, ९ ही वर्ष या पढ़ने भरके ही लिये रहे और तीन, दो या कमसे कम एक वेद भी पूर्ण ब्रह्मचर्य के नियम पालनपूर्व-क पढ़कर गृहस्थाश्रम में प्रवेश करे–षट्त्रिंशदाब्दिकंचर्यं गुरौ त्रैवेदिकं व्रतम् । तदर्धिकं पादिकं वा ग्रहणान्तिकमेव वा ॥ १ ॥ वेदानधीत्यवेदौवा वेदंवापि यथाक्रमम्। अविप्लुतब्रह्मचर्यो गृहस्थाश्रममाविशेत् ॥ २ ॥ फिर ९ वें अध्याय में दोनों के विषय में लिखते हैं कि तीसवर्ष की अवस्था वाला पुरुष १२ वर्ष की कन्या से विवाह करे यह साधारण नियम है । परन्तु यदि किसी प्रकार की घोर आपत्ति या धर्मसंकट होने से बहुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शीघ्रता करनी हो तो २४ वर्ष का पुरुष ८ वर्ष की कन्या से विवाह कर सकता है-त्रिंशद्वर्षोद्वहेत्कन्यां हृद्यान्द्वादशवार्षिकीम् । त्र्यष्टवर्षोऽष्टवर्षां वा धर्मे सीदति सत्वरः ॥ २५ ॥ धर्मसंकट या जल्दी बाजी का अर्थ यह है कि जब ज्योतिषादि प्रमाण या और तरह से अल्पायुका निश्चय होजाने या युद्धादिकी संभावना से उसमें मरने के कारण वंशोच्छेद की संभावना हो, जैसी कि अभिमन्यु की मृत्यु के बाद हो सकती थी । इससे तो स्पष्ट ही है कि आयुर्वेदीय वाक्यों और मनुवचन का ठीक ठीक मेल होजाता है क्योंकि मनु का साधारण नियम कमसे कम १२ वर्ष का है। हां यह दूसरी बात है कि आपत्ति और बहुत जल्दी के लिये वह ८ वर्ष की रिआयत करते हैं । पर वह साधारण नियम नहीं है । उक्त पराशर के वचन में ८ वर्ष ही साधारण नियम है और जो मनु का साधारण नियम है उसे पराशर नरक का सामान मानते हैं ! ८ दसवर्ष के बाद बढ़ना नहीं चाहते हैं ! ऐसा करने में उन्हें नरक दीखता है ! इधर मनु १२ वर्ष से नीचे उतरना नहीं चाहते । ऐसी दशा में क्योंकर पराशरादि के उक्त वचन मान्य हों सकते हैं !

परन्तु ऐसा कहने पर यह अपराध लगाया जायगा कि आप्त वचन की अवहेलना की जाती है ! लोग नास्तिक और आर्यसमाजी कहकर घृणा करने को भी तैयार होजायँगे ! पर, किया क्या जाय यह हमारी कोई नई कल्पना नहीं है । पहले कही चुके हैं कि पुराने लोगों ने हीं माना है कि मनु के विरोधी वचन सदा अमान्य रहेंगे । फिर वे क्यों न नास्तिकादि विशेषणविभूषित किये गये ? व्यास जी तो अपनी स्मृति में स्पष्ट ही लिखते हैं कि वेद, स्मृति और अन्यपुराणों में जहाँ परस्पर विरोध हो वहां स्मृति और पुराणों के मुकाबिले में केवल वेद ही प्रमाण माने जाय शेष अप्रमाण । इसी तरह जब पुराण और स्मृतियों के वचनों में परस्पर विरोध हो तो केवल स्मृति ही मानी जावे-श्रुतिस्मृतिपुराणानां विरोधो यत्र दृश्यते । तत्र श्रौतं प्रमाणं स्मृतौ तयोर्द्वैधे स्मृतिर्वरा ॥ १।४ ॥ तो क्या वेदव्यास को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई नास्तिक और आर्यसमाजी कहकर घृणित समझने की हिम्मत करेगा ? आगे चलिये और मीमांसा दर्शन के प्रथमाध्याय के तृतीय पाद के " विरोधे त्वनपेक्ष्यं स्यादसतिह्यनुमानम् ॥३॥ हेतुदर्शनाच्च " ॥४॥ इन सूत्रों के शबरभाष्य को देखिये । उन्हों ने स्पष्टरूप से ही "औदुम्बरी सर्वा वेष्टयितव्या," "अष्टाचत्वारिंशद्वर्षाणि वेदब्रह्मचर्यम्," " वैसर्जनहोमीयं वासोऽध्वर्युर्गृह्णाति," "यूपहस्तिनो दानमाचरन्ति" इत्यादि स्मृति वचनों का उल्लेख करके इनको निर्मूल, मनगढ़न्त और अप्रमाण लिखमारा है और मीमांसा दर्शन को ही अर्थ करना सीखने का साधन हमलोग मानते हैं । वह इसलिये बनाया ही गया है कि वाक्यों के अर्थ करने की रीति हमलोग उससे सीखें । तो फिर क्या जैमिनि, शबर और उनके टीकाकार कुमारिल आदि को नास्तिक कहें? यदि वे नास्तिक नहीं तो हम क्यों कर ? केवल इसी लिये कि वे पुराने हैं और उनके ही दिखाये मार्ग पर चलनेवाले हम नये हैं ? इसलिये अगत्या यही मानना पड़ेगा कि उक्त पराशरादि वचन या तो पीछे के मिलाये हुए हैं, किसी ने उन्हें पीछे से रचकर मिला दिया है । या यदि उनके साथ ज्यादा मुरव्वत करनी हो तो कह देना चाहिये कि मनु के कथनानुसार केवल धर्म संकट में ही उनसे काम लिया जा सकता है । परन्तु इस समय तो हमारे ऊपर विवाह के लिये कोई भी धर्मसंकट है नहीं । मुसल्मान राजत्वकाल में याद था तो वह समय अब नहीं है । फिर हम उन वचनों को क्यों मानने लगे ? अतः उन्हें न मानकर कन्या का १२ वर्ष और बालक का २५ वर्ष से पहले तो कथमपि विवाह नहीं करना चाहिये । यदि १२ के बाद सोलह तक जावें तो और भी अच्छा ।

इसके सिवाय दो एक बातें और भी हैं जिन पर विशेष ध्यान देना चाहिये । आजकल विवाह संस्कार अत्यन्त लुप्तप्राय हो गया है । विवाह के अनन्तर चतुर्थी कर्म करके उसी दिन कंकण छोड़ना और जलपूजा आदि करना चाहिये । मगर चतुर्थी कर्म तो उत्तर भारत में प्रायः लुप्त ही हो गया है । यदि मिथिला में नाममात्र के लिये है भी तो जिन मैथिलों में उसकी कुछ अधिक प्रथा है वे कन्या-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विक्रयादि दुर्गुणों से उसे और भी चौपट कर चुके हैं। कारण खरीदी स्त्री तो दासी ही होती है न कि भार्या या पत्नी और चतुर्थी कर्म भार्या बनने के ही लिये किया जाता है। इसके अतिरिक्त विवाह के सम्बन्ध में उनमें सैकड़ों बुराइयां आगई हैं जिनका वर्णन व्यर्थ ही है। अतएव इन बुराइयों को दूर करके चतुर्थीकर्म नियमित रूप से होना चाहिये। विक्रय तो वर का भी वैसा ही खराब है जसा कन्या का। अतएव दोनों को रोकना चाहिये और विवाह के समय सुयोग्य विद्वानों के उपदेश एवं धर्मशास्त्रों के विचार का प्रबन्ध करना चाहिये, न कि वाहियात नाच वगैरः में धन और धर्म दोनों ही चौपट करना कथमपि श्रेयस्कर है।

विवाह में कंकणबन्धन, ग्रन्थिबन्धन और सिन्दूरदान की प्रथा है। इस में बड़ा ही मतभेद है कि ये बातें कब की जावें। यद्यपि कंकण बन्धन के बारे में किसी भी माननीय पद्धति में यह नहीं लिखा है कि वर और वधू के वस्त्र पहिनकर परस्पर अभिमुख करने के बाद ही और कन्यादान से ठीक पूर्व ग्रन्थिबन्धन के समय ही कंकणबन्धन करना चाहिये। वह समय तो ग्रन्थिबन्धन का है जिसे जन्मग्रन्थिबन्धन भी कहते हैं और जिसका अर्थ यही है कि वर कन्या के जन्मभर के लिये उनका सम्बन्ध कर दिया जाता है, वे परस्पर बांध दिये जाते हैं। मगर मिथिला के व्यवहार और एकाध पद्धति से यही सिद्ध होता है कि उसी समय कंकण बन्धन भी करना चाहिये। मिथिला की सम्प्रदाय है कि वर के आँगन आने पर पहले उसके सहित आठ ब्राह्मण किसी ओखली में धान रखकर पुरुषसूक्त के सोलह मन्त्रों से उसे कूटते हैं और यजमान उसी कूटने के मुसल में हाथकता सूत लपेट कर उसी से उन आठों को घेर देता है। वे जब आठ बार मुसल चला लेते हैं तब उसे सूप से फटककर और उसके चावल को आम के दो पल्लवों पर रखकर उसी घेरने के सूत से उन्हें बाँधकर दो कंकण बना देते हैं। इसके बाद वर मण्डप की प्रदक्षिणा करके मण्डप के भीतर जाता है। फिर ग्रन्थिबन्धन के समय उस कंकण को वर कन्या दोनों को बाँधते हैं। इस से तो स्पष्ट ही है कि उनके यहाँ पहले कंकण बाँधा ही नहीं जाता। वह असंभव है। उनकी किसी किसी पद्धति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में यह लिखा भी है। विहार के पश्चिमी जिलों में भी जहां तहां यही देखा जाता है। यद्यपि उस तरह चावल कूटने की रीति तो नहीं है, मगर सिन्दूर या कोई और चीज आम के पल्लव में बांध कर उसेही ग्रन्थिबन्धन के समय बांध देते हैं। परन्तु वस्तुगत्या मिथिला और इन जिलों की यह रीति ठीक नहीं है। जैसा कि पहले ही कह चुके हैं, यह तो रक्षाबन्धन की ही तरह एक क्रिया है और चावल का नहीं किन्तु हल्दी, सफेद सरसों आदि दूसरी ही नौ चीजों का यह कंकण बनाया जाता है। फिर, उचित यही है कि वह पहले ही बांधा जावे और उसी दिन, जिस दिन स्तम्भारोपण, ग्रहपूजन और तैलाभ्यंग या हरिद्रालापन करें। यही रीति पश्चिम में है भी और अन्यान्य सभी पद्धतियों में यही लिखा भी है। मिथिला की माननीय पद्धतियों में इसके बारे में कोई चर्चा नहीं है। हमने यह इसलिये लिख दिया है कि इस विषय में बड़ा ही मतभेद है। अब रही करनेवालों की मर्जी। चाहे जब करें और जैसे करें। उन्हें रोकने की शक्ति हममें नहीं है। पर उचित जानकर लिख दिया है। कंकण की नौ वस्तुएं हेमाद्रि के मतानुसार दानमयूखादि ग्रन्थों में भी लिखी हैं।

जन्मग्रन्थि बन्धन या ग्रन्थिबन्धन तो सभी जगह कन्यादान से ठीक पूर्व होता है और पद्धतियों में भी यही लिखा है। हां, किसी किसी ने कन्यादान के बाद और अग्नि के समीप जाने से प्रथम हीं ग्रन्थिबन्धन लिखा है। पर, अधिक सम्मति और परिपाटी कन्यादान से पहले ही करने के पक्षमें है। ग्रन्थिबन्धन की भी दो रीतियां हैं। किसी किसीने वर कन्या का अलग अलग ग्रन्थिबन्धन लिखा है, नकि दोनों को मिलाकर एक जगह। अक्षत सरसों आदि लेकर वर और कन्या दोनों के किसी वस्त्र के किनारे अलग अलग बाँध देते हैं और चतुर्थीकर्म के दिन कंकण खोलने के समय इसे भी खोलते हैं। पर, अधिकांश प्रथा और सम्मति यही है कि द्रव्य, सुपारी, अक्षत, सरसों, हल्दी आदि लेकर वर कन्या दोनों के कपड़ों के किनारे को मिलाकर एकही जगह बांध देते हैं। परन्तु वे लोग भी यही मानते हैं कि कंकण के साथही यह ग्रन्थि खुलती है। इससे स्पष्ट है कि जब वर इधर उधर जाता है तो बन्धनवाला अपना वस्त्र

BajiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वधू के पास रख देता है। अतः जैसी रीति हो वैसा करे।

आजकल प्रायः सिन्दूरदान कोही सुमंगलीकरण कहते हैं परन्तु सुमंगली के बाद ही वह किया जाता है और प्रायः सर्व यही चाल है और मैथिलपद्धतियों को छोड़कर अन्य पद्धतियों लिखा भी ऐसा ही है। वस्तुतः सुमंगली तो किसी के मत से क का अभिमंत्रण है और किसी के मत से दर्शक लोगों को या देव ओं को निमंत्रित करना है कि वे उस कन्या को मंगल दृष्टि से दे और उसे सौभाग्य का आशीर्वाद दें। आजकल सौभाग्य या सोह सिन्दूर कोही कहने लगे हैं और पहले यह चाल भी सर्वत्र नहीं बहुत जगह थी कि वर के सिन्दूरदान के बाद दूसरे भी आशीर्व देते और सिन्दूरदान करते थे। मगर आजकल वर के क केवल ४ या ५ स्त्रियां हीं सौभाग्यका आशीर्वाद देकर सिन्द भी पहनाती हैं। यह बात सुमंगली का मंत्र पढ़नेके बाद ही जाती है। इसी से सुमंगलीकरणका ही अर्थ सिन्दूरप्रदान गया है। परन्तु मैथिलपद्धतियों में लिखा है कि विव कर्म की समाप्ति हो जाने पर कर्म की दक्षिणा देने से पहले सिन्द दान किया जाता है। यह परिपाटी केवल वहीं है, और कहीं नहीं उचित भी यही है कि सुमंगलीकरण के बाद ही सिन्दूरदान हो कारण, उस मंत्र में सौभाग्य देने को कहा है और सौभाग्य का प्र द्ध अर्थ आजकल सिन्दूर ही है। अतएव विधवा होने पर स्त्री मांग का सिन्दूर ही धोया जाता है। सिन्दूर लगाने के समय में सोना, शमी का पत्ता और सन ले लेते हैं और उन्हीं से उठा सिन्दूर लगाने की परिपाटी है। कहीं केवल सोने से और तीनों से लगाते हैं, बल्कि कौड़ी मिला कर चार चीजों से लगाते इसके बाद चार पा पांच सौभाग्यवती स्त्रियां भी लगाती हैं।

आजकल बहुत जगह मूर्खता के कारण वर के बैठने का जो या आसन होता है उसेही कई बार कलश से स्पर्श कराकर में पैसा और अक्षत रखने की चाल है और कई बार ऐसा उसी पीढ़े के चारों कोनों पर रखकर पैसे पुरोहित लेलेते हैं। यह मूर्खता है। वह तो वर के बैठन के लिये आसन है। वह किसी वृक्ष का बनना चाहिये और इतना बड़ाहो कि वर वधू दोनों ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बैठसकें। इसीलिये कहीं कहीं दो पीढ़े बनाये जातेहैं। उसका और कोई प्रयोजन नहीं है और न वह कोई देवता है। मधुपर्क देने से पहले उसी पर वर बैठता है और उसीपर कुशका विष्टर रख देते हैं। दोना दोनी भरवाना तो पुरोहितों की ठगविद्या है। मिथिला में तो विष्टर का काम भी पल्लव ही से लेते हैं! यह नितांत अनुचित है। वह तो कुशों का ही बनता है, जैसा ३५ वें पृष्ठ में लिखा है। अतएव परिपाटी या रूढ़ि के भक्त होने की कोई आवश्यकता नहीं है। विचार से काम लेना चाहिये। आजकल अधिकांश जो ही बातें होती हैं, या प्रचलित हैं, वे मूर्खतावश ही हो रही हैं और जान लेने पर भी मूर्खतापूर्ण बातों का हो समर्थन करते रहना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है। प्रत्युत हानिकर है।

विवाह में वररक्षा, जिसे पश्चिम में सगाई कहते हैं, से लेकर चतुर्थीकर्म के दिन कंकण छूटने तक अनेक कर्म हैं। अतएव संक्षेप से सभी की विधि बतावेंगे। विवाह के मुहूर्त्त और लग्न आदि के बारे में अन्त के ज्योतिष के प्रकरण में हीं देखना चाहिये और यह स्मरण रखना चाहिये कि साधारण रीति से विवाहसम्बन्धी वररक्षा, तिलक वा फलदान, तैलाभ्यंग और मण्डपादिका निर्माण प्रभृति जितनी क्रियायें हैं वे विवाह के नक्षत्रों और दिनों में ही की जानी चाहियें। हाँ, विवाह से पहले नवें, छठे या तीसरे दिन कोई काम न करे और विवाह के बाद मण्डप आदि के उजाड़ने का काम दूसरे चौथे आदि सम दिनों में हीं, छठें दिन को छोड़कर, करना चाहिये। विषम दिनों में केवल पाचवाँ और सातवाँ ही दिन लिया जाता है। मण्डप कन्या के हाथ से १६ हाथ लम्बा और १६ ही हाथ चौड़ा, नहीं तो १२, १० या ८ हाथही लम्बा चौड़ा बनना चाहिये। हर हालत में लम्बाई चौड़ाई बराबर ही रहे और १६ खम्भों या बांसोंसे बनाया जावे, नकि नौसे, जैसी रीति बहुत जगह चलपड़ी है। मण्डप के ईशान कोन में वरके हाथ से चार हाथ लम्बी चौड़ी या कन्या के हाथ से ५ हाथ की वेदी होमके लिये बनाई जावे। वेदी के ऊपर बालू देकर वह चिकनी बनाई जावे जिससे देखने में सुन्दर हो और उत्तर पूर्व जरासी ढालू हो। इसे चारों ओर से बाँस वगैरः से घेर देना चाहिये ताकि सुरक्षित रहे। मंडप से नैर्ऋत्य कोन में ही

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोहबर का घर होना चाहिये जिसे कौतुकागार भी कहते हैं। यह हमेशा मण्डप के नैर्ऋत्य कोन में ही रहा करता है। मैथिलों मण्डप बनाने की चाल ही नहीं है। हालांकि, यह नितान्त अनुचित है। उसी ईशान कोन वाली वेदी में एक हाथ भूमि लीप पोत उसमें मधुपर्क के बाद ही अग्नि की स्थापना वर करता है और पाणिग्रहण के बाद वहीं जाकर शेष कुशकण्डिका करके होम करता है। उसी के उत्तर सप्तपदी के लिये हल्दी या आटे से सात घर उत्तर उत्तर बनाये जाते हैं और अग्नि और उनके बीच में अश्मारोहण के लिये पत्थर रक्खा जाता है। उसी के दक्षिण ब्रह्मा का आसन रहता है और लाजाहोम भी उसी अग्नि में होता है, न कि आजकल की तरह यों हीं सभी लाजा या लावा किसी को दिया जाता है। सप्तपदी अवश्यमेव कराई जानी चाहिये। उसके बिना तो विवाह कहाता ही नहीं और दुर्भाग्य से आजकल उसका न तो कोई महत्त्व ही जानते हैं और न ठीक ठीक उसे कराते ही हैं। उसी अग्नि की चार प्रदक्षिणा भी लाजाहोम के साथ ही की जाती है। प्रदक्षिणा के समय वधू आगे और वर पीछे रहता है। इस बात का सदा ध्यान रखना होता है कि लाजा, घी, स्रुव, वाला घड़ा जो एक बलिष्ठ ब्राह्मण के कन्धे पर रहता है, ब्रह्मा, करानेवाले आचार्य और गुरु इन सात चीजों की भी प्रदक्षिणा जावे। तात्पर्य है कि इन सातोंको बाहर रखकर इनके भीतर ही प्रदक्षिणा की जानी चाहिये। अश्मारोहण के समय वधू के पांव कभी भी पत्थर पर न रक्खे जावें। केवल दहिना हीं रक्खा जावे। सप्तपदी में भी पहले वधू का दहिना ही पाँव उठना चाहिये। लाजाहोम वधू ही करती है और मंत्र भी वही पढ़ती। यदि वह न पढ़ सके तभी वर या दूसरा प्रातनिधि पढ़े। अन्य कर्म में वधू ही वर से आगे रक्खी जानी चाहिये। अस्तु, क्रमशः कर्मों की विधि आगे लिखी है।

१—वररत्ता या सगाई।

कन्या का पिता, भाई या उसकी ओर से कोई ब्राह्मण उस विवाह के सम्बन्ध में बातचीत करके वरको ठीक कर चुकने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हाथ में केसर वा हल्दी और दही अक्षत लेकर गणेशादि को स्मरण करता हुआ वरके ललाटपर इस मंत्र से तिलक करे— ॐ त्वां गन्धर्वा अखनँस्त्वामिन्द्रस्त्वां बृहस्पतिः। त्वामोषधे सोमो राजा विद्वान्यक्ष्मादमुच्यत॥ फिर उसके हाथ में फल, पुष्प, सुपारी और एक जोड़ा जनेऊ रखदे। कोई कोई ऐसा मानते हैं कि हाथ सूना न रहने देने के लिये उस पर एकाध रुपया भी जनेऊ आदि के साथ ही रख देना चाहिये। यद्यपि सुपारी, जनेऊ आदिके रखदेने पर हाथ के सूना रहने की बात मिथ्या हो जाती है। तथापि यदि ऐसी परम्परा कहीं होवे तो एकाध रुपया रख देना कोई हानिकर नहीं। मगर अधिक रुपया या अशर्फी आदि का प्रश्न न उठे और यह रस्म भी द्रव्यार्जन का साधन बनाकर नष्ट न की जावे। इसके बाद यदि कोई लोकाचार हो और वह निन्दित वा घृणित न हो तो वह भी किया जावे। इति वर रक्षा।

२—तिलक वा फलदान।

शुभमुहूर्त्त में कन्या के भाई वा ब्राह्मणादि के वरके घर तिलक, फलदान वा वरण के लिये आचुकने पर आंगन को गोबर आदि से लीप पोतकर और उसमें भस्म, आटा वगैरः से सुन्दर चौक बनवाकर उसपर कोई पीढ़ा या आसन रक्खे और वरको वस्त्र और आभूषणादि से सुसज्जित कर कुलदेव एवं पितरों को प्रणाम कराके उसी आसनपर पूर्वमुख बैठाया जावे। उस समय यह शान्तिपाठ कराया जावे—ॐ आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम्। संक्रन्दनोऽनिमिष एकवीरः शत ँ सेना अजयत्साकमिन्द्रः॥ १॥ ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्दधातु॥ २॥ ॐ भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रंपश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः॥ ३॥ ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शा
न्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वꣳशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सा
शान्तिरेधि सुशान्तिर्भवतु॥ अनन्तर वर को आचमन करा
कुशके पवित्र उसके दोनों हाथों की अनामिका में पहनावे और संक
कराके कलशस्थापन पूर्वक गणेश, गौरी और वरुण का पूज
करावे-ॐ अद्यामुकमासीयामुकपक्षीयामुकशुभपुण्यति
वाग्दानपूर्वागतया कलशस्थापनपूर्वकं गणपतिगौरीव
णानां पूजनमहं करिष्ये॥ इसके बाद ७९ पृष्ठोक्त रीति से कर्म
दीप जलाकर उसकी पूजा करके १४५ पृष्ठोक्त रीति से भूमि के पू
पूर्वक कलशस्थापन करे और १०३ आदि पृष्ठोक्त रीति से विधिवत् ग
एवं गौरी का पूजन कर १४८ पृष्ठोक्त रीति से वरुण का पूजन क
बहुत सी पद्धतियों में यह लिखा है कि कलशस्थापन करलेने पर उ
आगे पूर्व दिशा में दीपक जलाकर इस मंत्र से रखदे-ॐ अग्नि
ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सू
स्वाहा अग्निर्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्योवर्चोज्यो
र्वर्चः स्वाहा ज्योतिः सूर्यः सूर्योज्योतिः स्वाहा॥ हम इ
विषय में पहले ही १४८ पृष्ठ में कहचुके हैं और बता चुके हैं कि कर्म
दीप से ही इसका तात्पर्य है। फिर भी यदि ऐसा ही कियाज
या इसी मन्त्र से कर्मांगदीप की स्थापना की जावे तो भी हमें
आपत्ति नहीं है। परन्तु कलश के ऊपर दीपक रखने की जो
सर्वत्र चाल पड़ गई है वह ठीक नहीं है। अथवा यदि स
पूजन में अड़चन और कालाभाव हो तो ७४ पृष्ठोक्त रीति से आच
का वरण कर संक्षेप से ही गणेश पूजन हाथ में अक्षत लेकर इस
करले-ॐ गणानां त्वा गणपतिꣳ हवामहे प्रियाणां
प्रियपतिꣳहवामहे निधीनां त्वा निधिपतिꣳहवामहे
मम। आहमजानिगर्भधमात्वमजासि गर्भधम्॥ ॐभूर्
स्वः गणपतयेनमः गणपते इहागच्छ इह तिष्ठ॥ ॐ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः गौर्यै नमः गौरि इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ॐ इमम्मे वरुण श्रुधीहवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ इन्हीं तीनों मंत्रों से अलग अलग तीनों देवताओं का उसी कलश में हीं आवाहन कर अक्षत उसी पर छोड़दे । फिर-ओं मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टम् । यज्ञ ँ समिमं दधातु विश्वेदेवास इह मांदयन्तामोम्प्रतिष्ठ ॥ ओं भूर्भुवः स्वः गणपतिगौरीवरुणेभ्योनमः इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत-यह पढ़कर उसी पर अक्षत छोड़कर प्रतिष्ठा करे और-ओं आवाहिताभ्यो गणपत्यादिदेवताभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से एक ही साथ पंचोपचार पूजा कर डाले । चाहे तो षोडशोपचार भी करले सकता है । अन्त में हाथ जोड़कर प्रार्थना करे-ॐ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥ १ ॥ धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ २ ॥ विद्यारंभे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥ ३ ॥ शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् । प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥४॥ अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ ५ ॥ ॐ अनया पूजया गणपत्यादयो देवाः सुप्रसन्ना भूत्वा आयुःकर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारो वरदा भवन्तु ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसी प्रकार कन्या पक्ष वाला भी यदि संभव हो तो अलग कलशस्थापन करे या उसी कलश में गणेशादि का आवाहन पूजन करे और उसके लिये पहलेही आचार्य का वरण करले । आचार्यके वरणमें 'अमुककर्म' की जगह 'वाग्दानकर्म' बोला जावे । यदि ऐसा न हो तो वर और कन्यापक्षीय दोनों ही प्रारम्भ मेंही संकल्प करके एकही साथ देवपूजन कर दें । इसके बाद कन्या पक्षीय पुरुष वरका वरण करे । इसकी सम्पूर्ण क्रिया ७४पृष्ठोक्त आचार्य वरण कीहीं तरह करे । केवल संकल्प में 'वरस्य वरणमहं करिष्ये' यह 'अमुक कर्म करिष्ये' की जगह पढ़े और अन्त में यदि पिता होतो 'मम कन्यां दातुं त्वां वृणे' यह कह दे, भाई होतो 'कन्यां' की जगह 'भगिनीं' कह दे और यदि अन्य ब्राह्मण हो तो 'मम' की जगह पिता का नाम लेकर 'अमुकशर्मणः' ऐसा कह दे और क्रिया उसी तरह करके तिलक भी उसी तरह दे । मंत्र वहां भी लिखही चुके हैं । परन्तु कहीं कहीं पद्धतियों में तीन मंत्र लिखे हैं । अतएव फिर लिख देते हैं । इस क्रिया का नाम हीं तिलक है । इसलिये भी मंत्र लिखना आवश्यक है । क्योंकि आजकल बहुत हीं अनापसनाप किया जाता है और उधर उधर के एकाध वाहियात श्लोक पढ़ पढ़ाकर काम निकाल लेते हैं । तिलक देने का मंत्र—

ॐ युञ्जन्ति ब्रध्नमरुषं चरन्तं परितस्थुषः । रोचन्ते रोचना दिवि ॥ १ ॥ ॐ युञ्जन्त्यस्य काम्या हरीविपक्षसा रथे । शोणाधृष्णू नृवाहसा ॥ २ ॥ ॐ तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसि सूर्य । विश्वमाभासि रोचनम् ॥ ३ ॥ ॐ आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः । तिलकं ते प्रयच्छन्ति सर्वकामार्थसिद्धये ॥ ४ ॥ अतएव 'कस्तूरीतिलकं ललाटपटले' इत्यादि श्लोक पढ़कर बहुत जगह तिलक देने की रीति सर्वथा अमान्य और त्याज्य है । तिलक के बाद जो वरण का संकल्प किया जाता है उसकी विधि यह है कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कन्यापक्षीय किसी पात्र में वस्त्र, यज्ञोपवीत, माला, सुपारी आदि वरण की सामग्री रखकर संकल्प करे-ॐ अद्य शुभपुण्यतिथौ करिष्यमाणकन्यादानकर्मणि एभिर्वस्त्रयज्ञोपवीतमाल्यादिभिस्त्वामहं वृणे । यदि त्वं पतितो न स्याः क्लैब्यादिदोषवर्जितः । तुभ्यं कन्या प्रदात्तव्या देवाग्निगुरुसन्निधौ ॥ यह पढ़कर सभी सामग्री वर को दे और वह उसे लेकर उत्तर दे-ओं वृतोऽस्मि । यदि कन्या गुणोपेता सर्वलक्षणसंयुता । तदाऽहं प्रतिगृह्णामि देवाग्निगुरुसन्निधौ ॥ इसके बाद वर की आरती करके आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करे-ओं अद्येह वाग्दानकर्मणः सांगतार्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणामाचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ इसी प्रकार भूयसी दक्षिणा का भी संकल्प करे। सकल्प में केवल 'दक्षिणां' से पूर्व 'भूयसीं' और 'तुभ्यं' की जगह 'नानानामगोत्रेभ्यः' पद पढ़े । यह संकल्प जो आचार्य की दक्षिणा का है वह यदि दो आचार्य हों तो दोनों के लिये अलग अलग हो। पर, यदि एकही हो तो वर और कन्यापक्षीय दोनों उसी को दक्षिणा दें। इसके बाद ब्रह्मभोज का संकल्प कर वर का अभिषेक उसी कलश के जल से २२५ पृष्ठोक्त रीति से करके-ओंयान्तुदेवगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् । इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च-यह मंत्र पढ़ता हुआ अक्षत डालकर देवताओं का विसर्जन करे और ब्राह्मण तथा बन्धुवर्ग के साथ भोजन करके विश्राम करे । इति तिलक ।

३-मण्डपनिर्माण और स्तम्भारोपण आदि ।

पहले ही चुके हैं कि कन्या के ८ हाथ से १६ हाथ तक जितनी जगह होसके मण्डप की लम्बाई चौड़ाई रक्खे और उसमें १६ खम्भे दे। आजकल तो खम्भों की जगह बांस ही दिये जाते हैं और बीच में

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक हरीस या स्तम्भ गाड़कर स्तम्भारोपण का काम करते हैं। प्रायः वरके घर मण्डप बनता भी नहीं है। मण्डप निर्माण की विधि तो पहलेही बता चुके हैं और यह भी कह चुके हैं कि यज्ञिय वृक्षों के सोलह खम्भे होते हैं। मगर उनकी जगह बासों की परिपाटी और एक हरीस या स्तम्भ अलग गाड़ने की रीति कब से कैसे चल पड़ी समझ में नहीं आता। बांस भी ऐसे बड़े होते हैं कि मण्डप से बहुत ऊपर निकले रहते हैं। मालूम होता है कि ध्वजा पताका के बांसों और मण्डप के खम्भों का काम आलस्य वश केवल बांसों से ही लिया जाने लगा और एकही बाँस इन तीनों काम देने लगा। परन्तु समय पाकर लोग वह भी भूल गये। अब केवल पुरानी परिपाटी की नकल मात्र कर ली जाती है। अभी तक बीच के बांस के सिरे पर चमर की जगह कुछ बाल या पत्तियां बांधने की चाल है। जो हो, फिर भी यह बिगड़ी रीति है और इसका सुधार होना चाहिये और ग्रन्थ के आरम्भ में बताई रीति से ही मण्डप बनाने का प्रयत्न होना चाहिये। परन्तु जब तक यह रीति नहीं चल पड़ती तब तक भी १६ बासों से कम का और रद्दीसा मण्डप न बनाकर जरा ठिकाने से बनाना चाहिये, जिससे बीच में ऊँचा और इधर उधर ढालू हो। केवल नौ बासों की रीति तो बहुत ही बुरी है। इसे त्यागना चाहिये। कहीं चुके हैं कि विवाह के पहले के तीसरे, छठे और नवें दिन को छोड़कर शेष दिनों में विवाह के नक्षत्रों और दिनों के रहने पर या केवल नक्षत्र ही होने पर तथा भद्रा आदि साधारण दोषों का विचार कर मण्डप निर्माण करना चाहिये। मण्डप बनाने के समय पहले पंचगव्य से भूमि के संस्कार करने और भूमि, कूर्म तथा अनन्त की पूजा करने की विधि २७९ पृष्ठ में लिख कर उसके बनाने की रीति लिखी है। तदनुसार ही भूमि आदि की पूजा करके मण्डप निर्माण करना चाहिये। एतदर्थ वहां इस की पूर्ण विधि देख लेना चाहिये। पंचगव्य से संस्कार तो मण्डप बनने पर भी किया जा सकता है। पर पूजन तो पहले ही कर लेना होगा। गणेशपूजन भी करना हीं पड़ता है। इसके सिवाय प्रधान संकल्प, गणपतिपूजन, मातृपूजा, नान्दीश्राद्ध, पुण्याहवाचनादि से लेकर हरीस या स्तम्भारोपण, तैलाभ्यंग, कलशस्थापन, नवग्रहादिपूजन की विधि भी पहले ही लिख चुके हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केवल स्तम्भारोपण और तैलाभ्यंग या हल्दी लगाने की विधि आदि विशेष बातें इसमें की जाती हैं। सो सभी चौल से पहले उसी प्रकरण के २७६ पृष्ठ में लिखी जाचुकी हैं। अतएव गणपतिपूजनादि १०३ आदि पृष्ठोक्त रीति से कर लेना चाहिये। करने की रीति या प्रकार में कुछ भी अन्तर नहीं है। हां, संकल्पादि में कहीं कहीं जरा सा अन्तर होगा सो उसे ठीक कर लेना चाहिये। मण्डप बनवाने और स्तंभ गड़वाने की सभी क्रियायें वर या कन्या का पिता करे। यदि वह न हो तो वर के घर का प्रधान और कन्या के घरका कन्यादान करनेवाला ही यह सम्पूर्ण कर्म करेगा। प्रधान संकल्प में भी-

विवाहकर्म करिष्ये, तदंगतया च आचार्यवरणमण्डपनिर्माणगणपतिपूजनादिग्रहादिपूजनान्तं कर्म करिष्ये–

इतनी हीं विशेषता रहेगी। यदि विवाह से पहलेही दिन या विवाह के ही दिन मण्डपादि बनाने से लेकर मातृकापूजा और ग्रहपूजा आदि सभी कर्म करना हो तो ऊपर की रीति से संकल्प एक ही बार करके काम चलावे। परन्तु यदि मण्डप निर्माण दूसरे दिन, स्तम्भारोपण और दिन तथा शेष आचार्यवरण गणपतिपूजन से लेकर नान्दीश्राद्ध तक की क्रियायें अन्य दिन करनी हों तो जिस दिन जो करना उस दिन उसी का संकल्प कर ले और संकल्प में–

मण्डपनिर्माणकर्म, स्तम्भारोपणतैलाभ्यंगादि कर्म, आचार्यवरणगणपतिपूजनादिग्रहादिपूजनान्तं कर्म करिष्ये–

इस प्रकार अलग अलग जो जो करना हो उसी उसी का नाम लेवे। इति मण्डपादिनिर्माण।

४–वरयात्रा और द्वारपूजा।

इस प्रकार हरिद्रा आदि की क्रिया के बाद वर की यात्रा का समय आता है। यात्रा के दिन वरको विधिवत् स्नान कराके और देवता पितरों को प्रणाम कराके चौके पर बैठावे और तिलक प्रकरण के ३७७ पृष्ठ की रीति से शान्तिवाचन करा के वहीं लिखी रीति से कलश स्थापनपूर्वक गणेश, गौरी और वरुण का पूजन करावे। पूजन के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संकल्प में 'वाग्दानपूर्वागतया' की जगह 'विवाहयात्रा-निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं' ऐसा कहे। शेष सब ज्यों का त्यों। फिर वर के पहनने के वस्त्राभूषणों को मंगा कर एक एक करके सभी वर को पहनावे। परन्तु पहनाने से पहले कलश और गणेश को स्पर्श करा लिया करे। सबसे पहले सिरमें पगड़ी बांधते हैं जिसका मंत्र—ॐ युवा सुवासाः परिवीत आगात्स उ श्रेयान्भवति जायमानः०-इत्यादि समावर्त्तन प्रकरण के ३२० पृष्ठ में लिखा है। अथवा समावर्त्तन के प्रकरण में स्नान और तर्पण के बाद जिस क्रम से तिलक धारण से शुरू कर जूता पहनने तक की क्रिया लिखी है ठीक उसी क्रम से करना ठीक है और यही विधि शास्त्रीय है। वहां लिखा भी है कि भविष्य में नये वस्त्रादि इन्हीं मन्त्रों से इसी तरह धारण करे। इसलिये ३१९ पृष्ठ के 'ओं सुचक्षा अहम०—मन्त्र से सिरमें चन्दन का तिलक लगाना शुरू करके-ओं परिधास्यै०—से धोती—ओंयशसामा०—से जामा और चद्दर आदि,—ओं या आहरत्०—से फूल की माला लेकर—ओंयद्यशोऽप्सर०—से उसका धारण,—ओं युवासुवासाः०—से पगड़ी-ओं अलंकरणमसि०—से कुण्डल—ओं वृत्रस्यासि०—से कज्जल या अञ्जन,—ओं रोचिष्णुरसि०—से आईना देखना,—ओं बृहस्पतेश्छदि०—से छाता और,—ओं प्रतिष्ठे०—से जूते पहन कर चुपचाप सिर पर मौर बांधे। फिर आचार्य को दक्षिणा देकर गणेशादि का विसर्जन करे। इसके बाद सवारी पर बैठाकर लोकाचार के बाद वर को रवाना कर दे।

कन्या के गृह के समीप पहुंचने पर कन्यापक्षीय लोग अगवानी करके वर और बारात को द्वार पर ले जावें और दरवाजे के बाहर गोबर से पोती जमीन पर चौक बनवाकर, उस पर कोई पीढ़ा या आसन पश्चिम ओर रख कर और उसी पर वर को पूर्वमुख बैठाकर स्वयं कन्यादान करने वाला दक्षिण ओर उत्तरमुख बैठे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जावे और-ओं पवित्रः० (६५) इत्यादि पढ़ने के बाद आचमन प्राणायाम करके पहले संकल्प करे-ओं अद्येह शुभपुण्यतिथौ द्वारे समागतस्य वरस्य पूजनं करिष्ये, तदर्थं पूर्वमाचार्यवरणपूर्वकं कलशेगणेशगौरीवरुणानां पूजनं करिष्ये । फिर ७४ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य का वरण कर और ३७८ पृष्ठोक्त रीति से कलशस्थापनपूर्वक गणपति, गौरी और वरुण का पूजन करके वर का भी पांव धोवे -ओं नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्त्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः ॥ फिर जौ, अक्षत, कुश आदि युक्त जल का अर्घ्य लेकर वर को दे-ओं आगतोऽसि वरश्रेष्ठ सर्वकामार्थसिद्धये । प्रतिग्रहसमर्थोऽसि अर्घ्यं गृह्ण नमोऽस्तुते-इसे पढ़कर वर के हाथ में अर्घ दे और वह उसका कुछ अंश सिर आदि पर छिड़ककर शेष गिरा दे । अनन्तर उसको आचमन कराकर चन्दन, अक्षत, पुष्पमाला आदि से उसकी पूजा करे और हाथ में वस्त्र, यज्ञोपवीत, सुपारी, द्रव्यादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्येह करिष्यमाणकन्यादानप्रतिग्रहार्थं त्वामेभिर्वस्त्रादिभिः पूजनपूर्वकं पुनर्वृणे ॥ फिर वे चीज वर के हाथ में देदेवे और वर उन्हें लेकर 'ओं वृतोऽस्मि' कह दे । तब वर की आरती सौभाग्यवती स्त्रियों से कराकर उसे जनवासे को रवाना करे और आचार्य को-ॐ अद्येह कृतस्यास्य कर्मणः प्रतिष्ठार्थमाचार्याय तुभ्यमहमिमां यथाशक्ति दक्षिणां संप्रददे ओं तत्सन्नमम-यह संकल्प पढ़कर दक्षिणा दे और-ॐ यान्तु देवगणाः०-इत्यादि पढ़कर गणेशादिका विसर्जन करे । इति द्वारपूजा ।

५-सौभाग्यकर्म वा चढ़ावा ।

प्रायः सर्वत्र यह रीति है कि विवाह से पूर्व सौभाग्य कर्म होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है, जिसमें कन्या द्वारा ही भूमि और गणेश गौरी आदि का पूजन करा कर उसे वस्त्र और आभषण आदि पहिनाते हैं। इसे ही आजकल चढ़ावा कहते हैं । यद्यपि आजकल की परिपाटी प्रायः सर्वत्र बिगड़ी हुई है । क्योंकि वस्त्र, आभूषणादि कन्या का पिता नहीं बनवाता, किन्तु वरके घर से ही बनकर जाता है। फिर भी उचित यही है कि वस्त्रादि पिता ही बनवावे और उससे कन्या को आभूषित करे। अस्तु, इसी कर्म को सौभाग्य-कर्म कहते हैं । इसमें वर के ज्येष्ठ भ्राता का भी काम केवल यही होता है कि वह कन्या के मस्तक पर कोई वस्त्र डाल देता है। इसके बाद से उसके लिये यह नियम है कि कभी भी उस स्त्री का शरीर नहीं छूवे ।

कन्या को स्नान कराके देव पितरों को प्रणाम करावे और मण्डप के स्तम्भ के निकट पीढ़ा या आसन पर बैठाकर २७७ पृष्ठोक्त शान्तिपाठ करे। अनन्तर आचमन और 'ॐअपवित्रः' इत्यादि के बाद पवित्र पहनाकर उससे संकल्प करावे-ओं अद्येह अहं सौभाग्यकर्म करिष्ये तन्निर्विघ्नसमाप्त्यर्थं कलशस्थापनपूर्वकगणपतिवरुणगौरीणां पूजनं करिष्ये ॥ ७३ पृष्ठोक्त रीति से आचार्यवरण पूर्वक कलश स्थापन करके गणपति, गौरी और वरुण की पूजा करे (३७८)। इसके उपरान्त रक्षा सूत्र का १७८ पृष्ठोक्त रीति से अभिमन्त्रण करके कन्या के बायें हाथ में बांधे। बांधने का मन्त्रभी वहीं (१७९)लिखा है । इसके बाद कन्या पीला वस्त्र पहने ओं यदश्वाय वास उपस्तृणन्त्यधीवासं या हिरण्यान्यस्मै । सन्दानमर्वन्तं पड्वीशं प्रिया देवेष्वायामयन्ति ॥ फिर चांदी के भूषण पहने-ओं रूपेण वो रूपमभ्यागां तुथो वो विश्ववेदा विभजतु। ऋतस्य पथा प्रेत चन्द्रदक्षिणा वि स्वः पश्य व्यन्तरिक्षं यतस्व सदस्यैः॥ तब सोने के आभूषण पहने-ओं स्वर्णघर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्णशुक्रः स्वाहा स्वर्णज्योतिः स्वाहा स्वर्ण सूर्यः स्वाहा ॥ अन्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर का जेठा भाई कन्या के मस्तक पर चादर या कोई वस्त्र चुप चाप डालदे । इसके बाद कहीं कहीं चाल है कि कुमारी कन्या उसके मस्तक में सिन्दूर लगावे । परन्तु यदि रीति न हो तो न लगावे । कहीं कहीं यह भी रीति है कि कांसे या चांदी के बर्तन में फलादि रख उन पर इन्हीं वस्त्र आभूषणों को रखते हैं और ऊपर बताये मन्त्रों को पढ़ते हैं । वस्त्र एक पात्रपर रखते हैं और सभी आभूषण दूसरे पर । वस्त्र रखकर पहला मन्त्र पढ़ते हैं और आभूषण रख कर शेष दोनों मन्त्र । इसके बाद आचार्य को दक्षिणा दे-ओं अस्य सौभाग्यकर्मणः सांगतार्थं यथाशक्तीमां दक्षिणां तुभ्यमाचार्याय संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ आचार्य-ओं स्वस्ति—पढ़ कर दक्षिणा ले लेवे। इसके बाद अभिषेक, तिलक और आशीर्वाद पढ़कर ३८१ पृष्ठोक्त रीति से संक्षिप्त विसर्जन करे । इति सौभाग्यकर्म ।

६—विवाह ।

कन्यादान करने वाला मातृकाश्राद्ध, गणपति, गौरी, ग्रहादि का पूजन और कलश स्थापनादि समस्त क्रिया को पहले ही करके ठीक रक्खे और बाजे गाजे के साथ वरके मण्डप के निकट आतेही पहले शान्ति पाठ करे—ओं स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्ववेदाः । स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनो बृहस्पतिर्दधातु ॥ १ ॥ ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः॥ स्थिरैरंगैस्तुष्टुवा ँ सस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितं यदायुः ॥ २ ॥ ओं अदितिर्द्यौरदितिरन्तरिक्षमदितिर्माता स पिता स पुत्रः । विश्वेदेवा अदितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम् ॥ ॥ ३ ॥ ओं द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवीशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्तिः सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

शान्तिः सामाशान्तिरेधि ॥ ४ ॥ ओं विश्वानि देव सवि
तर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ ५ ॥ इसके ब
गणेशादि देवताओं का स्मरण करे-ओं गणानां त्वा गणपति
ँ हवामहे प्रियाणांत्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनांत्वा
निधिपति ँ हवामहे वसोमम । आहमजानि गर्भधमा
मजासिगर्भधम् ॥ १ ॥ सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो ग
कर्णकः । लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः । द्वादशैता
नामानि यः पठेच्छृणुयादपि ॥ ३ ॥ विद्यारम्भे विवाहे
प्रवेशे निर्गमे तथा । संग्रामे संकटेचैव विघ्नस्तस्य
जायते ॥ ४ ॥ शुक्लांबरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥ ५ ॥ अभी
प्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः । सर्वविघ्नह
स्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥ ६ ॥ सर्वमंगलमांगल्येशि
सर्वार्थसाधिके । शरण्येत्र्यम्बके गौरि नारायणि नमो
स्तुते ॥ ७ ॥ सर्वदा सर्वकार्येषु नास्तितेषाममंगलम् । येषां
हृदिस्थो भगवान्मंगलायतनो हरिः ॥ ८ ॥ सर्वेष्वारम्भ
कार्येषु त्रयस्त्रिभुवनेश्वराः । देवा दिशन्तु नः सिद्धिं ब्रह्मे
शानजनार्दनाः ॥ ९ ॥ तदेव लग्नं सुदिनं तदेव ताराब
चन्द्रबलं तदेव । विद्याबलं दैवबलं तदेव लक्ष्मीपते तें
घ्रियुगं स्मरामि ॥ १० ॥ लक्ष्मीनारायणाभ्यां नमः
उमामहेश्वराभ्यां नमः । शचीपुरन्दराभ्यां नमः । मात
पितृभ्यां नमः । इष्टदेवताभ्यो नमः । कुलदेवताभ्योनम
इसके बाद वरकी मधुपर्क पूजा का संकल्प करे-ॐ अद्येह शु
पुण्यतिथौ कन्यादानप्रतिग्रहार्थं गृहागतममुं वरं मधुप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

णार्चयिष्ये ॥ इसके अनंतर हाथ में अक्षत लेकर कन्यादाता खड़ा हो जावे और वरके जूते पर उस अक्षत को छिड़के-ॐ अनेन ॐ शालायामथवाराह्या उपानहा उपमुञ्चेते ॥ फिर जूतों में से पांव निकालकर उन्हीं जूतों पर वर खड़ा होजावे और मण्डप में पश्चिम ओर हल्दी आदि से रंगे पीढ़े को रखकर उसपर कुश डालकर वरसे कन्यादाता कहे कि-साधुभवानास्तामितिप्रजापतिर्ऋषिर्ब्रह्मादेवता यजुश्छन्दो वरार्चने विनियोगः । ॐ साधुभवानास्तामर्चयिष्यामो भवन्तम् ॥ वर उत्तर दे-ॐ अर्चय ॥ इसके बाद यजमान के आदमी दो विष्टर, पाद्य, अर्घ्य और आचमनीय जल अलग अलग पात्रों में और कांसे के बर्त्तनमें कांसे के बड़े बर्त्तन से ढँका मधुपर्क निकट लावें। फिर यजमान एक विष्टर हाथ में ले और उसके पासका कोई ब्राह्मण कहे कि-ओं विष्टरो विष्टरो विष्टरः ॥ तब यजमान वरसे कहे कि-ओं विष्टरः प्रतिगृह्यताम् ॥ इसपर-ओं विष्टरं प्रतिगृह्णामि-कहकर वर विष्टर का अग्र उत्तर ओर करके अपने हाथ में ले लेवे और उसीतरह पीढ़े या आसनपर रख कर यह मंत्र पढ़ता हुआ उसपर बैठजावे-वर्षोऽस्मीत्यस्याथर्वण ऋषिर्विष्टरोदेवताऽनुष्टुप्छन्दः उपवेशने विनियोगः । ओं वर्षोऽस्मि समानानामुद्यतामिव सूर्यः । इमं तमभितिष्ठामि यो मा कश्चाभिदासति ॥ फिर यजमान पाद्य का जल अंजली में लेवे और दूसरा ब्राह्मण तीन वार-ओं पाद्यं पाद्यं पाद्यम्-कहे। तब यजमान कहे कि-ओं पाद्यं प्रतिगृह्यताम् ॥ वर यह कहकर कि- ओं प्रतिगृह्णामि-उस जल को अपनी अंजलीमें लेकर अगले मंत्रसे पहले दहिना पांव उसी से धोकर पीछे बायां धोवे। यदि क्षत्रियादि हो तो पहले बायां धोवे-विराजो दोहोऽसीतिप्रजापतिर्ऋषिर्यजुश्छन्द आपोदेवता पादप्रक्षालनेवि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

नियोगः । ओं विराजो दोहोऽसि विराजो दोहमशीय मयि पाद्यायै विराजोदोहः ॥ इसके अनन्तर यजमान दूर्वा विष्टर हाथ में ले और अन्य ब्राह्मण के तीन वार पूर्ववत्-ओं विष्टरो विष्टरो विष्टरः-कहनेपर यजमान कहे कि-ओं विष्टरः प्रतिगृह्यताम् । इसपर वर-ओं प्रतिगृह्णामि-कहकर उसे और-ओं वर्षोऽस्मि०-इत्यादि पूर्व के मंत्र से अपने आसनपर दो पांवों के नीचे उत्तर ओर अग्र करके उसे रखले । पुनः यजमान हाथ में अर्घ्यपात्र जल सहित ले और समीपस्थ ब्राह्मणके तीनवार ओं अर्घोऽर्घोऽर्घः-कहने पर यजमान कहे कि-ओं अर्घः प्रतिगृह्यताम् । तब वर-ओं प्रतिगृह्णामि- कहकर शंख स्थित अर्घ का केवल जल या पात्र सहित जल दोनों हाथमें ले इस मंत्र से उसका कुछ अंश सिरपर डाले-आपः स्थइतिप्रजापतिर्ऋषिर्यजुरापोदेवता अर्घग्रहणे विनियोगः । आपःस्थ युष्माभिः सर्वान्कामानवाप्नवानि ॥ ओं आथर्वणऋषिरनुष्टुपूछन्द आपोदेवता अर्घ्योदकनिनयने विनियोगः । ओं समुद्रं वः प्रहिणोमि स्वां योनिमभिगच्छत । अरिष्टास्माकं वीरामापरामोचिमत्पयः-इसे पढ़ शेष जल ईशान कोन में गिरादे । तब दाता हाथ में आचमन जल पात्रसहित ले और दूसरे के-ओं आचमनीयमाचमनीयमाचमनीयम्-कहनेपर स्वयं कहे कि-ओं आचमनीयं प्रतिगृह्यताम् । वर-ओं प्रतिगृह्णामि-कहकर दोनों हाथों पात्र सहित जल ले और-परमेष्ठीऋषिर्बृहतीछन्दः आपोदेवता आचमने विनियोगः । ओं आमागन्यशसा सृज वर्चसा । तम्मा कुरु प्रियं प्रजानामधिपतिं पशूनामरिष्टिं तनूनाम्-इस मन्त्र से एकबार आचमन बार विना मन्त्र के ही आचमन करके हाथ धोडाले । पुनः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मधुपर्क का पात्र हाथ में ले और समीपस्थ के-ॐ मधुपर्को मधुपर्को मधुपर्कः-कहने पर स्वयं कहे-ॐ मधुपर्कः प्रतिगृह्यताम् । और पात्र सहित मधुपर्क वर को दे । परन्तु वर लेनेसे पहले-ओं प्रतिगृह्णामि-कहकर दाता के हाथ में ही स्थित मधुपर्क के ऊपर वाले पात्र को हटवा कर उसे देखता हुआ पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिः पंक्तिश्छन्दो मित्रोदेवता मधुपर्कप्रतीक्षणे विनियोगः । ॐ मित्रस्य त्वा चक्षुषा प्रतीक्षे ॥ फिर-बृहस्पतिरांगिरस ऋषिर्यजुः सविता देवता मधुपर्कग्रहणे विनियोगः । ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि-इसे पढ़कर दोनों हाथों से लेकर बांये हाथ में रख ले और दहिने हाथ की अनामिका से प्रदक्षिण क्रम से उसे चलाता हुआ मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुः सविता देवता मिश्रणे विनियोगः । ओं नमः श्यावास्यायान्नशने यत्त आविद्धन्तत्ते निष्कृन्तामि ॥ इस मंत्र से एक बार अनामिका से चलाकर अनामिका और अंगूठे से जरासा मधुपर्क विना मंत्रके ही चुपचाप बाहर फेंक दे । इसी तरह दो बार मंत्र से और भी चला चला कर चुप चाप बाहर फेंक दिया करे । चलाने के समय केवल अनामिका रहे और फेंकने के समय अनामिका अंगूठा दोनों रहें । मंत्र भी चलाने के ही समय बोला जावे । इसके बाद आगे के मंत्र को तीन बार पढ़कर प्रत्येक बार अनामिका, अंगूठा दोनों से थोड़ा थोड़ा मधुपर्क खावे । स्मरण रहे कि केवल मंत्र ही तीन बार पढ़ा जावे । विनियोग तो एक ही बार पढ़े-बृहत्सऋषिर्जगतीछन्दो मधुपर्को देवता मधुपर्कप्राशने विनियोगः । ओं यन्मधुनो मधव्यं परमꣳ रूपमन्नाद्यं तेनाहं मधुनो मधव्येन परमेण रूपेणान्नाद्येन परमो मधव्योऽन्नादोऽसानि ॥ पुनः शेष मधुपर्क पूर्व और एकान्त स्थान में रख हाथ धोकर दो बार आचमन करे और आगे के मन्त्रों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उन उन अंगों का स्पर्श हाथ की अंगुलियों से करे । किस अंग से कौनसा अंग स्पर्श किया जाय यह मंत्र के साथ ही लिखा है। यह स्मरण रहे कि प्रत्येक अंग को छूकर जल से हाथ धो डाले अंगुलियों और हथेली में जल लगा लिया करे । स्पर्श दहिने हाथ ही अंगुलियों से करे । (तर्जनी, मध्यमा, अनामिका तीनों मिल कर रोमशून्य ओठ का भाग छूवे)-ओं वाङ्म आस्येऽस्तु (अंगूठा, तर्जनी से नासिका के दोनों छिद्र)-ओं नसोर्मे प्राणोऽस्तु । (अंगूठा अनामिका से आंखें)-ओं अक्ष्णोर्मे चक्षुस्तु । (अंगूठा अनामिका से ही दहिना बायां कान पारी से)-ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु । (पांचों अंगुलियों मिलाकर दोनों बाहु का मूल)-ॐ बाह्वोर्मे बलमस्तु । (हाथों की अंगुलियों को फैलाकर दोनों से जंघा)-ॐ ऊरोर्मे ओजोऽस्तु । (दोनों हाथों से समूचा शरीर)-ओं अरिष्टानि मे ऽङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु ॥ इसके बाद दो आचमन कर डाले, दाता हाथ में एक कुश लेकर उसे करके पकड़े और गौ का निष्क्रय द्रव्य वर के हाथ में दे । समीपस्थ पुरुष के-ओं गौर्गौर्गौः-कहने पर-ओं गौर्भ्यताम्-यह स्वयं दाता कहे । इसपर वर कहे कि-ओं माता लभ्यताम् । फिर- ब्रह्मा ऋषिस्त्रिष्टुप् छन्दो गौर्देवता गोरभिमंत्रणे विनियोगः । ओं माता रुद्राणां दुहिता वसूनां ँ स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः । प्रनु वोचं चिकितुषे जनाय मागामनागामदितिंवधिष्ट ॥ चामुष्य यजमानस्य पाप्मा हतः । ओं उत्सृजत यजमान न्यत्तु-इतना पढ़कर यजमान के हाथ का तृण तोड़ दे ।

इसके बाद मण्डप से बाहर ईशान कोन में जो चार हाथ चौड़ी वेदी बनी है उसके पास स्वयं वर जाकर, स्वयं या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचार्य द्वारा एकहाथ लम्बी चौड़ी मध्य की भूमिका पंचभूसंस्कार कर के, उसपर योजक नाम की अग्नि की स्थापना कर और उसकी प्रतिष्ठा और पूजा आदि क्रियायें १८८ पृष्ठोक्त रीति से करके वेदी से पश्चिम ओर वस्त्र से लपेटी एक चटाई या तृण का पूला डाल दे और उस स्थान पर किसी ऐसे आदमी को नियुक्त कर दे जो देखता रहे कि वह अग्नि बुझने न पावे । फिर कोहबर में स्वयं वर जाकर कन्या को लिवा कर अपने दहिने बैठावे । यदि वर न जासके तो कोई औरही आदमी जाकर उसे लिवालावे । पर, लिखा है वर कोही लिवालाने को । फिर कन्या-दाता चार वस्त्र (वर और कन्या के लिये एक एक धोती और एक चद्दर) और यदि कन्या को पहले सेही पहना दिया हो तो दोही वस्त्र वर को देने का संकल्प करे-ओं अद्येह कन्यादानपूर्वांगत्वेन वस्त्रद्वयं (वस्त्रचतुष्टयं) वराय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ और-ओं स्वस्ति-कहकर वर उन वस्त्रों को ले लेवे । इसके बाद पहले कन्या के दो वस्त्र (साड़ी और चादर) आगे के मंत्रों से क्रम से उसे पहनने को दे । पर, यदि कन्या पहले से ही पहन चुकी हो तो मंत्र पढ़कर वस्त्रों का स्पर्शमात्र कर दे । पहले साड़ी देकर या छूकर मंत्र पढ़े-ओं जरां गच्छ परिधत्स्ववासो भवाकृष्टीनामभिशास्तिपावा । शतंचजीव शरदः सुवर्चा रयिं च पुत्राननुसंव्ययस्वायुष्मतीदं परिधत्स्ववासः ॥ फिर चादर-ओं या अकृन्तन्नवयन्या अतन्वत याश्चदेवीस्त-तून भितो ततन्थ । तास्त्वा देवीर्जरसे संव्ययस्वायुष्मती-दं परिधत्स्व वासः ॥ इसके उपरान्त स्वयं धोती पहने-ओं परिधास्यै यशोधास्यै दीर्घायुष्ट्वाय जरदष्टिरस्मि । शतं च जीवामि शरदः पुरूची रायस्पोषमभिसंव्य-यिष्ये ॥ तब चद्दर ओढ़े-ओं यशसा मा द्यावा पृथिवी यशसेन्द्राबृहस्पती । यशोभगश्च माविन्दद्यशोमा प्रति-पद्यताम् ॥ इसके बाद वर और कन्या दोनों दो दो बार आचमन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करें । पुनः दाता–ओं परस्परं समञ्जेथाम्–कहकर कन्या और वर को आमने सामने करदे और वर कन्या की ओर देखता हुआ मंत्र पढ़े–ओं समञ्जन्तु विश्वेदेवा समापो हृदयानि नौ संमातरिश्वा सन्धाता समुदेष्ट्री दधातु नौ ॥ इसके बाद दाता वर और कन्या की चादरों के किनारों को एकत्र कर उनमें द्रव्य, सुपारी, अक्षत, सरसों और हल्दी रखकर गांठ दे दे इसे ही ग्रन्थिबन्धन या गँठजोड़ा कहते हैं । इसके बाद वर कन्या दोनों के हाथों में हल्दी लगादे । फिर कन्या और वरपक्ष के ब्राह्मण नीचे लिखी रीति से गोत्रशाखादि का उच्चार करें। पहले कन्या पक्षवाला आशीर्वाद का श्लोक पढ़कर प्रश्न करे । फिर वरपक्षीय आशीर्वाद पढ़कर उत्तर दे और स्वयं प्रश्न करे । फिर कन्यापक्षीय आशीर्वादपूर्वक उत्तर देकर प्रश्न करे । इस प्रकार तीन बार दोनों के प्रश्नोत्तर के बाद अन्त में दोनों आशीर्वाद पढ़ें और दाता कन्यादान का संकल्प करे । कन्यापक्षीय–यस्त्रिपुरं हरेण हरिणा व्याजाद्बलिंबध्नता । स्रष्टुंचारिभिरुद्भवेन भुवनं शेषेण धर्त्तुं धराम् ॥ पार्वत्या महिषासुरप्रमथने सिद्धादिभिर्मुक्तये । ध्यातः पञ्चशरेण दिग्विजये नागाननः पातु वः ॥ १ ॥ किंगोत्रस्य किंप्रवरस्य किंशाखिनः किंवेदाध्यायिनः किंशर्मणः प्रपौत्रस्य किंगोत्रस्य किंप्रवरस्य किंशाखिनः किंवेदाध्यायिनः किंशर्म्मणः पुत्राय, आयुष्मते कन्यार्थिने विष्णुरूपिणे किंनाम्नेवराय ॥ इसी प्रकार आगे भी हर बार आशीर्वाद के अनन्तर कहाजायगा ।

इस पर वरपक्षीय कहे–कौपीनं परिधाय पन्नगपतिं तल्पे पतौ श्रीपतेः । अभ्यर्णं समुपागते कमलया सार्द्धं स्थितस्यासने ॥ आयाते गरुडेऽथ पन्नगपतौ त्रासाद्बहिर्निर्गतं शम्भुं वीक्ष्य दिगम्बरं जलभुवः स्मेरं स्मितं पातु वः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्म्मणः प्रपौत्राय, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः पौत्राय, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः पुत्राय आयुष्मते कन्यार्थिने विष्णुस्वरूपिणे अमुकनाम्ने वराय । किंगोत्रस्य किंप्रवरस्य किंशाखिनः किंवेदाध्यायिनः किंशर्म्मणः प्रपौत्रीं, किंगोत्रस्य० पौत्रीं, किंगो० पुत्रीम् आयुष्मतीं श्रीरूपिणीं वरार्थिनीं किन्नाम्नीं कन्याम् ॥

यहांपर जितने अमुक शब्द हैं उनकी जगह गोत्रादि के नामों का उच्चारण करना होगा । सारांश, जिसके पहले अमुक शब्द होगा उसी का नाम बोलेंगे । स्मरण रहे कि पांच बातों का बार बार प्रश्न और बार बार उत्तर आता है । इसलिये हम अब बार बार न लिखेंगे, जैसा कि ऊपर दूसरी बार 'किंगोत्र०' लिखकर संकेत मात्र करके छोड़ दिया है । इसलिये इसीके अनुसार आगे भी गोत्र, प्रवर, शाखा, वेद और नाम के प्रश्न और उत्तर किये जावें । वर और कन्यापक्षीय दोनों के गोत्रादि अलग अलग कहें ।

कन्यापक्षीय-च्युतामिन्दोर्लेखां रतिकलहभग्नं च वलयम् । द्वयं चक्रीकृत्य प्रहसितमुखी शैलतनया ॥ अवोचद्यं पश्येत्यवतु स शिवः सा च गिरिजा ॥ सचक्रीडाचन्द्रो दशनकिरणापूरिततनुः ॥३॥ अमुकगोत्रस्य० प्रपौत्रीम्, अमुकगोत्र० पौत्रीम्, अमुकगो० पुत्रीम् आयुष्मतीं श्रीरूपिणीं वरार्थिनीम् अमुकनाम्नीं कन्याम् । किंगो० प्रपौत्राय, किं० पौत्राय, किं० पुत्राय आयुष्मते वराय ॥

वरपक्षीय-रासोल्लासभरेण विभ्रमभृतामाभीरवामभ्रुवाम् । अभ्यर्णं परिरभ्य निर्भरमुरः प्रेमान्धया राधया ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain: Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

साधु त्वद्वदनं सुधामयमिति व्याहृत्य गीतस्तुतिः। व्याह
लिंगनचुम्बितः स्मितमनोहारी हरिः पातु वः ॥ ४
अमुक० प्रपौत्राय, अमुक० पौत्राय, अमुक० पुत्राय
युष्मते० वराय ॥ किं गो० प्रपौत्रीम्, किं गो० पौत्री
किं गो० पुत्रीम् आयुष्मतीं० कन्याम् ॥

कन्यापक्षीय—देव्यं वारि कथं यतः सुरधुनी मौलौ
पावकः। देव्यस्तद्धि विलोचनं कथमहिर्देव्यः स
तव ॥ तस्माद्द्यूतविधौ त्वयाऽद्य मुषितो हारः परि
ज्यताम्। इत्थं शैलभुवा विहस्य लपितः शम्भुः शिवा
स्तु वः ॥५॥ अमुक० प्रपौत्रीम्, अमुक० पौत्रीम्, अमु
पुत्रीम् आयुष्मतीं० कन्याम् ॥ किं० प्रपौत्राय, किं०
त्राय, किं० पुत्राय आयुष्मते० वराय ॥

वरपक्षीय—सानन्दं नन्दिहस्ताहतमुरजरवाहूतकौ
रवर्हि—त्रासान्नासाग्ररन्ध्रं विशति फणिपतौ भो
संकोचभाजि ॥ गण्डोड्डीनालिमालामुखरितकपु
स्ताण्डवे शूलपाणेः। वैनायक्यश्चिरं वो वदनलि
तयः पान्तु चीत्कारवत्यः ॥ ६ ॥ अमुक० प्रपौत्रा
अमुक० पौत्राय, अमुक० पुत्राय आयुष्मते० वरा
किं० प्रपौत्रीम्, किं० पौत्रीम्, किं० पुत्रीम् आयु
तीं० कन्याम् ॥

कन्यापक्षीय आशीर्वाद विना हीं उत्तर दे—अमुक० प्रपौ
म्, अमुक० पौत्रीम्, अमुक० पुत्रीम् आयुष्मतीं श्रीरूपि
वरार्थिनीम् अमुकनाम्नीं कन्याम् ॥ इस प्रकार दोनों
से तीनबार शाखादिका उच्चारण कराके फिर दोनों साथही
र्वाद श्लोक पढ़ें—देवक्यां यस्य सूतिस्त्रिजगति विदिता रो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्णी धर्मपत्नी । पुत्राः प्रद्युम्नमुख्याः सुरनरजयिनो वाहनं पक्षिराजः ॥ वृन्दारण्यं विहारो व्रजपुरवनिता वल्लभाराधिकाद्याः । चक्रं विख्यातमस्त्रं स जयति जगतां स्वस्तये नन्दसूनुः ॥ ७ ॥ कौशल्याविशदालवालजनितः सीतालतालिंगितः । सिक्तः पंक्तिरथेन सोदरमहाशाखाभिसंवर्द्धितः ॥ रक्षस्तीव्रनिदाघपाटनपटुश्छायाश्रितानन्दकृत् । युष्माकं स विभूतयेऽस्तु भगवान् श्रीरामकल्पद्रुमः ॥ ८ ॥

इस के बाद कन्यादान का संकल्प करे । संकल्प के समय वर पूर्वमुख, उसके सामने कन्या पश्चिम मुख और दाता दोनों से दक्षिण और उत्तरमुख बैठे । दाता की पत्नी दाता से दहिने बैठे । नीचे कांसे का पात्र रखकर उसके ऊपर वर का दहिना हाथ रहे और वर के हाथ के ऊपर कन्या का दहिना हाथ करके उसका अंगूठा अपने दहिने हाथ से दाता पकड़े और स्वयं दाता अपने हीं हाथों या उसकी पत्नी अपने हाथों से दूब, अक्षत, फल, पुष्प, चन्दन मिश्रित शंख का जल उसके हाथ पर कुश, तिल और जौ रखकर दे । कहीं कहीं शंख की जगह झारी से जल देना भी लिखा है । इस प्रकार सब ठीक करके संकल्प पढ़े—ओं विष्णुः ३ ओं नमः परमात्मने पुराणपुरुषोत्तमाय ओं तत्सदद्य ब्रह्मणोऽह्नि द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरेऽष्टाविंशतितमे कलियुगे प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्त्ते पुण्यक्षेत्रे अमुकसम्वत्सरे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे यथानामराशिस्थितेषु आदित्यादिनवग्रहेषु यथानामयोगकरणादियुते शुभपुण्यमुहूर्त्ते अमुकगोत्रोऽमुकप्रवरोऽमुकशर्माऽहम् अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः प्रपौत्राय, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुक-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः पौत्र
अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवे
ध्यायिनः अमुकशर्मणः पुत्राय आयुष्मते विष्णुरू
पिणे कन्यार्थिने अमुकशर्मणे अमुकगोत्राय अमुकप्र
य वराय, अमुक गोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखि
अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम्, अमुक
त्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायि
अमुकशर्मणः पौत्रीम्, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रव
अमुकशाखिनः अमुकवेदाध्यायिनः अमुकशर्मणः पु
मायुष्मतीं श्रीरूपिणीं वरार्थिनीम् अमुकनाम्नीं
कन्यां यथाशक्त्यलंकृतां प्रजापतिदैवतां मम प
णोक्तशतगुणीकृतज्योतिष्टोमातिरात्रसमफलप्राप्तिपूर्व
म्, मम समस्तपितॄणां निरतियानन्दब्रह्मलोकावाप्ति
दिफलावाप्तिपूर्वकं वा श्रीलक्ष्मीनारायणप्रीतये अ
वरेणास्यां कन्यायामुत्पादयिष्यमाणसन्तत्या द्वाद
वरान् द्वादशपरान् पुरुषानात्मानं च पवित्री
देवाग्निगुरुब्राह्मणसन्निधौ अग्न्यादिसाक्षिकतया
धर्माचरणाय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम। प्र
गृह्णातु भवान् ॥ ऐसा पढ़ने के बाद दाता खड़ा
कन्या का हाथ कुशादि के साथ वर के हाथ में पकड़ा दे
ओं दाताहं वरुणो राजा द्रव्यमादित्यदैवतम् ।
सौ विष्णुरूपेण प्रतिगृह्णात्वयं विधिः-यह श्लोक
दे । कहीं कहीं संकल्प के आरम्भ के पहलेही इसे पढ़कर संकल्प
करने को लिखा है । पर उचित तो अन्त में हीं है । फिर भी प
पढ़ने का किसी को हठ हो तो उसमें भी कोई क्षति नहीं है।
बाद वर-ओं देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूष्णो हस्ताभ्यां प्रजापतये कन्यां प्रतिगृह्णामि । ओं द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्रतिगृह्णातु ओं स्वस्ति-

यह संपूर्ण मंत्र पढ़कर कन्या का दहिना अंगूठा पकड़े और पकड़ेही हुए पढ़े-ओं कोऽदात्कस्मा अदात् कामोऽदात्कामाया-दात् । कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामैतत्ते ॥

फिर कन्यादान की प्रतिष्ठा के लिये दो गायें या उनकी जगह यथा-शक्ति सुवर्णादि द्रव्य देने का संकल्प करके वर को दे-ओं अद्य कृ-तैतत्कन्यादानप्रतिष्ठार्थमिमं गोमिथुनं रुद्रदैवतं तत्प्र-त्याम्नायं यथाशक्ति सुवर्णं वाऽग्निदैवतममुकशर्मणे तुभ्यं वराय दक्षिणां संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ वर-ओं स्वस्ति-कहकर दक्षिणा ले । किसीने यहांही-ओंकोऽदात्कस्मा० इत्यादि मंत्र पढ़ने को लिखा है । जैसा व्यवहार हो वैसा करे । इस प्रकार कन्यादान करके दाता पहले वर की प्रार्थना करे-ॐ कन्यां लक्षणसम्पन्नां कनकाभरणैर्युताम् । ददामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया ॥ १ ॥ ऋषयः सर्वभूतानां साक्षिणः सर्वदेवताः । इमां कन्यां प्रदास्यामि पितॄणां तारणाय च ॥ २ ॥ कन्यादानं महादानं सर्वदानेषु दुर्ल-भम् । तदद्य दैवयोगेन त्वं गृहाण वरोत्तम ॥ ३ ॥

फिर कन्या और परमात्मा की प्रार्थना करे-ॐ कन्ये ममाग्रतो भूयाः कन्ये मे देवि पार्श्वयोः । कन्ये मे पृष्ठतो भूयास्त्वद्दाना-न्मोक्षमाप्नुयाम् ॥ १ ॥ त्रैलोक्यनाथ देवेश सर्वभूतद-यानिधे । दानेनानेन मे प्रीतो भव शान्तिं प्रयच्छ मे ॥ २ ॥

फिर वर से प्रतिज्ञा करने को कहे-ॐ धर्मे चार्थे च कामे च त्व-मेयमतिचारतः । न त्याज्याज्याहुतिरिव भूमौ संसारभू-तिदा ॥ १ ॥ यस्त्वया चरितो धर्मः कर्तव्यश्चानया सह । धर्मे चार्थे च कामे च नातिचार्या त्वया क्वचित् ॥ २ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इस पर वर प्रतिज्ञा करे-ॐ अहं नातिचरामीह यदुक्तं भव
ततः । धर्मार्थकामकैः कार्यैर्देहच्छायेव सर्वदा
इसके बाद सोना, चांदी, भूमि, गौ, भैंस, घोड़ा, हाथी, शय्या,
और दासी ये दस चीजें यथाशक्ति कन्या दाता वर को दे और
के सम्बन्धी जो कन्या के भाई बन्धु आदि हैं वे भी यथाशक्ति
कहीं कहीं होम के अन्त में देने की रीति है। जैसी परिपाटी हो
करे। इसके उपरान्तही कहीं कहीं ग्रन्थिबन्धन की विधि भी लिखी
इसके सम्बन्ध में भी जैसी रीति हो करे। इसके बाद वर कन्या
अंगूठा छोड़े। यहाँ पर कन्या और वर पक्ष वाले दोनोंही कर्म
वाले आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करके उन्हें दें। फिर भू
दक्षिण का संकल्प करके सभी लोगों को बाँटें। आचार्य की दक्षि
ॐ अद्येह कृतस्य कन्यापाणिग्रहणकर्मणः सांगतार्थमि
यथाशक्तिदक्षिणां तुभ्यमाचार्याय संप्रददे ओं तत्स
मम ॥ भूयसी दक्षिणा के संकल्प में 'दक्षिणां' से पहले 'भूय
पद जोड़ दे और 'तुभ्यमाचार्याय' की जगह 'नानानाम
त्रेभ्यो जनेभ्यः' पढ़ दे।

इसके बाद वर अपने दहिने हाथ से कन्या का बायाँ हाथ
और-ओं यदैषि मनसा दूरं दिशोऽनु पवमानो वा। हिर
पर्णो वैकर्णः स त्वा मन्मनसां करोतु श्रीअमुकदे
यह पढ़ता हुआ मण्डप से बाहर अग्निवेदी के समीप जावे।
मंत्र में 'अमुक' के स्थान पर कन्या का नाम पढ़े। जिस
वे दोनों अग्नि के समीप जा रहे हों उसी समय उधर वेदि
दक्षिण ओर एक दृढ़ मनुष्य कूएँ या नदी के जल से भरा
कन्धे पर लेकर चुपचाप खड़ा हो और अभिषेक तक वहीं
यह जल मंगलार्थ है और होम के अन्त में वर इसी से कन्या
और अपना अभिषेक करता है। इधर कन्यादाता वर
दोनों से रास्ते में हीं कहे कि-ओं परस्परं समीक्षेथाम्।
दोनों एक दूसरे को देखें और वर मंत्र पढ़े-ओं अघोरचक्षुर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ध्न्येधि शिवाः पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः । वीरसूर्देवका-
मास्योनाशन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १ ॥ सोमः प्रथमो
विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः । तृतीयोऽग्निष्टेपतिस्तुरी-
यस्ते मनुष्यजाः ॥२॥ सोमो ददद् गन्धर्वाय गन्धर्वो दद-
ग्नये । रयिं च पुत्राँश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥३॥ सा
नः पूषा शिवतमामैरय सान ऊरू उशती विहर । यस्या-
मुशन्तः प्रहराम शेपं यस्यामु कामा बहवो निविष्टयै ॥४॥
फिर वधू को आगेकर वर अग्नि की प्रदक्षिणा साथही करके पश्चिम
ओर बिछी चटाई या तृण के पूले के पास उसके पश्चिम आवे और
उसपर दहिनी ओर वधू को बैठाकर उस चटाई को डांककर दहिना
पांव आगे करके स्वयं भी उसीपर बैठ जावे । फिर आचमन और
प्राणायाम करके संकल्प करे-ओं अद्येह प्रतिगृहीताया अस्या
भार्यायाः पत्नीत्वसिद्धये वैवाहिकहोममहं करिष्ये तत्पू-
र्वांगतया ब्रह्मणो वरणादिकं च करिष्ये ॥ फिर १८९ पृष्ठोक्त
रीति से ब्रह्मा के वरण से लेकर कुशकण्डिका की शेष क्रिया समाप्त
करे । हां, अग्नि से उत्तर होमादि की वस्तुओं के रखने के समय पूर्ण-
पात्र रख चुकने के बाद विवाह की विशेष वस्तुओं को क्रमसे रक्खे ।
वे यह हैं-शमी के पत्ते सहित लाजा (लावा), पत्थर, लाल बैल
का चर्म या लाल वस्त्र, कन्या का भाई या दूसरा कोई जो लावा दे,
बांसका नवीन सूप, बलवान पुरुष, जलपूर्ण घड़ा, आचार्य की
दक्षिणा और सप्तपदी आदि बनाने के लिये पिसा चावल या हल्दी
आदि । ये पदार्थ क्रमशः एकके बाद दूसरे रक्खे होते हैं । आचार्य
और यजमान (कन्यादाता) का आसन भी अग्नि से पश्चिम हीं पूर्वाग्र
कुशों सहित हो । कन्या से दक्षिण यजमान और उससे दक्षिण
आचार्य का आसन हो । शेष कर्म ज्यों का त्यों करे और प्रोक्षणी-
पात्र के पवित्र को प्रणीतापात्र में रखकर प्रोक्षणी को अग्नि और
प्रणीता के मध्य में रखलेने पर दहिना घुटना भूमि में टेककर और
ब्रह्माके अन्वारम्भ करने पर वहीं लिखी आघार से लेकर पंचवारुणी
तक की बारह आहुतियां घृत की देकर (१९४) उनका शेष (सं-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्रव) प्रोक्षणीपात्र में हर बार रखता जावे। अन्त वाली प्राजा
और स्विष्टकृत् की दो आहुतियां छोड़ दे। वे आहुतियां विवाह
शेष होमों के अन्त में दी जाती हैं । इसप्रकार बारह आहुतियों
बाद ब्रह्माका अन्वारम्भ छोड़कर जलका स्पर्श करले और आ
आहुतियां विना अन्वारम्भ के ही दे । पहले राष्ट्रभृत् होम
आहुतियां दे-ओं ऋताषाड्ऋतधामाग्निर्गन्धर्वः स न इ
ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् इदमृतासाहेऋतधा
ऽग्नये गन्धर्वाय नमम ॥ १ ॥ ओं ऋताषाड्ऋतधा
ग्निर्गन्धर्वस्तस्यौषधयोऽप्सरसो मुदो नाम ताभ्यःस्वा
इदमौषधीभ्योऽप्सरोभ्यो मुद्भ्योनमम ॥ २ ॥ ओं स
हितो विश्वसामा सूर्यो गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रंपातु
स्मै स्वाहावाट् इद ँ स ँ हिताय विश्वसाम्ने सूर्य
गन्धर्वाय नमम ॥ ३ ॥ ओं स ँ हितो विश्वसामा सू
गन्धर्वस्तस्यमरीचयोऽप्सरस आयुवो नाम ताभ्यः स्वा
हा इदं मरीचिभ्योऽप्सरोभ्य आयुभ्यो नमम ॥ ४ ॥
सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्द्रमा गन्धर्वः सन इदं ब्रह्मक्षत्रं
तस्मै स्वाहा वाट् इदं ँ सुषुम्णायसूर्यरश्मये चन्द्र
गन्धर्वाय नमम ॥ ५ ॥ ओं सुषुम्णः सूर्यरश्मिश्चन्
गन्धर्वस्तस्यनक्षत्राण्यप्सरसो भेकुरयोनामताभ्यः स्वा
इदं नक्षत्रेभ्योऽप्सरोभ्यो भेकुरिभ्यो नमम ॥ ६ ॥
इषिरो विश्वव्यचा वातोगन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं
तस्मै स्वाहा वाट् इदमिषिराय विश्वव्यचसे वाताय ग
र्वाय नमम ॥ ७ ॥ ओं इषिरो विश्वव्यचा वातो गन्
स्तस्यापोऽप्सरस ऊर्जो नाम ताभ्यः स्वाहा इदम
ऽप्सरोभ्य ऊर्ग्भ्यो नमम ॥ ८ ॥ ओं भुज्युः सुपर्णो
गन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भुज्यवे सुपर्णाय यज्ञाय गन्धर्वाय नमम ॥ ९ ॥ ओं भुज्युः सुपर्णो यज्ञो गन्धर्वस्तस्य दक्षिणा अप्सरसस्तावा नाम ताभ्यः स्वाहा इदं दक्षिणाभ्योऽप्सरोभ्यस्तावाभ्यो नमम ॥ १० ॥ ओं प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनोगन्धर्वः स न इदं ब्रह्मक्षत्रं पातु तस्मै स्वाहा वाट् इदं प्रजापतये विश्वकर्मणे मनसे गन्धर्वाय नमम ॥ ११ ॥ ओं प्रजापतिर्विश्वकर्मा मनो गन्धर्वस्तस्य ऋक्सामान्यप्सरस एष्टयो नाम ताभ्यः स्वाहा इदमृक्सामभ्योऽप्सरोभ्य एष्टिभ्यो नमम ॥ १२ ॥ इस प्रकार इन बारह आहुतियां के बाद जयाहोम करे-ओं चित्तं च स्वाहा इदं चित्ताय नमम ॥ १ ॥ ओं चित्तिश्च स्वाहा इदं चित्त्यै नमम ॥ २ ॥ ओं आकूतं च स्वाहा इदमाकूताय नमम ॥ ३ ॥ ओं आकूतिश्च स्वाहा इदमाकूत्यै नमम ॥ ४ ॥ ॐ विज्ञातं च स्वाहा इदं विज्ञाताय नमम ॥५॥ ओं विज्ञातिश्च स्वाहा इदं विज्ञात्यै नमम ॥ ६ ॥ ओं मनश्च स्वाहा इदं मनसे नमम ॥ ७ ॥ ओं शक्वरीश्च स्वाहा इद ँ शक्वरीभ्यो नमम ॥ ८ ॥ ओं दर्शश्च स्वाहा इदं दर्शाय नमम ॥ ९ ॥ ओं पौर्णमासं च स्वाहा इदं पौर्णमासाय नमम ॥ १० ॥ ओं बृहच्चस्वाहा इदं बृहते नमम ॥ ११ ॥ ओं रथन्तरं च स्वाहा इद ँ रथन्तराय नमम ॥१२॥ ओं प्रजापतिर्जयानिन्द्राय वृष्णे प्रायच्छदुग्रः पृतना जयेषु । तस्मै विशः समनमन्त सर्वाः स उग्रः सहृव्यो बभूव स्वाहा इदं प्रजापतये जयानिन्द्राय नमम ॥ १३ ॥ इसके बाद प्रणीता का जल हाथ से स्पर्श करले । उसके बाद अभ्यातान होम-ओं अग्निर्भूतानामधिपतिः स माऽवत्वस्मिन् ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रे-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यां देवहूत्या
ँ स्वाहा इदमग्नये भूतानामधिपतये नमम ॥ १ ॥ ओं
इन्द्रोज्येष्ठानामधिपतिः समाऽवत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रे
ऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यां देवहूत्या
ँ स्वाहा इदमिन्द्राय ज्येष्ठानामधिपतये नमम ॥२॥ ओं
यमः पृथिव्या अधिपतिः समाऽवत्वस्मिन्ब्रह्मण्यस्मिन्क्षत्रे
ऽस्यामाशिष्यस्यां पुरोधायामस्मिन्कर्मण्यस्यां देवहूत्या
स्वाहा इदं यमाय पृथिव्या अधिपतये नमम ॥ ३ ॥ अ
प्रणीता का जल छू ले। ऊपर के तीन मंत्रों के देखने से मा
होगा कि प्रत्येक मंत्र में शुरू के दो शब्दों के बाद "अधिपतिः
शब्द से लेकर 'स्वाहा' तक एक ही शब्द बार बार दिये गये
जरा भी अन्तर नहीं है। आगे भी ऐसा ही है। इस लिये अब
बार बार उनको न लिखेंगे। जितने नये शब्द होंगे उन्हें हीं लिख देंगे
उनके बाद बार बार पढ़ेजाने वाले इन्हीं शब्दों को उनके आगे भी
कर मंत्र पूरा कर लिया करेंगे और आहुति देंगे दिलावेंगे। ओं वा
रन्तरिक्षस्याधिपतिः० इदं वायवेऽन्तरिक्षस्याधिपत
नमम ॥४॥ ओं सूर्यो दिवोऽधिपतिः० इदं सूर्याय दिवोऽधि
पतये नमम ॥५॥ ओं चन्द्रमा नक्षत्राणामधि० इदं चन्द्रमसे
नक्षत्राणामधिपतये नमम ॥६॥ ओं बृहस्पतिर्ब्रह्मणोऽधि
इदं बृहस्पतये ब्रह्मणोऽधिपतये नमम ॥ ७ ॥ ओं मित्र
सत्यानामधि० इदं मित्राय सत्यानामधिपतये नम
॥८॥ ओं वरुणोऽपामधिप० इदं वरुणायापामधिपतये न
म ॥ ९ ॥ ॐ समुद्रः स्रोत्यानामधि० इदं समुद्राय स्रो
त्यानामधिपतये नमम ॥ १० ॥ ओं अन्न ँ साम्राज्य
नामधि० इदमन्नाय साम्राज्यानामधिपतये नमम ॥११
ओं सोम ओषधीनामधि० इदं सोमायौषधीनामधिप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नमम ॥ १२ ॥ ओं सविता प्रसवानामधि० इद ँ सवि-
त्रे प्रसवानामधिपतये नमम ॥ १३ ॥ ओं रुद्रः पशूनाम-
धि० इद ँ रुद्राय पशूनामधिपतये नमम ॥ १४ ॥
यहां पर प्रणीता का जल स्पर्श कर ले । ओं त्वष्टारूपाणामधि०
इदं त्वष्ट्रे रूपाणामधिपतये नमम ॥ १५ ॥ ओं विष्णुः
पर्वतानामधि० इदं विष्णवे पर्वतानामधिपतये नमम
॥ १६ ॥ ओं मरुतो गणानामधिपतयस्ते माऽवन्त्वस्मि-
न्ब्रह्मण्य० इदं मरुद्भ्यो गणानामधिपतिभ्यो नमम ॥१७॥
ॐ पितरः पितामहाः परेऽवरे ततास्ततामहाः इह मा-
ऽवन्त्वस्मिन्० इदं पितृभ्यः पितामहेभ्यः परेभ्योऽवरे-
भ्यस्ततेभ्यस्ततामहेभ्यो नमम ॥ १८ ॥ फिर प्रणीता का
जल स्पर्श करे । इसके बाद पाँच आहुतियाँ अग्नि आदि को दे ।
यह अभ्यातान होम से अलग हैं-ओं अग्निरैतु प्रथमो देव-
ताना ँ सोऽस्यै प्रजां मुञ्चतु मृत्युपाशात् । तदय ँ राजा
वरुणोऽनुमन्यतां यथेय ँ स्त्री पौत्रमघन्नरोदात्स्वाहा
इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ओं इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः
प्रजामस्यै नयतु दीर्घमायुः । अशून्योपस्थाजीवतामस्तु
माता पौत्रमानन्दमभिबुध्यतामिय ँ स्वाहा इदमग्नये
नमम ॥२॥ ओं स्वस्तिनो अग्ने दिवआपृथिव्या विश्वानि
धेह्ययथा यजत्र । यदस्यां महि दिविजातं प्रशस्तं तद-
स्मासु द्रविणं धेहि चित्र ँ स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥
ओं सुगंनु पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मद्धेह्यजरन्न
आयुः । अपैतु मृत्युरमृतं न आगाद्वैवस्वतो नो
अभयं कृणोतु स्वाहा इदं वैवस्वताय नमम ॥ ४ ॥
इसके बाद जल का स्पर्श करके और वधू को पर्दे में करके यह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

पाँचवीं आहुति दे—ओं परं मृत्यो अनुपरेहि पन्थां यस्ते अन्य इतरो देवयानात्। चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मानः प्रजाꣳ रीरिषो मोतवीरान्स्वाहा इदं मृत्यवे नमम। फिर प्रणीता का जल स्पर्श करे। इस आहुति को कोई कोई आचार्य संस्रव प्राशन के बाद देते हैं। इसके बाद लाजा होम, सांगुष्ठग्रहण, अश्मारोहण, गाथागान और अग्नि की प्रदक्षिणा ये पांच बातें एक साथ करे। लाजा होम और उसके मंत्र का पाठ यह दोनों काम वधू के हैं। इस होम के समय वधू और वर दोनों खड़े रहते हैं। लोगों ने लिखा है कि होम के समय वर वधू के पीछे आ जाता है और उसकी अंजली अपनी अंजली पर कर लेता है। पर गोभिल सूत्र के अनुसार वर वधू के पीछे होकर वधू से दक्षिण आ जाता है और उत्तरमुख होकर अपनी अंजली के ऊपर वधू की अंजली करके उसी में लाजा (लावा) लेकर वधू से होम कराता है। अग्नि से उत्तर ओर स्थित वधू का भाई बांस के नये सूप में रक्खे और शमी के पत्तों से मिले लावों के चार बराबर हिस्से कर लेता है और चारों में घी लगाकर क्रमशः एक एक हिस्सा अपनी अंजली से उठाकर बहू की अंजली में देता रहता है और मंत्र पढ़ती है। वधू एक अंजली के लावों की एक एक तिहाई एक एक बार अग्नि में छोड़ती है। यदि वधू मंत्र न पढ़ सके तो उसका प्रतिनिधिस्वरूप पति या और कोई पढ़े। लाजाहोम के तीन मंत्र हैं। अतएव प्रत्येक अंजली के लावों का एक तिहाई ही एक बार की आहुति होती है। अस्तु, पहली बार की अंजली की एक तिहाई-ओं अर्यमणं देवं कन्या अग्निमयक्षत। स नो अर्यमा देवः प्रेतां मुञ्चतु मा पतेः स्वाहा इदमर्यम्णे देवाय नमम ॥ १ ॥ दूसरी तिहाई-ओं इयं नार्युपब्रूते लाजानावपन्तिका। आयुष्मानस्तु मे पतिरेधन्ता ज्ञातयो मम स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ २ ॥ तीसरी तिहाई-ओं इमां लाजानावपाम्यग्नौ समृद्धिकरणे तव। मम तुभ्यं च संवननं तदग्निरनुमन्यतामियꣳ स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥ प्रत्येक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंजली की बांई ओर से अग्नि में लावा गिराया जावे। इस प्रकार तीन आहुतियों के बाद वर वधू के दहिने हाथ को उतान करके अंगूठे के साथ उसे पकड़े और मंत्र पढ़े-ओं गृभ्णामि ते सौभागत्वाय हस्तं मया प्रत्या जरदष्टिर्यथाऽऽसः । भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यंत्वाऽदुर्गार्हपत्याय देवाः ॥ १ ॥ अमोऽहमस्मि सात्वꣳ सा त्वमस्यमो अहम्। सामाहमस्मि ऋक्त्वं द्यौरहं पृथिवीत्वम् ॥२॥ तावेव विवहावहै सहरेतो दधावहै । प्रजां प्रजनयावहै पुत्रान्विन्दावहै बहून् ॥ ३ ॥ ते सन्तु जरदष्टयः संप्रियौ रोचिष्णू सुमनस्यमानौ । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतꣳ शृणुयाम शरदः शतम् ॥ ४ ॥ यही सांगुष्ठग्रहण है । इसके उपरान्त वधू को लेकर वर अग्नि के उत्तर रक्खे हुये पत्थर के पास जावे और पूर्वमुख होकर वधू के दहिने पांव को अपने दहिने हाथ से पकड़कर अगले मंत्र से उस पत्थरपर रक्खे। इसे ही अश्मारोहण कहते हैं । वधू का सिर्फ दहिना पांव ही पत्थर पर रहे। दोनों पांव कभी न पत्थर पर जाने दे । पत्थर पर रखने का मंत्र-ओं आरोहेममश्मानमश्मेव त्वꣳ स्थिरा भव । अभितिष्ठ पृतन्यतोऽवबाधस्व पृतनायतः ॥ वधू का पांव जब तक उस पत्थर पर ही रहे तभी तक वर यह मंत्र पढ़े-ओं सरस्वति प्रेदमव सुभगे वाजिनीवति। यां त्वा विश्वस्य भूतस्य प्रजायामस्याग्रतः ॥ १ ॥ यस्यां भूतं समभवद्यस्यां विश्वमिदं जगत् । तामद्य गाथां गास्यामि या स्त्रीणामुत्तमं यशः॥२॥ राघवेन्द्रे यथा सीता विनता कश्यपे यथा। पावके च यथा स्वाहा तथा त्वं मयि भर्त्तरि ॥ ३ ॥ अनिरुद्धे यथैवोषा दमयन्ती नले यथा। अरुन्धती वसिष्ठे च तथा त्वं मयि भर्त्तरि ॥ ४ ॥ सुदक्षिणा दिलीपे तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वसुदेवे च देवकी । लोपामुद्रा यथागस्त्ये तथा
मयि भर्त्तरि ॥५॥ शन्तनौ च यथा गंगा सुभद्रा च यथार्जुने
धृतराष्ट्रे च गान्धारी तथा त्वं मयिभर्त्तरि ॥ ६ ॥ अ
यथानसूया च जमदग्नौ च रेणुका। श्री कृष्णे रुक्मिण
यद्वत्तथा त्वं मयि भर्त्तरि ॥ ७ ॥ जानकी च यथा रा
ऊर्मिला लक्ष्मणे यथा । कुशे कुमुद्वती यद्वत्तथा त्वं मयि
भर्त्तरि ॥ ८ ॥ इसी का नाम गाथागान है । इसके बाद आगे अ
वधू और उसके पीछे वर दोनों अग्नि की प्रदक्षिणा करें । प्रदक्षि
के समय ब्रह्मा, लाजा, अभिषेक के जल का घड़ा जो पुरुष के क
पर रहे, घी, ऋत्विक्, गुरु और स्रुव को बचाकर शेष की ही प्र
क्षिणा करे । प्रदक्षिणा के भीतर ये न आवें । पर, किसी किसी
लिखा है कि यह नियम केवल चौथी परिक्रमा के ही लिये है ।
लिये जैसी परिपाटी हो करे । भरसक सभी को बचाना अ
है । उस परिक्रमा के करने के समय वर मन्त्र पढ़े-ओं तुभ्यम
पर्य्यवहन्सूर्यां वहतु ना सह । पुनः पतिभ्यो जायां
अग्ने प्रजया सह ॥ इस प्रकार दोनों प्रदक्षिणा करके
अपने स्थान पर आ जावें और पहले की ही तरह अंजलो में ल
लेकर मंत्रों से तीन बार आहुतिदान, सांगुष्ठग्रहण, अश्मारोह
गाथागान और अग्नि की प्रदक्षिणा दो बार और करें । इस प्रकार
आहुतियां, तीन बार सांगुष्ठग्रहण, तीन बार अश्मारोहण और
प्रदक्षिणा हो जानेपर जब अंत में फिर अपने स्थान पर आजाव
कन्या का भाई सूप में बचे चतुर्थांश लाजा वधू की ही अंजल
डालदे और वह एक ही बार-ॐ भगाय स्वाहा इदं भग
नमम-मन्त्र से सभी लाजा अग्नि में छोड़ दे । इसके बाद सां
ग्रहण, अश्मारोहण और गाथागान नहीं होता । परन्तु वर
चुपचाप अग्नि की एक और प्रदक्षिणा करते हैं । कहीं कहीं लि
कि इस बार वर आगे और वधू पीछे रहे । जैसी रीति
वैसा करे । इसके बाद वर वधू अपने स्थान पर आकर बै

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर वर यह अगली आहुति देकर प्रोक्षणी-पात्र में उसका शेष छोड़ दे ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ यह आहुति मन से ही मन्त्र बोलकर दीजावे। इसके बाद हल्दी या जल में पीसे चावल से अग्नि के उत्तर उत्तर क्रमशः सात घर बना दे। इसी में सप्तपदी की जाती है। वर वधू सप्तपदी के सात घरों या मण्डलों से दक्षिण आकर खड़े होजावें और वर के प्रत्येक बार मन्त्र पढ़नेपर वधू अपना दहिना पांव एक एक घर में रखती जावे। पहले दहिना पांव रखकर उसी के पास उसी घर में बायां भी रख लिया करे। वधू के साथ वर भी चलताजावे-(१) ओं एकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु ॥ (२) ओं द्वे ऊर्जे विष्णुस्त्वा नयतु ॥ (३) ओं त्रीणि रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु ॥ (४) ओं चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु ॥ (५) ओं पंच पशुभ्यो विष्णुस्त्वानयतु ॥ (६) ओं षड्ऋतुभ्यो विष्णुस्त्वानयतु ॥ (७) ओं सखे सप्तपदाभव सा मामनुव्रताभव विष्णुस्त्वा नयतु ॥ हरेक पद देनेके बाद इन सात श्लोकों में से एक एक कन्या पढ़तीजावे-(१) ॐ धनं धान्यंच मिष्टान्नं व्यंजनाद्यं च यद् गृहे। मदधीनं च कर्त्तव्यमिदमाद्ये ब्रवीम्यहम् ॥ (२) कुटुम्बं रक्षयिष्यामि सदा ते मञ्जुभाषिणी। दुःखे धीरा सुखे हृष्टा द्वितीयेऽदो ब्रवीम्यहम् ॥ (३) पतिभक्तिरता नित्यं क्रीडिष्यामि त्वयासह। त्वदन्यं न नरं मंस्ये तृतीयेऽदो ब्रवीम्यहम् ॥ (४) लालयामि च केशान्तं गन्धमाल्यानुलेपनैः। काञ्चनैर्भूषणैस्तुभ्यं तुरीये प्रब्रवीम्यहम् ॥ (५) आर्त्ते आर्त्ता भविष्यामि सुखदुःखविभागिनी। तवाज्ञां पालयिष्यामि पञ्चमेऽदो ब्रवीम्यहम् ॥ (६) यज्ञे होमे च दानादौ भविष्यामि त्वया सह। धर्मार्थकामकार्येषु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

षष्ठेऽदः प्रब्रवीम्यहम् ॥ (७) अत्रांशे साक्षिणो दे
मनोभावप्रबोधिनः । वञ्चनं न करिष्यामि प्रतिज्ञा मे
मे त्वियम् ॥ इसके बाद अपने स्थान पर आकर दोनों बैठजावें
अबतक जो पुरुष के कन्धे पर जलपूर्ण घट था उसे सामने रख
या पल्लव से जल लेकर वर वधू के सिर पर अगले मंत्रों से डाल
अभिषेक करे-ओं आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः
न्ततमास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥ १ ॥ ओं आपो हिष्ठा
योभुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥
योवः शिवतमोरसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीः
मातरः ॥ ३ ॥ तस्माअरंगमामवो यस्य क्षयाय जिन्व
आपो जनयथाचनः ॥ ४ ॥ इसके अनन्तर यदि दिन में वि
हो तो वर वधू से कहे कि-ओं सूर्यमुदीक्षस्व ॥ वह सू
देखती हुई मंत्र पढ़े-ओं तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमु
पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम श
शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भू
शरदः शतात् ॥ यदि रात में विवाह हुआ हो तो वर वधू से
कि-ओं ध्रुवमुदीक्षस्व ॥ वह ध्रुव को देखती हुई वरके साथ
पढ़े-ॐ ध्रुवमसि ध्रुवं त्वा पश्यामि ध्रुवैऽधिपोष्या
मह्यंत्वाऽदाद्बृहस्पतिर्मया पत्या प्रजावती संजीव
शतम् ॥ इसमें वधू केवल 'पश्यामि' तक ही बोले।
केवल वरही पढ़े। इसके बाद वधू के दहिने कन्धे से होकर
तक अपना दहिना हाथ वर लेजावे और उसे छूकर मन्त्र
ओं मम व्रते ते हृदयं दधामि मम चित्तमनुचित्तं ते
मम वाचमेकमना जुषस्व प्रजापतिष्ट्वा नियुनक्तु मह्य
फिर हाथ हटाकर उसकी ओर देखता हुआ अगला मन्त्र वर
इसका नाम अभिमंत्रण है-ओं सुमंगलीरियं वधूरिमा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मेत पश्यत । सौभाग्यमस्यै दत्वा याथास्त्वं विपरेतन ॥ इसके बाद वधू को अपने वाम भाग में बैठाकर वर उसके सिर में सिन्दूर दे । हाथ में सोना, सन और शमी का पत्ता लेकर उसीसे सिन्दूर उठावे और वधू की माँग में लगाता हुआ मन्त्र पढ़े-ओं वाममुद्यसवितर्वाममश्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्य ँ सावीः । वामस्यहि क्षयस्यदेवभूरेरया धियावामभाजः स्याम ॥ दक्षिणत उहैक उपदधाति तदेताः पुण्यालक्ष्मी-र्दक्षिणतो दध्म इति ॥ तस्माद्यस्य दक्षिणतो लक्ष्म भव-ति तं पुण्यलक्ष्मीक इत्याचक्षत उत्तरतः स्त्रिया उत्तरत आयतनाहि स्त्री तत्तत्कृतमेव पुरस्तात्त्वेवैना उपदध्या-द्यत्राहैव शिरस्तदेव हनू ताजिह्वाऽथैताः पुण्या लक्ष्मी-र्मुखतोधत्ते तस्माद्यस्यमुखे लक्ष्म भवति तं पुण्यलक्ष्मी-क इत्याचक्षते ॥ इसके बाद सौभाग्यती स्त्रियाँ उसे सिन्दूर लगावें और उसके दहिने कान में कहें कि-ओं गौर्याः सावित्र्यास्तव सौभाग्यं भवतु ॥ इसके उपरान्त कोई बलवान आदमी, जो उत्तर ओर खड़ा किया गया हो या स्वयं वर ही कन्या को उठाकर पूर्व या उत्तर के पर्दावाले घर में ले जावे और पहले रक्खे हुए बैल के लाल चर्म पर, जिसका सिर पूर्व हो, या लाल खद्दर अथवा कुशपर ही, पूर्वमुख बैठावे और यह मन्त्र पर पढ़े-ओं इह गावो निषीद-न्त्विहाश्वा इह पूरुषाः । इहो सहस्रदक्षिणो यज्ञ इह पूषा निषीदतु ॥ इसके बाद वहाँ कुल की वृद्ध स्त्रियों की रीति के अनु-सार ग्रामाचार और लोकाचार करने के बाद फिर वर वधू वहाँ से आकर अपने स्थान पर बैठ जावें । फिर हाथ पाँव धोकर आचमन कर-के ब्राह्मा के अन्वारम्भ करने पर वर स्विष्टकृत् की आहुति देकर प्रोक्षणी में संस्रव डाल दे-ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ आजकल प्रायः यही पूर्व या उत्तर के घर में वधू के ले जाने की क्रिया लुप्त होकर इसकी जगह विवाह कृत्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के अन्त में कोहबर में ले जाने की रीति हो गई है । अस्तु, स्विष्ट होम के बाद संस्रव प्राशन (पृ० २४३) करके ब्रह्मा को द्रव्य सहित पूर्णपात्र दक्षिणा दे-ओं अद्य कृतैतद्विवाहहोमप्रतिष्ठार्थं पूर्णपात्रं सद्रव्यं प्रजापतिदैवतं यथानामगोत्राय ब्रह्मणाय ब्रह्मणे तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ ओं स्वस्ति । ओं अक्रन्कर्म कर्मकृतः सह वाचा मधुभुवा । देवेभ्यः कर्म कृत्वाऽस्तं प्रेत सचाभुवः—पूर्ण दक्षिणा ले लेवे । इसके बाद अग्निके पूर्व से हाथ ले जाकर ब्रह्मा उसके आसन से उठा दे और यदि कुश का ब्रह्मा हो तो ब्रह्मा खोल दे । तब आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करके उसे आचार्य की दक्षिणा गौ दे या उसके बदले में यथाशक्ति सुवर्ण द्रव्य ही दे-ओं अद्यकृतैतत्कर्मणः प्रतिष्ठार्थमिमां गां दैवतां तन्निष्क्रयीभूतं यथाशक्ति सुवर्णमन्यद् द्रव्यं वा यथानामगोत्रायाचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर भूयसी दक्षिणा का संकल्प करके दे-ओं अद्यकृतैतत्कर्मणः सांगतार्थं यथाशक्तीमां भूयसीं दक्षिणां नानामगोत्रेभ्यो जनेभ्यः सम्प्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ इसके बाद प्रणीता से पवित्र निकाल कर उसके जल को—ओं सुमित्रिया न आप ओषधयः सन्तु—मन्त्र से सिर पर छिड़के और ओं दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योऽस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः इसे पढ़कर ईशान कोन में प्रणीतापात्र को औंध दे । इसके बाद जिस क्रम से कुशों का परिस्तरण हुआ था उसी क्रम से उन्हें उठा कर उनमें घी लगावे और हाथ से ही होम करे-ओं देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित । मनसस्पत इमं देवयज्ञं स्वाहा वातेधाः स्वाहा इदं वाताय नमम ॥ इसके बाद पूर्णाहुति का अवसर आता है । यद्यपि विवाह आदि में पूर्णाहुति का निषेध है और बहुतसी पद्धतियों में वह लिखी भी इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं गई है। फिर भी मालूम होता है कि बहुत से प्रान्तों में पूर्णाहुति की चाल है। अतएव बहुत सी पद्धतियों में लिखी भी है। इसीलिये हम भी लिख देते हैं, ताकि जिनको पूर्णाहुति का हठ ही हो वे इसी तरह कर लें। वर वधू खड़े होकर और स्रुव में घी रखकर उस पर घृत पूर्ण नारियल रक्खें और नारियल पर पुष्प, फल, सुपारी आदि रखकर लाल खद्दर के टुकड़े से उसे ढंक देवें और वधू के दहिने हाथ से स्रुव को स्पर्श कराके वर इस मन्त्र से अग्नि में छोड़े– ओं मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम्। कवि ँ सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ इतना कर चुकने के बाद स्रुव में भस्म लेकर दहिने हाथ की अनामिका से वर अपने अंगों में इन मन्त्रों से लगावे–(ललाट)–ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः। (गला)– ॐ कश्यपस्य त्र्यायुषम्। (दहिना कंधा)–ॐ यद्देवेषु त्र्यायुषम्। (हृदय)–ओं तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥ इसी तरह वधू भी लगावे और उसके लिये यदि वर या दूसरा कोई मंत्र पढ़े तो उसके अन्त के 'तन्नो' की जगह 'तत्ते' पढ़े। जब दूसरे के लिये दूसरा पढ़े तब ऐसा ही करे। शेष ज्यों का त्यों पढ़े। इसके बाद ब्राह्मणभोजन का संकल्प करके मण्डप में आकर वर अपने स्थान पर बैठे और २२५ पृष्ठोक्त रीति से ब्राह्मण अभिषेक और तिलक करके आशीर्वाद दें। इसी आशीर्वाद देने को दूर्वाक्षत देना भी कहते हैं। उसका अभिप्राय यह है कि हाथ में दूब और अक्षत लेकर ब्राह्मण तथा अन्यान्य श्रेष्ठ व्यक्ति आशीर्वाद पढ़ पढ़ कर वर कन्या पर छिड़कें। इसके बाद २२६ पृष्ठोक्त विधि से ही मण्डप के सभी देवताओं का विसर्जन करे। तदनन्तर स्त्रियां मण्डप में आकर चुमावन आदि लोकाचार करके वरको जनवासे में भेजें। इसके उपरान्त ब्राह्मण तथा भाई बन्धु और बारात वालों को खिला कर कन्यादाता स्वयं भोजन करके विश्राम करे। यह स्मरण रहे कि विवाह की अग्नि बुझने नहीं दी जाती है। किन्तु इसी को ले जाकर इसी में वर चतुर्थी कर्म का होम करता है और फिर स्मार्त्त अग्नि के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कुण्ड में इसी की स्थापना होती है । अथवा स्मार्त्त अग्नि दूसरी होती है । मगर चतुर्थी कर्म के बाद ही उसकी स्थापना करते वह भी विवाह अग्नि ही कहलाती है । यदि विवाह के समय की बुझ जावे और वर उसे अपने घर न ले जा सके तो चतुर्थी कर्म होम दूसरी अग्नि स्थापित करके भी किया जाता है । मगर होम पहले अनादिष्ट प्रायश्चित्त करना पड़ता है जिसकी विधि आगे लिखें विवाह के बाद कम से कम एक वर्ष तक स्त्रीसम्बन्ध न करे । फ यदि यह असंभव हो जावे तो बारह, छ या तीन दिन तो अवश्य ब्रह्मचारी रहे और चतुर्थ दिन रात में चतुर्थी कर्म के बाद भले स्त्रीप्रसंग कर सकता है, यदि ऐसी ही अवस्था होवे । इति विवाह

७–वरकी बिदाई और वधूप्रवेश ।

पिता के घर से आकर पहली बार जब कन्या पति के गृह प्रवेश करती है तो उसे ही वधूप्रवेश या गमन कहते हैं और फि पिता के घर जाकर दोबारा आने को द्विरागमन या दोंग कहते वधूप्रवेश विवाह के ही दिन या उससे तीसरे, पांचवें आदि वि दिनों में ही होता है । इसका विशेष विचार ग्रन्थान्त में है । अतः दिन ससुराल से रवाना होने के पहले वर ससुर के गृह में जाता वहां गणेश और गौरी की पूजा करके वर को तिलकआदि करते इसकी विधि वैसी ही जैसी ३७८ पृष्ठ में लिखी है । पूजा भी वहां लि है और तिलक का मंत्र भी 'युञ्जन्ति ब्रध्न०' लिख ही दिया केवल उसी से तिलक कर देना चाहिये । इसके बाद शेष लोकाच पूरा करके उसकी बिदाई होती है और किसी ताम्र आदि के पात्र विवाह की अग्नि को वधू के साथ लिवा कर वर अपने घर आता यदि अग्नि न हो तो न लावे । अपने गृह के द्वार पर आकर लोकाच के अनुसार आंगन में जावे । घर के भीतर जाने से पहले द्वार पर वधू के साथ जावे और बाहर ही किसी आसन पर बै दहिनी ओर वधू को बैठावे । फिर 'ॐ अपवित्रः०' इत्यादि स्मरण पूर्वक आचमन और प्राणायाम करके द्वारमा की पूजा करे । द्वार में प्रवेश करने के समय जो भाग दहिनी ओर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसी ओर दीवार पर हल्दी आदि से सात लकीरें बनाकर पूजा की जाती है। पहले संकल्प करे-ॐ अद्येह सवधूकोऽहं गृहप्रवेशं करिष्ये तदंगतया द्वारमातृणां पूजनं च करिष्ये॥ फिर हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर-ॐ कुमारी धनदा नन्दा विपुला मंगलाऽचला। पद्मा चैव समाख्याताः सप्तैता द्वारमातरः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कुमार्यै नमः, धनदायै नमः नन्दायै नमः, विपुलायै नमः, मंगलायै नमः, अचलायै नमः, पद्मायै नमः, सप्त द्वारमातृरावाहयामि इहागच्छत इह तिष्ठत-कह कर उन पर अक्षतादि डाल कर उनका आवाहन करे और 'ॐ मनो जूति० (पृ० ३७९) मंत्र से प्रतिष्ठा कर के और-ॐ भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो द्वारमातृभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से पञ्चोपचार पूजा करके उनके ऊपर १२८ पृष्ठोक्त रीति से वसोर्धारा गिराकर उसकी भी पूजा करे। फिर-ॐ यांतु मातृगणाः सर्वे पूजामादाय० (४१६) से उन का विसर्जन कर गृह में प्रवेश करे और वहां आसन पर पूर्वमुख बैठकर दक्षिण ओर वधू को बैठावे और किसी पवित्र काष्ठ आदि, दीवार या लीपी भूमि पर गणपति सहित सप्त जीवमातृकाओं की पूजा करे-ॐ अद्येह सवधूकोऽहं गृहप्रवेशोत्तरांगतया गणपतिसहितसप्तजीवमातृणां पूजनं करिष्ये॥ फिर पूर्ववत् सात मातृकाओं के चिन्ह और उनसे पहले गणेश का भी एक चिन्ह बनाकर पुष्प, अक्षत से आवाहन करे-ॐ कल्याणी मंगला भद्रा पुण्या पुण्यमुखी तथा। जया च विजया चैव सप्तैता जीवमातरः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतये नमः, कल्याण्यै नमः, मंगलायै नमः, भद्रायै नमः, पुण्यायै नमः, पुण्यमुख्यै नमः, जयायै नमः, विजयायै नमः, गणपति सहित सप्तजीवमातृरावाहयामि इहागच्छत इह तिष्ठत॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इस मंत्र से अक्षत डालकर आवाहन करे और पूर्ववत् प्रतिष्ठा करे ॐ भूर्भुवः स्वः गणपतिसहितसप्तजीवमातृभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि–इत्यादि रीति से पूजा करे । फिर पूर्ववत् कलश धारा की पूजा करे और पुष्पाञ्जलि समर्पण कर प्रार्थना करे–ॐ ब्रह्माणी कमलेन्दुसौम्यवदना माहेश्वरी लीलया। कौमारी रिपुदर्प नाशनकरी चक्रायुधा वैष्णवी ॥ वाराहीघनघोरघर्घरमुखा चैन्द्री च वज्रायुधा । चामुण्डा गणनाथरुद्रसहिता रक्षन्तु नो मातरः ॥ तब आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करे–ओं अद्येह कृतजीवमातृपूजाकर्मणः सांगतायै यथाशक्तीमां दक्षिणां तुभ्यमाचार्याय संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर भूयसी दक्षिणा का संकल्प करे–ओं अद्येह कृतजीवमातृपूजाकर्मप्रतिष्ठार्थं यथाशक्तीमां भूयसीं दक्षिणां संप्रददे ॥ और दक्षिणा देकर–ओं यांतु मातृगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम् इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च–इसे पढ़ता हुआ अक्षत छींट कर उनका विसर्जन करे । इसके बाद वरकी माता और वर वधू की आरती कर तिलक दें और वर वधू दही गुड़ खाकर विश्राम करें । इति वधूप्रवेश ।

८–चतुर्थीकर्म ।

विवाह के चौथे दिन की आधी रात को चतुर्थी कर्म घर में ही किया जाता है । इसके लिये मण्डपकी आवश्यकता नहीं है । पहले वर वधू उबटन आदि लगाकर स्नान करें और घर को लीप पोत कर वर के हाथ से एक हाथ लम्बी चौड़ी और चार अंगुल ऊंची शुद्ध बालू से बेदी बनाकर एवं उससे पूर्व आसन डालकर वस्त्र भूषणादि से सुसज्जित वर वधू उसपर बैठें । वधू वर से दक्षिण रहे । पहले तिलक लगाकर आचमन प्राणायाम करके कर्म के लिये जलपात्र की स्थापना करे (७६) और संकल्प करे–ॐ अद्येहामुकशर्म्माहं ममा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वध्वाः सोमाद्युपभुक्तिदोषापनोदनपुरस्सरं श्रीपरमेश्वर-प्रीत्यं विवाहांगं चतुर्थीकर्म करिष्ये। तदंगतया च गणपतिपूजनादिग्रहपूजनान्तंकर्म करिष्ये॥ यदि विवाह की अग्नि न हो तो उसके लिये "अनादिष्टप्रायश्चित्तं च" इतना और भी 'चतुर्थीकर्म' के बाद कहकर तब 'करिष्ये' इत्यादि पढ़े। अनन्तर आचार्यवरण, कर्मांगदीपस्थापन, गणपतिपूजन और पुण्याहवाचन (१०३-१०९) कराकर १४५ पृष्ठोक्त रीति से कलश स्थापन पूर्वक वरुण ग्रहादि देवताओं का पूजन करे। इसमें मातृकापूजा और नान्दीश्राद्ध की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद वेदी में पञ्चभूसंस्कार पूर्वक शिखिनामक अग्नि की स्थापना पूजा आदि कर्म से लेकर पवित्र को प्रणीतापात्र में रखने तक की सम्पूर्ण क्रियायें १८१ पृष्ठोक्त कुशकण्डिका की विधिसे करडाले। केवल दो एक बातों में विशेषता होगी। ब्रह्मा को उसके आसनपर बिठाने के बाद प्रणीता पात्र के लिये जो कुशासन रक्खा जाय उससे उत्तर एक तांबे आदि का बड़ा सा पात्र जल भरकर पहले ही रखदिया जावे। इसे पृथूदपात्र कहते हैं। इसका अर्थ है बड़ा जलपात्र (पृथु+उद+पात्र)। इसके बाद प्रणीता आदि की स्थापना ज्यों की त्यों करके पूर्णपात्र के बाद चरु के लिये किसी पात्र में चावल रक्खे और यदि आज्यस्थाली के बाद चरुस्थाली न रक्खी हो तो चावल रखने के बाद ही चरु पकाने के लिये चरुस्थाली रखदे। और घी को अधिश्रयण (गर्म) करने के लिये जब उसे आज्यस्थाली में रक्खे तो उसी के साथ प्रणीता के जल से चावल को तीन बार धोकर चरु-पात्र में उसे भी रक्खे और अग्नि से उत्तर दो जगह अग्नि रखकर दक्षिणवाली पर ब्रह्मा घी रक्खे और उत्तर वाली पर स्वयं यजमान चरु रख दे। फिर अन्यान्य क्रियाओं के बाद पहले घी को अग्नि से उतार कर उसे चरुके पूर्व से लाकर चरु के उत्तर रक्खे और चरु को घी के पश्चिम से लाकर घी से उत्तर रख दे। ये दोनों वहांसे फिर उसी तरह उठाकर अपने आगे उत्तराग्र कुशों पर पहले घी रक्खे और उसके उत्तर चरु। इतनीहीं विशेषता बीच में होगी। इसके बाद अब होम का अवसर आवेगा और अनादिष्टप्रायश्चित्त करना भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

यदि आवश्यक होगा और वह भी इसीलिये कि विवाह की अग्नि बुझने से दूसरी अग्नि में चतुर्थी होम करना है, तो पहले उक्त आहुतियां देकर पीछे से आघार आदि की आहुतियां दी जायंगी अनादिष्टप्रायश्चित्त के लिये चार व्याहृति होम और पंचवारुणी यही नौ आहुतियां घी से दी जाती हैं और इनके देने के समय ब्रह्माका अन्वारम्भ नहीं रहता है और न प्रोक्षणीपात्र में कुछ ही रखते हैं । अनादिष्टप्रायश्चित्त-(१) ओं भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२) ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ (३) ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम । (४) ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ इन चार आहुतियोंके बाद १९४ पृष्ठोक्त पञ्चवारुणी आहुतियां देकर अनादिष्ट पूरा करे । फिर चतुर्थी होम के समय ब्रह्माके अन्वारंभ करने आघार और आज्य भाग की चार आहुतियाँ घीसे देकर प्रत्येक उनका शेष प्रोक्षणी पात्र में छोड़ता जावे । इसके बाद व्याहृति पंञ्च वारुणी की आहुतियों को न करके आगे की चतुर्थीकर्म वाली आहुतियाँ और उनके बाद स्विष्टकृत् की आहुति देकर पीछे व्याहृति होम करे और पञ्चवारुणी आहुतियाँ दे । यह जो छ आहुतियां दी जायगी उनके समय अन्वारंभ नहीं रहेगा, उनका संस्रव (आहुति शेष) उस बड़े जल पात्र में रक्खा जायगा जो उत्तर ओर रक्खा है, न कि प्रोक्षणीपात्र में और इन छ में से पहली पाँच घी से और चरु से दीजायगी । अस्तु, ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर आघार की आहुति

(१) ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ (२) ओं इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ आज्य भाग (३) ॐ अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (४) ॐ सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम ॥ इनका संस्रव प्रोक्षणी पात्र में डाल तब अन्वारंभ छोड़कर घी से आहुति दे और संस्रव पृथूदपात्र में डाले-(१) ओं अग्ने प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि याऽस्यैपति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (२) ओं वायो प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वानाथकाम उपधावामि याऽस्यैप्रजाघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ (३) ॐ सूर्यप्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वानाथकाम उपधावामि यास्यै पशुघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ (४) ओं चन्द्र प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै गृहघ्नी तनूस्तामस्यैनाशय स्वाहा इदं चन्द्राय नमम ॥ (५) ओं गन्धर्व प्रायश्चित्ते त्वं देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वा नाथकाम उपधावामि यास्यै यशोघ्नी तनूस्तामस्यै नाशय स्वाहा इदं गन्धर्वाय नमम ॥

इसके बाद चरु में घी मिलाकर उसे स्रुव में लेकर ब्रह्मा के अन्वारंभ के विनाहीं छठीं आहुति इस तरह मन से दे-ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ इसका भी शेष पृथूदपात्र में डाले । फिर स्रुव में घी और चरु दोनों लेकर अन्वारंभ रहने पर ही एकही बार आहुति देवे-ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ इसका संस्रव प्रोक्षणी में रक्खे । फिर घी से नौ आहुतियां संस्रव धारण सहित और अन्वारंभ पूर्वक दे । इनका भी संस्रव प्रोक्षणीपात्र में डाले । वह आहुतियाँ यह हैं-ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ॐ भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ २ ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥ ३ ॥ ॐ त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान्देवस्य हेडो अवयासिसीष्ठाः । यजिष्ठोवह्नितमः शोशुचानो विश्वाद्वेषा ँ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत्स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यान्नमम ॥ ४ ॥ ॐ सत्वन्नो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठो अस्या उषसो व्युष्टौ । अव
त्व नो वरुण ँ रराणो वीहि मृडीक ँ सुहवो न एधि
स्वाहा इदमग्नीवरुणाभ्यां नमम ॥ ५ ॥ ॐ अयाश्चाग्ने
स्यनभिशस्तिपाश्च सत्यमित्त्वमया असि । अया नो य
वहास्ययानोधेहिभेषज ँ स्वाहा· इदमग्नये नमम ॥ ६
ॐ येते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता महान्त
तेभिर्नो अद्यसवितोतविष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्क
स्वाहा इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो
मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यश्च नमम ॥७॥ ॐ उदुत्तमं वरुणपाश
स्मदवाधमं विमध्यम ँ श्रथाय । अथावयमादित्य
तवानागसो अदितयेस्याम स्वाहा इदं वरुणाय नमम ॥
मन से-ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥

इसके अनन्तर प्रोक्षणीपात्र वाला संस्रव खा या सूंघकर
की दक्षिणा से लेकर बर्हिःहोम तक की क्रियायें २४३ पृष्ठोक्त रीति
करके उस पृथूदपात्र का जल पल्लव से लेकर वधू के सि
अभिषेक करता हुआ मंत्र पढ़े-ओं याते पतिघ्नी प्रजा
पशुघ्नी गृहघ्नी यशोघ्नी निन्दितातनूःजारघ्नीं तनू
करोमि । साजीर्यत्वंमयासह श्री अमुकदेवि ॥ यहां 'अ
शब्द की जगह स्त्री का नाम बोले । इसी अवसर पर यदि
नाम से मिश्रित वधू का दूसरा नाम रखना हो तो रख सकता है।
कहीं ऐसी चाल है भी । इसके बाद आगे के मंत्रों से प्रत्येक मं
अन्त में होम से बचे चरु का एक एक ग्रास वधू को अपने
से खिलावे-(१) ओं प्राणैस्ते प्राणान्त्सन्दधामि। (२) ओं
स्थिभिस्तेऽस्थीनि संदधामि। (३) ओं मांसैस्ते मां
नि सन्दधामि । (४) ओं त्वचा ते त्वच ँ संदधामि
किसी किसी ने इन चारो मंत्रों को एक ही माना है और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के तीन ॐ कार तथा पहले के सिवाय तीन 'सन्दधामि' को भी वे मंत्र से निकाल देते हैं। इस तरह एक ही मंत्र से एक ही बार खिलाना मानते हैं। जैसी रीति हो कर सकता है। तब हाथ धोकर आचमन के बाद वधू के दहिने कन्धे से होकर उसके हृदय पर अपने दहिने हाथ की हथेली रखकर मंत्र पढ़े— ॐ यत्ते सुसीमे हृदयं दिवि चन्द्रमसि स्थितम् । वेदाहं तन्मां तद्विद्यात्पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शत ँ शृणुयाम शरदः शतम् ॥ इसके बाद वर वधू कलशकी तीन परिक्रमा करके परस्पर एक दूसरे का कंकण छोड़ दें। उनका ग्रन्थि-बंधन भी इसी समय खोला जाता है। यदि दोनों की एक ही ग्रंथि हो तब तो वर ही खोले और यदि अलग अलग हों तो वे दोनों ही एक दूसरे की खोलें। कंकण खोलने का मन्त्र—ओं कंकणं मोचयास्यद्य रक्षोघ्नं रक्षणं मम। मयिरक्षां स्थिरां कृत्वा स्वस्थानं गच्छ कंकण ॥ ग्रंथि चुपचाप ही खोली जाती है। इस कंकण और जन्मग्रन्थि के अक्षतादि को जलपूजा के समय जल में डाल देते हैं। इसके बाद यद्यपि और और ग्रन्थों में पूर्णाहुति नहीं लिखी है, और यही ठीक भी है। फिर भी कहीं कहीं लिखी है। इस लिये यदि आग्रह हो तो पूर्णाहुति और त्र्यायुषकरणादि ४१३ पृष्ठोक्तरीति से करके आचार्य को दक्षिणा देकर भूयसी दक्षिणा भी देवे। आचार्य की दक्षिणा के संकल्प में 'विवाह' की जगह 'विवाहांगचतुर्थी' पढ़ देना चाहिये और भूयसी दक्षिणा के संकल्प में केवल 'भूयसीं' पद 'दक्षिणां' से पहले बढ़ा देना चाहिये। शेष शब्द विवाह की दक्षिणा के संकल्प के ही रहेंगे। फिर यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन का संकल्प कर २२५ आदि पृष्ठोक्त रीति से सविस्तर अभिषेक, तिलक, आशीर्वाददान और विसर्जन करना चाहिये। विसर्जन केवल चतुर्थी कर्म के देवताओं काही नहीं, बल्कि मण्डप और स्तम्भ या हरीस गाड़ने के समय जिन जिन देवताओं की स्थापना की गई है और मण्डपादि में जितनी मातृका आदि हैं सभी का विसर्जन कर ब्रह्मार्पण करना चाहिये। २२६ पृष्ठ में हीं सविस्तर विधि लिखी है। इति चतुर्थीकर्म।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

९–जलपूजा ।

इसके बाद, परन्तु दोपहर से पहले ही, वर की माता दू
सौभाग्यवती स्त्रियों को साथ लेकर और मातृकास्थान के अ
तादि और वर वधू के कंकण प्रभृति तथा पूजासामग्री कि
बांस वगैरः की नवीन टोकरी में रखकर और उसे लाल खद्दर
ढंककर किसी दासी के सिर पर रख दे। फिर बाजे गाजे के स
नदी या तालाब के किनारे जावे। वहां साथ में वर और वधूको
दोनों का गँठजोड़ा करके और सिर पर मुकुट पहना कर लेजावे।
के किनारे हाथ धो आचमन कर 'ओं अपवित्रः०' (९५) इत्य
से आत्मा को पवित्र करे और किनारे की ऊँची भूमि या वृक्ष
हल्दी या चन्दन आदि से सात जलमाताओं के चिन्ह बनावे और
पर सिन्दूर लगाके हाथ में अक्षत लेकर उनका आवाहन करे–
**भूर्भुवः स्वः मत्स्यै नमः, कूर्म्यै नमः, वाराह्यै नमः, कुल
ट्यै नमः, दर्दुर्य्यै नमः, जलूक्यैनमः, सोमायै नमः, सप्त
लमातृरावाहयामि इहागच्छत इह तिष्ठत ॥** यह पढ़
उन्हीं पर अक्षत छिड़क दे। फिर दूसरा अक्षत लेकर–**ॐ भू
जूतिः०** (पृ० ३७९) **ओं भूर्भुवः स्वः जलमातरः प्रतिष्ठि
भवत**–मंत्र से प्रतिष्ठा करे और–**ओं भूर्भुवः स्वः जलमा
भ्यो नमः गन्धं समर्पयामि**– इत्यादि रीति से पञ्चोप
या षोडशोपचार पूजा करके पुष्पाञ्जलि समर्पण करे। फि
**ओं यान्तु मातृगणाः सर्वे पूजामादाय मामिकाम
इष्टकामप्रसिद्ध्यर्थं पुनरागमनाय च**– पढ़कर अक्षत
उनका विसर्जन करे और टोकरी में रक्खे मातृका आदि के अ
को भी जल में डाल दे। कहीं कहीं रीति है कि मातृका के अ
वाली टोकरी सिरपर रख कर माता जरासा नाचती है। फि
बाद जल के किनारे रख कर कंकण, अक्षत, पुष्पादि को जल में
देती है। कोई कोई कंकण को घर में हीं कहीं बाँध देते हैं। फि
बाद जलाशय के निकट के किसी दूधवाले पीपल, पकड़ी या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि के वृक्ष के चारों ओर वर वधू की परिक्रमा करा के दोनों के मौरों (मुकुटों) को उसी पेड़ की डाल में बाँध दे। अनन्तर वहाँ से बाजे गाजे के साथ वापस आवे। यदि कोई लोकाचार हो तो इसे भी करके सभी विश्राम करें। इति जलपूजा।

१०—द्विरागमन।

जिस प्रकार से विवाह के समय ससुराल से वर की बिदाई होने पर वह घर आकर गृहप्रवेश से पहले और बाद भी मातृपूजा वगैरः करता है। ठीक वही क्रियायें उसी तरह बिदाई से लेकर गृह प्रवेश तक द्विरागमन के समय भी की जाती हैं। जरा भी अन्तर नहीं होता। हां, पहली बार कंकण खोलने आदि की विधि अवश्य अधिक होती है, जो द्विरागमन वा दोंगे में नहीं की जाती। यदि विवाह के समय वधू पति के घर न आवे, तो फिर जब कभी आवे, वही क्रियायें उसी तरह की जायँगी। मगर उसका नाम वधूप्रवेश ही होगा। परन्तु जब पतिगृह से लौट कर पिता के घर वापस जावे और कुछ दिन बाद पुनः पति के घर आवे तो उसे ही द्विरागमन या दोंग कहेंगे। यद्यपि आजकल अल्पही अवस्था में विवाह होता है और रूढ़ि के कारण प्रायः विवाह में कन्यायें पति के घर नहीं जाती हैं। तथापि यह ठीक नहीं है। प्रौढ़ अवस्था में विवाह करके पति के घर भेज देना हीं ठीक है। वधूप्रवेश और द्विरागमनके मुहूर्त आदिका विचार ग्रन्थ के अन्त में है। इति द्विरागमन।

११—अर्कविवाह।

कभी कभी ऐसा हो जाता है कि दो विवाह होने पर भी कोई सन्तान नहीं होती और या तो अल्पावस्था में ही उन स्त्रियों के मरजाने या किसी और ऐसे ही कारण से विवश होकर तीसरे विवाह की नौबत आजाती है। परन्तु वह ऐसी बात नहीं है जैसी आजकल हो रही है कि पुत्र और पौत्र के रहने पर भी कामलोलुप लोग विषयोपभोग के लिये ही कई विवाह करडालते हैं। यह तो सृष्टिनियम के विपरीत, अतएव, नितान्त अनुचित है! अस्तु, तीसरे विवाह की नौबत आनेपर ऐसा लेख मिलता है कि यदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

तीसरा विवाह मनुष्य की कन्या से करे तो वह विधवा होजाती है इसलिये अर्क अर्थात् मन्दार के साथ विवाह करके उसके बाद क से विवाह करने पर वह दोष दूर हो जाता है । अतएव इस वि में अर्क को ही कन्यास्थानापन्न मानकर उसीके साथ यथाल विवाह के सभी कृत्य कियेजाते हैं । इसीसे इसे अर्क या अ विवाह कहते हैं । अर्क का स्त्रीलिंग आर्की है । परन्तु अ सर्वत्र अर्क विवाह ही लिखा है । इसीलिये हमने भी वही लिखा है हालांकि, उसका अभिप्राय आर्कीविवाह से ही है । उस म या अर्क को ही सूर्य की कन्या मानकर ऐसा किया जाता है । विवाह मनुष्यकन्या के साथ तीसरे विवाह के करने के दिन से से कम पाँच दिन पहले शनिवार, रविवार या किसी शुभ दिन अथवा हस्त या दूसरे विवाहनक्षत्र में ही कियाजाता है । विवाह नक्षत्र के सिवाय दूसरा भी शुभ नक्षत्र लेना पड़े तो उस भी कर सकते हैं । पर, विशेष ध्यान शनि, रवि, या हस्त न पर ही रहना चाहिये । दोपहर से पहले ही यह काम कि जाता है । यहां कन्यादान करने वाले को दानाचार्य कहते हैं ।

विवाह करने वाला पुरुष उस दिन प्रातः काल स्नानादि नित्यक्रि करके ग्राम से पूर्व या उत्तर के किसी फल पुष्पादि युक्त अर्क (मन्दार पास जाकर पहले उससे उत्तर ओर एक हाथ लम्बी चौड़ी और अंगुल ऊंची वेदी बनाकर उससे पश्चिम ओर आसन पर पूर्व मुख जावे और कर्मदीप जलाकर उसकी पूजा एवं स्थापना करके कर्म स्थापित करे (७६) और-ओं अपवित्रः० (९५) आचमन, प्राण करके संकल्प करे-ओं अद्येह शुभपुण्यतिथौ अमुकश मम तृतीयमानुषीपरिणयदोषपरिहारद्वारा श्रीप मे प्रीत्यर्थमर्कविवाहं करिष्ये तदंगतया गणपतिपूजन नवग्रहादिदेवतापूजनान्तं कर्म करिष्ये ॥ फिर आच वरण से लेकर सभी क्रियायें प्रधान विवाह की ही तरह रीति से ही करले । नान्दीश्राद्ध सुवर्ण से करे । इसके बाद एक ब्राह्मण को, जो अर्ककन्या दान करेगा, आचार्य स्वरूप वरण करे । वरण की भी विधि वैसी ही होगी जैसी अन्य आचार्य आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केवल संकल्प में 'अर्ककन्यादानार्थम्' ऐसा कहना होगा। और वरण के अन्त में जो प्रार्थना की जाती है वह इस तरह करे-ओं कन्यापिता यथा सूर्यो देवानां च प्रजापतिः। तथा त्वमर्कदानार्थमाचार्यत्वं कुरु द्विज॥ इसके बाद वह दानाचार्य ब्राह्मण मधुपर्क से वर की पूजा विवाह की रीति (३८८) से ही करके चन्दन मालाआदि पहना के पूजे और हाथ में यज्ञोपवीत, वस्त्रादि लेकर संकल्प करे-ॐ अद्यएभिर्गन्धयज्ञोपवीतमाल्यादिभिस्त्वामहं वृणे॥ और वह वस्त्रादि उस वर को दे देवे। इसके बाद वर मन्दार की ओर देखकर सूर्य की प्रार्थना करे-ॐ त्रिलोकव्यापिन् सप्ताश्व छायया सहितो रवे। तृतीयोद्वाहजं दोषं निवारय सुखं कुरु॥ इसके बाद मन्दार के नीचे कलश स्थापन कर उसमें, या नहीं तो मन्दार में ही, संभव हो तो सूर्य की सोने की प्रतिमा स्थापित करे और उसमें-ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानि पश्यन्॥ ओं भूर्भुवः स्वः छायासहितसूर्याय नमः आवाहयामि-से आवाहन और 'ॐ मनोजूति०' (३७९) से प्रतिष्ठा करके सफेद वस्त्र और सूत से अर्क को घेरे। फिर-ओं भूर्भुवः स्वः अर्काय नमः गन्धं समर्पयामि-इत्यादि रीति से अर्क की पूजा करके पल्लव से उसका अभिषेक करता हुआ 'ओं आपोहिष्ठा०' इत्यादि (पृ०३१८) तीन मंत्र पढ़े। पुनः गुड़, भात और पान उसी पर चढ़ाकर उसकी प्रदक्षिणा करता हुआ पढ़े-ओं मम प्रीतिकरा चेयं मया सृष्टा पुरातनी। अर्कजा ब्रह्मणा सृष्टा अस्माकं परिरक्षतु॥१॥ ओं नमस्ते मंगले देवि नमः सवितुरात्मजे। त्राहि मां कृपया देवि पत्नीत्वं म इहागता॥२॥ फिर हाथ जोड़कर अर्क (मन्दार) की प्रार्थना करे-ओं अर्क त्वं ब्रह्मणा सृष्टः सर्व-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

प्राणिहिताय च । वृक्षाणामादिभूतस्त्वं देवानां प्रीति वर्धनः । तृतीयोद्वाहजं पापं मृत्युं चाशु विनाशय इसके बाद पूर्व बनाई वेदीपर १८५ पृष्ठोक्त पञ्चभूसंस्कारपूर्वक नामक अग्नि की स्थापना और पूजाआदि करके पूर्वमुख अर्क के ही बैठे और उसके तथा अर्क के बीच में एक पर्दा खड़ाकरके लोग 'सुमुखश्चैक०' (३८८) इत्यादि मंगलपाठ करें। फिर दान वाला (दानाचार्य) अर्क और वर से कहे कि-ॐ परस्परं स ञ्जेथाम् ॥ और उसके बाद 'ॐ स्वस्तिन०' (३८७) इत्यादि ब्राह्मण गण पढ़ें । इसके बाद दानाचार्य गोत्रोच्चार करे-ॐ काश्य गोत्रां काश्यपावत्सारनैध्रुवेतित्रिप्रवरान्वितामादित्य प्रपौत्रीं सवितुः पौत्रीमर्कस्य पुत्रीमिमां कन्यामद्य प्रपौत्राय अमुकपौत्राय अमुकपुत्राय अमुकगोत्राय अ कप्रवराय अमुकनाम्ने वराय॥ यहां पर अमुक की जगह उन के नाम बोलताजावे। इसके बाद 'स्वस्तिनइन्द्रो०' इत्यादि पढ़कर वर कन्या (अर्क) को देखे । उसके उपरांत दानाचार्य दो बार पूर्ववद् गोत्रोच्चार करके हाथ में कुश जलादि लेकर दानका संकल्प करे-ॐ अद्येह काश्यपगोत्राम्०-इत्यादि लिखा समूचा पढ़कर अन्त में-तुभ्यमहं संप्रददे-इतना वरके हाथ में कुशादि देकर पढ़े-ॐ अर्कक्रन्यामिमां यथाशक्ति विभूषिताम् । गोत्राय शर्मणे तुभ्यं विप्र समाश्रय॥ फिर जैसे विवाह में कन्यादान के बाद दान दिया जाता है उसी तरह-ॐ अद्येहार्ककन्यादान ष्ठार्थमिमं हिरण्यमग्निदैवतं तुभ्यं वराय सम्प्र कह कर सुवर्ण दे और वर-ॐ स्वस्ति कहकर उसे लेकर के मन्त्रों से अक्षत की तीन अंजली अर्क पर डाले-(१) यज्ञो मे कामः समृद्ध्यताम् ॥ (२) ॐ धर्मो मे काम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृद्ध्यताम् ॥ (३) ॐ यशो मे कामः समृद्ध्यताम् ॥ इसके बाद गायत्री पढ़कर, अथवा-ॐ परित्वा गिर्वणो गिर इमा भवन्तु विश्वतः । वृद्धायुमनुवृद्धयो जुष्टा भवन्तु जुष्टयः-इस मंत्र से अर्क के चारों ओर पाँच बार सूत लपेटे और पीछे से उस सूत्र को अलग करके उसे पाँच तागे का (पंचगुण) बनाकर अर्क के तने में रक्षा की तरह बाँधकर उसे रक्षा समझ यह मंत्र पढ़े-ॐ बृहत्सामक्षत्रभृद्वृद्धवृष्ण्यं त्रिष्टुभौजः शुभितमुग्रवीरम् । इन्द्र स्तोमेन पञ्चदशेन मध्यमिदं वातेन सगरेण रक्ष ॥ इसके उपरान्त अर्क की आठों दिशाओं में आठ कलश स्थापन कर वस्त्र या त्रिगुण सूत्र से आठों का कण्ठ एक साथ लपेट दे और १११ पृष्ठोक्त रीति से अन्त में हल्दी आदि पदार्थों को छोड़कर कलशों का स्वरूप पूरा करे । पश्चात् सबों पर सुवर्णमयी विष्णुमूर्त्तियाँ रखकर उनमें विष्णु का आवाहन करे-ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम् । समूढमस्य पा ँ सुरे ॥ ॐ भूर्भुवःस्वः विष्णवेनमः विष्णोइहागच्छ इह तिष्ठ ॥ इस मन्त्र से आवाहन कर इसका ही 'नमः' पर्यन्त भाग पढ़कर पञ्चोपचार या षोडशोपचार से पूजा करे । इसके बाद ब्रह्मा के वरण से लेकर समूची कुशकण्डिका की क्रिया करके ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर दहिना घुटना टेककर १९४ पृष्ठोक्त रीति से आघार और आज्यभाग की चार आहुतियां देवे । फिर अन्वारंभ छोड़कर ये ७ आहुतियां दे-(१) ॐ संगोभिरांगिरसो नक्षमाणो भगइवेदर्यमणन्निनाय । जने मित्रो न दम्पती अनक्ति बृहस्पतये वाजयाऽऽशूँरिवाजौ स्वाहा इदं बृहस्पतये नमम ॥ (२) ॐ यस्मै त्वा काम कामाय वयं सम्राड् यजामहे । नमस्मभ्यं कामं दत्वाऽथेदं त्वं घृतं पिब स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (३) ॐ भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ (४) ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥ (५) ओं स्वः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्वाहा इदं सूर्यायनमम ॥ (६) ओं भूर्भुवः स्वः स्वा
इदं प्रजापतये नमम ॥ इसके बाद १९४ पृष्ठोक्त महाव्याहृ
पंचवारुणी, प्राजापत्य और स्विष्टकृत् की दस आहुतियाँ अन्
अन्वारंभ करने पर दे और संस्रवप्राशन से लेकर पूर्णपात्र दान
की क्रिया करडाले (२४३) । इसके बाद उन्हीं आठ घड़ों के जलों
ब्राह्मण लोग २२५ पृष्ठोक्त रीति से वरका अभिषेक करें। फिर वर
की प्रदक्षिणा करके प्रार्थना करे-ओं मया कृतमिदं कर्म स्था
रेषु जरायुणा। अर्कापत्यानि मे देहि तत्सर्वं क्षन्तुमर्ह
फिर १०९ पृष्ठोक्त शांति पाठ कराके और अर्क के ऊपर स्था
सूर्य का विसर्जन करके आचार्य को दो गौ या उसका निष्क्रय
ओं अद्यानुष्ठितार्कविवाहप्रतिष्ठार्थं गोयुग्मं
ष्क्रयं यथाशक्ति द्रव्यं वा तुभ्यमाचार्याय संप्रदद
तत्सन्नमम ॥ तब भूयसी दक्षिणा देकर पूजा की सामग्री
चार्य को देदे । इसके बाद चार दिन तक होम की उस अग्नि
तथा अर्क और कलशों की रक्षा करे और पाँचवें दिन पूर्व की
ही विष्णु और अर्क की पूजा करके पूर्णाहुति, त्र्यायुष, अभिषेक
पूर्वक २२५ पृष्ठोक्त रीति से अग्नि आदि का विसर्जन कर
को ब्रह्मार्पण करे। पूर्णाहुति तो नहीं भी कर सकता है। इसके
अपना विवाह करे। इति अर्क विवाह ।

१-सामवेदीय विवाह ।

सामवेदियों के लिये भी वररक्षा, तिलक वा फलदान, स्तम्भ
पण, हरिद्रा और द्वारपूजा आदि की विधि वैसी ही है जैसी यजुर्वे
की। अतएव ३७६-३८५ पृष्ठों में लिखी रीति से ही उन्हें करडाले।
प्रकार प्रधान संकल्प, मातृकापूजा आदि क्रियायें भी १०८ आदि पृ
रीति से करडाले। इनमें जो सामवेदियों के यहाँ कुछ कुछ विशेष
वह उसी अवसर पर वहीं लिखी है । हां, गोभिल गृह्यसूत्र में
परीक्षा की एक रीति लिखी है। (१) अग्निष्टोमादि यज्ञ
वेदी, (२) जोती भूमि (३) अथाह जलाशय (४) गो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(५) चौराहा (६) जूआ खेलने की जगह (७) श्मशान और (८) ऊसर इन आठस्थानों की मिट्टी किसी अच्छे मुहूर्त्त में लाकर उसके अलग अलग ८ पिंड बनावे और सबको मिलाकर नवाँ पिंड बनावे। यह नवों पिंड एक से हों। परन्तु पहचान के लिये सबों में भिन्न भिन्न चिन्ह करदे। इस के बाद वर या कोई और ही आदमी अपने हाथों में सबों को लेकर कन्या के पास जावे और-ॐ ऋतमेव प्रथमं ऋतं नात्येति कश्चन। ऋत इयं पृथिवी श्रिता सर्वमिदं अमुकदेवी भूयादिति (अमुक की जगह कन्या का नाम पढ़े)-यह मन्त्र पढ़कर कन्या से कहे कि-ओं तेषामेकं गृहाण॥ तब कन्या उनमें कोई एक पिंड उठाले। यदि पहले चार या नवें में से कोई उठावे तो उससे विवाह करना चाहिये। वर, शेष चार में से कोई उठाने पर विवाह ठीक नहीं है।

विवाह के दिन प्रातःकाल कन्याकी माता या और कोई उबटन आदि लगाकर उसको नहलावे। नहलाने के समय बड़ा घड़ा या जलपात्र लेकर आगे के तीन मंत्रों से उसे अच्छी तरह से स्नान करावे। अन्त के दो मंत्रों से इतना जल देवे कि कन्या के गुह्यस्थान भी भींग जावें। पहले मंत्र में जहाँ 'अमुकशर्माणं' है वहां अमुक शब्द की जगह वर का नाम पढ़े। विनियोग सहित मंत्र ये हैं-प्रजापतिर्ऋषिः प्रस्तारपंक्तिर्ज्योतिर्जगतीज्योतिस्त्रिष्टुभश्छन्दांसि काम उपस्थकामौच देवताः कन्याभिषेचने विनियोगः। ओं काम वेद ते नाम मदोनामासि समानयामुकशर्माणं पुराते अभवत्। परमत्र जन्माग्ने तपसो निर्मितोऽसि स्वाहा॥ १॥ इदमन्त उपस्थं मधुना सꣳ सृजामि प्रजातेर्मुखमेतद्द्वितीयम्। तेन पुꣳसोऽभिभवासि सर्वानवमान्वशिन्यसि राज्ञी स्वाहा॥ २॥ अग्निं क्रव्यादमप्वन् गुहाना स्त्रीणामुपस्थमृषयः पुराणाः। तेनाज्यमकृण्वꣳस्त्रैशृंगंत्वाष्ट्रं तद्धातु स्वाहा॥३॥ विवाह के समय घर के मण्डप में आने और मधुपर्क देने से पहले तक की क्रियायें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

य जुर्वेदीय रीति से पृष्ठ ३८७ के अनुसार करके उसकी मधुपर्क
३५५ पृष्ठ के अनुसार करे। यदि गौ न हो तो या तो गौ का उपस्था
ही नहीं या यदि आग्रह ही हो तो केवल मंत्रमात्र पढ़ दे।
से पहले संकल्प करे और उस समय वहीं पत्नी को अपने
दक्षिण ओर बैठाकर स्वयं पूर्वमुख रहे। संकल्प—ॐ अद्येह
नां पूर्वेषां दशानामपरेषामात्मनश्च निरतिशया
शाश्वतब्रह्मलोकप्राप्त्यर्थं कन्यादानाख्यमहादानं
ह्ये तदंगतयाऽमुं वरं मधुपर्केण विधिना अर्चयि
मधुपर्क पूजा के समय वर पश्चिममुख रहे। पर किसी का
कि दाता पूर्वमुख रहे और वर उत्तरमुख। जैसी परिपाटी हो
करे। मधुपर्क के बाद वर ईशान कोन वाली, मण्डप से बाहर
के पास जाकर उसके मध्य की एक हाथ भूमिपर १९५ पृष्ठोक्त
से कुशकण्डिका करे और पंचभूसंस्कारपूर्वक योजकनामक अ
स्थापना से लेकर पात्रादिस्थापन तक का सभी पूर्वांग या पूर्व
डाले। केवल चरुसम्बन्धी बातें छूट जाँयगी। परन्तु पात्रास
समय अग्नि से उत्तर ओर और वस्तुओं के रख लेने पर वरपक्ष
आदमी पगड़ी पहन, कन्धे पर चादर रख, उसपर गंगा आदि
कूएं के सिवाय तालाव आदि के जलसे पूर्ण और चन्दन पुष्प
आदि से सुसज्जित घड़ा रखकर एवं अग्नि के पूर्व से जाकर
दक्षिण उत्तर मुंह चुपचाप अभिषेक पर्यन्त खड़ा रहे। एक
आदमी उसी तरह जाकर हाथ में कोड़ा लिये खड़ा रहे। उत्त
दर्भ पर स्रुव, आज्य (घी), आज्यस्थाली, परिस्तरण कुश,
पवित्र का कुश और चमस या प्रणीतापात्र में कुश से ढंक
इत्यादि चीजें पूर्व पूर्व क्रमसे पूर्ववत् रहें। अग्नि से पश्चि
शमी के पत्तों से मिश्रित चार अंजली लाजा (लावा), जो
नये सूप में रक्खा हो, और शिल लोढ़ा रक्खे। उधर उसी
की स्त्रियां चार कलशों में एकही प्रकार का जल लेकर और
जौ मिलाकर उससे कन्या को सिर सहित स्नान कराके
रीति से उसका सौभाग्य कर्म कर रक्खें। यह सौभाग्य
स्नान भरसक वर के आने से पहले ही किया जावे। अथवा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इधर मधुपर्क की विधि होती रहे, उधर वह भी होजावे। फिर वर कुशकण्डिका पूरा करके कोहबरसे कन्या को लिवा लावे और मण्डप में पूर्व, पश्चिम या उत्तरमुंह बैठकर दातासे दहिनी ओर उसी के निकट उसे बैठावे। इसी समय मिथिला में कंकण बांधने की रीति है। हम इसके विषय में ३७२ पृष्ठ में लिख चुके हैं। इसके बाद कन्यादान का संकल्प दाताकरे—ॐ अद्य अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्राय, अमुकगोत्रस्यामुकप्रवरस्यामुकशर्मणः पौत्राय, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पुत्राय महाविष्णुस्वरूपिणे अमुकशर्मणे वराय अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः प्रपौत्रीम्, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पौत्रीम्, अमुकगोत्रस्य अमुकप्रवरस्य अमुकशर्मणः पुत्रीं श्रीरूपामिमामसुकनाम्नीं कन्यां सवस्त्रां सालंकारां श्रौतस्मार्तकर्मसहायिनीं प्रजापतिदैवतां पत्नीत्वेन संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ कन्यां कनकसम्पन्नां सर्वाभरणभूषिताम्। ददामि विष्णवे तुभ्यं ब्रह्मलोकजिगीषया ॥

इस संकल्प से पहले कन्या को बायें हाथ से पकड़कर और दहिने हाथ में शंख स्थित अक्षत, पुष्प, दूब युक्त जल, कुश और सुवर्ण लेकर दाता संकल्प करे और संकल्प के बाद कुशादि के साथ कन्या का दहिना हाथ वर के दहिने हाथ में पकड़ा दे। अथवा ३९७ पृष्ठोक्त रीति से वर के हाथ के ऊपर कन्या का हाथ रख और उसे स्वयं पकड़ कर संकल्प करे। यहां मतभेद होने से दोनों लिख दिया है। मतभेद इसलिये है कि सूत्र में कुछ लिखा है नहीं। इसीलिये दूसरे सूत्रों से यह बात लेने में मतभेद अनिवार्य है। किसी किसी पद्धति में तीन तीन बार गोत्रोच्चार करने के बाद कन्यादान का संकल्प लिखा है, जैसा कि यजुर्वेदी करते हैं। यदि ऐसा हो तो ३९४ पृष्ठोक्त रीति से वर कन्या पक्षीय गोत्रोच्चार करलें। बहुत लोग उक्त संकल्प में किये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गोत्रोच्चार को ही काफी मानते हैं। इसीसे हमने यहां लिखना व्यर्थ है। खड़ा होकर कन्या का हाथ पकड़ने पर वर कहे—ॐ देवस्य सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां प्रति गृह्णामि। वरुणस्त्वा नयतु देवि दक्षिणे प्रजापतये त्वा तयाऽमृतत्वमशीय वयो दात्रे भूयान्मयो मह्यं प्रतिग्रहीत्रे। क इदं कस्मा अदात् कामः कामायादात् कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामः समुद्रमाविशत्कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि कामैतत्ते॥ इसके बाद वर को गौ या सुवर्ण ॐ अद्येह कृतैतत्कन्यादानप्रतिष्ठार्थमिमां गां रुद्रदैवतां सुवर्णं वाऽग्निदैवतं वराय तुभ्यं संप्रददे ॐ तत्सन्नमि वर—ॐ स्वस्ति—कहकर ले लेवे। किसी किसी मैथिल पद्धति में अवसर पर मधुपर्क वाली गौ देने की विधि लिखी है। पर, यह नहीं है। वह तो मधुपर्क का अंग है। अतः वहीं दी जानी चा

फिर वर कन्या को साड़ी पहनने के लिये दे। पहले मंत्र साड़ी और दूसरे से चद्दर देते हैं—प्रजापतिर्ऋषिर्जगती वस्त्रकारा देवताऽधोवस्त्रपरिधापने विनियोगः। या अकृन्तन्नवयन् या अतन्वत याश्चदेव्यो अन्ता तो ततन्थ। तास्त्वा देव्यो जरसा संव्ययन्त्वायुष्मत् परिधत्स्व वासः॥ १॥ चादर देने का मंत्र—प्रजापति स्त्रिष्टुप् छन्दः परिधापयितारो देवता उत्तरीय परिधापने विनियोगः। ॐ परिधत्त वाससैना युषीं कृणुत दीर्घमायुः। शतं च जीव शरदः सुवर्चा सूनि चार्ये विभृजासि जीवन्॥ कन्या वस्त्र लेकर पह ओढ़ ले और दोबार आचमन करे। फिर वर के दहिने कन्या बैठाकर वर वधू के चादरों के किनारे में धान, सरसों, दूब, और सुपारी रखकर एक जगह बांधता हुआ दाता मंत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दो विश्वेदेवाम्मातरिश्वधात्रुदेष्ट्र्यो देवता जन्मग्रन्थिबन्धने विनियोगः । ॐ समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानिनौ । सम्मातरिश्वा सन्धातासमुदेष्ट्री दधातुनौ ॥ इसके बाद वधू को मण्डप से अग्नि वेदी की ओर लिवाकर चलता हुआ वर उसे देखकर मन्त्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दः सोमादयो देवता जपे विनियोगः । ॐ सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वो दददग्नये । रयिं च पुत्राँश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥ फिर वर वधू को अग्नि की प्रदक्षिणा कराके वेदी से पश्चिम लावे जहां पर कपड़े से ढंकी चटाई बिछी हो या तृणों का पूला हो । उससे पश्चिम खड़ा होने पर वधू अपने दहिने पांव से उसे इतना टाले कि वह परिस्तरण-कुशों के जरा सा ऊपर तक वह पहुंच जावे । पांव से टालने के समय वधू मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्द्विपाज्जगती छन्दः पतिदेवता पदप्रवर्तने विनियोगः । ॐ प्रमे पतियानः पन्थाः कल्पतां शिवा अरिष्टा प्रतिलोकं गमेयम् ॥ यदि स्त्री न पढ़ सके तो वर ही मंत्र पढ़े । मगर वह मंत्र में 'प्रमे' की जगह 'प्रास्याः' पढ़कर शेष ज्यों का त्यों पढ़े । फिर चटाई के पूर्व किनारे पर स्वयं बैठकर अपने से दक्षिण वधू को बैठावे । तब स्रुव संमार्ज्जनआदि कुशकण्डिका की शेष पूर्वांग क्रियायें १९९ पृष्ठोक्त रीति से करके चार व्याहृतिहोम करे । होम के समय दहिना घुटना टेक दे । चारों व्याहृतियां विनियोग सहित वहीं(२०३) लिखी हैं । चार व्याहृति होम के बाद वधू दहिने हाथ से वर का दहिना कन्धा पकड़े और वह आगे की छ आहुतियां दे-प्रजापतिर्ऋषिराद्ययोश्चतुर्थस्य चातिजगती च्छन्दोऽग्निर्देवता तृतीयस्य शक्वरी छन्दो विश्वेदेवा देवता पञ्चमस्य बृहती छन्दो यमादयो देवताः षष्ठस्यात्युष्णिक्छन्दो वैवस्वतो देवतोद्वाहाज्यहोमे विनियोगः । ओं अग्निरेतु प्रथमो देवताभ्यः सोऽस्यै प्रजां

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मुञ्चतु मृत्युपाशात् । तदय ँ राजा वरुणोऽनुमन्य
यथेय ँ स्त्री पौत्रमघन्नरोदात्स्वाहा इदमग्नये न
॥ १ ॥ ॐ इमामग्निस्त्रायतां गार्हपत्यः प्रजामस्यै जा
ष्टिं कृणोतु । अशून्योपस्था जीवतामस्तु माता पौत्र
नन्दमभिविबुध्यतामिय ँ स्वाहा इदमग्नये न
॥ २ ॥ ॐ द्यौस्ते पृष्ठ ँ रक्षतु वायुरूरू अश्विनौ च ल
न्धयस्ते । पुत्रान्सविताऽभिरक्षत्वावाससः परिधानाद्
हस्पतिर्विश्वेदेवा अभिरक्षन्तु पश्चात् स्वाहा इदं
श्वेभ्योदेवेभ्यो नमम ॥ ३ ॥ ॐ मा ते गृहेषु निशि घो
उत्थादन्यत्र त्वद्रुदत्यः संविशन्तु । मा त्व ँ रुदत्युर
वधिष्ठा जीवपत्नी पतिलोके विराज पश्यन्ती प्रजा ँ सु
स्यमाना ँ स्वाहा इदमग्नयेनमम ॥४॥ ॐ अप्रजस्यं पौत्र
पाप्मानमुत वा अघम् । शीर्ष्णः स्रजमिवोन्मुच्य द्विष
प्रतिमुञ्चामि पाश ँ स्वाहा इदं वैवस्वताय नमम ॥

यहाँ प्रणीता या चमस का जलस्पर्श करे । ओं परैतुमृत्युरमृतं
आगाद्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु । परं मृत्यो अनु
हि पन्थां यत्र नो अन्य इतरो देवयानात् । चक्षुष्म
शृण्वते ते ब्रवीमि मानः प्रजा ँ रीरिषो मोतवी
न्स्वाहा इदं वैवस्वताय नमम ॥ ६ ॥ फिर जलका स्पर्श

इसके बाद पुनः चार व्याहृति होम करके वर और वधू अलग
अंजली बाँधकर दोनों एक ही साथ खड़े होजावें, वधू के पीछे
उसके दक्षिण जाकर वर उत्तर मुख होजावे और वधू की
के नीचे अपनी अंजली करके उसकी अंजली को पकड़े खड़ा
फिर वधू की मा, भाई या अभाव में अन्य ब्राह्मण पूर्व ओर
होकर पश्चिम ओर रक्खे लाजा के सूप को उठाकर बायें हाथ
ललेवे और पहले रक्खे पत्थर को वधू के आगे करके दहिने हाथ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसका दहिना पाँव उसपर रक्खे । उसी समय वर मन्त्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्दोऽश्माक्रमणे विनियोगः । ओं इममश्मानमारोहाश्मेव त्व ँ स्थिराभव । द्विषन्तमपबाधस्व मा च त्वं द्विषतामधः ॥ इतना करने के बाद जो माता या भाई लाजा का सूप लिये हो वह सूप दूसरे को दे या भूमि में रखकर और स्रुव से घी लेकर, यदि कन्या का पिता चतुरवत्ती हो तो कन्या की अंजली पर एक वार घी देकर एक अंजली लाजा रक्खे और फिर स्रुव से दो बार लाजा के ऊपर घी डाले। यदि पञ्चावत्ती हो तो पहले भी दो बार घी डालकर पीछे भी दो बार डाले और वधू वर के हाथ में लगी ही अंजली से वर के इस अंगले मंत्र के पढ़ चुकने पर अंगुली के पोरों पर से अग्नि में उसे डाल दे-प्रजापतिर्ऋषिर्जगती छन्दोऽग्निर्देवता प्रथमलाजहोमे विनियोगः। ओं इयंनार्युपब्रूतेऽग्नौ लाजानावपन्ती । दीर्घायुरस्तुमे पतिः शतंवर्षाणिजीवत्वेधन्तां ज्ञातयो मम स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ इस आहुति के बाद अंजली को पकड़े हुए ही वर वधू के पीछे से उत्तर जाकर वधू को आगे कर के अग्नि की परिक्रमा करावे । परिक्रमा के समय ब्रह्मा, ऋत्विक् , जलघट तथा कोड़ा लिये हुओं को बाहर ही छोड़दे । परिक्रमा के समय पति मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दः कन्या देवता कन्याग्निपरिणयने विनियोगः । ओं कन्यला पितृभ्यः पतिलोकं पतीयमपदीक्षामयष्ट । कन्या उत त्वया वयं धारा उदन्या इवातिगाहेमाहिद्विषः ॥ इस तरह घूम कर अपनी जगह पर आजावें । फिर पूर्ववत् वर वधू के दक्षिण आवे और वधू का अश्मारोहण (पत्थर पर चढ़ाना), मंत्र पाठ और लाजा को वधू की अंजली में देने तक की क्रियायें करे। मगर होम के समय पति इस वार यह मंत्र पढ़े और वधू लाजहोम करे-प्रजापतिर्ऋषिर्बृहती छन्दोऽर्य्यमादेवता द्वितीयलाजहोमे विनियोगः । ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अर्यमणं नु देवं कन्या अग्निमयक्षत । सइमांदेवो अर्य
प्रेतो मुञ्चातु मामुत स्वाहा इदमर्यम्णे नमम ॥ फिर
की ही तरह वर उत्तर जाकर उसी मंत्र से प्रदक्षिणा करावे
अपने स्थान पर आकर वधू की अंजली में लाजा रखने तक
क्रियायें पूर्ववत् करके इस मंत्र से होम करावे-प्रजापतिर्ऋषिर्बृह
छन्दः पूषादेवता तृतीयलाजहोमे विनियोगः । ओं पू
नुदेवंकन्या अग्निमयक्षत । स इमां देवःपूषा प्रेतोमुञ्
मामुत स्वाहा इदं पूष्णे नमम ॥ फिर पूर्ववत् उत्तर
पूर्व मंत्र से ही प्रदक्षिणा कराके अपनी जगह पर आजावे।
प्रकार तीनों अश्मारोहण, लाजाहोम और प्रदक्षिणा में सब बातें
ही प्रकार की हैं । केवल होम के मंत्र तीनों के तीन हैं । इसके
वर से वधू दक्षिण हीं रहे और माता या भाई से लाजा का
लेकर उसी के अग्रभाग से चुपचाप बचे लाजा को वधू अग्नि में
दे । उस समय पति केवल प्रजापति का मन से ध्यान करे ।
मंत्र न पढ़े । इसके बाद अग्नि से ईशानकोन में हल्दी या
के पीठे से क्रमशः आगे आगे सात मण्डल या घर उसी को
बनवाकर सप्तपदी करावे । सातोंपर आम के सात पल्लव रखकर
पर दही और अक्षत रखने की भी चाल कहीं कहीं है और उन्हीं
वधू क्रम से पाँव रखती है । उस समय वधू की अंजली वर पकड़े
रहे और दोनों आमने सामने देखते रहें । कोई अन्य आदमी उसे सम
करावे । जब पहला पाँव उठावे तभी पहले वर कह दे कि-ओं
सव्येन दक्षिणमतिक्राम ॥ इसका अभिप्राय यह है कि
पहले दहिना पाँव रक्खे, पीछे बायां रक्खे, नकि भूलकर भी
बायां पांव रक्खे, या दहिने पर बायां रखदे । फिर हरेक
पांव रखने के समय सातों के लिये वर सात मंत्र पढ़े और
मंत्र के साथ ही वधू दहिना पांव रखती जावे-प्रजापतिर्ऋ
विराट् छन्दो विष्णुर्देवता पादाक्रमणे विनियो
(१) ॐ एकमिषे विष्णुस्त्वा नयतु । (२) ॐ द्वे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विष्णुस्त्वा नयतु। (३) ॐ त्रीणि व्रताय विष्णुस्त्वानयतु। (४) ॐ चत्वारि मायोभवाय विष्णुस्त्वा नयतु। (५) पञ्चपशुभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु। (६) ॐ षड्रायस्पोषाय विष्णुस्त्वा नयतु। (७) ॐ सप्त सप्तभ्यो होत्राभ्यो विष्णुस्त्वा नयतु॥ सातवां पांव रखने के बाद वहीं रुक कर वर पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्मामकीपंक्तिश्छन्द आशास्यमाना देवता आशासने विनियोगः। ॐ सखा सप्तपदी भव सख्यन्ते गमेय ँ सख्यन्ते मायोषाः सख्यन्ते मायोष्टयाः॥ इसके बाद विवाह के दर्शकों की ओर देखकर वर पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप् छन्द आशास्यमाना देवता प्रेक्षकप्रतिमंत्रणे विनियोगः। ॐ सुमंगलीरियं वधूरिमा ँ समेत पश्यत। सौभाग्यमस्यै दत्वा याथास्तं विपरेतन॥ इसी के बाद सन, शमीपत्र, सोना और कौड़ी हाथ में रखकर एवं उसीसे सिन्दूर उठाकर वर वधू के सिर में चुपचाप लगावे। उसके बाद चार सौभाग्यवती स्त्रियां भी लगावें।

इसके उपरांत अग्नि से पश्चिम होकर, सप्तपदी के अन्त में जहाँ वर वधू हैं वहां, कन्धे पर जल का घड़ा लिये खड़ा पुरुष चलाजावे और उस जल को पल्लव से लेकर पहले वर का अभिषेक करे, फिर कन्या का। दोनों बार वर मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुपूछन्दो विश्वेदेवाद्या देवता मूर्द्धाभिषेचने विनियोगःॐ समञ्जन्तु विश्वेदेवाः समापो हृदयानिनौ। संमातरिश्वासंधाता समुदेष्ट्री दधातुनौ॥ इसके बाद पश्चिम से होकर कोड़े वाला आदमी भी वहीं चला जावे और तीन दिन या सात दिन तक वर की रक्षा के लिये बराबरही उसके साथ रहे। इसके अनन्तर सप्त पदी स्थान परही वर वधू के दहिने हाथ को उतान कर उसकी कलाई बायें हाथ से पकड़कर अंगूठे सहित हाथ को दहिने हाथ से पकड़े और यह मंत्र जपे-प्रजापतिर्ऋषिराद्ययोर्द्वयोरन्तस्यच

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

त्रिष्टुप् तृतीयस्य जगती शेषयोरनुष्टुप छन्दांसि भगो
यो देवताः पाणिग्रहणजपे विनियोगः । ॐ गृभ्णामि
सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथा ऽऽसः । भगो
अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वाऽदुर्गार्हपत्याय देवाः ॥
अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवाः पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः
वीरसूर्जीवसूर्देवकामास्योना शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे
॥ २ ॥ आ नः प्रजां जनयतु प्रजापतिराजरसाय समनक्त्वर्यमा । अदुर्मंगलीः पतिलोकमाविश शं नो भव द्वि
पदे शं चतुष्पदे ॥३॥ इमां त्वमिन्द्रमीढ्वः सुपुत्रां सुभगां
कृधि । दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कुरु ॥४॥ सम्राज्ञी
श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव । ननान्दरि सम्राज्ञी भव
सम्राज्ञी अधिदेवृषु ॥ ५ ॥ मम व्रते ते हृदयं दधातु मम
चित्तमनु चित्तन्ते अस्तु । मम वाचमेकमना जुषस्व बृह
स्पतिस्त्वा नियुनक्तु मह्यम् ॥ ६ ॥ कहीं कहीं इस अवस
पर भी सेन्दुरदान की प्रथा है और पद्धतियों में ऐसा लिखा भी है
इसके बाद फिर चार व्याहृतिहोम से लेकर पूर्णाति पर्य्यन्त की सब
क्रियायें ३४८ पृष्ठोक्त उत्तर तंत्र की रीति से करे और दक्षिणा दान
स्वर्णदान, वामदेव्यगान और विसर्जनादि भी वहीं लिखीरीति से कर
ले । जब वहीं लिखचुके हैं, तो फिर बारबार क्यों लिखें ? यदि व्याहृ
होम के बाद शाट्यायन होम होता हो तो उसकी भी विधि वहीं लिखी
है । अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद की विधि २५६ पृष्ठ में लिख आये हैं
यदि पूर्णाहुति की चाल या आग्रह हो तभी पूर्णाहुति कीजाय । नहीं तो
विवाह में पूर्णाहुति नहीं होती । बहुतसी पद्धतियों में ऐसा ही लिखा भी है

यहां तककी क्रिया का नाम पूर्व विवाह है और बहुत जन
इतने केही बाद चतुर्थी कर्म करके विवाह को पूरा करते हैं
मगर सूत्रकार ने इसे पूर्वविवाह मान इसके और चतुर्थीकर्म के पश्चात
उत्तर विवाह की क्रियाओं का विधान किया है । इसीलिये बहुतसे
दक्षिणा दान तो करते हैं मगर यहां वामदेव्यगान नहीं करते । कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्तरविवाह के अन्त में और चतुर्थी कर्म के अन्त में भी उसका गान करते हैं। जैसी रीति हो करे। मगर यह भी बात याद रखने कीही है कि आगे लिखे उत्तरविवाह के लिये बैलगाड़ी आदि, वध और किसी पात्र में स्थापित विवाह वाली अग्नि को लेकर वर भरसक विवाहगृह के ईशान कोन में, नहीं तो दूसरी ओर भी रहने वाले नित्य नैमित्तिक कर्म तपःस्वाध्याययुक्त ब्राह्मण के घर में, जाकर पूर्वोक्त रीति सेही फिर अग्नि की स्थापना आदि सभी विधिवत् करे। अन्यान्य क्रियायें भी करनी होती हैं। परन्तु यदि ऐसी संभावना न हो तो फिर पहले कही गई पाणिग्रहणपूर्वक छ मंत्रों के पढ़ने की विधि के बाद व्याहृति होमादि उत्तर तंत्र की कोई क्रिया न करे। किन्तु उसी अग्निवेदी से पश्चिम ओर बैल का, भरसक लाल, चमड़ा उत्तर ओर लटके रोम वाला पूर्व ओर अग्रभाग करके कोई बिछादे और उसी पर वधू को पूर्वमुख मौन करके बैठा दे। वह वहीं बैठी रहे और यदि दिनमें विवाह हुआ हो तो रात्रि में ध्रुव तारा के दर्शन पर्यन्त सभी काम बन्द रहें। वधू भी न तो बोले और न भोजन करे या इधर उधर जावे। हां, मल मूत्र त्यागने की बात ही जुदी है। वर भी भोजन न करे। रात में तारे दीखने पर कोई आदमी वर से कहे कि– ॐ नक्षत्रमुदितम् ॥ यदि रात कोही विवाह हो तो वधू के बैठने पर तुरन्तही यही बात कहे। इसके बाद वधू से उत्तर बैठकर पहले २०३ पृष्ठोक्त व्याहृतिहोम करके आगे की छ आहुतियां घी सेही दे और प्रत्येक आहुति के बाद स्रुव में लगा शेष घी वधू के सिर पर गिराता जावे। इसेही सम्पात कहते हैं और यजुर्वेदियों के संस्रव की जगह यही है। परन्तु सामवेदियों के यहां यह सम्पात सर्वत्र नहीं होता–

प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्दोऽभिधीयमाना देवता उत्तरविवाहे पाणिग्रहणस्याज्यहोमे विनियोगः। ॐ लेखा सन्धिषु पक्ष्मस्वावर्त्तेषु च यानि ते। तानि ते पूर्णाहुत्या सर्वाणि शमयाम्यह ँ स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ॐ केशेषुयच्च पापकमीक्षिते रुदिते च यत्। तानिते पूर्णाहुत्या सर्वाणि शमयाम्यह ँ स्वाहा इदमग्नये नमम॥२॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शीले यच्चपापकं भाषिते हसिते च यत् । तानिते० ॥ ३ ॥
ॐ आरोकेषुच दन्तेषु हस्तयोः पादयोश्चयत्। तानिते० ॥४॥
ॐ ऊर्वोरुपस्थे जंघयोः सन्धानेषुच यानिते। तानि० ॥५॥
ॐ यानि कानि च घोराणि सर्वांगेषु तवाभवन् । पूर्णा
हुतिभिराज्यस्य सर्वाणि तान्यशीशम ँ स्वाहा इद
मग्नये नमम ॥ ६ ॥ यहां प्रत्येक त्याग में कहीं कहीं 'इदम
ग्नयेनमम' की जगह 'इदंकन्यायैनमम' लिखा है । ऊपर
पांच मंत्रों के देखने से मालूम होगा कि प्रत्येक मंत्र का उत्तरा
एकही है । इसीसे हमने बारबार न लिख केवल संकेत कर दि
है । इसके बाद वर वधू खड़े होजावें और वेदी के समीपहीं वा
लेजाकर वधू से वर कहे-ॐ ध्रुवं पश्य ॥ इस पर वधू ध्रुव तार
को देखे और मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्ध्रुवो देवता ध्रुव
दर्शने विनियोगः । ॐध्रुवमसि ध्रुवाहं पतिकुले भूयासम
श्रीअमुकशर्मणः श्रीअमुकीदेवी ॥ यहां पर 'अमुक'
जगह पति का और 'अमुकी' की जगह अपना नाम बोले। फिर पति
से कहे-ॐ अरुन्धतीं पश्य ॥ इस पर वह अरुन्धती को देखती
मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्वधूर्देवताऽरुन्धतीदर्शने वि
नियोगः । ॐ अरुन्धत्यसि रुद्राहमस्मि श्रीअमु
शर्मणा श्रीअमुकीदेवी ॥ यहां भी पति का और अपना
अमुक, अमुकी की जगह क्रमशः बोले। तब वधू की ओर देखकर दहि
हाथ की अनामिका के अग्रभाग से उसे छूकर वर मंत्र पढ़े-प्रजापति
ऋषिरनुष्टुप् छन्दोऽभिधीयमाना देवता कन्यानुमंत्र
विनियोगः । ॐ ध्रुवाद्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवं विश्वमिदं
गत् । ध्रुवासः पर्वता इमे ध्रुवा स्त्री पतिकुले इयम
इसके बाद वधू वर को नमस्कार करे । यहां अभिवादन में दो मत
कुछ लोग कहते हैं कि पिता का गोत्र उच्चारण करकेही पति का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छूकर प्रणाम करे। क्योंकि चतुर्थीहोम से पहले पति का गोत्र नहीं होता। दूसरे लोगों का कहना है कि पाणिग्रहण होजानेपर ही पिता का गोत्र छूटकर पतिगोत्रवालीही स्त्री होजाया करती है। इसलिये पति के गोत्र काही उच्चारण करे। जैसी परिपाटी हो वैसा करे। यहां विवाद का अवसर नहीं है। अभिवादन की रीति-ॐ अमुक-गोत्रा अमुकदेव्यहं भो अभिवादयामि ॥ पति आशीर्वाद दे-ॐ आयुष्मती भव अमुकदेवि ॥ इस अवसर पर सूत्र-कारने लिखा है कि 'गुरुगोत्रेणाभिवादयते' (गो. २।३।१३)। इससे स्पष्टही है कि स्त्री का गुरु केवल पति ही है। क्योंकि उसे पति न कह गुरु कहा है। 'पतिरेको गुरुः स्त्रीणाम्' ऐसा माना भी जाता है। अतएव आजकल जो स्त्रियों के भी गुरु बनकर उनके कान फूंकते फिरते हैं वे वञ्चक हैं। इसके बाद अग्नि से पश्चिम वधू को दक्षिण ओर करके वर बैठजावे। फिर व्याहृति होम से लेकर शेष कर्म की समाप्ति करनेसे पहलेही समशनीय चरुहोम करना चाहिये और तीन दिन तक वर वधू को खार या नमक नहीं खाना तथा भूमि पर सोकर ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। किसी किसी ने लिखा है कि समशनीयहोम से पहले ही वर को मधुपर्क देना चाहिये, नकि विवाह के आरंभ में। समशनीय चरु होम की विधि यह है। यदि अग्नि कुण्डादि में विधिवत् स्थापित न हो तो उसकी स्थापना भी करनी पड़ती है। परन्तु यहां तो विवाहवेदी कीही अग्नि से काम चल जायगा। स्मरण रहे कि यह समशनीय चरु होम गृह्य अग्नि (पृ० ४) में हीं किया जाता है। इसीसे उसकी स्थापना की भी आवश्यकता होती है, अस्तु। पहले वर संकल्प करे—ॐ अद्येह परमेश्वरप्रीत्यर्थमनया पत्न्या सह समशनीयस्थालीपाकं (चरुहोमं) करिष्ये। इसके बाद ३५८ पृष्ठोक्तरीति से ओखली मुसल आदि रक्खे, उसमें धान डालकर कूटे और चावल साफ करके वहीं लिखी रीति से पकावे। हां, वहां धान ओखली में डालने के समय जो मंत्र पढ़ा है उसकी जगह ये चार मंत्र पढ़े- (१) ॐ अग्नये त्वा जुष्टं निर्वपामि। (२) ॐ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रजापतये त्वा जुष्टं निर्वपामि । (३) ॐ विश्वेभ्यो देवे
स्त्वा जुष्टं निर्वपामि । (४) ॐ अनुमतये त्वा जुष्टं नि
पामि ॥ और प्रत्येक मंत्र से एक बार ओखली में डालकर दो
चुपचाप डाला करे, जैसा वहां भी कियागया है । शेष चरु की
वहां की ही तरह करके होम करे । पर. स्मरण रहे कि चरु
के सिवाय अन्यान्य क्रियायें कुछ भी न करे । क्योंकि यहां
अग्नि की स्थापना पहले सेही है । अतएव चावल
करना, धोना, पकाना उसमें घी डालकर चलाना और उतार
नीचे रखके घी डाल देना, बस यहीं तक की क्रियायें करे । पहले
पवित्र बना था यदि वह न होतो एक पवित्र बनाने की क्रिया
करनी होगी । अतः वहां की विधि देखकर ठीक ठीक काम करने
को भूमि पर रख उसमें स्रुव से घी डालकर मेक्षणसे चलाना
और फिर होम करना चाहिये । यह होम उपघात होम
है । उपघात होम की रीति यह है कि चरु मेंही घी डाल देते हैं
मेक्षण सेही या स्रुव और हाथ से भी इस होम को करते हैं यदि
न हो । इसके शुरू में न तो आज्य भाग की आहुतियां होती हैं
अन्त में स्विष्टकृत्की होती है, जैसी कि अन्य चरुहोमोंमें होती हैं
होम जब उपस्तरण, अभिघारण और अवदान के विनाहीं किया
तभी इसे उपघातहोम कहते हैं । शेष चरुहोम में ऐसा नहीं
अस्तु । आहुतियां-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्लिंगोक्ता देवताः
शनीयचरुहोमे विनियोगः ॥ (१) ॐ अग्नये स्वा
इदमग्नये नमम ॥ (२) ॐ प्रजापतये स्वाहा इदं प्र
पतये नमम ॥ (३) ॐ विश्वेभ्यो देवेभ्यःस्वाहा इदं वि
भ्यो देवेभ्यो नमम ॥ (४) ॐ अनुमतये स्वाहा इदं
मतये नमम ॥ इसके बाद घी से व्याहृति होम से वसुहोम तक
पृष्ठोक्त रीति से करके होम से बचे चरु को चरुपात्र से
की सहायता से निकालकर दूसरे पात्र में रक्खे और उसका
अंश दहिने हाथ से छूकर मंत्र पढ़े-प्रजापतिर्ऋषिरा
नुष्टुबन्तस्य द्विपाद्गायत्री छन्दोऽन्नं देवताऽन्नाभि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विनियोगः । ॐ अन्नपाशेन मणिना प्राणसूत्रेण पृश्नि-ना । बध्नामि सत्यग्रन्थिना मनश्च हृदयञ्च ते ॥ १ ॥ यदेतद्हृदयं तव तदस्तु हृदयं मम । यदिद ँ हृदयं मम तदस्तु हृदयं तव ॥ २ ॥ अन्नं प्राणस्य पड्वि ँ-शस्तेन, बध्नामि त्वा अमुकदेवि ॥ इसके बाद उसका थोड़ा सा भाग स्वयं खाकर शेष वधू को दे । अनन्तर जो दूसरा अधिक भाग चरु का शेष है उसे पति और पत्नी दोनों भोजन कर हाथ पाँव धोकर आचमन करें । इसके बाद ब्रह्मा को द्रव्य सहित पूर्णपात्रदानका संकल्प करके आचार्य की दक्षिणा का संकल्प करें, जैसा ३५२, ३५३ पृष्ठों में लिखा है। आचार्य की दक्षिणा गोमात्र या उसका निष्क्रय है । इसके बाद हिरण्यदान करके वामदेव्यगान करे और शेषक्रियायें विसर्जन पर्यन्त ३५३,३५४ पृष्ठोक्त रीति से कर डाले। इति सामवेदी विवाह ।

२–विदाई और वधूप्रवेश ।

जब ससुराल से वधू के साथ वर की विदाई हो और वह रथ आदि सवारी पर चढ़ने लगे तब वर पढ़े–प्रजापतिर्ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः कन्या देवता रथारोहणे विनियोगः । ओं सुकि ँ शुक-ँ शल्मलिं विश्वरूप ँ सुवर्णवर्ण ँ सुकृत ँ सुचक्रम् । आरोह सूर्ये अमृतस्य नाभि ँ स्योनं पत्ये वहतुं कृणुष्व॥ इसके बाद विवाह की अग्नि के साथ रवाना होकर रास्ते में चौराहा नदी, सिंह, व्याघ्र और चोर आदि भय के स्थान जब जब आवें तभी वर यह मंत्र पढ़े–प्रजापतिर्ऋषिरनुष्टुप्छन्द आशास्य-माना देवता चतुष्पथाद्यनुमंत्रणे विनियोगः । ओं मा-विदन्परिपन्थिनो य आसीदन्ति दम्पती । सुगेभिर्दुर्गमती तामपद्रान्त्वरातयः ॥ इसके सिवाय रास्ते में जब कभी रथादि टूट जावें, उनके वहन करने वाले घोड़े या बैल आदि अलग होजावें, रथ उलट जावें, या चोरआदि के कारण कोई भारी आपत्ति आजावे तब विवाह की अग्नि का वहीं एक नूतनवेदी पर पञ्चभूसंस्कारपूर्वक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्थापन करके उसमें समिध को डालकर उसे दीप्त करे, २०० पृ
रीति से घी का संस्कार करके अग्नि का पर्युक्षण करे,
व्याहृति होम करके फिर अग्नि में चुपचाप समिध डाले
२५३पृष्ठोक्त पर्युक्षण करके तथा जल की तीन और अंजलियां दि
बचे घी को रथ के चाके वगैरः में लगावे और मंत्र पढ़े-प्रजाप

ऋषिर्बृहती छन्द इन्द्रो देवताऽभ्यञ्जने विनियोग
ॐ य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः। सन्धा
सन्धिं मघवा पुरूवसुर्निष्कर्त्ता विद्रुतं पुनः ॥ इसके
पहिया या टूटे भाग को ठीक कर दे। फिर वामदेव्य का गान ३५३पृ
रीति से करे। उपरान्त वर वधू रथ या सवारी पर चढ़कर र
हो जावें। घर के निकट आकर वर पुनः वामदेव्य गावे। तब
द्वारपर सौभाग्यवती ब्राह्मणियां वधू को रथ से उतारकर
बिछे बैल के चमड़े पर उसको पूर्वमुख बठावें। बैठाने के समय
यह मंत्र पढ़े और उसके अन्त में वधू बैठाई जावे-प्रजापति

रनुष्टुप् छन्द आशास्यमाना देवतोपवेशने विनियो
ॐ इह गावः प्रजायध्वमिहाश्वा इह पूरुषाः। इहो स
दक्षिणोऽपि पूषा निषीदतु ॥ इसके बाद वही स्त्रियां वधू की
में एक ऐसे बालक को रक्खें जिसका चूड़ाकर्म न हुआ हो और
रखकर उसी बालककी अंजली में कमल या दूसरे फल र
फिर लड़के को उठाकर वधू के समीप रख दें और वर धृति
का संकल्प करे-ॐ अद्येह शुभपुण्यतिथौ वध्वा सह
होमं करिष्ये॥ इसके बाद वेदी बनाकर पञ्चभूसंस्कार पूर्वक
अग्नि की स्थापना से लेकर व्याहृतिहोम तक की विधि २०० पृ
रीति से करके उस अग्नि में धृतिनामक अग्नि का ध्यान करे
आगे लिखी आठ आहुतियां दे-प्रजापतिर्ऋषिर्बृहती
कन्या देवता होमे विनियोगः। (१) ॐ इह धृतिः
इदं कन्यायैनमम। (२) ॐ इह स्वधृतिः स्वाहा इ
न्यायैनमम। (३) ॐ इहरन्तिः स्वाहा इदं कन्यायैन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(४) ॐ इह रमस्वस्वाहा इदं कन्यायैनमम । (५) ॐ मयि धृतिः स्वाहा इदं कन्यायैनमम । (६) मयि स्वधृतिः स्वाहा इदं कन्यायैनमम । (७) ॐ मयिरन्तिः स्वाहा इदं कन्यायैनमम । (८) ॐ मयिरमस्व स्वाहा इदं कन्यायैनमम ॥ इसके बाद व्याहृति होम से लेकर दक्षिणादान, वामदेव्यगान और विसर्जनादि क्रियायें ३४८ आदि पृष्ठोक्त रीतिसे कर डाले। परन्तु वामदेव्यगानसे पहले माता, पिता आदि श्रेष्ठजनों को प्रणाम कर ले। इति सामवेदी वधूप्रवेश ।

३–चतुर्थीकर्म ।

विवाह के चौथे दिन रात में आधीरात के बाद उबटन आदि लगाकर वर वधू दोनों, हल के जूए पर बैठकर स्नान करें और आचमन, प्राणायामादि के बाद वर संकल्प करे। उसवक्त उसके दहिने बहू बैठी रहे। ये दोनों, जहां वेदी बनाकर अग्नि की स्थापना करने वाले हों उससे पश्चिम, पूर्वमुख बैठें–ॐ अद्येहास्या वध्वा अलक्ष्म्यादिदोषापनोदाय चतुर्थीकर्म करिष्ये ॥ इसके बाद वेदी बनाकर विधिवत् अग्निस्थापनादि करके व्याहृति होम कर ले (पृ० २०३)। एक बात का स्मरण रहे कि पात्रों को जब कुशकण्डिका के समय रखने लगते हैं तो एक बड़ासा पात्र जल भरकर अग्नि से उत्तर रखते हैं और आगे की बीस आहुतियों के बाद स्रुव में लगा घी हरवार उसीमें चुवा देते हैं–प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्निर्वायुश्चन्द्रमा सूर्यस्तत्समष्टिश्च देवताः प्रायश्चित्ताज्यहोमे विनियोगः। स्मरण रहे कि आगे जो चार मन्त्र होम के लियेआवेंगे, उनमें पहले मन्त्र की ही तरह शेष तीन हैं। अन्तर केवल इतनाहीं है कि पहले के शुरू में जहाँ अग्नि पद है वहां शेष तीनों में क्रमसे 'वायो, चन्द्र, सूर्य,' यह पद हैं। अतएव हम केवल उतनाहीं लिखदेंगे, शेष नहीं। उससे पहले के मन्त्र को ही देखकर शेष पढ़लेना चाहिये। फिर पांचवाँ मंत्र पूरा लिखेंगे। (१) ओं अग्नेप्रायश्चित्तेत्वं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

देवानां प्रायश्चित्तिरसि ब्राह्मणस्त्वानाथकाम उपधावा
याऽस्याः पापीलक्ष्मीस्तनूस्तामस्या अपजहि स्वाहा
मग्नये नमम ॥ (२) ॐ वायो प्रायश्चित्ते० इदं वायवेनमम
(३) ॐ चन्द्रप्रायश्चित्ते० इदंचन्द्राय नमम ॥ (४) ॐ
प्रायश्चित्ते० इदं सूर्यायनमम ॥ (५) ॐ अग्निवायुचन्द्रसूर्य
प्रायश्चित्तयो यूयं देवानां प्रायश्चित्तयः स्थ ब्राह्मणो वो नाथ
काम उपधावामि याऽस्याः पापीलक्ष्मीस्तनूस्तामस्या अ
हत स्वाहा इदमग्निवायुचन्द्रसूर्येभ्यो नमम ॥ इसके
जो मन्त्र हैं उनमें और पहले के इन पाँचों में यही विशेषता है कि
के 'पापीलक्ष्मीः' की जगह उनमें 'पतिघ्नी' शब्द है। शेष
ज्यों के त्यों हैं। फिर इनके बाद के पाँच मंत्रों में 'पति
की जगह 'अपुत्र्या' और अन्त के पाँच में 'अपुत्र्या' की
'अपसव्या' शब्द है। और शब्द ज्यों के त्यों इन्हीं मंत्रों के हैं।
हम भी संकेत केलिये केवल उतना हीं लिख देते हैं। इन्हीं शब्दों
क्रमसे लगाकर इन्हीं पांच मंत्रों के पन्द्रह मंत्र और बनाकर उन्हीं
आहुति देना चाहिये। मैथिल पद्धति में केवल पाँचही मंत्र लिखे
पर वह भ्रमात्मक, अतएव हेय है। इसके बाद व्याहृति होम से
वामदेव्यगान तककी सभी क्रियायें २४८ पृष्ठ की रीति से करके विस
नादि करडाले। फिर जलवाले घड़े में जो बीसों आहुतियों का शेष
गया था उससे मिले जल को वधू के नख बाल सहित सब
में लगावें और पीछे नख आदि कटवाकर उसको नहलावें।
काम अन्य स्त्रियों का है। स्नान के बाद उसे वस्त्र आभूषणादि
सुसज्जित करदें। हम बारबार कह चुके हैं कि विवाह में पूर्णाहु
का निषेध है और बहुतों ने कहीं का यह वचन भी उद्धृत किया
कि-विवाहे व्रतबन्धे च शालायां चौलकर्मणि। गर्भा
धानादिसंस्कारे पूर्णहोमं न कारयेत् ॥ इसका अभि
यह है कि विवाह, उपनयन, वास्तुशान्ति कर्म, चौल और गर्भा
से लेकर चूड़ाकर्म से पहले के संस्कारों में पूर्णाहुति होम न क

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ऐसा ही बहुतों ने किया भी है । परन्तु मिथिला में सर्वत्र ही पूर्णाहुति का सम्प्रदाय है तथा अन्यान्य किसी किसी पद्धति में भी ऐसाही लिखा है । इसी अनुरोध से हमने भी लिखदिया है । इति चतुर्थीकर्म ।

(६)

अन्त्येष्टि और पितृकर्म ।

जीवन के अत्यावश्यक संस्कारों का प्रयोग दिखलाने के बाद अब केवल सन्ध्योपासन तथा पंचयज्ञादि एवं कुछ ग्रह नक्षत्र की शांतियाँ बच जाती हैं । तुलादान और साधारण गोदान भी प्रचलित है और उसकी विधि भी अभी शेष ही है । इसके सिवाय वास्तुशांति, प्रतिमा-प्रतिष्ठा तथा जलाशयादि की प्रतिष्ठा एवं उत्सर्ग भी शेष ही है । एतदर्थ अन्त में हम तीन प्रकरण रखना चाहते हैं, जिनके नाम होंगे शान्तिसंग्रह, प्रतिष्ठा और उत्सर्ग, नित्य कर्म और कर्मशेष । परन्तु इनकी अपेक्षा अत्यन्त आवश्यक और सदाही अपेक्षित है मृतक क्रिया और पितृकर्म । मृतक क्रिया को ही अन्त्येष्टि भी कहते हैं । अन्तकाल में मरण के समय और उसके बाद जो कर्म किये जाते हैं वह सभी अन्त्येष्टि के अन्तर्गत हैं । इस तरह पितृकर्म भी यद्यपि अन्त्येष्टि कर्म के ही अन्तर्गत है । तथापि साधारण रीति से, जबतक मृत पुरुष का सपिंडन नहीं हो जाता तभी तक की क्रियाओं को अन्त्येष्टि कहते हैं । उनका नाम प्रेतकर्म भी है । प्रेत का अर्थही है मरा हुआ । यद्यपि मरों के अन्तर्गत पितृ भी हैं । फिर भी उन्हें प्रेत नहीं कहते । किन्तु जबतक सोलह श्राद्धों को, जिन्हें श्राद्धषोडशी या केवल षोडशी भी कहते हैं, करने के बाद सपिण्डीकरण श्राद्ध द्वारा मृत पुरुष पितृवर्ग में नहीं मिला दियाजाता तभी तक वह प्रेत कहाता है और तब तक के कर्म हीं प्रेतकर्म कहाते हैं । सारांश, सपिण्डीकरण या सपिंडन श्राद्ध प्रेत तथा पितृ के बीच की सीमा है, जिसके पहले प्रेत और बाद पितर हैं और एक प्रकार से मृतक की शुद्धि करके पितृवर्ग में मिलालेने की क्रिया ही सपिंडन श्राद्ध के नाम से विख्यात है । सपिंड का अर्थ भी ऐसा ही है । यद्यपि पिंड के बहुत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

से अर्थ हैं। पर, मोटा अर्थ है वर्ग या दल और वह दल पितरों का होता है, कारण वे अनेक हैं। परन्तु, प्रेत का नहीं होता, क्योंकि तो अकेला ही रहता है। इसलिये जो जो पितरों के दल में मि जाते हैं वह सपिंड कहलाते हैं। पिंडके साथ के 'स' का अ एक या समान।

साधारण रीति से यह सम्मिलित प्रेत और पितृ क्रियायें तीन में बँटी हैं। मरण से लेकर एकादश या ग्यारहवें दिन के श्राद्ध की जितनी क्रियायें हैं वही सब पूर्वक्रिया कहलाती हैं। इसी बीच जितने श्राद्ध दस दिन तक किये जाते हैं और जिन्हें दशगात्र श्रा कहते हैं, वही नवश्राद्ध भी कहाते हैं। वस्तुतः यही पूर्व क्रिया कर्म है। इसके बाद द्वादशाह या बारहवें दिनसे लेकर वर्ष अन्त में वार्षिक श्राद्ध के बाद सपिंडन तक जितनी क्रियाये हैं वे मध्यक्रिया कहाती हैं। यदि द्वादशाह के ही दिन सोलह श्राद्ध सपिंडन करले तो मध्य क्रियायें द्वादशाह को ही पूरी होजाती क्योंकि सपिंडन से पहले किये गये एकादशाह श्राद्ध के सिवाय १६ श्राद्ध हैं उनके सहित सपिंडन को, अर्थात् इन्हीं श्राद्धों उनके साथ की गई सब क्रियाओं को ही मध्यक्रिया कहते हैं। सपि के बाद जो भी कर्म मृतक के लिये किया जाता है उसे उत्तरक्रि कहते हैं। जब तक मृतक का सपिंडन न हो जावे तब तक कोई विवाह या मंगल कार्य नहीं होना चाहिये और साधारण वह होता है एक वर्ष के बाद वार्षिक श्राद्ध करके। यही भी है। परन्तु समयानुसार इसे असह्य समझ कर प्राचीन ही यह व्यवस्था कर दी है कि बारहवें दिन-द्वादशाह को पक्ष बीतने पर, छ मास पर, बीच में ही वृद्धिश्राद्ध का कभी अवसर आने पर उससे पहले ही, या वर्ष के अन्त में सपि श्राद्ध करने चाहिये और विशेष कर आजकल द्वादशाह के ही करलेने पर लोगों ने अधिक जोर दिया है। हालां कि यह अनिवार्य कर्म नहीं है कि हम द्वादशाह को ही उसे करलें। भी अब तो यही परिपाटी है कि द्वादशाह को ही करते इसीलिये द्वादशाह के श्राद्ध का नाम हीं षोडशी पड़ गया सपिंडीकरण से पहले जो सोलह श्राद्ध किये जाते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मतभेद है । एक मत है कि एकादशाह के दिन जो पहला श्राद्ध होता है और जो अन्त में सपिंडीकरण होता है, इन दो के सिवाय ग्यारह महीनों के ग्यारह, ऊनषाण्मासिक जो छ महीने पूरे होने से पहले दिन कियाजाता है और ऊनमासिक जो द्वादशाह को या महीना पूरा होने से पहले होता है, ऊनवार्षिक जो वार्षिक श्राद्ध से पहले किया जाता है, यही सोलह श्राद्ध हैं। दूसरा मत यह है कि एकादशाह के पहले श्राद्ध के सिवाय और सपिंडन से पहले ही सोलह श्राद्ध बीच में ही किये जाते हैं। जिनमें १२ तो बारह महीने के और ऊनषाण्मासिक एवं ऊनवार्षिक, ये चौदह वही हैं। पन्द्रहवां द्वादशाह के दिन किया जाता है जिसे ऊनमासिक कहते हैं और सोलहवां तीन पक्ष (४५ दिन या डेढ़मास) पर होता है। इसीलिये इन सोलह श्राद्धों के करने में भी मतभेद है । जब सपिंडीकरण वर्ष के बाद कियाजाता है तब तो दोनों पक्षवाले अपने अपने मत और सम्प्रदाय के अनुसार ही समय समय पर श्राद्ध करेंगे। परन्तु जब द्वादशाह को ही सपिंडन होता है, जैसी रीति आजकल है, तो उससे पहले षोडशी के श्राद्ध करने पड़ते हैं। क्योंकि यही नियम सदा से चलाआता है कि बिना षोडशी के सपिंडन नहीं होता है और सपिंडन के बाद भी सोलह श्राद्ध सालभर में अपने अपने समय पर किये जाने चाहियें। फर्क इतनाहीं होगा कि जब सालभर पर सपिंडन होगा तो उसके पहले जितने भी श्राद्ध होंगे वे प्रेतश्राद्ध ही होंगे। लेकिन द्वादशाह के दिन सपिंडन करलेने पर वही श्राद्ध पितृ श्राद्ध होंगे। प्रेतश्राद्ध और पितृश्राद्ध के करने में थोड़ा सा अन्तर होता है। साधारण रीति से जो अट्ठारह बातें पितृ श्राद्ध में की जाती हैं वह प्रेतश्राद्ध में नहीं की जातीं। जैसा कि आसानी के लिये इन श्लोकों से स्पष्ट है-आशिषो द्विगुणा दर्भा जपाशीः स्वस्तिवाचनम्। पितृशब्दः स्वसम्बन्धः शर्मशब्दस्तथैव च ॥ १ ॥ पात्रालंभावगाहश्च उल्मुकोल्लेखनादिकम्। तृप्तिप्रश्नश्च विकिरः शेषप्रश्नस्तथैव च ॥ २ ॥ प्रदक्षिणविसर्गश्च सीमान्तगमनं तथा। अष्टादश पदार्थाँश्च प्रेतश्राद्धे विवर्जयेत् ॥ ३ ॥ इनका अभिप्राय यह है कि अट्ठारह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

बातें प्रेतश्राद्ध में न की जावें । वह यह हैं, (१) अन्त के 'गोत्रम्
वर्द्धताम्' इत्यादि आशीर्वाद जो सबके अन्त में कियेजाते हैं, (
मोटक, (३) पुरुषसूक्त और 'उदीरितामवर' इत्यादि का
(४) 'स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु' इत्यादि स्वस्तिवाचन, (
पितृशब्द, (६) 'अस्मत्पिता' इत्यादि अपना सम्बन्ध, (
शर्मा शब्द, (८) दोनों हाथ औंधकर 'पृथिवी ते पात्र
इत्यादि से भोजन वाले पात्र को छूना, (९) 'विष्णो क
इत्यादि से अंगूठे को परोसे भोजन में डालना, (१०) 'ये रूपा
मंत्र से जलती लकड़ी को पिंड के स्थान के चारों ओर घुमा
(११) 'अपहता असुराः' इत्यादि से पिंड के स्थान पर
से रेखा खींचना, (१२) मूलरहित कुशों को पिंड के लिये पहले
छाना, (१३) 'स्वदितं' इत्यादि तृप्ति का प्रश्न, (१४) 'अग्निदग्ध
इत्यादि से पिंड से बचे अन्न को उसके समीप में छिड़कना, जि
विकिर कहते हैं, (१५) 'शेषमन्नं किं क्रियताम्' यह
(१६) ब्राह्मणों के विसर्जन के बाद उनकी प्रदक्षिणा, (१७) 'अ
रम्यताम्' इत्यादि से उनका विसर्जन करना और (१८) वि
के बाद उनके पीछे थोड़ी दूर तक जाना । स्मरण रहे कि यह
बातें पितृश्राद्ध में की जाती हैं । केवल प्रेतश्राद्ध में ही इनका नि
है। परन्तु मैथिल पंडित रुद्रधरने अपने श्राद्धविवेक में प्रेतश्राद्ध के
में भी यह बातें लिखी हैं जो नितान्त अनुचित हैं । अस्तु, श्रा
प्रायः द्वादशाह के दिन षोडशी और सपिंडन के बाद फिर मासिक
सोलह श्राद्धों को अपने अपने समय पर करने की रीति उठ
है। सिर्फ किसी किसी विवेकी या धनी के यहां हीं ये होते हैं । हां
र्षिकश्राद्ध नाम का जो अन्तिम श्राद्ध है उसे करने की चाल
पाई जाती है । परन्तु उसमें भी एक कुरीति यह घुसगई है कि
नियमित रूप से वर्ष के अन्त में करने की जगह कभी कभी
कम वेश महीनों के बाद भी कर देते हैं ! इसका कारण, केवल
अज्ञान है जिससे लोग वार्षिक शब्द का अर्थ समझ ही नहीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वस्तुतः यह सोलह श्राद्ध तो मरणतिथि को ही हर महीने के अन्त में ही किये जाने के हैं। केवल ऊनमासिक, जो महीना पूरा होनेसे पहले या द्वादशाह कोही कियाजाता है और ऊनषाण्मासिक एवं ऊनवार्षिक यही तीन और एकादशाह का एक मरण तिथि को न किये जाकर उससे पहलेही किये जाते हैं। त्रिपाक्षिक भी मरणतिथि को ही होता है। यह श्राद्ध एकददशाह के बाद अपने अपने समयपर साल भर तक किये जाते हैं और अन्त में वार्षिक के साथही सपिंडीकरण होता है। परन्तु द्वादशाह को सपिंडीकरण करने में इन्हें घसीटकर उससे पहले भी कर लेना पड़ता है। इस घसीटने को ही अपकर्ष कहते हैं। परन्तु अपकर्ष करने से उनका अपने अपने समय पर किया जाना कदापि रुक नहीं सकता। उन्हें अवश्य करना चाहिये यही धर्मग्रन्थों की आज्ञा है। द्वादशाह के दिन सपिंडन से पहले षोडशी करने में भी दो मत हैं। कुछ लोग, कहते हैं कि एकादशाह के श्राद्ध के साथही उसके बाद सभी श्राद्ध कर लेना चाहिये। यह उन लोगों का मत है जो एकादशाह और सपिंडीकरण को भी सोलह के ही अन्तर्गत मानते हैं। यह ठीक भी है कि सोलह में पन्द्रह एक साथही कर लिये जावें। क्योंकि १५ तो एकोद्दिष्ट श्राद्ध हैं। लेकिन वह भी सपिंडन द्वादशाह कोही मानते और करते हैं। दूसरा मत है कि द्वादशाह को ही षोडशी करके पीछे सपिंडन होना चाहिये। यह उनका मत है जो सपिंडन और एकादशाह के पहले श्राद्ध को षोडशी से बाहर मानते हैं। उनके लिये तो यह ठीक है कि द्वादशाह कोही षोडशी करें। क्योंकि द्वादशाह कोही उनका ऊनमासिक होता है। परन्तु अब यह बात नहीं रह गई है कि पहले मतवालेही ऐसा करें या दूसरे वाले ही। अब तो साधारणतः एकादशाह को एक श्राद्ध करके द्वादशाह को पहले चौदह कर लेते हैं और पीछे से सपिंडी करके काम पूरा करते हैं और प्रायः यही रीति सर्वत्र प्रचलित है। परन्तु इसका भेद तो हम बताही चुके। वस्तुतः तो दो श्राद्ध एकादशाह को होने चाहियें।

सामान्य रीति से श्राद्ध दोही प्रकार के होते हैं, एकोद्दिष्ट और पार्वण। एकोद्दिष्ट शब्द का अर्थ है कि जो एक के उद्देश से या एक के लिये कियाजावे और पार्वण का अर्थ है कि जो पर्व में किया जाता है। चतुर्दशी, अष्टमी, अमावास्या, पूर्णिमा और संक्रांति को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पर्व कहते हैं । परन्तु पार्वण श्राद्ध अब साधारण रीति से एकोद्दिष्ट
सिवाय सभी श्राद्ध को कहते हैं । यह स्मरण रहे कि एकोद्दिष्ट
में केवल एकही पिंड रहता है। क्योंकि एकही मृत व्यक्ति के लिये
जाता है । परन्तु पार्वण में तो तीन, छ, नौ और बारह पिंड
होते हैं । पार्वण के ये चार भेद हैं जो अलग अलग समयों में
जाते हैं । कभी तीन पिंड के और कभी छ पिंड के इत्यादि।
बात यह भी है कि एकोद्दिष्ट में विश्वेदेव भी नहीं रहते । मगर
में रहते हैं। इसके सिवाय एकोद्दिष्ट श्राद्ध में एकही कुश रहता
प्रेत या पितरका आवाहन भी नहीं करते । साथ साथ अग्नौ
होम भी नहीं होता । जब पिण्ड एक है तो अर्घ्यपात्र भी
रहेगा, इसमें कहनाहीं क्या है ? बस यही विशेषता एकोद्दिष्ट
पार्वण से है । इसके सिवाय तृप्तिप्रश्न में 'स्वादितम्' कहा
है, नकि 'तृप्तः' । 'अक्षय्यमस्तु' की जगह 'उपतिष्ठता
कहते हैं और ब्राह्मणों के विसर्जन में 'अभिरम्यताम्' कहदेते
शेष बातों में समानता है और यदि कहीं भेद हैं तो
कुछ भेदों के कारण वह हो जाता है । यद्यपि कहीं
बारह प्रकार के और कहीं छ प्रकार के श्राद्ध कहे गये
और कहीं दूसरे प्रकार के भी । परन्तु एकोद्दिष्ट या
के अन्तर्गत वे सभी ही होजाते हैं, कारण श्राद्ध करने
विधि दोही प्रकार की है या ता एकोद्दिष्ट की या पार्वण की, जिन
भेद ऊपर लिखा है । फिर, जब सभी श्राद्ध या तो पहली रीति
किये जावेंगे या दूसरी रीति, तो फिर उन्हें दोही प्रकार का
ठीक है । यह भी स्मरण रहे कि दशगात्र और षोडशी श्राद्ध
सिवाय शायदही कहीं कहीं एकोद्दिष्ट का अवसर जाता है । अ
यही सामान्य नियम है कि दशगात्र और षोडशी के सिवाय
श्राद्ध पार्वण रीति से किये जाते हैं । हाँ, सपिंडन के सिवाय,
कभी भी श्राद्ध किया जावे तो भाई, बहिन, पुत्र, चचा, मामा,
दामाद, भांजे, ससुर, भतीजा, सास, आचार्य, उपाध्याय,
शिष्य, स्वामी, फूआ, मौसी, मित्र आदि का एकोद्दिष्ट ही होता है,
नहीं । अतएव शेषश्राद्ध पार्वणहीं हैं । हां, इतना स्मरण रखना
कि सपिंडीकरण श्राद्ध एकोद्दिष्ट और पार्वण दोनों का मिश्रित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसीलिये इसमें दोनों की विधियों से काम लेना पड़ता है । फिर भी वे अलग अलग की जाती हैं, न कि दोनों मिला दीजाती हैं । मिश्रित का इतनाहीं अर्थ है कि दोनों एकही श्राद्ध के समय आगे पीछे की जाती हैं । अतएव वृद्धिश्राद्ध, ग्रहण के समय के श्राद्ध, गयाश्राद्ध और पितृपक्ष का श्राद्ध, जिसे महालय श्राद्ध भी कहते हैं (महालय नाम पितृपक्ष काही है), आदि जितने भी हैं सभी पार्वणविधि से ही किये जाने के कारण पार्वण हीं हैं ।

पार्वण में जो तीन, छ आदि पिंडों की बात लिखी गई है उसका मोटा अर्थ यह है कि श्राद्ध में पितृपक्ष और मातृपक्ष को पिंड देनेकी रीति है और जिन्हें जिन्हें पिंड देते हैं वही पितर श्राद्ध के देवता कहे जाते हैं । यही सामान्य नियम है कि पिता के पक्ष में पिता, पितामह, प्रपितामह और माता के पक्ष में मातामह, प्रमातामह वृद्धप्रमातामह को पिंड देते हैं । इसीलिये जब केवल पितृपक्ष को ही देते हैं तो वह श्राद्ध तीन पिंडवाला या त्रिपुरुष कहाता है । इसे त्रिदैवत्य भी कहते हैं । मातापक्ष को मिला लेनेपर षड्दैवत्य वा छ पिंडवाला होजाता है । परन्तु जब दोनों के पितरों की स्त्रियों को भी मिलाते हैं और उन्हें पिंड देते हैं तो नवदैवत्य और द्वादशदैवत्य की नौबत आपहुंचती है । जब केवल पितृपक्ष की तीन स्त्रियां माता, पितामही और प्रपितामही कोही अलग पिंड देते हैं और माता के पक्ष की स्त्रियों को पुरुषों के साथही मिलाकर, तब नौही पिंड होते हैं और जब पिता के पक्ष की तरह माता के पक्ष की मातामही, प्रमातामही और वृद्धप्रमातामही को भी पुरुषों से अलग पिंड देते हैं तो बारह पिंड होते हैं । जब केवल दोनों पक्षों के पुरुषों कोही देते हैं तब भी स्त्रियों को यद्यपि छोड़ते नहीं हैं । फिर भी उन्हें अलग पिंड नहीं देते हैं । किन्तु सपत्नीक पुरुषों को एकही पिंड देते हैं । इसीसे छ ही पिंड होते हैं । परन्तु कभी कभी जब ऐसा मानते हैं कि पिता के पक्ष को तो सपत्नीक को पिंड न देकर पुरुषों और स्त्रियों को अलग अलग देना चाहिये । परन्तु मातापक्ष में सपत्नीक कोही देना चाहिये । तभी नौ पिंड होते हैं । लेकिन जब लोग ऐसा मानते हैं कि पितृपक्ष में सपत्नीक को पिंड नहीं देते तो मातृपक्ष में क्यों देंगे ? वहां भी अलग अलग पिंड ही देना चाहिये । तब बारह पिंडों की दशा आजाती है ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नहीं तो वस्तुतः तीन और छ पिंडों की ही बात है। मान्य रीति से सपिंडीकरण के पार्वण में तीन पिंड और पार्वण श्राद्धों में छ पिंड होते हैं। परन्तु ऊपर लिखे अनुसार कारणहीं वृद्धि श्राद्ध, पितृ पक्ष का महालय श्राद्ध और गया या नौ श्राद्ध कहीं नौ पिंडों का और कहीं बारह पिंडों का लिखा गया इसलिये इस बात में संशय न करना चाहिये कि क्यों कहीं पितृपक्ष वृद्धिश्राद्ध में बारह पिंड लिखा है तो कहीं छ और नौही। इस १२ और ६ का रहस्य ऊपर बता चुके हैं। इसलिये चाहे १२ या नौ या छ, इसमें कोई हर्ज नहीं है। पर इतना अवश्यमेव रहे कि छ पिंडों में माता और पितापक्ष के सपत्नीक तीन तीन पिंड होंगे। ऐसा कभी न करे कि केवल पिता पक्ष के ही स्त्री पु को अलग अलग पिंड देकर छ पिंड पूरा कर ले। क्योंकि पि को तो उनके एकोद्दिष्ट के सिवाय स्वतंत्र पिंड दियाही नहीं जा उनकी तृप्ति तो पति केही पिंड से होती है। और यदि कभी भी जाता है तो पूर्वोक्त रीति से जब नौ या बारह पिंड देते हैं नकि छ पिंडवाले श्राद्ध में कभी भी स्त्रियों को अलग पिंड दे हैं। यह भी याद रखने की बात है कि जब कभी स्त्रियों को देने का विवाद उठा है तभी और और श्राद्धों के लिये ही ६, ९ १२ पिंडों का प्रश्न आया है और लोगों ने तीनों पक्षों काही प्रति किया है। इसीलिये करनेवाले की इच्छा है कि जैसा करे। वृद्धिश्राद्ध में ६ और ९ पिंडकी सिर्फ दोही रीतियों का उल्लेख वहां बारह पिंडों का नाम किसी ने नहीं लिया है। सभी लोग मानते हैं कि मातापक्ष में तो सपत्नीक पुरुषों कोही केवल तीन देना चाहिये। हां, पितापक्ष में विवाद है। कोई सपत्नीक को हैं तो कोई स्त्री और पुरुषों को अलग अलग। इसीसे छ और नौ ही नौबत वहां आई है। फलतः किसीने अपनी पद्धति में छ पिंड विधि लिखी है तो दूसरेने नौ की। मगर बारह की तो किसी नहीं लिखी है। शेष पार्वणों में ६ से १२ तक का विवाद है जिसने जो पक्ष मान लिया है उसने उसीके अनुसार ६ से १२ तक की प्रयोग विधि लिखी है। इसलिये यही सिद्धान्त है कि श्राद्ध में तो केवल छ या नौ पिंडही दे। परन्तु तीर्थ, गया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पितृपक्ष में चाहे छ दे या नौ या बारह । शेष श्राद्धों में ६ ही पिंड देने की परिपाटी है । यह भी न भूलना चाहिये कि वृद्धि श्राद्ध मेंहीं यदि माता के वर्ग को भी अलग पिंड देना हो तो पहले माता आदि को देकर पीछे पिता प्रभृति तीन को देते हैं । शेष श्राद्धों में यदि स्त्रियों को पुरुषों से अलग भी पिंड दिया जावे तब भी पहले पुरुषों को और उसके बाद उनकी स्त्रियों को देते हैं । सारांश, वृद्धिश्राद्ध में स्त्री वर्ग का पहले और पुरुष वर्ग का बाद होता है और शेष में पहले पितृपक्ष का पुरुष वर्ग और उसके बाद उनकी स्त्रियों का वर्ग, फिर मातृपक्ष का पुरुष वर्ग और पश्चात् स्त्रीवर्ग रहेगा ।

अब श्राद्धोंके सम्बन्ध में दो एक और बातों पर भी प्रकाश डालकर उनके प्रयोग की ओर चलेंगे । देवकार्यों में तो देवताओं की पूजा होती ही है मगर पितृकार्य में भी होती है । हां, प्रेतकार्य में उसकी मनाही है । पितरों के साथ जिन देवताओं की पूजा होती है और वह भी पितरों से पहलेही, वह विश्वेदेव कहाते हैं । साधारणतः लोगों की यह धारणा भी है कि जिन पितरों को पिंड देते हैं वे यदि किसी भी योनि में चले गये हों तो वहां उन्हें जिस पदार्थ के मिलने से तृप्ति होती है, पिंड का पदार्थ उसी रूप में उन्हें मिलता है और इस क्रियामें विश्वेदेव सहायक माने गये हैं । यद्यपि यह आवश्यक नहीं है कि विश्वेदेवही सर्वत्र सहायकता करें । क्योंकि एकोद्दिष्ट में विश्वेदेव रहतेही नहीं और उनके रहने पर भी सृष्टि या सृष्टिकर्त्ता का कोई भीतरी नियम ऐसा माननाहीं पड़ेगा जिसके अनुसार पुनर्जन्मवाद में एक स्थान पर मरा जीव दूसरी जगह पर–सैकड़ों और सहस्रों कोसपर–पहुंचाया जाता है । सो भी पिता के वीर्य में और उसके द्वारा माता के उदर में । यही नहीं, हम जो कुछ भी सुकृत या दुष्कृत इस जन्म में करते हैं उसका फल जन्मान्तर में यहीं नहीं, सैकड़ों कोस के फासिलेपर ठीक समय पर पहुंचानेवाला भी वही नियम है । यदि वह भीतरी नियम और प्रबन्ध जो अदृश्य है और रेल, तार या डाक से भी विलक्षण शक्ति सम्पन्न, विना तार के तारकी भी नाक काटने वाला तथा अगम्य है, न माना जावे तो सृष्टि की व्यवस्थाही नहीं हो सकती । सभी बातें मिट्टी में मिल जाँयगी । यदि इन सभीका सञ्चालक कोई अदृश्य और सर्वशक्तिसम्पन्न सूत्र है, जो अन्यान्य पारलौकिक क्रियायें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

और पुनर्जन्म के गूढ़तम पूर्वोक्त रहस्यों को घटित कर रहा है
जिसका दिग्दर्शन बृहदारण्यक उपनिषद् के पञ्चाग्निविद्याप्रकरण
है । तो फिर पितरों केही लिये किये गये पिंडदानादि को उनके
ठीक समय पर उपयुक्त रूप में पहुंचा देने के लिये अलग
करने की कोई आवश्यकता नहीं । इसके लिये मृत पितरों
क्रियाओं के मानने वालों को उसी तरह निश्चिन्त रहना चा
जिस तरह अन्यान्य पुनर्जन्मवादी श्राद्ध और पिंड को न मान
भी और बातों के लिये निश्चिन्त हैं । हम सभी एकही नौका
सवार हैं और यदि पिंड देनेवाले डूबेंगे तो उसके विरोधी उनके
पहले भवजलधि के अपार जल के तल में जा पहुंचेंगे । फिर
अन्यान्य सहायक वर्ग कीही तरह विश्वेदेवों को माना है ।
आवश्यक नहीं है कि एक पर निर्भर होकरही अपने सन्तोष के
और सहायकों की पर्वाह ही न कीजावे । सहायकों की खोज
सार्वभौम नियम है । इसीलिये विश्वेदेवों के सिवाय अग्निष्
नामक एक स्थायी पितर वर्ग मानागया है जो पिंडादि की देख
और निगरानी करता है । जैसे दुनियां में नाम और पता के
कोई वस्तु दूरस्थ व्यक्ति को हम पहुंचा नहीं सकते । उसी
पारलौकिक पिंडादि कार्यों में भी नाम और पता बताने की
और उस अंश में हम इतनाहीं कह सकते हैं कि वह हमारा
और भाई है या और कोई और उसका पहले यह नाम
इत्यादि । वह इस समय कहां है, यह बताना तो हमारी शक्ति
बाहर की बात है और इसके लिये चिन्ता कीभी कोई जगह नहीं
जितना हम कर सकते थे कर चुके । यदि उसे न करें तो
होंगे । परन्तु जिसे कर ही नहीं सकते उसके लिये हमें दोषी
कहेगा ? और यदि हम दोषी नहीं हैं तो फिर हमारा दिया
बीच में ही गायब कर हमें दंड क्यों दिया जायगा ? या
बीच में हीं गायब करने की शक्ति किस में है ? आखिर
पहुंचाना है उसे तो भी कुछ परिश्रम करना हीं पड़ता है
कहां तक चिराग, और आदमी लेकर पानेवाले का
लगा सकते हैं ? जहां स्वयमेव जाकर भी हमारे लिये पता
लेना दुःसाध्य या असंभव है वहां हमारे ही चार अक्षरों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहुंचाने वाला विना खटके पहुंचा देता है ! कहा जाता है कि जैसे हजार गायों के बीच में छोड़ देने पर भी बछड़ा अपनी मा के पास ही जाता है, कभी भी भूल नहीं करता। क्योंकि उसके साथ उसका कोई विलक्षण सम्बन्ध है । ठीक वही बात हमारे पारलौकिक दान और पिंडआदि के बारे में भी है। हमारे द्वारा ही उसका विलक्षण सम्बन्ध उसके पानेवाले से है । इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं है। अस्तु, ये विश्वेदेव कई नामों वाले हैं और विभिन्न श्राद्धों में उनका अलग अलग पूजन होता है और श्राद्ध विभाग के उन उन महकमों के अधिकारी वे ही समझे जाते हैं । हां, श्राद्ध का पूरा महकमा 'अग्निष्वात्त' नामक स्थायी पितरों के हाथ में है। इन विश्वेदेवों की उत्पत्ति जानने की विधि भी लिखी है । इसलिये अवश्यमेव जानना चाहिये । कहा जाता है कि दक्ष की विश्वानाम्नी कन्या का विवाह धर्म से होनेपर जो उसके पुत्र हुए वही विश्वेदेव हैं । पिंडपितृयज्ञादि के विश्वदेव क्रतु और दक्ष, नान्दीमुख के सत्य और वसु, पार्वण के पुरूरव और आर्द्रव या आर्द्रवस, नवान्नादि के समय के नैमित्तिक श्राद्ध के नाम और काल और सकाम श्राद्ध में धुरि और लोचन नाम वाले हैं। प्रत्येक श्राद्ध में दो दो विश्वेदेवों के रक्खे जाने का नियम है ।

श्राद्ध दो प्रकार के होते हैं सपात्रक और अपात्रक । जिसमें श्राद्ध के सत्पात्र ब्राह्मण को भोजन करा कर पिंड दान करते हैं उसे सपात्रक और जिसमें विना ब्राह्मण खिलाये ही करते हैं उसे अपात्रक कहते हैं । आजकल प्रायः अपात्रक ही श्राद्ध किये जाते हैं । परन्तु पिंडदान के बाद हजारों मूर्खों और पतितों को ब्राह्मण के नाम पर खिलाते हैं ! यह परिपाटी ठीक नहीं है। श्राद्ध का ब्राह्मण-भोजन तो वही है जो पिंड से पहले हो जाता है। यद्यपि सपात्रक में भी कहीं कहीं पिंड दान के बाद ही भोजन कराने की विधि है। फिर भी न तो ऐसा व्यवहार ही है और न यह सर्वमान्य सिद्धान्त ही है। सभी गृह्यसूत्रकारों ने पहले खिला देने को लिखा है । यदि पीछे खिलाने की भी बात हो तो भी जितने पहले खिलाये जाते उतने हीं खिलाये जावें । न कि आजकल की तरह सहस्रों के झुंड को खिलाना कथमपि उचित है। जो सत्पात्र ब्राह्मण वेद शास्त्र का ज्ञाता और क्रिया ज्ञान हो ऐसे एक को भी खिला देने से काम चल जाता है । प्रत्युत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अधिक खिलाने में पांच दोष लिखे हैं। सो भी सत्पात्र जब अधि
हों तब कुपात्रों और मूर्खों के खिलाने पिलाने में महान् दोष
मनुने यहां तक लिख दिया है कि मूर्खों को जितने ग्रास खिलाये
लोहे के उतने ही जलते पिंड श्राद्धकर्त्ता और पितरों को परलोक
खाने पड़ते हैं ! श्राद्ध में किसे खिलाना चाहिये और किसे दान
चाहिये इसका विचार ६८ पृष्ठ में है। यद्यपि आजकल अपात्रक
की रीति प्रायः सर्वत्र है और समयानुसार पात्रों के न मिलने
यही ठीक भी है। फिर भी पीछे से हजारों के खिलाने की
सत्यानाशकारिणी है। इसे बन्द करना चाहिये और सत्पात्र के
मिलने पर अपने भाई बिरादर और भांजे आदि को खिला
सन्तुष्ट हो जाना चाहिये। केवल ब्राह्मण ही नहीं। किन्तु दूसरे
भी अपने सम्बन्धियों को खिलाकर सन्तुष्ट और पवित्र हो सकते
ऐसी आज्ञा मनु याज्ञवल्क्यादि की है।

अपात्रक श्राद्ध में भी एक बात का नियम है और वह यह है
कुश का ब्राह्मण बनाकर उसे ही ब्राह्मण की जगह रखते और
ही अन्न परोसते हैं। ऐसा कभी नहीं होता कि कुशका भी ब्रा
न बनाया जावे और उसे आसन पर बैठाकर उसके सामने
परोसकर रक्खा ही न जावे। परन्तु दुर्भाग्य से और मूर्खता
आजकल यही होता है ! आजकल के श्राद्ध में तो एकमात्र खि
की ही धुन और प्रधानता रहती है और वास्तविक कर्मपर किसी
भी ध्यान नहीं रहता। होना यही चाहिये कि कुश का ब्राह्मण
कर सभी क्रियायें की जावें और परोसा अन्न पीछे से किसी
ब्राह्मण को दिया जावे, गौ आदि को खिला दिया जावे या पानी
फेंक दिया जावे। यदि कई पिंड देने हों और एक ही ब्राह्मण हो
शेष स्थानों पर कुश का ही ब्राह्मण रहे और विश्वेदेव की जगह
वही रहे। क्योंकि सपात्रक में प्रत्येक पिंड के लिये एक एक
ब्राह्मण चाहिये और विश्वेदेव के लिये भी एक। कारण, कितने
पिंड एक साथ दिये जावें विश्वेदेवों की संख्या तो बढ़ती
चाहे सपात्रक हो या अपात्रक। यदि ब्राह्मण खिलाना हो तो
के साथ ही खिलावे। आगे या पीछे खिलानेके लिये हम उतना
नहीं करते जितना कर्म और सत्पात्र के बारे में करते हैं। बल्कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आग्रह तो अपने भाई बन्धु आदि के ही बारे में है, जैसा कि मनु, याज्ञवल्क्य आदि ने कहा है। परन्तु आज तो हम कहीं कहीं ऐसी मूर्खता देखते हैं कि पिंडदान किसी दिन होता है तो ब्रह्मभोज दूसरे दिन भी कर डालते हैं ! यह है मूर्खता की महिमा। ब्राह्मण भोजन तो श्राद्ध का अंग है। न तो केवल पिंडदान को ही श्राद्ध कहते हैं और न ब्राह्मणभोजन को ही। किन्तु दोनों को मिलाकर और जितना पिंडदान प्रधान है उतना हीं ब्राह्मणभोजन भी प्रधान है। इसी लिये उसके विना भी अपात्रक श्राद्ध हो जाता है और पिंड विना भी कभी कभी श्राद्ध होता है। मगर दूसरे दिन का भोजन तो व्यर्थ ही है। उससे श्राद्ध का कोई सम्बन्ध नहीं है। वस्तुतः जिन ब्राह्मणों को विश्वेदेव, प्रेत और पितर की जगह रखकर पूजते और खिलाते हैं उन्हीं को देव और पितर आदि का स्वरूप मानते हैं और यही लिखा भी है कि पितर और प्रेत का उन्हीं में आवाहन करना चाहिये। वे आकर उन के ही शरीर में उस समय निवास कर जाते हैं। इसी लिये उन ब्राह्मणों को प्रायः देवब्राह्मण, पितृब्राह्मण और प्रेतब्राह्मण भी कहते हैं। जिनके स्थान पर जो रहते हैं वह उसी नाम से कहे जाते हैं।

श्राद्ध और अन्यान्य प्रेतपितृक्रियाओं का मुख्य अधिकारी पुत्र ही है। सो भी औरस पुत्र ही। अतएव यदि उसका उपनयन भी न हुआ तो भी उसे ही करना चाहिये और वेदमंत्रों से ही सब काम वह करेगा। इसमें विशेषता इतनी हीं मानी गई है कि एक वर्ष की अवस्था के पहले वह नहीं कर सकता और एक वर्ष के बाद और तीन वर्ष से पहले यदि चौल न हुआ हो तो केवल दाह करके शेष क्रिया दूसरों से करावेगा। परन्तु यदि चौल हो गया हो या चौल न होने पर भी तीन वर्ष या उससे अधिक का हो तो सभी क्रियायें वैदिक रीति से स्वयं करे। जब पुत्र न हो तो पौत्र और उसके अभाव में प्रपौत्र करे। प्रपौत्र के भी अभाव में दत्तक वा गोद लिया लड़का कर सकता है। परन्तु विना उपनयन के उसका अधिकार नहीं है। जब दत्तक भी न हो तो स्त्री का संस्कार पति करे और पतिका स्त्री करे और पिंडादि दे। परन्तु यदि सौत का पुत्र हो तो वही करे न कि पति। यद्यपि एक जगह रहने और खाने पर भाई ही धनका मालिक होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

फिर भी दाह पिंड आदि क्रियायें पत्नी हीं कर सकती है न
भाई । और अलग रहने पर तो धन भी स्त्री का ही होता है।
स्त्री समर्थ हो तो सभी क्रियायें वैदिक मंत्रों से करे और
आदि के कारण यदि अशक्त हो तो केवल दाह करके शेष कर्म
से करावे । यदि स्त्री भी न हो और दूसरा भाई साथ ही रहता
तो वही करे । मगर यदि वह जुदा हो तो कन्या को ही अधिकार
भाइयों में भी पहले सहोदर और उसके बाद चचेरा या वैमात्र
लड़कियों में भी पहले व्याही का और पीछे विना व्याही का अधि
है । यदि कन्या भी न हो तो कन्या के पुत्र (दौहित्र) को करना चाहि
दौहित्र के अभाव में भाई और उसके बाद उसका पुत्र करे। उस में
पहले सहोदर का और उसके अभाव में दूसरे का । यदि भाई का
भी न हो तो पिता और उसके अभाव में माता करे। माता के न
पर पतोहू, उसके अभाव में बहिन और बहिन के बाद उसका लड़
यदि ये कोई न हों तो चचा और चचा के बाद उसके पुत्र
सपिंड ही करें । यदि सपिंड न हों तो सोदक (समानोदक) करे। पि
वर्ग में सात पुश्तों (पीढ़ियों) तक सपिंड और उसके बाद
कहाते हैं । मगर माता के वर्ग में पांच ही पीढ़ियों तक सपिंड
ते हैं । परन्तु सोदक केवल पिता के वर्ग में ही माने जाते हैं।
लिये पितृवर्ग के सपिंडों के बाद उसी वर्ग के सोदकों का अधि
है और यदि वे भी न हों तो कोई भी सगोत्र (समानगोत्रवा
करे । सगोत्र के बाद मातृवर्ग के सपिंड करें । यदि वे भी न हों
फूआ और मौसी के लड़के करें । उनके अभाव में पिता की मौसी
और मामा के लड़के और उनके न रहने पर माता की मौसी
फूआ वगैरः के पुत्र । जब ये कोई न हों तो शिष्य और शि
अभाव में ससुर का दामाद और दामाद का ससुर करे । इन
न होने पर मित्र और मित्र के अभाव में ब्राह्मण का धन जो ले
वही करे । परन्तु क्षत्रियादि का तो धन ले कर राजा उसी
किसी के द्वारा करावे । लेकिन यदि मरण के समय ब्राह्मणादि
को धर्म पुत्र बना जावें तो वही करे । सगे लड़कों में भी पहले
से जेठे को अधिकार है, उसके बाद क्रम से छोटों का और
सब से छोटे का । यदि किसी कारण से बड़ा न हो तो दाहादि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उससे छोटे कर सकते हैं । परन्तु सपिंडीकरण तो बड़ा ही करे । यदि बड़ा वर्ष दिन तक भी न आ सके तो उस समय छोटा भी सपिंडन कर सकता है । यदि किसी कारण से वर्ष भरतक पुत्रके सिवाय और ने मासिक श्राद्ध और सपिंडन किया हो तो फिर भी पुत्र को करना हीं चाहिये । परन्तु वर्ष बीत चुकने पर यह बात नहीं रहजाती । इसी तरह छोटे लड़के के करने पर भी बड़े को करने की विधि है । परन्तु वर्ष के बाद नहीं । कन्या का विवाह न होने तक पिता संस्कार करे और उसके अभाव में भाई आदि । विवाह होने पर पुत्र, सौत का लड़का, पौत्र, प्रपौत्र, पति, कन्या, दौहित्र, पतिका बड़ा भाई, उसका लड़का, पतोहू, पिता, भाई, भाई का लड़का इत्यादि पूर्वोक्तों का क्रम से अधिकार है । पहले पहले के न होने पर ही बाद वाले कर सकते हैं । यह भी स्मरण रखना चाहिये कि पूर्वप्रदर्शित पूर्व, मध्य, उत्तर इन तीन क्रियाओं में से केवल पूर्व और मध्य क्रियाओं के ही करने का अधिकार सपिंड से लेकर राजा तक के लोगों का है । परन्तु पुत्र, पौत्र, प्रपौत्र, दत्तकादिको तीनों के करने का अधिकार है । और यदि सपिंडादि को भी मृतक का धन मिले तब तो वे भी सभी क्रियायें कर सकते हैं । यदि दौहित्र और उसके लड़के को धन न मिले तो वे भी उत्तर क्रिया नहीं कर सकते । यदि पुत्र के रहने पर अनुपस्थिति में दूसरा दाहादि करे तो भी मध्य क्रिया वही आकर कर ले । यदि मध्य क्रिया भी न कर सके तो उत्तर क्रिया तो अवश्य ही करे । हां, यदि वह न हो तो दूसरे करने वाले ही सब कुछ व्यवस्थानुसार करें ।

श्राद्ध में कुछ विशेष पदार्थों के लाने और देने का निषेध है । फूलोंमें लाल मन्दार, कचनार, धतूर, कनैल, कुंद, मौलसिरी, केवड़ा, किंशुक और साधारणतया सभी लाल फूल या जिनमें ज्यादा गन्ध हो और जो बदसूरत हों, निषिद्ध हैं । कमल का पत्ता भी निषिद्ध है । मगर सूखी भूमिवाले कमलविशेष का, जल वाले कमल का नहीं । इसी तरह पानी के अन्यान्य लाल फूल भी दिये जा सकते हैं । फलों में बैंगन, कुम्हड़ा, लौकी, करौंदा, हरी या लाल मिर्च और पीपर (यदि किसी चीज में मिली तो हर्ज नहीं), लतरा, जम्बीरी और बिजौरा नींबू, पर्वल, जामुन, काली ककड़ी, ये निषिद्ध हैं । शाकों में जल में होने वाले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चौराई, पालकी, पोई, मरसा न लावे । अन्न में मसूर, सफेद तिल, उड़द, मूंग, मक्की, कुलथी, काले अन्न (तिल, मूंग, उड़द के सिवाय), तीसी इनका निषेध है । भैंस, बकरी और भेड़ी का दूध भी निषिद्ध है । नमक केवल खारी निषिद्ध है । सेंधा या सांभर नहीं । यद्यपि इन सबों में कुछ और भी हैं जिनका निषेध है । किन्तु भी यह पुष्प, फलादि प्रसिद्ध हैं । इसी से इन्हें गिना दिया है ।

श्राद्ध के समय कई प्रकार के हैं । पहले तो दिनको साधारणतः ३० दण्ड का मानकर उस के पांच हिस्से किये हैं और उनके नाम क्रमशः यह हैं प्रातःकाल, संगव या पूर्वाह्न, मध्याह्न, अपराह्न और सायाह्न । इन में अलग अलग श्राद्ध लिखे हैं-पूर्वाह्णे दैविकं श्राद्धम्, अपराह्णे तु पार्वणम् । एकोद्दिष्टं तु मध्याह्ने प्रातर्वृद्धि निमित्तकम् ॥ कहीं कहीं 'दैविकं' की जगह 'मातृका' और 'पार्वणम्' की जगह 'पैतृकम्' लिखा है । अन्वष्टकाश्राद्ध पूर्वाह्ण में, पार्वण अपराह्न में, एकोद्दिष्ट मध्याह्न में और वृद्धिश्राद्ध प्रातःकाल किया जावे । पूस, माघ, फाल्गुन और आश्विन की कृष्ण अष्टमी को अष्टका नाम का कर्म होता है, जिसे अष्टकाश्राद्ध भी कहते हैं और उसके बाद नवमी को अन्वष्टकाश्राद्ध होता है । चार अष्टका और चार अन्वष्टका हैं । ३० दण्ड के दिन के १५ मुहूर्त्त माने गये हैं । उन में सातवें, आठवें और नवें को क्रम से गान्धर्व, कुतुप और रौहिण कहते हैं । एकोद्दिष्ट कुतुप और रोहिण में पूरा करे और पार्वण कुतुप से आरम्भ कर १० दण्ड में पूरा करे । प्रातःकाल भी सूर्योदय के बाद के दो दण्ड निषिद्ध हैं । अतः दो दण्ड के बाद वृद्धि श्राद्ध आरम्भ करे । इसी तरह सायाह्न नामक जो ६ दण्ड हैं भी निन्दित हैं । उन्हें राक्षसी वेला कहा है । यह है श्राद्ध काल की साधारण व्यवस्था । मगर ग्रहणादि में रात को भी किये जाते हैं इसी प्रकार यदि पुत्रजन्म रात में ही होवे तो वृद्धि श्राद्ध करना होगा । परन्तु साधारणतया रात में श्राद्ध और दान का निषेध है संक्रान्ति, ग्रहण आदि तो अपवाद हैं । उस समय रात दिन का विचार नहीं होता ।

जिन कुशों में फूल न आजावे वे दर्भ कहाते हैं और फूल आ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पर कुश नाम होता है । उनका फिर भी दो विभाग है । कुतप और तृण ये दो प्रकार उनके और भी हैं । मूल के सहित कुतप और अग्रभाग तोड़ने पर तृण कहाते हैं । पितृकर्म में मोटक होता है और प्रेतकर्म में मोटक नहीं रहता। सीधा कुश रहता है । सपिंडीकरण के बाद मोटक का प्रयोग होता है और उससे पहले सीधे कुशका । सात पत्तों वाला कुश श्राद्ध में उत्तम माना गया है और हरा रहे तो श्रेष्ठ है। इसी लिये श्राद्ध से एक दिन पहले कुश लाने की विधि है । कुश के उखाड़ने का मंत्र यह है—ॐ विरिञ्चिना सहोत्पन्न परमेष्ठिनिसर्गज । नुद सर्वाणि पापानि दर्भ स्वस्तिकरो भव॥ हुं फट् स्वाहा॥ प्रेत और पितृकर्म के लिये कुश उखाड़ने के समय दक्षिणमुख हो जाना चाहिये और जनेऊ को अपसव्य कर लेना चाहिये । देवकार्य में जनेऊ ज्यों का त्यों रहे और पूर्वमुख हो कर उखाड़े । भाद्रपद की अमावास्या को, जिसे कुशोत्पाटनी कहते हैं, जो कुश उखाड़े जाते हैं वे सालभर के लिये होते हैं । वे अशुद्ध नहीं होते । मगर अन्य समय उखाड़े गये तो महीने भर से ज्यादा रह नहीं सकते, अशुद्ध होजाते हैं । परन्तु कुछ लोगों का मत है कि कुश कभी भी अशुद्ध नहीं होता है, सिवाय कुछ अवसरों के । केवल उन्हीं अवसरों पर काम में लाने या वहाँ रहने से अपवित्र होजाता है । वे अवसर यही हैं-जिन दर्भोंपर पिंड दियाजावे, जिनसे पितृतर्पण कियाजावे, जिनमें अपवित्र वस्तु लगजावे, जो रास्ते या श्मशान में हों, जो यज्ञभूमि में फैले हों, जिनका परिस्तरण हुआ हो, जो आसन में लगे हों, ब्रह्मयज्ञ के समय जिनका प्रयोग हुआ हो, और जिन्हें लेकर मलमूत्र त्याग किया हो वे ही कुश अशुद्ध होते हैं । मलमूत्र के समय भी यदि यज्ञोपवीत या नीवी (पृ० ५५) में लगा ले तो अशुद्ध नहीं होते । कुश के अभाव में काश आदि से भी काम चला जाता है । इसका विचार ५६ पृष्ठ में है । एकोद्दिष्ट में, प्रेतकार्य में तथा पितृकार्य में तीन से कम कुश एक बार काम में न लावे । और कामों में तो मूलसहित कुश चाहिये । मगर पितरों के पिंड के लिये जड़के निकट ही तोडे गये कुश रहें । एक ही बार हाथ में पकड़कर जड़ के निकट तोड़ने का यत्न करने पर जितने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

एकबार टूटजावें वही एक बार एक पिंड के नीचे रक्खे जावें मगर स्मरण रहे कि तीन से कम नहीं रहें । ऐसे ही कुशों को सकृदाच्छिन्न और उपमूललून कहते हैं। मूल के समीप से और प्राय यही है कि उन की जड़ें या उनके रेशे न उन्हें । मगर जहाँ से निकलते हैं वह तो अवश्य रहे । पिंड के कुश बहुत बड़े भी न हों चाहिएं । किन्तु गौ के कान के बराबर अर्थात् अंगूठे के सिरे से लेकर अनामिका के सिरे तक की लंबाई की नाप के बराबर रहें । यही उत्तम हैं । श्राद्ध में कुतप संज्ञा आठ पदार्थों की है । वे मध्यान्ह, खड्गमृग (गैंड़े) की सींग का बर्त्तन, नेपाली कम्बल, चांदी कुश, तिल, गौ और दौहित्र । दौहित्र का अर्थ है कपिला गौ का और लड़की का लड़का । गौ का दूध, गंगाजल, रेशम का वस्त्र, तिल, दौहित्र और कुतप ये श्राद्ध के लिये अत्यन्त प्रशस्त माने हैं । श्राद्ध भूमि और श्राद्धवेदी दक्षिण ओर ढालू रहे । जंगल प्रदेश, तुलसी के निकट की भूमि, गंगा या अन्य नदियों का और खुली जगह श्राद्ध के लिये ठीक है । परन्तु पर्दे से या जैसे घेर कर एकान्त बना लेना चाहिये और ऐसा कर लेना चाहिये कुत्ता, बिल्ली और कौवा वगैरः न जा सकें । बहुतों की दृष्टि न पड़ सके । परन्तु सर्वदा स्मरण रखना चाहिये कि दूसरे की में या तो श्राद्ध करे ही नहीं और यदि करे भी तो उस भूमि के स्वामी के पितरों को पहले ही एक पिंड दे डाले । नहीं तो वे विघ्न करते और श्राद्ध का फल भी उस भूमि के स्वामी को ही होता है ।

प्रसंगवश श्राद्ध के विषय में एक बात यह भी स्मरण रखने है । आश्विन कृष्ण पक्ष में, जिसे पितृपक्ष भी कहते हैं, निरन्तर १५ दिनों तक श्राद्ध और तर्पण करना चाहिये । यह तर्पण नित्य तर्पण के सिवाय है । यदि १५ दिनों तक न करसके तो पंचमी ही शुरू करे । यदि विवश होकर उस में भी असमर्थ हो तो दशमी से ही करे और यदि इन तीनों में कोई भी न कर सके तो जिस के मरण की तिथि पर ही अवश्य श्राद्ध करे और यदि वह भूल गई हो तो अमावास्या को ही करे । परन्तु यह आवश्यक कि पितृपक्ष श्राद्ध शून्य नहीं रहने पावे । पितृपक्ष को ही महालय भी कहते हैं । इसमें भी यदि त्रयोदशी को मघा नक्षत्र आ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो गजच्छाया योग कहाता है। उस दिन श्राद्ध का विशेष माहात्म्य है। कहीं कहीं पितृपक्ष की त्रयोदशी और चतुर्दशी को श्राद्ध का निषेध है। उनमें जो त्रयोदशी गजच्छाया से भिन्न हो उसीका निषेध है। एक बात और है। कहीं कहीं जो मघायुक्त त्रयोदशी का भी निषेध है वह पार्वण के लिये नहीं है। केवल एकोद्दिष्ट या केवल पितृवर्ग के श्राद्ध के लिये है। चतुर्दशी का निषेध भी केवल उनके श्राद्ध का है जो बाण आदि अस्त्र से मरे हों। परन्तु जिन की मृत्यु शस्त्र से हुई हो या विष आदि के कारण जो अपमृत्यु से मरे हों उनके लिये भी उसी दिन (चतुर्दशी को ही) श्राद्ध करने की विधि है। परन्तु यदि पिता शस्त्रादि से मरा हो तो चतुर्दशी को भी उसका पार्वण न कर एकोद्दिष्ट ही करना चाहिये। इसी तरह पितामह और प्रपितामहका भी करे। परन्तु अन्य दिन तो सभी का पार्वण ही करे। पितृपक्ष में कहीं कहीं सोलह पिंडोंकी बात लिखी है। परन्तु उसके पन्द्रह दिनों में १६ पिंड कैसे होंगे ऐसा विचार कर तीन मत स्थिर किये गये हैं। एक कहता है कि भादों की पूर्णिमा से ही आरंभ करके १६ दिन तक करने पर सोलह पिंड हो जायंगे। दूसरा है कि कदाचित् तिथि के बढ़ जाने से १६ दिन हो जायंगे। भादों की पूर्णिमा पितृपक्ष में नहीं आसकती। तीसरे का कहना है कि पूर्णिमा भादों की न हो, आश्विनशुक्ल की प्रदिपदा ही सही। उसे मिलाकर सोलह दिनों में सोलह पिंड दिये जावें। इन में तीसरे ही पक्ष को अधिक प्रामाणिक मानते हैं। फिर भी पहले और तीसरे के अनुसार ही गया में या और जगह पिंड दान की परिपाटी पाई जाती है।

अब श्राद्ध के सम्बन्ध में एक ही बात और रहजाती है जो अत्यन्त आवश्यक है और जिसके विना कर्म में बाधा भी पहुंच सकती है। वह है इस बात का निर्णय कि किसके साथ किसका सपिंडन होना चाहिये। बात तो यह है कि साधारणतया पिता का सपिंडन पितामह आदि तीन के साथ होता है और स्त्री (माता) का पितामही आदि तीन के साथ। मगर इसमें भी बहुत सी गड़बड़ी है और कभी कभी ऐसा हो जाता है कि पिता के रहते ही पुत्र मरजाता है और कभी कभी पिता पितामह के भी रहते। कहीं कहीं ऐसा भी लेख है कि स्त्री का भी सपिंडन पति के साथ ही होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ऐसी दशा में माता का सपिंडन किसके साथ कियाजावे, यदि पि
की मृत्यु के बाद माता मरे और यदि उससे पहले ही मरजावे
इसी तरह की और भी गड़बड़ी है । अतएव कुछ मार्ग
आवश्यक है । साधारण नियम तो यही है कि पुरुष का सपि
उसके पिता, पितामह और प्रपितामह के साथ, एवं स्त्री का पिता
प्रपितामही और वृद्धप्रपितामही के साथ कियाजावे । परन्तु
बात तब होती है जब मृतक नर के पहले पिता आदि या नाती
पहले पितामही आदि मर चुकी हों और दोनों का सपिंडन
पुत्र हो या नाती हो । तात्पर्य यह है कि पुरुष वर्ग के साथ
का और स्त्री वर्ग के साथ स्त्री का करे । पुरुषवर्ग में पिता, पि
मह, प्रपितामह और स्त्रीवर्ग में उन की स्त्रियां हैं । मगर यह
हम पुत्र के ही सम्बन्ध से देते हैं और पिता का अर्थ है मृतक
पिता या पुत्र का पितामह । इसलिये माता के मरने पर
पति की माता यानी पुत्र की पितामही से ही स्त्रीवर्ग शुरू होता
हां, माता के मरण में दो पक्ष और भी हैं । एक यह है कि यदि
के बाद माता मरे तो उसी के साथ माता का सपिंडन
चाहिये । दूसरा यह है कि यदि पुत्र सपिंडन कर्त्ता न हो
दौहित्र हो तो मातामह के साथ ही सपिंडन करना चाहि
परन्तु यदि मातामह मर चुके हों तभी । लेकिन यदि इन दो
को न भी मानकर पहले की ही बात मानें तो कोई हर्ज नहीं
क्योंकि वही सिद्धान्त प्रायः सबका है । यह दो बातें तो कहीं
मिलती हैं । पिता के साथ सती होजाने पर तो पिता के सा
सपिंडन सभी मानते हैं । परन्तु पार्वण तो जब कभी होगा
पितामही आदि के साथही होगा । उसमें मतभेद नहीं
किसी का मत है कि यदि पुत्र, सौतेला पुत्र और पति इन
कोई करने वाला न हो तो स्त्री का सपिंडन होता ही नहीं
के साथ यदि माता भी चिता में जलकर सती हो जावे तो
के ही साथ सपिंडन लिखा है । उसके विषय में दो रीतियां हैं
एक यह है कि पहले पिता के पिंड को पितामहादि तीनों के
मिलाकर फिर माता का पिंड भी उन्हीं तीनों के साथ मि
क्योंकि सपिंडन का अर्थ ही यही है कि प्रेत का पिंड और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पितामहादि के अर्घ्य और पिंड में मिला दिये जाते हैं। दूसरे लोगों का कहना है कि ऐसा करने से पिता के साथ सपिंडन कहां हुआ? इसलिये पहले माता का पिंड पिता के साथ मिलाले। पीछे से पिता का पितामहादि के साथ मिलावे। यही पक्ष ठीक भी है। बहुतों का तो कहना है कि सती होने पर या एक ही दिन मरने पर स्त्री का सपिंडन होता नहीं। पति के सपिंडन से ही स्त्री का भी काम चल जाता है। परन्तु यह भी परिपाटी नहीं है। कोई कोई ब्रह्मचारियों, विना लड़केवालों और उलटा मरनेवालों का भी सपिंडन नहीं मानते। परन्तु यह भी शिष्टाचार के विपरीत है। उलटा मरने का अर्थ है पिता के जीते ही पुत्र का मरजाना आदि।

इसी तरह यदि पिता तो मर गया मगर पितामह या प्रपितामह जीते हों। या माता के मरजाने पर भी पितामही और प्रपितामही जीती हों तो जो जीता हो उसी के पिता से लेकर तीन के साथ पिता का और उसी की माता से लेकर तीन के साथ माता का सपिंडन करना चाहिये। इसी तरह यदि पुत्र मर गया हो और पिता आदि जीते हों तो जो ही जीते हों उन्हीं के पिता आदि के साथ सपिंडन करदेना चाहिये। बहुत जगह ऐसा लिखा है कि यदि माता, पिता या पति के सिवाय और लोग उलटे मरें तो उनका सपिंडन होता ही नहीं। केवल पिता या माता का मरण पितामह या पितामही से पहले हुआ हो तभी सपिंडन होगा। इसीतरह यदि स्त्री के रहते पति मर जावे, और ससुर जीता हो तो भी सपिंडन होगा। इससे स्पष्ट है कि यदि पुत्र का संस्कार पिता को करना पड़े तो उसका सपिंडन नहीं होगा। यही निर्णय सबने किया है। हां, यदि स्त्री और पुत्र करने वाले हों तब तो होगा ही। क्योंकि पिता, माता और पति का तो होता ही है। एक बात और भी है। पिता के मरने पर और पितामह के जिन्दा रहने पर जब पिताका प्रपितामह के साथ सपिंडन हो गया और उसके बाद पितामह भी मरजावे तो फिर उसके साथ सपिंडन न होगा। मगर यदि सपिंडन होने से पहले ही और पिता के बाद पितामहादि मरजावें तब तो पहले पितामहादि का सपिंडन करके फिर उन्हीं के साथ पिता का सपिंडन करना चाहिये। नकि पहले मरने के कारण पिता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

का ही पहले सपिंडन भी हो जायगा । इसी तरह प्रपिता
से पहले पितामह के मरने में भी समझना चाहिये । मा
और पितामही आदि स्त्रियों के सम्बन्ध में भी पुरुष
ही तरह करना चाहिये। अर्थात् पहले पितामही आदि का करके
माता इत्यादि का । परन्तु यदि पिता की मृत्यु के बाद पितामह
प्रपितामह मरगये और उनके मुख्य अधिकारी पुत्र कहीं दूर होने
समयपर न आसके तो तीनों या दोनों का (जैसी मृत्यु हो) एकादश
करके पितामह आदि का सपिंडन छोड़दे और पिता का उन्हीं के
सपिंडन कर लेवे । परन्तु यदि उनके लड़के न हों तब तो उनके
प्रपौत्रादि पहले उनकाही सपिंडन करके पीछे उन्हीं के साथ
पिता का करें। एक बात और है। यदि पितामहादिके एक ही पुत्र
और उसके पहले मरजाने पर पौत्रादिको श्राद्ध करना पड़े तो सपि
तकही आवश्यक है। वार्षिक श्राद्ध करे या न करे। यदि पिता के
के बीचमेंही पुत्र मरजावे तो उसका लड़का पहले उस पुत्र (
पिता) की क्रियायें पूरी करके पीछे से उसके पिता (अपने पिता
की सम्पूर्ण क्रिया शुरूसेही करे । सम्पूर्ण से मतलब दशगात्र श्रा
दि से है । परन्तु यदि पिता के मरनेपर पुत्र रोगादि से अशक्त
और अपने पुत्र (मृतक के पौत्र) को ही आज्ञा दे कि तुम्हीं करो
उसने आरंभ भी कर दिया । इसी बीच में यदि पिता मर भी
तब भी पहले पितामह की क्रिया करके पीछे से पिता की करे
यही बात प्रपितामहादि के सम्बन्ध में जान लेना चाहिये। पि
में पिता माता के जीवित रहने पर भी पितामहादि का पार्वण
चाहिये । हां, गया श्राद्ध के लिये तो तभी जाया जाता है जब
मर जाता है। तीर्थयात्रा के लिये जाने पर तो कोई हर्ज नहीं है
वहाँ भी पितामहादिका पार्वण करदेना ही चाहिये ।

सोलह श्राद्ध या षोडशी के बारे में बड़ी गड़बड़ी है । कि
किसी ने यह माना है कि प्रत्येक मासिक श्राद्ध महीने के पूरे होने
ज्योंहीं मरण तिथि दूसरे मासके आरंभ में आजावे त्योंहीं
लेना चाहिये । परन्तु सर्वसम्मत सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक मा
आरंभ मेंहीं मरण तिथि को मासिक श्राद्ध होना चाहिये ।
प्रथम मासिक में तो यह बात असंभव है। क्योंकि उस दिन तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का आशौच रहता है। तथापि उसके ही लिये एकादशाह को प्रथम मासिक करडालते हैं। तात्पर्य यह है कि एकादशाह को पहला एकोद्दिष्ट कर चुकनेपर फिर दूसरा भी करते हैं और वही प्रथम मासिक माना जाता है। पहला एकोद्दिष्ट तो महैकोद्दिष्ट कहलाता है और वह सोलहों से निराला ही है। परन्तु दूसरा एकोद्दिष्ट सोलहों में पहला माना जाता है। इसके बाद द्वादशाह को ऊनमासिक करके फिर महीना पूरा होनेपर दूसरे के शुरूमें द्वितीय मासिक और इसी-तरह आगे भी तृतीय मासिक आदि करते हैं। जो सपिंडीकरण को भी सोलह मेंहीं मानलेते हैं उनके यहां वार्षिक श्राद्ध अलग नहीं होता। किन्तु सपिंडनहीं वार्षिक का भी काम देता है। परन्तु स्मरण रहे कि यह बात वर्ष के अन्त में सपिंडन करने के पक्ष की है। यदि द्वादशाह कोही सपिंडन करलेंगे तब तो वर्ष के अन्तहोनेपर दूसरे वर्ष के पहले दिन मरण तिथि को, जिस दिन सपिंडन करते हैं, वार्षिक श्राद्ध करेंगेही। जो सपिंडन को सोलह से अलग मानते हैं उनके लिये भी बात तो यही है। उन्हें भी सपिंडन और वार्षिक एकही साथ करना होगा। हां, वे सोलह पूरा करने के लिये त्रैपाक्षिक श्राद्ध डेढ़महीने पर मरण तिथि कोही करते हैं। छ और बारह महीने के पूरे होने से पहले ऊनषाण्मासिक और ऊनद्वादश मासिक वा ऊनवार्षिक तो दोनों कोही करना पड़ता है और ऊनमासिक द्वादशाह कोही हो जाता है। परन्तु यह भी नियम है कि जो ऊन श्राद्ध एक, छ या बारह महीने से पहले होते हैं उन्हें यातो एक, छ या बारह महीने पूरे होने पर जो पहली मरण तिथि आती है और जिस में द्वितीय मासिक, सप्तम मासिक और वार्षिक या सपिंडन करते हैं उससे पहले दिन करलेना चाहिये। या दो, तीन और दस दिन पहले भी करलेते हैं। दृष्टान्तार्थ यदि कृष्णपक्ष की एकादशी को मरा हो तो ऊन श्राद्ध कृष्ण दशमी, नवमी, अष्टमी या पतिपदा को होगा। ऊन श्राद्ध में यह भी विचार है कि वह प्रतिपदा, षष्ठी, एकादशी, चतुर्दशी, चन्द्रोदय सहित अमावास्या (सिनीवाली) तिथि, कृत्तिका नक्षत्र, शुक्रवार, त्रिपुष्कर और द्विपुष्कर योग, भद्रा, वैधृति, व्यतीपात और परिघ योग में न किया जावे। द्वितीया, सप्तमी, द्वादशी में से कोई तिथि, सूर्य, शनि, मंगल में से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कोई वार और विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा, पु
कृत्तिका, उत्तराषाढ़ा में से कोई नक्षत्र, यदि ये तीनों एक दिन
जावें तो त्रिपुष्कर और इन्हीं दिनों और तिथियों के साथ
चित्रा, मृगशिरा में कोई नक्षत्र एक दिन पड़ जावें तो द्विपुष्कर
होता है। इनका साधारण फल यह माना गया है कि त्रिपुष्क
जो काम होजाता है वह तीन बार होता है और द्विपुष्कर का दो
इसीसे इनमें मृत्यु और चोरी होने में शान्ति कराई जाती है।
प्रकार षोडशी वाले श्राद्धों के नाम यह हैं, प्रथम मासिक, ऊन
क, द्वितीयमासिक, त्रैपाक्षिक, तृतीयमा०, चतुर्थमासि०, पञ्च
षष्ठमासिक या षाण्मासिक, ऊनषाण्मासिक, सप्तम०, अ
नवम०, दशम० एकादश०, द्वादश०, ऊनवार्षिक। किसी के
त्रैपाक्षिक निकालकर उसकी जगह सपिंडीकरण रखदेना चा
प्रायः सामवेदियों की ही यह परिपाटी है और यजुर्वेदियों के
पहली रीति है। परन्तु फिर भी यह बात दोनों वेद वालों के
है। अधिमास होनेपर १७ और न्यून मास होनेपर १५ ही होते

आशौच संकर भी विचारणीय है। साधारण नियम यही
ब्राह्मण के सपिंड को दसदिन और सो (समानो) दक को तीन
आशौच होता है। यह नियम जन्म और मरण दोनों में स
है। जन्मे या मरे से सातवीं पीढ़ीतक पिता के और पांच
माता के कुल में जितने भी हों वह सपिंड कहाते हैं। इसके
पिता के कुल में जहाँतक के किसी भी पुरुष के जन्म और
याद हो सके वहाँतक सोदक वा समानोद कहाते हैं। गिनती
या मरे हुए सेही होती है। परन्तु पुत्र वा पुत्री यदि नामकरण से
हीं मरजावे तो स्नान मात्र सेही शुद्धि हो जाती है। उस
और दाँत निकालने से पहलेही मरनेपर यदि दाह करें तो एक
में और न करें तो स्नानमात्र सेही पवित्र हो जाते हैं। दाँत
पर प्रथम वर्ष मेंहीं मुण्डन हो जाने से प्रथम हीं मरने पर एक
और एक वर्ष के बाद मुण्डन हो जानेपर तीन वर्ष पर्यन्त
तीन दिन में और कन्या का तो वाग्दान से पहले मुण्डन
तक स्नान मात्र सेही और मुण्डन के बाद एक दिन में आशौच
त्त होजाता है। परन्तु इतनी विशेषता और भी है कि वाग्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहले कन्या की सापडता तीनहीं पीढ़ीतक मानी जाती है। यदि पुत्र का मुण्डन तीन वर्षतक भी न हुआ हो तो एकही दिन का आशौच होता है। तीन वर्ष के बाद तो मुण्डन हो या न हो, उपनयन तक तीन दिन का आशौच होता है और उपनयन के बाद दस दिन का। वाग्दान के बाद और विवाह से पहले कन्या का आशौच पिता और पति-दोनों के कुलमें तीन दिनों का लगता है और विवाह हो जानेपर केवल पति कुल को ही दसदिन का आशौच होता है। दांत निकलने के बाद से तीन वर्ष तक तो दाह करना न करना अपनी इच्छापर है। पर बाद को तो करना हीं होगा। दो वर्ष से कम अवस्थावाले को न जलाकर शुद्ध भूमि में गाड़देना हीं अच्छा है। परन्तु गंगाजल में डालदेने के लिये तो किसी की मनाही नहीं है। जिसे चाहें फेंक सकते हैं और कोढ़ी को तो जलाने में पाप है। उसे या तो गाड़दे या जलमें डालदे। रस्वला, सूतिका और गर्भिणी के भी मरने पर जलाना ठीक नहीं है। यदि जलावे तो प्रायश्चित्त करना होता है और उसकी विशेष विधि भी है। रजस्वला का तो संस्कार भी नहींकरते हैं।

सभी आशौच मालूम होनेपर ही होते हैं। न मालूम होनेपर जननाशौच तो नाल काटने के बादही लगता है। परन्तु मरणाशौच में दो व्यवस्थायें हैं। यदि मरने वाला अग्निहोत्री हो तब तो दाह के बाद से ही उसका आशौच लगता है। मगर जो ऐसा न हो, निरग्निक हो, तो उसका आशौच मरण समय सेही होता है। आशौच में एक बात और भी है। वह दो प्रकार का होता है। एक तो स्पर्श की अयोग्यता, जिसके कारण आशौचवाले को छूना न चाहिये। दूसरी कर्म की अयोग्यता, जिससे वह नित्य नैमित्तिकादि कर्म कर नहीं सकता। मरण में यह दोनोंहीं माने जाते हैं। न तो आशौचवाले को छूनाहीं चाहिये और न वह कर्महीं कर सकता है। परन्तु जन्म में तो माता को दोनों प्रकार का होता है सही। फिर भी उसके सिवाय जितने हैं उन्हें छूने में कोई हर्ज नहीं है। विशेषता इतनी हीं है कि पिता तो स्नान कर लेने पर छूने योग्य होता है। मगर और लोगों को स्नान की भी आवश्यकता नहीं है। परन्तु कर्म के अनधिकारी तो दस दिन तक सभी सपिंडवाले ब्राह्मण रहेंगे। जो सपिंड विदेश में हो और दशाह के बाद और एक वर्ष के भीतर जन्म या मरण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

का पता जाने वह शरीर के वस्त्रों के सहित स्न।न कर लेने छूने योग्य तो हो ही जाता है। मगर कर्म का अनधिकारी तीन दि तक रहता है। एक वर्ष के बाद समाचार पाने पर तो केवल स्न करने सेही शुद्ध हो जाता है। गर्भपात होने में दो मत हैं। एक कि जितने महीने का गर्भ हो उतनेहीं दिनों तक केवल स्त्री अप रहती है। दूसरा यह, कि तीन महीने से पहले के गर्भ के लिये बात नहीं है। किन्तु तीन से लेकर छ मास वाले तकके ही लिये छठें के बाद तो पूरा आशौच लगता है। रजस्वला स्त्री तीन तक अशुद्ध रहती है और चौथे दिन स्नान कर लेने पर वह योग्य होती है।

यह तो साधारणतः आशौच की बात हुई। उसके संकर विचार भी अपेक्षित है। समान, असमान, सजातीय, विजातीय, तरह चार प्रकार का आशौच होता है। इनमें यदि दो या दो से अ एक साथ या आगे पीछे, मगर पहले की निवृत्ति के पहलेही जावें तो उसे आशौच संकर कहते हैं। जैसा कि पहले कह चु आशौच एक, तीन, दस आदि दिनों के होते हैं। इसलिये आशौचों की दिन संख्या बराबर हो वे समान और जिनकी ब न हो वे असमान कहाते हैं। इसी तरह जन्म सम्बन्धी सभी आ परस्पर सजातीय और मरण सम्बन्धी भी परस्पर सजातीय हैं। समान का अर्थ है बराबर और सजातीय का अर्थ एक के। मरण और जन्म परस्पर विजातीय हैं। सजातीय आशौच यह नियम है कि यदि अधिक दिन वाले के भीतर उसका सम बराबर या कम दिनवाला आजावे तो पहले सेही उसकी निवृत्ति हो जाती है। उसका अलग आशौच नहीं होता। यदि पहला कम दिन वाला हो और उसी के मध्यमें अधिक वाला हो जावे तो अधिक दिनवाले की निवृत्ति सेही कम दिन पहला भी निवृत्त होता है, नकि पहले से ही। विजातीय का नियम है कि चाहे जन्म के बाद उसके भीतर ही मरण हो जा मरण के भीतर जन्म, हर हालत में मरणाशौच की निवृत्ति जन्म के आशौच की भी निवृत्ति होती है। इसमें यह भी नहीं जाता है कि मरण का आशौच जननाशौच के समान है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दिन का । परन्तु माता और पिता के मरणाशौच के संकर में मिताक्षराकारने लिखा है कि यदि माता के मरने के बाद बीच मेंहीं पिता मर जावे तो पिता केही आशौच की निवृत्ति से माता का आशौच निवृत्त होता है । परन्तु पिता के मरण के बाद माता के मरने पर पिता का आशौच बिताकर उसके बाद के दो दिन और उनके बीच की रात बिताने से शुद्ध होते हैं । सारांश, यदि प्रतिपदा को पिता मरा हो और उसके बाद और दशमी के पहले ही माता मरी हो तो पिता का आशौच यद्यपि दशमी तकही रहेगा और एकादशी को नहीं । फिर भी माता का आशौच द्वादशी की शाम को सूर्यास्त के बाद निवृत्त होगा । यद्यपि मनु और याज्ञवल्क्यादि के अनुसार जन्म से दस दिनों के भीतर यदि जन्म या मरण के भीतर मरण हो जावे तो पहले सेही दूसरे की भी निवृत्ति होती है । तथापि दस दिन के भीतर का अर्थ है नवें दिन की रात के तीन पहर तक । इसलिये यदि उस समय तक या उससे पहले कोई आशौच आजावे तो पहले सेही उसकी निवृत्ति होगी । यही बौधायनने प्रथम प्रश्न के पांचवें अध्याय में लिखा है । परन्तु नवीं रात के तीन पहर के बाद से दसवें दिन की शाम तक दूसरे आशौच के होने पर पहले के पूरा होने के दो दिन बाद दूसरे की शुद्धि होती है और दसवें दिन की शाम से तीन पहर रात तक यदि दूसरा होवे तो पहले के बाद तीन दिन और बिताकर शुद्ध हो जाते हैं । रात को संस्कृत में त्रियामा कहते हैं । इसीलिये रात के तीन पहर तक ही पहला दिन माना जाता है । इसीलिये दसवीं रात के तीन पहर बीतने पर चौथे पहर में यदि कोई दूसरा मरे या जन्म लेवे तो उसका पूरा आशौच माना जाता है । यह बात गौतम, वसिष्ठ और शातातप आदि स्मृतियों की है ।

दस दिन मेंही ब्राह्मण का आशौच निवृत्त होता है और क्षत्रिय का १२ दिन में, वैश्य का १५ दिन और शूद्र का महीने भर में । आशौच के अन्तिम दिनहीं गांव से बाहर जाकर दाढ़ी, मूंछ, केश और नख कटवाना और स्नान कर कपड़े बदलना चाहिये, नकि पहले या बाद भी । और एकादशाह को (ग्यारहवें दिन) ब्राह्मण पहला श्राद्ध करे, नकि उससे पहले या बाद, जैसा कि आजकल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मूर्खतावश प्रायः देखा जाता है । क्षत्रिय १३ वें, वैश्य १६ वें
शूद्र ३१ वें दिन करे ।

आधी धनिष्ठा बीत जाने पर पंचक होता है, जिसे धनिष्ठा
भी कहते हैं । उसमें मरने पर पांच मृत्युयें घर में होने की संभा
शीघ्र या वर्ष के भीतरही की जाती है । इसी तरह त्रिपुष्कर
में तीन की और द्विपुष्कर में दो की । इसीलिये उसकी शान्ति
जाती है । पञ्चक में पांच, त्रिपुष्कर में तीन और द्विपुष्कर
पुतले बनाकर मृतक के साथ ही जलाते हैं और आशौच के अ
शान्ति करते हैं । इसकी विधि आगे लिखेंगे । यहाँ पर इतना
लेना चाहिये कि यदि पञ्चक के आरंभ होने से पहलेही मरने पर
पञ्चक मेंही दाह संस्कार की नौबत आजावे तो केवल पुतले
देने सेही काम होजाता है, शान्ति नहीं कीजाती । इसी तरह
के अन्त में मरने पर यदि उसक बाद अश्विनी में दाह करें तो
की आवश्यकता नहीं । केवल शान्ति ही की जाती है । मगर
मेंहीं मरने और उसी में जलाने पर तो दोनोंही करने होते हैं ।
श्मशान जाकर वहाँ से मृतक जीकर लौट आवे तब भी शान्ति
है । यदि किसी की मृत्यु सर्प के काटने और डूबकर मरजाने
से हो तो उसे दुर्मृत्यु कहते हैं । इसके लिये भी प्रायश्चित्त
हैं । नारायण बलि भी की जाती है । उसकी विधि आगे लिखेंगे

१—मरणसमय और उसके बाद ।

इस प्रकार अन्त्येष्टि कर्म पर विशेष प्रकाश डालने के बाद
सेही दोनों वेदों की उसकी विधि कहते हैं । जब पुरुष का
का अन्तकाल निकट आजावे तो उसके द्वारा या उसके अ
असमर्थ हो जाने पर पुत्रादि स्वयं वैतरणी धेनु दान करे । यद्यपि
धेनु और ऋणधेनु आदि अनेक प्रकार की धेनुओं के दान लि
और साधारणतः सब पापों की निवृत्ति और कल्याण की प्राप्ति
लिये और भी धेनु दान की विधि है । परन्तु ऐसे धेनु दान की
आगे लिखेंगे । यहां केवल वैतरणी धेनु का दान लिखते हैं ।
वैतरणी धेनु के दान से पहले दशदान नामक दान किये जा
जिन में दस चीजों का दान लिखा है । यदि संभव हो तो दश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहले कृच्छ्र, चान्द्रायण, गायत्री के जपादि के द्वारा साधारण प्रायश्चित्त भी कर ले। यदि कोई और प्रायश्चित्त न भी होसके तो शिव विष्णुके नाम का संकीर्त्तन हीं करे। वत्ससहित गौ का ही दान करे। यदि असमर्थ हो तो केवल गौ का ही। पहले यथासंभव स्नान करा नया वस्त्र पहना कर मरणासन्न को दक्षिण ओर सिर और उत्तर पाँव कर के सुला दे। यदि वह बैठ सके तो और भी अच्छा। इसके बाद संकल्प करे-ॐ अद्येह अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे मम यमपुरीमार्गस्थघोरवैतरणीनद्युत्तारणार्थं गोदानममुकशर्म्माहं करिष्ये तत्पूर्वं यथाशक्ति महादानानि च करिष्ये तदुभयांगतया ब्राह्मणस्य वरणं पूजनं गोश्च पूजनं करिष्ये॥ इसके बाद पहले ब्राह्मण का पांव धोवे और उसका वरण ७४ आदि पृष्ठोक्त रीति से करे। अन्त के संकल्प में 'यथाशक्तिमहादानगोदानप्रतिग्रहार्थं' ऐसा कह दे और वरण के बाद प्रार्थना करे-ॐ विष्णुरूप द्विजश्रेष्ठ भूदेव द्विज पावन। तर्त्तु वैतरणीमेतां कृष्णां गां प्रददाम्यहम्॥ जो कुछ देना हो उस चीज की भी पूजा कर ली जाती है। इसके बाद यदि भूमि देनी हो तो यह मंत्र पढ़कर दान करे-ॐ सर्वभूताश्रया भूमिर्वराहेण समुद्धृता। अनन्तशस्यफलदा अतः शान्तिं प्रयच्छ मे। ॐ तत्सन्नमम॥ तिल दान का मंत्र-ॐ महर्षेर्गोत्रसंभूताः काश्यपस्य तिलाः स्मृताः। तस्मादेषां प्रदानेन मम पापं व्यपोहतु। ॐ तत्सन्नमम॥ सोना-ॐ हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमरूपं विभावसोः। अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। ॐ तत्सन्नमम॥ घी-ॐ कामधेनुषु संभूतं सर्वक्रतुषु संस्थितम्। देवानामाज्यमाहारमतः शान्तिं प्रयच्छ मे॥ ॐ तत्सन्नमम॥ वस्त्र-ॐ शर-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

णं सर्वलोकानां लज्जाया रक्षणं परम्। सुवेषधा
त्वमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। ॐ तत्सन्नमम ॥ धान-ॐ
देवमयं धान्यं सर्वोत्पत्तिकरम्मतम्। प्राणिनां जीवने
यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। ॐ तत्सन्नमम ॥ गुड़-ॐ
रसानां प्रवरः सदैवेक्षुरसो मतः। मम तस्मात्प
क्ष्मीं ददस्व गुड सर्वदा। ॐ तत्सन्नमम॥ चांदी-ॐ
र्यतः पितॄणां च विष्णुशंकरयोः सदा। शिवनेत्र
रौप्यमतः शांतिं प्रयच्छ मे ॥ ॐ तत्सन्नमम ॥
ॐ यस्मादत्र रसाः सर्वे नोत्कृष्टा लवणं विना। य
प्रीतिकरं नित्यमतः शान्तिं प्रयच्छ मे। ॐ तत्सन्न

इसके बाद गोदान करे। यदि पहले के ये दान न कर सके
गोदान के बाद वाला तिलादि का दान अवश्य करे। वे अष्ट म
कहाते हैं। पहले गौ की पूजा करे। तदर्थ पहले गौ को अपने
पूर्वमुख खड़ा करे और यदि बछड़ा हो तो उससे उत्तर उसे
इसके बाद हाथ में अक्षत और फूल लेकर गौ का आवाहन

ॐ आवाहयाम्यहं देवीं गां त्रैलोक्यमातरम्।
स्मरणमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते। ॐ भूर्भुवः स
रिहागच्छ इहातिष्ठ ॥ इसे पढ़ कर अक्षत फूल उसपर
फिर—ॐ भूर्भुवः स्वः गवे नमः पाद्यम्, अर्घ्यम्,
मनीयम्, स्नानम् समर्पयामि—इत्यादि रीति से स्नान
करा दे। यदि बछड़ा भी हो तो 'सवत्सायै गवे' ऐसा
पढ़े। इसके बाद फिर (अगले पांव पर) जल दे—ॐ भूर्भुव
रग्रपादाभ्यां नमः ॥ (मुंह)—ॐ गोरास्यायनमः॥
ॐ गोशृंगाभ्यांनम ॥ (पूंछ)-ॐ गोपुच्छायनमः॥
पांव)-ॐ गोपश्चात्पादाभ्यां नमः ॥ (पीठ)-ॐ गो
नमः ॥ (यदि बछड़ा हो तो)-ॐ गोवत्सायनमः॥

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाम मंत्रों से स्नान करावे । 'भूर्भुवःस्वः' तो सब में लगाले । अथवा शुरू में ही एक बार कहले । फिर-ॐ भूर्भुवः स्वः गवेनमः सवत्सायै गवेनमः) से पुष्प, धूप, दीप आदि से पूजा करके गोग्रास रूप नैवेद्य दे और प्रार्थना करे-ॐ धेनुके त्वं प्रतीक्षस्व-यमद्वारे महापथे । उत्तितीर्षुरहं देवि वैतरण्यै नमोऽस्तुते ॥ फिर सप्तधान रख कर हाथ में कुश, जल, अक्षत और दक्षिणा द्रव्य लेकर और गौ की पूंछ पकड़ कर संकल्प करे-ॐ अद्य वैतरणीसन्तरणार्थमिमांगां रुद्रदैवतां कृष्णवस्त्ररक्तमाल्याद्यलंकृतांयथाशक्तिदक्षिणासप्तधान्ययुतांयथानामगोत्राय तुभ्यमहं संप्रददे । ॐ उष्णेवर्षतिशीते वामारुते वाति वर्षति । दुर्गतारयते यस्मात्तस्माद्वैतरणी स्मृता ॥ यमद्वारे महाघोरे घोरा वैतरणी नदी । तां तर्तुकामो यच्छामि कृष्णां वैतरणीं तु गाम् ॥ ॐ तत्सन्नमम ॥ इतना पढ़कर उत्तरमुख स्थित ब्राह्मण को कुशादि सहित गौ की पूंछ पकड़ा दे । दान के समय भरसक काले वस्त्र और लाल माला से गौ को अलंकृत कर देना चाहिये । गौ काली हो तो ठीक है । नहीं तो दूसरी भी दी जा सकती है । यदि गौ न मिल सके तो उसके मूल्य का द्रव्य भी देना चाहिये और संकल्प में 'गोनिष्क्रयं यथाशक्तिद्रव्यं दक्षिणासहितम्' ऐसा पढ़ देना चाहिये । देने पर ब्राह्मण इस मंत्र से उसकी पूंछ पकड़ ले-ॐ देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि ॐ स्वस्ति ॥ और पूंछ पकड़ने के बाद यदि यजमान यजुर्वेदी हो तो वह ब्राह्मण मंत्र पढ़े-ॐ कोऽदात्कस्मा अदात्कामोऽदात्कामायादात् कामोदाता कामः प्रतिग्रहीताकामैतत्ते ॥ परन्तु यदि सामवेदी हो तो-ॐ कइमां कस्मा अदात्कामः कामायादात् कामो दाता कामः प्रतिग्रहीता कामः समुद्रमाविशत्का-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मेन त्वा प्रतिगृह्णामि कामैतत्ते—यह मंत्र पढ़े। इस को दानस्तुति कहते हैं। कहीं कहीं गोदान या उसके निष्क्रयदान के दक्षिणा दान का अलग संकल्प करते हैं। परन्तु हमने को एकही बार कर दिया है। ऐसी भी रीति पद्धतियों में पाई जाती यदि खामखाह अलग ही करना हो तो पहले संकल्प में "गो क्तिदक्षिणा" पद निकाल देना चाहिये और दूसरे ल्प में—ॐ अद्याऽनुष्ठितगोदानप्रतिष्ठार्थमिमां यथा दक्षिणां तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम—ऐसा कह चाहिये। फिर ब्राह्मण गौकी पूंछ में जल लगाकर उससे यजमान अभिषेक करे—ॐ स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति न विश्ववेदाः। स्वस्तिनस्तार्क्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति वृहस्पतिर्दधातु॥ इसके बाद यजमान धेनु और ब्राह्मण को कर गौ की प्रदक्षिणा करे—ॐ गावो मे अग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः। गावो मे पार्श्वतः सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम्॥ फिर गौ के पीछे दो एक पग जाकर आगे के श्लोकों को ॐ गावोमामुपतिष्ठन्तु हेमशृंग्यः पयोमुचः। सुरभ्यो सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा॥ १॥ गा वै पश्यन्ति नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा। गावोऽस्माकं वयं गावो यतोगावस्ततोवयम्॥ २॥ एवं रात्रौ दिवापीदं विषमेषु च। महाभयेषु च नरः कीर्त्तयन्मुच्यते भयात्॥ इसके बाद भूयसी दक्षिणा का संकल्प करे—ॐ अद्येहानुष्ठितगो न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थमिमां भूयसीं दक्षिणां नामगोत्रजनेभ्यो विभज्य दातुमहमुत्सृजे ॐ तत्सन्न फिर उसे बांटकर—ओं कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा त्मनावानुसृतस्वभावात्। करोमि यद्यत्सकलं नारायणायेति समर्पयामि तत्—इसको पढ़कर गोद

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ईश्वरार्पण करे और आचमन करके—ओं यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ ॐ अच्युताय नमः—इत्यादि विष्णुस्मरण करे । यदि गोदान के बाद तिल, लोहा, सोना, कपास, नमक और सप्तधान्य (पृ० ५३. का दान करना चाहे तो दक्षिणा सहित उनका संकल्प करे—ॐ अद्येह यथाशक्ति तिलादीनि अष्टमहादानपदार्थानि सदक्षिणानि तत्तत्फलाप्तये यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय (नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो वा) अमुकशर्म्माहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ फिर पूर्वोक्त मंत्रों को पढ़कर अलग अलग दे देवे । अथवा इसी संकल्प के बाद ही सभी को एक ही साथ स्पर्श करके दे देवे । तब भूयसी दक्षिणादानादि पूर्वोक्त काम करे । कहीं कहीं यह भी लिखा है कि वैतरणी के स्थान में एक गढ़ा खोदकर उसे जलसे भरना चाहिये और उसमें श्रम से बाँध कर ऊख की नाव डालकर उसपर १६ सेर कपास की पर्वताकार राशि बनावे और उसी के ऊपर कपड़े से ढँककर घी का पात्र रक्खे । उसपर सोने की यमराज की मूर्ति बनाकर और उसके हाथ में लोहे का दण्ड पकड़ाकर स्थापित करे । उसी नौका पर सप्तधान्य सहित गौ को रखकर दान करना चाहिये । यदि संभव हो तो ऐसा करे और यदि कुछ न कर सके तो सप्तधान्य और दक्षिणा के सहित गौ का संकल्प करके उसे ही दान कर दे । साधारण रीति से ही गौ का पूजन भी कर दे । ऊपर लिखी विशेष पूजा और अन्त की स्तुति आदि की भी आवश्यकता नहीं है । स्वस्थ समय के गोदान में इसे करना आवश्यक है और जहाँतक हो सके वैतरणी धेनुदानमें भी करे ।

इसके बाद मरणासन्न जानकर गोमूत्र, गोबर, गंगादि के और गौ के जल से उसे स्नान कराकर शुद्ध वस्त्र पहनावे; गोबर लीपी भूमि पर दक्षिण ओर अग्र करके कुश बिछाकर उसपर जल डालदे और तुलसी का पत्ता एवं शालिग्राम की मूर्त्ति निकट रखकर उसे उन्हीं कुशों पर, यदि सामवेदी हो तो दक्षिण ओर सिर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

करके और यजुर्वेदी का पूर्व या उत्तर करके, सुलादे। उसके शरीर में घी लगादे और चन्दन पोतकर सम्पूर्ण शरीर पर डालदे। यजुर्वेदी लोग केवल मुख में सोना डालते हैं और वेदी लोग कुछ नहीं डालते। पुरुषसूक्तका पाठ भी करना चाहिये। इसके बाद मरजाने पर फिर से क्षौरपूर्वक स्नान कराके समस्त देह में चन्दन लगाकर पुष्पादि से विभूषित करे। कान और आंख के दोनों छिद्रों में छ और मुख में सातवां सुवर्ण टुकड़ा डाल दे। वस्त्र भी नया पहनावे। यदि सोना न हो सके तो घी का बून्द ही डाले। फिर सामवेदी को दक्षिण यजुर्वेदी को पूर्व सिर करके दाह भूमि में लेजाते हैं। श्मशान में ले जा कर ही वहीं मृतक को नहलाकर ऊपर की क्रियायें की जानी चाहियें। जिस जल से मृतक को स्नान जावे उस जल का अभिमंत्रण और उसी में तीर्थों का नये घड़े में उसे लाकर इस प्रकार करना चाहिये-ओं गया च तीर्थानि ये च पुण्याः शिलोच्चयाः। कुरुक्षेत्रं च च यमुना च सरिद्वरा ॥१॥ कौशिकी चन्द्रभागा च पापप्रणाशिनी। भद्रावकाशा सरयू गंडकी च तथा ॥ २ ॥ वैणवं च वराहं च तीर्थं पिंडारकं च पृथिव्यां यानि तीर्थानि चत्वारः सागरास्तथा ॥३॥ करनेवाला स्वयं स्नान के उपरान्त नवीन वस्त्र पहनकर इस को पढ़ता हुआ उस जल में तीर्थों का ध्यान करे और इसी मृतक को विधिवत् नहलावे। यदि पूर्वही नहला लिया हो तो उसपर कुश से छिड़के। किसी ने मध्य मार्ग में ही शव को कराने को लिखा है। इस से ठीक यही है कि श्मशान में ही वहीं यह काम करे। अस्तु, ब्राह्मण मृतक को शूद्र न छूवे और लकड़ी आदि ही श्मशान तक लेजावे। यह बात सामर्थ्य के ही लिये है। उत्तम तो यही है कि अपने हीं वर्ग के और अपने हीं पुत्रादि लेजावें। मृतक के साथ ही मिट्टी के कलश में तिल और पिंड के लिये कच्चा अन्न जौ का आटा आदि अग्नि, कुश के साथ वहां जावे। सामवेदी रास्ते में

ajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मृतक को रखकर, पिंड के कच्चे अन्न में से आधा लेकर, दक्षिणमुख अपसव्य होकर, आगे की भूमि को साफ करके, बायां घुटना टेक और भूमि पर दक्षिणाग्र तीन कुश रखकर उसपर पहले तिलमिश्रित जल दे-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत अत्रावनेनिक्ष्व-यह मन्त्र पढ़के । फिर आधे कच्चे अन्नको लेकर-अद्यामुकगोत्रअमुकप्रेतएषतेपिंडः-यह पढ़ कर उसी कुश पर कच्चा अन्न या उसका पिंड रखदे । पुनः दूसरा तिल जल लेकर उस पर प्रत्यवनेजन दे-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेतात्रप्रत्यवनेनिक्ष्व ॥ सभी चीज पितृतीर्थ से ही दे । उसके बाद श्मशानभूमि में जाकर मृतक को रखने से पहले ही किसी पवित्र भूमि में बैठकर शेष आधे कच्चे अन्न का पिंड पूर्व रीति से ही दे।

परन्तु यजुर्वेदियों के पिंड की रीति दूसरे ढंग की है। घर में जहां मृतक हो वहीं मृतक से दक्षिण ओर दक्षिण मुख बैठ कर संस्कार करनेवाले से पहले पिंड दिलाकर पीछे वहां से मृतक को उठवाते हैं । फिर द्वार में भी पिंड देते हैं। मरणस्थान पर दक्षिण ओर बैठकर दक्षिण मुख अपसव्य होकर और हाथ में कुश तिल जल लेकर संकल्प करे-अद्य अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्त्या उत्तमलोकप्राप्त्यर्थमौर्ध्वदेहिकं करिष्ये ॥ फिर दक्षिणाग्र तीन कुश लीपी हुई भूमि पर रख कर-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत अत्रावनेनिक्ष्व तवोपतिष्ठताम्-इस मंत्र से उसी पर पितृतीर्थ से तिल जल गिरावे और जौ आदि के कच्चे आटे का पिंड बनाकर उसे हाथ में लेकर-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत मृतिस्थाने शवनिमित्तो ब्रह्मदैवतो वा एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्-इससे वहां एक पिंड दे और फिर तिल युक्त जल लेकर-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्-से प्रत्यवनेजन उसी पिंड पर दे । इसके उपरान्त मृतक के वस्त्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

में वह पिंड बाँधकर मृतक को उठवावे और घर के द्वार पर लाकर उसे या तो वहाँ रख कर या ऊपर ही लिये हुए पूर्ववत् कुश बिछाकर उसी रीति से अवनेजन देकर दूसरा पिंड हाथ में ले और—**अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत द्वारदेशे पान्थनिमित्तो विष्णुदैवतो वा एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्**—पढ़कर वह पिंड रख दे और पूर्ववत् ही प्रत्यवनेजन दे। इसके बाद सभी सिर के बाल खोलकर और अपसव्य होकर मिट्टी के बर्तन में आग और पिंड का सामान लेकर श्मशान रवाना होजावें। जब कहीं चौराहा आजावे तो मृतक वहीं रखकर खेचर निमित्तक तीसरा पिंड पूर्ववत् दे। कुश बिछाकर अवनेजन पूर्ववत् दे और पिंड लेकर—**अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत खेचरनिमित्त एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्**—पढ़ कर पिंड दे और प्रत्यवनेजन पूर्ववत् ही देकर घर और श्मशान के बीच में पहुंचकर वहां पर मृतक को रख दें। पूर्व की ही तरह कुश पर अवनेजन देकर—**अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत विश्रान्तौ भूतनाम्ना रुद्रदैवतो वा एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्**—इससे पिंड देकर वैसा ही प्रत्यवनेजन दे। इस प्रकार शव निमित्त, पान्थ निमित्त, खेचर निमित्त और विश्राम निमित्त चार पिंडों को देकर श्मशान में पहुँचते हैं और पवित्र भूमि में धीरे से मृतक को रखकर जहाँ चिता बनानी हो वहाँ वायुनिमित्तक पाँचवाँ पिंड पूर्ववत् देते हैं। तीन कुश और अवनेजन प्रत्यवनेजन भी यहाँ पूर्व की तरह देते हैं। केवल पिंड के देने में—**अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत चितास्थाने वायुनिमित्तको यमदैवतो वा एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्**—पढ़ते हैं। यही विशेषता यजुर्वेदियों की है।

इसके बाद चिता की भूमि खोद और उसपर पानी डालकर उसे शुद्ध करके गौ के गोबर से उसे पोते और गंगा आदि तीर्थों का ध्यान कर उस भूमि पर कुश तिल डालकर चन्दन श्रीफल आदि यज्ञिय काष्ठों की एक चिता उत्तर दक्षिण लम्बी बनावे। भूमि में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अरा दक्षिण ओर ढालू बनाना चाहिये। चिता बनाकर उस पर चुपचाप जल छिड़के और उसी पर वस्त्र सहित मृतक को दक्षिण ओर सिर, उत्तर ओर पांव करके और उतान करके रख दे। यह बात सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों की है। किसी किसीने सामवेदी पुरुष को नीचे मुख और स्त्री को ऊपर मुख करके चिता पर रखने को लिखा है। परन्तु अन्यान्य पद्धतियों में दोनों वेदों के स्त्री पुरुषों को चिता पर उतान हीं रखने को लिखा है और सिर दक्षिण हीं करने की विधि है। न जाने क्यों बहुत जगह और पद्धतियों में भी मृतक को उत्तर सिर करके ही रखने की चाल है और लिख भी डाला है। उत्तर सिरहाना करने की रीति समझ में नहीं आती और न प्रामाणिक ही प्रतीत होती है। प्रामाणिक ग्रन्थों में ऐसा नहीं लिखा है। इसके बाद संस्कार करने वाला पुत्र या अन्य स्नान करके हाथ में बहुतसा तृण लेकर उसे जला ले और शीघ्र प्रदक्षिणा करके दक्षिण मुख होकर मंत्र पढ़े—**कृत्वा सुदुष्करं कर्म जानता वाप्यजनता। मृत्युकालवशं प्राप्तं नरं पञ्चत्वमागतम् ॥ १ ॥ धर्माधर्मसमायुक्तं लोभमोहसमावृतम्। दहेयं सर्वगात्राणि दिव्याँल्लोकान्स गच्छतु ॥ २ ॥** और मंत्र के अन्त में सिर के दक्षिण भाग में वह अग्नि दे कर इस तरह अग्नि की प्रार्थना करे—**त्वं भूतकृज्जगद्योने त्वं लोकपरिपालकः। उक्तः संहारकस्तस्मादेनं स्वर्गं मृतं नय॥** फिर अधजला होने पर हाथ में सात लकड़ियाँ १०-१० अंगुल की लेकर चिताकी सात प्रदक्षिणा करे और हर बार लकड़ी या काठ से मृतक के सिर पर मारकर एक एक लकड़ी चिता में—**कव्यादाय नमस्तुभ्यम्**—इस मंत्र को पढ़कर डालता जावे। इसके बाद कहीं कहीं लिखा है कि दक्षिण मुख होकर चिता में एक आहुति भी तिलमिश्रित घी से दे। उसका मंत्र यह है—**अस्मात्त्वमधिजातोऽसि त्वदयं जायतां पुनः। असौ स्वर्गाय लोकाय स्वाहा ज्वलतु पावके ॥** इसके उपरान्त सभी वहां से रवाना हो जावें और चिता की ओर कोई न देखे। छोटे आगे, बड़े पीछे पीछे जलाशय के समीप जावें और रास्ते में यमगाथा

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इस तरह गावें-अहरहर्नयमानो गामश्वं पुरुषं पशुम् । वैवस्वतो न तृप्यति सुरापइवदुर्मतिः ॥ जलाशय के निकट जाकर समीपस्थित साले या दूसरे से कहें कि-उदकं कारिष्यामहे ॥ वह उत्तर दे-कुरुध्वं माचैवं पुनरित्यशतवर्षे प्रेते कुरुध्वमेवेतरस्मिन् ॥ तब सभी जल में प्रवेश कर अपसव्य होजावें और बांयें हाथ की अनामिका से सभी-अप नः शोशुचदघम्-इस मंत्र से जल को दक्षिण ओर चलाकर दक्षिण मुख होकर वस्त्र सहित एकबार स्नान करें और शरीर न मलें। तीर पर आकर आचमन कर जल मेंहीं, पत्थर या पवित्र भूमि पर ही जहां संभव हो, दक्षिणाग्र तीन कुश बिछाकर उसीपर तिलांजलि दें। तिलांजलि देने के समय अपसव्य होकर बायां घुटना टेक दें और दक्षिण मुख होकर दोनों हाथ की अंजली में दक्षिणाग्र कुश और तिल जल रखलें और यदि यजुर्वेदी हों तो-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत एष तिलतोयाञ्जलिस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्-यह पढ़कर और सामवेदी-अद्यामुकगोत्राम् अमुकनामानं प्रेतं तर्पयामि-इसे पढ़कर पितृतीर्थ से एक, तीन या दस अंजलियां जैसे परम्परा हो, प्रेतका स्मरण कर, दें। इसमें किसी का विषेश विचार नहीं है। जितने स्त्री पुरुष वहां हों सभी देवें। केवल नपुंसक, पतित पुरुष और पात तथा गर्भ को मारनेवाली स्त्रियाँ हीं नहीं दे सकतीं। इसके बाद सव्य होकर एवं फिर नहाकर दूसरा वस्त्र पहन और शिखा बांध आचमन करके जलाशय के निकटही कोमल घासों पर बैठकर मित्र लोग संसार की अनित्यता की चर्चा द्वारा शोक को इस प्रकार दूर करें-मा शोकं कुरुतानित्ये सर्वस्मिन्प्राणधर्मिणि। धर्मं कुरुत यत्नेन योवः सहगमिष्यति॥१॥ मानुष्ये कदलीस्तम्भनिस्सारे सारमार्गणम् । यः करोति स संमूढो जलबुद्बुदसन्निभे ॥ २ ॥ गन्त्री वसुमती नाशमुदधिर्दैवतानि च। फेनप्रख्यः कथं नाशं मर्त्यलोको

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त यास्यति ॥ ३ ॥ पञ्चधा संभृतः कायो यदि पञ्चत्व-मागतः । कर्मभिः स्वशरीरोत्थैस्तत्र का परिदेवना ॥४॥ सर्वेक्षयान्तानिचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः । संयोगा वि-प्रयोगान्ता मरणान्तं हि जीवितम् ॥ ५ ॥ इसके बाद फिर सिर नीचे करके इधर उधर न देखते हुए घर को रवाना होजावें और वही यमगाथा रास्ते में फिर गावें—अहरहर्नयमानो गामश्वं पुरुषं पशुम् । वैवस्वतो न तृप्यति सुराप इव दुर्मतिः ॥ यदि रात को दाह क्रिया हो तो सूर्योदय होनेपर और दिन में हो तो अस्त होनेपर घर आवें । परन्तु आवश्यक होनेपर ब्राह्मण की आज्ञा से कभी भी आसकते हैं । दिन में मरा दिन मेहीं और रात का मृतक रातमेंही जलादिया जावे और जलाने के समय समूचा न जलाकर कुछ शेष रक्खा जावे । यदि रात का दिन में और दिन का रात में जलाया जावे तो वह मृतक बासी (पर्युषित) कहाता है और ऐसे को जलाने की मनाही की गई है । उसके द्वारपर आकर हाथ पाव धोवें, नीम का पत्ता खाकर आचमन करें और लोहा, पत्थर, एवं अग्नि छूकर मंत्र पढ़ें—शमी पापं शमयतु अश्मेव स्थिरो भूयामग्निर्वः शर्म यच्छतु ॥ फिर गोबर, बैल, दूब, सरसों, और वर्षा का जल छू कर जरा घी खावें और पत्थर पर पांव देकर जावें । सपिंड के सिवाय जितने लोग हों वे तो इतने से ही शुद्ध होजाते हैं । केवल सपिंडों को ही आशौच लगता है । मगर यदि उनके साथ दूसरे भी खा पी लेवें तो उनको भी उसी तरह आशौच लगता है । मृतक के भाई बन्धुओंको दस-दिन तक ब्रह्मचारी रहना, भूमिमें सोना, तेल आदि न लगाना और खीर, पूआ, उड़द आदि न खाकर केवल एकही जौ या धान आदिअन्न एकही बार तीसरे पहर खाना चाहिये । रात को भोजन न करें । एक दिन या तीन दिन उपवास करें । भोजन के समय भोजन कर लेने पर जूठे अन्न को हाथ में लेकर—अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत एतद् भक्तं तवोपतिष्ठताम्—पढ़कर भूमि में गिरा दें । कहीं कहीं भोजन से पहले ही यह करने को लिखा है । सपिंडों को तीन दिन तक ही

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इन नियमों का पालन करना चाहिये । परन्तु पुत्रादि को तो दस दिन तक निरन्तर यही करना चाहिये ।

यदि मृतक का शरीर न मिले तो उसकी हड्डियाँ मिलने पर उनमें घी लगाकर और उन्हें वस्त्र से आच्छादित कर पूर्वोक्त रीति से ही दाह क्रिया करे और शेष कर्म भी ज्यों का त्यों करे । यदि अस्थि भी न मिलसके तो उसके लिये पर्णशरदाह करते हैं । पहले संकल्प करे- **अद्येह विदेशमृतस्य विधिवद्दहनार्थं पलाशैर्दर्भैर्वा पुरुषाकृतिं करिष्ये ॥** फिर पवित्र भूमि पर पहले उत्तर दक्षिण काला मृगचर्म बिछाकर उस पर मूंज का एक कंडा उत्तर दक्षिण उसके बीच में रख दे । तब उसके विभिन्न स्थानों पर नीचे लिखी रीति के अनुसार पलाश के पत्ते उनमें लगे डंठलों के साथही, या कुश ही बिछावे । सिर की जगह ४०, गले में १०, प्रत्येक बाहु में ५०, हाथ की अंगुलियों में १० अर्थात् हरेक के लिये एक एक, छाती में २०, पेट में ३०, मूत्रस्थान में ४, अण्डकोश में ६, दहिनी बाईं जंघा में ५०-५०, जंघा से पांव तक दोनों में १५-१५, पांव की अंगुलियों में १०, इस प्रकार ३६० कुशों या पलाश के पत्तों की सहायता से और जंघा एवं हाथ की जगह और भी मूंज के कंडे लगाकर और उनके हाथ कते सूत से सब को लपेटकर बांधे । फिर जौ का कच्चा आटा पानी में सानकर ऊपर से लपेटे और उसके ऊपर शुद्ध मृतिका लपेट कर पुरुषाकार या स्त्री का आकार तैयार करे । स्त्री के बनाने में मूत्र स्थान पर ही १० कुश या पत्ते लगावे । फिर पञ्चगव्य और पञ्चामृत से उसे स्नान करा दे, उसमें प्राण के प्रवेश की भावना करके जल से स्नान करावे, चन्दन लगाकर वस्त्र पहनावे और उसमें मृतक का ध्यान कर और विधिवत् आदमी की ही तरह जलाकर उसकी समस्त क्रियायें करे । मगर इस शरपर्ण-दाह में तीन दिन का ही आशौच लगता है । जिसप्रकार केवल अग्निहोत्री और केवल वेदज्ञाता को भी तीनहीं दिन लगता है । परन्तु दोनों सम्पादन करने वाले को-वेदज्ञाता और अग्निहोत्री दोनों होने पर-एक ही दिन और साधारण ब्राह्मण को दस दिन आशौच होता है ।

आशौच भर दसों दिन या जैसा हो, कुल मिलाकर १० पिंड देते हैं । परन्तु तिलांजलि प्रतिदिन एक एक बढ़ती जाती है । यदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहले दिन एक हो तो दूसरे दिन दो इत्यादि । इसी तरह किसी दोना या पात्र में तिल जल रखकर पहले दिन पिंड के साथही एक, दूसरे दिन दो, इत्यादि तिलांजलि कीही तरह तिजलपात्र दिया जाता है। यदि तीन दिन का आशौच होतो पहले दिन एक, दूसरे दिन चार और तीसरे दिन ५ पिंड दे और उसी हिसाब से तिलाञ्जलि और तिलजलपात्र भी दे। यदि एकही दिन का आशौच हो तो उसी दिन सभी करडाले। बहुत लोग दस दिन में भी ऐसा करते हैं कि तीसरे दिन तीन, चौथे दिन चार और दसवें दिन तीन पिंड देते हैं। आजकल तो कहीं कहीं ऐसी भी रीति है कि सातवें दिन सात और दसवें दिन तीन पिंड देते हैं। कहीं कहीं ऐसा भी लिखा है कि तीन दिन के आशौच में पहले दिन तीन, दूसरे दिन चार और तीसरे दिन तीन पिंड दे। जहां जैसी रीति हो करे । तात्पर्य यह है कि १० पिंड पूरे होजावें और उसी हिसाब से ५५ तिलांजलियां और ५५ हीं तिलजलपात्र भी पूरे होजावें। इसलिये पिंडों केही हिसाब से तिलांजलियां और तिल-जलपात्र बढ़ाये जावें । ऐसा न हो कि कभी उनकी संख्या घटजावे तो फिर कभी बढ़कर फिर घट जावे । जितने पिंड होते जावें उतनी हीं संख्या तिलांजलि आदि की भी क्रम से बढ़ती जावे। यह भी नियम है कि दशगात्र (दशाह) के पिंडों का आरंभ जो करता है उसेही दसों पिंड देने होते हैं और जिस वस्तु से पहला पिंड दिया जावे उसीसे शेष पिंड भी दस दिन तक दिये जावें । ऐसा न हो कि प्रतिदिन पिंड की वस्तु बदलती रहे । हां, दशाह के बाद एकादशाह को चाहे जिस चीज का पिंड दे सकते हैं । उस दिन से बदलने में कोई हर्ज नहीं है। यह भी नियम है कि जहां एक दिन पिंड दिया जावे वहीं दसों दिन का दिया जावे। जिस चीज के पात्र में एक दिन श्राद्ध के लिये चरु आदि का पाक बनाया जावे उसीके पात्र में दस दिन तक और पिंडदान की भूमि पर हीं दस दिन तक तिल के तेल से दीपक का दान भी कराया जाता है। यह पिंडदान भरसक ऐसी जगह हो कि वहीं कोई पीपल का वृक्ष भी रहे। उसी वृक्ष की डाल में पहले ही दिन शाम को एक घड़ा मूंज की रस्सीमें बांधकर टांगते और प्रतिदिन उसमें चुपचाप जल भर दिया करते हैं । उसकी पेंदी में बारीक सूराख रहता है जिससे पानी दिनभर चूता रहता है। यह घड़ा

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Funding by IKS-MoE-Grant-iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कभी खाली नहीं रहना चाहिये । इसीलिये प्रति दिन नियमितरूप से उसमें ठीक समय पर जल भरना चाहिये । बहुत जगह घर के द्वार पर ही दीपक जलाने की चाल है । बहुत लोग श्मशान और चौराहे पर भी दीपक जलाया करते हैं । इसमें कोई सिद्धान्त नहीं है कि यहीं करे । जैसी परंपरा जहां हो उसी तरह वहां हीं जलावे ।

यह तो पहलेही कह चुके हैं कि जो अग्निहोत्री न हो उसका आशौच तो मरणदिन सेही लगता है । परन्तु दशगात्र पिंड आदि की क्रियायें तो दाह के बाद ही होती हैं । इसलिये जिस दिन दाह क्रिया हो उस दिन ही पीपल के वृक्ष में घट टांगा जाता है और उसी दिन से सभी क्रिया का आरंभ होता है । यद्यपि पिंडदान, तिलांजलि और तिलजलपात्र मध्यान्ह में ही दिये जाते हैं । क्योंकि एकोद्दिष्ट श्राद्ध का काल मध्यान्हहीं है और उसी के बाद तिलांजलि आदि देने को पद्धतियों में लिखा है और यद्यपि इसके विपरीत भी तिलांजलि देने की परिपाटी पड़ गई है । फिर भी दशगात्र के पिंडों की विधि में प्रतिदिन कुछ न कुछ अन्तर है और उस अन्तर को लिख देना आवश्यक है । इसीलिये दसों पिंडों की विधि एक जगह ही लिखेंगे । और इसीलिये पहले पीपल में घट बाँधने आदि की विधिहो लिख देना ठीक है । क्योंकि वह सदा के लिये एकही है । दाहके दिन शाम को स्नान कर एक घड़े की पेंदी में बारीक सूराख करके उसे मूंज की रस्सी में बाँधे और किसी पीपल के पेड़ में लटका कर उसमें आगे लिखे मंत्र से तिलयुक्त जल भर दे । इसमें जल भरने की चाल कहीं दस दिन है और कहीं यह घट टांगने का काम किया ही नहीं जाता है । इसके बाद दरवाजे पर गोबर से लीप कर दो त्रिकाष्ठिका (तिकठी) बनाते हैं । यह ठीक उसी तरह की होती जैसी शिवलिंग पर जलधारा के लिये घड़ा रखने को बनाई जाती है । दोनों को उत्तर दक्षिण रखकर कच्चे बर्त्तन में एक पर जल और दूसरे पर दूध रखते और उसी के समीप में फूल, माला और तिल के तेल वा घी का दीपक भी रखते हैं । पहले अपसव्य होकर दक्षिण मुख वायां घुटना टेककर संकल्प करे—अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्याप्यायनार्थं तापोपशमनार्थं च आकाशे मृण्मयपात्रे क्षीरोदकयोर्निधानं करिष्ये ॥ इसके बाद एक कच्चे मिट्टी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के बर्त्तन में जल और दूसरे में दूध रखकर दोनों तिकठियों पर रख दे और उन्हीं पर फूल माला रखकर पढ़े—श्मशानानलदग्धोऽसि परित्यक्तोऽसिबान्धवैः । इदं नीरमिदं क्षीरमत्र स्नाहि इदं पिब ॥ फिर जल पात्र छूकर पढ़े—अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत अनेन जलेन स्नाहि ॥ फिर दूधको छूकर कहे—अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत इदं क्षीरं पिब ॥ माला को छूकर कहे-अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत इदं माल्यं परिधेहि ॥ अन्त में दीपक को स्पर्श कर कहे—अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत यममार्गानुसंतरणघोरांधकारनिवारणकामः तिलतैलबोधितवर्तिसंयुक्त एष दीपः प्रज्वालितस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ घट बांधने और उसमें जल देने का मंत्र—अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत एष त्वद्गताध्वश्रमनिवर्त्तक आशौचांतदिनपर्यन्तमश्वत्थशाखावलम्बितः सतिलजलपूर्णो घटो मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ घट के समीप ही दीपदान प्रतिदिन करे । उसका मंत्र—अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत आशौचान्तदिनपर्यन्तं यममार्गानुसंतरण घोरांधकारनिवारणकामः पिप्पलसमीपे एषते दीपो मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ यमद्वारे महाघोरे अन्धेन तमसावृते । तत्रावलोकनार्थाय दीपोऽयमुपतिष्ठताम् ॥ द्वारका दीपक तो दूध और जल का साथी है । यदि वह तीन दिन तक ही रहे तो दीपक भी उतने हीं दिन तक रहता है । परन्तु कहीं कहीं केवल द्वारपर ही दीप जलाने की परिपाटी है । यदि ऐसा हो तो पीपल वाले दीपक को ही वहां जलावे और वही वाक्य पढ़े । केलल 'पिप्पलसमीपे' यह पद निकाल दे । मगर भरसक पीपल के ही निकट जलावे ।

अस्थिसञ्चय की भी विधि है । जैसा कि कह चुके हैं, मृतक का कोई अंश विना जलाये छोड़ देना चाहिये । बस, उसी को किसी

Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Courtesy: Shri Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पात्र में रख कर भूमि में गाड़ देने को अस्थिसञ्चय या चयन कहते हैं । ब्राह्मण का चौथे दिन, क्षत्रिय का पांचवें, वैश्य का नवें और शूद्र का दसवें दिन अस्थिचयन होता है । नहीं तो पहले, तीसरे, सातवें दिन में किसी दिन या पहले ही दिन सभी का हो जाना चाहिये। यदि तीन दिन का हो तो दूसरे दिन और एक दिन के आशौच में तो उसी समय कर लेना चाहिये । परन्तु आजकल तो बहुत जगह, विशेष कर नदी के तट वाले, उसी दिन नदी में बहा देते हैं । अस्तु, अस्थिसञ्चय निमित्तक एकोद्दिष्ट श्राद्ध यजुर्वेदी करते हैं । परन्तु सामवेदी तो यद्यपि दूसरे या तीसरे ही दिन संचय करते हैं और असंभव होने पर पहले दिन भी । मगर श्राद्ध नहीं करते । अतः पहले उनकी संक्षिप्त विधि लिख कर तब यजुर्वेदियों की विस्तृत विधि लिखेंगे । दाहकर्त्ता अस्थिचयन के दिन गौ का दूध और घी, शमी या पलाश की दो टहनियां (छोटी और पतली शाखायें) सुगन्धित चन्दन, पवित्र जल, पवित्र मृत्तिका, दो घड़े या और पात्र जिनमें अस्थि रक्खी जावे, कुश, तिल और हाथकता सूत लेकर श्मशान के पास जावे । पहले स्नानादि करके पवित्र होकर आचमन करे और चिता के निकट जाकर दक्षिण मुख अपसव्य होकर बायां घुटना टेक कर संकल्प करे—अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तये दाहजनिततापोपशांतयेऽस्थिसञ्चयनं करिष्ये ।

फिर गौ के दूध को सभी अस्थियों (हड्डियों) पर चिता में ही डालकर उन्हें भिंगावे, चुपचाप शमी या पलाश की शाखाओं से सभी हड्डियां एक एक करके राख से अलग करे और उनपर गौ का घी डालकर चन्दन मिश्रित जल से उन्हें अच्छीतरह भिंगावे । इसके अनन्तर सब को नवीन मृत्तिका के एक पात्र में रख कर ऊपर से दूसरे पात्र से ढक दे । तब हाथ कते सूत से दोनों पात्रों को अच्छीतरह बांधदे, जिससे एक दूसरे से अलग न हो सकें । और किसी शुद्ध भूमि में गढ़ा खोद कर, दक्षिणमुख अपसव्य होकर, उसमें अस्थि के पात्र रखकर और चारों ओर से मिट्टी देकर उनके ऊपर सिवार मिली गीली मिट्टी दे और सब के ऊपर दूसरी मिट्टी देकर बराबर कर दे । इसके बाद चिता के पास आकर उसकी समूची राख जल में डालकर उस भूमि को गौ के गोबर से लीप दे । याद गंगा में भी हड्डियां डालना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हों तो पूर्व की क्रिया करके गाड़ने की जगह गंगा में हीं उन्हें डाल दे। यदि घड़ा न मिल सके तो गीली मिट्टी के ही भीतर अस्थि रख ले। गंगा में डालने के समय दक्षिण ओर देखता हुआ-**नमोऽस्तुधर्माय-** कह कर गंगा के जल में जावे और-**स मे प्रीयताम्**-कह कर जल में डाल दे। फिर स्नान कर डाले।

यजुर्वेदी लोग तो एकोद्दिष्ट भी करते हैं। यह श्राद्ध विना मंत्र के ही होता है। अतएव श्राद्ध की सामग्री ले कर श्मशान के पास जावे और किसी पवित्र भूमि को देख कर उसे ही लीप पोतकर श्राद्धस्थान बना डाले। उसके ऊपर पीली मिट्टी और तिल छींट दे। फिर स्नान करके एक सेर चावल दूध में डालकर पकावे और उसके तैयार होने पर तिल के तेल से दीया जलाकर श्राद्ध के अन्त तक के लिये रक्खे। अनन्तर पूर्व मुख कुश के आसन या कम्बल पर बैठकर आचमन और प्राणायाम विना मंत्र के ही करके हाथ में कुश ले और-**अपवित्र. पवित्रो वा सर्वा-वस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं स बाह्या-भ्यन्तरः शुचिः॥ पुण्डरीकाक्षः पुनातु**-इतना पढ़कर अपने शरीर और श्राद्ध सामग्री पर कुश से ही जल छिड़के और दक्षिण मुख अपसव्य होकर बांये घुटने को टेक कर फिर तीनं कुश तिल जल लेकर संकल्प करे-**अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्व-निवृत्तिपूर्वकसद्गतिप्राप्त्यर्थम् अस्थिसञ्चयनिमित्तकश्राद्ध-महं करिष्ये॥** इसके बाद कुशवटु (कुशब्राह्मण) रखकर पढ़े-**इहलोकं परित्यज्य गतोऽसि परमां गतिम्। मनसा वायु-रूपेण चटे त्वाहं नियोजये॥** इस तरह उसमें मृतक (प्रेत) को आवाहन कर उसके लिये आसन का संकल्प करे। हाथ में तीन कुश तिल जल लेकर-**अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत इदमासनं मया दीयते तवोपतिष्ठताम्**-पढ़े और कुश रखकर उसी पर कुशवटु को रखदे। स्मरण रहे कि सपिंडन तक मोटक कहीं भी न दिया जावे। केवल सीधे कुश ही रहें। पुनः इधर उधर उस आसन

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पर तिल छींटकर एक दोने में एक कुश तिल, जल, चन्दन, फूल डाले और उस अर्घ्यपात्र का बायें हाथ में लेकर और उसके कुश को आसन के पास पलाशादि के पत्ते पर रखकर-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत एष ते हस्तार्घो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्- कहकर उसी कुशपर बायें हाथ के सहित दहिने हाथ के पितृतीर्थ से वह अर्घ्य गिरादे और कुश उठाकर उसी दोने में रखकर आसन की बाईं ओर रखदे। दोने को औंधे न। पुनः चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, पान और खद्दर या सूत आसन पर रखकर संकल्प करने में अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत एतानि गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूलवासांसि ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम्- यह पढ़ें और उन्हें छू दे। तब एक पत्तल या दोने में पकाये भात या खीर का कुछ अन्न घी में मिलाकर परोसे और उस पर जल तिल डालकर बांये हाथ से छूए हुए दहिने हाथ में कुशादि लेकर संकल्प करे-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत इदमन्नं घृताद्युपस्करसहितं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। इसे पढ़कर कुशादि रखदे। इस तरह अन्न परोस चुकने और उसे प्रेत को अर्पण करने के बाद उसीसे एक हाथ उत्तर बालूकी एक वेदी दक्षिण ओर ढाल बनावे जिस पर पिंड दिया जावेगा। उसे गौ के गोबर से लीपकर उसपर दक्षिणाग्र तीन कुश रखदे और एक दोने में जल, तिल चन्दन, पुष्प डालकर उसे बायें हाथ में रख ले और दहिने हाथ में कुशादि लेकर पढ़े-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। इसे कहकर हाथ के कुशादि रख और दोने को दहिने हाथ में रख बांये हाथ से छूए हुए पितृतीर्थ से उसका कुछ अंश वेदी के उन्हीं कुशोंपर गिरादे। यह स्मरण रहे कि सभी जगह जब कुछ भी देने में 'अमुकगोत्र' आदि पढ़ते हैं तो यह संकल्पही है। इसीलिये दहिने हाथ में कुश, तिल जल लेकर पढ़ना चाहिये और पढ़ने के बाद उन्हें रखकर पहले जो पदार्थ बांये हाथ में रक्खा था उसे दहिने में लेकर देना चाहिये। इसीलिये यह संकल्प पढ़ने के समय हमेशा देने का पदार्थ बायें हाथ में है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहेगा और संकल्प के बाद दहिने हाथ में ले लियाजायगा। प्रेत तथा पितृ को पितृतीर्थ से और देवताओं को सदा देवतीर्थ से ही दे। प्रेत, पितृकार्य में सदा दक्षिण मुख बायां घुटना टेककर और अपसव्य होकर करे। देवकार्य में दहिना घुटना टेक दे और जनेऊ ज्यों का त्यों रहे। पूर्वमुख रहे। अस्तु, अवनेजन देने के बाद घी, तिल और मधु मिश्रित खीर का पिंड बनाकर बांये हाथ में रख ले और दहिने हाथ में कुशादि लेकर पढ़े—अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत अस्थिसञ्चयनिमित्तकश्राद्धे एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। इसे पढ़कर एवं दहिने हाथ में लेकर बायें से स्पर्श किये हुए ही पितृतीर्थ से उन्हीं कुशों पर, जहां पहले जल गिराया था, पिंड रख दे। तब हाथ धोकर एवं दोनेका जल लेकर-अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत अत्र प्रत्यवनेनिक्त्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्—पढ़े और पिंड पर ही गिरा दे। फिर पिंड पर सूत देकर पढ़े-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत अत्र पिंडे एतद्वासस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। पुनः उस पर चन्दन, पुष्प, धूप, पान सुपारी, भँगरिया तथा नैवेद्यादि चढ़ाकर संकल्प करे-अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत अत्र पिंडे एतानि गन्धपुष्पधूपदीपतांबूलफलादीनि ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम्॥ इसके उपरान्त एक दोने में-शिवा आपः सन्तु-पढ़ कर जल-सौमनस्यमस्तु-पढ़कर फूल-अक्षतं चारिष्टमस्तु-से तिल डाल कर संकल्प करे-अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य यद्दत्तमन्नपानादि तदुपतिष्ठताम्॥ और वह जल उसी पिंड पर गिरा दे। फिर पवित्र सहित तीन कुशों को पिंड पर रख उन्हीं पर तिल और दूध मिले जल की धारा धीरे धीरे गिरावे और यह पढ़ता जावे—अनादिनिधनो देवः शंखचक्रगदाधरः। अक्षय्यः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमुक्तिप्रदो भव॥ १॥ अतसीपुष्पसंकाशं पीतवाससमच्युतम्। ये नमस्यंति गोविन्दं न तेषां वि-

BhaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

व्यते भयम् ॥ २ ॥ कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव । संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥ नारायण सुरश्रेष्ठ लक्ष्मीकान्त वरप्रद । अनेन तर्पणेनाथ प्रेतमोक्षप्रदो भव ॥ ४ ॥ हिरण्यगर्भ पुरुष व्यक्ताव्यक्तस्वरूपक । अस्य प्रेतस्य मोक्षार्थं सुप्रीतो भव सर्वदा ॥ ५ ॥ इसके बाद वह जल गिराते हुएही संकल्प करे-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत अत्र पिंडे जलधारा ते मयादीयते तवोपतिष्ठाम् ॥ फिर दक्षिणा के लिये कुछ द्रव्य लेकर संकल्प करे-अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य कृतैतदस्थिसंचयनिमित्तकश्राद्धप्रतिष्ठार्थमिमां रजतदक्षिणां तन्मूल्यापकल्पितं द्रव्यं वा अमुकशर्मणे ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृजे तत्सन्नमम ॥ दक्षिणा देकर उस पिंड को अपनी जगह से हटाकर कुशवटु की ब्रह्मग्रन्थि स्वयमेव खोल दे और-अनेन श्राद्धेनामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिः सद्गतिप्राप्तिश्च भवतु-यह कह कर पिंड गौ को दे दे और कर्म की सम्पूर्णता लिये-यस्यस्मृत्याच नामोक्त्या० (४७६) इत्यादि विष्णु स्मरण करे। श्राद्ध की वस्तुओं को या तो ब्राह्मण को दे या जल में डाल कर चन्दन, पुष्प, धूपादि सामग्री लेकर चिता के उत्तर आवे। वेदिका भूमि को साफ करके उसी पर श्मशान निवासी देवताओं की पूजा करे क्रव्यादमुख्येभ्यो देवेभ्यो नमः गन्धं समर्पयामि, पुष्पं समर्पयामि-इत्यादि रीति से पूजन करते हैं। 'नमः' पर्यंतही हर बार बोले। इसके बाद आठ पात्र या दोने में अनेक प्रकार के भोग और फल मूलादि रख कर और-बलिभ्यो नमः-पढ़कर उन आठों को चन्दन, पुष्प, धूप दीप चढ़ाकर पूजा करे। फिर उन आठों में चार को पास रख शेष चारों को उत्तर से आरंभ कर चिता के चारों ओर प्रदक्षिणक्रम से नीचे लिखे मंत्र से रक्खे-येऽस्मिन्श्मशाने देव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सुभगवन्तः सनातनाः । तेऽस्मत्सकाशाद् गृह्णन्तु बलिमष्टांगमक्षयम् ॥ १ ॥ प्रेतस्यास्य शुभाँल्लोकान्प्रयच्छन्तु च शाश्वतान् । अस्माकमायुरारोग्यं सुखं च हृदताक्षयम् ॥२॥ एषोऽष्टांगबलिः शंकरादिश्मशानवासिदेवताभ्यो नमः ॥ इसे पढ़कर पहले उत्तर ओर एक बलि देकर पूर्व, दक्षिण, पश्चिम ओर शेष तीन दे। इसके बाद चारों पर क्रमशः दूध गिराकर-शंकरादिदेवताः स्वीयं स्वीयं स्थानं गच्छन्तु—इस मंत्र से देवताओं का विसर्जन करे। फिर अपसव्य और मौन होकर जल मिले दूध को चितापर छिड़के और शमी या पलाश की दो टहनियों से चिता की राख को हटाकर दहिने हाथ के अंगूठे और कनिष्ठासे क्रमशः सिर, छाती, दोनों हाथ, दोनों बगल और दोनों पांवों की हड्डियां उठाकर बाहर रक्खे और पहले उनपर पञ्चगव्य छिड़के। फिर गंगाजल और सुगन्धित जल से उन्हें धोकर उनपर चन्दन, पुष्पादि चढ़ावे। तब पलाशके दोने में रखकर पीले पीताम्बर से उसे लपेटे और मिट्टीके नये घड़े में रखकर ऊपरसे ढक्कन रख उसे किसी वृक्षकी जड़के पास या जंगलमें लेजाकर एकगढ़ा खोदे और उसमें वह घड़ा रखकर ऊपरसे सिवार मिली गीली मिट्टी रख दूसरी मिट्टीसे अच्छी तरह ढंककर भूमि समान कर दे। वहां से चिता के पास पुनः आकर उसकी राख उठाकर तालाब, नदी या गंगा के जल में फेंक दे। इसके उपरान्त चिताभूमिको गौ के गोबर से लीप कर पूर्वोक्त शेष चार बलियों को उन्हीं मंत्रों से उसी क्रम से चारों ओर देने से पहले उत्तर ओर श्मशानदेवताओं की पुनः पूजा उसी तरह करे। फिर बलि देकर उसी तरह उनका विसर्जन करे। इसके बाद यदि संभव हो तो चिता के स्थान पर ईंट या पत्थर से कोई कुटी जैसी झोपड़ी बना दे या तुलसी आदि का वृक्ष लगादे, जिसमें उसका पर्दा हो जावे। फिर घर में आकर समस्त वस्त्रों के साथ स्नान करे। यदि उन हड्डियों को गंगा में डालना हो तो भूमि में गाड़ने के बाद उसी दिन या दूसरे दिन फिर उस घड़े को खोद निकाले, उसे लेकर गंगा किनारे जाकर स्वयं स्नान करे, हड्डियों को पञ्चगव्य से नहलावे और गीली मिट्टी का दोना बनाकर उसीमें उन हड्डियों को सोना, मोती,

PhiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चांदी, मृगचर्म मूंगा, मधु, घी और तिल के साथ रखकर बीच में बन्द करके हाथ में ले और दक्षिण दिशा की ओर देखता हुआ-नमोऽस्तु धर्मराजाय प्रेतप्रेतत्वमुक्तये। स मे प्रीतः शुभं दद्यादस्मिँल्लोके परत्र च-यह पढ़कर गंगा के जल में फेंके और-स मे प्रीतोऽस्तु-कहकर जल में उसे डाल दे। तब स्नान करके बाहर आवे और-सूर्याय नमः-कहकर सूर्य को देखकर आचमन करे। फिर दक्षिणा का संकल्प करे-अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य स्वर्गलोकप्राप्त्यर्थं कृतैतदस्थिप्रक्षेपप्रतिष्ठार्थमिदं हिरण्यमग्निदैवतं तन्मूल्योपकल्पितं द्रव्यं वा यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दातुमहमुत्सृजे तत्सन्नमम ॥ यदि किसी कारण से भूमि में गाड़ने में असमर्थ हो तो चिता की हड्डियां को घड़े में रखने की आवश्यकता नहीं। वह जिस दोने में रक्खा था उसीको ले जाकर उक्त रीति से गंगा में डाल दे। प्रायः दाह के ही दिन चिताभस्म को उठाकर गंगा आदि में फेंक देने की रीति अब हो गयी है। इसीसे पहले अस्थिसंचय की ही विधि लिख दी है। हमने तो देखा है कि प्रायः बहुत स्थानों में जलाने के बाद चिता को ज्यों की त्यों छोड़ देते हैं। विधिवत् अस्थिसञ्चय करना तो दूर रहा। मगर यह तो नितान्त अनुचित और घृणित कार्य है।

दशगात्रश्राद्ध की भूमि भरसक देवस्थान, नदी तट, जलाशयतीर, जंगल या दर्वाजे पर ही हो। मगर शुद्ध हो। और कहीं न होने पर द्वार पर ही करे। पहले दिन श्राद्ध की सामग्री और दो घड़े लेकर उस स्थान पर जावे और जलाशय में स्नान कर नवीन खद्दर पहने दोनों घड़ों में, या एक ही हो तो उसीमें, जल भर लावे। भूमि को लीप पोतकर पिंड देने के स्थान से ईशान कोन में अग्नि जलाकर किसी पात्र में दो पसर चावल एक बार धोकर डाल दे और उसमें गौका दूध डालकर अग्निपर रख अच्छी तरह पकावे। फिर उसे उतार कर दक्षिण ओर रखके आचमन करे और कुशतिलादि लेकर संकल्प

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करे। संकल्प के समय दक्षिणमुख अपसव्यादि हो ले-अद्यामुक-गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य शिरःकर्णाक्ष्यादिदशगात्रनिष्पत्त्यर्थ-अवयवश्राद्ध (दशगात्रश्राद्ध) महं करिष्ये ॥ फिर पीली मिट्टी से दक्षिण ओर ढालू भूमि बनाकर उसे गोबर से लीप दे। इसी पर पिंड दियाजायगा। परन्तु सामवेदियों की एक प्रामाणिक पद्धतिमें हमने यह देखा है कि पिण्डपितृयज्ञ और अन्वष्टका श्राद्ध की तरह दशगात्रश्राद्ध में भी वे लोग पिंड की वेदी पर उसके दक्षिण भाग में चार अंगुल गहरा १० अंगुल लम्बा और चार ही अंगुल दोनों ओर चौड़ा एक गढ़ा बनाते हैं जिसका मध्यभाग नाव या जौ के बिचले भाग की तरह जरा चौड़ा होता है। उसकी आकृति नाव कीसी होती है। इसे कर्षू कहते हैं। वे लोग इसीमें पिंड देते हैं। यह बात षोडशी या एकादशाह आदि के श्राद्ध में नहीं है। केवल पूर्वोक्त तीन हीं श्राद्ध में। इसलिये यदि सामवेदी हो तो उक्त वेदी बनाकर उसपर यह कर्षू भी बना ले। फिर वेदी पर या कर्षू में मूल सहित तीन कुश दक्षिणाग्र रखकर एक पात्र या दोने में जल, तिल, चन्दन, पुष्प रखकर अपसव्यादि हो जाय और बायें हाथ में वह दोना लेकर दहिने हाथ मेंकुश तिलादि ले अवनेजन के देनेका संकल्प करे-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत शिरःपूरकप्रथम-पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्। और दहिने हाथ में लेकर उसमें बायें हाथ को लगाये ही पितृतीर्थ से उन्हीं तीन कुशों पर दोने का जल थोड़ा गिरा दे। तब गर्म खीर में तिल, घी, मधु, दूध और शक्कर मिलाकर पिंड बनावे। उसे बायें हाथ में लेकर दहिने हाथ से संकल्प करे-अद्य-अमुकगोत्र अमुकप्रेत शिरःपूरक एष प्रथमपिंडस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्—यह यजुर्वेदी पढ़े और सामवेदी केवल-अद्या-मुकगोत्र अमुकप्रेत शिरःपूरक एष ते प्रथमः पिंडः-इतना हीं पढ़े। आगे भी इसी तरह और अवनेजन देनेमें पहले भी इसी प्रकार करना चाहिये। यह संकल्प पढ़कर पिंडको दहिने हाथ में लेकर बायें से स्पर्श कर पितृतीर्थ से उन्हीं कुशों पर, जहां जल गिराया

BhaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

था वहीं, रख दे । फिर पूर्व के दोने के जल से या पिंड के बर्तन को ही धोकर उसीसे प्रत्यवनेजन दे-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत शिरःपूरकप्रथमपिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व-इतना ही सामवेदी पढ़े और इसके आगे 'ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्' इतना और भी जोड़कर यजुर्वेदी पढ़े । अथवा दोनों पहले का ही पढ़ें । 'ते मया' इत्यादि पढ़ने की आवश्यकता नहीं है । या दोनों ही 'ते मया' इत्यादि के साथ ही पढ़ें । इसीसे आगे इस सम्बन्ध में कुछ भी न कहेंगे । इसके बाद चुपचाप प्रेत का स्मरण करके पिंड पर ऊन, चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, खस, नैवेद्य, पान और सुपारी आदि वस्तुयें रखकर संकल्प करे-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत शिरःपूरकप्रथमपिंडे एते ऊर्णासूत्रगन्धपुष्पधूपदीपाद्युपचारास्ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम् ॥ पुनः पढ़े-पिंडार्चनविधेः परिपूर्णतास्तु ॥ पश्चात् यजुर्वेदी एक दोने में जल, दुग्ध, तिल, चन्दन, पुष्प डालकर उसे बांये हाथ में लेकर पढ़े-अमुकगोत्र अमुकप्रेत दाहजनिततृषोपशमनार्थमेषा तिलतोयाञ्जलिस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और उस दोने को दोनों हाथ में लेकर पिंड पर उसका जल गिरा दे । फिर किसी दूसरे पात्र या दोने में उसी तरह जल लेकर पढ़े-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत एतत्ते तिलतोयपात्रं मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और दोनों हाथ से उसे उस पिंड के समीप रख दे । सामवेदी लोग तिल जल पात्र पिंडके पास नहीं रखते किन्तु तिल जल की अंजली ही देते हैं । किसी पात्र में पूर्वोक्त तिलादिमिश्रित जल हाथ में लेकर संकल्प पढ़ते हैं-अद्यामुकगोत्रममुकनामानं प्रेतं तर्पयामि तवोपतिष्ठताम्-और वह जल दोनों हाथ में लेकर पितृतीर्थ से पिण्ड पर गिरा देते हैं । इसके बाद पिण्ड पर तीन कुश रखकर अवनेजन वाले बचे जल से जलधारा दे । उसका मंत्र-अनादिनिधनो देव०-इत्यादि पहले ४९३ पृष्ठ में कह आये हैं । इसके बाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बचे अन्न से कौवे को बलि दे-काकोऽसि यमदूतोऽसि गृहाण बलिमुत्तमम्। यमद्वारे गते प्रेते तमाप्यायितुमर्हसि ॥ उसके बाद वह पिंड गौ आदि को खिला दे या जल में फेंक दे। फिर स्नान करके घर आकर गोग्रास दे और एक ब्राह्मण को खिलावे या उतना अन्न दे। यह तो हुई पहले दिन या पहले पिंड की विधि। इसी तरह शेष नौ पिंड भी दिये जाते हैं। अन्तर केवल यह होगा कि क्रमशः दो, तीन आदि तिलांजलियां यही वाक्य पढ़कर देते जावेंगे। दूसरे के साथ दो, तीसरे के साथ तीन इत्यादि। जितनी तिलांजलियां देंगे उतनी वार यह वाक्य पढ़ेंगे। इसी तरह तिलजलपात्र भी प्रति पिंड के साथ तिलाञ्जलियों की ही तरह बढ़ेगा। इसलिये जितने तिल जल पात्र होंगे उतनी बार वाक्य पढ़ पढ़कर पिंड के पास उन्हें रख देंगे। या एक ही बार रख कर एक ही बार उन्हें स्पर्श कर वाक्य पढ़ देंगे-अमुकगोत्र अमुकप्रेत एतत्तिलजलपात्रद्वयं मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ तीसरे के साथ 'द्वयं' की जगह 'त्रयं' कहेंगे। इसीतरह 'चतुष्टयं, पञ्चकं, षट्कं, सप्तकं, अष्टकं, नवकं, दशकं' प्रतिदिन के हिसाब से पढ़ देंगे। दूसरे पिंडका वाक्य होगा-अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत कर्णाक्षिनासिकपूरको द्वितीयः पिंडस्ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥२॥ तीसरे का अद्या० गलांसभुजवक्षःपूरकस्तृतीयः० ॥ ३ ॥ चौथे का-अद्या० नाभिलिंगगुदपूरकश्चतुर्थः० ॥ ४ ॥ स्त्री हो तो-नाभियोनिगुदपूरकश्चतुर्थः-पढ़े ॥ पांचवें का-अद्या० जानुजंघापूरकः पञ्चमः० ॥ ५ ॥ छठें का-अद्या० सर्वमर्मपूरकः षष्ठः० ॥ ६ ॥ सातवें का अद्या० सर्वनाडीपूरकः सप्तमः० ॥७॥ आठवें का-अद्या० दन्तनखलोमादिपूरकोऽष्टमः० ॥८॥ नवें का-अद्या० वीर्यपूरको नवमः ॥९॥ दसवें का-अद्या० क्षुत्पिपासापूरको दशमः० ॥१०॥ इसी प्रकार अवनेजन और प्रत्यवनेजन में भी समझना चाहिये। पिंडों के कुशों पर पिंड

BhuGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

देने से पहले जो जल गिराया जाता है वह अवनेजन और पिंड के बाद पिंड पर गिराया जल प्रत्यवनेजन कहाता है। दूसरे दिन के पिंड में अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत कर्णाक्षिनासिकपूरकद्वितीयपिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्- और यह हुआ अवनेजन हुआ। प्रत्यवनेजन-अद्या० कर्णाक्षिनासिकपूरकद्वितीयपिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व० ॥२॥ तीसरे पर अवनेजन-अद्या० गलांसभुजवक्षः पूरकतृतीयपिंडस्थानेऽत्रावनेनिक्ष्व० ॥ प्रत्यवनेजन-अद्या० तृतीयपिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व० ॥ ३ ॥ चौथेका-अद्या० नाभिलिंग (योनि) गुदपूरकचतुर्थपिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व० ॥ अद्या० चतुर्थपिंडे अत्रप्रत्यवनेनिक्ष्व० ॥४॥ पांचवेंका-अद्य० जानुजंघापूरकपञ्चमपिंडस्थाने अत्रा० ॥ अद्या० पञ्चमपिंडे अत्र प्रत्यवने० ॥ ५ ॥ छठेंका-अद्या० सर्वमर्मपूरकषष्ठपिंडस्थानेऽत्रावने० ॥ अद्या० षष्ठपिंडे अत्र प्रत्यव० ॥ ६ ॥ सातवेंका-अद्या० सर्वनाडीपूरकसप्तमपिंडस्थाने अत्रावने० ॥ अद्या० सप्तमपिंडे अत्र प्रत्यवने० ॥७॥ आठवेंका-अद्या० दन्तनखलोमादिपूरकाष्टमपिण्डस्थाने अत्राव० ॥ अद्या० अष्टमपिंडे अत्र प्रत्यवने० ॥८॥ नवेंका-अद्या० वीर्यपूरकनवमपिंडस्थाने अत्रावने० ॥ अद्या० नवमपिंडे अत्र प्रत्यवने० ॥९॥ दसवेंका-अद्या० क्षुत्पिपासापूरकदशमपिंडस्थाने अत्रावने० ॥ अद्या० दशमपिंडे अत्र प्रत्यवने० ॥१०॥ इस तरह स्पष्ट है कि पिंड के लिये जो वाक्य प्रतिदिन के हैं उन्हीं 'पिंड के' आगे अवनेजन के लिये 'स्थाने अत्रावनेनिक्ष्व' और प्रत्यवनेजन के लिये 'पिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व' लगा देने से प्रतिदिन के अवनेजन और प्रत्यवनेजन के वाक्य बन जाते हैं। अवनेजन में 'पिंडस्थाने' और प्रत्यवनेजन में 'पिंडे' कहना चाहिये। इसके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिवाय 'अवनेनिक्ष्व' की जगह 'प्रत्यवनेनिक्ष्व' कहना चाहिये । और शब्द ज्यों के त्यों रहते हैं । इस तरह पहले ही सब वाक्यों को ठीक बनाकर अभ्यास कर लेने में हीं ठीक होगा । कर्म के समय सहसा बना लेने में कम पढ़ों को कठिनाई होगी । अन्त में दशाह के दिन दशगात्र पिंड की दक्षिणा चार रुपये भर लोहा या उसका मूल्य दे-

अद्यामुकगोत्रामुकप्रेतशिरः कर्णाक्ष्यादिसर्वांगपूरकपिंड-सांगतार्थं पलमेकंलोह तन्मूल्योपकल्पितद्रव्यं वा दक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे तत्सन्नमम ॥

सामवेदियों के यहां भी इसी प्रकार पढ़ेंगे और काम करेंगे केवल तिलजलपात्र का दान और उसके वाक्य सामवेदी लोग छोड़ देते हैं । वे केवल तिलांजलि देते हैं । शेष सब समानहीं है । यह भी स्मरण रहे कि हमने ऐसे वाक्य लिखे हैं कि चाहे किसी दिन पिंड दिये जावें उनके वाक्य यही रहेंगे । हां, जहां जहां 'अमुक' शब्द है वहां वहां जिसके पहले अमुक शब्द हो उसका नाम पढ़ना चाहिये । यदि खीर न बना सके तो फल, मूल, गुड़, दुग्ध, जौ का पीठा या सत्तू इनमें किसी से भी पिंड दिया जा सकता है । प्रतिदिन पिंड-दान के बाद नहाना चाहिये ।

इस प्रकार दशाह को दसवां पिंड देकर शरीर के सभी कपड़े बढ़ादि को दे डाले और घर के काम के मिट्टीवाले बर्तनों को फेंक कर घर को गोबर से पुतवावे । उसके बाद स्नान करके दाढ़ी, मूंछ, सिरके बाल और नख कटवाकर तिल और सफेद सरसों की खली से समूचे शरीर को मलकर दोबारा स्नान करे और नवीन खद्दर धारण करे । यदि शरीर के कपड़ों को दे न सके तो धोबी से धुलवाकर साफ करवा डाले । स्नान के बाद आचमन कर के बैल, गौ, गोरोचन, सोना, दही और दूब को छूकर ब्राह्मण हो तो अग्नि; क्षत्रिय हथियार; वैश्य घोड़ेका कोड़ा या लगाम और शूद्र लाठी को छूवे । इति दशाहकृत्य ।

२–एकादशाह का शय्यादान ।

एकादशाह को कर्त्ता प्रातःकाल स्नान करके नवीन यज्ञोपवीत धारण करे । कहीं कहीं दसवें दिन भी नवीन यज्ञोपवीत धारण करने को लिख दिया है । बात यह है कि आशौच के बाद सपिंडमात्र को

BhuGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पुराना यज्ञोपवीत छोड़कर नवीन पहनना चाहिये । परन्तु आशौच तो दस दिनों तक ब्राह्मण के लिये माना गया है । अतः उचित है कि एकादशाह के दिन हीं नया जनेऊ पहना जावे । परन्तु दसवें दिन पहनने की बात लिखनेवालों का शायद अभिप्राय यही है कि उस दिन जब शरीर पर के सभी वस्त्रादि का त्याग कर दूसरा पहनते हैं तो यज्ञोपवीत भी बदलना ठीक है । मगर, स्मरण रहे कि वह आशौच के भीतर ही है । इसलिये एकादशाह को फिर भी बदलना हीं चाहिये । एकादशाह को एकोद्दिष्ट श्राद्ध, शय्यादान और वृषोत्सर्ग करने का विधान है । कहीं कहीं सपिंडन भी एकादशाह को ही लिखा है । मगर अब साधारणतया द्वादशाह को ही सपिंडन की परिपाटी है । परन्तु रहगये सोलह श्राद्ध । वे या तो एकादशाह को ही करलिये जावें या द्वादशाह को ही सपिंडन से पहले । परन्तु वह भी द्वादशाह को ही किये जाते हैं और यही परिपाटी आजकल प्रायः सर्वत्र प्रचलित है । एकादशाह को एक ही एकोद्दिष्ट श्राद्ध किया जाता है । इसके प्रचलित होने का कारण प्रायः यही हुआ होगा कि एकादशाह को ही जब शय्यादान और वृषोत्सर्ग भी करते हैं तो समय ही नहीं रहजाता है । एकोद्दिष्ट मध्यान्ह में होना चाहिये और वृषोत्सर्ग आदि ही में समूचा दिन व्यतीत होजाता है । एक बात और है । अब केवल एकादशाह वाला पहला एकोद्दिष्ट ही सपात्रक किया जाता है और उसमें आजकल जिस ब्राह्मण को खिला पिला कर श्राद्ध करते हैं उसे महापात्र, महाब्राह्मण, कंटाह, अचारज आदि नामोंसे भिन्न भिन्न स्थानों में पुकारते हैं और वह आजकल नीच माना जाता है । यहां तक कि उसका छूआ जल ग्रहण करना और उसे छूना भी बहुत जगह निन्दित माना जाता है । इसीसे शेष श्राद्धों को दूसरे दिन करने की चाल सम्भवतः चल पड़ी है । क्योंकि वे प्रायः सर्वत्र ही अपात्रक ही कियेजाते हैं और उनमें महापात्र को नहीं बुलाते । जो भी हो; हम भी द्वादशाह को ही सपिंडीकरण और शेष एकोद्दिष्ट श्राद्धों को लिखेंगे । परन्तु इतना स्मरण रखना चाहिये कि एकादशाह का एकोद्दिष्ट तो निराला ही है जिसे महैकोद्दिष्ट कहते हैं । यही षोडशी (सोलह श्राद्धों) की प्रकृति है अर्थात् इसी के अनुसार १६ श्राद्ध किये जाते हैं । यह महैकोद्दि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करके फिर उसी समय प्रथम मासिक भी कियाजाना चाहिये । क्योंकि जैसा पहले ही कह चुके हैं, प्रत्येक मासिक श्राद्ध मासके आरंभ में हीं मरण तिथि को होना चाहिये । परन्तु प्रथम मासिक पहले दिन आशौच के कारण न हो सका है । इसीसे एकादशाह को उसे अवश्य करलेना चाहिये और यदि हो सके तो ऊनमासिकादि शेष १५ या १४ श्राद्धों को भी उसी दिन करलेना ठीक है । एकही दिन करने में आसानी है । एक ही साथ संकल्प करके सबको साथ ही करलेना चाहिये । इस प्रकार कई कर्म एक ही साथ किये जावें तो उसे शास्त्रों में तंत्र या तंत्र विधि कहते हैं । हमें दुःख के साथ स्वीकार करना पड़ता है कि सपिंडीकरण के सिवाय १६ या १५ श्राद्ध मानने और करने में तो जो मतभेद है वह यद्यपि प्रामाणिक है । अतएव द्वादशाह के दिन सर्वत्र सपिंडन के सिवाय १४ श्राद्ध ही करना क्षम्य और ठीक हो सकता है । फिर भी एकादशाह के दिन महैकोद्दिष्ट की परिपाटी का प्रायः सर्वत्र न होना और पद्धतियों में भी उसकी अलग विधि का न लिखा जाना भयंकर अधःपातका चिन्ह है ! यह बताता है कि हम कहां तक जा गिरे हैं ! निर्णयसिन्धु, धर्मसिन्धु आदि सभी ग्रन्थों में इस बात को स्वीकार किया है कि एकादशाह को महैकोद्दिष्ट (महाएकोद्दिष्ट) और आद्य या प्रथम मासिक श्राद्ध करना चाहिये । अर्थात् एकोद्दिष्ट श्राद्ध की दो आवृत्ति होनी चाहिये और शेष ऊनमासिक आदि द्वादशाह को करना चाहिये । क्योंकि ऊनमासिक द्वादशाह को भी होसकता है । मगर महाएकोद्दिष्ट और प्रथममासिक तो अवश्यमेव एकादशाह को ही होनाचाहिये । फिर भी पद्धतियों में यह बात नहीं मिलती है और श्राद्धों का जो क्रम लिखा गया है वह भी उलटा ही है । उनमें द्वादशाह को प्रथम मासिक और एकादशाह को आद्य श्राद्ध लिखा है ! इसीतरह बहुत जगह तो ऊनमासिक लिखा है और बहुत जगह ऊनमासिक को ही प्रथम मासिक लिख डाला है ! बहुतों ने एकादशाह के आद्य या प्रथम श्राद्ध को ही संभवतः ऊनमासिक समझा है । परन्तु यह सदा स्मरण रखने की बात है कि प्रत्येक मास के आरंभ में ही उस मासका मासिक होजाना चाहिये, सिवाय प्रथम मासिक के । क्योंकि उस दिनतो आशौच था ।

BhuGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

फिर हो कैसे सकता था ? इस हिसाब से द्वितीय आदि मासों के आरंभ में ही द्वितीय मासिक आदि हो जायंगे और जब ऊनमासिक, ऊनषाण्मासिक या ऊनवार्षिक (ऊनद्वादशमासिक) की पारी आवेगी तो वे क्रमशः प्रथममासिक, षष्ठमासिक और द्वादशमासिक के बाद ही होंगे । इसीसे एकादशाह को महाएकोद्दिष्ट छोड़ कर जो दूसरा एकोद्दिष्ट होता है वही प्रथममासिक और द्वादशाह का पहला एकोद्दिष्ट ऊनमासिक कहता है । अतः यह स्पष्ट है कि मासिकों के बाद ही ऊनमासिकों का क्रम आवेगा । यद्यपि देखने से यह विपरीत सा प्रतीत होता है । मगर किया क्या जावे, धर्मशास्त्रकारों ने ऐसा ही लिखा है और निर्णयसिन्धु आदि में ऐसा ही निर्णय भी किया गया है । किसीने भी इसका विरोध नहीं किया है और न इसके विपरीत लिखा ही है । हालांकि इसके सम्बन्ध में इधर बहुतसे ग्रन्थ बन चुके हैं । निर्णयसिन्धु आदि ने इसके आधारस्वरूप यह वचन भी लिखे हैं–"मासादौ मासिकं कार्यमाब्दिकं वत्सरे गते । आद्यमेकादशे कार्यमधिके त्वधिके भवेत् इति लौगाक्षिः । ब्राह्मणं भोजयेदाद्ये होतव्यमनलेऽथवा । पुनश्च भोजयेदेकं द्विरावृत्तिर्भवेदिति गोभिलः ॥ इन वचनों का अभिप्राय यह है कि महीने के आरम्भ में ही मासिक श्राद्ध करना चाहिये और वर्ष के बीतने पर वार्षिक । परन्तु पहला मासिक श्राद्ध एकादशाह को करे । यदि वर्ष के भीतर अधिमास हो तो सोलह की जगह सत्रह श्राद्ध होते हैं । एकादशाह को पहले श्राद्ध में या तो ब्राह्मण खिलावे या उसका अन्न अग्नि में हवन करे । फिर एक ब्राह्मण खिलाने से दो श्राद्ध पूरे होते हैं । इसका यह भाव नहीं है कि केवल खिलाने से ही श्राद्ध पूरा हो जावेगा । आशय यही है कि दोबारा श्राद्ध करे और एक ब्राह्मण फिर खिलावे । अतः सोलह श्राद्धों का क्रम अब ऐसा हो गया–प्रथममासिक, ऊनमासिक, द्वितीयमासिक, तृतीयमासिक, चतुर्थमासिक, पंचममासिक, षष्ठमासिक, ऊनषष्ठमासिक, सप्तममासिक, अष्टममासिक, नवममासिक, दशममासिक, एकादशमासिक, द्वादशमासिक, ऊनद्वादशमासिक, सपिंडीकरण । परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो सपिंडीकरण को १६ के बाहर मानते हैं वे द्वितीय मासिक के बाद एक और 'त्रैपाक्षिक' श्राद्ध मानते हैं। इस तरह यदि द्वादशाह को शेष एकोद्दिष्ट करना होगा तो ऊनमासिक से लेकर ऊनवार्षिक या ऊनद्वादशमासिक तक के १४ या १५ होंगे। चाहे १४ करे या १५। यह तो परिपाटी और परम्परा के ऊपर अवलम्बित है। यही बात और यही क्रम धर्मसिन्धुकारने लिखा है। अतः हम भी इसी क्रम से लिखेंगे।

एकादशाह को शय्यादान और वृषोत्सर्ग भी होता है। यद्यपि पुत्रवती स्त्री के पति से पहले ही मरनेपर उसके लिये वृषोत्सर्ग का निषेध कर कपिला और ब्याई गौ के दान करने का वचन है। तथापि औरों को वृषोत्सर्ग करने की सख्त ताकीद है। यहां तक कि यदि सांड़ ठीक न मिल सके तो एक या तीन वर्ष का बच्चा ही छोड़े। यदि वह भी न हो सके तो मिट्टी या आटे का ही सांड़ बनाकर अवश्य वृषोत्सर्ग की क्रिया करे। मगर उस क्रिया को छोड़ना कभी भी उचित नहीं है। नहीं तो मृतक की प्रेतयोनि अनिवार्य हो जाती है। सांड़ के साथ एक से लेकर चार तक बछिया भी छोड़ी और दी जाती हैं। वृषोत्सर्ग का वृष (सांड़) साधारणतया सर्वांग सफेद और मुख तथा पूंछ में काला हो या सर्वांग काला और मुख तथा पूंछ में श्वेत हो। दूसरे भी लक्षण और ग्रन्थों में लिखे हैं। शय्यादान में आजकल की रीति है कि एक शय्या तो वृषोत्सर्ग और पिंडदान की जगह देते हैं और दूसरी घर के आंगन में। परन्तु हमारे विचार से इतने प्रपंच की आवश्यकता नहीं है। निर्णयसिन्धु में भी दूसरी शय्या का दान और पददान निर्मूल ही बताया गया है और यदि समूल भी हो तो वह पर्वतीयों की ही यह चाल कही गई है। सभी पद्धतियों में एकादशाह को पहले शय्यादान, तब वृषोत्सर्ग और अन्त में एकादशाह श्राद्ध लिखा है। परन्तु गौडीय श्राद्धप्रकाश में पहले वृषोत्सर्ग और षोडशी लिखकर फिर शय्यादान लिखा है। हम भी शय्यादान से ही शुरू करते हैं।

श्राद्ध के पहले दिन कर्त्ताको केवल एक ही बार भोजन (एकभुक्त) करना चाहिये और उसी दिन शाम को भोजनोपरान्त श्राद्ध के लिये दानपात्र ब्राह्मण को निमंत्रण देना चाहिये। यदि दैवात् उसदिन

BHUGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

न हो सके तो श्राद्ध के दिन हीं प्रातःकाल स्नान और नित्यकर्म करके ब्राह्मण के घर कर्त्ता स्वयं या उसके घर का ही कोई जावे। यदि यह भी न हो तो कोई दूसरा ही जावे। परन्तु शूद्रादि से निमंत्रण न दिलावे। द्रव्य सुपारी आदि के साथ ब्राह्मण के घर जाकर दक्षिण दिशा में ढालू पवित्र भूमि पर उसे उत्तर मुख बैठा कर स्वयं दक्षिण मुख हो घुटना टेककर और अपसव्य होकर ब्राह्मण का दहिना चरण पकड़े और कहे—ॐ अद्य (यदि पहले दिन हो तो 'श्वः') अमुक-गोत्रस्य अमुकप्रेतस्यैकादशाहकार्ये भवन्तं प्रेतब्राह्मणमेभिर्द्रव्यादिभिरहमामंत्रये । गतोसि दिव्यलोकं स्त्वं कृतांतविहिते पथि । मनसा वायुरूपेण विष्णो त्वाहं निमंत्रये॥ और ब्राह्मण के हाथ में सुपारी आदि रख दे। ब्राह्मण सुपारी आदि लेकर—ॐ तथाऽस्तु—कह देवे। यदि शाम को निमंत्रित करे तो ब्राह्मण को यह नियम भी सुना दे कि आज आप को और मुझे भी स्त्रीप्रसंगादि से रहित होना होगा—अक्रोधनैः शौचपरैः सततं ब्रह्मचारिभिः। भवितव्यं भवद्भिश्च मया च श्राद्धकारिणा ॥ इसके बाद ब्राह्मण के आने पर कर्त्ता उससे कहे—ॐ प्राप्नोतु भवान्। वह उत्तर दे कि—ॐ प्राप्नवानि। फिर उसका पाव धोकर और—प्रेताय नमः—पढ़ कर उसकी पूजा करे और पूजा के बाद उसका नख केशादि बनवाकर तिलका तेल आदि दे कि वह उसे लगाकर स्नान करें। इधर श्राद्धकर्त्ता अपने घर से अलग बाहर श्राद्ध की भूमि को ठीक कर उसे गोबर से लीपे और उस पर जलते अंगार डालकर तथा पञ्चगव्य छिड़क कर उसका संशोधन करे। इसके उपरान्त उस भूमिपर तिल और सरसों (पीली) सरसों छींट दे और भरसक स्वयं या अपनी स्त्री द्वारा और उसके भी न कर सकने पर सजातीय द्वारा मिट्टी के नवीन पात्र में पिंड के लिये पाक बनवावे और ब्राह्मण भोजन के लिये भी वस्तु तैयार करावे। यह समूचा काम दक्षिणमुख होकर करे। पूरा हो जाने पर पूछ लेवे कि—सिद्धम् ? उत्तर पाने पर कि-सिद्धम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दक्षिण मुख अपसव्य होकर बायां घुटना टेक दे और स्नान करके आये ब्राह्मण का वरण शय्यादान के लिये करे। हाथ में कुश तिल जौ और वस्त्रादि लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिपूर्वकमक्षय्यपुण्यलोकावाप्तये क्रियमाण शय्यदानादिप्रतिग्राहार्थं यथानामगोत्रं ब्राह्मणमेभिर्वस्त्रादिभिस्त्वामहं वृणे ॥ इतना पढ़कर हाथ की सभी वस्तुएं उस ब्राह्मण को दे। परन्तु, इस तरह वरण करने से पहले उस ब्राह्मण के पांव धोकर गन्धादि से पूजन भी कर लेना चाहिये। यह पांव धोने आदि की विधि ७४ पृष्ठ में आचार्यादि के वरण के प्रसंग में लिखी है। उस सामग्री को लेकर दानपात्र ब्राह्मण यह उत्तर दे कि—ॐ वृतोऽस्मि॥इसकेबाद शय्यादान का संकल्प करे—ॐअद्यैकादशाहे अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमोचनद्वाराऽक्षय्यपुण्यलोकावाप्तये सोपकरणशय्यादानमहं करिष्ये ॥ इसके उपरांत आसनपर उत्तरमुख ब्राह्मण को बैठाकर स्वयं पूर्वमुख बैठे और उत्तर सिरहानेवाली शय्या अपने सामने बिछाकर उस पर तकिया, तोसक, चादर, रजाई रखकर और चन्दन पुष्पादि से अलंकृत कर उसके ऊपर धान, साठी, मूंग, गेहूं सरसों, तिल, जौ ये सप्तधान्य रक्खे और मृतक की सोनेकी या उसके अभाव में दूसरी चीज की मूर्त्ति को भी वस्त्रादि पहनाकर उसपर रक्खे और पान, कपूर, अगर, केसर, दीया, जूता, छाता, चमर, पंखा, आसन और घृत सहित बर्तन रख कर-ॐ मनुदैवत्यायै सोपकरणशय्यायै नमः—इस मंत्र से शय्या का पंचोपचार पूजन करके ब्राह्मण का भी—ॐ ब्राह्मणाय नमः—मंत्र से पूजन करे और—ॐ इमां सोपकरणशय्यां ददानि—कहकर ब्राह्मण के हाथ में जल डाल दे। ब्राह्मण उत्तर दे कि—ॐ ददस्व ॥ इसके बाद ब्राह्मण को उसी शय्यापर बैठा दे। परन्तु छान्दोग्य पद्धति में बैठाने की विधि नहीं है। यही ठीक भी है। कारण आगे शय्या छूने की बात आती है। इसके बाद-ॐ सोपकरणशय्यायै नमः—कह कर शय्या को नमस्कार करे, जरासा उस पर

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जल छिड़के और–ॐ काञ्चनपुरुषाय नमः–से मृतक की सो ने वाली मूर्ति का पूजन करके उसका अभिषेक करे । फिर कुश, तिल, जल लेकर संकल्प करे–ॐ अद्याशौचान्तद्वितीयेऽन्हि अमुक-गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिद्वाराऽक्षय्यपुण्य-लोकावाप्तिं कामयमानो मनुदैवत्यां (विष्णुदैवत्यां वा) शय्यां सोपकरणां काञ्चनपुरुषप्रतिमायुतामिमां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्स-न्नमम । इतना कहकर कुशादि उस ब्राह्मण के हाथ में दे । उसे लेकर ब्राह्मण उत्तर दे–ॐ स्वस्ति । पुनः शय्यादान की प्रतिष्ठा के लिये जल और कुशादि लेकर संकल्प करे–ॐ अद्य कृतैतच्छय्यादानप्रति-ष्ठार्थमिदं हिरण्यमग्निदैवतं तन्मूल्योपकल्पितं द्रव्यं वा तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ ब्राह्मण–ॐ स्वस्ति-कह कर उसे हाथ में लेकर शय्या को छू दे । बहुत जगह यह चाल है और बहुत सी पद्धतियों में लिखा भी है कि मृतक की सोनेवाली मूर्ति का दान शय्यादान के बाद पृथक् करना चाहिये । यदि ऐसा हो तो शय्या पर उस मूर्ति को न रक्खे । किन्तु अलग रखकर शय्या-दान कर डाले । ऐसा करने में शय्यादान के बाद दाता–ॐ यथा न कृष्णशयनं शून्यं सागरजातया । शय्या ममाप्यशून्यास्तु तथा जन्मनिजन्मनि–यह पढ़कर प्रणाम करे ॥ शय्यादान के समय मृतक की मूर्ति (काञ्चन पुरुष) के पूजन की भी आवश्य-कता नहीं है और दान के संकल्प से " काञ्चनपुरुषप्रतिमायु-ताम् " पद को भी निकाल देना चाहिये । शय्यादान के बाद–ॐ अद्य काञ्चनपुरुषदानं करिष्ये–यह संकल्प करे और काञ्चन पुरुष की पूजा करे–ॐ काञ्चनपुरुषाय नमः॥ फिर ब्राह्मण की पूजा करे–ॐ ब्राह्मणाय नमः । काञ्चनपुरुष के पास सुपारी या कोई अन्य फल रखदे । इसके बाद–ॐ काञ्चनपुरुषं ददानि–कह कर ब्राह्मण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के हाथ में जल दे। ब्राह्मण उसे लेकर-ॐ ददस्व--कहे। फिर कुशादि लेकर संकल्प करने से पहले कुश के जल से काञ्चनपुरुष को अभिषिक करने का मंत्र-ॐ काञ्चनपुरुषाय नमः ॥ तब संकल्प करे-ॐ अद्यैकादशाहे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिद्वाराऽक्षय्यपुण्यलोकावाप्तिं कामयमानः फलवासस्सहितकाञ्चनपुरुषं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ अनन्तादक्षिणा लेकर संकल्प करे-ॐ अद्य काञ्चनपुरुषदानस्य सम्पूर्णफलावाप्तये आग्नेयं हिरण्यं तन्मूल्योपकल्पितं द्रव्यं वा तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ ब्राह्मण-ॐ स्वस्ति- कहकर दोनों वार ले ले। परन्तु इस विडम्बना को व्यर्थ समझ हमने एक ही वार पूजा और संकल्प कर देना ठीक समझा है। यही बात गौडीय श्राद्ध प्रकाश में लिखी भी है। परन्तु जिन्हें आग्रह हो उनके लिये अलग भी लिख दिया है। इसके बाद और भी जितनी चीजें देनी हों और परिपाटी वश अलग अलग देने की इच्छा हो, उन सबों की नाम मंत्र से पूजा करके कुश के जल से अभिषेक करे और संकल्प करके ब्राह्मण को दे। हमने इसलिये नहीं लिखा है कि यह सब बातें निर्मूल और वाहियात हैं। साथ ही, जो कुछ भी देना हो एक ही वार शय्या के साथ ही संकल्प करके देना चाहिये और संकल्प में 'नानावस्तुयुतां' यह पद और भी जोड़ देना चाहिये। इसके साथही भोजन के पात्रों को (बटुली, कड़ाही तवा, कलछी, लोटा और गिलास को) भी देकर संकल्प कर देना चाहिये। अलग देने की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद कहीं कहीं, यदि ब्राह्मण ब्राह्मणी दोनों हो तो पूजा-द्विजदम्पती पूजा-भी लिखी है। यदि पूजा करना हो तो पहले संकल्प करे-ॐ अद्यैकादशाहे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिद्वाराऽक्षय्यलोकावाप्तिं कामयमानो द्विजदम्पत्योःपूजनं करिष्ये ॥ इसके बाद आसन पर बैठाकर-ॐ द्विजदम्पतिभ्यां नमः-पढ़कर उनका पांव

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding 1KS-MoE-Grant

धोकर इसी मंत्र से अर्घ, चन्दन, पुष्पादि से उनकी पूजा करे और भूषण, वस्त्र, नैवेद्यादि चढ़ाकर संकल्प कर ले-ॐअद्यैतानि पुष्प-धूपदीपवासोनैवेद्यादीनि द्विजदम्पतिभ्यां नमम । इसके बाद दक्षिणा लेकर-ॐ अद्य कृतैतद्द्विजदम्पतिपूजन-कर्मणः सांगतार्थमिमां यथाशक्तिदक्षिणां यथानाम-गोत्राभ्यां द्विजदम्पतिभ्यां युवाभ्यां संप्रददे ओं तत्स-नमम ॥ इसके उपरांत प्रणाम करे-ओं द्विजदम्पती पूजितौ स्थः क्षमेताम् ॥ तब उनको विसर्जित करके-ओं यस्यस्मृत्या-इत्यादि पढ़कर कर्म को ब्रह्मार्पण करे । इति शय्यादान ।

३-वृषोत्सर्ग ।

एकादशाह को शय्यादान के पश्चात् ही वृषोत्सर्ग का अवसर आता है । बहुत जगह तो अब यही चाल है कि मण्डप वगैरः कुछ न बनाकर योंही वृषोत्सर्ग कर देते हैं। यद्यपि यह परिपाटी असमर्थ होने पर या किसी विशेष कारण वश होनी चाहिये और मण्डप न बन सकने पर कोई साधारण छाया भी अवश्य बनाना चाहिये। परन्तु आजकाल ऐसा होता नहीं । मैदान मेंहीं सभी लोग करते हैं। यह ठीक नहीं है । यह तो महान् यज्ञ है । इसलिये इसमें तो मण्डप का निर्माण अवश्य होना चाहिये । इसीलिये हम मण्डप की विधि सहित ही लिखना चाहते हैं। जिन्हें विना मण्डप केही करने का असत् दुराग्रह है उनके लिये तो हमें कुछ कहनाहीं नहीं है । क्योंकि वे तो शास्त्र मर्यादा को भी तिलांजलि देकर केवल अपनी अन्धपरम्परा को ही सब कुछ मानते हैं । इससे उनका कुछ हर्ज भी नहीं है । वे उसको छोड़कर शेष कर्महीं कर सकते हैं । वृषोत्सर्ग की विधि में सामवेदी और यजुर्वेदी की क्रियायें भी भिन्न हैं । फिर भी जहां तक समानता है वहां तक एक साथ लिखकर उसके आगे अलग अलग लिखेंगे। वह समानता भी केवल मण्डप केही कार्य्यों में है, अस्तु ।

मण्डप के निर्माण की जो विधि ग्रंथारंभ में है उसी के अनुसार बनावे और उसी तरह सुसज्जित भी करे । अन्तर यही है कि ईशान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोन में नवग्रह की वेदी से उत्तर एक हाथ लम्बी चौड़ी और ग्रह-वेदी जितनीहीं ऊंची रुद्रवेदी बनावे । इसी पर रुद्र कलश की स्थापना होती है । वृषोत्सर्ग में प्रधान कलश वही उत्तर (रुद्र) कलशही है । मण्डप के बीच में जो प्रधान वेदी होगी वही विष्णु वेदी है और उस पर सर्वतोभद्र के देवताओं की पूजा होती है । यद्यपि एकादशाह के वृषोत्सर्गमें अभ्युदय श्राद्ध नहीं होता क्योंकि 'नश्राद्धेश्राद्धमिष्यते' श्राद्ध में श्राद्ध नहीं होता है, इसके अनुसार एकादशाह श्राद्ध के साथ नान्दीमुख श्राद्ध असंभव है । हां, जब एकादशाह, द्वादशाह के बाद कभी वृषोत्सर्ग होगा और उसमें श्राद्ध न होगा तो वृद्धिश्राद्ध करेंगे । फिर भी, मातृकापूजा तो नान्दीश्राद्ध से पृथक् है । अतएव वह होगी और उसकी वेदी भी बनेगी । हां, नैर्ऋत्य कोन में जो वास्तुवेदी बनती है उसके उत्तर नैर्ऋत्य और पश्चिम के बीच में प्रेतमातृका की भी एक वेदी वैसीही बनाई जाती है और उसपर सात प्रेतमातृकाओं का पूजन होता है । इसके सिवाय अग्निकोन से नैर्ऋत्य कोन तक चौदह कलशों की स्थापना करके उनमें चौदह यमों की भी पूजा की जाती है । होम की वेदी रुद्र कलश की वेदी से पश्चिम एक हाथ लम्बी चौड़ी बनाई जाती है । अथवा कुण्ड ही बनाया जाता है । इस प्रकार समस्त मण्डप और वेदी बनाकर और एक, दो या चार बछ-ड़ियों (वत्सतरियों) के साथ सांड़ या बछड़े को लेकर मण्डपके निकट रखे । इसके बाद कर्मपात्र (जलपात्र) का सम्पादन कर (७६) आसन पर पूर्वमुख बैठ आचमन प्राणायाम करके संकल्प करे-ॐ अद्य अमुक-मासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अ-मुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिपूर्वकाक्षय्यपुण्यलोकावाप्त्यर्थ-मेकादशाहेवृषोत्सर्गं करिष्ये ॥ तदर्थमाचार्यादिवरणमण्ड-पपूजनमारभ्यग्रहादिदेवतापूजनान्तं कर्म प्रथमं करिष्ये ॥ इसके बाद ७६ आदि पृष्ठोक्त रीति मण्डप और उसकी देवताओं की विधिवत् पूजा करे, जापक और द्वारपालों का स्थापन, वरण, पूज-नादि करे और महागणपति पूजनादि सभी क्रियायें वहीं लिखी रीति से समाप्त करे । परन्तु स्मरण रहे कि जिस समय मण्डप में दिक्पा-लों का पूजन समाप्त करचुके भरसक उसी समय, या उस समय न हो

P. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सकने पर सब साधारण पूजा के बाद अग्निकोन से लेकर नैऋत्य-कोन तक क्रमशः चौदह कलशों की स्थापना उसी तरह करे जिस तरह दिक्पालों की पूजा के लिये की गई है और हाथ में पुष्प अक्षत लेकर उनमें क्रमशः चौदह यमों का आवाहन करे-

ॐ भूर्भुवः स्वः यमाय धर्मराजाय मृत्यवे चान्तकाय च। वैवस्वताय कालाय सर्वभूतक्षयाय च ॥ १ ॥ औदुम्बराय दध्नाय नीलाय परमेष्ठिने । वृकोदराय चित्राय चित्रगुप्ताय वै नमः ॥ २ ॥ फिर इन्हीं मंत्रों को पढ़कर क्रम से चौदहों कलशों में उनकी प्रतिष्ठा 'मनोजूति०' (३७९) मन्त्र से करके इन्हीं से फिर चौदहों में पृथक पञ्चोपचार या षोडशोपचार से पूजा करे और पदार्थानुसमय (पृ० ५८) के अनुसार चौदहों में एक ही साथ पाद्य, अर्घ्य, आचमन, गन्ध आदि अलग अलग देना जावे । इसी तरह जब रुद्रवेदी पर रुद्र कलश की स्थापना करके उसमें वरुण का आवाहन पूजनादि कर चुके । क्योंकि वही प्रधान कलश है तो उसके बाद उसपर तांबे की रुद्रमूर्ति की स्थापना करे । यह यम-पूजा के बाद दूसरी विशेषता इस वृषोत्सर्ग में है । इसकी विधि यह है । पहले रुद्रकी प्रतिमाका अग्न्युत्तारण करके कलश के ऊपर रक्खे अग्न्युत्तारणकी रीति यह है कि प्रतिमाको तांबेके या किसी और शुद्ध पात्रमें रखकर उसके ऊपर पहले घी लगावे और उसके बाद अगले मंत्र से एक बार जलधारा से अभिषेक कर फिर दूध से करे। कहीं कहीं लिखा है कि अभिषेकका जल गर्म होना चाहिये । क्योंकि इसका नाम अग्न्युत्तारण है, अस्तु । मिट्टी की मूर्त्ति के अग्न्युत्तारणमें पुष्पसे जरा जरा जल छिड़कना चाहिये । मन्त्र-ॐ समुद्रस्य त्वावकयामि परिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्य ँ शिवो भव ॥१॥ हिरण्यस्य त्वा जरायुणाग्ने परिव्ययामसि । पावकोऽअस्मभ्य शिवोभव ॥ २ ॥ अपामिदं न्ययन ँ समुद्रस्य निवेशनम् । अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्य शिवोभव ॥३॥ नमस्ते हरसे शोचिषे नमस्तेऽअस्त्वर्चिषे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अन्याँस्तेऽअस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्य ँ शिवो-भव ॥४॥ प्राणदा अपानदाव्यानदावर्चोदवारिवोदाः। अ-न्याँस्ते अस्मत्तपन्तुहेतयःपावकोऽअस्मभ्यँशिवोभव॥५॥ इन्हीं मंत्रों से पहले जल से और पीछे दूध से नहलाकर पञ्चामृत से स्नान करावे। उसका मंत्र यह है-ॐ पञ्च नद्यः सरस्वती-मपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वती पञ्चधा सोदेशेऽभवत्स-रित्॥ इसके बाद प्रतिमा को कलश के ऊपर उसी पात्र में या किसी और पात्र में रखकर स्थापित कर दे। फिर रुद्र का आवाहन करे-ॐ नमस्ते रुद्र मन्यव उतोत इषवे नमः। बाहुभ्यामुतते न-मः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्र इहागच्छ इह तिष्ठ॥ और-ॐ मनोजूति० (३७९) मंत्र से उनकी प्राणप्रतिष्ठा करके-ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः-इस नाममन्त्र से षोडशोपचार पूजा करे। तीसरी विशेषता है प्रेतमातृकापूजा की। या तो मातृकापूजा के समय षोडश मातृका आदि की पूजा करके प्रेतमातृका की भी पूजा उसी पूर्व प्रदर्शित रीति से करे जिस तरह यमस्थापना तथा पूजा और रुद्रपूजा उन अवसरों पर की गई है। या यदि प्रथम साधारण मण्डपस्थदेवताओं की पूजा करके पीछे यमपूजा और रुद्रपूजा करे तो रुद्रपूजा के बाद ही प्रेतमातृकापूजा करे। उस वेदी के पास जाकर पहले सात प्रेतमातृकाओं की रचना सिन्दूर, चन्दन या लाल अक्षत से करे। रचना में कोई विशेषता का विचार न कर केवल चिन्ह बना दे और उनके पास कपास का बीज (बिनौला) रख कर अष्टधातु से मिश्रित लोहा भी एक स्थान पर रख दे। फिर-ओं कराली भीषणा रौद्री यमदंष्ट्रा कृशोदरी। उग्र-चण्डा महाकाली सप्तैता प्रेतमातरः॥ ॐभूर्भुवः स्वः प्रेत-मातृभ्यो नमः इहागच्छत इह तिष्ठत-पढ़कर पुष्पाक्षत से उनका आवाहन करे और-ॐ मनोजूति०-से प्रतिष्ठा करके-ॐ भूर्भुवः स्वः प्रेतमातृभ्यो नमः-इसी नाम मंत्र से उनकी षोडशोपचार पूजा करे और कम से कम उड़द के सात बड़े और

BHU Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सिन्दूर उन्हें विशेषरूप से चढ़ाकर यों प्रणाम करे-ॐ प्रेतमातरः पूजिताः स्थ क्षमध्वम् ॥ फिर उन्हीं के पास सात कलश के पास रख उनमें-ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः—इस मंत्र से यजुर्वेदी और-ॐ शन्नो देवीरभिष्टये शन्नो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः-से सामवेदी उनमें जल डाले। ॐ यवोऽसि यवयाऽस्मद्द्वेषोयवयारातीः-इस मंत्र से जा-ॐ तिलोऽसिसोमदेवत्यो गोसवो देवनिर्मितः। प्रत्नमद्भिः पृक्तः प्रेतमिमँल्लोकं प्रीणयाहि नः-मंत्र से तिल और-ॐ पवित्रे स्थो वैष्णव्यौ-इस मंत्रसे उसमें कुश डाले। इसके बाद उस जल को अलग अलग सातों कलशों से लेकर अपने सिर पर यजमान डालले। यहाँ तक की क्रियायें दोनों वेदों के लिये समान हैं। यदि चाहे तो ग्रहहोम भी कुशकण्डिका करके २०५ पृष्ठोक्तरीति से कर ले।

इससे बाद यजुर्वेदी १८५ पृष्ठोक्तरीति से अग्निकुंड में या वेदी पर पंचभूसंस्कारपूर्वक रुद्रनामक अग्नि की स्थापना, ब्रह्मा का वरण, कुश परिस्तरण करके अग्नि से उत्तर या पश्चिम सभी पदार्थों को रक्खे। यहाँ विशेषता यही होगी कि आज्य (घी) के बाद चावल, दूध (खीर बनाने को), चावल का पीठा रखकर उसके बाद पूर्णपात्र रक्खेंगे और उसी के साथ दक्षिणा का द्रव्य रख देंगे। इसके बाद पवित्र बनाने से लेकर घी को आज्यस्थाली (घीके बर्त्तन) में रखने तक की क्रियायें करके चरुस्थाली (खीर बनाने के पात्र) में चावलों को रखकर उन्हें तीन बार धोवेंगे और उसके बाद उसमें प्रणीता का जल तथा दूध डालकर अग्निकुंड से उत्तर दो स्थानों में आग रख कर दोनों को (घी और चावल को) आग पर क्रमशः दक्षिण उत्तर रख देंगे। फिर तृण जलाकर घी और खीर के चारों ओर घुमाकर अग्नि में डालने से लेकर स्रुव के तपाने, झाड़ने और दहिनी ओर रखने तक के काम करके पहले घी को उतारकर जल से पूर्ण होकर लाकर उससे उत्तर रक्खेंगे और घी से पश्चिम होकर चरु उससे उत्तर लावेंगे। पुनः अपने सामने उत्तराग्र कुश डालकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उस पर पहले घी और उससे उत्तर चरु रख देंगे । तब घीके उत्पवन से लेकर पवित्र को प्रणीता में रखने तक की बची बचाई कुशकण्डिका करके दहिना घुटना टेककर ब्रह्मा के अन्वारंभ के विनाहीं घी से आगे लिखी आहुतियां दे । इसीलिये इन छ आहुतियों का संस्रव भी नहीं रक्खा जाता है । स्मरण रहे कि यदि ग्रहहोम करना हो तो वहां पर पहले उसेही करके बलि भी देलेंगे-ॐ इहरतिः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ॐ इह रमध्वं स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ २ ॥ ॐ इहधृतिः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥ ॐ इहस्वधृतिः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ४ ॥ ॐ उपमृजं धरुणं मात्रे धरुणो मातरं धयन्स्वाहा इदमग्नये नमम ॥५॥ ओं रायस्पोषमस्मासुदीधरत्स्वाहा इदमग्नये नमम ॥६॥ इसके बाद अन्वारंभ करके आघार आज्यभाग की चार आहुतियां दे और प्रोक्षणी में संस्रव रखता जावे-(अग्नि के उत्तर भाग में मन से) ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ १ ॥ (दक्षिण में) ओं इन्द्राय स्वाहा इद मिन्द्रायनमम ॥ २ ॥ (ईशान भाग में) ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ३ ॥ (अग्नि कोन में) ओं सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम ॥ ४ ॥ फिर अन्वारंभ छोड़कर और संस्रव के बिना केवल खीर की आहुति दे-ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ओं रुद्राय स्वाहा इदं रुद्राय नमम ॥ २ ॥ ओं शर्वाय स्वाहा इदं शर्वाय० ॥ ३ ॥ ओं पशुपतये स्वाहा इदं पशुपतये० ॥ ४ ॥ ओं उग्राय स्वाहा इदमु० ॥ ५ ॥ ओं अशनये स्वाहा इदम० ॥ ६ ॥ ओं भवाय स्वाहा इदं० ॥ ७ ॥ ओं महादेवाय स्वाहा इदं० ॥ ८ ॥ ओं ईशानाय स्वाहा इदमीशानाय० ॥९॥ इसके बाद पीठा लेकर उसकी भी एक आहुति दे-ओं पूषागा

By Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अन्वेतु नः पूषा रक्षत्वर्वतः । पूषा वाजं सनोतु नः स्वाहा इदं पूष्णे नमम ॥ फिर खीर और पीठा दोनों में घी मिश्रित कर आहुति दे-ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ इसके उपरान्त ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर १६४ पृष्ठोक्त तीन व्याहृति, पांच पञ्चवारुणी और एक प्रजापति की ये दो आहुतियां घी से देकर प्रोक्षणीपात्र में संस्रव रखता जावे । होम के बाद, यदि होम न भी किया हो, या होम करके भी दिक्पाल आदि को बलि न दीगई ही तो २१४ पृष्ठोक्त रीति से होमवेदी के चारों ओर या मण्डप के ही चारों ओर भात और उड़द की बलि दे । इसके बाद संस्रव प्राशन आदि से बर्हिः होम तककी क्रियायें २४३ पृष्ठोक्त रीति से कर डाले । ब्रह्मा की दक्षिणा में भी वहीं के वाक्य पढ़े और यदि होता हो तो उसे भी यहीं दक्षिणा दे । उसकी दक्षिणा के संकल्प का वाक्य- ओं अद्य कर्तव्यवृषोत्सर्गांगभूतहोमादिसमस्तकर्मप्रतिष्ठार्थमेतां दक्षिणां यथानामगोत्राय होत्रे तुभ्यं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ बर्हिः होम के बाद पूर्णाहुति करना चाहे तो वहीं लिखी विधि से करके त्र्यायुष करले । परन्तु बहुत जगह निषेध भी है । इसीलिये पूर्णाहुति का करना कर्ता की मर्जी पर ही है । करे या न करे । इसके बाद-ॐनमस्तेरुद्रमन्यव०-से लेकर अध्याय के अन्ततक के ६६ मंत्रों का अवश्य पाठ करे । यह मंत्र ग्रन्थ में हैं आगे मे मिलेंगे । इसके बाद आचार्य केसर या चन्दन से पहले खड्ग के अगले दहिने पांव के ऊपर कोख के निकट त्रिशूल का और पिछले बायें पांव के ऊपर कमर में चक्र का चिन्ह बनावे । चक्र ८ अंगुल का और त्रिशूल १२ अंगुल में बनाया जावे । अधिकतर पद्धतियों में आगे दहिनी ओर त्रिशूल और पीछे बाईं ओर चक्र बनाने को लिखा है । परन्तु इससे उलटा भी वचन है कि आगे चक्र और पीछे त्रिशूल रहे । आगे दहिने पांव का पेट में जहां जोड़ है उसके ऊपर या उससे जरा आगे बगल में चिन्ह होना चाहिये । इसी तरह पीछे बाईं ओर पाँव और पेट के जोड़ के ऊपर या जरासा पीछे होना चाहिये । मैथिल पद्धति में भी आगे चक्र और पीछे त्रिशूल लिखा है । इसलिये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जैसी जहाँ परिपाटी हो करे । इसके बाद लोहार को बुलवाकर और उसके द्वारा तर्जनी अंगुली ऐसा मोटा लोहा गर्म करवाकर उसी चिन्ह पर दगवावे । फिर उसे दक्षिणा देकर बछड़ियों सहित सांड़ को आगे खड़ा करके उसके पीछे पूर्वमुख स्वयं खड़ा होकर आचार्य आगे के मंत्रों सेउसका अभिषेक करे या नहलावे-ॐ हिरण्यवर्णाः शुचयः पावका यासुजातः कश्यपो यास्विन्द्रः । याअग्निं गर्भं दधिरे विरूपास्तान आपः श ँ स्योनाभवन्तु ॥१॥ यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यन् जनानाम् । मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता न आपः श ँ स्योना भवन्तु ॥ २ ॥ यासां देवा दिवि कृण्वन्ति भक्षं या अन्तरिक्षे बहुधा भवन्ति । याः पृथिवीं पयसोऽदन्ति शुक्रास्ता न आपः श ँ स्योना भवन्तु ॥ ३ ॥ शिवेन मा चक्षुषा पश्यतापः शिवया तनुवोपस्पृशत त्वचं मे । सर्वा ँ अग्नि ँ रप्सुषदोहुवेवो मयिवर्चो बलमोजो निधत्त ॥ ४ ॥ ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ ५ ॥ कहीं कहीं लिखा है कि यह स्नान वा अभिषेक रुद्रकलश के जल से करना चाहिये । यही उचित जान भी पड़ता है । तब बछड़ियों और सांड़ के गले में लोहे का घंटा बांध कर देह को खद्दर से ढांके और छोटी घंटी पहना कर माला से सुसज्जित करे । गले में भी एक माला पहनावे और मंत्र पढ़े-ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात् ॥ १ ॥ ॐ ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽअध्यजायत ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः । समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरोऽअजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् । दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथोस्वः ॥ २ ॥ इन दो गायत्री और अघमर्षण मंत्रों को जप कर

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पूर्ववत् आगे ग्रन्थ में लिखा 'नमस्तेरुद्र०' इत्यादि रुद्राध्याय और 'स-हस्रशीर्षा०' आदि पुरुषसूक्त जपे और उसके बाद इन कूष्मांड मंत्रों को जपे-ओं यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमावयम् । अग्निर्मा तस्मादेनसोविश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ १ ॥-यदिदिवा यदिनक्तमेना ँ सि चकृमा वयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ २ ॥ यदि जाग्रद्यदि स्वप एना ँ सि चकृमावयम् ।सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ ३ ॥ इसके उपरान्त सांड़ के दहिने कान में कहे-ओं पिता वत्सानां पतिरघ्न्यानामथो पितामहतां गर्गाणां वत्सो जरायुः। प्रतिधुक् पीयूष आयुष्या घृतं तदृषभस्य रेतः ॥ १ ॥ ओं वृषोहि भगवान्धर्मश्चतुष्पादः प्रकीर्त्तितः । वृणोमि तमहं भक्त्या स मां रक्षतु सर्वतः ॥ २ ॥ इसके बाद उत्तरमुख होकर बांयें हाथ से सांड़ की पूंछ पकड़े और दहिने हाथमें कुश तिल जल लेकर संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिपूर्वकाक्षय्यपुण्यलोकावाप्तिकाम एनं वृषभं रुद्रदैवत यथाशक्त्यलंकृतं गन्धपुष्पाद्यर्चितं त्रिशूलचक्रांकितं वत्सतरीयुतमहमुत्सृजामि ॥ ओं एनं युवानं पतिं वो ददामि तेन क्रीडन्तीश्चरत प्रियेण। मा नः साप्तजनुषा सुभगा रायस्पोषेण समिषा मदेम ॥ इतना पढ़कर कुश जल तिलादि भूमि पर गिरादे और बैल को ईशान कोन में पांच कदम चलाने के बाद बछड़ियों के साथ उसकी पूजा—ओं वत्सतरीसहितवृषाय नमः-इस नाममंत्र से अर्घ्यपाद्यादि षोडशोपचार वाली (पृ० ४३) करे । फिर बछड़ियां यदि कई हों तो उनके मध्य में उस बैल को करके उसकी ओर देखकर या दहिने हाथ की अनामिका से उसे छूकर ही उसका अभिमंत्रण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इन मंत्रों से करे-ओं मयोभूराभिमावाहि स्वाहा मारुतोऽसिमरुतांगणः । शंभूर्मयोभूराभिमावाहि स्वाहा वस्यूरसिन्दुवस्वान् ॥ शंभूर्मयोभूराभिमावाहि स्वाहा ॥ ॥१॥ यास्ते अग्ने सूर्येरुचो दिवमातन्वन्ति रश्मिभिः । ताभिर्नो अद्य सर्वाभी रुचे जनायनस्कृधि । यावोदेवाः सूर्येरुचो गोष्वश्वेषु या रुचः । इन्द्राग्नी ताभिः सर्वाभी रुचन्नो धत्त । बृहस्पते रुचन्नो धेहि ब्राह्मणेषु रुच ँ राजसुनस्कृधि रुचं विश्वेषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचारुचम् ॥ ॥२॥ तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमाना हविर्भिः ॥ अहेडमानो वरुणेहवोध्युरुश ँ समान आयुः प्रमोषीः ॥ ३ ॥ स्वर्णघर्मः स्वाहा स्वर्णार्कः स्वाहा स्वर्णशुक्रः स्वाहा स्वर्णज्योतिः स्वाहा स्वर्णसूर्यः स्वाहा ॥ ४ ॥ इसके पश्चात् अपसव्य होकर दक्षिण मुख बायां घुटना टेक दे और दोनों हाथ की अंजली में जौ, तिल, मोटक, जल और बैल की पूंछ पकड़ नीचे के मंत्र से तीन अंजलियाँ पितृतीर्थ से पितरों को दे । यह कर्म प्रेत के लिये नहीं है । इसीलिये मोटक लेना चाहिये और समूचे श्लोकों को पढ़कर एक अंजली देना चाहिये । फिर इसी तरह दूसरी और तीसरी भी—ओं स्वधा पितृभ्यो मातृभ्यो बन्धुभ्यश्चापि तृप्तये । मातृपक्षाश्च ये केचिद्येचान्ये पितृपक्षजाः । गुरुश्वशुरबन्धूनां ये कुलेषु समुद्भवाः ॥ १ ॥ ये प्रेतभावमापन्ना ये चान्ये श्राद्धवर्जिताः । वृषोत्सर्गेण ते सर्वे लभन्तां प्रीतिमुत्तमाम् ॥ २ ॥ इसके अनन्तर यजमान ब्राह्मणों को बुलाकर डांट के साथ उनसे कहे-नचाज्यं नचतत्क्षीरं पातव्यं केनचित्क्वचित् । वृषाह्वोऽसौ वृषश्चैवमृते गोमूत्रगोमये ॥ इसके बाद खीर बनवाकर तीन या अधिक ब्राह्मणों को भोजन कराके बहुत

By Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

घास और पानी से हरेभरे जंगल में या बहुत गायों के गरोह में बछड़ियों सहित सांड़ को छोड़दे । इस प्रकार वृषोत्सर्ग के कृत्य को पूरा करके उसी सिलसिले में कपिलाधेनु या गौ का दान करे। यह भी जान लेना चाहिये कि पति पुत्र वाली स्त्री के पति से पहले मरने पर वृषोत्सर्ग न कर केवल यही गोदान हीं करते हैं। उसकी विधि यह है। कपिला गौ को पूर्वमुख खड़ी कर उसकी पूंछ के पास यजमान भी पूर्वमुख ही बैठ जावे और अपने दक्षिण ओर सत्पात्र ब्राह्मण को बैठाकर कुशादि लेके संकल्प करे—ओं अद्या-मुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य स्वर्गकामो गोदानमहं करिष्ये तदंगतया गोर्ब्राह्मणस्य च पूजनं करिष्ये ॥ इसके बाद ७४ पृष्ठोक्त रीति से ब्राह्मण के पांव धोकर चन्दनपुष्पादि चढ़ावे और हाथ में पुष्प, माला, चन्दन, वस्त्र और कुशादि लेकर—ओं अद्य करिष्यमाणगोदानार्थमेभिश्चन्दनवस्त्रादिभि-स्त्वामहं वृणे—यह पढ़े और ब्राह्मण के हाथ में सभी चीजें रख दे । ब्राह्मण उत्तर दे कि—ओं वृतोऽस्मि ॥ इसके बाद गौ की पूजा करे। पहले अक्षत पुष्प लेकर पढ़े—ओं आवाहयाम्यहं देवीं त्रैलोक्येषु च मातरम् । यस्याः शरणमाविष्टः सर्व-पापैः प्रमुच्यते ॥ १ ॥ त्वं देवी त्वं जगन्माता त्वमेवा-सि वसुन्धरा । सावित्री त्वं च गायत्री गंगा त्वं च सर-स्वती ॥ २ ॥ तृणानि भक्षसे नित्यममृतं स्रवसे प्रभो । भूतप्रेतपिशाचाँश्च पितृदैवतमानुषान् । सर्वांस्तारयसे देवि नरकात्पापसंकटात् ॥ ३ ॥ ओं भूर्भुवः स्वः धेनो इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ और उसपर पुष्पाक्षत डालकर उसका आवाहन और प्रतिष्ठा करके पूजा करे । पहले चन्दन चढ़ावे ओं सर्वदेवप्रियं देवि चन्दनं मलयोद्भवम् । कस्तूरी-कुंकुमाढ्यं च गौर्गन्धः प्रतिगृह्यताम् ॥ फूल चढ़ावे ओं ऐरावतकुले जाता शतक्रतुप्रिया सदा । या लक्ष्मी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वभूतानां या च देवेष्ववस्थिता । धेनुरूपेण सा-देवी मम पापं व्यपोहतु ॥ इसके बाद अंगों की भी पूजा च-न्दन और पुष्प से करे। अंगों की पूजा में केवल आगे के नाममंत्रही बोले-(मुख)-ॐ आस्याय नमः। (सींगें)-ॐ शृंगाभ्यां नमः। (पीठ)-ॐ पृष्ठाय नमः। (पूंछ)-ॐ पुच्छाय नमः। (अगले पांव)-ॐ पूर्वपद्भ्यान्नमः। (पिछले पांव)-ॐ प-श्चिमपद्भ्यान्नमः ॥ फिर प्रत्येक अंगों को और गौ को भी धूप दे-ॐ वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ दीपक-ॐ साज्यं च वर्त्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया । दीपं गृहाण सुरभे मया दत्तं हि भक्तितः॥ नैवेद्य या गोग्रास-ॐ वैष्ण-वि सुरभे मातर्नित्यं विष्णुपदे स्थिते। नैवेद्यं हि मया दत्तं गृह्यतां पापहारिणि॥खद्दर-ॐ आच्छादनं च कौशेयं शुद्धं चैव सुनिर्मलम् । सुरभ्यै दीयमानं तु प्रीयतां केशवः सदा ॥ खद्दर गौ को ओढ़ा दे। घंटा बाँधे-ॐ यत्ते मयार्पितं शुद्धं घंटाचामरसंयुतम्। सुरभे तद् गृहाणेदं मुनित्रिदश-वन्दिते ॥ इसके बाद गौ की प्रदक्षिणा करके उत्तरमुख हो जावे और अंजली में गौ की पूंछ पकड़कर उसी पर कुश, जौ, श्वेत तिल और जल डालकर पहले देवताओं का तर्पण करे। हरेक मंत्र के बाद देवतीर्थ से जल गिरादे। मंत्र के अन्त में एक, दो आदि अंक दिये हैं-ॐ गणपतिस्तथा ब्रह्मा केशवो रुद्रदेवताः। लक्ष्मीः सरस्वती चैव ये चान्ये च नवग्रहाः। ते सर्वे तृप्तिमाया-तु गोपुच्छोदकतर्पणैः ॥ १ ॥ (यह अन्त का आधा आगे सर्वत्र अन्त में मिलेगा। इस लिये हम इसे बार बार न लिखेंगे। केवल संकेत कर देंगे।-ॐदेवाधिदेवताः सर्वास्तथा प्रत्यधिदेवताः।

Bhu Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नक्षत्रवसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः । तेसर्वे० ॥२॥
ॐ किन्नराश्च पिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः । दैत्या-
श्च दानवाश्चैव ये चान्येऽप्सरसां गणाः । ते० ॥ ३ ॥ ॐ
पुलस्त्यः पुलहश्चैव दत्तात्रेयोऽथ भार्गवः । वसिष्ठां-
गिरसा वापि कश्यपश्चैव काश्यपाः । ते० ॥ ४ ॥ ॐ
ऋषयो मनवो देवा अधस्था भूमिदेवताः । वाय्वाधा-
रा जलाधारा साध्या यक्षास्तथैव च । ते० ॥ ५ ॥ ॐ
सरितः सागराश्चैव पर्वता वनमेव च । लता औषध-
श्चैव मृगा आरण्यवासिनः । ते० ॥ ६ ॥ ॐ स्वाहा स्व-
धा तथा लक्ष्मीर्वृद्धिः श्रद्धा सरस्वती । मेधा प्रीतिस्तथा
लज्जा कीर्त्तिश्च दशमी तथा । ताः सर्वास्तृप्ति० ॥ ७ ॥
ॐ विश्वाद्याश्चैव ये देवा ये च वैकुंठवासिनः । गरुडास्व-
मारूढा आगताः पुच्छगोचरे । ते० ॥ ८ ॥ ॐ आदि-
त्याद्या ग्रहाः सर्वे ऋक्षाश्चाश्विनिकादयः । मेषाद्या रा-
शयश्चैव योगाविष्टंभकादयः । ते० ॥ ९ ॥ इसके बाद ग
में जनेऊ डालकर या तो चित्रवर्ण के तिलों के साथ जौ लेकर या
न मिलें तो केवल जौ और कुशों से मनुष्यतर्पण करे—ओं सन-
सनन्दनश्चैव तृतीयश्च सनातनः । कपिलश्चासुरिश्चै-
वोढुः पंचशिखस्तथा । ते सर्वे० ॥१०॥ अपसव्य होकर क
तिल और कुशों से पितरों का तर्पण करे—ओं पितापितामहश्चै-
तथैव प्रपितामहः । मातामहस्तत्पिता च वृद्धमातामह-
स्तथा । ते सर्वे० ॥ ११॥ ओं माता पितामही चैव त-
प्रपितामही । मातामह्यादयः सर्वास्तथैवान्याश्च गोत्रजा-
ताः सर्वास्तृप्ति० ॥१२॥ ओं पितृवंशे मृता ये च मा-
वंशे तथैव च । गुरुश्वसुरबन्धूना येचान्ये बान्धवाः स-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ताः । ते० ॥ १३ ॥ ओं ये मे कुले लुप्तपिंडाः पुत्रदार-
विवर्जिताः । क्रियालोपगता ये च ये चांधाः पंगवस्तथा ।
ते० ॥ १४ ॥ ओं विरूपा आमगर्भा ये ज्ञाताज्ञातकुले
मम । वृक्षयोनिगता ये च ये च कीटपतंगकाः । ते०
॥ १५ ॥ ओं नरके रौरवे सर्वे महारौरवसंस्थिताः ।
असिपत्रवने घोरे कुंभीपाके च ये गताः । ते० ॥ १६ ॥
ओं स्वार्थबन्धमृता ये च शस्त्रादिविषमोहिताः । ते० ॥
॥ १७ ॥ ओं ब्रह्महस्तैर्मृता ये च सिंहसर्पैश्च शृंगिभिः ।
चांडालेन मृता ये च पार्थिलोपगताश्च य । ते० ॥ १८ ॥
ओं जलमध्ये मृता ये च ह्यल्पमृत्युगताश्च ये । वन्दीमध्ये
मृता ये च स्त्रीहस्तेनैव ये मृताः । ते० ॥ १९ ॥ ओं ये च
ब्रह्माण्डखंडे च वसंति पितृदेवताः । सर्वे च मानवाना-
गा आगताः पुच्छगोचरे । ते० ॥ २० ॥ ओं देवासुरास्त-
था यक्षा नागा गन्धर्वराक्षसाः । पिशाचा गुह्यका
सिद्धाः कूष्मांडास्तरवः खगाः ॥ जलेचरा भूनिलया
व्याधाराश्च जन्तवः । प्रीतिमेते प्रयान्त्वाशु मद्दत्ते-
नाम्बुनाखिलाः ॥ २१ ॥ ओं आब्रह्मणो ये पितृवंश-
जाता मातुस्तथा वंशभवा मदीयाः । वंशद्वयेऽस्मिन्मम
दासभूता भृत्यास्तथैवाश्रितसेवकाश्च । ते० ॥ २२ ॥

इसके बाद सव्य होकर आचमन कर ले और कुशादि को रख कर गौ
की प्रार्थना करे-ॐ या लक्ष्मीः सर्वभूतानां या वै देवेष्वव-
स्थिता । धेनुरूपेण सा देवी मम पापं व्यपोहतु ॥ १ ॥
गावो ममाग्रतः सन्तु गावो मे सन्तु पृष्ठतः । गावो मे
हृदये सन्तु गवां मध्ये वसाम्यहम् ॥ २ ॥ फिर गौ की पूंछ
और कुश तिल जलादि हाथ में लेकर संकल्प करे-ओं अद्यैकाद-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शाहे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिद्वारा-
ऽक्षय्यपुण्यलोककाम इमां गां सवत्सां सुपूजितां पय-
स्विनीं यथाशक्तिभूषणाद्यलंकृतां सदोहनपात्रां रुद्रदैवतां
यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्स-
न्नमम ॥ यह पढ़कर जल कुशादि सहित गौ की पूंछ ब्राह्मण के
हाथ में दे दे और वह ब्राह्मण—ॐ द्यौस्त्वा ददातु पृथिवी त्वा प्र-
तिगृह्णातु देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां
पूष्णो हस्ताभ्यां प्रतिगृह्णामि ॐ स्वस्ति—पढ़कर उसे ले ले।
तब यजमान ईश्वर की प्रार्थना करे—ॐ यज्ञसाधनभूता या
विश्वस्याघप्रणाशिनी । विश्वरूपधरो देवः प्रीयतामनया
गवा॥ फिर हाथ में सुवर्ण या अन्य द्रव्य स्वरूप दक्षिणा और कुशादि
लेकर संकल्प करे—ॐ अद्य कृतैतद्गोदानप्रतिष्ठार्थमिदं
सुवर्णमग्निदैवतं यथाशक्ति द्रव्यान्तरं वा यथानाम
गोत्राय ब्राह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम॥ यह
कहकर ब्राह्मण के हाथ में उसे दे दे और वह—ॐ स्वस्ति—कहकर
ले ले। फिर ब्राह्मण—ॐ द्यौः शान्तिः० इत्यादि (पृ०३८७) पढ़कर
गौ की पूंछ के जलसे यजमान का अभिषेक करके यजमान को आशी-
र्वाद दे—ॐ सोमो धेनुं सोमो अर्वन्तमाशुं सोमो वीरं
कर्मण्यं ददाति । सादन्यं विदथ्यं सभेयं पितृश्रवणं
यो ददाशदस्मै ॥ इसके बाद यजमान ब्राह्मणसहित गौ की
तीन प्रदक्षिणा करे—ॐ लक्ष्मीर्या लोकपालानां धेनुरूपेण
संस्थिता । घृतं वहति यज्ञार्थे मम पापं व्यपोहतु ॥ फिर
गौ सहित ब्राह्मण को चलाकर पीछे थोड़ा चले और यह गोमती मंत्र
ॐ गावो मामुपतिष्ठन्तु हेमशृंग्यः प्रयोमुचः । सुरभ्य-
सौरभेय्यश्च सरितः सागरं यथा ॥१॥ गा वै पश्यामो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding-IKS-MoE-Grant-2

नित्यं गावः पश्यन्तु मां सदा। गावोऽस्माकं वयं तासां यतो गावस्ततो वयम् ॥ २ ॥ इसके बाद न्यूनातिरिक्तदोष-परिहारार्थं भूयसी दक्षिणा का संकल्प करे—ॐ अद्यानुष्ठितवृषोत्सर्गकपिलादानकर्मणोः न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थं यथाशक्तीमां भूयसीं दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो जनेभ्यः संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ अन्तमें २५६ पृष्ठोक्त रीति से कर्म को ब्रह्मार्पण कर ईश्वर का स्मरण करे। यदि भैंस का दान करना हो तो उसका भी संकल्प करले। उसकी केवल पूजा ही करे, तर्पणादि नहीं।

इस प्रकार यजुर्वेदियों के वृषोत्सर्ग और कपिलादान की विधि लिखने के बाद सामवेदियों की विधि भी लिख देना आवश्यक है। कुशकण्डिका से पहले की क्रिया तो पहले ही पृष्ठ ५१४ में लिख चुके हैं। उतना कर चुकने पर १८५ पृष्ठोक्त रीति से पञ्चभूसंस्कार और रुद्रनामक अग्नि की स्थापना पूजा आदि करके होम से पूर्व तक की क्रियायें ३५८ पृष्ठोक्त सावित्र चरुहोम की रीति से कर डाले। अथवा १६५ पृष्ठोक्त सामवेदी कुशकण्डिका तथा सावित्रहोमविधि को मिला कर करे। इसका आशय यह है कि सामवेदी कुशकण्डिका की क्रियायें चरुहोम में कुछ इधर हो जाती हैं और एकाध बात आज्य होम से चरु होम में अधिक भी होती है। इसी लिये साधारण कुशकण्डिका से चरुहोम की जरा भिन्न है और वही बात सावित्र होम में बता दी गई है। वृषोत्सर्ग होम भी चरुहोम ही है। इसीलिये इसमें भी चरुहोम की ही कुशकण्डिका होगी। मगर प्रत्येक होम में कुछ विशेषता होने से जो कुछ उलट पलट होगा उसका संकेत हम कर देते हैं। रुद्रनामक अग्निस्थापन से लेकर होम के पात्रों को रख उनके प्रोक्षण तक की क्रियायें साधारण होम की १६५ पृष्ठोक्त कुशकण्डिका की रीति से करे। अन्तर केवल इतना हीं होगा कि खीर के लिये दूध भी रखना होगा और अग्निस्थापन और उसमें समिध डालने के बाद जो भूमि जप, न्यञ्चकरण और परिसमूहन किया जाता है उसे वहां न कर होम के पात्र आदि के प्रोक्षण के बाद करना चाहिये। सावित्र होम में इसे हटाकर चरु के अभिधारण के बाद

Re Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

किया है । अस्तु, इसप्रकार न्यञ्चकरण, भूमिजप और परिसमूहन करके धान को ओखली में उसी तरह रक्खे और कूटे जैसा कि सावित्र में होम किया है । अर्थात् पूर्वमुख हो अग्नि से पश्चिम बैठकर आगे पूर्वाग्र कुश पर ओखली मूसल रखकर उसमें कांसे के पात्र या चरुस्थाली से उठाकर अगले प्रत्येक मंत्रों से धान डाले । मगर एक बार हरेक मंत्र से डालकर दो बार विना मंत्र के भी डाल ले । तब दूसरे मंत्र से डाले । इसे हविर्निर्वाप कहते हैं । इस के मंत्र- (१) ओं अग्नये त्वा जुष्टं निर्वपामि ॥ (२) ओं पूष्णे त्वा जुष्टं निर्वपामि ॥ (३) ओं इन्द्राय त्वा जुष्टं निर्वपामि॥ (४) ओं ईश्वराय त्वा जुष्टं निर्वपामि ॥ फिर खड़ा होकर कम से कम तीन बार कूटे । उस समय मूसल पकड़ने में दहिना हाथ ऊपर और बायां नीचे रहे । बाहर निकालकर सूप से चावल साफ करे और तीन बार धोवे । इसके बाद ही पवित्र २०० पृष्ठोक्त रीति से बनावे जो अग्नि में २० इध्मों के डालने के बाद वहां बनाया गया है । सावित्र होम में भी यहीं बनाया जाता है । इसके बाद चरुस्थाली में पवित्र रख उस पर मुट्ठी से चावल डाले और गौ का दूध डाल कर खीर पकावे । इसीलिये पहले दूध भीघी के बाद ही रक्खा जाय । फिर चरु को मेक्षण से चलाकर अग्नि पर ही छोड़दे और अग्निस्थान के ईशान में एक हाथ लम्बी चौड़ी वेदी बना डाले, अथवा रुद्रवेदी तो बनी है ही । उसीपर लाल खद्दर डाले और उस कपड़े पर चावल छींटकर वहीं चार बछड़ियों सहित सांड़ का आवाहन करे-ॐ नन्दामावाहयामि । ओं सुमनामावाहयामि । ओं सुभद्रामावाहयामि । ॐ सुशीलामावाहयामि । ओं सुरभीमावाहयामि ॥ इसके बाद इस वेदी के ही ईशान भाग में इसी छ वेदी पर रुद्रकलश की स्थापना १४६ पृष्ठोक्त रीति से करके उसमें रुद्र का आवाहन करे-ॐ भूर्भुवः स्वः रुद्राय नमः रुद्रमावाहयामि ॥ इसके अनन्तर-ओं भूर्भुवः स्वः नन्दादिसहितरुद्राय नमः-इसी मंत्र से नन्दाआदि और रुद्र की भरसक षोडशोपचार से पूजा करे । पूजा के बाद रुद्रसंहिता या 'नमस्ते रुद्रमन्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व०' इत्यादि रुद्राध्याय का पाठ करे जो ग्रन्थान्त में लिखा है। तब चरु में अग्नि परही पवित्र रख उस पर स्रुव से घी डालकर उतार ले, उसे उत्तर ओर पूर्वाग्र कुशों पर रख फिर घी डाले और अग्नि में एक और समिध डालकर उसे तेज करके कुशों का परिस्तरण करे, जो१९९ पृष्ठ में होमीय पदार्थों के प्रोक्षण के बाद लिखा गया है। तब अपने सामने उत्तराग्र कुशों पर खीर रख २० इध्मों में घी लगाकर अग्नि में डाले और २०० पृष्ठोक्त रीति से घृत का सभी संस्कार करके स्रुवादिका भी संस्कार करे। फिर चरु से दक्षिण कुशों पर घी रखकर २०१ पृष्ठोक्त जलांजलिसेचन और अग्निपर्युक्षण करके वहीं लिखा प्रपदवैरूपाक्षजप करे। इस समस्त क्रम के देखने से मालूम होगा कि सावित्र होम और इस होम के क्रम में और कोई अन्तर नहीं है। केवल भूमिजप और परिसमूहन वहां कुशपरिस्तरण से पूर्व और चरु में घी डालकर अग्नि में समिध डालने के बाद लिखा है और यहां होमीय पदार्थों को रखकर उनके प्रोक्षण के बाद ही। शेष सभी बातें ज्यों की त्यों हैं और हमारे विचार से सावित्र होम में भी यदि ये दोनों काम इसी तरह किये जायं तो कोई हर्ज नहीं है। कारण, दोनों हीं चरुहोम हैं। इतना कर लेने पर पहले ३६१ पृष्ठोक्त रीति से आज्यभाग की दो आहुतियां दे। वहां जो चतुरवत्ती और पञ्चावत्ती के लिये विधि लिखी है, यहां उसी से हमारा अभिप्राय है। उसी विनियोग के बाद आज्यभाग–(१) ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम। (२) ओं सोमाय स्वाहा इदं सोमाय नमम॥ फिर वहीं लिखी विधि से चरुहोम करे-प्रजापतिर्ऋषिर्यजुरग्न्यादयो देवताश्चरुहोमे विनियोगः। (१) ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम। (२) ओं पूष्णे स्वाहा इदं पूष्णे नमम। (३) ओं इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमम (४) ओं ईश्वराय स्वाहा इदमीश्वराय नमम॥ फिर चतुरवत्ती और पञ्चावत्ती अपनी अपनी रीति से घृत से चार आहुतियां दें-(१) सोमꣳ राजानं वरुणमग्निमन्वारभामहे। आदित्यं विष्णुꣳसूर्यं ब्रह्माणं च बृह-

R. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्पतिं स्वाहा इदं सोमाय नमम । (२) ओं शुक्रंते अन्यद्यजतं ते अन्यद्विषुरुपे अहनी द्यौरिवासि । विश्वाहिमाया अवसि स्वधावन्भद्रा ते पूषन्निहरातिरस्तु स्वाहा इदं पूष्णे नमम । (३) ओं इन्द्रा पर्वता बृहता रथेन वामी ऋष आवहत ँ सुवीराः । वीत ँ हव्यान्यध्वरेषु देवा वर्द्धेथां गीर्भिरिडया मदन्ता स्वाहा इदमिन्द्राय । नमम (४) ओं आवो राजानमध्वरस्य रुद्र ँ होतार ँ सत्य-यज ँ रोदस्योः । अग्निं पुरातनयित्नोरचित्ताद्धिरण्य-रूपमवसे कृणुध्व ँ स्वाहा इद ँ रुद्राय नमम । इसके बाद फिर चरु से स्विष्टकृत् होम करे-ओं अग्नये स्विष्ट-कृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ इसके बाद ३४८ पृष्ठोक्त रीति से उत्तरांग क्रियायें वसुहोम तक की कर डाले और उसके बाद शेष चरु को उत्तर ओर रखकर मेक्षण से उसे दूसरे पात्र में निकाल ले । फिर उसे ब्रह्मा को दे दे और ब्रह्मा उसे ले कर हाथ धोवे, आचमन करे । इसके बाद चारों बछड़ियों सहित बैल को अग्नि के निकट लाकर पूर्वमुख खड़ा करके उसके अंगों में नीचे लिखे मन्त्रों का न्यास करे । अर्थात् इन मन्त्रों को पढ़ने के समय उन अङ्गों का स्पर्श किये रहे । वह मंत्र इस तरह हैं-मस्तक-विश्वामित्रो गायत्री सविता वृषस्यमस्तके न्यासे विनि-योगः । ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ ललाट-अग्निर्गायत्री, अग्निर्ललाटेन्यासे वि-नियोगः।ओं नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देवकृष्टयः। अमैर-मित्रमर्दय ॥ दहिनी बाईं आंख-अग्नीन्द्रौ, बृहती, सोमश्च क्षुषोर्न्यासे विनियोगः ॥ ॐ पुनानः सोमधारयाऽपो वसानो अर्षसि । आरत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्तमे देवहिरण्ययः ॥ बायें कान में-भरद्वाजव सिष्ठौ, बृहती, इन्द्र-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्णयोर्न्यासे विनियोगः । बायें कानमें-ॐ अभित्वाशूरनोनु-
मो दुग्धाइवधेनवः । ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र
तस्थुषः ॥ दहिने कान में-ॐ त्वामिद्धिहवामहेसातौवाजस्य
कारवः । त्वां वृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वांकाष्ठास्वर्वतः ॥
मुह-विशोकस्त्रिष्टुप्, परमात्मा, मुखेन्यासे विनियोगः ।
ॐ सेतूँस्तर दुस्तरान् दानेनादानमहमस्मि प्रथमजाऋत-
स्य । सेतूँस्तर दुस्तरानक्रोधेनक्रोधम् ॥ १ ॥ अक्रोधेन
क्रोधं पूर्वं देवेभ्यो अमृतस्य नाम सेतूँस्तर दुस्तरान् श्रद्ध-
याऽश्रद्धाम् । योमा ददाति सदेवमावत् सेतूँस्तर दुस्तरान्
सत्येनानृतम् । अहमन्नमन्नमदन्तमद्धि एषागतिः ।
एतदमृतम् । स्वर्गच्छज्योतिर्गच्छ सेतूँस्तीर्त्वाचतुरः ॥
छं-देवा उत्कृतीरुद्रः कंठे न्यासे विनियोगः । ॐ अधि-
पते मित्रपते शत्रपते स्वपते धनपते नामाः । मन्युना
वृत्रहा सूर्येण स्वराड्यज्ञेन मघवा दक्षिणास्य प्रियातनू
राज्ञा विशं दाधार । वृषमस्त्वष्टा वृत्रेण शचीपतिरन्नेन-
गयः पृथिव्या सृणिकोऽग्निना विश्वंभूतमभ्यभवो वा-
युना विश्वाः प्रजा अभ्यमवथा वषट्कारेणार्द्धभाक्सोमेन
सोमपास्समित्यापरमेष्ठी । येदेवा देवा दिविषदः स्थ तेभ्यो
वोदेवादेवेभ्यो नमः । येदेवादेवा अन्तरिक्षषदः स्थ तेभ्यो
वोदेवादेवेभ्यो नमः । येदेवादेवाःपृथिवीषदःस्थ तेभ्यो वो-
देवादेवेभ्यो नमः । येदेवादेवा अप्सुषदः स्थ तेभ्यो वो दे-
वादेवेभ्यो नमः । येदेवादेवा दिक्षुसदः स्थ तेभ्यो वोदेवा
देवेभ्यो नमः । येदेवादेवाआशासदः स्थ तेभ्यो वो देवादेवे-
भ्यो नमः । अवज्यामिव धन्वनो वितेमन्युन्नयामसि
पृथ्वताइह अस्मभ्यम् । यइदं विश्वं भूतं युयोवोनामाः ॥

Re Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पूंछ-वामदेवो गायत्रीन्द्रो लांगूले न्यासे विनियोगः । ॐ कयानश्चित्र आभुवदूतीसदावृधः सखा । कयाशचिष्ठयावृता ॥१॥ कस्त्वा सत्यो मदानां मंहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढाचिदारुजेवसु ॥ २ ॥ अभीषुणः सखीनामविताजरितॄणाम् । शतंभवास्यूतये ॥३॥ कन्धा-ओं इन्द्रंनरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः । शूरोनृषाता श्रवसश्चकाम आगोमतिव्रजे भजात्वंनः ॥ छाती-गौतमो, गायत्री, अग्निः, ऊरोमध्येन्यासे विनियोगः ओं अग्न आयाहिवीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सिबर्हिषि ॥ हृदय दिशोऽनुष्टुप् ब्रह्मा हृदये न्यासे विनियोगः । ओं मनोजयित् हृदयमजयित् इन्दोऽजयिदहमजैषम् । यद्वर्चोहिरण्यस्य यद्वा वर्चो गवामुत । सत्यस्य ब्रह्मणोवर्चस्तेनमा स ँ सृजामसि ॥ मनोजयित् हृदयमजयिदिन्द्रोऽजयिदहमजैषं वै मनोजयिद्धृदयमजयिदिन्द्रोऽजयिदहमजैषमहंसुवर्ज्योतिः ॥ नाभि-श्यावाश्वस्त्रिष्टुप् अग्निर्नाभौन्यासे विनियोगः । ओं आजुहोता हविषामदध्वं निहोतारं गृहपतिं दधिध्वम् । इडस्पदेनमसा राततहव्य ँ सपर्यता यजतं पस्त्यानाम् ॥ घुटने - शंयुः, रुद्रोगायत्री जान्वोर्न्यासे विनियोगः । ओं तद्वागायसुते सचापुरुहूताय सत्वने । शंयद्गवेन शाकिने ॥ जंघे-श्यावाश्वान्धीगवौ अनुष्टुप् ऊर्वोर्न्यासे विनियोगः । ओं पुरोजितोवो अन्धसः सुताय मादयित्नवे । अपश्वान ँ श्चाधिष्वसखायोदीर्घजिह्वयम् ॥ प्रस्कण्वो गायत्री सूर्यो जंघयोर्न्यासे विनियोगः । ओं उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ पूंछ-मधुच्छन्दा गायत्री

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सरस्वती पुच्छे न्यासे विनियोगः । ओं पावकानः सरस्वती वाजेभिर्वाजिनीवती । यज्ञं वष्टुंधियावसुः ॥ रोमसमूह-ओं गावो वृषभपत्नीर्वैराजपत्नीर्विश्वरूपा अस्मासुरध्वम् । तेमन्वत प्रथमन्नरामगोनां त्रिस्सप्तपरमन्नाम जानन् । ताजानतीरभ्यनूषंताक्षा आविर्भुवन्नरुणीर्यशसागावः ॥ गुदा-गौरीवित्यपालवैणवौ गायत्री गुदेन्यासे विनियोगः । ओं आतून इन्द्रक्षुमन्तं चित्रं ग्राभं संगृभाय। महाहस्ती दक्षिणेन ॥ पांव-विश्वमना उष्णिगग्निः पादयोर्न्यासे विनियोगः । ओं यद्वाउविश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशे । विश्वेदग्निः प्रतिरक्षांसिसेधति ॥ हृदय-रुद्रस्त्रिष्टुप् रुद्रो हृदयेन्यासे विनियोगः । ओं आवोराजानमध्वरस्य रुद्र ँ होतार ँ सत्ययज ँ रोदस्योः। अग्निं पुरातनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् ॥ सिर-शंयूरुद्रो गायत्री शिरसि न्यासे विनियोगः । ओं नहोगायसुतेसचा पुरुहूताय सत्वने । शंयद्गवेनशाकिने ॥ चोटी-अग्निर्वैश्वानरस्त्रिष्टुप् वैश्वानरःशिखायांन्यासे विनियोगः । ओं आज्यदोहं मूर्द्धानं दिवो अरातिम्पृथिव्या वैश्वानरमृतआजातमग्निम् । कवि ँ सम्राजमतिथिंजनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ॥ इस प्रकार न्यास करलेने पर वृषभ रुद्र रूप हो जाता है । इसके बाद बछड़ियों के शरीर में भी न्यास करे । आगे के मंत्रों से एकही साथ आगे पीछे सभी के अंग छूता जावे । सिर-ओं ब्रह्मणे नमः । पेट-ॐ विष्णवे नमः । ललाट-ॐ महादेवाय नमः । दोनों कान (बायां दहिना)-ओं अश्विभ्यान्नमः । दहिनी बांई आंखें-ॐ चन्द्रसूर्याभ्यान्नमः । पीठ-ॐ वैवस्वताय नमः । चारों पांव-ॐ सप्त-

R. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सागरेभ्यो नमः । रोम समूह—ॐ सप्तर्षिभ्यो नमः । सर्वांग—ॐ सर्वाभ्यो देवताभ्यो नमः ॥ फिर रुद्र कलश के जल से पहले बैल को स्नान कराके शेष जल से बछड़ियों को नहलावे-ॐ य एक इद्विदयते एक ँ समैरयद्वृषे वसुमर्त्तायदा-शुषे एकँ समैरयन्महे । ईशानो अप्रतिष्कुत एको वृषा विराजति इन्द्रो अंग ॥ इसके अनन्तर नये खद्दर से बैल को ढंककर तिलक के आकार का एक खद्दर सिरपर रक्खे-ॐ सत्य-मित्थावृषेदसि वृषजूतिर्नोविता । वृषाह्युग्रशृण्विषे परावतिवृषो अर्वावतिश्रुतः ॥ १ ॥ ॐ वृषा सोमद्युमाँ अ-सि वृषादेव वृषव्रतः । वृषाधर्माणि दध्रिषे ॥ २ ॥ इसके बाद बछड़ियों सहित बैल को यथाशक्ति सुसज्जित करे । उसके बाद बैल के आगे के दहिने पांव के उपर देह में चन्दन से त्रिशूल का चिन्ह बारह अंगुल का आचार्य इस मंत्र से बनावे-ॐ मानस्तोके तनये मान आयौ मानो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः । वीरान्मानो रुद्रभामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदामित्त्वाहवामहे । पीछे के बायें पांव के ऊपर चूतड़ की ओर ८ अंगुल का चक्र चन्दन सेही बनावे-ओं वृषाह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे । पवमान स्वर्दृशम् ॥ इसके उपरान्त लोहार बुलाकर उन्हीं चिन्हों पर गरम लोहे से चिन्ह करवा दे और बछड़ियों के बीच में रख उनके पीछे बैल को करके उनको दहिने हाथ की अनामिका से छूकर मंत्र पढ़े-ओं काम्यासि प्रियासि हव्यासि इडेरन्ते सरस्वति महि विश्रुति ॥ पश्चात् अग्नि से पश्चिम और पूर्वमुख सांड और बछड़ियों को उत्तर दक्षिण खड़ा करे और उनकी पूछों को पकड़कर तर्पण करनेके लिये पहले कुश तिल जलादि ले और अपसव्य होकर संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्व-विमोचन द्वाराऽक्षय्यपुण्यलोकावाप्त्यर्थं वृषभवत्सतरीपु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

च्छेषु तर्पणं करिष्ये ॥ फिर जनेऊ को ठीक करके तांबे के बर्तन में तिल जल लेकर और हाथ में कुश लेकर सभी पूँछें एक साथ ही पकड़ कर पूर्व मुख हो तर्पण करे-ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमिꣳ सर्वतो वृत्वा अत्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः । तथा विष्वꣳ व्यक्रामदशनानशने अभि ॥ २ ॥ पुरुष एवेदꣳ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् ॥ पादोऽस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥ तावानस्य महिमा ततोज्यायाँश्च पूरुषः । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ ४ ॥ ततो विराडजायत विराजो अधिपूरुषः । सजातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥ ५ ॥ इसके बाद दक्षिण मुख अपसव्य हो कर बायां घुटना भूमि में टेक दे और एक अंजली में जल लेकर-ओं अमुकगोत्रम् अमुकप्रेतं तर्पयामि-यह पढ़कर पितृतीर्थ से गिरादे । इसके उपरांत जनेऊ ठीक कर आचमन करके बछड़ियों के बीच में सांड़ को करदे और-ओं सोपकरणवृषाय नमः-इस मंत्र से उसकी पूजा करके छोड़ने का संकल्प करे। हाथ में उसकी पूंछ और कुश जलादि लेकर-अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमोचनद्वाराऽक्षय्यपुण्यलोकावाप्तिकामो यथाशक्त्यलंकृतं त्रिशूलचक्रांकितं द्रुरुदैवतमिमं वृषभं वत्सतरीसहितमुत्सृजामि- यह पढ़े और उसके बाद-ॐ एनं युवानं परिवो ददामि तेन क्रीडन्ति सरथं प्रियेण । मा नः साप्तजनुषा सुभगा रायस्पोषेण समिषा मदेम ॥ इसके बाद पूंछ छोड़कर कुशादि को रख दे और उस सांड़ के कान में आगे के साम मंत्र सुनावे-ओं उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिर-

Re Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

न् ॥ १ ॥ ओं प्रसम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नवो
गीर्भिः । नरंनृषाहं म ँ हिष्ठम् ॥ २ ॥ ओं मूर्द्धानं दिवो
अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम् । कविं
सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ॥३॥
इसके बाद 'अधिपते' इत्यादि और 'कयानश्चित्र' इत्यादि
मंत्र भी सुनावे । अन्तमें-ओं यथेष्टं यूथं यूथं पर्यटत-कह कर
सहित सबों को चला दे । इसके बाद ब्रह्मा तथा आचार्य की दक्षिणा
दान आदि उत्तरांग ३४८-३५२ पृष्ठोक्त रीतिसे पूरा करले और
शक्ति ब्राह्मण भोजन का भी संकल्प कर डाले-ओं अद्य वृषोत्सर्ग
गतया यथाशक्ति ब्राह्मणान्भोजयिष्ये ॥ फिर कर्म को
समर्पण आदि कर डाले (३५३) ।

इस प्रकार वृषोत्सर्ग करके उसी सिलसिले में कपिला धेनु
और उसके अभाव में साधारण धेनु या गौ का दान करे । ५२० पृष्ठ
रीति से सभी क्रियायें करके और ब्राह्मण तथा गौकी विधिवत् पू
करके ब्राह्मण को उत्तर मुख बैठाकर उसी प्रकार दानवाक्य पढ़
ब्राह्मण-ओं स्वस्ति-कहकर उसको ले और उसकी दक्षिणा
कर अन्त में यह कामस्तुति पढ़े-ओं क इमां कस्मा अदा
कामः कामायादात् कामोदाता कामः प्रतिग्रहीता
कामः समुद्रमाविशत्कामेन त्वा प्रतिगृह्णामि कामैतत्
इसी प्रकार महिषी (भैंस) दान का भी संकल्प करे । परन्तु
पूंछ से तर्पण और गोमती पढ़नेकी आवश्यकता नहीं है । केवल
संकल्प करके भैंस और ब्राह्मण की पूजा कर देते हैं । ओं महि
नमः-मंत्र से महिषी की पूजा होगी और संकल्प में-यमदैवत
महिषीं-इतना विशेष रहेगा । और क्रियायें ज्यों की त्यों हों
अन्त में उसी तरह भूयसी दक्षिणा का संकल्प कर कर्मको ईश्वर
ण करे और 'यस्यस्मृत्या०' इत्यादि (१४२) पढ़े ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

४–एकादशाहश्राद्ध ।

बहुत से ग्रन्थों में ऐसे वचन मिलते हैं कि एकादशाह कोही पञ्चकादि में मरण की शान्ति भी एकोद्दिष्ट श्राद्ध से पहले ही की जानी चाहिये । नारायण बलि भी एकादशाह को ही होनी चाहिये। नारायण बलि के लिये द्वादशाह भी कहा गया है । यद्यपि हम सभी दुर्मरणों की शान्ति एकादशाह को ही पसन्द करते हैं और इनकी विधि भी उसी दिन हो ऐसी ही हमारी इच्छा है। फिर भी सर्पादि निमित्तकर्द्ध मृत्यु, संन्यासी प्रभृति के लिये नारायणबलि, पञ्चकशान्ति, त्रिपाद् द्विपाद् नक्षत्रशान्ति आदि की विधि शान्तिप्रकरण में हीं लिखेंगे। इसीलिये यहां उन सभी को छोड़ देते हैं और वृषोत्सर्ग के उपरान्त एकादशाह का एकोद्दिष्ट श्राद्ध लिखते हैं । उसमें भी पहले महैकोद्दिष्ट लिखकर आद्य या प्रथममासिक लिखेंगे । किसी किसी पद्धति में श्राद्धारंभ से पहले विष्णु आदि पञ्च देवताओं की पूजा और श्राद्धभूमिमें बकरी घुमाकर निकट ही बांधना लिखा है । शेषमें इसकी चर्चा नहीं है। यद्यपि श्राद्धारंभ में कहीं कहीं केवल शिव और विष्णु की पूजा मिलती है। तथापि पञ्चदेव की पूजा नहीं मिलती। इसलिये यदि कर्त्ता चाहे तो विष्णु और शिव का पूजन कर ले और यदि न करे तो कोई हर्ज भी नहीं है। इसी प्रकार बकरी की भी बात है। श्राद्ध की भूमि में बकरी का बांधना अच्छा माना गया है। परन्तु आवश्यक नहीं है। इसलिये चाहें तो उसे भी कर सकते हैं । यह भी स्मरण रखना चाहिये कि एकादशाह या द्वादशाह को जो महैकोद्दिष्ट और षोडशी के श्राद्ध किये जाते हैं वे सामवेदियों और यजुर्वेदियों के यहां प्रायः एकही प्रकार के हैं। केवल एकाध मन्त्रों में कुछ अन्तर है। इस लिये हम दोनों की एकही पद्धति लिखते हैं और जहां मन्त्र आदि में जरासा अन्तर है वहां वह अन्तर बतादेंगे ।

कर्त्ता प्रातःकाल के समय नित्यक्रिया के बाद ही दक्षिण ओर ढालू भूमि को गौ के गोबर से लीप कर तथा ऊपर जलते अंगार डालकर और उन्हें हटाकर पीली मिट्टी डालकर ठीक करे और उसपर पीली सरसों और तिल छींट दे । इसके बाद मध्याह्न तक वृषोत्सर्ग और गव्यादान करके फिर स्नान करे और नवीन खद्दर पहन कर श्राद्ध

Re Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

भूमि में आवे । भरसक स्वयं या अपनी स्त्री द्वारा और उसके भी अभाव में अपने सपिण्ड द्वारा मिट्टी के नवीन पात्र में पिण्ड के लिये खीर आदि बनवावे । यदि बनाने वाला दूसरा कोई हो तो उससे पूछ ले कि-सिद्धम् ? उसके-सिद्धम्-उत्तर देने पर पूर्व निमन्त्रित ब्राह्मण का पांव 'ओं नमोऽस्त्वनन्ताय०' से धोकर और आचमन कराके आसन पर दक्षिणाग्र कुश डालकर उन्हीं पर उत्तरमुख उसे बैठा दे और उसी के पास बाईं ओर तिल के तेल या घी से भरा चिराग जलाकर रख दे । यह श्राद्ध की समाप्ति तक रहना चाहिये और ब्राह्मण हीं इसकी रक्षा करता है । श्राद्धविघातक कौवे आदि जानवरों को हटाकर श्राद्धीय भूमि को वस्त्रादि से घेर भी दे । फिर स्वयं यजमान अपने आसन पर दक्षिणाग्र तीन कुश डालकर पूर्वमुख बैठ जावे और उन कुशों को अपने पांवों के नीचे कर ले । पवित्र पहन आचमन प्राणायाम करके कर्मपात्र को (जिस पात्र के उपर से कर्म किया जावे उसको) तैयार करने की आज्ञा ब्राह्मण से ले । यदि ब्राह्मण न हो तो कुश का ही ब्राह्मण आसन पर रखकर उसी से पूछे ओं कर्मपात्रं करवाणि ॥ वह, या उसके अभाव में स्वयं कहे ओं कुरुष्व ॥ फिर नीचे दक्षिणाग्र तीन कुश रख उस पर लोटा या दूसरा पात्र रक्खे और उसमें-ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो (सामवेदी-शन्नो) भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः-से जल-ओं पवित्रस्थो वैष्णव्यौ-से कुश-ओं यवोऽसि यवयाऽस्मद्द्वेषो यवयारातीः-से जौ-ओं श्रीश्च ते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे नक्षत्राणि व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्म इषाण सर्वलोकम्म इषाण-से तुलसीदल-ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्-से चन्दन और-ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्नमद्भिः पृक्तः प्रेतमिमं लोकं प्रीणा (णया) हि नः-से तिल डालकर-ओं गंगे च यमुने चैव गोदावरि सरस्वति । नर्मदे सिन्धु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कावेर्य्यौ जलेऽस्मिन्सान्निधिं कुरु-पढ़ कर सब तीर्थों का उसमें आवाहन करके-ओं अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षः स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ ओं पुण्डरीकाक्षः पुनातु-इस मन्त्र से उस जल को तीन कुशों से उठा कर अपने शरीर और श्राद्ध के पदार्थों पर छिड़के और-ओं भूम्यै नमः । ओं भगवत्यै गयायै नमः । ओं भगवते गदाधराय नमः-से नमस्कार करे और श्राद्ध भूमि को गया समझे । तब तीन कुश तिल जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्य अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे (इसके बाद अपसव्य होकर) अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्त्यर्थं महैकोद्दिष्टं करिष्ये ॥ इसके बाद सव्य होकर-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्-इस गायत्री को तीन बार जप कर-ओं देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च । नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनमः-इसे भी दोनों वेद वाले तीन बार पढ़ें । इसके बारे में विशेष विचार १३५ पृष्ठ में है । फिर अपसव्य होकर दक्षिण मुख हो जावे और दहिनी टांग गिराकर हाथ में सफेद सरसों और तिल ले और उसको चारों ओर छींटे । छींटने का मन्त्र-ओं नमो नमस्ते गोविन्द पुराण पुरुषोत्तम । इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्षतां सर्वतो दिशः ॥१॥ ओं आग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राचीं रक्षन्तु मे दिशम् । तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरः स्थिताः ॥ २ ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः । अधोर्ध्वमपि कोणेषु विकोणेषु च सर्वशः॥३॥ रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः । सर्वतश्चाधिपतेयो यमो रक्षां करोतु मे । वायुभूतपितॄणां च तृप्तिर्भवतु शाश्वती ॥४॥ तब दहिनी बगल में तीन कुश और तिल अप-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सव्य होकर ही धोती के किनारे में लगा कर नीवी (पृ० ५५) बांधे। उसका मन्त्र यह है—ओं निहन्मि सर्वं यदमेध्यवद्धवेद्धताश्च सर्वेऽसुरदानवा मया । रक्षांसि यक्षाश्च पिशाचगुह्यका हता मया यातुधानाश्च सर्वे ॥ अनन्तर किसी एक पात्र में जल रख और उसमें चन्दनादि डालकर उसे कुश से हिलाता हुआ यह कूष्माण्ड सूक्त पढ़े—ओं यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमावयम् । अग्निर्मास्तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ १ ॥ यदि दिवा यदि नक्तमेना ँ सि चकृमा वयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ २ ॥ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न ऐना ँ सि चकृमा वयम् । सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ ३ ॥ और—ओं श्वादिदुष्टदृष्टिनिपातदूषितं पाकादिपूतं भवतु—कहकर श्राद्ध के अन्न पर और दूसरे पदार्थों पर भी वह जल छिड़क दे । तब दक्षिण मुख और सव्य होकर बायां घुटना टेक के बायें हाथ में आसन के लिये तीन कुश और दहिने में कुश तिल जल ले और यदि ब्राह्मण हो तो उसके हाथ पर, नहीं तो कुश के ब्राह्मण पर, थोड़ा जल डालकर संकल्प करे—ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धे इदमासनं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ इसे पढ़कर दक्षिण के कुशों को दहिने हाथ में लेकर पितृतीर्थ से ब्राह्मण के आसन पर रख दे । ब्राह्मण या स्वयं कह दे—ओं अस्त्वासनम् ॥ फिर यजमान कहे—ओं प्रेताय भवता क्षणः कर्त्तव्यः । ब्राह्मण का उत्तर—ओं तथास्तु ॥ फिर यजमान—ओं प्राप्नोतु भवान्—ब्राह्मण—ओं प्राप्नवानि ॥ यदि कुशका ब्राह्मण होतो उसकी जगह यजमान हीं सब उत्तर दे लिया करे । तब कर्त्ता पूर्व मुख होकर जनेऊ को ठीक करके हाथ में छाता ले और उसकी पूजा—ओं छत्राय नमः—इसी नाम मंत्र से करे । इसी प्रकार जूता रख कर—ओंउपानद्भ्यान्नमः—से उसकी पूजा करे और मृतक की अन्यान्य प्रिय वस्तुएं भी यथाशक्ति देने के लिये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रखकर नाम मन्त्र से उनकी भी पूजा करे और-ॐब्राह्मणाय नमः-
से ब्राह्मण की पूजा करके उसके हाथ में या कुश के ब्राह्मण पर जल
दे। फिर छाता, जूते आदि पर कुश से जल डालकर संकल्प करे-
ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्यातपादिनिवृत्त्यर्थमुच्चाव-
चखरतरकिरणसंतप्तवालुकासिकण्टकितभूदुर्गसंतरणाय
वेदं छत्रोपानदादि यथानामगोत्राय तुभ्यमहं संप्रददे
ओं तत्सन्नमम ॥ ब्राह्मण-ओं स्वस्ति-कहकर रख ले । तब
दक्षिणा और कुशादि हाथ में लेकर संकल्प करे-ओं अद्य छत्रा-
दिदानप्रतिष्ठार्थमिदं यथाशक्तिद्रव्यं तुभ्यमहं संप्रददे
ओं तत्सन्नमम ॥ और द्रव्य ब्राह्मण को दे दे। ब्राह्मण-ओं
स्वस्ति-कह उसे भी ले ले और ४७७ पृष्ठोक्त 'ओं कोऽदात्०'
इत्यादि कामस्तुति अपने अपने वेद के अनुसार सामवेदी और यजु-
र्वेदी पढ़ें। यजमान अपसव्य, दक्षिणमुखादि होकर प्रेत ब्राह्मण के आगे
तिल छींटे-ओं अपहता असुरारक्षाँसि वेदिषदः॥ कहीं कहीं
लिखा है कि यह तिल वामावर्त्त से छींटे नकि दक्षिणावर्त्त से। फिर
हाथ में कुश लेकर और हाथ को भूमि में छुवाकर पढ़े-ओं इहलोकं
परित्यज्य गतोऽसि परमांगतिम्। मनसा वायुरूपेण विप्रे
त्वाहं निमंत्रये ॥ यदि कुश ब्राह्मण हो तो 'विप्रे' शब्द की जगह
'घटे' पढ़ना चाहिये। इस प्रकार प्रेत को निमंत्रित कर दे उसके
आगे दक्षिणाग्र कुश रख उसपर अर्घ्य के लिये दोना या कोई पात्र रक्खे
और उसमें दक्षिणाग्र एक कुश रख उसपर अगले मंत्र से जल डाले-
सिन्धुद्वीपो गायत्री आपोऽपामासेचने विनियोगः ।
ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो (सामवेदी 'आपो'
की जगह 'शन्नो') भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रव-
न्तु नः ॥ फिर उसमें तिल डाले-ओं तिलोऽसि सोमदैव-
त्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्नमद्भिः पृक्तः (प्रक्तः)
स्वधया प्रेतमिमं लोकं प्रीणाहि (प्रीणयाहि) नः ॥ और

Prabhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चुपचाप उसमें चन्दन, पुष्प भी डालकर ब्राह्मण के हाथ पर या कुश-ब्राह्मण पर शुद्ध जल रख कर उसके हाथ पर और कुश ब्राह्मण के आसन पर अर्घ्य पात्र का कुश दक्षिणाग्र रख दे और अर्घ्यपात्र को बायें हाथ में रखके मन्त्र पढ़े-ओं या दिव्या आपः पयसा सं-बभूवुर्या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः। हिरण्यवर्णा यज्ञि-यास्ता न आप शिवाःश ँ स्योना सुहवा भवंतु॥ इसके बाद दहिने हाथ में कुशादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुक-गोत्रामुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धे एष ते हस्तार्घो (एतत्ते ऽर्घ्यं) मया दीयते तवोपातिष्ठताम्॥ और हाथ में रखे आसन पर रक्खे कुश पर दहिने हाथ में अर्घ्य लेकर पितृतीर्थ से गिरा दे। ओं अस्त्वर्घ्यम्-यह ब्राह्मण कहे। फिर यदि इच्छा हो क्योंकि यह आवश्यक नहीं है, तो अर्घ का पात्र प्रेत के आसन के बांई ओर--ओं प्रेताय स्थानमसि-पढ़कर औंध दे और उसके ऊपर अर्घ वाला कुश रख दे। तब बायें हाथ में गंध, पुष्प, धूप, दीप, ताम्बूल, जनेऊ, वस्त्रादि लेकर दहिने से संकल्प करे-ओं अद्या-मुकगोत्र अमुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धनिमित्तकान्येतानि गन्धपुष्पधूपदीप यज्ञोपवीतताम्बूलवासांसि ते मया दी-यन्ते तवोपातिष्ठंताम्॥ और ब्राह्मण के हाथ में सभी चीजें दे कर कुशब्राह्मण के आसन पर रख दे। अनन्तर ओं अस्यार्चनविधेः परि-पूर्णताऽस्तु-ऐसा कह आसन के आगे अन्न परोसने की जगह को गोबर से लीपकर एवं आसनसहित उस जगह को जल से चौकोना कर मण्डल बनावे और आसन के आगे भोजन का पात्र मण्डल के भीतर ही रख कर उसपर गर्म हीं गर्म भोजन का अन्न परोसे मगर यदि दूसरे की भूमि में श्राद्ध करता हो तो परोसने से पहले आसन से दक्षिण दक्षिणाग्र कुशों पर, दक्षिण मुख अपसव्य हो कर और घुटना टेककर, पितृतीर्थ से भोजन के अन्न में से ही थोड़ा ओं इदमन्नमेतद्भूस्वामिपितृभ्यो नमः-इस मंत्र से रख

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दे और हाथ धोकर भोजनपात्र में अन्न परोसे। एक हाथ से न परोसे दोनों हाथ से ही परोसना चाहिये और मृतक का ध्यान करते रहना चाहिये। भोजन के पास ही अलग अलग दोने में जल, घी और साग तरकारी रक्खे। अन्न पर थोड़ा मधु भी डाल दे और अन्नपात्र के चारों ओर तिल छींटे-ओं अपहता असुरारक्षाँसिवेदिषदः॥ फिर बायें हाथ से पात्र को पकड़ दहिने हाथ में कुश तिलादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धे इदमन्नं सोपस्करमातृप्तेर्दत्तंदास्यमानं तवोपतिष्ठताम् ॥ यह कहकर कुशादि रख दे और-ओं इदमन्नं प्रेताय उपतिष्ठतु। ॐ अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत्तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु-इतना पढ़े। फिर प्रथम आचमन के लिये (पूर्वापोशानार्थ) जल दे-ओं अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत सत्यंत्वर्त्तेन परिषिञ्चामि ॥ और व्याहृति प्रणव सहित गायत्री तीन बार पढ़कर कहे-ओं मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः। माध्वीर्नः सन्त्वौषधीः ॥ १ ॥ मधुनक्तमुतोषसि मधुमत्पार्थिवꣳ रजः। मधुद्यौरस्तु नः पिता ॥ २ ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाꣳ अस्तु सूर्यः॥ माध्वीर्गावो भवंतु नः ॥३॥ ॐ मधु मधु मधु ॥ यथामुखं जुषस्व ॥ इसके बाद ब्राह्मण आपोशान (आचमन) कर प्राणाहुति पूर्वक भोजन करे। गायत्री सहित ऊपर के मंत्रों का जप अन्त में मधु डालने के समय ही बहुत सी पद्धतियों में लिखा है और यही उचित भी प्रतीत होता है। फिर भी बहुत सी पद्धतियों में आपोशानार्थ जल देकर लिखा है और उन्हें पढ़ लेने के बाद आपोशान करने को कहा है। इसीलिये हमने भी लिख दिया है। जहां जैसी परिपाटी हो करे। भोजन के समय भी वही गायत्री आदि मन्त्रों को पढ़े और भोजन के अन्त में-ओं अमुकगोत्र अमुकप्रेत सत्यं त्वर्त्तेन परिषिञ्चामि-पढ़कर आचमनार्थ जल दे के फिर वही गायत्री आदि मन्त्र पढ़े और आचमन कर लेने पर प्रश्न करे। कुश का ब्राह्मण रहने पर भी समस्त

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

क्रियायें की जावें । किसी किसी ने कुश ब्राह्मण या अपात्रक श्राद्ध में आपोशान देने, 'यथासुखं जुषस्व' कहने और स्वदितम् सुस्वदितम्' इत्यादि की आवश्यकता नहीं समझीहै । मगर अपात्रक में भी प्रश्नोत्तर की बात के लिये वचन मिलते हैं । अतएव हमने इसे लिख देना उचित समझा है । कुश के ब्राह्मण में प्रश्न और उत्तर स्वयं यजमान कोही करना होगा । यह बात गोभिल परिशिष्ट के भाष्य में है । फिर भी जिनको न करने का आग्रह हो वे छोड़ दे सकते हैं । इस लेख से उनका कोई हर्ज नहीं है । यद्यपि प्रेत श्राद्ध में सिर्फ 'स्वदितम्' यह प्रश्न मना है, नकि और बातें भी ।

इसके बाद भोजन की जगह से उत्तर एक बांह भर जगह छोड़ कर पिंड के लिये बालू की वेदी दक्षिण ओर ढालू बनावे, उसे चौकोने मण्डल से घेर कर गोबर से पोते, उसपर जल छिड़क कर मूल सहित दक्षिणाग्र तीन कुश उसके बीच में रख दे और एक पात्र में तिल, चन्दन, पुष्प सहित जल रखकर उसे बांये हाथ में रख दहिने हाथ में कुशादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धपिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और दहिने हाथ के पितृतीर्थ से थोड़ा जल उन कुशों के मध्य में गिरा दे । यह अवनेजन कहाता है तब घी, मधु, तिल मिश्रित अन्न से बिल्व जितना बड़ा पिंड बनाकर और उसके ऊपर घी मधु लगाकर हाथ में ले और कुश तिलादि लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत महैकोद्दिष्ट श्राद्धे एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और पितृतीर्थ से अवनेजन की जगह कुशों पर उसे रख दे । इसके बाद हाथ धोके पूर्व मुख सव्य होकर आचमन करे और दक्षिण मुख अपसव्य होकर अवनेजन के पात्र का जल, या पिंड के पात्र को धोकर वही जल, कुशादि के साथ लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धपिण्डेऽत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और पिंड पर ही उस जल को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पितृतीर्थ से गिरा दे । फिर पढ़े-ॐ अत्र प्रेत मादयस्व यथा-भागमावृषायस्व ॥ और बाईं ओर से घूमकर उत्तर या दक्षिण मुख होके बिना सांस लिये ही पढ़े-ॐ अमीमदस्व प्रेत यथाभा-गमावृषायिष्ट ॥ यदि उत्तर मुख हो तो फिर उसी तरह लौटकर दक्षिण मुख होकर नीवी खोल दे और पूर्व मुख सव्य होकर, आच-मन करके, फिर दक्षिण मुख अपसव्य होके, बायां घुटना टेककर तीन सूत धोकर हाथ में लेले और कुशादि के साथ संकल्प करे—ॐ अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धपिंडे एतत्ते वा-सो मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और उसे पिंड पर रख दे । फिर चन्दन, पुष्प, तुलसीपत्र, धूप, दीप, नैवेद्य, पान, सुपारी, भंग-दिया और दक्षिणाआदि पिंड पर चढ़ाकर कुश तिल जल लेकर पढ़े-ॐ अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत महैकोद्दिष्टश्राद्धपिंडो-परिदत्तं गन्धाद्यर्चनं तवोपतिष्ठताम् ॥ और कुशादि भूमि पर रख दे। फिर प्रार्थना करे-ओं अनेन महैकोद्दिष्टपिंडदानेना-मुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिः सद्गतिप्राप्ति-रास्तु ॥ तब भोजन करने वाले ब्राह्मण का हाथ धुलावे और कुश-ब्राह्मण होने पर जल डाल दे । हाथ धो लेने पर भोजन पात्र के आगे की भूमि को-ॐ सुसंप्रोक्षितमस्तु-से लीप दे या उस-पर जल ही छिड़क दे । ब्राह्मण उत्तर दे कि-ओं अस्तु ॥ फिर ब्राह्मण के हाथ में, या कुश का ब्राह्मण होने पर उसी कुश पर, जल गिरावे-ओं शिवा आपः सन्तु ॥ ब्राह्मण का उत्तर-ओं सन्तु शिवाः आपः ॥ फूल-ओं सौमनस्यमस्तु ॥ ब्रा०-अस्तु सौमनस्यम् ॥ जौ और तिल-ओं अक्षतं चारि-ष्टमस्तु ॥ ब्राह्मण का उत्तर-ओं अस्तु अरिष्टम् ॥ कुश का ब्राह्मण होने पर स्वयं उत्तर देता जावे । फिर हाथ में कुश, तिल, जल लेकर और एक दोने या पात्र में कुछ जल रखकर पढ़े-ओं अद्या-

Prabhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य महैकोद्दिष्टश्राद्धे दत्तमन्नपानादिकमुपतिष्ठताम् ॥ और वह जल उस ब्राह्मण के हाथ या उस कुश पर ही गिरा दे । इसका ही नाम अक्षय्योदकदान कहा है। पश्चात् पिंड पर एक कुश दक्षिणाग्र रखकर पूर्व वाले अर्घ्य पात्र से चुपचाप ही या आगे के पौराणिक श्लोकों से ही तिल, दूध मिश्रित जल की दक्षिणाग्र धारा गिरावे-ओं अनादिनिधनो देवः शंख चक्रगदाधरः । अक्षय्यः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमुक्तिप्रदोभव ॥ १ ॥ अतसीपुष्पसंकाशं पीतवाससमच्युतम् । ये नमस्यन्ति च गोविन्दं न तेषां विद्यते भयम् ॥ २ ॥ कृष्ण कृष्ण कृपालुस्त्वमगतीनां गतिर्भव। संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥ ३ ॥ नारायण सुरश्रेष्ठ लक्ष्मीकान्त वरप्रद । अनेन तर्पणेनाथ प्रेतमोक्षप्रदो भव ॥४॥ हिरण्यगर्भ पुरुष व्यक्ताव्यक्तस्वरूपक। अस्यप्रेतस्य मोक्षार्थं सुप्रीतो भव सर्वदा ॥ ५ ॥ अमुकगोत्र अमुकप्रेत अत्र जलधारास्ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम् ॥ फिर धीरेसे पिंड और भोजनपात्र अपनी जगहसे जरा खसका दे और हाथ में यथाशक्ति चाँदी दक्षिणा ले कर एवं उसे धोके कुश तिल जलादि से संकल्प करे--ॐ अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य कृतैतन्महैकोद्दिष्टश्राद्धप्रतिष्ठार्थमिदं यथाशक्ति रजतं चन्द्रदैवतं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ तब पिंड को उठा कर उसे किसी पात्र में रख कर ब्राह्मण का विसर्जन करे--ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत अभिरम्यताम् ॥ इतना पढ़ कर ब्राह्मण को उठा दे या कुश ब्राह्मण की ब्रह्मग्रन्थि खोल दे और--ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च इत्यादि शुरू वाला लोक तीन बार पढ़ कर प्रारंभ में जलाये हुए दीपक को, जिसे रक्षादीपक कहते हैं, बुझा डाले । तब हाथ पांव धोके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain: Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सव्य होकर पूर्वमुख आचमन करे और कर्मकी पूर्त्ति के लिये विष्णुका स्मरण करे-ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेवतद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ ओं विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः ॥ श्राद्ध की वस्तुयें ब्राह्मण को देकर पिंडको गौ या कौवे को डालदे । नहीं तो जल में हीं फेंक दे । यदि कुश ब्राह्मण हो तो परोसा हुआ भोजन भी दूसरे ब्राह्मण को ही दे डाले या गौ को हीं खिला दे ।

इस प्रकार महैकोद्दिष्ट करके आद्यमासिक या प्रथममासिक श्राद्ध भी तुरन्त कर डाले। इसकी विधि ज्यों की त्यों वही होगी जो महैकोद्दिष्ट की है। अन्तर केवल इतना हीं होगा कि जहां जहां "महैकोद्दिष्ट" शब्द आया है वहां वहाँ उसकी जगह " प्रथम मासिक " पद देना होगा । अथवा "षोडशश्राद्धान्तर्गतप्रथम मासिक " यह पद दे सकते हैं ।

इसके बाद उसी दिन से एकवर्ष तक प्रति दिन के लिये एक घड़ा जल और कच्चा अन्न देने की विधि है । यदि प्रति दिन न हो सके तो एक ही दिन दे डाले और वह भी भर सक एकादशाह को ही । नहीं तो दूसरे समय भी । यदि प्रति दिन देते रहें और द्वादशाह को ही सपिंडीकरण हो जावे तो संकल्प में प्रेत की जगह शर्म्मा और पितृ शब्द द्वादशाह के बाद से या सपिंडन के बाद से ही पढ़ना चाहिये। यदि एकादशाह को देना हो तो ३६० घड़ों में या किसी भी ३६० पात्र में जल भर कर और एक वर्ष के भोजन का कच्चा अन्न रख कर, सव्य होके, कुशों पर पूर्व मुख बैठ कर आचमन करे और संकल्प करे। अपसव्य और दक्षिणमुख होकर कुशतिल जल लेकर पढ़े-ॐ अद्यअमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य परलोकेमहाक्षुधातृषानिवारणार्थं मरणदिनादारभ्य संवत्सरपर्यन्तमहरहः सान्नोदककुंभदानं करिष्ये ॥ फिर दहिना घुटना टेक कर, कुशतिल जलादि लेकर और आगे रक्खे हुए जलपूर्ण घड़ों को सूत आदि के द्वारा स्पर्शकरके संकल्प करे-ॐ अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत मरणदिनादारभ्य स-

Bhaguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

म्वत्सरपर्यन्तमहरहः क्षुधातृषानिवारणार्थमेते षष्ठ्युत्तरशतत्रयसान्नोदककुम्भा मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम्॥ और जल कुशादि भूमि पर रख दे । फिर कुशादि उठा कर और जल लेकर दक्षिणा के लिये यथाशक्ति चांदी धोकर हाथ में ले और संकल्प करे—ॐ अद्यानुष्ठित सान्नोदककुम्भदानप्रतिष्ठार्थमिदं यथाशक्ति रजतं चन्द्रदैवतमहं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ और वह दक्षिणा, अन्न और घड़े किसी योग्य ब्राह्मण को दे डाले। घड़ों का जल पीपलआदि वृक्ष के मूल में गिरा दे । फिर कर्म की सम्पूर्णता के लिये 'ॐ प्रमादात्कुर्वतां०' इत्यादि विष्णु का स्मरण करे। इस तरह एकादशाह श्राद्ध और प्रतिदिन के सान्नोदक कुम्भदान को पूरा करके एकादशाह का कृत्य समाप्त करे। कोई कोई ३६० पिंड भी देते हैं। परन्तु उसमें ब्राह्मण भोजनादि नहीं कराते । केवल बारह वेदियां बनाकर हरेक पर ३०-३० पिंड बारहों महीने के देते हैं । परन्तु यह आवश्यक नहीं है। इसी लिये हमने नहीं लिखा है और बहुतसी पद्धतियों में, सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों में, यह लिखा भी नहीं है। जिन्हें खामखाह करना हो वे सान्नोदक कुंभदान की दक्षिणा की ही तरह संकल्प करके कर सकते हैं। केवल 'इमां यथाशक्तिदक्षिणां प्रददे' की जगह 'षष्ठ्युत्तरशतत्रयपिंडदानमहं करिष्ये' पढ़ लेना चाहिये । संकल्प के बाद अवनेजन, प्रत्यवनेजन और पिंडदान करके पिंडकी दक्षिणा देनी चाहिये । हरेक महीने के लिये अलग अलग दे, पर एकही साथ । इति एकादशाहश्राद्ध ।

५—द्वादशाहश्राद्ध ।

द्वादशाह के दिन सोलह श्राद्धों में से एक के सिवाय शेष सब करके सपिंडन करते हैं। एक तो एकादशाह को ही करचुके हैं। प्रायः सर्वत्र सपिंडन के सिवाय १४ ही पिंड करने की रीति है। तीन त्रिपाक्षिक को छोड़ देते हैं। अतः जैसी परिपाटी हो वैसा ही करें। मगर हम तो त्रैपाक्षिक के साथ ही सब की विधि लिखते हैं। जिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

न करना हो वह उसे छोड़ दे और सर्वत्र वाक्यों में से 'त्रैपाक्षिक' पद निकाल दे । एक बात यहां याद रखने की है । पहले कहचुके हैं कि एक साथ कई कर्मों के किये जाने में दो रीतियां काम में लाई जाती हैं, तंत्ररीति और पार्थक्यरीति । पार्थक्य रीति का अर्थ यह है कि प्रत्येक कर्म पृथक् पृथक् एक के बाद दूसरे किये जाते हैं। ऐसा नहीं होता कि यदि चार हैं, तो चारों को एकही साथ शुरू कर दिया, प्रत्येक का एक एक अंग करते गये और अन्त में सब को पूरा किया । इसमें तो एक कोही आरंभ कर उसे पूरा कर लेंगे। फिर उसके बाद वाले को आरंभ कर पूर्ण करके क्रमशः आगे बढ़ते जायंगे और इसी तरह अन्त में सभी को पूरा कर डालेंगे। इसके विपरीत तंत्ररीति में सभी का आरंभ साथही एकहीबार कर देते हैं और सभी के एक एक अंग करके दूसरा अंग शुरू करते हैं और उसे भी सभी में करके तीसरा । इस तरह सम्पूर्ण अंगों को क्रमशः पूरा करके सभी कर्मों की समाप्ति एकही साथ करते हैं नकि आगे पीछे। इस तंत्ररीति में आसानी भी है । प्रकृत में जो चौदह या १५ एकोद्दिष्ट हैं इनके बारे में दोनों प्रकार की रीतियां काम में लाई गई हैं । किसीने तंत्ररीति से काम लिया है तो किसी ने पार्थक्य रीति से । जिसने पार्थक्य रीति से काम लिया है उसने भी यह लिखदिया है कि तंत्र से भी कर सकते हैं । अतएव हम तंत्र रीति के ही अनुसार इन १४ या १५ की पद्धति लिखना चाहते हैं । फिर भी जो चाहें अलग अलग भी करसकते हैं । कोई विशेष अन्तर तो होगा नहीं । केवल संकल्पों में अलग नाम लेकर अलग वाक्य पढ़ने होंगे और जरासी भी बुद्धि रहनेपर यह बात आसानी से हो सकती है । तंत्र रीति में भी एक बात विचारणीय है। एकही साथ सबका आरंभ करके भी चाहें तो प्रत्येक के अंगों का अलग अलग संकल्प करके पदार्थानुसमय (पृ० ५८) के अनुसार कर सकते हैं और यह प्रायः पार्थक्यरीति की ही तरह होगा । यदि पार्थक्यरीति में क्रमाङ्गानुसमय (पृ० ५८) से काम न लेकर पदार्थानुसमय से काम लें तो उसकी विधि वही हो जायगी जो ऊपर कही गई तंत्ररीति की विधि है । कुछ भी अन्तर नहीं होगा । दूसरी रीति यह होगी कि सभी पिंडों या कर्मों के प्रत्येक अंगों का एकही बार संकल्प करके

Bhaktaguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सभी में उन्हें करदेंगे । दृष्टान्तके लिये यदि चार जगह चन्दन चढ़ाना है तो उसका चार बार संकल्प न कर एक ही बार करेंगे और चारों जगह चढ़ादेंगे । वस्तुतः यही सच्ची तंत्र रीति है और हम आसानी और संक्षेप के लिये इसी का अवलम्बन करेंगे । हां, जिन पदार्थों में तंत्र का निषेध है, जैसा कि "अर्घ्येऽक्षय्योदकं चैव पिंडदानेऽवनेजने । तंत्रस्य विनिवृत्तिः स्यात्स्वधावाचन एव च" (कात्या० २४।१५)—अर्घदान, अक्षय्योदकदान, पिंडदान, अवनेजन, प्रत्यवनेजन दान और स्वधावाचन में तंत्ररीति से काम नहीं लियाजाता है । उनमें हम भी तंत्र को छोड़ देंगे और पृथक् पृथक् पदार्थानुसमय के अनुसार पिंडादि का संकल्प करेंगे । यह भी स्मरण रखना चाहिये कि जिन अट्ठारह पदार्थों का प्रेत श्राद्ध में निषेध (पृ० ४४९) है उनमें स्वधावाचन भी आजाता है । इसी लिये उसका तो यहां अवसरही नहीं है । हां स्वधावाचन न कहकर केवल पिंडपर जल देनेकी क्रिया तो होगीही ।

द्वादशाह श्राद्ध के लिये एकादशाह की रात कोही या द्वादशाह को सवेरे ५०६ पृष्ठोक्त रीति से ब्राह्मण का निमंत्रण और उसके आनेपर स्वागत आदि करे । इसके बाद स्वयं स्नान और नित्यकर्मादि करके महैकोद्दिष्ट की रीति सेही पाक के आरंभ से लेकर, अथवा भूमिशोधन से ही शुरूकर, अन्त तक की क्रियायें करे । सभी पिंडों के लिये एक ही पाक होगा । जितने काम महैकोद्दिष्ट में किये गये हैं उनके हीं इनमें भी किये जायंगे । हां, जो संकल्प शुरू में किया जायगा वह इसप्रकार होगा—ॐ अद्य अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्त्यर्थं षोडशश्राद्धान्तर्गतोनमासिकद्वितीयमासिकत्रैपाक्षिकतृतीयमासिकचतुर्थमासिकपञ्चममासिकषष्ठमासिकोनषष्ठमासिकसप्तममासिकाष्टममासिकनवममासिकदशममासिकैकादशमासिकद्वादशमासिकोनद्वादशमासिकानि पञ्चदशश्राद्धानि तत्तत्कालकर्तव्यानि श्राद्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

शाहेऽपकृष्य करिष्ये ॥ यदि चौदह ही करने हों तो 'त्रैपा-क्षिक' पद निकाल दे और 'पञ्चदश' की जगह 'चतुर्दश' पद पढ़ दे। अथवा पञ्चदश या चतुर्दश पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं है। यदि उस वर्ष अधिमास होने वाला हो तो जिस महीने में वह होने को हो उस मास के दो श्राद्ध होंगे अधिमासिक और शुद्धमासिक। वह पहले, दूसरे आदि जिस महीने में हो वही प्रथमाधिमासिक, प्रथम-शुद्धमासिक, द्वितीयाधिमासिक, द्वितीयशुद्धमासिक इत्यादि पढ़ दे। परन्तु पहले, छठें या तेरहवें महीने में अधिक मास होने पर भी ऊनमासिक, ऊनषष्ठमासिक या ऊनद्वादशमासिक एकही होगा और वह होगा शुद्ध महीने के पूरे होने से पहले। तात्पर्य यह है कि सोलह की जगह सत्रह श्राद्ध हो जायंगे। इसी तरह यदि न्यून मास होजावे, अर्थात् साल ग्यारह ही महीने का हो तो पन्द्रहही होंगे और और जो महीना घट जावे उसका नाम संकल्प में छोड़देंगे। उस वर्ष सोलह की जगह पन्द्रहही पिंड होंगे। परन्तु ऐसा न्यूनमास तो शायद ही कभी होता है। अस्तु, आसन देने के समय भी सभी पिंडों के आसनों के कुश एकही साथ लेकर कुशजल तिलादि से संकल्प करे-

ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकाद्यूनद्वादश-मासिकान्तश्राद्धेषु इमानि आसनानि विभज्य तेमया दी-यन्ते तवोपतिष्ठन्ताम् ॥ इसके बाद १४ या १५ आसनों को अलग अलग रखदे। पहला सबसे पश्चिम रख उससे पूर्व पूर्व शेष आस-नों के कुश उन उन आसनों पर रक्खे। इसीप्रकार आसन के सामने १४ या १५ अर्घ्यपात्र रख प्रत्येक में महैकोद्दिष्ट की रीति से अलग अलग कुश और तिल आदि मंत्र पढ़कर रक्खे। मंत्र बार बार पढ़े। यहां अलग अलग देना होगा। क्योंकि अर्घ्य में तंत्ररीति वर्जित है। अतएव सबसे पश्चिम वाले को उठाकर उसका कुश (पवित्र) ब्राह्मण के हाथ में दे या कुश के ब्राह्मण के आसन पर रखदे और-

ॐ या दिव्या० (५१०) पढ़कर संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकश्राद्धे एष ते हस्तार्घो (एतत्तेऽर्घ्यं) मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ इसी प्रकार उससे पूर्व के दूसरे

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

और उसके बाद वालों में भी करे । मंत्र तो बार बार वही-ओं या दिव्या०—पढ़े । मगर संकल्प में 'द्वितीयमासिक' 'त्रैपाक्षिक' आदि पूर्वोक्त शब्द 'ऊनमासिक' के स्थान में क्रमसे पढ़ताजावे और शेष शब्द ज्यों के त्यों पढ़े । अर्घ दे चुकने पर प्रत्येक अर्घपात्र के यदि औंधना चाहे तो पश्चिम सेही शुरू करे और सभी को भी कोद्दिष्ट की ही तरह औंधकर ऊपर वही पवित्र (कुश) रखदे। यदि न औंधे तो कोई बातही नहीं है । औंधने को न्युब्जीकरण या न्युब्जकरना कहते हैं । इसके बाद भी जितनी क्रियायें करे सब पश्चिम किनारे से ही आरंभ करे । फिर चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, सुपारी, पान, खद्दर आदि सभी के लिये एक साथ ही संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकाद्द नद्वादशमासिकान्तश्राद्धेषु इमानि गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूलपूगीफलवासांसि ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम् और क्रमशः सभी को एक एक चीजें चढ़ाकर फिर दूसरी, तीसरी आदि चढ़ावे । चढ़ाने के बाद-ओं एषां श्राद्धानामर्चनविधिः परिपूर्णताऽस्तु—ऐसा पढ़े । सबको मण्डल से घेर कर-ओं इदमन्नमेतद्भूस्वामिपितृभ्यो नमः- से एकही बार एकही जगह कुशोंपर अन्न रखदे, नकि १४-१५ जगह । यदि दूसरे की भूमि में श्राद्ध करता हो तभी यह करे । अन्न परोसने में भी सभी अन्न एक जगह रखकर और घी, जल और साग भी एकही जगह रख कर हाथसे उसे छूये हुये दहिने हाथमें तीनकुश तिल जल लेकर संकल्प करे ओं अद्यामुकगोत्रामुकप्रेत ऊनमासिकाद्यूनद्वादशमासिकान्तश्राद्धेषु एतदन्नं सोपस्करं मया विभज्य दत्तं तवोपतिष्ठताम् ॥ फिर प्रत्येक पात्र में अलग अलग परोस दे और घी, जल साग भी अलग अलग रख कर भोजन पर मधु भी डाल दे । फिर ॐ इदमन्नं प्रेतायोपतिष्ठतु-यह वाक्य पढ़ दे । इसके बाद-ओं अपहता असुरा० (५३९) इत्यादि से तिल भी पात्र के चारों ओर छींटकर आचमन के लिये जल देने से लेकर पिंडार्थ वेदी बनाने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तक की क्रियायें महैकोद्दिष्ट की ही तरह करके वेदी को मण्डल से घेर दे। तब वेदी को पोतकर जल छिड़कने के बाद प्रत्येक पर तीन तीन कुश रखकर अवनेजन के लिये, जितने पिंड हों उतने पात्रों में, जल, तिल, पुष्प, चन्दनादि प्रत्येक वेदी के पास रख दे। फिर पश्चिम वाला पहला पात्र और कुश तिल जल ले कर संकल्प करे। स्मरण रहे कि हरेक पिंड का अवनेजन, प्रत्यवनेजन अलग अलग ही दिया जायगा, तंत्ररीति से नहीं। इसी लिये अर्घदान की ही तरह अलग अलग संकल्प करना होगा-ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिक पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्॥ और वेदी के कुशों पर थोड़ा गिराकर शेष उसके पास ही पात्र रखदे। इसी तरह दूसरे, तीसरे आदि अवनेजन पात्रों के जलों को भी अर्घ की ही तरह संकल्प करके दे। इसके बाद सभी पिंडों को वैसे ही बनाकर और ऊपर से भी मधु, घृत लगाकर अलग अलग पात्रों में आगे रखले। फिर एक एक पिंड और कुश, तिलादि लेकर संकल्प करे-ॐअद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकश्राद्धे एष ते पिंडो मयादीयते तवोपतिष्ठताम्॥ पितृतीर्थ से पिंड देकर द्वितीयमासिक, त्रैपाक्षिक आदि पिंडों को भी इसी तरह दे। केवल 'ऊनमासिक' की जगह 'द्वितीयमासिक, त्रैपाक्षिक' आदि शब्द संकल्प में देता जावे। शेष शब्दावली ज्यों की त्यों रहेगी। तब हाथ पाँव धोकर, सव्य और पूर्वमुख हो के और आचमन करके विष्णु का स्मरण करे। फिर दक्षिणमुख अपसव्य होकर बायाँ घुटना टेके और अवनेजन पात्र के जलों से पश्चिम से आरंभ कर जैसे जैसे पिंड दिया था प्रत्यवनेजन देता जावे— ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकश्राद्धे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम्॥ इसी प्रकार 'द्वितीयमासिक' आदि शब्द देकर द्वितीयमासिक आदि का प्रत्यवनेजन भी दे। इसके बाद-ओं अत्र प्रेत मादयस्व-इत्यादि महैकोद्दिष्ट की ही तरह पढ़कर उत्तर ओर घूम जावे और फिर पढ़े। तब नीवी खोलकर हाथ धोने तथा आचमन करने के बाद फिर

Bhaktaguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

दक्षिण मुख होकर तीन तीन सूत धोके हाथ में ले और सभी पिंडों के लिये एक ही साथ संकल्प करके उन पर क्रम से चढ़ावे-ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकाद्यूनद्वादशमासिकान्तपिंडेषु एतानि वासांसि ते मया दीयंते तवोपतिष्ठताम् ॥ इसके अनन्तर क्रमसे सभी पिंडों की गन्ध, पुष्प, तुलसी पत्र, धूप, दीप, नैवेद्य, ताम्बूल, सुपारी, दक्षिणा आदि से पूजा करके संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत ऊनमासिकाद्यूनद्वादशमासिकान्तपिंडेषु दत्तं गन्धाद्यर्चनं तवोपतिष्ठताम् ॥ फिर-ॐ एभिः पिंडदानैरमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिः सद्गतिप्राप्तिश्चास्तु-इस प्रार्थना करके ब्राह्मणों के हाथ धुलाने से लेकर अक्षय्योदक देने के पहले तक की क्रियायें महैकोद्दिष्ट की ही तरह करके अलग अलग दोने में तिल जल रखकर अक्षय्योदक देनेका संकल्प करे। स्मरण रहे कि इससे पूर्व जो हाथ में या कुश पर जल देकर-ओं शिवा आपः सन्तु-इत्यादि कहना है वह सभी को एक साथ ही दे देकर कहना होगा । इसी तरह पुष्प आदि भी। तब अक्षय्योदक के जल को लेकर पहले पश्चिम वाले ब्राह्मणके हाथ या कुश पर दे-ओं अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य ऊनमासिकश्राद्धे दत्तमन्नपानादिकमुपतिष्ठताम् ॥ इसी तरह 'द्वितीयमासिक, त्रैपाक्षिक' आदि पद देकर उन पिंडों का भी अक्षय्योदक दे । उसके बाद प्रत्येक पिंड पर दक्षिणाग्र कुश रखकर दक्षिणा जलधारा विना मंत्र के या महैकोद्दिष्ट वाले पाँच श्लोकों के सहित 'ओं अमुकगोत्र अमुकप्रेत अत्र जलधारास्तेमया दीयंते तवोपतिष्ठताम्-इस संकल्प वाक्य से उसी तरह दे । उसके बाद पिंडों को और पिंड के पात्र को अपनी जगह से जरासा हटा दे । तब यथाशक्ति चांदी दक्षिणार्थ धोकर कुश, तिल के साथ हाथ में लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य कृतैतदूनमासिकाद्यूनद्वादशमासिकान्त श्राद्धप्रतिष्ठार्थं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

दं यथाशक्ति रजतं चन्द्रदैवतं दक्षिणात्वेन यथानाम-गोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ दक्षिणा देकर शेष कर्म महैकोद्दिष्ट की ही तरह कर डाले और इस प्रकार सोलह श्राद्धों की पूर्त्ति करे। इति द्वादशाहश्राद्ध।

६—सपिंडीकरण।

पहले ही लिख चुके हैं कि आजकल द्वादशाह को ही षोडशी के बाद ही सपिंडन करते हैं। सपिंडीकरण एकोद्दिष्ट और पार्वण दोनों का मेल है। इसीलिये यहाँ प्रेत के सिवाय पिता, पितामह, प्रपितामह या जिनके साथ सपिंडन कियाजावे उन पितरों, के लिये तीन पिंड होंगे। इस प्रकार चार तो पिंड होंगे और यदि ब्राह्मण हों या कुश ब्राह्मण हीं तो, एक प्रेत और तीन पितरों के सिवाय पितरों के विश्वेदेवों के लिये भी कम से कम एक ब्राह्मण चाहिये। इस प्रकार पाँच ब्राह्मण या कुशब्राह्मण जिन्हें, कुशवटु या कुशचटु (वट) कहते हैं और पाँच आसन आवश्यक हैं। यह भी स्मरण रहे कि विश्वेदेव का ब्राह्मण पूर्वमुख बैठेगा और इसी हिसाब से उसका आसन भी रहना चाहिये। विश्वेदेव से हटकर दक्षिण ओर कुछ दूर पर प्रेत ब्राह्मणका आसन और उससे कुछ दूर पूर्वहटकर पिता, पितामह, प्रपितामह के तीन आसन रहेंगे। यदि स्त्री होगी तो माता, पितामही आदि तीन के रहेंगे। किसके साथ किसका सपिंडन कौन करता है इसका विचार पहले ४६५ पृष्ठ में कर चुके हैं। उसे देख लेना चाहिये और उसी हिसाब से पितरों का आवाहन करना चाहिये। पाक भी दो होंगे। प्रेत का अलग और पितरों का अलग। एक ही जगह पिंड आदि के लिये अन्न तय्यार कर दोनों नहीं करना चाहिये। क्योंकि पितरों के शेष को पिंडदान के बाद भोजन करते हैं। मगर प्रेत के शेष को नहीं। अतएव वह उसके लिये अलग ही आवश्यकता भर बनाया जावे। परन्तु पितरों का पाक तो अधिक हो सकता है। क्योंकि पीछे उससे बचे अन्न को भोजन करेंगे। पिंड के लिये खीर वगैरः भी अलग अलग बनाना चाहिये। विश्वेदेव के लिये एक, प्रेत के लिये एक और पितरों के लिये एक ब्राह्मण होने से भी काम चल सकता है। यदि विश्वेदेव के लिये न भी ब्राह्मण हो तो भी प्रेत और पितरों

Re[illegible]ru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

के दो ब्राह्मणों से या पितर का भी न रहने पर केवल प्रेत ब्राह्मण से भी सपात्रक श्राद्ध हो सकता है। ऐसी दशा में शेष स्थानों पर कुश का ब्राह्मण रखदेंगे। और एक भी न रहने पर तो सभी जगह कुश ब्राह्मण से ही काम चलावेंगे। जब जब प्रेतकार्य करे तब तब सव्य और पूर्व मुख होकर आचमन करके ही पीछे दूसरा काम करे। प्रेत के कार्य में शर्मा आदि शब्द कभी न बोले और अपना सम्बन्ध जनाने के लिये पिता आदि शब्द भी न कहे। अगर पितर कार्य में तो 'शर्म्मा' और सम्बन्ध सूचक पिता आदि शब्द भी बोलना आवश्यक है। आवाहन, पूजनादि में दो तरह की बातें हैं। किसी किसी पद्धति में पहले विश्वेदेवों का आवाहन पूजनादि करके पीछे पितरों का आवाहन पूजन लिखते हैं। परन्तु बहुत सी पद्धतियों में आसन, आवाहन, पूजन एक ही साथ लिखा है। बात यह है कि पदार्थानुसमय के अनुसार यदि किसी एक को आसन देंगे तो अन्यों को भी देना ही होगा। इसी तरह आवाहनादि को भी जानना चाहिये। परन्तु काण्डानुसमय के अनुसार तो एक का आसनदान से लेकर पूजन तक करके दूसरे का भी करेंगे। मैथिल पद्धतियों में तो विश्वेदेव की पूजा के बाद उन के लिये अन्न परोस कर समूचे कृत्य करके तब प्रेत और पितर का आरंभ करते हैं। परन्तु यह तो जरा बहुत ही अनुचित प्रतीत होता है कि पितरों का तो आवाहन तक भी न हुआ और विश्वेदेवों का भोजन भी होगया। हालांकि सभी साथी हैं। साथ ही पूजन का काण्ड एक है और भोजन का दूसरा ही। परन्तु यदि पूजन के नैवेद्य की जगह ही भोजन को मानने का वे लोग दुराग्रह करें, तब तो बात ही दूसरी है। तब तो सब मिल कर एक ही काण्ड हो सकता है। फिर भी संसार के व्यवहार को देखने से तो विपरीत मालूम होता है। वहाँ तो यही देखते है कि पहले सभी को बुलाकर पाँव धोकर बैठाते हैं और पदार्थानुसमय से या काण्डानुसमय से पूजा करके भोजन परोसते हैं। अतएव हमने पदार्थानुसमय को ही आसनदान से लेकर भोजन परोसने तक स्वीकार किया है और उसी के अनुसार पद्धति लिखी है। फिर भी जिन्हें अपनी अपनी प्रणाली के अनुसार ही करने का आग्रह है उन्हें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ठीक नहीं सकते। क्योंकि हमारे जानते कोई शास्त्रीय बाधा तो है नहीं, कि पहले इतना हीं करना और उसके बाद यह करना इत्यादि। हाँ, व्यवहारका विरोध अवश्य है। पर, अपनी रूढ़ि के उपासक इसे कब मानेंगे? फिर भी हम तो शास्त्र और व्यवहार दोनों को मिलाकर उसी के अनुसार लिख रहे हैं और ऐसा ही क्रम बहुत सी पद्धतियों में हमें मिला भी है। अब रह कई एक बात और। अर्घ्य के सम्मेलन में मतभेद है। बहुतों ने ऐसा लिखा है कि पहले प्रेत के अर्घ्य का चतुर्थांश उसे देकर शेष को तीन जगह बराबर बाँटकर पिता, पितामहादि के अर्घ पात्रों में उसे डाल दे। उसके बाद पिता आदि को अर्घ्य दे। इसके विपरीत बहुतों ने पहले सभी को अर्घ देकर पीछे से प्रेत के अर्घ के शेष जल को पितरों के शेष जल में मिलाने को लिखा है। परन्तु हमारे विचार से पहला पक्ष ठीक नहीं है। एक तो बहुत से ऋषि वचनों का भी स्वरस दूसरे ही पक्ष में है। दूसरे, जब पिंड के मिलाने की बात आती है तब तो सभी एकमत हैं कि पहले सभी को पिंड देकर पीछे से प्रेत का पिंड तीन भागों में बाँटकर पितरों के पिंड में मिलाया जावे। तब अर्घ्यदान में भी वही बात क्यों न की जावे? वहाँ भी पहले अर्घ्य देकर ही पीछे अर्घ का सम्मेलन करना हीं क्यों न ठीक माना जावे? इसके लिये जो वचन हैं उनसे भी यही प्रकट होता है कि पहले अर्घ्य देकर ही सम्मेलन उन्हें भी अभीष्ट है। अतएव हमने द्वितीय पक्ष को मानकर उसी के अनुसार पद्धति लिखी है। मैथिला में भी यही परिपाटी है। रह गई सामवेद और यजुर्वेद की बात। सपिंडन में भी प्रायः समानता ही है, जैसी एकोद्दिष्ट में है। सिर्फ कुछ मंत्रों में थोड़ासा भेद है और कहीं कहीं थोड़ासा और भी अन्तर है। परन्तु इतने के लिये अलग पद्धति लिखना हमने उचित न मान प्रसंग आने पर उन भेदों या मंत्रों को अलग अलग लिख देना हीं उचित समझा है।

सपिंडन करने के लिये उससे पहली ही रात को या उसी दिन विश्वेदेव, प्रेत और पितर ब्राह्मणों को निमंत्रित कर दे। निमंत्रण करने के लिये हाथ में पान, सुपारी और द्रव्यादि लेकर ब्राह्मण के घर जावे, देव ब्राह्मण के सामने बैठ उसे पूर्वमुख बैठा कर उसका

Bhaguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

दहिना पांव पकड़े और दहिना घुटना टेक के बैठ कर कहे-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिंडीकरणश्राद्धे विश्वेदेवाः भवन्तमामंत्रये तत्र भवता क्षणः कर्त्तव्यः ॥ वह ब्राह्मण उत्तर दे-ओं तथास्तु ॥ और वह पान, सुपारी आदि चीजें रख दे। इसी तरह प्रेत के लिये भी निमंत्रण करे। मगर प्रेत और पितर ब्राह्मणों को उत्तर मुख बैठाकर उनके सामने स्वयं दक्षिण मुख बाएं घुटना टेककर बैठे और अपसव्य होजावे। प्रेत ब्राह्मण के सामने उसका दहिना या बायां पाँव पकड़ कर कहे-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिंडीकरणश्राद्धे प्रेतार्थं भवन्तमामंत्रये तत्र भवता क्षणः कर्त्तव्यः ॥ इसी तरह प्रेत के पिता, पितामह और प्रपितामह के ब्राह्मणों का भी निमंत्रण करे। केवल 'प्रेतार्थं' की जगह 'प्रेतस्य पित्रर्थं' 'प्रेतस्य पितामहार्थं' 'प्रेतस्य प्रपितामहार्थं' क्रमशः कहना चाहिये। अथवा तीनों को एक साथ ही बैठाकर और उनके सामने बैठकर एक ही बार कहे-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य सपिंडीकरणश्राद्धे प्रेतस्य पित्रर्थं पितामहप्रपितामहार्थं भवत आमंत्रये तत्रभवद्भिः क्षणः कर्त्तव्यः ॥ और वे लोग एक साथ ही पान, सुपारी आदि लेकर-ओं तथास्तु-कह दें। फिर सभी से प्रार्थना करे कि-ओं प्राप्नुवन्तु भवन्तः ॥ वे उत्तर दें-ओं प्राप्नवाम ॥ तब यजमान अपने लिये और उन के लिये भी नियम सुनादे कि-ओं अक्रोधनैः शौचपरैः सततं ब्रह्मचारिभिः ॥ भवितव्यं भवद्भिश्च मया च श्राद्धकारिणा ॥ कर्त्ता प्रातःकाल स्नान कर नित्यकर्मादि कर, मृतक के मरण स्थान या किसी और स्थानको श्राद्धभूमि बना, उसको गोबर से पोत कर, उसपर सफेद सरसों छींटकर और अंगार या जलती लकड़ी उस पर डालकर संस्कार करे। यदि सपात्रक श्राद्ध हो तो आये ब्राह्मणों को-ओं स्वागतम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कहे और वे-ओं सुस्वागतम्-उत्तर देवें। फिर उन्हें तेल और देह मलने को उबटन की जगह पीसा आंवला आदि देकर स्नानार्थ भेजे। परन्तु भेजने से पहले उनके भी दाढ़ी, बाल, नखादि बनवा डाले। मध्यान्ह का समय आने पर उससे पहले ही फिर भी स्वयं स्नान कर श्राद्ध के लिये पाक का प्रबन्ध करे। या तो स्वयं बनावे या अपनी स्त्री आदि के द्वारा। यदि दूसरा ही बनाने वाला हो तो उससे पाक तैयार हो जाने की बात-ॐ सिद्धम् ?-कह कर पूछ ले और उसके-ओं सुसिद्धम्- कहने पर जलपूर्ण बारह घड़े और पक्वान्न से भरा तेरहवां घड़ा, जिसे वर्धनी कहते हैं, उस दिन देने के लिये रख ले। इसके उपरान्त कुत्ते, कौए, बिल्ली आदि विघ्नकारक जंतुओं को हटाकर और श्राद्धभूमि को चारों ओर से घेर कर परदा कर दे। भस्म, जल या आटे से एक चौकोना मण्डल विश्वेदेव का बनाकर उसमें पश्चिम और पूर्व मुख रहने के विचार से आसन रक्खे। विश्वेदेव के मण्डल से कुछ दूर दक्षिण हटकर प्रेतमंडल और उससे कुछ दूर पूर्व ओर दूसरी पंक्तिमें पितरों का मण्डल (चौक) बनावे। प्रेत और पितरों के मण्डल में दक्षिण ओर आसन रक्खे क्योंकि वे उत्तरमुख रहते हैं। यदि प्रातः स्नान किया हो तो भी और यदि षोडश श्राद्ध उसी दिन किये हों तो भी फिर से कर्त्ता स्नान कर ले और निमंत्रित ब्राह्मणों के स्नान करके आजाने पर उन्हें प्रणाम कर 'ॐ नमोऽस्त्वनंताय०' इत्यादि (पृ० ७४) से उनका पांव धोकर श्राद्धस्थान में उन्हें बैठादे। वैश्वदेव ब्राह्मण को पूर्वमुख और शेष को उत्तरमुख बैठावे। देवब्राह्मण के आसन पर पहले से ही पूर्वाग्र या उत्तराग्र कुश रहें और प्रेत तथा पितरके लिये दक्षिणाग्र। यदि ब्राह्मण न हो तो कुश के ही ब्राह्मण बनाकर रख दे और प्रत्येक आसन के समीप तिल के तेल या घी से एक एक दीपक जलाकर या असंभव होनेपर एक ही आसन से बाईं ओर एक रख दे। यही रक्षादीप है और अन्ततक वह बुझने नहीं पाता। ब्राह्मणों के आसनों के चारों ओर का चौक या मण्डल ऐसा हो कि आगे भोजन का पात्र रखने की भी जगह रहे। ब्राह्मण चौकोना, क्षत्रिय तिकोना और वैश्य, शूद्र गोल मण्डल बनावें। सभी ब्राह्मणों के आसनों के उत्तर अपने आसनपर

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पूर्वमुख बैठकर यजमान अपने पावों के नीचे दक्षिणाग्र तीन कुश दे ले और पवित्र धारण कर आचमन और प्राणायाम करे । फिर कर्मपात्र में जलादि ७६ पृष्ठोक्त रीति से मंत्र पढ़कर रक्खे। पहले कुश रखकर उसपर पात्र (लोटा आदि) रख ले और उसमें जल, तिल, चन्दन, पुष्प, तुलसीदल, तीन कुशादि डालकर उन्हीं कुशों से वह जल लेकर अपने शरीर और श्राद्ध के पदार्थों पर छिड़कता हुआ पढ़े-ओं अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः। ओं पुण्डरीकाक्षः पुनातु ॥ फिर उस भूमि को प्रणाम करे-ओं वैष्णव्यै नमः । ओं काश्यप्यै नमः । ओं अक्षयायै नमः । ओं भूम्यै नमः ॥ श्राद्धभूमि में गया और गदाधर का ध्यान कर उन्हें भी नमस्कार करे-ओं भगवत्यैगयायै नमः। ओं भगवते गदाधराय नमः ॥ इसके उपरान्त तीन कुश तिल जलादि लेकर संकल्प करे । सर्वत्र संकल्प के समय इसी तरह कुशादि लेवें और अपसव्य हो जावे । परन्तु स्मरण रहे कि ज्योंहीं प्रेत और पितर कर्म होजावें त्योहीं सव्य होजावे । साथही,बायां घुटना टेककर और दक्षिण मुख भी तभीतक रहे जबतक प्रेत और पितरोंका कर्म करता रहे । देवकार्य में पूर्वमुख सव्य होजावे और दक्षिण घुटना टेके ।हाथ पांव धोकर आचमन करने और भगवान्का स्मरण करने के समय भी हमेशा पूर्वमुख और सव्य होजावे। संकल्प-

ओं अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वानिवृत्त्या वसुरुद्रादित्यस्वरूपपितृसमत्वप्राप्तिद्वारा उत्तमलोकप्राप्त्यर्थमेकोद्दिष्टपार्वणोभयात्मकं सपिंडीकरणश्राद्धमहं करिष्ये। फिर-ओं भूर्भुवःस्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नःप्रचोदयात्-इस गायत्री को तीन बार जपकर तीन हीं बार-ओं देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः—इसको भी
कहे। तब जौ लेकर विश्वेदेव की जगह उसे छींटे-ओं नमो नम-
स्ते गोविन्द पुराण पुरुषोत्तम । इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्षतां
सर्वतो दिशः ॥ फिर अपसव्य होकर प्रेत और पितरों की जगह
और शेष श्राद्धभूमि में भी सफेद सरसों छींटे-ओं अग्निष्वात्ताः
पितृगणाः प्राचीं रक्षन्तु मे दिशम् । तथा बर्हिषदः पान्तु
याम्यां ये पितरः स्थिताः ॥ १ ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदु-
दीचीमपि सोमपाः । अधोर्ध्वमपि कोणेषु हविष्मन्तश्च
सर्वदा ॥ २ ॥ रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः ।
सर्वतश्चाधिपस्तेषां यमो रक्षां करोतु वै । वायुभूतपितृ-
णां च तृप्तिर्भवतु शाश्वती ॥ ३ ॥ अनन्तर तीन कुश और तिल
लेकर बाईं ओर, या दहिनी ओर भी यदि प्रणाली हो, कमर में ५५
पृष्ठोक्त रीति से नीवी बांधता हुआ मंत्र पढ़े-ओं निहन्मि सर्वं य-
दमेध्यवद्भवेद्धताश्च सर्वेऽसुरदानवा मया । रक्षांसि यक्षा-
श्च पिशाचगुह्यका हता मया यातुधानाश्च सर्वे ॥ किसी पात्र
में जल लेकर उसे कुशसे हिलाता हुआ७६पृष्ठोक्त तीन कूष्मांड मंत्रोंको
पढ़े और उस जल को श्राद्ध के भोजन या पिंडादि के पाक वगैरः पर
यह कहकर छिड़के-ओं श्वोदक्यादिदृष्टिनिपाताच्छूद्रादि-
सम्पर्कदोषाच्च पाकादीनां पवित्रताऽस्तु ॥ पहले विश्वेदेव
को आसन देने के लिये उनसे दक्षिण ओर उत्तरमुख बैठ सव्य होकर
दहिना जंघा गिरा दे और उनके आसन के तीन कुशों के साथ अन्य कुश
तिल जलादि लेकर संकल्प पढ़े-ओं अद्य कामकालसंज्ञका विश्वे-
देवा इदमासनं वो नमः ॥ और हाथ का जल विश्वेदेव ब्राह्मण
के हाथ या कुश पर रखकर देवतीर्थ से आसन के दक्षिणभाग में
दक्षिणाग्र या उत्तराग्र आसन के तीन कुश रख दे । फिर प्रेत के आसन के
निकट दक्षिणमुख अपसव्यादि करके विश्वेदेव की ही तरह सीधे तीन
कुश आसनार्थ हाथ में ले और संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अमुकप्रेत इदमासनं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ।
और आसन के पूर्व भाग में आसन के तीनों कुश ब्राह्मण के हाथ पर
या कुशपर जल रखकर पितृतीर्थ से रख दे । फिर पितरों के पास
उसी तरह बायां घुटना मोड़कर और अपसव्यादि होकरही आसन
देने से पूर्व पूर्वमुख सव्य होकर आचमन करले । जब जब प्रेतकर्म
करे तब तब ऐसेही आचमन कर लेना आवश्यक है। तीन पितरों के तीन
तीन मोड़े कुश (मोटक) और संकल्प के कुशादि लेकर पढ़े-ओं अ
द्यामुकगोत्राः प्रेतस्य पितृपितामहप्रपितामहा अमुक
मुकशर्म्माणो वसुरुद्रादित्यस्वरूपा इमानि आसनानि
विभज्य वः स्वधा ॥ और उनके हाथों या कुशों पर जल देकर
अलग अलग आसनों पर बाईं ओर (पूर्व ओर) दक्षिणाग्र मोटक
रखदे । इसके बाद विश्वेदेवों का आवाहन करने के लिये हाथ में
जौ कुश लेकर उस ब्राह्मण से आज्ञा मांगे-ओं कामकालसंज्ञ
कान् विश्वान्देवानावाहयिष्ये ॥ उसका उत्तर-ओं आवा
हय ॥ यदि कुश हो तो स्वयमेव कह ले । यजुर्वेदी आवाहन
मंत्र पढ़े-ओं विश्वेदेवास आगत शृणुतामइम ँ हवम् । एद
बर्हिर्निषीदत । और-ओं यवोऽसि यवयास्मद् द्वेषो यवय
रातीः—पढ़कर जौ कुश आसन के सामने छींटकर पढ़े-ओं वि
श्वेदेवाः शृणुतेम ँ हवं मे ये अन्तरिक्षे य उपद्यविष्ठ
अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषि मा
यध्वम् ॥ परन्तु सामवेदी यह मंत्र पढे-ओं विश्वेदेवास आग
शृणुताम इम ँ हवम् । एदंबर्हिर्निषीदत ॥ १ ॥ वि
देवाः शृणुतेम ँ हवम्मे ये अन्तरिक्षे य उपद्यविष्ठ ।
अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषि मा
यध्वम् ॥ २ ॥ ओषधयः सम्वदन्ते सोमेन सह रा
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्त ँ राजन्पारयामसि ॥ ३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

और उसके बाद-ओं यवोऽसि यवयास्मद्द्वेषो यवयारातीः—पढ़कर जौ कुशादि उसी तहर छींट दे। ऊपर के देखने से स्पष्ट है कि दोनों वेदों में केवल मंत्रों के पढ़ने में ही उलटपुलट है। तीन मंत्र ज्यों के त्यों ही हैं। इसके बाद यदि विश्वेदेव की उत्पत्ति का ज्ञान न हो तो पढ़दे-ओं आगच्छन्तु महाभागा विश्वे देवा महाबलाः । ये यत्र योजिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥ विश्वेदेवों की उत्पत्ति का ज्ञान आवश्यक है (४५७) और वह ज्ञान न होने पर यही श्लोक पढ़कर काम चलाते हैं। इसके बाद प्रेत का तो आवाहनं होता ही नहीं। अपसव्य हो, बायां घुटना टेक दक्षिणमुंह पितरों के पास जाकर और हाथ में तिल कुश लेकर पितर ब्राह्मणों से पूछे-ॐ प्रेतस्य पितॄनावाहयिष्ये ॥ उत्तर-ओं आवाहय ॥ सर्वत्र अपात्रक में स्वयमेव उत्तर दे ले। तब यजुर्वेदी पढ़े-ॐ उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि। उशन्नुशत आवह पितॄन्हविषे अत्तवे ॥ पुनः तीनों के आसनों के आगे तिल छींटता हुआ पढ़े-ॐ अपहता असुरा रक्षाँसि वेदिषदः ॥ फिर जपे-ॐ आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः । अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥ सामवेदी पढ़े-ॐ उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि। उशन्नुशत आवह पितॄन्हविषे अत्तवे ॥ १ ॥ एत पितरः सोम्यासो गम्भीरेभिः पथिभिः पूर्विणेभिः। दत्तास्मभ्यं द्रविणेह भद्रꣳ रयिञ्च नः सर्ववीरं नियच्छत ॥ २ ॥ आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः। अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥ ३ ॥ और ओं अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः--से तिलों को आसनों के आगे छींटकर सव्य और पूर्वमुख हो आचमन कर डाले।

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इसके बाद अर्घ दे । पहले पूर्वमुख सव्य होकर पूर्वाग्र कुशों पर चमस आदि यज्ञिय पात्र या यज्ञिय वृक्ष पलाश आदि के दोने में और सब के अभाव में केले आदि के दोने में पूर्वाग्र तीन पवित्र (एक वित्ते का कुश) रखकर उनमें जल डाले-सिन्धुदीपो गायत्री आपः अपामासेचने विनियोगः । ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो (सामवेदी 'आपो' की जगह 'शन्नो') भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ तब जौ डाले-प्रजापतिर्यजुर्यवोयवप्रक्षेपणे विनियोगः । ॐ यवोऽसियवयास्मद्द्वेषो यवयारातीः।

इसके बाद चुपचाप उसमें चन्दन, पुष्प और तुलसीदल डाल दे। इसके उपरान्त प्रेत और पितरों के निकट जाकर, अपसव्यादि करके दक्षिणाग्र कुश पर प्रेत के लिये एक पात्र और उसपर दक्षिणाग्र पवित्र रख पूर्वमुख हो आचमन करे । फिर दक्षिणमुख अपसव्यादि करके पितरों के लिये दक्षिणाग्र कुश तीन जगह पहले से दक्षिण दूसरा और उससे दक्षिण तीसरा रक्खे और उनपर पात्र रख उनमें पवित्र के तीन तीन कुश दक्षिणाग्र रक्खे । पहले प्रेत के अर्घपात्र में जल दे-ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो ('शन्नो' सामवेदी पढ़े)-भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ फिर पूर्वमुख सव्य हो आचमन करके तीनों पितरों के पात्रों में भी क्रमशः इसी तरह जल डाले और आचमन करके पहले प्रेतके पात्र में तिल डाले-ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्नमद्भिः पृक्तः (प्रक्तः) प्रेतमिमंलोकं प्रीणा (णया) हि नः ॥ और आचमन करके पितरों के पात्रों में भी अलग अलग मंत्र पढ़कर तिल डाले-ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्नमद्भिः पृक्तः स्वधया पितॄँल्लोकान्प्रीणाहिनः स्वधा ॥ पुनः चन्दन, पुष्प और तुलसीदल चुपचाप प्रेतपात्र में डालकर आचमन कर पितरों के पात्रों में भी डाले । फिर पूर्वमुख आचमन करके देव के अर्घपात्र के पास जावे । और उत्तरमुख होकर उस पात्र को दोनों हाथों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उठाकर उसके पवित्र देवब्राह्मण के हाथ या कशब्राह्मण के आगे पत्ते पर पहले पूर्वाग्र रखदे और मंत्र पढ़े-ओं या दिव्या आपः पयसा सम्बभूवुर्या आन्तारिक्षा उत पार्थिवीर्याः। हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता न आपः शिवाः श ँ स्योना सुहवा भवन्तु ॥ तब दहिने हाथ में तीन कुश, तिल, जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य सपिंडीकरणश्राद्धे कामकालसंज्ञका विश्वेदेवा एषवोऽर्घः (सामवेदी-एतत्तेऽर्घ्यम्) स्वाहा नमः ॥ ब्राह्मण कहे-ॐ अस्त्वर्घ्यम् ॥ और संकल्प का जल उस ब्राह्मण के हाथ या कुश पर गिराकर दहिने हाथ के देवतीर्थ से वह अर्घ देवब्राह्मण के हाथ या पत्ते पर के पवित्रों पर गिरादे और उसका पवित्र अर्घ्यपात्र में रख देवब्राह्मण के आसन के दक्षिण ओर-ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्थानमसि-पढ़कर उतान हीं रख दे। इसके बाद प्रेत के अर्घ्यपात्र के पास जाकर दक्षिणमुख अपसव्यादि करके उसके अर्घपात्रको दोनों हाथों से उठाकर प्रेतब्राह्मण के हाथ या पत्ते पर दूसरा जल डालकर उसपर दक्षिणाग्र अर्घ का पवित्र रख दे और वही-ओं या दिव्या० इत्यादि मंत्र पढ़ और कुशादि दहिने हाथ में लेकर संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत सपिंडीकरणश्राद्धे एषोऽर्घस्ते (सामवेदी--एतत्तेऽर्घ्यं) मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ ब्राह्मण के-ॐ अस्त्वर्घ्यम्-कहने पर पितृतीर्थ से उसके हाथ के कुश पर या नीचे रक्खे कुश पर उस अर्घजलका चौथाई गिरा दे और तीन चौथाई पितरों के अर्घ्य में मिलाने के लिये रख ले। पात्र उसके सामने हीं रख उसीमें उठाकर पवित्र रख दे और पूर्वमुख सव्य होकर आचमन करके फिर दक्षिणमुख अपसव्यादि हो पहले प्रेत के पिता के पास जाकर उस का अर्घ्यपात्र, जो सबसे उत्तर है, लेकर पूर्ववत् उसके हाथ या कुश पर दूसरा जल देकर अर्घ्य के तीनों पवित्र उस ब्राह्मण के हाथ या पलास के पत्ते पर दक्षिणाग्र रख दे और वही-ओं यादिव्या० मंत्र पढ़कर कुशादि से यजुर्वेदी संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्यामुक-

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रेतस्यपितरमुकशर्मन्नेषतेऽर्घस्स्वधा। सामवेदी पढ़े-ॐ अद्या-मुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्मन् एतत्तेऽर्घ्यं येचात्वामनुयांश्चत्वमनु तस्मैते स्वधा ॥ ब्राह्मण के-ॐ अस्त्वर्घ्यम् कहने पर थोड़ा बचाकर शेष जल पितृतीर्थ से पूर्व रक्खे पवित्र पर डाल दे और उस पवित्र को उस अर्घ्यपात्र में रख सामने हीं उसे रख दे। तब जल का स्पर्श कर पितामह का अर्घ्यपात्र उठाकर पूर्ववत् पवित्र रखने, मंत्र पढ़ने आदि की क्रियायें करके पूर्ववत् संकल्प भी करें-ओं अद्य० पितामह० स्वधा । सामवेदी भी उसी तरह पढ़े। केवल 'पितः' की जगह 'पितामह' इसबार पढ़ा जाता है। उसी तरह थोड़ा जल बचा ले और पवित्र डालकर वह पात्र रख दे। फिर जल छूकर प्रपितामह का भी अर्घ उसी तरह दे। इस बार 'पितामह' की जगह 'प्रपितामह' पढ़ दे। शेष सभी काम ज्यों के त्यों करे। अन्त में पूर्वमुख सव्य होकर आचमनकरके फिर दक्षिणमुख अपसव्यादि कर ले और प्रेत के अर्घ्य का पितरों के अर्घ्य के साथ सम्मेलन करे। पहले कुशादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्येहामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकवस्वादित्यरुद्रलोकप्राप्त्यर्थं तत्पितृपितामहप्रपितामहानामर्घैः सह प्रेतार्घस्य संयोजनं करिष्ये॥ ब्राह्मण उत्तर दें या स्वयं कह ले यदि वे न हों कि-ओं संयोजय । फिर प्रेत के अर्घपात्र को उठाकर उसका पवित्र उस के पिताके अर्घ्यपात्र में दक्षिणाग्र रख दे और दोनों हाथों में प्रेत का अर्घ्यपात्र लेकर मंत्र पढ़े-ओं ये समानाः समनसः पितरोयमराज्ये। तेषां ल्लोकः स्वधानमो यज्ञो देवेषु कल्पताम् ॥ १ ॥ ये समानाः समनसो जीवाजीवेषु मामकाः। तेषा ँ श्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शत ँ समाः ॥ २ ॥ ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्यार्घ्यप्रथमांशस्तिलतुः अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणो वसुरूपस्य अर्घ्येण सह संयुज्यताम् ॥ और प्रेत के अर्घ के जल का एक तिहाई भाग पि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तीर्थ से पिता के अर्घपात्र में डाल दे । फिर ब्राह्मण या स्वयं कह दे-ओं सुसंयुतम् ॥ पुनः प्रेत वाला पवित्र उसके पिता के पात्र से निकालकर पितामह के पात्र में दक्षिणाग्र रखकर दोनों हाथों में प्रेतार्घ पात्र लेकर और पूर्ववत्-ओं ये समानाः०-इत्यादि पढ़कर-ओं अद्य अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्यार्घ्यस्य द्वितीयांशस्तत्पितामहस्य अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणो रुद्ररूपस्य अर्घ्येण सह संयुज्यताम्-कहकर पितृतीर्थ से शेष का आधा पितामह के अर्घ्यपात्र में डाल दे । इसके बाद पूर्ववत्-ओं सुसंयुतम्-कहे। पुनः पूर्ववत् उस पवित्र को प्रपितामह के पात्र में रखकर प्रेतार्घपात्र दोनों हाथ में ले और वही-ॐ ये समानाः०-मंत्र पढ़े और-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य अर्घ्यतृतीयांशस्तत्प्रपितामहस्य अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मण आदित्यरूपस्य अर्घ्येण सह संयुज्यताम्-पढ़कर बचा हुआ जल पूर्ववत् उस पात्र में डाल दे और स्वयं या ब्राह्मण-ओं सुसंयुतम्-कह दे । इसके बाद कहे-ॐ अनेनार्घसम्मेलनेन प्रेतस्योत्तमलोकप्राप्तिरस्तु ॥ इसके उपरांत प्रेतके पिता के पात्र में पितामह और प्रपितामह के पात्रों का अर्घ्यजल डालने से पहले उनके पवित्र क्रमशः उठाकर उसमें रख ले और उसी क्रम से जल डालकर यदि पुत्रादि की कामना हो तो उस जल का कुछ अंश पूर्वमुख सव्य होकर अपने सिर पर डाले-ओं आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तेकृण्वन्तु भेषजम् ॥ परन्तु इसका डालना आवश्यक नहीं है। इसीलिये नहीं भी डाल सकते हैं । तब सभी पवित्रों को हाथ में लेकर प्रेतके पिता के वाम भाग में (पूर्व ओर) यजुर्वेदी-ओं पितृभ्यः स्थानमसि-पढ़कर तथा अपसव्य होकर औंधदे और उसी के ऊपर प्रेतपवित्र के सिवाय सभी पवित्र रखदे सामवेदी-ओं शुन्धन्तां पितृलोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसिपितृभ्यः स्थानमसि-

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

इस मंत्र से औंधे। पितामहादि के पात्रोंको जहांके तहां हीं छोड़ दे। प्रेतका पवित्र प्रेतपात्र में रख प्रेतके आसन के पूर्व उसका पात्र औंधा या उतान हीं रखदे- ओं प्रेताय स्थानमसि ॥ यदि औंधने की परिपाटी हो तो पवित्र पात्रके ऊपर रखदे। परिपाटी कहने का अभिप्राय यह है कि विश्वेदेव और प्रेत के बारे में कुछ भी लिखा नहीं गया है और पद्धतियों में कहीं तो औंधना लिखा है,कहीं सीधा और कहीं दोनोंमें चाहे जो करने की बात है। सूत्रों में केवल पितृपात्र के औंधने की ही बात है। इसीतरह पितामह और प्रपितामह के पात्रों के बारे में भी कुछ नहीं लिखा है। मगर जहां तहां के वचनों से कोई कोई यह सिद्ध करना चाहते हैं कि पिता के पात्र के ऊपर क्रमशः दोनों पात्र औंधकर पिता का पात्र औंधे जिससे वे दोनों नीचे पड़जावें और ऊपर मुख होजावें और उनका ढक्कन पिता का पात्र हो जावे। दूसरे कहते हैं कि पिता के पात्र पर ही उनको भी क्रम से औंधदे। परन्तु सूत्रकार कुछ नहीं कहते। न तो पारस्कर ने हीं कुछ कहा है और न गोभिल नेहीं। इसीलिये हमने भी नहीं लिखा है। परन्तु यदि कहीं ऐसी परिपाटी हो और वह अन्धपरम्परा न होकर सुप्राचीन हो तो वैसा भी कर सकते हैं। अस्तु, दक्षिणादान तक वह औंधा पात्र ज्यों का त्यों रहता है। इसके बाद पहले आचमन कर प्रेतब्राह्मण या कुशपर और पीछे पितरों के ब्राह्मण या कुशपर गन्ध, पुष्प, धूप, दीप, पान, जनेऊ और खद्दर या अभाव में यज्ञोपवीत और द्रव्य चढ़ावे। पहले प्रेत के पास जाकर और सभी सामग्री हाथ में लेकर कुशादि से संकल्प करे-ओं अद्य अमुकगोत्र अमुकप्रेत सपिंडीकरणश्राद्धे एतानि गन्धादीनि ते मया दीयन्ते तवोपतिष्ठन्ताम्।

फिर सभी वस्तुएं क्रमशः चढ़ादे। तब पूर्वमुख सव्य होकर आचमन करके फिर दक्षिणमुख अपसव्य होजावे और प्रेत के पिता आदि तीनों के लिये चन्दन आदि सभी उक्त वस्तुएं एक ही साथ लेकर पूर्ववत् ही संकल्प करें-ओं अद्यामुकगोत्राः प्रेतस्य पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माण एतानि गन्धादीनि विभज्य युष्मभ्यं स्वधा ॥ और क्रमशः तीनों को अलग अलग सभी चढ़ावे। यह बात बराबर स्मरण रखने की है पितरों के सं-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कल्प के लिये या और कामों में भी मोटक से ही सदा काम लेते हैं। परन्तु प्रेत और देवकार्य में सीधा कुश चाहिये। पूजनके बाद कहे-ओं प्रेतस्य पितॄणां च पूजनं सम्पूर्णमस्तु ॥ फिर सव्य होकर देवआसन के आगे और अपसव्य होकर प्रेत तथा पितरों के आगे की भूमि को साफ कर के पोतदे और जल, चूना, भस्म या आटे से चौकोना मण्डल भी देव के आगे सव्य होकर और प्रेत आदि के आगे अपसव्य होकर बनावे और इसी तरह भोजन परोसने के पात्र भी मण्डल के भीतरही रखदे। यदि दूसरे की भूमि में श्राद्ध करता हो तो दक्षिण ओर दक्षिणाग्र कुश बिछा घृत से युक्त अन्न लेकर अपसव्य होकर-ॐ इदमन्नमेतद्भूतस्वामिपितृभ्यो नमः-से उन्हीं कुशों पर पितृतीर्थ से डाल दे। इसके बाद अग्नौकरणनामक कर्म करे। अग्नौकरण होम अग्निहोत्री हो तो गृह्यअग्नि में हीं करे। मगर यदि ऐसा न हो तो ब्राह्मणों के हाथ ही में करे और उनके अभाव में किसी पात्र या दोने में जल रखकर उसी में करे। यह होम पूर्वमुख सव्य होकर या दक्षिणमुख अपसव्य होकर दोनों ही तरह कियाजाता है। कर्ता चाहे जैसे करे। पहले पितरों के अन्न में से गर्म अन्न घृत से मिश्रित कर कांसे के बर्तन में रख पितृब्राह्मणों में जो सबसे पहले हो उसी से पूछे-ओं अग्नौ करिष्यामि ॥ वह उत्तर दे-ओं कुरुष्व ॥ कुश के ब्राह्मण के होने पर स्वयमेव प्रश्नोत्तर कर ले। फिर यजुर्वेदी इन मंत्रों से दो आहुतियां दे-(१) ॐ अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा इदमग्नये कव्यवाहनायनमम ॥ (२) ओं सोमाय पितृमते स्वाहा इदं सोमाय पितृमते नमम ॥ सामवेदी इन्हीं मंत्रों को जरा इधर उधर करके यों आहुति देते हैं-(१) ओं स्वाहा सोमाय पितृमते इदं सोमाय पितृमतेनमम ॥ (२) ओं स्वाहाऽग्नये कव्यवाहनाय इदमग्नये कव्यवाहनाय नमम ॥ एकही दोने में या सब से पहले वाले एक ही ब्राह्मण के हाथ में दोनों आहुतियां देते हैं। फिर आहुति के बाद बचे अन्न का

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

थोड़ा सा अंश पितरों के पिंड में मिलाने के लिये रखकर शेष में से थोड़ा थोड़ा तीनों पितरों के भोजनपात्रों में देते हैं। प्रेत और विश्वेदेव के पात्र में नहीं देते । अनन्तर सव्य होकर देवपात्र में पहले घी देकर सभी प्रकार के अन्न परोसे और एक दोने में जल, दूसरे में घी और तीसरे में साग चटनी आदि रख दे । फिर अपसव्य होकर तीनों पितरों को भी इसीतरह क्रम से परोसे। प्रेत के लिये जो अलग रसोई है उससे प्रेत के पात्र में भी उसी तरह परोसे । खानेभर भरपूर परोसना चाहिये । परोसकर ऊपर से भी घी और मधु देना चाहिये । इसके बाद सव्य होकर देवपात्र को बायें हाथ से पकड़े और उसके चारों ओर—ओं सत्यंत-र्तेन परिषिञ्चामि—मन्त्र से पंक्तिवारण का जल गिराकर उसीके चारों ओर प्रदक्षिण क्रम से जौ छींटे-ओं अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः॥ इसके बाद दोनों हाथों को औंधकर जिस में दहिना ऊपर और बायाँ नीचे हो, उस भोजनपात्र पर रखके मंत्र पढ़े—ओं पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्म-णस्यमुखेऽअमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा ॥ फिर-ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे-यह मंत्र पढ़कर, या-ओं विष्णो (कृष्ण) हव्य ꣳ रक्षस-यह पढ़ कर ब्राह्मण के होने पर देवब्राह्मण का, और अभाव में अपना हीं, अंगूठा उस अन्न में लगादे या घुसेड़ दे और— ओं इदमन्नम्, इमा आपः, इदमाज्यम्, एतत्सर्वं हविः-ऐसा कहकर बायें हाथ से भोजनपात्र को पकड़े हुए दहिने में सीधे तीन कुश, तिल, जल लेकर पढ़े-ॐ अद्येह कामकालसंज्ञकेभ्यो विश्वेभ्यो देवेभ्य इदमन्नममृतस्वरूपं वः स्वाहा ॥ और देवब्राह्मण के आगे वह कुश जलादि रख दे । फिर प्रेतपात्र के पास जाकर अपसव्यादि करके उसके चारों ओर चुपचाप जल गिरा कर—ओं अपहता असुरा रक्षांसि वेदिषदः—से तिल छींटदे और उसे बायें हाथ से छूकर दहिने हाथ में सीधे कुश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तिल, जल लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत इदमन्नं सोपस्करं ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और उसके आगे जल गिरा दे। पूर्वमुख आचमन करके फिर दक्षिणमुख अपसव्य हो कर, बायाँ घुटना टेककर और प्रेत के पिता के अन्न के पास जाकर जैसे विश्वेदेव के पात्र के चारों ओर जल गिराया है वैसे ही गिरावे, जौ की जगह तिल उसी-ओं अपहता०-मंत्र से वामावर्त्त से पात्रके चारों ओर छींटे, बायाँ हाथ ऊपर और दहिना नीचे औंधकर पात्र पर रख के वही मंत्र पढ़े और उसी मंत्र से अन्न में अंगूठा लगाकर वही-ओं इदमन्नम्० इत्यादि कहे। फिर तीन मोटक तिल जल लेकर संकल्प करे-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्मन् इदमन्नं सोपकरणं कव्यरूपममृतं तुभ्यं स्वधा॥ और उसी के आगे जलादि गिरादे। यहाँ पर अंगूठा डालने में यदि-ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे० पढ़ा है, तब तो कोई बात नहीं है। मगर दूसरे मंत्र में हव्य शब्द की जगह कव्य पढ़ने को कहीं कहीं लिखा है--ओं विष्णो कव्य ँ रक्षस्व॥ इसके बाद जल छूकर प्रेत के पितामह को भी अन्न समर्पण करने में सभी क्रियायें पिता की ही तरह करे और प्रपितामह के समय भी वैसा ही करे। मगर जैसे पिता के बाद जल छू लिया था उसी तरह पितामह के बाद भी जल छू ले। परन्तु पितामह और प्रपितामह के अन्तिम संकल्प में इतनी हीं विशेषता होगी कि 'पितः' की जगह 'पितामह' और 'प्रपितामह' क्रम से पढ़ेंगे। कुछ भी और अन्तर नहीं होगा। इसके बाद प्रार्थना करे-ओं अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत्, तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु॥ इसके अनन्तर पहले प्रेत के, और आचमन करके फिर अपसव्य होकर क्रमशः तीनों पितरों के, हाथ में पूर्वापोशनार्थ जल देके स्वयं सव्य होकर तीन या एकबार गायत्री पढ़े-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यम्०, ओं मधुवाता०, ओं मधुमधुमधु-ये सभी ५४१ पृष्ठोक्त रीति से पढ़े। यह मन्त्र वहां लिखे हैं। वहीं देखलेना चाहिये। इसके बाद-

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ओं यथामुखं जुषध्वम्—कहकर जितने ब्राह्मण हों उतनी बार ओं अमृतोपस्तरणमसि—यह मंत्र पढ़े और ब्राह्मण मंत्र के साथ आचमन करते जावें । प्रेतब्राह्मण से ही शुरू होता है । इसके बाद ओं प्राणाय स्वाहा । ओं अपानाय स्वाहा । ॐ व्यानाय स्वाहा । ॐ समानाय स्वाहा । ॐ उदानाय स्वाहा- यह प्राणाहुतिमंत्र भी बोले और इन्हीं के साथ वे पंचप्राणाहुतियां करें। इतना करने के बाद जब वे भोजन करने लगें तो फिर सव्य होकर तीन या एक बार गायत्री, मधुवाता०, मधुमधुमधु, जपे और यजुर्वेदी रक्षोघ्न, पित्र्यमंत्र, पुरुषसूक्त, अप्रतिरथ का पाठ करे। यह सब ग्रन्थ में आगे लिखे हैं। सामवेदी पितृसंहिता और मधुच्छन्दस संहिता का पाठ करे। यह भी वहीं लिखी है। इसके उपरान्त पढ़े—ओं सप्तव्याघ्र दशार्णेषु मृगाः कालंजरे गिरौ। चक्रवाकाः शरद्वीपे हंसाः सरसि मानसाः ॥ १ ॥ तेऽभिजाताः कुरुक्षेत्रे ब्राह्मणा वेदपारगाः । प्रस्थिता दूरमध्वानं यूयं तेभ्योऽवसीदत ॥ तब प्रेत के पिता के भोजन के पात्र के निकट ही अपसव्य होकर भूमि को साफ करके उस पर जल छिड़के और भोजनपात्र से चार अंगुल उत्तर हटकर दक्षिणाग्र तीन मोटक बिछाकर सभी प्रकार के अन्न में तिल, घी और साग वगैरः मिलाकर उन्हीं कुशों पर विकिर दे—ओं ये अग्निदग्धा जीवा ये येप्यदग्धाः कुले मम। भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ता यान्तु परांगतिम् ॥ यह मंत्र पढ़कर पितृतीर्थ से उन्हीं कुशों पर वही अन्न छींट दे । भोजन के बाद बचे अन्न का कुछही अंश वहां छींटे । कुछ पिंड के लिये बचा ले । कहीं कहीं पूर्वलिखित मंत्र का पहला चरण यों पढ़ा है—ओं अग्निदग्धाश्च ये जीवा । और शेष तीन चरण ज्यों के त्यों हैं । इसके बाद कर्त्ता सव्य होकर पूर्वमुख होजावे, हाथ पाँव धोकर दो बार आचमन करके भगवान का स्मरण करे, पहले के पवित्रों को अंगुलियों में से निकाल कर नये पवित्र पहने और प्रेत ब्राह्मण से आरंभ कर सभी को उत्तरापोशान (आचमन) के लिये जल देकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सव्य होके उसी तरह तीन बार गायत्री, मधुवाता और मधुमधुमधु जपे। किसी किसी सामवेदी ने यहाँ गायत्रीका जप नहीं माना है। उनके आचमन कर लेने पर सव्य होकर विश्वेदेव ब्राह्मण से पूछे-ओं विश्वे-देवास्तृप्ताः स्थ? उत्तर दे-ओं तृप्ताः स्मः ॥ प्रेतब्राह्मण से दक्षिणमुख अपसव्य होकर पूछे-ओंस्वादितम्? उत्तर दे-ॐ सुस्वादतम्। बहुत लोग प्रेत से कोई भी प्रश्न करना नहीं चाहते। वे तृप्तिप्रश्न के निषेध का यही अर्थ लगाते हैं कि यह प्रश्न हीं न हो। दूसरे लोग कहते हैं कि 'तृप्ति' शब्द का निषेध है। फिर आचमन कर पितरों से पूछे-ओं प्रेतस्य पितृपितामहप्रपितामहा स्तृप्ताः स्थ? उत्तर दें-ओं तृप्ताः स्मः ॥ तब पितृब्राह्मणों से पूछे-ओं अन्नशेषैः किं क्रियताम्? वह उत्तर दें-ओं इष्टैः सह भुज्यताम् ॥ इसके बाद उन ब्राह्मणों के हाथ धुलाने से पहले ही पिंड दान करे। प्रेत ब्राह्मण के भोजनपात्र से हाथ भर-बाहु भर-दूर भूमि पर एक हाथ लम्बी चौड़ी और चार अंगुल ऊंची बालू की वेदी दक्षिण ओर ढालू प्रेतपिंड के लिये बनाकर उससे पूर्व हटकर वैसोही दूसरी वेदी पितरों के पिंडों के लिये एकहीं बनावे। वेदीके ऊपर जल छिड़क उस के चारों ओर चौकोना मण्डल बनावे। वेदी की भूमि गौके गोबर से पोत दे। तब उस पर वेदी बनावे। इसके बाद बायें हाथ से कुश की पिंजूली (पृ० ३५) लेकर उसे दहिने से पकड़े और दोनों हाथों से पकड़े हुए ही केवल पितरों की वेदी के बीच में उत्तर से दक्षिण की ओर पिंजूली की जड़ से एक बित्ता की रेखा खींचे-प्रजापतिर्यजुः पितरः, रेखोल्लेखने विनियोगः ॥ ओं अपहता असुरारक्षां-सि वेदिषदः ॥ और पिंजूली को उत्तर ओर फेंक कर जल का स्पर्श करे। फिर जलती लकड़ी या जलते तृण लेकर उसी रेखा के ऊपर और चारों ओर घुमावे-ओं ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वधया चरन्ति। पुरापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्नि-ष्टाँल्लोकात्प्रणुदात्यस्मात् ॥ परन्तु सामवेदी यह न करे। उसे मना है। घुमाने के बाद उसे दक्षिण ओर रख दे। प्रेत की वेदी पर

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding |KS-MoE-Grant

रेखा खींचना और जलती लकड़ी घुमाना (उल्मुकभ्रामण) यह दो काम नहीं होते । इसके बाद प्रेत और पितर की वेदी पर अलग अलग तीन तीन कुश दक्षिणाग्र रक्खे । पितरों के कुशों की जड़ नहीं रहनी चाहिये । वे उपमूल सकृदाच्छिन्न (पृ० ४६४) हों । मगर प्रेत के लिये समूलकुश रहें । प्रेत के कुश डालकर आचमन कर ले । तब पितरों के कुश रक्खे । इसके बाद यद्यपि यजुर्वेदी पद्धतियों में फिर पितरों का आवाहन नहीं है । तथापि सामवेदी पद्धतियों में है । इसलिये वह पूर्वोक्त ५६१ पृष्ठ के—ओं एत पितरः०—और-आयन्तुनः०—इन दो मंत्रों से आवाहन करे और यजुर्वेदी केवल—आयन्तुनः०-से कर सकता है । यदि न भी करे तो कोई हर्ज नहीं है । फिर जैसे अर्घपात्र रखकर उसमें जलादि रक्खा था उसी तरह एक प्रेतके लिये और तीन पितरों के लिये पात्र या दोने रख उन सबों में क्रम से जल, तिल, चन्दन और पुष्प डालकर अवनेजन का जल तैयार करे । पहले प्रेत का अवनेजनपात्र लेकर और सीधे तीन कुशादि लेकर पढ़े—ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत सपिंडीकरणश्राद्धे अत्र पिंडस्थाने अवनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और पिंड की वेदी के कुशों के बीच में पितृतीर्थ से उस जल में से थोड़ासा गिराकर सामने जलपात्र रख दे । पूर्वमुख, सव्य हो आचमन करके फिरदक्षिणमुख अपसव्यादि करले और सबसे पहले प्रेत के पिता वाला उत्तर का अवनेजन पात्र ले और मोटक तिलादि से यजुर्वेदी संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्म्मन्नत्रावनेनिक्ष्व ते स्वधा ॥ सामवेदीका संकल्प-ॐ अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्म्मन्नत्रावनेनिक्ष्व ये चात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा॥ और पितरों की वेदी के कुशों की जड़ में पितृतीर्थ से उसका थोड़ा जल गिराकर पात्र अपनी जगह पर रख दे । फिर जल छूकर इसी तरह पितामह को और उसके बाद जल छूकर प्रपितामह को भी क्रमसे कुशों के मध्य और अन्त में अवनेजन दे । हां, इतना याद रहे कि संकल्प के वाक्य में 'पितः' की जगह 'पितामह' और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

'प्रपितामह' पढ़ दे। शेष ज्यों का त्यों रहे। ये तीनों अवनेजन क्रम से कुशों के मूल, मध्य और अन्त में दिये जाते हैं। पीछे उन्हीं अवनेजनों पर क्रम से तीन पिंड दिये जाते हैं। इसके बाद जलस्पर्श करके पहले प्रेत के पाक के अन्न का एक पिंड बड़े बिल्व कासा बनावे। उसमें मधु, तिल, शक्कर, घी आदि मिलाकर पिंड बनावे, उसके ऊपर से घी, मधु लगाकर बायें हाथ में रख ले और कुशादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और पितृतीर्थ से प्रेत की वेदी के कुशों पर अवनेजन की जगह रख दे। तब पूर्वमुख सव्य हो आचमन करके फिर दक्षिणमुख अपसव्यादि पूर्वक पितरों के पाक से अन्न लेकर और उसमें अग्नौ करण की आहुति के शेष अन्न और मधु, तिल, शक्कर, घी, साग वगैरः मिलाकर प्रेतके पिंडसे कुछ छोटे साधारण बिल्व जैसे तीन पिंड बनावे और अलग अलग तीन पात्रों में पितरों की पिंडवेदी के पास उत्तर दक्षिण रखदे। फिर पिता का पहला पिंड और मोटकादि लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्मन्नेष ते पिंडः स्वधा॥ यह यजुर्वेदी का वाक्य है और-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्म्मन्नेष ते पिंडो ये चात्र त्वामनु यांश्च त्वमनुतसै ते स्वधा-यह सामवेदी का है। दहिने हाथ में बायाँ लगाकर दहिने के पितृतीर्थ से कुशों के मूल में प्रथम अवनेजन की जगह पिंड रखकर जल छू ले। इसी तरह पितामह और प्रपितामह के पिंड दे। प्रत्येकपितरके कर्मके बाद जल छूले। पितामह और प्रपितामहके पिंड उनके अवनेजन की जगह कुशों के मध्य और अन्त में दे और संकल्प वाक्य में 'पतः' की जगह 'पितामह' और 'प्रपितामह' पढ़ ले, जैसा अवनेजन या अर्घ्य के समय किया था। इसके बाद पितरों के पिंड वाले कुशों की जड़ में हाथ पोंछे और पढ़े-ओं लेपभागभुजः पितरस्तृप्यन्तु॥ फिर हाथ धोकर पूर्वमुख सव्य होकर तीन बार आचमन कर हरिस्मरण करे। तब दक्षिणमुख अपसव्यादि करके प्रेत

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के अवनेजनपात्र के जल से या पिंडपात्र के धोये जल से प्रेतपिंडपर प्रत्यवनेजन दे । हाथ में कुशादि और प्रत्यवनेजनपात्र लेकर पढ़े- ॐ अद्यामुकगोत्र अमुकप्रेत सपिंडीकरणश्राद्धपिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते मया दीयते तवोपतिष्ठताम् ॥ और पिंडपर पितृतीर्थ से जल गिरादे । पर, पितरों के पिंडपर प्रत्यवनेजनादि कुछ न देकर—ॐ अत्रप्रेत मादयस्व० आदि तथा प्रेतके पिंडपर वस्त्र चन्दनादि देकर पूजा करने से लेकर प्रेतब्राह्मण के विसर्जन तक की क्रियायें ५४३ पृष्ठोक्त एकोद्दिष्ट की रीति से ही करके प्रेतपिंडका पितरों के पिंडोंमें सम्मेलन करे । पहले प्रेत के पिंड के ऊपर के वस्त्र, पुष्पादि हटाकर दोनों हाथों में सोने या चाँदी का तार लेकर या अभावमें कुश की पतली रस्सी या कुश में मधु घी लगाकर उसीसे, प्रेतपिंड के तीन बराबर भाग कर डाले और मोटक तिल जल लेकर संकल्प करे- ॐ अद्येहामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकस्वादिपितृत्वप्राप्त्यर्थं तस्य पितृपितामहप्रपितामहानां वसुरुद्रादित्यस्वरूपाणां पिंडैः सह प्रेतपिंडस्य संयोजनं करिष्ये ॥ फिर प्रेतपिंड का एक भागों दोनों हाथ में लेकर पढ़े- ओं ये समानाः समनसः पितरो यमराज्ये । तेषां लोके स्वधानमो यज्ञो देवेषु कल्पताम् ॥ १ ॥ ये समानाः समनसो जीवाजीवेषु मामकाः । तेषां श्रीर्मयि कल्पतामस्मिँल्लोके शतं समाः ॥ २ ॥ और उसको बायें हाथ में रख दहिने हाथ में मोटकादि लेकर प्रेत के पिता का पिंड छूकर पढ़े--ॐ अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पिंडप्रथमांशस्तत्पितुः अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणो वसुरूपस्य पिण्डेन सह संयुज्यताम् ॥ और पितृतीर्थ से उसी पिंड पर वह भाग रक्खे ब्राह्मण कहे—ॐ सुसंयुतम् ॥ तब उसपर मधु और घी डालकर उस अंश को पिता के पिंडके साथ मिलाकर पिंडाकार बना डाले कहीं कहीं दही और मधु से भी मिलाने को लिखा है । इसी तरह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पितामह और प्रपितामह के पिंड में भी घृतादि के साथ मिला-कर पिंड बनादेंगे। पहली बार पिताके साथ मिला लेने पर पढ़े-ॐ अनेन प्रथमांशसंयोजनेन प्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वक-वसुरूपत्वप्राप्तिरस्तु ॥ फिर प्रेतपिंड का दूसरा भाग उठावे और पूर्ववत्-ॐ ये समानाः० इत्यादि पढ़कर पितामह के पिंड को छूकर संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पिंडद्वि-तीयांशस्तत्पितामहस्य अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मणो रुद्र-रूपस्य पिंडेन सह संयुज्यताम्॥ शेष क्रिया पूर्ववत् करके पढ़े-ओं अनेनप्रेतपिंडद्वितीयांशमेलनेन प्रेतस्य रुद्ररूपत्वप्राप्तिरस्तु॥ प्रेत के पिंड के शेष भाग को लेकर पूर्ववत् मंत्र पढ़कर प्रपितामह का पिंड छूकर पढ़े--ॐ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पिंड-तृतीयांशस्तत्प्रपितामहस्य अमुकगोत्रस्य अमुकशर्मण आदित्यरूपस्य पिंडेन सह संयुज्यताम् ॥ शेष क्रियायें पूर्ववत्। अन्त में कहे-ॐ अनेन पिंडतृतीयांशमेलनेन प्रेतस्या-दित्यरूपत्वप्राप्तिरस्तु ॥ तब तीनों पिंडों को हाथ से स्पर्श कर प्रार्थना मंत्र पढ़े-ॐ एषवोऽनुगतः प्रेतः पितरस्तं दधामि वः। शिवमस्त्विति शेषाणां जायतां चिरजीविनाम् ॥ १ ॥ ओं समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः। समान-मस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥२॥ संगच्छध्वं सव-दध्वं संवो मनांसि जानताम्। देवाभागं यथा पूर्वे संजा-नाना उपासते ॥ ३ ॥ गच्छस्व पितृलोके त्वं प्रेतत्वं च प-रित्यज। समानैः पितृभिः सार्द्धं विहरस्व यथासुखम्॥४॥ इसके बाद के कामों में कभी भी प्रेतशब्द का उच्चारण न करे। इस अवसर पर बहुत सी पद्धतियों में निःश्वास धेनुदान लिखा है। हाथ में धेनु का निष्क्रय चांदी या अन्य द्रव्य लेकर उसे धोले और सव्य होकर कुशादि लेकर पढ़े-अद्येहामुकगोत्रस्य अमुक-

Sarayu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शर्मणस्तत्पित्रादित्रयेण सह संयोजनेन चतुर्थस्य निवृत्तिर्जाता तच्छोकापनयार्थं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय निःश्वासधेनुदाननिष्क्रयरूपं रजतं चन्द्रदैवतं सम्प्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ ब्राह्मण को वह द्रव्य देकर दक्षिणमुख अपसव्य होकर पढ़े-ओं प्रजापतिर्यजुः पितरो जपे विनियोगः। ॐ अत्रपितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम् ॥ फिर बाईं ओर से घूमकर उत्तरमुख होजावे और जरा सांस रोककर फिर जैसे आया था उसी तरह लौट जावे और सांस रोके ही पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पितरो जपे विनियोगः । ओं अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायिषत ॥ इसके बाद यातो पिण्ड या पात्र धोकर या पूर्व के पितरों के शेष अवनेजनजल से अलग अलग सभी पिंडों पर प्रत्यवनेजन दे । प्रत्यवनेजन के मंत्र या वाक्य वही हैं जो अवनेजन के । विधि भी वही है । विशेषता यही है कि 'पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व' की जगह जहाँ जहाँ यह पद हो वहाँ वहाँ 'पिंडेअत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व' पढ़दे । शेष सभी शब्द अवनेजन केही ज्यों के त्यों रहेंगे । प्रत्यवनेजन का जल पिंडपर गिराया जायगा और अवनेजन कुश पर गिराया गया था । किसी किसी पद्धति में लिखा है कि इसके बाद पिंड का पात्र औंधा करदे । कहीं कहीं प्रत्यवनेजन देकर-ओं अमीमदन्त० आदि के पढ़ने को लिखा है । परन्तु उचित यही है कि पीछेही दिया जावे, जैसा हमने लिखा है । प्रत्यवनेजन के बाद नीवी खोलदे और पूर्वमुख सव्य होकर आचमन करे । फिर दक्षिणमुख अपसव्य करके यजुर्वेदी हाथ जोड़ कर पढ़े-प्रजापतिरुष्णिक् पितरो जपे विनियोगः। ॐ नमोवःपितरो रसाय नमोवः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः स्वधायै । नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमोवःपितरःपितरो नमो वो गृहान्नःपितरो दत्त सतोवः पितरोदेष्म ॥ सामवेदी पूर्वोक्त विनियोग के बाद केवल-ॐ नमो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वः पितरो जीवाय नमो वः पितरः शोषाय। नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो रसाय। नमोवः पितरः स्वधायै नमो वः पितरो मन्यवे-पढ़कर अपनी स्त्री को देख कर पढ़े-प्रजापतिः पितरः पत्न्यवेक्षणे विनियोगः। ओं गृहान्नः पितरो दत्त॥ और पिंड को देख कर पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पितरः पिण्डावेक्षणे विनियोगः। ओं सदो वः पितरो देष्म॥ इस प्रकार सामवेदी उसी मंत्र से तीन काम करता है। अस्तु, इसके बाद पहले से ही रक्खे तीन सूत लेकर उनको धोले और-ओं एतद्वः पितरो वासः-पढ़कर प्रत्येक पिंड पर तीन तीन सूत देकर मोटक आदि हाथ में रख ले और यजुर्वेदी संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्मन् एतत्ते वासः स्वधा॥ सामवेदी-ओं अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य पितः अमुकशर्म्मन् एतत्ते वासो यचात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै तेस्वधा॥ इसी प्रकार पितामह और प्रपितामह को भी चढ़ाने का संकल्प करे। केवल हर बार जल स्पर्श करे और 'पिता' की जगह 'पितामह, प्रपितामह' शब्द जोड़ दे। सूत चढ़ाने में दहिने हाथको बायें से छूकर ही चढ़ावे। सामवेदी संकल्प पढ़कर चढ़ाते हैं और यजुर्वेदी पहले ही चढ़ा कर संकल्प करते हैं। परन्तु संकल्प करके देना उत्तम है। इसके बाद दोनों वेदवाले विना मंत्र और संकल्प के ही चुपचाप प्रत्येक पिंड पर क्रम से चन्दन, पुष्प, तुलसीदल, धूप, दीप, पान, सुपारी, दक्षिणा आदि चढ़ावें। इसके उपरान्त बहुत सी पद्धतियों में लिखा है कि पिंड के बाद भी, जो अन्न उससे बचा हो उसे, पिंड के पास छींट दे। यदि ऐसी प्रणाली हो तो करना चाहिये। इसके बाद ब्राह्मणों के मुख धोने को जल दे और उनके साथ स्वयं भी पूर्वमुख सव्य होकर हाथ धो आचमन करे और सव्य होकर ही देवब्राह्मण के आगे की भूमि पर जल छिड़के-ओं सुसम्प्रोक्षितमस्तु॥ ब्राह्मण उत्तर दे-ओं

Re... Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तथास्तु ॥ फिर अपसव्य होकर पितरों के आगे की भूमि पर उसी तरह जल गिरा दे-ओं सुसंप्रोक्षितमस्तु ॥ वे उत्तर दें-ओं तथास्तु ॥ इसके बाद सव्य होकर देव ब्राह्मण के हाथ में या कुश ब्राह्मण के आगे दोने में और अपसव्य होकर पितर ब्राह्मणों के हाथ में, या आगे दोना रख उस में, जल दे और प्रत्येक बार मंत्र पढ़े-ओं शिवा आपः सन्तु ॥ वे उत्तर दें-ओं सन्तु शिवा आपः। फिर उसी तरह सभी में इस मंत्र से फूल डाले-ओं सौमनस्यमस्तु ॥ वे उत्तर दें और यदि अपात्रक हो तो स्वयमेव कह ले-ओं तथास्तु ॥ फिर जौ डाले-ओं अक्षतं चारिष्टमस्तु। वे उत्तर देवें-ओं तथास्तु ॥ इसके बाद दक्षिणमुख अपसव्यादि करके कुशमिश्रित जल लेकर अक्षय्योदक दे। सो भी, पहले पितृब्राह्मण के हाथ या कुश पर वह जल देनेके लिये हाथमें उसे और मोटकादि लेकर पढ़े-ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुक प्रेतपितुरमुकशर्मणः सपिंडीकरणश्राद्धेदत्तैतदन्नपानादिकमक्षय्यमस्तु ॥ और जल गिराकर पितामह के पास जावें और--ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतपितामहस्यामुकशर्मणः सपिंडीकरणश्राद्धे दत्तैतदन्नपानादिकमक्षय्यमस्तु-पढ़े और उस पर भी वह जल गिराकर तुरंत प्रपितामह के पास जावे और जल छूकर वह जल और मोटकादि हाथ में लेकर पढ़े--ओं अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतप्रपितामहस्यामुकशर्मणः सापिंडीकरणश्राद्धे दत्तैतदन्नपानादिकमक्षय्यमस्तु ॥ और उसपर भी वह जल गिरा दे। इसके बाद जल छूकर पूर्वमुख सव्य हो प्रसन्न मनसे पितरों का ध्यान कर दक्षिण दिशाको और देख कर कहे (यजुर्वेदी)-ओं अघोराः पितरः सन्तु ब्राह्मण उत्तर दें--ओं सन्त्वघोराः पितरः ॥ यजमान कहे-ओं गोत्रन्नो वर्द्धताम् ॥ ब्राह्मण कहें-ओं वर्द्धतां वो गोत्रम् यजमान--ओं दातारो नोऽभिवर्द्धन्तां वेदाः सन्ततिरेव च

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ब्राह्मण-ओं वर्द्धन्तां वो दातारो वेदाः सन्ततिरेवच । यजमान-ओं श्रद्धा च नो माव्यगमत् ॥ ब्राह्मण-ओं माव्यगमद्वः श्रद्धा ॥ यजमान--ओं बहुदेयं च नोऽस्तु ॥ ब्राह्मण-ओं अस्तु वो बहुदेयम् ॥ यजमान-ओं अन्नंच नो बहु भवेत् ॥ ब्राह्मण-ओं बहु भवेद्वोऽन्नम् । यजमान-ओं अतिथींश्च लभेमहि ॥ ब्राह्मण-ॐ लभध्वमतिथीन् ॥ यजमान-ॐ याचितारश्च नः सन्तु ॥ ब्राह्मण-ॐ सन्तुवो याचितारः ॥ यजमान-ॐ मा च याचिष्म कञ्चन ॥ ब्राह्मण-ॐ कञ्चनमा याचध्वम् ॥ यजमान-ॐ एताः सत्या आशिषः सन्तु । ब्राह्मण-ॐ सन्त्वेता सत्या आशिषः ॥ यह सम्पूर्ण उत्तर प्रत्युत्तर केवल यजुर्वेदियों का है । सामवेदी केवल आदि के दोही आशीर्वाद मागते हैं और ब्राह्मण देते हैं । ॐ दातारोनो इत्यादि उनकी पद्धतियों और गोभिल सूत्र में यहां नहीं है। किन्तु दक्षिणाके बाद है । फिर ३३पृष्ठोक्त रीतिसे पवित्र बनाकर उनके सहित अन्य तीन तीन मोटक पिता आदि तीनोंके पिंडों पर दक्षिणाग्र रख दे । कहीं कहीं लिखा है कि पिता के आसन के पास जो अर्घ्य पात्र पर पवित्र हैं उन्हें हीं उठाकर क्रमशः रखकर मोटक रख दे । परन्तु पहला ही पक्ष अधिक उचित है । फिर भी, जैसा चाहे करे । पवित्र और मोटक रखने के बाद यजमान ब्राह्मणों से पूछे-ॐ स्वधां वाचयिष्ये ॥ ब्राह्मण उत्तर दें--ॐ वाच्यताम् ॥ स्मरण रहे कि सर्वत्र अपात्रक श्राद्ध में स्वयं ही उत्तर देते हैं । इसीलिये पूर्वके आशीर्वाद में भी ऐसा ही करे । फिर यजमान-ॐ प्रेतस्य पितृभ्यः पितामहेभ्यः प्रपितामहेभ्यः स्वधोच्यताम् ॥ ब्राह्मण-ॐ अस्तु स्वधा ॥ इसके बाद अर्घ के समय पिता के पास औंधे अर्घ-पात्र को सीधा करके उसीमें या दूसरे ही पात्रमें, जैसी परिपाटी हो, तिलादि मिश्रित जल लेकर तीनों पिंडोंपर क्रमसे अगले मंत्रको अलग अलग पढ़कर दक्षिणाग्र जलधारा गिरावे-ॐ ऊर्ज्जं वहन्तीरमृतंघृतं

Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पयः कीलालं परिस्रुतम् । स्वधाः स्थ तर्पयत मे पितॄन् ॥ इस के बाद विश्वेदेव ब्राह्मण के हाथ या कुशपर जल देकर कहे- ॐ विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् ॥ ब्राह्मण का उत्तर-ॐ प्रीयन्तां विश्वेदेवाः ॥ इसके बाद पिंडों को और पिंड के या भोजन के पात्रों को अपने अपने स्थान से जरासा हटा दे और दक्षिणा दे । पहले उत्तर पूर्वमुख सव्य होकर देवब्राह्मण को दक्षिणा देने के लिये चांदी के सिक्का सोना या और द्रव्य धोकर हाथ में लेकर सीधे कुश जलादि से संकल्प पढ़े-ओं अद्येह सपिंडीकरणश्राद्धे कामकालसंज्ञकानां विश्वेषांदेवानां कृतैतच्छ्राद्धप्रतिष्ठार्थमिदं हिरण्यमग्निदैवतं द्रव्यान्तरं वा यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन दातुमहमुत्सृजे ओं तत्सन्नमम ॥ विश्वेदेवकी दक्षिणा देकर तीनों पितरों के लिये चांदी या अन्य द्रव्य धोकर तीनों के लिये एक ही साथ दक्षिणा लेकर और मोटकादि भी लेकर पढ़े- ओं अद्येह सपिंडीकरणश्राद्धे अमुकशर्मणः पितृपितामहप्रपितामहानाम् अमुकामुकशर्मणाम् अमुकगोत्राणां कृतैतच्छ्राद्धप्रतिष्ठार्थमिदंरजतं चन्द्रदैवतम् द्रव्यान्तरम् यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय दक्षिणात्वेन विभज्य दातुमहमुत्सृजे ओं तत्सन्नमम ॥ और तीनों को अलग अलग दे डाले विश्वेदेवकी दक्षिणा में रजत न होवे । साने के अभाव में तांबा, फल मूलादि की दक्षिणा यथाशक्ति सर्वत्र दी जा सकती है । इसके बाद यजुर्वेदियों वालाशेष ॐ दातारो नोऽभिवर्धन्ताम् इत्यादि आशीर्वाद सामवेदी लोग पढ़ें और अन्त में सभी ब्राह्मणों से कहें कि-ओं स्वाति भवन्तो ब्रुवन्तु॥ ब्राह्मण उत्तर दें-ओं स्वस्ति॥ यह स्वस्तिवाचन सामवेदियों के यहां यजुर्वेदियों से ज्यादा है । फिर यजमान खड़ा होके झुककर पिंडों को क्रम से उठा उठाकर बर्त्तन में रक्खे और उन्हें सूँघकर पिंड के नीचे के कुश और दक्षिण ओर रक्खी जलती लकड़ी या तृण अग्नि में डाल दे । सामवेदी तो जलती लकड़ी (उल्मुक)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पर मंत्रसे पानी डालते हैं--ओं अभून्नो दूतो हविषो जातवेदा आवङ्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वा। प्रादात्पितृभ्यां स्वधयातै भक्षन् प्रजानन्नग्ने पुनरेहि योनिम्॥ फिर अपसव्य होकर पितृ ब्राह्मण का हाथ विना अंगूठेके पकड़ कर अगला मंत्र पढ़डाले। इतने ही से सब का विसर्ज्जन हो जायगा-ओं वाजे वाजेऽवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः। अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः॥ इस के बाद उन का हाथ पकड़ कर वहांसे उठा दे। फिर सव्य और उत्तर मुख होकर विश्वदेव ब्राह्मण का हाथ पकड़ कर उसे भी उठा दे। परन्तु यदि ब्राह्मण की जगह कुश ही हों तो उनकी ब्रह्मग्रन्थि खोल दे। बाद को, सभी ब्राह्मणों को एक ही साथ प्रणाम कर जलपूर्ण १२ घड़े और उतना अन्न आगे रख अपसव्य होकर संकल्प करे-ओं अद्येहामुकगोत्रस्य मम पितुः अमुकशर्मणः परलोके क्षुत्पिपासानिवृत्त्यर्थमिमेद्वादशकुम्भाः सान्नोदका मया नानानामगोत्रेभ्यो दीयन्ते ओं तत्सन्नमम॥ यह संकल्प कर--ओं सुशीतलजलोपेताः सर्वोपस्करसंयुताः। एते घटा मया दत्ताः स्वर्गद्वार्युपतिष्ठन्ताम्-यह पढ़कर दान करे। फिर पक्वान्न से भरा एक घड़ा खद्दर और दक्षिणा के साथ आगे रख अपसव्य होकर मोटादि से संकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्रस्य मम (पितुः) गोत्रस्य अमुकशर्मणः स्वर्गलोककाम इमं पक्वान्नपूरितं कुम्भमेकं वर्द्धनीसंज्ञकं सवस्त्रदक्षिणाकं यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय विष्णुप्रीतये दातुमहमुत्सृजे ॐ तत्सन्नमम॥ और किसी ब्राह्मण को दे डाले। दोनों घटदान की यह रीति सर्वत्र प्रचलित नहीं है। फिर भी बहुत सी पद्धतियां में लिखी होने से हमने भी लिखी है। यदि खामखाह नहीं करने की रीति हो तो हम इस पर जोर देना भी नहीं चाहते। जैसी रीति हो, लोग कर। परन्तु करना अच्छा होगा। इसके बाद सभी ब्राह्मणों को उस स्थानपर ले

Ra[illegible]yu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जावे जहाँ प्रथम उनके पाँव धोये थे। वहाँ देवब्राह्मण को पूर्वमुख और पितरब्राह्मणों को उत्तरमुख खड़ा करावे, हाथ में जलपात्र लेकर ब्राह्मणों के चारों ओर प्रदक्षिण रीति से जलधारा गिरावे और मंत्र पढ़े—ॐ आमावाजस्य प्रसवा जगम्यादेवे द्यावापृथिवी विश्वरूपे। आमागन्तां पितरामातरा चामासोमो अमृतत्वेन गम्यात् ॥ और उनके पीछे पीछे थोड़ी दूर जाकर उनकी प्रदक्षिणा कर प्रणाम पूर्वक वापस आवे। जल गिराकर उनके पीछे पीछे जाने में, जिसे सीमान्तगमन कहते हैं, पूर्व का मंत्र पढ़ा जाना चाहिये न कि केवल जल गिराने में हीं। वापस आकर सव्य हो ओं देवताभ्यः पितृभ्यश्च० इत्यादि श्लोक को तीन बार पढ़े और रक्षादीपको अपसव्य होकर दोनों हाथों से बुझाकर सव्य हो दोनों हाथपावों को धोकर आचमन करे और—ओं प्रमादात्कुर्वतां० इत्यादि पढ़कर पिंडों को या तो ब्राह्मण को खिलावे, अग्नि में डाले जल में डाले या गौ को ही खिलादे। यदि यजमान की पत्नी पुत्र की इच्छा रखती हो तो बीचका (पितामहवाला) पिंड इस मंत्रसे उसे दे ओं अपांत्वौषधीनां रसं प्राशयामि भूतकृतं गर्भं धत्स्व और वह इस मंत्र से खावे—ओं आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्। यथेह पुरुषोऽसत् ॥ इसके बाद श्राद्ध के अन्न से उसी समय आगे लिखी रीति से दोनों वेदोंवाले वैश्वदेव करें। उसके बाद श्राद्धभूमि को लीप पोतकर यदि और भी ब्राह्मण खिलाना हो तो संकल्प करे—ॐ अद्येहामुकशर्मणः सपिंडीकरणश्राद्धसांगतार्थं यथाशक्ति ब्राह्मणान् भोजयिष्ये। इसके बाद सामवेदी ३५३ पृष्ठोक्त वामदेव्य साम का गान करके घर में प्रवेश करे और ब्राह्मण, बन्धुबान्धव तथा अतिथियों को खिलाकर विश्राम करे।

यदि स्त्री का सपिंडीकरण करना हो तो या उसके और श्राद्ध में संकल्प में 'ओं अद्यामुकगोत्रायाः अमुकप्रेतायाः' (आदि स्त्रियाः, आदि जहां जैसा हो) ये पद और अमुकगोत्रे अमुक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

क्रम से 'अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य' और 'अमुकगोत्र अमुकप्रेत' की जगह पढ़े । सपिंडीकरण में जहां 'तत्पितुः पितामहस्य, प्रपितामहस्य' ये पद हों वहां क्रमसे 'मममातामह्याः, प्रमातामह्याः, वृद्धप्रमातामह्याः' ऐसा पढ़े । तत्पितः, पितामह,प्रपितामह' की जगह 'ममपितामहि, प्रपितामहि, वृद्धप्रपितामहि' यह संबोधन पढ़े। पिता, पितामह और प्रपितामह को जहां वसु, रुद्र और आदित्य रूप क्रमसे कहा है वहाँ पितामही, प्रपितामही और वृद्ध प्रपितामही को क्रमसे गंगा, यमुना और सरस्वती रूप पढ़े और संबोधन में गंगे, यमुने, सरस्वति, कहे । स्त्री के लिये शर्म्मा शब्द पढ़ने की आवश्यकता ही नहीं । भलेही अन्त में देवी शब्द कह सकते हैं । उसको षष्ठी विभक्ति में 'देव्याः' और संबोधन में 'देवि' कहेंगे । माता होगी तो संबोधन में 'मातः' कहेंगे और पिता होगा तो 'पितः' कहेंगे । हमने पद्धति में केवल 'प्रेत' ही कहा है । पिता आदि जहां उसा हो लोग लगा लें । लिखदेने से उसका रूप संकुचित हो जाता और हम चाहते हैं कि पद्धतिका रूप संकुचित न हो । यदि अलग अलग सब का लिखें तो पोथा हो जायगा । इससे सर्वसाधारणरूप लिख दिया है । अधिक जोड़ लेना होगा । यह भी स्मरण रहे कि पद्धतिमें अमुक शब्द बहुत आये हैं । वहां सर्वत्रही नाम पढ़ने होंगे । और वह नाम उन्हीं के होंगे जिनके पहले अमुक शब्द आया है । इसी प्रकार और भी जो संकेत हमने करदिया है वह पहले पढ़कर अच्छी तरह अभ्यास कर लिया जावे और उसी के अनुसार वाक्य बनाकर उनका भी अभ्यास कर लियाजावे । इसीलिये कर्म के आरंभ से पहले पद्धति को अच्छी तरह बार बार अभ्यास कर लेना चाहिये । नहीं तो अकपड़ धोखेमें पड़जायगे और भूल कर बैठेंगे । इति सपिंडीकरण ।

७–पार्वणश्राद्ध ।

जैसा पहले ही कह चुके हैं कि सपिंडन के अतिरिक्त प्रायः सर्वत्र ही पिता, पितामह, प्रपितामह और मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह इन छओं का ही पार्वण श्राद्ध कियाजाता है और ये सपत्नीकही

R Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पिंड लेते हैं । सपत्नीक का ही आवाहन भी होता है । मगर स-
पत्नीक कहने की आवश्यकता नहीं है । चाहे कहे या नहीं कहे।
हाँ, जब जब नान्दीश्राद्ध में या अन्यत्र नौ पिंड देने के समय पि-
आदि तीन के बाद माता आदि तीन को कहकर उनके बाद माता-
आदि तीन को कहते हैं तब तब मातामहादि को अवश्यमेव सपत्नी-
कहना पड़ता है । जिससे यह स्पष्ट होजावे कि केवल वही स-
त्नीक एक ही पिंड पाते हैं, नकि वह अलग और उनकी पत्नी अल-
पाती है । जिस तरह पिता आदि और उनकी पत्नियाँ अलग अल-
पिंड पाती हैं । इसके सम्बन्ध में विशेष विचार हम पहले ही क-
चुके हैं । अतएव यहाँ हम सपत्नीक शब्द नहीं कहेंगे । यद्यपि सं-
डन में जो देवताओं और पितरों के आसनादिदान या समूचे कृत्य
उनको ही अलग करदेने से और मातामहादि को भी जोड़ देने
पार्वण होजाता है । फिर भी यह काम सबके लिये सहज नहीं है
अतएव हम अलगही पद्धति लिखना चाहते हैं । इसी तरह एक-
द्दिष्ट की भी पृथक् पद्धति लिखदेंगे । हम सपात्रक की ही पद्ध-
लिखते हैं । उसमें और अपात्रक में यही अन्तर है कि अपात्रक
निमन्त्रण और स्वागतादि की आवश्यकता न होगी । तथा विस-
के बाद 'आमावाजस्य' इत्यादि मंत्र को पढ़कर सीमान्तगम-
(श्राद्ध के बाद उनको पहुंचाने जाने) की आवश्यकता भी न होगी
अतएव इन्हें छोड़ शेष क्रियायें उसी तरह होंगी । यह भी स्मर-
रहे कि यदि पार्वण में पितादि तीन के लिये एक ही ब्राह्मण हो औ-
मातामहादि तीन के लिये भी एक ही, तो उसीको क्रम से तीनों
अर्घ्य आदि दिये जावें और यदि छओं केलिये एकही हो तो उसी
छओं के छ बार पारी पारी से करे । ऐसा बहुत सी पद्धतियों
लिखा है । परन्तु जब इतने पर भी यदि विश्वेदेवों के ब्राह्मण न हों
तो उनके लिये तो कुशों पर ही अर्घ्य आदि देने होंगे । ऐसी
में यदि सभी केलिये एक ही ब्राह्मण निमंत्रित हो तब तो एक ही
सब का कृत्य बराबर होना हीं चाहिये । परन्तु यदि सबके लि-
कहकर एकही निमंत्रित न हो तो शेष स्थानों पर कुश ही रख-
उन्हीं कुशब्राह्मणों को ही अर्घ्य आदि देना उचित है । इसी लि-
चार से हमने पहले ऐसा ही लिखा है । फिर भी हमारा र-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

आग्रह नहीं है। जैसा चाहें और जिस परिपाटी के अनुसार लोग करना चाहें कर सकते हैं। हमें जो उचित जँचा हमने लिखदिया। पार्वणश्राद्ध के पहले दिन एक ही बार सात्विक अन्न का भोजन करने आदि नियमों का पालन करे। यह बात सभी श्राद्धों के लिये है। उसी दिन रात को भोजनोपरान्त या श्राद्ध के दिन सवेरे या श्राद्ध से पूर्व स्वयं यजमान, उसका नजदीकी या सजातीय ही निमंत्रण देने को जावे, नकि शूद्र। श्राद्धसमय से पूर्व का ही निमंत्रण प्रायः सम्भव है। प्रचलित रीति के अनुसार, पान, सुपारी या द्रव्य या तीनों या दोही चीजें लेकर निमंत्रण करे। विश्वेदेव के ब्राह्मण को पूर्वमुख बैठाकर उसीके दहिने घुटने को अपने दहिने हाथ से पकड़कर उत्तरमुख सव्य होकर यजमान या निमंत्रणदाता दहिना घुटना टेककर बैठजावे और पान सुपारी आदि लेकर या उस ब्राह्मण के हाथ में देकर कहे-ओं अद्येहममपित्रादित्रयमातामहादित्रयपार्वणश्राद्धे विश्वेदेवार्थं भवन्तमहमामंत्रये, तत्र भवता क्षणः कर्त्तव्यः॥ और पान आदि वस्तु लेकर वह कहे-ओं तथास्तु॥ फिर पितादि तीन और मातामहादि तीन के लिये भी छ ब्राह्मणों को (असंभव होने पर दो या एक को भी) उत्तरमुख बैठाकर और स्वयं अपसव्य हो दक्षिणमुख बायाँ घुटना टेक उन सबके बायें घुटने छूकर पितृब्राह्मण का बायाँ घुटना पकड़े हुये ही पान सुपारी आदि सभी को देकर कहे-ओं अद्येह भविष्यमाणपार्वणश्राद्धे पित्रादित्रयमातामहादित्रयार्थं भवतोऽहमामंत्रये, तत्र भवद्भिः क्षणः कर्त्तव्यः॥ यदि दो या एक हों तो 'भवन्तौ' और 'भवन्तम्' यही दो शब्द 'भवन्तः' की जगह क्रमसे कहे और 'भवद्भिः' की जगह 'भवद्भ्यां, भवता' कहे। फिर सभी को एक ही साथ कहे-ओं पाप्नुवन्तु भवन्तः॥ वे कहें-ओं प्राप्नवाम॥ दो को 'प्राप्नुतां भवन्तौ' और एक को 'प्राप्नोतु भवान्'॥ कहे। वे उत्तर भी क्रम से कहें-प्राप्नुवाव और प्राप्नवानि॥ सभी को यह नियम सुनावे-

Bhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ओं अक्रोधनैः शौचपरैः सततं ब्रह्मचारिभिः । भवि-
तव्यं भवद्भिश्च मया च श्राद्धकारिणा ॥ फिर उनको
तैलादि देकर और क्षौर करवाकर स्नानार्थ भेजे और स्वयं भी
स्नानादि के बादही निमंत्रण देने के कारण अब स्नानकी आवश्यकता
न रहने के कारण श्राद्धभूमि को ठीक करे । यदि पहले दिन निमंत्रण
दिया हो तब तो श्राद्ध के दिन प्रातःकाल स्नान, नित्यकर्मादि कर
के श्राद्धभूमिको दक्षिण ढालू बनाकर गोबर से पोते और ऊपर से
अंगार या जलती लकड़ियाँ डालकर उसकी शुद्धि करे । फिर पीली
मिट्टी ऊपर से डालकर पीली सरसों और काले तिल खूब छींटे ।
भूमिको पर्दे से घेरना और वहां से कुत्ते बिल्ली आदि को हटाना
चाहिये । पार्वण दो पहर के बाद होता है । अतः दोपहर से पहले
श्राद्ध के लिये पुनरपि स्नान करके श्राद्धसामग्री उसी भूमि में रख-
वावे और भरसक स्वयं या अपनी स्त्री द्वारा श्राद्ध के लिये अन्न
पकवावे । स्त्री के भी अभाव में सपिंड के द्वारा ही बनवावे । अन्न
तैयार हो जाने पर उससे पूछ ले कि—ॐ सिद्धम् ? उसका उत्तर
ॐ सुसिद्धम्—पाने पर स्नान से लौटे ब्राह्मणों को 'ॐ स्वागतम्'
कहकर पांव धोने की जगह लेजावे और विश्वेदेव ब्राह्मण को
पूर्वमुख तथा अन्यों को उत्तरमुख आसनों पर जो पहले से
वहाँ अलग अलग दो मण्डल (चौक) बनाकर उनके भीतर रखे
हों, बैठावे । और ॐ नमोऽस्त्वनन्ताय० (पृ० ७४) इत्यादि
से या ॐ आपद्घनध्वान्त० (पृ० १६०) से उनके पांव
अलग धोवे । सव्य और उत्तर मुख होकर देवब्राह्मण के और
सव्य दक्षिणमुख हो शेष ब्राह्मणों के पांव धोवे और सभी
आचमन करा कर स्वयं भी पाँव धोके आचमन करे । आगे भी सब
पितरकार्य में या पितर ब्राह्मणों के काम में दक्षिणमुख अपसव्य
जावे और यदि कुछ देना या चढ़ाना हो तो बायाँ घुटना भी
में टेक दे । यदि देना या चढ़ाना न हो तो भी घुटना टेकना
हिये । यदि न भी टेक सके तो अपसव्य और दक्षिणमुख
हो जावे । इसी तरह विश्वेदेवों के समय या उन ब्राह्मणों के
आदि करने में भी सव्य और उत्तरमुख होकर दहिना घुटना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

चाहिये । आचमन करने और विष्णुस्मरण के समय हमेशा सव्य और पूर्वमुख हो जाना चाहिये । जब जब पिता आदि पितरों के सम्बन्ध की क्रियायें करे तब तब प्रत्येक वार जल का स्पर्श कर लिया करे । जितनी बार पितरों की क्रियायें अलग अलग करनी हों उतनी वार जल छूवे । अर्थात् प्रत्येक के बाद छूकर दूसरी शुरू करे । देवों के सकल्प में सीधे कुश और जौ (या तिल) और जल ले तथा पितरों के संकल्प में और साधारण संकल्प में भी अपसव्य हो मोटक (मोड़े कुश) तिल और जल लिया करे । भरसक देवों के तिल श्वेत और पितरों के काले हों तो ठीक है । अक्षत की जगह सर्वत्र जौ से ही भरसक काम लेना चाहिये । यह सब संकेत याद करलेना होगा । आगे हम केवल संकल्प या पितरकर्म, देवकर्म आदि कह देंगे, नकि वार वार कुश आदि लेने को कहेंगे । स्वयं समझ लेना होगा । अस्तु, श्राद्धभूमि में उत्तर ओर ढालू जगह करके उसपर विश्वेदेव के लिये चूने, भस्म, जल आदि से चौकोना मण्डल वनाकर उसपर पूर्व मुख आसन रक्खे और दक्षिण ओर ढालू भूमिपर विश्वेदेव से दक्षिण एक वड़ा मण्डल बनाकर उसपर पश्चिम से आरंभ कर क्रम से पूर्व पूर्व पिता, पितामह, प्रपितामह के और थोड़ी जगह छोड़कर पूर्व पूर्व मातामहादि तीन के आसन उत्तरमुख रख दे । विश्वेदेव और पितरों के वीच में इतनी जगह रखनी चाहिये कि वहां पर ही बैठकर दोनों की पूजा की जा सके और पिंड की वेदी भी वना सकें । कम्बल आदि के आसनों पर पितरों के लिये दक्षिणाग्र और विश्वेदेव को उत्तराग्र या पूर्वाग्र कुश डाले । फिर पांव धोनेकी जगहसे ब्राह्मणों के सहित वहाँ आकर आसनों को छूकर उनपर उन्हें वैठावे । वैठाने के समय उनसे कहे–**ओं इदमासनम् अत्रासध्वम् ॥** देव ब्राह्मण पूर्वमुख और शेष उत्तर मुख बैठें । अपात्रक में तो पाँव धोना न होगा । अगर कुश के ब्राह्मण वनाकर उसी तरह आसन छूकर और मंत्र पढ़कर बैठाने होंगे । वैठाने के वाद पितरों के पाँवोंके नीचे दक्षिणाग्र और देव ब्राह्मण के पाँव के तले उत्तराग्र तीन तीन कुश रख दे । फिर पितृ-ब्राह्मणों के हर आसनों के बाँयें और देव के दहिने भाग में तिल के तेल या घी से भरे बड़े बड़े चिराग जला दे । इनका नाम रक्षादीपक है और इनकी रक्षा वही ब्राह्मण अन्त तक करें । इसके बाद ब्राह्मणों

R... Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

के आगे आसन डालकर और अपने पाँवों के नीचे दक्षिणाग्र कुश रखकर कर्त्ता पूर्वमुख बैठ जावे और पवित्र धारण करके आचमन प्राणायाम सव्य होकर ही करे । इसके बाद यदि हो सके तो देव के लिये अलग और पितरों के अलग पात्र, नहीं तो एक ही पात्र दक्षिणाग्र कुशों पर रखके उसमें चुपचाप ही या ७६ पृष्ठोक्त रीति से 'शन्नो देवी' इत्यादि मंत्रों से जल भरके उसमें चन्दन, पुष्प, तुलसी जौ, तिल, तीन कुश डालकर कर्मपात्र बनावे और ब्राह्मणों से पूछे ओं कर्मपात्रं सम्पन्नम् ? वे कहें-ओं सुसम्पन्नम् ॥ यदि ब्राह्मण न हों तो स्वयं ही कह ले । आगे भी सर्वत्र स्वयं ही उत्तर ले लिया करे । तब-ओं अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ओं पुण्डरीकाक्षः पुनातु-पढ़कर उस पात्रका जल उसमें के दो कुशों से अपने शरीर और सभी श्राद्धपदार्थोंपर छिड़के । फिर पृथिवी को प्रणाम करे-ओं वैष्णव्यै नमः । ओं कारणपर्वतायै नमः । ओं अक्षयायै नमः । ओं भूम्यै नमः ॥ उस भूमिपर गया और गदाधर का ध्यान कर उन्हें भी प्रणाम करे-ओं भगवत्यै गयायै नमः। ओं गदाधराय नमः॥ फिर कर्म का स्मरण संकल्प करे—ओं अद्येह अमुकमासे अमुकपक्षे अमुककतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्राणामस्मत्पितृपितृमहप्रपितामहानाम् अमुकामुकशर्मणाम् अमुकगोत्राणामस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानाम् अमुकामुकशर्मणां तृप्तिकामः पार्वणश्राद्धं करिष्ये ॥ ब्राह्मण कहें-ओं कुरुष्व ॥ तब-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात्-इस गायत्री को तीन बार पढ़कर-ओं देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एवच । नमः स्वाहायैस्वधायै नित्यमेव नमो नमः-इसको तीन बार जपे । फिर सव्य होकर देवस्थान में जौ छींटे-ओं नमः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

नमस्ते गोविन्द पुराण पुरुषोत्तम । इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्षतां सर्वतो दिशः ॥ अपसव्य होकर तिल और कुश घरके द्वार में फेंके-ओं तिला रक्षन्तु असुराद्दर्भारक्षन्तु राक्षसात् । वह्निर्वै श्रोत्रियं रक्षेदतिथिः सर्वरक्षकः ॥ तिल और सफेद सरसों पितरों के स्थान पर छींटे-ओं अग्निष्वात्ताःपितृगणाः प्राची रक्षन्तु मे दिशम् । तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरः स्थिताः ॥ १ ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः । अधोर्ध्वमपि कोणेषु विकोणेषु च सर्वशः ॥ २ ॥ रक्षोभूतपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः । सर्वतश्चाधिपस्तेषां यमो रक्षां करोतु वै । वायुभूतपितॄणां च तृप्तिर्भवतु शाश्वती ॥३॥ यह तिल और पीली सरसों क्रमसे सभी दिशाओं में और ऊपर नीचे छींटे । इसके बाद तीन मोटक और तिल लेकर धोती के किनारे में लगाकर कमरमें बाईं या दहिनी ओर नीवी बाधे । मंत्र ५५९ पृष्ठ में हैं । फिर सव्य होकर एक पात्र में जल पुष्पादि डालकर-ओं यदेवा०-इत्यादि तीन कूष्माण्ड मंत्र (पृ० ७६) पढ़कर तीन कुशों से उसे हिलावे और उन्हीं कुशों से जल उठाकर श्राद्ध के अन्न तथा अन्य सामग्रीपर यह कहकर छिड़के-ओं उदक्यादिदुष्टदृष्टिपाताच्छूद्रादिसंपर्कदोषाच्च पाकादीनापवित्रता देशकालपात्रद्रव्यपात्रोपहारसम्पच्चास्तु । और सभी वस्तुओं को-ओं हरये नमः-कह विष्णु को अर्पण करदे । देवासनदानार्थं तीन सीधे कुश, जौ और जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्येह पुरूरवार्द्रवसंज्ञकविश्वेदेवा इदमासनं वः स्वाहा ॥ और हाथ या कुशपर जल लेकर देवासन के दक्षिण भाग में पूर्वाग्र कुशोंको रख दे । फिर पिता, पितामह और प्रपितामह के लिये एकही बार नौ मोटक लेकर और तिल जल हाथ में रखकर पढ़े-ओं अद्येहास्मत्पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माण इदमासनं विभज्य वः स्वधा ॥ और

Re[illegible]uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आसनों के वामभाग में दक्षिणाग्र कुशों के रखने से पहले तीनों के हाथों या कुशों पर अपने हाथ का जल डालदे। इसीतरह मातामहादितीनों के भी आसनकुश और तिल जल लेकर पढ़े-ओं अद्येहास्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा अमुकामुकशर्म्माण इदमासनं विभज्य वः स्वधा ॥ और उनके भी हाथोंपर वह जल देकर क्रमसे वामभाग में दक्षिणाग्रही तीन तीन मोकट रखदे। हाथ में जौ लेकर आवाहन के लिये दहिना घुटना टेककर विश्वेदेव ब्राह्मण से पूछे-ओं विश्वान्देवानावाहयिष्ये ॥ उसका उत्तर-ओं आवाहय। तब ब्राह्मण का अंगूठा पकड़ कर यजुर्वेदी मंत्र पढ़े-ओ विश्वेदेवा आगत शृणुताम इम ँ हवम्। एदंबर्हिर्निषीदत ॥ फिर आसन के आगे जौ छींटता हुआ पढ़े-ओं यवोऽसि यवयाऽस्मद्द्वेषोयवयारातीः ॥ इसके बाद जपे (पढ़े)-ओं विश्वेदेवाः शृणुत तेम ँ हवम्मे ये अन्तरिक्षे य उपद्यविष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वम् ॥ सामवेदी का मंत्र-गृत्समदाहोरात्रे गायत्रीत्रिष्टुभौ विश्वेदेवा विश्वेदेवावाहने विनियोगः। ओं विश्वेदेवास आगत शृणुताम इम ँ हवम्। एदंबर्हिर्निषीदत ॥ १ ॥ विश्वेदेवाः शृणुत तेम ँ हवम्मेयेऽअन्तरिक्षे य उपद्यविष्ठ। ये अग्निजिह्वा उत वा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयध्वम् ॥ २ ॥ ओषधयः सम्वदन्ते सोमेन सहराज्ञा। यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्त ँ राजन्पारयामसि ॥ ३ ॥ विश्वान्देवानावाहयामि। इसके बाद आसन के आगे जौ छींटे। फिर विश्वेदेवोंकी उत्पत्ति न जानने पर दोनों ही वेदवाले पढ़ें-ओं आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः। ये यत्र योजिताः श्राद्धे सावधाना भवन्तु ते ॥ तब पितरब्राह्मणों के पास जाकर और हाथ में तिल लेकर उनसे पूछे-ओं पितॄन्मातामहाँश्चावाहयिष्ये ॥ ब्राह्मणों से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

उत्तर-ओं आवाहय ॥ फिर उनके बायें घुटने क्रम से छूकर मंत्रपढ़े-
(यजुर्वेदी)-ओं उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि ।
उशन्नुशत आवह पितॄन्हविषे अत्तवे॥तब सभी के आगे तिल
छींटे-ओं अपहता असुरा रक्षा ँसि वेदिषदः ॥ फिर पढ़े-ॐ
आयन्तु नःपितरःसोम्यासोऽग्निष्वात्ताःपथिभिर्देवयानैः।
अस्मिन्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥
सामवेदी-शंखोऽनुष्टुप् पितरः पित्रावाहने विनियोगः ।
ओं उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि । उशन्नु-
शत आवह पितॄन्हविषे अत्तवे ॥१॥ एत पितरः सोम्या-
सोगंभीरेभिः पथिभिः पूर्विणेभिः । दत्तास्मभ्यं द्रविणेह
भद्र ँ रयिञ्च नः सर्ववीरं नियच्छत ॥ २ ॥ आयन्तुनः
पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः । अस्मि-
न्यज्ञे स्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तुतेऽवन्त्वस्मान् ॥ ३ ॥
ओं अमुकगोत्रानमुकामुकशर्मणः पित्रादीनमुकगोत्रानमु-
कामुकशर्मणो मातामहादींश्चावाहयामि ॥ इसके बाद तिल
छींटता हुआ पढ़े-ओं अपहता असुरा रक्षा ँसि वेदिषदः ॥

तब अर्घदान के लिये पूर्वाग्रकुश रख उन पर विश्वेदेवों का अर्घपात्र रक्खे। फिर पितरों के पास दक्षिणाग्र कुश दो पंक्तियों में रख तीन तीन पात्र उनपर रक्खे । पहली से दूसरी पंक्ति पूर्व हो और पात्र एक दूसरे से दक्षिण हों। उपरान्त देवपात्र के ऊपर तीन पवित्र पूर्वग्र या उत्तराग्र रख पितरों के प्रत्येक पात्र पर दक्षिणाग्र रक्खे । सव्य अपसव्य और उत्तर दक्षिण मुख होनेका बराबर ध्यान रहे। इसके बाद पहले देव के पात्र में और पीछे पितरों के ६ पात्रों में आगे के मंत्र को बारबार पढ़कर क्रम से जल डाले-दध्यङ्ङाथर्वणो गायत्री आपः अपामा-
सेचने विनियोगः । ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो
(सामवेदी 'शन्नो') भवन्तुपीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥

Re[illegible]uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

फिर देवपात्र में जौ डाले-ओं यवोऽसि यवयाऽस्मद्द्वेषो यवयारातीः ॥ पितरों के पात्रों में बारबार मंत्र पढ़कर तिल डाले-ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्यमद्भिः पृक्तः स्वधया पितृनिमाँल्लोकान्प्रीणाहिनःस्वधा नमः॥फिर देव तथा पितरपात्रोंमें क्रम से चन्दन,पुष्प,तुलसीदल जौ चाप डाले और सभी को कुशों से ढंक दे। तब देव ब्राह्मण से उत्तरमुख होकर पूछे-ॐ देवार्घसम्पत्तिरस्तु ॥ वह उत्तर दे-ओं तथाऽस्तु। फिर बायें हाथ में अर्घपात्र लेकर उस ब्राह्मण के हाथ या कुश पर जरासा दूसरा जल देकर उसपर अर्घपात्र वाला पवित्र उत्तरा रख दोनों हाथों में अर्घ्यपात्र लेकर पढ़े—ओं या दिव्या आपः पयसा संबभूवुर्या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः । हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता न आपः शिवाः श ँ स्योनाः सुहवा भवन्तु ॥ फिर कुश जौ जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्यास्मत्पित्रादित्रयमातामहादित्रयसम्बन्धिनः पुरूरवार्द्रवसंज्ञका विश्वेदेवा एष वोऽर्घः (सामवेदी—एतद्वोऽर्घ्यम्) ॥ और देवतीर्थ से अर्घजल ब्राह्मण के हाथ वा कुश पर डालदे। ब्राह्मण उत्तर दे-ओं अस्त्वर्घ्यम् ॥ इसके बाद पितरों के पास दक्षिणमुख होकर उनसे पूछे—ओं अर्घ्यपात्रसम्पत्तिरस्तु ॥ उनका उत्तर-ओं तथास्तु ॥ फिर अर्घपात्र बायें हाथमें लेकर पितृब्राह्मण के हाथ या कुश पर शुद्ध जल देकर पूर्ववत् अर्घपात्र का पवित्र उस पर रखकर दोनों हाथों में अर्घ्यपात्र ले और वही 'या दिव्या०' मंत्र पढ़कर हाथमें कुश तिल जल ले संकल्प करे । (यजुर्वेदी)-ॐ अद्यामुकगोत्रास्मत्पितः अमुकशर्म्मन् एषतेऽर्घः स्वधा । (सामवेदी) —ओं अद्यामुकगोत्रास्मत्पितः अमुकशर्म्मन्नेतत्तेऽर्घ्यं चात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा ॥ और पितृतीर्थ से उसके हाथ पर अर्घ्य का जल देकर थोड़ा सा बचा ले। ब्राह्मण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

कहे-ओं अस्त्वर्घ्यम् ॥ फिर वह पवित्र लेकर उसी अर्घ्यपात्र में डालकर सामने पात्र रखदे। जल छूकर इसीतरह पितामह, प्रपितामह और मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह को भी अर्घ्य दे। मंत्र, संकल्प और विधि ज्यों की त्यों रहेगी। केवल 'पितः' की जगह क्रम से पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह, शब्द पढ़ेंगे। अर्घ्य देकर पहले विश्वेदेव के पात्र को—ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्थानमासि—पढ़कर उसके दक्षिण उतान हीं रख उसीके ऊपर पवित्र रहने दे। फिर पितरों के अर्घ्यपात्रों के दो भाग करे। पिता आदि तीन के पात्रों के जल पिता के पात्र में डाल सभी पवित्र उसपर ही रख दे। इसी तरह मातामहादि तीनों के पात्रों के शेष जल मातामह के पात्र में हीं डाल सभी पवित्र उसीपर रख दे और पूर्वमुख सव्य होकर जरासा वह जल अपने सिर पर छिड़के--ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमाः शं कृण्वन्तु भेषजम् ॥ यह छिड़कना आवश्यक नहीं है। फिर दक्षिणमुख हो पिता के पात्र को उसकी बाईं ओर औंधकर उसपर सभी पवित्र रक्खे। इसी तरह मातामहका पात्र उसकी बाईं ओर औंधकर उसपर उसके सभी पवित्र रख दे। दोनों हीं बार औंधने में यह मंत्र क्रम से पढ़े (यजुर्वेदी)--(१) ओं पितृभ्यः स्थानमासि ॥ (२) ओं मातामहेभ्यः स्थानमासि ॥ सामवेदी दोनों बार यह मंत्र क्रम से पढ़े--(१) ओं शुन्धन्तां लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमासि पितृभ्यः स्थानमासि ॥ (२) ओं शुन्धन्तां लोका मातामहसदना मातामहसदनमासि मातामहेभ्यः स्थानमासि ॥ शेष चार पात्र योंहीं पड़ेरहें। बहुतों ने तो विश्वेदेव के पात्र को भी यों हीं पड़े रहने को लिखा है, न कि मंत्र से उनके दक्षिण ओर रखने को। इसपर विशेष विचार ५६६ पृष्ठमें है। फिर पहले देवब्राह्मण के हाथ में शुद्ध जल देकर और चन्दन, पुष्प धूप, दीप, तांबूल और खद्दर आगे रख संकल्प करे--ओं अद्यास्मत्पित्रादिसम्बन्धिनः पुरूरवार्द्रवसंज्ञकाविश्वेदेवा इमानि

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

गन्धपुष्पधूपदीपताम्बूलवासांसि वो नमः ॥ और एक एक वस्तु क्रम से चढ़ावे-(१) ओं अयं वो गन्धः ॥ वह उत्तर दे-ॐ सुगन्धः । (२) ॐ इमानि वः पुष्पाणि । ॐ सुपुष्पाणि । (३) ओं अयं वो धूपः । ओं सुधूपः । (४) ओं अयं वो दीपः। ओं सुदीपः।(५) ॐ एतानि वो वासांसि ओं सुवासांसि ॥ ऊपर जो दो दो वाक्य हैं उनमें एक देने का है और दूसरा लेनेवाले के लेने का है। एक यजमान का है। दूसरा ब्राह्मण का है । पहले को यजमान कहे । दूसरे को ब्राह्मण कहे। फिर हाथ जोड़कर ब्राह्मण से कहे--ॐ विश्वेषां देवानामर्चनं सम्पूर्णमस्तु ॥ वह उत्तर दे- ॐ तथास्तु ॥ तब पित्रादि छओं के पास जाकर उनके हाथ पर अलग अलग जल देकर अपने आगे छओं के लिये उक्त चन्दनादि रख संकल्प करे--ओं अद्यामुकगोत्राअस्मत्पित्रादित्रयः अमुकामुकशर्म्माणः अमुकगोत्रा मातामहादित्रयः अमुकामुकशर्माण एतानि गन्धादीनि त्रिधा उज्य वः स्वधा ॥ फिर पूर्वोक्त रीति से ही एक एक वस्तुएं उन मंत्रों से सभी को देकर फिर दूसरी दे और वे उसी तरह उत्तर दे जावें, जैसा कि विश्वेदेव ब्राह्मण के सम्बन्ध में लिखा है ॐ अयं वो गन्धः इत्यादि ॥ जनेऊ आदि भी विश्वेदेव और पितरों को देते हैं ॐ इदं वो यज्ञोपवीतम् । ॐ सुयज्ञोपवीतम्-इत्यादि कह कर । अन्त में पितरों के सामने हाथ जोड कर कहे-ॐ पितॄणामर्चनं सम्पूर्णमस्तु ॥ वे कहें--ॐ तथास्तु ॥

इसके बाद पहले देव ब्राह्मण के और पीछे पितरब्राह्मणों के क्रम से उनके आसनों को घेरकर जल, भस्म या चूने से चौकोना मण्डल बनावे । क्षत्रिय का त्रिकोण और वैश्य शूद्र का गोल होता है। फिर उसी क्रम से भोजन के पात्र धोकर रक्खे और ब्राह्मणों को क्रम से हाथ धोने के जल दे । यदि दूसरे की भूमिमें श्राद्ध करना पड़े तो दक्षिण ओर दक्षिणाग्र कुशों पर पितृतीर्थ से थोडासा अन्न डाले-ॐ इदम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

नमेतद्भूस्वामिपितृभ्यो नमः । फिर अग्नौकरण होमकरे । यह होम अपसव्य होकर और स्वधा बोलकर भी किया जाता है । अथवा सव्य होकर स्वाहा के साथ । हम स्वाहा के साथ ही लिखते हैं । इसके सम्बन्ध में ५६७ पृष्ठमें विचार है । पितृ ब्राह्मणके हाथमें और अभाव में दोने में जल रख उसमें दो आहुतियां दे । श्राद्ध के अन्न में से गर्म गर्म लेकर घी लगाले और लवण न मिलावे । पहले ब्राह्मण से पूछे-ओं अग्नौकरणं करिष्ये ॥ वह उत्तर दे-ॐ कुरुष्व ॥ सर्वत्र पंक्ति के पहले ब्राह्मण से ही प्रश्न कर लेने से काम हो जाता है न कि सभी से । तब आहुतियां दे । (यजुर्वेदी)-ओं अग्नये कव्यवाहनाय स्वाहा इदमग्नये कव्यवाहनाय नमम । (२) ओं सोमाय पितृमते स्वाहा इदं सोमाय पितृमते नमम ॥ (सामवेदी)-प्रजापतिर्यजुः पितर उपघातहोमे विनियोगः । (१) ओं स्वाहा सोमायपितृमते इदं सोमाय पितृमते नमम । (२) ओं स्वाहा अग्नये कव्यवाहनाय इदमग्नये कव्यवाहनाय नमम ॥ फिर आहुति से बचे हुये अन्न को छओं पितर ब्राह्मणों के पात्रोंमें थोड़ा थोड़ा डालकर एवं पात्रों में पहले घी डालकर सभी में अन्न परोसे । पहले देवपात्र में परोसकर पितरों को परोसे । सव्य, अपसव्यादिका ध्यान बराबर रहे । ऊपर से भी घी और मधु डाल दे और एक एक दोने में जल, घी और साग चटनी वगैरः अलग अलग रक्खे । देवों के अन्नमें ऊपर से केवल घी डाले । फिर बायें हाथसे पात्रको बारी बारी से छूकर दहिने हाथमें जल लेकर प्रत्येक पात्र के चारों ओर गिरावे-ओं सत्यं त्वर्त्तेन परिषिञ्चामि ॥ पहले देवपात्र के चारों ओर जल गिराकर उसके आगे या चारों ओर जौ छींटे--ओं अपहता असुरा रक्षाꣳसि वेदिषदः ॥ फिर दहिने हाथ को बायें पर औंध कर औंधे हुए ही बायें को भोजनपात्र पर रखकर मंत्र पढ़े-ओं पृथिवीते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा ॥ इसके बाद-

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पा ँ सुरे–यह मंत्र पढ़कर ब्राह्मण का अंगूठा और उसके अगले वमें अपनाहीं अंगूठा अन्नमें डुबोवे और–ॐ इदमन्नम्, इमा आपः इदमाज्यम्, एतत्सर्वंहविः–ऐसा कहे। फिर बायें हाथ से अन्नपात्र को छूकर दहिने हाथ से संकल्प करे–ओं अद्येह पुरूरवाद्रव संज्ञका विश्वेदेवा इदमन्नं सोपस्करं वः स्वाहा नमः॥ और संकल्प का जल ब्राह्मण के दक्षिण ओर गिरादे या आगे ही गिरावे। इसके बाद पितरों के पास जाकर पहले पितादि तीन के पात्रों के चारों ओर जल गिरावे और बायें से छूवे तथा और भी क्रियायें देव ब्राह्मण वत् ही करे। हां, जौ की जगह तिल पात्रों के चारों ओर उसी मंत्र से छींटे और फिर भोजनपात्रपर पहले दहिना हाथ औंधकर उसके ऊपर बायां औंधे और वही–ओं पृथिवी ते० मंत्र पढ़े। अंगूठा भी उसी मंत्र से डालकर उसी तरह–ॐ इदमन्नम्–इत्यादि पढ़े और कुश तिलादि से संकल्प करे–ओं अद्येह अमुकगोत्रा अमुकपितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्माणः इदमन्नं परिविष्टं परिवेक्ष्यमाणं च सोपस्करं वः स्वधा॥ फिर कुशादि वामभागमें या आगे ही गिरादे। जल छूकर इसी प्रकार मातामहादि तीनका भी एकही साथ संकल्पाद करे और सभी क्रियायें ज्यों की त्यों करे। केवल 'पितृपितामहप्रपितामहाः' की जगह 'मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाः' पढ़े। शेष शब्द ज्यों के त्यों। देव और पितरों के कर्म में यहां एक तो यह अन्तर है कि देव में और पितरोंमें तिल छींटते और संकल्पमें लेते हैं। दूसरे हाथ औंधनेमें देवके समय दहिना ऊपर रहता है और पितर के समय बायां। और सब बातें एकसी हैं। फिर पूर्वापोशान (आचमन) के लिये सभी को जलदे। पहले विश्वेदेवोंको, फिर शेष छओं पितरोंको। परन्तु जल देने से पहले प्रार्थना कर ले–ओं अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत् तत्सर्वमच्छिद्रमस्तु॥ तब जल देकर तीन बार गायत्री मंत्र को पढ़ कर तीन बार–ओं मधुवाता० (पृ० ५४१) से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

और-ॐ मधु मधु मधु-कह उन से कहे कि-ओं यथामुखं जुष-
ध्वम्। फिर जितने ब्राह्मण हों उतनी बार-ओं अमृतोपस्तरणमासि-
कहे और ब्राह्मण भी--ओं अमृतोपस्तरणमासि-अलग अलग
कहकर आचमन करके इन मंत्रों से प्राणाहुति करें-ओं प्राणाय
स्वाहा। ओं अपानाय स्वाहा। ओं व्यानायस्वाहा। ओं
समानायस्वाहा। ओं उदानाय स्वाहा॥ इस के बाद उनसे
कहे कि-ओं गायत्र्यादीन् श्रावयिष्ये। वे कहें-ओं श्रावय।
फिर वे मौन होकर खावें और तीनबार गायत्रीमंत्र, उक्त मधुवाता और
मधु मधु मधु कहने के बाद यजुर्वेदी दक्षिणमुख होके रक्षोघ्न मंत्र
पढ़कर भूमि पर तिल छींटे और फिर पितृमंत्र, पुरुषसूक्त, अप्र-
तिरथ पढ़कर हविःस्तोत्र, सप्तार्चिस्तव और रुचिस्तवादि पढ़े।
ये सभी आगे लिखे गये हैं। और सामवेदी पितृसंहिता और माधु-
च्छन्दसी का जप करे। यह भी वहीं लिखी है। ब्राह्मणों के भोजन
करलेने पर, उनके भोजनपात्रों से चार अंगुल हटकर दक्षिणाग्र
कुश डाल के उन्हीं पर पूर्व से पश्चिम तक पानी दे और शेष अन्न
में से, जो अलग रक्खे हों, थोड़ा सा लेकर पितृतीर्थ से उन्हीं कुशों
पर छींटे-ओं अग्निदग्धाश्च ये जीवा येऽप्यदग्धाः कुलेमम।
भूमौ दत्तेनतृप्यन्तु तृप्तायान्तु परांगतिम्॥ इसके बाद हाथ के
पवित्रों को त्यागकर पूर्वमुख सव्य हो हाथ धोके दो बार आचमन करे
और नवीन पवित्र धारणकर हरिस्मरण करके ब्राह्मणों को, देवब्राह्मण
से ही शुरू कर, क्रम से उत्तरापोशान के लिये जल दे और स्वयं
वही गायत्री, मधुवाता और मधु मधु मधु तीन बार जपे। जपने
पर ब्राह्मण आचमन करें। तब उनसे कर्ता पूछे-ओं तृप्ताः स्थ?
उत्तर दें-ओं तृप्ताः स्म॥ फिर पूछे--ओं शेषमन्नं किं क्रिय-
ताम्? वे उत्तर दें-ओं इष्टैः सह भुज्यताम्॥ अभी उन का
हाथ न धुलाकर पिंडों के लिये उनसे कहे-ओं पिंडानहं करिष्ये॥
वे उत्तर दें-ओं कुरुष्व॥ फिर पितादि तीन और मातामहादि
तीन के भोजनपात्र से एक हाथ उत्तर क्रम से पूर्व पश्चिम दो वेदियां

Re[illegible]uru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पिंडदान के लिये बालू से बनवावे जो दक्षिण ओर ढालूहों। दोनों पर तीन तीन पिंड दिये जायंगे। स्मरण रहे कि अपात्रकर्म में भी प्रश्नोत्तर होते ही हैं। फिर प्रत्येक वेदी के चारों ओर मण्डल बनावे और वेदियों पर जल गिराकर पश्चिम वेदी के मध्य में पहले पिंजूली (३) से १० अंगुल की रेखा उत्तर से दक्षिण खींचे। इसी तरह उसके पूर्व की वेदी में भी। उसकी विधि यह है कि पहले बायें हाथ में सात पवित्रों की बनी पिंजूली लेकर उसको दहिने हाथ से भी पकड़े और यह मंत्र पढ़कर रेखा खींचे-प्रजापतिः पितरो रेखोल्लेखने विनियोगः। ओं अपहता असुरा रक्षांसि वेदिषदः। फिर उसी पिंजूली से दूसरी वेदी की रेखा भी इसीतरह खींचकर उसे उत्तर ओर रख दे। तब यजुर्वेदी जलती हुई लकड़ी या जलते तृण का गुच्छा (उल्मुक) लेकर क्रम से उन रेखाओं पर घुमावे और प्रत्येक बार यह मंत्र पढ़े-ओं ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वधया चरन्ति। पुरापुरो निपुरो ये भरन्त्यग्निष्टाँल्लोकात्प्रणुदात्यस्मात् ॥ और उसे (उल्मुक को) दक्षिण ओर रखकर उन दोनों पर क्रम से तीन तीन मोटक, जो उनके पास तोड़े हुये कुशों के हों, दक्षिणाग्र रख दे। सामवेदी लोग पात्र में रेखा पर उल्मुक नहीं घुमाते। उनके यहाँ निषेध है। उनकी पद्धति में यह भी लिखा है कि पहले वेदी पर कुश रखकर पीछे पिंजूली से रेखा खीचे। पर उचित न जान हमने वैसा नहीं लिखा है। यदि वैसी ही परिपाटी हो तो वैसा करे। कुश (मोटक) रखकर सव्य होके 'ॐ देवताभ्यः०' इत्यादि पूर्वोक्त श्लोक को तीन बार पढ़े। इसके बाद यद्यपि यजुर्वेदियों के यहां लिखा पितरों का आवाहन नहीं लिखा है। मगर सामवेदी फिर आवाहन करते हैं यहां आवाहन के लिये वही "ओं एत पितरः" इत्यादि एक ही मंत्र है जो पहले लिखा गया है। पहले के शेष दो मंत्र यहां नहीं पढ़ते हैं। फिर छ पात्रों में जल, चन्दन, पुष्प और तिल डालकर अलग अलग छओं पितरों के लिये अवनेजन जल तैयार करे और एक पात्र के साथ मोटकादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्यामुक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

गोत्र पितः अमुकशर्मन् पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व तेस्वधा । यह यजुर्वेदी पढ़े और सामवेदी—ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन् पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व येचात्रत्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै तेस्वधा—यह पढ़कर पश्चिम वेदी के कुशों की जड़ में पितृतीर्थ से थोड़ा सा अवनेजन जल गिरादे । इसके बाद जल छू कर क्रम से मध्य में और अन्त में पितामह और प्रपितामह के लिये भी गिराकर दूसरी वेदी पर इसी तरह मूल, मध्य और अन्त में मातामहादि के लिये अवनेजन दे । सभी वाक्य पूर्ववत् वही रक्खेंगे । केवल 'पितः' की जगह क्रमसे पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह और वृद्धप्रमातामह, शब्द पढ़े जांयगे । शेषांश अक्षरशः वही रहेगा । इसके बाद सभी अन्न में से थोड़ा थोड़ा लेकर उसमें अग्नौकरण की आहुति के शेष को भी मिलावेंगे और मधु, तिल, शक्कर, घी मिलाकर विल्व जैसे छ पिंड बनाकर दोनों वेदियों से उत्तर तीन तीन रक्खेंगे और वे भी एक दूसरे से दक्षिण अलग अलग पात्रों में। पिंड बनाकर ऊपर भी घी और शहद लगाते हैं। इसके बाद जिस क्रम से अवनेजन दिया था उसी क्रमसे अवनेजन की जगहों पर ही वाक्य पढ़कर छओं पिंड दे । पहला पिंड दहिने हाथ में लेकर उसमें बायां भी लगावे और मोटकादि लेकर संकल्प करे। (यजुर्वेदी)—ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन् एषते पिंडः स्वधा ॥ (सामवेदी)—ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन्नेष ते पिंडो येचात्रत्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा ॥ और पितृतीर्थ से प्रथम अवनेजन की जगह पिंड को रख दे । इसी तरह शेष पांच पिंडों को भी क्रमसे अवनेजन की जगह ही दे । संकल्प वाक्य के और शब्द तो ज्यों के त्यों पढ़े । केवल 'पितः' की जगह क्रम से पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह, पढ़े । छओं पिंडों के दे चुकने पर पिता आदि तीन के पिंडों के कुशों की जड़ में—ओं लेपभागभुजः पितरस्तृप्यन्तु—कहकर दहिने हाथ को पोंछ दे । फिर

Bhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पूर्वमुख सव्य होंकर हाथ धोके तीन बार आचमन पूर्वक हरिस्मरण करे । इसके बाद फिर असपव्य होकर पढ़े-प्रजापतिः पितरो जपे विनियोगः । ओं अत्रपितरो मादयध्वं यथाभागमावृषायध्वम् ॥ फिर बांई ओर से घूमकर उत्तर मुख होके सांस रोके और फिर उधर से ही दक्षिणमुख हो प्रसन्न मनसे सांस रोके हो पढ़े-प्रजापतियर्जुः पितरो जपे विनियोगः । ओं अमीमदन्त पितरो यथाभागमावृषायिषत ॥ इसके बाद पूर्व के अवनेजनसे बचे या पिंडपात्र के धोये जलसे क्रमसे पिंडों पर प्रत्यवनेजन दे । सामवेदी पद्धतियों में एग जगह लिखा है कि प्रत्यवनेजन दे कर ही 'ओं अत्र पितरो मादयध्वं०' इत्यादि पढ़ना चाहिये । परन्तु उचित न जानकर हमने वैसा नहीं लिखा है । फिर भी यदि चाहे तो वैसा ही करे । प्रत्यवनेजन देने के लिये दहिने हाथ में पूर्ववत् जल लेकर यजुर्वेदी संकल्प पढ़े-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुक शर्मन् पिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते स्वधा । सामवेदी-ॐ अद्यामुक० नेनिक्ष्व येचात्रत्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा ॥ और पहले पिंड पर जल गिराकर दो पांच पिंडों पर भी इसी तरह वाक्य पढ़ पढ़ कर प्रत्यवनेजन देते जाय । प्रत्येक बार जल छू लिया करे और अगले वाक्यों में 'पितः' की जगह पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह, शब्द क्रम से दे, जैसा अवनेजन के समय दिया था । शेष शब्द वही होंगे जो पहले पिंड के प्रत्यवनेजन के हैं । फिर गोंठें खोलकर सव्य हो आचमन करे और अपसव्य होके दोनों हाथ जोड़ कर पढ़े-(यजुर्वेदी)-ओं नमोः वः पितरो रसाय नमो वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वःपितरः स्वधायै। नमोवःपितरो घोराय नमो वःपितरो मन्यवे नमो वःपितरःपितरो नमो वोगृहान्नःपितरो दत्त सदोवःपितरोदेष्म ॥ सामवेदी-प्रजापतिरुष्णिक् पितरो जपे विनि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

योगः । ॐ नमोवः पितरो जीवाय नमोवः पितरः शोषाय । नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो रसाय । नमो वःपितरः स्वधायै नमोवः पितरोमन्यवे । नमो वःपितरः पितरो नमो वः ॥ फिर अपनी स्त्री को देखकर पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पितरः पत्न्यवेक्षणे विनियोगः । ओं गृहान्नः पितरो दत्त ॥ पिंड को देखकर पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पितरः पिण्डावेक्षणे विनियोगः । ओं सदो वः पितरो देष्म ॥

सामवेदी का कृत्य यहां तक हैं । फिर प्रत्येक पिंड के लिये तीन तीन सूत, ऊन या पचास से अधिक अवस्थावाले यजमान की छाती के रोम धोकर आगे रक्खे और एक पिंड के लिये बायें हाथ से उठाकर दहिने में रख बांयें को उससे लगाकर मोटकादि लेके संकल्प करे-(यजुर्वेदी) ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन्नेतत्ते वासः स्वधा ॥ (सामवेदी) ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन्नेतत्ते वासो येचात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा॥ और पितृतीर्थ से प्रथम पिंड पर चढ़ा कर जल स्पर्श कर ले । इसी प्रकार शेष पांच पिंड़ों पर भी चढ़ावे । वाक्य भी हरबार यही रहेगा । केवल 'पितः' के स्थान पर क्रमशः पितामह, प्रपितामह, मातामह, प्रमातामह, वृद्धप्रमातामह, शब्द पढ़ेंगे । इसके बाद चुपचाप प्रत्येक पिंड पर चन्दन पुष्प, धूप, दीप, पान, दक्षिणा आदि चढ़ादे और पिंड से बचेअन्न का कुछ अंश पिंड के पास चुपचाप छींट दे । फिर पितर ब्राह्मणोंको आचमन और हाथ धोने का जल देकर देवब्राह्मण का पीछे से हाथ धुलावे और स्वयं भी हाथ धोकर आचमन करे। फिर उन ब्राह्मणों से पूछे कि-ओं सुसंप्रोक्षितमस्तु ॥ और उनके आगे की भूमि पर जल गिरा दे । वे कहें-ओं तथास्तु ॥ तब पितर ब्राह्मणों के हाथ पर अलग अलग मंत्र पढ़कर जल डाले-ओं शिवा आपःसन्तु । वे कहें-ओं सन्तु शिवा आपः । फूल दे-ओं सौमनस्यमस्तु । वे कहें-ॐ अस्तुसौमनस्यम् । जौ (अक्षत) दे-ॐ अक्षतंचारि-

Bhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ष्टमस्तु। वे कहें-ओं अस्तु अक्षतश्चारिष्टम्। फिर छ पात्रों में जल रख उनमें कुश डाल दे और पहले एक पात्र हाथ में लेकर संकल्प करें-ओं अद्यामुकगोत्रस्य पितुः अमुकशर्म्मणो दत्तैतदन्नपानादिकमक्षय्यमस्तु ॥ और पितृ ब्राह्मण के हाथ या कुश पर वह जल गिरा दे। जल छूकर शेष पांच पर भी पांचों पात्रों के जल इसी तरह यही वाक्य पढ़ पितृ तीर्थसेही गिरावे। केवल 'पितुः' की जगह 'पितामहस्य, प्रपितामहस्य, मातामहस्य, प्रमातामहस्य, वृद्धप्रमातामहस्य' पढ़े। यदि एक ब्राह्मण हो तो भी उसी के हाथ पर वार बार दे। फिर पूर्वमुख सव्य हो प्रसन्न मन से दक्षिण दिशा की ओर देखकर ब्राह्मणों से आशीर्वाद ग्रहण करें-(साम और यजुर्वेदी दोनों)-(१) ओं अघोराः पितरः सन्तु ॥ ब्राह्मणों के उत्तर-ओं सन्तु अघोराः पितरः॥ इसी तरह आगे भी यजमान पहला वाक्य कहे और ब्राह्मण दूसरा। (२) ओं गोत्रन्नो वर्द्धताम्। ओं वर्द्धतां वोगोत्रम्॥ इसके बाद केवल यजुर्वेदी करें सामवेदी यही आगे कहेगा। (३) ओं दातारोनोऽभिवर्द्धन्ताम्। ओं वर्द्धन्तां वोदातारः। (४) ओं वेदाश्चनोऽभिवर्द्धन्ताम्। ओं अभिवर्द्धन्तां वो वेदाः। (५) ओं सन्ततिर्नोभिवर्द्धताम्। ओं अभिवर्द्धतां वः सन्ततिः। (६) ओं श्रद्धा च नो माव्यगमत्। ओं माव्यगमद्वः श्रद्धा। (७) ओं बहुदेयं चनोऽस्तु। ओं अस्तुवो बहुदेयम्। (८) ओं अन्नंचनो बहुभवेत्। ओं भवत्वन्नंवोबहु। (९) ओं अतिथींश्चलभेमहि। ओं लभध्वंचातिथीन्। (१०) ॐ याचितारश्च नः सन्तु। ओं सन्तुवो याचितारः। (११) ॐ माच याचिष्ट कञ्चन। ओं कञ्चन माया चध्वम्। (१२) ओं एताः सत्या आशिषः सन्तु। ओं सन्त्वेताः सत्या आशिषः॥ उसके बाद अपसव्य होकर पिता और मातामह की बगल में औंधे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgao

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पात्रों को सीधा कर उनके पवित्रों को क्रम से पिता आदि और मातामहादिके पिंडों पर रख दूसरे भी कुश रखदे और उन्हीं दोनों पात्रों से पितादि तीन और मातामहादि तीन के पिंडों पर क्रमसे आगे लिखे मंत्र से जलधारा दक्षिण ओर पितृतीर्थ से गिरावे । कहीं कहीं लिखा है कि अर्घ्यपात्र से न देकर दूसरे ही पात्र से जल दिया जावे और पवित्र भी दूसरे ही बनाकर पिंडों पर रक्खे जावें । जल में पुष्प, तिल, चन्दन मिला लेना चाहिये । यह जलधारा गिराने से पहले ब्राह्मणों से पूछे--ओं स्वधां वाचयिष्ये॥ वे उत्तर दें--ओं वाच्यताम् ॥ फिर कहे-ओं पितृपितामहप्रपितामहेभ्यो मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहेभ्यश्च स्वधोच्यताम् ॥ उनका उत्तर-ओं अस्तु स्वधा॥ तब आगे के मंत्र को प्रत्येक बार पढ़ छओं पिंडों पर क्रम से जलधारा गिरावे-प्रजापतिःपिपीलिकामध्योष्णिक्, पितरः पिण्डपरिषेके विनियोगः । ओं ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम् । स्वधास्थ तर्पयत मे पितॄन् ॥ बहुतों ने जलधारा देकर अर्घपात्र को सीधा करने को लिखा है । तब देवब्राह्मण के हाथ में जल देकर कहे-ओं विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम् ।वह उत्तर दे-ओं प्रीयन्तां विश्वेदेवाः। बहुतों ने दक्षिणादान के बाद ही यह काम लिखा है । पर, उचित तो यहीं है । फिर पिंड और पिंडों के पात्रों को जरासा खसका दे । पर, बहुतों ने भोजनपात्र को खसकाना लिखा है, न कि पिंडपात्र को । जैसी रीति हो करे । पर, भोजनपात्र ही अधिक जंचता है । परन्तु भोजनपात्र खसकाने पर हाथ धोना होगा और यह बात लोगों ने लिखी नहीं है । इसी से हमने पिंडपात्र कोही खसकाना लिखा है । तब पहले विश्वेदेव को और पीछे से पितरों को दक्षिणा दे । देवों को चांदी तो कभी न दे । सोना, ताँबा, फल या मूलादि दे, जैसी अपनी शक्ति हो । पितरों को भी भरसक चाँदी और अभाव में और दे । दक्षिणा धोकर और हाथ में लेकर सीधे कुश जौ जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्य कृतैतत्पार्वणश्राद्धप्रतिष्ठार्थं पुरूरवार्द्रवसंज्ञकानां विश्वे-

Bhuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

षादेवानामिमां यथाशक्ति दक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ ब्राह्मण-ओं स्वस्ति-कह कर ले । फिर छओं पितरों की दक्षिणा एकही साथ हाथ में लेकर मोटकादिसे संकल्प करे-ओं अद्यकृतैतत्पार्वणश्राद्धप्रतिष्ठार्थं पित्रादित्रयाणांमातामहादित्रयाणामिमां यथाशक्ति दक्षिणां यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय विभज्याहं संप्रददे ओं तसन्नमम ॥ ब्राह्मण-ओं स्वस्ति-कहकर उसे लें। इसके बाद सामवेदी पहले वाली (३) से (१२) तक की आशीर्वाद-प्रार्थना उसी तरह करे और ब्राह्मण वैसे ही उत्तर दें । इसके बाद सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों ही ब्राह्मणोंसे कहें-ओं स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु। ब्राह्मण कहें-ओं स्वस्ति॥ फिर कहे-ओंपिण्डानुत्थापयामि वे कहें--ओंउत्थापय। तब झुक कर खड़ा हो पिंडों को उठाकर थालों में रख उन्हें सूँघ ले और पिंड के नीचे के कुशों को और उल्मुक को आग में डाल दे । सामवेदियों के यहां उल्मुक नहीं होता है । वसुओं ने यहां 'विश्वेदेवाः प्रीयन्ताम्' इत्यादि कर्म लिखा है । पर, हम पहले ही लिख चुके हैं । बाद को विसर्जन करे । पितृब्राह्मणों का हाथ बिना अंगूठे के पकड़े और मंत्र पढ़े-ओं वाजेवाजेऽवत वाजिनोनो धनेषु विप्रा अमृताऋतज्ञाः। अस्यमध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥ और उन्हें उठाकर सव्य होके विश्वेदेव ब्राह्मण का भी हाथ पकड़ कर उठा दे। मंत्र पढ़ने की आवश्यकता नहीं है। प्रणाम करके हाथ में जलपात्र ले । फिर सभी को, पहले जहां पांव धोया था वहीं, ले जावे । देवब्राह्मण को पूर्वमुख और शेष को उत्तरमुख खड़ा कर प्रदक्षिण रीति से जलधारा से उनको घेरे-ओं आमावाजस्य प्रसवो जगम्यादेवे द्यावापृथिवी विश्वरूपे। आमागन्तां पितरामातराचामासोमो अमृतत्वेन गम्यात् ॥ और इसी मंत्र को पढ़ता हुआ उनके पीछे आठ कदम जाकर उनकी प्रदक्षिणा पूर्वक उन्हें नमस्कार करके वापस आवे और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सब्य हो-ओं 'देवताभ्यः०' श्लोक तीन बार पढ़कर रक्षादीपों को दोनों हाथों से बुझादे । उपरान्त हाथ पांव धोके आचमन कर पढ़े—ओं प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः संपूर्णं स्यादितिश्रुतिः ॥ ओं विष्णुः ३ ॥ फिर पिंडों को गौ, ब्राह्मण या बकरी को खिलादे या पानी में हीं डाल दे । यदि पुत्रकामनावाली स्त्री हो तो पितामहवाला पिंड पृष्ठ पृष्ठोक्त रीति से, यदि इच्छा हो तो, उसे दे और वह उक्त रीति से खावे । इसके बाद आगे लिखा वैश्वदेव कर्म करे और उसके बाद सामवेदी ३५३ पृष्ठोक्त वामदेव्य का गान करे । फिर—ओं ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु—कह कर कर्म को ब्रह्मार्पण करे और घर में जाकर ब्राह्मण, बन्धु, बान्धव तथा आगत अतिथियों के साथ भोजन करके विश्राम करे । इति पार्वण श्राद्ध ।

८—एकोद्दिष्ट और वार्षिकश्राद्ध ।

कभी कभी अन्यान्य अवसरों पर और विशेष कर वार्षिक श्राद्ध, जिसे वर्षी भी कहते हैं, एकोद्दिष्ट की रीति से ही कियाजाता है । अतएव उसकी भी पद्धति आवश्यक है । यहां भी सपात्रक ही पद्धति लिखते हैं । अपात्रक में पार्वण की ही तरह निमंत्रणादि बातें नहीं होती हैं । अतएव वह छोड़ दीजावें । इसमें विश्वेदेव नहीं रहते । पितरों का आवाहन और अग्नौकरण नहीं होता और एक ही अर्घ और पिंड होते हैं । पहले दिन एक बार भोजन करने का नियम यहां भी है । ब्राह्मण को भोजनोपरान्त पहले ही दिन रात के समय ही निमंत्रण दे या श्राद्ध के दिन हीं सवेरे । आजकल प्रायः उसीदिन हो सकता है । अतएव उसीके अनुसार पद्धति लिखते हैं । प्रातःकाल स्नान और नित्यकर्म करके ब्राह्मण के घर पान, सुपारी, द्रव्यादि लेकर जावे और गोबर से पोती भूमि में उत्तरमुख उसे बैठाकर अपसव्य, दक्षिणमुख स्वयं होकर बायां घुटना टेक के, ब्राह्मण का दहिना (या बायां) घुटना छूकर और हाथ में द्रव्यादि

Rajguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लेकर या उसे ही देकर कहे-ओं अद्येहामुकगोत्रस्य पितुरमुकशर्मणो वार्षिकैकोद्दिष्टश्राद्धे पित्रर्थे भवन्तमामन्त्रये, तत्र भवता ऋणः कर्त्तव्यः ॥ ब्राह्मण द्रव्यादि लेकर कहे-ओं तथास्तु । फिर यजमान कहे-ओं प्राप्नोतु भवान् ॥ वह उत्तर दे-ओं प्राप्नवानि ॥ नियम बतादे—ओं अक्रोधनैः० इत्यादि ५८६ पृष्ठोक्त । आनेपर उसका क्षौर आदि कराके तैलादि पदार्थ देह में लगाने के लिये देकर स्नानार्थ भेजे और स्वयं दक्षिण प्रवण (दक्षिण ओर ढालू) भूमि श्राद्ध के लिये ठीक कर उसे गोबर से लीपकर उसपर अंगार डालदे और इस प्रकार शोधन कर उसपर पीली सरसों छींटे । इसके बाद उसे चारों ओर परदे से घेर कर कुत्ते बिल्ली आदि को वहाँ से हटादे । और स्वयं या अपनी स्त्री द्वारा और अभाव में सपिंडद्वारा श्राद्धार्थ अन्न पकवावे । एकोद्दिष्ट का समय मध्याह्न है । अतः उससे पहले ही पाक तैयार हो जाना चाहिये। श्राद्ध के लिये फिर स्नान कर आवे और पाक करनेवाले से पूछे कि—ओं सिद्धम् ? उसका उत्तर-ओं सुसिद्धम्-ऐसा पा जाने पर स्नान से लौटे हुए ब्राह्मण के लिये एक चौकोना मण्डल पांव धोने के लिये श्राद्धस्थान से हटकर बनावे और उससे दक्षिण ओर भरसक कम्बल का एक आसन रखदे । दूसरा मण्डल उसी तरह पानी, चूने, भस्म, आटे आदि से श्राद्धस्थान में भी बनाकर वहां भी दक्षिण ओर एक आसन रख दे और ब्राह्मण को पांव धोने की जगह उत्तरमुख बैठाकर उसका पांव-ओं नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये सहस्रपादाक्षिशिरोरुबाहवे । सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते सहस्रकोटीयुगधारिणे नमः-इस मंत्र से धोकर उसे आचमन करावे । स्वयं भी पांव धोकर आचमन करे, ब्राह्मण को लिवा जाकर श्राद्ध भूमि में उसके आसन पर दक्षिणाग्र तीन मोटक रख उसपर उत्तर मुख बैठा दे और उसके पांव के नीचे तीन मोटक दक्षिणाग्र रख दे । ब्राह्मण को बैठाने के समय आसन को हाथ से छूकर कहे-ॐ अत्रास्यताम् ॥ ब्राह्मण कहे कि-ॐ आस्ये ॥ ब्राह्मण के अभाव

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में ऐसा ही कहकर कुश का ब्राह्मण रख दे और स्वयं ही-ॐ आस्ये-
कह दे। उसके आसन के निकट ही रक्षादीपक जलादे। तिल के
तेल या घी से बड़ा दीया भरकर जलावे और आसन की बाईं ओर
रख दे। फिर स्वयं भी आसन पर पूर्वमुख बैठकर अपने पांव के नीचे
भी तीन कुश दक्षिणाग्र रख दे। रक्षा दीपक को अन्त तक ब्राह्मण बुझने
न दे। यजमान बैठकर पवित्र पहने, आचमन प्राणायाम करके कर्म-
पात्र के नीचे दक्षिणाग्र कुश रख उसपर लोटा आदि पात्र रक्खे
और उसमें ७६ पृष्ठोक्त मंत्रों से या चुपचाप जल, चन्दन, तीन कुश,
पुष्प, तिल आदि डालकर ब्राह्मण से पूछे-ॐ कर्मपात्रं सम्पन्नम्?
ब्राह्मण कहे—ॐ सुसम्पन्नम्॥ तब उस पात्र के कुशों से जल लेकर
अपने शरीर और श्राद्ध सामग्रीपर छिड़कता हुआ पढ़े—ॐ अप-
वित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपिवा। यः स्मरेत्पुण्डरी-
काक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु॥
फिर-ॐ भूम्यै नमः। ॐ गयायैनमः। ॐ गदाधराय नमः-
कहकर प्रणाम करके तीन मोटक तिल जल लेकर और अपसव्य होकर
संकल्प करे—ओं अद्यामुकमासे०अमुकगोत्रस्य पितुरमुक-
शर्म्मणो वार्षिकैकोद्दिष्टश्राद्धमहं करिष्ये॥ ब्राह्मण कहे-
ओं कुरुष्व॥ फिर—ओं भूर्भुवः स्वःतत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो-
देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्॥१॥ओं देवताभ्यः
पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एव च। नमः स्वाहायै स्वधायै
नित्यमेव नमो नमः॥ २॥ इन दोनों को तीन तीन बार पढ़े।
तब दक्षिणमुख अपसव्य हो के बायां घुटना टेक दे और बायें हाथ में
पीली सरसों तथा तिल लेकर और अगले श्लोकों को पढ़ कर दहिने
हाथ से पहले चारों ओर, फिर पूर्वादि दिशाओं में और अन्त में
कोने में और नीचे ऊपर श्राद्धस्थान में छीटे—ओं नमोनमस्ते
गोविन्द पुराण पुरुषोत्तम। इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्षतां
सर्वतो दिशः॥ १॥ अग्निष्वात्ताः पितृगणाः प्राचीं र-

Bhaguru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

क्षन्तु मे दिशम्। तथा बर्हिषदः पान्तु याम्यां ये पितरः स्थि-
ताः ॥ २ ॥ प्रतीचीमाज्यपास्तद्वदुदीचीमपि सोमपाः।
अधोर्ध्वमपि कोणेषु विकोणेषु च सर्वशः ॥ ३ ॥ रक्षोभू-
तपिशाचेभ्यस्तथैवासुरदोषतः । सर्वतश्चाधिपस्तेषां
यमो रक्षां करोतु वै। वायुभूतपितॄणां च तृप्तिर्भवतु शा-
श्वती ॥ ४ ॥ इस के उपरान्त हाथ में तीन कुश और तिल लेकर
धोती के किनारे में लगा कर-ओं निहन्मि सर्वं यदमेध्यवद्भवेद-
ताश्च सर्वेऽसुरदानवा मया। रक्षांसि यक्षाश्च पिशाचगु-
ह्यका हता मया यातुधानाश्च सर्वे-इस मंत्र से उसे कमर में
खोंस ले। यही नीवीबंधन है। फिर सव्य होकर किसी एक पात्र में जल
रख उसमें चन्दन पुष्प डाल तीन कुशों से उसे चलाता हुआ पढ़े-
ओं यद्देवादेवहेडनं देवासश्चकृमा वयम्। अग्निर्मा तस्मा-
देनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥१॥ यदि दिवा यदिनक्तमे-
नाँसि चकृमा वयम्। वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्च-
त्व ँ हसः ॥ २ ॥ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एनाँसि चकृमा
वयम्। सूर्यो मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥३॥
और वही जल उन कुशों से उठाकर श्राद्ध के लिये बने अन्न आदि पर
यह कह कर छिड़के कि-ॐ दुष्टदृष्टिनिपातदूषितं पाकादि पूतं
भवतु ॥ फिर अपसव्यादि करके तीन मोटकों का आसन दे और
बराबर दक्षिणमुख अपसव्य हो, बायां घुटना टेककर समूची क्रियायें
करे। केवल आचमन और हरिस्मरणादि के समय पूर्वमुख और
सव्य हो जावे। सर्वत्र तीन मोटक ही लिया करे। केवल अर्घपात्र के
ऊपर के पवित्र का कुश एक ही रहेगा। हाथ में तीन मोटक तिल जल
लेकर पढ़े-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन्निदमासनं
ते स्वधा ॥ आसन के वामभाग में पितृतीर्थ से तीनों कुश दक्षिणाग्र
रख दे। परन्तु रखने से पहले संकल्प का जल या तो ब्राह्मण के हाथ
पर ही दे या कुशब्राह्मणपर डाल दे। फिर तिल लेकर आसन के आगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

छींटे-प्रजापतिर्यजुः पितरस्तिलविकिरणे विनियोगः । ॐ अपहता असुरा रक्षा ꣳसि वेदिषदः ॥ जल छूकर दक्षिणाग्र मोटकों पर अर्घ्यपात्र रख उसपर एक पवित्र दक्षिणाग्र रक्खे और दूसरे पात्र को हाथ में ले उसका जल उस पात्र में पितृतीर्थ से डाले-ॐ शन्नो देवीरभिष्टय आपो (सामवेदी 'शन्नो') भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ फिर पितृतीर्थ से ही तिल डालने का मंत्र-ॐ तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः । प्रत्नमद्भिः पृक्तः स्वधया पितरामिमं लोकं पीणाहिनः स्वधा ॥ तब चुपचाप चन्दन, पुष्प और कुश डाल दे। कुश तो ढंकने के लिये है। फिर ब्राह्मण से पूछे-ॐ अर्घपात्रं सम्पन्नम् ? वह कहे-ॐ सुसंपन्नम् ॥ फिर दोनों हाथों से अर्घ का पात्र उठाकर पहले उस ब्राह्मण के हाथ के कुश पर दूसरा जल डाल कर उस पर अर्घ का पवित्र दक्षिणाग्र रखदे और पढ़े-ॐ यादिव्या आपः पयसा संबभूवुर्या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः । हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता न आपः शꣳस्योना सुहवा भवन्तु ॥ तब हाथ में मोटकादि लेकर संल्कंप करे-ॐ अद्यामुकगोत्रपितः अमुकशर्मन् एष तेहस्तार्घः स्वधा ॥ यह यजुर्वेदी पढ़े और सामवेदी पढ़े-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन्नेतत्तेऽर्घ्यं येचात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मैतेस्वधा ॥ और पितृतीर्थ से ब्राह्मण के हाथ पर अर्घपात्रका जल गिरा दे। ब्राह्मण कहे-ॐ अस्त्वर्घ्यम् ॥ यदि पुत्रादि की कामना हो तो थोड़ा-सा जल बचाकर उसे अपने सिर पर छिड़के-ॐ आपः शिवाः शिवतमाः शान्ताः शान्ततमास्तेकृण्वन्तु भेषजम् ॥ फिर ब्राह्मण के हाथ पर शुद्ध जल देकर वह पवित्र उठा ले और वह अर्घ्यपात्र उस की बाईं ओर दक्षिणाग्र कुशों पर उसी तरह औंधकर उस पर पवित्र रख दे। उसे औंधने का मंत्र-(यजुर्वेदी)-ओं पित्रे स्थानमसि ॥

Bhandu Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

(सामवेदी)-ओं शुन्धन्तां लोकाः पितृषदनाः पितृषदनमसि पितृभ्यः स्थानमसि ॥ फिर ब्राह्मण के हाथ में शुद्ध जल देकर अपने आगे चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, खद्दर, यज्ञोपीतादि रख हाथ में मोटकादि लेकरसंकल्प करे-ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन् एतानि गन्धादीनि तुभ्यं स्वधा ॥ फिर एक एक चीज क्रम से दे और देने के समय हरबार पहला वाक्य यजमान और दूसरा ब्राह्मण बोले। यदि ब्राह्मण न हो तो स्वयं ही यजमान बोले-

(१) ओं अयं ते गन्धः। ओं सुगन्धः। (२) ओं एतानि ते पुष्पाणि। ओं सुपुष्पाणि। (३) ओं एष ते धूपः। ओं सुधूपः। (४) ओं एष ते दीपः। ओं सुदीपः। (५) ओं इमे यज्ञोपवीते। ओं सुयज्ञोपवीते। (६) ओं एतत्ते वासः। ओं सुवासः॥ और सबके समर्पण के बाद कहे--ओं अर्चनं सम्पूर्णमस्तु ॥ ब्राह्मण कहे -ओं अस्तु सम्पूर्णम्॥ तब पुनरपि भोजनपात्र ब्राह्मण के आगे की भूमि गोबर से लीपकर आसन सहित उस के चारों ओर भस्म, चूने या जल से चौकोन मण्डल बनावे। क्षत्रिय त्रिकोण और वैश्य शूद्र गोल। फिर भोजनपात्र धोकर उसके भीतर रख दे। पर, यदि दूसरे की भूमि में श्राद्ध करता हो तो दक्षिण और दक्षिणाग्र मोटकों पर पितृतीर्थ से थोड़ासा घृत मिश्रित अन्न डालदे ओं इदमन्नमेतद् भूस्वामिपितृभ्यो नमः ॥ फिर गर्म अन्न लेकर परोसने के वर्त्तन में घी डालकर दोनों हाथों से पिता का ध्यान कर परोसे और तीन दोने में अलग अलग घी, जल और साग तरकारी आदि परोसकर अन्न पर घी और मधु भी डाल दे। अनन्तर भोजनपात्र को बायें हाथ से छूकर और बायां घुटना टेक कर दहिने हाथसे जल लेकर अन्न पर और उसके चारों ओर गिरावे ओं सत्यन्त्वर्त्तेनपरिषिञ्चामि ॥ और तिल भी चारों ओर छींटे-ओं अपहता असुरारक्षांसि वेदिषदः ॥ फिर दहिने हाथ को भोजनपात्र पर औंध उसके ऊपर बायां औंध कर पढ़े-ओं पृथि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वीते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहो-
मि स्वाहा ॥ तब ब्राह्मण का दहिना अंगूठा और अपात्रक में अप-
नाहीं उस अन्न में डुबोकर मंत्र पढ़े-ओं विष्णो कव्यं रक्षस्व ॥
और-ओं इदमन्नम्, इमा आपः, इदमाज्यम्, इदं हविः-
यह कहकर बायें हाथ से पात्र को पकड़कर दहिने हाथ में मोटक
तिल जल लेकर संकल्प करे-ॐ अद्याकमुगोत्र पितः अमुकश-
र्मन् इदमन्नं सोपस्करं परिविष्टं परिवेक्ष्यमाणं च तुभ्यं
स्वधा ॥ और कुशादि उसके सामने वामभाग में रखकर-ॐ अ-
मन्त्रहीनं क्रियाहीनं विधिहीनंच यद्भवेत्, तत्सर्वमच्छिद्र-
मस्तु-यह प्रार्थना करके, पूर्वापोशान (आचमन) के लिये ब्राह्मण
के हाथ में या कुशपर जल देकर और-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितु-
र्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्-को
तीन बार जप कर-ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्ध-
वः । माध्वीर्नः संत्वौषधीः ॥१॥ मधुनक्तमुतो षसो (साम-
वेदी 'षसि') मधुमत्पार्थिव ँ रजः । मधु द्यौरस्तु नः
पिता ॥ २ ॥ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ अस्तु सूर्यः ।
माध्वीर्गावो भवन्तु नः-इसे भी तीन बार पढ़कर-ॐ मधु-
मधु मधु-पढ़े और कहे कि-ॐ यथासुखं जुषस्व॥ फिर जब
वे आचमन करने लगें तो स्वयं पढ़े-ॐ अमृतोपस्तरणमसि । और
वे भी इसे कहकर ही आचमन करें । फिर-ॐ प्राणाय स्वाहा ॥
ॐ अपानाय स्वाहा ॥ ओं व्यानाय स्वाहा ॥
ॐ समानाय स्वाहा ॥ ॐ उदानाय स्वाहा- पढ़े और
वे भी साथ ही एक एक पढ़कर पांच प्राणाहुतियां करें । प्राणाहुति
के लिये नमक रहित अन्न थोड़ा थोड़ा पांच बार इन्हीं मंत्रों से मुंह में
डालते हैं । और जब वे भोजन करने लगें तोउनसे कहे कि-ॐ गाय-
त्र्यादीनभिश्रावयिष्ये । वे कहें-ॐ अभिश्रावय । तब पूर्वोक्त

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

गायत्री, मधुवाता और मधु मधु मधु तीन बार दोनों पढ़कर साथ वेदी पितृसंहिता और मधुच्छन्दसी भी पढ़े और यजुर्वेदी साथ होकर रक्षोघ्नी पढ़के तिल छींटे और पितृमंत्र, अप्रतिरथ, पुरुषसूक्त, हविःस्तोत्र, याज्ञवल्क्यगाथा, सप्तार्चिस्तोत्र और रुचिस्तव आदि को पढ़े। यह सभी आगे ग्रन्थ में हैं। भोजन के बाद भोजन के निकट ही दक्षिणाग्र मोटक डालकर एवं अपसव्यादि होकर पितृतीर्थ से आगे के श्लोक से उन पर अन्न छींटे-ॐ अग्निदग्धाश्च ये जीवा वा येप्यदग्धाः कुलेमम । भूमौ दत्तेन तृप्यन्तु तृप्ता यान्तु परां गतिम् ॥ फिर सव्य हो हाथ धो आचमन करके हरि स्मरण करे, उस ब्राह्मण को या कुश पर ही उत्तरापोशानार्थ जल दे और फिर उसी तरह गायत्री, मधुवाता और मधु मधु मधु कहे। तब आचमन करे-ॐ अमृतस्यापिधानमसि ॥ यह मंत्र आचमन के समय वह ब्राह्मण और यजमान दोनों पढ़ें। फिर ब्राह्मणसे पूछे-ॐ स्वादितम् ? ब्राह्मण का उत्तर-ॐ सुस्वादितम्। फिर पूछे-ॐ अन्य शेषैः किं क्रियताम् ? ब्राह्मण उत्तर दे-ॐ इष्टैः सह भुज्यताम् ॥ फिर कहे-ॐ पिंडमहं करिष्ये ॥ वह कहे-ॐ कुरुष्व तब भोजनपात्र से एक हाथ या बांह भर उत्तर की भूमि को पोंछ उस पर चौकोना मण्डल जलादि से बनावे और बालू से दक्षिण चौकोनी एक हाथ लम्बी चौड़ी तथा चार अंगुल ऊंची वेदी बनावे उस पर जल छींटे। फिर बायें हाथ से पिञ्जूली लेकर उसे दक्षिण हाथ से भी पकड़े और वेदी के बीच में उत्तरसे दक्षिण एक बित्ते रेखा पिंजूली की जड़ से खींचकर पिंजूली उत्तर ओर रख दे। रेखा खींचने का मंत्र-प्रजापतिः पितरो रेखोल्लेखने विनियोगः ॐ अपहता असुरारक्षाꣳसि वेदिषदः ॥ पिंजूली रखकर जल छूवे। फिर सामवेदी नहीं, केवल यजुर्वेदी जलती लकड़ी या जलते तृण (उल्मुक) लेकर उस रेखा पर उत्तर से दक्षिण घुमावे-ॐ ये रूपाणि प्रतिमुञ्चमाना असुराः सन्तः स्वधया चरन्ति पुरापुरोनिपुरो ये भरन्त्यग्निष्टांल्लोकात्प्रणुदात्यस्मात्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

और उस उल्मुक को दक्षिण ओर रख दे । फिर जड़ के पास तोड़े हुये तीन मोटक उस रेखा पर पितृतीर्थ से दक्षिणाग्र रख दे । यहां सामवेदियों की एक पद्धति में लिखा है कि पहले कुश रखकर उन्हीं पर रेखा खींचे । इसके बाद सव्य होकर–ओं देवताभ्यः० इत्यादि श्लोक तीनबार पढ़े और अपसव्य होकर एक पात्र में अवनेजन के लिये जल रख उसमें तिल चन्दन और पुष्प डालदे और वह पात्र तथा मोटक तिलादि लेकर पढ़े–(यजुर्वेदी)–ॐ अद्यामुकगोत्रपितः अमुकशर्मन् पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ते स्वधा । (सामवेदी)–ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन् पिंडस्थाने अत्रावनेनिक्ष्व ये चात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा ॥ और वेदी पर कुश के बीच में ही पितृतीर्थ से अवनेजन दे कर शेष जल के सहित पात्र आगे ही रख ले । तब जल छूकर सभी अन्नों में से थोड़ा थोड़ा लेकर उसमें शक्कर, घी, तिल और मधु मिला कर बिल्व जैसा पिंड बनावे और ऊपर से घी, मधु लगाकर पात्र में रख दे । फिर दहिने हाथ में पिंड और मोटक तिल जल रख ले और बायें हाथ को उसमें लगा कर मंत्र पढ़े–(यजुर्वेदी)–ओं अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन् एष ते पिंडः स्वधा । (सामवेदी)–ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन्नेष ते पिंडो येचात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मै ते स्वधा ॥ और पिंड पितृतीर्थ से वेदी के कुशों पर अवनेजन की जगह पर रख दे और–ओं लेपभागभुजस्तृप्यन्तु–कह कर दहिने हाथ को उन कुशों की जड़ में पोंछ कर सव्य होके हाथ धोकर आचमन करके विष्णुस्मरण करे । फिर अपसव्यादि करके पढ़े–प्रजापतिर्यजुः पिता देवता जपे विनियोगः । ॐ अत्र पितर्मादयस्व यथाभागमावृषायस्व ॥ फिर बाईं ओर से घूमकर उत्तरमुख हो प्रसन्न मनसे श्वांस रोककर और फिर उसी ओर से लौटकर दक्षिणमुख होके पढ़े–प्रजापतिर्यजुः पिता देवता जपे विनियोगः । ॐ अमीमद-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

त पितायथाभागमावृषायिष्ट॥ तब अवनेजन के शेष जल से या पिंडपात्र धोकर ही प्रत्यवनेजन दे। एकाध सामवेदी पद्धति में प्रत्यवनेजन देकर ही 'ॐ अत्रपितर्मादयस्व' आदि जपने को लिखा है। प्रत्यवनेजन का जल और मोटकादि हाथ में लेकर पढ़े-(यजुर्वेदी) ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन् पिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व ते स्वधा॥ (सामवेदी)-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन् पिंडे अत्र प्रत्यवनेनिक्ष्व येचात्र त्वामनु याँश्च त्वमनु तस्मैते स्वधा ॥ और पिंड पर पितृतीर्थ से वह जल गिरा दे। फिर पूर्वमुख सव्य हो नीवी खोलकर आचमन करे और दक्षिणमुख अपसव्य होकर हाथ जोड़े हुए पढ़े-(यजुर्वेदी)-ॐ नमस्ते पितारसाय नमस्ते पितः शोषाय नमस्ते पितर्जीवाय नमस्ते पितः स्वधायै। नमस्ते पितर्घोराय नमस्ते पितर्मन्यवे नमस्ते पितः पितर्नमस्ते गृहान्नः पितर्देहि सदस्ते पितर्देष्म ॥ (सामवेदी)-प्रजापतिरुष्णिक् पिता जं विनियोगः। ॐ नमस्ते पितः पितर्नमस्ते॥ स्त्री को देखकर पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पिता पत्न्यवेक्षणे विनियोगः ॐ गृहान्नः पितर्देहि ॥ फिर पिंड को देखकर पढ़े-प्रजापतिर्यजुः पिता पिंडावेक्षणे विनियोगः। ॐ सदस्ते पितर्देष्म ॥ फिर सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों हीं तीन सूत, उन पचास से अधिक अवस्था के यजमान के हृदय के रोम धोकर रख में रक्खें और मोटकादि लेकर संकल्प करें-(यजुर्वेदी)-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्मन्नेतत्तेवासः स्वधा ॥ (सामवेदी)-ॐ अद्यामुकगोत्र पितः अमुकशर्म्मन्नेतत्तेवासः येचात्र त्वामनु यांश्च त्वमनु तस्मैतेस्वधा॥ और पितृतीर्थ से पिंड पर उसे रख दें। फिर जल छूकर चुपचाप पिंडपर चन्दन पुष्प, धूप, दीप, पान, दक्षिणादि चढ़ावे। इसे ही पिंड की पूजा कहते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

है। फिर पिंड से बचे अन्न को पिंड के पास छींट दे। तब ब्राह्मण को हाथ मुंह धोने के लिये जल दे, स्वयं भी हाथ धोकर आचमन करे और अपसव्य हो कर ब्राह्मण से कहे कि-ॐ सुसंप्रोक्षितमस्तु। और उसके-ॐ अस्तु सुसंप्रोक्षितम्-कहने पर भोजन की भूमि के आगे जल गिरा दे। फिर उस ब्राह्मण के हाथ में जल, पुष्प, और जौ (अक्षत) दे। हर बार पहला वाक्य यजमान का और दूसरा ब्राह्मण का है। यदि ब्राह्मण न हो तो स्वयं ही दोनों बोलता जावे और कुश पर ही जलादि गिरावे-(१) (जल)-ॐ शिवा आपः सन्तु ॥ ॐ सन्तुः शिवा आपः ॥ (२) फूल-ॐ सौमनस्यमस्तु ॥ ॐ अस्तुसौमनस्यम् ॥ (३) अक्षत, जौ या तिल-ओं अक्षतञ्चारिष्टमस्तु। ओं अस्त्वक्षतं चारिष्टम् ॥ अपसव्यादि करके एक पात्र में कुश जल तिल रख उसे हाथ में लेकर लोटकादि ले और संकल्प पढ़े-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य पितुरमुकशर्मणो वार्षिकैकोद्दिष्टश्राद्धे दत्तैतदन्नपानादिकमुपतिष्ठताम्॥ और ब्राह्मण के हाथ में और अभाव में कुश पर ही वह जल पितृतीर्थ से गिरा दे। ब्राह्मण कहे-ओं तथास्तु॥ फिर पूर्वमुख सव्य होकर दक्षिण दिशा की ओर देखता हुआ आशीर्वाद मांगे। प्रत्येक वार एक वाक्य यजमान का और दूसरा ब्राह्मण का है। (सामवेदी, यजुर्वेदी दोनों)-(१) ओं अघोरः पिताऽस्तु। ओं अस्त्वघोरः पिता। (२) ओं गोत्रन्नो वर्द्धताम्। ओं वर्द्धतां वो गोत्रम्। इसके बाद केवल यजुर्वेदी ही कहे। सामवेदी इन वाक्यों को दक्षिणा दान के बाद कहेगा। (३) ओं दातारोनोऽभिवर्द्धन्ताम्। ओं वर्द्धन्तां वो दातारः। (४) ओं वेदाश्च नोऽभिवर्द्धन्ताम्। ओं अभिवर्द्धन्ताम् वो वेदाः। (५) ओं सन्ततिश्चनोऽभिवर्द्धताम्। ओं अभिवर्द्धतां वः सन्ततिः। (६) ओं श्रद्धा च मा नोव्यगमत्। ओं मा वोव्यगत् श्रद्धा। (७) ओं बहुदेयंचनोऽस्तु।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ओं अस्तुवो बहुदेयम्। (८) ओं अन्नं च नो बहु भवे
त्। ओं भवतु वो बह्वन्नम्। (९) ओं अतिथींश्च लभे
महि। ओं लभध्वमतिथीन्। (१०) ओं याचितारश्च भ
सन्तु। ओं सन्तु वो याचितारः। (११) ओं माचयाचिष्ट
कञ्चन। ओं मा कञ्चन याचध्वम्। (१२) ओं पत्र
सत्या आशिष सन्तु। ओं सन्त्वेताः सत्या आशिषः

इसके बाद पिता की बगल में औंधे पात्र के ऊपर का या दूसरा
पवित्र और कुश पिंड पर दक्षिणाग्र रखकर उस औंधे पात्र को उ
कर उसी से या दूसरे पात्र से ही पिंड पर जल गिरावे। पहले पवि
को पिंड पर रखकर ब्राह्मण से कहे-ओं स्वधांवाचयिष्ये
ब्राह्मण का उत्तर-ओं वाच्यताम्। फिर कहे-ओं पित्रे स्व
च्यताम्। ब्राह्मण उत्तर दे कि-ओं अस्तुस्वधा। तब उस पा
में तिल जल लेकर पिंड के ऊपर के पवित्र सहित कुशों पर दक्षि
जलधारा दक्षिणमुख अपसव्य होकर इन मंत्रों से गिरावे-
ऊर्जं वहन्तीरमृतं घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम्। स्वधा
तर्पयत मे पितरम्॥ फिर पिंड और पिंडवाला पात्र जरासा
कर दक्षिणा दे। बहुत लोग यहां परःही अर्घपात्र को सीधा करते
हाथ में भरसक चांदी धोकर, मोटक तिल जलादि के साथ ले
संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य पितुरमुकशर्मणः
तैतत्सांवत्सरिकैकोद्दिष्टश्राद्धप्रतिष्ठार्थमिमां यथाशक्ति
रजतदक्षिणां चन्द्रदैवतां यथानामगोत्राय ब्राह्मण
तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम॥ और ब्राह्मण-ओं स्वस्ति
कहकर उसे ले। इसके बाद सामवेदी पहले के (३) से (१२) त
आशीर्वाद यहां पढ़े और ब्राह्मण उत्तर देता जावे या अपात्रक में स्व
उत्तर भी देवे। तब दोनों वेदोंवाले कहें-ओं स्वस्ति भवान्ब्रवी
ब्राह्मण कहे-ओं स्वस्ति॥ इसके बाद पिंड को उठाकर धा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रख उसे सूंघ ले और उसके नीचे वाले कुश और उल्मुक को अग्नि में डाल दे। सामवेदी के यहां उल्मुक होता ही नहीं। ब्राह्मण का दहिना हाथ विना अंगूठे के पकड़कर कहे-ओं अभिरम्यताम् ॥ यही विसर्जन है। और हाथ में जलपात्र लेकर हाथ पकड़कर ब्राह्मण को उठा देवे। यदि कुश का ब्राह्मण हो तो ग्रन्थि खोल दे। फिर पहले जहां पांव धोया था वहां उसे ले जाकर उत्तरमुख होके उसके चारों ओर जल फिरावे और मंत्र पढ़े-ओं आमावाजस्य प्रसवो जगम्या देवे द्यावापृथिवी विश्वरूपे(विश्वशंभूः)। आमागन्तां पितरामातरावामा सोमो अमृतत्वेन गम्यात् ॥ और इसे पढ़ते ही ब्राह्मण के पीछे पीछे कम से कम आठ कदम जाकर उसकी प्रदक्षिणा कर प्रणाम करे और वापस आवे। इसे सीमांतगमन कहते हैं। फिर रत्नादीप को बुझाकर सव्य होकर हाथ पांव धोवे, आचमन करके 'ओं देवताभ्यः०' इत्यादि तीन वार पढ़े और कर्म की पूर्तिके लिये-

ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ ॐ विष्णुः ३ ॥-

कहे। फिर पिंड को या तो ब्राह्मण को खिला दे या गौ या बकरे को ही। अथवा अग्नि या जल में ही डाल दे। फिर बलि वैश्वदेव कर्म आगे कही रीतिसे करे। इसके बाद सामवेदी ३५३ पृष्ठोक्त वामदेव्य साम का गान करे और दोनों वेदोंवाले कर्म को ब्रह्मार्पण करें-ओं

ब्रह्मार्पणं ब्रह्महविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणाहुतम् । ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥

अन्तमें अतिथि, ब्राह्मण और बन्धु बान्धवादि के साथ भोजन करके विश्राम करें।

यदि माता का एकोद्दिष्ट करना हो तो जहां जहां 'पितः' है वहां 'मातः' पढ़े। 'पितुः' की जगह 'मातुः'। 'गोत्रस्यपितुः' की जगह 'गोत्रायामातुः'। 'शर्म्मन्' की जगह 'देवी' कहे। इसी तरह यदि 'स्त्री' मरी हो तो 'स्त्रि, स्त्रियाः' क्रमसे 'पितः' 'पितुः' की जगह कहे। शेष सब माता की ही तरह। भाई का हो तो 'भ्रातः, भ्रातुः, पितः, पितुः' की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जगह पढ़े । यदि दूसरे का हो तो इसी तरह संबोधन और पद्धति आदि शब्द पढ़ले और सर्वत्र 'अमुक' की जगह उन उन पदार्थों के नाम बोलता जावे । यह बातें याद रखने की हैं । इति अन्त्येष्टि

(७)

शान्तिसंग्रह ।

कभी कभी प्रतिकूलग्रहों और मूल, ज्येष्ठा आदि नक्षत्रों की शान्ति की आवश्यकता होती है । पञ्चक आदि में मरने से पञ्चकादि शान्ति तथा नारायणबलिकी जरूरत पड़जाती है । गृहप्रवेश और गृहारंभ में वास्तुशान्ति भी हुआ करती है । ऐसी ही और शान्तियां हैं । इसी तरह विष्णु, शिव आदि देवों की प्रतिष्ठा भी हिन्दू धर्म का प्रधान अंग है । कूआं, बावड़ी, तालाब और बागीचे का उत्सर्ग होता है, जिसे प्रतिष्ठा भी कहते हैं । अतएव इस तथा अगले प्रकरण में इन्हीं सबों की पद्धतियां लिखने का विचार है ।

१–ग्रहशान्ति ।

ज्योतिःशास्त्र का सिद्धान्त है कि जिस प्रकार आदमी अपने मार्ग पर चलता है उसी तरह ग्रह भी अपने मार्ग पर, जिसे कक्ष्या कहते हैं, चलते रहते हैं । इसी गमन के सिलसिले में जिन जिन स्थानों से होकर वे गुजरते हैं उनमें कोइ तो आदमी के लिये अच्छे हैं और कोई बुरे । एक ही स्थान किसी आदमी के लिये बुरा होता है और किसी के लिये अच्छा । और उसी स्थान पर जाने से कोई ग्रह अच्छा फल देता है तो कोई बुरा । ग्रहों का अच्छा और बुरापन स्थान पर ही निर्भर है । यद्यपि कुछ ग्रह स्वभावतः क्रूर और कुछ सौम्य या अच्छे माने गये हैं । फिर भी स्थानों की प्रधानता मानी गई है और उसके सामने उनके स्वभाव की क्रूरता या सौम्यता अकिञ्चित्कर है । इसका विशेष विचार 'लग्न और कुण्डली' नामक अन्तिम प्रकरण में मिलेगा । ऐसे अनिष्ट फल देनेवाले ग्रह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

की शान्ति कराई जाती है। जिससे वे ग्रह वसा फल न दे सकें। इसका अभिप्राय यह है कि शान्ति के इन कर्मों से ऐसा पुण्य या अदृष्ट उत्पन्न होता है जो ग्रहों के अनिष्ट का विरोधी होने से उसे रोकता है। जिस प्रकार किसी पाप या दुष्कर्म का प्रायश्चित्त करनेसे उससे उत्पन्न होनेवाला अदृष्ट, पुण्य या धर्म पाप का विरोधी होनेसे उसे खराब फल देने नहीं देता। सारांश, उसकी अनिष्टोत्पादिका शक्ति को इस प्रकार नष्ट कर देता है जिस तरह बीज की अंकुरोत्पादिका शक्ति को अग्नि या भाड़ चौपट कर देता है। इसीलिये समय समय पर सभी अच्छे और बुरे ग्रहों की शान्ति की आवश्यकता हो जाया करती है। अतएव हम सभी की शान्ति एक ही साथ लिखदेंगे। आवश्यकतानुसार किसी से कोई समय समय पर काम लेगा। यह भी याद रखना होगा कि सभी पारलौकिक एवं मांगलिक कर्मों में जो ग्रहपूजा पहले कही गई है वह एक प्रकार की ग्रहशान्ति ही है। उस पूजा और इस शान्ति में विशेष अन्तर नहीं है। बात यह है कि वह पूजा साधारणतः सभी ग्रहोंकी प्रसन्नता के लिये मानी जाती है और सभी की शान्तिका काम देती है, न कि किसी विशेष ग्रह की शान्ति का। साथ ही, आहुतियों का भी अन्तर होता है। साधारण पूजा में ग्रहों को आठ आठ आहुतियां, उनकी अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता को चार चार और पञ्चलोकपालों तथा दस दिक्पालों को दो दो आहुतियां देते हैं। मगर विशेष प्रकार की शान्ति में इन आहुतियों की संख्या बढ़ जाती है। यदि दसहजार आहुतियां शान्ति में होती हैं तो ग्रहों को २८-२८ अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता को ८-८ और पञ्चलोकपालादि को ४-४ आहुतियां देते हैं। इस प्रकार एक लाख आहुतियों में क्रम से १०८, २८, और ८ तथा एक करोड़ (कोटि) आहुतियों में १००८, १०८ और २८ आहुतियां क्रम से दी जाती हैं। यह भी स्मरण रहे कि इस प्रकार आहुतियों के देने से जब १० हजार, एकलाख और एक करोड़ की पूर्त्ति नहीं होती है तो उसे ओं भूः स्वाहा आदि पूर्वोक्त (पृ० २०३) चार व्याहृति होमों से पूरा करते हैं। यह एक मत है और दूसरा मत है कि यह बात नहीं है कि शेष आहुतियां हीं व्याहृतियों से हो जाती हैं। किन्तु ग्रहादि की इन आहुतियों की गिनती न कर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चार व्याहृतियोंसे समूची दस हजार, लाख या करोड़ आहुतियां दी जाती हैं। चार व्याहृतियों से अलग अलग चार आहुतियां देते हैं, फिर इसी तरह बार बार देकर अभीष्टसंख्या पूरी करते हैं। यह व्याहृति होम ग्रह से लेकर दिक्पाल तक की आहुतियों के बाद किया जाता है। परन्तु स्मरण रहे कि जब ग्रहों की शान्ति करनी होगी तो ग्रहों की ये ८, २८, १०८ और १००८ आहुतियां और इसी हिसाब से अधिदेवता आदि की भी जो आहुतियां दी जाती हैं उनसे पहले ग्रहों के साधारण होम की आहुतियां अलग ही होती हैं। ग्रहों के १०-१० अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता की ३-३ या १-१ और लोकपलादि की भी १-१ आहुतियों के बाद चार व्याहृतियों से चार आहुतियां देकर फिर ग्रहों की ८ आदि पूर्वोक्त आहुतियां शुरू करते हैं और उन्हें पूरा कर अन्त में शेष आहुतियां महाव्याहृतियों से ही पूरा करते हैं, यदि १० हजार आदि का नियम हो। एवं यदि नियम न हो तो पाछे महाव्याहृतिहोम करने की कोई आवश्यकता नहीं है। साथ ही, एक बात और भी है। यदि किसी एक या दो आदि ग्रहों की शान्ति करनी हो तो महाव्याहृति से संख्या की पूर्त्ति न कर उन्हीं के मंत्र से होम करना चाहिये और वह होम स्विष्टकृत् की आहुति से पहले होगा। परन्तु स्मरण रहे कि जब केवल घी से होम करना होगा तभी यह स्विष्टकृत् अन्त में प्राजापत्य आहुति के बाद होगा। ऐसी दशा में ग्रहादि के होम के बाद ही प्रधान आहुति उसके मंत्र से देंगे जिस ग्रह की शान्ति हो। क्योंकि शान्तिकर्मों में पहले आघार और आज्यभाग की आहुतियां देकर फिर ग्रहादि का होम करलेते हैं और उसके पूरा हो जाने पर महाव्याहृति की तीन, पंचवारुणी, प्राजापत्य और स्विष्टकृत् की आहुतियां अन्त में करते हैं। पर, यदि घी के सिवाय अन्य पदार्थों से होम करना हो तो जो स्विष्टकृत् प्राजापत्य के बाद होता है उसे प्रधान होम के बाद ही करके तब घी से तीन व्याहृति होम पञ्चवारुणी आहुतियां और प्राजापत्य आहुति देंगे। यह भी स्मरण रहे कि ग्रहों और उनकी अधिदेवता आदि की समिधाओं के सिवाय, घी, घी मिश्रित खीर, जौ और घी से मिले काले तिल, तिल मिले चरु (भात) से भी आहुतियां दी जाती हैं और हरेक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पदार्थ से उतनी हीं आहुतियां अलग अलग दी जाने का नियम है। इसका निष्कर्ष यह हुआ कि यदि सूर्य की शान्ति करनी हो और केवल घी से आहुति देनी हो और आहुति की संख्या का नियम न हो तब तो पहले आघार और आज्यभाग की दो दो (चार) आहुतियां देकर फिर ग्रहादि की समिधों से प्रत्येक ग्रह को १०-१० और घी से भी १०-१० आहुतियां देकर अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता को समिध और घी प्रत्येक से ३-३ या १-१ और लोकपाल दिक्पालों को भी उसी तरह समिध और घी से १-१ आहुतियां देकर फिर ग्रहों को घी से ८-८ अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता को ४-४, लोकपालदिक्पालोंको २-२ आहुतियाँ देंगे। इसके बाद सूर्य के मंत्र से कमसे कम १०८ आहुतियां देकर विश्वकर्मा, वास्तुपुरुष और क्षेत्रपाल को एक एक आहुतियां देंगे और अन्त में तीन महाव्याहृति, पंचवारुणी, प्राजापत्य और स्विष्टकृत् की आहुतियां देंगे। बस होम होगया। परन्तु यदि खीर या और भी पदार्थ हों तो उन में प्रत्येक से उतनी हीं आहुतियां दीजावें जितनी घी से दी गई हैं और सूर्य को घी से १०८ आहुतियां देकर खीर या और पदार्थों से भी उतनी हीं दे। तब सभी पदार्थों को मिलाकर स्विष्टकृत् की आहुति दे। अन्त में व्याहृति, पञ्चवारुणी और प्राजापत्य की नौ आहुतियां देकर होम पूरा करे। यदि १० हजार या लाख आदि का नियम हो तो सभी पदार्थों से १०८ की जगह १० हजार या लाख आहुतियां दे और स्विष्टकृत् वगैरः ज्यों के त्यों हीं करे। परन्तु जब १० हजार या लाख आहुतियां होंगी तो ग्रहों को पहले १०-१० आहुतियां देकर और उनकी अधिदेवता आदि को भी ३-३ या १-१ देकर पीछे से ग्रहों को २८-२८, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता को ८-८ और लोकपालदिक्पालों को ४-४ आहुतियां देंगे। यह न भूलना चाहिये। क्योंकि यह पहले ही लिख चुके हैं। परन्तु यदि सभी ग्रहों की शान्ति करनी हो और १० हजार वगैरः आहुतियां हों तो और सब तो ज्यों का त्यों हीं होगा। मगर सूर्य आदि की जो १० हजार आहुतियां देते थे उसकी जगह चार व्याहृतियों से ही देंगे।

ग्रहशान्ति में एक बात और भी ध्यान रखने की है कि सर्वतोभद्र मण्डल बनाकर उसकी पूजा के बाद उस पर भी कलश की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

विधिवत् स्थापना कर के उस पर शान्ति के ग्रह की प्रतिमा सोना, चाँदी या ताँबे की बनाकर रक्खेंगे और प्राणप्रतिष्ठादि कर के उसकी अलग पूजा करेंगे। इसी प्रकार जिस की ही शान्ति करनी हो उसकी ही प्रतिमा बनाकर रक्खी जायगी। इसके सिवाय रुद्र की प्रतिमा भी बनवाकर प्रधान कलश के ऊपर उसी तरह स्थापित करते हैं जैसाकि वृषोत्सर्ग की विधि में लिखा हुआ मिलेगा (५१२)।

यह भी जानना चाहिये कि प्रत्येक ग्रहोंकी शान्ति के लिये उनके वैदिक, तांत्रिक या पौराणिक मंत्रों की अलग अलग जपविधि और उसकी कम से कम संख्या निर्धारित है। जब ग्रहयाग के लिये मण्डपादि बनाकर उसके द्वारपाल और जापकों का वरण करते हैं तो उन्हीं के साथ कुछ और ब्राह्मणों का भी वरण करते हैं जो ग्रहों के स्तोत्रादि का पाठ और जपादि करते हैं। जो लोग वैदिक द्वारपाल और जापकों का वरण नहीं कर सकते उन्हें भी स्तोत्र, मंत्रादि के पाठकों और जप करने वालों का वरण तो करनाहीं होगा। जप की संख्या में विवाद है। कम से कम कितनी जपसंख्या हो, इसके बारे में साधारणतया तो यही लिखा है कि सूर्य का जप ७००० चन्द्रमा ११०००, मंगल का १००००, बुध का ९०००, या १९०००, गुरु का १६०००, १९०००, या ३८०००, शुक्र का १६०००, शनि का २३०००, राहु का १८०००, और केतु का १८००० या १७०००। इसमें भी मत भेद है। पर, व्यर्थ समझ कर हम उसके झगड़े में पड़ना नहीं चाहते। यह भी नियम है कि जप की संख्याकी दशांश (दसवाँ) संख्या आहुतियों की होती है, आहुति का दशांश तर्पण और उसका दशांश मार्जन होता है। दृष्टान्त के लिये यदि सूर्य का ७००० जप होगा तो ७०० बार होम, ७० बार तर्पण और ७ बार मार्जन होगा। ग्रहों के जप या होम के लिये पौराणिक और तांत्रिक मंत्र क्रम से यह हैं—(१) सूर्य—जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्। तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्। (२) चन्द्र—दधिशंखतुषाराभं क्षीरार्णवसमुद्भवम्। नमामि शशिनं सोमं शंभोःमुकुटभूषणम्॥ (३) मंगल—धरणीगर्भसम्भूतं विद्युत्कान्तिसमप्रभम्। कुमारं शक्ति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

हस्तं तं मंगलं प्रणमाम्यहम् ॥ (४) बुध-प्रियंगुकलिका-श्यामं रूपेणाप्रतिमं बुधम् । सौम्यं सौम्यगुणोपेतं तं बुधं प्रणमाम्यहम् ॥ (५) गुरु-देवानां च ऋषीणां च गुरुं काञ्चनसन्निभम् । बुद्धिभूतं त्रिलोकेशं तं नमामि बृहस्पतिम् ॥ (५) शुक्र-हेमकुन्दमृणालाभं दैत्यानां परमं गुरुम् । सर्वशास्त्रप्रवक्तारं भार्गवं प्रणमाम्यहम् ॥ (७) शनि-नीलांजनसमाभासं रविपुत्रं यमात्मजम् । छायामार्त्तण्डसंभूतं तं नमामि शनैश्चरम् ॥ (८) राहु-अर्धकायं महावीर्यं चन्द्रादित्यविमर्दनम् । सिंहिकागर्भसंभूतं तं राहुं प्रणमाम्यहम् ॥ (९) केतु-पलाशपुष्पसंकाशं तारकाग्रहमस्तकम् । रौद्रं रुद्रात्मकं घोरं तं केतुं प्रणमाम्यहम् ॥ इसी क्रम से तांत्रिक मंत्र-(१) ॐ घृणिः सूर्यायनमः ॥ (२) ओं सों सोमायनमः ॥ (३) ॐ अं अंगारकाय नमः ॥ (४) ॐ बुं बुधायनमः ॥ (५) ॐ बृं बृहस्पतये नमः ॥ (६) ॐ शुं शुक्रायनमः ॥ (७) ॐ शं शनैश्चरायनमः ॥ (८) ॐ रां राहवेनमः ॥ (९) ॐ कें केतवेनमः ॥ वैदिक मंत्र तो २०३ पृष्ठोक्त ग्रह होम के प्रकरण में प्रत्येक ग्रह की आहुति के लिये लिखे गये हैं। पौराणिक मंत्र तो सैकड़ों इसी प्रकार के हैं। मगर उनका लिखना बेकार है। ऊपर के हरेक पौराणिक मंत्र की आदि में ॐ कार लगा कर ही जप करना या आहुति देना चाहिये। आहुति देने या जप के समय प्रत्येक मंत्र के अन्त में क्रम से सूर्यायनमः, चन्द्रायनमः, इत्यादि शब्द लगा लेना चाहिये। यही ओं सूर्यायनमः, इत्यादि नाम मंत्र भी ग्रहों के कहे जाते हैं। तांत्रिकों ने हरेक ग्रहों के बीजमंत्र भी अलग अलग माने हैं। वे क्रम से ये हैं-(१) ह्रां ह्रीं ह्रौं सः। (२) श्रां श्रीं श्रौं सः। (३) क्रां क्रीं क्रौं सः। (४) ब्रां ब्रीं ब्रौं सः। (५) ह्रां ह्रीं ह्रौं सः। (६) द्रां द्रीं द्रौं सः। (७) खां खीं खौं

RaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

सः । (८) भ्रां भ्रीं भ्रौं सः । (९) प्रां प्रीं प्रौं सः ॥ इनके जपने का यह नियम है कि ॐ आदि में लगाकर ये केवल भी जपे जाते हैं और इनसे पौराणिक या तांत्रिक मंत्र को संपुटित भी करते हैं। संपुटित या संपुटित करने की यह रीति है कि पहले इनको पढ़कर उसके पूर्वोक्त पौराणिक आदि मंत्र पढ़ते हैं और उनके बाद फिर इन्हीं बीज मंत्रों को उलटकर पढ़ते हैं। अर्थात् अन्त के अक्षर आदि में देकर उसके पहलेवाले क्रमशः उसके बाद और शुरू में ॐ कार देते हैं और अन्त में नाम मंत्र। जैसे सूर्य के पौराणिक मंत्र का शुरू के बीज मंत्र से संपुटित करने में ऐसा मंत्र हो जायगा-ॐ हां हीं हौं सः जपाकुसुमसंकाशं काश्यपेयं महाद्युतिम्। तमोऽरिं सर्वपापघ्नं प्रणतोऽस्मि दिवाकरम्। ॐ सः हौं हीं हां ॐ सूर्याय नमः॥ इसी प्रकार चन्द्र आदि का भी बना लेना चाहिये। इसी प्रकार मृत्युञ्जय का बीज मंत्र 'हीं हौं जूं सः' है और वैदिक मंत्र-'ओं त्र्यम्बकं यजामहे'०(पृ० २०७) है। तर्पण की रीति यह है कि प्रत्येक ग्रहका पौराणिक मंत्र पढ़ उस के आगे 'सूर्यं तर्पयामि' इत्यादि लगा लेना चाहिये। जैसे-ओं जपा० सूर्यं तर्पयामि॥ ओं दधिशंख० चन्द्रं तर्पयामि-इत्यादि। वैदिक मंत्र से तर्पण करने में उन्हीं को पढ़कर करना चाहिये। मार्जन की भी यही रीति है कि उन उन ग्रहों के वैदिक या पौराणिक मंत्र पढ़ कर उनके आगे 'मार्जयामि' लगाते जाना चाहिये। तर्पण के लिये एक पात्र में दूध, चन्दन, फूल और तिल से मिले जलको रख उस में कुश भी डालना चाहिये और जिस तरह देवताओं को तर्पण करते हैं उसी तरह हाथ में कुश लेकर तर्पण करना चाहिये। तर्पण के बाद उसी बचे जल को बारबार पढ़कर सिर पर छिड़कने को मार्जन कहते हैं। तर्पण होम को पूरा करके करते हैं। जब ईशानकोन में प्रणीता को 'ओं दुर्मित्रिया'० इत्यादि पढ़कर औंध देते हैं उसी के बाद तर्पण और तर्पण के बाद मार्जन करते हैं। इस के बाद शेष क्रियायें करके शान्तिकर्म की पूर्त्ति करते हैं।

इसके सिवाय औषधियों का स्नान भी होता है। कुछ औषधियां हैं जिनको जल में भिगोकर या औंटकर उसी जल से स्नान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

करते हैं। अतएव जब ग्रहशान्ति करनी हो तो जिस ग्रहकी शान्ति हो उसकी औषधियां कलश स्थापन के समय सर्वौषधि की जगह या सर्वौषधि के साथही उसी मंत्र से कलश में डाल दे और उसी जल से अन्त में यजमान को अभिषेक करे। साधारणतः सभी ग्रहों की शांति के लिये प्रधान कलश में हीं इन औषधियों को डाल देना चाहिये और उसी से अभिषेक करना उचित है। मगर जब विशेष ग्रहों की शान्ति करनी हो तब सर्वतोभद्र मण्डल पर जो कलश स्थापित होगा उसी पर उन ग्रहों की प्रतिमायें रक्खेंगे और उन की पूजा करेंगे। उस में भी या उसी में उन ग्रहों की औषधियां डाली जावेंगी। साधारणतः सभी ग्रहों की औषधियां ये हैं, (१) सरसों (२) देवदारु (३) हल्दी (४) लोध (५) शरपुंखा या शरफोंका (६) कुट (७) धान का लावा (८) वरियारा (९) लज्जावती या लजालू (१०) नागरमोथा (११) कंगनी और (१२) तीर्थ का जल॥ केवल सूर्यकी-(१) मैनसिल (२) छोटी इलायची (३) जेठीमधु (४) देवदारु (५) पद्मकाठ (६) केसर (७) लाल कमल (८) कनैल (९) मधु (१०) खस। चन्द्रमा की-(१) पञ्चगव्य (२) हाथी का मद (३) कोंहड़े का फूल (४) सफेद कमल (५) सीपी (६) स्फटिक (७) शंख (८) मोती (९) गंगा जल॥ मंगल की-(१) बिल्व का फल (२) वरियारा (३) सिमरिख (४) मौलसरी का पत्ता (५) जटामांसी (६) लाल फूल (७) लाल चन्दन (८) एरंडमेवा (९) कंगनी और (१०) लाल मौलसिरी॥ बुध की-(१) नागकेसर (२) गोरोचन (३) मधु (४) मोती (५) गौ का गोबर (६) नारंगी (७) सोना (८) धतूरे की जड़ (९) जौ (१०) पञ्चगव्य॥ बृहस्पति की-(१) मालती का फूल (२) जेठी मधु या गुडुच (३) नवीन पञ्च पल्लव (४) मदयन्ती का पत्ता (५) सफेद सरसों॥ शुक्रकी-(१) मैनसिल (२) छोटी इलायची (३) केसर (४) नींबू का फल (५) नींबूकी जड़ (६) खस (७) कमल॥ शनिकी-(१) काला तिल (२) लोध (३) नागरमोथा (४) काजर (५) धानका लावा (६) लजालू (७) सौंफ (८) वरियारा॥ राहुकी-(१) कस्तूरी (२) हाथी का मद (३) गजपात (४) काला तिल (५) कुश का गर्भ (६) नागरमोथा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

(७) लोध (८) तिल का पत्ता (९) दूब (१०) खस (११) श्रीफल॥ केतुकी-(१) अजमोदा (२) तेजपात (३) तिलका पत्ता (४) हाथी का मद (५) कस्तूरी (६) कुश का गर्भ (७) नागर मोथा (८) लोध (९) गुडुच (१०) हिंगुवा (११) तिल।

ग्रहोंकी शान्ति में जो दक्षिणा दी जाती है उसका यही नियम है कि जिस रंगका जो ग्रह हो उसी रंग के पदार्थ दक्षिणा में दिये जाते चांदी सोना, पीतल, ताम्बा और लोहा आदि। इनके सिवाय अलग अलग दान के अन्यान्य पदार्थ भी माने गये हैं। सूर्य के लिये (१) हीरा (२) गेहूं (३) गुड़ (४) सवत्सा गौ (५) कमल का फूल (६) नवीनगृह (७) लाल चन्दन (८) लाल वस्त्र (९) सोना (१०) ताम्बा (११) केसर (१२) मूंगा॥ चन्द्रमा के लिये-(१) कांसे के बर्त्तन (२) सफेद चावल (३) श्वेत वस्त्र (४) श्वेत चन्दन (५) श्वेत पुष्प (६) चीनी (७) चांदी (८) बैल (९) घी (१०) शंख (११) दही (१२) मोती (१३) कपूर॥ मंगल के लिये (१) मूंगा, (२) भूमि (३) मसूर की दाल (४) गेहूँ (५) लाल बैल (६) गुड़ (७) लाल चन्दन (८) लाल वस्त्र (९) लाल फूल (१०) सोना (११) तांबा (१२) केसर (१३) कस्तूरी॥ बुध के लिये--(१) कांसे का वर्तन, (२) हरा वस्त्र (३) हाथी का दांत (४) घी (५) मूंग (६) पन्ना (७) सोना (८) सभी फूल (९) रत्न (१०) कपूर (११) शस्त्र (१२) अनेक रंग (१३) षट्रस भोजन॥ गुरु के लिये--(१) पीला अन्न (२) वस्त्र (३) पुष्प (४) सोना (५) पीला फल (६) पुखराज (७) हल्दी (८) घोड़ा (९) पुस्तक (१०) मधु (११) नमक (१२) शक्कर (१३) भूमि (१४) छाता॥ शुक्र के लिये-(१) सफेद फूल (२) वस्त्र (३) चन्दन (४) चावल, (५) घोड़ा (६) बहु रंगा वस्त्र (७) चांदी (८) हीरा (९) घी (१०) सोना (११) दही (१२) सुगन्ध पदार्थ (१३) मिश्री (१४) शक्कर (१५) गौ (१६) भूमि॥ शनैश्चर के लिये-(१) नीलम (२) काले तिल (३) उड़द (४) तेल (५) काला वस्त्र (६) कुलथी (७) लोहा (८) भैंस (९) काली गौ (१०) काला फूल (११) जूता (१२) कस्तूरी (१३) सोना॥ राहु के लिये-(१) उड़द (२) सोना (३) हाथी (४) काला खद्दर (५) काला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

(६) तलवार (७) तिल (८) तेल (९) लोहा (१०) सूप (११) कम्बल (१२) तिल सहित ताम्रपात्र (१३) घोड़ा (१४) रत्न ॥ केतु के लिये—(१) उड़द (२) कंबल (३) कस्तूरी (४) काला फूल (५) तिल (६) तेल (७) रत्न (८) सोना (९) लोहा (१०) बकरा (११) शस्त्र (१२) सप्तधान्य। यह आवश्यक नहीं है कि ये सभी वस्तुएं सब कोई हर हालत में ही दे। किन्तु यथाशक्ति इनमें एक, दो या अधिक दे सकता है। सो भी जब विद्या, तप आदि से युक्त सत्पात्र मिलें तभी, न कि आज कलके जैसे निरक्षर भट्टाचार्य पुरोहितों को। इन्हें तो कानी कौड़ी भी न दे। जब कभी सत्पात्र मिल जावे या दान के इन पदार्थों का दुरुपयोग न होकर सदुपयोग होने की दृढ़ आशा हो, तभी इनमें से यथासंभव कुछ या सभी का दान कर सकता है। यदि सामर्थ्य के बाहर देगा या सामर्थ्य रहने पर भी निरक्षरों और दुराचारियों को देगा तो उस दान का विपरीतही फल होगा। यह बात कभी भूलने की नहीं है।—

यजमान प्रथम प्रकरणोक्त रीति से मण्डप या छाया बनाकर एवं उस में सर्वतोभद्र की प्रधान वेदी के सिवाय अन्यान्य ग्रहादि की वेदियां और कुण्ड या होम की वेदी वगैरः बनाकर विधिवत् उसको सजादे। फिर ग्रह शान्ति के समय प्रातः काल नित्यकर्मादि के बाद इस क्रिया में लगजावे। भरसक मण्डपादि की पूजा और उसके भीतर कलशादि स्थापन, दिक्पालादि की पूजा एक दिन पहलेही कर ले और सभी सामग्री का सम्पादन कर डाले। इस क्रिया का नाम अधिवासन है। यदि एक दिन पहले न होसके तो उसी दिन बहुत सबेरे नित्य क्रिया से निवृत्त हो ७६ पृष्ठोक्त रीति से मण्डप की पूजा आदि करे और सभी देवताओंकी स्थापना वगैरः कर डाले। पहले आसन पर पूर्वमुख बैठे और कर्मदीप जला उसकी पूजा करके उसे पूर्वमुख रख कर्मपात्र की स्थापना ७६ पृष्ठोक्त रीति से करे। फिर शान्तिपाठ और 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इत्यादि का पाठ ७७–३८७ पृष्ठोक्त रीति से करके संकल्प करे—

ॐ अद्यामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकग्रहारिष्टनिवारणाय शान्तिं करिष्ये तदर्थं मण्डपतदीयदेवतानां स्थापनपूजनमारभ्य ग्रहादिदेवतापूजनान्तं कर्मजातं

RaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

करिष्ये ॥ फिर विधिवत् ७६ आदि पृष्ठो में कही रीति से मण्डप की स्थापना और पूजा आदि के लिये पहले आचार्य का वरण ७४ पृष्ठोक्त रीति से करे । और फिर मण्डप की स्थापना और पूजा से लेकर लोकपालदिक्पाल और क्षेत्रपाल तक की पूजा ७७ आदि पृष्ठोक्त रीति से कर डाले । विशेषता यही होगी कि यदि चारों वेदों के जापकों का वरण न करसके तो भी ग्रहों के स्तोत्रमंत्रादि के जप और पाठ के लिये आवश्यकतानुसार योग्य ब्राह्मणों का वरण कर ले । वरण की रीति वही होगी जो जापकों या द्वारपालों की है । केवल अन्तर यही होगा कि संकल्प वाक्य में 'अमुकग्रहस्तोत्रमंत्रादिजपार्थं' यह शब्द 'अमुक कर्म कर्तुं' की जगह पढ़ना होगा । इसी प्रकार आहुति के पदार्थों और उसकी संख्या के अनुसार ऋत्विक वरण किये जायंगे । ताकि सभी वस्तुओं की आहुतियां एकही साथ अथवा एक एक की कई आहुतियां एकही साथ पड़ने से शीघ्र होम पूरा होजावे । वरण की रीति वही होगी । केवल संकल्प वाक्यों में 'ऋत्विक्कर्म कर्तुं' यह पढ़ना होगा । पूजन तो सभी ग्रहों और देवताओं का बताही चुके हैं । हां यदि रुद्र की प्रतिमा स्थापित कर विशेष पूजा करनी हो और ऐसा करने को लिखा भी है तो प्रधान कलश की स्थापना कर उसी पर ५१२ पृष्ठोक्त वृषोत्सर्ग की रीति से तांबे या सोने आदि की रुद्र की मूर्ति अग्न्युत्तारण पूर्वक रख उसकी प्रतिष्ठा, पूजा आदि वहीं लिखी विधि के अनुसार करे । इसी प्रकार सर्वतोभद्र के मण्डल के देवताओं की पूजा के बाद वहां भी विधिवत् कलश की स्थापना १४५ पृष्ठोक्त रीति से करके उसमें उसग्रह की औषधि डाले। जिस ग्रह की शान्ति करनी हो उसकी मूर्ति सोने, चांदी, तांबे आदि की बनवाकर और, भरसक उस ग्रह का जो वर्ण हो उसी रंग के धातु की बनवा कर उस पर रख उसी प्रकार से प्राणप्रतिष्ठा और पूजा करे जैसे रुद्र की पूजा कीगई है । विशेषता यही होगी कि पूजा का मंत्र जो 'नमस्तेरुद्र०' इत्यादि है उसकी ही जगह होमप्रकरणोक्त ग्रहों के वैदिक या पूर्वोक्त पौराणिक मंत्रों से पूजा की जायगी और यह पूजा विधिवत् षोडशोपचार से होगी । इसके बाद कुशकण्डिका की समूची क्रियायें १८५ पृष्ठोक्त रीति से कर लेनी होगी । यह स्मरण रहे कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

यदि केवल घी से होम करना हो तो कोई बात ही नहीं हैं । उसी में थोड़ासा तिल मिला देना होगा । मगर यदि घी के सिवाय खीर, घृत मिश्रित तिल और तिल युक्त भात (कृसर) से करना हो या इन में घी के सिवाय केवल खीर या कृसर या तिलों से ही करनाहो तो कुश-कण्डिका के समय घृत के बाद उनके पकाने की सामग्री आदि भी रखनी होगी और तिल आदि भी रखने होंगे, न कि केवल उन्हीं पदार्थों को रखकर इति कर देंगे, जिनका वर्णन १९२ पृष्ठ में है । फिर घी को गरम करने के साथही खीर और कृसर के चावलों को भी तीन बार धोकर पकाना चाहिये और घी को उतार करही उन्हें उतारना चाहिये । उतार कर रखने के समय भी घी से उत्तरही वे क्रमशःएक के बाद दूसरे पूर्वाग्र कुशों पर यजमान के आगे या उत्तर ओर रक्खे जायंगे । होम से पहले की क्रियायें करके सब कुछ ठीक कर ले । अग्नि स्थापना और पूजा के समय वरदनामक अग्नि की स्थापना करे । क्योंकि शान्ति कर्म में वरदनाम कीही अग्नि होती है । यदि स्थापना और पूजा के समय ऐसा न भी कर सके तो आहुति देने के समय वरद नाम का ध्यान कर लेना चाहिये, जैसा कि पहले कह चुके हैं ।

पहले १९४ पृष्ठोक्त आघार की दो और आज्यभाग की दो ये चार आहुतियां देकर उनका संस्रव प्रोक्षणीपात्र में रखताजावे । साथही, ब्रह्मा का अन्वारंभ भी रक्खे । फिर अन्वारंभ और संस्रव छोड़कर पहले समूचे होम को, जो शान्ति के सम्बन्ध में किया जायगा, पूरा करडाले । और अन्त में सभी खीर और तिल आदि होम के पदार्थों को मिलाकर स्विष्टकृत् की आहुति दे डाले । तब १९४पृष्ठोक्त तीन महा-व्याहृतियों, पञ्च वारुणी और प्रजापति की आहुतियां दे । हां, यदि घी के सिवाय और कुछ होम के लिये न हो तो स्विष्टकृत् की आहुति अन्त मेंही प्रजापति की आहुति के बाद ही दे । यह भी याद रहे कि चाहे और कुछ रहे या नहीं, घी के सिवाय ग्रहों और अधिदेवता आदि की समिधाओं का होम तो घी से पहले होगाही । समिधाओं का विचार २०४ पृष्ठ में किया जा चुका है । आघार, आज्यभाग और व्याहृति आदि के होमों के बीच में जो होम होंगे उनका विचार पहले कर चुके हैं, सो भी इसी प्रकरण में । उसका निचोड़ यह है कि पहले ग्रहों की समिधाओं की दस दस आहुतियां, अधिदेवता प्रत्य-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

धिदेवता की तीन तीन और लोकपाल, दिक्पालों की १-१ देकर फिर घी से इसी तरह दे । अनंतर समिधा, घी और खीर आदि से साधारणतया ८-८ आहुतियां ग्रहों को, ४-४ अधिदेवता, प्रत्यधिदेवताओं को और दो दो लोकपाक दिक्पालों को देकर फिर जिसकी शान्ति करनी हो उसकी कम से कम १०८ आहुतियां दे और अन्त में विश्वकर्मा, वास्तुपुरुष और क्षेत्रपाल को आहुति देकर सब पदार्थों को एक में मिलाकर--ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते न मम-इस मंत्र से स्विष्टकृत् की आहुति दे और उसके बाद फिर ब्रह्मा का अन्वारंभ करके तीन महाव्याहृति पञ्चवारुणी और प्रजापति की ये कुल नौ आहुतियां देके संस्रव प्रोक्षणी पात्र में रक्खे । यदि केवल घी हो तो स्विष्टकृत् की पहले दे देकर प्रजापति की आहुति मन सेही मंत्रोच्चारण पूर्वक देकर उसे भी और उसका भी संस्रव प्रोक्षणी में रक्खे । यदि अधिक आहुतियां देनी हों और उनकी संख्या १००००, लाख या करोड़ आदि निश्चित न हो तो वे सभी १०८ की जगह उसी ग्रह के मंत्र से ही दे । परन्तु यदि दसहजार आदि की संख्या निश्चत हो तब तो ८-८ की जगह वह आहुतियां भी २८, १०८ या १०१८ हो जायंगी, जैसाकि पहले लिख चुके हैं । ग्रहों के मंत्र, उनकी अधिदेवता और प्रत्यधिदेवता के भी मंत्र और पञ्चलोकपालों और दस दिक्पालों के मंत्र भी उनके होम के प्रकरण में २०१ पृष्ठ में लिखे हैं । बस उसी क्रम से आहुतियां देते हैं। हां, वहां जो विश्वकर्मा, वास्तुपुरुष (वास्तोष्पति) और क्षेत्रपाल की आहुति दी गई है वह पहले न दी जायगी । किन्तु प्रधानग्रह की जिसकी शान्ति की गई हो, आहुति के बाद ही वे तीनों आहुतियां होंगी । इसके बाद वहीं लिखी रीति के अनुसार बलि देकर संस्रव प्राशन से लेकर शेष क्रिया की पूर्त्ति करेंगे । अथवा होम के बाद संस्रवप्राशन से लेकर प्रणीता को ईशान में औंधने तक की क्रियायें २४३पृष्ठोक्त रीति से करे और प्रधान ग्रह की जितनी आहुति होगी उसका दशांश तर्पण और तर्पण का दशांश मार्जन ६२४ पृष्ठोक्त रीति से करके ग्रहों को तथा अन्यान्य देवताओं को बलि देंगे । यही ठीक है । फिर बलि देने में बड़ा मतभेद है । कोई होम से पहले ही पूजा के बाद ही देते हैं । कोई होम के बाद और कोई दक्षिणा आदि देकर ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अस्तु, बलि देकर ३२२ पृष्ठोक्त रीति से पूर्णाहुति से लेकर अभिषेक, तिलक दान आशीर्वाद और विसर्जन आदि करके यथाशक्ति ब्रह्म-भोजन का संकल्प कर सभी को भोजन करावे और स्वयं भी भोजन कर विश्राम करे। मूर्त्तियां और यज्ञ की अन्यान्य सामग्री आचार्य को तथा अन्यान्य ब्राह्मणों को, जो योग्य और सुपात्र हों, दे डाले। इस प्रकार यद्यपि हमने ग्रहशान्ति की पूर्ण व्यवस्था कर दी है और सभी कर्मों का ठीक ठीक ब्योरा भी बता दिया है। फिर भी नये आदमी को कठिनाई होगी। यदि बार बार लिखते तो ग्रन्थ क्या महाभारत हो जाता। अतएव पहले से ही अभ्यास करके इसकी सभी बातें ठीक कर रखने से काम चलेगा। नहीं तो एक व एक शुरू कर देने से लोग घबड़ा जांयगे और काम रुक जायगा। कर्म काण्ड की कठिनाई का ध्यान रख कर हीं हमें बार बार लिखना पड़ रहा है। विशेष कर देशकी अवनत दशा और हिन्दू जनता की संस्कृतज्ञानशून्यता, अतएव, उसमें वास्तविक कर्मकांड के ज्ञान की निश्शेषता हमें और भी बाध्य किये देती है कि हम बारबार चितावनी दें। साथ ही, यह विषय भी अत्यन्त गहन है। सुतरां, सजग रहना हीं होगा। इति ग्रहशांति।

२—गोमुखप्रसवशान्ति।

ग्रहों की शान्ति के बाद मूल, आश्लेषा, मघा की शान्ति का लिखा जाना आवश्यक है। मगर, इन सभी नक्षत्रशान्तियों में पहले ही गोमुखप्रसवशान्ति करलेते हैं। तब नक्षत्रशान्ति होती है। प्रत्येक नक्षत्रशान्ति का आधार यही है। अर्थात् गोमुखप्रसव शान्ति से ही श्रीगणेश करके पृथक् पृथक् नक्षत्रों की शान्तियां की जाती हैं। जिस दिन नक्षत्रों की शान्ति करनी हो उसी दिन पहले यह कर्म करे। जिस नक्षत्र की शान्ति की जावे उसी नक्षत्र के आने पर, नामकरण के दिन या किसी और शुभ दिन मूल आदि की शान्ति होती है। बारहवें दिन भी करते हैं।

जिस दिन करना हो उस दिन नित्यादि कर्म से निवृत्त होकर घर के ईशान कोन में आसन पर पूर्वमुख बैठे और पवित्र धारण पूर्वक आचमन, प्राणायाम, करके—'ॐ अपवित्र०' इत्यादि से जल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

छिड़ककर सभी वस्तुओं की और शरीर की भी शुद्धि करे। फिर कोई दीपक को जलाकर उसकी भी पूजा करके (पृ० ७९) उसे पूर्व और पूर्व मुख रक्खे। और कर्मपात्र का सम्पादन करके (७६) उसमें जल, चन्दनादि विधिवत् रक्खे। फिर स्वस्तिपाठ और 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' आदि का पाठ करके प्रधान संकल्प करे (पृ० १०८)—ॐ अद्यामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकराशिरमुकस्य शिशोरमुकनक्षत्रोत्पत्तिसूचितारिष्टनिरसनद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीतये गोमुखप्रसवकर्मपूर्वकतन्नक्षत्रशान्तिं करिष्ये। तदर्थमाचार्यवरणपूर्वकमातृपूजादिग्रहपूजनान्तं कर्म करिष्ये॥ इसके बाद ७४ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य का वरण करके पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, आभ्युदयिक श्राद्ध और ग्रहपूजनादि समस्त कर्म प्रथम प्रकरणोक्त रीति से विधिवत् कर डाले। ग्रहों की पूजा या तो ग्रहवेदी ही पर करडाले या प्रधान कलश में हीं करे, जो अग्नि के कुण्ड या वेदी से ईशान कोन में रक्खा है (पृ० १४३)। भरसक वेदी पर ही करे। परन्तु यह कोई अनिवार्य नहीं है। पर, यदि ग्रहों की वेदी न हो तो फिर सर्वतोभद्रादि की पूजा भी आवश्यक न होगी। परन्तु यदि ग्रहवेदी होगी तो सर्वतोभद्र की वेदी पर ही नक्षत्रशान्ति में उस नक्षत्र के देवता की स्थापना करेंगे। यदि सर्वतो भद्र न होगा तो आगे लिखी रीति से ही अन्यत्र उस नक्षत्र के देवता की पूजा करेंगे, अस्तु। फिर आचार्य लीपी हुई भूमिपर सफेद चावल, चूने या किसी और चीज से अष्टदल कमल जरा बड़ासा बनवावे जिस पर आगे लिखा सूप रक्खा जासके। यदि अत्यन्त संक्षिप्त प्रयोग करना हो तो संकल्प के बाद केवल आचार्य वरण और गणेश पूजा ही करले। शेष क्रियायें न करे। फिर उस पर कुछ अधिक धान फैलाकर भरसक उत्तम बांसका एक नया सूप रक्खे, जिसका अग्रभाग पूर्व हो और उस पर लाल खद्दर फैलाकर उसके ऊपर तिल फैला दे और उन्हीं तिलों पर बालक को लाकर पूर्व सिर और पश्चिम पांव करके सुलादे। बालक सहित सूप के चारों ओर लाल सूत लपेटे और उसके निकट

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

गौ लाकर उसका मुख बालक के पास कर के यह ध्यान करे कि इस बालक की उत्पत्ति गौ के मुख से हुई है। फिर ७८ पृष्ठोक्त रीति से बनाये पञ्चगव्य से उस शिशु को स्नान कराने या पञ्चगव्य को उस पर बार बार अभिषेक की तरह छिड़कने में हीं आगे के मन्त्र पढ़ता जावे। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि आगे के मंत्रों को पढ़कर ही पहले गौ के मुख से उत्पत्ति की भावना करके फिर उन्हीं से अभिषेक करे-ॐ विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु। आसिंचतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ॥१॥ गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भंधेहि पृथुष्टुके (सरस्वति)। गर्भन्ते अश्विनौ देवावाधत्तां पुष्करस्रजौ ॥ २ ॥ हिरण्ययी अरणी याभ्यां निर्मन्थतामश्विनौ देवौ। तंतेगर्भं दधामहे (हवामहे) दशमे मासि सूतवे ॥ ३ ॥ फिर-ॐ गवामंगेषु तिष्ठन्ति भुवनानि चतुर्दश। यस्मात्तस्माच्छिवंमेस्यादिहलोके परत्र च-इसे पढ़कर गौ का बायां अथवा सर्वाङ्ग स्पर्श करे और माता को गौ की पीछे की टांग के पास खड़ा कर आचार्य उस बालकको यह मंत्र पढ़कर सूपसे उठाले-ॐ विष्णोः श्रेष्ठेन रूपेणास्यां नार्यां गवीन्याम्। पुमांसं पुत्रानाधेहि दशमे मासि सूतवे॥ और माता को दे डाले। माता उस बालक को गौ के मुख तक लाकर पिताको दे और वह पिता पुनः माता को ही दे। माता उस बालक को नवीन खद्दर या गोद में रख खद्दर ओढ़ा दे। तब पिता उस बालक के मुख का वस्त्र हटाकर उसका मुख देखे और आचार्य पञ्चगव्य से उस बालक का अभिषेक-ओं आपोहिष्ठा० (पृ० ७९) इत्यादि तीन मंत्रों से करे। फिर पिता शिशुके सिर को तीन बार सूंघे और तीनों बार मंत्र पढ़े-ॐ अंगादंगात्संभवसि हृदयादधिजायसे। आत्मावै पुत्रनामासि सजीवशरदः शतम् ॥ तब यदि माता की गोद में न हो तो उसे माता को दे डाले। इसके बाद ब्राह्मणों को-ॐ पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु-कहकर उनसे विधिवत् पुण्याह-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वाचन पुनरपि करवावे । यदि पहले न कराया हो तब तो कोई बात ही नहीं। यदि विशेष रूप से पुण्याहवाचन में कोई दिक्कत हो तो केवल इतना हीं करवावे-यजमान-ॐ भो ब्राह्मणाः पुण्याहं भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मण तीन बार कहें—ॐ पुण्याहम् ३ ॥ यजमान-ॐ भो ब्राह्मणाः कल्याणं भवन्तो ब्रुवन्तु। ब्राह्मण तीनबार-ॐ कल्याणम् ३ ॥ यज०—ॐ भो ब्राह्मणा ऋद्धिं भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मण—ॐ ऋध्यताम् ३ ॥ यजमान-भो ब्राह्मणा स्वस्ति भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मण-ओं आयुष्मते स्वस्ति ३। यज०-भो ब्राह्मणाः श्रीरस्त्विति भवन्तो ब्रुवन्तु । ब्राह्मण-ओं अस्तुश्रीः ३॥ यजमान-ओं अनेन पुण्याहवाचनेन भगवान् रुद्रः प्रीयताम् । ब्राह्मण-ओं तथास्तु ॥ फिर जिस गौ के पास खड़ा किया था भरसक उसे ही या उसे न दे सकने पर गौ के यथाशक्ति निष्क्रयद्रव्य धोकर हाथ में रख ले और कुश तिलादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्येह कृतस्यास्य गोप्रसवाख्यकर्मणः साङ्गतार्थं गामिमां रुद्रदैवतां (गोनिष्क्रयं यथाशक्तिद्रव्यं) आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ और आचार्यको दे दे । संकल्प में गौ देना हो तो 'गामिमां रुद्रदैवतां' पढ़े । निष्क्रय देना हो तो कोष्ठवाला वाक्य पढ़े । इसके बाद यदि पहले केवल गणेश पूजा ही की हो और संक्षेप करने के विचार से और कुछ न किया हो तो भी होम के कुण्ड से ईशानकोण में एक कलश १४२ पृष्ठोक्त रीति से स्थापित कर उसमें वरुण और नव ग्रहों का आवाहन पूजन वहीं लिखी रीति से कर डाले । परन्तु यदि पहले ही पूजा करली गई हो तब भी इसकी आवश्यकता तो है ही फिर भी यह किया हो जावे। परन्तु जिस कलश में वरुण का आवाहन कर के उन की पूजा की गई है उससे उत्तर एक दूसरा कलश गोमुख प्रसव के लिये विशेष रूप से उसी विधि से स्थापित करे और उसमें सर्वौषधि के साथ ही साथ पञ्चगव्य, तिल और पीपल बरगद आदि दूधवाले वृक्षों की छालें या उन्हें उबालकर उसमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

रस भी डाले । फिर विधिवत् कलश की स्थापना करचुकने के बाद ही उसके ऊपर सोने की तीन मूर्त्तियां क्रमसे विष्णु, वरुण और यक्ष्महा की स्थापित करे। परन्तु स्थापन से पहले उनका अग्न्युत्तारण करले, जैसाकि वृषोत्सर्ग प्रकरण में लिखा है। तब उनकी प्रतिष्ठा वहीं लिखी रीति से उसी कलश के ऊपर करे । पहले उन मूर्त्तियों को उस कलश पर इस प्रकार रक्खे कि विष्णु के उत्तर वरुण और उनके उत्तर यक्ष्महा की मूर्त्ति हो। तब पहले विष्णु की मूर्त्ति में उनका आवाहन पुष्पाक्षत लेकर करे-ओं तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीवचक्षुराततम्॥ और फूल अक्षत उस मूर्त्ति पर डालकर दूसरे पुष्पाक्षत हाथ में ले और वरुण का आवाहन करे-ओं तत्त्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः। अहेडमानो वरुणेह बोध्युरुश ँ समान आयुः प्रमोषीः॥ इसी प्रकार यक्ष्महाका-ॐ अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि। यक्ष्मंशीर्षण्यं मास्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामिते॥ और-ओं मनोजूति० इत्यादि मंत्र (पृ० ३७९) पढ़कर और उसके अन्त में-ओं भूर्भुवः स्वः विष्णुवरुणयक्ष्महण इहागच्छन्तु इहतिष्ठंतु सुप्रतिष्ठिता वरदाभवन्तु-इसे पढ़कर उन तीनों मूर्त्तियों पर दूसरे अक्षत और पुष्पों को डालकर उनकी प्रतिष्ठा करे और-ओं भूर्भुवः स्वः विष्ण्वाद्यावाहितदेवताभ्यो नमः-इस मंत्र से उनकी षोडशोपचार या पञ्चोपचार पूजा करके हाथ से उस कलश को स्पर्श कर मंत्र पढ़े-ॐ यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि। मघवन्छग्धि तवतन्न ऊतिभिर्विद्विषो विमृधो जहि॥१॥ त्वं हि राधस्पते राधसोमहः क्षयस्यासिविधतः। तंत्वा-वयं मघवन्निद्र गिर्वणः सुतावंतो हवामहे॥ २॥ इन्द्रः-स्पहुत वृत्रहा परस्यानो वरेण्यः। सनोरक्षिषच्चरमं सम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ध्यमं सपश्चात्पातु नः पुरः ॥ ३ ॥ त्वंनः पश्चादधरादुत्तरात्पुर इन्द्रनिपाहि विश्वतः । आरे अस्मत्कृणुहि दैवं भयमारे हेतीरदेवीः ॥ ४ ॥ अद्याद्या श्वश्श्वइन्द्रश्च स्वपरेचनः । विश्वाचनोजरितॄन् सत्पते अहादिवाक्तंचरक्षिषः ॥ ५ ॥ प्रभंगी शूरोमघवातुवीमघः संमिश्लो वीर्यायकम् । उभाते बाहूवृषणाशतक्रतो नियावज्रं मिमिक्षतुः ॥६॥ इसके बाद पञ्चभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना और कुशकण्डिका पूर्वक घी से आघार और आज्यभाग होम करके तिल, मधु, घी, दही मिलाकर गोप्रसव की प्रधान आहुतियां विष्णु वरुण और यक्ष्महाकी दी जाती हैं । प्रत्येक को, जैसी शक्ति हो, २८-८ या ८-८ दे । और उसके बाद ग्रहादि का होम करके स्विष्टकृत् करके और व्याहृति आदि का होम करते हैं । परन्तु इसी के बाद नक्षत्र की शान्ति भी करनी होगी, उनका होम फिर भी करना हीं होगा और उस समय भी ग्रहहोम करने में विस्तार होगा । अतएव इस क्रिया को यहीं तक करके मूल आदि की शान्ति की पूजा करलेना चाहिये फिर साथ ही होम करना चाहिये । इति गोमुखप्रसवशांति ।

३—मूलशान्ति ।

मूल, आश्लेषा आदि में जन्म लेनेपर कब कैसा दोष मानाजाता है इसका विचार ज्योतिषप्रकरण में अच्छी तरह कियागया है । वहीं देख लेना चाहिये । गोप्रसवशान्ति के बाद मूलशान्ति की क्रियायें करे पूर्वोक्त ६ मंत्रों को कलश स्पर्श कर पढ़ चुकने के बाद रुद्रकलश की स्थापना विष्णु के कलश के उत्तर करे । सारांश, प्रधान कलश और उसके उत्तर विष्णु, वरुण, यक्ष्महा की प्रतिमा वाला कलश तो पहले स्थापित ही होचुका है । उसी के उत्तर उसी रीति से रुद्रकलश स्थापित कियाजावे । पर स्मरण रहे कि यह शान्ति भी मण्डप में या छाया में हीं करे । एतदर्थ पहले दिन या उसी दिन सवेरे विधि वत् मण्डपपूजा करे और आठ या चार ऋत्विक्, द्वारपाल, आचार्य और शान्तिस्तोत्रादिपाठ के करने और मंत्र के जपनेवाले सुयोग्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ब्राह्मणों का वरण करडाले । संकल्प में, जो गोमुखप्रसव प्रकरण में लिखा है, 'अमुकनक्षत्रोत्पत्ति' में अमुक शब्द की जगह 'मूल' शब्द पढ़े । रुद्रकलशस्थापन के लिये पहले स्वस्तिक 卐 का आकार हल्दी, चावल या किसी और ही चीज से बनाकर उस पर धान रख कलश की स्थापना पूर्वोक्त रीति से ही करे। कलश के ऊपर का पूर्णपात्र भरसक ताँबे का हो और उसमें चावल रक्खे । उसमें सोने की रुद्रप्रतिमा अग्न्युत्तारण पूर्वक स्थापित करे और 'ओं मनोजूति० ओं भूर्भुवःस्वःरुद्राय नमः रुद्र सुप्रतिष्ठितो वरदो भव–इस मंत्र से उनकी प्रतिष्ठा और– ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमामृतात् ॐ भूर्भुवः स्वःरुद्रायनमः–इसी मंत्रसे षोडशोपचार पूजा करके जल का स्पर्श कर ले। फिर रुद्रकलश के उत्तर उसी तरह स्वस्तिक या अष्टदल कमल बनाकर उसी पर धान रखके भरसक एक ऐसा कलश स्थापित करे जिसके चारों ओर चार सूराख हों और पांचवां उसका मुख हो । इस पाँच मुखवाले एक ही कलश की, अथवा एक बीचमें और चार उसके चारों ओर इस तरह पांच कलशों की, विधिवत् स्थापना करे । या तो एकही घड़ेके चारों सूराख चारों दिशाओं में रहेंगे या उन सूराखों की जगह चारों दिशाओं में चार दूसरे कलश ही रहेंगे। यदि एकही हो तो उसी के पूर्णपात्र के(चावल से भरा पात्र जो कलश पर रक्खा जाता है उसके) ऊपरी भाग में विष्णुकान्ता, सहदेवी, तुलसी, सतावरी और कुश और इनके अभाव में केवल सतावरी रख उसी पर वरुण की पूजा करे । विष्णुकान्ता आदि औषधियां हैं । यदि पांच कलश हों तो बीचवाले कलश पर ही औषधियां रख वरुणको पूजे । यदि मण्डपकी पूजाकी गई हो और उस समय जापक आदि का वरण हो चुका हो तो रुद्रजापक रुद्र कलश को स्पर्श कर- ॐ नमस्ते रुद्रमन्यव० इत्यादि अध्याय का जप करे। इसका नाम रुद्रैकादशिनी है । यदि ऐसा जापक न हो तो कोई भी होम करनेवाला ऋत्विक् जपे और जप के अन्त में जलस्पर्श करले । इसी तरह पूर्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

द्वार का जापक अप्रतिरथ सूक्त ग्यारह बार जपे और जपने के समय पांच कलशों में पूर्व कलश या पांच मुखवाले कलश का पूर्व छिद्र स्पर्श किये रहे । दक्षिण कलश या छिद्र छूकर 'नमस्ते०' इत्यादि सोलह मंत्रों का शतरुद्रानुवाक दक्षिण द्वार का जापक या कोई ऋत्विक ग्यारह बार जपकर जल स्पर्शकरे। पश्चिम कलश या छिद्र पकड़कर दूसरा जापक या ऋत्विक् 'रक्षोहणम्०' या 'त्वं यविष्ठ दाशुषे०' इत्यादि रक्षा मंत्रों को ग्यारहबारही जपे। उत्तर कलश या छिद्र पकड़कर 'कृणुष्व पाज०' इत्यादि रक्षोघ्न मंत्र ११ बार पढ़े। बीच का कलश या पंचमुखीमें ऊपर का मुख पकड़ त्र्यम्बक मंत्र (पृ०६३) १०८ बार और 'पुनन्तुमां पितर०' इत्यादि नव ऋचाओं का पवमान सूक्त एक बार जपे। सरांश, यदि मण्डप के चारों द्वारों के जापक आदि हों तो वहां, नहीं तो ऋत्विक् लोगही, उन द्वारों की जगह उन उन कलशों या कलश के छिद्रों को पकड़कर पूर्वोक्त जप करें। ये मंत्र आगे लिखे हैं।

उधर जप जारी रहे इधर उन कलशों से उत्तर सफेद चावलों से २४ दलों का बड़ासा कमल बनाया जावे। इसका चित्र अन्त में मिलेगा। कमल पुष्प के बीच में कुछ पीले पीले रेशे और उनके बीच में पीला एक कमलगट्टा रहता है। रेशों का नाम केसर और कमलगट्टे को कर्णिका कहते हैं। यह केसर और कर्णिका लाल चावलों से बनावे। और उन्हीं पर एक कलश विधिवत् स्थापित कर उसमें पूर्वोक्त सतावरी आदि औषधियाँ डाले। सर्वौषधि डालने के समय ही इन्हें भी डाले। कलश स्थापन के बाद उसके ऊपर एक खहर पर अष्टदल कमल का आकार बनाकर रक्खे और उसी की कर्णिका पर मूल नक्षत्र के पति निर्ऋति की प्रतिमा स्थापित करे। यही प्रधान देवता का प्रधान कलश है। निर्ऋति की सोने की प्रतिमा का अन्युत्तारण कर उसे पञ्चामृत से स्नान करावे (५१२), उसे-(१) ॐ यते देवी निर्ऋतिराबबन्ध पाशं ग्रीवास्वविचृत्यम्। तंते विष्याम्यायुषो न मध्यादथैतं पितुमद्धि प्रसूतः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः—इस मंत्र से कलशके ऊपर के कपड़े के अष्टदल कमल की कर्णिका पर स्थापित करे और-ओं मनोजूति० ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः मूलनक्षत्रस्वामिन्निर्ऋत इहागच्छ इह इष्टसुप्रतिष्ठितो वरदो भव–इस मंत्रसे अक्षत पुष्प डालकर उसकी प्रतिष्ठा करे। (२) उसके दहिने सोने की प्रतिमा रख उस पर मूलनक्षत्र के अधिदेव और ज्येष्ठा के पति इन्द्र को-ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्रायनमः इन्द्र इहागच्छइह तिष्ठ–इससे स्थापित करके (३) मूर्त्ति के वामभाग में मूल के प्रत्यधिदेव पूर्वाषाढ़ा के पति जल को स्थापित करे-ॐ भूर्भुवः स्वः जलायनमः जल इच्छागच्छ इहतिष्ठ–इस मंत्र से पहले की ही तरह एक प्रतिमा में। यदि प्रतिमा न बनवा सके तो तीनों मूर्त्तियों की जगह अक्षत या सुपारी आदि में ही स्थापना कर प्रतिष्ठा करे। इसके बाद कलश के चारों ओर जो कमलके पुष्पके २४ पत्ते हैं, उनपर पूर्व से आरंभकर शेष २४ नक्षत्रों की २४ देवताओं की स्थापना करे। जेष्ठा, मूल और पूर्वाषाढ़ा की तीन देवता तो कलश पर ही स्थापित हैं। अब पूर्व में उत्तराषाढ़ा से आरंभ कर क्रमशः अनुराधा तक के २४ नक्षत्रों के २४ देवोंको इसप्रकार स्थापित करे कि २४ पत्रों पर अक्षत या सुपारी रख हाथ में अक्षत और पुष्प ले और पहले-'ओं भूर्भुवः स्वः' लगाकर प्रत्येक नक्षत्रों की देवता का नाम लेकर उसका संबोधन करे और अन्त में 'इहागच्छन्तुइहतिष्ठन्तु' कहे यदि वे अनेक हों और यदि एकही हो तो 'इहागच्छतु इह तिष्ठतु' कहता जावे और अक्षत पुष्प छींटता जावे। क्रम ऐसा है-(४) ओं भूर्भुवः स्वः उत्तराषाढादेवा विश्वेदेवा इहागच्छन्तु इहतिष्ठन्तु। (५) ॐ० धनिष्ठादेवा वसवइहागच्छन्तु इह तिष्ठन्तु। (६) ॐ० श्रवणदेव गोविन्द इहागच्छतु इह तिष्ठतु। (७) ॐ० शतभिषग्देव वरुण इहागच्छतु इह तिष्ठतु। (८) ॐ० पूर्वभाद्रपदादेव अजचरण०। (९) ॐ० उत्तरभाद्रपदादेव अहिर्बुध्न्य०। (१०) ॐ० रेवतीदेव पूषन्०। (११) ॐ० अश्विनीदेवौ दस्रौ इहा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

गच्छताम् इह तिष्ठताम् । (१२) ॐ० भरणीदेव यम इहागच्छतु इह तिष्ठतु । (१३) ॐ० कृत्तिकादेव अग्ने० । (१४) ॐ० रोहिणीदेव ब्रह्मन्० । (१५) ॐ० मृगशिरोदेव चन्द्र० । (१६) ॐ आर्द्रादेव रुद्र० । (१७) ॐ० पुनर्वसुदेव अदिते० । (१८) ॐ० पुष्यदेव गुरो० । (१९) ॐ० आश्लेषादेवाः सर्पा इहागच्छन्तु इहतिष्ठन्तु । (२०) ॐ० मघादेवाः पितर इहागच्छन्तु इहतिष्ठन्तु । (२१) ॐ० पूर्वफाल्गुनीदेव भग इहागच्छतु इहतिष्ठतु । (२२) ॐ० उत्तरफाल्गुनीदेव अर्यमन्० । (२३) ॐ० हस्तदेव रवे० । (२४) ओं० चित्रादेवत्वष्टः० । (२५) ओं० स्वातीदेव वायो० । (२६) ओं० विशाखादेवौ इन्द्राग्नी इहागच्छताम् इहतिष्ठताम् । (२७) ओं अनुराधादेव मित्र इहागच्छतु इहतिष्ठतु ॥ इस तरह स्थापित करके- ओं० मनोजूति० ओं० भूर्भुवः स्वः सर्वे आवाहिता देवाः प्रतिष्ठिता वरदा भवन्तु-मंत्र पढ़कर अक्षत पुष्प एकही साथ सभी पर छींटकर सब की प्रतिष्ठा करे । इसके बाद पहले कलशके ऊपर निर्ऋतिकी षोडशोपचार पूजा-ओं यंते देवी० इत्यादि पूर्वोक्त मंत्र से करे और उसके इधर उधर इन्द्र और जल की पूजा (१) ॐ भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः । (२) ओं भूर्भुवः स्वः जलाय नमः-इन दो मंत्रों से अलग अलग करके शेष देवों की पूजा-ओं भूर्भूवः स्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्यो नमः-इसी मंत्र से एकही बार चौवीसों जगह विधिवत् सभी वस्तुओं से करे और अन्त में सभी को पुष्पाञ्जलि समर्पित करे । निर्ऋतिको विशेष रूप से पूड़ी, नमक मिली खीर और नमक मिला दूध चढ़ावे ।

इसके बाद पञ्चभूसंस्कारपूर्वक वरदनामक अग्नि की स्थापना पूजा आदि से लेकर होम से पूर्व की कुशकण्डिकावाली सभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

क्रियायें १८५ आदि पृष्ठोक्त रीति से कर डाले। अग्नि से उत्तर या पूर्व होम के पदार्थों के रखने में यदि होसके तो पूर्णपात्र के साथ काली गौ, काले तिल, काला बैल, काला खद्दर और सोना दक्षिणा के लिये रक्खे और घीगर्म करने के साथ उसके उत्तर उत्तर क्रम से पायस (खीर या दूधमें पका चावल), चरु (जल में पकाया और बिना मांड़ निकाला भात), कृसर (तिल मिला भात) पकावे और अग्नि से उतार कर घी को रखने के समय उससे उत्तर उत्तर क्रम से इन सबों को उतार कर रक्खे। फिर होम का संकल्प करे-ओं अद्येह सगोमुखप्रसवमूलशान्तिहोमं करिष्ये॥ अनन्तर पहले आचार्य दहिना घुटना टेक के ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर घी से आज्यभाग और आघारकी आहुतियां देकर उनका संस्रव प्रोक्षणीपात्रमें रखता जावे-(१) ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम। (२) ओं इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय नमम। (३) ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये नमम। (४) ओं सोमाय स्वाहा इद ँसोमाय नमम॥ फिर अन्वारंभ छोड़कर तिल, मधु, दही और घी एक में मिलाकर नीचे लिखी आहुतियां दे। यह आहुतियां गोमुखप्रसवशान्ति की हैं। परन्तु इनके देने से पहले पूर्वोक्त रीति से ग्रहों की ८-८, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता की ४-४ और पंचलोकपाल दस दिक्पालों की दो दो आहुतियाँ उनकी समिधा, चरु, घी और तिल से अलग अलग देले। हरेक चीज की अलग अलग आठ आठ आदि आहुतियां दी जायंगी। एतदर्थ यदि चार या आठ ऋत्विक् एकही साथ आहुतियां डालें तो आसानी होगी और काम शीघ्र हो जायगा। फिर गोमुखप्रसवहोम करे। इसकी आहुतियां या तो प्रत्येक मंत्र से २८-२८ दीजावें या ८-८। स्मरण रहे कि अन्य ऋत्विजों के साथ यजमान भी आहुति अवश्य ही दे और हर बार वही त्याग वाक्य बोले, अथवा उसका प्रतिनिधिभूत कर्माचार्य ही बोले। तिल मधु दही और घी मिलाकर आगे ही रख ले और इस प्रकार उस मिश्रित पदार्थ से आहुतियां देता जाय-(१) ॐ तद्विष्णोः परमं पदं सदा पश्यन्ति सूरयः। दिवीव चक्षुराततम् स्वाहा इदं विष्णवे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नमम ॥ (२) ॐ आपो हिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधा-
तन । महे रणाय चक्षसे स्वाहा इदंवरुणाय नमम ।
(३) ॐ योवःशिवतमोरसस्तस्य भाजयतेह नः ।
उशतीरिव मातरः स्वाहा इदं वरुणाय नमम ॥(४) ओंतस्मा
अरंगमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । आपोजनयथा च
नः स्वाहा इदं वरुणाय नमम ॥ (५) ॐ अप्सुमे सोमोअव-
वीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निं च विश्वशम्भुवमापश्च
विश्वभेषर्जीः स्वाहा इदं वरुणाय नमम ॥ यह स्मरण रहे कि
ऊपर जो पांच मंत्र कहे गये हैं इनमें प्रत्येक से ही २८-२८ या ८-८
आहुतियां देनी होंगी । इसी प्रकार आगे भी जानना चाहिये । पर
यह याद रहे कि यदि २८ से शुरू हो तो वहीं रहे और यदि ८ से शुरू
हो तो वहीं रहे । बीच में उलट पुलट न होने पावे । (६) ओं अक्षी-
भ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि । यक्ष्मंशीर्ष-
ण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया विवृहामिते स्वाहा इदं यक्ष्म-
घ्ने नमम ॥ यहां कहीं कहीं 'यक्ष्मणे नमम' लिखा है और
आहुतियां या पहले की पूजा भी वे लोग यक्ष्मा की ही मानते हैं न कि
यक्ष्महा की । (७) ओं ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीक-
साभ्यो अनूक्यात् । यक्ष्मंदोषण्यमंसाभ्यां विवृहामि
स्वाहा इदं यक्ष्मघ्ने नमम ॥ (८) ॐ आन्त्रेभ्यस्तेगुदा-
भ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि । यक्ष्मंमतस्नाभ्यां यक्नः प्ला-
शिभ्यो विवृहामि ते स्वाहा इदं यक्ष्मघ्ने नमम ॥ (९)
ओं ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम्
यक्ष्मंश्रोणिभ्यां भासदाद्भंससो विवृहामि ते स्वाहा इदं
यक्ष्मघ्ने नमम ॥ (१०) ओं मेहनाद्वनं करणाल्लोमभ्य-
स्तेनखेभ्यः । यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं विवृहामि ते
स्वाहा इदं यक्ष्मघ्ने नमम ॥ (११) ॐ अंगादंगाल्लो-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

न्नोलोम्नोजातं पर्वाणि पर्वाणि । यक्ष्मं सर्वस्मादात्मन-स्तमिदं विवृहामि ते स्वाहा इदं यक्ष्मघ्ने नमम ॥ इसके बाद केवल नौ ग्रहों को उनके वैदिक मंत्रों से २०५ पृष्ठोक्त रीति से उसी तिल मिश्रित मधु दही और घी से २८-२८ या ८-८ आहुतियां भी पूर्वोक्तरीति से दे और उनके अधिदेवता आदिको छोड़ दे।

फिर मूलशान्ति के प्रधानदेव निर्ऋति को १०८ आहुतियां आगे लिखे हुये मंत्र से दे। घृतमिली खीर, पलाश या खैर की समिधा, घी और चरु इन चारों में प्रत्येक से १०८ आहुतियां दी जायंगी। या तो चारों की आहुतियां एक ही साथ दे या नहीं तो पहले समिधा की, तब घी, खीर और चरु की। उचित तो यही है कि एक बार एक ही वस्तु की आहुतियां दीजावें। निर्ऋति का मंत्र-(१) ॐ यंते देवी निर्ऋतिराबबन्धपाशंग्रीवास्वविचृत्यम् । तं ते विष्या-म्यायुषोन मध्यादथैतं पितुमद्धिप्रसूतः स्वाहा इदं निर्ऋतये नमम ॥ (१०८ आहुतियां) ॥ फिर आगे के दो मंत्रों में प्रत्येक से २८-२८ आहुतियां उन्हीं चार पदार्थों की पृथक् पृथक् दी जायँ। (२) ओं इन्द्र आसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुरएतु सोमः । देवसेनानामभिभञ्जतीनांजयन्ती-नां मरुतो यन्त्वग्रम् स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ (२८बार) ॥ (३) ओं आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणायचक्षसे स्वाहा इदमद्भ्यो नमम ॥ (२८बार) ॥ इस तरह निर्ऋति, इन्द्र और जल को आहुतियाँ देकर फिर उन्हीं की तरह ८-८ आहुतियाँ केवल घी मिली खीर से शेष २४ नक्षत्रों की प्रत्येक देवताओं को देता जाय। (४) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः स्वाहा इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमम ॥ (५) ओं गोविन्दाय नमः स्वाहा इदं गोविन्दाय नमम ॥ इसी तरह आगे भी 'नमः स्वाहा० इदं नमम' बोलना चाहिये। (६) ओं वसुभ्योनमः स्वाहा इदं वसुभ्यो० ॥ (७) ओं वरु-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

णाय नमः स्वाहा० (८) ओं अजचरणाय नमः० (९) ओं अहिर्बुध्नाय० (१०) ओं पूष्णे० (११) ॐ दस्राभ्यां० (१२) ओं यमाय० (१३) ॐ अग्नये० (१४) ओं धात्रे० (१५) ॐ चन्द्राय० (१६) ॐ शर्वाय० । जल का स्पर्श करे । (१७) ओं अदितये० (१८) ओं बृहस्पतये० (१९) ओं सर्पेभ्यो० (२०) ओं पितृभ्यो० (२१) ओं भगाय नमः० (२२) ओं अर्यम्णे० (२३) ओं सवित्रे० (२४) ॐ त्वष्ट्रे० (२५) ॐ वायवे नमः० (२६) ॐ इन्द्राग्नीभ्यां० (२७) ओं मित्राय नमः स्वाहा इदं मित्राय नमम ॥

नक्षत्र होम के बाद नीचे लिखे १५ मंत्रों में प्रत्येक से कृसर (तिल मिले भात) की ८-८ आहुतियां दे-(१) ओं कृणुष्वपाज प्रसितिं न पृथ्वीं याहिराजे वामवाँइ भेन । तृष्वीमनुप्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्यरक्षसस्तपिष्ठैः स्वाहा इदंरक्षोऽग्नये नमम ॥ (आगे भी यही ' इदं रक्षोघ्नेऽग्नये नमम १४ बार अन्त में बोलता जावे) । (२) ओं तव भ्रमास आशुया पतन्त्यनुस्पृश धृषता शोशुचानः । तपूँष्यग्ने जुह्वा पतंगानसन्दितो विसृज विष्वगुल्काः स्वाहा इदं रक्षो० (३) ओं प्रतिस्पशो विसृज तूर्णितमो भवापायुर्विदो अस्या अदब्धः । यो नो दूरे अघशंसो यो अन्त्यग्ने मा किष्टेव्यथिरादधर्षीत् स्वाहा० ॥ (४) ओं उदग्नेतिष्ठ प्रत्यातनुष्व न्यमित्राँ ओषतात्तिग्महेते । यानो अरातिं समिधान चक्रे नीचा तं धक्ष्यतसं न शुष्कं स्वाहा इदं० (५) ओं ऊर्द्ध्वोभव प्रतिविध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने । अवस्थिरातनुहि यातु जूनां जामिमजामिं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

प्रवृणीहि शत्रून् स्वाहा० ॥ (६) ओं सतेजानातिसुमतिं
यविष्ठ य ईवते ब्रह्मणे गातुमैरत् । विश्वान्यस्मैसुदिनानिरा-
यो द्युम्नान्यर्यो विदुरोऽअभिद्यौत्स्वाहा० ॥ (७) ॐ
सेदग्ने अस्तुसुभगः सुदानुर्यस्त्वा नित्येन हविषा य
उक्थैः । पिप्रीषति स्व आयुषिदुरोणे विश्वेदस्मै सुदिना-
सासादिष्टिः स्वाहा० ॥ (८) ओं अर्चामितेसुमतिं घो-
यवाक् संते वा वाताजरतामियं गीः । स्वश्वास्त्वा सुर-
थामर्जयेमा स्मे क्षत्राणि धारयेरनुद्यून् स्वाहा० ॥ (९)
ओं इहत्वा भूर्याचरेदुपत्मन् दोषावस्तर्दीदिवांसमनुद्यू-
न् । क्रीडन्तस्त्वा सुमनसः सपेमाभिद्युम्नातस्थिवां-
सोजनानाम् स्वाहा० ॥ (१०) ओं यस्त्वा स्वश्वः सुहि-
रण्यो अग्न उपयाति वसुमता रथेन । तस्यत्राता भव-
सितस्यसखा यस्त आतिथ्यमानुषग्जुजोषत् स्वाहा० ॥
(११) ॐ आमहोरुजामि बन्धुतावचोभिस्तन्मापितु-
र्गोतमादन्वियाय । त्वं नो अस्यवचसश्चिकिद्धिहोतर्यवि-
ष्ठ सुक्रतो दमूनाः स्वाहा० ॥ (१२) ॐ अस्वप्नजस्तर-
णयः सुशेवा अतन्द्रासोवृका अश्रमिष्ठाः । ते पायवः
सध्र्यञ्चो निषद्याग्ने तव नः पान्त्वमूः स्वाहा० ॥ (१३)
ॐ येपायवो मामते यंते अग्ने पश्यन्तो अन्धं दुरितादर-
क्षन । ररक्ष तान् सुकृतो विश्ववेदा दिप्सन्त इद्रिपवोना-
हदेषुः स्वाहा० ॥ (१४) ॐ त्वया वयंसधन्यस्त्वोता-
स्तव प्रणीत्यश्यामवाजान् । उभाशंसा सूदय सत्यतातेऽ-
नुष्ठुया कृणुह्यह्रयाण स्वाहा० ॥ (१५) ॐ अयाते
अग्नेसमिधा विधेम प्रतिस्तोमंशस्यमानं गृभाय । दहा-
शसो रक्षसः पाह्यस्मान् द्रुहोनिदो मित्रमहो अवद्यात्

RaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्वाहा इदंरक्षोघ्ने अग्नये नमम ॥ इस प्रकार रक्षोघ्न को १५ मंत्रों से १२० (१५ × ८) आहुतियां दे ।

फिर गायत्री से सूर्य को कृसर की ही ८ आहुतियां देंगे अन्यान्य देवताओं को भी नीचे लिखे मंत्रों से कृसर की ही ८ आहुतियाँ प्रति मंत्र से देंगे-(१) ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवि तुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदया स्वाहा इदं सवित्रेनमम ॥ (२) ओं जातवेदसे सुनवा सोममरातीयतो निदहाति वेदः । स नः पर्षदति दुर्गा विश्वानावेव सिन्धुं दुरिताऽत्यग्निः स्वाहा इदं दुर्गाय मम ॥ (३) ॐ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमाऽमृतात् स्वाहा इ रुद्रायनमम ॥ जलका स्पर्श करले ॥ (४) ॐ सीरायुञ्ज न्तिकवयो युगावितन्वते पृथक् । धीरादेवेषु सुम स्वाहा इदम् ऋक्स्तुतयेनमम ॥ (५) ॐ तामग्निवर्ण तपसाज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्म्मफलेषु जुष्टाम् । दुर्गां दे शरणमहं प्रपद्ये सुतरसितरसेनमः सुतरासितरसेन स्वाहा इदं दुर्गायैनमम ॥ (६) ओं वास्तोष्पते प्र जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवोभवानः । यत्त्वे प्रतितन्नोजुषस्व शन्नोभव द्विपदेशंचतुष्पदे स्वाहा इदंवास्तोष्पतयेनमम ॥ (७) ओं अग्निमीलेपुरोहि यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारंरत्नधातमम् स्वाहा इ मग्नयेनमम ॥ (८) ओं क्षेत्रस्यपतिनावयं हितेनेवज मसि । गामश्वं पोषयित्न्वा सनो मृडातीदृशे स्वा इदं क्षेत्रपालायनमम ॥ (९) ओं गृणाना जमदग्नि योनावृतस्य सीदतम् । पातं सोममृतावृधा स्वाहा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

मित्रावरुणाभ्यां नमम ॥ (१०) ओं अग्निदूतं पुरो-दधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँ आसादयादिह स्वाहा इद-मग्नये नमम ॥

फिर आगे के १५ मंत्रों में प्रत्येक से समिधा, घृत और चरु प्रत्येक की आठ आठ आहुतियां श्री को दे और प्रत्येक वार स्वाहा के बाद "इदं श्रियैनमम" यही कहे। (१) ओं हिरण्यवर्णां हरिणीं सुवर्णरजतस्रजाम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवेदो म आवह स्वाहा इदं श्रियै नमम ॥ (२) ॐ तामम आवह जातवेदो लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् स्वाहा इदं श्रियै० ॥ (३) ओं अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्। श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मादेवीजुषताम् स्वाहा० ॥ (४) ओं कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रांज्वलन्तीं तृप्तान्तर्प-यन्तीम्। पद्मेस्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् स्वाहा० ॥ (५) ओं चन्द्रां प्रभासां यशसाज्वलन्तीं श्रियं लोके देवजुष्टामुदाराम्। तां पद्मनेमिं शरणं प्रप-द्येअलक्ष्मीर्मे नश्यतां त्वां वृणोमि स्वाहा० ॥ (६) ओं आदित्यवर्णे तपसोऽधिजातो वनस्पतिस्तववृक्षोथ बि-ल्वः। तस्यफलानि तपसानुदन्तु मायाऽन्तरायाश्चबाह्या अलक्ष्मीः स्वाहा० ॥ (७) ॐ उपैतुमां देवसखः की-र्तिश्च मणिनासह। प्रादुर्भूतोऽस्मिराष्ट्रेऽस्मिन्कीर्तिमृद्धिं ददातुमे स्वाहा० ॥ (८) ॐ क्षुत्पिपासामलांज्येष्ठा-मलक्ष्मीं नाशयाम्यहम्। अभूतिमसमृद्धिं च सर्वां निर्णुद मे गृहात्स्वाहा० ॥ (९) ओं गन्धद्वारां दुरा-धर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां

Rai Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

तामिहोपह्वये श्रियम् स्वाहा० ॥ (१०) ॐ मनसः क
ममाकूतिं वाचः सत्यमशीमहि। पशूनां रूपमन्नस्य मयि
श्रीः श्रयतां यशः स्वाहा० ॥ (११) ॐ कर्दमेन प्रज
भूता मयि संभव कर्दम। श्रियं वासय मे कुले मा
पद्ममालिनीम् स्वाहा० ॥ (१२) ॐ आपः सृजन्तु स्नि
ग्धानि चिक्लीत वसमे गृहे। निचदेवीं मातरं श्रियं वा
सय मे कुले स्वाहा० ॥ (१३) ॐ आर्द्रां पुष्करिणीं पुष्टि
पिंगलां पद्ममालिनीम्। चन्द्रां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जात
वेदो म आवह स्वाहा० ॥ (१४) ॐ आर्द्रां यः करिणीं यष्टि
सुवर्णां हेममालिनीम्। सूर्यां हिरण्मयीं लक्ष्मीं जातवे
म आवह स्वाहा० ॥ (१५) ॐ ताम्म आवह जातवेद
लक्ष्मीमनपगामिनीम्। यस्यां हिरण्यं प्रभूतं गा
दास्योऽश्वान् विन्देयं पुरुषानहम् स्वाहा इदंश्रियैनमम

फिर खीर से सोम को नीचे के मंत्र से तेरह आहुतियाँ दे-

त्वन्नः सोम विश्वतो गोपा अदाभ्यो भव। सेधराज
पस्त्रिधो विवोमदेमानो दुःशंस ईशता विवक्षसे स्वा
इदं सोमाय नमम ॥

तब एकरुद्र को एक आहुति घी की दे। मगर वह घी ऐसा
कि स्रुव द्वारा चार बार घी के वर्त्तन से निकाल कर स्रुव
दूसरे पात्र में रक्खा गया हो। इसे चतुर्गृहीत कहते हैं। मंत्र-
ॐ याते रुद्र शिवा तनूरघोराऽपापकाशिनी। तया
स्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि स्वाहा
मेकरुद्राय नमम ॥ फिर २१० पृष्ठोक्त रीति से विश्वकर्मा, क्षेत्र
और वास्तुपुरुष का होम करे।

अन्त में ब्रह्म का अन्वारम्भ करके चरु, खीर, घी, कृसर
समिधा सभी को एक में मिलाकर स्विष्टकृत् की एक आहुति दे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ फिर अन्वारंभ करकेही घी से १९४ पृष्ठोक्त तीन महाव्याहृति की, पञ्च वारुणी और एक प्रजापति की ये नौ आहुतियां देकर प्रोक्षणी में प्रत्येक बार संस्रव रखता जावे। इस तरह होम की क्रियायें पूरी कर डाले।

होम के बाद संस्रव प्राशन करके प्रोक्षणी वाला पवित्र अग्नि में डाल देते और ब्रह्मा को पूर्णपात्र की दक्षिणा द्रव्य के सहित देते हैं- ॐ अद्येहानुऽष्ठितमूलशान्तिकर्मांगहोमकर्मणः सांगतार्थमिदं सद्रव्यं पूर्णपात्रं ब्रह्मणे तुभ्यमहं संप्रददे ॐ तत्सनमम ॥ और ब्रह्मा-'ॐ स्वस्ति' कह उसे लेकर मंत्र पढ़े- ॐ अक्रन्कर्म कर्मकृतः सह वाचा मयोभुवा ॥ देवेभ्यः कर्म कृत्वाऽस्तं प्रेत सचाभुवः ॥ तब ब्रह्मा को उठा दे। फिर प्रणीताका जल २४३ पृष्ठोक्त मंत्र से सिर पर डालकर वहीं के अगले मंत्र से उसे ईशान में औंध दे और वहीं लिखी विधि से बर्हिःहोम कर डाले। फिर २१४ पृष्ठोक्त रीति से ग्रहों से लेकर वास्तोष्पति(वास्तुपुरुष) तक को खीर या दही मिश्रित अक्षत (चावल) इन दो में किसी से दीप के साथ बलि दे। केवल क्षेत्रपाल की बलि अभी न देकर उसे अन्तके लिये छोड़ दे। फिर उसी तरह निर्ऋति की बलि दीपक सहित लेकर उसके स्थान पर रख के मंत्र पढ़े-(१) ॐ निर्ऋतये सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एतं सदीपं बलिं समर्पयामि ॥ और हाथ में जल लेकर उस बलि पर डालता हुआ मंत्र पढ़े-भो निर्ऋते बलिं गृहाण ममसपरिवारस्य यजमानस्य आयुष्कर्त्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता वरदोभव ॥ फिर इन्द्र, जल और शेष २४ नक्षत्रदेवताओं को भी उनकी जगह पर उसी खीर या दध्यक्षत की बलि इसी तरह देते और जल डालते हैं। इसलिये हम बार बार इन- "सांगाय सपरिवाराय" इत्यादि तथा "बलिं गृहाण" आदि को न कहेंगे। केवल देवताओं के नाम लिखते जायंगे।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

जिस तरह ऊपर निर्ऋति के समय समस्त वाक्य पढ़ा है या पढ़े २१४ पृष्ठ में ग्रह आदि के लिये, उसी तरह यहां पर भी पढ़ लेते हैं- (२) ओं इन्द्राय० । भोइन्द्र० ॥ (३) ओं अङ्गा सांगाभ्यः सपरिवाराभ्यः सायुधाभ्यः सशक्तिकाभ्यो बलिं समर्पयामि ॥ भो आपः बलिंगृह्णीत ममसपरिवा रस्य यजमानस्य आयुष्कर्त्र्यः क्षेमकर्त्र्यस्तुष्टिकर्त्र्यः पुष्टिकर्त्र्यो वरदा भवत ॥ (४) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्य सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यो बलिं समर्पयामि ॥ भो विश्वेदेवा एतं बलिं गृह्णीत मम स परिवारस्य यजमानस्य आयुष्कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्ति कर्त्तारस्तुष्टिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारो वरदा भवत ॥ (५ ओं विष्णवे सांगाय० ॥ भो विष्णो० ॥ (६) ओं वसु भ्यः सांगेभ्यः० ॥ भो वसवः० ॥ (यहां का वाक्य चौ विश्वेदेव की ही तरह बोले) । (७) ओं वरुणाय० ॥ भो वरुण० ॥ (८) ओं अजचरणाय० ॥ भो अजचरण० (९) ओं अहिर्बुध्न्याय० ॥ भोअहि० ॥ (१०) ओं पूष्णे० ॥ भो पूषन्० ॥ (११) ओं अश्विभ्यां सांगाभ्यां सपरिवाराभ्यां सायुधाभ्यां सशक्तिकाभ्यामेतं बलिं समर्पयामि । भो अश्विनौ बलिं गृह्णीतम् ममसपरिवारस्य यज मानस्य आयुष्कर्त्तारौ क्षेमकर्त्तारौ शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्तारौ पुष्टिकर्त्तारौ वरदौ भवतम् ॥ (१२ ओं यमाय० ॥ भो यम० ॥ (१३) ओं अग्नये० ॥ भो अग्ने० ॥ (१४) ओं धात्रे० ॥ भोधातः० ॥ (१५) ओं चन्द्राय० ॥ भोः चन्द्र० ॥ (१६) ओं रुद्राय० ॥ भो रुद्र० ॥ जल स्पर्श करे । (१७) ओं अदितये सांगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

सपरिवारायै सायुधायै सशक्तिकायै एतं बलिं समर्पया-मि ॥ भो अदिते बलिं गृहाण ममसपरिवारस्य आयुष्क-र्त्री शान्तिकर्त्री तुष्टिकर्त्री पुष्टिकर्त्री वरदा भव ॥ (१८) ओं गुरवे० ॥ भो गुरो० ॥ (१९) ओं सर्पेभ्यः० ॥ भोः सर्पाः० ॥ यहाँका वाक्य भी (४) विश्वेदेव की ही तरह होगा । (२०) ओं पितृभ्यः० ॥ भोः पितरः० ॥ यहाँ का भी उसी तरह। (२१) ओं भगाय० ॥ भो भग० ॥ (२२) ओं अर्यम्णे० ॥ भो अर्यमन्० ॥ (२३) ओं सवित्रे० ॥ भोः सवितः० ॥ (२४) ओं त्वष्ट्रे० ॥ भो त्वष्टः० ॥ (२५) ॐ वायवे० ॥ भो वायो० ॥ (२६) ओं इन्द्राग्नीभ्यां० ॥ भो इन्द्राग्नी० ॥ (यहां का वाक्य(११) 'अश्विभ्यां' की तरह होगा । (२७) ओं मित्राय० ॥ भो मित्र० ॥ (२९) ओं रुद्रायः० ॥ भो रुद्र० ॥ यह रुद्र की अन्तिम बलि रुद्रकलशस्थित रुद्रमूर्त्ति के पास दे । फिर जल स्पर्श करके २१७ पृष्ठोक्त रीति से क्षेत्रपाल को बलि देते हैं । अनन्तर ३२२ पृष्ठोक्त रीति से अग्नि के मृडनाम का ध्यान कर और नारियल आदि लेकर पूर्णाहुति करे । पूर्णाहुति का मंत्र वही ओं मूर्द्धा-नं दिवो० इत्यादि है । पूर्णाहुति के बाद अग्नि से मेधाकी प्रार्थना करे-ओं सदस्पतिमद्भुतं प्रियमिन्द्रस्यकाम्यम् । सन्निमेधा-मयासिषं स्वाहा ॥१॥ यां मेधां देवगणाः पितरश्चोपासते । तया मामद्य मेधयाऽग्ने मेधाविनं कुरु स्वाहा ॥२॥ मेधां मे वरुणो ददातु मेधामग्निः प्रजापतिः । मेधामिन्द्रश्च वायुश्च मेधां धाता दधातु मे स्वाहा ॥३॥ श्रद्धां मेधां यशः प्रज्ञां विद्यां पुष्टिं बलं श्रियम् । आयुष्यं द्रव्यमारोग्यं देहि मे हव्य-वाहन ॥ ४ ॥ फिर ३०२ पृष्ठोक्त रीति से ७ मंत्र पढ़ पढ़कर हाथों को

Rai Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

अग्नि पर तपाकर मुखपर फेरे और उसके बाद 'ॐ अंगानि च' इत्यादि मंत्रों से उसी तरह अंगों का स्पर्श करे जैसा वहां लिखा है। पुनः जलस्पर्श कर वहीं लिखी रीति से त्र्यायुष करे। और- ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम्। यद्देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्-यह पढ़कर समूचे शरीर पर हाथ फेरे। तब पांच कलशों के बीच का या पाँच सूराखों वाला कलश दक्षिण ओर से छूकर फिर एकबार रुद्रैकादशिनी और सौ बार त्र्यम्बक मंत्र पढ़े और हो सके तो फिर रुद्र, निर्ऋति और ग्रहादि की संक्षिप्त पूजा करे। इसके बाद उस शान्तिमण्डप के उत्तर दूसरे स्नान मण्डप में, या मण्डप के अभाव में शुद्ध भूमि को गौ के गोबर से लीपकर उसपर, स्वस्तिक बनावे, उसके ऊपर पीढ़ा रख पीढ़े पर नया वस्त्र डाल दे, उसीके ऊपर स्त्री और पुत्र के साथ यजमान को पूर्व या उत्तरमुख बैठावे और उसके शरीर में सर्वौषधि पीसकर लगावे और वह नवीन खद्दर पहन यज्ञ के अन्त के स्नान का संकल्प करे-ओं अद्येह सपुत्रपत्नीकोऽहं ममपुत्रस्य मूलनक्षत्रजननसूचितारिष्टनिवृत्तये अभिषेकमंत्रैः स्नानं करिष्ये। यजमान की बाईं ओर पत्नी और पुत्र बैठें, सभी कलशों के जल को किसी एक पात्र में डाल सभी ब्राह्मण उत्तर या पूर्व मुख हो आम के पल्लवों से यजमान आदि के सिर पर उसे डालें और नीचे के मंत्र पढ़ते जावें। पहले-ओं अक्षीभ्यां० इत्यादि ६४२ पृष्ठोक्त यज्ञमहा के ६ मंत्रों से अभिषेक करके उसके बाद पढ़ें-ओं पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तुमा पितामहाः। पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा ॥ १ ॥ पुनन्तुमा पितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः। पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै ॥ २ ॥ अग्नेरायूंषि पवस आसुवोर्जमिषं च नः। आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥ ३ ॥ पुनन्तुमा देवजनाः पुनन्तु मनसाधियः। पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहिमा ॥ ४ ॥ पवित्रेण

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

पुनीहिमा शुक्रेण देव दीद्यत्। अग्ने क्रत्वा क्रतूँरनु ॥५॥ यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा । ब्रह्म तेन पुनातुमा ॥६॥ पवमानः सोऽद्यनः पवित्रेण विचर्षणिः । यःपोता स पुनातुमा॥७॥ उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च।मां पुनीहि विश्वतः ॥८॥ वैश्वदेवी पुनती देव्यागाद्यस्यामिमा बह्वयस्तन्वो वीतपृष्ठाः ॥ तयामदन्तः सधमादेषु वय ँ स्याम पतयो रयीणाम् ॥९॥ ॐ आपोहिष्ठा० ॥१०॥ यो वः० ॥ ११ ॥ तस्मा अरंगमाम० ॥१२॥ शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शंयोरभिस्रवन्तु नः ॥ १३ ॥ ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् । अपो याचामि भेषजम् ॥१४॥ अप्सुमे सोमोऽब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निं च विश्वशंभुवम् ॥ १५ ॥ आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम । ज्योक्च सूर्यं दृशे ॥ १६ ॥ इदमापः प्रवहत यत्किञ्चिद्दुरितं मयि । यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् ॥ १७ ॥ आपोऽअद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि । पयस्वानग्न आगहि तं मा संसृज वर्चसा ॥ १८ ॥ ओं यतइन्द्र भयामहे ततोनो अभयं कृधि । मघवञ्छग्धि तवतन्न ऊतिभिर्विद्विषो विमृधोजहि॥१९॥ त्वंहि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः । तंत्वा-वयं मघवन्निद्रगिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥ २० ॥ ओं सहस्राक्षेण शतशारदेन शतायुषा हविषा हार्षमेनम् । शतं यथेमं शरदोनयातीन्द्रो विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥२१॥ शतं जीव शरदो वर्द्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान् । शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥ २२ ॥ आहार्षं त्वा विदन्त्वा पुनरागाः

Ra Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

पुनर्नव । सर्वांग सर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्चतेऽविदम् ॥२३॥ ओं देवस्य० इत्यादि तीन (पृ० १२३) २४॥२५॥२६॥ ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैति दैवन्तदु सुप्तस्य तथैवैति । दूरंगमज्ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ॥२७॥ येनकर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्तिविदथेषु धीराः। यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ २८ ॥ यत्प्रज्ञानमुतचेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु । यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मेमनः० ॥ २९ ॥ येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् । येन यज्ञस्तायते सर्वहोता तन्मे मनः० ॥ ३० ॥ यस्मिन्नृचः साम यजू ँषि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मि ँश्चित्त ँ सर्वमोतं प्रजानांतन्मे० ॥३१॥ सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यान्नेनीयतेऽभीशुभिर्वाजिन इव। हृत्प्रतिष्ठं यदजिरं यविष्ठं तन्मे० ॥३२॥ ओं तच्छंयोरावृणीमहे गातुं यज्ञाय गातुं यज्ञपतये । दैवीस्वस्तिरस्तु नः स्वस्तिर्मानुषेभ्यः । ऊर्ध्वं जिगातु भेषज ँ शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ३३ ॥ ओं समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः । इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३४॥ या आपो दिव्या उतवास्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयंजाः। समुद्रार्था याःशुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥ ३५ ॥ यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् । मधुश्च्युतः शुचयो याः पावकास्ता आपो० ॥ ३६ ॥ यासुराजा वरुणो यासुसोमो विश्वेदेवा यामूर्जमदन्ति । वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

॥३७॥ ओं स्वस्तिन इन्द्रो वृद्धश्रवाः० (पृ० ३७७) ॥३८॥ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयो दिव्यन्तरिक्षे पयोधाः॥ पयस्वती प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥३९॥ विष्णोरराटमसि विष्णोः श्नप्त्रेस्थो विष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि । वैष्णवमसिविष्णवेत्वा ॥४०॥ अग्निर्देवता वातोदेवता सूर्यो देवता चन्द्रमा देवता वसवो देवता रुद्रा देवताऽऽदित्या देवता मरुतो देवता विश्वेदेवा देवता बृहस्पतिर्देवतेन्द्रो देवता वरुणो देवता ॥४१॥ मूर्द्धासिराड् ध्रुवासि धरुणा धर्त्र्यसि धरणी । आयुषे त्वा वर्चसे त्वा कृष्यै त्वा क्षेमायत्वा ॥४२॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष० (पृ० ३७७) ॥४३॥ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद्भद्रंतन्न आसुव ॥ ४४ ॥ ॐ सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः ॥ १ ॥ सुरास्त्वामभिषिञ्चन्तु ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः। वासुदेवो जगन्नाथस्तथा संकर्षणो विभुः ॥ २ ॥ प्रद्युम्नश्चानिरुद्धश्च भवन्तु विजयाय ते ॥ आखंडलोऽग्निर्भगवान्यमो वै निर्ऋतिस्तथा ॥ ३ ॥ वरुणः पवनश्चैव धनाध्यक्षस्तथा शिवः। ब्रह्मणा सहिताश्चैव दिक्पालाः पान्तु वः सदा ॥४॥ कीर्त्तिर्लक्ष्मीर्धृतिर्मेधा पुष्टिः श्रद्धा क्रिया मतिः । बुद्धिर्लज्जा वपुः शान्तिस्तुष्टिः कान्तिश्च मातरः ॥ ५ ॥ एतास्त्वामभिषिञ्चन्तु धर्मपत्न्यः समागताः । आदित्यश्चन्द्रमा भौमो बुधजीवसितार्कजाः ॥ ६ ॥ ग्रहास्त्वामभिषिञ्चन्तु राहुः केतुश्च पूजिताः ॥ देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः ॥ ७ ॥ ऋषयो मनवो गावो देवमातर एवच। देवपत्न्यो द्रुमानागा दैत्याश्चाप्सरसांगणाः ॥८॥ अस्त्राणि

Ra Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

सर्वशस्त्राणि राजानो वाहनानि च। औषधानि च रत्नानि कालस्यावयवाश्च ये ॥ ९ ॥ सरितः सागराः शैलास्तीर्थानि जलदा नदाः। एते त्वामभिषिञ्चन्तु सर्वकार्यार्थसिद्धये ॥ १० ॥ ॐ योऽसौ वज्रधरो देवो महेन्द्रो गजवाहनः। मूलजातशिशोर्दोषं मातापित्रोर्व्यपोहतु ॥ ११ ॥ योऽसौशक्तिधरो देवो हुतभुग्मेषवाहनः। सप्तजिह्वः स देवोऽग्निर्मूलदोषं व्यपोहतु ॥ १२ ॥ योऽसौ दण्डधरो देवो धर्मो महिषवाहनः। मूलजातशिशोर्दोषं मातापित्रोर्व्यपोहतु ॥ १३ ॥ योऽसौ खड्गधरो देवो निर्ऋतीराक्षसाधिपः। प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं गण्डान्तसंभवम् ॥१४॥ योऽसौ पाशधरो देवो वरुणश्च जलेश्वरः। नक्रवाहः प्रचेता नो मूलोत्थाघं व्यपोहतु ॥ १५ ॥ योऽसौ देवो जगत्प्राणो मारुतो मृगवाहनः। प्रशामयतु मूलोत्थं दोषं बालस्य शान्तिदः ॥१६॥ येऽसौ निधिपतिर्देवोगदाभृन्नरवाहनः। मातापित्रोः शिशोश्चैव मूलदोषं व्यपोहतु ॥ १७ ॥ योऽसाविन्दुधरो देवः पिनाकी वृषवाहनः। आश्लेषामूलगण्डान्तदोषमाशु व्यपोहतु ॥ १८ ॥ विघ्नेशः क्षेत्रपो दुर्गा लोकपाला नवग्रहाः। सर्वदोषप्रशमनं सर्वे कुर्वन्तु शांतिदाः ॥ १९ ॥ ओं शान्तिरस्तु पुष्टिरस्तु वृद्धिरस्तु यच्छ्रेयस्तदस्तु रोगशोकः कष्टं दुःखं दारिद्र्यं तद्दूरे प्रतिहतमस्तु। ओं भूर्भुवः स्वः अमृताभिषेकोऽस्तु ॥२०॥ इसके बाद एक हजार छिद्रवाले घड़े में कलश का वह शेष जल डालकर यजमान के सिर पर उसी से गिरावें। वह घड़ा किसी सिक्के में सिर के ऊपर टांग दिया जावे और उसीके नीचे यजमान रहे। इस तरह उसके द्वारा स्नान (अभिषेक) करचुकने पर यजमान श्वेत वस्त्र धारण कर किसी पात्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में घी रख उसमें अपना मुख देखे। उसका मंत्र-ॐ रूपं रूपं प्रतिरूपो बभूव तदस्य रूपं प्रतिचक्षणाय। इन्द्रोमायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ताह्यस्य हरयः शतादश॥ फिर शंख, बाजा आदि बजाकर उन ब्राह्मणों के शान्तिपाठ करने पर स्वयं यजमान शिशु का मुख देख उसे-ओं अंगादंगात्सम्भवसि हृदयादधिजायसे। आत्मा वै पुत्रनामासि सजीव शरदः शतम्-इस मंत्र से गोद में उठाले। बाद, आचार्य आदिको, यदि वहां काली गौ, काला बैल, कालावस्त्र और निर्ऋति तथा रुद्र की प्रतिमा हो तो, देने का संकल्प करे-ओं अद्येहानुष्ठितस्य मूलशान्तिकर्मणः सांगतार्थमिमां कृष्णधेनुं (धेनुनिष्क्रयद्रव्यं) तथा अधिदेवताप्रत्यधिदेवताप्रतिमासहितां सवस्त्रकुम्भां निर्ऋतिप्रतिमां ग्रहपूजासामग्रीं च आचार्याय संप्रददे। श्रीरुद्रप्रतिमां कृष्णमनड्वाहं (अनुडुन्निष्क्रयद्रव्यं) सवस्त्रकुम्भां रुद्रजापिने संप्रददे। अन्यान्यब्रह्मादिभ्यो ब्राह्मणेभ्यो यथांशं विभज्य दक्षिणां संप्रददे। तथा इमां भूयसीं दक्षिणां नानामगोत्रेभ्योजनेभ्यो विभज्य संप्रददे ओं तत्सन्नमम॥ इसके बाद निर्ऋति आदि की तीनों मूर्त्तियां, वह कलश, वस्त्र और कृष्णा गौ या उसका निष्क्रय द्रव्य आचार्य को; रुद्र की प्रतिमा, वस्त्र, कलश और काला बैल या उसका निष्क्रय रुद्रैकादशिनी आदि जपनेवाले को और शेष ब्रह्मा ऋत्विक जापक आदि को यथाशक्ति दूसरी दक्षिणा दे डाले। और भूयसी दक्षिणा अन्यान्य गरीबों को देवे। फिर खीर बनाकर-ओं अद्य पायसेन यथाशक्ति ब्राह्मणान्भोजयिष्ये-यह संकल्प करे। तब २२८ पृष्ठोक्त रीति से आचार्यादि यजमान को तिलकाक्षत लगावें और आशीर्वाद दें। तब २२९ पृष्ठोक्त रीति से सभी देवताओं का विसर्जन करे और मंगल के लिये काँसे के थाल में बहुत से दीप जलाकर महानीराजन (आरती) करावे। तब ब्राह्मणों को खिला

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Funding by IKS-MoE-Grant-Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कर या उन्हें मिठाई आदि देकर-ओं कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा बुद्ध्यात्मना वानुसृतस्वभावात् । करोमि यद्यत्सकलंपरस्मै नारायणायेति समर्पयामि तत्-यह वाक्य हाथ जोड़कर पढ़े और-ओं अनेन शान्तिकर्मणा ओं तत्सद् यज्ञपुरुषः प्रीयतां तत्प्रीत्या च निर्ऋतिदेवः प्रीयताम्-ऐसा कहे। उपरांत ब्राह्मणों को विदाकर उनकी आज्ञा से अपने बन्धु बान्धवादिके साथ भोजन करे और भोजनोपरान्त सुखपूर्वक विश्राम करे । स्मरण रहे कि मूलनक्षत्र के प्रथम तीन चरणों में जन्म खराब है और चौथे में जन्म शुभ है। इसका विवरण ज्योतिषप्रकरण में है। इति मूलशान्ति ।

४-आश्लेषाशान्ति ।

मूलनक्षत्र के विपरीत आश्लेषा के प्रथम चरण में जन्म अच्छा है और शेष तीन चरणों का खराब है । इसका विशेष विवरण ज्योतिष के प्रकरण में है। आश्लेषाशान्ति भी प्रायः मूल शान्तिकी ही तरह है। कहीं कहीं थोड़ी सी विशेषता है और कुछ उलट पुलट भी है। आश्लेषा का देवता सर्प माना जाता है और अधिदेवता गुरु (बृहस्पति) तथा प्रत्यधिदेवता पितर मानेजाते हैं। गुरु पुष्य नक्षत्र का देवता है और पितर मघा के। इस तरह प्रधान मूर्त्ति सर्प की और उसके दहिने, बायें गुरु और पितरों की मूर्त्ति होगी। जो शेष २४ नक्षत्र पूर्वाफाल्गुनी से लेकर पुनर्वसु तक हैं उनके देवों की पूजा २४ पत्तेवाले कमल के फूल के आकार के २४ पत्तों या दलों पर पूर्ववत् होगी। एक बात और भी है। मूल की शान्ति में रुद्रकलश के सिवाय एक पंच मुख कलश या पांच कलश स्थापित किये गये हैं और उस पंचमुख कलश के उत्तर जो २४ दलवाले कमल के फूल के आकार पर कलश स्थापित है उसीं में प्रधान देवता निर्ऋति और उसके अधिदेव, प्रत्यधिदेव स्थापित हैं। मगर आश्लेषा की शान्तिमें यद्यपि प्रधानदेव सर्प तथा उसके अधिदेव और प्रत्यधिदेव के लिये मूल की ही तरह कलश स्थापित किया जाता है। फिर भी रुद्रकलश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अलग न स्थापित कर पंचमुखी कलश पर ही या उसकी जगह पांच कलशों के मध्यवर्त्ती कलश पर ही रुद्रप्रतिमा स्थापित की जाती है। आश्लेषाशान्ति भी मूल की ही तरह बारहवें दिन या आश्लेषा आने पर ही २७ वें दिन या ५४ वें आदि दिन या शुभ दिन को ही की जाती है और उसी तरह शान्ति का मण्डप या छाया और उसके उत्तर स्नानमण्डप बनाते हैं। द्वारपाल, जापकादि का वरण यहां भी वसा ही होता है। अतएव यह सभी काम पहले ही दिन करलेते और दूसरे दिन के लिये मुख्य काम हीं छोड़ देते हैं। अथवा न हो सकने पर शान्ति के दिन हीं बहुत सवेरे उठकर नित्य क्रिया से निवृत्त होकर प्रथम प्रकरणोक्त रीति से मण्डप के देवताओं का स्थापन और पूजन आदि करले और दूसरे सभी काम भी ठिकाने से करडाले।

आश्लेषाशान्तिका प्रधानकर्म करने के लिये गौ के गोबर से लीपे मण्डप या छायास्थान में पूर्वमुख आसन पर बैठ पवित्र धारण कर आचमन, प्राणायाम आदि करले, रक्षादीपक को जलाकर उसकी पूजा ७९ पृष्ठोक्त रीतिसे करके पूर्व ओर पूर्वमुख स्थापितकरे और ३७८ पृष्ठोक्त शान्तिपाठ तथा 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इत्यादि का पाठ कर प्रधान संकल्प करे-ॐ अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुक तिथौ अमुकवासरे मम पुत्रस्य आश्लेषानक्षत्रजननसूचितपित्राद्यरिष्टनिरसनद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सगोमुखप्रसवामाश्लेषाशान्तिं करिष्ये। तदर्थमाचार्यवरणगणपतिपूजनादीनि ग्रहादिपूजनान्तानि कर्माणि करिष्ये। और ७४ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य का वरणकर गणपतिपूजनादि सभी कर्म साधारण कर्म के प्रकरण में कही गई रीति से करडाले, जैसा मूलशान्ति में किया है। इसके सिवाय जापक द्वारपाल आदि का भी वरण वहीं लिखी रीति के अनुसार करले। पर, यहांके वरण में "आश्लेषाशान्तिकर्म कर्त्तुं कारयितुं च" यह शब्द आचार्य और अन्यान्य ऋत्विजों के सम्बन्ध में पढ़े और जापक आदि के वरण में "आश्लेषाशान्तिकर्माणि" यह शब्द "अमुककर्माणि"

R. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

की जगह पढ़दे । स्तोत्र, मंत्र, दुर्गासप्तशती आदि का पाठ करने के लिये भी मूलशान्ति की ही तरह ब्राह्मणों का वरण करना चाहिये। इसके बाद पहले ६३१ पृष्ठोक्त रीति से गोमुखप्रसव की सभी क्रियायें होम से पूर्व की करले और होम वेदी के ईशान में मूलशान्ति की ही तरह स्वस्तिक का आकार बनाकर उसपर रुद्रकलश की जगह चारों ओर चार छिद्रों वाला पंचमुखी कलश या अभाव में पाँच कलश स्थापित करे जिनमें चार चारों ओर हों और पाँचवां बीच में रहे। पहले स्वस्तिक पर धान पसार कर उसी पर यह कलश स्थापित हो। उसकी या पाँचों की विधिवत् स्थापना करके उसमें या बीच वाले में सतावरी आदि ६३७ पृष्ठोक्त औषधियां डाल कर उसी रीति से रुद्र की प्रतिमा अग्न्युत्तारणपूर्वक स्थापित करे और वहीं लिखी रीति से उसकी पूजा भी करे। फिर बीचवाले रुद्र कलश को छूकर या पंचमुखी का ऊपरी मुख पकड़कर रुद्रजापक वहीं लिखी रीति से रुद्रैकादशिनी का एक बार पाठ कर त्र्यम्बक मंत्र का १००८ बार जप करे और पवमान सूक्त का एक बार और शेष जप करने वाले अप्रतिरथ आदि का जप वहीं लिखी रीति से करें। परन्तु सब का जप एक ही बार कियाजावे न कि वहां की तरह ग्यारह आदि बार। उसी समय उसके उत्तर मूलशान्ति की ही तरह २४ दलवाला कमलपुष्प बनाकर उसपर उसी तरह प्रधान कलश विधिवत् स्थापित करे और वही औषधियां डालकर उस पर पूर्णपात्र में चावल रख उसीपर बीच में सर्प की और दहिने बृहस्पति की तथा बायें पितरों की सोने की प्रतिमा स्थापित करे। पहले क्रम से तीनों का अग्न्युत्तारण करे अथवा एक ही बार सबका करे और पञ्चामृत से स्नान कराकर क्रमसे ऊपर स्थापित करे। २४ दलों पर भी सुपारी या अक्षत रखदे, ताकि सभी में नक्षत्रों की देवताओं का आवाहन किया जा सके। फिर हाथ में अक्षत पुष्प लेकर पहले सर्प, गुरु, पितरों का और पीछे शेष २४ देवताओं का क्रम से आवाहन करे। (१) ओं नमोऽस्तु सर्पेभ्यो येकेच पृथिवीमनु। ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः॥ ओं भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्योनमः सर्पा इहागच्छन्तु इह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

तिष्ठन्तु ॥ (२) ओं बृहस्पते अतियदर्योऽअर्हाद् द्युम-द्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तद-स्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः गुरवेनमः गुरो इहागच्छतु इहतिष्ठतु ॥ (३) ओं पुनन्तु मा पि-तरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः । पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा ॥ पुनन्तुमा पितामहाः पुनन्तु प्रपिता-महाः । पवित्रेण शतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै ॥ ओं भूर्भुवः स्वः पितृभ्यो नमः पितर इहागच्छन्तु इह तिष्ठन्तु ॥ इस प्रकार प्रतिमा में अलग अलग तीनों का आवा-हन कर २४ दलों में पूर्व से ही पूर्वाफाल्गुनी की देवता का आरंभ कर पुनर्वसु तक की देवताओं का आवाहन मूल नक्षत्र की ही तरह करे-(४) ओं भूर्भुवः स्वः पूर्वफल्गुनीदेवभग इहागच्छतु इह तिष्ठतु ॥ (५) ओं० उत्तरफल्गुनीदेव अर्यमन्० ॥ (६) ओं० हस्तदेव रवे० ॥ (७) ओं० चित्रादेव त्वष्टः० ॥ (८) ओं० स्वातीदेव वायो० ॥ (९) ओं० विशाखादेवौ इन्द्राग्नी इहागच्छताम् इहतिष्ठताम् ॥ (१०) ओं० अनुराधादेव मित्र० ॥ (११) ओं० ज्येष्ठादेव इन्द्र० ॥ (१२) ओं० मूलदेव निर्ऋते० ॥ जलस्पर्श करे । (१३) ओं० पूर्वाषाढादेवजल० ॥ (१४) ओं० उत्तराषाढादेवा विश्वेदेवा इहागच्छन्तु इहतिष्ठन्तु ॥ (१५) ओं० श्रवण-देव गोविन्द० ॥ (१६) ओं० धनिष्ठादेवा वसव इहा-गच्छन्तु इह तिष्ठन्तु ॥ (१७) ओं० शताभिषग्देव वरुण० ॥ (१८) ओं० पूर्वभाद्रपदादेव अजचरण० ॥ (१९) ओं० उत्तरभाद्रपदादेव अहिर्बुध्न्य० ॥ (२०) ओं रेवती-देव पूषन्० ॥ (२१) ओं० अश्विनीदेवौ दस्रौइहा-गच्छताम् इह तिष्ठताम् ॥ (२२) ओं० भरणीदेव यम० ॥

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

(२३) ओं०कृत्तिकादेव अग्ने० ॥ (२४) ओं० रोहिणीदेव ब्रह्मन्० ॥ (२५) ओं० मृगशिरोदेव चन्द्र० ॥ (२६) ओं आर्द्रादेव रुद्र० ॥ (२७) ओं० पुनर्वसुदेव अदिते० ॥ इस प्रकार सभी देवताओं का अलग अलग अक्षत, पुष्प से आवाहन करे और फिर हाथ में अक्षत, पुष्प लेकर-ओं मनोजूति०(३७९) ओं भूर्भुवःस्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्यो नमः आवाहिता देवता इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत- इस मंत्र से एक ही बार सबकी प्राणप्रतिष्ठा करे । उपरांत प्रतिमा में सर्प, गुरु और पितरों की अलग अलग पूजा उनके पूर्वोक्त वैदिक मंत्रों से करे । हरेक मंत्र के आगे जो-ओं भूर्भुवः स्वः सर्पेभ्यो नमः- इत्यादि लिखा है, वह भी बोलता जावे । मगर 'इहागच्छन्तु' आदि आगे का भाग छोड़ दे और केवल ' नमः ' पर्यन्त भाग से ही पूजा करे ।फिर शेष २४ की पूजा-ओं भूर्भुवः स्वः आवाहिताभ्यो देवताभ्यो नमः-इस मंत्र से विधिवत् एक ही साथ करे, नहि अलग अलग करने की आवश्यकता है ।

इसके बाद मूलशान्ति की ही तरह पञ्चभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना करे और काली गौ, काला तिल, काला बैल और काला खद्दर आदि पदार्थ भी, यदि हो सके तो, रक्खे । होम के लिये भी काले तिल, खीर, चरु, घी, कृसर और समिधा उसी तरह रक्खे । ब्रह्मा के वरण से लेकर कुशकण्डिका की समूची क्रियायें १९० पृष्ठोक्तरीति से वैसे ही करे जैसे मूलशान्ति में की गई हैं । खीर, चरु, कृसर को घी से उत्तर अग्नि पर रख कर पकावे और उतार कर उसी तरह घी से उत्तर उन्हें, एक के बाद दूसरे इस तरह, स्थापित भी करे । फिर होम के लिये संकल्प करे-ओं अद्येहाश्लेषाशान्तिकर्मणि गोसुखप्रसवहोमसहिताश्लेषाशान्तिहोममहं करिष्ये ॥ ओं ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर घी से मूलशान्ति की ही तरह आघार और आज्यभाग की दो दो आहुतियाँ मंत्रों से देकर ग्रह आदि की आहुतियाँ अन्वारंभ छोड़कर क्रम से समिधा, घी, चरु और तिल से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

अलग अलग दी जावें । हरेक ग्रह को ८-८ अधिदेवता तथा प्रत्यधिदेवता को ४-४ और लोकपालदिक्पालोंको दो दो । इसके बाद मूल शान्ति में लिखी रीति से ही गोप्रसवहोम मधु, दही, घी और तिल एक में मिलाकर पहले ही करे । यहां भी ८ या ४ आदमी साथ ही आहुतियाँ डालें तो ठीक होगा और आसानी होगी । इसके लिये अच्छी तरह से मूलशान्ति का प्रकरण देख ले, ताकि भूल न होसके ।

फिर आश्लेषा के प्रधान देव सर्पों को घृत मिली खीर, समिध, घी, और चरु प्रत्येक से १०८ आहुतियां इस मंत्र से देते हैं-(१) ओं नमोऽस्तुसर्पेभ्यो ये के च पृथिवीमनु । ये अन्तरिक्षे ये दिवि तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः स्वाहा इदं सर्पेभ्यो नमम ॥१॥ तब बृहस्पति और पितरों को प्रत्येक चीज की २८-२८ आहुतियाँ क्रम से इन मंत्रों से देते हैं-(बृहस्पति)-(२) ॐ बृहस्पते अतियदर्योऽअर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु । यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम् स्वाहा इदं बृहस्पतये नमम ॥ २ ॥ (पितर)-(३) ओं पुनन्तु मा पितरः सोम्यासः पुनन्तु मा पितामहाः । पुनन्तु प्रपितामहाः पवित्रेण शतायुषा ॥ पुनन्तुमापितामहाः पुनन्तु प्रपितामहाः । पवित्रेणशतायुषा विश्वमायुर्व्यश्नवै स्वाहा इदं पितृभ्यो नमम ॥३॥ यहां जल स्पर्श करे। इसके बाद शेष २४ नक्षत्रों के २४ देवों को केवल घी मिली खीर की ८-८ आहुतियाँ नीचे लिखे नाम मंत्रों से देते हैं । सर्वत्र "स्वाहा इदं० नमम" तक का वाक्य बोलता जावे। हम एक बार लिखकर आगे संकेत कर देंगे। (४) ॐ भगाय नमः स्वाहा इदं भगाय नमम ॥ (५) ओं अर्यम्णे नमः स्वाहा इदम् अर्यम्णे नमम ॥ (६) ओं सूर्याय नमः स्वाहा० ॥ (७) ओं त्वष्ट्रे नमः स्वाहा० ॥ (८) ओं वायवे नमः० ॥ (९) ओं इन्द्राग्नीभ्यां नमः० ॥ (१०) ओं मित्राय नमः० ॥

BaliGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

(११) ओं इन्द्राय नमः० ॥ (१२) ओं निर्ऋतये नमः० जल का स्पर्श कर ले। (१३) ओं जलाय नमः० ॥ (१४) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः० ॥ (१५) ओं गोविन्दाय नमः० ॥ (१६) ओं वसुभ्यो नमः० ॥ (१७) ओं वरुणाय नमः० ॥ (१८) ओं अजचरणाय नमः० ॥ (१९) ओं अहिर्बुध्न्याय नमः० ॥ (२०) ओं पूष्णे नमः० ॥ (२१) ओं दस्राभ्यां नमः० ॥ (२२) ओं यमाय नमः० ॥ (२३) ओं अग्नये नमः० ॥ (२४) ओं ब्रह्मणेनमः० ॥ (२५) ओं चन्द्रमसे नमः० ॥ (२६) ओं रुद्राय नमः० जल स्पर्श करे । (२७) ओं आदित्यै नमः स्वाहा इदमदित्यै नमम ॥

फिर इसके बाद, मूलशान्ति में नक्षत्रदेवों के होम के बाद क्रम से " ओं कृणुष्व पाज० " से लेकर अन्त तक जिन जिन पदार्थों से जो जो आहुतियां जिस जिस देवता को जितनी और जिस तरह दी गई हैं, उसी तरह यहां पर भी दे । जरा भी परिवर्त्तन नहीं हो । इसके बाद की भी संस्रवप्राशन से लेकर बलिदान और पूर्णाहुति आदि सभी क्रियायें उसी तरह करे जिस तरह मूल शान्ति में की गई हैं । फिर अभिषेक भी उसी रीति से करे । अभिषेक के लिये जो संकल्प करे उसमें ' मूल ' की जगह ' आश्लेषा ' शब्द देकर शेष सभी वाक्य मूलशान्ति का ही पढ़ डाले । अभिषेक के मंत्र में सब के सब वही रहेंगे । केवल जहाँ जहाँ ' मूल ' शब्द हो वहाँ वहाँ ' सार्प ' पढ़े, ' मूलोत्थं ' को ' सार्पोत्थं ' पढ़े। केवल १८ वें श्लोक में ' मूल ' शब्द पड़ा रहेगा । अन्त के "ओं शान्तिरस्तु०" इत्यादि वाक्य से पहले आगे के इन श्लोकों को और भी पढ़ ले-आश्लेषाऋक्षे जातस्य मातापित्रोर्धनस्य च । भ्रातृज्ञातिकुलस्थानां दोषंसर्वंव्यपोहतु ॥ १ ॥ योऽसौवागीश्वरो नाम आदिदेवो बृहस्पतिः । मातापित्रोः शिशोश्चैव गण्डान्तं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

व्यपोहतु ॥ २ ॥ पितरः सर्वभूतानां रक्षन्तु पितरः सदा । सर्पनक्षत्रजातस्य वित्तंच ज्ञातिबान्धवान् ॥ ३ ॥ अभिषेक के बाद उसी तरह सहस्रछिद्रवाले से सहस्रधारा स्नान करके घी में मुख देखे और उसी तरह लड़के का मुख देखकर गोद में रखके दक्षिणादान का संकल्प कर उसी तरह दक्षिणा भी दे डाले। केवल दक्षिणासंकल्प में 'मूल' की जगह 'आश्लेषा' शब्द पढ़ दे। और सब शब्द वही रहेंगे। इसके बाद अन्त तक की सभी क्रियायें उसी तरह करे। केवल अन्त में "निर्ऋतिः प्रीयताम्" की जगह "सर्पाः प्रीयन्ताम्" ऐसा वाक्य पढ़े। विसर्जन से पहले तांबे के पात्र में चन्दन, पुष्प, अक्षतादि सहित जल रख उससे सर्पको अर्घ दे-ओं सर्पाधीश नमस्तुभ्यं नागानां च गणाधिप। गृहाणार्घ्यं मया दत्तं सर्वारिष्टप्रशान्तये ॥ इसके बाद विसर्जन करे। इति आश्लेषा शान्ति।

५-ज्येष्ठाशान्ति।

मूल और आश्लेषाशान्ति की ही तरह ज्येष्ठाशान्ति के लिये भी शान्तिमण्डप और उसके उत्तर स्नानमण्डप बनावे या छाया का ही प्रबन्ध करे। मण्डप की स्थापना और पूजा आदि भी उसी तरह करे। मूलादि की ही तरह जन्म से बारहवें दिन या जेष्ठा नक्षत्र आने पर, अथवा किसी शुभ दिन यह शान्ति करे। प्रातः काल स्नान और नित्य कर्म से निवृत्त हो यजमान ३७७ पृष्ठोक्त शान्ति पाठ और 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' के पाठ के बाद 'अपवित्रः०' इत्यादि करके पवित्र धारण पूर्वक आचमन प्राणायाम करे और कर्मपात्र में विधिवत् जल स्थापित करके प्रधान संकल्प कुश तिल जल आदि लेकर करे-ओं अद्यामुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकशर्माहं अस्य शिशोर्ज्येष्ठानक्षत्रजननसूचितसर्वारिष्टपरिहारद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं गोमुखप्रसवकर्मसहितां ज्येष्ठाशान्तिं करिष्ये तदर्थमाचार्यवरणादिग्रहलोकपा-

BhaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लादिपूजनान्तं कर्म करिष्ये ॥ इसके बाद ७९ पृष्ठोक्त रीति से कर्मदीपक को जलाकर उसकी पूजा करके पूर्व और पूर्वमुख रख कर आचार्यादि का वरण मूल और आश्लेषा की ही तरह ७४ आदि पृष्ठोक्त रीति से करे। यहां संकल्प में 'ज्येष्ठाशान्तिकर्म' पढ़ना चाहिये और गणेश एवं ग्रहादिकों की पूजा भी विधिवत् कर लेना चाहिये। या तो ग्रह वेदी ही पर करे या कलश स्थापित कर उसी में वरुण के साथ सभी की पूजा २०३ पृष्ठोक्त रीति से करे। इसके बाद गोमुख प्रसव कर्म करके होमवेदी के ईशान में स्वस्तिक या अष्टदल कमल चावल वगैरः से बनाकर उसपर धान रख धान के ऊपर ६३७ पृष्ठोक्त विधि से कलश स्थापित करे और उसके ऊपर चावल से भरा पूर्णपात्र तांबे का ही भरसक रक्खे। इन्द्र की प्रतिमा सोने की बनाकर उसका अग्न्युत्तारण आदि करके उसे ठीक रक्खे और कलश के ऊपर वाले पूर्णपात्र पर, एक खद्दर पर अष्टदल कमल का आकार बनाकर, स्थापित करके उसी कमल के मध्य में इन्द्र की प्रतिमा स्थापित करे। इसके बाद इन्द्र का आवाहन उसी में करे-ओं इन्द्रायेन्द्रो मरुत्वते पवस्व मधुमत्तमः। ऋतस्यर्योनि मासदम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः। इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ-यह मन्त्र पढ़े और प्रतिमा पर अक्षत पुष्प छींट दे। इसके उपरान्त उस प्रतिमा के चारों ओर क्रम से दसों दिक्पालों का आवाहन करे। (१) पूर्व-ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः इन्द्रेहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (२) अग्नि-ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः अग्ने इहा० ॥ (३) दक्षिण-ओं भूर्भुवः स्वः यमाय नमः यम इहा० ॥ (४) नैर्ऋत्य-ओं० निर्ऋतये नमः निर्ऋते० ॥ (५) पश्चिम-ओं० वरुणाय नमः वरुण० (६) वायव्य-ओं० वायवे नमः वायो० ॥ (७) उत्तर-ओं० कुबेराय नमः कुबेर० ॥ (८) ईशान-ओं० ईशानाय नमः ईशान० ॥ (९) ईशान पूर्व के मध्य में- ओं० ब्रह्मणे नमः ब्रह्मन्० ॥ (१०) पश्चिम नैर्ऋत्य के मध्य में-ओं० अनन्ताय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

नमः अनन्त० ॥ प्रत्येक बार आदि में-ओं भूर्भुवः स्वः और अन्त में-इहागच्छ इह तिष्ठ-कहता जावे और अक्षत पुष्प छींटता जावे। दसों दिशाओं में अक्षत या सुपारी पहले से ही रखकर उसी में आवाहन करे। इस प्रकार सब का आवाहन करके-ओं मनोजूति० (पृ०३७६) ओं भूर्भुवः स्वः आवाहितदेवताभ्यो नमः आवाहिता देवता इह सुप्रतिष्ठिता वरदा भवत-इसे पढ़ कर तथा एक ही बार सभी पर फिर अक्षतादि डालकर प्राणप्रतिष्ठा करे और पहले का-'ओं इन्द्रायेन्द्रो०' इत्यादि मंत्र पढ़ कर उसके अन्त में-ओं भूर्भुवः स्वः लोकपालसहितेन्द्राय नमः-इतना और लगाकर एक ही साथ प्रतिमा में इन्द्र की और दसों दिशाओं में लोकपालों की पूजा षोडशोपचार से करे। अथवा पूर्वोक्त-ओं इन्द्रायेन्द्रो० नमः' तक पढ़कर इन्द्र की पूजा करके 'ओं भूर्भुवः स्वः लोकपालेभ्यो नमः-इससे दस लोकपालों की पूजा करे। यही अधिक उचित होगा। इन्द्र को दो लाल खद्दर वस्त्र के स्थान पर और नैवेद्य के स्थान पर पूड़ी पूआ आदि नाना प्रकार के पदार्थ अर्पण करे।

इसके बाद उसी कलशके चारों ओर चार कलश और उससे पूर्व तथा चारों के मध्य में सौ छिद्रों वाला पांचवां कलश स्थापित करे। अथवा ये पांचों कलश इन्द्र के कलश से उत्तर स्थापित करे। परन्तु वहां पहले अष्टदल कमल चावलों से बनाले। इन कलशों को पूर्ववत् विधिवत् स्थापित करे और चारों ओर के चार कलशों में पंचगव्य के पांच मंत्रों (पृ० ७८) से गोमूत्रादि पांच चीजें तथा-ओं पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः। सरस्वतीतु पञ्चधा सोदेशेऽभवत्सरित्—इससे उसमें पंचामृत (गौ का दूध, दही, घी, मधु, और शक्कर एक में मिले हुए) पहले पूर्व के कलश में डालकर प्रदक्षिण क्रम से शेष सभी में डाले। सभी कलश एकही साथ स्थापित करे। मध्य के सौ छिद्रों वाले कलश में पञ्चगव्य और पञ्चामृत डालने की आवश्यकता नहीं है। इसके बाद

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust: Funding IKS-MoE-Grant

चारों कलशों में क्रम से वरुण का १४८ पृष्ठोक्त रीति से पूजन करे। उसके बाद पूर्व के कलश को छूकर एक ऋत्विक् 'ओं आनो भद्राः०' इत्यादि १० मंत्रों (पृ० ११०) का पाठ करे। दक्षिणवाले को छूकर दूसरा 'ओं भद्रा अग्ने०' इत्यादि १२ मन्त्र पढ़े। पश्चिमवाले को छूकर पुरुषसूक्त को और उत्तरवाले को छूकर 'ओं कद्रुद्राय०' इत्यादि ९ मंत्रों को पढ़े। बीचवाले सौ छिद्रों के कलश को छूकर पूर्वोक्त 'ओं इन्द्रायेन्द्रो मरुत्वते०' इस वैदिक मंत्र को १८ बार पढ़कर 'ओं इन्द्रं विश्वा०' इत्यादि ८ मंत्र पढ़े और पूर्वोक्त 'कद्रुद्राय' मंत्रों को भी पढ़कर मृत्युंजय मंत्र का १०८ या १२० बार जप करे। ये सभी मंत्र आगे मिलेंगे। इसके बाद पञ्चभूसंस्कार पूर्वक वरुण नामक अग्नि की स्थापना और पूजाआदि करके १९० पृष्ठोक्त रीति से कुशकण्डिका की समस्त क्रियायें होम से पहले की करडाले। होम के पदार्थों में समिधा, घी, चरु, दही, घी तिल मिश्रित मधु और तिल भी रहें। चरु को घी गरम करने के साथ ही पकावे और घी के बाद ही उतारकर घी से उत्तर रक्खे। होम के समय संकल्प करे-ओं अद्येह गोमुखप्रसवहोमसहितज्येष्ठा-शान्तिहोममहं करिष्ये॥ फिर ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर पहले घी से आघार और आज्यभाग की दो दो आहुतियां देकर उनका संस्रव प्रोक्षणीमें रखता जावे। फिर अन्वारंभ छोड़कर २०३ पृष्ठोक्त रीति से ग्रहों को उनकी समिधा, घी और चरु से ८-८ आहुतियां अधिदेवता प्रत्यधिदेवता को ४-४ और लोकपाल दिक्पालों को २-२ आहुतियां दे और क्षेत्रपाल, वास्तु पुरुष और विश्वकर्मा को यहां छोड़ दे। फिर ६४१ पृष्ठोक्त रीति से गोमुखप्रसव होम दही, मधु घी और तिल एक में मिलाकर करे। उसकी २८-२८ या ८८ आहुतियां हर मंत्र से दे। तब ज्येष्ठाशान्तिका प्रधानहोम करे। इसमें इन्द्र और प्रजापति के मंत्र और समस्त व्याहृतियों से आहुतियां दी जाती हैं। प्रत्येक की आहुतियां १०८ होती हैं। इन्द्रकी आहुतियां पलाश की समिधा, घी और चरु से; प्रजापति की तिल से और व्याहृति की भी तिल से ही। पहले इन्द्र की आहुतियां दे--ओं इन्द्रायेन्द्रो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

मरुत्वते पवस्वमधुमत्तमः । ऋतस्ययोनिमासदम् स्वाहा इदमिन्द्रायनमम ॥ समिधा, चरु और घी इन में प्रत्येक से १०८ आहुतियां इस मंत्र से देकर प्रजापति को केवल तिल में घी मिलाकर १०८ आहुतियां इस मंत्र से दे-ओं प्रजापते नत्वदेतान्यन्यो विश्वारूपाणि परिता बभूव। यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं ँ स्यामपतयोरयीणाम् स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ इसके बाद 'ओं इन्द्रायेन्द्रो०' मंत्र को एक बार पढ़कर तिल से १०८ आहुतियां इस मंत्र से दे— ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ फिर वास्तुपुरुष, क्षेत्रपाल और विश्वकर्मा को २१० पृष्ठोक्त आहुतियां दे। अनन्तर तिल, घी, चरु और समिधा सभी को मिलाकर एक आहुति यों दे-ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ फिर १९४ पृष्ठोक्त तीन व्याहृति, पञ्चवारुणी और एक प्रजापति की ये नौ आहुतियां घी से ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर देकर हरबार प्रोक्षणी में संस्रव रक्खे। इसके बाद संस्रव प्राशन (पृ० २४३) करके ब्रह्मा को पूर्ण पात्रकी दक्षिणा दे, प्रणीता का जल सिर पर डालकर उसे ईशान में औंधे और बर्हिःहोम करे। यह सभी बातें २४३ पृष्ठ को देखकर उसी तरह करे। फिर २१४ पृष्ठोक्त रीति से ग्रह आदि को खीर या दही अक्षत की बलि दे, और इन्द्र को उनकी प्रतिमा के पास 'ओं इन्द्राय सांगाय०' इत्यादि रीति से बलि देकर अन्त में क्षेत्रपाल को बलि दे (२१७)। फिर मूलशान्ति की तरह ३२२ पृष्ठोक्त रीति से पूर्णाहुति से लेकर 'त्र्यायुष' तक करके स्नानमण्डप में यजमान को ले जाकर सर्वौषधियां पीसकर उसके शरीर में लगावे और श्वेत वस्त्र पहनाकर उत्तरमुख पीढ़े पर बैठावे। उसकी बाईं ओर पत्नी और पुत्र बैठें और उत्तरमुख खड़े होकर सभी कलशों के जल एक बृहत्पात्र में करके ब्राह्मण उसका अभिषेक पल्लवों से करें। अभिषेक आरंभ होने से पहले संकल्प करले-ओं अद्येहामुकशर्म्माहं मम शिशोर्ज्येष्ठाशांतिकर्मणि यज्ञान्तस्नानं करिष्ये ॥ मूलशान्ति

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के समय जिन मंत्रों से अभिषेक किया है और आश्लेषा शान्ति में जो तीन श्लोक और जोड़े गये हैं उन सबों को क्रम से पढ़कर उसी तरह अभिषेक करे । केवल इस बात का स्मरण रक्खे कि श्लोकों में जहाँ जहाँ 'मूल' पद हो वहाँ वहाँ ज्येष्ठा पद देताजाय और 'सर्पनक्षत्र' की जगह 'ज्येष्ठानक्षत्र' तथा 'आश्लेषा ऋक्ष' की जगह भी 'ज्येष्ठानक्षत्र' पद पढ़े । इसलिये अच्छी तरह ध्यान रखकर श्लोकों में यह जरासा हेर फेर ठीक कर लेना चाहिये। जहाँ 'मूलोत्थ' पद होगा वहाँ 'ज्येष्ठोत्थ' पढ़ना होगा। इसी तरह जहाँ जहाँ समास हो वहाँ वहाँ चेत लेना होगा । केवल १८ वें श्लोक का मूल शब्द ज्यों का त्यों रहेगा । अभिषेक के बाद सौ या हजार छिद्रों वाले कलश से स्नान कराते हैं । या अभिषेक का ही जल ऐसेही घड़े में भरकर यजमान के सिर के ऊपर लटकाते हैं और उसका जल धीरे धीरे उसके सिरपर गिरता है । अभिषेक के बाद नवीन वस्त्र पहन घी में, मूलशान्ति की ही तरह (पृ०६५७), अपना मुख देख उस घी को किसी को दे और इन्द्र की दोबारा संक्षिप्त पूजा करके किसी पात्र में चन्दन, पुष्प, अक्षतादि मिश्रित जल का अर्घ रख उसे हाथ में ले और-ओं नमस्ते सुरनाथाय नमस्तुभ्यं शचीपते । गृहाणार्घ्यं मया दत्तं गंडदोषप्रशान्तये- इस मंत्र से वह जल इन्द्रकी प्रतिमा पर डाले या वहीं रख दे । फिर आचार्य को लाल गौ या उसका निष्क्रय दक्षिणा दे-ओं अद्येहानुष्ठितस्य ज्येष्ठाशान्तिकर्मणःसांगतार्थमिमां रक्तवर्णां गां तन्निष्क्रयं द्रव्यं वा आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे । ओं तत्सन्नमम ॥ और उस गौ की पूंछ आचार्य को पकड़ा कर प्रार्थना करे-ओं यक्षगन्धर्वसिद्धैश्च पूजितोऽसि शचीपते । दानेनानेन देवेश गंडदोषं प्रशामय ॥ अन्यान्य ऋत्विजों को भी दक्षिणा का संकल्प करे-ओं अद्येहानुष्ठितस्य ज्येष्ठाशान्तिकर्मणो नानानामगोत्रेभ्यऋत्विग्भ्यो यथाशक्ति दक्षिणां विभज्य संप्रददे तथा इमां भूयसीं दक्षिणां नानाजनेभ्यः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ और शेष ब्राह्मणों को भोजनादि से सन्तुष्ट कर उन्हें बिदा कर आचार्य को सम्पूर्ण सामग्री के साथ इन्द्र की प्रतिमा देडाले और इन्द्र कीप्रार्थना करे- ओं अज्ञानादथवा ज्ञानाद्वैकल्याद्वा धनस्य च । यन्न्यूनमतिरिक्तं वा तत्सर्वं क्षन्तुमर्हसि ॥ अन्त में २२९ पृष्ठोक्त रीति से सभी का विसर्जन करे और हाथ जोड़कर कहे-ओं अनेन ज्येष्ठाशान्तिकर्मणा परमेश्वरःप्रीयतांतत्प्रीत्या चेन्द्रो ज्येष्ठेशः प्रीयताम्॥ इति ज्येष्ठाशान्ति।

६-नक्षत्रगण्डान्तशान्ति ।

ज्योतिष के प्रकरण में जो तीन प्रकार के गण्डान्त बताये गये हैं उनमें प्रधान नक्षत्र गण्डान्त है । रेवती और अश्विनी; आश्लेषा और मघा; ज्येष्ठा और मूल की सन्धि ही नक्षत्रगण्डान्त है । इसका समय ४ दण्ड माना जाता है जो दो घड़ी या १ घंटा ३६ मिनट के बराबर है । प्रत्येक नक्षत्र के दो दो दण्ड गण्डान्त में शामिल हैं । रेवती के अन्त के दो दण्ड और अश्विनी के आदि के । इसी तरह शेष दो को भी समझना चाहिये । तिथिगण्डान्त का समय इसका आधा है । पूर्णिमा या अमावस्या और प्रतिपदा; पञ्चमी और षष्ठी; दशमी और एकादशी की सन्धि को तिथिगण्डान्त कहते हैं । यह दो दण्ड या ४८ मिनटका है । हरेक तिथि के आदि अन्त के एक एक दण्ड इसमें लिये जाते हैं । लग्नगण्डान्त एकही दण्ड या २४ मिनट का होता है । इसमें मीन और मेष; कर्क और सिंह; वृश्चिक और धनु इन लग्नों की सन्धि लीजाती है । प्रत्येक सन्धि में आदि के लग्न के अन्त के १२ मिनट और उसके बाद वाले के शुरू के १२ मिनट लिये जाते हैं । गण्डान्त में जन्म और विवाह आदि शुभ कार्य वर्जित हैं ।

नक्षत्रगण्डान्तशान्ति के दिन, जो द्वादशाह को, छ महीने बाद या किसी शुभ दिन होती है, प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होकर यजमान आसन पर पूर्वमुख बैठे और पवित्र धारण, ओं अपवित्रः इत्यादि तथा इससे पहले शान्तिपाठ और 'सुमुखश्चैकदन्तश्च'० इत्यादि ३७७ पृष्ठोक्त रीति से करके और आचमन एवं प्राणायाम करके

Eg. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

संकल्प करे-ओं अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे ममास्यशिशोर्नक्षत्रगण्डान्तजननसूचितसर्वारिष्टनिरसनद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं सगोप्रसवशान्तिनक्षत्रगण्डान्तशान्तिं करिष्ये ॥ फिर ७४ आदिपृष्ठोक्त रीति से आचार्यवरणपूर्वक गणेशपूजनादि सभी पूर्वांग नवग्रहादि के पूजा पर्यन्त करडाले। इसके बाद गोप्रसव कर्म भी ६३१ पृष्ठोक्त रीति से करके गण्डान्तशान्ति का आरंभ करे। यदि गोमुखप्रसव के समय ऋत्विजों का वरण न किया हो तो आचार्य की ही तरह उनका वरण करलेंगे। सभी के वरणमें 'नक्षत्रगण्डान्तशान्तिकर्म' यह शब्द संकल्प वाक्य में पढ़ने होंगे। इसके बाद भूमि को गोबर से लीपकर उस पर कांसे का एक नवीन पात्र खीर या दूध से भरकर रक्खे और उस पर मक्खन (नवनीत) से भरा शंख पर्वमुख रखकर उसीपर चांदी की चन्द्रकी नवीन मूर्त्ति अग्न्युत्तारण पूवक (५१२) स्थापित करे और-ओं आप्यायस्वसमेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य संगथे ॥ ओं भूर्भुवः स्वः चन्द्राय नमः चन्द्र इहागच्छ इह तिष्ठ-इस मंत्र से चन्द्रमा का उस में आवाहन और-ॐ मनोजूति० (पृ० ३७६) ओं भूर्भुवः स्वः चन्द्राय नमः चन्द्र इह सुप्रतिष्ठितो वरदो भव-इस मंत्र से प्राणप्रतिष्ठा करके-'ओं आप्यायस्व०नमः' पर्य्यन्त पूर्वोक्त रीति से चन्द्रमा की षोडशोपचार पूजा करे। उस प्रतिमा पर दो श्वेत वस्त्र और हजार श्वेत पुष्प चढ़ावे और यथाशक्ति मोती या और श्वेत वस्तु दक्षिणा चढ़ावे। फिर उसी मंत्र का हजार बार जप करे और जप के समय चन्द्रमा का ध्यान करे। उसके उत्तर तांबे का या कांसे ही कलश विधिवत् स्थापित कर उसके ऊपर चावल से पूर्ण एक पात्र पूर्णपात्र की जगह रख और उस पर श्वेत वस्त्र रख बृहस्पति की प्रतिमा उसपर अग्न्युत्तारणादि करके स्थापित करे और-ओं बृहस्पते अतियदर्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु यद्दीदयच्छवस ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

ओं भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः-यह मंत्र पढ़ कर 'बृहस्पते इहागच्छ इह तिष्ठ'-यह पढ़े और अक्षत पुष्प से आवाहन पूर्वक-ओं मनोजूतिः० ओं भूर्भुवः स्वः बृहस्पतये नमः बृहस्पते इहसुप्रतिष्ठितो वरदो भव-से प्रतिष्ठा करके 'ओं बृहस्पते अति०' इत्यादि मंत्र से बृहस्पति की पूजा कर उसके उत्तर चार कलश स्थापित करे। उनमें आम्रपल्लव डालने के बाद क्रम से केसर, चन्दन, कुट और गोरोचन पानी में घिसकर उन्हीमें डाले। ये चारों पदार्थ एक में न डालकर अलग अलग डाले और उन चारों में वरुण की पूजा १४८ पृष्ठोक्तरीति से करे। इसके बाद पंचभूसंस्कारपूर्वक वरदनामक अग्नि की स्थापना करके कुशकण्डिका की सभी क्रियायें होम से पहले तक की (पृ०१९०) कर डाले। गोप्रसवहोम के लिये दही, मधु, तिल और घी एक में मिला कर रक्खे और शेष होम के लिये समिधा, चरु, घी और तिल रक्खे। होम का संकल्प करे-ओं अद्येह गोमुखप्रसवहोमसहितनक्षत्रगण्डान्तशान्तिहोममहं करिष्ये॥ फिर घी से आघार और आज्यभाग (पृ०१६४) की दो दो आहुतियाँ दे और ब्रह्मा का अन्वारंभ भी उनके समय अवश्य रक्खे। अनंतर अन्वारंभ छोड़कर ग्रहादि की आहुतियां (पृ० ६४१) दे। ज्येष्ठाशान्ति में या मूलशान्ति में ही आहुतियों की संख्या लिखी है। इसके बाद चन्द्र, बृहस्पति और वरुण को उनके मंत्रों से फिर उन्हीं चीजों की आहुतियां से देने के पहले गोमुखप्रसवहोम ६४१ पृष्ठोक्तरीति से कर डाले। अन्त में चन्द्र, बृहस्पति और वरुण को १०८ आहुतियां प्रत्येक वस्तुओं से देवे। चन्द्र और बृहस्पति दो के मंत्र ऊपर लिखे हैं और वरुण का मंत्र-ओं इमंमे वरुण श्रुधी हवमद्याच मृडय। त्वामवस्युराचके स्वाहा इदं वरुणाय नमम-यह है। 'ॐ आप्यायस्व०' मंत्र के अन्त में स्वाहा लगाकर 'इदं चन्द्राय नमम' और 'ॐ बृहस्पते०' के अन्त में स्वाहा लगाकर 'इदं बृहस्पतये नमम-कहना चाहिये और उसी के साथ आहुति देना चाहिये। इसके बाद स्विष्टकृत् होम से

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Panini Kanya Maha Vidyalaya Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-
CC-0. Jangamwadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लेकर पूर्णाहुति तक मूलोक्त (पृ० ६४८) रीति से करके अभिषेक करे। पहले इसका संकल्प करे-ओं अद्येह नक्षत्रगण्डान्तशान्ति-कर्मणि यज्ञान्तस्नानमहं करिष्ये ॥ अभिषेक के बारे में यह विचार है कि यदि बालक दिन में हुआ हो तो उसका अभिषेक पिता के साथ बैठाकर करे। यदि रातमें जन्मा हो तो माता के साथ और सन्ध्या समय पैदा होने पर दोनों के साथ करे। परन्तु अभिषेक में प्रधान शिशु ही माना जाता है न कि पिता या माता। पहले कहे वाले चार कलशों के जल एक पात्र में रख पल्लव से अभिषेक करे-ओं सहस्राक्षेण शतशारदेन शतायुषा हविषाहार्षमेनम् शतं यथेमं शरदोन यातीन्द्रो विश्वस्य दुरितस्य पारम्। फिर सभी कलशों के जल एकत्र कर ले और पत्नी पुत्र के साथ यजमान का अभिषेक करे, मूल शान्ति के उन्हीं 'ओं समुद्रज्येष्ठाः' मन्त्र से लेकर अन्त तक के सभी मन्त्रों से। इसके बाद यजमान और उस की स्त्री अच्छी तरह स्नान कर तथा नवीन वस्त्र तिलक धारण कर चन्द्र की मूर्त्ति आदि के सहित शंख का दान आचार्य को करे-ओं अद्येह इमं सचन्द्रं शंखं वस्त्रयुगदक्षिणाकं नीतादिसहितं गण्डदोषापनुत्तये यजुर्वेदविदे आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम॥ और सोने के सहित धेनु या उसका निष्क्रय उसकी सांगता के लिये दे-ओं अद्येहाष्ठितगण्डान्तजननशान्तिसांगतार्थं हिरण्यसहितांधेनुं निष्क्रयंवा आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम फिर इसी तरह-ओं अद्य वागीश्वरं पात्रसहितं तुभ्यं गण्ड दोषशान्तये संप्रददे तत्सांगतायै यथाशक्ति दक्षिणां संप्रददे ओं तत्सन्नमम-कहकर पुत्र पत्नी सहित कर्त्ता बृहस्पति की मूर्त्ति और यथाशक्ति उसकी दक्षिणा भी आचार्य को ही दे दाता अन्यान्य ऋत्विजों को भी यथाशक्ति दक्षिणा दे और भूयसी भी ओं अद्येह नक्षत्रगण्डान्तशान्तिसांगतार्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणां नानानामगोत्रेभ्य ऋत्विग्भ्यो भूयसीं दक्षि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

च नानाजनेभ्यो विभज्य संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर अन्यान्य देवताओं और अग्नि आदि का विसर्जन अक्षत लेकर (पृ० २२६) करे। अन्त में आयुवृद्धि के लिये 'ओं सहस्राक्षेण०' मंत्र का यथाशक्ति जप करके ब्राह्मणभोजन करावे और स्वयं भोजन कर विश्राम करे। इति नक्षत्रगण्डान्तशान्ति।

७–तिथिलग्नगण्डान्तशान्ति।

तिथिगण्डान्त में जन्म होने पर नालच्छेदन से पहले ही बैल का दान करे और लग्नगण्डान्त में सोने का दान नाल के छेदने से पहले ही कर डाले। उस दान से पहले पुत्र का मुख न देखे। दान की रीति यह है कि ब्राह्मण को बुलाकर उसका पांव (पृ० ७४) धोकर विधिवत् पूजा करे और बैल या सोने की भी नाम मंत्र से पूजा करे। फिर हाथ में तिल, कुश, जौ, जलादि लेकर संकल्प करे–ओं अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अस्यशिशोः तिथिगण्डान्तजन्मसूचितसर्वारिष्टनिरसनद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थम् अनडुद्दानं करिष्ये॥ लग्नगण्डान्त में भी यही संकल्प करे। केवल 'तिथिगण्डान्त' की जगह 'लग्नगण्डान्त' पढ़े और 'अनडुद्दानं' की जगह 'हिरण्यदानं' कहे। फिर दूसरा जल और तिलादि हाथ में लेकर और बैल की पूँछ पकड़कर वही वाक्य पढ़े। केवल 'अनडुद्दानं, हिरण्यदानं करिष्ये' की जगह 'अनड्वाहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ हिरण्यं संप्रददे ओं तत्सन्नमम'–ऐसा क्रमशः पढ़े और हिरण्यदानके समय उसे ही हाथ में पूँछ की जगह ले। ब्राह्मण को पूँछ या सोना कुश आदि के साथ ही पकड़ा दे। ब्राह्मण उसे–ओं स्वस्ति–कहकर स्वीकार करे। इसके बाद उस दान की प्रतिष्ठा के लिये दक्षिणा का संकल्प करे—ओं अद्येह कृतस्यास्यदानस्य प्रतिष्ठार्थमिमां यथाशक्तिं दक्षिणां संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ यदि बैल न दे सकें तो

Eg. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उसका दाम हीं निष्क्रय स्वरूप दे । इसके बाद आशौच बीतने पर या किसी शुभ दिन शान्ति करावे । शान्ति की रीति तिथि और लग्न-गण्डान्त में वही होगी जो नक्षत्रगण्डान्त में है । इसमें केवल एक ही वरुण का कलश रहेगा और उसी पर वरुण की सोने की प्रतिमा दोनों शान्तियों में स्थापित करेंगे । सारांश १४५ आदि पृष्ठोक्त रीति से कलश स्थापित कर उसके उपर वरुण की प्रतिमा अग्न्युत्तारणपूर्वक रक्खेंगे और वहीं लिखी विधि से उनकी प्रतिष्ठा और पूजा-औ तत्त्वायामि० इत्यादि मंत्र से करेंगे । बस यही कलश रहेगा। बृहस्पति का कलश न होगा और न वरुण ही के चार कलश होंगे। संकल्प भी वैसा ही होगा । केवल 'नक्षत्रगंडान्त' की जगह 'तिथि-गण्डान्त', 'लग्नगण्डान्त' शब्द पढ़े । गोमुखप्रसव कर्म भी वैसे ही होगा । ग्रहादि का होम भी उसी तरह होगा । यहाँ होम के लिये पदार्थ भी वही समिधा, चरु होंगे और तिल, जौ, घी एक में मिलाकर इन्हीं तीन से वरुण की आहुतियां प्रत्येक की उसी 'ॐ तत्त्वायामि०' मंत्र से दी जायंगी । इन आहुतियों से पहले के आघार, आज्यभाग और ग्रहादि के तथा गोमुखप्रसव के होम मूलशान्ति की ही तरह होंगे और गोमुखहोम के बाद ही उक्त पदार्थों से वरुण की १०८ आहुतियाँ अलग देकर फिर स्विष्टकृत् से पूर्णाहुति तक मूलशान्ति की ही तरह करेंगे । जिस प्रकार नक्षत्रगण्डान्त में 'ओं समुद्रज्येष्ठा०' इत्यादि मंत्रों से अभिषेक किया है उसी प्रकार यहाँ भी करेंगे। मगर वहाँ का 'ॐ सहस्राक्षेण०' इन ३ मंत्रों वाला अभिषेक यहाँ न होगा । यहाँ कलश भी एक ही होगा । यदि नवग्रहों का भी आवाहन कलश में ही करेंगे और वह दूसरा ही होगा, तब तो दो हो सकते हैं । अभिषेक में विशेषता यह होगी कि यदि गण्डान्त के पूर्वार्द्ध में बालक का जन्म होगा तो माता, पिता और बालक तीनोंका अभिषेक करेंगे । मगर गण्डान्त आधा बीनने पर यदि उत्तरार्द्ध में होगा तो पिता का न कर केवल माता और बालक का करेंगे । दक्षिणा में भी आदि की जगह जौ, तिल, धान, उड़द, और मूंग देंगे । आचार्य को वरुण की मूर्ति नक्षत्र गंडान्त की ही तरह देंगे । संकल्प में केवल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

'नक्षत्र' की जगह 'तिथि' और 'लग्न' पढ़ेंगे । आचार्य तथा अन्य ऋत्विजों को दक्षिणा देने में–ॐअद्येहानुष्ठिततिथि (लग्न)–गण्डान्तशान्तिप्रतिष्ठार्थमिमे यवतिलव्रीहिमाषमुद्गा दक्षिणात्वेन ऋत्विगाचार्येभ्यो विभज्य संप्रददे ॥ ॐतत्सवमम–पढ़ेंगे । इसके बाद विसर्जनादि उसी तरह करेंगे । ब्राह्मण-भोजन भी यथाशक्ति करावेंगे ।

इस प्रकार यद्यपि ग्रहों तथा नक्षत्रादि की शान्ति की विधि हमने अबतक इस प्रकरण में लिखी है । फिर भी विषय की गंभीरता के कारण यह लेख कठिन अवश्य प्रतीत होगा । विशेषतः उन लोगों को जो कर्मकांड से बिल्कुल ही अपरिचित हैं । उनसे हमारा अनुरोध है कि इसका बार बार मनन करें और परिभाषा प्रकरण तथा साधारण कर्म प्रकरण इन दो के साथ इस शान्ति कर्म के प्रकरण का पूरा अभ्यास कर डालें । तभी यह विषय उनकी समझ में आ सकेगा । नहीं तो वे अकस्मात् घबड़ाकर बीच में हीं रह जाँयगे । परन्तु अभ्यास से सब कठिनाई दूर हो जायगी । इति तिथिलग्नशांति ।

८–वास्तुशान्ति, शिलान्यास और गृहप्रवेश ।

गृहोपयोगी कर्मों में वास्तुशांति, शिलान्यास या नींव की स्थापना और गृहप्रवेश अत्यन्त आवश्यक हैं । इनकी आवश्यकता प्रायः हुआ करती है । ठीक ठीक गृहनिर्माण पर ही गृहस्थाश्रम का सुख बहुत अंशों में निर्भर है । यद्यपि गृह के पिंड आदि का संशोधन भी इसका एक अत्यन्त आवश्यक अंग है और उसका निरूपण 'लग्न और मुहूर्त्त' नाम के ज्योतिषप्रकरण में आगे मिलेगा । फिर भी, वास्तुशान्तिपूर्वक शिलान्यास और गृहप्रवेश भी कम आवश्यक नहीं हैं । इनकी भी उतनी हीं आवश्यकता है । हमारे गृह्यसूत्रों में एतदर्थ स्वतन्त्र प्रकरण हीं रक्खे गये हैं ।

साधारण कर्मों के प्रकरण में जो वास्तुपूजा लिखी है उसे ही वास्तुशान्ति भी कहते हैं और उसके ही बाद शिलान्यास होता है और गृहप्रवेश भी होता है । शिलान्यास के समय जो वास्तुशान्ति होती है वही गृहप्रवेश के समय भी की जाती है । दोनों में कुछ भी अन्तर

Digitized by eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नहीं होता । केवल संकल्प में 'शिलान्यासकर्मणि' और 'प्रवेश कर्मणि' यही अलग अलग पढ़ेंगे । शिलान्यास के समय मकान बनाने की भूमि से उत्तर मण्डप आदि बनेगा और पूर्व बनने पर वही घर के उत्तर होगा । परन्तु पहले लिखी पूजा और इस शान्ति में यही अन्तर है कि पहले वास्तुदेवताओं का होम या उन्हें बलिदान नहीं किया है और वहां इस शान्ति के अध्याय होने के कारण इसकी आवश्यकता भी नहीं समझी जाती है। यदि कियाजावे तो ठीक ही है । पर, न करने से भी काम चल जाता है । लेकिन यहां तो वास्तुशान्ति ही प्रधान कर्म है । अतएव यहां होम तथा बलिदान ये दो विशेषतायें हैं । अतएव यहीं दो बातें यहां हम लिख रहे हैं । यह भी ध्यान रहे कि यहां भरसक वास्तु प्रतिमा सोने या चांदी की सर्पाकार बनाई जावे और ८१ घरों के मण्डल में जहाँ वास्तु की पूजा की जाती है वहां वह मूर्त्ति अन्न-त्तारण और पञ्चामृतस्नानपूर्वक स्थापित करके उसकी पूजा की जावे । जो मण्डप निर्माण की विधि वहां लिखी है वही यहां के लिये भी है । परन्तु यहां पर तो वास्तुवेदी ही प्रधान वेदी होगी और सर्वतोभद्रमण्डल की जगह वास्तुमण्डल ही प्रधान वेदी पर बनेगा । नैर्ऋत्यकोन में वास्तुवेदी न बनाकर सर्वतोभद्र की वेदी वहाँ या वास्तुवेदी से पूर्व ही बनावेंगे । भरसक नैर्ऋत्य में हीं सर्वतो-भद्रमण्डल इस वास्तुशान्ति में होना चाहिये । वास्तुपूजा के आरंभ करने से पहले वास्तुवेदी के चारों ओर कील गाड़कर एक संक्षिप्त कर्म किया जाता है, जो पहले नहीं लिखा है। इसे भी यहां लिखदेते हैं ।

जिस भूमि में घर बनाना हो उसका पिंड वगैरः ठीक करके शुभ मुहूर्त्त में उसके चारों ओर रस्सी से घेरना होता है और पूर्व पश्चिम, उत्तर, दक्षिण इन दिशाओं में गड़बड़ी न होसके इसका ठीक विचार करना होता है । एतदर्थ एक एक हाथ के चार मजबूत खूंटों की, जो ऊपर चौकोने या ६ अंगुल मोटे होते हैं और सूत, या कुश की चिकनी रस्सी की आवश्यकता होती है । जिस दिन ऐसा करना होता है उसी दिन प्रातः काल नित्य क्रिया से निवृत्त होकर यजमान वहाँ जावे और 'ॐ अद्येह सूत्रपातकर्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

करिष्ये। तत्राचार्यस्य वरणादि गणेशादिपूजनंचकरिष्ये-
यह संकल्प करके शान्तिपाठ और गणेशवन्दन (पृ० १०९) करके
गणेश की पूजा (पृ० १०३) उसी भूमि को पोत लीपकर करे और
ईशान भाग में कलश की स्थापना (पृ० १४५) कर वरुण की पूजा
करके विश्वकर्मा का उसीं में आवाहन करे और पूजा भी करे।
इसका मंत्र-ओं विश्वकर्मन् हविषा वर्धनेन त्रातारमि-
न्द्रमकृणोरवध्यम्। तस्मै विशः समनमन्त पूर्वीरय-
मुग्रो विहव्यो यथाऽसत्। ॐ भूर्भुवः स्वः विश्वकर्मणे
नमः॥ संक्षेप से पञ्चोपचार पूजा करके रस्सी, लोहे की मुष्टि (हथौड़ा
या मुंगरी) और खूँटे तथा कुदाल की पूजा भी 'ओं सूत्रायनमः।
ओं शंकुभ्योनमः। ॐ मुष्ट्यैनमः। ओं कुद्दालायनमः-
इन्हीं नाममंत्रों से कर डाले। गृहनिर्माणभूमि को ठीक ठीक चौकोन
नापले और दिशाओं तथा कोनों पर दूसरे छोटे खूँटों से चिन्ह
करे या और कोई चिन्ह करे। यह चिन्ह पिंड से बाहर वहां रहें
जहां दीवार होगी। जब खूँटे गाड़ने का मुहूर्त्त ठीक हो तब चारों
खूंटों की जड़ में मधु, घी, दही और दूध लगादे, उनके ऊपर
त्रिशूल या चक्र का चिन्ह करके उनमें चन्दन लगावे और उन्हीं में तीन
बार सूत लपेटकर किसी ब्राह्मण से उन्हें पकड़वावे। पहले अग्नि
कोन में जाय और पूर्वमुख हो वहां का चिन्ह हटाकर उसी चिह्नपर
दहिने हाथ से खूंटा लेकर बायें से भी पकड़कर खड़ा करे। बिलकुल
सीधा और मजबूत पकड़कर आठ बार ऊपर से हथौड़े आदि से मारता
हुआ मंत्र पढ़े-ॐ विशन्तु भूतले नागा लोकपालाश्च सर्वतः
अस्मिन् स्थाने तु तिष्ठन्तु आयुर्बलकराः सदा॥ मंत्र भी
आठ बार बार पढ़े। फिर दूसरे से धीरे धीरे ठोंकवाकर अच्छी तरह
जमीन में धंसा दे। खूंटे का फट जाना या पूर्व और ईशान छोड़
कर अन्य दिशा में झुकना अशुभ माना गया है। इसका ध्यान रख
कर गाड़ना और ठोंकना चाहिये। इसी तरह क्रमसे नैर्ऋत्य, वाय-
व्य और ईशान कोन में भी गाड़े। फिर जो सन, सूत या कुश की
रस्सी रक्खी है उसे लेकर पहले ईशान कोन के खूँटेमें उसका किनारा

Eg. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मजबूत बाँधे फिर अग्नि कोन में खींचकर लेजावे और वहाँ के खूँटे में दो बार दृढ़ लपेटकर नैर्ऋत्य और वायव्य में ऐसा ही करता हुआ फिर ईशान कोन के खूँटे में लाकर दूसरा किनारा कसके बाँध दे और अग्नि कोन के खूँटे से आरंभ करके क्रम से चारों के पास दही और भात या दही और अक्षत की बलि दे-(१) ओं अग्निभ्यो ऽप्यथ सर्पेभ्यो ये चान्ये तत्समाश्रिताः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि पुण्यमोदनमुत्तमम् स्वाहा ॥ (२) ओं नैर्ऋताधिपतिश्चैव नैर्ऋत्यां ये च राक्षसाः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि सर्वे गृह्णंतु मंत्रितम् स्वाहा ॥ (३) ॐ नमो वायुस्थरक्षोभ्यो ये चान्ये तत्समाश्रिताः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि गृह्णन्तु पुण्यमोदनम् स्वाहा ॥ (४) ओं रुद्रेभ्यश्चैव सर्वेभ्यो ये चान्ये तत्समाश्रिताः। बलिं तेभ्यः प्रयच्छामि गृह्णन्तु सततोत्सुकाः स्वाहा ॥ फिर एक स्थान पर पृथिवी का ध्यान कर उसकी पूजा-ओं स्योनं पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी। यच्छानः शर्म सप्रथाः ओं भूर्भुवः स्वः पृथिव्यै नमः-इसी मंत्रसे आवाहनपूर्वक करे तदुपरांत वास्तुपुरुष की पूजा-ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवानः। येत्त्वेमहे प्रतितन्नो जुषस्व शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ ओं भूर्भुवः स्व वास्तोष्पतये नमः-से आवाहन करके करे फिर उसी जगह धान या जौ रख कर उस पर कलश स्थापन (पृ० १४६) करके ब्रह्मा की पूजा करे-ओं ब्रह्म जज्ञानं० (पृ० २०७) ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः—इस मंत्र से। फिर ब्राह्मणों के साथ स्वस्तिवाचन पूर्वक उस कलश को लेकर यजमान ईशान के खूंटे से आरंभ करे तानी हुई रस्सी जिस तरह भूमि पर हो उसी तरह जल की पतली धार गिरावे और लौटकर उसे अपनी जगह रख सर्वबीज या सर्वौषधि को उसी तरह पानी की धारा की जगह सर्वत्र डाले। फिर उस कलश

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

के उत्तर दूसरा शान्ति कलश स्थापित कर उसकी पूजा-ओं भूर्भुवः स्वः कलशाय नमः-इसी मंत्र से करके उसके चारों ओर तीन सूत लपेटे और शान्ति पाठ के साथ वह कलश लेकर आचार्य अग्निकोन में जाकर कुदाल में मधु और घी लगाकर किसी आदमी को उत्तर मुख खड़ा करके पिंड से बाहर सूत्र के चिन्ह के पास खोदवावे और बाँस की नई टोकरी से उसकी मिट्टी सात बार नैर्ऋत्य कोन में फेंकवावे। फिर शान्ति कलश का जल उस गढ़े में डाल कर शेष जल को सम्पूर्ण भूमि पर छिड़के, कुदाल आदि पर डाले और उस पर चन्दन आदि चढ़ा कर आचार्यादि को दक्षिणा भी दे।

फिर तीसरे पहर उस भूमि को अग्नि कोन से आरंभ कर खोद वावे। दो हाथ, चार हाथ या पुरुष भर गहरा खोदा जावे। यदि दो तला मकान बनाना हो तो जहां तक कंकड़, बालू या जल मिले वहां तक खोदना चाहिये। मगर साधारण मकान में पुरुष भर के नीचे यदि हड्डी वगैरः रह जावे तो उससे कोई हानि नहीं होती। खोदने के समय सीप, संख, सोना, लोहा, रत्न या जीता मेंढ़क, कछुआ आदि जो कुछ मिले उसे सुरक्षित स्थान पर रखता जावे। समूची भूमि खोदी जा चुकने पर दूसरे दिन प्रातः काल आचार्य आकर ईशान कोन में विधिवत्कलश स्थापित कर उसमें-ॐ तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियं जिन्वमवसे हूमहे वयम् । पूषानो यथावेदसामसद्वृधे रक्षिता पायुरदब्धः स्वस्तये ॥ ओं भूर्भुवः स्वः शिवाय नमः-मंत्र से शिव का आवाहन पूजन कर उसके उत्तर भूमि पर या उसी कलश में ही वास्तुपूजन पूर्वोक्त मंत्र से करे। फिर कलश लेकर अग्नि कोन में वहां जावे जहां पहले दिन खोद कर उसमें शान्ति कलश का जल गिराया था। वहीं पूर्वमुख बैठे, कलश का जल उसमें थोड़ा सा डाल कर उसीमें खोदने के समय मिली सभी वस्तुएं सुरक्षित रक्खे और ऊपर से ८ अंगुल ऊंची मिट्टी डाल कर कलश का जल डाले। फिर छोटे छोटे पत्थरों को उस पर डाल कर उसे लकड़ी से अच्छी तरह पीट कर बैठा दे और कलश का जल उस पर अच्छी तरह डाल दे। अनन्तर उसी कलश के बचे जल से यजमान को परिवार के साथ ब्राह्मण अभिषिक्त

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
Digitized by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कर आशीर्वाद मंत्र (पृ० २२८) पढ़ें और यजमान उन्हें दक्षिणा दान करे। फिर सभी भूमि में उसी तरह मिट्टी डाल और पीट कर समतल एवं मजबूत करें।

इस प्रकार सूत्रपात और खात (भूमि को शोधने के लिये खोद डालने) के बाद नींव डालने या शिलान्यास की सामग्री एकत्र करे। नींव में डालने के लिये पांच पत्थर (शिलायें) तयार करावे। उनकी लम्बाई की आधी चौड़ाई और उसकी आधी ऊँचाई (मोटाई) रहे। ब्राह्मणादि चारों वर्णों के लिये क्रम से १७, १३ और ९ अंगुल लम्बी शिलायें होती हैं। इन पाँचों के नाम तिथियों के ही नाम हैं; नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा। इन पर कारीगर से ही क्रम से (१) कमल (२) सिंहासन (३) तोरण और छत्र; (४) कच्छप और (५) चतुर्भुज विष्णु का आकार खुदवावे। इन पाँचों के रखने को जरा बड़ी पाँच उपशिलायें बनवावे और इनके बीच में ब्राह्मणादि के लिये क्रम से पाँच, ढ़ाई, सवा और सवा अंगुलों की गहराई और चौड़ाई के छिद्र बनाये जावें जिन में उतनी हीं उंचाई के निधिकुम्भ नामक छोटे छोटे तांबे या मिट्टी के खिलौने जैसे कलश रक्खे जाते हैं। उनके नाम हैं पद्म, महापद्म, शंख, विजय, सर्वतो भद्र। शिलान्यास के दिन इन में मधु, घी, पारा और पञ्चरत्न डालकर और ऊपर से इन्हें बन्दकर इन्हीं छिद्रों में रखदेते हैं इनके ऊपर ही नींव की शिला रक्खी जाती है। इन पांच कलशों के उतने हीं बड़े पांच दल भी बनवाये जावें। इसके सिवाय वास्तुभूमि (मकान की जगह) से उत्तर परिभाषा प्रकरण की रीति से मण्डप बनवाकर उसको अच्छी तरह सजावे और उसके भीतर कुण्ड तथा वेदी आदि को ठीक बनवावे। पहले ही कह चुके है कि प्रधान वेदी ही वास्तुवेदी होगी और नैर्ऋत्य में सर्वतोभद्र के मण्डल की वेदी रहेगी। वास्तु वेदी से उत्तर ही अग्नि कुण्ड होगा या पश्चिम भी। जैसा आवश्यक हो करे। यह सब वहीं लिखा है।

मण्डप का निर्माण और उसकी पूजा, प्रतिष्ठा आदि वहीं लिखी रीति से करके सभी बात पहले ही दिन ठींक रक्खे और एक ही बार भोजन भी पहले दिन करे। प्रधान मण्डप से उत्तर एक छोटा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

स्नान मण्डप भी बनावे। दूसरे दिन नित्यनियमादि करके वहीं लिखी रीति से मण्डप में प्रवेश करे और पूर्वमुख आसन पर बैठकर आचमन प्राणायामादि करके प्रधान संकल्प करे—

ॐ अद्येहामुकशर्म्माहं गृहनिर्माणाय शिलान्यासं करिष्ये (गृहप्रवेश हो तो केवल 'गृहप्रवेशं करिष्ये' कहे) तदर्थं सर्वोपद्रवशान्तिपूर्वकायुरारोग्यैश्वर्यपुत्रपौत्रद्विपदचतुष्पदधनधान्यादिसिद्धये वास्तुशान्तिं करिष्ये तत्पूर्वांगतया च आचार्यवरणादिग्रहादिपूजनान्तं कर्म करिष्ये।

यदि मण्डप की पूजा न हुई हो तो उसे भी उसी दिन करके आचार्य, ऋत्विक् और जापकादि का वरण भी करडाले (पृ० ७४) और गणेशपूजा से लेकर ग्रहादि की पूजा भी द्वितीय प्रकरणोक्त रीति से करडाले। केवल वास्तुपूजा के समय इतनी विशेषता होगी कि पूजन से पहले उसके चारों किनारे पर ६७९ पृष्ठोक्त चार खूंटे या कीलें उसी मंत्र से गाड़कर उनपर दही अक्षत की बलि भी वहीं के मंत्रों से देंगे। यह इसलिये कि यदि भूमिशोधन से पहले यह काम उस भूमि पर न कियागया हो तो यही करके उसकी त्रुटि को पूरा करदिया जावे। फिर ८१ घरांवाले वास्तुमण्डल में वहीं लिखी रीति (९५-९७) से पूजा करे। बीच में ब्रह्मा के उत्तर पृथिवी की पूजा कर उससे उत्तर भरसक वास्तु की सोने या चांदी की सर्पाकार मूर्त्ति रख उसकी ही पूजा करते हैं। स्थापन करने से पहले मूर्त्ति का अग्न्युत्तारण और पञ्चामृतस्नान (पृ० ५१२) कराडाले। यदि मूर्त्ति न हो तो सुपारी या अक्षत रख कर ही पूजन करे।

सब की पूजा के बाद होम केलिये पंचभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना करके ब्रह्माके वरण से लेकर होम से पहले की सभी कुशकण्डिका की क्रियायें (पृ० १९०) करडाले। होम के पदार्थों में समिध, चरु, घी, गौ, काले तिल और पांच श्रीफल रक्खे। और बलि के लिये भात और उड़द या खीर अथवा दही अक्षत। ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर आघार और आज्यभाग की आहुति देकर शेष

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation; Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आहुतियां विना अन्वारंभ के ही दे । होम से पहले यह संकल्प करे-
ओं अद्येहामुकशर्म्माहं वास्तुशान्तिकर्मणि होमं करिष्ये।
इसके बाद घी से जो आघार और आज्यभाग की आहुतियां
(पृ० १९४) और अन्त में फिर व्याहृति आदिसे जो नौ आहुतियां
जायँगी, उनका संस्रव रखने के लिये अग्नि के उत्तर एक
पूर्ण कलश भी स्थापित करे । उचित तो यही है कि पहले की
और अन्त की नौ, इन तेरह घृताहुतियों का संस्रव उसी घड़े
डालताजावे । यदि न डाल सके तो प्रोक्षणीपात्र में हीं डाले
अन्त में पूर्वोक्त पाँच शिलाओं का अभिषेक करने के समय
कलश में यह संस्रव डाल दिया जायगा । प्रोक्षणी में रखने
संस्रव का प्राशन भी होम के अन्त में हो सकेगा । इसीलिये
कहीं कहीं लिखा भी है कि प्रोक्षणी का संस्रव कलश के
मिलाकर उन शिलाओं का अभिषेक करे । आज्यभाग की आहुति
के बाद ग्रहों को उनके समिध, चरु, घी और काले तिलों में प्रत्येक
से ८-८, अधिदेव, प्रत्यधिदेव को ४-४ और लोकपाल दिक्पालों को
२-२ आहुतियां उन के मंत्रों से (पृ० २०५) देकर फिर वास्तुमण्डल
के शिखी आदि ४५ देवताओं को उनकी समिध, घी, जौ और
तिलों में प्रत्येक से दसदस आहुतियां नीचे लिखे क्रम से ही दे
वास्तुदेवताओं की समिध गूलर, खैर, चिचिड़ी और पलाश
चारों में से कोई एक हो सकती है और हवन के समय उसमें
और घी लगालेना होगा । आगे के मन्त्रों के आदि में 'ॐ' हवन
लगालेना होगा और अन्त में 'स्वाहा इदं० नमम' कहना
होगा । हम यह बार बार न लिखेंगे । आहुति के मंत्र नाममंत्र ही हैं
यदि एक साथही ५ या १० आहुतियां दीजावें तो ठीक होगा और
सानी होगी । एक एक चीज की आहुतियां देकर ही दूसरे की दीजावें
मंत्र ये हैं-(१) ॐ शिखिने स्वाहा इदं शिखिने नमम
(२) ॐ पर्जन्यायस्वाहा इदं पर्जन्याय नमम (३
जयन्ताय० (४) कुलिशायुधाय० (५) सूर्याय० (६
सत्याय० (७) भृशाय० (८) आकाशाय० (९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वायवे० (१०) पूष्णे० (११) वितथाय० (१२) गृहक्षताय० (१३) यमाय० (१४) गन्धर्वाय० (१५) भृंगराजाय० (१६) मृगाय० (१७) पितृगणाय० (१८) दौवारिकाय० (१९) सुग्रीवाय० (२०) पुष्पदन्ताय० (२१) वरुणाय० (२२) असुराय० (२३) शोषाय० (२४) पापाय० (२५) रोगाय० (२६) अहये० (२७) मुख्याय० (२८) भल्लाटाय० (२९) सोमाय० (३०) सर्पेभ्यः० (३१) अदितये० (३२) दितये० (३३) आपाय० (३४) सावित्राय० (३५) जयाय० (३६) रुद्राय० (३७) अर्यम्णे० (३८) सवित्रे० (३९) विवस्वते० (४०) विबुधाधिपाय० (४१) मित्राय० (४२) राजयक्ष्मणे० (४३) पृथ्वीधराय० (४४) आपवत्साय० (४५) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम ॥ फिर पृथिवी को उन्हीं समिध, घी, जौ और काले तिलों में प्रत्येक से ८-८ आहुतियां आगे के मंत्र से दे- ओं स्योना पृथिवि नो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्म सप्रथाः स्वाहा इदं पृथिव्यै नमम ॥ तब उन्हीं चारों में प्रत्येक से वास्तोष्पति को १०८ आहुतियां आगे के पांच मन्त्रों में केवल पहले एक से ही देकर फिर उन पांचों से पांच श्रीफल की अलग अलग आहुतियां दे । पांचों श्रीफलों में घी लगा लिया करे—

(१) ओं वास्तोष्पते प्रतिजानीह्यस्मान्स्वावेशो अनमीवो भवानः ॥ यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शन्नोभव द्विपदे शं चतुष्पदे स्वाहा इदं वास्तोष्पतये नमम ॥ इसीसे समिधादि प्रत्येक की १०८ आहुतियां देकर फिर इसीसे घी लगे एक श्रीफल की आहुति देकर आगे लिखे चार मंत्रों से चार श्रीफलों की आहुतियां देते हैं-(२) ॐ वास्तोष्पते

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्रतरणोनएधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो। अजरा-सस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान्प्रतिनो जुषस्व स्वाहा इदं वास्तोष्पतये नमम ॥ (३) ओं वास्तोष्पते शग्मया स ॒ सदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या । पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदानः स्वाहा इदं वास्तो० ॥ (४) ओं अमीवहा वास्तोष्पते विश्वाह-पाण्याविशन्। सखासुशेव एधिनःस्वाहा इदं वास्तो० ॥ (५) ओं वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणां सत्रं सोम्यानाम्। द्रप्सो भेत्ता पुरांशश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा स्वाहा इदं वास्तोष्पतये नमम ॥

फिर नीचे लिखे आठ मंत्रों से आठ देवताओं को समिध घी, जौ और काले तिलों में प्रत्येक से आठ आठ आहुतियां देते हैं- (१) ओं चरक्यै स्वाहा इदं चरक्यै नमम ॥ (२) ओं विदारक्यै स्वाहा इदं० ॥ (३) पूतनायै स्वाहा इदं० ॥ (४) ओं पापराक्षस्यै स्वाहा इदं० ॥ (५) ओं स्कन्दाय स्वाहा इदं० ॥ (६) ओं अर्यम्णे स्वाहा इदं० ॥ (७) ओं जृम्भकाय स्वाहा इदं० ॥ (८) ॐ पिलिपिच्छाय स्वाहा इदं पिलिपिच्छाय नमम ॥ तब ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर सर्व चीजों को एक में मिलाकर आहुति दे—ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ फिर घी से व्याहृति पञ्चवारुणी और प्रजापति की, ये ९ आहुतियां (१९४) देकर उनका संस्रव प्रोक्षणी में रक्खे । इसके बाद संस्रव प्राशन करके ब्रह्मा को पूर्णपात्र की दक्षिणा द्रव्य के सहित दे-ओं अद्येह वास्तुशान्तिकर्मागहोमकर्मणः प्रतिष्ठार्थमिदं पूर्णपात्रं सद्रव्यं ब्रह्मणे तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ ब्रह्मा-ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

स्वस्ति-कह उसे लेकर 'ओं अक्रन्कर्म' (पृ०६४६) पढ़कर आशीर्वाद दे। फिर प्रणीता जल सिरपर मंत्र से डालकर उसे ईशान में औंध दे और बर्हिःहोम करडाले (पृ० २४३)। अनंतर बलि देने का संकल्प करे-ओं अद्येहामुकशर्म्माहं सपुत्रपरिवारस्यायुरारोग्याभिवृद्धिपूर्वकसर्वोपद्रवशान्तये नवग्रहादिभ्यः पञ्चपञ्चाशद्वास्तुदेवताभ्यश्च बलिदानं करिष्ये॥ और २१४ पृष्ठोक्त रीति से ग्रहों से लेकर दिक्पालों तक को बलि देकर क्षेत्रपाल और वास्तुपुरुष की बलि से पहले वास्तुमण्डल के ५५ देवताओं को खीर या दही अक्षत की बलि दीपक के साथ अर्पण करे। वास्तुवेदी के पश्चिम ओर दक्षिण से आरंभ कर उत्तर तक एक पंक्तिमें ९ या १० देकर उसके पश्चिम दूसरी, फिर तीसरी आदि पंक्तियों में यों दे-(१) ओं शिखिने सांगाय सपरिवाराय सायुधाय सशक्तिकाय एष सदीपो बलिर्नमः॥ और बलि रखने के बाद हाथ में जल लेकर पढ़े—भोः शिखिन् एतं सदीपं बलिं गृहाण मम यजमानस्य सपुत्रपरिवारस्य आयुष्कर्त्ता क्षेमकर्त्ता शान्तिकर्त्ता तुष्टिकर्त्ता पुष्टिकर्त्ता स्थिरकर्त्ता भव॥ और उसी पर जल गिरा दे। आगे भी इसी तरह प्रत्येक देवता के साथ 'सांगाय०' इत्यादि पढ़कर बलि और दीप देते तथा 'एतं सदीपं०' इत्यादि पढ़कर जल छोड़ते हैं। हम बार बार नहीं लिखेंगे। (२) ॐ पर्जन्याय०॥ भोः पर्जन्य०॥ (३) ॐ जयन्ताय०॥ भो जयन्त०॥ (४) ॐ कुलिशायुधाय०॥ भोः कुलिशायुध०॥ (५) ॐ सूर्याय०॥ भोः सूर्य०॥ (६) ॐ सत्याय०॥ भोः सत्य० (७) ओं भृशाय०॥ भो भृश० (८) ओं आकाशाय०॥ भो आकाश०॥ (९) ओं वायवे०॥ भो वायो०॥ (१०) ओं पूष्णे०॥ भोः पूषन्०॥ (११) ओं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

वितथाय० ॥ भो वितथ० ॥ (१२) ओं गृहक्षताय० ॥ भो गृहक्षत० ॥ (१३) ओं यमाय० ॥ भो यम० ॥ (१४) ओं गन्धर्वाय० ॥ भो गन्धर्व० ॥ (१५) ओं भृंगराजाय० ॥ भो भृंगराज० ॥ (१६) ओं मृगाय० ॥ भो मृग० ॥ (१७) ओं पितृगणाय० ॥ भोः पितृगण० ॥ (१८) ओं दौवारिकाय० ॥ भो दौवारिक० ॥ (१९) ओं सुग्रीवाय० ॥ भोः सुग्रीव० ॥ (२०) ओं पुष्पदन्ताय० ॥ भोः पुष्पदन्त० ॥ (२१) ओं वरुणाय० ॥ भो वरुण० ॥ (२२) ओं असुराय० ॥ भो असुर० ॥ (२३) ओं शोषाय० ॥ भोः शोष० ॥ (२४) ओं पापाय० ॥ भोः पाप० ॥ (२५) ओं रोगाय० ॥ भो रोग० ॥ (२६) ओं अहये० ॥ भो अहे० ॥ (२७) ओं मुख्याय० ॥ भो मुख्य० ॥ (२८) ओं भल्लाटाय० ॥ भो भल्लाट० ॥ (२९) ओं सोमाय० ॥ भोः सोम० ॥ (३०) ओं सर्पेभ्यः सांगेभ्यः सपरिवारेभ्यः सायुधेभ्यः सशक्तिकेभ्यः एष सदीपो बलिर्नमः ॥ भो सर्पाः बलिंगृह्णीत मम यजमानस्य सपुत्रपरिवारस्य रक्षाकर्त्तारः आयुष्कर्त्तारः क्षेमकर्त्तारः शान्तिकर्त्तारः तुष्टिकर्त्तारः पुष्टिकर्त्तारः स्थिरकर्त्तारः भवत ॥ (३१) ओं अदितये सांगायै सपरिवारायै सायुधायै सशक्तिकायै० ॥ भो अदिते एतंबलिं० सपरिवारस्य रक्षाकर्त्री आयुष्कर्त्री क्षेमकर्त्री शान्तिकर्त्री तुष्टिकर्त्री पुष्टिकर्त्री स्थिरकर्त्री भव ॥ (३२) ओं दितये० ॥ भो दिते० ॥ यहां भी (३१) की ही तरह वाक्य बोलेंगे। (३३) ओं आपाय० ॥ भो आप० ॥ (३४) ओं सावित्राय० ॥ भोः सावित्र० ॥ (३५) ओं जयाय० ॥ भो जय० ॥ (३६) ओं रुद्राय० ॥ भो रुद्र० ॥ (३७) ओं अर्यम्णे० ॥ भो अर्य-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्०॥ (३८) ओं सवित्रे०॥ भोः सवितः०॥ (३९) ओं विवस्वते०॥ भो विवस्वन्०॥ (४०) ओं विबुधाधिपाय०॥ भो विबुधाधिप०॥ (४१) ओं मित्राय०॥ भो मित्र०॥ (४२) ओं राजयक्ष्मणे०॥ भो राजयक्ष्मन्०॥ (४३) ओं पृथ्वीधराय०॥ भोः पृथ्वीधर०॥ (४४) ओं आपवत्साय०॥ भो आपवत्स०॥ (४५) ओं ब्रह्मणे०॥ भो ब्रह्मन्०॥ (४६) ओं पृथिव्यै०॥ भोः पृथिवि०॥ यहां पर भी (३१) वें की तरह वाक्य बोलेंगे। (४७) ॐ वास्तोष्पतये०॥ भो वास्तोष्पते०॥ इसके बाद ५१वें तकके वाक्य भी ३१ वें की ही तरह होंगे। (४८) ओं चरक्यै०॥ भोः चरकि०॥ यह बलि वास्तुवेदी के ईशानकोन में देंगे और आगे की तीन क्रम से अग्नि, नैर्ऋत्य और वायव्यमें देकर फिर पूर्व दक्षिण, पश्चिम और उत्तर ओर क्रमसे देंगे। (४९) ओं विदारक्यै०॥ भो विदारकि०॥ (५०) ओं पूतनायै०॥ भोः पूतने०॥ (५१) ओं पापराक्षस्यै०॥ भोः पापराक्षसि०॥ अब पूर्व से आरम्भ करके (१) की तरह वाक्य बोलेंगे। (५२) ओं स्कन्दाय०॥ भोः स्कन्द०॥ (५३) ओं अर्यम्णे०॥ भो अर्यमन्०॥ (५४) ओं जृम्भकाय०॥ भो जृम्भक०॥ (५५) ओं पिलिपिच्छाय०॥ भोः पिलिपिच्छ०॥

इसके बाद घर बनाने की भूमि की और गृहप्रवेश के समय घर की दसों दिशाओंमें बलि देकर पताका गाड़े। पताका वैसी हो जैसी मण्डप में दिक्पालोंकी होती है। क्योंकि यह बलि भी दिक्पालोंकी ही है। यह बलि भी या तो दही अक्षत की हो या दही, मधु, घी मिले भात की। पूर्व से शुरू कर ईशान तक ८ दिशाओं में आठ देकर ईशान पूर्वके बीच में ९ वीं और पश्चिम नैर्ऋत्य के मध्य में १० वीं देते हैं। दीप भी साथ साथ देते जाते हैं। परन्तु स्मरण रहे कि गृह प्रवेश के समय जब वास्तुशान्ति करेंगे तभी पताका भी साथ साथ गाड़ते

SriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जाँयगे । मगर शिलान्यास के समय पताका की आवश्यकता नहीं है। हरेक दिशाओं में दिक्पालों की पूजा भी करता जावे । (१) पूर्व ओं इन्द्रः सुरपतिः श्रेष्ठो वज्रहस्तो महाबलः । शतयज्ञाधिपो देवस्तस्मै नित्यं नमो नमः-इससे प्रार्थना करके-ओं भूर्भुवः स्वः इन्द्राय नमः-मंत्र से पूजा करे और बलि भी दे। जिस तरह २१६ पृष्ठ में इन्द्र के लिये तथा अन्यान्य दिक्पालों के लिये वाक्य पढ़े हैं वैसे ही वाक्य यहां भी होंगे । ओं इन्द्राय० ॥ भो० इन्द्र० ॥ प्रत्येक बलि के बाद आचमन करता जावे । (२) अग्नि ओं आग्नेयः पुरुषो रक्तः सर्वदेवमयोऽव्ययः । धूम्रकेतुर्ध्वजो यस्य तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः अग्नये नमः-से पूजा करके बलिदे-ओं अग्नये० ॥ भो० अग्ने० (३) दक्षिण-ओं महामहिषमारूढं दण्डहस्तं महाबलम् । आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ओं भूर्भुवःस्वःयमाय नमः-से पूजा कर-ओं यमाय० ॥ भो यम० (४) नैर्ऋत्य-ॐ निर्ऋतिं खड्गहस्तं च सर्वलोकैकभावनम् । आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः निर्ऋतये नमः-इससे पूजा करके-ओं निर्ऋतये० ॥ भो० निर्ऋते० ॥ (५) पश्चिम-ओं पाशहस्तं च वरुणमर्णसां पतिमीश्वरम् । आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ओं भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः-से पूजा करके-ओं वरुणाय० ॥ भो वरुण० ॥ (६) वायव्य-ओं वायुमाकाशगं चैव पावनं मृगवाहनम् । आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः वायवेनमः-से पूजा करके-ओं वायवे० ॥ भो वायो० ॥ (७) उत्तर-ॐ सर्वनक्षत्रमध्ये तु सोमो राजा व्यवस्थितः । तस्मै सोमाय देवाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुबेराय नमो नमः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः कुबेराय नमः–से पूजा–ओं कुबेराय० ॥ भोः कुबेर० ॥ (८) ईशान–ओं वृषभस्कन्धमारूढं शूलहस्तं पिनाकिनम् । आवाहयामि यज्ञेऽस्मिन्पूजेयं प्रतिगृह्यताम्॥ ॐ भूर्भुवःस्वः ईशानायनमः–से पूजा । ओं ईशानाय०॥भो ईशान०॥ (९) पूर्व ईशान का मध्य–ओं पद्मपाणिश्चतुर्मूर्त्तिर्वेदावासः पितामहः । यज्ञाध्यक्षश्चतुर्वक्त्रस्तस्मै नित्यं नमो नमः ॥ ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः–से पूजा । ओं ब्रह्मणे० ॥ भो ब्रह्मन्० । (१०) नैर्ऋत्य पश्चिमका मध्य–ओं अनन्तरूपिणा येन विष्णुना सचराचरम् । पुष्पवद्धारितं नित्यं तस्मै तुभ्यं नमो नमः–से पूजा। ओं अनन्ताय० ॥ भो अनन्त० ॥ इस इस प्रकार दस दिक्पालोंको वलि और दीप दान करे। मगर पताका केवल गृहप्रवेश के ही समय दे । पूजा भी हरवार करता जावे । फिर क्षेत्रपाल को (पृ० २१७) विधिवत् वलि दे आचमन करके शिलान्यास के समय घर वनाने की भूमि से नैर्ऋत्य में और गृहप्रवेश के समय घरके वाहर नैर्ऋत्य कोन में उत्तरमुख वैठकर दोनों हाथों में वलि के वचे अन्न को लेकर पोती हुई भूमि पर आगे के श्लोकों से वलि दे–ॐ देव्यो देवा मुनीन्द्राः सभुवनपतयो दानवाः सर्वसिद्धाः। यक्षा रक्षांसि नागा गरुडमुखखगा गुह्यका विश्वदेवाः ॥ योगिन्यो देववेश्या हरिदधिपतयो मातरो विघ्ननाथाः । प्रेता भूताः पिशाचाः पितृवननगराद्याधिपाः क्षेत्रपालाः ॥ १ ॥ गन्धर्वाः किन्नराः सर्वे गुह्यकाः पितरो ग्रहाः । कूष्मांडाः पूतनारोगास्तथा वेतालकाः शिवाः ॥ २ ॥ असृक्प्लुताश्च पिशुना मांसभक्षान्यनेकशः । लम्बक्रोडास्तथा ह्रस्वा दीर्घाः शुक्लास्तथैव च ॥ ३ ॥ खंजा स्थूलास्तथैकाक्षा नाना-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पश्चिमुखास्तथा । व्यालास्या उष्ट्रवक्त्राश्च अवक्रो क्रोडवर्जिताः ॥ ४ ॥ धमनाभास्तमालाभा द्विपाद मेघसन्निभाः । गवलाभाः क्षितिनिभा अश्वानिस्वन सन्निभाः ॥ ५ ॥ द्रुतगाश्च मनोगाश्च वायुवेगसमाश्च बहुवक्त्राबहुशिरा बहुबाहुसमान्विताः ॥ ६ ॥ बहुपादा दृशः सर्पाभरणभूषिताः । विकटामुकुटाः केचित् वै रत्नधारिणः ॥ ७ ॥ सूर्यकोटिप्रतीकाशा विद्युत्सदृ वर्चसः । कपिलाहुतभुग्वर्णाः प्रमथा बहुरूपिणः । गृ णन्तु च बलिं सर्वे तृप्ता यान्तु बलिर्नमः ॥ ८ ॥ इन श्लो को पढ़ता जावे और भूमि पर बलि रखता जावे । इसके बाद पाँव धोकर आचमन कर डाले ।

इस प्रकार बलि देकर प्रधान कलश के जलको किसी और में रख यजमान को पीढ़े पर बैठाकर और पुत्र पत्नी आदि को बायें बैठाकर स्वयं आचार्य ऋत्विजों के साथ पश्चिम या उत्तर होकर ६५२ पृष्ठोक्तरीति से अभिषेक करे । श्लोकों के अन्त में "सु स्त्वामभिषिञ्चन्तु०" इत्यादि ९ श्लोक भी (६५५) पढ़ दे । अभि पल्लव से करे । यदि स्नानमण्डप प्रधानमण्डप से उत्तर बना तो वहीं पर यह अभिषेक करे । नहीं तो मण्डप से उत्तर भूमि लीप उसी पर करे । अभिषेक के बाद सर्वौषधि पीस कर उसके शरीर लगावे और शुद्ध जल से स्नान कराकर नवीन वस्त्र और तिलक धारण करावे । फिर वास्तुमण्डल के बीच में जो नवघरों वाला का मण्डल है उसी में पृथिवी का सुभूषित स्त्री रूप से ध्यान करे ॐ भूर्भुवः स्वः धरायै नमः—इस मंत्र से उसकी पूजा और उसी जगह 'ॐ सर्वदेवमयं वास्तुं वास्तुदेवमयं पर इससे वास्तुदेवका ध्यान कर उसकी पूजा करे-ॐ भूर्भुवः स्व वास्तोष्पतये नमः—इसी मंत्र से । फिर पृथिवी और वास्तुदेव प्रार्थना कर शिलान्यास के समय घर की भूमि को और गृहप्रवेश समय गृह को चारों ओर तीन सूतों से घेरे । पूर्व से शुरू

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

घरे और रक्षोघ्न मंत्र तथा पवमान सूक्त का पाठ करता जावे । ये दोनों आगे ग्रंथ में लिखे हैं । फिर जैसे जैसे चारों ओर सूत घूमा हो उसी तरह एक झारी में जल और दूसरी में दूध लेकर दोनों हाथों से चारों ओर गिरावे । यह भी पूर्व से ही आरंभ करे और उसी पानी के निशान पर चारों ओर सप्तधान्य छींटे । गृह भूमि को वास्तुवेदी मानकर उसके ईशानकोन से आठवां जो आकाश के मण्डल का स्थान वास्तुमण्डल में है वैसा ही यहां नाप से ठीक कर वहीं जमीन की जंघे भर गहरी खोदे, या ईशान कोन में ही खोदे और मिट्टी निकाल कर उसके नीचे गौ के गोबर और मिट्टी से पोते । फिर श्वेत पुष्प, चन्दनादि से उसे सज्जित कर उस पर सप्तधान्य और दही डाले । एक नवीन घड़े में जल रख उसकी चन्दनादि से पूजा कर पूर्वमुख घुटने टेककर बैठजावे और दोनों हाथ से वह घड़ा लेकर-ओं नमो वरुणाय-इस मंत्र से जल गिराकर वह गढ़ा भरे । इसके बाद पहले से बनाई मिट्टी की पेटी में वास्तु की प्रतिमा रखने के लिये पहले उसमें सप्तधान्य, दही, सिवाल और पुष्प रक्खे । फिर शान्ति पाठ के साथ वास्तुपुरुष की प्रतिमा, या अभाव में अक्षत सुपारी जो हो उसे ही, वास्तुवेदी से लाकर उस पेटी में रक्खे और चन्दन पुष्पादि से वहीं उसकी पूजा भी करके प्रार्थना करे—ओं प्रसीद पाहि विश्वेश देहि मे गृहजं सुखम् । पूजितोऽसि मया वास्तो होमाद्यैरर्चनैः शुभैः ॥ १ ॥ वास्तुपुरुष नमस्तेऽस्तु भूमिशय्यारत प्रभो । मद्गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरु सर्वदा ॥ २ ॥ तब उस पेटी पर मिट्टी का ढक्कन रख उसे उठाकर उसी गढ़े में--ॐ सशैलसागरां पृथ्वीं यथा वहसि मूर्द्धनि । तथा मां वह कल्याणसम्पत्संततिभिः सह-इस मंत्र से धीरे से रख दे । फिर उसी गढ़े की मिट्टी से उस गढ़े को अच्छी तरह भरे । यदि मिट्टी अधिक हो जावे तो शुभ, बराबर होजावे तो मध्यम और घट जावे तो अधम या खराब समझना होता है । उपरान्त उस भूमि को गोबर से लीपकर और उसके ऊपर चन्दन पुष्पादि चढ़ाकर उसे सजादे । इति वास्तु शान्ति ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Funding by IKS-MoE-Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

९–शिलान्यास ।

यहां तक जो कुछ शान्ति कही गई है वह शिलान्यास और प्रवेश दोनों के समय ज्यों की त्यों की जाती है । परन्तु शिलान्यास समय इसके बाद कुछ विशेष क्रियायें करके फिर अन्तमें पूर्णाहुति दोनों की साधारण क्रियायें कहेंगे । पहले जिन पांच शिलाओं पांच उपशिलाओं का वर्णन कर आये हैं उनको स्नानमण्डप में अभाव में स्नानभूमि में लेजा कर पूर्वाग्र कुशों पर पीढ़ा या रख उन्हीं पर उन्हें रक्खे । फिर सत्रह घड़े तांबे या मिट्टी से भरकर उनमें क्रमसे (१) सप्तमृत्तिका (२) पीपल, पाकड़ बरगद, गूलर और बेंत की जड़ की छाल का काढ़ा (कषाय), गोमूत्र, (४) गौ का गोबर, (५) पञ्चगव्य (६) गो (७) गोदधि (८) गो घृत, (९) मधु, (१०) शक्कर (११) (१२) पञ्चरत्न (१३) सोना (१४) बैल की सींग (१५) सप्त (१६) तीर्थ का जल और (१७) चन्दन ये वस्तुएं डाले । पांचों शिलाओं में क्रम से ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, ईशान और सदाशिव आवाहन करे–ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः आवाहयामि ॐ भू० विष्णवेनमः आवाहयामि ॥ ओं० रुद्राय न आवाहयामि ॥ ॐ० ईशानायनमः आवाहयामि ॥ ॐ सदाशिवायनमः आवाहयामि ॥ क्रम से इन्हीं मंत्रों से भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा में क्रमशः पांचों का आवाहन न कि एक एक में सभी का । फिर पूर्व के सत्रह घड़ों के जल एक ही साथ सभी को नहलावे । सत्रहों के मंत्र आगे क्रमसे हैं । एक एक घड़े का जल सभी पर गिराताजावे और एक एक पांच पांच बार पढ़े । घड़ों पर जिन जिन संख्याओं को लिखा उन्हीं उन्हीं संख्याओं को लिखकर मंत्र भी लिखते हैं ताकि भ्रम हो सके । (१) ॐ अग्निर्मूर्द्धा दिवः ककुत्पतिः पृथिव्या अयम् । अपा ँ रेता ँ सि जिन्वति ॥ (२) ॐ यज्ञायज्ञा अग्नये गिरा गिरा च दक्षसे । प्रप्रवयममृतं जातवेदसं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मियं मित्रं न शंसिषम् ॥ (३) ॐ भूर्भुवः स्वः तत्स-
वितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥
(४) ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम् ।
ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वयेश्रियम् ॥ इस मंत्र से पहले
गौ के गोबर वाले जल से नहलाकर फिर चन्दनवाले जल से भी थोड़ा
थोड़ा नहलावे । उस जल से वार वार नहलाना होगा और अन्त में उस
से एक पृथक् स्नान कराना होगा। अतएव थोड़ा थोड़ा ही गिरावे ।
(५) ॐ पयः पृथिव्यां पय ओषधीषु पयोदिव्यन्तरिक्षे
पयोधाः । पयस्वतीः प्रदिशः सन्तु मह्यम् ॥ (६) ओं
आप्यायस्व समेतुते विश्वतः सोम वृष्ण्यम् । भवा वा-
जस्य संगथे ॥ फिर 'ओं गन्धद्वारां' से चन्दन के जल
से थोड़ा थोड़ा नहलावे । (७) ॐ दधिक्राव्णो अकारिषं
जिष्णोरश्वस्य वाजिनः । सुरभिनो मुखाकरत्प्रण आयूं-
षि तारिषत् । फिर 'गन्धद्वारां' से चन्दन युक्त जल से स्नान।
(८) ओं घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वीपृथ्वीमधुदुघे
सुपेशसा । द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते
अजरेभूरिरेतसा ॥ फिर चन्दन जल से स्नान । (९) ओं
मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धवः । माध्वीर्नः
सन्त्वौषधीः ॥ फिर चन्दन जल स्नान । (१०) ओं आयं
गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः । पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥
फिर चन्दन जल स्नान । (११) ॐ याः फलिनीर्या अफला
अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्व-
ंहसः ॥ (१२) ॐ परिवाजपतिः कविर्हव्यान्यक्रमीत् ।
दधद्रत्नानि दाशुषे ॥ (१३) ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे
भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । स दाधार पृथिवीं द्या-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥ (१४) ॐ हविष्मती
रिमा आपो हविष्माँ आविवासति । हविष्मान्देवोअध्व
हविष्माँअस्तु सूर्यः ॥ (१५) ओं ओषधयः समवद
सोमेन सह राज्ञा । यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन्पार
मसि ॥ (१६) ॐ इमं मे वरुण श्रुधी हवमद्या च मृड
त्वामवस्युराचके ॥ (१७) ओं गन्धद्वारां० इत्यादि (
वाला ही मंत्र पढ़ कर अन्त में चन्दन वाले जल से स्नान करावे । फि
सभी को वस्त्र से पोंछ कर दूसरे सीधे आसनों पर रक्खे और केसर
मिला चन्दन सभी में लगा कर केसर से, पांचों शिलाओं पर बनी
हुई कमल, सिंहासन आदि की मूर्त्तियों के चिन्हों पर, चिन्ह कर
और वस्त्र से सभी को ढंक दे । उपरांत पाँचों शिलाओं की उड़
आगे के मंत्रों से क्रम से अभिषेक करे । अभिषेक के लिये दूसरा
जल लेते हैं । नंदा- १) 'ॐ आब्रह्मन्०' (पृ० २२८) मंत्र
भद्रा-(२) ॐ भद्रं कर्णेभिः० (३७७) मंत्र से । जया- ३)
जातवेदसे सुनवाम सोममरातीयतो निदहाति वेद
स नः पर्षदतिदुर्गाणि विश्वा नावेव सिन्धुं दुरितात्यग्नि
रिक्ता-(४) ओं यमायत्वा मखायत्वा सूर्यस्यत्वा त
देवस्त्वा सवितामध्वा अनक्तु पृथिव्याः संस्पृश स्पा
र्चिरसि शोचिरसि तपोऽसि ॥ पूर्णा-(५)ॐ पूर्णा
परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमू
शतक्रतो ॥ फिर क्रम से पाँचों के मध्य में अभिषेक करे-(
ॐ नाभिर्मे चित्तं विज्ञानं पायुर्मेऽपचितिर्भसत् । आ
न्दनन्दावाण्डौ मे भगः सौभाग्यं पसः ॥ (२) ओं अ
जज्ञानं० (२०७) । (३) ओं विष्णोरराटमसि० (२०
(४) ओं नमस्ते रुद्र० (५१३) ॥ (५) ॐ इमं देवा० (२०
फिर पाँचों के सिर पर क्रमसे अभिषेक करे । एतदर्थ शिलाओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिर आदि का कुछ चिन्ह पहले से ही बना रहना चाहिये । (१) ओं तद्विष्णोःपरमंपदम्० (६४१) ॥ (२) ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे० (२०८) (३) ओं समख्येदेव्याधिया सन्दक्षिणयोरुचक्षसा । माम आयुः प्रमोषीर्मो अहं तववीरं विदेयतवदेविसंदृशि ॥ (४) ॐ त्र्यम्बकंयजामह० (६४६) ॥ (५) ओं मूर्द्धानंदिवो० (३२३) ॥

इसके बाद क्रम से पाचों के सिर पर पांच देवताओंका इन मंत्रों से आवाहन कर पूजन करे- ओं भूर्भुवःस्वः ब्रह्मणे नमः-इत्यादि । ये मंत्र ६६४ पृष्ठ में लिखे हैं । उन्हीं से आवाहन कर फिर उनमें से 'आवाहयामि' को निकाल कर 'नमः' पर्यन्त मंत्रों से प्रत्येक का पूजन करे। तब पाँचों शिलाओं का आवाहन करके पूजन करे । मंत्र क्रमसे यह हैं-(१) ओं भूर्भुवः स्वः नन्दायै नमः नन्दे इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ (२) ॐ भू० भद्रायै नमः भद्रे इहा० ॥ (३) ॐ भू० जयायै नमः जये० ॥ (४) ॐ रिक्तायै नमः रिक्ते० ॥ (५) ॐ पूर्णायैनमः पूर्णे० ॥ इस तरह आवाहन करके इन्हीं 'नमः' पर्यन्त मंत्रों से क्रमशः उनकी पूजा करे । फिर प्रधानमण्डप में जाकर किसी काठ के आसन पर कुश बिछा कर उन्हें क्रमसे स्थापित करे। वहां पर भी षोडशोपचार पूजा करके सुन्दर वस्त्रादिसे उन्हें सज दे। फिर घी से अग्नि में आगे के मंत्रों में प्रत्येक से १०८, २८ या ८ आहुतियां दे-(१) ॐ नन्दायैस्वाहा इदं नन्दायै नमम ॥ (२) ॐ भद्रायै स्वाहा इदं भद्रायै नमम ॥ (३) ॐ जयायै स्वाहा इदं जयायै नमम ॥ (४) ॐ रिक्तायै स्वाहा इदं रिक्तायै नमम ॥ (५) ॐ पूर्णायै स्वाहा इदं पूर्णायै नमम ॥ फिर घी से रुद्र को आगे के मंत्र से १०८ आहुतियां दे-ॐ या ते रुद्रशिवातनूरघोराऽपापकाशिनी । तया नस्तन्वा शंतमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि स्वाहा इदं रुद्राय नमम ॥ स्मरण रहे कि इन सभी आहुतियों का संस्रव प्रोक्षणी

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पात्र में रक्खा जाय। फिर ३२३ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य पूर्णाहुति के प्रोक्षणी का संस्रव उस घड़े के जल में डाल दे जो शुरू में ही रक्खा वास्ते अग्नि से उत्तर रक्खा गया था। और कुशों से उस जल को उठा उठा कर सभी शिलाओं की जड़, मध्य और मस्तक का अभिषेक करे। पहले पांचों की जड़का कर ले, फिर मध्य का और अन्त में मस्तक का करे। इसके बाद आचार्य मकान बनाने की भूमि में जाकर ईशान कोन में नन्दा का नाम लिखे, अग्नि में भद्रा नैऋत्य में जया वायव्य में रिक्ता और मध्य में पूर्णा का। फिर उस भूमिकी प्रार्थना करे—ॐ विश्वे त्वं कमले भूते पृथिवी लोकधारिणी। यज्ञार्थे क्षोभिता देवि प्रसीद परमेश्वरि ॥ १ ॥ तस्मात्खानये देवि सानुकूला मखे भव। सर्वदेवमयी भूमि सर्वदेवरसान्विता ॥ २ ॥ तब ईशान कोन से आरंभ कर चारों कोनों और बीच में नाभि जितना अथवा ४ हाथ या २१ ही अंगुल गहरे गढ़े खुदवावे, उनकी मिट्टी निकाल कर उनके नीचे की भूमि को के गोबरसे लीपकर पांचों गढ़ों में अक्षत या पीठे से सर्पाकार वास्तुपुरुष की मूर्ति बनावे और हाथ में अक्षत पुष्प लेकर आवाहन करे—ॐ आवाहयाम्यहं देवं भूमिष्ठं चाप्यधोमुखम्। वास्तुनाथं जगत्प्राणं पूर्वस्यां प्रथमाश्रितम् ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः इहागच्छ इह तिष्ठ पढ़ कर अक्षत पुष्प उसी पर छींट दे और—ॐ मनो जूति ओं भूर्भुवः स्वः वास्तोष्पतये नमः इह सुप्रतिष्ठितो भव पढ़ कर प्रतिष्ठा करने के बाद 'ओं वास्तोष्पते०' मंत्र से पूजा करके प्रार्थना करे—ओं वास्तोष्पते नमस्तेऽस्तु भूमिशय्यारत प्रभो। मद्गृहं धनधान्यादिसमृद्धं कुरु सर्वदा ॥ फिर स्वस्तिपाठ और बाजे गाजे के साथ शिलाओं की स्थापना करे ब्राह्मण ईशान कोन से शुरू करे और क्षत्रिय अग्नि, वैश्य नैऋत्य और शूद्र वायव्य कोन से। दीवार के लिये नींव को और शोधने के लिये भूमि को खोदने में अग्निकोन से ही सभी वर्णों को आरम्भ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करना चाहिये। मगर शिलान्यास के लिये खोदने में और शिलान्यास के लिये भी ऊपर लिखी रीति से ही ब्राह्मणादि चारों वर्ण ईशान आदि से क्रमशः शुरू करें। पहले ईशान के गढ़े में आधारशिला (उपशिला) पूर्वसिर रख और उसके बीच के छिद्र में अक्षत डालकर पहले बनाये पांच पद्म आदि कलशों में पहला (पद्म) नामक कलश उसमें रक्खे। उस कलश में मधु, घी, पारा, पञ्चरत्न और सर्वौषधि का जल डालकर ऊपर से ढक्कन से बन्द करे और ऊपर से चन्दन, पुष्प, अक्षत से सजकर उसमें रक्खे। शेष कलशों को भी आगे चलकर अन्य शिलाओं के समय इसी तरह मधु आदि से युक्त करके रक्खेंगे। फिर-ओं पद्माय नमः-इस नाम मंत्र से 'आवाहयामि' कह कर आवाहन और पूजनादि करे। तब आधार शिला को सदाशिव स्वरूप ध्यान कर उसकी भी प्रतिष्ठा 'ओं मनोजूति०' (पृ० ३७९) मंत्र से करे। वह मंत्र पढ़ कर 'ओं भूर्भुवः स्वः आधारशिले सुप्रतिष्ठिता भव-यह पढ़े और अक्षत पुष्प छींट कर प्रतिष्ठा करे। फिर-ओं भूर्भुवः स्वः आधारशिलायै नमः-पढ़कर विधिवत् उसकी पूजा करे, उसे समतल भूमि में इधर उधर मिट्टी अच्छी तरह देकर स्थिर कर दे और उसके वाम भाग में एक दीपक रक्खे। फिर पद्मकलश के ऊपर पूर्व सिर करके पहली नन्दा शिला को रखता हुआ मंत्र पढ़े-ओं स्थिरो भव वीड्वंग आशुर्भव वाज्यर्वन्। पृथुर्भव सुपदस्त्वमग्नेः पुरीषवाहणः ॥ १ ॥ ओं नाभिर्मे चित्तं विज्ञानंपायुर्मेऽपचितिर्भसत्। आनन्दनन्दावाण्डौमे भगः सौभाग्यं पसः ॥ २ ॥ अनंतर-ओं नन्दायै नमः-मंत्र से गंध आदि से उसकी पूजा करके प्रार्थना करे-ओं नन्दे त्वं नन्दिनी पुंसांत्वामत्र स्थापयाम्यहम्। वेश्मनि त्विह संतिष्ठ यावच्चन्द्रार्कतारकाः ॥ १ ॥ आयुः कामं श्रियं देहि देववासिनि नन्दिनि। अस्मिन् रक्षा त्वया कार्या सदा वेश्मनि यत्नतः ॥ २ ॥

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

तब अग्निकोन में पूर्ववत् दूसरी आधार शिला के स्थापना से लेकर उसके वामभाग में दीपक रखने तक के कर्म पहले की तरह करे । केवल कलश की पूजा 'ओं महापद्माय नमः' इस मंत्र से करे । क्योंकि उसका नाम ही महापद्म है । इसी प्रकार आगे भी आधारशिला से लेकर दीप रखने की क्रियायें सर्वत्र इसी तरह होंगी । केवल कलश की पूजा का मंत्र भिन्न होगा । जिसे हम क्रमशः लिख देंगे । फिर महापद्म कलश के ऊपर पूर्व सिर करके भद्रा नामक दूसरी शिला रक्खे और मंत्र पढ़े-ओं भद्रंकर्णेभि० (पृ० ३७७) ओं वरुणस्योत्तम्भनमसि० (पृ० १४६) ॥ और उसकी पूजा गन्धादि से-ओं भद्रायै नमः-मंत्र से करके प्रार्थना करे-ओं भद्रे सर्वदा भद्रं लोकानां कुरुकाश्यपि । आयुर्दा कामदा देवि सुखदा च सदा भव ॥ त्वामत्र स्थापयाम्यद्य गृहेऽस्मिन्भद्रदायिनि ॥ उपरांत नैर्ऋत्य में आधारशिला रखने से दीप रखने तक के कर्म पूर्ववत् ही करे । छिद्र में शंखनामक कलश की-ओं शंखाय नमः-से पूजा करे, यही विशेषता है । उसपर पूर्व सिर जया शिला इन मन्त्रों से स्थापित करे-ओं जातवेदसे० (पृ० ६४६) ओं वरुणस्योत्तम्भन० (पृ० १४६) ॥ और-ओं भूर्भुवः स्वः जयायै नमः-मंत्र से उसकी पूजा कर प्रार्थना करे-ओं गर्ग गोत्रसमुद्भूतां त्रिनेत्रां च चतुर्भुजाम् । गृहेऽस्मिन्स्थापयाम्यद्य जयां चारुविलोचनाम् । नित्यं जयाय भूत्यै च स्वामिने भव भार्गवि ॥ इसी तरह वायव्य कोन में भी करे । कलश की पूजा-ओं विजयाय नमः-इस मंत्र से करे और उस पर रिक्ता शिला रखने का मंत्र-ओं त्र्यम्बकं० (पृ० ६४६) ॥ ओं वरुणस्योत्तम्भन० (पृ० ६४६) ॥ फिर उसकी पूजा करे-ओं भूर्भुवः स्वः रिक्तायैनमः-इस मंत्र से और प्रार्थना करे-ओं रिक्ते रिक्तदोषघ्ने सिद्धिमुक्तिप्रदे शुभे । सर्वदा सर्वदोषघ्ने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिष्ठास्मिँस्तत्र नन्दिनि ॥ अन्त में मध्य की भूमि में पूर्ववत् सब काम करे। कलश की पूजा- ओं सर्वतोभद्राय नमः-इस मंत्रसे करे। उसके ऊपर पूर्णा शिला-ओं पूर्णादर्विपरापत०(पृ० ११२) मंत्र से स्थापित कर-ओं भूर्भुवः स्वः पूर्णायै नमः-मन्त्र से उसकी पूजा करे और प्रार्थना करे-ओं पूर्णे त्वं सर्वदा पूर्णाल्लोकान्मे कुरुकाश्यपि। आयुर्दा कामदा देवि धनदा सुतदा तथा॥१॥ गृहाधारा वास्तुमयी वास्तुदीपेन संयुता। त्वामृते नास्ति जगतामाधारश्चजगत्प्रिये॥ २॥ इसके बाद पांचों शिलाओं पर अष्टधातु डाल कर-ओं नन्दायै नमः। ओं भद्रायै नमः। ओं जयायै नमः। ओं रिक्तायै नमः। ओं पूर्णायै नमः-इन मन्त्रों से क्रमशः पांचों के पास खीर या दही अक्षत की बलि पूर्वक एक एक दीप रक्खे और हाथ पांव धोकर आचमन करके शान्तिपाठ (पृ० ३७७) करके फिर वास्तुमण्डल के देवताओं और क्षेत्रपाल की पूजा करे। अनन्तर पूर्व मुख होकर आचार्यादि की दक्षिणा का संकल्प करे-ओं अद्येह सपुत्रपौत्रः सपत्नीकोऽमुकशर्म्माहं कृतैतद्वास्तुशान्तिशिलान्यासकर्मणः (गृहप्रवेश के समय 'शिलान्यास' की जगह 'गृहप्रवेश' शब्द पढ़ेंगे) सांगफलाप्तये प्रतिष्ठार्थंच इमां गां तन्निष्क्रयं यथाशक्तिद्रव्यं वा आचार्याय, सुवर्णरजतान्यतरदक्षिणां ब्रह्मादिभ्यः, न्यूनातिरिक्तदोषपरिहारार्थमिमां भूयसीं दक्षिणां नानाजनेभ्यश्च विभज्य दास्ये ओं तत्सन्नमम ॥ तदुत्तरं च यथाशक्तिब्राह्मणानन्यांश्च भोजयिष्ये ॥ इस तरह दक्षिणा और ब्रह्मभोज का संकल्प कर उत्तरमुख आचार्य को गौ या उसका निष्क्रय देकर ब्रह्मा, ऋत्विक् और सप्तशती आदि के पाठ करनेवालों, और मण्डप बना हो तो द्वारपाल जापकों को, यथाशक्ति सोना, चांदी या अन्य दक्षिणा और शेष लोगों तथा भूखों

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

दूखों को भूयसी दक्षिणा दे । फिर २२५ पृष्ठोक्तरीति से उसका दोबारा अभिषेक उसी कलश के जल से सभी ब्राह्मण करें और उसके बाद सहस्र छिद्र वाले घड़े में शुद्ध जल भर के उसके सिरपर टांग कर उसके यजमान को नहलावें । नहाकर नवीन खद्दर, तिलकादि धारण कर आसन पर बैठे । तब आचार्यादि २२८पृष्ठोक्त रीति से उसे तिलक्षत लगाकर (यदि पहले रक्षाबन्धन न किया हो तो) रक्षा बांधे (पृष्ठ १७८) और त्र्यायुष करें-(पृ० ३२३) । फिर यजमान घृतद्वारा का दर्शन करे । उसकी विधि यह है कि किसी तांबे के पात्र में घी भर के उसमें द्रव्य रक्खे और उसपर चार जगह चन्दन अक्षतों से पूजा कर उसे दूवों या कुशों से छू कर पढ़े-ओं आज्यं परमयज्ञीयमाज्यं तेजोमयो निधिः । आज्यं हि देवदेवानां प्रियमाज्ये स्थितं जगत् ॥१॥ तदाज्यवीक्षणे भक्त्या कृते मंगलमाप्नुयात् । दुःस्वप्नो दुर्निमित्तं च विघ्नौघो नश्यति ध्रुवम् ॥२॥ तेजः प्रज्ञा च शौर्यं च बलं चापि प्रवर्द्धते । पुण्यं सप्तांगराज्यं च भवेदन्यदभीप्सितम् ॥३॥ ज्ञात्वा वाऽज्ञानतोवापि मनोवाक्कायकर्मभिः । कृतं यत्पातकं तन्मे घृतस्पर्शाद्विनश्यतु ॥ आज्ये चैव मुखं दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥४॥ तब संकल्प करे-ओं अद्येहामुकशर्म्माहं सर्वारिष्टविनाशार्थमाज्यावेक्षणं करिष्ये ॥ फिर उसी घी में अपनी छाया देखता हुआ पढ़े-ओं तेजोऽसि शुक्रमस्यमृतमसि । धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥१॥ आज्यं तेजः समुद्दिष्टमाज्यं पापहरं परम् । आज्येन देवास्तृप्यन्ति आज्ये लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥२॥ भौमान्तरिक्षं दिव्यं वा यन्मे कल्मषमागतम् । तत्सर्वमाज्यसंस्पर्शात्प्रणाशमुपगच्छतु । आज्ये चैव मुखं दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥३॥ ओं ध्रुवासि ध्रुवोऽयं यजमानोऽस्मिन्नायतने प्रजया पशुभिर्भूयात् । घृतेन द्यावापृथिवी पूर्ण्येथा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिन्द्रस्य छदिरसि विश्वजनस्यच्छाया ॥ ओं छायादर्शनं पापनाशनम् ॥ फिर उस पात्र के सहित घी को ब्राह्मण को देने के लिये संकल्प करे-ओं अद्यामुकशर्म्माहमिदमवलोकित-माज्यन्ताम्रपात्रस्थितं सद्रव्यं मृत्युञ्जयदैवतं मृत्युञ्जय-प्रीतये सर्वारिष्टपरिहारार्थं च यथानामगोत्राय ब्राह्मणा-य तुभ्यं संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ उपरांत-ओं ब्राह्मणाय नमः-मंत्र से ब्राह्मण की पूजा कर उसे देडाले। देने के समय वाक्य पढ़े-ओं कामधेनोः समुद्भूतं देवानामुत्तमं हविः । आयु-र्वृद्धिकरं दातु राज्यं पातु सदैव माम् ॥ फिर मृत्युञ्जय मन्त्र से मृत्युञ्जय की प्रार्थना यों करे-ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीयमाऽमृ-तात् ॥ वह ब्राह्मण उस घी को-' ओं स्वस्ति-कह कर रखले और आशीर्वाद दे-ओं श्रीमृत्युञ्जयप्रसादोभूयात् ॥ इस प्रकार घृतछायादर्शन प्रायः सभी यज्ञों के अन्त में किया जाता है । अतएव इसी तरह अन्यत्र भी कर सकते हैं । विशेषतः मृत्युञ्जयजपादि के समय और मूल आदि की शान्तियों के समय। अस्तु, इस प्रकार वह घी ब्राह्मण को देकर सभी को प्रणाम करे और २२९ पृष्ठोक्तरीति से विधिवत् सभी देवताओं का विसर्जन और कर्म ईश्वरार्पण करे। अन्त में ब्राह्मणभोजन कराकर स्वयं भी सभी बन्धु बान्धवों के साथ भोजन करके विश्राम करे । इति शिलान्यास ।

१०-गृहप्रवेश ।

गृह बन चुकनेपर गृहप्रवेश की भी विधि करनी होती है । नये मकान को चारों ओर से पुष्प, तोरण और पताका आदि से सज देते, प्रधान द्वार पर विशेष रूप से श्रृंगार करते, कदली स्तंभ गाड़ते और आंगन में बड़ी पताका गाड़कर धूप दीप जला देते हैं। शिलान्यास के प्रकरण में कही गई सम्पूर्ण वास्तु-शान्ति की क्रिया शिलान्यास से पहले तक की कर डाले और घर के

iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

चारों ओर दसों दिक्पालों का उनकी दिशाओं में आवाहन पूजन कर पताका के सहित उन्हें बलि दे, जैसा कि वहीं लिखा है। शिलान्यास में पताका गाड़ना नहीं था। मगर यहां पताकायें भी गाड़ी जाती हैं। किस दिक्पाल की कौनसी पताका है, यह मण्डप के प्रकरण (पृ० १४) में लिखा है। फिर शिलान्यास के बाद जो दक्षिणादान से लेकर अन्त तक की क्रियायें हैं उन्हें भी कर डाले और जो पूर्णाहुति यहां शिलान्यास के समय लिखी है उसे शिलान्यास के पहले वहिः होम के बाद ही कर डाले। तब नये मकान में यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करावे जिसका संकल्प अन्त में किया गया है। और शुभ मुहूर्त में उसी दिन या दूसरे दिन श्वेत वस्त्र धारण कर स्त्री के सहित यजमान सभी देवताओं को प्रणाम कर स्त्री के हाथ में दूध मिले जल की झारी (गडुआ) दे और खूब मोटी बत्ती वाला बड़ा दीया जला कर आगे आगे चलने वाली दासी को दे। स्त्री के अञ्चल के साथ ग्रन्थिबन्धन करे, साथ में पवित्र पुस्तकें और पुत्रादि को लिवा ले, शान्तिपाठ पूर्वक जलपूर्ण कलश तथा बाजे गाजे के साथ स्त्री के द्वारा झारी का दूध मिला जल गिरवाता हुआ एक बार समूचे मकान की प्रदक्षिणा करे और द्वारपर आकर चौखट की पूजा करके द्वारमाताओं की पूजा (पृ० ४१५) करे। फिर लग्नदान का संकल्प करे-

ॐ अद्येहामुकशर्म्माहं गृहप्रवेशलग्नाद्यत्रकुत्रस्थितादित्यादिनवग्रहाणां दुष्टानां दुष्टफलोपशमनार्थं शुभानां शुभाधिक्यप्राप्तये चेमां दक्षिणां दैवज्ञाय संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ और उसे देकर शान्तिपाठ के साथ ही घर में प्रवेश कर लीपे पोते एक स्थान पर गणेश गौरी की पूजा (पृ० १०३) करके कलश स्थापन करे और उसी में ग्रहों और वरुण की पूजा करके (पृ० १४१) वास्तुपुरुष की भी पूजा करे (पृ० ६९२)। फिर गोदान का संकल्प करे-

ॐ अद्येहामुकशर्म्माहमिमां गां तन्निष्क्रयं वा ब्राह्मणाय संप्रददे ॐ तत्सन्नमम ॥ गोदान करके गणेशसहित जीवमातृकाओं की पूजा करे (पृ० ४१६); आचार्यादि को पूर्ववत् दक्षिणा देकर महानीराजन करावे (पृ० ६५७) और पुनरपि तिलक करवाकर इष्टमित्रों के साथ भोजन करे। फिर शाम को पीपल के पत्तों को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूत में लपेटकर उसी सूत से प्रदक्षिण क्रम से घर को घेरे और घर के बाहरी द्वार पर ११ हाथ की एक ध्वजा गाड़े। इसके बाद घर में कम से कम पांच दिन तो लगातार अवश्य ही निवास कर लेना चाहिये। उसके बाद ही आवश्यकतानुसार कहीं जा सकता है। इति गृहप्रवेश।

११–पञ्चकशान्ति।

धनिष्ठा के उत्तरार्द्ध से लेकर रेवती के अन्त तक साढ़े चार नक्षत्रों को पञ्चक या धनिष्ठापञ्चक कहते हैं। यदि इनमें कोई मरे तो उसके लिये शान्ति की आवश्यकता होती है। नहीं तो वर्ष के भीतर ही पांच मृत्युओं के घर में हो जाने की आशंका बनी रहती है। इस शान्ति के दो भाग हैं। दाह के समय का काम और एकादशाह के दिन का। दाह के दिन पांच पुतले बनाकर साथ ही जलाये जाते हैं और आशौच के बाद एकादशाह को शान्ति करते हैं। परन्तु पुतले जलाना और शान्ति ये दोनों तभी किये जाते हैं जब पञ्चक में ही मरे और पञ्चके मेंहीं जलाया जावे। लेकिन यदि पञ्चक से प्रथम मरा पञ्चक में जलाया जाय तो केवल पुतला बना कर साथ में दाहकर देने से ही काम हो जाता है। शान्ति की आवश्यकता नहीं होती। इसी तरह पञ्चक का मृतक यदि उसके बाद जलाया जावे तो पुतलों की आवश्यकता नहीं। एकादशाह को केवल शान्ति कर देते हैं।

मृतक को श्मशान के पास ले जाकर दाह की शुद्ध भूमि में उसे विधिवत् सुलावे और दाहकर्त्ता आचमन प्राणायाम करके हाथ में कुश तिल जल लेकर अपसव्य हो के संकल्प करे। यह स्मरण रहे कि देश काल आदि कह कर ही अपसव्य होना चाहिये, न कि संकल्प के आरंभ में ही। ॐ अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य धनिष्ठापञ्चकमरणसूचितवंशारिष्टविनाशार्थं पञ्चकाविधिं करिष्ये॥ फिर कुशों की पांच मूर्त्तियां मनुष्य के आकार की बना और ऊन के सूत उनमें लपेटकर जहां तहां बांध दे और ऊपर से जौ का पीठा लगाकर मृतक के पास उससे दक्षिण ओर क्रमशः एक दूसरे से दक्षिण रक्खे और पांचों को अलग अलग छूकर उनके नाम यों कहे–

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

प्रेतवाहः, प्रेतसखः, प्रेतपः, प्रेतभूमिपः, प्रेतहर्त्ता ॥ ये
पांचों का अलग अलग नक्षत्रों के मंत्रों से अभिमंत्रण करे । अभि
मंत्रण के समय हाथ से या अनामिका से उन्हें छूवे । सामवेदियों के
पांच मंत्र पांचों नक्षत्रों के ये हैं-ॐ इदंवसो सुतमन्धः पिबा
सुपूर्णमुदम् । अनाभयन् रिरिमाते ॥ १ ॥ ॐ यदाकूत
च मीढुषे स्तोताजरेतमर्त्यः । आदिद्वन्देत वरुणं विप
गिरा धर्तारंविव्रतानाम् ॥ २ ॥ ॐ ईशान इमा भुव
नानि ईयसे युजान इन्दो हरितः सुपर्ण्यः । तास्ते क्षरन्तु
मधुमद्घृतं पयस्तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥ ३ ॥
ॐ अभित्वा शूर नोनुमो दुग्धा इव धेनवः । ईशानमस्य
जगतः स्वर्दृशमीशानामिन्द्रतस्थुषः ॥ ४ ॥ ॐ शुक्रंते अ
न्यद्यजतं ते अन्यद्विषुरूपे अहनी द्यौरिवासि । विश्वाहि
माया अवसि स्वधावन्भद्रा ते पूषन्निहरातिरस्तु ॥ ५ ॥
यजुर्वेदियों के मंत्र क्रम से ये हैं-ॐवसोः पवित्रमसि शतधा
वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुना
तु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥ १ ॥ ॐ
वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्यस्कंभसर्जनीस्थो वरुणस्य
ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसद
नमासीद ॥ २ ॥ ॐ उतन्नोहिर्बुध्न्यः शृणोत्वजएकपा
त्पृथिवी समुद्रः । विश्वेदेवा ऋतावृधे हुवानास्तुता मंत्रा
कविशस्ता अवन्तु ॥ ३ ॥ ॐ शिवो नामासि स्वधिति
स्तेपिता नमस्ते अस्तु मामा हिं ॥ सीः । निवर्त्तयाम्यायुषे
न्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वायसुवीर्या
॥ ४ ॥ ॐ पूषन्तवव्रते वयंनरिष्येम कदाचन । स्तोता
रस्त इहस्मसि ॥ ५ ॥ इस प्रकार दोनों वेदों वाले अलग अलग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपने अपने मंत्रों को क्रम से पढ़कर पांचों पुतलों का अभिमंत्रण करके क्रमशः उनकी पूजा इन नाम मंत्रों से करें-ओं प्रेतवाहायनमः ॥ ओं प्रेतसखाय नमः ॥ ओं प्रेतपायनमः ॥ ॐ प्रेतभूमिपाय नमः ॥ ओं प्रेतहर्त्रे नमः ॥ पूजा के बाद जलाने के समय उन पांचों को मृतक के पांच अंगों पर इस प्रकार रक्खे-पहला सिरपर, दूसरा आंखों पर, कहीं कहीं दहिनी बगल में भी रखने को लिखा है, तीसरा बाईं बगल में, चौथा नाभि पर और पांचवां दोनों पावों पर रक्खे । इसके बाद अलग किसी आग पर चुप चाप घी गर्म करके उसे साफ कर उन पांचों पर एक एक आहुति उन्हीं नाममंत्रों ही से दे-(१) ॐ प्रेतवाहाय स्वाहा इदं प्रेतवाहाय नमम । (२) ॐ प्रेतसखाय स्वाहा० । (३) ओं प्रेतपाय स्वाहा० । (४) ॐ प्रेतभूमिपाय स्वाहा० । (५) ॐ प्रेतहर्त्रे स्वाहा० ॥ इसके अनन्तर किसी जलपात्र से उनके चारों ओर जलधारा गिराकर प्रेत के मुंह में पञ्चरत्न और अभाव में सोना या घी डालकर विधिवत् दाह करे ।

फिर आशौच के अन्त में एकादशाह श्राद्ध करके या उससे पहले ही कर्त्ता तालाब आदि के निकट कर्म भूमि को लीप पोतकर ठीक करके वहीं सब सामग्री रक्खे और स्नान के बाद आसन पर बैठकर आचमन प्राणायाम करके होम के लिये एक हाथ लंबी चौड़ी और चार चार अंगुल ऊंची वेदी बनावे । उसके ईशान में शुद्ध मृत्तिका से दूसरी वेदी बनाकर उसे पांच कलशों के स्थापन के लिये रक्खे । पहले संकल्प करे । परन्तु संकल्प से पहले-ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु-इसे पढ़कर शरीर और सामग्री पर कुशों से जल छिड़क के अपसव्य होकर कुश तिल जल लेकर संकल्प करे-ॐ अद्येहामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य धनिष्ठापञ्चकमरणसूचितारिष्टनिवृत्त्यर्थं पञ्चकशान्तिं करिष्ये ॥ पहले विष्णु की षोडशोपचार पूजा

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ॐ इदं विष्णुः० (२०८) मंत्रसे करके आचार्य, ब्रह्माका वरण (७४,१८०) करे। सर्वत्र संकल्प में 'पञ्चकशान्तिकर्मणि आचार्यत्वेन, ब्रह्मत्वेन त्वां वृणे' इत्यादि कहना चाहिये। इसके बाद पंच-भूसंस्करपूर्वक वरद नामक अग्नि की स्थापना से लेकर चरु को अग्नि पर पकाने के लिये रखने तक की क्रियायें यजुर्वेदी और सामवेदी अपनी अपनी विधि से (१८५-२०१) कर डाले। होम के पदार्थों को रखने के समय तिल, जौ और धान या चावल तथा समिध् भी रक्खे। चावल को पकाने के लिये चरुस्थाली में रखने के समय ये मंत्र पढ़े-ओं वसुभ्यस्त्वा जुष्टं निर्वपामि। ॐ वरुणाय त्वा जुष्टं०। ओं अजैकपदे त्वा०। ओं अहिर्बुध्न्यायत्वा०। ओं पूष्णेत्वा०॥ इस के बाद कलश की वेदी पर धान रख पांच कलश उत्तर उत्तर या चार चारों ओर और पांचवाँ बीच में पूर्व रीति से (पृ०६३७) स्थापित करे और उन में वहीं लिखी रीति से वरुण का आवाहन करके पूजन करे। फिर उन पांचों पर क्रमसे पांच नक्षत्रों की मूर्त्तियां भर सक सोने की या अभाव में और चीज की अग्न्युत्तारणादि करके स्थापित करे। कलशों के ऊपर जो पूर्णपात्र हों वे भरसक तांबे के हों और उनमें चावल रक्खे हों। पांचों कलशों में क्रम से दूध, दही, घी, गौ का गोबर और गोमूत्र भी डाले। इन पांचों के डालने के अलग अलग मंत्र ७८ पृष्ठ में लिखे हैं। फिर पहले कलश में वसु का आवाहन करे उसी नक्षत्र पर जहां धनिष्ठा की मूर्त्ति स्थापित है। वसुका वैदिक मंत्र सामवेदी और यजुर्वेदी का अलग अलग दाह के समय लिखा है। तथा शेष चार नक्षत्रों के भी मंत्र वहीं लिखे हैं। यहां भी पांचों कलशों में नक्षत्रों या उनके देवताओं की स्थापना के समय क्रम से वही वैदिक मंत्र पढ़े जावें। पहले वसुके मंत्र को पढ़कर उसके बाद कहे-ॐ भूर्भुवः स्वः वसव इहागच्छत इह तिष्ठत। और अक्षत पुष्प उस पर डाल दे॥ १॥ फिर दूसरे अक्षत, पुष्प लेकर पहले से उत्तर के दूसरे या पूर्ववाले पहले के बाद दक्षिणवाले दूसरे में वरुण का आवाहन करे। पहले लिखे द्वितीयमंत्र के बाद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ॐ भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इहतिष्ठ-पढ़कर अक्षत पुष्प छोड़ दे ॥ २ ॥ तीसरे या पश्चिम के कलश में अजैकपाद का आवाहन करे। तीसरे मंत्र के बाद पढ़े-ॐ भूर्भुवः स्वः अजैकपात् इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ३ ॥ चौथे या उत्तरवाले में अहिर्बुध्न्य का आवाहन करे। चौथे मंत्र के बाद पढ़े-ॐ भूर्भुवः स्वः अहिर्बुध्न्य इहागच्छ इह तिष्ठ ॥ ४ ॥ पांचवें या बीचवाले में पूषा का आवाहन करे। पांचवें मंत्र के बाद पढ़े-ॐ भूर्भुवः स्वः पूषन्निहागच्छ इहतिष्ठ ॥५॥ फिर अक्षत पुष्प लेकर-ॐमनोजूति० (३७९) ओं भूर्भुवः स्वः आवाहितनक्षत्रदेवताइह सुप्रतिष्ठितावरदाभवत-यह पढ़कर और अक्षत पुष्प डालकर उनकी प्रतिष्ठा एक ही साथ करे। फिर केवल उन्हीं मन्त्रों से या उनके अन्तमें-(१) ॐ भूर्भुवः स्वः वसुभ्यो नमः। (२) ॐ भू० वरुणानमः। (३) ॐ भू० अजैकपदेनमः। (४) ॐ भू० अहिर्बुध्न्यायनमः। (५) ॐ भू० पूष्णेनमः-इन नाम मंत्रों को क्रम से लगाकर अथवा इन्हीं नाममंत्रों उन पांचों की विधिवत् पूजा करे और उन मंत्रों को १०८, ५४ या २८ बार जपे भी। इसके बाद उन्हीं कलशों के उत्तर एक वेदी पर वस्त्र डाल उस पर ५ जगह अक्षत या सुपारी रख उनमेंही आगे लिखे मंत्रों से क्रम से यमराज आदि १५ देवताओं का आवाहन करे—(१) ॐ यमायनमः यम इहागच्छ इहतिष्ठ। (२) ओं धर्मराजायनमः धर्मराज इहा०। (३) ओं मृत्यवेनमः मृत्यो०। (४) ॐ अन्तकाय नमः अन्तक०। (५) ओं वैवस्वताय नमः वैवस्वत०। (६) ॐ कालायनमः काल०। (७) ॐ सर्वभूतक्षयायनमः सर्वभूतक्षय०। (८) ॐ औदुम्बराय नमः औदुम्बर०। (९) ॐ दध्नाय नमः दध्न०। (१०) ॐ नीलायनमः नील०। (११) ॐ परमे-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ष्ठिने नमः परमेष्ठिन्० । (१२) ॐ वृकोदराय नमः वृकोदर० । (१३) ॐ चित्राय नमः चित्र० । (१४) ॐ चित्रगुप्तायनमः चित्रगुप्त० ॥ इस प्रकार १४ यमों की स्थापना कर सबके ईशान में 'ॐ अघोरायनमः अघोर०' से अघोर रुद्र की स्थापना करे। फिर पूर्ववत् ॐ मनोजूति० ॐ भूर्भुवः स्वः आवाहितदेवता इह सुप्रतिष्ठिता भवत-से की प्रतिष्ठा करके—ओं भूर्भुवः स्वः चतुर्दशयमेभ्योनमः इस मंत्र से १४ यमों की षोडशोपचार पूजा करे और ओं अघोरेभ्योऽथ घोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः शर्वे सर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः ॥ ॐ भूर्भुवः स्वः अघोरायनमः-मंत्र से अघोर की पूजा करे। इसके बाद यजुर्वेदी प्रथम कलश में रक्षोघ्न मंत्र, दूसरे में विभ्राड् इत्यादि अनुवाक, तीसरे में अप्रतिरथ, चौथे में नमस्तेरुद्र० रुद्राध्याय और पांचवें में ऋचंवाचं० अध्याय पढ़े । अर्थात् उन्हें छूकर इनका पाठ करे । ये सभी आगे लिखे हैं । इसके बाद यदि पहले अग्नि की स्थापना न की हो तो यहां पर ही पञ्चभूसंस्कार पूर्वक अग्नि की स्थापना करे और यदि, जैसा पहले ही कह चुके हैं, चरु आदि के पकाने के विचार से पहले ही कर चुका हो तो अग्नि पर से और चरु को उतारने से लेकर होम से पहले को कुशकण्डिका करडाले। इसके बाद ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर घी से आज्य और आज्यभाग की दो दो आहुतियां (पृ० १६४) यजुर्वेदी प्रोक्षणी में संस्रव रखता जावे । मगर सामवेदी केवल आज्यभाग की दो आहुतियां (पृ०३६१) दे और संस्रव न रक्खे । फिर अन्वारंभ छोड़कर यजुर्वेदी पलाश की समिधा, तिल, घी, चरु और इन में प्रत्येक से हरेक देवताओं को उनके पूर्वोक्त मंत्रों से १६ २८ या ८ आहुतियां दे । आहुति देने के समय प्रत्येक मंत्र के अन्त में 'स्वाहाइदंवसुभ्योनमम' 'स्वाहा इदं वरुणाय नमम' 'स्वाहा इदमजैकपदे नमम' 'स्वाहाइदम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बुध्न्याय नमम, 'स्वाहा इदं पूष्णे नमम' यह क्रम से पढ़ कर आहुतियां दे। परन्तु चतुरवत्ती और पञ्चावत्ती सामवेदी अपनी अपनी रीति से (पृ० ३६०) पहले चरु से एक एक आहुतियां पांचों को यों दे-(१) ॐ वसुभ्यः स्वाहा इदं वसुभ्यो नमम। (२) ॐ वरुणाय स्वाहा इदं०। (३) अजैकपदे स्वाहा०। (४) ॐ अहिर्बुध्न्याय स्वाहा०। (५) ॐ पूष्णे स्वाहा०॥ फिर घी से, पूर्व के उन सामवेदीय मंत्रों के अन्त में क्रम से "स्वाहा इदं वसुभ्यो नमम" इत्यादि यजुर्वेदियों के लिये कहे गये ही वाक्य लगाकर, प्रत्येक से ८-८ आहुतियां दे। तब पलाश की समिधाओं में दही, मधु और घी लगा लगा कर प्रत्येक मंत्र से सामवेदी ही १०८, २८ या ८, बार आहुतियां समिधाओं की दे। इस तरह यहां तक अपने अपने प्रकार से दोनों वेदों वालों के होम के बाद यजुर्वेदी चरु से एक एक आहुति इन मन्त्रों से देते हैं। ये १४ यमों और अघोर की आहुतियां हैं। (१) ॐ यमाय स्वाहा इदं यमायनमम॥ (२) ॐ धर्मराजाय स्वाहा०। (३) ॐ मृत्यवेस्वाहा०। (४) ॐ अन्तकायस्वा०। (५) ॐ वैवस्वताय०। (६) ॐ कालाय०। (७) ॐ सर्वभूतक्षयाय०। (८) ॐ औदुम्बराय० (९) ॐ दध्नाय० (१०) ॐ नीलाय स्वा०। (११) ओं परमेष्ठिने०। (१२) ओं वृकोदराय०। (१३) ॐ चित्राय०। (१४) ॐ चित्रगुप्ताय०। (१५) ॐ अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोर० (७१०) स्वाहा इदमघोराय नमम॥ फिर-ॐ नमस्ते रुद्र० (५१३) स्वाहा इदं रुद्राय नमम-इस मंत्र से पलाश समिध की १०८, २८ या ८ आहुतियां दे। समिध में घी लगालिया करे। तब-ओं इदं विष्णु० स्वाहा इदं विष्णवे नमम॥ इस मन्त्र (२०८) से यथाशक्ति तिलों में घी मिलाकर उनकी आहुतियां दे। परन्तु सामवेदी केवल १४

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

यमों को या अघोर को भी समिधा, तिल, घी, चरु और जौ
पाँचों से कम से कम एक एक, आहुतियाँ दे । मन्त्र वही
जो यजुर्वेदियों के । सामवेदी के यहाँ 'नमस्ते रुद्र०' और
विष्णु०' से आहुतियाँ नहीं दी जाती हैं । इसके बाद दोनों
वाले स्विष्टकृत् की आहुति सभी वस्तुओं को एक में हीं मिला
ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर दें-ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वा
इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ इसके बाद पूर्णाहुति से पहले
की उत्तर क्रियायें दोनों वेदों वाले अपनी अपनी रीति से(३२२-
करके(२१४)पृष्ठोक्त रीति से ग्रहों को बलि दें । स्मरण रहे कि स्विष्ट
होम के बाद यजुर्वेदियों को तीन महाव्याहृति, पञ्च वारुणी
प्रजापति की ये ९ आहुतियां (१९४) ब्रह्मा के अन्वारंभ करने
देनी होती हैं और संस्रव प्रोक्षणी में रखना होता है । फिर संस्र
प्राशनादि करते हैं । और सामवेदी व्याहृतिहोमादि स्विष्टकृत
बाद (३६२) करते हैं । परन्तु यहां पर पञ्चक शान्ति में स्विष्ट
और व्याहृति होम के पहले सामवेदी यजमान स्थापित कलश
जल से अभिषेक (१२४) करके कांसे के पात्र में तेल रख
मुख देकर उसे पान और सोने के साथ किसी ब्राह्मण को देता है-
ओं अद्येह हिरण्यताम्बूलतैलसहितमिदंकांस्यपात्रं
दैवत्यं (अपसव्य होकर) अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य
ष्ठापञ्चकमरणसूचितारिष्टनिवृत्तये यथानामगोत्राय
ह्मणाय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ इस
के बाद पान औरसोना या अन्य द्रव्य के साथ वह तेल ब्राह्मण
और वह 'ॐ स्वस्ति' कहकर ले । फिर उड़द, मूंग,
धान और कंगनी आदि आगे रखकर उनके दान का
करे—ओं अद्येहेमानि माषमुद्गव्रीहिप्रियंग्वादिधान्य
नि प्रजापतिदैवतानि (अपसव्य) अमुकगोत्रस्य अमु
प्रेतस्य धनिष्ठापञ्चकमरणसूचितारिष्टनिवृत्तये ब्रह्मविद

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

महेशवरुणेन्द्रप्रीतयेनानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ और सभी ब्राह्मणों को वह अन्न दे डाले। इसके बाद तिल, गौ, भूमि और सोने आदि का दान, यदि सामर्थ्य हो तो, यथाशक्ति करे । फिर कलशों का दान मूर्त्तियों और द्रव्य के साथ करे-(१) ओं अद्य इमं वसुकलशं सजलवस्त्रहिरण्यप्रतिमं (अपसव्य) अमुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्यधनिष्ठापञ्चकमरणसूचितवंशारिष्टनिवृत्तये यथानामगोत्राय ब्राह्मणाय संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ ओं अनेन कलशदानेन वसवः प्रीयन्ताम्- कहकर ब्राह्मण को दे और उसे 'ओं स्वस्ति' पूर्वक लेकर ब्राह्मण कहे- ओं प्रीयन्तां वसवः ॥ इसी प्रकार शेष चार कलशों को भी दे और ऊपर के ही वाक्य में जहां जहां 'वसु' और 'वसवः' शब्द होवें वहां वहां क्रम से (१) 'वरुण' और 'वरुणः' (२) 'अजैकपाद्' और 'अजैकपाद्' (३) 'अहिर्बुध्न्य' और 'अहिर्बुध्न्यः' (४) 'पूषन्' और 'पूषा' पढ़े। तथा 'प्रीयंताम्' की जगह 'प्रीयताम्' कहे । इसके बाद सामवेदी व्याहृतिहोम से लेकर वामदेव्यगान तक (पृ० ३४८) करके भूयसी दक्षिणा और ब्राह्मण भोजन का संकल्प करे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य धनिष्ठापञ्चकमरणसूचितवंशारिष्टनिवृत्तये कृतस्य शान्तिकर्मणो न्यूनातिरिक्तदोषनिवृत्तिपूर्वकसम्पूर्णतासिद्धिद्वारा यथोक्तफलावाप्तये भूयसीदक्षिणाब्राह्मणभोजनादिकं कारयिष्ये ॥ अन्त में २३० पृष्ठोक्त ब्रह्मार्पण आदि करके ब्राह्मणभोजन पूर्वक स्वयं भोजन करे ।

यजुर्वेदी होम के बाद और पूर्णाहुति से पहले की क्रियायें २२२ पृष्ठोक्त रीति से करके पूर्णाहुति करे और उसके बाद त्र्यायुष भी करे, जैसाकि वहीं ३२३ पृष्ठ में लिखा है। फिर जिस तरह

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सामवेदी का कलशदान प्रतिमा और द्रव्यादि के साथ हुआ
उसी तरह यजुर्वेदी भी करे। विशेषता यह है कि पाँचों कल
आचार्य को ही दे। फिर उसी तरह माष, मुद्गादि सप्तधान्य का
करके यथा शक्ति भैंस, गौ, तिल, सोना का दान भी करे। पर,
का दान न कर घी का दान करे। यदि ये पाँचों न दे सके
निष्क्रय ही दे। फिर कलश के जल से स्त्री पुत्र के सहित यजमान
का अभिषेक आचार्यादि आगे लिखे अभिषेक के मंत्रों से करें
ॐ शन्नोमित्रः शंवरुणः शन्नो भवत्वर्यमा। शन्न इ
बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ॥ १ ॥ शन्नो वातःपव
शन्नस्तपतु सूर्यः। शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभि
वर्षतु ॥ २ ॥ अहानि शं भवन्तु नः शं रात्रीः प्रति
धीयताम्। शन्नइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नइन्द्रा
रुणा रातहव्या। शन्नइन्द्रापूषणा वाजसातौ शमिन्द्रा
सोमासुविताय शंयोः ॥ ३ ॥ शन्नोदेवीरभिष्टय आ
भवन्तु पीतये। शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥ ४ ॥ द्यौः शान्ति
रन्तरिक्ष ँ शान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषध
शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्मशान्ति
सर्व ँ शान्तिः शान्तिरेवशान्तिः सामाशान्तिरेधि
॥ ५ ॥ इसके बाद ७०२ पृष्ठोक्त रीति से घी में मुख देखकर उसे
ण को दे और सामवेदी के संकल्प की तरह ही संकल्प पढ़
भूयसी दक्षिणा दे तथा ब्रह्मभोज की तैयारी करे। फिर देवताओं
विसर्जनादि (पृ० २२६) करे और अपसव्य होकर कहे-ॐ अ
हामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्यानेन पञ्चकशान्तिकर्मणा त
नितदुर्मरणदोषनिवृत्तिरस्तु॥ (फिर सव्य होकर) मम
च सकलदुरितोपशान्तिरस्तु ॥ अन्त में-ओं यस्यस्मृत्या
(पृ० २३०) पढ़कर स्नान करे और नवीन खद्दर पहन ब्राह्मण
कराके स्वयं भी सबके साथ भोजन करे। इतिपञ्चकशान्ति।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

१२–त्रिपुष्कर और द्विपुष्करशान्ति ।

जिस तरह पञ्चक की शांति की गई है उसी तरह त्रिपुष्कर वा त्रिपाद और द्विपुष्कर या द्विपाद नक्षत्रों में मरने पर भी दाह और शान्ति की जाती है। ज्योतिषप्रकरण में त्रिपुष्कर का विचार आगे लिखा है। विशेषता यह है कि त्रिपुष्कर में पहले के तीन और द्विपुष्कर में पहले के दोही पुतले जलाये जाते हैं। शेष अन्तवाले छूट जाया करते हैं। पहले दो हैं 'प्रेतवाह' तथा 'प्रेतसख' और तीन में 'प्रेतप' आ जाता है। उन्हीं के नामों से उनकी पूजा और घी की आहुतियां दी जावें। संकल्प में सर्वत्र 'धनिष्ठापञ्चक' शब्द की जगह 'त्रिपुष्कर' और 'द्विपुष्कर' पढ़े। त्रिपुष्करवाले नक्षत्र ये हैं–कृत्तिका, पुनर्वसु, उत्तराफाल्गुनी, विशाखा, उत्तराषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा। और द्विपुष्कर की धनिष्ठा, चित्रा, मृगशिरा ये तीन हीं हैं। कलश भी त्रिपुष्कर में तीन और द्विपुष्कर में दो ही होंगे। मगर जिस नक्षत्र में मृत्यु होगी त्रिपुष्कर में एक उसकी प्रतिमा बीच के कलश पर रहेगी और उससे पहले और बाद के नक्षत्रों की मूर्त्तियां क्रम से मध्य कलश के दहिने और बायें रहेंगी। द्विपाद में जिस नक्षत्र में मरे उसकी मूर्त्ति पहले कलश पर और उसके बादवाली दूसरे कलश पर स्थापित करे। आहुतियों का नियम यह होगा कि आघार और आज्यभाग के बाद त्रिपुष्कर में मुख्य नक्षत्र के देवता को १०८ आहुतियां और उसके इधर उधर के नक्षत्रों के देवताओं को २८–२८ आहुतियां देंगे। यही बात द्विपुष्कर में भी होगी कि प्रधान नक्षत्र को १०८ और उसके बाद-वाले को २८ देंगे। शेष यमों, अघोर, रुद्र और विष्णु की आहुतियां पञ्चकशान्ति की ही तरह तथा उसके बाद के भी सभी कर्म उसी तरह होंगे। रहगई नक्षत्रों के लिये वैदिक मंत्रों की बात। त्रिपाद या त्रिपु-ष्कर के नक्षत्रों में कृत्तिका (१) के नक्षत्र भरणी, कृत्तिका, रोहिणी; (२) पुनर्वसु के आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य; (३) उत्तराफाल्गुनी के पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त; (४) विशाखाके स्वाती, विशाखा, अनुराधा; (५) उत्तराषाढा के पूर्वाषाढा, उत्तराषाढा; श्रवण (६) पूर्वाभाद्रपदा के शत-भिषक्, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, यही हैं। द्विपुष्कर में (१) मृगशिरा, आर्द्रा; (२) चित्रा, स्वाती; (३) धनिष्ठा, शतभिषक्।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इससे स्पष्ट है कि त्रिपुष्कर के १८ नक्षत्रों के सिवाय चित्रा और धनिष्ठा यही दो और नये नक्षत्र होते हैं। द्विपुष्कर के शेष चार भी त्रिपुष्कर में ही आगये। अब इन २० नक्षत्रों के देवताओं के वैदिक मंत्र क्रमसे ये हैं-(१) भरणी का यम देवता है। मंत्र-ॐ यमायत्वा-गिरसे पितृमते स्वाहा। स्वाहा धर्माय स्वाहा धर्मः पित्रे। यमायनमः(स्वाहा)॥(२) कृत्तिका का अग्नि-ओं अग्निं दूतं पुरो-दधे हव्यवाहमुपब्रुवे। देवाँ आसादयादिह॥ अग्नये नमः (स्वाहा)॥(३) रोहिणी का प्रजापति-ॐ प्रजापते नत्वदे-तान्यन्यो विश्वारूपाणि परिताबभूव। यत्कामास्ते जुहु-मस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ प्रजापतयेनमः (स्वाहा)। (४) पुनर्वसु का अदिति-ॐ अदितिर्द्यौरदि-तिरन्तरिक्षमदितिर्माता सपिता सपुत्रः। विश्वेदेवा अ-दितिः पञ्चजना अदितिर्जातमदितिर्जनित्वम्॥ अदि-त्यैनमः (स्वाहा)॥(५) आर्द्रा का रुद्र-ओं नमस्ते रुद्र-मन्यव उतोत इषवे नमः। बाहुभ्यामुतते नमः॥ रुद्राय-नमः (स्वाहा)॥(६) पुष्य का बृहस्पति-ॐ बृहस्पते अति यद्-र्यो अर्हाद् द्युमद्विभाति क्रतुमज्जनेषु। यद्दीदयच्छवस-ऋतप्रजात तदस्मासु द्रविणं धेहि चित्रम्॥ बृहस्पतये-नमः(स्वाहा)॥(७) पूर्वाफाल्गुनी के भग-ॐ भग एव भगवां-अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वा भग सर्व-इज्जोहवीति सनो भग पुर एता भवेह॥ भगाय नमः (स्वाहा)॥(८) उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा-ॐ अर्यमणं बृह-स्पतिमिन्द्रं दानाय चोदय। वाचं विष्णुं सरस्वतीं सवि-तारं च वाजिनं स्वाहा॥ अर्यम्णे नमः (स्वाहा)॥(९) हस्त का देवता सूर्य-ॐ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेश-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यन्नमृतं मर्त्यं च । हिरण्ययेन सविता रथेनादेवो याति भुवनानि पश्यन् ॥ सूर्यायनमः (स्वाहा) ॥ (१०) स्वाति का वायु—ॐ वायो येते सहस्रिणो रथास्तेभिरागहि । नियुत्वान्सोमपीतये ॥ वायवे नमः (स्वाहा) ॥ (११) विशाखा के इन्द्राग्नी—ॐ इन्द्राग्नी आगतं सुतं गीर्भिर्नभो वरेण्यम् । अस्यपाते धियेषता । उपयाम गृहीतोसीन्द्राग्निभ्यां त्वैष ते योनिरिन्द्राग्निभ्यां त्वा ॥ इन्दाग्निभ्यां नमः (स्वाहा) ॥ (१२) अनुराधा के मित्र—ॐ मित्रस्य चर्षणी धृतो वो देवस्य सानसि । द्युम्नं चित्रश्रवस्तमम् ॥ मित्राय नमः (स्वाहा) ॥ (१३) पूर्वाषाढा के जल—ॐ आपो हिष्ठा मयो भुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥ जलायनमः (स्वाहा) ॥ (१४) उत्तराषाढा के विश्वेदेवा—ॐ विश्वेदेवास आगत श्रृणुताम इमं हवम् । एदं बर्हिर्निषीदत ॥ विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः (स्वाहा) ॥ (१५) श्रवण के ब्रह्मा—ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचो वेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ब्रह्मणे नमः (स्वाहा) ॥ (१६) शतभिषक् के वरुण—ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋतसदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ॥ वरुणाय नमः (स्वाहा) ॥ (१७) पूर्वभाद्रपदा के अजैकपाद—ॐ उतन्नोऽहिर्बुध्न्यः शृणोत्वज एकपात्पृथिवी समुद्रः । विश्वेदेवा ऋतावृधे हुवानास्तुतामंत्राः कविशस्ता अवन्तु ॥ अजैकपदे नमः (स्वाहा) ॥ (१८) उत्तरभाद्रपदा के अहिर्बुध्न्य—ॐ शिवो नामासि० (७०६) ॥ अहिर्बुध्न्याय नमः (स्वाहा) ॥ (१९) चित्रा के त्वष्टा—ॐ त्वष्टावीरं देवकामं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

जजान त्वष्टुरर्वा जायत आशुरश्वः । त्वष्टेदं विश्वं भुवनं जजान बहोः कर्त्तारमिहयक्षि होतः॥ त्वष्ट्रेनमः (स्वाहा)॥ (२०) धनिष्ठा के वसु-ॐ वसोः पवित्रमसि० (७०६) ॥ वसुभ्यो नमः (स्वाहा)॥ बस, जहाँ जब जिस नक्षत्र की आवश्यकता हो उसके देवता का मंत्र इन्हीं में से ढूंढ़ ले और उसीसे पूजा करे तथा आहुतियां दे । जब तीन कलश होंगे तो केवल रक्षोघ्न, त्रिभ्राड् और अप्रतिरथ, यही तीनों क्रम से उन तीनों को छूकर पढ़े जावेंगे और अन्त वाले दो छूट जांयगे । द्विपुष्कर में अप्रतिरथ भी छूट जायगा। केवल दोही कलशों में दो जपे जायँगे । एक बात सदा याद रखने की कि है त्रिपुष्कर या द्विषपुष्कर में मरने पर दाह से प्रथम तीन कृच्छ्र करे, उसके बदले में तीन गौदान करे या उनका निष्क्रय दे। अथवा प्रत्येक के लिये १२ हजार या कुल ३६ हजार गायत्री जप करावे । इति त्रिपुष्कर।

१३—कुष्टि, रजस्वला और गर्भिणीप्रायश्चित्त।

यदि कोढ़ी मर जावे तो उसका शरीर या तो गाड़ देते या गंगा आदि में फेंक देते हैं । दाह, तर्पण, पिण्ड या कोई भी प्रेत क्रिया नहीं करते यदि दाह करे तो प्रायश्चित्त के लिये चान्द्रायण करना होता है। यदि जलानाहीं होतो तीन दिन तक भूमि में गाड़ने के बाद निकाल कर जला सकते हैं । उसका पिंडदानादि करने के लिये षडब्द व्रत (छः वर्ष का व्रत) करना होता है । जो चाहे वह पहले व्रत कर ले तब पिंडादि कर सकता है । यह व्रत अन्य ग्रन्थों में मिलेगा ।

रजस्वला और सूतिका के मरने पर पहले तीन चान्द्रायण या उसकी जगह तीन गोदान, या उसका निष्क्रय दान आदि करके पीछे दाह करते हैं । मगर यदि रजोदर्शन के तीन दिन के भीतर ही मरी हो तो उसका दाह विना संस्कार के ही करके तीन दिन बीतने पर फिर उसकी हड्डी का विधिवत् दाह करते हैं । तीन दिन के बाद मरने पर रजस्वला का संस्कार साधारण रीति सेही ठीक ठीक होता है मगर तीन दिन के भीतर कीही बात ऊपर लिखी है । यदि तीन दिन के भीतरही विधिवत् दाह करना हो तो और भी कुछ क्रियायें करनी होती हैं । प्रसूती के मरने पर भी यही करना होता है। बात यह है कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि तीन दिनों के भीतर योंही जलाकर पीछे हड्डियां जलानी हों या तीन दिनों के भीतरही रजस्वला का विधिवत् दाह करना हो और प्रसूती का १० दिन के भीतर दाह करना हो या विधिवत् दाह तो दस दिन के बाद हड्डियों काही करना हो मगर तत्काल योंही जला देना हो। तो हर हालत में पहले उसको नहलाकर वह कपड़ा बदल दूसरे कपड़े से जलाना होता है। मगर यदि आशौच या तीन दिन के भीतरही सूतिका और रजस्वला का संस्कार करना हो तो इस तरह करे। पहले संकल्प करे-ओं अद्येहास्या रजस्वलाया (सूतिकायाः) मरणदोषपरिहारपूर्वकौर्द्ध्वदैहिककर्मयोग्यतासिद्ध्यर्थं चान्द्रायणत्रयप्रतिनिधिगोदानादिप्रायश्चित्तपूर्वमुद्धृतोदकेनाष्टोत्तरशतस्नानानि कारयिष्ये ॥ फिर तीन चान्द्रायण की जगह तीन गोदान या उसका निष्क्रय देकर और स्वयंभी स्नान करके उसके शरीर में जौ का पीठा लपेटे और कुएं से या जलाशय से अलग जल लाकर उसे १०८ बार नहलावे। कहीं कहीं बाँस के नवीन सूपसे भी १०८ स्नान कराने को लिखा है। फिर पञ्चगव्यसे १०८ बार नहला कर शुद्ध जलसे भी १०८ बार नहलावे। इसके बाद आगे लिखे मंत्रों से स्नान करावे। साधारण मंत्र ये हैं—ओं उपास्मै गायतां नर० इत्यादि पवमानस्तोत्रके २७ ॥ ओं त्यमूषुवाजिनं देवजूतं सहोवानं तरुतारं रथानाम्। अरिष्टनेमिं पृतनाजमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥ १ ॥ त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवेहवे सुहवं ꣳ शूरमिन्दम्। हुवे नु शक्रंपुरुहूतमिन्द्रं हविर्मघवा वेत्विन्द्रः ॥ २ ॥ आपोहिष्ठा० (पृ० ७९) ॥ ३॥४॥५॥ कयानश्चित्र आभुवदूती० (पृ० २०६) ॥६॥७॥८॥ पवमान मंत्र आगे लिखे हैं।

इसके बाद वह वस्त्र हटा और दूसरा वस्त्र पहनाकर उसे विधिवत् जलावे। यदि गर्भिणी मर जावे तो उसके लिये पहले जैसाही संकल्प करे। केवल जहां रजस्वला या प्रसूती शब्द है वहां गर्भिणी शब्द पढ़े और उसी प्रकार तीन कृच्छ्र और स्नान कराने की क्रियायें करे। परन्तु

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

विशेषता यह होगी कि नाभि के पास गर्भिणी का पेट चीरकर गर्भ निकाल लेना होगा और फिर पेट सूत से सीकर जलाना होगा। यदि गर्भ जी जावे तो ठीकही है। नहीं तो उसे अलग गाड़ दे। मगर गर्भ के साथ कभी भी गर्भवती को न जलावे। जला चुकने पर पीछे से गर्भ निकालने के दोष के लिये ३३ कृच्छ्र करे या उतनेहीं गोदानादि करे। उसका संकल्प—ओं अद्येह शल्यदोषनिवृत्त्यर्थं त्रयस्त्रिंशत्कृच्छ्राणि प्रत्याम्नायेन करिष्ये॥ शेष कर्म पूर्ववत्। गर्भ सहित जलाने पर हत्या लगती है। इति रजस्वलाआदिप्रायश्चित्त।

१४—नारायणबलि।

हैजा, सर्प या जल में डूबकर तथा अन्यान्य दुर्मरणों के लिये प्रायश्चित्तस्वरूप नारायणबलि कही गई है। इसी प्रकार संन्यासी के मरने पर उसके पुत्रादि उसका एकोद्दिष्ट या सपिंडीकरण न कर नारायणबलिपूर्वक पार्वण करते हैं। इसके सिवाय यदि मोक्ष और वैकुण्ठादि की कामना हो तो प्रत्येक प्रेतश्राद्ध के अवसर एकादशाह वा द्वादशाह को नारायणबलि करने को धर्मग्रन्थों में लिखा है। अतएव उसकी पद्धति भी आवश्यक है। भरसक एकादशाहश्राद्ध के पहले ही नारायण बलि एकादशाह को ही करते हैं। अथवा एकादशाहश्राद्ध के बाद उसी दिन, या द्वादशाह को भी, करते हैं। परन्तु जब प्रायश्चित्तरूपसे दुर्मरणदोष की निवृत्ति के लिये करते हैं तब तब तो उचित यही है कि सब से प्रथम नारायणबलिही एकादशाह को या आशौच के बाद करें और उसी के बाद वृषोत्सर्ग, एकोद्दिष्ट और सपिंडीकरण आदि किये जावें। फिर भी यदि द्वादशाह को भी करने की रीति कहीं हो तो उस दिन भी कर सकते हैं। क्यों कि सभी प्रकार के वचन मिलते हैं। यों तो द्वादशाह के बाद भी कर सकते हैं। कारण, ऐसे भी वचन हैं, अस्तु।

नारायण बलि की सामग्री लेकर नदी, तालाब आदि के किनारे जावे, उसी के निकट इसके लिये स्थान ठीक कर भूमिको लीप कर जलते अंगार उस पर डाले और गीली मिट्टी, सरसों आदि छींट कर उसे शुद्ध करे। फिर काक आदि को हटाकर और चारों ओर से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

घेर कर उसके भीतर सभी सामग्री रख दे। स्वयं स्नान और नित्य क्रिया से निवृत्त होकर कर्मभूमिमें आके दो स्थानों में अलग अलग पाक बनवाने का प्रबन्ध करे। पवित्र धारण करके कर्मपात्र के नीचे कुश रख उसमें जल डाल चन्दन, पुष्पादि डाले और आसन पर पूर्वमुख बैठ आचमन प्राणायाम करके-ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यःस्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु-पढ़कर देह और सामग्री पर जल छींटे। तब पहले १५ प्राजापत्य की जगह १५ गोदान का संकल्प करे यदि दुर्मरण निमित्तक नारायणबलि करनी हो-ॐ अद्येहामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य अमुकदुर्मरणनिमित्तकपञ्चदशप्राजापत्यप्रत्याम्नायपञ्चदशगोदानंतन्निष्क्रयदानं वा तद्दोषपरिहारार्थं करिष्ये॥ और १५ गोदान का निष्क्रय दे दे। यदि दुर्मरण न हो तो इसकी कोई आवश्यकता ही नहीं है और बहुत सी पद्धतियों में यह बात लिखी भी नहीं है। फिर मुख्य संकल्प करे-ॐ अद्येहामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्यामुकदुर्मरणोत्पन्नदोषनिवृत्त्यर्थं प्रेतत्वनिवृत्तिद्वारा सद्गतिप्राप्त्यर्थं च नारायणबलिकर्माहं करिष्ये॥ इसके बाद पहले विष्णु की पूजा शालिग्राम या किसी प्रतिमा में या अभाव में अक्षत सुपारी पर ही करके एक वेदी बनाकर उसपर धान या जौ फैलाके बीच में एक और चार दिशाओं में चार, इस तरह पांच कलशों की स्थापना करे (पृ०६३७)। विधिवत् कलश स्थापन के समय पांचों पर जो पूर्णपात्र रक्खे वह भरसक तांबे का हो। उसमें आगे लिखे अन्न रक्खे। फिर पूर्व से शुरू कर चारों दिशाओं के और मध्य के कलश पर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, यम और प्रेत (मृतक) की मूर्त्तियां स्थापित करे। वे भरसक क्रमशः चांदी, सोना, तांबा, लोहा और सीसा या कुशकी हों। कलश के पूर्णपात्र में क्रमसे (१) गेहूँ और श्वेत खद्दर, (२) चावल, पीला खद्दर (३) मूंग, लाल खद्दर (४) उड़द, काला खद्दर, (५) तिल, काला खद्दर रक्खे। पांचों मूर्त्तियों का अलग अलग अग्न्युत्तारण करे।

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

उन्हें पंचामृत से नहलाकर (पृ० ६६७) क्रमसे पांचों कलशों के
पात्रों पर रक्खे वस्त्रों पर उन्हें स्थापित करे । इसके बाद क्रम से
पांचों का आवाहन करे । स्मरण रहे कि हम यहां पर सामवेदी और
यजुर्वेदी का भेद नहीं करना चाहते । क्योंकि ग्रन्थ का विस्तार
हम नहीं चाहते । अतएव इस झंझट को अब न रक्खेंगे । (१) इ
कलश पर ब्रह्मा-ॐ ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमत
सुरुचो वेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च
योनिमसतश्च विवः॥ ॐ भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः ब्रह्मा
आगच्छ इहतिष्ठ॥ (२) पश्चिम कलश पर विष्णु-ॐ इदं विष्णु
र्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पांसुरे॥
भूर्भुवः स्वः विष्णवेनमः विष्णो इहा०॥ (३) उत्तर क
पर रुद्र-ॐ नमः शंभवाय च मयोभवाय च नमः शं
रायच मयस्कराय च । नमः शिवाय च शिवतराय च
ॐ भू० रुद्रायनमः रुद्र० ॥ (४) दक्षिण कलश पर यम-
यमायत्वा मखायत्वा सूर्यस्यत्वा तपसेदेवस्त्वा सवि
मध्वाऽनक्तु पृथिव्याः । संस्पृशस्पाहि अर्चिरसिशो
रसि तपोऽसि॥ ओं भू० यमायनमः यम०॥ (५) क
कलश पर प्रेत, (सपसव्य होकर)-ओं प्रेताजयता नर इन्द्रो
शर्म यच्छतु । उग्रा वः सन्तु बाहवो नाधृष्या यथासथ
ॐ भू० तत्पुरुषाय नमः तत्पुरुष०॥ फिर-ॐ मनोजूति
(पृ०३७६) ॐ भूर्भुवः स्वः आवाहितदेवताभ्यो नमः सु
तिष्ठिता वरदा भवत-इस मंत्र से सबों की प्राणप्रतिष्ठा क
ॐ भूर्भुवः स्वः आवाहितदेवताभ्यो नमः-इसी मंत्र
षोडशोपचार या पञ्चोपचार पूजा एकही साथ करे । यदि
अलग करना हो तो पूर्व लिखे 'नमः' पर्यन्तवाले अपने अपने मंत्रों
केवल-ॐ भू० नमः-पर्यन्त नाममंत्रों से ही या पुरुषसूक्त से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalga

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूजा करे। इस के बाद पांचों को एक एक नारियल चढ़ाकर हाथ जोड़ कर-ॐ अनेन पूजनेन ब्रह्मादयो देवाः प्रीयन्ताम्- कहे और विष्णु का प्रार्थना करे-ॐ जितं ते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन। नमस्तुभ्यं हृषीकेश महापुरुष-पूर्वज ॥ १ ॥ अनादिनिधनो देवः शंखचक्रगदाधरः। अव्ययः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमोक्षप्रदो भव॥ २ ॥ फिर पांचों कलशोंपर जिस क्रम से आवाहन किया है उसी क्रमसे गायत्री, द्वादशाक्षर, पञ्चाक्षर, अष्टाक्षर और महामृत्युञ्जय मंत्र का जप यथाशक्ति करे। या तो स्वयं अलग अलग करे या घर के और कोई। नहीं तो दूसरे ब्राह्मण हीं। पञ्चाक्षर-ॐ नमः शिवाय। द्वादशाक्षर-ॐ नमो भगवते वासुदेवाय॥ अष्टाक्षर-ॐ नमो नारायणाय॥ मृत्युञ्जय-ॐ त्र्यम्बकं यजामहे०(पृ०२०७)॥ फिर पांचों मूर्त्तियों पर उन्हीं पूर्व के मंत्रों को पढ़ पढ़ कर और उनकेअन्त में क्रम से-ब्रह्मा तृप्यताम्, विष्णुस्तृप्यताम्, रुद्रस्तृप्यताम्, यमस्तृप्यताम्, तत्पुरुषस्तृप्यताम्-लगा कर तर्पण करे। तर्पण से पहले तांबे के पात्र में जल, दूध, तिल, चन्दन और सर्वौषधि डाल ले और संकल्प करे-ॐ अद्येहामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तये दुर्मरणदोषनिवृत्तिपूर्वकपरलोके महातृषानिवारणाय च ब्रह्मादिदेवानां तत्तन्मंत्रैस्तर्पणं करिष्ये॥ फिर शंख में जल लेकर तर्पण करे और तर्पण के अन्त में कहे- ॐपञ्चदेवानां तर्पणस्य परिपूर्णतास्तु। अनेन तर्पणेन अमुक गोत्रस्य अमुकप्रेतस्य असद्गतिविनाशः सद्गतिप्राप्तिश्च भवतु॥

इस के बाद १८५पृष्ठोक्त रीति से पञ्चभूसंस्कारपूर्वक विट्नामक अग्निकी स्थापना और पूजा करके होम से पहले की पूरी कुशकण्डिका कर डाले। होम के लिये चरु और खीर दोनों बनावे। फिर ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर आघार और आज्यभागकी आहुतियां (१९४)

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

देकर संस्रव प्रोक्षणी में रखता जावे । उसके बाद अन्वारंभ छोड़ दे और संस्रव भी न रखता हुआ आगे की आहुतियां घी से दे । आगे की तीन आहुतियों के लिये स्रुव से स्रुच् या और पात्र में १२० बार घी ले । अर्थात् प्रत्येक के लिये चार बार रक्खे । इसे चतुर्गृहीत कहते हैं । हरेक मंत्र के अन्त में " स्वाहा इदं विष्णवे नमम " बोल कर आहुति छोड़े—ॐ युंजत मन उत युंजते धियो विप्रा विप्रस्य बृहतो विपश्चितः । विहोत्रादधेव पुनाविदेक इन्मही देवस्य सवितुः परिष्टुतिः स्वाहा इदं विष्णवे नमम ॥१॥ ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम् । समूढमस्य पांसुरे स्वा० ॥२॥ ॐ इरावतीधेनुमतीहि भूतं सूयवसिनी मनवे दशस्या । व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवे ते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः० ॥ ३ ॥ ॐ देवश्रुतौ देवेष्वाघोषतं प्राची प्रेतमध्वरं कल्पयन्ति । ऊर्ध्वं यज्ञं नयतं मा जिह्वातं स्वंगोष्ठमावदतं देवीदुर्ये आयुर्मानिर्वादिष्टं प्रजां मानिर्वादिष्टमत्र रमेथां वर्ष्मन् पृथिव्याः० ॥ ४ ॥ ॐ विष्णोर्नुकंवीर्याणि प्रवोचं यः पार्थिवानि विममे रजांसि यो अस्कभा यदुत्तरं सधस्थे विचक्रमाणस्त्रेधोरुगाय विष्णवेत्वा० ॥ ५ ॥ ॐ दिवोवा विष्ण उत वा पृथिव्या महो वा विष्ण उरोरन्तरिक्षात् । उभाहि हस्ता वसुना पृणस्वा प्रयच्छ दक्षिणा क्षेतसव्याद्विष्णवेत्वा ॥ ६ ॥ ॐ प्रतद्विष्णुस्तवते वीर्येण मृगो नभीमः कुचरोगिरिष्ठाः यस्योरुषु त्रिषु विक्रमणेष्वधि क्षियंति भुवनानिविश्वा ॥७॥ ॐ विष्णोरराटमसि विष्णोःश्नप्त्रेस्थोविष्णोः स्यूरसि विष्णोर्ध्रुवोसि वैष्णवमसिविष्णवेत्वा० ॥८॥ फिर पुरुष सूक्त के १६ मंत्रों से १६ आहुतियां दे और हरबार—स्वाहा इदं विष्णवेनमम—कहता जावे । तब आगे के उत्तर नारायण के छ मंत्रों से

RajGuru,Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी घी की ही आहुतियां देकर चतुर्गृहीत घृत पूरा कर दे-ओं अद्भ्यःसंभृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे । तस्यत्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे स्वाहा इदं विष्णवे नमम ॥१॥ ओं वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वाऽतिमृत्युमेति नान्यःपन्था विद्यतेऽयनाय स्वाहा०॥२॥ओं प्रजापतिश्चरतिगर्भे अन्तरजायमाने बहुधा विजायते । तस्ययोनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थुर्भुवनानि विश्वा० ॥ ३॥ ओं योदेवेभ्यआतपति योदेवानां पुरोहितः । पूर्वोयोदेवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये० ॥ ४ ॥ ओं रुचं ब्राह्मंजनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे० ॥ ५ ॥ ओं श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रेपार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्मइषाण सर्वलोकम्म इषाण० ॥ ६ ॥ इसके बाद चतुर्गृहीत की जगह साधारण घृत से इसी तरह एक एक मंत्र से दो दो आहुतियां दे-ओं लोमभ्यः स्वाहा इदं लोमभ्यो नमम॥१॥ ओं त्वचेस्वाहा इदं त्वचे नमम ॥ २ ॥ (आगे भी इसी तरह 'स्वाहा इदं० नमम' कहता जावे) । ओं लोहिताय स्वाहा० ॥ ३ ॥ ओं मेदोभ्यः० ॥ ४ ॥ ओं मांसेभ्यः० ॥ ५ ॥ ओं स्नायुभ्यः० ॥ ६ ॥ ओं अस्थिभ्यः० ॥ ७ ॥ ओं मज्जाभ्यः० ॥ ८ ॥ इस तरह १६ आहुतियां ८ मंत्रों से देकर फिर आगे एक एक मंत्र से केवल एक एक दे-ओं रेतसे स्वाहा इदं रेतसे नमम ॥ १ ॥ ओं पायवे स्वा० ॥ २ ॥ ओं आयासाय० ॥ ३ ॥ ओं प्रयासाय० ॥ ४ ॥ ओं संय्यासाय० ॥ ५ ॥ ओं वियासाय० ॥ ६ ॥ ओं उद्यासाय० ॥ ७ ॥ ओं

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

शुचे० ॥८॥ ओं शोचते० ॥९॥ ओं शोचमानाय०॥
ओं शोकाय० ॥ ११ ॥ ओं तपसे० ॥ १२ ॥ ओं त
ते० ॥१३॥ ओं तप्यमानाय० ॥१४॥ ओं तप्ताय० ॥
ओं घर्माय० ॥ १६ ॥ ओ निष्कृत्यै० ॥ १७ ॥ ओं प्रा
श्चित्यै० ॥ १८॥ ओं भेषजाय० ॥ १९॥ ओं यमाय०॥
ओं अन्तकाय० ॥ २१ ॥ ओं मृत्यवे० ॥ २२ ॥ ओं
णे० ॥ २३ ॥ ओं ब्रह्महत्यायै ० ॥ २४ ॥ ओं विश्वे
देवेभ्यः० ॥ २५ ॥ ओं द्यावापृथिवीभ्यां स्वाहा इदं द्या
पृथिवीभ्यां नमम ॥ २६ ॥ इसके बाद खीर और चरु में
मिलाकर २०५ पृष्ठोक्त रीति से नवग्रह, उनके अधिदेवता और प्रत्य
देवता, पञ्चलोकपाल और दसदिक्पालों को आहुतियां देने की
रीति कहीं कहीं है। यदि देना ही हों तो क्रमशः ८-८, ४-४ और २-२ ह
देना हो तो कोई बात ही नहीं है। फिर उसी से ये आहुतियां भी दे
मंत्रों में भी 'स्वाहा इदं विष्णवेनमम' यही अन्त में प्रत्येक
बोलकर आहुति देते हैं—ओं इदं विष्णु० (७२४) स्वाहा इदं वि
वे नमम ॥ १ ॥ ओं अपोदेवो मधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्व
राजस्वाश्चितानाः । याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिञ्चन्या
रिन्द्रमन्नंनयत्यरातीः स्वाहा० ॥२॥ ओं प्रपर्वतस्य
भस्यपृष्ठान्नावश्चरन्ति स्वसिच इयानाः । ता आव
शधरागुदक्ता आहिर्बुध्न्यमनुरीयमाणा विष्णोर्वि
णमसि विष्णोर्विक्रान्तमसि विष्णोः क्रान्तमसि
ओं विष्णोर्नुकं० (७२४) ॥४॥ ओं दिवोवाविष्णु०(७२४)
ओं प्रतद्विष्णुस्तवते० (७२४) ॥ ६ ॥ ओं विष्णोर
मसि० (७२४) ॥ ७ ॥ ओं तद्विप्रासो विपन्यवो जागृव
समिन्धते । विष्णोर्यत्परमं पदम्० ॥८॥ ओं विष्णो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्माणि पश्यत यतो व्रतानि पस्पशे । इन्द्रस्य युज्यः स-
खा० ॥९॥ ओं तद्विष्णोः परमंपदं सदापश्यन्ति सूरयः।
दिवीवचक्षुराततम् ॥ १० ॥ फिर-ॐ अद्भ्यः संभृतः०
इत्यादि पूर्वोक्त उत्तर नारायण के ६ मंत्रों से ६ आहुतियां देते हैं। इस
प्रकार घीमिले चरु, पायस की १६ आहुतियां हुईं। इसके बाद काले
तिल में जौ और घी मिलाकर उनसे १०८ आहुतियां पूर्वोक्त ॐ तद्वि-
प्रासो विपन्यवो० (८) वें मंत्रसे दे। उसके बाद ब्रह्माका अन्वारंभ
करके सभी चीजों को मिलाकर स्विष्टकृत की आहुति इस तरह दे-
ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते
नमम ॥ फिर घी से व्याहृति, पंचवारुणी और प्रजापति की, ये ९
आहुतियां (पृ० १९४) अन्वारंभ करने पर ही देकर उनका संस्रव
प्रोक्षणी में रक्खे। इस तरह होम करके फिर दिक्पालों को बलि
देने का संकल्प करे-ओं अद्येह इन्द्रादिदिक्पालानां पूजा-
पूर्वकं बलिदानं करिष्ये। फिर-ॐ भूर्भुवःस्वः दिक्पालेभ्यो
नमः-इस मंत्र से होम की वेदी की दसों दिशाओं में दिक्पालों
का स्थान नियत करके (पृ० २१३) वहीं चन्दनपुष्पादि से पूजा करे
और २१६ पृष्ठोक्त रीति से वहीं दही अक्षत या उड़द भात की बलि दीया
के साथ देकर हाथ धोवे और आचमन करे। फिर संस्रव प्राशन से
लेकर पूर्णाहुति और त्र्यायुष्यकरण तक की क्रियायें २४३ पृष्ठोक्त
रीति से कर डाले। बर्हिःहोम का मंत्र-ओं देवागातु०(पृ०२४३)और
पूर्णाहुति, त्र्यायुष का-ओं मूर्द्धानम्०इत्यादि (३२३) है। फिर ब्राह्मणों
को खिलाने का संकल्प करके खिलावे या उसकी जगह कच्चा अन्न ही
दे-ॐ अद्यामुकगोत्रस्यामुकप्रेतस्य अमुकदुर्मरणनिमित्त-
कनारायणबलिकर्मणः सांगतार्थं यथासंपन्नेनान्नेन यथा-
संख्याकान् ब्राह्मणान्भोजयिष्ये ॥ और खिला या अन्न देकर
कहे-ओं अनेन कर्मणा कर्मांगदेवताः प्रीयन्ताम् ॥ फिर कहे-
ओं नारायणबलिकर्माणि सर्वन्यूनातिरिक्तं विष्णुप्रसादा-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

त्परिपूर्णमस्तु । अनेन च होमकर्मणा अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य अमुकदुर्मरणदोषनिवृत्तिपूर्विका असद्गतिनिवृत्तिः सद्गतिप्राप्तिश्च भवतु ॥ इस प्रकार नारायणबलि का होम करने के बाद एकादश विष्णुश्राद्ध करे । स्नान करके नवीन वस्त्र पहन कर्मभूमि में श्राद्ध करने की जगह पर आवे । एकादश पिंडों के लिये वहां पहले से ही स्थान बना रहना चाहिये । पहले तिल के तेल या घी से बड़ासा दीया जलाकर पूर्व ओर रख दे; यह रक्षादीपक है जो अन्ततक रहेगा । फिर अपने आसन पर पूर्वमुख बैठकर कुश का पवित्र धारण करके आचमन पूर्वक प्राणायाम करे । अनन्तर तीन कुशों पर कर्म का पात्र लोटा आदि रख उस में जल भरे; उसमें चन्दन, जौ, पुष्प, तिल और तीन कुश डाल दे और 'ओं अपवित्रः० पुनातु' (पृ० ६०७) पढ़कर श्राद्ध की सामग्री और शरीर पर वह जल छिड़के । फिर प्रणाम करे-ओं भूम्यै नमः । ओं गयायै नमः । ओं गदाधराय नमः और तीन कुश, जौ, जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्येहामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य दुर्गतिनिवृत्तिपूर्वकविष्णुलोकादिसद्गतिप्राप्त्यर्थम् अमुकदुर्मरणनिमित्तकनारायणबलिकर्मगभूतमेकादशविष्णुश्राद्धं विष्ण्वादिविष्णुपर्यन्तानां कोद्दिष्टविधिना एकतंत्रेणाहं करिष्ये ॥ और- ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात्- इसे तीन बार पढ़कर- ओं देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एवच । नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमोनमः- इसे भी तीन बार पढ़े । तब हाथ में पीली सरसों लेकर पहले श्लोक से चारों ओर छींटकर दूसरे तीसरे के क्रम से उनदिशाओं में छीटें जिनका उनमें नाम है । वे श्लोक ये हैं ॐ नमो नमस्ते गोविन्द पुराण पुरुषोत्तम । इदं श्राद्धं हृषीकेश रक्षतां सर्वतो दिशः ॥ १ ॥ पूर्वे नारायणः पातु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वारिजाक्षस्तु दक्षिणे । प्रद्युम्नः पश्चिमे पातु वासुदेवस्तथोत्तरे ॥२॥ ऐशान्यां रक्षतां विष्णुराग्नेय्यां च त्रिविक्रमः । नैर्ऋत्यां पद्मनाभस्तु वायव्यां माधवोऽवतु । ऊर्ध्वं गोवर्धनो रक्षेदधस्ताच्च त्रिविक्रमः ॥ ३ ॥ उपरान्त किसी शुद्ध पात्र में जल रखकर उसे कुशों से चलाता हुआ पढ़े— ॐ यद्देवा देवहेडनं देवासश्चकृमावयम् । अग्निर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ १ ॥ यदिदिवा यदिनक्तमेनां ँ सिचकृमावयम् । वायुर्मा तस्मादेनसो विश्वान्मुंचत्व ँ हसः ॥ २ ॥ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एना ँ सि चकृमावयम् । सूर्योमा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व ँ हसः ॥ ३ ॥ और उस जल को पिंडकी सामग्री पर छिड़कता हुआ कहे-ॐ एकादशविष्णुश्राद्धे द्रव्योपहाराणां पवित्रता देशकालपात्रद्रव्यश्रद्धासम्पच्चास्तु ॥ अनन्तर स्वयं उत्तरमुख होकर उत्तर उत्तर क्रम से ग्यारह आसन डालकर उनपर कुश के ग्यारह ब्राह्मण बनाकर रख दे । फिर हाथ में तीन तीन कुश लेकर आगे के मंत्रों से प्रत्येक आसन पर पूर्व ओर अग्र करके रखता जावे । परन्तु दसवें आसन पर, जो मृतक या प्रेत का है, अपसव्य होकर दक्षिण ओर अग्र करके रक्खे और फिर हाथ धोकर सव्य होके ग्यारहवें पर पूर्वमुख अग्र करके रक्खे । वे मंत्र-(१) ॐ विष्णवे इदमासनम् (२) ॐ शिवाय इदमासनम् (३) ॐ यमाय इद० (४) ॐ सोमराजाय० (५) हव्यवाहनाय० (६) ॐ कव्यवाहनाय० (७) ॐ मृत्यवे० (८) ओं रुद्राय० (९) ॐ तत्पुरुषाय० (१०) । अपसव्य होकर-ओं प्रेताय० । (११) हाथ धोकर एवं सव्य होकर-ॐ विष्णवे इदमासनम् ॥ फिर ग्यारह दोने या पात्र अर्घ के लिये प्रत्येक के सामने रख उनमें एक एक पवित्र (कुश) डाल दे और

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

प्रत्येक में-ओं शन्नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये शंयोरभिस्रवन्तु नः-इस मंत्र से जल दे और प्रेतपात्र को शेष में-ओं यवोऽसि यवयाऽस्मद्द्वेषो यवयारातीः-जौ डालकर प्रेत के पात्र में-ओं तिलोऽसि सोमदैवत्यो गोसवो देवनिर्मितः। प्रत्नमद्भिः पृक्तः प्रेतममुं लोकात्प्रीणाहि नः-से तिल डाले। इसके बाद प्रत्येक में चुपचाप चन्दन पुष्प डाले। फिर-ओं एकादशार्घ्यपात्राणामर्चनविधेः पूर्णताऽस्तु- कहकर पहले अर्घपात्र को उठावे और पवित्र पहले आसन पर, एक दोना रख उसमें, रखकर और-ओं दिव्या आपः पयसा संबभूवुर्या आन्तरिक्षा उत पार्थिवीर्याः। हिरण्यवर्णा यज्ञियास्ता न आपः शिवाः शिवाः स्योनाः सुहवा भवन्तु- पढ़ कर- ओं विष्णो एषतेऽर्घः कहे और उसी पवित्र पर जल गिरा कर वह अर्घपात्र आगे रख इसी तरह शेष दस अर्घ दान में भी पवित्र को निकाल निकाल आसन पर दोनेमें रखकर वही मंत्र पढ़ता जावे और(२)ॐशिवतेऽर्घः(३)ॐयम एष०(४)ॐसोमराज०(५)ओंहव्यवाहन० (६) ओं कव्यवाहन० (७)ओं मृत्यो० (८) ओं रुद्र० ओं तत्पुरुष० (१०) अपसव्य होकर-ओं प्रेतएष० (११) हाथ धो सव्य होकर-ओं विष्णो एषतेऽर्घः- भी अन्त में कहे। फिर सभी असनों पर चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, पान, जनेऊ, आदि रखकर पहलेको छूवे और कहे-ओं एतानि गन्धपुष्पधूपदीपतांबूलयज्ञोपवीतवासांसि विष्णवे अक्षय्यमस्तु स्वाहा ॥ इसीप्रकार शेष आसनों पर भी रक्खे और ऊपर ही वाक्य पढ़े। केवल विष्णवे की जगह क्रमसे-(२) शिवाय (३) यमाय (४) सोमराजाय (५) हव्यवाहनाय (६) कव्यवाहनाय (७) मृत्यवे (८) रुद्राय (९) तत्पुरुषाय (१०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अपसव्य होकर-प्रेताय (११) हाथ धो सव्य होकर-विष्णवे-कहे । फिर कहे-ओं अमीषामेकादशश्राद्धानामर्चनविधेः परिपूर्णताऽस्तु । और हाथ धोकर प्रत्येक आसन के सामने उस आसन को घेरकर ११ मंडल चौकोने चूने, भस्म या पानी से बनाकर उनमें ग्यारह पात्र रक्खे; सभी में भोजन का अन्न परोसे और प्रत्येक के पास घी, पानी, साग तरकारी तीन तीन दोने में अलग परोसे । प्रेत के लिये जो अलग पाक बना था उसी में से प्रेत के पात्र में परोसे । फिर पहले पात्र को हाथ से छूकर पढ़े-ओं पृथिवी ते पात्रं द्यौरपिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वाहा ॥ और-ओं विष्णो हव्यंरक्षस्व- पढ़कर अपना अगूंठा अन्नमें डाले । तब जौ लेकर-ओं अपहताअसुरारक्षांसिवेदिषदः-मंत्र से पात्र के आगे और इधर उधर छींट कर बायें हाथ से पात्र छूयेहुए दहिने हाथ में कुश, जौ, जल लेकर संकल्प करे-ओं एतदन्नं सोपस्करममृतरूपं हव्यं विष्णवे स्वाहा सम्पद्यतां नमम ॥ और कुशादि रखदे । इसी तरह शेष पात्रों को भी, केवल प्रेत पात्र को छोड़कर, छूवे और वही मंत्र पढ़ अंगूठे को डाले, जौ छींटे और संकल्प करे । केवल 'विष्णवे' की जगह क्रमसे—(२) शिवाय (३) यमाय (४) सोमराजाय (५) हव्यवाहनाय (६) कव्यवाहनाय (७) मृत्यवे (८) रुद्राय (९) तत्पुरुषाय (१०) प्रेतपात्र को छूवे न, किंतु अपसव्य होकर केवल मंत्र पढ़े । अंगूठा भी न डुबोवे और संकल्प में 'प्रेताय' कहे, (११) फिर हाथ धो अपसव्य हो 'विष्णवे' कहे । इसके बाद उन्हीं के सामने एक हाथ हटकर बालू की ग्यारह वेदियां एक एक हाथ लंबी चौड़ी और चार अंगुल ऊंची पिंड के लिये बनावे और प्रेतवालीको छोड़कर शेष सभी पर कुशकी पिंजूली (पृ०३५) से एक एक बित्ताकी रेखा बीच में बनावे । उसका मंत्र है वही-ओं अपहता असुरा रक्षांसि वेदिषदः । फिर जलते तृण या लकड़ी को उन रेखाओं पर घुमाकर मंत्र पढ़े-ओं ये रूपाणि प्रतिमुञ्च-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

माना असुराः सन्तः स्वधया चरन्ति। पुरापुरो निर्णुदो भरन्त्यग्निष्टांल्लोकात्प्रणुदात्यस्मात् ॥ फिर प्रत्येक रेखा और प्रेत की वेदी के मध्य में तीन तीन कुश बिछा दे। इसके बाद ग्यारहों के लिये अवनेजन जल एक एक पात्र में उनके सामने रखे और १० में जौ, चन्दन, पुष्प डालकर प्रेतवाले में जौ की जगह तिल के साथ चन्दन, पुष्प डाले। फिर पिंडकी वेदी के कुशोंपर अवनेजन दे। पहले जल के पात्र को उठाकर-ओं विष्णवे अवनेनिक्ष्व इस मंत्र से थोडा जल गिरावे। इसी तरह अन्य पात्रों को भी क्रम से उठाकर अवनेजन दे। मगर पहले वाक्य में 'विष्णवे' का जगह-(२) शिवाय (३) यमाय (४) सोमराजाय (५) हव्यवाहनाय (६) कव्यवाहनाय (७) मृत्यवे (८) रुद्राय (९) तत्पुरुषाय (१०) अपसव्य होकर-प्रेताय (११) हाथ धो सव्य होकर-विष्णवे-यह शब्द पढ़े और उनसे पहले-ओं--और अन्तमें 'अवनेनिक्ष्व' सर्वत्र बोलता जावे। तब घृत,तिल,मधु मिश्रित अन्न से १० पिंड और प्रेत के लिये बने अन्न से उसी तरह ग्यारहवां पिंड श्रीफल के आकार जैसे बनावे और उन्हें से भी घी, मधु लगादे। पहले पिंड और एक कुश को हाथ में ले ओं विष्णवे एषते पिंडो नमः-पढ़कर अवनेजन देने की जगह वेदी के कुशों पर पिंड रखदे। इसीप्रकार शेष पिंडों को भी करे केवल 'विष्णवे' की जगह क्रमसे-(२) शिवाय। (३) यमाय-आदि शब्द अवनेजन की ही तरह बोलता जावे। प्रेत के समय अपसव्य होना होगा और-अमुकगोत्र अमुकप्रेत एष ते पिंडो मया दीयते तवोपतिष्ठताम्-यह पढ़कर देना होगा फिर हाथ धोकर सव्य हो आचमन कर ग्यारहवां देंगे। तब हाथ धोकर सभी पिंडों पर अवनेजन से बचे जल से प्रत्यवनेजन उसी तरह देंगे। केवल 'अवनेनिक्ष्व' की जगह 'प्रत्यवनेनिक्ष्व' कहना होगा। अनन्तर प्रत्येक पिंड पर क्रमसे वस्त्र या सूत, चन्दन, पुष्प, तुलसी, धूप, दीप, नैवेद्य, पान, सुपारी, दक्षिणा, जनेऊ आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर और 'ओं पिंडार्चनविधेः परिपूर्णताऽस्तु' कहकर अपसव्य हो जावे और कहे-ओं एभिरेकादशपिंडैः अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य उत्तमलोकप्राप्तिरस्तु ॥ इसके बाद सव्य हो आचमन करके एक एक दोने सब आसनों पर रख उन सबों में आगे लिखे क्रमसे जलादि डाले और प्रश्नोत्तर के दोनों वाक्य स्वयं पढ़ता जावे। (१)जल-ओं शिवा आपः सन्तु। ओं सन्तु शिवा आपः। (२) पुष्प-ओं सौमनस्यमस्तु। ओं अस्तु सौमनस्यम्। (३)अक्षत जौ-ओंअक्षतंचारिष्टमस्तु।ओंअस्तुअक्षतंचारिष्टम्। फिर सभीमें क्रमसे आगे के मंत्रोंसे जल डाले इसे अक्षय्योदक दान कहते हैं-(१) ओं विष्णोः दत्तमन्नपानादिकमुपतिष्ठताम् ॥ (२) ओं शिवस्य दत्त० (३) ओं यमस्य० (४) ओं सोमराजस्य० (५) ओं हव्यवाहनस्य० (६) ओं कव्यवाहनस्य० (७) ओं मृत्योः० (८) रुद्रस्य० (९) ओं तत्पुरुषस्य० (१०) अपसव्य होकर-ओं प्रेतस्य० (११) हाथ धो सव्य होकर-ओं विष्णोः० ॥ इसके बाद ग्यारहों पिंडों पर एक एक पवित्र रख उनपर क्रम से आगे के मंत्रों से जलधारा गिरावे। हरबार अलग अलग मंत्रों को पढ़े। तांबे के पात्रमें जल, दूध, सर्वौषधि, तिल, जौ, तुलसी, चन्दन और सोना डालकर इन मंत्रों से पहले पिंड पर वह जल गिरावे-ॐ अपो देवी मधुमतीरगृभ्णन्नूर्जस्वती राजस्वश्चितानाः। याभिर्मित्रावरुणावभ्यषिंचन्याभिरिन्द्रमन्नंनयत्यरातीः ॥ ओं प्रथमे विष्णुपिण्डे जलधारा पयोधारा उपतिष्ठतु ॥ १ ॥ फिर दूसरे पर-ओं उपयामगृहीतोऽस्यनार्यच्छमघवन्पाहिसोमम्। उरुष्यराय एषो यजस्व ॥ ओं द्वितीये शिवपिंडे जलधारा पयोधारा उपतिष्ठतु ॥ २ ॥ तीसरे पर-ओं येनापावकचक्षसाभुरण्यन्तञ्जनाँ अनु। तंवरुणपश्यसि॥ ओं तृतीये यम-

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

पिंडे जलधारापयोधारा उपतिष्ठतु ॥ यहां वही पहले के शब्द ही बोले और आगे भी ऐसा ही करे ॥ ३ ॥ चौथे पर-ॐ ये, देवासो दिव्येकादशस्थ पृथिव्यामध्येकादशस्थ । अप्सुक्षितो महिनैकादशस्थ तेदेवासो यज्ञमिमं जुषध्वम् ॥ ओं चतुर्थे सोमराजपिंडे जल० ॥ ४ ॥ पांचवें पर-ओं समुद्रंगच्छ स्वाहाऽन्तरिक्षं गच्छ स्वाहा देवं सवितारं गच्छ स्वाहा मित्रावरुणौ गच्छ स्वाहा अहोरात्रे गच्छ स्वाहा छन्दांसि गच्छ स्वाहा द्यावापृथिवी गच्छ स्वाहा यज्ञं गच्छ स्वाहा सोमं गच्छ स्वाहा दिव्यन्नभो गच्छ स्वाहाऽग्निं वैश्वानरं गच्छ स्वाहा मनोमे हार्दि गच्छ दिवन्ते धूमो गच्छतु स्वर्ज्योतिः पृथिवीं भस्मनापणस्वाहा ॥ ओं पञ्चमेहव्यवाहनपिंडे० ॥ ५ ॥ छठें पर-ओं अग्निर्ज्योतिर्ज्योतिरग्निः स्वाहा सूर्योज्योतिर्ज्योतिः सूर्यः स्वाहा अग्निर्वर्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा सूर्योवर्चोज्योतिर्वर्चः स्वाहा ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ ओं षष्ठे कव्यवाहनपिंडे० ॥ ६ ॥ सातवें पर-ओं हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मैदेवाय हविषा विधेम॥ ओं सप्तमे मृत्युपिंडे० ॥ ७ ॥ आठवें पर-ओं नमस्ते रुद्र मन्यव उतो त इषवे नमः । बाहुभ्यामुतते नमः ॥ ओं अष्टमे रुद्रपिण्डे० ॥ ८ ॥ नवें पर-ओं यज्जाग्रतो दूरमुदैतिदैवन्तदुसुप्तस्य तथैवैति । दूरंगमंज्योतिषांज्योतिरेकं तन्मेमनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ओं नवमे तत्पुरुषपिण्डे० ॥ ९ ॥ दसवें पर अपसव्य होकर-ओं याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः । बृहस्पतिप्रसूतास्तानो मुञ्चंत्वंहसः ॥ ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दशमे प्रेतपिण्डे० ॥ १० ॥ सव्य होकर ग्यारहवें पर-ओं विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखोविश्वतोबाहुरुतविश्वतस्पात् । संबाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देवः एक ॥ ओं एकादशेविष्णुपिंडे जलधारा पयोधारा ते उपतिष्ठतु ॥ ११ ॥ फिर अपसव्य होकर बचे हुये जलको एक ही साथ ग्यारहों पिंडों पर गिरावे-ओं अनादिनिधनो देवः शंखचक्रगदाधरः। अक्षय्यः पुण्डरीकाक्षः प्रेतमोक्षप्रदोभव ॥१॥ अतसीपुष्पसंकाशं पीतवाससमच्युतम्। ये नमस्यंति गोविन्दं न तेषां विद्यते भयम् ॥ २॥ कृष्ण कृष्ण कृपालो त्वमगतीनां गतिर्भव। संसारार्णवमग्नानां प्रसीद पुरुषोत्तम ॥३॥ नारायण सुरश्रेष्ठ लक्ष्मीकान्त वरप्रद । अनेन तर्पणेनाथ प्रेतमोक्षप्रदोभव ॥ ४ ॥ हिरण्यगर्भ पुरुष व्यक्ताव्यक्तस्वरूपक। अस्य प्रेतस्य मोक्षार्थं सुप्रीतो भव सर्वदा ॥५॥ इसके बाद ग्यारहों पिंडों के सामने क्रम से सोना, वस्त्र, चाँदी, गुड़, घी, नमक, लोहा, तिल, धान, भैंस का मूल्य और चमर इन ग्यारह चीजों को रख हाथ में कुश, जौ, जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्येह अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य अमुकदुर्मरणनिमित्तकनारायणबलिविहितैकादशश्राद्धानां सांगतार्थमिमान्येकादशदानवस्तूनि तत्तद्देवताप्रीतये यथानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो दातुमहमुत्सृजे ॐ तत्सन्नमम ॥ और ब्राह्मणों को देकर पढ़े— ओं तीर्थविष्णोः प्रसादादेकादशश्राद्धानां परिपूर्णतास्तु । एभिः एकादशश्राद्धैरमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिरसद्गतिविनाशपूर्वकसद्गतिप्राप्तिश्च भवतु ॥ तब पिंडों का विसर्जन इस मंत्र से करे-ओं भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः। स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳ-

SriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मस्तनूभिर्व्यशेमहि देवाहितं यदायुः ॥ और पिण्डों को किसी पात्र में उठाकर रख दे । फिर ग्यारह जगह कच्चा अन्न या उसका नाम रख और-ओं अद्यैतानि एकादशामान्नानि तन्मूल्यं वा ब्राह्मणेभ्यः संप्रददे ओं तत्सन्नमम-यह संकल्प पढ़ ब्राह्मणों को देडाले और-ओं यस्य स्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञ-क्रियादिषु। न्यूनं सम्पूर्णतांयाति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥ ओं विष्णुः ३ ॥ यह स्मरण करे, जिससे कर्म की पूर्त्ति हो।

इसके बाद फिर स्नान करके दूसरा वस्त्र पहन, आरम्भ में पञ्च कलशों पर जिन पांच देवताओं की पूजा की थी उनका, श्राद्ध करे। पूर्व वाले एकादशश्राद्ध की ही तरह इसे पञ्चश्राद्ध कहते हैं। पहले विष्णु की अलग पूजा करके फिर पांचों देवताओं की पूजा वहां लिखे नाममंत्रों से करे। अन्तमें पांचों की अलग अलग प्रार्थना करे। ब्रह्मा की-ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं० (पृ० ७१७) ॥ ओं ब्रह्मणे नमः ॥ १ ॥ विष्णु की-ओं विष्णोरराटमसि० (पृ० ७२४) ॥ ओं विष्णवे नमः ॥ २ ॥ रुद्र की-ओं नमस्ते रुद्र० (पृ० ७३४) ॥ ओं शिवाय नमः ॥ ३ ॥ यम की-ओं यमायत्वा० (पृ० ७२२) ॥ ओं यमाय नमः ॥ ४ ॥ प्रेत की-ओं अक्रन्कर्म कर्मकृतः सहवाचा मयोभुवा। देवेभ्यः कर्म कृत्वाऽस्तं प्रेत सचाभुवः ॥ ओं तत्पुरुषाय नमः ॥ ५ ॥ इसके बाद आसन पर पूर्वमुख बैठ रक्षादीप जलाने से लेकर-ओं गदाधराय नमः-तक की क्रियायें पूर्ववत् (पृ०७२९) करडाले। फिर तीन कुश जौ जल लेकर संकल्प करे-ओं अद्येहामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्वकसद्गतिप्राप्त्यर्थं नारायणबलिकर्मांगब्रह्मादिपञ्चदेवताश्राद्धानि एकोद्दिष्टविधिना करिष्ये ॥ अनन्तर गायत्री के जप से लेकर ओं यद्देवादेव०-इत्यादि मंत्रों से अभिमंत्रित जल छिड़कने तक का कर्म पूर्व (पृ० ७२८) की ही तरह करके उत्तर मुख होकर उत्तर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्तर क्रमसे पांच आसनों पर पांच कुश ब्राह्मण रख उन्हें तीन तीन कुशों के आसन दे । पहले आसन पर—ओं ब्रह्मणे इदमासनं स्वाहा—इस मंत्र से पूर्वाग्र कुश रक्खे । इसीतरह शेष आसनों पर भी रक्खे । केवल 'ब्रह्मणे' की जगह मंत्र में क्रमसे (२) विष्णवे (३) शिवाय (४) यमाय—पढ़कर रखके पांचवें पर अपसव्य हो दक्षिणाग्र कुश रक्खे और मंत्र पढ़े-ओं प्रेताय इदमासनं नमः । फिर पूर्ववत् (पृ०७२९) एकादश श्राद्ध की ही तरह पांच पात्र अर्घ्य के लिये रख और उनमें एक एक पवित्र डालकर उनमें वहीं के मंत्र से जल और जौ डाले । मगर प्रेतवाले में जौ की जगह तिल वहीं के मंत्र से डालते हैं । तब चन्दन, पुष्प पांचों में डालकर—ओं अर्घपात्रसम्पत्तिरस्तु—यह पढ़े ॥ फिर वहीं लिखे मंत्र से और उसी रीति से पांचों को अर्घ दे । पहले अर्घ का पवित्र आसन पर एक दोने या पात्र में रख—ओं यादिव्या० मंत्र पढ़ उसके अन्त में—ओं ब्रह्मन् ऐषतेऽर्घो नमः (२) ओं विष्णो एष० (३) ओं शिव० (४) ओं यम० (५) अपसव्य होकर-ओं तत्पुरुष०—क्रमसे पढ़कर अर्घ्य दे । इसके बाद क्रमसे पाचों आसनों पर चन्दन, पुष्प, धूप, दीप, पान, सुपारी, जनेऊ, खद्दर या सूत रखकर पहले को स्पर्श करके संकल्प करे-ओं एतानि चन्दनादीनि ब्रह्मणे अक्षय्यमस्तु स्वाहा ॥ इसी तरह शेष चारों में भी पढ़े । केवल 'ब्रह्मणे' की जगह (२) विष्णवे (३) शिवाय (४) यमाय (५) तत्पुरुषाय—पढ़े और अंत में प्रार्थना करे-ओं अमीषां पंचश्राद्धानामर्चनविधेः परिपूर्णताऽस्तु ॥ फिर पाँचों आसनों को घेरकर और एकादश श्राद्ध की ही तरह मण्डल बनाकर अन्न और घी, साग, जल अलग अलग परोसे । तब सभी में ऊपर से मधु डालकर-ओं मधु मधु मधु—कहे और सीधे हाथों से अन्नपात्र को छूकर-ओं पृथिवी ते पात्रं०(पृ०७३१) वहीं का मंत्र पढ़े, ओं विष्णो हव्यं रक्षस्व—यह पढ़कर उसमें अंगूठा डुबोवे और—

Kashi Mumukshu Bhawan Gurukul Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

अपहता असुरा० (पृ०७३१) से चारों ओर जौ छींटकर बायें हाथ से पात्र पकड़ दहिने से संकल्प करे-ओं अद्य एतदन्नं सोपस्कारममृतरूपं हव्यं ब्रह्मणे स्वाहा संपद्यतां नमम ॥ इसीतरह शेष चार अन्नपात्रों के सम्बन्ध में सभी काम करे। केवल अन्नके इस संकल्प में 'ब्रह्मणे' शब्द की जगह-(२) विष्णवे (३) शिवाय (४) यमाय (५) तत्पुरुषाय-यह शब्द पढ़े। इसके बाद एकादश श्राद्ध की ही तरह प्रत्येक के सामने एक हाथ हटकर पिंड के लिये बालू की वेदी बनावे और पाँचों पर जल छिड़ककर एवं उसी तरह पिंजूली से रेखा खींचकर उल्मुक (जलता तृण) उनके चारों ओर घुमावे। स्मरण रहे कि रेखा की पिंजूली ईशान में और उल्मुक दक्षिण ओर रख देते हैं। फिर पांचों रेखाओं पर तीन तीन कुश पूर्वाग्र रखदे। पाँच दोने में जल, जौ, चन्दन, पुष्प डालकर उसी तरह अवनेजन बनावे और पहले दोने को लेकर उसका थोड़ासा जल वेदी के कुशोंपर-ओं ब्रह्मणे अवनेनिक्ष्व-इस मंत्र से डाल दे। फिर वह दोना रखकर शेष चार दोने से भी-(२) ओं विष्णवे अव० ॥ (३) ॐ शिवाय० (४) ॐ यमाय० (५) ॐ तत्पुरुषाय०-इन्हीं मंत्रों से उनके कुशों पर पृथक् पृथक् अवनेजन दे। उपरांत अन्न में तिल, घी, मधु मिलाकर और श्रीखण्ड जैसे पाँच पिंड बनाकर ऊपर से भी घी, मधु लगादे और एक पिंड उठाकर उसके साथ कुश जौ जल लेके यह मंत्र पढ़े-ओं ब्रह्मणे एषते पिंडो नमः-और पहली वेदी के कुशों पर अवनेजन की जगह वह पिंड रखदे। इसी तरह शेष चार पिंडों को भी रखे और यही वाक्य पढ़े। केवल 'ब्रह्मन्', की जगह क्रमसे (२) विष्णो (३) शिव (४) यम (५) तत्पुरुष-यह शब्द पढ़े। उपरांत हाथ धोकर आचमन करके पूर्व के अवनेजन से बचे जल से प्रत्येक को उसी तरह उन्हीं मंत्रों से प्रत्यवनेजन दे। केवल मंत्रों में जहाँ 'अवनेनिक्ष्व' पद है, वहां 'प्रत्यवनेनिक्ष्व' ऐसा पढ़ देते हैं। फिर पाँचों पिंडों पर सूत, चन्दन, पुष्प, तुलसी, धूप

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दीप, पान, सुपारी, और दक्षिणा आदि चढ़ाकर कहे—ओं पिंडानामर्चनविधेः परिपूर्णतास्तु । एभिः पंचपिंडैः अमुकप्रेतस्य उत्तमलोकप्राप्तिरस्तु ॥ तब आचमन करके एकादश श्राद्ध की ही तरह पाँचों जगह एक एक दोने में क्रमसे जल, पुष्प और अक्षत इन मंत्रों से डाले-(१) ओं शिवाः आपः सन्तु । ओं सन्तु शिवा आपः (२) ओं सौमनस्यमस्तु । ओं अस्तु सौमनस्यम्। (३) ओं अक्षतं चारिष्टमस्तु । ओं अस्तु अक्षतं चारिष्टम् ॥ फिर ब्रह्मा के दोने में अक्षय्योदक दे—ओंब्रह्मणोदक्षमन्नपानादिकमुपतिष्ठताम्॥ इसी तरह विष्णु, शिव आदिको भी दे । केवल 'ब्रह्मणो' की जगह क्रम से(२)विष्णोः(३) शिवस्य (४) यमस्य (५) तत्पुरुषस्य--पढ़े । फिर पांचों पिंडों पर पांच पवित्र और कुश रखकर एक पात्र में जल,दूध,सर्वौषधि,जौ, तुलसीपत्र रक्खे और उसी जल को शंख में लेकर पांचों पिंडों पर आगे लिखे मंत्रों से क्रमशः जलधारा दे । पहले पर—ओं अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥ ओं आब्रह्मन् ब्राह्मणो० (पृ० १४७) ॥२॥ दूसरे पिंड पर-ओं इषेत्वोर्ज्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मावस्तेन ईशत माघशंसो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ १ ॥ ओं इदं विष्णु० (पृ०७२२) ॥२॥ तीसरे पिंड पर-ओं अग्न आयाहिवीतये गृणानो हव्यदातये । निहोता सत्सि बर्हिषि ॥१॥ ओं नमः शंभवायच० (पृ० ७२२) ॥२॥ चौथे पर-ओं शन्नो देवी०(पृ० ७३०)॥१॥ ओं यमाय त्वा० (पृ० ७२२)॥२॥ पाँचवें पर-ओं प्रेताजयतानर० (पृ० ७२२) ॥१॥ ओं अक्रन्कर्म कर्म०(पृ०७३६)॥ इस प्रकार अलग अलग जल देने के बाद

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

अपसव्य हो एकही साथ पांचों पर शेष जल गिरावे और-ओं अ-
नादिनिधनो० (पृ० ७३५) इत्यादि पांच श्लोक पढ़ता जावे। इसके
बाद यथाशक्ति सोना या अभाव में अन्य द्रव्य लेकर दक्षिणादान का
संकल्प करे--अद्येहामुकप्रेतस्य प्रेतत्वविमुक्तिपूर्वकोत्तम-
लोकप्राप्तयेऽनुष्ठितनारायणबलिविहितब्रह्मादिपञ्चदेवाना-
श्राद्धकर्मणः प्रतिष्ठार्थमिदं हिरण्यम् अग्निदैवतं यथा-
शक्ति द्रव्यान्तरं वा यथानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो
दातुमहमुत्सृजे ओं तत्सन्नमम ॥ इस तरह दक्षिणा देकर
भूमि, धेनु, सोना, तिल और बैल इनका पंचदान करे या अभाव में इन
पाँचों की जगह यथाशक्ति द्रव्यही दे। उसका संकल्प-ओं अद्येहामु-
म्यादीनिपञ्चतत्प्रत्याम्नायभूतं यथाशक्ति द्रव्यं वा नाना-
नामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ इसके
बाद पाँचों कलशों को मूर्त्तियों के सहित दान करने का संकल्प करे-
ओं अद्येहामुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तिपूर्व-
कोत्तमलोकप्राप्तयेऽनुष्ठितनारायणबलिकर्मणि तत्प्रति-
ष्ठार्थमिमे पंच कलशाः ब्रह्मादिदेवताकाः सप्रतिमाः
सजलवस्त्रोपवीतान्ननारिकेलास्तत्तद्ब्राह्मणेभ्यः संप्र-
दे ओं तत्सन्नमम ॥ और यदि गायत्री आदि पाँच मंत्रों को
जपनेवाले पहलेही से पाँच ब्राह्मण अलग अलग रक्खे हों तो उन्हें
नहीं तो दूसरों को ही, दे डाले। जो जिस कलश को स्पर्श कर जपता हो
उसेही वह दे। अनन्तर प्रार्थना करे-ओं तीर्थविष्णोः प्रसादात्
ब्रह्मादिपञ्चश्राद्धानां परिपूर्णतास्तु । पञ्चश्राद्धैः अमुक-
गोत्रस्य अमुकप्रेतस्यदुर्गतिनिवृत्तिपूर्वकोत्तमलोकावाप्ति-
श्चास्तु ॥ फिर एकादश श्राद्ध की तरह-ओं भद्रंकर्णेभिः०
(पृ० ७३५) से पिंडों का विसर्जन कर विष्णुस्मरण करे। तब आचार्य
को धेनु या उसके निष्क्रय का संकल्प करके दे-ओं अद्येहामु-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

छितनारायणबलिकर्मणः सांगतार्थं धेनुं तन्निष्क्रयं वा आचार्याय तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ और हाथ जोड़कर प्रार्थना करे-ओं अमुकगोत्रस्य अमुकप्रेतस्य प्रेतत्वनिवृत्तयेऽनुष्ठितनारायणबलिकर्माणि पूजनतर्पण-श्राद्धहोमादिषु यन्न्यूनाधिकं तद्भवतां ब्राह्मणानां तीर्थ-विष्णोः प्रसादाच्च सर्वं परिपूर्णमस्तु ॥ ब्राह्मण कहें-ओं अस्तु परिपूर्णम् ॥ तब घृतछाया (पृ० ७०२) दर्शन कर उसे ब्राह्मणों को देडाले और अनेक ब्राह्मणों तथा अन्यों को अन्नादिसे संतुष्ट कर कर्म की पूर्त्ति के लिये विष्णु का स्मरण करे—ओं प्रमादात्कु-र्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ १ ॥ यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम् ॥ २ ॥ ओं विष्णुः ३॥ अन्त में स्नान कर ब्राह्मण तथा बन्धु बान्धव के साथ भोजन करे । या यदि एकादशाहश्राद्धादि करना होतो उसेही करे । यह बात याद रहे कि जहाँ जहाँ 'अमुक' शब्द है वहाँ वहाँ उन उन चीजों के नाम बोले जावें जिनसे पहले वह शब्द है । जिस प्रकार की मृत्यु के कारण नारायणबलि कीजाय उसका नाम 'अमुकदुर्मरण' की जगह लिया करे । पर, यदि संन्यासी का हो या योंहीं करना हो तो कोई आवश्यकता नहीं। 'अमुक-दुर्मरण' बिल्कुलही निकाल दे । इति नारायणबलि ।

१५–महामृत्युञ्जयजप ।

ग्रहादि की पीड़ा और मृत्यु की शंका की निवृत्ति के लिये महा-मृत्युञ्जय का जप किया जाता है । स्नान और नित्यक्रियाओं से निवृत्त हो चुकने पर पहले हाथ में कुश, तिल, जलादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्येहामुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुक-वासरे ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलावाप्तयेऽमुक-

SriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

पीडानिरासद्वारा सद्यः आरोग्यार्थं श्रीमहामृत्युञ्ज-
देवताप्रीत्यर्थं श्रीमहामृत्युञ्जयजपमहं करिष्ये ॥ यदि
किसी यजमान या दूसरे के लिये करना हो तो 'ममात्मनः' की
जगह 'मम यजमानस्य अमुकशर्मणः' इत्यादि शब्द संकल्प में
पढ़े । फिर विनियोग पढ़े—ओं अस्य श्रीमहामृत्युञ्जयमंत्रस्य
वसिष्ठऋषिः श्रीमृत्युञ्जयरुद्रो देवता अनुष्टुप्छन्दः हौं
बीजम् जूंशक्तिः, सःकीलकम् मृत्युञ्जयप्रीत्यर्थे जपे विनि-
योगः ॥ विनियोग केवल पढ़लेना या मनमें स्मरण करलेना चाहिये
तब न्यास करे । न्यास का यह अर्थ है कि मंत्रमें जो अंग लिखे हों उन्हें
हाथ की अंगुलियों से छूवे—ओं वसिष्ठऋषये नमः शिरसि
(सिर) । अनुष्टुप्छन्दसे नमः मुखे (मुख) । श्रीमहा-
मृत्युञ्जयरुद्रदेवतायै नमः हृदि (हृदय) । हौं बीजायनमः गुदे
(गुदा) । जूंशक्तये नमः पादयोः (पांव) । सः कीलकाय
नमः सर्वांगेषु (सब शरीर) ॥ ओं त्र्यम्बकम् अंगुष्ठा-
भ्यांनमः (अंगूठा) । ओं यजामहे तर्जनभ्यां नमः । ओं
सुगन्धिपुष्टिवर्द्धनम् मध्यमाभ्यां नमः । ओं उर्वारु-
मिवबन्धनात् अनामिकाभ्यां नमः । ओं मृत्योर्मुक्षीय
कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥ इस तरह क्रम से अंगूठे से लेकर पांच
अंगुलियां दोनों हाथों की अंगुलियों से ही छूकर आगे के मंत्र में
दोनों हाथों के नीचे और ऊपर को छूवे—ओं माऽमृतात्
तलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥ फिर पहले छूवे हुये सिर आदि छः अंगों
को हाथ की ही तरह छूवे—ओं त्र्यम्बकम् शिरसे नमः । ओं
यजामहे मुखायनमः । ओं सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् हृदयाय
नमः । ओं उर्वारुकामिव बन्धनात् गुह्याय नमः । ओं
मृत्योर्मुक्षीय पादाभ्यां नमः । ओं माऽमृतात् सर्वांगेभ्यो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaip

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नमः ॥ तब ध्यान करे-ओं चन्द्रोद्भासितमूर्धजं सुरपतिं पीयूषपात्रं महत् । हस्ताब्जेन दधत्सुदिव्यममलं हास्याप्यपंकेरुहम् ॥ सूर्येन्द्वग्निविलोकनं करतलैः पाशाक्षसूत्रांकुशां-भोजं बिभ्रतमक्षयं पशुपतिं मृत्युञ्जयं तं स्मरे ॥ इसके बाद मानसिक पूजा करे । मन में हीं आवाहन और अर्घ, पाद्य, आसन देकर इन मंत्रोंके साथ मनसे ही चन्दनादि समर्पण करे (चन्दन)-ओंलंपृथिव्यात्मकं गन्धं समर्पयामि। (पुष्प)-ओं हं आकाशात्मकं पुष्पं समर्पयामि। (धूप)-ओं यं वाय्वात्मकं धूपं समर्पयामि । (दीप)-ओं रं तेजआत्मकं दीपं समर्पयामि । (नैवेद्य)-ओं वं अमृतात्मकं नैवेद्यं समर्पयामि। (पुष्पांजलि)-ओं सं सर्वात्मकं मंत्रपुष्पं समर्पयामि ॥ इसके बाद महामृत्युञ्जयमंत्र जपे । वह ऐसा है-ओं हौं ओं जूं ओं सः ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्द्धनम् । उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय माऽमृतात्।ओं स्वःओंभुवःओंभूःओंसःओंजूं ओं हौंओं॥ जितना जप करना हो और जितने दिनोंमें पूरा करना हो उसका हिसाब करके प्रतिदिन के हिसाब से जितना पड़ जावे उतना हीं जप करे। जप के समय माला को गोमुखी या वस्त्र से ढंककर रक्खे । जप कर चुकने पर फिर पहले किये गये दोनों न्यासों को करे । वही दोनों जो-ओं त्र्यम्बकम्-इत्यादि से अंगुलियों और सिर आदि के किये गये हैं। 'वसिष्ठऋषये' इत्यादि पहले के न्यासको छोड़ देते हैं। इसके बाद मृत्युञ्जय महादेव की प्रार्थना करे-ओं गुह्यातिगुह्यगोप्तात्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् । सिद्धिर्भवतु मेदेव त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥१॥ मृत्युंजय महारुद्र त्राहिमांशरणागतम् । जन्ममृत्युजरारोगैः पीडितं कर्मबन्धनैः ॥ २ ॥ तब समर्पण करे-ओं अनेन महामृत्युञ्जयजपाख्येन कर्मणा श्री महामृत्यु-

Jangamwadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

अयः प्रीयतान्नमम ॥ इसी प्रकार प्रतिदिन जप करे और
से पहले तथा जप के बाद महादेव की विधिवत् पूजा भी प्रति
किया करे । ऊपर जो मंत्र कहा गया है वह १४ प्रणव (ओंकार
वाला है । मगर छ प्रणववाले का भी जप करते हैं । वह ऐसा है
ओं हौं जूं सः ओं भूर्भुवः स्वः ओं त्र्यम्बकं यजामहे
ओं स्वः भुवःभूः ओं सः जूं हौं ओं ॥ चाहे जिसका जप क
वैदिक मंत्र तो 'त्र्यम्बकं०' इत्यादि ही है । जप की समाप्ति
बाद होम करे । होम की विधि तो पहले सविस्तर कई गई है । उ
रीति से ग्रहादिकी समस्त पूजा के बाद कुशकण्डिका करके आज्य
आज्यभाग की आहुतियां घी से देकर ग्रहों की आहुतियां मूलम
आदि की तरह ६४१ पृष्ठोक्त रीति से दे । इसके बाद जिस मंत्र
जप किया हो उसीसे जप की दशांश आहुतियां दे । यदि १००० ज
हो तो एक हजार आहुतियां दे । फिर उस आहुति के बाद होम
पदार्थोंको मिलाकर ६४९ पृष्ठोक्त स्विष्टकृत करके फिर घी से व्याहृ
होम, पञ्चवारुणी और प्रजापति की आहुतियां देकर शेष सभी क्रि
ग्रहहोम की ही तरह करडाले । होम की आहुतियों का दशांश तर्पण
के बाद ही करे । जपके मंत्र को पढ़कर अन्तमें कहे-'मृत्युञ्जयं त
यामि' और जल गिराता जावे । यदि १००० होम हो तो १०० बार
करे और तर्पण का दशांश यानी १०० हो तो १० बार मार्जन
मार्जन की विधि यह है कि जपके मंत्र को पढ़कर और अन्त में 'मृ
यामि' कहकर सिरपर जल डालता जावे । तर्पणके लिये जो जल,
चन्दनादि मिलाकर रक्खे उसीसे मार्जनकरे । मार्जन का दशांश
भोजन करावे । यानी दस मार्जन होने पर एक ब्राह्मण खिलावे ।
के बाद प्रतिदिन उस भूमि पर पानी गिराकर उसकी मिट्टी से
में टीका लगालिया करे । नहीं तो ऐसा माना जाता है कि
टीका लगाये इन्द्र जप को चुरा लेता है । यह जप केवल मृत्यु
हटाने के ही लिये नहीं किया जाता है, किन्तु अनेक कामनाओं
इसीलिये जैसी कामना हो उसी के अनुसार भिन्न भिन्न पदार्थ
होम किया जाता है । यदि पुत्र की इच्छा से किया हो तो धा
बीज (धान) से होम करे । धन के लिये बेलपत्र से, आयु के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalc

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूब से, पुष्टि के लिये बेतस के पुष्प से, कन्या के लिये धान के लावा से, पशु के लिये घी से, विद्या के लिये पलाश की समिधा से, अन्न के लिये जौ से, शत्रुनाशके लिये गुग्गुल से, और आरोग्य के लिये तिलोंसे करे। यह मृत्युञ्जय की प्रधान आहुति के लिये है। और आहुतियां तो घी, खीर, चरु और समिधाकी होती ही हैं। मृत्युञ्जय की आहुति भी इन चीजों से करके उनविशेष चीजों से कर सकता है। इतिमृत्युंजयविधि।

१६—दत्तकपुत्र (गोद) विधि।

नित्य नियम से फुर्सत होने पर कर्मभूमि को गौ के गोवर से लीप पोतकर उसपर पूर्वमुख बैठे और पवित्रधारणपूर्वक 'अपवित्रः०इत्यादि' पढ़के आचमन और प्राणायाम के बाद संकल्प करे—ओं अद्यामुकमासपक्षतिथिवासरेषु मम अप्रजस्त्वप्रयुक्तपैतृकऋणापकरणपुन्नामनरकत्राणद्वारा श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं पुत्रपरिग्रहं करिष्ये। तदंगत्वेनाचार्यवरणपूर्वकगणपतिपूजनपुण्याहवाचनकलशस्थापनग्रहपूजनानि ब्राह्मणबन्धुवर्गेभ्योऽन्नदानं च करिष्ये ॥ फिर गणपतिपूजन, पुण्याहवाचन, कलशस्थापन, और कलश में ही नवग्रहों की पूजा कर डाले (पृ० १०३ आदि)। परन्तु आचार्य का वरण (पृ० ७४) पहले ही करके ये सब काम उसी के द्वारा करावे। पर, यदि स्वयं कर सकता हो तबतो स्वयं ही करे। फिर ब्राह्मण और बन्धुवर्ग के भोजन का अथवा कच्चे अन्नदान का संकल्प करे—ओं अद्येह पितृकुलदेवगुरूणां प्रीत्यर्थं ब्राह्मणेभ्यो बन्धुवर्गेभ्यश्च भोजनं कारयिष्ये ॥ यदि कच्चा अन्न हीं देना या उसकी जगह द्रव्य ही देना हो तो 'आमान्नदानं तन्निष्क्रयदानं वा करिष्ये' ऐसा ही कह दे, न कि 'भोजनं कारयिष्ये' कहे। संकल्प के बाद या तो सबको भोजन करावे या जैसा प्रबन्ध हो अन्न हीं दे। फिर होम का संकल्प करे—ओं अद्येह पुत्रप्रतिग्रहांगत्वेन विहितहोमं करिष्ये ॥ यदि आचार्य संकल्प करे तो—

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

'यजमानाज्ञया' यह शब्द 'करिष्ये' से पहले पढ़े। फिर पंचभूसंस्कारपूर्वक अग्निस्थापन (पृ० १८५) से लेकर आज्य (घी के) उत्पवन तक के कर्म करडाले। चरु का सामान चावल भी रक्खे अनन्तर घी को अग्नि पर रखने के समय २८ मुट्ठी चावल चुपचाप चरुस्थाली में रख उसे तीन बार धो कर अग्नि पर पकावे। अनन्तर घी का उत्पवन करके घी और चरु को अग्नि के उत्तर और इनमें भी घी से उत्तर चरु रखकर जिसके लड़के को गोद लेना हो उसके घर आचार्यादि के साथ जाय। वहां आचार्य व अन्य ब्राह्मण गोद लेने वाले की तरफ से लड़केवाले से कहें कि-अस्मैपुत्रंदेहि। तब पुत्र वाला आचमन प्राणायाम करके संकल्प करे-ओं अद्येह श्रीपरमेश्वरप्रीतये पुत्रदानं करिष्ये॥ इसके बाद लड़केवालाही गणेश की पूजा करके जिसे लड़का देगा उसकी पूजा चन्दनादि से करे। गणपतिपूजा का मंत्र-ओं महागणपतये नमः॥ फिर उस आदमी की पूजा भी 'ओं अमुकशर्मणे नमः' नाममंत्र सेही करे। इससके बाद मंत्र पढ़े—ओं ये यज्ञेनदक्षिणया समक्ताइन्द्रस्य सख्यममृतत्वमानश। तेभ्यो भद्रमंगिरसोवो अस्तु प्रतिगृभ्णीत मानवं सुमेधसः॥१॥ यउदाजान्पितरो गोमयंवस्वृतेनाभिन्दन्परिवत्सरेवलम्। दीर्घायुत्वमंगिरसोवो० इत्यादि आधा मंत्र पहले के ही आधे जैसा है। इसी तरह आगे भी॥२॥ यऋतेन सूर्यमारोहयन्दिव्यप्रथयन्पृथिवीं मातरं वि। सुप्रजास्त्वमंगिरसोवो०॥३॥ अयंनाभावदति वल्गुवो गृहेदेवपुत्राऋषयस्तच्छृणोतन। सुब्रह्मण्यमंगिरसोवो०॥४॥ विरूपासो दृषयस्तइद्गंभीरवेपसः। ते अंगिरसः सूनवस्ते अंगिरसः परिजज्ञिरे॥५॥ इसके बाद अक्षत जल लेकर संकल्प करे-ॐ अद्य इमं पुत्रं तव पैतृकऋणापकरणपुन्नामनरकत्राणसिध्यर्थमात्मनश्च श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं तुभ्यमहं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

संप्रददे नमम । प्रतिगृह्णातु भवान् ॥ और गोद लेनेवाले के हाथ में अक्षत और जल रख दे । इसके बाद गोद लेनेवाला बालक को दोनों हाथों से उठाकर अपनी गोद में रक्खे और— ओं अंगादंगात्संभवसि हृदयादधिजायसे । आत्मावै पुत्रनामासि स जीव शरदां शतम्– यह पढ़कर बालक का सिर सूंघे । फिर गोद लेनेवाला ही उस बालक को वस्त्र पहना, सिर पर पगड़ी बांध, सिर में चन्दन केसर आदि लगा, उसके कानों में कुण्डल पहना और छाता लगाकर बाजे गाजे के साथ अपने घर लावे । रास्ते में शान्तिपाठ (पृ० १०९) भी होता आवे । घर आकर यजमान हाथ पांव धोकर आचमन करे, अग्नि से पश्चिम आचार्य का आसन रख उससे दक्षिण अपना आसन रक्खे और अपने से दक्षिण अपनी स्त्री की गोद में बालक को देकर स्वयं आसन पर बैठ जावे । इसके बाद कुशकण्डिका का शेष काम (पृ०१९३) करके आचार्य ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर घी से आघार और आज्यभाग की दो दो आहुतियां (पृ० १९४) देकर, यदि संभव हो तो अन्वारंभ छोड़कर, ग्रहों, दिक्पालों आदि को भी (पृ० २०५) ८-८, ४-४ और २-२ आहुतियाँ समिध, घी, चरु से दे । फिर चरु में घी डालकर आगे के मंत्रों से उसी चरु से आहुतियाँ दे । प्रत्येक मंत्र के अन्त में त्यागवाक्य ' इदं० नमम ' यजमान बोलताजावे- ओं यस्त्वाहृदाकीरिणा मन्यमानो मर्त्यं मर्त्यो जोहवीमि । जातवेदो यशोऽअस्मासुधेहि प्रजाभिरग्ने अमृतमस्याः ॥ यस्मैत्वं सुकृते जातवेद उ लोकमग्ने कृणवः स्योनम् । अश्विनं सपुत्रिणं वीरवंतं गोमन्तं रयिन्नशते स्वस्ति स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ओं तुभ्यमग्ने पर्यवहन्त्सूर्यांवहतुना सह । पुनः पतिभ्यो जायांदाग्ने प्रजयासह स्वाहा इदं सूर्यासावित्र्यै नमम ॥ २ ॥ ओं सोमोददद्गन्धर्वाय गन्धर्वो दददग्नये । रयिं च पुत्राँश्चादादग्निर्मह्यमथो इमां स्वाहा इदं सूर्यासावित्र्यैनमम ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri. Funding by IKS-MoE-Grant-2. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

॥ ३ ॥ ओं इहैवस्तं माविथौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् । क्रीडन्तौपुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वेगृहे स्वाहा इदं सूर्या-सावित्र्यै नमम ॥४॥ ओं आनः प्रजांजनयतुप्रजापतिराज-रसायसमनक्त्वर्यमा। अदुर्मंगलीः पतिलोकमाविशशन्नो भव द्विपदे शंचतुष्पदे स्वाहा इदं सूर्यासावित्र्यै नमम ॥५॥ ओंअघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवापशुभ्यःसुमनाःसुवर्चाः वीरसूर्देवकामास्योना शन्नो भव द्विपदेशंचतुष्पदे स्वाहा इदं सूर्यासावित्र्यै नमम ॥ ६ ॥ ओंइमां त्वमिन्द्रमीढ्व-सुपुत्रां सुभगां कृणु । दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेका-दशं कृधि स्वाहा इदं सूर्यासावित्र्यै नमम ॥ ७ ॥ फिर घी से होम करे-ओं भूः स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ १ ॥ ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे नमम ॥२॥ ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय नमम ॥३॥ ओं भूर्भुवः स्वः स्वाहा इदं प्रजापत-ये नमम ॥ ४ ॥ तब घी और चरु तथा समिध एक में मिलाकर अन्वारंभ करके आहुति दे-ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ फिर घी से तीन व्याहृति, पंच-वारुणी, और प्रजापति की (पृ० १९४) ये नौ आहुतियां देकर उनका संस्रव आघार आज्यभाग की ही तरह प्रोक्षणीपात्र में रखता जावे इसके बाद संस्रव प्राशन से लेकर होम की समूची उत्तरवाली क्रिया पूर्णाहुति पर्य्यंत की २४३-३२२ पृष्ठोक्तरीति से करके त्र्यायुष भी कर डाले और आचार्य को तथा अन्यों को भी दक्षिणा देने का संकल्प करे अद्येह कृतस्य पुत्रपरिग्रहकर्मणः सांगतार्थमाचार्या-तुभ्यंधेनुनिष्क्रयीभूतं यथाशक्तीदं द्रव्यं, इमां यथा-शक्तिदक्षिणां नानानामगोत्रेभ्यो ब्राह्मणेभ्यः, इमांभूय-सींदक्षिणां नानानामजनेभ्योन्यूनातिरिक्तदोषनिवृत्ति-पूर्वकसर्वपरिपूर्णतार्थं संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalc

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आचार्य तथा अन्यान्य ब्राह्मणों और दूसरों को दक्षिणा देकर अभिषेक, तिलक, आशीर्वाद और विसर्जनादि कर दे (२२५)। अन्तमें तीन या दस ब्राह्मणों को भोजन कराके बन्धु बान्धवादि के साथ स्वयं भी भोजन कर के विश्राम करे। यद्यपि शान्ति प्रकरण में इसकी आवश्यकता न थी कि दत्तकपुत्र परिग्रह की (गोदकी) विधि लिखते। फिर भी आवश्यक समझ और एक प्रकार से आगे के कूप, वापी आदि के उत्सर्ग की तरह स्वकीय धन का बालक के लिये उत्सर्ग ही समझ यहां हीं लिख दिया है। अतएव विशेष चूं चां की आवश्यकता नहीं है। इति शान्तिसंग्रह।

(८)

प्रतिष्ठा और उत्सर्ग।

१—जलाशयोत्सर्ग।

शान्तियों की ही तरह बावड़ी, कूएं तालाब और बागीचे का उत्सर्ग या प्रतिष्ठा भी आवश्यक है। यद्यपि आजकल इस उत्सर्ग की रीति और अभिप्राय दोनों ही बिगड़ गये हैं। क्योंकि उत्सर्ग का अर्थ ही है त्याग देना। त्यागने का अभिप्राय यह है कि इन चीजों का मालिक अब यजमान नहीं रह गया। उसने बना दिया है सही। मगर अब उसके मालिक सभी हैं और उससे सभी काम लेंगे। बनाने वाले को यह अधिकार न होगा कि वह उसमें पानी पीने, उसके जल का उपयोग करने या वृक्ष का फल खाने से किसी को रोक सके। परन्तु होता है ठीक इसका उलटा। बनानेवाला या बाग लगानेवाला जभी चाहता है दूसरों को जल पीने से या एक फल खाने से रोक सकता है। बल्कि आजकल तो बागीचे आमदनी के उपाय माने जाते हैं। ऐसी दशा में जलाशय या बाग का उत्सर्ग करना ठीक नहीं है। जब उत्सर्ग करने वाला यह समझ ले कि अब आगे मेरा भी इसमें उतना हीं अधिकार होगा जितना औरों का, तभी उत्सर्ग करे। तथापि भविष्य के सुधार के विचार से ही विधि लिख देना उचित है। इसी उत्सर्ग का नाम आजकल विवाह रक्खा गया है। इसमें

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

निस्सन्देह कुछ क्रिया विवाह की भी होती हैं। मगर यह विवाह नहीं है। जलाशय और बागीचे के उत्सर्ग में थोड़ा अन्तर भी है। अतएव दोनों की पद्धतियां अलग अलग लिखेंगे। फिर भी जलाशय की पद्धति से जो विशेषता होगी वही वहां लिखेंगे। शेष बातें इसी जलाशय पद्धति से देखकर वहां की जायँगी।

जलाशय (कूप, वापी, तालाब) से पूर्व, उत्तर या ईशान कोण में ही भूमि का संशोधन करके प्रथमप्रकरणोक्त रीति से मण्डप का छाया बनावे और उसकी रचना विधिवत् करे। यहां जो प्रधान वेदी होगी उसपर सर्वतोभद्र न बनाया जाकर वारुणमण्डल बनाया जायगा जिसके बीच में कमल होगा। चित्र ग्रन्थ के अन्त में है। उसके बनाने की रीति यह है कि चार हाथवाली प्रधान वेदी के चारों ओर आधा हाथ छोड़ कर बीच में एक श्वेत खद्दर फैला दे। बल्कि समस्त वेदी पर ही खद्दर फैला कर उसी पर चारों ओर आधे आधे हाथ छोड़ कर बीच में पूर्व पश्चिम और उत्तर दक्षिण नौ नौ रेखाएं खींचकर ६४ घर बनाले, जैसा कि सर्वतोभद्र में १६ रेखाएं खींचकर करते हैं या वास्तुमण्डल में १० खींचकर। इसके बाद सब के मध्य के १६ घरों के छोड़ देने पर चारों ओर दो दो पंक्तियों में ४८ घर बच जाते हैं। उनमें चारों बाहरी कोनों के चार घर छोड़ देने पर शेष ४४ में से बाहरी पंक्ति के कोन वालों को छोड़कर सिर्फ ६-६ शेष रह गये हैं और उसके भीतर की दूसरी पंक्ति के भी ६-६ ही हैं। यद्यपि दूसरी पंक्ति में हर तरफ ६-६ प्रतीत होते हैं फिर भी कोनवाले दोनों ओर काम देते हैं। अतएव वहां पांच पांच ही हैं। इसीलिये बाहर के २४ और भीतर के २० मिलकर ४४ होते हैं फिर भी प्रतीति ६-६ की है। इनमें यदि कोनवालों को छोड़ देते हैं तो ४-४ ही रह जाते हैं। अब बाहरवाली पंक्ति के ६ घरों में इधर उधर के एक एक छोड़कर बीच के चार और भीतर वाली दूसरी पंक्ति के चार में से इधर उधर के एक एक छोड़ शेष दो, इन ६ घरों का प्रत्येक दिशाओं में एक एक मण्डल होगा। और चारों ओर के ऐसे चार हो जायंगे। फिर पहली पंक्ति के इधर उधर के छोड़े हुए कोनों के पास के एक एक घर और दूसरी के भी उसके कोनों के पास के एक एक घर और दूसरी के कोन का एक, इन पांच पांच घरों के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चारों ओर चार मण्डल होंगे। इस तरह बीच के सोलह घरों को छोड़ शेष दो पंक्तियों के १२ मण्डल हो गये । जिनमें बाहरी चार कोनों के एक घर के चार, दूसरी पंक्ति के कोन और उनके चारों ओर के एक एक घर के यानी कुल पांच घरों के चार, और बाहरी पंक्ति के बीच के चार और दूसरी के बीच के दो, इन ६ घरों के चार । इनमें जो बीच बीचमें हल्की रेखायें हों उन्हें चाहे तो मिटाकर ठीककर ले। नहीं तो पीछे धोखा भी हो सकता है। इसी प्रकार बीचके सोलह घरों में से मध्य के चार छोड़ शेष १२ को मिटा देंगे। यह याद रखना होगा कि ६४ घरों में प्रत्येक ९-९ अंगुल लंबे और चौड़े हैं। यह भी जानना चाहिये कि जो बाहर बारह मण्डल बने हैं उनमें बाहरी कोन वाले चार अग्नि कोन से आरंभ कर क्रम से लाल, हरें, श्याम, श्वेत हैं। पांच पांच घर वाले, दूसरी पंक्ति के कोन को मिला कर, जो मण्डल हैं वे भी अग्निकोन से आरंभ कर क्रम से श्वेत, लाल, पीले, काले हैं। ६-६ घर के जो शेष चार हैं वे पूर्व से आरंभ कर पीले, श्याम, श्वेत, और हरे हैं। ६ घर वाले पीठ के द्वार, ५ वाले पीठ के पाद और कोन वाले एक एक घर उसके कोन कहाते हैं। बीच के सोलह में १२ को मिटा कर जो उनके बीच के ४ घर हैं वही पीठ कहाते हैं। उनके बीच से, जो सम्पूर्ण मण्डल का भी बीच है, दो, चार, साढ़े नौ, बारह और तेरह अंगुलों पर अर्थात् इन्हीं अंगुलों को व्यास का आधा मान पांच वृत्त चारों ओर खींचे। एक के बाहर दूसरा वृत्त होगा और उसके बाहर तीसरा आदि। बीच या केन्द्र से १२ अंगुल पर जो चौथा वृत्त होगा उसकी रेखा (परिधि) एक अंगुल मोटी और सफेद रंग के चावल, या आटे से बनाई जावे और उसके भीतर के तीन वृत्तों की रेखायें मामूली हों। मगर वह भी सफेद ही बनाई जावें। इसी तरह १३ अंगुलवाले पांचवें वृत्त की भी रेखा साधारण हो। मगर वह भी सफेद ही हो। सब से छोटा जो वृत्त दो अंगुल व्यासार्द्ध का यानी ४ अंगुल विस्तार का है, उसके किनारे की रेखा छोड़कर शेष पीला रंग दे। फिर उसके बीच (केन्द्र) से, जो चार घरों वाले पीठ का भी बीच है, चार घरोंवाले पीठ के चारों कोनों तक चार, मध्य की चार दिशाओं तक चार और कोनों तथा मध्य के बीच में भी ८, इस तरह कुल सोलह चिन्ह ऐसे बनावे जो

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

पीले हों और उनमें चार कोनों और चार दिशाओं के तो कोने
(१२ अंगुल पर खींचे) वृत्त तक पहुंच जावें । मगर इनके बीच
वाले ८ तीसरे ही वृत्त तक पहुंचें । तीसरे और चौथे के बीच में रक्खे
पीले निशान न बनें । मगर चौथे वृत्त पर इनको सीध में निशान
हो जावें । यही आठ रेखायें या निशान पीले रक्खे जावें और कोने
आठ नभी रक्खे जावें तो कोई हर्ज नहीं है । उनके सामने चौथे वृत्त
पर निशान हीं काफी होगा । दिशाओं और कोनों की जो रेखायें चौथे
वृत्त को छूती हैं, उनसे उनके बीच की रेखाओं तक, जो तीसरे ही वृत्त
हैं, जरा वृत्त कासा टेढ़ा चिन्ह कर दे । इस तरह कमल के फूल के
८ पत्ते के आकार चारों ओर मिलकर बन जायँगे । तीसरे वृत्त के
बाहर और चौथे के भीतर जो खाली जगहें प्रायः त्रिकोण सी हैं
आठों पत्तों के किनारों के बीच में इन आखिरी रेखाओं के कारण बन
जाती हैं उन्हें काले रंग से भर दे । और तीसरे तथा चौथे वृत्त
के बीच में जो कमल के फूल के पत्तों के ऊपरी भाग हैं उन्हें लाल
रंग से भरे । पत्तों के जो भाग तीसरे वृत्त में हैं उन्हें श्वेत से और
पहले और दूसरे वृत्त के बीच में पत्तों के जो भाग हैं उन पर कमल
के केसर (पतले पतले रेशे पीले रंग के जो बीच वाले पीले कमल
गट्टे के चारों ओर होते हैं) पड़े रहते हैं और सोलह होते हैं
उन्हें तिरंगा बनावे । सब से नीचे पीला, मध्य में लाल और अन्त
दूसरे वृत्त की रेखा के पास श्वेत । अब चौथे वृत्त पर जो सोलह
निशान रेखाओं के सामने बने हैं उनके ही सामने पांचवें और
आखिरी वृत्त की रेखा तक जौ के आकार के चिन्ह बनावे और
उन्हें क्रमशः श्याम, पीले, लाल और श्वेत रंगों से भरता जावे
इन सोलह जवों को आर कहते हैं और यह वारुणमंडल इसी से
षोडशार कहलाता है । उन जवों के मध्य की खाली जगह को
जिस रंग से भर दे जिसमें वे जौ साफ साफ प्रतीत होते रहें
इस पांचवें वृत्त के बाहर एक अंगुल पर एक वृत्त खींच कर उसके
बाहर चार और वृत्त क्रमशः इससे कम कम दूरी पर चारों ओर
खींचे जायँ । एक के बाद जो दूसरा होगा वह उससे कम दूर होगा
और तीसरा दूसरे भी कम दूर । इसी तरह चौथा भी । जो सोलह
घर बीच में थे और जिनमें यह रचना हुई है, उनके किनारे की रेखा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalg

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चारों ओर सफेद बनाई जाय । पांचवें वृत्त के बाहर जो पांच रेखायें खींची गई हैं वे क्रम से श्वेत, पीली, लाल, श्याम और हरी हों। बीच की जगहों को अन्यान्य रंगों से भर दे जिसमें सभी के चिन्ह मालूम होते रहें । बस इसप्रकार षोडशार वारुणमण्डल बनजायगा जो चित्र से स्पष्ट समझ में आयेगा । इस वारुणमण्डल के बनने पर यदि सर्वतोभद्रका मण्डल बनाना हो तो प्रधान वेदी से पूर्व बनाले। मण्डप की शेष रचना प्रथम प्रकरण की रीति से की जाय । एक यूप (खंभा) दूधवाले वृक्ष के काठका या कदम्ब, पीपल, पलाश, श्रीफल इनमें से किसी की लकड़ी का रहे । या तो वह तीन अरत्नि (साढ़े ६७ अंगुल) का हो, या यजमान के शरीर जितना लम्बा और अठकोना हो । उसका सिर गोल हो । सोने का कछुवा और मगर बनवावे । मछली और डोंड़ साँप चांदी के, केकड़ा और मेंढ़क तांबे के, सूंस लोहे का और इन सबों को रखने के लिये एक छोटी सी तश्तरी (पात्री) सोने, तांबे या कांसे की बनावे । इसके सिवाय यदि तालावका उत्सर्ग करना हो तो उसके बीच में गाड़ने के लिये एक पतला खंभा (नागयष्टि) तालाब की गहराई के हिसाब से १२, १५ या २० अरत्नि लंबा बनवावे और उसके ऊपर लगाने के लिये लोहे का एक चक्र बनवा कर रक्खे । इसके लिये यज्ञ और होम की सभी साधारण सामग्री भी जुटावे । स्मरण रहे कि उत्सर्ग के होमादिसे पहले दिनहीं अधिवासन कर्म होता है जिसमें सभी देवताओं और पदार्थों को स्थापित करते और उनपर चन्दन, पुष्प, अक्षतादि चढ़ाकर उनका संस्कार करते हैं। एकही दिन सब काम हो भी नहीं सकता । फिर भी ऐसा अवसर आजाने पर एक दिन में भी करही लेते हैं । अधिवासन के पहले दिनहीं एक वार भोजन आदि का नियम करलेना चाहिये । फिर अधिवासन के दिन, और वह अधिवासन चाहे एक दिन पहले हो या उसी दिन, मण्डप से बाहर ही उत्तर या पूर्व ओर बैठकर संकल्प करे । अतएव वह भूमि पहले सेही गोवर आदि से लीप पोतकर ठीक रक्खी जावे । यजमान भी नित्य कर्म करके ही आवे ।

आसन पर पूर्वमुख बैठकर और कुश, तिल जलादि लेकर संकल्प करे-ओं अद्य० इत्यादि (पृ०१०८) कहकर, 'अमुकशर्माहम् अ-

BhuGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शेषपापक्षयकामः स्वर्गकामो मोक्षकामो वा स्वपितॄणां स्वर्गादिकामो वा नानाभूतेभ्यो जलाशयोत्सर्गं करिष्ये । तत्पूर्वांगत्वेन गणपतिसहितषोडशमातृकापूजनं, नान्दीश्राद्धं, पुण्याहवाचनं, गणपतिगौरीपूजनं, आचार्यादिवरणं, वारुणमण्डलदेवतापूजनमावाहितदेवतानां हवनं च करिष्ये ॥ फिर मण्डप के होने पर उसके द्वारपाल और जापकों के सहित पहले आचार्य और ब्रह्मा आदि ऋत्विजों का वरण करे (पृ०७४) । संकल्प में सर्वत्र " जलाशयोत्सर्गकर्मणि " यही कहे । यदि मण्डप न हो तो द्वारपाल और जापकों की आवश्यकता नहीं है । इसके बाद बाजे गाजे के साथ मण्डप के पास आवे और साथ में ब्राह्मण शांतिपाठ करते आवें । मण्डप की प्रदक्षिणा करके पश्चिम द्वार से मण्डप में प्रवेश करे । उसके बाद विधिवत् मण्डप की पूजा करे और मण्डप न हो तो वास्तुपूजा तथा पूर्वोक्त अन्यान्य क्रियायें तो अवश्यमेव करे । इतना स्मरण रहे कि यहाँपर ग्रहों की अलग वेदी न होगी । यदि वारुण मण्डल होगा तो उसीके मध्य के कमल मेंहीं उनकी स्थापना होगी । फिर गणेशपूजा, पुण्याहवाचन और नांदीश्राद्धादि विधिवत् द्वितीय प्रकरण की रीति से ही करडाले और प्रधान वेदीपर एक छोटासा शामियाना टांगकर उस वेदी पर वारुणमण्डल के देवताओं का स्थापन करे । बीच में जो कमल है उसके मध्य से जरा सा पूर्व सूर्य की तथा पूर्व पत्ते से आरंभ कर शेष में शुक्र आदि ग्रहों की क्रमशः स्थानानुसार स्थापना (पृ० १५३) करे । ग्रहों के स्थान भी वहीं लिखे हैं कि अमुक स्थान पर अमुक ग्रह रहता है । इसके सिवाय लोकपाल और दिक्पालों की भी उसीपर स्थापना की जाती है । यह भी वहीं लिखा है । इसके बाद उसी वेदी के चारों ओर दसदिक्पालों का आवाहन और स्थापन १५८ पृष्ठोक्त रीति से अलग करे । कमल के मध्य की कर्णिका पर एक कलश विधिवत् स्थापित कर उसपर वरुण की पूजा भरसक सोने की प्रतिमा या सुपारी आदि में करे । वरुण के कलश के चारों ओर पूर्व से आरंभ कर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, गंगा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jak

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लक्ष्मी, अम्बिका की और भूतग्राम की स्थापना करे। भूतग्राम का-ओं भूर्भुवः स्वः भूतग्रामाय नमः-इसी मंत्र से आवाहन करते हैं। ब्रह्माआदि के मंत्र तो होम के प्रकरण या पूजा के ही प्रकरण में ग्रह पूजा के समय (पृ० १५७) लिखे हैं। अथवा सर्वत्र-ओं भूर्भुवः स्वः ब्रह्मणे नमः। ओं० विष्णवे नमः। ओं० रुद्राय नमः। ओं० गणेशाय नमः। ओं० लक्ष्म्यै नमः। ओं० अम्बिकायै नमः-इन्हीं मंत्रों से सभी का आवाहन अलग अलग करे। फिर सब की एक ही साथ प्रतिष्ठा करे-ओं मनोजूति० (पृ०३७९) ओं भूर्भुवः स्वः आवाहितदेवताभ्यो नमः। इह सुप्रतिष्ठिता भवत-इसी मंत्र से। और-ओं० नमः-पर्यन्त इसी मंत्र से सब की एकही साथ पूजा करे। अथवा यदि चाहे तो अलग अलग भी करे। अलग के लिये अलग अलग नाममंत्र या वैदिक मंत्र पढ़कर करना होगा। अनंतर कच्छप, मगर, मछली, डोंड़, केकड़ा, मेंढ़क और सूंसकी पूर्वोक्त मूर्त्तियां एक बांस की नई डाली में रख उन्हें धोकर चन्दन, पुष्पादि से उनकी पूजा करे। फिर तांबे या कांसे की पूर्वकथित पात्री (तश्तरी) में उन सबों को रख के उसी वेदी के बीच में रखकर-ओं इमंमे वरुणश्रुधीहवमद्या च मृडय। त्वामवस्युराचके-यह मंत्र पढ़े। इसके बाद होम की वेदी या कुंड के ईशान कोन में चावल आदि से अष्टदल कमल बनाकर और उसपर धान रख विधिवत् (पृ०१४६) कलश स्थापित करे और उसीमें-ओं इमम्मे वरुण०-मंत्र से वरुण का आवाहन करे। मंत्र पढ़कर अन्तमें कहे-ओं वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ॥ और पूजा भी करे। आवाहन और पूजा की विधि (पृ०१४८) पहले ही लिखी है। उसमें तीर्थों का आवाहन वहीं लिखी रीति से करे (१५०) और रक्षासूत्र का अभिमंत्रण (पृ०१७८) करके यजमान आदि सभी को आचार्य बांधे और आचार्य को यजमान बांधे। इसके सिवाय यदि किसी देव की पूजा शेष हो तो उसे भी साधारण कर्म के प्रकरण की रीति से ही करडाले। फिर प्रधान वेदी से उत्तर एक अरत्नि (२२॥ अंगुल) गहरा गढ़ा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

यूपके गाड़ने को खोदे और उसमें कुश, अक्षत डालकर एकपात्र में जल रख उसमें—ओं यवोऽसि यवयास्मद् द्वेषो यवयारातीः- इसमंत्र से जौ डाले और वही जल यूप के सिर, मध्य और मूल पर डाले। फिर उस यूप को, जिसे बहुत जगह लिंगवा भी कहते हैं, यह मंत्र पढ़कर खड़ाकरे—ओं उद्दिवं स्तभानान्तरिक्षं पृण दृंहस्व पृथिव्याम्॥ तब उसे उठाकर उसी गढ़े में मंत्र पढ़कर खड़ा करे—ओं द्युतानस्त्वा मारुतो मिनोतु मित्रावरुणौ ध्रुवेण धर्मणा॥ उसे मजबूत गाड़कर उसमें हलदी और तेल लगावे और ऊपर से जल से उसका अभिषेक करके गोरोचन, गुग्गुल और नीम के पत्तों की एक पोटली उस यूप के आगे बांधे—ओं यद्दावध्नन्दाक्षायणा० (पृ० ७७) मंत्र से और—ओं युवासुवासाः० (पृ०३२०) मंत्र से उसे एक कपड़ा पहनाकर दूसरे से ढंक दे। फिर चन्दन पुष्पादि से उसकी तथा उसपर त्रिदेव की पूजा करके प्रार्थना करे- ओ त्वांप्रार्थयेह्यहं यूप लोकानां शान्तिदायक-इत्यादि (पृ० ७८३)। तब—ओं याओषधी०(पृ० १४७) मंत्र से उसे माला पहनावे। फिर उसकी प्रदक्षिणा करके और गोद में लगाकर यजमान पुत्रादि के साथ उसे प्रणाम करे। इसके बाद मण्डप के द्वारपालों को 'पठध्वम्' और जापकों को 'जपध्वम्' कहकर हाथ पांव धोवे और आचमन करे। वे लोग अपना अपना जप और पाठ शुरू का अन्ततक जारी रक्खें। यदि मण्डप न हो तो द्वारपालादि के अभाव में जोही सप्तशती आदि के पाठ के लिये हों उन्हें ही कहे। इसके बाद स्वयं अग्निस्थापना करे।

पंचभूसंस्कार (पृ० १८५) पूर्वक अग्नि की स्थापना से लेकर होम से पहले तक की समूची कुशकण्डिका करडाले। घी गर्म करने के समय चावल और जौ की अलग अलग चरु बनावे और समिधा, घी और काले तिल होम के लिये रक्खे। होम के समय ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर आघार और आज्यभाग की दो दो आहुतियां घी से देकर उनका संस्रव प्रोक्षणी में रक्खे। फिर अन्वारंभ छोड़कर आचार्य को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ले और दूसरे लोग समिध, चावलका चरु, जौका चरु, और घी मिश्रित तिल लें। आचार्य की जगह यजमान हीं घी ले सकता है। फिर ग्रहोंके होम की रीति से ग्रहों को प्रत्येक वस्तु की २८-२८, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता को ८-८ और लोकपाल दिक्पालों को ४-४ आहुतियाँ देकर आगे के मंत्रों से २८-२८ आहुतियाँ देते हैं-

ओं त्रातारमिन्द्रमवितारमिन्द्रꣳ हवे हवे सुहवꣳ शूरमिन्द्रम्। ह्वयामिशक्रं पुरुहूतमिन्द्रं स्वस्तिनो मघवा धात्विन्द्रः स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ १ ॥ ओं तमीशानं जगतस्तस्थुषस्पतिं धियंजिन्वमवसे हूमहेवयम्। पूषानो यथावेदसामदृवृधे रक्षितापायुरदब्धः स्वस्तये स्वाहा इदं पूषाय० ॥ २ ॥ ओं मरुतोयस्यहिक्षये पाथादिवो विमहसः। ससुगोपातमोजनः स्वाहा इदं मरुद्भ्यो नमम ॥ ॥३॥ इसके बाद दस दिक्पालों को उनके (पृ०२०९) मंत्रों से २८-२८ आहुतियाँ इन्हीं पदार्थों से देकर-ओं विश्वकर्मन्० (पृ०२१०) से विश्वकर्मा को भी २८ आहुतियां दे। इसके बाद आगे के मंत्रों से घी से ही आहुतियां दे। दस मंत्रों में हरेक से एक एक आहुतियां हीं दी जावेंगी-ओं त्वन्नोअग्ने० (१९४) इदमग्नीवरुणाभ्यांनमम॥१॥ ओं सत्वंनोऽअग्ने० (१९४) इदमग्नीवरुणाभ्यां० ॥ २ ॥ ओं इमंमे वरुण० (२०९) इदंवरुणाय०॥३॥ ॐ तत्त्वायामि० (१४८) इदं वरुणाय० ॥ ४ ॥ ओं येतेशतं० (१९५) इदं वरुणाय० ॥ ५ ॥ ओं अयाश्चाग्ने० (१९४) इदमग्नये० ॥ ६ ॥ ओं उदुत्तमं० (१९५) इदंवरुणाय०॥७॥ ओं उरुंहिराजा वरुणश्चकार सूर्यायपन्थामन्वेतवाउ। अपदेपादा प्रतिधातवे करुतापवक्ता हृदयाविधश्चित् स्वाहा इदं वरुणाय० ॥ ८ ॥ ओं वरुणस्योत्तम्भनमसि० (७१७) इदं वरुणाय नमम॥९॥ ओं अग्नेरनीकमपआविशा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

पांनपात्प्रतिरक्षन्नसुर्य्यम् । दमेदमेसमिधं यक्ष्यग्ने प्रति तेजिह्वाघृतमुच्चरण्यत्स्वाहा इदंवरुणाय नमम ॥१०॥ इसके बाद जौ के चरु में घी मिलाकर हरेक मंत्र से एक एक आहुति दे- ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये ॥ १ ॥ ओं सोमाय स्वाहा इदं० ॥ २॥ ओं वरुणाय स्वाहा इदं० ॥ ३ ॥ ओं यज्ञाय स्वाहा इदं० ॥४॥ ओं भीमाय स्वाहा इदं० ॥५॥ ओं उग्राय स्वाहा इद०॥६॥ ओं शतक्रतवे स्वाहाइदं० ॥७॥ ओं व्युष्ट्यै स्वाहा इदं० ॥ ८ ॥ ओं स्वर्गाय स्वाहा इदं०॥९॥ उसके बाद घी और गूलर की समिधा से वरुण को ५४ आहुतियां दे। इसके मंत्रों में–ओं इमम्मे वरुण० और–तत्त्वायामि० ये दो तो पहले के हीं हैं और चार पंचवारुणी के ही पहले चार हैं (१९४) इन्हें ही देख कर इन्हीं ६ से आहुतियां प्रत्येक से ९-९ दे। गूलर की समिधा अलग और घी अलग रहे। फिर नीचे के ६ मंत्रों से भी वरुण को ही प्रत्येक से ९-९ आहुतियां उन्हीं दो वस्तुओं की अलग अलग दे-ओं अदित्यास्त्वगस्यदित्यै सद आसीदास्तभ्नादुर्व्या वृषभो अन्तरिक्षममिमीतवरिमाणं पृथिव्याः। आसीद्विश्वाभुवनानि सम्राड्विश्वेत्तानिवरुणस्य व्रतानि स्वाहा इदं वरुणाय० ॥ १ ॥ ओं वनेषु व्यन्तरिक्षं ततान वाजमर्वत्सु पय उस्रियासु । हृत्सुक्रतुं वरुणोविक्ष्वग्निं दिविसूर्यमदधात्सोममद्रौ स्वाहा इदं वरुणाय० ॥ २॥ ॐ उदुत्तमम्० (१९५) इदं वरुणाय० ॥३॥ ओं वरुणस्योत्तम्भन० (७१७) इदं वरुणाय० ॥ ४॥ ओं निषसाद धृतव्रतो वरुणः पस्त्यास्वा । साम्राज्याय सुक्रतुः स्वाहा इदं वरुणाय०॥५॥ओं घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा । द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरेभूरिरेतसा स्वाहा इदं वरुणाय०॥६॥ यह उन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लेना चाहिये कि पूर्वके ये कुल बारह मंत्र वरुण के हैं और इन्हीं से १०८ आहुतियां देनी हैं। अतएव एक मंत्र ९ वार बोला जायगा। समिधा और घी दोनों की आहुतियां अलग अलग हैं। हमने १२ मंत्रों को दो जगह करके प्रत्येक ६ के लिये ५४ आहुतियां लिखी हैं। बात एकही है। कहीं यह भ्रम न हो कि हर मंत्र से १०८ आहुतियां देनी हैं। इसी लिये इतना लिख दिया है। इसके बाद-ॐ ब्रह्मजज्ञानं० (७२२) स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम ॥१॥ ॐ तमीशानं० (७५७) स्वाहा इदं रुद्राय० ॥२॥ ॐ इदं विष्णु० (७२२) स्वाहाइदं विष्णवे० ॥३॥ ओं गणानांत्वा० (२०८) स्वाहा इदं गणेशाय० ॥४॥ ओं श्रीश्चते० (२०७) स्वाहा इदं श्रियै० ॥५॥ ओं अम्बे अम्बिके० (२०९) स्वाहा इदमम्बिकायै० ॥६॥ ओं भूतग्रामाय स्वाहा इदं भूतग्रामाय० ॥७॥ इन सात मंत्रों में प्रत्येक से २८ आहुतियां समिध और घी से दे। फिर ब्रह्मा का अन्वारंभ करके सभी वस्तुओं को मिलाकर दे-ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम ॥ इसके बाद व्याहृति, पंचवारुणी, प्रजापति की ९ आहुतियां घी से देकर उनका संस्रव प्रोक्षणीमें रक्खे। फिर (पृ० २४३) संस्रव प्राशन, प्रणीताविमोक और बर्हिः होमके बाद २१४ पृष्ठोक्त रीतिसे वास्तुपुरुष पर्यंत ग्रहादि को बलि दे। परन्तु यदि चतुर्थी होम उसी दिन करना हो तो संस्रव प्राशनादि कुछ न करे। केवल बलि दे। फिर वरुण को तथा औरों को भी प्रधान वेदी पर उनकी जगह बलि दही और अक्षत या खीर की ही दे-ओं वरुणाय० ॥ भो वरुण० ॥१॥ ओं ब्रह्मणे० भो ब्रह्मन्० ॥२॥ ओं शिवाय० । भोः शिव० ॥३॥ ओं विष्णवे० ॥ भो विष्णो० ॥४॥ ओं गणपतये० ॥ भो गणपते० ॥५॥ ॐ श्रियै सांगायै० ॥ भोः श्रीः० ॥ यहां पर 'उमायै' की तरह वाक्य बोलेंगे ॥६॥ ओं अम्बिकायै० ॥ भो अम्बिके० ॥ यहां पर भी उसी तरह वाक्य

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

बोलेंगे ॥ ७ ॥ ओं भूतग्रामाय० ॥ भोभूतग्राम० ॥ ८ ॥ इसके बाद क्षेत्रपाल को (२१७) विधिवत् बलि देकर अधिवासन का कृत्य पूरा करे और यदि पहले दिन यह किया गया हो, जैसा कि किया जाना चाहिये, तो रातको सभी ऋत्विज और यजमान जागें और या तो उपवास करें, या हविष्य अन्न खावें ।

दूसरे दिन प्रातःकाल नित्य नियम के बाद, और यदि उसी दिन अधिवासन किया हो तो बलि देने के बाद, अग्निकुंड से ईशानकोण वरुणकलश के जल से कुटुम्बसहित यजमान को उत्तरमुख कर और पुत्रादि को उसकी बांई ओर बैठाकर २२५ पृष्ठोक्त रीति से आचार्यादि उसका अभिषेक करें । इसके बाद अधिवासन की सांगता के लिये यथाशक्ति गौदान करे–ओं अद्येहाधिवासनकर्मणः सांगतार्थं यथाशक्ति गास्तनिष्क्रयंवा आचार्यादिभ्यः संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ इसके उपरांत आचार्य जलाशय को ईशानकोन से आरंभ कर तीन सूत से प्रदक्षिण क्रम से घेरे और यजमान अपने सिर पर सफेद पगड़ी बाँध ले । इसके अनन्तर वेदी पर पात्री में रक्खी कछुवे आदि की मूर्त्तियाँ पात्री में हीं रक्खी हुई चार ब्राह्मणों द्वारा एकही साथ उठवाकर मंगावे, उन पर गंगादि का जल और दही अक्षत आदि डालकर यजमान पूर्वमुख हो जावे और पात्री से कछुवे को निकाल कर तालाब या जलाशय के पूर्वभाग में उसका मुख पश्चिम करके फेंक दे । मगर को अग्निकोन में पश्चिममुख करके डाले । मछली को उत्तरमुख करके दक्षिण और डांड़ सांपको उत्तरमुख कर पश्चिम ओर डाले । केकड़ा और मेंढ़क वायुकोन में पूर्वमुख करके तथा सूंस को उत्तर ओर दक्षिणमुख करके डाले फिर आचार्य आदि ऋत्विक्–ओं पुनर्मामैत्विन्द्रियं पुनरायुः पुनर्भगः । पुनर्द्रविणमैतुमां पुनर्ब्राह्मणमैतु माम् ॥ ओं आपोहिष्ठा० (पृ०७९) २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ इन मंत्रोंको पढ़ अपने जल में उस पात्री को औंध दें ताकि उसमें जो कुछ जल अक्षतादि हों वह गिर जायँ । फिर पात्री के साथ मण्डप में आवें । वहां सभी दूसरा कपड़ा बदलकर आचमन करें और यजमान अपने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिर की पगड़ी आचार्य को देदे । इसके बाद गौ की पूजा करके शान्तिपाठ और बाजे गाजे के साथ यजमान गौ की पूंछ पकड़े और उसके पुत्रादि तथा आचार्य उसे छूए रहें । उस गौ को जलाशय के पश्चिम ईशानकोन में मुख कर खड़ी करे और-ॐ इरावती धेनुमतीहि भूतं सूयवसिनी मनवेदशस्या । व्यस्कभ्ना रोदसी विष्णवे ते दाधर्थ पृथिवीमभितोमयूखैः- यह मंत्र या पुरुषसूक्त पढ़ कर तालाब के भीतर उस गौ को उतार दे । मगर यदि वह किनारे ही डूबने योग्य हो या बावड़ी और कूप हो तो उसके ऊपर प्रदक्षिण क्रम से तीन बार चारों ओर घुमावे । जलाशय में उतरती या ऊपर घूमती गौ को छूकर ही यजमान मंत्र पढ़ें-ओं इदं सलिलं पवित्रं कुरुष्व शुद्धाः पूता अमृताः सन्तु नित्यम् । मां तारयन्ती कुरु तीर्थाभिषिक्तं लोकालोकं तरते तीर्थते च ॥ फिर उसी तरह पूंछ पकड़े हुए और आचार्य के अन्वारंभ के साथ यजमान गौके पीछे उतरता हुआ या घूमता हुआ ही ये मंत्र पढ़े-ओं समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् । घृतस्यनामगुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः ॥ १ ॥ ओं ये वाऽमी रोचने दिवो ये वा सूर्यस्य रश्मिषु । येषामप्सु सदस्कृतं तेभ्यः सर्पेभ्यो नमः ॥ २ ॥ इस के बाद ईशान कोन में दूसरे पार के किनारे जा कर, घुटने भर जल में खड़ा हो कर और गौ की पूंछ के साथ जौ कुश तिलादि लेकर देव, ऋषि, पितृ तर्पण करे जो आगे लिखे हैं । तर्पण के बाद उसकी पूंछ पकड़ कर ही-ॐ आपोअस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेननो घृतप्वः पुनन्तु। विश्वंहिरिप्रंप्रवहन्तिदेवीरुदिदाभ्यः शुचिरापूत एमि-यह मंत्र पढ़ता हुआ पहले ईशान कोन में स्वयं जल से बाहर होकर-ओं सूयवसाद्भगवतीहिभूयाअथोवयं भगवन्तः स्याम । अद्धितृणमघ्न्ये विश्वदानीं पिब शुद्धमुदकमाचरन्ती-इस मंत्र को पढ़ता हुआ ईशान में ही

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

गौ को भी ऊपर निकाले । यदि ऊपर ही गौ घूमती हो तब तो स्वयं या गौ की ऊपर आने वाली यह क्रिया नहीं करनी होगी । केवल तर्पण करना होगा । बाहर निकालने के समय यदि गौ बोले तो यह मंत्र पढ़े- ओं हिंकृण्वती वसुपत्नी वसूनां वत्समिच्छन्ती मनसा-भ्यागात् । दुहामश्विभ्यांपयो अघ्न्ये यं सा वर्धतां महते सौभगाय ॥ न बोले तो पढ़ने की आवश्यकता नहीं है । इसके बाद गौ की पूंछ छोड़ नया वस्त्र पहनके दही, दूब, चन्दनादि से-ओं नमोगोभ्यः-इस मंत्र से गौ की पूजा करे और उसके बाद उस की प्रार्थना करे-ॐ वसूनां दुहिताऽसित्वं संसारार्णवतारिणी । तीर्थपुण्योदके स्नाता पावयस्व जलाशयम् ॥१॥ अर्चितासि सुगन्धेन चन्दनेनामरार्चिते । सत्कीर्त्तिं सद्गतिं कर्तुं पावयस्व जलाशयम् ॥२॥ सर्व देवमयी यस्मात्पूजनीयासि रोहिणी । सर्वकामदुघे धेनो सर्वपातकनाशिनी ॥ सर्वांगैः सर्वभावेन पावयस्व जलाशयम् ॥३॥ त्वया कृतं पवित्रं तु त्रैलोक्यं सचराचरम् । अतोऽस्माकमिमं धेनो पावयस्व जलाशयम् ॥ ४ ॥ इसके बाद अन्त्येष्टि प्रकरणोक्त गोदान की रीति से गौ की पूजा कर के वहीं लिखी रीति से उसे दान करे और ब्राह्मण उसी रीति से स्वीकार करे । अन्त्येष्टि प्रकरण के वैतरणीदान और वृषोत्सर्ग के गोदान के प्रकरण को देख ले । दान के संकल्प में " उत्सर्गकर्मणः सांगतार्थं " ऐसा पढ़ दे । शेष वाक्य वहीं का रहे । इसके बाद-ओं अमुकोऽहं यज्ञान्त स्नानं करिष्ये-यह संकल्प करके यज्ञान्त (अवभृथ) स्नान करे और दूसरा वस्त्र धारण कर हाथ में कुश तिल जल लेकर उत्सर्ग के लिये देशकालादि (पृ० १०८) कहकर संकल्प करे-ओं अमुक सर्वपापक्षयपूर्वकरुद्रालयगमनानेककल्पावच्छिन्नस्वर्गसुखपरार्द्धद्वयावच्छिन्नमहस्तपःप्रभृतिलोकांगनासहितभोगपूर्वकविष्णुपदप्राप्तिकामः केवलविष्णुपदप्राप्तिकामो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इमंजलाशयं वरुणदेवताकं स्नानपानाद्यवगाहनार्थमहंसर्वभूतेभ्य उत्सृजामि ओं तत्सन्नमम ॥ यह संकल्प पढ़ तथा जलाशय की ओर देखकर उसी में या उसके निकट हाथ के कुशतिलादि को गिरा दे और यह श्लोक पढ़े-ओं सर्वभूतेभ्य उत्सृष्टं मयैतज्जलमूर्जितम्। रमन्तां सर्वभूतानि स्नानपानावगाहनैः ॥१॥ सामान्यं सर्वभूतेभ्यो मयादत्तमिदं जलम्। रमन्तां सर्वभूतानि स्नानपानावगाहनैः ॥ २ ॥

इस तरह उत्सर्ग कर के बावड़ी और कूप में तो नहीं, मगर तालाब के बीच में नागयष्टि नामक स्तम्भ गाड़े। आचार्य भूमि पर जौ फैलाकर उस पर विधिवत् कलश (पृ० १४६) स्थापित करे और उसमें वरुण की पूजा करके आम के आठ पल्लवों पर अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, शंख, महापद्म, कुलिश इन आठ नागों के नाम अलग अलक लिख आठों पत्ते कलश में डाल दिये जावें। पीछे से हाथ डालकर जो हाथ लगे वही एक पत्ता बाहर निकाले और नागयष्टि नामक खम्भे को, जो गहराई अनुसार १२, १५ या २० अरत्नि लंबा हो, निकट लाकर उसी पर उस पत्ते पर लिखे नाग का उसके नाम से-ओं भूर्भुवः स्वः अमुकाय नमः आवाहयामि-कहकर आवाहन कर पूजा करे और पूजा के बाद कहे-ओं अयंनागोऽस्यजलाशस्य रक्षकोऽस्तु॥ फिर-ओं नागयष्ट्यै नमः-इस मंत्र से उस नागयष्टि को भी पूजा करे। उसके माथे पर लोहे का चक्र गाड़कर उसकी भी पूजा-ओं चक्राय नमः- इस मंत्र से करे और प्रार्थना करे-ओं चक्रं सुदर्शनाख्यं त्वं नागयष्टिशिरोगतम्। तत्रविघ्नस्य कर्त्तारं जहिदुष्टं हरिप्रिय॥ इसके बाद परिवार सहित यजमान उस नागयष्टि को अपने कन्धे पर लेकर बाजे के साथ तालाब की प्रदक्षिणा कर उसके बीच में उस स्थान पर जावे जहां उसको गाडने के लिये पहलेही सेही गढ़ा बना हो। उस गढ़े में नील की पत्ती, गोबर, दही, मधु, अक्षत, कुश, नदियों के जल और पञ्चरत्न डालकर उसी में नागयष्टि को इस मंत्र से दृढ़

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

करके गाड़े-ओं ध्रुवासि धरुणाऽऽस्तृता विश्वकर्मणा । मा-
त्वा समुद्र उद्वधीन्मा सुपर्णोऽव्यथमाना पृथिवीं दृंह ।
उसे इतना मजबूत करदे कि जल्दी उखड़ या गिर न सके । इसके बाद
गंगायमुना आदि बड़ी नदियों के जल उस तालाव, बावड़ी या कुए
में डालकर ये श्लोक पढ़े । हम प्रत्येक श्लोक में जलाशय के अर्थ में
'काशय' शब्द पढ़ देते हैं, जिससे बावड़ी, तालाव और कुआँ तीनों
का काम चल जायगा-ओं कुरुक्षेत्रं गयागंगा प्रभासः पुष्कर
तथा । एतानि पञ्चतीर्थानि काशये निवसन्तु मे ॥ १ ॥
दशार्णा मुरुडा सिन्धूरथावर्त्ता दृषद्वती । एतानि पंच
॥ २ ॥ वितस्ता कौशिकी सिन्धुः सरयूश्च सरस्वती । एता-
नि० ॥ ३ ॥ यमुना नर्मदा रेवा चन्द्रभागाच देविका । ए-
तानि० ॥ ४ ॥ गोमती वाग्मती शोणो गंडकी सागर-
स्तथा । एतानि० ॥ ५ ॥ इसके बाद उसका जल छूकर पढ़े-
ॐ प्रपद्ये वरुणं देवमंभसां पतिमूर्जितम् । याचितं देहि
मे पुण्यं सर्वपापापनुत्तये ॥ १ । सान्निध्यमत्रतोयेऽस्तु तवेदं
मदनुग्रहात् । रुद्रान्प्रपद्ये वरदान्सर्वानप्सुषदस्त्वहम् । श-
मयन्त्वशुभं पापं रक्षंतुतेऽप्सुमां सदा ॥ २ ॥ आपः पुण्या-
पवित्राश्च प्राणिनां प्राणदास्तथा । शमयन्त्वाशुमे पापं त-
स्माद्रक्षन्तु सर्वदा ॥ ३ ॥ इसके बाद उसी में जलमातृकाओं का
आवाहन करे । हाथ में अक्षत लेकर पढ़े-ओं ह्रियै नमः ।
ओं श्रियै नमः । ओं शच्यै० । ओं मेधायै० । ओं विश्वायै०
ॐ लक्ष्म्यै० ॥ फिर-ओं मनोजूति० (पृ० ३७६) ओं भूर्भुवःस्व-
जलमातृभ्यो नमः-से उनकी प्रतिष्ठा करके इसी 'ओं० नमः'
पर्यन्त मंत्र से उनकी पूजा करे । फिर गीत और बाजेके साथ किसी
पात्र में गौका ज्यादा दूध लेकर जलाशय के किनारे गिराता हुआ तीन
प्रदक्षिणा करे । उस समय पढ़ने के मंत्र वही-'ओं आपोहिष्ठा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(पृ० ७६) इत्यादि हैं । प्रदक्षिणा के बाद बचे दूध को किसी विद्वान और सदाचारी ब्राह्मण को भर पेट पिलावे । इसके बाद मुख्य पक्ष यह है कि तीन दिनों तक निरन्तर स्थापित देवताओं की पूजा और होम करता रहे । इस तरह उत्सर्ग के दिन को मिलाकर चार दिन होने पर उसी चौथे दिन चतुर्थीकर्म के बाद ब्रह्मा को बची हवि (चरु आदि) सहित सद्रव्य पूर्णपात्र देकर पूर्णाहुति करे । मगर यदि ऐसा न होसके तो उसी दिन दूध पिलाने के बादही ब्रह्मा को पूर्णपात्र दानकर पूर्णाहुति करे और चतुर्थी कर्म चौथे दिन हीं करे । यदि चौथे दिन चतुर्थीकर्म करे तो फिर विधिवत् अग्नि की स्थापना और ब्रह्मा का वरणादि समस्त कुशकण्डिका करके होम करे और उसकी पूर्णाहुति करे । परन्तु यदि चतुर्थीकर्म भी उसी दिन कर लेना हो, जैसा कि आजकल होता है और यही संभव है, तो ब्राह्मण को दूध पिलाने के बाद पूर्णपात्र न देकर चतुर्थीकर्म का संकल्प करे-ओं अद्येहामुकजलाशयोत्सर्गांगभूतं चतुर्थीकर्म करिष्ये । यह भी स्मरण रहे कि यदि चतुर्थीकर्म भी उसी दिन होगा तो पहलेवाला संस्रवप्राशन, बर्हिःहोम, प्रणीताविमोक भी वहाँ किया जायगा । वरुणनामक अग्नि का ध्यान कर उसीमें होम किया जायगा । अस्तु, ब्रह्मा का अन्वारंभ करके आघार आज्य भाग(पृ०१९४) होम घी से करके संस्रव प्रोक्षणी में छोड़े । फिर हाथ में जल लेकर ओं इमंमे वरुण श्रुधीहवमद्या च मृडय । त्वामवस्युराचके हुंफट्-यह पढ़े और वह जल अग्नि में डालकर घी सेही सूर्य को १५ आहुतियां गात्री (पृ० ७२८) से दे । गायत्री के अन्त में स्वाहा इदं सवित्रे नमम-कह कर आहुति दे । फिर- ओं इमंमे वरुण श्रुधी०राचके स्वाहा इदं वरुणाय नमम-इससे वरुणको १०० आहुतियाँ घी से ही दे । इसके बाद फिर अन्वारंभ करके व्याहृति, पचवारुणी, प्रजापति, स्विष्टकृत की दस आहुतियाँ (पृ०१९४) घी से देकर उनका संस्रव प्रोक्षणी में डाले । उसके बाद वरुण को महास्नान करावे । पहले एक तांबे के पात्र में जल और उसमें दही, अक्षत, दूध, दूब, मधु, जौ, सरसों और फल डाले और वही अर्घ्य

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वरुण को 'ओं भूर्भुवः स्वः वरुणाय नमः एषोऽर्घः' यह पढ़कर दे। यह अर्घ प्रधान वेदी पर स्थापित वरुण को वहीं देते हैं। फिर अक्षत फैलाकर उसपर नौ घड़े रख उनमें हाथी साल, घुड़साल, गली, दीमक, सूअर की खोदी, अग्निशाला, तीर्थ, तालाब, चौराहा; गोशाला की मिट्टियां डाले और ॐ शन्नोदेवी० (पृ० ७३०) मंत्र से नवों में जल भरकर फिर उन्हीं कलशों के जल से प्रधान वेदी पर वरुण को पल्लव से स्नान या अभिषेक 'आप हिष्टा० (पृ० ७९) इत्यादि तीन मंत्रों से करावे। फिर ७८ पृष्ठोक्त रीति से पञ्चगव्य बनाकर उस से भी वरुण का अभिषेक 'ओं वरुणाय नमः' पढ़ कर करे। इसके बाद 'ओं पयः पृथिव्या०' (पृ० ६९१) मन्त्र से दूध से, 'ओं दधिक्राव्णो०' (पृ०६९५) मन्त्र पढ़ दही से, 'ओं तेजोऽसि० (पृ० ७९) मन्त्र से घी से, 'ओं मधुवाता० (पृ० ६९१) पढ़कर मधु से, 'ॐ आप्यायस्व० (पृ० ७८) से शक्कर से स्नान करावे और 'ओं सरस्वत्यै भैषज्यं वीर्यायान्नाद्यायाभिषिञ्चामि—मन्त्र से फूल से जल से स्नान करावे। तब जल में रत्न डालकर उसी जल से—ओं हिरण्य पाणिः सविताविचर्षणिरुभे द्यावापृथिवी अन्तरीयते। अपामीवांबाधते वेतिसूर्यमभिकृष्णेन रजसाद्यामृणोति यह मन्त्र पढ़ कर स्नान कराके—ओं देवस्यत्वा० (पृ०२२५) मंत्र से कुश के जल से और—ओं अग्न आयाहिवीतये गृणानो हव्यदातये। निहोतासत्सिबर्हिषि—मंत्र से फल मिले जल से नहलाकर गायत्री मंत्र से चन्दन मिले जल से स्नान करावे। इसके बाद १०००, ५००, २५०, १०८, ६४, ३२, १६ या ४ घड़ों में यथाशक्ति जल लेकर स्नान कराके एक घड़े में विधिवत् सहदेवी आदि औषधियाँ (पृ० ६३७) डालकर उसके जल से भी स्नान करावें। अन्त में एक कलश में जौ, गेहूं, तेनी, तिल, सांवां, धान, कंगनी, साठी इन आठों को डालकर उसके जल से भी स्नान

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jak

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करावे। तब वरुण की आरती करके वस्त्र, चन्दन, पुष्पादि से उन की पूजा करे। पूजा के बाद ४० दीपक उनके पास जलाके पढ़े—ओं त्वं सूर्यचन्द्रज्योतींषि विद्युदाग्निस्तथैवच। त्वमेव सर्वज्योतींषिदीपोऽयं प्रतिगृह्यताम् ॥ और प्रदक्षिणा करके धूप, दीप, नैवेद्य चढ़ावे। इसके बाद संस्रव प्राशन से लेकर पूर्णाहुति तक की समूची क्रियायें (२४३, ३२२) करडाले और त्र्यायुष करण भी करले। ब्रह्मा को बचे हुए चरु के साथ द्रव्य सहित पूर्णपात्र दे। उस संकल्प में 'जलाशयोत्सर्गकर्माणि' पढ़ दे। इसके बाद आचार्य तथा अन्यों को दक्षिणा दे—ॐ अद्येह कृतस्य जलाशयोत्सर्गकर्मणः सांगतार्थमिमां गां सवस्त्रां तन्निष्क्रयद्रव्यं वा दक्षिणाम् आचार्याय तुभ्यम्, तथा इमां दक्षिणां ऋत्विग्भ्यो द्वारपालेभ्यश्च विभज्य, तथा इमां भूयसीं दक्षिणां न्यूनतादिदोषपरिहाराय नानाजनेभ्यो विभज्य संप्रददे ओं तत्सन्नमम ॥ फिर संक्षेप से ग्रहादि की पूजा करके उनका विसर्जन २२९ पृष्ठोक्त रीति से करे और मूर्त्ति आचार्य को देकर अन्य सामग्री सभी को बांट दे। तब—ओं अद्य यथाशक्ति ब्राह्मणान्भोजयिष्ये—यह संकल्प करे। इसके बाद वेदी तथा कुण्ड के समीप के कलशों के जल से आचार्यादि यजमान का अभिषेक करें (पृ० २२५) और तिलक आशीर्वादादि दें (२२८)। यजमान सभी का विसर्जन (पृ० २२९) करके ईश्वरार्पण करे और ब्रह्मभोज करके बन्धु बान्धवों के साथ स्वयं भी भोजन करे। यदि संक्षेप करना हो तो वारुणमण्डल आदि की स्थापना न कर केवल कलश में ही नवग्रह और वरुणादि की पूजा करके होम करे। इति जलाशयोत्सर्ग।

२—आरामोत्सर्ग (प्रतिष्ठा)।

तालाब, बावड़ी और कूएं के उत्सर्ग में समानता है। अतएव तीनों एक ही साथ लिखे हैं। केवल नागयष्टि का आरोपण तालाब में विशेष है। अतएव यह उसके लिये लिख दिया है। पर, आराम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

(बागीचे) का उत्सर्ग उनसे विलक्षण है । अतएव उसकी पद्धति पृथक् लिखते हैं ।

आराम के उत्सर्ग में बागीचे के मध्य में ही मण्डप बनावे और उसी में सभी वेदी आदि की रचना और मण्डलों का निर्माण करे, सर्वतोभद्र और वास्तुमण्डल प्रधान वेदी पर नहीं बनते हैं। यहाँ भी उस पर वारुणमण्डल ही बनता है। अतएव पूजा के सम्बन्ध के सभी कार्य जलाशय के उत्सर्ग की ही तरह होते हैं । मण्डप से बाहर (उत्तर पूर्व, उत्तर या पश्चिम बागीचे से भी बाहर) बैठ कर पहले संकल्प करे। ओं अद्येहामुकशर्म्माहं ममसर्वपापक्षयातीतानागतपितृकुलतारणकामोभगवत्प्रीतिकामो वा आरामोत्सर्गं करिष्ये।तदंगतया आचार्यवरणमारभ्य मण्डपादिदेवतास्थापनादि पूजनान्तं कर्म करिष्ये। इसके बाद ७४ पृष्ठोक्त रीति से आचार्य ऋत्विक् और,मण्डप होतो,द्वारपालजापकादि का वरण करके साथ के साथ शान्ति पाठ और बाजा बजाता हुआ मण्डप की प्रदक्षिणा कर मण्डप में पश्चिम द्वार से प्रवेश करे और मण्डप की पूजा से लेकर सभी पूजाएं–गणेशपूजा, पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, नान्दीश्राद्ध वारुणमण्डल की पूजा सर्वतोभद्र और वास्तुमण्डल आदि की पूजा–जलाशयोत्सर्ग की तरह द्वितीय प्रकरण की रीति से ही कर डाले । सभी वृक्षों के चारों ओर चौकोन चबूतरे बनाकर वृक्ष के जड़ में थोड़ीसी नीची भूमि रक्खे,जिससे उनमें जल दिया जासके। एक घड़े में, और यदि वृक्षसंख्या अधिक हो तो कई घड़ों में जल रख उसमें सर्वौषधि डालके उसी जल से सभी वृक्षों को सींचे और चावल के पीठे में हल्दी मिलाकर उससे तथा फूल, माला और वस्त्रादि से प्रत्येक वृक्ष को भूषित कर जहां से डालें निकली हों वहीं से जरासा ऊपर दो जगह कान समझ उसे सोने की सूई से छेदकर उसमें उसे पहनादे । उसके ऊपर दो पत्तों को नेत्र की जगह समझ उनमें काजर लगा दे और सभी को गुग्गुल की धूप दे। वृक्षों के जड़ के पास बने चबूतरों पर सप्तधान्य फैलाकर उन प्रत्येक पर आठ आठ कलश विधिवत् स्थापित कर प्रत्येक में तीर्थ का जल छोड़ दे। यह काम पूजा के आरंभ होने से पहले ही कर डाले । पूजा के बाद-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jak

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं वनस्पतये नमः—से प्रत्येक वृक्ष की पूजा करे। आवाहन भी इसी मंत्र से प्रत्येक वृक्ष का करके तभी पूजा की जाय। यह स्मरण रहे कि जिस तरह मण्डप या वेदी आदि बनावे उसी तरह वृक्षों के शृंगार से लेकर प्रत्येक के पास ८-८ कलश स्थापन तक की क्रिया कर ले। इसके बाद ही मण्डप की पूजा से लेकर समस्त पूजायें करने के समय वास्तुपूजा, सर्वतोभद्र पूजा और वारुणमण्डल की पूजा करके उसी पर जलाशयोत्सर्ग की ही तरह कलशस्थापन करे। ग्रहादि भी उसी तरह स्थापित होंगे और उस कलश में वरुण की पूजा करके उसके चारों ओर उसी तरह, ब्रह्मा, शिव, विष्णु, गणेश, लक्ष्मी और अम्बिका तथा भूतग्राम की स्थापना और पूजा करेंगे। फिर कांसे या तांबे की पात्री में जलाशयोत्सर्ग के समय जो मछलियों आदि की मूर्तियाँ रक्खी गई हैं उनकी जगह जो प्रतिवृक्ष ७ या ८ फलों की मूर्तियाँ सोने या चाँदी की बनवाकर पहले से तैयार रहें वह उसी तरह बांस की नई डाली में रख पहले धो लीजायें। फिर उस पात्री में इस मंत्र से रक्खी जावें—ओं वनस्पते वीड्वंगोहिभूया अस्मत्सखाप्रतरणः सुवीरः। गोभिः सन्नद्धो असिवीडयस्वाशातातेजयतु जेत्वानि॥ और पात्री को कलश के ऊपर रख इसी मंत्रसे उनकी पूजा करे। इसके बाद वृक्षोंकी पूजा, उनके पास जाकर, ओं वनस्पतयेनमः—इस मंत्र से उनका आवाहन कर, इसी मंत्रसे करे। यूप गाड़ने से पहले होमवेदी के ईशान कोन में जलाशयोत्सर्ग की ही तरह कलश स्थापन कर और उसमें तीर्थों का जल डालकर रक्षाबन्धन करे। फिर प्रधानवेदी से तीन कदम उत्तर ओर या अग्निकुण्ड से पूर्व एक अरत्नि गहरा गढ़ा खोद कर जलाशय के उत्सर्ग की ही तरह यूप को उसमें गाड़े (पृ० ७५६)। इसके बाद जलाशयोत्सर्ग की ही तरह होम करे। आघार, आज्यभाग ग्रह, अधिदेवता, प्रत्यधिदेवता, लोकपाल, दिक्पाल, इन्द्र, शिव, मरुद्गण, दस दिक्पालों को उसी तरह आहुतियां देकर फिर घी से वरुण को भी उसी तरह आहुतियां देते हैं। अनन्तर जौ की खीर से भी उसी तरह नौ आहुतियां दे। इसके बाद जो वरुण को १२ मंत्रों से

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

वहां एक सौ आठ आहुतियां दी हैं, उनकी जगह प्रधान देवता वन-
पतिका होम—ओं वनस्पते वीड्वंगोहि० स्वाहा इदं वनस्पतये
नमम—इसी मंत्र से करे । १०८ आहुतियाँ घी और पलाश की
समिध की अलग अलग दी जायँ और उनके बाद ब्रह्मा, रुद्र, विष्णु
गणेश, लक्ष्मी, अम्बिका और भूतग्राम का जलाशयोत्सर्ग की ही तरह
समिधा और घी से होम करे और स्विष्टकृत आदि करके होम पूरा करे।
यदि उसी दिन चतुर्थीहोम न करना हो तो संस्रवप्राशन से लेकर
प्रणीताविमोक तक पूर्ववत् ही करके ग्रहादि को बलि दे। यदि उसी
दिन चतुर्थी होम करना हो तो संस्रव प्राशनादि कुछ न कर जलाशयो-
त्सर्ग कीही तरह बलि दे । वहां जो वरुणकी विशेष बलि है उस बलि
की जगह यहां वनस्पति देवता को बलिदे । शेष सात बलि भी दे।
इस तरह अधिवासन के बाद, उसी दिन या दूसरे दिन जैसा करना
हो, जलाशय की ही तरह यजमान का अभिषेकादि करके बागीचे
को उसी तरह सूत से घेरे और बागीचे के पेड़ों के निकट यजमान
बैठजावे । उपरांत वेदी पर तांबे की पात्री में स्थापित फलों की मूर्त्तियों
को बांस की प्रत्येक डाली में ७ या ८ रख कर ऊपर से जल डाल
प्रत्येक वृक्ष को नहलावे । नये नये फलों से हरेक को नहलावे, न
कि एक ही बार वालों से सभीको। वृक्षों पर बांस की डाली से ही पानी
गिरेगा। फिर जलाशय की ही तरह बाजे गाजे के साथ एक
गौ उत्तरमुख वृक्षों के बीच में चलाई जावे । उसका मन्त्र-
ओं इदं वनं पवित्रं कुरुष्व शुद्धं पूतममृतमस्तु नित्यम्
मांतारयन्ती कुरु तीर्थाभिषिक्तंलोकालोकं तरते तीर्थते च
इसकेबाद जलाशय वालेही—ओं समुद्रादूर्मि० तथा—ओं येवामां०
ये दो मन्त्र पढ़ कर उसी तरह पूँछ पकड़ कर तर्पण करे। उसके बाद
वहीं का 'ओं सूयवसाद्भगवती०' मंत्र जपे और उसके बोलने पर
ओं हिंकृण्वती० पढ़े । शेष क्रियायें भी उसी तरह करे। इसके बाद
उत्सर्ग का संकल्प करे । हाथ में कुश जौ तिल जल लेकर और देशका-
लादि कह कर कहे—इदंवनं नानावृक्षयुतं वनस्पतिदेवताकं
स्वीयसर्वपापक्षय पूर्वकमतीतानागतपितृकुलतारणकामो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भगवत्प्रीतिकामो वा सर्वसत्वेभ्योऽहमुत्सृजे ओं तत्सब्रह्मम ॥ और यह श्लोक पढ़े-ओं सर्वभूतेभ्य उत्सृष्टं मयैतद्वनमूर्जितम् । रमन्तां सर्वभूतानि स्थितिभक्षोत्सवादिभिः ॥ १ ॥ सामान्यं सर्वभूतेभ्यो मयादत्तमिदं वनम् । रमन्तां सर्व० ॥ २ ॥ इसके बाद वृक्षों के पास रक्खे जल से यजमान का अभिषेक कुशों से फिर किया जावे (पृ० २२५) । उसके बाद यदि चतुर्थीकर्म चार दिन में करना हो तो दक्षिणा इसी समय दे और पूर्णाहुति आदि भी करे । मगर यदि चतुर्थी कर्म भी उसी दिन करना हो तो यह सब न करके-ओं आपो हिष्ठा० (पृ० ७८) इत्यादि से जलाशय की ही तरह बाग को गौ के दूध से तीन बार चारों ओर घेर कर शेष दूध ब्राह्मण को पिलावे और यदि हो सके तो दस दिक्पालों को पूर्ववत् बलि भी दे । चौथे दिन चतुर्थीकर्म करने में रोज रोज वृक्षों की जड़ में दूध से सींचे और सभी देवताओं की पूजा और होमआदि करे । फिर चौथे दिन विधिवत् अग्नि की स्थापना कर होम करे । मगर उसी दिन करना हो तो घी को ही गर्म और शुद्ध करके होम करे । पहले संकल्प करे-ओं अद्य आरामोत्सर्गांगभूतं चतुर्थीकर्म करिष्ये ॥ फिर जलाशय की ही तरह आज्यभाग और आघार होम करके-ओं वनस्पते वीड्वंगो० हुंफट्-इस मंत्र से हाथ में जल अभिमंत्रित करके उसे अग्नि में छोड़े और गायत्री से सविता को उसी तरह १५ आहुतियां देकर;-ओं वनस्पते वीड्वंगोहि० स्वाहा वनस्पतये नमम-से १०० आहुतियां वनस्पति देवता को देकर; व्याहृति, पञ्चवारुणी, प्रजापति और स्विष्टकृत की आहुतियां घी से ही देकर और संस्रव प्राशनादि करके ब्रह्माको पूर्णपात्र द्रव्य के साथ दे । फिर आचार्य-ओं वनस्पते० मंत्र से ही पूर्णाहुति करे और त्र्यायुषकरण करके यजमान आचार्यादि की दक्षिणा का संकल्पादि जलाशय की ही तरह करे । केवल संकल्प में 'जलाशयोत्सर्ग' की जगह 'आरामोत्सर्ग' पढ़े । फिर कलशों और सामग्री आदि का दान और

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

विसर्जनादि उसी तरह करके ब्राह्मभोज करावे। अन्त में स्वयं भी बन्धु बान्धवों के साथ भोजन कर विश्राम करे। इति आरामोत्सर्ग।

३–पार्थिवेश्वरप्रतिष्ठा और पूजा।

पार्थिव शिव लिंग की पूजा के लिये प्रातःकाल स्नान और नित्य क्रिया के बाद त्रिपुण्ड्ररुद्राक्ष धारण करके ही भरसक उत्तर दिशामें ही जाकर बालू, कीड़े, कंकड़ी आदि से रहित शुद्ध भूमि को और भरसक शमी, पीपल की जड़ के पास की मिट्टी को देखे। ओं भूम्यै नमः- मन्त्र से पहले उसकी चन्दनादि से पूजा करे और प्रणाम करके उसके ईशान भाग की मिट्टी को कुदाल वगैरः से खोद ऊपर की मिट्टी दूर करदे। तब नीचे की मिट्टी की प्रार्थना करे–ओं उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। मृत्तिके त्वां च गृह्णामि प्रज्ञया च धनेन च॥ और मिट्टी खोदकर चुपचाप घर लावे। वहां पवित्र भूमि में उसे रख, आसन पर उत्तरमुख बैठ, आचमन, पवित्रधारण, प्राणायाम करके आसनशुद्धि के लिये–ओं पृथ्वि त्वया धृता लोका देवि त्वंविष्णुना धृता। त्वंच धारयमां देवि पवित्रं कुरु चासनम्- इस मन्त्र से आसन पर जल छींटे। तब संकल्प करे। हाथ में कुशादि लेकर देशकालदि को (पृ० १०८) कहकर पढ़े–मम सकल मनोरथसिद्ध्यर्थं दुरितक्षयद्वारा श्रीभवानीशंकरप्रीत्यर्थं पार्थिवशिवपूजां करिष्ये॥ इसके बाद घंटी और जल पात्र की पूजा कर उसके जल को शरीर और पूजा सामग्री पर छिड़के। 'ॐ जलपात्राय नमः' से जलपात्र और–ओं घण्टिकायै नमः' से घंटी की पूजा करे। फिर मिट्टी को लेकर सामने रखे और सूर्य को पहले एक अर्घ दान करे। पात्र में फूल, दूब, चन्दन मिश्रित जल लेकर गायत्री से या–ओं सूर्याय नमः एषोऽर्घो नमम–इस मंत्र से ही एक अर्घ देकर उसी मिट्टी को–ॐ हराय नमः–मंत्र से कूट कर महीन करे और–ॐ वामदेवाय नमः-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से उसमें जल डालकर उसे साने। फिर–ॐ महेश्वराय नमः–से उस मिट्टी को एकत्र करके चिकनी कर डाले और–ओं तत्पुरुषाय नमः–से उस का पिंड तथा उसमें लिंगादि का आकार बनावे। बनाने की रीति यह है कि पहले चार अंगुल ऊंची उस वेदिका की सूरत बनावे जिसमें शिवमूर्ति गड़ी रहती है। और किनारे किनारे जरासा ऊंचा कर उस में हीं उसी के ऊपर शिवलिंग बनावे। यथा संभव चारों ओर लपेट कर सिर पर एक सर्प का आकार बना दे तथा और भी आकार बना सके तो ठीक ही है। लिंग के ऊपर छोटी छोटी गोलियां बनाकर चिपका देते हैं। ये गोलियां गंगा, गणेश, पार्वती, शिव और कार्तिकेय की जगह मानी जाती हैं। इनकी संख्या और क्रम ऐसा है। सिरपर एक, बाईं ओर तीन, दहिनी ओर पांच, आगे जलधारी की ओर तीन और पीछे दो। इस प्रकार मूर्ति बनाकर–ओं समस्तावनाशिने नमः–मंत्र से हाथ, तांबे के पात्र या वेदी पर जल डालकर उसे शुद्ध करके उसपर बिल्वपत्र रख उसके ऊपर बिल्वपत्र, अक्षत, और पुष्प के साथ मूर्ति को–ओं शूलपाणये नमः–पढ़कर स्थापित करे और उसकी प्राणप्रतिष्ठा करे–ओं अस्य श्रीप्राणप्रतिष्ठामंत्रस्य ब्रह्मविष्णुरुद्रा ऋषयः प्राणाख्या देवता पार्थिवलिंगप्राणप्रतिष्ठापने विनियोगः॥ हाथ में अक्षत लेकर आगे का मन्त्र पढ़े और मूर्त्ति पर बार बार अक्षत डालता जावे–ओं आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं सः सोऽहम् पार्थिवशिवस्यप्राणा इहप्राणाः ॥ १ ॥ ओं आं ह्रीं० हं सः पार्थिवशिवस्य जीव इह स्थितः ॥ २ ॥ ओं आं ह्रीं० हंसः पार्थिवशिवस्य सर्वेन्द्रियाणि इहस्थितानि ॥ ३ ॥ ओं आं० हंसः पार्थिवशिवस्य वाङ्मनश्चक्षुः श्रोत्रजिह्वाघ्राणपाणिपादपायूपस्थानि इहागत्य सुखं सुचिरं तिष्ठन्तु स्वाहा नमः ॥४॥ ओं शिव इहागच्छ इह तिष्ठ ममपूजांगृहाण। ॐ स्वामिन्सर्वजगन्नाथ यावत्पूजा-

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

वसानकम्। तावत्त्वं प्रीतिभावेन लिंगेऽस्मिन्सन्निधोभव।
इस प्रकार प्रार्थना करे। स्मरण रहे कि ऊपर 'ॐ ह्रीं' आदि अक्षर
सभी में एक ही हैं। केवल पहले में 'सोहम्' अधिक है। फिर
न्यास करे-ओं नमः शिवाय शिरसे नमः। ॐ नमः शिवाय
मुखाय नमः। ॐ नमः शिवाय हृदयायनमः। ओं नमः
शिवाय गुह्यायनमः। ॐ नमः शिवाय पादाभ्यांनमः।
ओं नमः शिवाय सर्वशरीराय नमः॥ यही षडंगन्यास है।
तब ध्यान करे-ओं दक्षोत्संगनिषण्णकुंजरमुखं प्रेम्णा
करेण स्पृशन्। वामांके स्थितवल्लभांकललितं स्कन्दं
करेणस्पृशन्॥ इष्टाभीतिमनोहरं करयुगं बिभ्रत्प्रस
न्नाननः। भूयान्नः शरदिन्दुसुन्दरतनुः श्रेयस्करः शंकरः।
इसके बाद अपने को भी रुद्ररूप समझ आगे लिखी रीति से पूजा
करे-ओं शूलपाणये नमः आवाहनं समर्पयामि। ओं
पिनाकधृषे नमः आसनं०। ॐ भवोद्भवाय नमः अर्घ्यं०।
ओं वामदेवाय नमः आचमनीयं०। ओं ज्येष्ठायनमः
मधुपर्कस्नानं०। ओं ईश्वराय नमः पयःस्नानं० (दूध)।
ओं शिवाय नमः दधिस्नानं०। ओं गिरीशाय नमः
घृतस्नानं०। ॐ उमाधवाय नमः मधुस्नानं०। ओं शिवाय
नमः शर्करास्नानं० (चीनी)। ओं महेश्वराय नमः अभि
षेकं० (जल से अभिषेक करे)। ओं ज्येष्ठाय नमः
वस्त्रं०। ओं रुद्रायनमः उपवीतं० (जनेऊ)। ओं कालाय
नमः चन्दनं०। ओं कलविकरणाय नमः अक्षतान्०
ओं कलविकरणाय नमः पुष्पं०। ओं कलविकरणाय
नमः बिल्वपत्रं०। ओं बलाय नमः धूपं०। ओं बल
प्रमथनाय नमः दीपं०। ओं सर्वभूतदमनाय नमः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नैवेद्यं०। ओं मनोन्मनाय नमः आचमनीयं०। ओं मनोन्मनाय नमः मध्ये पानीयं० (पीने का जल)। ओं मनोन्मनाय नमः उत्तरापोशानं० (पीछे का आचमन)। ओं शंभवे नमः तांबूलं०। ओं शंभवे नमः दक्षिणां०। ओं शंकराय नमः फलं०। ओं शंकराय नमः प्रदक्षिणां०। ओं शंकराय नमः नीराजनं० (आरती)। ओं भवानीशंकराय नमः पुष्पांजलिं०। ओं शंभवे नमः नमस्करान्०॥ इसके बाद प्रार्थना करे-ओं यस्यस्मृत्याचनामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु। न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्यो वन्दे तमच्युतम्॥ ओं अनेन पार्थिवलिंगपूजनेन श्रीभवानीशंकरः प्रीयताम्॥ इसके बाद आचमन करके हाथ में अक्षत लेकर विसर्जन करे-ओं इशान सर्वदेवेश ओंकार भुवनेश्वर। मन्दिरेगच्छदेवेशपुनरागमनाय च॥ और अक्षत ऊपर डाल दे। फिर किसी एकान्त स्थान या जलमें सभी वस्तु सहित पार्थिव मूर्त्ति डाल आवे। आरती खड़ा होकर ही करे और उस समय पढ़े-ओं कर्पूरगौरं करुणावतारं संसारसारं भुजगेन्द्रहारम्। सदावसन्तं हृदयारविन्दे भवंभवानीसहितं नमामि॥ पुष्पाञ्जलिके समय पढ़े-ओं ध्यायेन्नित्यं महेशं रजतगिरिनिभं चारुचन्द्रावतंसम्। रत्नाकल्पोज्ज्वलांगं परशुमृगवराभीतिहस्तं प्रसन्नम्॥ पद्मासीनं समन्तात्स्तुतममरगणैर्व्याघ्रकृत्तिंवसानम्। विश्वाद्यं विश्ववंद्यं निखिलभयहरं पंचवक्त्रं त्रिनेत्रम्॥ प्रार्थना में पढ़े-ॐ पार्थिवस्य च लिंगस्य यन्मयापूजनंकृतम्। तेन मे भगवान्रुद्रोवाञ्छितार्थं प्रयच्छतु॥१॥ आवाहनं नजानामिनजानामि विसर्जनम्। पूजांचैव नजानामि त्वं गतिः परमेश्वर॥ २॥ भावहीनं भक्तिहीनं क्रियाहीनं

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

महेश्वर । तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीदपरमेश्वर ॥३॥ कायचरणकृतं वाक्कायजं कर्मजं वा श्रवणनयनजं वा मानसं वाऽपराधम् । विहितमविहितं वा सर्वमेतत्क्षमस्व जयजय करुणाब्धे श्रीमहादेवशम्भो ॥ ४ ॥ प्रार्थना करनेके बाद फिर प्रणाम करले । तब पूर्वोक्त विसर्जन करे । पुष्पांजलि समर्पण करके 'ओं नमः शिवाय' मंत्र का यथाशक्ति जप भी करना चाहिये। शक्कर, मधु आदि के स्नान से यह अभिप्राय है कि मूर्त्ति पर ये चीजें डाल दी जायँ । इति पार्थिवेश्वरपूजा ।

४–प्रतिमाप्रतिष्ठा ।

सब प्रतिष्ठाओं का शिरोभूषण प्रतिमा या देवताओं की प्रतिष्ठा शेष है । अतः उसकी विधि भी जहां तक होगा संक्षेप में लिखेंगे। यह स्मरण रखना चाहिये कि मण्डपनिर्माण से लेकर ग्रहादि पूजा तथा वास्तुशान्ति आदि की जितनी बातें लिखी जा चुकी हैं, उनसे इस प्रतिष्ठा का आधा काम हो जाता है । अतएव पहले तथा दूसरे प्रकरण के अनुसार वे सभी क्रियायें की जावें । और वास्तुशान्ति में जो शेष विषय पूर्व प्रकरण की वास्तुशान्ति में लिखा है वह भी कर लिया जाय । सारांश, वास्तुदेवताओं की पूजा के सिवाय उनकी आहुतियाँ और बलिदान जो वास्तुशान्ति में लिखे हैं वह भी कर लिये जावें और होम के बाद जो वास्तु की प्रतिमा को गृहभूमि में गाड़ने को लिखा है वह भी किया जावे और उससे पहले जो तीन सूत्र से गृहभूमि को घेरते हैं और दूध एवं जलकी धारा देते हैं वह भी करे। परन्तु वहाँ जो शान्ति कलश से यजमान का अभिषेक वास्तुदेवता की बलि के बाद है उसे करने की आवश्यकता नहीं है । हाँ, शिलाके के अभिषेक के बाद जो अघोर मंत्र से १०८ आहुतियाँ लिखी है वह वास्तु होम के अन्त में यानी ५ श्रीफलों या श्री फल के पाँच टुकड़े के होमके बाद करे। अघोरमन्त्रसे होम करके तीन सूतसे भूमिको और दूधजल की धारा चारों ओर गिराकर वास्तुदेवकी मूर्त्ति ले जाकर अग्निकोन के पास ही' जैसा कि वहाँ कहा है, गाड़े । अघोरमंत्र में विवाद है । वहां हमने 'ॐ यातेरुद्र०' इत्यादि मंत्र लिखा है। परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुत जगह-ओं अघोरेभ्योऽथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यःसर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः स्वाहा इदं रुद्राय नमम- ऐसा लिखा है। अतएव चाहे उससे दे या इस से ही दे । एक बात यह भी स्मरण रखने की है कि प्रधान वेदी पर सर्वतोभद्र का मण्डल बनाकर उस पर विधिवत् कलश स्थापित करते हैं। सर्वतोभद्र की पूजा के बाद ही यह काम करते हैं और उसी कलश पर प्रतिष्ठा किये जाने वाले देवता की सोने की मूर्त्ति अग्न्युत्तारणपूर्वक स्थापित करके उसकी पूजा भी करते हैं। यदि शिव की प्रतिष्ठा करनी हो तो लिंगतोभद्र सर्वतोभद्र की जगह बनाते हैं। अथवा सर्वतोभद्र से ही काम चलाते हैं। यों तो रामतोभद्र आदि बहुत से भद्र हैं और पृथक् पृथक् देवताओं की स्थापना के समय वे बनाये जावें तो अच्छाही है। मगर प्रतिष्ठामयूखादि में केवल सर्वतोभद्र सेही काम चलाया है और ऋग्वेदीय ब्रह्मकर्मसमुच्चय में भी ऐसाही लिखा गया है। अतएव हम लिंगतोभद्र की बात न लिखेंगे। चाल तो जहा तहाँ द्वादशया चतुर्लिंगतोभद्र बनाने की भी है जिसमें १०८ आदि देवता होते हैं। ग्रन्थ के अन्त में एक चित्र हम देंगे। यदि आवश्यकता हो तो उसीसे काम चलाया जावे। प्रायः पद्धतियों में मण्डप के बाहरही गणेशपूजा, स्वस्तिपुण्याहवाचन, मातृकापूजा, और नान्दीमुखश्राद्ध लिखा है। मगर हम इसे पसन्द नहीं करते। जब मातृकावेदी मण्डप के भीतर ही बनाई जाती है और मण्डप का प्रयोजनहीं इन्हीं सब पूजनों के लिये है। तो फिर बाहर क्यों किये जाय ? हां, आचार्य, ब्रह्मा आदि ऋत्विक् और जापक द्वारपाल आदि का वरण मण्डप से बाहर हो सकता है। क्योंकि आचार्य के साथही मण्डप में प्रवेश करना पड़ता है और उसके बिनो कर्म कराना भी असंभव है। अतएव हमने भी मण्डप से बाहर ही उनका वरण लिखा है। प्रधान मण्डप के सिवाय उससे उत्तर उसका आधा, तिहाई या चौथाई लम्बा स्नानमण्डप भी उसी तरह का बनावे। वास्तु वेदी पर जो वास्तुमण्डल बनाया जाता है वह साधारणतया दो प्रकार का प्रसिद्ध है। ६४ मण्डलों का और ८१ का। देवता तो दोनों में एकही हैं। मगर ऐसा कहा जाता है कि देवस्थापन में ६४

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

वाला ही रहना चाहिये और ग्रहादिकों की पूजा में ८१ वाला । अन्त में
अन्त में चित्र देखकर ६४ वालाही बनाना चाहे ता बना ले । देवता
ओं और स्थानों का भेद नहीं है । उतनेहीं देवता उन्हीं उन्हीं स्थानों
पर ६४ वाले में भी हैं । विशेशता यही है कि ६४ वाले के कुछ मण्डल
छोटे छोटे है और ८१ वाले के कुछ बड़े हैं । एक विशेषता और है कि
६४ वाले में १० की जगह ९ रेखायें खींची जांयगी । उनके नामों
में भी भेद हैं । पश्चिम से पूर्व वाली रेखायें जो पहले खींची जायंगी
यह कह कर-(१) ॐ लक्ष्म्यै नमः (२) ॐ यशोवत्यै नमः
(३) ओं कांतायै नमः (४) ओं सुप्रियायै नमः (५
ॐ विमलायै नमः (६) ॐ श्रियै नमः (७) ॐ सुम
गायै नमः (८) ॐ सुमत्यै नमः (९) ओं इडायै नमः
ये पश्चिम से पूर्व की और एक से उत्तर दूसरी खींची जायंगी । फिर
दक्षिण से उत्तर को एक दूसरी से पश्चिम इस तरह नौ रेखायें यह
कर क्रम से खींची जांयगी-(१) ओं धान्यायै नमः (२) ओं
प्राणायै नमः (३) ओं विशालायै नमः (४) ओं शि
रायै नमः (५) ओं भद्रायै नमः (६) ओं जयायै नमः
(७) ओं निशायै नमः (८) ओं विरजायै नमः (९
ओं विभवायै नमः ॥ शेष सभी बातें ८१ वाले कीही तरह होंगी
हमारे विचार से जो चाहे वह ८१ वाला करे या ६४ वाला या इससे
भी अधिक वाला । इसमें कोई बाधा नहीं है । यह भी स्मरण रहे कि
जिस दिन से शुरू होता है उसके चौथे दिन प्रतिष्ठा का कार्य पूर्ण
होता है । यों तो अधिक दिन भी लगाते हैं । और अन्त में पूरा करते
हैं । मगर चौथे दिन चतुर्थी कर्म की पूर्त्ति करना हीं प्रधानपक्ष है
नहीं तो कम से कम दो दिन तो अवश्य लगते हैं । तीन दिन भी
लग जाते हैं । यदि दो दिन काही पक्ष अवलम्बन करें तो पहले दिन
अधिवासन अर्थात् समस्त पूजा, होम और देवता का अभिषेक आदि
तथा मन्दिर की पूजा प्रभृति क्रियायें होंगी और शेष दूसरे दिन
अतएव जिस दिन से आरंभकरना हो उससे पहलेही दिन एक बार
भोजनादि का नियम करे । अथवा शरीर शुद्धि केलिये यदि और भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रायश्चित्तादि करना हो तो वह भी कर ले । मण्डप मंदिर से पूर्व या उत्तर हों ।

उस दिन प्रातःकाल पत्नी के साथ स्नानादि नित्य कर्मों से निवृत्त होकर मण्डप के समीप आवे और उससे उत्तर या पूर्व लीपी पोती भूमि पर शुद्ध आसन रख उस पर पूर्वमुख बैठ जावे और बाईं ओर स्त्री को बैठाल दे। फिर दोनों हाथों में पवित्र धारण कर-ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः—इसे पढ़कर शरीर पर जल डाले और आचमन, प्राणायाम करके १०३, १०९ पृष्ठोक्त शान्तिपाठ, मंगलपाठ और 'सुमुखश्चैकदन्तश्च' इत्यादि के पाठके बाद प्रधान संकल्प करे। हाथ में कुश, जौ, पुष्प, तिलादि लेकर और देशकालादि को (१०८) कह कर पढ़े-'अमुकशर्म्माहमात्मनः सर्वपापक्षयपूर्वकं दशपूर्वादशपरानात्मनासहैकविंशतिपुरुषान्पितृतो मातृतश्चोद्धर्तुकामः श्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैर्देशकालाद्यनुसारतः महादेवस्य (विष्णोः) प्रतिष्ठां करिष्ये । तदंगतयाचार्यादिवरणं गणपतिपूजनं पुण्याहवाचनं मातृकापूजां नान्दीश्राद्धं मण्डपस्य तद्देवतानां ग्रहादीनां च स्थापनपूजनादिकर्मकलापं करिष्ये॥ इस के बाद आचार्यादि का वरण (पृ० ७४) कर डाले । यदि सामर्थ्य हो तो ब्रह्मा के सिवाय और भी ४ या ८ ऋत्विक्वरण करे और द्वारपालों तथा जापकों का भी वरण करे । यदि द्वारपालादि न रख सके तो सप्तशती आदि के पाठ करने वाले दो एक ब्राह्मणों का वरण करे । संकल्प में 'देवप्रतिष्ठाकर्मणि' कहे । वरणविधि पहले लिखी जा चुकी है । फिर सामग्री और आचार्यादि के साथ (७६) विधिवत् प्रदक्षिणा करके पश्चिम द्वार से मण्डप में प्रवेश कर, कर्मदीपक की पूजा, कर्मपात्र में जल रखना तथा गणेशपूजा से लेकर पुण्याहवाचन, मातृकापूजा, नांदीश्राद्ध;मण्डप के देवताओं और मण्डप की विधिवत् स्थापना, पूजा, कलशस्थापन, ग्रहपूजा, सर्वतोभद्रपूजा

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

और वास्तुपूजा आदि सभी कर डाले। योगिनी और क्षेत्रपाल की भी विधिवत् पूजा करे। एतदर्थ साधारण कर्म के प्रकरण को देखकर उसी के अनुसार क्रमशः सभी क्रियायें करे। सर्वतोभद्र के देवताओं की पूजा के बाद स्थापित किये जाने वाली मूर्त्ति के सिवाय जो कोई या किसी और चीज की मूर्त्ति उसी देवता की है उसका अग्न्युत्तारण करके पंचामृत से स्नान (पृ० ५१३) करावे और सर्वतोभद्र पर कलश स्थापन (पृ० १४६) करके तांबे के पात्र में चावल को भरकर कलश पर वह पूर्णपात्र रख उसके ऊपर खद्दर रक्खे। फिर उसपर उस मूर्त्ति को स्थापित कर- ॐ मनोजूति० (३७९) ॐ भूर्भुवः स्वः विष्णो (शिवाय) नमः। सुप्रतिष्ठितो वरदो भव-यह मंत्र पढ़ कर अक्षत, पुष्प उस मूर्त्ति पर डालके उसकी प्रतिष्ठा करे। यदि विष्णु, शिव के सिवाय अन्य देवता हों तो 'विष्णवे' की जगह उनके ही नामके अन्तमें चतुर्थी विभक्ति लगाकर पढ़े। इसके बाद यदि 'ॐ भू०' से लेकर 'नमः' पर्य्यन्त पूर्वोक्त मंत्र से ही षोडशोपचार (पृ० ४३) पूजा करे, अथवा विष्णु की 'ॐ इदं विष्णुः०' (पृ०५२) मंत्र से और शिवकी 'ॐ नमस्ते रुद्र०' (पृ०७१६) से ही, अथवा पुरुषसूक्त के सोलह मंत्रों सेही शिव, विष्णु आदि सभी की पूजा को सोलह मंत्रोंसे क्रमशः करे-(१) आवाहन (२) आसन (३) पाद्य (४) अर्घ्य (५) आचमन (६) स्नान (७) वस्त्र (८) यज्ञोपवीत (पुनः आचमन) (९) चन्दन (१०) पुष्प (११) धूप (१२) दीप (१३) नैवेद्य। उसके बाद फिर आचमन देकर पान और सुपारी चढ़ावे। (१४) नमस्कार (१५) प्रदक्षिणा (१६) पुष्पाञ्जलि। पूजा के बाद प्रार्थना करे- ॐ एह्येहि भगवन् देव लोकानुग्रहकारक। यज्ञभागं गृहाणेमं जगदीश नमोऽस्तुते। यह स्मरण रहे कि मध्य वेदीपर जो कलश सर्वतोभद्र पर रहेगा उसके सक वह तांबे का ही हो। वास्तुपूजा तो जिस प्रकार पहले कही गई है उसी तरह कीजावे तथा क्षेत्रपालादि की भी पूजा वैसी ही हो।

पूजा के बाद होम के समय विधिवत् पचभूसंस्कार सहित कुण्ड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रिडका (पृ० १८५) कर ले। यदि विस्तृत करना होतो ग्रहादि के लिये १०८ या १०८ समिधा रक्खे। पर संक्षेप में तो ८-८ वगैरः ही (पृ० ६०९) रक्खे। चरु भी बनाले। घी को अग्निसे उत्तर ही आगपर कर्म करे और उससे उत्तर चरु पकावे। कहीं कहीं ब्रह्मा को ही घी कर्म करने को लिखा है। वह अग्नि से दक्षिण ओर ही कर लेता है और यजमान उत्तर ओर चरु पकाता है। परन्तु दोनों कृत्य यजमानहीं करे सोही ठीक है। घी को अग्नि पर से उतार कर चरु से पूर्व होके लाना चाहिये और चरु से उत्तर रख चरु को घी से पश्चिम होकर लाके घी से उत्तर रक्खे। सर्वत्र यही नियम है। जिस समय यह कुशकण्डिका शुरू करे उसी समय द्वारपाल, जापक और पाठकों को कह दे कि-'ॐ जपध्वम्' 'ॐ पठध्वम्'। और वे लोग उधर पाठ और जप शुरू करें और इधर स्वयं कुशकण्डिका करे। प्रतिष्ठाके समय जिस अग्नि की स्थापना कर होम करते हैं उसे पावक कहते हैं। अतएव पावक नामक अग्नि की स्थापना और पूजा करे। फिर होम के समय पहले घी से आघार और आज्यभाग की आहुतियां ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर देकर उनका संस्रव प्रोक्षणी में रखना होता है और उसके बाद अन्वारंभ छोड़कर और संस्रव भी बन्द करके ग्रहों, उनके अधिदेवता और प्रत्यधिदेवताओं का होम करके पञ्चलोकपाल, दशदिक-पालका होम करते हैं। ग्रहादि की आहुतियोंका विवरण ६०९ आदि पृष्ठों में हैं। जब जब ग्रहों एवं उनके अधिदेवता आदि का होम पूरा होजाता है तब तब-ॐ अनेन होमेन अमुकदेवाः प्रीयन्तां नमम-पढ़ कर हाथमें लिया हुआ जल छोड़ देते हैं और-ॐ यथा बाणप्रहाराणां कवचं वारकं भवेत्। तद्वद्दैवोपघातानां शान्तिर्भवति वारणम्-कहकर यजमान के सिरपर जल डाल देते हैं। यह बात किसी किसी पद्धति में है। इस तरह ग्रहादि का होम करके वास्तुदेवताओं और प्रधान वास्तुपुरुष का होम (पृ०६८४) करते हैं और उसे कर चुकने पर अन्त में श्रीफलहोम के बाद पूर्वोक्त अघोर मंत्रका होमभी १०८ बार करते हैं। प्रधान वास्तु का होम इस तरह करके वास्तुमण्डल के कलश पर जो वास्तुपुरुष की मूर्त्ति है उसे मन्दिर की भूमि में गाड़ने का प्रबन्ध करे। रक्षोघ्न और पवमान के

SriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

आगे लिखे मंत्रों से मन्दिर को तीन सूतों से घेर कर चारों ओर दूध और जल गिरावे और विधिवत् उसे अग्निकोन के निकट गाड़े (६६३) । वास्तुमूर्त्ति वाली पेटी को वहां गढ़े में रखने के बाद सर्वतोभद्र मण्डल के देवताओं का होम (२१०) करके प्रधान देवता का (विष्णु, शिव आदि जिनकी प्रतिष्ठा करनी हो उनका) होम करे। इस होम के लिये विष्णु के वास्ते चरु में तिल मिलाकर (कुशर) और शिवके लिये जौ की चरु विशेष रूप से बनाते हैं। उसी से विष्णु का–ॐ नमो भगवते वासुदेवाय स्वाहा इदं भगवते वासुदेवाय नमम–से और शिवका–ॐ नमः शिवाय स्वाहा इदं शिवाय नमम-से १०८ बार होम करे और फिर पुरुष सूक्त के मंत्रों से प्रतिमंत्र एक एक या दस दस आहुतियां देकर पुनरपि जौ, तिल और पलाश की समिधा से प्रत्येक देवताओं के मूल मन्त्रों से १०८ बार हवन करे। शिव और विष्णु के मूल मन्त्र ऊपर लिखे हैं। अथवा–ॐ इदं विष्णु० (७२२) यह मंत्र विष्णु का और–ॐ त्र्यम्बकम्० (७४३) । ॐ नमः शम्भवाय० (७४४) ये शिव के हैं। सूर्य का मूल मंत्र गायत्री, गणेश का 'ॐ गणानां त्वा०' (२०८) और दुर्गा का– ओं जातवेदसे० (६४६) है। इसके बाद फिर भी ग्रहों से लेकर विश्वकर्मा और वास्तुपुरुष, क्षेत्रपाल तक के होम करले और यदि सबका न हो सके तो-ॐ विश्वकर्मन्० (२१०) मंत्र से विश्वकर्मा को और क्षेत्रपाल (१०४) के मन्त्र से उसे आहुति देकर-ॐ अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम-से सभी चीजों को एक में मिला कर और ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर स्विष्टकृत की आहुति दे। अग्नि में व्याहृति, पंचवारुणी और प्रजापति की ये नौ आहुतियां (१४) घी से दे और प्रोक्षणी में इनका संस्रव भी रक्खे। इसके बाद ग्रहादि को बलि देकर (२१४) मण्डप के बाहर जाकर बाजे गाजे के साथ दसों दिक्पालों को (६९०) बलि दे। या होम की वेदी पर ही चारों ओर दे। फिर क्षेत्रपाल को बलि देकर चौराहे पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को बलि दे। नये सूप में जौ के पीठे का एक दीया बनाकर उसे जलावे, उसमें उड़द, भात, दही, हल्दी, सिन्दूर, काजल, चन्दन, लाल पुष्प रख कर बाजे के साथ लोगों को लेकर चौराहे पर जावे और समस्त वस्तुओं के साथ सूप को वहीं इन मंत्रों को पढ़ कर रक्खे-

ॐ बलिं गृह्णन्तु ते देवा आदित्या वसवस्तथा। मरुतश्चाश्विनौ रुद्राः सुपर्णाः पन्नगा ग्रहाः॥ १॥ जृंभकाः सिद्धगन्धर्वा मालाविद्याधरानुगाः। आसुरा यातुधानाश्च पिशाचा डाकिनीगणाः॥२॥ शक्तयो यक्षवेताला ये च विघ्नविनायकाः। जगतांशांतिकर्त्तारः क्रमाद्याश्चैवमातरः॥३॥ मा विघ्नं मा च मे रोगा मा संतु परिपन्थिनः। सौम्या भवन्तु तृप्ताश्च भूताः प्रेताः सुखावहाः॥४॥ ते सर्वे तृप्तिमायान्तु रक्षां कुर्वन्तु मेऽध्वरे। देवताभ्यः पितृभ्यश्च भूतेभ्यः सह जन्तुभिः॥ ५॥ एतत्स्थानाधिवासिभ्यः प्रयच्छामि बलिं नमः। त्रैलोक्ये यानि भूतानि स्थावराणि चराणि च॥ ६॥ ब्रह्मविष्णुशिवैः सार्द्धं रक्षां कुर्वन्तु तानि मे। देवदानवगन्धर्वा यक्षराक्षसपन्नगाः॥ ७॥ ऋषयो मुनयो गावो देवमातर एव च। एते ममाध्वरे रक्षां कुर्वन्तु प्रमुदान्विताः॥ ८॥ एतेभ्यो भूतेभ्यो गन्धादिकं वः स्वाहा॥ इस तरह बलि देकर प्रणाम करे और लौट कर मण्डप में आके हाथ पांव धोकर आचमन करे। इसके बाद मण्डप से तीन कदम पूर्व या मन्दिर और मकान से सोलह या दस हाथ पर अरत्नि भर गहरे गढ़े में यूप गाड़ते हैं। इसकी संक्षिप्त विधि ७५६ पृष्ठ में लिखी है।

माला पहनाने से पहले यूप की प्रार्थना करे— त्वां प्रार्थयेऽहं यूप लोकानां शान्तिदायक। सर्वपापविशुद्ध्यर्थं जगदानन्दकारक॥ १॥ देहिमेऽनुग्रहं यूप प्रसादं कुरु

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

सुप्रभो । मूलच्छेदेन यत्पापं भूमिघातेन पातकम् ॥ २ ॥ अदुष्टयूपधातोत्थं यूपः पापं व्यपोहतु । यद्बाल्ये यच्च कौमारे यत्पापं वार्द्धके कृतम् ॥ ३ ॥ तत्सर्वं मम देवेश यूपः पापं व्यपोहतु । यन्निशायां तथा प्रातर्मध्यान्हापराह्णयोः ॥ ४ ॥ सन्धयोश्च कृतं पापं कर्मणा मनसा गिरा । तत्सर्वं मम देवेश यूपः पापं व्यपोहतु ॥ ५ ॥

इस प्रकार यूप गाड़ने तक की क्रिया करके अधिवासन का कार्य शुरू करे । अधिवासन शब्द का अर्थ है चन्दन, पुष्प, अक्षत आदि से संस्कार या पूजा करना । परन्तु इस अधिवासन में बहुत से कृत्य आजाते हैं । प्रायः शाम को यह कृत्य करते हैं परन्तु आवश्यकतानुसार दूसरे समय भी कर सकते हैं । बाजे गाजे के साथ यजमान के साथ आचार्य कारीगर के गृह पर, या जहां मूर्त्ति हो, जाकर मूर्त्ति के आगे कलश स्थापित कर (पृ०१४६) उस में तीर्थों का आवाहन करे—ॐ काशी कुशस्थली माया वत्ययोध्या मधोः पुरी । शालिग्रामं सगोकर्णं नर्मदा च सरस्वती ॥ १ ॥ तीर्थान्येतानि कुम्भेऽस्मिन्विशंतु ब्रह्मशासनात् । गंगाद्याः सरितः सर्वाः समुद्राश्च सरांसि च ॥ २ ॥ ऋषारूढा सरोजाक्षी पद्महस्ता शशिप्रभा आगच्छतु सरिच्छ्रेष्ठा गंगा पापप्रणाशिनी ॥ ३ ॥ नीलोत्पलदलश्यामा पद्महस्ताम्बुजेक्षणा । आयातु यमुना देवी कूर्मयानस्थिता सदा ॥ ४ ॥ प्राची सरस्वती पुण्या पयोष्णी गौतमी तथा । उर्मिला चन्द्रभागा च सरयू गंडकी तथा ॥ ५ ॥ एता नद्यश्च तीर्थानि गुह्यक्षेत्राणि सर्वशः । तानि सर्वाणि कुम्भेऽस्मिन्विशन्तु ब्रह्मशासनात् ॥ ६ ॥ इसके बाद वहां होम करने का संकल्प करे । आचा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन, प्राणायाम करके कुशादि लेकर संकल्प करे-ॐ अद्य० इत्यादि (पृ० १०८) प्रतिमानिर्माणे प्राणिवधादिदोषनिरासाय होमं करिष्ये ॥ फिर विधिवत् स्थंडिल बनाकर पञ्चभूसंस्कार-पूर्वक अग्निस्थापना से लेकर ब्रह्मवरणादि तथा आज्यभाग के होम तक की आहुतियों तक का कृत्य (पृ० १९४) करके मूल मंत्र से (७८२) घी या तिलों से दो सौ आहुतियां देकर संस्रवप्राशन से लेकर पूर्णाहुति तक करके (२४३,३२२) उस देवता की प्रार्थना उसी प्रतिमामें करे-ॐ त्वयि संपूजयामीशनारायणमनामयम् । रहितः सर्वदोषैस्त्वमृद्धियुक्तः सदा भव ॥ फिर प्रतिमा को कुश से झाड़कर; मधु और घी मिलाकर और उसे समस्त प्रतिमा में लगाकर जहां तहां के छिद्रादि को बराबर कर दे और प्रतिमा को चिकनी, चौरस बना डाले। तब क्रम से शुद्ध मृत्तिका, गौ के गोबर, गोमूत्र, शुद्ध भस्म और दूध से अलग अलग स्नान करावे। पर स्मरण रहे कि प्रत्येक स्नान के बाद शुद्ध जल से स्नान कराता जावे। क्योंकि मृत्तिका आदि पूर्वोक्त तथा पञ्चामृत के प्रत्येक पदार्थों से स्नान कराने के बाद बारबार शुद्ध जलसे नहलाया जाता है। मृत्तिका आदि को मूर्त्ति में लगा देना हीं स्नान कराना है। मूलमंत्रों से ही स्नान करावे या आगे लिखे मंत्रों से जो, अभिषेक के प्रकरण में हैं। फिर मूल मंत्र से ही पञ्चोपचार या षोडशोपचार पूजा करे और सफेद फूल चढ़ावे। किसी पात्र में मधु और घी मिलाकर सोने के तार या शुद्ध लकड़ी की पतली नोक से दोनों नेत्रों में उसे अच्छी तरह लगाकर ऊपर से मोम से आंखें मूंद दे। शिवलिंग में भी आंख के स्थान की कल्पना करके उसी जगह ऐसा करे। तब स्थापित कलश के जल से मूर्ति को स्नान कराकर कारीगर से उस प्रतिमा को ले और उसे वस्त्र, द्रव्यादि देकर संतुष्ट करके सफेद ऊन या कपास के सूत में सर्वौषधि और मैनसिल की पोटली बाँध कर प्रतिमा के दहिने हाथ में और लिंग के मध्य में बांधे। बांधने के समय पूर्वोक्त मूल मंत्र पढ़े। बहुत सी पद्धतियों में कंकण (१७८) हीं बांधने को लिखा है, जिसका मंत्र 'ओं यदाबध्नन्दाक्षायणा'

iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

इत्यादि ही है (७७)। यही उचित भी है।

इसके बाद जलाधिवासन (जल में रखने) के लिये खद्दर से आच्छादित कर प्रतिमा को रथ पर इस मंत्र से चढ़ावे-ओं रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्र यत्र कामयते सुखारथिः। अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनुयच्छन्ति रश्मयः। और नदी, तालाब, बावड़ी या कूएं के पास ले जाकर उसके लिये भूमि घेर इन मंत्रों से पञ्चगव्य छिड़के-ओं इन्द्रघोषस्त्वावसुभिः पुरस्तात्पातु प्रचेतास्त्वारुद्रैः पश्चात्पातुमनोजवास्त्वावसुभिर्दक्षिणतः। पातुविश्वकर्मात्वादित्यैरुत्तरतः पातु महन्तंवार्यहिर्धायज्ञान्निःसृजामि ॥ १ ॥ ओं चित्पतिः पुनातु वाक्पतिर्मा पुनातु देवो मा सविता पुनात्वच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः। तस्यते पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ॥ २ ॥ उसी भूमि पर पूजा सामग्री रखकर मूलमंत्र (७८२) से प्रतिमा को जल में वस्त्र सहित ही रख दे। कूएं के पास यदि हो तो बाहर किसी जगह पहले से ही जल भर कर रखना होगा। इसके बाद यजमान उत्तर मुख हो आचमन, प्राणायाम करके जल की पूजा करे-ओं अद्भ्यो नमः। ओं सप्तसागरेभ्यो नमः। ओं मानसादिसरोभ्यो नमः। ओं पुष्करादितीर्थेभ्यो नमः। ओं गंगादिमहानदीभ्यो नमः॥ इन प्रत्येक मंत्रों को पढ़कर उस जल में चन्दन अक्षत, पुष्प डालता जावे। फिर-ओं तत्त्वायामि ब्रह्मणा (पृ०१४८) ओं भूर्भुवः स्वः वरुण इहागच्छ इह तिष्ठ इस मंत्र से वरुण का आवाहन कर 'ओं भूर्भुवः स्वः अपांपति वरुणाय नमः-मंत्र से वरुण की पूजा करे। पुनः पञ्चामृत के लिये गौ के दूध, दही, घी, शक्कर, और मधु हाथ में लेकर पृथक् पृथक् मंत्रों से (६९५) पांचों को जल में डाले। और चारों कोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बार और बीच में एक कलश विधिवत् (१४६) स्थापित कर पांचों में वरुण की पूजा करे और पुष्प, माला, आम के पल्लव से कलशों को अच्छी तरह भूषित कर दे । तब जल में स्थित देव की प्रार्थना करे— ओं स्वागतं देवदेवेश विश्वरूप नमोऽस्तुते । शुद्धेऽपि त्वदधिष्ठाने शुद्धिं कुर्मः सहस्व ताम् ॥ इसके बाद धूप देकर यथाशक्ति ७, ५, ३, २ या एक दिन अथवा एक प्रहर, एक घड़ी या गौ के दूहने भर तक उस जलमें हीं प्रतिमा को रहने दे । तब पुरुष-सूक्तपाठ, पंचाक्षर (ओं नमः शिवाय) जपकर और अघोर मंत्र तथा रुद्राध्याय (नमस्ते रुद्र०) यथाशक्ति पढ़कर उसे जलसे बाहर निकाले और तीर पर खद्दर बिछाकर उसी पर रख चन्दन, पुष्पादि से पूजा करके अच्छी तरह भूषित करे। फिर विमान या रथ में बैठाने के लिये, पांच कलशों सहित मूर्त्ति को इन मंत्रों से उठाकर रक्खे-ॐ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज । उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्यं मंगलं कुरु ॥ १ ॥ ओं उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते देवयन्तस्त्वेमहे । उपप्रयन्तु मरुतः सुदानव इन्द्र प्राशूर्भवासचा ॥ २ ॥ उस रथपर केवल मूर्त्ति रहे। शिव आदि की मूर्त्तिके समय केवल दूसरा ही मंत्र पढ़े । पहला श्लोक छोड़ दे । वह केवल विष्णु के लिये है । फिर रास्ते में जय जय कार, गीत और मंगल शब्दों के साथ धीरे धीरे लाकर यज्ञ मण्डप की प्रदक्षिणा कराके स्नान मण्डप में लावे । स्मरण रहे कि स्नानमण्डप में तीन वेदियां एक दूसरे से उत्तर बनी होती हैं । जिन पर काठ वगैरः के सिंहासन (भद्रासन) रखकर उसी पर मूर्त्ति को रखते और स्नान कराते हैं । उन में जो बीचवाली है उसी पर सिंहासन रख उस पर पूर्वमुख मूर्त्ति को स्थापित कर उसके आगे साथ के पांचों कलश रख दे । रखने का मंत्र—ओं भद्रं कर्णेभिः० (३७७) ।

इस तरह जलाधिवासन करके स्नान या अभिषेक करे । पहले तीनों वेदियों के निकट स्नान की सामग्री रख पञ्चगव्य को ओं

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

CC-0. Jangamwadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

नमोनारायणाय' मंत्र से अभिमंत्रित करे तथा तीनों वेदियों की भूमि पर उसे छिड़के (७९)। सब से पहले दक्षिणवाली वेदी पर वालू फैलाकर अक्षतों से स्वस्तिक का चिन्ह उसी पर बनावे और उसी पर सिंहासन रख उससे पश्चिम जलपूर्ण छ कलश रक्खे। प्रत्येक में आम के पल्लव भी रहें और सबसे दक्षिणवाले से आरंभ कर क्रमशः उत्तर उत्तर वालों में क्रम से छ चीजें डाले। ६ चीजें हैं और छ कलश भी हैं। चीजें यह हैं, (सप्त) मृत्तिका, पंच कषाय (गूलर, वट, पीपल, जामुन और आम की छाल का काढ़ा), गोमूत्र, गोबर, भस्म (शुद्ध राख), चन्दन। इनके उत्तर पांच और कलश चन्दन मिले स्थापित करे। ये पांच पञ्च देवकलश कहाते हैं सभी के गले में तीन लाल सूत लपेटे होते हैं और विधिवत् स्थापना की जाती है। इस तरह पहली वेदी के पश्चिम ग्यारह कलश रखे गये जो एक ही पंक्ति में रहेंगे। अन्त के पांच कलशों के बाद एक और कलश होता है। उसे स्थपति कलश कहते हैं और उसमें तीर्थों का जल डाल देते हैं। इसी तरह बीचवाली जो दूसरी वेदी है उसके पश्चिम भी ग्यारह कलश स्थापित किये जाते हैं और पहले की ही वस्तुएं उनमें डालते हैं। और वहां भी स्थपति कलश ग्यारहोंके उत्तर बारहवां होता है। फिर तीसरी वेदी के चारों ओर ८ कलश स्थापित कर उनमें पूर्व से आरंभ कर क्रमसे क्षार जल, दूध, दही, घी, ऊख का रस, मधु, दूब का जल (या मीठा जल) और कुशका जल डाले। यह याद रहे कि इन तथा आगे के सभी कलशों को विधिवत् ही स्थापित करेंगे। अतएव लाल सूत से लपेटेंगे और सभी में पञ्च पल्लव या आमके पल्लव डालेंगे। तीनों वेदियों पर सिंहासन रख देंगे। तीसरी वेदी की आठों दिशाओं में जो आठ कलश स्थापित करने को अभी कहे गये हैं उनके लिये क्रमसे ८ मंत्र हैं। इन्हीं से उनकी स्थापना होगी और पहले वालों के लिये तो पहली (इंद्र) ही विधि और मंत्र है। मंत्र ये हैं—ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्। सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मैदेवायहविषा विधेम॥ १॥ आगे के मंत्रों में भी 'कस्मैदेवाय०' इत्यादि ज्यों का त्यों रहेगा। य आत्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बलदायस्यविश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः । यस्यच्छा-
यामृतं यस्यमृत्युः कस्मै० ॥ २ ॥ यः प्राणतो निमिषतो
महित्वैक इद्राजाजगतो बभूव । यईशे अस्यद्विपदश्चतु-
ष्पदः कस्मै० ॥ ३ ॥ यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्यस-
मुद्रंरसया सहाहुः । यस्येमाः प्रदिशो यस्यबाहू कस्मै० ॥
॥ ४ ॥ येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्वस्तभितं येन
नाकः । यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै० ॥५॥ यंक्रंदसी
अवसातस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसारेजमाने । यत्राधिसूर
उदितो विभाति कस्मै० ॥ ६ ॥ आपोह यद्बृहतीर्विश्व-
मायन्गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम् । ततोदेवानां सम-
वर्त्ततासुरेकः कस्मै० ॥ ७ ॥ यश्चिदापो महिनापर्यपश्य-
दक्षं दधाना जनयंतीर्यज्ञम् । यो देवेष्वधिदेव एक आसी-
त्कस्मै० ॥ ८ ॥ इनके सिवाय वेदी से पश्चिम दस कलशों को
विधिवत् स्थापित् कर उनमें मृत्तिका, गोबर, गोमूत्र, भस्म, पंच-
गव्य, दूध, दही, घी, मधु, शक्कर ये दस चीजें क्रम से डाले । इन
दसों के पश्चिम या इनसे उत्तर १४ कलश शुद्ध जलवाले स्थापित
करे । फिर ३५ और भी कलश स्थापित कर उनमें पहले दो में शुद्ध
जल, फिर पांच में पञ्चामृत की दूध, दही, घी, मधु, शक्कर ये पांच
चीजें अलग अलग रहें । उनके बादके पांचमें शुद्ध जल रहे । फिर एक
में सुगन्धयुक्त जल और एक में सर्वौषधि, एकमें पञ्चकषाय और दस
में क्रम से पुष्प, फल, सोने से लगा जल (सोने का जल). गौकी सींग
का जल, धान, हजार छिद्र, सर्वौषधि, पञ्चपल्लव, दूब, नवरत्न ये
विशेषतायें रहें । ३५ में जो शेष दस बच गये हैं उनमें क्रमसे इनके
पल्लव डाले-कदम्ब, सेमर, जामुन, अशोक, पकड़ी, गूलर, वट, श्री-
फल, नागकेसर, पलाश । इसके सिवाय पतला (महीन) खद्दर
सुगन्धित तेल और जौ, साठी, गेहूं, मसूर और श्रीफल के चूर्ण
उबटन के लिये, आंवले का भी चूर्ण, जटामांसी और यक्षकर्दम स्था-
पित करे । इन सबोंका काम पड़ेगा । जिसके ८ भागमें १ भाग कपूर;

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

३ भाग चन्दन और दोदो भाग कस्तूरी और केसर हों उसे कर्दम कहते हैं । इस तरह स्नान सामग्री रख सब से दक्षिण सिंहासन पर मूर्त्ति को रख उसके सामने उसके पश्चिम के, न्यारे कलशों में आखिरी स्थपति कलश लाकर रक्खे और उसमें तीर्थों का आवाहन (७८४) करे और 'कलशस्यमुखे०' (११४) इत्यादि पढ़ कर उस जलको अभिमंत्रित करे और आचार्य बाजे गाजे के साथ उससे देव को स्नान कराके कारीगर को तथा उसके नौकर चाकर को भी वस्त्रादि यजमान दे । फिर आचार्य उस मण्डप के बाहर दसों दिशाओं में दिक्पालों को पूर्व रीति से (६९०) से ही बलि दे बलि देने के समय-ओं त्र्यम्बकं० (७४३) मंत्र पढ़ ले। खीर और सफेद सरसों मिलाकर यह बलि दी जाती है। फिर आचार्य मूर्त्ति के पास आकर दसों दिक्पालों के मंत्रों से (२०९) मण्डप के भीतर दसों दिशाओं में अक्षत और पीली सरसों फेंक कर दिग्बंध करे और मूर्त्ति के सामने चार ब्राह्मणों को बैठा उनसे शांति पाठ कराके उन्हें दक्षिणा दे । फिर स्नान करावे । क्रम से प्रत्येक कलश से नहलाता जावे । यह स्मरण रहे कि मृत्तिका आदि के स्नान के बाद शुद्ध जल से प्रत्येक बार नहलाते जांयगे । इनमें मृत्तिका, कुश, गोबर, गोमूत्र, इन चार के कलशोंसे पहले क्रमसे स्नान कराने के मंत्र पृ०६९४ में हैं। शुद्ध जलसे जो इस बीच बीचमें स्नान होगा वह इस मंत्र से-ॐ समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् । घृतस्य नाम गुह्यं यदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्य नाभिः॥ फिर भस्म वाले कलश के जलसे स्नान करावे-ओं मा नस्तोके तनये मान आयुषिमानो गोषुमानो अश्वेषु मा रिषः । मानो वीरान् रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे॥ फिर शुद्ध जलसे स्नान कराकर चन्दन वाले जल से स्नान करावे । उसका मंत्र 'ओं तत्सवितु०' इत्यादि गायत्री है व्याहृति छोड़ कर (६९५) । इस तरह ६ कलशों के बाद पञ्चदेव के पांच कलशों से स्नान करावे । उन के मंत्र क्रमसे (१) ॐ नमः शम्भवायच० (७२२) । (२) ॐ हंसः शुचिषद्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्तारिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत् । नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जा गोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतम्बृहत् ॥ (३) ॐ यातेरुद्र० (६९७) । (४) ॐ विष्णोरराटमसि० (७२४) । (५) ॐ ब्रह्मजज्ञान० (७२२) । फिर शुद्ध जल से स्नान कराकर पहली वेदीका स्नान पूरा करे । तब–ॐ शतंजीवशरदो वर्द्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमुवसन्तान् । शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतायुषाहविषेमं पुनर्दुः–इस मंत्र से दूब, अक्षत और सफेद पुष्प मूर्त्ति पर चढ़ाकर पीले वस्त्र से आच्छादित करे और दूसरी वेदी पर–ॐ भद्रंकर्णेभिः० (३७७) मंत्र से सिंहासन रख उस पर पूर्वाग्र कुश–ॐ स्तीर्णं बर्हिः सुष्टुरीमा जुषाणोरुपथ प्रथमानं पृथिव्याम् । देवेभिर्युक्तमदितिः सजोषाः स्योनं कृण्वाना सुविते दधातु–इसे पढ़कर रक्खे और उस पर मूर्त्ति को 'ॐ' कहकर पूर्वमुख स्थापित करे । आचार्य उत्तर या पूर्व मुख होकर केसर में रंगा सूत मूर्त्ति में लपेट कर मूर्त्ति के नेत्र खोले । पहले सोने या तांबे का पात्र 'ॐ हिरण्यगर्भः०' (७८८) मंत्र पढ़कर हाथ में ले और उसमें मधु और घी रख दोनों को मिलाकर–ॐ मधुवाता० (६९५) तथा–ॐ घृतवती० (६९५) दो मंत्रों से उसका अभिमंत्रण करे । इसके बाद सोने की शलाका (सूई या तार) लेकर उसीसे–ॐ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः–यह पढ़कर दोनों आंखों के चिन्ह बनावे और ऊपर नीचे की पलकें 'ॐ आकृष्णेन०' (२०५) मंत्र से बनावे तथा मध्य के तिहाई स्थान में गोल पुतली (कनीनिका) बनावे । इस समय दो घड़ी वहां से आचार्य के सिवाय सभी हट-जावें । फिर तुरन्तही सोना, खीर, पकवान, आईना और फल सामने लाकर देव को दिखलावे । पुनः कारीगर अपने हथियार से खोदकर मूर्त्ति में आँख का आकार ठीक ठीक बना दे । तब आचार्य मधु और घी उसमें लगाकर 'ॐ इमंमे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

स्तोमं सचता परुष्ण्याः।असिक्न्यामरुद्वृधे वितस्तयार्जी-
कीये शृणुह्यासुषोमया—इस मंत्र से उन आंखों पर जल डाल-
कर पूर्ववत् दक्षिणवेदी की ही तरह ग्यारह कलशों से यहां भी क्रमशः
स्नान करावे । यदि कई मूर्त्तियां हों तो बार बार नेत्र बनवा कर स्नान
करावे। इसीलिये पहली बार थोड़ा ही थोड़ा जल खर्च करे। स्नान के बाद
मधु घी वाला पात्र और स्नानवस्त्रके सहित शलाका कारीगर को और
एक धेनु सोने के साथ आचार्यको यजमान दे। इसके बाद मूर्त्तिको
ॐ उत्तिष्ठब्रह्मणस्पते० (७८७) से उठाकर—ॐ भद्रंकर्णेभिः०
(३७७) मंत्र से तीसरी वेदी के सिंहासन पर रख कर वेदीकी पश्चिम
दिशाकी दूसरी पंक्ति में स्थापित शुद्ध जल के १४ कलशों में से पहले
चार से क्रमशः स्नान करावे । चारों के मंत्र अलग अलग वहीं
जो मूलशांति के अभिषेक में 'ओं समुद्रज्येष्ठा०' (६१८)
इत्यादि चार हैं । वहीं देख लेना होगा । इसके बाद दही, दूध, हल्दी
और केसर मिले अक्षत प्रतिमापर चढ़ाकर, साठी के पीठे के पंच
या नौ दीपों से आरती करके—ॐ अन्नात्परिस्रुतो० (२०६)
अक्षत—ॐ श्रीश्चते० (२०७) से पुष्प और—ॐ धूरसि धूर्व०
(७९८) से धूप चढ़ाकर प्रार्थना करे—ओं नमस्तेऽर्चे सुरेशाय
प्रकृते विश्वकर्मणः । प्रभाविताशेषजगद्धात्रि तुभ्यं नमो
नमः ॥ १ ॥ त्वयि संपूजयामीशं नारायणमनामयं
रहिताशेषदोषैश्च ऋद्धियुक्ता सदा भव ॥ २॥ इसके बाद
प्रतिमा के दहिने हाथ में आचार्य या मूर्त्तिके बित्ताभर सफेद धागा
को पूर्ववत् मूल मंत्र या—यदाबध्नन्दाक्षाय० मंत्र से बाँधे और कहे
ॐ सर्वसत्त्वमयं शान्तं परं ब्रह्मसनातनम् । त्वामेवाहं
करिष्यामि त्वं वंद्यो भवते नमः ॥ फिर शेष दश शुद्ध जल के
कलशों में से चार से क्रमशः स्नान करावे । चारों के मंत्र क्रमशः
ॐ इदमापः प्रवहतावद्यं च मलं च यत् । यच्चाभिदुद्रो-
हानृतं यच्चशेपे अभीरुणम् ॥ आपो मा तस्मादेनसः पवि-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalc

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मानश्च मुञ्चतु ॥ १ ॥ ॐ आपो देवीः प्रतिगृभ्णीतमस्मै तस्योने कृणुध्वं सुरभा उलोके । तस्मैनमन्ताञ्जनयः सुपत्नीर्मातेव पुत्र बिभृताप्स्वेनत् ॥ २॥ ॐ इममेवरुण० (२०९) ॥ ३ ॥ ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा० (१४८) ॥ ४ ॥ इसके बाद उस वेदी के पश्चिम पहली पंक्ति में जो १० कलश मृत्तिका, गोबर आदि युक्त रक्खे हैं उनसे स्नान करावे । पहले का मंत्र-ओं अग्निर्मूर्द्धा० (६९४) । इसके बाद पूर्ववत्-समुद्रादूर्मि० मंत्र से और आगे भी बार बार शुद्ध जल से स्नान करावे ॥ १ ॥ फिर गोबरवाले दूसरे से-ॐ गन्धद्वारां० (६९५) से नहलाकर-ॐ वरुणस्योत्तम्भनम० (७१७) से शुद्ध जल से नहलावे ॥२॥ गोमूत्र वाले से-ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं० (६९५) से कराके-ॐ आपोहिष्ठा० (७९) से शुद्ध जल से ॥ ३ ॥ भस्म कलश से-ओं प्रसद्य भस्मना योनिमपश्चपृथिवीमग्ने । संसृज्यमातृभिष्टं ज्योतिष्मान्पुनरासदः-इससे स्नान के बाद-ॐ योवः शिवतमो० (७९) से शुद्ध जल से ॥ ४ ॥ पञ्चगव्य से-ओं पयः पृथिव्यां० (६९५) से और शुद्ध जल से 'ॐ देवीरापो अपान्नपाद्योव ऊर्मिहविष्य इन्द्रियावान्मदिन्तमः । तेदेवेभ्यो देवत्रा दत्तशुक्रपेभ्यो येषांभागस्थ स्वाहा-यह मंत्र पढ़कर ॥ ५ ॥ दूध वाले छठें से-ॐ आप्यायस्वसमेतु० (६९५) से और 'ॐ तस्मा अरंगमाम० (७९) से शुद्ध जल से ॥६॥ दही वाले सातवें से-ओं दधिक्राव्णः० (६९५) से और 'ॐ युञ्जानः प्रथमं मनस्तत्त्वाय सविताधियः । अग्नेर्ज्योतिर्निचाय्य पृथिव्या अध्याभरत्-मंत्र से शुद्धोदकसे ॥७॥ घी वाले आठवें से-ॐ घृतवती० (६९५) से और 'ॐ देवस्य त्वा सवितुः०-(२२५) शुद्धोदक कसे ॥ ८ ॥ मधुवाले नवें से-ॐ मधुवाता०

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

(६९५) से और-ॐ आपोऽस्मान्मातर० (७६१) से शुद्धोदक से ॥ ९ ॥ शक्कर वाले दसवें से 'ओं आयंगौ० (६९५) से-ओं आपोहयद्बृहती० (७८९) से शुद्धोदक से ॥१०॥ इस तरह दस कलशों से स्नान करावे । मृत्तिका वगैरः उन कलशों में किस हो यह भी लिखा है-मृत्तिका ८ पल, गोबर ७ पल, गोमूत्र १२ पल भस्म १ मुट्ठी, पञ्चगव्य ३ पल, दूध १६ पल, दही २० पल, घी ७ पल मधु ३ पल, शक्कर ३ पल । पल ४ रुपये भर को कहते हैं। इसके बाद महीन खद्दर से मूर्त्तिको पोंछे-ॐ यज्ञायज्ञावो० (६९४) इस मंत्र से फिर सुगन्धित तेल लगाकर जौ, धान, गेहूं आदि के चूर्ण उसमें लगावे ॐ द्रुपदादिवं मुमुचानः स्विन्नः स्नातो मलादिव । पूतं पवित्रेण वाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः-यह मंत्र पढ़कर । फिर-ॐ ते रुद्र० (६९७) से आंवले का चूर्ण लगा कर पहले गर्म और फिर ठंडे जल से स्नान कराके यक्षकर्दम भी-ॐ याते रुद्र०-मंत्र से लगावे और उसके बाद जटामांसी का भी लेप करे । फिर ३५ कलशों में जो पहले के दो शुद्ध जलवाले हैं उनसे स्नान कराने के मंत्र ये हैं (१) ॐ मानस्तोके० (७९०) । (२) ॐ प्रतद्विष्णुस्तवतेवीर्येण मृगोनभीमः कुचरोगिरिष्ठाः । यस्योरुषुत्रिषु विक्रमणेष्वधिक्षियन्ति भुवनानि विश्वा ॥ इसके बाद पञ्चामृत से पांच कलशों से क्रम से स्नान करावे । दूध वालेसे-ॐ पयः पृथिव्यां० (६९५) से । फिर शुद्धोदक से स्नान कराके दही वाले दूसरे से ॐ दधिक्राव्णो० (६९५) से कराकर शुद्धोदक से । इसी तरह आगे भी शुद्धोदकसे कराता जावे । घी वाले तीसरे से-ॐ घृतं घृतपावानः पिबतुवसांवसापावानः पिबतान्तरिक्षस्य हविषः सिस्वाहा । दिशः प्रदिश आदिशो विदिश उद्दिशोदिशो यः स्वाहा-इस मंत्र से करावे । मधुवाले चौथे से-ॐ मधुवाता० (६९५) से कराके शक्कर वाले पांचवें से-ॐ अपांरसमुद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain, Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यसं सूर्ये सन्तं समाहितम् । अपांरसस्य योरसस्तंवो गृह्णाम्युत्तममुपयामगृहीतोसीन्द्रायत्वा जुष्टं गृह्णा-म्येषते योनिरिन्द्रायत्वा जुष्टतमम्–मंत्र से कराके शुद्ध जल से करावे । शुद्ध जल के लिये वही १४ कलशों में के शेष हैं । उन्हीं से जल ले । फिर ३५ में पञ्चामृत वालों के बाद पांच शुद्ध जल वाले हैं । उन से स्नान कराने के मंत्र क्रमसे यह हैं–(१) ॐ वरुण-स्यांत्त० (७१७) ॥ (२) ॐ संते पयांसि समुयन्तु वाजाः संवृ-ष्णान्यभिमातिषाहः ॥ आप्यायमानो अमृतायसोम विविश्रवांस्युत्तमानि धिष्व ॥ (३) ॐ आप्यायस्वम-दिन्तमसोमावश्वेभिरंशुभिः । भवानः सुप्रथस्तमः स-खावृधे ॥ (४) ॐ तत्त्वायामि वरुण० (१४८) (५) ॐ अप्स्वग्ने संधिष्टवसौषधीरनुरुध्यसे । गर्भे संजायसे पुनः ॥ तब उसके बाद के सुगन्धित जल वाले १३ वें से स्नान करावे-ॐ गन्धद्वारा० (६९५) ॥ पंचकषायवाले १४ वें से–ॐ यज्ञा-यज्ञा० (६९४) से नहला कर सर्वौषधि वाले पन्द्रवें से नहलावे-ॐ याः औषधीः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा । मनैनु बभ्रणामहं शतं धामानि सप्त च ॥ तब शेष २० में जो पुष्प फलादि वाले पहले दस हैं उनसे क्रमशः स्नान करावे । मंत्र ये हैं–ॐ औषधीरितिमातरस्तद्वोदेवीरुपब्रुवे । सनेयमश्वं-गावास आत्मानं तव पूरुष ॥ १ ॥ ॐ याः फलिनीः० (६९५) ॥ २ ॥ ॐ हिरण्यगर्भः० (६९५) ॥ ३ ॥ ॐ हविष्मतीरिमा० (६९६) ॥ ४ ॥ ॐ धान्यमसि० (१४६) ॥ ५ ॥ ॐ सहस्राणि सहस्रशोबाह्वोस्तवहेतयः । तासा-मीशानो भगवः पराचीना मुखाकृधि ॥ ६ ॥ ॐ या औषधीः० ॥ ७ ॥ ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो० (२०८) ॥

CC-iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

॥ ८ ॥ ॐ काण्डात्काण्डात्प्र० (१४७) ॥ ९ ॥ ॐ अष्टौ व्यख्यत्ककुभः पृथिव्या स्त्रीधन्वयोजना सप्तसिन्धूनु। हिरण्याक्षः सवितादेव आगाद्दधद्रत्नादाशुषे वार्याणि ॥ १० ॥ कलशों का क्रम न छूटे । पुष्पवाला कलश पहला और रत्नवाला अन्तिम है । क्रम छूटने से मंत्र में उलट फेर हो जायगा। इसके बाद तीर्थ के जल से स्नान करावे । यह कलशों से निराला ही जल है । इसका मंत्र 'ॐ इमंमे गंगे यमुने० (७२) है । अब ३५ में केवल दस रह गये जिनमें दस पल्लव अलग अलग हैं मगर उनसे स्नान कराने से पहले वहीं के आठों कोनों के समुद्र संबंधी आठ कलशों से स्नान करा लेना होता है । वे पूर्व से आरंभकर अग्नि, दक्षिण आदि दिशाओं में हैं । अतएव पूर्व से ही शुरू करना चाहिये जो नमकीन जल वाला है और अन्त में कुश के जल दर्भ से करना होगा । उनके मंत्र क्रम से ये हैं-(१) ॐ कयाश्चित्र० (२०६) ॥ (२) ॐ आप्यायस्वसमेतु० (६९५) ॥ (३) ॐ दधिक्राव्णो० (६९५) ॥ (४) ॐ घृतवतीभुवना० (६९५) ॥ (५) ॐ पयः पृथिव्यां० (६९५) ॥ (६) ॐ देवी बर्हिर्वारितीनां देवमिन्द्रमवर्द्धयत् । स्वासस्थमिन्द्रेण सन्नमन्या बर्हीष्यभ्यभूद्रसुवने वसुधेयस्य वेतुयज । (७) ॐ स्वादिष्ठयामदिष्ठया पवस्व सोमधारया । इन्द्रायपातवेसुतः ॥ (८) ॐ सरस्वतीयोन्यां गर्भमन्तश्विभ्यां पत्नीसुकृतं बिभर्त्ति । अपांरसेन वरुणो सोमेनेन्द्रं श्रियै जनयन्नप्सुराजा ॥ अब ३५ में जो शेष दस कलश पल्लवों वाले हैं और जो दिक्पाल कलश कहाते हैं उनसे क्रमशः स्नान करावे । पहले में कदम्ब के और अन्तिम में पलाश के पल्लव हैं । उनके मंत्र क्रम से ये हैं—(१) ॐ त्रातारमिन्द्रं० (२०९) ॥ (२) ॐ त्वन्नो अग्नेवरुणस्य० (१९४) ॥ (३) ॐ सुगन्नः पन्थां प्रदिशन्न एहि ज्योतिष्मध्येह्यजरान्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आयुः । अपैतुमृत्युरमृतम्म आगाद्वैवस्वतो नो अभयं कृणोतु ॥ (४) ॐ अमुन्वन्तमयजमानमिच्छ स्तेनस्येत्यामन्विहितस्करस्य । अन्यमस्मदिच्छसात इत्त्यानमो देविनिर्ऋते तुभ्यमस्तु ॥ (५) ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणा० (१४८) ॥ (६) ॐ आनो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुपयाहियज्ञम् । वायो अस्मिन्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥ (७) ॐ वयं सोमव्रते तवमनस्तनूषुबिभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ॥ (८) ॐ तमीशानं जगत० (२१०) ॥ (९) ॐ नमोऽस्तु सर्पेभ्यो० (२०८) ॥ (१०) ॐ ब्रह्मजज्ञानं० (२०८) ॥

इस प्रकार सभी स्नान कराके गीत, बाजा, जयजयकार और मंगल पाठ के साथ दूसरे सोलह, आठ ४ या १ कलश से पुरुषसूक्त से स्नान करावे । इस तरह अभिषेक के बाद महीन खद्दर से, जिसमें सुगन्ध लगी हो, अच्छी तरह पोंछ कर फिर-ॐ विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । संबाहुभ्यां धमतिसंपतत्रैर्द्यावाभूमीजनयन्देव एकः-इसमंत्र से देवके पांव,नाभि,छाती और सिर को स्पर्श कर इसमंत्र से आवाहन करे-ॐ एह्येहि भगवन् विष्णो लोकानुग्रहकाम्यया । यज्ञभागं गृहाणेमं वासुदेव नमोऽस्तुते ॥ यदि शिव हों तो 'विष्णो' और 'वासुदेव' की जगह 'रुद्र' और 'महादेव' पढ़ दे । इसी तरह अन्यदेवताओं में भी करना होगा । इसके बाद पूजा करे । ॐ हिरण्यवर्णा० (६४७) से पाद्य और—ॐ हिरण्यवर्णा० से ही अर्घ्य देकर फिर-ॐ विभ्राड्बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविहुतम् । वातजूतो यो अभिरक्षतित्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति-से आचमन दे । ॐ त्र्यम्बकं० (७०३)

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

से चन्दन, ॐ वेदाहमेतं० (७२५) से जनेऊ, ॐ युवासु-वासा० (३२०) से वस्त्र देकर आचमन करावे। ॐ इदं वि-ष्णु० (२०८) से पुष्प, ॐ धूरसिधूर्व धूर्वन्तं धूर्वतं यो-स्मान्धूर्वति तंधूर्वयंवयं धूर्वामः। देवानामसिवह्नि-तमं सस्नितमं पप्रितमं जुष्टतमं देवहूतमम्-से धूप, ॐ चन्द्रमा मनसो० * से दीप और-ॐ अन्नपतेऽन्नस्य-नो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः। प्रप्रदातारं तारिष ऊर्जन्नो-धेहि द्विपदे चतुष्पदे-से नैवेद्य देकर आचमन करावे। फिर तांबूल, फलादि वस्तुएं समर्पित कर आरती करे और-ॐ यज्ञेन यज्ञ० * से पुष्पांजलि देकर पुरुषसूक्त से स्तुति करे और स्नान के वस्त्रादि नैवेद्य सहित मूर्त्ति बनानेवाले को देकर स्नान-क्रिया पूर्ण करे। * चिन्ह के मंत्र पुरुषसूक्त के हैं।

तब शय्या में सुलाने का यत्न करे। इसे शय्याऽधिवासन कहते हैं। इससे पहले मण्डप के एक कोने में धान की सात ढेरियों में मूर्त्ति को रख ऊपर से धान से ही ढंक देते और पुरुषसूक्त पढ़ते हैं। यह बात किसी किसी पद्धति में लिखी है, अस्तु पूर्वमुख के मन्दिर के अग्निकोन, पश्चिममुख वाले के वायुकोन उत्तरमुख के ईशान और दक्षिणमुख के नैर्ऋत्यकोन में शय्या तोरण आदि के साथ बिछी रहती है और उसी को वेदी पर डाल कर उस पर प्रतिमा को सुलाते हैं। पहले स्नान के स्थान से प्रतिमा को उठाकर रथ या सवारी में रखने से पहले पुरुषसूक्त से स्तुति करते हैं। फिर-ॐ उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते० (७८७) और-ॐ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द त्यज निद्रां जगत्पते। त्वयि सुप्ते जगत्सुप्तमुत्थिते चोत्थितं जगत्-इन दो मंत्रों से उठाकर 'ॐ रथेतिष्ठन्नयति० (७८६) से सवारी पर चढ़ाकर बाजे और गीत आदि के साथ मन्दिर की प्रदक्षिणा कराके प्रधान मण्डप के पश्चिम द्वार पर लाते और-ओं आकृष्णेन० (२०५) से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भीतर लाकर प्रधान (बीच की) वेदी से पश्चिम स्थापित पीढ़े पर पूर्वमुख स्थापित कर मधुपर्क देते हैं । उसकी विधि यह है कि-ओं पुरुष एवेदꣳ सर्वं० * से पाद्य और-ॐ एतावानस्य महिमा० * से अर्घ्य देकर-ॐ अन्नपते० से मधुपर्क देते हैं । फिर प्रधान वेदी के सर्वतोभद्रपर धान की राशि करके उस पर सार काठ की शय्या पूर्व सिरहाना करके डाले । उसपर तोसक, दो तकिये और चद्दर बिछादे । उसके ऊपर अक्षतों से स्वस्तिक का आकार बनाकर एवं पूर्वाग्रकुश ऊपर से बिछाकर पुष्प फैलादे । सुगन्धित जल छिड़क मलय चन्दन और अगर की धूप देकर फूल की मालायें डाले और हो सके तो ऊपर चन्दोवा टांग दे । यदि विष्णु की प्रतिष्ठा हो तो शय्या के चारों ओर क्रम से इस तरह पूजा करे । पूर्व-ॐ विष्णवेनमः । दक्षिण-ॐ मधुसूदनाय नमः । पश्चिम-ओं त्रिविक्रमाय नमः । उत्तर-ओं वामनाय नमः । अग्निकोन में-ओं श्रीधराय नमः । नैर्ऋत्य-ओं हृषीकेशाय नमः । वायव्य-ओं पद्मनाभाय नमः । ईशान-ओं दामोदराय नमः । इसी क्रम से पूजा करे । शिवप्रतिष्ठा हो तो इन आठों की जगह इसी क्रम से इन की पूजा करे-(१) ओं शर्वाय नमः (२) ओं पशुपतये नमः (३) ओं उग्राय नमः (४) ओं रुद्राय नमः (५) ओं भवाय नमः । (६) ओं ईश्वराय नमः (७) ओं महादेवाय नमः (८) ओं भीमायनमः । पूजा के बाद तीन परिक्रमा करके विष्णु को शय्या पर-ओं नमो नारायणाय-पढ़कर और शिवको-ओं नमः शिवाय । या-ओं नमः शंभवाय० (७२२) पढ़ कर पूर्व ओर सिर कर सुलादे और तीन रेशमी या शुद्ध कपास के वस्त्र (खद्दर) प्रतिमा पर ओढ़ा दे । सिरहाने निद्रा कलश की स्थापना, उस में जल के साथ सोना डाल कर और ऊपर से वस्त्र से ढंककर ' ओं आपोंदेवी

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

प्रतिगृभ्णीत० (७९३)मन्त्र पढ़ कर करे । तब-ओं आप्या-यस्व मदिन्तम० (७९५) पढ़कर मधु, घी उस प्रतिमा में लगावे और-ओं यातेरुद्रशिवा० (६९७) मन्त्र से तिल तथा लाल का चूर्ण (उबटन) लगावे और चन्दन, पुष्पादि से मूल मंत्र से पूजा करे। फिर-ओं बृहस्पते परिदीया रथेन रक्षोहामित्रा अपबाधमानः । प्रभंजन्त्सेनाः प्रमृणोयुधाजयन्नस्माकमेद्ध्यवितारथानाम्-मन्त्र से सफेद चद्दर ओढ़ने के लिये अर्थात् ओढ़ादे । सामने चार दीपक जला करें । ओं विश्वतश्चक्षु० मन्त्र से देव के पांव, नाभि, छाती और सिर का स्पर्श करे और पांव की ओर खड़ाऊं रख दक्षिण ओर छाता, पंखा चमर, इधर उधर (बगल में) दो शान्तिकुंभ नाम के कलश और सामने आसन, आईना, घंटा, भोजन के पदार्थ और पात्रादि रखदे । इसके उपरान्त देव की रक्षा के लिये चारों ओर एक पंक्ति में भस्म बिछाकर उसके बाद दूसरी पंक्ति में कुश और तीसरी में तिल बिछावे । ये तीनों खाई की जगह हैं । मण्डल के बाहर दसों दिशाओं में पूर्ववत् दिक्पालों को बलि देकर सब प्राणियों को भी साथ ही साथ एक बलि देता जावे । दिक्पालों के मन्त्र तो लिखे ही हैं । प्राणियों के लिये एक ही मन्त्र सब जगह रहेगा । वह ऐसा है—ओं एतद्दिग्वासिभ्यो दिक्पतिभूताधिपतिदिग्रुद्रदिग्गणपतिदिग्मातृदिक्क्षेत्रपालेभ्यो नमः ओं त्र्यम्बकं० ॥ बलि दे चुकने पर आचमन करके कुण्ड के पास आकर तिल या जौ से १००८, १०८, २८ या ८ आहुतियां प्रत्येक देवता के लिये दे । आहुति का मन्त्र विष्णु के लिये-ओं पराय विष्णवात्मने स्वाहा इदं विष्णवे नमम । शिव के लिये-' ओं पराय शिवात्मने स्वाहा इदं शिवाय नमम ॥ इसी तरह दूसरे देवताओं के लिये भी ' गणेशात्मने ' इत्यादि लगा सकते हैं । जिसकी प्रतिष्ठा हो उसी का होम है । अनेक की प्रतिष्ठा हो तो प्रत्येक का होम होगा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होम के बाद प्रतिमा में न्यास करते हैं । आगे जिन जिन अङ्गों का नाम लिखा है उन उनको ही बोलकर प्रतिमा के उन अङ्गों को छूते हैं । प्रणवन्यास-ओं अं पादयोः, ओं उं हृदये, ओं मं ललाटे ॥ १ ॥ व्याहृतिन्यास-ॐ भूः पादयोः, ओं भुवः हृदये, ओं स्वः ललाटे ॥ २ ॥ मातृकान्यास- मातृका अक्षरों को ही कहते हैं । आगे भी सर्वत्र शुरू में 'ॐ' लगाता जावे- ॐ अं तालुनि (तालु) । आं मुखे । इं दक्षिणनेत्रे । ईं वामनेत्रे । उं दक्षिणकर्णे । ऊं वामकर्णे । ऋं दक्षिणगण्डे (गाल) । ॠं वामगंडे । ऌं दक्षिणनासापुटे (नासिका का छिद्र) । ॡं वामनासापुटे । एं ऊर्ध्वोष्ठे (ऊपरी ओठ) । ऐं अधरोष्ठे (नीचे का ओठ) । ओं ऊर्ध्वदंतेषु । औं अधोदन्तेषु । अं ललाटे । अः जिह्वायाम् । यं त्वचि (त्वचा) । रं चक्षुषोः । लं नासिकायां । वं दशनेषु (दांत) । शं श्रोत्रयोः । षं उदरे । सं कटौ (कमर) । हं हृदये । क्षं नाभ्याम् । लं लिंगे । पं फं बं भं मं दक्षिणबाहौ (दहिनी बांह) । तं थं दं धं नं वामबाहौ । टं ठं डं ढं णं दक्षिणजंघायाम् । चं छं जं झं ञं वामजंघायाम् । कं खं गं घं ङं सर्वांगुलिषु (सभी अंगुलियां) ॥ ३ ॥ ग्रहादिन्यास-ओं रविचन्द्राभ्यां नमो नेत्रयोः । भौमाय नमः हृदये । बुधाय नमः स्कन्धे (कन्धा) । आगे भी नाम के आगे और अंगों से पहले सर्वत्र 'नमः' बोलता जावे । बृहस्पतये० जिह्वायाम् । शुक्राय० लिंगे । शनैश्चराय० ललाटे । राहवे० पादयोः । केतवे० केशेषु (बाल) । नक्षत्र- रोहिणीभ्यो० हृदये । मृगशिरसे० शिरसि । आर्द्रायै० केशेषु । पुनर्वसवे० ललाटे । पुष्याय० मुखे । आश्लेषाभ्यो० नासिकायाम् । मघा-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

भ्यो० दन्तेषु । पूर्वाफल्गुनीभ्यो० दक्षिणकर्णे । उत्तरा-
फल्गुनीभ्यो० वामकर्णे । हस्ताय० हस्तयोः । चित्रायै०
दक्षिणभुजे । स्वात्यै० वामभुजे । विशाखानुराधाभ्यो०
स्तनयोः (दोनों स्तन) । ज्येष्ठाभ्यो० दक्षिणकुक्षौ (दहिनी
बगल) । मूलाय० वामकुक्षौ । पूर्वाषाढाभ्यो० कटिपार्श्व-
योः (कमर की बगलें) । उत्तराषाढाभ्यो० लिंगे । श्रवण-
धनिष्ठाभ्यो० वृषणे (अण्डकोष) । शताभिषग्भ्यो० नेत्रे ।
पूर्वाभाद्रपदोत्तराभाद्रपदाभ्यो० ऊर्वोः (दोनों जांघें) । रे-
त्यश्विनीभ्यो० जंघयोः । (घुटने से नीचे) । भरणीकृत्ति-
काभ्यः० पादयोः ॥ ऋषि आदि-ध्रुवाय० नाभ्याम् (नाभि)
सप्तर्षिभ्यः० कंठे । मातृकामंडलाय० कटिदेशे (कमर) । वि-
ष्णुपदेभ्यः० पादयोः । नागवीथ्यै० अंगवीथ्यै० वनमालायाम्
(जो वनमाला का आकार गले में खुदा होता है) । ताराभ्यो०
रोमकूपेषु (रोमछिद्र) । अगस्त्याय० कौस्तुभे (कौस्तुभ
मणि का चिन्ह) ॥ ४ ॥ कालन्यास-चैत्राय० शिरसि । वै-
खाय० मुखे । ज्येष्ठाय० हृदये । आषाढाय० कंठे । भा-
णाय० स्तनयोः । भाद्रपदाय० उदरे । आश्विनाय० कटि-
देशे । कार्त्तिकाय० मार्गशीर्षाय० ऊर्वोः (दोनों जांघें) ।
पौषाय० माघाय० जंघयोः (घुटने के नीचे दोनों पांव में) ।
फाल्गुनाय० पादयोः । संवत्सराय० परिवत्सराय० इद्व-
वत्सराय० अनुवत्सराय० दक्षिणोर्ध्वात्प्रादक्षिण्येन चतु-
र्षुबाहुषु (ऊपर वाली दहिनी से लेकर चारों बाहें) । पर्वतेभ्यो०
सन्धिषु (जोड़) । ऋतुभ्यो० लिंगे । अहोरात्रेभ्यो० अ-
स्थिषु (हड्डियां) । क्षणाय० लवाय० काष्ठायै० रोमसु ।
कृताय० मुखे । त्रेताय० हृदये । द्वापराय० नितम्बे (चूतड़) ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कलियुगाय० पादयोः । मन्वन्तरेभ्यो० बाह्वोः । पराय० परार्द्धाय० जंघयोः । महाकल्पाय० शरीरे । उदगयनाय० दक्षिणायनाय० पादयोः । विषुवते० सर्वांगुलीषु ॥ ५ ॥ वर्णन्यास–ब्राह्मणाय० मुखे । क्षत्रियाय० हस्तयोः । वैश्याय० ऊर्वोः (जांघें) । शूद्राय० पादयोः । संकरजेभ्यो० पादाग्रे (पांव का अग्र भाग) । अनुलोमजेभ्यो० सर्वांगसन्धिषु (सभी जोड़) । गोभ्यो० मुखे । अजाविभ्यो० हस्तयोः । ग्रामारण्यपशुभ्यो० सर्वत्र (सब शरीर) ॥ ६ ॥ जलन्यास-मेघेभ्यो० केशेषु । अभ्रेभ्यो० रोमसु । नदीभ्यो० सर्वगात्रेषु । समुद्रेभ्यो० नमः कुक्षौ (बगल) ॥ ७ ॥ विद्यान्यास–ऋग्वेदाय० शिरसि । यजुर्वेदाय० सामवेदाय० भुजयोः । सर्वोपनिषद्भ्यो० हृदये । इतिहासपुराणेभ्यो० जंघयोः । अथर्वांगिरसेभ्यो० नाभौ । कल्पसूत्रेभ्यो० पादयोः । व्याकरणाय० मुखे । तर्केभ्यो० कंठे । मीमांसानिरुक्ताभ्यां० हृदये । छन्दोज्योतिःशास्त्रेभ्यो० नेत्रयोः । गीतभूतशास्त्रेभ्यो० श्रोत्रयोः । आयुर्वेदाय० धनुर्वेदाय० दक्षिणवामभुजयोः । योगशास्त्रेभ्यो० हृदये । नीतिशास्त्रेभ्यो० पादयोः । वश्यतंत्राय० ओष्ठयोः ॥ ८ ॥ वैराजन्यास–दिवे० मूर्ध्नि । सूर्यचन्द्रलोकाभ्यां० नेत्रयोः । अनिललोकाय० घ्राणे (नासिका) । व्योम्ने० नाभौ । समुद्रेभ्यो० बस्तिदेशे (पेशाब की जगह) । पृथिव्यै० पादयोः ॥ ९ ॥ देवयोनिन्यास–हिरण्यगर्भाय० शिरसि । कृष्णाय० केशेषु । रुद्राय० ललाटे । यमाय० भ्रुवोः (भौं) । अश्विभ्यां० कर्णयोः । वैश्वानराय० मुखे । मरुद्भ्यो० घ्राणे । वसुभ्यो० कंठे । रुद्रेभ्यो० दंते । सरस्वत्यै० जिह्वायाम् । इन्द्राय० बलये० भुजयोः । प्रहा-

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

दाय० विश्वकर्मणे० स्तनयोः । (सर्वत्र पहिले दहिना, फिर बायां अङ्ग छूते हैं) । नारदाय० अनन्तादिभ्यो० कुक्षयोः (दोनों बगल) । वरुणाय० हस्तयोः । मित्राय० पादयोः । विश्वेभ्यो देवेभ्यो० ऊरुमध्ये (जांघ) । पितृभ्यो० जानुमध्ये (घुटने) । यक्षेभ्यो० जंघयोः (घुटने के नीचे) । राक्षसेभ्यो० गुल्फयोः (एड़ी की गांठ) । पिशाचेभ्यो० पादयोः । असुरेभ्यो० पादांगुलीषु (पांव की अंगुली) । विद्याधरेभ्यो० पार्ष्ण्योः (एड़ी) ग्रहेभ्यो० पादतलयोः (तलवा) । गुह्यकेभ्यो० गुदे । पूतनादिभ्यो० नखेषु । गन्धर्वेभ्यो० ओष्ठयोः । कार्तिकेयाय० गणेशाय० कटिपार्श्वयोः (कमर की बगलें) ॥१०॥ मूर्त्तिन्यास-मत्स्याय० मूर्ध्नि (चोटी) । कूर्माय० पादयोः । नृसिंहाय० ललाटे । वराहाय० जंघयोः । वामनाय० मुखे । परशुरामाय० हृदये । रामाय० बाहुषु । कृष्णाय० नाभौ । बुद्धाय० बुद्धौ । कल्किने० जान्वोः (घुटना) । केशवाय० शिरसि । नारायणाय० मुखे । माधवाय० ग्रीवायाम् (गला) । गोविन्दाय० बाह्वोः (दोनों बाहें) । विष्णवे० हृदये । मधुसूदनाय० पृष्ठे । त्रिविक्रमाय० कट्याम् (कमर) । वामनाय० जठरे । श्रीधरहृषीकेशाभ्यां० जंघयोः । पद्मनाभाय० गुल्फयोः (एड़ी के ऊपर की गांठ) । दामोदराय० पादयोः ॥ ११ ॥ क्रतु (यज्ञ) न्यास—अश्वमेधाय० मूर्ध्नि । (मूर्द्धा या बीचस्तक) । नरमेधाय० ललाटे) राजसूयाय० मुखे । गोमेधाय० कंठे । द्वादशाहाय० हृदये । अहीनेभ्यो० नाभौ । सर्वजितेभ्यो० सर्वमेधाय० कटिदेशयोः (कमर के दोनों ओर) । अग्निष्टोमाय० लिंगे । अतिरात्राय० वृषणयोः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(अंडकोश) । आप्तोर्यामाय० ऊर्वोः । षोडशिने०जान्वोः (घुटने) । उतत्थ्याय० वाजपेयाय० जंघयोः । अत्यग्निष्टोमाय० चातुर्मास्याय० बाह्वोः । सौत्रामणये० हस्तेषु । पश्विष्टिभ्यो० अंगुलीषु । दर्शपौर्णमासाभ्यां० नेत्रयोः । सर्वेष्टिभ्यो० रोमकूपेषु । स्वाहाकाराय० वषट्काराय० स्तनयोः । पंचमहायज्ञेभ्यो० पादांगुलीषु । दक्षिणाग्नये० हृदये । आहवनीयाय० मुखे । गार्हपत्याय० नाभौ । वैश्वे० उदरे । प्रवर्ग्याय० भूषणेषु । सवनेभ्यो० पादयोः । इध्मेभ्यो० बाहुषु । दर्भेभ्यो० केशेषु ॥१२॥ गुणन्यास०—धर्माय० मूर्ध्नि । ज्ञानाय० हृदये । वैराग्याय० गुह्ये (गुदा) । ऐश्वर्याय० पादयोः ॥ १३ ॥ विष्णुप्रतिष्ठामें आयुधन्यास्य—खड्गाय० शिरसि । शार्ङ्गाय० मस्तके (मध्य सिर) । मुसलाय० हलाय० भुजयोः । चक्राय० नाभौ, जठरे (पेट) । पृष्ठे । शंखाय० लिंगवृषणयोः । गदायै० जंघयोः जान्वोश्च (जंघा, घुटना) । पद्माय० गुल्फयोः पादयोः ॥ शिवप्रतिष्ठा में-वज्राय० शिरसि । दण्डाय०मस्तके । खड्गाय० पाशाय० भुजयोः । ध्वजायै० नाभौ । अंकुशाय० लिंगवृषणयोः । त्रिशूलाय० जंघयोः जान्वोः । पद्माय० गुल्फे, पादयोः ॥ सूर्यका भी इसी तरह । दुर्गाका-त्रिशूलाय०शिरसि । खड्गाय० मस्तके । चक्राय० बाणाय० भुजयोः । शक्तये० नाभौ । खेटकाय० गुह्ये । चापाय० जंघयोः । पाशाय० जान्वोः । अंकुशाय० गुल्फयोः । परशवे० पादयोः ॥ गणेश का-शिरसि बीजपूराय० । मस्तके गदायै० । वामदक्षिणभुजयोः धनुषे० त्रिशूलाय० । नाभौ चक्राय० । जठरे कमलाय० । पृष्ठे पाशाय० । लिंगवृषणयोः उत्प-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

लाय० । जंघयोः बाणाय० । जानुनोः अंकुशाय० । गुल्फयोः विषाणाय० । पादयोः रत्नकलाय० ॥ १४ ॥ शक्तिन्यास-विष्णुका-लक्ष्म्यै० ललाटे । सरस्वत्यै० मुखे । रत्यै० गुह्ये । प्रीत्यै० कंठे । कीर्त्यै० दिक्षु । शांत्यै० हृदि । तुष्ट्यै० जठरे । पुष्ट्यै० सर्वत्र (सब शरीर) ॥ शिवका-मायै० ललाटे । ज्येष्ठायै० मुखे । रुद्राण्यै० गुह्ये । काल्यै० कंठे । कलविकरणायै० दंतेषु । बलायै० हृदये । बलप्रमथनायै० जठरे । सर्वभूतदमनायै० नाभौ । उन्मनायै० सर्वत्र । सूर्य का-दीप्तायै० ललाटे । सूक्ष्मायै० मुखे । विजयायै० गुह्ये । भद्रायै० कंठे । विभूत्यै० दंतेषु । विमलायै० हृदये । अमोघायै० नाभौ । विद्युतायै० उदरे । सर्वतोमुख्यै० सर्वांगेषु ॥ देवी का-प्रभायै० ललाटे । उमायै० मुखे । जयायै० गुह्ये । सूक्ष्मायै० कंठे । विशुद्धायै० दन्तेषु । नन्दिन्यै० हृदये । सुप्रभायै० नाभौ । विजयायै० उदरे । सर्वसिद्धिप्रदायिन्यै० सर्वांगे ॥ गणेश का-तीव्रायै० ललाटे । ज्वालिन्यै० मुखे । नन्दायै० गुह्ये । भोगदायै० कंठे । कामरूपिण्यै० दन्तेषु । उग्रायै० हृदये । तेजोवत्यै० नाभौ । सत्यायै० उदरे । सर्वविघ्नविनाशायै० सर्वांगेषु ॥ १५ ॥ अंगन्यास-(इसमें 'नमः' सर्वत्र नहीं लगता । पर,-ओं तो सर्वत्र लगेगा)-हृदयं हृदये । शिरः शिरसि । शिखाशिखायाम् । कवचं सर्वत्र । नेत्रं नेत्रयोः । अस्त्रं करयोः । मुक्ताहाराय नमः दक्षिणस्तने । श्रीवत्साय नमः वामस्तने । उरसि कौस्तुभाय नमः । कंठे वनमालायै नमः ॥ शिवका-(इसमें 'नमः' सर्वत्र है) ओं नमः हृदये । नं नमः शिरसि । मं० शिखायै वषट् । शिं० कवचायहुम् । वां० नेत्रत्रयायवौषट् । यं० अस्त्राय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्त्राय फट् (चुटकी) ॥ सूर्यका-ओं नमो 'घृणये सूर्यायादित्याय' सत्याय हृदयाय नमः ।' चिह्नवाला आगे सर्वत्र रहेगा । नमो० ब्रह्मणे शिरसे स्वाहा । नमो० विष्णवे शिखायै वषट् । नमो० रुद्राय कवचायहुम् । नमो० अग्नये नेत्रत्रयायवौषट् । नमो० सर्वाय अस्त्राय फट् ॥ देवीका-ओं ह्रां दुर्गायै हृदयायनमः । ह्रीं दुर्गायै शिरसे स्वाहा । ह्रूं दुर्गायै शिखायै वषट् । ह्रैं दुर्गायै० कवचायहुम् । ह्रौं० दुर्गायै नेत्रत्रयायवौषट् । ह्रः दुर्गायै अस्त्रायफट् ॥ गणेश का । इसमें केवल 'गां' इत्यादि बदलेगा । शेष सब वाक्य उससे पहले एक प्रकार का और आगे पहले जैसाही है । ओं श्रीं ह्रीं क्रीं ग्लौं गं 'षड्वीजस्य गां' हृदयायनमः । ओं श्रीं० ग्गीं शिरसे स्वाहा । ओं० स्य गूं शिखायैवषट् । ओं० ग्गैं कवचायहुम् ओं० स्य गौं नेत्रत्रयाय वौषट् । ओं० स्य गः अस्त्रायफट् (चुटकी बजावे) ॥१६ ॥ मूल मंत्र न्यास-विष्णु का द्वादशाक्षर-ओं पादयोः । नं जान्वोः । मों गुह्ये । भं नाभौ । गं हृदये । वं कंठे । तें मुखे । वां नेत्रयोः । सुं ललाटे (भाल) । देंमूर्ध्नि । वां दक्षिणपार्श्वे (दहिनी बगल) । यं वामपार्श्वे ॥ शिव का-ओं नमः पादयोः । नं नमो जानुनोः । मों० गुह्ये । भं० नाभौ । गं० हृदये । वं० कंठे । तें० मुखे । शिं० नेत्रयोः । वां० ललाटे । यं० शिरसि । नं० दक्षिणपार्श्वे । मं० वामपार्श्वे ॥ सूर्य का-ओं पादयोः । नं० जान्वोः । मं० गुह्ये । भं० नामौ । गं० हृदये । वं० कठे । तें० मुखे । सूं० नेत्रयोः । र्यां० भाले । यं० मूर्ध्नि । नं० दक्षिणपार्श्वे । मं० वामपार्श्वे० ॥ देवी का-ओं नमो मूर्ध्नि । ह्रींनमो० मुखे । क्लीं० कंठे । चां० हृदि । मुं० दक्षिणपार्श्वे । डां०

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

वामपार्श्वे । यें० नाभौ । विं० गुह्ये । ब्रें० पादयोः ।
गणेश का-ओं मूर्ध्नि । ओं नमः शिखायाम् । श्रीं ललाटे ।
ह्रीं दक्षिणाभ्रुवि (भौं) । क्लीं वामभ्रुवि । ग्लौं दक्षिण-
नेत्रे । गं वामनेत्रे । णं दक्षिणश्रोत्रे । पं वामश्रोत्रे । ते
दक्षिणनासापुटे (नासिका छिद्र) । यें वामनासापुटे । मे
ओष्ठयोः । र्वं तालुदेशे । जं नाभौ । नं उदरे । में कट्या-
म् । वं लिंगे । शं वृषणे । मां ऊर्वोः । नं जंघयोः । यं गु
ल्फयोः । स्वां पादयोः । हां अंगुलिषु ॥ १७॥ 'ओं' सर्व
आदि में लगाना होगा और जहां जहां '०' है वहां वहां सर्वत्र 'नमः'
लगाना होगा । सूर्य और गणेश में '०' की जगह ऊपर कही अक्षर
पढ़ना होगा । वहां 'नमः' नहीं लगेगा ।

प्रतिमा में जीवन्यास-प्राण प्रतिष्ठा -ओं अस्य श्री प्राणप्रति-
ष्ठामंत्रस्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वरा ऋषय ऋग्यजुःसामानि
छन्दांसि चैतन्यंदेवता आं बीजम् ह्रीं शक्तिः क्रौं कीलक
कम् अमुकदेवता (विष्णु, शिवादि) प्रतिमायाः प्राणप्रति-
ष्ठायां जीवन्यासे विनियोगः । ओं ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषि-
भ्यो नमः शिरसि । ऋग्यजुःसामछन्दोभ्यो नमः मुखे
प्राणाख्यदेवतायै नमो हृदि । आंबीजाय नमो गुह्ये
ह्रीं शक्त्यै नमः पादयोः । क्रौं कीलकाय नमः सर्वांगे
(सर्वत्र आदि में ॐ लगावे) । ॐ कं खं गं घं ङं अं पृथिव्य-
ग्नेजोवाय्वाकाशात्मने आं हृदयाय नमः । ॐ चं छं जं झं
ञं इं शब्दस्पर्शरूपरसगन्धात्मने ईं शिरसे स्वाहा । ॐ
टं ठं डं ढं णं उं श्रोत्रत्वक्चक्षुर्जिह्वाघ्राणात्मने ऊं शि-
खायै वषट् । ॐ तं थं दं धं नं एं वाक्पाणिपादपायू-
स्थात्मने ऐं कवचायहुम् । ॐ पं फं बं भं मं ओं वचनादान-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विहरणोत्सर्गानन्दात्मने औं नेत्रत्रयाय वौषट् । ओं पं रं लं वं शं षं सं हं क्षं अं मनोबुद्ध्यहंकारचित्तात्मने अः अस्त्रायफट् ॥ इसन्यास के बाद पढ़े-ॐ आं ह्रीं क्रौं यं रं लं वं शं षं सं हं हंसः 'अमुकदेवस्य' (विष्णोः, शिवस्य, इत्यादि कहे। प्राणाइह प्राणाः। इसी तरह ॐ आं ह्रीं० इत्यादि आगे भी बार बार पढ़े। ॐ आं० देवस्य जीव इह स्थितः। ॐ आं० देवस्यसर्वेन्द्रियाणि। ॐ आं० देवस्य वाङ्मनश्चक्षुःश्रोत्रजिह्वाघ्राणप्राणा इहागत्य स्वस्तये सुखेन चिरं तिष्ठन्तु स्वाहा॥ फिर प्रतिमा के हृदय में अंगूठा लगाकर जपे-ॐ अस्यै प्राणाः प्रतिष्ठन्तु अस्यै प्राणाश्चरन्तु च। अस्यै देवत्वमर्चायै मामहेति च कश्चन ॥ पढ़ने के साथ पुरुषभाव से ध्यान कर ले और 'ॐ' कहकर सांस रोककर उसे जीव सहित ध्यान करे। फिर मूल मंत्र और गायत्री प्रतिमाके कान के पास धीरे से कहे और स्वागत करे-ॐ स्वागतं देवदेवश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः। यत्कृतं त्वमदृष्ट्वामां बालवत्परिपालय॥ तब तत्त्व न्यास करे। उसमें पहले चार से प्रतिमाको सर्वांग स्पर्श करे-ॐ मंजीवात्मने नमः। ॐ भं प्राणात्मने नमः। ॐ बं बुद्ध्यात्मने नमः। ॐ कं अहंकारात्मेन नमः। ओं पं मनआत्मनेनमः हृदये। ॐ नं शब्दतन्मात्रात्मने नमः शिरसि। ॐ धं स्पर्शतन्मात्रात्मने नमः मुखे। ॐ दं रूपतन्मात्रात्मने हृदये। ॐ थं रसतन्मात्रात्मने नमः अंसयोः (कन्धे)। ॐ तं गन्धतन्मात्रात्मने नमः पादयोः। ॐ णं श्रोत्रात्मने नमः श्रोत्रयोः। ॐ ढं त्वगात्मने नमः त्वचि। ॐ डं चक्षुरात्मने नमः चक्षुषोः। ॐ ठं जिह्वात्मने नमः जिह्वायाम्। आगे भी 'नमः, लगाता जावे। ॐ टं घ्राणात्मने० घ्राणे (नासिका)। ॐ ञं वागात्मने०

iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

वाचि (मुख) । ॐ झं पाण्यात्मने० पाण्योः (हाथ) । ओं जं पादात्मने० पादयोः । ॐ छं पाय्वात्मने०पायौ (गुदा)। ओं चं उपस्थात्मने० उपस्थे (लिंग)। ओं ङं पृथिव्यात्मने० पादयोः । ओं घं अप्तत्त्वात्मने० बस्तौ (मूत्र स्थान के ऊपर)। ओं गं तेजआत्मने० हृदये । ओं खं वायुतत्त्वात्मने० घ्राणे । ओं कं आकाशात्मने० शिरसि। ओं शं पुंडरीकाक्षाय० हृदि । ओं षं सूर्याय० हृत्पुंडरीके (हृदय कमल)। ओं सं सोमात्मने स्तनमध्ये० । ओं रं वह्न्यात्मने० स्तनयोः ॥ इसके बाद ॐ बं कहकर देवता का मूल मंत्र पढ़े और उसके मूर्त्ति के साथ सम्बन्ध ध्यान कर 'ओं पुरुषात्मने नमः' पढ़कर उसे पुरुष रूप समझे । फिर उसका मूल मन्त्र पढ़े और-ओं तत्पुरुषात्मने नमः' से पुनरपि उसमें पुरुषभाव करे । 'ओं पं परात्मने नमः' से उसे सर्वसाक्षी समझ, 'ओं गं सर्वात्मने नमः' से कान और उसके मुख समझे । ओं वं अनुग्रहात्मने नमः-से कृपा करने वाला, ओं सं सर्वात्मने नमः-से उत्पन्न करने वाला ओं लं सर्वसंहरणात्मने नमः-से संहार कर्त्ता और ' ओं हं कोपात्मने नमः-से सब का दण्ड करने वाला समझे । यह सब उसी मूर्त्ति में ही करना होगा । इसके बाद तीन तत्त्वोंकी ६ आहुति घी से कुंड में दे-ओं आत्मतत्त्वाय स्वाहा इदम् आत्मतत्त्वाय नमम । ओं आत्मतत्त्वाधिपतये ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम । ओं विद्यातत्त्वाय स्वाहा इदं विद्यातत्त्वाय नमम । ओं विद्यातत्त्वाधिपतये विष्णवे स्वाहा इदं विष्णवे० ॥ ओं शिवतत्त्वाय स्वाहा इदं शिवतत्त्वाय० ओं शिवतत्त्वाधिपतये रुद्राय स्वाहा इदं रुद्राय० इसके बाद मूर्त्ति के पास आकर तत्त्व का न्यास करे । सर्वत्र ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में 'ओं' लगावे और बीच में 'नमः' बोले। 'नमः' की जगह '०' चिन्ह है-ओं आत्मतत्त्वाय नमः पादयोः। विद्यातत्त्वाय० हृदि। शिवतत्त्वाय० शिरसि॥ पृथिवी तत्त्वात्मने० पादयोः। अप्तत्त्वात्मने० बस्तौ। (सर्वत्र 'तत्त्वात्मने नमः' लगाता जावे)। तेजस्तत्त्वा० हृदये। वायुत० घ्राणे। आकाश० शिरसि। गन्ध० पादयोः। रस० बस्तौ। रूप० हृदये। स्पर्श० घ्राणे। शब्द० शिरसि। घ्राण० घ्राणे। जिह्वा० जिह्वायाम्। चक्षुस्त० चक्षुषोः। त्वक्० त्वचि। श्रोत्र० कर्णयोः। पायु० पायौ। उपस्थ० उपस्थे। हस्त० हस्तयोः। पाद० पादयोः। वाक्० वाचि (मुख)॥ मनस्तत्त्वात्मने० मनसि। बुद्धि० बुद्धौ। अहंकार० अहंकारे। चित्त० चित्ते॥ ओं सत्त्वायनमः। रजसेनमः। तमसेनमः॥ इन सातों को केवल पढ़ दे। फिर हृदय ही आगे के मंत्रों से न्यास करे-ॐ पुरुषतत्त्वाय नमः। रागतत्त्वाय नमः। विद्या०। नीति०। तर्क०। कालतत्त्वाय०। माया०। ईश्वर०। सदाशिव०। शक्ति०। शिवतत्त्वाय नमः॥ ऊपर कहे गये न्यास सभी मूर्त्तियों के साधारण हैं। अतएव सभी में किये जाते हैं। इनके सिवाय विशेष न्यास पृथक् पृथक् मूर्त्तियों के हैं। परन्तु विस्तार भय से उन्हें हम लिखना नहीं चाहते। इतनेही काफी हैं। यदि उन्हें करने की इच्छा हो तो प्रतिष्ठामयूखादि ग्रन्थों को देखकर जान लेना चाहिये।

इस प्रकार न्यास करके शय्या के सिरहाने स्थापित निन्द्राकलश में निद्रा का आवाहन करे-ओं परमेष्ठिनं नमस्कृत्य निद्रामावाहयाम्यहम्। मोहिनीं सर्वभूतानां मनोविभ्रमकारिणीम्॥१॥ विरूपाक्षे शिवेशान्ते आगच्छ त्वं तु मोहिनि। वासुदेवहिते कृष्णे कृष्णाम्बरविभूषिते॥ २॥ आग-

Jangamwadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

च्छ सहसाजस्रं सर्वसंसारमोहिनि। सुषुप्त्व संहरेदि कुमार्येकान्तमानसे ॥ ३ ॥ श्रमनिःश्वासवाह्यवे आग च्छभुवनेश्वरि। तमःसत्त्वरजोपेते आगच्छवरवर्णिनि ॥ ४ ॥ मनोबुद्धिरहंकारःसंहारस्त्वं सरस्वति। शब्दः स्पर्शश्च रूपंच रसोगन्धश्च पंचमः ॥ ५ ॥ आगच्छ गृहण संक्षिप्य मोहपाशनिबन्धिनि। भवस्योत्पत्तिहेतुस्त्वं यावदाभूतसंप्लवम् ॥ ६ ॥ भुवःकल्पान्तसंध्यायां वससे त्वंचराचरे। भोगिशय्यां प्रसुप्तस्य वासुदेवस्य शासने ॥७॥ त्वं प्रतिष्ठासि वै देवि मुनियोनिसमुत्थिते। पितृदेवमनुष्याणां सयक्षोरगरक्षसाम् ॥ ८ ॥ पशुपक्षिमृगाणां च योगमायाविवर्धिनि। वससे सर्वसत्त्वेषु मातेव हितकारिणि॥९॥एहि सावित्रिमूर्त्तित्वं चक्षुर्भ्यां स्थानगोचरे। विशे नासापुटे देविकंठे चोत्कंठिता विशा॥१०॥प्रतिभावयमांसं मातृवद्देवि सुन्दरि। इदमर्घ्यं मयादत्तं पूजेयं प्रतिगृह्यताम् ॥११॥ आवाहन के बाद-ओं उपप्रागात्परमं यत्सधस्थमर्वा अच्छापितरं मातरं च। अद्यादेवाञ्जुष्टतमोहि गम्या अथाशास्ते दाशुषे वार्याणि- इस मंत्र से निद्रा देवी की पूजा उस कलश में गन्धाक्षतादि द्वारा करे। इस पूजा के बाद पूर्ववत् लोकपालादि को मण्डप से बाहर बलि देकर शय्या के नीचे सर्वतोभद्र में पूर्व ओर मूल मंत्र से उसी देवता की पूजा करे जिसकी प्रतिमा हो। यदि विष्णु या शिव की मूर्त्ति हो तो सर्वतोभद्र के पूर्व में न कर मध्य वाले अष्टदल कमल में ही करे। इसीलिये पहले से ही अष्टदल कमल बना रक्खे और कमल के ८ पत्तों के किनारे चारों ओर वृत्त खींच कर उसमें चारों ओर मिलाकर १६ जगह जौ का आकार बना रक्खे। इसे अरा कहते हैं। यह केवल विष्णु प्रतिष्ठा में ही होता है। शिवप्रतिष्ठा में तो केवल अष्टदल कमल से ही काम चल जाता है। इस तरह मध्य में मूल मंत्रसे पूजा करके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जो पीली कर्णिका है उसमें 'ओं हूं हृदयाय नमः–से विष्णु के हृदय की भी पूजा करके 'ओं विष्णवे नमः' से पूर्वके पत्ते में उनके सिरकी पूजा करे। इसी तरह दक्षिण वाले में 'ओं ब्रह्मणे नमः' से शिखा, पश्चिम में 'ओं ध्रुवाय नमः' से कवच, उत्तर वाले में 'ओं चक्रिणे नमः' से फट्अस्त्र, अग्नि कोन वाले में–ओं शम्भवे नमः–से गायत्री, ईशान वाले में 'ओं विजयाय नमः'–से सावित्री, नैर्ऋत्य वाले में 'ॐ ज्योतीरूपाय नमः' से और वायव्य वाले में 'ओं चक्रिरूपाय नमः, से पिंगलास्त्र की पूजा करे। नैर्ऋत्य और वायव्य में एकही पिंगलास्त्र की पूजा होती है। ये सब विष्णु के गण हैं। अतएव इनकी पूजा होती है। यह पूजा अष्टदल पद्म के मध्य और पत्तों के मध्य में होती है। इसका नाम गर्भावरण या प्रथमावरण है। यह विष्णु के आवरण या रक्षक हैं। यदि शिव की पूजा करनी हो तो कर्णिका में मूल मंत्र से उनकी पूजा करके प्रथम आवरण की पूजा यों करे–पूर्व पत्र में–ओं ह्रां हृदयाय-नमः ॐ शिवायनमः–से हृदय की। दक्षिण पत्र में–ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा ओं ब्रह्मण्याय नमः–से सिरकी, ओं हूं शिखायैवषट् ॐ ध्रुवायनमः– से पश्चिम वाले में शिखा की और उत्तर वाले में ओं हैं कवचायहुम् ओं शूलिने नमः–से कवच की पूजा करे। यही शिव का प्रथम या गर्भ आवरण है। शिवका द्वितीय आवरण है पूर्व से लेकर आग्नेय आदि आठ पत्रों में क्रम से–ओं अनन्तायनमः। ओं सूक्ष्माय नमः। ओं शिवोत्तमाय०। ओंएकनेत्राय०। ओं एकरुद्राय०। ओं त्रिमूर्त्तये०। ओं श्रीकंठाय०। ओं शिखंडिने नमः॥ यही दूसरा आवरण है। इसके बाद फिर पूर्व से ही शुरू कर दूसरे के बाद तीसरे आवरण की पूजा पत्रों में ही करे– ओं टंकायै नमः। ओं कृपाणाय०। वज्राय०।

Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

दहनाय० । भोगेन्द्राय० । घंटायै० । अंकुशाय० । पाशाय० ।
यह तीसरा आवरण शिव का हुआ । विष्णु के भी दूसरे आवरण
की पूजा करते हैं । जो बारह अरा हैं उन्हीं में पूर्व दिशा से ही आरम्भ
कर यों पूजा करे-ओं केशवाय नमः । ओं नारायणाय० ।
ओं माधवाय० । ओं गोविन्दाय० । ओं विष्णवे० । ओं
मधुसूदनाय० । ओं त्रिविक्रमाय० । ओं वामनाय० । ओं
श्रीधराय० । ओं हृषीकेशाय० । ओं पद्मनाभाय० । ओं
दामोदराय नमः ॥ फिर तीसरे आवरण की पूजा आ
के बाहर पूर्व, अग्नि आदि आठ दिशाओं में यों करे-ओं
खड्गाय नमः । ओं गदायै० । ओं चक्राय० । ओं शंखाय० ।
ओं पद्माय० । ओं हलाय नमः । ओं मुसलाय० । ओं
शार्ङ्गाय नमः ॥ यह तीसरा आवरण विष्णु का हुआ । इसके बाद
चौथे आवरण या पंक्ति में मूर्त्तियों और मूर्त्तिपों (मूर्त्ति के पति
या ईशों) की पूजा की जाती है । विष्णु का चौथा आवरण तीसरे
के बाहर पूर्व आदि चार दिशाओं में और मध्य में माना जाता है
चारों दिशाओं में और मध्य में इस तरह पांच मूर्त्तियों और मूर्त्ति
की पूजा करते हैं । शिव के भी पांच ही होते हैं और इसी तरह
पूजे जाते हैं । विष्णु की यों पूजा करे-(१) ओं पृथिवीमूर्त्ति
नमः । (२) ओं पृथिवीमूर्त्त्यधिपतये वासुदेवाय नमः । (१)
ओं जलमूर्त्तये नमः (२) । जलमूर्त्त्यधिपतये संकर्षणाय०
(१) ओंअग्निमूर्त्तये० (२) ओं अग्निमूर्त्त्यधिपतये प्रद्युम्नाय
नमः । (१) ओं वायुमूर्तये नमः । (२) ओं वायुमूर्त्त्यधि-
पतये अनिरुद्धाय नमः । (१) ओं स्वमूर्तये नमः ।
(२) ओं स्वमूर्त्त्यधिपतये नारायणाय नमः ॥ इस
तरह चारों दिशाओं में और मध्य भी में दो दो की पूजायें सर्वत्र ही
करे । शिवकी मूर्त्तियों की पांच पूजा तो विष्णु की ही तरह उन्हीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मन्त्रों से करे । मगर मूर्त्तियों की जगह पर जो 'वासुदेवाय' इत्यादि पांच हैं उनकी जगह क्रम से 'ब्रह्मणे, विष्णवे, रुद्राय, ईशानाय, सदाशिवाय, शब्द पढ़े । शेष शब्द वहीं रक्खे । जैसे-ओं पृथिवीमूर्त्तये नमः । ओं पृथिवीमूर्त्यधिपतये ब्रह्मणेनमः-इत्यादि । शिवकी आठ मूर्त्तियों और अष्टमूर्त्तियों की भी पूजा मानते हैं । मगर तब पांच की नहीं होती । इसीसे हमने नहीं लिखी है। दूसरी पद्धतियों से उसे जान सकते हैं । काम तो इससे भी चलता ही है । फिर भद्रमण्डल के बाहर पांचवे आवरण की पूजा शिव विष्णु प्रत्येक पक्ष में दस दिक्पालों की ही होती है । इसकी विधि पहले ही १५८ पृष्ठमें लिखी है । इस तरह दोनों के पांच पांच आवरण हो गये । और देवताओं में कोई आवरण नहीं होता । केवल देवता की और दिक्पालों की पूजा होती है । इसके बाद दिव्य वस्त्र को मूर्त्ति पर ओढ़ाकर पुरुषसूक्त से स्तुति करे । अन्त में पुष्पांजलि-आ यज्ञेन यज्ञ० * मंत्र से देकर उस वेदी पर और मण्डप में चन्दन, पुष्प, अक्षत छींटे और देव के पार्षदों को-ओं देवपार्षदेभ्यो नमः-से प्रणाम करे तथा देव को भी प्रणाम करे । यहां तक अधिवासन कृत्य करके पहले दिन का काम पूरा करे । शेष कर्म दूसरे दिन करे ।

यदि उसी दिन करना हो तो होम करे । यदि दूसरे दिन होम करना हो तो उस दिन रात को जागरण करे । हम एक ही कुण्ड वाले मण्डप की बात लिखते हैं । होम के लिये पलाश, गूलर, पीपल, चिचिड़ी (अपामार्ग) और शमी की समिधायें लाकर आचार्य अपने होम के कुण्ड के पास-'ओं हिरण्यगर्भः०' (पृ० ७८८) मंत्र से रक्खे । प्रत्येक समिधा १०१२, १००८, १००६, १००३ या १०८ होनी चाहिये । इनका होम शान्तिक और पौष्टिक मन्त्रों से करते हैं । शान्तिकमन्त्र ये हैं—ओं शन्नो वातः पवतां शन्नस्तपतु सूर्यः । शन्नः कनिक्रदद्देवः पर्जन्यो अभिवर्षतु ॥ १ ॥ ओं शन्न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

शन्न इन्द्रावरुणा रातहव्या । शन्न इन्द्रापूषणा वाज-
सातौ शमिन्द्रासोमा सुविताय शंयोः ॥ ॐ शन्नो देवी०
(७६) ॥ ३ ॥ ॐ द्यौः शान्ति० रेधि० (१११) ॥ ४ ॥
पौष्टिक मन्त्र ये हैं—ओं पुष्टिर्नरण्वाक्षितिर्न पृथ्वी तिति-
भुज्म क्षोदोन शम्भु । अत्योनाज्मन्त्सर्ग प्रतक्तः सि-
न्धुर्नक्षोदः कई वराते ॥ १ ॥ ओं शिवोनामासिस्वधि-
तिस्ते० र्याय (२८७) ॥२॥ ओं गयस्फानो अमीवहावसु-
वित्पुष्टिवर्धनः । सुमित्रः सोमनो भव ॥ ३ ॥ ओं हृ
पुष्टिं पुष्टिपतिर्दधातु इह प्रजां रमयतु प्रजापतिः
अग्नये ग्रहपतये रयिमते पुष्टिपतये स्वाहा ॥ ४ ॥ ओं
त्र्यम्बकं यजामहे० (७०३) ॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धि
पतिवेदनम् । उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय
मामुतः ॥ ५ ॥ इन्हीं मन्त्रों के अन्त में स्वाहा लगा कर हवन
करे—स्वाहा इदं लिंगोक्तदेवतायै नमम—ऐसा हवन
कहना होगा । इसके बाद—ओं मूर्द्धानं दिवोऽअरतिं० (३२
मंत्र से पूर्णाहुति करे । फिर आचार्य पलाश की समिधा, घी
तिल से १००८ या १०८ आहुतियां ८ मूर्त्तियों, ८ मूर्त्तिपतियों
८ लोकपालों को दे । प्रत्येक को उतनी उतनी आहुतियां देनी होंगी
प्रत्येक के मन्त्र ये हैं—ओं स्योनापृथिवि० (६८५) स्वाहा इ
पृथिवीमूर्त्तये नमः ॥ १ ॥ ॐ अघोरेभ्योऽथघोरे० (७१
स्वाहा इदं मूर्त्तिपतिशर्वाय नमम ॥ २ ॥ ओं इन्द्रा
न्दुः सरस्वती नराशंसेन नग्नहुम् । अधातामश्विना
मधुभेषजंभिषजासुते स्वाहा इदमिन्द्राय नमम ॥ ३
ओं अग्निं दूतं० (२०९) स्वाहा इदमग्निमूर्त्तये नमम
॥ ४ ॥ ओं पशून् चित्रा सुभगा प्रथाना सिन्धुरे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्षोद उर्विया व्यश्वैत् । अभिनती दैव्यानि व्रतानि सूर्यस्य चेति रश्मिभिर्दशाना ॥ स्वाहा इदम् अग्निमूर्त्तिपाय पशुपतये नमम ॥ ५ ॥ ओं अग्न आयाहि० (८८) स्वाहा इदमग्नये नमम ॥ ६ ॥ ओं असिहिवीरसेन्योऽसिभूरिपरादादिः । असिदभ्रस्यचिद्वृधो यजमानायशिक्षसि सुन्वते भूरितेवसु स्वाहा इदं यजमानमूर्त्तये नमम ॥ ७ ॥ ओं तमिन्द्रंजोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रादधानमप्रतिष्कुतं शवांसि । मंहिष्ठो गीर्भिराचयज्ञियोववर्त्तद्रायिन्ते विश्वासुपथाकृणोतुवज्री स्वाहा इदं यजमानमूर्त्तिपायउग्राय० नमम ॥ ८ ॥ ओं यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुताहविः । यमंहयज्ञोगच्छत्यग्निदूतो अरंकृतः स्वाहा इदं यमाय० ॥ ९ ॥ ॐ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् स्वाहा इदं सूर्यमूर्त्तये नमम ॥ १० ॥ ओं आवोराजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः । अग्निं पुरातनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम् स्वाहा इदं सूर्यमूर्त्तिपरुद्राय० ॥ ११ ॥ ओं असुन्वतमयजमान० (७९७) स्वाहा इदं निर्ऋतये नमम ॥ १२ ॥ ओं आपोहिष्ठा० (७९) स्वाहा इदं जलमूर्त्तये० ॥ १३ ॥ ओं विभूषन्नग्न उभयाँ अनुव्रता दूतो देवानां रजसी समीयसे । यत्तेधीतिं सुप्रतिमावृणीमहे धस्मानस्त्रिवरूथः शिवोभव स्वाहा इदं जलमूर्त्तिपभवाय० ॥ १४ ॥ ओं इमम्मे वरुण० (२०९) इदं वरुणाय० ॥ १५ ॥ ओं वात आवातु भेषजं शमुभयोभुनेहदे । प्रणआयूँषितारिषत् स्वाहा इदं वायुमूर्त्तये० ॥

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

॥ १६ ॥ ओं तमीशानं० (२१०) स्वाहा इदं वायुमूर्ति-
पेशानाय० ॥ १७ ॥ ओं आनो नियुद्भिः शतिनीभिः
ध्वरं सहस्त्रिणीभिरुपयाहिवीतयेवायोहव्यानि वीत-
ये । तवायंभाग ऋत्वियः सरश्मिसूर्येसचा । अध्वर्यु-
भिर्भरमाणा अयंसत वायो शुक्रा अयंसत स्वाहा इदं
वायवे० ॥ १८ ॥ ओं वयं सोमव्रते० (७९७) स्वाहा इदं
सोममूर्त्तये० ॥ १९ ॥ ओं इन्द्रंतं शुभपुरुतन्मन्नवसे
यस्य द्विता बिभर्त्तरि । हस्तायवज्रः प्रतिधायि
दर्शतो महोदिवेन सूर्यः स्वाहा इदं सोममूर्त्तिपमह-
देवाय० ॥ २० ॥ ॐ सोमाय० ॥२१॥ ओं आदित्यलाय
रेतसोज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् । परोयदिध्यतेदिवा
स्वाहा इदं स्वमूर्त्तये नमम ॥ २२ ॥ ओं मृगोनभीम
कुचरोगिरिष्ठाः परावत आजगन्था परस्याः । सृ
संशाय पविमिन्द्रतिग्मं विशत्रून्ताढि विमृधोनुदस्व
स्वाहा इदं स्वमूर्तिपभीमाय नमम ॥२३॥ ओं ईशानाय
स्वाहाइदमीशानायनमम ॥ २४ ॥

फिर आचार्य तिल, गौधान, चरु और घी प्रत्येक की १००८, १०८
या २८ आहुतियां दे । आहुतिके मंत्र तीन महाव्याहृतियां अलग अलग
और तीनों मिला कर चौथा । फिर जिस देवता की स्थापना करना
हो उसके मंत्र से तिल या घी की १००८ या १०८ आहुतियां दे । ॐ
विष्णु० (७२२) यह विष्णु का और—ओं नमः शम्भवाय०
या—त्र्यम्बकं० शिवका मंत्र है । इसी तरह दूसरों के भी मंत्र होम
प्रकरण में हैं । इसके बाद—ओं मूर्द्धानं० से पूर्णाहुति करके
प्रतिमा के दहिने कान के पास जाकर कहे—ओं अनेन होमेन
देवः प्रीणातु ॥ तब, घी, दही, दूध और मधु मिलाकर मूल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंत्र से आठ आहुतियां देकर और पूर्णाहुति-ओं मूर्द्धानं० से देकर प्रतिमा के प्रत्येक अंगों को स्पर्श करे। इसके बाद कूर्मशिला, ब्रह्मशिला और पिंडिका तथा देवता के गरुड़, नन्दी आदि वाहन और पार्षद के देवताओं की पूजा करे। मूर्त्ति के स्थापित करने का जो सिंहासन सीढ़ी के चढ़ाव उतार ऐसा बना होता है उसमें नीचे की सीढ़ी कूर्मशिला, उसके उपर की ब्रह्मशिला और अन्तिम, जिस पर मूर्त्ति स्थापित होती है पिंडिका कहाती है, और तीनों मिलाकर सिंहासन होता या कहाता है। इन तीनों भागों को अलग अलग रखते हैं और अन्त में प्रतिष्ठा से पहले तले ऊपर बैठाकर जोड़ देते हैं। इनकी पूजाके मंत्र वही नाममंत्र हैं-ओं कूर्मशिलायै नमः। ओं ब्रह्मशिलायै नमः। ओं पिंडिकायै नमः। ओं गरुडाय नमः। ओं नन्दिने नमः। ॐ पार्षदेभ्यो (परिचारकदेवेभ्यो) नमः॥ इन्हीं से उन की क्रम से पूजा करे। पूजा के बाद मूर्त्ति के वाम भाग में उन्हें स्थापित कर उनमें घी और मधु लगाकर जल से धोवे और फिर उनकी पूजा कर उन्हें खद्दर से ढंक दे और यह मंत्र पढ़े-ओं ह्रीं श्रीं हां क्षः परब्रह्मणे सर्वाधाराय नमः। ओं हां श्रीं ह्रीं दिव्यतेजोधारिण्यै सुभगायै नमः॥

यदि मन्दिर नया हो तो उसका अधिवासन करते हैं। एतदर्थ मन्दिर के आगे ८१ पद (घर) वाला वास्तुमण्डल बना कर प्रत्येक में धान की सात सात राशियां रखते और उन्हीं पर प्रत्येक पद में एक एक कलश विधिवत् स्थापित करते हैं। इस तरह ८१ कलशों के हो जाने से सभी में जल भर देते हैं। शेष कृत्य कर चुकने पर सबके मध्य का एक और उसके चारों ओर पूर्व, अग्नि आदि ८ दिशाओं के ८, इस तरह कुल ९ कलश मध्यमें हुए। फिर इसी तरह इन नवों से पूर्व भी ९ होंगे तथा अग्नि आदि कोनों में भी ९-९ होंगे। क्यों कि प्रत्येक घर की ७ धान की राशियों पर एकही कलश है और घर ८१ ही हैं। इसलिये मध्य के नौ और उनसे पूर्व, अग्नि आदि दिशाओं के न नौ हुए। अब मध्य वालों के भी मध्य में जो एक है उसमें शमी, गूलर, पीपल, चम्पा, अशोक, पलाश, पकड़ी, वट, कदम्ब,

SriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

॥ १६ ॥ ओं तमीशानं० (२१०) स्वाहा इदं वायुमीशा-
पेशानाय० ॥ १७ ॥ ओं आनो नियुद्भिः शतिनीभि-
ध्वरं सहस्त्रिणीभिरुपयाहिवीतयेवायोहव्यानि वीत-
ये । तवायंभाग ऋत्वियः सरश्मिसूर्येसचा । अध्वर्यु-
भिर्भरमाणा अयंसत वायो शुक्रा अयंसत स्वाहा इदं
वायवे० ॥ १८ ॥ ओं वयं सोमव्रते० (७६७) स्वाहा इदं
सोममूर्त्तये० ॥ १९ ॥ ओं इन्द्रंतं शुभपुरुतन्मन्नवं
यस्य द्विता बिभर्त्तरि । हस्तायवज्रः प्रतिधा-
दर्शतो महोदिवेन सूर्यः स्वाहा इदं सोममूर्त्तिपमहा
देवाय० ॥ २० ॥ ॐ सोमाय० ॥२१॥ ओं आदित्यतन्
रेतसोज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् । परोयदिध्यतेदिव
स्वाहा इदं स्वमूर्त्तये नमम ॥ २२ ॥ ओं मृगोनभीम
कुचरोगिरिष्ठाः परावत आजगन्था परस्याः । सृ
संशाय पविमिन्द्रतिग्मं विशत्रून्ताढि विमृधोतुदन्
स्वाहा इदं स्वमूर्तिपभीमाय नमम ॥२३॥ ओं ईशान
स्वाहाइदमीशानायनमम ॥ २४ ॥

फिर आचार्य तिल, गौ धान, चरु और घी प्रत्येक की १००८, १०
या २८ आहुतियां दे । आहुतिके मंत्र तीन महाव्याहृतियां अलग अलग
और तीनों मिला कर चौथा । फिर जिस देवता की स्थापना करना
हो उसके मंत्र से तिल या घी की १००८ या १०८ आहुतियां दे । ॐ
विष्णु० (७२२) यह विष्णु का और–ओं नमः शम्भवाय०
या–त्र्यम्बकं० शिवका मंत्र है । इसी तरह दूसरों के भी मंत्र होते
प्रकरण में हैं । इसके बाद–ओं मूर्द्धानं० से पूर्णाहुति करके
प्रतिमा के दहिने कान के पास जाकर कहे–ओं अनेन होमेन
देवः प्रीणातु ॥ तब, घी, दही, दूध और मधु मिलाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मंत्र से आठ आहुतियां देकर और पूर्णाहुति-ओं मूर्द्धानं० से देकर प्रतिमा के प्रत्येक अंगों को स्पर्श करे। इसके बाद कूर्मशिला, ब्रह्मशिला और पिंडिका तथा देवता के गरुड़, नन्दी आदि वाहन और पार्षद के देवताओं की पूजा करे। मूर्त्ति के स्थापित करने का जो सिंहासन सीढ़ी के चढ़ाव उतार ऐसा बना होता है उसमें नीचे की सीढ़ी कूर्मशिला, उसके उपर की ब्रह्मशिला और अन्तिम, जिस पर मूर्त्ति स्थापित होती है पिंडिका कहाती है, और तीनों मिलाकर सिंहासन होता या कहाता है। इन तीनों भागों को अलग अलग रखते हैं और अन्त में प्रतिष्ठा से पहले तले ऊपर बैठाकर जोड़ देते हैं। इनकी पूजाके मंत्र वही नाममंत्र हैं-ओं कूर्मशिलायै नमः। ओं ब्रह्मशिलायै नमः। ओं पिंडिकायै नमः। ओं गरुडाय नमः। ओं नन्दिने नमः। ॐ पार्षदेभ्यो (परिचारकदेवेभ्यो) नमः॥ इन्हीं से उन की क्रम से पूजा करे। पूजा के बाद मूर्त्ति के वाम भाग में उन्हें स्थापित कर उनमें घी और मधु लगाकर जल से धोवे और फिर उनकी पूजा कर उन्हें खद्दर से ढंक दे और यह मंत्र पढ़े-ओं ह्रीं श्रीं ह्रां क्षः परब्रह्मणे सर्वाधाराय नमः। ओं ह्रां श्रीं ह्रीं दिव्यतेजोधारिण्यै सुभगायै नमः॥

यदि मन्दिर नया हो तो उसका अधिवासन करते हैं। एतदर्थ मन्दिर के आगे ८१ पद (घर) वाला वास्तुमण्डल बना कर प्रत्येक में धान की सात सात राशियां रखते और उन्हीं पर प्रत्येक पद में एक एक कलश विधिवत् स्थापित करते हैं। इस तरह ८१ कलशों के हो जाने से सभी में जल भर देते हैं। शेष कृत्य कर चुकने पर सबके मध्य का एक और उसके चारों ओर पूर्व, अग्नि आदि ८ दिशाओं के ८, इस तरह कुल ९ कलश मध्यमें हुए। फिर इसी तरह इन नवों से पूर्व भी ९ होंगे तथा अग्नि आदि कोनों में भी ९-९ होंगे। क्यों कि प्रत्येक घर की ७ धान की राशियों पर एकही कलश है और घर ८१ ही हैं। इसलिये मध्य के नौ और उनसे पूर्व, अग्नि आदि दिशाओं के नौ नौ हुए। अब मध्य वालों के भी मध्य में जो एक है उसमें खमी, गूलर, पीपल, चम्पा, अशोक, पलाश, पकड़ी, वट, कदम्ब,

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

आम, श्रीफल, और अर्जुनवृक्ष, इन बारहों के पल्लव 'ॐ सोमाय वनस्पत्यन्तर्गताय नमः' मंत्र से डाले। फिर इससे पूर्व, अग्नि आदि दिशाओं के आठ कलशों में क्रमसे, (१) पद्मक, (पदुमकाष्ठ) गोरोचन, दूब, कुश, सफेद सरसों, पीली सरसों, सफेद चन्दन, लाल चन्दन, चमेली का फूल, नंद्यावर्त्त ये दश। (२) जौ, धान, तिल, सोना, चांदी, गंगा की मृत्तिका, जमीन से न छुआ हुआ गौ का गोबर ये सात। (३) सहदेई, विष्णुक्रांता, भृंगराज (भँगरिया), महौषधि, शमी, सतावर, गुड़च, साँवा ये आठ। (४) केला, सुपारी, नारियल, श्रीफल, नारंगी, बिजौरा नींबू, बैर, आंवला ये ८। (५) विधिवत् बनाया, पंचगव्य। (६) शमी, गूलर, पीपल वट, पलाश के काढ़े या कषाय। (७) शंखपुष्पी, सहदेई, बला, सतावर, कुमारी (घिकुवार), गुड़च, बच, व्याघ्री ये ८। (८) सप्तमृत्तिका-ये चीजें डाल कर और सभी को अनामिका अंगुली से छूकर पढ़े-ओं हिरण्यवर्णा० (६४७)। इसके बाद जो शेष ७२ कलश, नौ नौ के हिसाब से इन मध्य वालों की आठों दिशाओं में हैं, उनमें चन्दन का जल छोड़ दे; मूलमंत्र से ही उन सबों का अभिमंत्रण करे और मन्दिर को सूतसे घेर कर उसके बाहर, भीतर, नीचे, ऊपर पञ्चगव्य छिड़क, ओं मूर्द्धानं० (३२३) मंत्रसे बेमौट (वल्मीक) की मिट्टी मन्दिर में लगावे और 'ओं समुद्रादूर्मि० (७९०) या-ओं समुद्रज्येष्ठा० (६५४) मंत्र से मध्य के नौ कलशों में जो ईशान वाला सप्तमृत्तिका युक्त है उससे मन्दिर को नहलावे। फिर पंचकषायवाले वायव्य कलश से-ओं यज्ञायज्ञा० (६९४) से; पश्चिम के पंचकषाय वाले से 'ओं पयः पृथिव्यां० (६९५) से; नैर्ऋत्य के फल वाले से 'ओं याः फलिनीः० (६९५) से; उत्तर वाले से 'ओं हंसः शुचिषद्० (७९०) से; पूर्व वाले से 'ओं विष्णोरराट० (७२४) से; अग्निकोन वाले से,-ओं सोमंराजानमवसेग्निमन्वारभामहे आदित्यान् विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिं स्वाहा-ओं से; दक्षिण वाले से-ओं विश्वतश्चक्षु० (७९७) से; मध्यवाले से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं नमोऽस्तु० (२०६) से नहलावे। इस के बाद 'ओं इदमापः प्रवहत० (७६२) से शेष ७२ कलशों से नहलावे। मगर पहले पूर्वके तीसे नहला कर अग्नि वाले आदि से क्रमशः नहलावे। यदि ८१ कलश का प्रबन्ध न कर सके तो, वास्तुमण्डल की भी आवश्यकता नहीं है। केवल भूमिपर ही एक कलश स्थापित कर उसमें चन्दन छोड़ दे और उसका जल-ओं दैव्याय कर्मणे शुन्धध्वं देवयज्यायै यद्वो शुद्धाः पराजघ्नुरिंद्रंवस्तच्छुन्धामि-इस मंत्र से मन्दिर पर छिड़क उसे सूत से घेरे और फिर-ओं इदमाप० इत्यादि पूर्वोक्त मंत्रसे मन्दिर को नहलावे। मंदिर को देवरूप समझ तोरण पताका आदिसे उसे शोभित कर चन्दन, पुष्प आदिसे उसकी पूजा 'ॐ प्रासादाय नमः' मंत्र से करे। मन्दिर के नीचे देवता का चिन्तन कर यह मंत्र पढ़े-ओं ह्रीं सर्वदेवमयाचिन्त्यसर्वरत्नोज्ज्वलाकृते। यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च तावदत्र स्थिरो भव॥ इसी मंत्र के पढ़ने को अधिवासन कहते हैं। फिर-ओं रक्षोहणं वलगहनं० (७८) रक्षोघ्न सूक्त और-ओं अपसर्पन्तुते भूता ये भूता भूमिसंस्थिताः। ये भूताविघ्नकर्त्तारस्ते नश्यन्तु शिवाज्ञया॥ १॥ भूतानि राक्षसावापि पत्रतिष्ठन्तिकेचन। ते सर्वेऽप्यपसर्पन्तु। देवयागं करोम्यहम्॥ २॥ ये श्लोक पढ़ कर पीली सरसों मन्दिर में और इधर उधर छींट दे। तब-ओं वास्तुपुरुषाय नमः-से उसी में एक जगह वास्तुपुरुष की पूजा करे। इसके बाद मन्दिर पर कलश की प्रतिष्ठा करे। स्नानमण्डप के उत्तर भाग में अक्षतों से स्वस्तिक का आकार बनावे और यजमान के साथ आचार्य, कलश जहां रक्खा हो या बना हो वहां, जाकर पांच कलश स्थापित कर उनके जल से उस मन्दिर के कलश को नहलावे और-ओं मनोजूति० (३७६) ओं भूर्भुवः स्वः कलश इह सुप्रतिष्ठितो भव-मंत्र से उस की प्राणप्रतिष्ठा करके दिक्पालों को बलि (२१६) दे। आचमन कर

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

कलशपर तेल लगाके चन्दन पुष्पादि उसपर–ओं कलशाय नमः मंत्र से चढ़ावे । तब तीन सूत उसमें लपेट कर रथ पर रक्खे और बायें हाथ से पकड़े हुए स्नानमण्डप में लाकर पूर्व बनाये स्वस्तिक पर सिंहासन रख उसी पर कलश रक्खे और–ओं घृतं घृतप॰ वान॰ (७९४) मंत्र से उसमें घी लगा कर–ओं द्रुपदादिवमुमु॰ चान॰ (७९४) से जौ, मसूर और हल्दी का पीठा उसीमें मले फिर गर्म जल से धोकर–ओं मूर्द्धानं॰ (३२३) मंत्र से उसमें मौट की मिट्टी लगा कर–ओं यादिव्या आपः॰ (७३०) से चन्दन मिश्रित जलसे नहलावे । तब स्नान की तीसरी वेदी के चार कोन में स्थापित कलशों से क्रमशः इन मंत्रों से स्नान करावे–(१) मानस्तोके॰ (७९०) (२) ओं विष्णोरराट॰ (७९०) (३) ओं सोमं राजानं॰ (८२०) (४) ओं विश्वतश्चक्षु॰ (७९७) ॥ फिर शुद्ध जल से 'ओं पयःपृथिव्यां॰(६९५) मंत्र से नहलाकर मूल मंत्र से चन्दनादि से पूजा करे और वस्त्र से आच्छादित कर शान्ति पाठ (१०९) करे । तब–ओं स्वस्तिन इन्द्रो॰ (३७७) मंत्र पढ़ कर उसे उठा ले और मण्डप एवं मन्दिर की प्रदक्षिणा कर पश्चिम द्वार से प्रधान मण्डप में जाकर देव के समीप ही भद्रासन (सिंहासन) पर रख कर चन्दनादि से पूजा करे फिर उसमें पक्वान्न भर कर–ओं विश्वतश्चक्षु॰ से उसके नीचे मध्य और ऊपर का भाग स्पर्श करे । कुंड की अग्नि में घी, दही, दूध, मधु से अलग अलग १०८ आहुतियां 'ओं त्र्यंबकं यजामहे॰ मंत्रसे देकर कुंडके उत्तर तरफ स्थापित शान्ति कलश में संस्रव डालता जाय । तब उसी जल से कलश का पांव नाभि, गुदा, आंख और सिर क्रमसे स्पर्श करे । चन्दनादि से पुनः पि उसकी पूजा कर उसे बलि दे । शान्तिपाठ, बाजा और जय जय शब्द के साथ कलश को लेकर मन्दिर के शिखर (चोटी) पर चढ़ा जाय और ज़रासा ठहर कर शुभ मुहूर्त में–ओं नमो भगवते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वासुदेवाय । ओं आजिघ्र कलशं० (१४६) मंत्र से कलश को मंदिर के ऊपर लगावे । ऊपर से कपड़े से ढंक कर उसे छू कर-'हुं फट्' पढ़ दे । उस कलश के ऊपर विष्णु के मन्दिर में सोने या तांबे का चक्र; सूर्य, लक्ष्मी, ब्रह्मा के मन्दिर में कमल; शंकर के मन्दिर में त्रिशूल लगा दे । कलश को ले जाकर ऊपर लगाने का काम कारीगर का है । उसे वहां दृढ़ कर ऊपर से पवित्र जल गिरा दे, ताकि चक्रादि सहित कलश का स्नान हो जाय । फिर चन्दनादि से पूजा कर उतर आवे; साष्टांग प्रणाम कर फिर चढ़ जाय और चन्दनादि से पुनः पूजा कर उसमें सफेद वस्त्र बांध दे । उतर कर ईशान कोन में भूमि को स्पर्श करे । यजमान कारीगर तथा आचार्य आदिको वस्त्र, भूषणादि यथाशक्ति दक्षिणा दे दे ।

मन्दिर के ईशान कोन में मानस्तंभ या ध्वजस्तम्भ गाड़ते हैं और उसी के ऊपर ध्वजा लगाई जाती है । सार लकड़ी, पत्थर या लोहे का ही वह मानस्तंभ होता है और गोला या चौकोना वगैरः और उचित मोटाई वाला होता है । मन्दिर की उंचाई भर, या उस से भी अधिक होता है । पहले उसकी विधिवत् पूजा, देवता के मूल मंत्र या 'ओं मानस्तम्भाय नमः'-मंत्र से चन्दन, पुष्प, धूप, दीपादि से करके उसमें छोटी छोटी घंटियां लगा देते हैं और-ओं मनोजूति० ओं भूर्भुवः स्वः मानस्तंभ इह प्रतिष्ठितो भव-से उसकी प्रतिष्ठा कर उसका पंचमांश भूमि में गाड़ देते हैं और उसके ऊपर ध्वजा लगा देते हैं ।

मानस्तंभारोपण के बाद आचार्य मन्दिर के बाहर उसके सामने खड़ा होकर देव रूप से उसका ध्यान यों करे-ओं पादौ पादशिलास्तस्य जंघा पादोर्ध्वमुच्यते । गर्भश्चैवोदरं ज्ञेयं कटिश्चैव तु मेखला ॥ १ ॥ स्तम्भाश्च बाहवोज्ञेया घंटा जिह्वाप्रकीर्त्तिता । दीपः प्राणोऽस्य विज्ञेयोह्यपानोजलनिर्गमः ॥ २ ॥ ब्रह्मस्थानं यदेतच्च तन्नाभिः परिकीर्त्तिता । हृत्पद्मं पिंडिका ज्ञेया प्रतिमा पुरुषः स्मृतः ॥ ३ ॥ पादचार-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

स्त्वहंकारो ज्योतिस्तच्चक्षुरेवच । तदूर्ध्वं प्रकृतिस्तस्य प्रति-
मात्मास्मृतो बुधैः ॥४॥ जलकुम्भादधोद्वारं तस्य प्रजनने
स्मृतम् । शुकनासा भवेन्नासा गवाक्षः कर्ण उच्यते
॥५॥ कपोतपालिः स्कन्धोऽस्य ग्रीवाचामलसारकः । कलश-
स्तुशिरोज्ञेयमज्जाक्षिप्तरसंहितम् ॥६॥ मेदश्चैवसुधांविद्यात्-
लेपो मांसमुच्यते । अस्थीनिचशिलास्तस्यस्नायुः कीलाद-
स्मृताः ॥७॥ चक्षुषीशिखरास्तस्यध्वजाःकेशाःप्रकीर्त्तिताः
एवं पुरुषरूपं तं ध्यात्वा च मनसासुधीः ॥ ८ ॥ प्रासाद
पूजयेत्पश्चाद्गंधपुष्पादिभिः शुभैः । सूत्रेणवेष्टयेद्देवं वाम-
स्तत्परिकल्पयेत् । प्रासादमेवमभ्यर्च्यवाहनं चाग्रमण्ड
पे ॥ ९ ॥ इन श्लोकों कों में मन्दिर का आकार पुरुष रूप से बताया
है । ये मंत्र नहीं हैं । केवल समझाने के लिये हैं । ध्यान के बाद–ओं प्रा
सादाय नमः–से प्रासाद (मंदिर) की पूजा करे और उसके
शरण में जाकर प्रणाम करे । तब–(१) ओं पिण्डिकायै स्वा
हा इदं पिंडिकायै नमम (२) ओं गरुडाय (नन्दिने
सिंहाय) स्वाहा इदं गरुडाय०–इन दो मंत्रों में प्रत्येक में
२८ आहुतियां तिल की दे । यह पिंडिका और वाहन का होम हुआ
फिर प्रत्येक परिवार देवता के लिये भी होम की २८ आहुतियां तिल
से ही देते हैं । शिव के परिवारदेवताओं की आहुतियां–ओं नन्दिने
स्वाहा इदं० । ओं महाकालाय स्वाहा इदं० । ओं वृषभा
य स्वाहा इदं० । ओं भृंगये स्वाहा इदं० । ओं रिटये स्वा
हा इदं० । ओं स्कन्दाय स्वाहा० । ओं उमायै० । ओं
विनायकाय० । ओं विष्णवे० । ओं ब्रह्मणे स्वा० । ओं
जयन्ताय० । ओं इन्द्राय० । अग्नये स्वा० । ओं यमाय०
ओं निर्ऋतये० । ओं वरुणाय० । ओं वायवे० । ओं सो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नाय०। ओं ईशानाय०। ओं अप्सरोगणेभ्यः०। ओं गन्ध-र्वेभ्यःस्वा०। ओं गुह्यकेभ्यः स्वाहा०। ओं विद्याधरेभ्यः०॥ क्योंकि नन्दी, महाकालादि ऊपर कहे गये ही उनके परिवार देवता हैं। ब्रह्मा के परिवार देवता का 'ओं विष्णवे स्वाहा' सेही शुरू होगा और अन्त तक जायगा। केवल-ब्रह्मणे स्वाहा० छूट जायगा। विष्णु के परिवार देवता का 'ब्रह्मणे स्वाहा०' से अन्त तक होम होगा। क्योंकि यही परिवार इन लोगों के हैं। प्रत्येक से २८ आहुतियाँ देकर मूल मंत्र से चरु से १०८ होम करे। बाद को चार आर्य मण्डप के दक्षिणद्वार पर उत्तरमुख खड़ीकर उनकी पूजा करे और उनको-ओं नारायणाय विद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात्-इस विष्णु गायत्री से दूहकर उसी दूध में-ओं तत्पुरुषायविद्महेमहादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रः प्रचोदयात्-इस रुद्र गायत्री से खीर पकावे। फिर देव को भोग लगाकर बारह ब्राह्मणों को खिलावे। खिलाने के बाद 'ओं विष्णुर्मे प्रीयताम्' ऐसा कहे। आचार्य को चार धेनुदान करके रात में जागरण करे, यदि दूसरे दिन शेष कर्म करना हो। यदि उसी दिन पूरा करना हो तो आगे के कर्म करे। यदि कई मूर्त्तियां हों तो सबसे ज्येष्ठ प्रतिमा से आरंभकर सभी का अधिवासन उक्तरीति से ही किया जाता है। यहाँ तक ही अधिवासन का कर्म है। यदि अधिवासन तक की समस्त क्रियाय एक दिन में करले तो शेष दूसरे दिन करे। इसीमें आसानी है। कई दिन में करना हो तो कोई बात नहीं। यदि कोई करसके तो एक दिन में भी करले। यह भी याद रहे कि जिस तरह आचार्य और ऋत्विक् आदि होते हैं उसी तरह, प्रत्येक कुण्ड के लिये एक एक मूर्त्तिपालक या मूर्त्तिप ब्राह्मण भी होता है। अथवा कमसे कम एक होता है। वह होम भी करता है, और मूर्त्ति की रक्षा भी करता है।

अधिवासन के बाद मूर्तिप के साथ प्रधान मन्दिर में आकर आचार्य 'ओं वास्तोष्पते०, तथा मूलमंत्र इन प्रत्येक से, १०८

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

आहुतियां घी से देकर पूर्णाहुति करके दिक्पालों को बलि दे मूर्ति के पास जाकर यथाशक्ति सुवर्णादिका दानकरे और-'भगवन्तं शरणंगतः-से देव की शरण में अपने आप को सौंपे। फिर मण्डप से उत्तर जाकर शान्ति कलश और वरुणादि के कलशों से यजमान का अभिषेक करे। यजमान आचार्य, मूर्त्तिप आदि को दक्षिणा देकर सन्तुष्ट करके हाथ में कुश, जौ, जल लेकर मन्दिर के उत्सर्ग का संकल्प करे। देश, काल आदि कहकर पढ़े-इमं शिलेष्टकादार्वादिनिर्मितं वलभीजगतीप्राकारपरिखागोपुरपरिवारदेवतालयसंयुतं तत्तद्देवतालोककामः कुलद्वयाद्युद्धाय विष्णोः (शिवस्य, देव्याः, गणेशस्य) प्रीतिहेतुमुत्सृजामि ॥ इतना पढ़कर कुशादि जमीन पर रखदे और ब्रह्मभोज करे।

मूर्तिपों के साथ मूर्ति की प्रतिष्ठा के लिये कूर्मशिला, ब्रह्मशिला और पिंडिका को आचार्य 'ओं त्रातारमिन्द्र० पढ़कर उत्तर और शांतिपाठ के साथ प्रदक्षिणा पूर्वक मन्दिर के द्वार पर लाकर रक्खे। सरसों लेकर-'ओं अस्त्रायफट' कह चारों ओर छींट दे। फूल से जल ले लेकर मन्दिर के बीच में सींचे। और 'ओं महाँइन्द्रो वज्रहस्तः बोडशीशर्मयच्छतु। हन्तुप्मानं योऽस्मान्द्वेष्टि। उपयामगृहीतोऽसिमहेन्द्रायत्वैष योनिर्महेन्द्रायत्वा- पढ़कर मन्दिर के बीच में ही कुश से लकीरें खींचे और-'ओं हुंफट्' मंत्र से उसपर जल छींटे। इसके बाद मन्दिर के मध्य गर्भ को सूत से ठीक ठीक नापकर बीच से एक आधा जौ उत्तर या ईशान की ओर खसका कर पहले पञ्च रत्न रखे उसीपर 'ओं' कहकर कूर्म शिला बैठावे। कूर्मशिला के नीचे में जो गढा होगा वह द्वार के सामने होगा। उसी गढ़े में सोने का कूर्म (कछुवा), जो पहले सेही बना होगा, द्वार के सामने ही रक्खे। तब उसके ऊपर फिर पञ्चरत्न रख उसपर ब्रह्मशिला स्थापित करे। ब्रह्मशिला के भीतर ३६ या ४५ छोटे छोटे छिद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गढ़े होने चाहियें। 'ओं नमो व्यापिनि स्थिरे अचले ध्रुवे ओं श्रींलं स्वाहा–इस मंत्र से ब्रह्मशिला की पूजा कर प्रार्थना करे-ओं त्वमेव परमा शक्तिस्त्वमेवासनधारिका। शिवाकृपा त्वया देवि स्थातव्यमिह सर्वदा॥ फिर उसी शिलापर ऐसा ध्यान करे-ओं पादाध्वने नमः। ओं मन्त्राध्वने०। ओं भुवनाध्वने०। ओं तत्त्वाध्वने०। ओं सकलाध्वने नमः॥ सारांश, उसेही पांव, मंत्र आदि का अध्वा, मार्ग या स्थान, समझे। फिर वहां अग्नि स्थापित कर या मण्डप में जाकर स्वस्तिवाचन कराके मूलमंत्र से १०८ आहुतियां घी की देकर ब्रह्मशिलाके प्रत्येक ३६ या ४५ छिद्रों में सोना सहित हाथ से रत्न रक्खे। और ब्रह्मशिला के छिद्र रहित भागपर पिण्डिका को जिसमें ऊपर गढ़ा या छिद्र बना हो, स्थापित करे। यदि मन्दिर पूर्व या पश्चिम द्वार वाला हो तो पिण्डिका से जल बहने का रास्ता उत्तर रहे और यदि द्वार उत्तर या दक्षिण हो तो पूर्व ओर रहे। उसे स्थापित करने के समय आगे का ध्रुवसूक्त पढ़े। फिर यदि विष्णु की प्रतिष्ठा करनी हो तो–ओं श्रीश्चते० मंत्र से उस पिण्डिका का अभिमंत्रण करे। शिव हों तो–ओं आयं गौः पृश्निरक्र० से। ब्रह्मा हों तो, गायत्री पढ़े। फिर पिण्डिका को छूकर कहे 'ओं आधारशक्त्यैनमः'। और–'ओं अनन्तासनादिवह्नितत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः, से उसकी पूजा करके 'ओं आसनशक्तिभ्यो नमः' कह कर पिण्डिका की यों प्रार्थना करे–ओं सर्वदेवमयीशानि त्रैलोक्याह्लादकारिणि। त्वांप्रतिष्ठापयाम्यत्र मन्दिरे विश्वनिर्मिते॥ १॥ यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावदेषा वसुन्धरा। तावत्त्वं देवदेवेशि मन्दिरेऽस्मिन् स्थिरा भव॥ २॥ पुत्रानायुष्मतो लक्ष्मीमचलामजरामृताम्। अभयं सर्वभूतेभ्यः कर्त्तुर्नित्यं विधेहिभोः॥ ३॥ विज-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

G-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

यं नृपतेः सर्वलोकानां क्षेममेव च । सुभिक्षं सर्ववस्तूनां कुरुदेवि नमो नमः ॥ ४ ॥ इसके बाद पिण्डिका के छिद्र में ओं हीरा, हरताल, सोना और सहदेई रखकर दिक्पालों के मंत्रों से उनको स्पर्श करे । पूर्व ओर-ओं त्रातारमिन्द्र०-से अग्नि कोन में-' ओं अग्निदूतं०-से । दक्षिण में ' ओं यमायत्वा०-से । नैर्ऋत्य में ' ओं असुन्वतमयज०-से । पश्चिम में-ओं पञ्चनद्यः०-से । वायव्य में-ओं वायो येते सहस्रिणो रथासस्तेभिरागहि । नियुत्वान्सोमपीतये ॥ उत्तर में ' ओ वयं सोम०-से । ईशान में ' ॐ तमीशानं०-से । तब सोने की पृथ्वी, मेरु, सूर्य और देव के वाहन की मूर्त्तियां और पारा उसके छिद्र में द्वार के सामने मुख करके रक्खे और गुग्गुल का रस डालकर छिद्र के रन्ध्रादिको स्थिर कर दे । मधु, घी लगाकर छिद्र को चिकनाकर वस्त्र से ढंक दे । ' ओं हुम् ' कह कर उसे हाथ से दवाकर ' ओं अस्त्रायफट् ' से उसकी रक्षा करे । अर्थात् इसे पढ़ दे । ओं मनोजूतिः०-मंत्र से मन्दिर का अभिषेक जलसे करे उसमें या वाहर इन्द्रादि दिक्पालों को बलि दे और आचमन करडाले । यहाँतक पिण्डिका की प्रतिष्ठा हुई । मन्दिर के वाहर आठ दिशाओं की भूमि को पञ्चगव्य से पवित्र कर कुश की पिञ्जूली से झाड़ दे । आठों जगह आठ वेदियाँ वालू की होम के लिये बनावे और प्रत्येक के ईशान कोन में एक एक कलश स्थापित करे इन्हें जलसे भर दे और इनमें विधिवत् पुष्प, फल, पञ्चरत्न डालकर सूत से लपेट दे । प्रत्येक पर पञ्चभूसंस्कारपूर्वक अग्नि की स्थापना करके और मूलमंत्र से पलाशसमिधाओं की १०८ आहुतियां हरेक पर देकर-ओं नारायणायविद्महे वासुदेवाय धीमहि तन्नो विष्णुः प्रचोदयात् स्वाहा इदं विष्णवे नमम- से घी की भी उतनी हीं आहुतियाँ हरेक पर दे । घी की तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी दे सकता है। फिर आठों कलशों का जल एक ताँबे के पात्र में लेकर मूलमंत्र से सौ बार उसका अभिमंत्रण करे। जल लेकर मूर्ति के पास जाय और जल को, ऐसा समझता हुआ कि यह सभी तीर्थों का स्वरूप है, मूर्ति के सिरपर डाले। तब—ओं नृसिंह उग्ररूपत्वंज्वलज्वल प्रज्वल स्वाहा हुंफट्—मंत्र से मूर्ति के चारों ओर सरसों छींटकर मूर्तिपों के साथ शंखादि के शब्दों के बीच देव की प्रार्थना करे—ओं प्रबुध्यस्व महाभाग देवदेव जगत्पते। मेघश्याम गदापाणे प्रबुध्यकमलेक्षण ॥ प्रबुध्यभूधरानन्त वासुदेव नमोऽस्तुते ॥ एक शंख में जल, कुश का अग्रभाग, तिल, चावल, जौ, सफेद सरसों, पुष्प डालकर देवको अर्घ्य दे और—ओं उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते०—मन्त्र से उठाकर मूर्त्ति को—ओं रथेतिष्ठन्नय०—से रथ में स्थापित करे। सवारी के आगे आचार्य, पीछे सपरिवार यजमान और दोनों बगलों में मूर्त्तिप के साथ चलकर शान्तिपाठ, बाजे, गीत के साथ गांव या मन्दिर की प्रदक्षिणा कराके मन्दिर के द्वार पर रथ से उतारे और द्वार के सामने मूर्त्ति को रखकरके पूर्ववत् अर्घ्य दे। फिर शुभ मुहूर्त्त में प्रतिमा मन्दिर में लेजावे और यजमान सहित आचार्य पिंडिका पर उसे स्थापित करे। उस की रीति यह है कि मूर्त्ति में ईश्वर की भावना करके पिंडिकाके छिद्र में सोने का कमलद्रव्य के साथ पहले रक्खे और 'ओं प्रधानपुरुषौ यावद्यावच्चन्द्रदिवाकरौ। तावत्त्वमनया शक्त्या युक्तोऽत्रैवस्थिरो भव—पढ़कर ध्रुवसूक्त भी पढ़े और पिंडिका के छिद्र में मध्य भाग से एक या आधा जौ उत्तर या ईशानओर खसकाकर मूर्त्ति को रक्खे और 'ओं स्थिरो भव शाश्वतो भव—' यह कह कर मूर्त्ति के चारों ओर छिद्र में जो जगह खाली हो उसे बालू और सीसे आदि से अच्छी तरह भर दे। मूर्त्ति के वाम भाग में उनकी स्त्री को स्थापित करे। यदि विष्णु हों तो लक्ष्मी को 'ओं श्रीश्चते०' मंत्र से। शंकर हों तो गौरी को 'ओं आयं गौ०'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

से । ब्रह्मा हों तो सावित्री को गायत्री मंत्र से । सूर्य हों तो प्रभा को 'ओं उषस्तचित्रमाभरास्मभ्यं वाजिनीवति। येनतोकं च तनयंच धामहे–मंत्र से । फिर–ओं विश्व तश्चक्षुः०' से देव के सिर पर हाथ रख परब्रह्म स्वरूप ध्यान करके आगे लिखे रुद्रसूक्त के मंत्र जपे । तब प्रार्थना करे–ओं स्वागतं देवदेवेश मद्भाग्यात्त्वमिहागतः । प्रकृतंत्वमदृष्ट्वा मां बालवत्परिपालय ॥ १ ॥ धर्मकामार्थसिद्ध्यर्थं स्थिरो भव शिवाय नः । सान्निध्यं तु महादेव स्वार्चायां परिकल्पय ॥ २ ॥ यावच्चन्द्रावनी सूर्यास्तिष्ठन्त्यप्रतिघातिनः । तावत्त्वयात्रदेवेश स्थेयं भक्तानुकम्पया ॥३॥ तब यदि विष्णु हों तो 'ओं अतसीपुष्पसंकाशं शंखचक्रगदाधरम् । संस्थापयामि देवेशं देवं भूत्वा जनार्दनम्' यह पढ़कर उनके हृदय में स्पर्श कर पुरुष सूक्त पढ़े । इसी तरह शिव हों तो 'ओं त्र्यक्षं च दशबाहुं च चन्द्रार्द्धकृतशेखरम् । गणेशं वृषभस्थं च स्थापयामि त्रिलोचनम्' पढ़कर रुद्रसूक्त; ब्रह्मा हों तो–ओं ऋषिभिः संस्तुतं देवं चतुर्वक्त्रं जटाधरम् । पितामहं महाप्राज्ञं स्थापयाम्यंबुजोद्भवम्' कह कर ब्रह्मसूक्त; सूर्य हों तो, 'ओं सहस्रकिरणं शान्तमप्सरोगणसेवितम् पद्महस्तं महाबाहुं स्थापयामि दिवाकरम्' कहकर सौर सूक्त जपे । इसके बाद 'ओं भूः ओं भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यं ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ओं आपो ज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्मभूर्भुवः स्वरोम्' इस मंत्रको पढ़कर प्रतिमा में देवता का आवाहन करे–ओं नमस्तेत्यक्तसंगा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

य सन्तोषपरमात्मने । ज्ञानविज्ञानरूपाय ब्रह्मतेजोऽनु शालिने ॥ १ ॥ गुणातिक्रान्तवेगाय पुरुषाय महात्मने । अव्यक्ताय पुराणाय विष्णो सन्निहितो भव ॥ २ ॥ भग-वन्देवदेवेश त्वं पिता सर्वदेहिनाम् । त्वया व्याप्तमिदं सर्वजगत्स्थावर जंगमम् ॥३॥ त्वमिंद्रः पावकश्चैव यमो नि-र्ऋतिरेव च । वरुणो मारुतः सोम ईशानः प्रभुरव्ययः ॥४॥ येन रूपेण भगन्व्याप्तं च भुवनत्रयम् । तेन रूपेण देवेश अर्चायाः सन्निधोभव ॥५॥ सर्वमंत्रादिसंयुक्तो लोकानु-ग्रहकाम्यया । अत्रार्चायां महादेव भव सन्निहितः सदा ॥ ६ ॥ सूर्याचन्द्रमसौ यावद्यावत्तिष्ठति मेदिनी । तावत्त्वयात्र देवेश स्थातव्यं स्वेच्छया प्रभो ॥ ७ ॥

इस प्रकार प्रधान देवता की स्थापना कर उनके चारों ओर परिवार के देवताओं की स्थापना करे। परिवार देवताओं के नाम पहले ही होम के समय बता चुके हैं। सूर्य के परिवार वहां नहीं कहे गये हैं। वे हैं दंड, पिंगल, माठर, अरुण।

इसके बाद मण्डप में आकर अंग होम करना चाहिये। आचार्य अपने कुण्ड में 'ओं नेत्रत्रयायवौषट्' मंत्र से २० आहुतियां घी से दे। शेष आहुतियां अन्य कुण्डों में दी जाती हैं। अगर एक ही कुण्ड हो तो पहले-ओं हृदयाय स्वाहा। ओं शिरसे स्वाहा। ओं शिखायै वषट्। ओं कवचायहुम् स्वाहा—इन चार से बीस बीस आहुतियां देकर—ओं नेत्रत्रयायषवौट्—से २० दे और फिर 'ओं अस्त्रायफट् स्वाहा' से भी २० देकर 'ओं सर्वायुधेभ्यः स्वाहा। ओं विमलादिनवपीठशक्तिभ्यः स्वाहा। ओं सर्वेभ्योऽग्निभ्यः स्वाहा। ओं सर्वपरिवारदेवताभ्यः स्वाहा।' इन प्रत्येक से २० आहुतियां दे और—ओं अघोरेभ्योऽथ० से भी १०८ आहुतियां दे। होम के बाद प्रार्थना करे—ओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

लोकानुग्रहहेत्वर्थं स्थिरोभव सुखासने। सान्निध्यं हि सदा देव प्रत्यहं परिवर्त्तय ॥ १ ॥ माभूत्पूजाविरामोऽस्मिन्यजमानः समृध्यताम्। संपालय सतां राष्ट्रं सर्वोपद्रववर्जितम्। क्षेमेणवृद्धिमतुलां सुखमक्षय्यमश्नुताम् ॥ २ ॥ इसके बाद पूर्वोक्त रीतिसे पुरुषसूक्तसे षोडशोपचार पूजा करे।

तब विष्णु मन्दिर के द्वारके दहिने 'ओं चंडं स्थापयामि। ओं जयं स्थापयामि' मंत्र से चण्ड, जय की स्थापना; बाद 'ओं प्रचण्डं स्थाप०। ओं विजयं स्था०' से प्रचण्ड और विजय की स्थापना करे। बाईं ओर ही 'ओं विष्वक्सेनं स्थापयामि' से विष्वक्सेन की स्थापना होती है। शिव हों तो-ओं नन्दिनं स्था०। ओं महाकालं०। ओं गणेशं०। ओं उमांस्थापयामि। ओं चण्डं स्थापया०। ओं स्कन्दं०-इत्यादि मंत्रों से नन्दी आदि की स्थापना करे। सूर्य हों तो-ओं पिंगलं स्थापयामि—इत्यादि नाममंत्रों से उनके परिवार की स्थापना करते हैं और फिर प्रत्येक 'स्थापयामि' की जगह 'पूजयामि' पढ़ कर उन्हीं मंत्रों से प्रत्येक की पूजा की जाती है। फिर मन्दिर से बाहर आकर मंदिर की विधिवत् पूजा 'ओं प्रासादाय नमः' मंत्र से करके पताका तोरण लगाकर हल्दी और सिन्दूर आदि से रंगदे। उपरांत मन्दिर के भीतर जाकर मन्दिर के आगे के मण्डप में प्रत्येक देवता के साथ उनके वाहनों का स्थापना कर पूजा करे। विष्णु के गरुड़ को 'ओं गरुडं स्थापयामि' शिवके वृषभ की 'ओं वृषभं०' देवी के सिंह की 'ओं सिंहं०' गणेश के मूषक की 'ओं मूषकं०' कार्तिकेय के मोर की 'ओं मयूरं०' रामचन्द्र के हनुमान की 'ओं हनूमन्तं०' से करे। फिर 'स्थापयामि' की जगह 'पूजयामि'

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कह कर पूजा करे । बाद, सभी मन्दिरों के बाहरी मण्डपों में इन देवताओं की स्थापना कर पूजाकरे । पूर्व में-ओं अम्बिकां-अग्नि कोन में-ओं विष्णुं-दक्षिण में-ओं धर्मराजं, पितृगणान्-निर्ऋति में-ओं निर्ऋतिं, वास्तुपुरुषं-पश्चिम में-ओं वरुणं, समुद्रं, सरितः-वायव्य में-ओं वायुं, दुर्गां, शेषं, गणेशं-उत्तर में-ओं यक्षान्, उमां, स्कंदं, सोमं-ईशान में-ॐ शिवं-के आगे 'स्थापयामि' लगाकर स्थापना और 'पूजयामि' कहकर पूजा करे । द्वार से दक्षिण-ओं कुबेरं-बायें-ओं श्रियं-कहकर 'स्थापयामि, पूजयामि' कह स्थापना, पूजा करे । इसके सिवाय इन्द्रादि दिक्पालों को उनके मंत्रों से दिशाओं में स्थापित करके पूजा करे ।

इसके बाद यदि महादेव की स्थापना हुई तो उनका आवाहन करके इस तरह पूजा करे-ओं यस्य सिंहा रथे युक्ता व्याघ्री-भूतास्तथोरगाः । ऋषयो लोकपालाश्च सोमो विष्णुः पितामहः ॥ १ ॥ नागा यक्षाः सगन्धर्वा ये च दिव्या न-भश्चराः । तमहं त्र्यक्षमीशानं शिवं रुद्रमुमापतिम् । आवाहयामि सगणं सपत्नीकं वृषध्वजम् ॥ २ ॥ आगच्छ भगवन् रुद्रानुग्रहाय शिवोभव । शाश्वतो भव पूजां मे गृहाणत्वंनमो ऽस्तुते ॥३॥ ॐ स्वागतमनुस्वागतं भगवते नमोनमः । सोमायसगणायसपरिवाराय नमः इमांपूजां गृह्णातु भगवान् ओं मंत्रपूतमिदमर्घ्यं पाद्यमाचमनी-यमासनं ब्रह्मणाभिहितं नमो नमः स्वाहा ॥४॥ इस प्रकार आवाहन करके आसन, अर्घ्य आदि देकर पूजा करे । यदि विष्णु की पूजा करनी हो तो 'आगच्छ भगवन्' इत्यादि तीसरे श्लोक से लेकर अन्ततक पढ़ के करे । केवल 'रुद्र' की जगह 'विष्णो' पद पढ़े और 'सोमाय' शब्द निकाल दे । इसी

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

तरह सूर्य के लिये 'रुद्र' की जगह 'सूर्य' पढ़े और देवी के लिये 'देवि'। 'सोमाय' पद सूर्यादि की पूजा में भी न पढ़े। फिर अभिषेक (स्नान) करावे। दही, दूध, घी, मधु और शक्कर से क्रमशः स्नान करावे और प्रत्येक स्नान के बाद सुगन्ध जल से बीच बीच में नहलाता जाय। सुगन्ध जल से स्नान कराने का मंत्र-ओं गन्धद्वारां०-है और दही आदि के क्रम से-ओं दधिक्राव्णो०। ओं आप्यायस्व समेतु०। ओं घृतवती०। ओं मधुवाताऋता०। ओं आयंगौः०-इत्यादि ६९५ पृष्ठ में लिखे हैं। उन्हें देख ले। तब इन मंत्रों को पढ़े-ओं ततो विराडजायत० * ॥ १ ॥ ओं सहस्रशीर्षा० * ॥ २ ॥ ओं अभित्वाशूरनोनुमो० (७०६) ॥३॥ ओं पुरुषएवेदं० * ॥४॥ ओं नत्वावाँ अन्योदिव्यो नपार्थिवो न जातो न जनिष्यते। अश्वायन्तो मघवन्निन्द्र वाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥ ५ ॥ इन मंत्रों के पढ़ने के समय प्रत्येक मंत्र के अन्त में जल से मूर्ति के पांव, नाभि, छाती, सिर का स्पर्श करे। इसके बाद शिव की प्रार्थना करे-ओं भगवन्देवदेवेश धर्मकामार्थमोक्षदः। विद्याविद्येश्वरै रुद्रैर्गणेशैर्लोकपालकैः ॥ १ ॥ देवदानवगन्धर्वयक्षैश्च सह किन्नरैः। अस्मिँल्लिंगे महादेव सर्वदावसवैप्रभो ॥ २ ॥ पुंसामनुग्रहार्थाय पृथिव्यां स्वेच्छया प्रभो। परावरेणभावेन स्थातव्यं सर्वदा त्वया ॥ ३ ॥ सर्वविघ्नहरः, पुंसां सर्वदुःखहरः सदा। सर्वदा यजमानस्य इच्छासंपत्करो भव ॥ ४ ॥ नमस्ते सर्वधर्माय सन्तोषविजितात्मने। ज्ञानविज्ञानतृप्ताय ब्रह्मतेजोभिशालिने ॥ ५ ॥ नमस्ते शुद्धदेहाय पुरुषाय महात्मने। स्थापकानां मूर्त्तिपानां शिल्पिनांच विभो सदा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

॥ ६ ॥ ग्रामदेशनृपाणां च शान्तिर्भवतु सर्वदा । पूजकाराधकानांच भक्तानां भक्तवत्सल ॥ ७ ॥ सर्वेषांच जगन्नाथ इच्छासिद्धिप्रदो भव । चन्द्रार्कावनिपर्यन्तं लिंगेऽस्मिन् परमेश्वर ॥ ८ ॥ स्थातव्यमुमया सार्द्धं सर्वलोकानुकम्पया । यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत्तिष्ठति मेदिनी । तावत्त्वयात्र देवेश स्थातव्यं स्वेच्छया प्रभो ॥ ९ ॥

यदि विष्णु हों तो भी इन्हीं श्लोकों से प्रार्थना करेंगे । केवल दूसरे श्लोक का आधा, जो अन्त में है, इस तरह पढ़ेंगे— अस्यां मूर्त्तौ महाविष्णो सान्निध्यं कुरु सर्वदा ॥ और आठवें श्लोक के अंत में 'लिंगेऽस्मिन्परमेश्वर' की जगह 'मूर्त्तावस्यां रमेश्वर' पढ़ेंगे । 'उमया' को 'रमया' पढ़ेंगे । विष्णु देव की पूजा तो इसके बाद फिर पुरुषसूक्त से षोडशोपचार से करके महाविद्यास्तोत्र से प्रार्थना करे । वह इस तरह है— ॐ जितंते पुण्डरीकाक्ष नमस्ते विश्वभावन । सुब्रह्मण्य नमस्तेऽस्तु महापुरुष पूर्वज ॥ १ ॥ नमोहिरण्यगर्भाय प्रधानाव्यक्तरूपिणे । ओं नमो वासुदेवायशुद्धज्ञानस्वरूपिणे ॥ २ ॥ देवानांदानवानांच सामान्यमसि देवतम् । सर्वदा चरणद्वंद्वंव्रजामि शरणंतव ॥ ३ ॥ एकस्त्वमसि लोकस्य स्रष्टासंहारकस्तथा । अध्यक्षश्चानुमंता च गुणमायासमावृतः ॥ ४ ॥ संसारसागरं घोरमनन्तक्लेशभाजनम् । त्वामेव शरणं प्राप्य निस्तरन्ति मनीषिणः ॥ ५ ॥ नतेरूपं नचाकारो नायुधानि न चास्पदम् । तथापि पुरुषाकारो भक्तानां त्वं प्रकाशसे ॥६॥ नैवकिंचित्परोक्षंते प्रत्यक्षोऽसि न कस्यचित् । नैव किञ्चिदसाध्यंते नैवसाध्योऽसि कस्यचित् ॥ ७ ॥ कार्याणां कारणं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

पूर्वं वचसां वाच्यमुत्तमम् । योगिनां परमां सिद्धिं परमं ते पदं विदुः ॥ ८ ॥ अहं भीतोऽस्मि देवेश संसारेऽस्मिन्महाभये । त्राहि मां पुंडरीकाक्ष नजाने शरणं परम् ॥ ९ ॥ कालेष्वपि च सर्वेषु दिक्षु सर्वासु चाच्युत । शरीरेऽपि च वापि वर्तते मे महद् भयम् ॥ १० ॥ त्वत्पादकमलादन्यन्न मे जन्मान्तरेष्वपि । निमित्तं कुशलस्यास्ति येन गच्छामि सद्गतिम् ॥ ११ ॥ विज्ञानं यदिदं प्राप्तं यदिदं ज्ञानमर्जितम् । जन्मान्तरेऽपि मे देव माभूदस्य परिक्षयः ॥ १२ ॥ दुर्गतावपि जातायां त्वंगतिस्त्वं मतिर्मम । यदि नाथ च विज्ञेयं तावतास्मि कृतीसदा ॥ १३ ॥ आकामकर्षंचित्तं ममते पादयोः स्थितिम् । कामये वैष्णवत्वं तु सर्वजन्मसु केवलम् ॥ १४ ॥ इस तरह प्रार्थना के बाद प्रणाम के अन्त में कहे–'ओं क्षमस्व' । इस के बाद हाथ जोड़कर विष्णु से कहें–ओं ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि यावद्विधिरनुष्ठितः ससर्वस्त्वत्प्रसादेन समग्रो भवतान्मम ॥ शिव से कहे–ओं ज्ञानतोऽज्ञानतोवापि भगवन्यत्कृतंमया । तत्सर्वं पूर्णमास्तु त्वत्प्रसादान्महेश्वर ॥ इस के बाद स्थापन करने वाले के नाम को मिलाकर स्थापित देव का नाम रक्खे । विष्णु हों तो यजमान के नाम के अन्त में स्वामी या नारायण लगाकर 'अमुक स्वामी या अमुक नारायण' नाम रक्खे । शिव हों तो नाम के अन्त में ईश्वर लगाकर ' अमुकेश्वर ', सूर्यका 'अमुकादित्य', देवी का 'अमुकेश्वरी' और गणेश का 'अमुकविनायक' रक्खे । उसी नाम से उस मूर्त्ति को सदा पुकारा जाय ।

यदि स्थापना के समय मूर्त्ति सीधी खड़ी न रह असावधानी से इधर उधर झुक जाय तो उस दिशा के दिक्पाल के मंत्र से तिल, शमी या पलाश की समिधा से १०८ आहुतियां देकर उस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्णाहुति कर ले और उन उन दिक्पालों की दक्षिणा दे । इन्द्रादि दिक्पालों की दक्षिणा क्रम से हाथी, घोड़ा, भैंसा, बकरा, शक्ति (अस्त्र), मोती, दो वस्त्र, भेड़, धेनु और बैल हैं । यदि ये न देसके तो इनकी मूर्त्तियां यथाशक्ति सोने चांदी आदि की दान करे । यदि स्थापना के समय कोई विलक्षण शब्द हो या भीतर से कहीं छिद्र फट जाय तो शांति के लिये मूल मंत्र से १०८ आहुतियां दे । शान्ति न करने से बड़ा अनिष्ट माना गया है । यदि मूर्त्ति टेढ़ी न हो या शब्दादि न हों तो इन होमों की कोई आवश्यकता नहीं है । इस के बाद प्रतिष्ठाहोम की आहुतियां इस तरह दे—ओं शिवाय स्थिरो भव स्वाहा इदं लिंगोक्तदेवतायै नमम ॥ १ ॥ ओं शिवायाप्रमेयो भव स्वाहा इदं० ॥२॥ सर्वत्र एक ही त्यागवाक्य होगा । ओं शिवायानादिबोधो भवस्वाहा० ॥ ३ ॥ ओं शिवाय नित्यो भव स्वाहा० ॥ ४ ॥ ओं शिवाय सर्वगो भव स्वाहा० ॥ ५ ॥ ओं शिवायाविनाशो भव स्वाहा० ॥ ६ ॥ ओं शिवाय क्लृप्तो भव स्वाहा० ॥ ७ ॥ इस के बाद अघोरमंत्र से १०८ आहुतियां सर्वशान्ति के लिये दे कर अन्त में—ओं अग्नयेस्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये स्विष्टकृते नमम—मंत्र से ब्रह्माके अन्वारंभ करने पर सभी तिल घृतादि मिला कर एकही आहुति दे । फिर व्याहृति, पंचवारुणी और प्रजापति की ये ९ आहुतियां घी से ब्रह्मा के अन्वारंभ करने पर दे कर प्रोक्षणी में संस्रव रक्खे । तब संस्रव प्राशन एवं आचमन करके ब्रह्मा को सद्रव्य पूर्णपात्र दे । उसका संकल्प । ॐ अद्य० इत्यादि पढ़ कर—अमुकदेवप्रतिष्ठाहोमकर्मणि कृताकृतावेक्षणार्थमिदं पूर्णपात्रं प्रजापतिदैवतंसदक्षिणाकं तुभ्यमहं संप्रददे ओं तत्सन्नमम—पढ़े । फिर प्रणीता का विमोक करके बर्हिः-होम करे । इस के बाद पूर्णाहुति का संकल्प करे—ओं अद्य कृतस्य प्रतिष्ठाकर्मणः सांगतार्थं पूर्णाहुतिहोमं करिष्ये ॥ ३२२ पृष्ठोक्त रीति से घी, नारियल, पान, सुपारी आदि लेकर सपत्नीक

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

यजमान आचार्य का दहिना कन्धा छूकर खड़ा होके पूर्णाहुति इन मंत्रों के अन्त में दे–ओं समुद्रादूर्मिर्मधुमाँ उदारदुपांशुना सममृतत्वमानट् । घृतस्यनाम गुह्यंयदस्ति जिह्वा देवानाममृतस्यनाभिः ॥ १ ॥ वयं नामप्रब्रवामाघृतस्यास्मिन्यज्ञे धारयामानमोभिः । उपब्रह्माशृणवच्छस्यमानं चतुःशृंगोवमीद्गौर एतत् ॥ २ ॥ चत्वारिशृंगात्रयोअस्यपादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासोऽस्य । त्रिधा बद्धो वृषभोरोरवीति महोदेवो मर्त्यां आविवेश ॥ ३ ॥ त्रिधाहितंपणिभिर्गुह्यमानं गविदेवासो घृतमन्वविन्दन् । इन्द्रएकंसूर्यएकं जजान वेनादेकं स्वधया निष्टतक्षुः ॥४॥ एताअर्षन्तिहृद्यात्समुद्राच्छतव्रजारिपुणानावचक्षे । घृतस्यधाराअभिचाकशीमि हिरण्ययो वेतसो मध्य आसाम् ॥ ५ ॥ सम्यक्स्रवन्ति सरितोनधेना अन्तर्हृदा मनसापूयमानाः एते अर्षन्त्यूर्मयो घृतस्य मृगा इवक्षिपणो रीषमाणाः ॥६॥ सिन्धोरिवप्राध्वने शूघनासोवातप्रमियः पतयन्ति यह्वाँ । घृतस्यधारा अरुषोनवाजी काष्ठाभिन्दन्नूर्मिभिः पिन्वमानः ॥ ७ ॥ अभिप्रवंत समनेवयोषाः कल्याण्यः स्मयमानासोऽ अग्निम् । घृतस्यधारा समिधोन संतः जुषाणो हर्यतिजातवेदाः ॥ ८ ॥ कन्या इववहतुमेतवाउ अंज्यंजाना अभिचाकशीमि । यत्र सोमः सूयते यत्रयज्ञो घृतस्यधारा अभितत्पवन्ते ॥ ९ ॥ अभ्यर्षत सुष्टुतिंगव्यमाजिमस्मासुभद्रा द्रविणानिधत्त । इमं यज्ञंनयतदेवतानो घृतस्यधारा मधुमत्पवंते ॥ १० ॥ धामन्ते विश्वंभुवनमधिश्रितमंतः समुद्रे हृद्यन्तरायुषि । अपामनीकेसमिथे य आभृतस्तमश्याम मधुमन्तं त ऊर्मिम् ॥ ११ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मूर्द्धानंदिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निं कविं सम्राजमतिथिं जनानामासन्नापात्रं जनयन्त देवाः ॥ १२ ॥ ओं चित्तिं जुहोमि मनसाघृतेन यथा देवा देवहागमन् वीतहोत्रा ऋतावृधः । पत्ये विश्वस्य भूमनो जुहोमि विश्वकर्मणे विश्वाहादाभ्यः ॥ १३ ॥ सप्तते अग्ने समिधः सप्त जिह्वाः सप्तऋषयः सप्तधामप्रियाणि । सप्त होत्राः सप्तधात्वा यजन्ति सप्तयोनीरापृणस्वाघृतेन स्वाहा ॥१४॥ शुक्रं ज्योतिश्च चित्रज्योतिश्च सत्यज्योतिश्च ज्योतिष्माँश्च । शुक्रश्च ऋतपाश्चात्यं हाः ॥ १५ ॥ ईदृङ्न्यादृङ्प सदृङ्पप्रतिसदृङ्प । मितश्च सम्मितश्च सभराः ॥ १६ ॥ ऋतश्च सत्यश्च ध्रुवश्च धरुणश्च । धर्त्ताच विधर्ताच विधारयः ॥ १७ ॥ ऋतजिच्च सत्यजिच्च सनजिच्च सुषेणश्च । अंतिमित्रश्चदूरे अमित्रश्चगणः ॥१८॥ ईदृक्षास एतादृक्षास ऊषुणः सदृक्षासः प्रतिसदृक्षास एतन । मितासश्च सम्मितासोनो अद्य सभरसोमरुतो यज्ञेऽअस्मिन् ॥ १९ ॥ स्वतवांश्च प्रघासीच सांतपनश्च गृहमेधी च । क्रीडी च शाकी चोज्जेषि ॥ २० ॥ उग्रश्च भीमश्च ध्वांतश्चधुनिश्च । सासव्हाँश्चाभियुग्वाचविक्षिपः स्वाहा ॥ २१ ॥ पुनस्त्वादित्या रुद्रावसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणोवसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वं तन्वंवर्द्धयस्व सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥२२॥ वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम् । देवस्त्वा सविता पुनातु वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वा कामधुक्षः ॥ २३ ॥ पूणादर्वि परापत सुपूर्णापुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जंशतक्रतो स्वाहा ॥ २४ ॥ इदमग्नये वैश्वानराय

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

वसुरुद्रादित्येभ्यः शतक्रतवे सप्तवते अग्नये अङ्ग्यश्च नमः। अन्त के वाक्य के साथ धीरे धीरे धारा के साथ गिराकर पूर्णाहुति करे। इसके बाद ६५१ पृष्ठोक्त रीति से मेधा प्रार्थना-ओं सदस्पतिमद्भुतं० इत्यादि से करके,-ओं तनूनपा०-आदि से मुख को हाथ से छूकर और 'ओं अंगानिच मे०' इत्यादि प्रार्थना करके तथा जलस्पर्श करके वहीं लिखी रीति से 'ओं त्र्यायुषं०' इत्यादि से त्र्यायुष करे। फिर प्रार्थना करे-ओं आघारादिपूर्णाहुतिपर्य्यन्तं यदूनं यावत्यासंख्यया येनमंत्रेण यस्यै यस्यै देवतायै यथाविधि मनया हुतं सासादेवता प्रीयताम्। ततश्चसर्वेदेवा शांतिपुष्टितुष्टिवरदा भवन्तु ॥ और कुंड के ईशान में दर्भों अक्षत आदि की एक बलि देकर आचमन करे। इसके बाद ऋत्विजों के सहित आचार्य उत्तर मुख खड़ा हो ग्रहकलश और शान्ति कलश के जल को तांबे आदि के पात्र में रख पीढ़े पर यजमान को तथा उसके बाद पत्नी पुत्रादि को बैठा कर २२५ पृष्ठोक्त मंत्रों से आम्रपल्लवों से अभिषेक करे। अभिषेक के अन्तमें ६५५ पृष्ठोक्त 'मुरास्त्वाम०' इत्यादि नौ श्लोकों से भी अभिषेक करके अन्तमें-ओं अमृताभिषेकोऽस्तु-ऐसा कहके अभिषेक समाप्त करे। इसके बाद सर्वौषधि का लेप देह में करके यजमान फिर से स्नान कर वस्त्र बदल डाले और तिलकादि धारण कर सपत्नीक यजमान आसन पर बैठ कर ७०२ पृष्ठोक्त रीति से घृत छाया देख कर उसे दान कर दे। यदि संक्षेप से छायादर्शन करना हो तो ६५७ पृष्ठ की रीति से कर डाले।

इसके बाद आचार्यादि की पूजाकर दक्षिणा देकर अग्नि तथा देवताओं का विसर्जन करते हैं और चौथे दिन चतुर्थी कर्म करते हैं। दूसरे दिन भी चतुर्थी कर्म किया जाता है। यदि उसी दिन चतुर्थीकर्म कर डालने की इच्छा हो तो फिर चतुर्थी कर्म के बाद ही अग्नि का विसर्जन और आचार्यादि की पूजा करे। यदि दूसरे या चौथे दिन करते हैं तो फिर से पञ्चभूसंस्कार पूर्वक अग्नि की स्थापना करते हैं और आघार, आज्यभाग के होम से पहले तक की कुण्ड

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कंडिका वाली समस्त क्रियायें करके आघार, आज्यभाग के बाद चतुर्थी होम की आहुतियाँ देते हैं। उसी दिन करने में तो संस्रव-प्राशन, बर्हिःहोम और ब्रह्मा के पूर्णपात्र की दक्षिणा देने की आवश्यकता नहीं है। चतुर्थी होम के बाद ही पूर्णपात्र देते हैं तथा बर्हिःहोम आदि करते हैं। अस्तु, हम बर्हिःहोमादि की विधि लिख चुके हैं। अतएव आचार्य की पूजा लिखकर पीछे से चतुर्थी कर्म लिखेंगे।

आचार्य को आसन पर बैठाकर उसकी पूजा करके यथाशक्ति गौ, वस्त्रादि दानकरे। कमसे कम एक गौ अवश्य दे। दक्षिणा की गौ तथा वस्त्र, आभूषणादि रख उस की पूजा नाम मंत्र से करे—ओं गवे नमः, ओं वस्त्राय नमः—इत्यादि पढ़कर। फिर हाथमें कुश, तिल, जौ, जलादि लेकर देश कालादि (१०८) कह कर कहे—देवप्रतिष्ठा-सांगतार्थमिमां यथाशक्ति दक्षिणां तुभ्यमहमाचार्याय संप्रददे ओं तत्सन्नमम। यह पढ़ कर आचार्य के हाथ में गौ की पूंछ सहित कुश तिल आदि रखदे और प्रार्थना करे—ओं भगवन्सर्वधर्मज्ञ शिवशास्त्रपरायण। सर्वशास्त्रार्थतत्त्वज्ञ सर्वधर्मविशारद ॥ १ ॥ अनादिजन्मसन्ताने ह्यप्रमेये भवार्णवे। अद्यमे ह्युत्तमं जन्म अद्यमे सफलं धनम् ॥ २ ॥ अद्यमे जननोच्छित्तिरद्यमे परमं पदम्। मोचितोहं त्वयानाथ दुश्छेद्याद्भवबन्धनात् ॥३॥ ईशत्रातस्त्वया यस्मादप्रमेयाद्भवार्णवात्। मुक्तोहं मर्त्यसंसारात्प्रपन्नोहं तवांतिकम् ॥४॥ ज्ञानतोऽज्ञानतो वापि यद्यन्न्यूनं कृतं मया। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु त्वत्प्रसादात्क्षमस्वमे ॥५॥ आचार्य—ॐ स्वस्ति' कहकर उसे ले और कामस्तुति ३९९ पढ़कर कहे—ओं समस्तजगदुत्पत्तिस्थितिसंहारकारकः। शिवः सानुचरः स्ताद्वः सर्वदा सर्वकामदः ॥ १ ॥ द्रव्यहीनं तु यत्किञ्चिद्विधिहीनं तु यद्भवेत्। तत्सर्वं पूर्णमेवास्तु प्रसादाकारणस्यतु ॥२॥ स्थापकस्य मूर्त्तिपानां वर्णिनां शिल्पिनां

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

तथा । सराष्ट्रपार्थिवानां च शान्तिर्भवतु सर्वदा ॥ ३ ॥ भृत्यपुत्रकलत्रैश्च सभृत्यबलवाहनैः । कारणस्य प्रसादेन सर्वलोकेश्वरोभव ॥ ४ ॥ इसके बाद आचार्य देव को प्रणाम करे । फिर यजमान को आशीर्वाद दे-ओं स्वस्तिन० (३०७) ॥ १ ॥ ओं श्रीर्वर्चस्वमायुष्यमारोग्यमाविधात्पवमानं महीयते । धान्यं धनं पशुं बहुपुत्रलाभं शतसम्वत्सरं दीर्घमायुः ॥ २ ॥ पुनस्त्वादित्या रुद्रावसवः समिन्धतां पुनर्ब्रह्माणो वसुनीथ यज्ञैः । घृतेन त्वं तन्वं वर्द्धयस्व सत्याः संतु यजमानस्यकामाः ॥३॥ मंत्रार्थाः सफलाःसन्तु पूर्णाः सन्तु मनोरथाः । शत्रूणां बुद्धिनाशोऽस्तु मित्राणामुदयस्तव ॥ ४ ॥ व्यासवाल्मीकवचनात्पराशरवसिष्ठयोः गर्गगौतमधौम्यात्रिवसिष्ठांगिरसां तथा । वाक्यच्च नारदादीनां पूर्णं भवतु ते कृतम् ॥ ५॥ इसके बाद ऋत्विक्, मूर्त्तिप, जापक, द्वारपाल, अन्य पाठक तथा कारीगर आदि को भी दक्षिणा दे । सभी के संकल्प में 'अकमुप्रतिष्ठाकर्मसाफल्यार्थं यथाशक्ति दक्षिणाम्' ऐसा कहे । भूयसी दक्षिणा भी दे । इसके बाद सभी देवताओं की फिर से संक्षिप्त पूजा करते हैं, जिसे उत्तर पूजा कहते हैं । और पूजाके बाद २२६ पृष्ठोक्त रीतिसे देवता तथा अग्नि आदि का विसर्जन अक्षत लेकर करते हैं । विसर्जन 'पुनरागमनाय च' के बाद 'ओं उत्तिष्ठ ब्रह्मणस्पते०' तथा ओं यज्ञ यज्ञंगच्छ यज्ञपतिं गच्छ स्वां योनिं गच्छ स्वाहा एष ते यज्ञो यज्ञपते सहसूक्तवाकः सर्ववीरस्तज्जुषस्व स्वाहा ॥ इसके बाद केसर, हल्दी, सरसों, सफेद चन्दन, मैनसिल, कंगनी, तिल, लाल चन्दन, पद्मकाष्ठ, गोरोचन नागकेसर को पीसकर उसमें कपिला गौ का घी मिलाकर मूर्ति सर्वांग में लगा के पूजा करे ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चतुर्थी कर्म के लिये संकल्प करे-ओं अद्यामुकदेवप्रतिष्ठां-गतया चतुर्थीकर्म करिष्ये । इसके बाद पहलेही वाले आचार्य, द्वारपालादि के साथ यजमान पश्चिम द्वार से मण्डप में प्रवेश करे । यदि मण्डप मेंहीं हो तब तो कोई बातही नहीं है । उसी दिन हो तब तो, जैसा पहले कहचुके हैं, अग्निस्थापनादि की आवश्यकता है ही नहीं । मगर, दूसरे दिन तो अग्निस्थापनादि होम की सभी क्रियायें विधिवत् करे और घी के गर्म करने के समय चरु भी पकावे । होम की आघार और आज्यभाग की आहुतियों के बाद चरु से होम करे । शिव की प्रतिष्ठा हो तो आगे के मंत्रों से आहुतियां दे और हर मंत्र के अन्तमें सर्वत्र 'स्वाहा इदं शिवाय नमम' बोलता जाय । कुल एक सहस्र आहुतियां देते हैं । अतः प्रत्येक मंत्र से १०० आहुतियां देनी होंगी; क्योंकि १० मंत्र हैं । मंत्र ये हैं-ओं ईशानः सर्वविद्याना-मीश्वरः सर्वभूतानां ब्रह्माधिपतिर्ब्रह्मणोधिपतिर्ब्रह्मा शिवो मे अस्तु सदाशिवोम् स्वाहा इदं शिवाय नमम ॥ १ ॥ ओं तत्पुरुषाय विद्महे महादेवाय धीमहि तन्नो रुद्रःप्रचोदयात् स्वाहा० ॥२॥ ओं अघोरेभ्योथघोरेभ्यो घोरघोरतरेभ्यः । सर्वेभ्यः सर्वशर्वेभ्यो नमस्ते अस्तु रुद्ररूपेभ्यः स्वाहा० ॥३॥ ओं वामदेवाय नमो ज्येष्ठाय नमः श्रेष्ठाय नमो रुद्राय नमः कालाय नमः कलविकरणाय नमो बलविकरणाय नमः स्वा० ॥ ४ ॥ ओं सद्योजातं प्रपद्यामि सद्योजाताय वै नमो नमः । भवे भवे नातिभवे भवस्व मां भवोद्भवाय नमः स्वा० ॥५॥ ये पांच ब्रह्ममन्त्र (सूक्त) कहाते हैं। आगे के ५ अंगमंत्र हैं-ओं अद्भ्यः संभृतः पृथिव्यै रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्त-ताग्रे । तस्य त्वष्टा विदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमा-जानमग्रे स्वाहा० ॥ १ ॥ ओं वेदाहमेतं पुरुषं महान्त-मादित्यवर्णं तमसः परस्तात् । तमेव विदित्वाऽतिमृत्यु-

BajiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

मेति नान्यः पंथा विद्यतेऽयनाय स्वाहा० ॥२॥ ओं प्रजापतिश्चरतिगर्भे अन्तरजायमानो बहुधा वि-जायते । तस्ययोनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्ह तस्थु-र्भुवनानि विश्वा स्वा० ॥ ३ ॥ ओं यो देवेभ्य आतपति यो देवानां पुरोहितः । पूर्वो यो देवेभ्यो जातो नमो रुचाय ब्राह्मये स्वा० ॥ ४ ॥ ओं रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवं ब्राह्मणो विद्यात्तस्य देवा असन्वशे स्वाहा० ॥ ५ ॥ इसके बाद पत्नी (गौरी) के मंत्र से घी या तिल की १०८ आहुतियां दे । मंत्र यह है-ॐ गौरीर्मिमायसलिलानि तक्षत्येकपदीद्विपदीसाचतुष्पदी । अष्टापदीनवपदी बभूवुषीसहस्राक्षरा परमेव्योमन्स्वाहाइदं गौर्यै नमम ।

यदि विष्णु की प्रतिष्ठा हो तो पहले पांच मंत्रों की जपकर ॐ इदंविष्णुर्विच० (२०८) ॥ १ ॥ ॐ विष्णोरराट० (२०७) ॥ २ ॥ ॐ नारायणायविद्महे० (८२८) ॥ ३ ॥ इन मंत्रोंके अन्तमें 'स्वाहाइदंविष्णवेनमम' लगाकर आहुतियां देकर फिर उन्हीं 'ओं अद्भ्यः संभृतः०' इत्यादि पांच अंगमन्त्रों के अन्त में 'स्वाहा इदं विष्णवे नमम' लगा-कर आहुतियां दे । सहस्र आहुतियों की पूर्त्ति होनी चाहिये इन ८ मंत्रों से ही । फिर-ओंश्रीश्चते० (२०७) स्वाहा इदं लक्ष्म्यै नमम - इस पत्नीमंत्र से घी या तिल की १०८ आहुतियां दे । सूर्य की प्रतिष्ठा में-ओं आकृष्णेन० (२०५) ॥ १ ॥ ओं उदुत्यं जातवेदसंदेवं वहन्ति केतवः । दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ २ ॥ ओं तत्सवितुर्वरेण्यं० (५२८) ॥ ३ ॥ इन तीन मंत्रों के और पूर्ववत् ही पांच अंगमंत्रों के अन्त में 'स्वाहा इदं सूर्याय नमम' लगाकर १००० आहुतियां दे । सूर्यका पत्नीमंत्र-ओं उषसा-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(६०) स्वाहा इदं प्रभायै नमम ॥ गणेश की प्रतिष्ठा में-ओं
गणानांत्वा० इत्यादि मंत्र हैं ।

होम के बाद आचार्य शीतल जल से मूर्त्ति को स्नान कराके उस
पर के चन्दन, पुष्पादि हटाकर फिर पूर्ववत् पूजा करके १२ कलश
स्थापित कर और उनमें तीर्थ का जल-ओं शन्नोदेवी० (७६) ॥१॥
ओं आपोहिष्ठा० (७९) ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ इन मंत्रों से डाल
कर उनमें ही क्रम से पञ्चगव्य, दही, दूध, घी, मधु, पुष्प, रत्न, कुश,
जल, चन्दन, सर्वौषधि, शीतल जल डाले । एक सहस्रछिद्रवाला भी
कलश हो । पहले दही, अक्षत, कुश, जौ, दूध, दूब, मधु, सफेद
वस्त्रों, पुष्प और फल मिश्रित जल से देवता को अर्घ्य दे इस मंत्र से-
ओं समुद्रं वः प्रहिणोमि० (३९०) । इसके बाद क्रम से इन
मंत्रों से स्थापित कलशों के जलों से स्नान करावे-(१) ओं पञ्च-
नद्यः० (५१३) ॥ (२) ॐ दधिक्राव्णो० (६९५) । (३) ओं
आप्यायस्व० (६९५) ॥ (४) ओं तेजोऽसि० (७९) ॥
(५) ओं मधुवाता० (६९५) ॥ (६) ओं देवस्यत्वा०
सरस्वत्यै वाचोयंतुः० (२२५) ॥ (७) ओं परिवाजपतिः०
(६९५) । (८) ओं देवस्यत्वा० साम्राज्येनाभिषिञ्चा-
मि (२२५) ॥ (९) ॐ अग्न आयाहि० (८६) ॥ (१०)
ॐ तत्सवि० ॥ (११) ओं या औषधीः पूर्वाजाता० (७९५) ॥
(१२) ओं समुद्रज्येष्ठा० (६५४) ॥ इसके बाद सहस्रधारा
वाले से 'ॐ वसोः पवित्रमसि० (१२८)-से नहलाकर फिर इन्हीं
से बिना मंत्र के ही नहलावे । इस के बाद पञ्चरंगे सूत की बत्ती से
आरती करे । मंत्र-ओं अंधस्थान्धो वो भक्षीय महस्थ महो
वो भक्षीयोर्ज्जस्थोर्ज्जं वो भक्षीय रायस्पोषस्थ रायस्पोषं
वो भक्षीय ॥ फिर मूर्त्ति के आगे बलि रखकर-ओं मुञ्चन्तु मा
शपथ्यादथो वरुण्यादुत । अथो यमस्य पड्वीशात्सर्वस्मा-

BajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

देवाकिल्बिषात्—इस मंत्र से मूर्त्ति का कंकण खोलकर रखे। फिर—ओं पंचनद्यः सरस्वती० पढ़कर महीन वस्त्रसे मूर्त्ति को पोंछे। तब—ओं मन्दाकिन्यास्तु यद्वारि सर्वपापहरं शुभम्। तदिदं कल्पितं देव सम्प्रगावम्यतां त्वया- मंत्र से आचमन दे। ओं वेदसूक्तसमायुक्तेसर्वपद्म समन्विते। सर्ववर्णप्रदे देव वाससी प्रतिगृह्यताम्—से खद्दर चढ़ावे। ओं शरीरंते न जानामि चेष्टांनैव च नैव च मया निवेदितं भक्त्या चन्दनं प्रतिगृह्यताम्—से केसर कपूर मिला चन्दन। ओं मणिमुक्ताप्रवालाद्यैः स्वर्णपुष्पं मया कृता। पूजा तु देवदेवेश प्रसादाद्भवतस्तव—से पुष्प विल्वपत्र और तुलसीदल, माला आदि। ओं वनस्पतिरसोद्भो गन्धाढ्यः सुमनोहरः। आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्—से धूप। ओं त्वं चन्द्रस्त्वं रविर्विष्णुस्त्वं रत्नानि हुताशनः। त्वमेव सर्वज्योतींषि दीपोऽयं प्रतिगृह्यताम्—से दीपक। ओं अन्नं चतुर्विधं स्वादु रसैः षड्भिः समन्वितम्। भक्ष्यभोज्यसमायुक्तं नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्—से नैवेद्य। फिर आचमन कराके ८० या ४० दीपकों से आरती करके—ओं संभूषायते नमः—पढ़कर भूषण चढ़ावे और पूर्व किये होम का 'ॐ मदनुष्ठितेनानेन होमेन देवः प्रीयताम्' कहकर अर्पण कर प्रार्थना करे—ॐ यन्मया भक्तियोगेन पत्रं पुष्पं फलं जलम्। आवेदितंच नैवेद्यं तद् गृहाणानुकम्पया॥ मंत्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वर। यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे॥२॥ फिर मूलमंत्र से १०८ १०८ आहुतियां देकर और—'ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा इदं न मम अग्नये स्विष्टकृते नमम—से सभी चीजें मिलाकर पूर्व

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आहुति देकर संस्रवप्राशनादि से लेकर पूर्णाहुतितक करे। यहां पूर्णाहुति का मंत्र—ओं मूर्द्धानं० (३२३) मात्र है। पहले भी केवल इसी से कर सकते हैं। इसके बाद शांतिपाठ कराके दिक्पालों को बलि दे और शेष क्रियायें विसर्जन पर्यन्त की करे। यदि एक ही दिन चतुर्थी होम भी हो तो पहले की विसर्जन आदि क्रियायें यहीं की जायंगी और आचार्य को तथा औरों को भी दक्षिणा आदि यहीं देंगे। यदि दूसरे दिन या उसके बाद करे तो फिर आचार्य्य और ऋत्विजों को यथाशक्ति दक्षिणा देंगे। इस प्रकार सब देवोंकी प्रतिष्ठा का साधारण कर्म यहां आकर पूरा होता है।

महादेव की प्रतिष्ठा में यदि सर्प त्रिशूलादि युक्त आकृति हो या नर्मदेश्वर का, लोहे का या स्वयम्भू लिंग हो या सिद्धलिंग हो तो उस जगह चण्ड की स्थापना और पूजा नहीं की जाती। मगर साधारण लिंगप्रतिष्ठा में की जाती है। मन्दिर के बाहर मण्डप में ईशान की ओर चण्ड का स्थान बना होता है। उसीपर चण्ड की स्थापना होती है। यह काम चतुर्थीहोम के बाद होता है। पहले संकल्प करे—ओं अमुकलिंगप्रतिष्ठांगतयाचण्डप्रतिष्ठां करिष्ये। इसके बाद चंडकी जगह उनकी मूर्त्ति स्थापित कर तीर्थके जल से स्नान करावे। फिर पूजा करे। पहले ध्यान करे—ॐ रुद्राग्नेः प्रभवं चंडं कज्जलाभं भयानकम्। शूलदण्डधरंरौद्रं चतुर्वक्त्रं चतुर्भुजम्॥ १॥ मुखोद्गीर्णमहाज्वालं रक्तद्वादशलोचनम्। जटामुकुटखण्डेन्दुमण्डितं फणिकंकणम्॥ २॥ व्यालयज्ञोपवीतं च साक्षसूत्रकमण्डलुम्। श्वेतपद्मासनासीनं भक्तिप्रव्हार्तिनाशनम्॥ ३॥ तब आवाहन करे—ओं चण्डासनायनमः। ओं चण्डमूर्त्तयेनमः। ओं धुनिचण्डेश्वराय हुंफट् स्वाहा॥ फिर मूर्त्ति को छूकर न्यास करे—ओं चण्डहृदयाय हुंफट् नमः। ओं चण्डशिरसे हुंफट्नमः।

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

ओं चंडशिखायै हुं० । ओं चण्डकवचाय० । ओं
नेत्रत्रयाय हुंफट्० । ओं चंडास्त्राय० हुंफट् (चुटकी
या हाथ से छूवे)। ओं चं सद्योजातायहुं० । ओं चिंवामदेव
हुं० । ओं चुं अघोरायहुं० । ओं चें तत्पुरुषाय० । ओं
चोंईशानाय हुंफट् नमः ॥ षोडशोपचार पूजा करके प्रार्थना
--ओं यावत्तिष्ठति लोकेऽस्मिन्देवदेवो महेश्वरः । ता
त्कालं त्वया देव स्थातव्यं शिवसन्निधौ ॥ फिर दश दिश
में बलि रखकर भूतों (प्राणियों) से कहे -ओं यावत्कालं महादेव
लिंगमाश्रित्य तिष्ठति । तावत्कालं तु रक्षार्थं यूयं तिष्ठ
सर्वदा ॥ इसके बाद भद्रासनपर यजमानको बैठाकर पूर्व
अभिषेक करे । इसके उपरान्त बड़े तालाबमें जाकर यजमान
(अवभृथ) स्नान कर मण्डप में आवे और आचार्यादि की
अन्त में करके अन्तिम दक्षिणा यथाशक्ति पूर्ववत्संकल्प करके दे
आचार्य पूर्ववत्–ओं स्वस्ति–पूर्वक स्वीकार करे तथा अन्य
भी करें । फिर आचार्य–ओं समस्तजगदुत्पत्ति० इत्
पूर्व के श्लोक पढ़कर आशीर्वाद दे । तब यथाशक्ति ब्राह्मण
का संकल्प करके–ओं यस्य स्मृत्या च० । प्रमादात्कुर्व
इत्यादि विष्णुस्मरणपूर्वक कर्मको ब्रह्मार्पण करे और ब्राह्मण,
तथा बन्धुवर्गको भोजन कराके स्वयं भोजन कर विश्राम
सोने या रत्न के बने लिंग में भी चंड नहीं होते । ऐसा माना जा
कि जहां चंड होता है वहां भूमि, सोना, गौ, रत्न तांबा, चांदी
वस्त्रादि के अतिरिक्त और जो कुछ अन्न, पुष्पादि लिंग पर चढ़
वह निर्माल्य केवल चंडको पीछे से दिया जाता है । उसे दूसरा
खाता । पर जहां चंड नहीं है वहां सभी खाते हैं । इति प्रतिष्ठा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(९)

नित्यकर्म और कर्मशेष।

सन्ध्योपासन तथा पञ्चमहायज्ञादि नित्यकर्मों के विना ग्रन्थ अपूर्ण हो जायगा। अतएव उनकी विधि लिखना आवश्यक है। तथा पीछे और आगे के बहुत से कर्मों के अंगस्वरूप वैदिक मंत्र, सूक्त आदिका भी संग्रह अनिवार्य है। अतएव इन्हीं विषयों का संग्रह इस प्रकरण में करेंगे।

१–आशौच और स्नान।

प्रातःकाल उठकर सबसे प्रथम अपने हाथों की हथेली तथा पवित्र मूर्त्तियों का दर्शन कर विष्णु, शिव, ब्रह्मा, गणेश आदि के स्मरण के बाद मल मूत्र त्याग के लिये ग्राम से कुछ दूर जाकर और जलपात्र साथ लेकर मल मूत्र का त्याग करना चाहिये। उस समय यज्ञोपवीत गले में माला की तरह करके दहिने कानमें लपेट कर सिरपर कपड़ा बांध ले। संध्या और दिन में उत्तर मुख और रात को दक्षिणमुख बैठना चाहिये। मगर अन्धकार या कोई खटका रहने पर चाहे जिस मुख बैठे। मूत्रेन्द्रिय में एक बार, मल इन्द्रिय में तीन बार मिट्टी लगाकर उन्हें साफ करे। इसके बाद जलाशय के निकट हाथ धोने के समय केवल बायें हाथ में १० बार और दोनों में ७ बार मिट्टी लगाकर धोवे। परन्तु इस धोने का अभिप्राय यही है कि हाथ में मलादिकी दुर्गन्ध न रह जाय। इसलिये यदि कम मिट्टी लगाने से भी वह काम हो जाय तो कोई आपत्ति नहीं है। हाथ के बाद प्रत्येक पांव में तीन बार मृत्तिका लगाकर धोवे और बारह कुल्ले करे। केवल पेशाब के समय भी इन्द्रिय को जल से धोने और हाथ पांव धोकर ४ कुल्ले करने की विधि है। भोजन के बाद सोलह और चबेनी वगैरः खाकर ८ कुल्ले करे। मल मूत्र त्याग के समय बोलना न चाहिये। प्रत्येक समय के कुल्लों के बाद तथा सोचुकने, छींकने, स्नान करने, पानी पीने, वस्त्र पहनने, बाजार जाने और श्मशान जाने पर भी विधिवत आचमन करना चाहिये। उसकी रीति यह है कि बैठकर हाथ पांव धोके दोनों घुटनों के भीतर हाथ करे और

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

हथेली में इतना जल ले कि उसमें उड़द डूब जा सके। फिर कानीअंगुली और अंगूठे को अलग कर तथा बीच की तीन अंगुलियों को कुछ कर अंगूठे की जड़ के पास के ब्रह्मतीर्थ से जल पी जावे। साधारण तया इस तरह तीन बार पीना चाहिये। परन्तु पेशाव के बाद कुछ करके दो बारही आचमन करते हैं और कभी अन्य अवसरों पर भी कभी एक बार भी करते हैं। आचमन कर हाथ धोडालते हैं। फिर दहिने अंगूठे से दोनों ओठों को दो बार पोंछकर पांव और सिर पर जल डालते हैं और तर्जनी, मध्यमा और अनामिका को मिलाकर उन्हीं से मुंह छूकर अंगूठे और तर्जनी से नासिका के दोनों छिद्र, अंगूठे और अनामिका से दोनों आंखें तथा दोनों कान क्रम से, अंगूठे और कनिष्ठा (कनिष्ठा) से नाभि, हथेली से हृदय, सभी अंगुलियों से सिर और उनके अग्रभाग से दोनों बाहुओं की जड़ें छूते हैं। प्रत्येक बार जल लेकर स्पर्श करने का नियम है । यह भी स्मरण रहे कि इस आचमन के समय, चाहे जब किया जावे, सव्य हो जाना चाहिये।

दतवन कनिष्ठा अंगुली जैसी मोटी और ब्राह्मण के लिये १२, या ८ अंगुल की तथा औरों के लिये ८, ७, ६ अंगुल की होनी चाहिये । वह भरसक कांटेदार या दूधवाले वृक्षों की हो या तीते कसेले, कडुवे और सुगन्ध वृक्षों की हो । पर, अशोक, जामुन, बबूल खैर, चिचिड़ी आदि की भी की जासकती है। दूधवाली से दांत में मजबूती होती है और काँटेवाली से प्रायः दर्द आदि दांत के रोग नष्ट होजाते हैं। दतवन हाथ में लेकर उसका अभिमंत्रण यों करते हैं

ॐ आयुर्बलं यशो वर्चः प्रजापशुवसूनि च। ब्रह्मप्रज्ञां च मेधां च त्वन्नोदेहि वनस्पते ॥ व्रत, पर्व या श्राद्ध के दिन तथा अमावास्या, संक्रांति, प्रतिपद्, षष्ठी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी, एकादशी, शनि, रवि, शुक्र, मंगलवार, व्यतीपात, जन्मनक्षत्र आदि में दतवन न कर मिट्टी, तृण या पत्ते आदि से दांत साफ कर कुल्ली करते हैं।

स्नान के लिये नदी, तालाब आदि के तटपर जाते हैं। साथ में शुद्ध मृत्तिका, गोबर और पवित्र, कुश आदि लेके जाते हैं। तीरपर मृत्तिका आदि रखकर पहले हाथ पाँव धोके आचमन करते हैं और शिखा को बाँध करही नदी आदि में प्रवाह की ओर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा तालाब आदि में सूर्य की ओर मुख करके एक गोता लगाकर दो बार आचमन करते और जल से बाहर आके बैठकर संकल्प करते हैं। यह बात सामवेदियों के यहाँ है। यजुर्वेदी लोग बिना गोता लगायेही संकल्प करते हैं-ओं अद्य० ममात्मनः कायवाङ्मनःकृतकर्मदोषपरिहारद्वाराश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थं(प्रातः, मध्याह्न,सायं) स्नानमहं करिष्ये। इसके बाद-ओं अश्वक्रान्ते रथक्रान्ते विष्णुक्रान्ते वसुन्धरे। मृत्तिके हर मे पापं यन्मया पूर्वसञ्चितम्। त्वया हृतेन पापेन गच्छामि परमां गतिम्- से मृत्तिका हाथ में लेकर उसमें जल मिलावे और- ओं इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम्। समूढमस्य पाँ सुरे-इसे पढ़कर उसे मलके-ॐ उद्धृतासि वराहेण कृष्णेन शतबाहुना। मृत्तिके ब्रह्मदत्तासि काश्यपनाभिवन्दिता। शिरसा धारयिष्यामि रक्षस्व मां पदेपदे-पढ़कर मृत्तिका के तीन हिस्से में से एक हिस्सा बायें हाथ से लेकर नाभि से कमर तक लगावे और हाथ धोकर दूसरे भाग को उसी हाथ से कमर से लेकर मूत्रस्थान, गुदा, टाँग और पाँव में लगाकर तथा तीसरे भाग को दहिने हाथ से ललाट से नाभि तक लगाकर हाथ धोके आचमन करे। फिर गोबर हाथ में लेकर—ओं मानस्तोके तनये मान आयुषि मानो गोषु मानो अश्वेषु रीरिषः। मानो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे- यह मन्त्र पढ़े और- ओं गन्धद्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीम्। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम्॥ ओं अग्रमग्रं चरन्तीनामोषधीनां वनेवने। तासां वृषभपत्नीनां पवित्रं कायशोधनम्। त्वं मे शोकाँश्च रोगाँश्च पापंच हर गोमय- इसे पढ़कर उसे सम्पूर्ण शरीर में सिर की ओर से शुरू कर के लगावे। फिर स्नान करके मार्जन करे। मंत्र पढ़कर कुश से जल डालता जाय-

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-G

(१) ओं आपोहिष्ठा मयोभुवः। (२) ओं तान
दधातन। (३) ओं महेरणाय चक्षसे। (४) ओं यो
शिवतमोरसः। (५) ओं तस्यभाजयतेहनः। (६) ओं
उशतीरिव मातरः। (७) ओं तस्मा अरंगमाम
(८) ओं यस्य क्षयाय जिन्वथ। (९) ओं आपो ज
यथाचनः॥ इसके बाद जल में डूबकर 'ओं ऋतं च सत्यं

इत्यादि अघमर्षण मंत्र तीन बार पढ़े। यह मन्त्र सन्ध्या के प्रक
में आगे लिखा है। फिर विष्णु का ध्यान कर स्नानांगतर्पण क
यह तर्पण आगे लिखे तर्पण से निराला ही है और स्नान का अ
माना जाता है। पहले हाथ में पूर्वाग्र तीन कुश लेकर और दोनों हा
में पवित्र पहनकर पूर्वमुख देवतीर्थ से देवताओं को एक
अंजलि प्रत्येक मन्त्र से दे। यदि जौ या अक्षत हो तो उसे
डाल ले-(१) ओं ब्रह्मादयो देवास्तृप्यन्ताम्। (२) ओं
भूर्देवास्तृप्यन्ताम्। (३) ओं भुवर्देवास्तृ०। (४) ओं
स्वर्देवास्तृ०। (५) ओं भूर्भुवः स्वर्देवास्तृ०॥ फि
उत्तर मुख हो माला की तरह जनेऊ करके दोनों हाथों में
पकड़ उनके मध्य से प्रजापति तीर्थ से ऋषियों को दो
अंजलियां प्रत्येक मन्त्र से दे। जौ या चावल भी डाल

(१) ॐ सनकादिद्वैपायनादय ऋषयस्तृप्यन्ताम्। (२)
ओं भूर्ऋषयस्तृ०। (३) ओं भुवर्ऋषयस्तृ०। (४) ओं
स्वर्ऋषयस्तृ०। (५) ओं भूर्भुवःस्वः ऋषयस्तृ०
फिर दक्षिण मुख अपसव्य होकर काले तिल के साथ मोटक (
कुशों) की जड़ और अग्रभाग से पितृतीर्थ से प्रतिबार तीन तीन
लियां दे-(१) ओं कव्यवाडनलादयःपितरस्तृ०। (२) ओं
भूःपितरस्तृ०। (३) ओं भुवःपितरस्तृ०। ओं स्वर्पि
रस्तृ०। (४) ओं भूर्भुवःस्वःपितरस्तृ०॥ अंगुलि
अग्रभाग देव तीर्थ, कानी अंगुली के पास प्रजापति या ऋषि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalc

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और तर्जनी अंगूठे के मध्य में पितृतीर्थ है। पितरों को काले तिल से तर्पण करते हैं, देवताओं को सफेद से और मनुष्यों (ऋषियों) को चितकबरे तिल से। यदि सफेद तिल न हो तो काले तिल देव, ऋषियों को न दे। उसी की जगह जौ देते हैं और जौ के अभाव में ही अक्षत (चावल) देते हैं। कारण; अक्षत संज्ञा प्रधान रूप से जौ की ही है और उस के अभाव में ही चावल को अक्षत कहते हैं। यदि तिल जौ आदि न हों तो केवल कुश से भी तर्पण हो सकता है। अस्तु, तर्पण के बाद सव्य होकर आचमन कर यज्ञमतर्पण करे। इसका अभिप्राय यह है कि हाथ में तिल मिश्रित जल लेकर जल से बाहर किनारे पर यह श्लोक पढ़ कर जल गिरा दे—ॐ यन्मया दूषितं तोयं शारीरमलसंभवात्। तस्य पापस्य शुद्ध्यर्थं यक्ष्मैतत्ते तिलोदकम्॥ फिर जल से बाहर आकर शिखा खोल के अपनी दहिनी ओर उसका पानी तृण, घास आदि पर यह पढ़कर निचोड़दे-ॐ लतागुल्मेषु वृक्षेषु पितरो येव्यवस्थिताः। तेसर्वे तृप्तिमायान्तु मयोत्सृष्टैः शिखोदकैः॥ सूखा वस्त्र पहन कर तिलकादि धारण करे और वस्त्र निचोड़कर घर जावे। यद्यपि नित्य तर्पण भी स्नान के बाद ही सूखे या भीगे कपड़ों से ही करने की भी रीति है। फिर भी सन्ध्योपासन के बाद या सन्ध्या के बाद ब्रह्मयज्ञ करके भी उसे करते हैं। अतएव हम उसी प्रकरण में ही लिखेंगे। इतिस्नान।

२—सन्ध्योपासन।

स्नान के बाद ही संध्या का अवसर आता है। यह तीन बार की जाती है. प्रातः; मध्याह्न और सायं काल। अतएव, प्रत्येक बार स्नान भी करना होता है। स्नान दस प्रकार के माने जाते हैं। इसके लिखने की आवश्यकता इस लिये है कि मूर्खतावश यदि लोग स्नान न कर सकें तो संध्या भी छोड़ देते हैं। यद्यपि विना स्नान के भी संध्योपासन हो सकता है। क्योंकि स्नान अंग और सन्ध्योपासन अंगी है और अंग के लिये अंगी को छोड़ना उचित नहीं है। इस लिये यदि बीमारी आदि के कारण नहाने में असमर्थ हो तो भी

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

सन्ध्योपासन नहीं छोड़ना चाहिये । इसी तरह यदि आसन पर कर बैठ न सकता हो और प्राणायाम न कर सकता हो तो भी सोये ही गायत्री जप सकता है । मगर यह बात असमर्थ के लिये है । फिर भी, यदि स्नान का ही आग्रह हो तो वह भी किया जा है । जल में न नहाकर भी स्नान कर सकते हैं । इसीसे दस स्नानों का विवरण लिखना आवश्यक है । वे दस हैं मांत्र, भौम, आग्नेय, दिव्य वायव्य, वारुण, मानस, कापिल, ब्राह्म, यौगिक । (१) 'ॐ आपो हिष्ठा०' इत्यादि मन्त्रों को पढ़ लेने को मंत्र या मांत्र स्नान कहते हैं । (२) शुद्धमृत्तिका देह में लगाने से भौम या पार्थिव, (३) भस्म लगाने से आग्नेय या भस्मस्नान, (४) धूपनिकली हो और पानी बरसता हो तो उसमें नहाने को दिव्य, (५) गायों के पांव के लगने से उड़कर जिधर धूल जाती हो उसी तरफ खड़ा होने से धूल पड़ने पर वायव्य, (६) जलमें डुबकी लगाने से वारुण या जल स्नान, (७) आत्मा और ब्रह्मचिन्तन को मानस, (८) गीले वस्त्र से शरीर पोंछने को कापिल, (९) 'आपोहिष्ठा०' इत्यादि मंत्रों से देह पर कुश द्वारा जल छिड़कने या मार्जन को ब्राह्म और (१०) विष्णुचिन्तन को यौगिक स्नान कहते हैं । अतएव यथावकाश इन में से कोई न कोई सामर्थ्य के अनुसार प्रत्येक दशा में हीं किये जा सकते हैं । सन्ध्योपासन एक दिन भी छोड़ देने से पतित हो जाता है । अतएव इसमें कभी भी नागा न करना चाहिये ।

सन्ध्या की विधि हम दोनों वेदोंके लिये एकही साथ लिखते हैं क्योंकि प्रधान बातों में बहुत ही कम अन्तर है । पूर्वमुख आसन पर बैठ दहिने हाथ में तीन और बायें में दो कुश अंगुलियों से पकड़े रक्खे । अथवा दोनों हाथों की अनामिका में एक एक पवित्र (पैंती) पहन कर पहले पूर्वोक्त रीति से विधिवत् आचमन करे । प्रातःकाल पूर्वमुख, मध्यान्ह में सूर्याभिमुख और शाम को पश्चिम मुख बैठना चाहिये । संध्या का मुख्य समय प्रातःकाल तारे दीखते रहने से सूर्योदय तक और शाम को सूर्य के दीखते रहने से तारों के उदय तक है । इस के बाद तो काल के अतिक्रमण से प्रायश्चित्त स्वरूप एक प्राणायाम पहले ही करके एक अर्घ देना पड़ता है । अथवा केवल अर्घ्य ही देकर संध्या शुरू करते हैं । प्रायश्चित्त के लिये संकल्प करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalo

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है-ओं अद्य० कालातिक्रमप्रायश्चित्तार्थं सूर्यायार्घ्य-
मेकं प्रदास्ये ॥ अस्तु, इसके बाद संध्योपासन का संकल्प करते
हैं-ओं अद्य० ममोपात्ताशेषदुरितक्षयद्वारा श्रीपरमेश्वर-
प्रीत्यर्थं (प्रातः, मध्याह्न, सायं) संध्योपासनमहं
करिष्ये ॥ इसके बाद-ओं अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां
गतोऽपि वा। यः स्मरेत्पुंडरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः-
पढ़कर समस्त शरीर पर जल छींटते हैं। और 'मेरुपृष्ठः सुत-
लम्, कूर्मः, आसने विनियोगः' यह विनियोग पढ़कर हाथ
में जल लेते तथा-ओं पृथिवि त्वया धृतालोका देवित्वं विष्णु-
नाधृता। त्वं च धारय मां देवि पवित्रं कुरुचासनम्-
पढ़कर उसे आसन पर छिड़कते हैं। फिर आगे लिखे गायत्री मंत्र को
पढ़कर शिखा में ब्रह्मग्रन्थि देकर भस्म धारण करते या तिलक लगाते
हैं। पहले हाथ में भस्म लेकर उसको जल से मिश्रित कर मलते हुये
मन्त्र पढ़ते हैं-ओं अग्निरिति भस्म। वायुरिति भस्म।
जलमिति भस्म। स्थलमिति भस्म। व्योमेति भस्म। सर्वं
ह्वा इदं भस्म। मन एतानि चक्षूंषि भस्मानीति ॥
फिर मलना बन्द कर पढ़े-ओं त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि-
वर्द्धनम्। उर्वारुकमिवबन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात्।
यह अभिमन्त्रण है। इसके बाद इन मन्त्रों को पढ़ सर्वांग
में विधिवत् लगावे-ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः। कश्यपस्य त्र्यायु-
षम्। यद्देवेषुत्र्यायुषम्। तन्नो अस्तुत्र्यायुषम् ॥ सामवेदी
'यद्देवेषु' इत्यादि से पहले 'अगस्त्यस्य त्र्यायुषम्' भी
पढ़ते हैं। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि ऊपर के 'अग्निरिति'
इत्यादि से अभिमंत्रण करके 'त्र्यम्बक' मंत्र से जल मिला कर
दोनों हाथ से मले और प्रणवव्याहृति सहित गायत्री पढ़कर लगावे।
तब हाथ में जल लेकर 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' या-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ओं अपहता असुरा रक्षांसि वेदिषदः-से शरीर के चारों ओर घेरे और हाथ में जल लेकर अगले मन्त्र से आचमन करे. नारायणः, प्रकृतिः, सूर्यः, आचमने विनियोगः। ओं सूर्यश्च मामन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां यद्राज्या पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना रात्रिस्तदवलुम्पतु यत्किञ्चिद्दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सूर्ये ज्योतिषि जुहोमिस्वाहा। यह प्रातः काल के आचमन के लिये है। मध्याह्न के लिये- वामदेव अनुष्टुप्, आपः, आचमने विनियोगः। ओं आपः पुनन्तु पृथिवीं पृथिवी पूता पुनातुमाम् । पुनन्तु ब्रह्मणस्पतिर्ब्रह्मपूता पुनातु माम्। यदुच्छिष्टमभोज्यं च यद्वादुश्चरितंमम। सर्वं पुनातु मामापोऽसतां च प्रतिग्रहं स्वाहा सायं काल के लिये- अग्निश्चमेति नारायण ऋषिः प्रकृतिश्छन्दोऽग्निर्देवता आचमने विनियोगः। ॐ अग्निश्चमन्युश्च मन्युपतयश्च मन्युकृतेभ्यः पापेभ्यो रक्षन्तां यदह्ना पापमकार्षं मनसा वाचा हस्ताभ्यां पद्भ्यामुदरेण शिश्ना अहस्तदवलुम्पतु यत्किञ्चिद्दुरितं मयि इदमहं माममृतयोनौ सत्ये ज्योतिषि जुहोमि स्वाहा॥ आचमन के बाद हाथ धोके दो बार आचमन करे और हाथ धोकर प्राणायाम करे। पहले विनियोग पढ़े-ओंकारपूर्वकसप्तव्याहृतीनां विश्वामित्रजमदग्निभरद्वाजगौतमात्रिवसिष्ठकश्यपाऋषयो गायत्र्युष्णिगनुष्टुब्बृहतीपंक्तित्रिष्टुब्जगत्यश्छन्दांसि अग्निवाय्वादित्यबृहस्पतिवरुणेन्द्रविश्वेदेवा देवताः। गायत्र्या विश्वामित्र ऋषिर्गायत्री छन्दः सविता देवता । शिरसःप्रजापतिर्ऋषिर्यजुर्ब्रह्मा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वायुमूर्या देवताः प्राणायामे विनियोगः ॥ फिर आगे लिखा मंत्र पढ़ कर प्राणायाम करे। उसकी रीति यह है कि नासिका का जो छिद्र (स्वर) चलता हो उसीसे धीरे धीरे वायु को भीतर ले जाय और दूसरे छिद्र को अनामिका तथा कनिष्ठिका से बन्द कर रक्खे। इस तरह पूरा मंत्र पढ़कर वायु को भीतर खींचे। यदि अभ्यास हो जाय और घबड़ाहट न होतो दो बार, फिर तीन बार तक, समचा मंत्र पढ़कर भीतर वायु लेजाय। इसी तरह आगे भी रोकने में और छोड़ने में १, २, ३. बार यथाशक्ति मंत्र पढ़ना होगा। भीतर खींचने को पूरक कहते हैं। पूरक कर लेने पर अंगूठे से उस छिद्र को भी बन्द कर भीतर ही वायु को रोक ले और पूरक में जितनी बार मंत्र पढ़ा था उतनी हीं बार फिर पढ़े। इसके बाद जिस छिद्र को पहले अनामिका और कनिष्ठा से बन्द कर दिया था उसे खोले और दूसरे को बन्द किये ही केवल उसी से धीरे धीरे वायु को बाहर निकाले। इसके साथ मंत्र भी पढ़ता जावे। यहां भी उतनी हीं बार मन्त्र पढ़े जितनी बार पहले पढ़ा था। इसे रेचक कहते हैं और बीच वाले को कुम्भक। इस तरह एक बार पूरक, कुंभक और रेचक कर लेने पर दूसरी और तीसरी बार भी वैसाही करे। मगर विशेषता यह होगी कि पहली बार जिस छिद्र से वायु निकाला है दूसरी बार उसीसे पूरक करे और इस बार जिससे रेचक करे तीसरीबार उसीसे पूरक करना चाहिये। इसी तरह अधिक बार भी कर सकते हैं। मगर सन्ध्या में तो कम से कम तीन प्राणायाम करना चाहिये। एक बार का नाम एक प्राणायाम है। प्राणायाम आरंभ करने से पहले पेट के वायु को नासिका के छिद्रों से धौंकनी की तरह चलाकर बाहर कर दे। इसतरह पेट के खाली होने से वायु रोकने में (कुम्भक के समय) कम कष्ट होता है और देर तक वायु झटके रुक सकती है। दूसरी बात रेचक, कुम्भक के लिये यह भी है कि पेट को पीठ या रीढ़ की ओर खींच लेना और जरासा आगे को झुक जाना चाहिये। पेट को रेचक के समय पीछे की ओर खींचे और कुंभक के समय आगे झुक जाय। प्राणायाम के समय मुख और आंखें भी बन्द रहें और मन से ही मंत्र का उच्चारण करते हुए उस पर ही या उसके अर्थ पर ध्यान रहे। कहीं कहीं ब्रह्मा, शिव, विष्णु का

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

ध्यान लिखा है । मगर दोनों बातें एक साथ असंभव हैं। या तो मन्त्र ही पढ़ सकेगा या ध्यानहीं करेगा । मन्त्र यह है-ॐ भूः ॐ भुवः ओं स्वः ओं महः ओं जनः ओं तपः ओं सत्यम् ओं तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ओं आपोज्योतीरसोऽमृतं ब्रह्म भूर्भुवः स्वरोम् । यह हठ कभी न करे कि इस मन्त्र को तीन तीन बार पढ़कर ही पूरक आदि करेंगे। पहले एक बार पढ़कर ही आरंभ करे और धीरे धीरे अभ्यास बढ़ाकर दो और फिर तीन बार तक पढ़े । तीन बार से ज्यादा भी पढ़कर कर सकता है ।

प्राणायाम के बाद न्यास करे। न्यास के मानी हैं प्रत्येक अंग को छूना या उन पर हाथों की अंगुलियों को रखना । उसका क्रम मन्त्र के सहित ऐसा है- (१) ॐ वाङ्म आस्येऽस्तु (अंगुलियों के अग्र से मुख स्पर्श) । (२) ॐ नसोर्मे प्राणोऽस्तु (अंगूठा, तर्जनी से नासिका के दहिने, बांये छिद्र) । (३) ॐ अक्ष्णोर्मे चक्षुरस्तु (अंगूठा, अनामिका से दोनों आँखें) । (४) ओं कर्णयोर्मे श्रोत्रमस्तु (अंगूठा, मध्यमा से दोनों कान) । (५) ओं बाह्वोर्मे बलमस्तु (हाथ के अग्र से दोनों बाहें) । (६) ओं ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु (एकही साथ दोनों हाथों से दोनों जांघें) । (७) ॐ अरिष्टानि मेऽङ्गानि तनूस्तन्वासह (दोनों हाथों से शिर से पांव तक सकल देह स्पर्श करे) । इसके बाद मार्जन करे । सामवेदी संध्या में यह यह न्यास नहीं लिखा है । मगर इसका करना आवश्यक है । मार्जन के लिये आगे के नौ मंत्रों से कुश से सिर पर जल डालते हैं । कहीं लिखा है कि आठवें मन्त्र से पांव या भूमि पर जल गिरावे और अन्य सभी से सिर पर ही डालने को लिखा है । मार्जन का अर्थ भी यही है । अतः सिर पर ही डालना उचित है । फिर भी चाहे तो वैसा भी कर सकता है । मन्त्र-ओं आपोहिष्ठा मयोभुवः ॥ १ ॥ ओं तानऊर्जे दधातन ॥ २ ॥ ओं महेरणाय चक्षसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चसे ॥ ३ ॥ ओं योवः शिवतमोरसः ॥ ४ ॥ ओं तस्य भाजयतेहनः ॥ ५ ॥ ओं उशतीरिव मातरः ॥ ६ ॥ ओं तस्मा अरंगमामवः ॥ ७ ॥ ओं यस्य क्षयाय जिन्वथ ॥ ८ ॥ ओं आपो जनयथा च नः ॥ ९ ॥ किसी किसी सामवेदी पद्धति में पहले प्रणव, तीनों व्याहृति, और गायत्री इन तीनों से एक एक बार मार्जन लिखकर पीछे इन्हीं मन्त्रों से लिखा है। इसके बाद यजुर्वेदी दहिने हाथ में जल लेकर उसे बायें हाथ से ढँक कर मंत्र पढ़ते हैं-द्रुपदादिवेतिकोकिलो राजपुत्रऋषिरनुष्टुप् छन्दः अघमर्षणं विनियोगः । ॐ द्रुपदादिव मुमुचानः खिन्नः स्नातो मलादिव । पूतं पवित्रेणेवाज्यमापः शुन्धन्तु मैनसः ॥ इसके बाद बायां हाथ हटाकर उस जल को नासिका से लगाकर पढ़ते हैं-ऋतं चेति अघमर्षणऋषिरनुष्टुप् छन्दो भाववृत्तो देवता पापपुरुषनिरसने विनियोगः । ओं ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत । ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः । समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत । अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी । सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत् दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथोस्वः ॥ इसके पढ़ने के समय आंख मूंद देते हैं, शरीर के पापपुरुष का उसी जल में ध्यान करते हैं और मंत्र के अन्त में विना देखे ही उसे बाईं ओर फेंक देते हैं। यजुर्वेदी लोग पहले को अघमर्षण और इसे पापपुरुषनिरसन कहते हैं। मगर सामवेदी लोग पहला 'द्रुपदादिव' इत्यादि मंत्र नहीं पढ़ते हैं। किन्तु हाथ में जल लेकर और उसे नासिका के पास लगाकर प्राण निरोधपूर्वक आंख मूंदकर 'ॐ ऋतंच' इत्यादि मंत्र को एक बार या तीन बार पढ़ते हैं। प्राणवायु नहीं भी रोकते हैं और मन्त्र के अन्त में बाईं ओर जल को फेंक देते हैं। उनका अघमर्षण यही है। ऋग्वेदियों का भी यही है। मगर ये लोग 'ऋतंच' से पहले

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

विनियोग इस तरह पढ़ते हैं कि केवल 'पापपुरुषनिरसने' की जगह 'अघमर्षणे' या 'अश्वमेधावभृथे' पढ़ते हैं। और वाक्य तो ज्यों का रहता है। इसके बाद सूर्य को अर्घ्य देते हैं। तांबे के या अन्य पात्र में चन्दन, अक्षत, पुष्पादि से मिले जल की तीन अंजलियां प्रत्येक बार 'ओं भूर्भुवः० इत्यादि गायत्री पढ़कर ऊपर उछालकर सूर्य की ओर फेंकते हैं। प्रातःकाल और दोपहर को खड़ा होकर और शाम को बैठकर ही अर्घ्य देते हैं। प्रातःकाल और सायंकाल तीन अंजलियां देते हैं। मगर दोपहर को एक अंजलि दी जाती है। इसके बाद प्रातः और मध्याह्न में खड़े होकर एवं हाथ उठाकर तथा सायंकाल में बैठकर और हाथ जोड़कर सूर्य की स्तुति (सूर्योपस्थान) करे। (यजुर्वेदी)-उद्वयम्, उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिरनुष्टुप्छन्दः, चित्रमिति कुत्सांगिरस ऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः, तच्चक्षुरिति दध्यङ्ङाथर्वणऋषिरुष्णिक्छन्दः सूर्यो देवता सूर्योपस्थाने विनियोगः। ओं उद्वयं तमसस्परि स्वः पश्यन्त उत्तरम्। देवं देवत्रा सूर्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ १ ॥ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ २ ॥ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्रा द्यावा पृथिवी अन्तरिक्षं सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥ ३ ॥ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत्। पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ ४ ॥ सामवेदी केवल 'ओं उदुत्यमिति प्रस्कण्व ऋषिर्गायत्रीच्छन्दः, चित्रमिति कुत्सऋषिस्त्रिष्टुप्छन्दः सूर्योदेवता सूर्योपस्थाने विनियोगः-यह पढ़कर 'ओं उदुत्यं' और 'चित्रं' पूर्व के ही इन दोही मन्त्रों से सू

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्थान करते हैं । इसके बाद गायत्री का आवाहन करे (सामवेदी)- ओं आयातुवरदेदेवि अक्षरं ब्रह्मसम्मितम् । गायत्री छन्दसांमातेदं ब्रह्मजुषस्वमे ॥ (यजुर्वेदी) पूर्व के मन्त्र के बाद पढ़ते हैं-तेजोसीति परमेष्ठी प्रजापतिर्ऋषिर्जगतीछन्द आज्यं देवता गायत्र्यावाहने विनियोगः । ओं तेजोसि शुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥ २ ॥ इन दोनों से यजुर्वेदी आवाहन करते हैं और सामवेदी केवल पहले से ही । इसके बाद गायत्री की स्तुति (गायत्र्युपस्थान) करते हैं-तुरीयपदस्य विमल ऋषिर्गायत्रीछन्दः परमात्मा देवता गायत्र्युपस्थाने विनियोगः । ॐ गायत्र्यस्येकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपद्यसि नहि पद्यसे नमस्ते तुरीयाय दर्शतायपदाय परोजसे सावदोम् ॥ यह उपस्थान बहुतसी सामवेदी पद्धतियों में नहीं लिखा है । मगर उचित होनेके कारण हीं हमने लिख दिया है । फिर गायत्री का विनियोग पढ़े- प्रणवस्य ब्रह्माऋषिः गायत्रीछन्दः परमात्मादेवता, व्याहृतीनां प्रजापतिर्ऋषिर्गायत्रीछन्दः अग्निवायुसूर्या देवता, गायत्र्याविश्वामित्रऋषिर्गायत्रीछन्दः सविता देवता सर्वपापक्षयार्थे गायत्रीमंत्रजपे विनियोगः ॥ इसके बाद माला को वस्त्र या गोमुखी से ढँककर कम से कम १०८ बार जप करे । यदि बड़ी जल्दी हो तो २८ बार या कमसे कम १० बार जप करे । जपने के गायत्रीमन्त्र का स्वरूप यह है-ओं भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ जप के बाद सूर्य की सात प्रदक्षिणा करे—ओं विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतो बाहुरुत विश्वतस्पात् । संबाहुभ्यां धमति संपतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन्देव

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

एकः ॥ १ ॥ ओं यानिकानिचपापानि जन्मांतरकृतानि च । तानितानि विनश्यंति प्रदक्षिणपदेपदे ॥२॥ इसके बाद यजुर्वेदी जप निवेदन करते हैं। पर, सामवेदी नहीं करते। निवेदन का मंत्र-ओं देवा गातुविदो गातुं वित्वा गातुमित। मनसस्पत इमं देवयज्ञं स्वाहा वातेधाः ॥ फिर जप का अर्पण दोनों वेद वाले करें—ओं अनेन सन्ध्योपासनांगभूतेन यथा-संख्यजपेन श्रीभगवान् प्रीयतांनमम ॥ ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ प्रार्थना-यदक्षरपदभ्रष्टं मात्राहीनं तु यद्भवेत् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि काश्यपप्रियवादिनि। इसके बाद संध्या का विसर्जन करे-उत्तम इति कश्यपऋषिरनुष्टुप्छन्दः सन्ध्यादेवता सन्ध्याविसर्जने विनियोगः। ओं उत्तमे (उत्तरे) शिखरेजाते भूम्यां पर्वतमूर्द्धनि । ब्राह्मणेभ्योभ्यनुज्ञाता गच्छ देवि यथासुखम् । अन्त में—ॐ आकाशात्पतितं तोयं यथा गच्छति सागरम् । सर्वदेवनमस्कारः केशवं प्रतिगच्छतु ॥ १ ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं स्मृत्याच नामोक्त्या तपोयज्ञक्रियादिषु । न्यूनं सम्पूर्णतां याति सद्योवन्दे तमच्युतम् ॥२॥ इस तरह विष्णु की प्रार्थना करके जपस्थान की मृत्तिका को सिर में लगाले। यह सन्ध्या की पद्धति साधारण रीति से दोनों वेदों की है। इति सन्ध्योपासन।

३—ब्रह्मयज्ञ ।

सन्ध्योपासन के बाद ब्रह्मयज्ञ का अवसर आता है और पञ्च यज्ञों में यह पहला यज्ञ है। कभी कभी ऐसा होता है कि स्नान के बाद ही तर्पण करलेते हैं और वैश्वदेव के बाद ही ब्रह्मयज्ञ करते हैं। पर, सन्ध्योपासन के बाद भी करते हैं और तर्पण के बाद भी। इसलिये पहले कौन यज्ञ होता है और पीछे कौन इसका कोई विधि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। यदि सन्ध्या के साथ ही ब्रह्मयज्ञ करना हो तब तो और भी आसानी है। ब्रह्मयज्ञ नाम है वेद, वेदांग, धर्मग्रन्थ और स्तोत्र-मंत्रादि पवित्र ग्रन्थों का पाठ। याज्ञवल्क्य स्मृति के आचाराध्याय के (४१-४८) श्लोकों से स्पष्टतया यह बात सिद्ध है और वे श्लोक असल में शतपथ ब्राह्मण के ११ वें कांड के तीसरे प्रपाठक के ५ वें अध्याय के अन्तिम ८ वें ब्राह्मण के ९ मंत्रों तथा चौथे प्रपाठक के आरंभ के प्रथम ब्राह्मण के १० मंत्रों के व्याख्यानस्वरूप हैं। मनुस्मृति के तृतीय अध्यायके ७४-८१ श्लोकों से भी यही सिद्ध होता है। इसेही मनु, कात्यायन, गोभिलने, तथा और और ऋषियों ने भी. ऋषियज्ञ भी कहा है और अहुतयज्ञ भी इसी का नाम है। आजतक जितनी पद्धतियाँ ब्रह्मयज्ञ के बारे में बनी हैं उनमें भी यही बात और इसीकी विधि लिखी है। यहाँ तक कि सन्ध्योपासन में जो गायत्री का जप है उसे ही अनेकों ने ब्रह्मयज्ञ नाम दे डाला है और वह अनुचित भी नहीं है। हाँ, केवल उसे ही ब्रह्मयज्ञ नहीं कहते हैं। ऐसी दशा में यदि किसी मूर्खने मनुस्मृति के तीसरे अध्याय के 'अध्यापनं ब्रह्मयज्ञः' (७०) इत्यादि श्लोक को देखकर अध्यापन को ही ब्रह्मयज्ञ कहने का दुःसाहस किया है, तो कहना चाहिये कि उसे हिन्दूधर्म का न तो ज्ञान हीं है और न उससे किसी प्रकार का सम्पर्क ही। ऐसे मूर्खों को सोचना भी तो चाहिये कि जब स्वयं वही मनु दसवें अध्याय के 'षण्णांतुकर्मणां' (७६) इत्यादि श्लोकों द्वारा उस अध्यापन को जीविका कहते हैं न कि धर्म। तो फिर वह नित्यकर्म के अन्तर्गत कैसे हो सकता है। अतएव तीसरे अध्याय के अध्यापन शब्द का अर्थ अध्ययन, वेदपाठ, वेदजप या स्वाध्याय पाठ है और उस शब्द का 'णिच्' उसी तरह अविवक्षित है जिस तरह 'रामो राज्यमचीकरत्' में 'अचीकरत्' का। सारांश, जिस तरह इस वाक्य का अर्थ है राम ने राज किया, नकि कराया, क्योंकि 'अचीकरत्' का 'णिच्' प्रेरणा के अर्थ में होने पर भी अविवक्षित, अनभिप्रेत है। अथवा वह णिच् स्वार्थ में ही है; जैसा कि 'चोरयति' 'अचूचुरत्' इत्यादि में। यह बात भट्टोजिदीक्षित ने कौमुदी के चुरादिगण के अन्त में लिखी भी है। उसी तरह 'अध्यापन' शब्द का णिच् भी अविवक्षित या स्वार्थ में है और इस शब्द का वास्तविक अर्थ

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

अध्ययन, स्वाध्यायाध्ययन, पाठ या पढ़ना हीं है । अस्तु, आसन पर पूर्वमुख बैठ पवित्र धारण पूर्वक आचमन, प्राणायाम करके संकल्प करे-ओं अद्य० ममात्मनः श्रुत्यादिप्रोक्तफलप्राप्तिपूर्वकपरमेश्वरप्रीत्यर्थं यथाशक्ति ब्रह्मयज्ञेनाहं यक्ष्ये । इसके बाद पहले 'ओं' कार और 'भूर्भुवः स्वः' को पढ़ कर 'तत्सवितुः' इत्यादि गायत्री के तीनों पादों को अलग अलग पढ़े फिर दो पाद एक साथ और बाद में तीसरा अलग और अन्त में पूरा पढ़ा जाय । जैसाकि 'ओं भूर्भुवः स्वः । तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ भर्गोदेवस्य धीमहि ॥ २ ॥ धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ यही तीन पाद हैं । इसके बाद ही वह-ओं इषेत्वोर्जेत्वावायवस्थ देवोवः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठतमाय कर्मण आप्यायध्वमघ्न्या इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवा अयक्ष्मा मा वस्तेन ईशत माघशꣳसो ध्रुवा अस्मिन्गोपतौ स्यात बह्वीर्यजमानस्य पशून्पाहि ॥ १ ॥ इत्यादि यजुर्वेद का क्रमशः थोड़ा थोड़ा प्रतिदिन पाठ करे, यदि पाठ करने वाला यजुर्वेदी हो और यदि सामवेदी हो तो-ओं अग्न आयाहि वीतये गृणानो हव्यदातये । निहोतासत्सिबर्हिषि ॥ १ ॥ इत्यादि सामवेद का क्रमशः थोड़ा थोड़ा पाठ कर उसे पूरा करे । ऋग्वेदी-ओं अग्निमीले पुरोहितं यज्ञस्यदेवमृत्विजम् । होतारं रत्नधातमम् ॥ १ ॥ इत्यादि ऋग्वेद और अथर्ववेदी अथर्ववेद का पाठ करे प्रति दिन थोड़ा थोड़ा पाठ कर समस्त वेद पूरा कर के फिर आरंभ करे और हरबार ऐसाही करता जाय । यदि एक वेदवाला चाहे प्रतिदिन सभी वेदों का थोड़ा थोड़ा पाठ किया करे । इसके बाद शिक्षा, कल्प तथा अन्यान्य धर्मग्रन्थों का, जिनमें गीता, विष्णुसहस्रनाम, महिम्नस्तोत्रादि भी आजाते हैं, प्रतिदिन पाठ करना चाहिए और पाठ के अन्त में फिर पूर्ववत् गागत्री पढ़, 'ओं नमो ब्रह्मण्य' तीन बार कह कर विष्णु को प्रणाम कर के प्रार्थना करे-ओं इतिमे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धातपोयोनिरयोनिर्विष्णुरीडितः । वाग्यज्ञेनार्चितो देवः प्रीयतां मे जनार्दनः ॥ ओं अनेन ब्रह्मयज्ञकर्मणा श्रीपरमेश्वरः प्रीयतांनमम ओं तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ इस तरह अर्पण कर 'ओं यस्यस्मृत्या' इत्यादि कहे। इति ब्रह्मयज्ञ।

४—तर्पण ।

प्रायः ब्रह्मयज्ञ के बाद ही पितृतर्पण करते हैं। यद्यपि पितृयज्ञ ही पंचयज्ञो में है और पितृयज्ञ नाम है श्राद्ध का। तथापि कहीं कहीं पितृतर्पण को भी पितृयज्ञ कहा है। और यद्यपि तर्पण का अर्थ है तृप्ति और वह तृप्ति श्राद्ध से होती ही है। फिर भी तर्पण का व्यावहारिक अर्थ ही लेकर बहुत लोग प्रतिदिन श्राद्ध न कर केवल या तो तर्पण से ही काम चला लेते हैं। या वैश्वदेव के समय जो एक बलि पितरों को दी जाती है उसे ही पितृश्राद्ध की जगह मान लेते हैं। इसी तरह वैश्वदेव में सनकादि के नाम से जो एक बलि देते हैं उसे ही मनुष्ययज्ञ मान लेते हैं। भूतों या प्राणियों को तो वैश्वदेव के साथ बलि देते ही हैं। वही भूतयज्ञ और जो देवताओं के लिये वैश्वदेव के आरंभ में आहुतियां दी जाती हैं वही देवयज्ञ कहा जाता है। इस तरह केवल वैश्वदेव में ही देवयज्ञ, पितृयज्ञ, मनुष्ययज्ञ और भूतयज्ञ इन चारों का समावेश मान लेते हैं और यह बात एक तरह से ठीक ही है। इसी तरह गायत्रीजप को ब्रह्मयज्ञ मानकर पञ्चयज्ञ पूरा कर लेते हैं। कुछ स्तोत्रादि का भी पाठ कर लेते हैं और पितरों का तर्पण करके कृतकृत्य हो जाते हैं। यदि इतना भी कर लिया जाय और नित्यश्राद्ध न भी किया जाय तब भी पञ्चयज्ञ का काम तो एक प्रकार से पूरा हो ही जाता है। फिर भी, यह सब का सिद्धान्त नहीं है और मुख्य पक्ष यही है कि तर्पण के सिवाय नित्य श्राद्ध प्रति दिन होना चाहिये। अतएव आगे नित्य श्राद्ध की पद्धति भी लिखेंगे। परन्तु उससे प्रथम तर्पण की विधि आवश्यक है।

तर्पण में देवआदितीर्थ प्रयोग और कुशग्रहण कैसे करना चाहिये इसे स्नानांग तर्पण के प्रसंग में लिख चुके हैं। यह स्मरण रखना

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

चाहिये कि देवताओं और ऋषियों को जौ, कुश के साथ और पि
को तिल के साथ तर्पण करते हैं । यदि जौ न हो तो चावल लेते
तिल न हो तो केवल कुश से भी काम चल जाता है । अथवा चां
सोना, तांबा, मोती या गैंड़े की सींग के पात्र से भी काम नि
जाता है । केवल तिल के बिना रुक नहीं सकता है । यही चीजें
तिल के अभाव में काम दे सकती हैं । यदि कुश, तिल, चांदी आदि
सभी मिल जायं तो और भी अच्छा है । अथवा इन में दो तीन
भी रहें तो ठीक है । कहीं कहीं तिल से तर्पण का निषेध है । म
साधारणतया वाजसनेयियों, कठ, काण्व और जावाल शाखा
के लिये तो वह निषेध है ही नहीं और न महालय या पितृपक्ष,
संक्रान्ति, पितृश्राद्ध और अमावास्या में ही तिल का निषेध है । इ
तरह तीर्थ में उसका निषेध नहीं है । सिर्फ यही लिखा है कि जि
का पिता जीवित हो वही गयाश्राद्ध, अमावस्या का श्राद्ध (दर्शश्रा
और तिल से तर्पण न करे। यही निषेधों का निचोड़ है। फिर भी
स्मरण रखना चाहिये कि वास्तव में तर्पण के समय तिल दो प्र
से लिया जाता है । या तो तर्पण के जल में ही एक ही बार
कर उसी से करते हैं या बारबार अंजलि में (दहिने हाथ के
में) बायें हाथ से डालने का नियम जल में पैठ कर तर्पण करने
समय के लिये है । मगर कूएं या अन्य जलाशय से जल अलग
कर तर्पण करने के समय पहले ही एक पात्र में तुलसीदल, च
और पुष्प रख उस पर कुश पूर्वाग्र रखना और उसे जल से भर
उस में तिल डालकर पितृतर्पण करना चाहिये । इसी तरह
और ऋषितर्पण में जौ या चावल डालकर । परन्तु जो ऐसा
करके जल से बाहर भी बार बार तिल डालकर तर्पण करते हैं
के लिये निषेध है कि वे ऐसा न करें ।

तर्पण में अंजलियों का भी नियम है । देवताओं के २९
मरीचि आदि दिव्य (देव) ऋषियों के १० ये ३९ तर्पण तो
अंजलि से पूर्वमुख होते हैं और देवतीर्थ से ही कुश के अग्र
से जल गिराते हैं । फिर उत्तरमुख होकर ऋषि या प्रजा
तीर्थ से सनकादि ७ ऋषियों को कुश के मध्य से दो दो अंजलि
प्रत्येक को देते हैं । फिर दक्षिणमुंह होकर मोटक से कुश के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और अग्रभाग (दोनों) से तीन तीन अंजलियां कव्यवाड्आदि सात दिव्य पितरों और यमादि १४ यमोंको तथा पिता आदि मनुष्य पितरों को और माता, पितामही, प्रपितामही को तीन तीन अंजलियां, सौतेली मा और गुरुवानी को दो दो तथा शेष स्त्रियों को एक अंजलि देने का नियम है। तीन तीन अंजलियां तो केवल पुरुषों को ही देने का सामान्य नियम है। स्त्रियों में तो माता आदि तीन हीं को तीन देते हैं।

जिस तरह देवादि के तर्पण में सव्य, निवीत (माला की तरह) और अपसव्य जनेऊ करने का नियम है, उसी तरह कन्धे पर गमछा भी रक्खा जाता है और देवतर्पण में दहिना, पितृतर्पण में बायां, तथा मनुष्यतर्पण (सनकादि के तर्पण) में दोनों घुटने टेकते हैं। यदि जल में तर्पण करे तो उस का जल जल में ही गिरावे नकि जमीन पर। इसी तरह भूमि पर तर्पण करने के समय जल में न गिरावे। परन्तु भूमि पर भी कुश बिछाकर उसीपर गिरावे। जो कुश भूमि पर बिछाये जावें वे देवतर्पण में पूर्वाग्र, ऋषितर्पण में उत्तराग्र और पितृतर्पण में मोटक तथा दक्षिणाग्र रहें। परन्तु भरसक भूमि पर न गिराकर किसी पात्र में ही गिराना चाहिये और उसके अभाव में ही भमिपर उक्त रीति से कुश बिछाकर गिरावे। यदि वह भी न हो सके तो किसी जलपूर्ण गढ़े में, जो पवित्र हो, गिरावे। मगर यह भी न हो सकने पर और भूमि की अपवित्रता आदि की संभावना होने पर जल में ही, भूमि पर तर्पण करने के समय भी, गिरा सकते हैं। यहां जल से अभिप्राय तालाब, नदी आदि से है। परन्तु विना कुशवाली भूमि पर कभी न गिरावे। तर्पण के समय दोनों हाथों में दो पवित्र धारण कर ले। यह पवित्र तर्पण के कुशों के अतिरिक्त है। तर्पण के पवित्र और कुश प्रतिदिन नये नये लिये जायं और कुश के अभाव में काश, दूब आदि (पृ० ५६) से काम लेना चाहिये। बहुत लोग कमर, सिर आदि में भी पैंती लगाते हैं। मगर इसकी आवश्यकता नहीं है।

तर्पण में मरीचि आदि १० ऋषियों के नाम कात्यायन आदि ने नहीं दिये हैं। मगर ब्रह्मपुराणादि के आधार पर अन्यान्य पद्धतियों में लिखे गये हैं। अतएव मान्य हैं। किसी किसी पद्धति में ब्रह्मादि देवतर्पण से पहले इतना और भी लिखा है—ॐ तीर्थानि तृप्य-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

न्ताम् ॥ १ ॥ ओं तीर्थदेवास्तृ० ॥ २ ॥ ओं विश्वेदेवास्तृ० ॥ ३ ॥ ओं मोदास्तृ० ॥ ४ ॥ ओं प्रमोदास्तृ० ॥ ५ ॥ ओं सुमुखास्तृ० ॥ ६ ॥ ओं दुर्मुखास्तृ० ॥ ७ ॥ ओं अविघ्नास्तृ० ॥ ८ ॥ ओं विघ्नकर्त्तारस्तृ० ॥ ९ ॥ परन्तु मानक य पद्धतियों में इनका उल्लेख न होने से हमने छोड़ दिया है। चाहे कर सकता है। इसमें आग्रह नहीं है।

तर्पण के प्रत्येक वाक्य के आदि में 'ॐ' और अन्त में देवों तथा ऋषियों के लिये यजुर्वेदी 'तृप्यताम्' या 'तृप्यतु' लगाते हैं। ऋग्वेदी तो प्रायः सर्वत्र ही ओंकार नहीं लगाते तथा 'ब्रह्माणं तर्पयामि' इत्यादि रीति से करते हैं। वे द्वितीयान्त बोलकर 'तर्पयामि' लगाते हैं। सामवेदियों के यहां कर्मप्रदीप में यद्यपि 'तर्पयामि' लिखा है। फिर भी उनकी पद्धतियों में ऋग्वेदियों की तरह न करके 'तृप्यतु' ही लिखा है। और सर्वत्र आदि में ॐ भी लगाया है। हम भी ऐसा ही लिखेंगे। पितरों के तर्पण में भी आदि में 'ॐ' सर्वत्र सामवेदियों ने और यजुर्वेदियों ने भी लिखा है। मगर यजुर्वेदी अन्त में 'तृप्यताम्' की जगह 'स्वधानमः' कहते हैं और सामवेदी भी 'तृप्यतु' ही कहते हैं। इसी तरह १४ यमों के बारे में सामवेदी 'तृप्यतु' ही लिखते हैं। हालां कि उनके लिये 'नमः' कहने की आज्ञा है और यजुर्वेदियों ने ऐसा लिखा भी है। अतएव हम यजुर्वेदियों के लिये तो वैसा ही लिखेंगे। मगर सामवेदियों के लिये उनकी पद्धतियों के ही अनुसार लिख देंगे। स्मरण रहे कि जितनी अंजलियां दी जायं उतनी हीं बार मंत्र भी पढ़े जायं। न कि एक ही मंत्र बार बार देंगे। जहां पिता, पितामहादि तीन आवें वहां मंत्र वसु, रुद्र और आदित्यरूप और माता आदि तीन स्त्रियां यमुना, सरस्वतीरूप, या गायत्री, सावित्री, सरस्वतीरूप कही जाती हैं। मगर अकेले चचा आदि केवल वसुरूप और पत्नी आदि केवलगायत्री या गंगारूप कही जाती हैं।

यह भी जान लेना चाहिये कि यह जो नित्यतर्पण है वही महालय या पितृपक्ष और गया आदि तीर्थों के लिये भी है। परन्तु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इतनी विशेषता है कि जिसके पिता जीवित हों वह केवल देव, ऋषि और पितरों में १४ यमों तक ही तर्पण करता है । शेष का नहीं । परन्तु मृतपितावाला तो सभी करता है । किसी किसी का कहना है कि जीवितपितावाला भी केवल पिता को छोड़ शेष का करे । उचित तो यही प्रतीत होता है । फिर भी हम इसमें आग्रह करना नहीं चाहते । और लोग कहते हैं कि जिसका पिता जीवित होने पर भी संन्यासी हो गया हो या पतित हो, वह पितामहादि का भी कर सकता है । अस्तु, जैसी रुचि हो करे । इस तर्पण की विधि में जिनके नाम न भी लिखे हों उनके नाम लेकर अपने सभी सम्बन्धियों का तर्पण करना चाहिये । अन्त में जो श्लोक पढ़ कर एक एक अंजलियां देते हैं वह तो सभी के लिये हैं । चाहे उसका पिता जीवित हो या मर गया हो। यह संक्षेप से तर्पण के सम्बन्ध का विचार है ।

यजुर्वेदी तर्पण । पहले संकल्प करे । हाथ में कुशतिलजलादि लेकर पढ़े-ओं तिथिर्विष्णुस्तथावारो नक्षत्रं विष्णुरेवच । योगश्च करणं चैव सर्वं विष्णुमयं जगत् ॥१॥ ओं अद्य० श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं ओं तत्सत्परमेश्वरप्रीतये देवर्षिपितृतर्पणमहंकरिष्ये ॥ हाथ में पूर्वाग्र तीन कुश लेकर और पूर्वमुख सव्य होकर देवताओं का आवाहन करे— ओं विश्वेदेवास आगत श्रृणुताम इम ँ हवम् । एदं बर्हिर्निषीदत ॥ १ ॥ ॐ विश्वेदेवाः शृणुतेम ँ हवमे ये अन्तरिक्षे य उपद्यविष्ठ । ये अग्निजिह्वा उतवा यजत्रा आसद्यास्मिन्बर्हिषिमादयध्वम् ॥ २ ॥ ओं आगच्छन्तु महाभागा विश्वेदेवा महाबलाः । ये तर्पणेऽत्र विहिताः सावधाना भवन्तुते ॥ ३ ॥ यदि दो वैदिक मंत्र न पढ़सके तो तीसरे श्लोक को ही पढ़कर आवाहन करे । बहुत लोग तो ऋषियों और देवताओं का भी साथ ही आवाहन इस तरह करते हैं-ओं ब्रह्मादयः सुराः सर्वे ऋषयः सनकादयः । आगच्छन्तु महाभागा ब्रह्माण्डोदरवर्त्तिनः ॥ इसके बाद

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

पूर्वमुख पूर्वाग्र कुशोंसे जौ या अक्षत मिले जलसे देवताओंका तर्पण
(१) ओं ब्रह्मा तृप्यताम् (२) ओं विष्णुस्तृप्यता
(३) ओं रुद्रस्तृप्यताम् (४) ओं प्रजापतिस्तृप्यता
(५) ओं देवास्तृप्यंताम् (६) ॐ छन्दांसितृ०
ओं वेदास्तृ० (८) ओंऋषयस्तृ० (९) ओं पुरा
चार्यास्तृ० (१०) ओं गन्धर्वास्तृ० (११) ओं इत
चार्यास्तृ० (१२) ॐ संवत्सरः सावयवस्तृप्यताम्
ओं देव्यस्तृप्यन्ताम् (१४) ओं अप्सरसस्तृ०
ओं देवानुगास्तृ० (१६) ओं नागास्तृ० (१७)
सागरास्तृ० (१८) ओं पर्वतास्तृ० (१९) ओं सरि
स्तृ० (२०) ओं मनुष्यास्तृ० (२१) ओं यक्षा
(२२) ओं रक्षांसितृ० (२३) ओं पिशाचास्तृ०
ओं सुपर्णास्तृप्यं० (२५) ओं भूतानितृप्यं०
ओं पशवस्तृ० (२७) ओं वनस्पतयस्तृ० (२८)
ओषधयस्तृ० (२९) ओं भूतग्रामश्चतुर्विधस्तृप्यताम्
इन में पहले के चार, १२ वें और २९ वें में 'तृप्यताम्' ए
वचन है । शेष में 'तृप्यंताम्' बहुवचन है । आगे दस देवर्षि
का भी तर्पण देवतर्पण की ही तरह करे और अन्त में 'तृप्यताम्' ए
वचन हीं बोले-(१) ओं मरीचिस्तृ० (२) ओं अत्रि
(३) ॐ अंगिरास्तृ० (४) ओं पुलस्त्यस्तृ० (५)
पुलहस्तृ० (६) ओं क्रतुस्तृ० (७) ओं प्रचेता
(८) ओं वसिष्ठस्तृ० (९) ओं भृगुस्तृ० (१०)
नारदस्तृप्यताम् ॥

फिर उत्तरमुख होकर ऋषितर्पण में प्रत्येक बार दो दो अं
लियां दे । तीन कुशों को दोनों हाथों में पकड़ उनके बीच में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रजापतितीर्थ से जौ या अक्षत मिला जल गिरावे । यदि पहले ही ऋषियों का आवाहन न किया हो तो आवाहन भी कर ले-ओं कपिलादयश्च ये सर्वे ऋषयः सनकादयः । आगच्छन्तु महाभागा ब्रह्माण्डोदरवर्तिनः ॥ १ ॥ ओं सनकस्तृप्यताम् । ॐ सनकस्तृ० (२) ॐ सनन्दनस्तृ० । ॐ सनन्दनस्तृ० (३) ॐ सनातनस्तृप्यताम् । ॐ सनातनस्तृ० (४) ओं कपिलस्तृप्य० । ओं कपिलस्तृ० (५) ओं आसुरिस्तृप्य० । ओं आसुरिस्तृ० (६) ओं वोढुस्तृ० । ओं वोढुस्तृ० (७) ओं पञ्चशिखस्तृ० । ओ पंचशिखस्तृ० ॥ सर्वत्र 'तृप्यताम्' एकवचन ही रहेगा ।

दक्षिणमुख अपसव्य होकर काले तिल जल में मिलाकर पितृतीर्थ से तीन तीन अंजलियां हरबार दे । हाथ में मोटक ले जिस की जड़ और अग्र दक्षिण ओर हों । बायां घुटना टेक दे । पहले हाथ में तीन मोटक लेकर आवाहन करे-ॐ उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि । उशन्नुशत आवहपितॄन्हविषे अत्तवे ॥ १ ॥ ॐ आयन्तुनः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः । अस्मिन्यज्ञेस्वधया मदन्तोऽधिब्रुवन्तुतेऽवन्त्वस्मान् ॥ २ ॥ फिर अंजलियां दे-(१) ॐ कव्यवाडनलस्तृप्यतामिदं जलंतस्मै स्वधानमः । ॐ कव्यवाडनल० । ॐ कव्यवाडनल० (२) ॐ सोमस्तृप्यतामिदेजलं तस्मैस्वधानमः । ॐ सोम० । ॐ सोम० । (३) ओं यमस्तृ० । ओं यमस्तृ० ॐ यमस्तृ० (४) ॐ अर्यमातृ० । ॐ अर्यमा० । ॐ अर्यमा० । (५) ॐ अग्निष्वात्तास्तृप्यंतामिदंजलं तेभ्यः० । ओं अग्निष्वात्तास्तृ० । ओं अग्निष्वात्तास्तृ० (६) ओं सोमपास्तृ० । ओं सोमपास्तृ० । ओं सोमपास्तृ० (७) ओं बर्हिषदस्तृ० । ॐ बर्हिष-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

दस्तृ० । ओंबर्हिषदस्तृ० ॥ इन ७ में पहले चार में 'तृप्यताम्' एकवचन और शेष में 'तृप्यन्ताम्' बहुवचन बोले और उस के बाद 'इदं जलं तस्मै (तेभ्यः) स्वधा नमः' सर्वत्र बोलता जाय। फिर १४ यमों को भी प्रत्येक के अन्त में 'नमः' कहकर तीन तीन अंजलि पितृतीर्थ से हीं पूर्ववत् दे-(१) ॐ यमाय नमः। ओं यमाय० ओं यमाय नमः (२) ओं धर्मराजाय०। ओं धर्मराजाय० ॐ धर्मराजाय० (३) ॐ मृत्यवे०। ओं मृत्यवे०। ॐ मृत्यवे० (४) ओं अन्तकाय०। ओं अन्तकाय०। ॐ अन्तकाय० (५) ओं वैवस्वताय०। ओं वैवस्वताय०। ओं वैवस्वताय० (६) ओं कालाय०। ओं कालाय०। ओं कालाय० (७) ओं सर्वभूतक्षयाय०। ओं सर्वभूतक्षयाय०। ओं सर्वभूतक्षयाय० (८) ओं औदुम्बराय०। ओं औदुम्बराय०। ओं औदुम्बराय० (९) ॐ दध्नाय०। ॐ दध्नाय०। ॐ दध्नाय० (१०) ॐ नीलाय०। ॐ नीलाय०। ॐ नीलाय० (११) ओं परमेष्ठिने०। ॐ परमेष्ठिने०। ॐ परमेष्ठिने० (१२) ॐ वृकोदराय०। ॐ वृकोदराय०। ॐ वृकोदराय० (१२) ॐ चित्राय०। ॐ चित्राय०। ॐ चित्राय० (१४) ॐ चित्रगुप्ताय०। ओं चित्रगुप्ताय०। ॐ चित्रगुप्ताय नमः॥ साधारणतया यही नियम है कि जिनके पिता जीवित हों वे यहीं तक तर्पण करें। बहुत लोग पितरों का पूर्व दिन आवाहन यहां पढ़ते हैं। उचित तो पहले ही पढ़ना है। इसके बाद आगे के प्रत्येक मंत्र से तीन अंजलियां दे। तीन मंत्रों से पिता को तीन तीनसे पितामहको तीन और तीनसे प्रपितामह को तीन-।

ॐ उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः। असुं यईयुरवृका ऋतज्ञास्तेनोऽवन्तु पितरो हवेषु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं अमुकगोत्रोऽस्मत्पिता अमुकशर्म्मा वसुरूपस्तृप्य-
तामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः ॥ १ ॥ (२) ॐ अंगिरसो-
नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगव सोम्यासः । तेषांवय-
ं सुमतौ यज्ञियानामपिभद्रे सौमनसेस्याम ॥ ॐ अद्या-
मुकगोत्रोऽ० इत्यादि पूर्व वाक्य से द्वितीय ॥२॥ (३) ॐ आय-
न्तुनः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः ।
अस्मिन्यज्ञे स्वधयामदन्तोऽधिब्रुवन्तुतेऽवन्त्वस्मान् ॥ ॐ
अमुक० से तृतीय ॥ ३ ॥ आगे भी प्रत्येक मंत्र के अन्त में वही
वाक्य पढ़ेंगे। केवल, पिता की जगह तीन बार पितामह, और तीन बार
प्रपितामह और रुद्र, आदित्य बोलेंगे-(४) ओं ऊर्ज्जं वहन्तीरमृतं
घृतं पयः कीलालं परिस्रुतम् । स्वधास्थ तर्पयतमे पितृ-
न् ॥ ॐ अद्यामुकगोत्रोऽस्मत्पितामहः० रुद्ररूपः० ॥ १ ॥
(५) ॐ पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधानमः पितामहेभ्यः
स्वधायिभ्यः स्वधानमः प्रपितामहेभ्यः स्वधायिभ्यः
स्वधानमः । अक्षन् पितरोऽमीमदन्त पितरोऽतीतृप-
न्तपितरः पितरः शुन्धध्वम् ॥ ॐ अद्या० ॥ २ ॥ (६)
ॐ येचेह पितरो येचनेह याँश्च विद्म याँ उचन प्रविद्म ।
त्वं वेत्थयदिते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञं सुकृतं जुषस्व ॥
ॐ अद्या० ॥ ३ ॥ (७) ॐ मधुवाता ऋतायते मधुक्षर-
न्तिसिन्धवः । माध्वीर्नः सन्त्वौषधीः ॥ ॐ अद्यामुकगोत्रोऽ
स्मत्प्रपितामहः० आदित्यरूपः० ॥ १ ॥ (८) ॐ मधुन-
क्तमुतोषसोमधुमत्पार्थिव ँ रजः । मधुद्यौरस्तुनःपिताः ॥
ॐ अद्या० ॥ २ ॥ (९) ॐ मधुमान्नो वनस्पतिर्मधुमाँ
अस्तु सूर्यः । माध्वीर्गावो भवन्तुनः ॥ ॐ अद्या० ॥३॥
इसके बाद-'ओं तृप्यध्वं तृप्यध्वं तृप्यध्वम्' पढ़कर तीन

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-

अंजलियां दे । अर्थात् हरेक ' तृप्यध्वम् ' को पढ़कर एक अंजलि दे । सर्वत्र ' अमुक ' शब्द की जगह गोत्र और पिता आदि के नाम पढ़ता जावे । आगे भी इसी तरह गोत्र और माता आदि के नाम पढ़े । इसके बाद माता आदि तीन को तीन तीन अंजलियां दे-

(१) ॐ अमुकगोत्रा अस्मन्माता अमुकी देवी गायत्री स्वरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधानमः । ॐ अमुक गोत्रा० । ॐ अमुक० । (२) ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्पितामही अमुकी देवी सावित्रीस्वरूपा० । ओं अमुकगो० । ओं अमुक० । (३) ओं अमुकगोत्रा अस्मत्प्रपितामही अमुकी देवी सरस्वतीस्वरूपा० । ओं अमुक० । ॐ अमुक०

प्रत्येक बार यहां ' तस्मै ' की जगह ' तस्यै ' कहेंगे । आगे स्त्रियों के लिये सर्वत्र ' तस्यै ' और पुरुषों के लिये ' तस्मै ' कहेंगे ऊपर के नवों वाक्य एकसेही हैं । केवल माता, आदि शब्द तीन में एक एक हैं । और, गायत्री, सावित्री, सरस्वती शब्द भी फिर माता की जगह ' सापत्नमाता ' पूर्व केही वाक्यमें लगा कर सौतेली माको दो अंजलियां दे-ओं अमुकगोत्राऽस्मन्मा सापत्नमाताऽमुकी देवी गायत्री० ॥ ओंअमुक० ॥ फिर इन के मंत्र पढ़े-ओं नमो वः पितरा रसाय नमोः वः पितरः शोषाय नमो वः पितरो जीवाय नमो वः पितरःस्वधाय नमो वः पितरो घोराय नमो वः पितरो मन्यवे नमो वः पितरः पितरो नमोवो गृहान्नः पितरोदत्त सतोवः पितरो देष्मैतद्वः पितरोवासः ॥ इसके बाद मातामहादि को तीन तीन अंजलियां दे-(१) ओं अमुकगोत्रोऽस्मन्मातामहोऽमुकशर्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्वधा नमः । ओं अमुक० । ओं अमुक० । (२) ओं अमुकगोत्रोऽस्मत्पितामहोऽमुकशर्मा रुद्ररूपस्तृप्यतामिदं० । ओं अमुक०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं अमुक०। (३) ॐ अमुकगोत्रोऽस्मद्वृद्धप्रमातामहोऽमुकशर्म्मा आदित्यरूपः० ॥ ओं अमुक०। ओं अमुक० ॥ फिर मातामही आदि तीन को एक एक अंजलि दे-ओं अमुकगोत्रास्मन्मातामही अमुकीदेवी गायत्रीस्वरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै स्वधा नमः। (२) ॐ अमुकगोत्रास्मत्प्रमातामही अमुकीदेवी सावित्री०। (३) ॐ अमुकगोत्राऽस्मद्वृद्धप्रमातामही अमुकीदेवी सरस्वतीस्वरूपा० ॥ इसके बाद पत्नी आदि को दे-(१) ओं अमुकगोत्रास्मत्पत्नी अमुकीदेवी गायत्रीस्वरूपा तृप्यतामिदं जलं सतिलं तस्यै स्वधानमः। (२) ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्सुतः (यदि उसकी स्त्री भी मरी होतो 'सुतः' के आगे 'सपत्नीकः', यदि पुत्र मरा होतो 'सपुत्रः' और यदि दोनों मरे हों तो 'सपुत्रपत्नीकः' ऐसा भी कहे) अमुकशर्म्मा वसुरूपस्तृप्यतामिदं जलं तस्मै स्व०। ओं अमुक०। ॐ अमुक०। (३) ॐ अमुकगोत्रास्मत्कन्या अमुकीदेवी गायत्रीस्वरूपातृप्यतामिदं जलं तस्यै० ॥ यदि कन्या के पुत्र, पति, या दोनों मरे हों तो 'ससुता, सभर्तृका' या 'ससुतभर्तृका' यह भी कन्या के आगे पढ़े। इसी तरह आगे पुरुषों में पुत्र की तरह 'ससुतः, सपत्नीकः, ससुतपत्नीकः, जैसी आवश्यकता हो और स्त्री में कन्या की तरह 'ससुता' आदि कहता जावे। हम बार बार न कहेंगे। इसका ध्यान स्वयं रखना होगा। (४) ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्पितृव्योऽमुकशर्म्मा वसुरूपः तृप्यतामिदं जलं तस्मै०। ओं अमुक०। ओं अमुक०। (५) ओं अमुकगोत्रोऽस्मन्मातुलः अमुकशर्म्मा वसुरूपस्तृ०। ॐ अमुक०। ओं अमुक०। (६) ॐ अमुकगोत्रोऽस्मद्भ्राता अमुकशर्म्मा वसुरूपस्तृ०। ॐ अमुक०। ॐ अमुक० ॥ स्मरण रहे कि यदि चचा, मामा, भाई आदि कई

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

मरे हों तो सबसे ज्येष्ठ से शुरू कर क्रम से सभी का नाम लेकर तर्पण करे, और प्रथम, द्वितीय आदि शब्द उनके लिये बोलता जाय। जैसे प्रथमपितृव्यः, द्वितीयपितृव्यः, इत्यादि। इसीतरह पुत्र, कन्या तथा आगे कहे जाने वालों के भी सम्बन्ध में जानना चाहिये और जो मरे हों ऐसे पुत्र आदि को छोड़ देना भी होगा। ऊपर लिखने का यह अर्थ नहीं है कि मृत या जीवित पुत्रादि सभी का ही तर्पण हो।

(७) ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्सापत्न (सौतेला) भ्राता अमुकशर्म्मा वसुरूपस्तृ०। ॐ अमुक०। ॐ अमुक०।(८) ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्सापत्नभगिनी अमुकीदेवी गायत्री स्वरूपा तृप्यतामिदं जलं तस्यै०।(९) ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्पितृभगिनी (फूआ) अमुकीदेवी गाय० तस्यै०।(१०) ॐ अमुकगोत्राऽस्मन्मातृभगिनी (मौसी) अमुकीदेवी तस्यै०। (११) ओं अमुकगोत्रास्मदात्मभगिनी० (बहन) (१२) ओं अमुकगोत्रास्मत्सापत्नभगिनी (सौतेली बहन)०। (१३) ओं अमुकगोत्रोऽस्मच्छ्वशुरः अमुकशर्म्मावसु० तस्मै०। ओं अमुक०। ओं अमुक०। (१४) ओं अमुकगोत्रोऽस्मद्गुरुः अमुकशर्म्मा वसु० तस्मै०। ओं अमुक०। ओं अमुक०। (१५) ओंअमुकगोत्रागुरुपत्नी०। ॐ अमुक०॥(१६) ओं अमुकगोत्रोऽस्मच्छिष्यः अमुकशर्म्मावसु० तस्मै०। ॐअमुक०। ॐअमुक०। (१७) ॐअमुकगोत्रोऽस्मान्मित्रम् अमुक०तस्मै० ओं अमुक०। ओं अमुक०। (१८) ओं अमुकगोत्रोऽस्मदाप्तः० (कोई माननीय, श्रेष्ठजन)। ओं अमुक०। ओं अमुक०॥ इसी प्रकार से केवल नाती (दौहित्र), भांजा (भागिनेय), दामाद (जामाता), शाला (श्यालक), भतीजा (भ्रातृपुत्र), चचेरा भाई (पितृव्यपुत्र), मामा का पुत्र (मातुलपुत्र), गुरु

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुत्र आदि मरे हुओं का तर्पण करे । जिन्हें जिन्हें स्मरण कर सके उन्हें उन्हें जल दे । यदि अकेले हों तो केवल नाम लेकर और यदि स्त्री-पुत्रादि के साथ मरे हों तो 'ससुतः, सपत्नीकः, ससुत-पत्नीकः' यह पुरुषों का—सम्मुता, सभर्तृका, ससुतभर्तृका-यह स्त्रियों का विशेषण लगाले; कई एक के होने पर पुरुषों में 'प्रथमः, द्वितीयः' और स्त्रियों में 'प्रथमा, द्वितीया' आदि लगाले और विधिवत् सभी को जल देकर तृप्त करे ।

इसके बाद आगे के श्लोंको से दक्षिणमुख अपसव्यादि होकरही एक एक अंजलि जल पितृतीर्थ से दे । प्रत्येक श्लोक के अंत में एकही बार दे । यह काम्यतर्पण कहाता है और इसे सभी करें । चाहे उनके पिता मर गये हों या जीवित हों । वह ऐसा है । पहले दो श्लोकों से एक अंजलि दे । १,२ आदि अंक मंत्रके चिन्ह है-ओं देवासुरास्तथा यक्षा नागा गन्धर्वराक्षसाः । पिशाचा गुह्यकाः सिद्धाः कूष्मांडास्तरवः खगाः ॥ जलेचरा भूनिलया वाय्वाधाराश्च जन्तवः । प्रीतिमेते प्रयान्त्वाशु मद्दत्तेनाम्बुनाखिलाः ॥१॥ ॐ नरकेषु समस्तेषु यातनासु च ये स्थिताः । तेषामाप्यायनायैतद्दीयते सलिलं मया ॥ २॥ ॐ पितृवंशे मृता येच मातृवंशे तथैवच । गुरुश्वशुरबन्धूनां येचान्ये बान्धवाः स्मृताः ॥ ये मे कुले लुप्तपिंडाः पुत्रदारविवर्जिताः । क्रियालोपगता येच जात्यंधाः पंगवस्तथा ॥ विरूपाआमगर्भाश्च ज्ञाताज्ञातकुलेमम । तेभ्योजलं मया दत्तमक्षय्यमुपतिष्ठताम् ॥३॥ ॐ येऽबान्धवा बान्धवा येऽन्यजन्मनि बान्धवाः । ते सर्वे तृप्तिमायान्तु येस्मत्तोयाभिकांक्षिणः ॥ ४ ॥ ॐ आब्रह्मस्तम्बपर्यन्तंदेवर्षिपितृमानवाः । तृप्यन्तु पितरः सर्वे मातृमातामहादयः ॥ ५ ॥ ॐ अतीतकुलकोटीनां सप्तद्वीपनिवासिनाम् । आब्रह्मभुवनाल्लोकादिदमस्तु तिलोदकम् (कुशोदकम्) ॥६॥ इसके

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

बाद यदि स्नान का वस्त्र हो तो उसे ही और यदि वह न हो तो दूसरा ही भिगोकर उसका चौथाई भाग अपनी बाईं ओर भूमि पर गार (निचोड़) दे । यह जल में कभी न गारे । गारने का मंत्र-ये के चास्मत्कुलेजाता अपुत्रागोत्रिणो मृताः । ते गृह्णन्तु मया दत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥ उसके बाद पूर्वमुख सव्य होकर शुद्ध जल से आचमन करके प्राणायाम करे और अक्षत पुष्प, चन्दनादि मिश्रित जल से सूर्य को एक अर्घ्य पौराणिक मंत्र से मंत्र दो हैं । किसी एक से ही दे । वे हैं-ॐ एहि सूर्य सहस्रांशो तेजोराशे जगत्पते । अनुकम्पय मां भक्त्या गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तुते ॥ अथवा-ॐ नमो विवस्वते ब्रह्मन्भास्वते विष्णुतेजसे । जगत्सवित्रे शुचये नमस्ते कर्मदायिने फिर जलाशय में या पात्रके ही जल में अनामिका से षड्दल कमल का चिन्ह बनावे और यदि पात्र हो तो उसमें चन्दन, अक्षत पुष्प तुलसीदल डालकर छ देवताओं के लिये अर्घ्य तैयार करे और आगे के मंत्रों से उन्हें अर्घ्य दे । या केवल चन्दन, और पुष्प ही प्रत्येक बार चढ़ावे । नहीं तो केवल पुष्प ही और अभाव में केवल जल ही । अर्घ्य का जल दूसरे पात्र या जल में गिराता जाय न कि भूमि पर । मंत्र यह हैं-ओं ब्रह्मजज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद्विसीमतः सुरुचोवेन आवः । सबुध्न्या उपमा अस्य विष्ठा सतश्च योनिमसतश्च विवः ॥ ओं ब्रह्मणेनमः (या 'ओं ब्रह्माणं पूजयामि' । इसी तरह आगे भी समझो ॥ १ ॥ ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधानिदधे पदम् । समूढमस्य पाꣳसुरे स्वाहा ॥ ॐ विष्णवे नमः ॥ २ ॥ नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥ ॐ रुद्राय नमः ॥ ३ ॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ ॐ सवित्रेनमः ॥ ४ ॥ ॐ मित्रस्यचर्षणी धृतोवो देवस्य सानसि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शुम्नं चित्रःश्रवस्तमम् ॥ ॐ मित्राय नमः ॥ ५ ॥ ॐ इममे वरुण श्रुधी हवमद्याच मृडय। त्वामवस्युराचके ॥ ॐ वरुणाय नमः ॥ ६ ॥ इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सूर्य, मित्र, वरुण इन छ देवताओं की पूजा के बाद दो मंत्रों से सूर्य का उपस्थान करे-ओं अदृश्रमस्य केतवो विरश्मयो जनाँ अनु। भ्राजन्तो अग्नयो यथा। उपयाम गृहीतोऽसि सूर्यायत्वा भ्राजायैष ते योनिः सूर्याय त्वा भ्राजाय। सूर्यभ्राजिष्ठ भ्राजिष्ठस्त्वं देवेष्वसि भ्राजिष्ठोऽहम्मनुष्येषु भूयासम् ॥ १ ॥ ॐ हंसः शुचिषद्वसुरन्तरिक्षसद्धोतावेदिषदतिथिर्दुरोणसत्। नृषद्वरसदृतसद्व्योमसदब्जागोजा ऋतजा अद्रिजा ऋतं बृहत् ॥२॥ इसके बाद खड़े होकर पूर्व से शुरू कर प्रत्येक दस दिशाओं और उनके देवताओं को उनकी ओर मुख कर प्रणाम करके बैठ जाय और अग्नि आदि को प्रणाम करे-(१) ओं प्राच्यैदिशे-इन्द्राय नमः। (२) ओं आग्नेय्यैदिशे—अग्नये नमः। (३) ओं दक्षिणायै दिशे-यमाय नमः। (४) ओं नैर्ऋत्यै दिशे—निर्ऋतये नमः। (५) ओं पश्चिमायै दिशे-वरुणाय नमः। (६) ओं वायव्यै दिशे-वायवेनमः। (६) उदीच्यैदिशे-सोमाय नमः। (८) ओं ऐशान्यैदिशे-ईशानाय नमः। (९) ओं ऊर्ध्वायै दिशे (ऊपर)-ब्रह्मणे नमः। (१०) ओं अवाच्यै दिशे (नीचे)-अनन्ताय नमः॥ फिर बैठकर प्रणाम करे-ॐ अग्नये नमः। ओं पृथिव्यै नमः। ॐ ओषधिभ्यो नमः। ॐ वाचे नमः। ओं वाचस्पतये नमः। ओं महद्भ्यो नमः॥ ओं विष्णवे नमः। ॐ अद्भ्यो नमः। ओं अपां पतये नमः। ओं वरुणाय नमः॥

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

इसके उपरान्त हाथ में जल लेकर एक बार मुख धोता हुआ मन्त्र पढ़े-ॐ संवर्चसापयसा मन्तनूभिरगन्महि मनसा स शिवेन । त्वष्टासुदत्रो विदधातुरायोऽनुमार्ष्टु तन्वो यद्द्विलिष्टम् ॥ तब विसर्जन करे-ओं देवागातुविदोगातु वित्त्वा गातुमित । मनसस्पत इमं देव यज्ञ ँ स्वाहा वातेधाः ॥ अन्त में समर्पण करे ओं अनेन यथाशक्त्यनुष्ठि तेन देवर्षिमनुष्यपितृतर्पणकर्मणा भगवान्ममसमस्तपि स्वरूपी जनार्दनवासुदेवः प्रयितां नमम । ओं तत्सद्ब्र ह्मार्पणमस्तु।श्री गयागदाधरस्तृप्यतु ॥ और-ॐ यस्य स्मृ त्याच० ॥ ॐ प्रमादात्कुर्वतां० ॥ ओं विष्णवे नमः। यह पढ़कर न्यूनातिरिक्त की पूर्त्ति करे । इति यजुर्वेदीतर्पण।

सामवेदी तर्पण । इसमें हम विशेष बातें न लिखेंगे। केवल देव ऋषि, पितृतर्पण के मन्त्र लिख देंगे । और १, २, ३ अंजलियों की पहचान के लिये उन उन मंत्रों के आगे १, २, ३ अंक लिखदेंगे इतने से ही लोग उतनी बार मंत्र पढ़कर उतनी अंजलियां दे लेंगे सव्य,अपसव्यादि की व्यवस्था यजुर्वेदी तर्पण की भूमिका में देख लेनी होगी तथा अन्यान्य बातें यजुर्वेदी तर्पण से ही सीखनी होंगी कि किसे कितनी अंजलि कैसे दी जाय । हां, इतना जान लेना चाहिये कि सामवेदी पद्धतियों में देवतर्पण के बाद पितृतर्पण लिखकर फिर सनकादि ऋषियों का तर्पण लिखा है । हम भी वैसाही लिख देते हैं अतः चौंकने की कोई बात नहीं है । उन्हों ने देव एवं ऋषियों के तर्पण में श्वेत तिल और पितरों को काला तिल लिखा है। पूर्वमुख हो देवतर्पण के लिये कुशतिलादि ले पहले हाथ जोड़ या अंजलि बांधकर पढ़े-ओं नमोब्रह्मणेब्राह्मणेभ्यो नम आचार्येभ्योनमः ऋषिभ्यो नमो देवेभ्यो नमो वेदेभ्यो नमो वायवे च मृत्यवे च विष्णवे च नमो वैश्रवणाय चोपजयायच ॥ तब तर्पण करे-ओं अग्निस्तृप्यतु १ ओं वषट्कारस्तृप्यतु १ ॐ महाव्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुतयस्तृप्यन्तु ? ॐ गायत्री तृप्यतु ? ॐ ब्रह्मा० ? ओं विष्णुस्तृ० ? ओं वेदास्तृप्यन्तु० ? ॐ देवास्तृप्यन्तु ? ओं छन्दांसि० ? ओं यज्ञास्तृ० ? ओं अध्ययनं तृप्यतु ? ओं द्यावाभूमी तृप्येताम् ? ओं अन्तरिक्षं तृप्यतु ? ओं अहोरात्राणितृप्यन्तु ? ओं मासास्तृप्यन्तु ? ओं ऋतवस्तृ० ? ओं संवत्सरास्तृ० ? ओं वरुणस्तृप्यतु ? ॐ समुद्रास्तृप्यन्तु ? ओं नद्यस्तृ० ? ओं गिरयस्तृप्य० ? ओं क्षेत्राणि० ? ॐ वनानि० ? ओं ओषधयस्तृ० ? ओं वनस्पतयस्तृ० ओं पशवस्तृ० ? ॐ नागास्तृ० ? ओं उरगास्तृ० ? ओं सुपर्णास्तृ० ? ओं वयांसि० ? ओं गावस्तृ० ? ओं वसवस्तृ० ? ओं रुद्रास्तृ० ? ओं आदित्यास्तृ० ? ओं मरुतस्तृ० ? ओं सिद्धास्तृ० ? ओं साध्यास्तृ० ? ओं गन्धर्वास्तृ० ? ओं पिशाचास्तृ० ? ओं यक्षास्तृ० ? ओं रक्षांसि० ? ओं भूतानि० ? ओं नक्षत्राणि० ? ओं अश्विनौ तृप्येताम् ? ओं अप्सरसस्तृप्यन्तु ? ओं चतुर्विधभूतग्रामस्तृप्यतु ? ओं मरीचिस्तृप्यतु ? ओं अत्रिस्तृ० ? ओं अंगिरास्तृ० ? ॐ पुलस्तिस्तृ० ? ओं पुलहस्तृ० ? ओं क्रतुस्तृ० ? ओं प्रचेतास्तृ० ? ओं वसिष्ठस्तृ० ? ओं भृगुस्तृ० ? ओं नारदस्तृप्यतु ? ॥ तब पढ़ दे-ओं एवमादयः स्वस्ति कुर्वन्तु तर्पिताः स्वस्ति कुर्वन्तुतर्पिताः ॥ फिर दक्षिण मुख अपसव्य होकर पितरों को काले तिलों से तीन तीन अञ्जलियां दे-ओं राणायनिस्तृप्यतु ३ ओं सात्यमुग्रिस्तृ० ३ ओं व्यासस्तृ० ३ ओं भागुरिस्तृ० ३ ॐ और्गुडिस्तृ० ३ ओं गौल्गुलविस्तृ० ३ ओं भानुमानौपमन्यवस्तृ० ३ ओं कराटिस्तृ० ३ ओं मशकोगार्ग्यस्तृ० ३ ओं वार्षगण्यस्तृ० ३ ओं कौथुमि-

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्तृ० ३ ओं शालिहोत्रिस्तृ० ३ ओं जैमिनिस्तृ० ३।
इसके बाद पढ़े-ओं त्रयोदशैतेसामगाचार्याः स्वस्ति कुर्वन्तु
तर्पिताः स्वस्ति कुर्वन्तु तर्पिताः॥ उपरांत-ओं शाटिस्तृप्यतु ३
ओं भाल्लविस्तृ० ३ ओं काल्वविस्तृ० ३ ओं तांड्यस्तृ० ३ ओं
वृषाणस्तृ० ३ ओं शमबाहुस्तृ० ३ ओं रुरुकिस्तृ० ३ ओं
अगस्त्यस्तृ० ३ ओं बष्कशिरास्तृ० ३ ओं हूहूस्तृ० ३॥ तब पढ़े-
ओं दशैतेप्रवचनकर्त्तारः स्वस्तिकुर्वन्तु तर्पिताः स्वस्ति०॥ फिर-
ओं कव्यवाडनलस्तृप्यतु ३ ओं सोमस्तृ० ३ ओं यमस्तृ० ३ ओं
अर्यमा० ३ ॐ अग्निष्वात्तास्तृप्यंतु ३ ओं सोमपीथास्तृप्यंतु
ओं बर्हिषदस्तृप्यन्तु ३ ओं यमस्तृप्यतु ३ ओं धर्मराजस्तृप्य
३ ओं मृत्युस्तृप्यतु ३ ओं अन्तकस्तृ० ३ ओं वैवस्वतस्तृ
३ ओं कालस्तृ० ३ ओं सर्वभूतक्षयस्तृ० ३ ओं औदुम्बरस्तृ०
ओं दध्नस्तृ० ३ ओं नीलस्तृ० ३ ओं परमेष्ठीतृ० ३ ओं वृको
दरस्तृ० ३ ओं चित्रस्तृ० ३ ओं चित्रगुप्तस्तृ० ३। उचित तो
कि अन्त के इन चौदह यमों के वाक्यों में 'यमस्तृप्यतु' आदि की जगह
'यमायनमः' आदि कहा जाय। फिर भी हमने उनकी पद्धति के
कर ऐसा लिख दिया है। करने वाले 'यमाय नमः' आदि कहकर
अच्छी तरह कर सकते हैं। फिर पिता आदि का तर्पण करे। मगर जिन
पिता जीवित हों वह तो यहीं तक बस कर दे-ओं अमुकगोत्रोऽस्म
त्पिताअमुकशर्मा तृप्यतु ३ ओं अमुकगोत्रोऽस्मत्पितामहः
ओं अमुकगोत्रोऽस्मत्प्रपितामहः० ३ ओं अमुकगोत्राऽस्म
न्माता अमुकीदेवीदातृप्यतु ३ ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्पि
तामही० ३ ॐ अमुकगोत्रास्मत्प्रपितामही० ३ ॥ ॐ
अमुकगोत्राऽस्मत्सापत्नमाता० २ ॐ अमुकगोत्राऽस्म
न्मातामहः अमुकशर्म्मा तृप्यतु ३ ॐ अमुकगोत्राऽस्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

त्प्रमातामहः० ३ ओं अमुकगोत्रोस्मद्वृद्धप्रमातामहस्तृ० ३ ॐ अमुकगोत्राऽस्मन्मातामही अमुकीदेवीदातृप्यतु १ ॐ अमुकगोत्रास्मत्प्रमातामही० १ ॐ अमुकगोत्रास्मद्वृद्धप्रमातामही० १ ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्पत्नी० १ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्सुतः अमुकशर्म्मा० १ ॐ अमुकगोत्रास्मत्कन्या अमुकीदेवीदा० १ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्पितृव्यः अमुकशर्म्मा० ३ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्मातुलः० ३ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मद्भ्राता० ३ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मत्सापत्नभ्राता० ३ ॐ अमुकगोत्राऽस्मत्पितृभगिनी अमुकीदेवीदा० १ ओं अमुकगोत्राऽस्मद्भ्रातृभगिनी० १ ओं अमुकगोत्रास्मद्भगिनी० १ ओं अमुकगोत्रास्मत्सापत्नभगिनी० १ ओं अमुकगोत्रोऽस्मच्छ्वशुरः अमुकशर्म्मा० ३ ओं अमुकगोत्रोऽस्मद्गुरुः अमुक० ३ ओं अमुकगोत्राऽस्मद्गुरुपत्नी अमुकीदेवीदा० २ ओं अमुकगोत्रोऽस्मच्छिष्यः अमुकशर्म्मा० ३ ओं अमुकगोत्रोऽस्मन्मित्रम् ० ३ ॐ अमुकगोत्रोऽस्मदाप्तः० ३ ॥ इसी प्रकार दौहित्रादि (पृ०८७६) का भी करे । इसके बाद उत्तरमुख हो ऋषितर्पण दो अंजलियों से करे-ॐ सनकस्तृप्यतु २ ॐ सनन्दनस्तृ० २ ॐ सनातनस्तृ० २ ओं कपिलस्तृ० २ ओं आसुरिस्तृ० २ ओं वोढुस्तृ० २ ओं पञ्चशिखस्तृ० २ ॥ उसके बाद काम्यतर्पण करे (८७७) । किसी किसी पद्धति में यह नहीं भी लिखा है । जैसी इच्छा हो करे । फिर जल से बाहर स्नान के वस्त्र का, या अभाव में दूसरे वस्त्र को भिगोकर उसका, चतुर्थांश वामभाग में यह पढ़कर निचोड़ दे । निचोड़ने के समय अपसव्य और दक्षिणमुख होजाय—ओं येचास्माकंकुलेजाता अपुत्रागोत्रिणोमृताः । तेगृह्णंतु मयादत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकम् ॥

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

फिर सव्य होकर आचमन पूर्वक गायत्री का यथाशक्ति जप करके उसकाविसर्जन (पृ० ८६२) करे और आगे लिखे रथन्तर आदि सामों को पढ़कर-ॐ चित्रं देवानां०, उदुत्यं० (पृ० ८६०) मंत्रों को जपे और अन्त में अर्पण करके विष्णुस्मरण करे, जैसा कि यजुर्वेदी तर्पण में है (पृ० ८८०) । इति सामवेदी तर्पण ।

५-नित्यश्राद्ध ।

सामवेदी और यजुर्वेदी दोनोंके लिये नित्यश्राद्ध की एकही पद्धति लिखते हैं । जब और भी श्राद्ध पद्धतियां एकही साथ लिखी गई हैं तो फिर इसका कहनाहीं क्या है ? इसमें तो पिंडदान होता ही नहीं है । केवल कच्चा या पक्का अन्न परोस देते हैं । अथवा फलमूलादि परोसते हैं । अभाव में जल सेही अन्नकी जगह सत्कार कर देते हैं । इसमें न तो पिंडही होता है और न विश्वेदेवही होते हैं । आवाहन विसर्जन, दक्षिणा और अग्नौकरण आहुति भी नहीं होती और न पहले दिन ब्रह्मचर्यादिका नियमहीं है । यह श्राद्ध षड्दैवत होता है । पितादि सपत्नीक तीन और मातामहादि सपत्नीक तीन, इन्हीं छ का श्राद्ध करते हैं ।

आसन पर पूर्वमुख बैठकर सव्य होके पवित्रधारण, आचमन और प्राणायाम करके हाथ में जल लेकर-ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा । यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं सबाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥ ॐ पुण्डरीकाक्षः पुनातु-यह पढ़कर कुश से शरीर और श्राद्ध के पदार्थोंपर उसे छिड़के और-ॐ भूर्भुवः नमः । ॐ गयायै नमः । ओं गदाधराय नमः-कहकर प्रणाम करे । फिर हाथ में तीन कुश तिल जलादि लेकर संकल्प करे ओं अद्य० अमुकगोत्राणामस्मत्पितृपितामहप्रपितामहानाममुकामुकशर्मणां सपत्नीकानाम्, अमुकगोत्राणामस्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहानाममुकामुकशर्मणां सपत्नीकानां तृप्तिकामो नित्यश्राद्धं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करिष्ये ॥ फिर तीन बार गायत्री (८६१) पढ़कर-ॐ देवताभ्यः पितृभ्यश्च महायोगिभ्य एवच । नमः स्वाहायै स्वधायै नित्यमेव नमो नमः-मंत्र भी तीन बार पढ़े । फिर अपसव्य होकर आसन के तीन मोटक और तिल जलादि हाथमें लेकर पढ़े-ॐ अद्य० अमुकगोत्रास्मत्पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माणः सपत्नीका इदमासनं विभज्य युष्मभ्यं स्वधा॥ इसके बाद जहां बैठा हो उससे दक्षिण ओर दक्षिणाग्र तीनों मोटक एक ही जगह रखदे । यह है पिता, पितामह और प्रपितामह के वास्ते। इसी तरह उनसे भी पूर्व मातामहादिका रक्खे। उनकेभी लिये हाथमें तीन मोटक तिलादि लेकर पढ़े-ॐ अद्य० अमुकगोत्रास्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहा अमुकामुकशर्माणः सपत्नीका इदमासनं विभज्य युष्मभ्यं स्वधा ॥ और पितादिकी तरह तीन कुश आसन के लिये रखदे । फिर हाथ में तिल लेकर उन आसनों के चारों ओर छींटता हुआ पढ़े-ॐ अपहता असुरारक्षांसिवेदिषदः ॥ इसके बाद पिताआदि तीनके लिये चन्दन, पुष्प, तुलसीदल, धूप, दीप और सूत आदि रखकर हाथमें कुश जलादि लेके संकल्प करे-ॐ अद्य० अमुकगोत्रास्मत्पितृपितामहप्रपितामहा अमुकामुकशर्म्माणः सपत्नीका एतानि गन्धपुष्पधूपदीपवासांसि विभज्य युष्मभ्यं स्वधा ॥ और कुशादि रखकर पितादि तीन के आसन पर चन्दनादि क्रमसे चढ़ादे । इसी तरह मातामहादि के आसन के पास भी उक्तचन्दनादि रखकर संकल्प करे-ॐ अद्य०अमुकगोत्रास्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाःसपत्नीकाअमुकामुकशर्म्माण एतानि गन्धपुष्पधूपदीपवासांसिविभज्य युष्मभ्यं स्वधा ॥ और उनके आसनपर भी उसीतरह चढ़ावे। इसके बाद कहे ॐअर्चनंसंपूर्णमस्तु ॥ ॐ अस्तु सम्पूर्णम् ॥ तब पितादि तीन के आसन

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

के पास एक पात्र में और दूसरे में मातामहादि के आसन के निकट पकाया हुआ अन्न (भोजन) या फलादि अथवा अभाव में भोजनका दूना कच्चा अन्न रख दे और उसी के पास एक एक पात्र में जल भी रखकर–ओं अपहता असुरारक्षांसिवेदिषदः–से प्रथम पात्र के चारों ओर तिल छींट कर उस पात्र को दहिने हाथ से छूकर दहिने परही बायां हाथ रक्खे हुए पढ़े–ॐ पृथिवीते पात्रं द्यौर्पिधानं ब्राह्मणस्य मुखे अमृते अमृतं जुहोमि स्वधा। फिर दहिने हाथ के अंगूठे को–ॐ इदं विष्णुर्विचक्रमेत्रेधा निदधे पदम् ॥ समूढमस्यपांसुरे–पढ़कर अन्नमें डालदे मगर उसका नख अन्न के भीतर न जाने पावे । इसके बाद बायें हाथसे पात्र पकड़ के दहिने हाथ में कुश तिल जल लेकर पढ़े–ओं अद्यः अमुकगोत्रास्मत्पितृपितामहप्रपितामहाः अमुकामुकशर्म्माणः सपत्नीका इदमन्नं कव्यं सोपस्करममृतवद्विभज्य युष्मभ्यं स्वधा ॥ और कुश आदि भूमि पर डाल दे इसी प्रकार मातामहादि के पात्र के भी चारों ओर–ओं अपहताः मंत्र से ही तिल छींटकर उसी तरह पात्र पर हाथ रक्खे हुए–ॐ पृथिवीते० इत्यादि पढ़े और उसी तरह अंगूठे को अन्न में डालकर 'ओं इदं विष्णु०' इत्यादि पढ़े । फिर बायें हाथ से वैसेही उस पात्र को पकड़ दहिने हाथ में कुश तिल जल लेके संकल्प करे–ॐ अद्यः अमुकगोत्रास्मन्मातामहप्रमातामहवृद्धप्रमातामहाअमुकामुकशर्म्माणःसपत्नीका इदमन्नंकव्यं सोपस्करममृतवद्विभज्य युष्मभ्यं स्वधा॥ इसके बाद कुशादि भूमि पर रखदे उसके बाद तीनबार गायत्री और तीन बार ही–ॐ मधुवाता० (पृ०) इत्यादि पढ़कर उसके अन्तमें–ॐ मधुमधुमधु–कहे । फिर पढ़े–ॐ अन्नहीनं क्रियाहीनं विधिहीनं च यद्भवेत् । तत्सर्वमाद्यद्रमस्तु॥ इसके बाद अर्पण करे–ॐ अनेन नित्यश्राद्धकर्मणा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मम पित्रादिस्वरूपो जनार्दनः प्रीयतां नमम ॥ ॐ तत् सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ॥ अन्त में—ॐ प्रमादात्कुर्वतां कर्म प्रच्यवेताध्वरेषु यत् । स्मरणादेव तद्विष्णोः सम्पूर्णं स्यादिति श्रुतिः ॥ १ ॥ यस्यस्मृत्या च नामोक्त्या इत्यादि (१४२) पढ़कर—ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः—कहे और नित्यश्राद्ध को पूरा करे। इसके बाद वह अन्न या तो किसी सत्पात्र को दे, या गौ, बकरी आदि को खिला दे। यहाँ 'अमुक' शब्द की जगह गोत्र और पुरुषों के नाम क्रमशः देने होंगे। यहां और तर्पण में भी यह ध्यान रहे कि कन्याका गोत्र विवाह से प्रथम पिता का और विवाह के बाद पति का हो जाता है। ऐसाही और भी जानना। इति नित्यश्राद्ध।

६—बलिवैश्वदेव।

अन्यान्य श्राद्धों के पश्चात् भी वैश्वदेवकी आवश्यकता होती है। कारण, इसकी आज्ञा है कि श्राद्ध के अन्त में किया जाय और नित्य के पञ्चयज्ञों में तो वह हई। इसीसे उसकी पद्धति आवश्यक है। पहले कहीचुके हैं कि यह बलि वैश्वदेव कर्म एक प्रकार से पञ्चयज्ञों में ब्रह्मयज्ञ को छोड़ शेष चार का अपनेहीं में समावेश कर लेता है। इसका ज्योरा प्रयोग के समयही बताते जायंगे। यह याद रखना चाहिये कि भोजन के लिये जो अन्न तय्यार होता है उसी में से यह किया जाता है और सायं, प्रातः दोनों समय इसके करने की विधि है। वैश्वदेव के बादही भोजन करते हैं और यदि कोई अतिथि आगया हो तो उसका सत्कार भी वैश्वदेव के बादही करते हैं। परन्तु संन्यासी (दण्डी) के आने पर तो वैश्वदेव की प्रतीक्षा न कर पहलेही उसे भिक्षा देते हैं। इसी प्रकार बालक और रोगी के लिये भी पहलेही देते हैं। परन्तु, इतना करते हैं कि रसोई में से वैश्वदेव के लिये अन्न निकालकर अलग रख लेते हैं। फिर उन्हें देते हैं। यदि अग्नि कुण्ड में स्थापित हो और नित्य अग्निहोत्र करते हों तो उसी में, नहीं तो स्थंडिल (वेदी) बनाकर पञ्चभूसंस्कारपूर्वक उसी पर, अग्नि की स्थापना सामवेदी और यजुर्वेदी दोनों करते हैं। इसके बाद उसी में आहुतियां बेर के बराबर आकार की हाथ सेही

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

दीजाती हैं। आहुति के अन्न में नमक न मिला होना चाहिये और घी लगा लेना चाहिये। आहुतियों के बाद मकान के द्वार, दिशाओं, पानी के कुंडे (मणिक) आदि के पास बलि दी जाती है। यदि ऐसा नहीं कर सकते या करने में दिक्कत एवं विलम्ब की संभावना हो तो भूमिपरही अग्नि से पश्चिम ओर चौकोना मण्डल पानी से भस्म से बनाकर उसी में पूर्व, पश्चिम आदि दिशाओं की कल्पना करले और पास में जो जलपात्र हो उसी को कुंडा या मणिक के स्थान में मान ले। पर, यदि किसी कारण से अग्नि की स्थापना न कर सके तभी किसी पात्र में जल रखकर उसी मेंही और उसके अभाव में भूमिपरही अग्निवाली आहुति दे। विश्वेदेव की बलिके कारण ही इसे वैश्वदेव कहते हैं।

यजुर्वेदी लोग वैश्वदेव प्रयोग से पहले संकल्प करते हैं। परन्तु संकल्प से पूर्व आसन पर पूर्वमुख बैठ पवित्र धारण, आचमन प्राणायाम करके पश्चात् संकल्प करे-ओं अद्य०ममगृहे पंचसूनाजनितसकलदोषपरिहारपूर्वकश्रीपरमेश्वरप्रीत्यर्थमहं वैश्वदेवं करिष्ये ॥ इसके बाद स्थण्डिल पर पञ्चभूसंस्कारपूर्वक (१८५) अग्नि की स्थापना करे और उसका ध्यान करे-ओं चत्वारिशृंगास्त्रयो अस्य पादा द्वे शीर्षे सप्तहस्तासोअस्य त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति महो देवो मर्त्याँ आविवेश। फिर अग्नि को नमस्कार करे-ओं मुखं यः सर्वदेवानां हव्यभुक्कव्यभुक्तथा। पितृणांचनमस्तस्मै विष्णवेपावकात्मने ॥ ॐ पावकनाम्ने वैश्वानराय नमः ॥ इसके बाद पूजा करे—ॐ अग्नयेनमः एषगन्धः, अक्षताः, पुष्पम्। फिर प्रार्थना करे—ॐ अग्नयेनमोनमः। ॐ अग्ने शाण्डिल्यगोत्र मेषवाहन प्राङ्मुख मम संमुखो भव ॥ इसके बाद दहिने हाथ में जल लेकर अग्नि के चारों ओर गिरावे और उसे दीप्त करे। यदि जल हो तो कुछ भी करना हीं नहीं है। इसी तरह भूमि पर भी कुछ नहीं करना है। इसके बाद अन्न में घी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मिलाकर बैर के बराबर पांच आहुतियां उस अग्नि, या जल, अथवा भूमिपर ही (जैसा अवसर हो) दे—(१) ॐ ब्रह्मणे स्वाहा इदं ब्रह्मणे नमम ॥ (२) ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये नमम ॥ (३) ॐ गृह्याभ्यः स्वाहा इदं गृह्याभ्यो० ॥ (४) ओं कश्यपाय स्वाहा इदं कश्यपाय० ॥ (५) ओं अनुमतये स्वाहा इदमनुमतये नमम ॥ यही पांच आहुतियां देवयज्ञ कहाती हैं। इनके बाद शेष अन्न से जलपात्र के पास, जो अग्नि के ही निकट होगा, तीन बलि उत्तर उत्तर या पूर्व पूर्व दे। स्मरण रहे कि जिस भूमिपर यह कर्म करेंगे उसे पहले से ही लीप पोतकर स्वच्छ करदेंगे। तीन बलि ये हैं—(६) ॐ पर्जन्यायनमः इदंपर्जन्याय नमम। (७) ॐ अद्भ्यो नमः इदमद्भ्यो०। (८) ओं पृथिव्यै नमः इदंपृथिव्यै० ॥ इसके बाद जल या भस्म के एक बित्तावाले चौकोन मण्डल में बलि देते हैं। मण्डल में पूर्व ओर द्वार का चिन्ह बनावे और उसके दक्षिण तथा उत्तर क्रम से दो बलिदे—(९) ओं धात्रेनमः इदं धात्रे०। (१०) ओं विधात्रे नमः इदं विधात्रे० ॥ फिर पूर्व से शुरू कर चारों दिशाओं में एक एक बलि (११) ॐ वायवेनमः इदंवायवे नमम' से ही दे। चारों ओर यही मंत्र बोले। फिर पूर्वसे शुरू कर चार दिशाओं में अलग अलग एक बलि दे—(१२) ओं प्राच्यै नमः इदं प्राच्यै०। (१३) ओं दक्षिणायै नमः इदं दक्षिणायै०। (१४) ओं पश्चिमायै नमः इदं पश्चिमायै०। (१५) ओं उदीच्यै नमः इदमुदीच्यै० ॥ तब मध्य में तीन बलि पूर्व पूर्व दे—(१६) ओं ब्रह्मणे नमः इदं ब्रह्मणे०। (१७) ओं अन्तरिक्षाय नमः इदमन्तरिक्षाय०। (१८) ओं सूर्याय नमः इदं सूर्याय० ॥ ब्रह्मादि की इन तीन बलियों के उत्तर दो पूर्व पूर्व दे—

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

(१९) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इद विश्वेभ्यो देवेभ्यो० । (२०) ओं विश्वेभ्यो भूतेभ्यो नमः इदं विश्वेभ्यो भूतेभ्यो० ॥ इनके उत्तर इसी तरह पूर्व पूर्व दो बलि दे-(२१) ओं उषसे नमः इदमुषसे० । (२२) ओं भूतानां पतये नमः इदं भूतानां पतये० ॥ होम के बाद यहां तक २० बलियों को भूतयज्ञ कहते हैं । फिर ब्रह्मादि की तीन बलि से दक्षिण ओर एक बलि दक्षिणमुख, अपसव्य हो बायां घुटना टेककर पितृतीर्थ से दे-(२३) ओं पितृभ्यः स्वधा नमः इदं पितृभ्यो० । यही पितृयज्ञ कहाता है । फिर सव्य हो आचमन करके उत्तरमुख होकर, 'ॐ उषसे नमः' इत्यादि से जो २० बलियों में आखिरी दो गई हैं उनसे उत्तर, एक बलि दे-(२४) ओं हन्तते सनकादिमनुष्येभ्यो नमः इदं हन्तते सनकादिमनुष्येभ्यो० । यही मनुष्ययज्ञ है । इसके बाद जिस पात्र से अन्न लेकर बलि दे थे उसे धोकर ब्रह्मादि की बलि के वायव्य में (सनकादि की बलि के उत्तर) (२५) ओं यद्दमैतत्ते निर्णेजनं नमः इदं यद्दमयते० पढ़कर गिरादे । इस प्रकार देखते हैं कि इसी वैश्वदेव कर्म में चार यज्ञ आगये । यदि ब्रह्मयज्ञ न किया हो तो कम से कम तीन बार गायत्री का जप बलि के अन्त में करके तब निर्णेजन जल धोकर गिरावे । वही जप ब्रह्मयज्ञ का काम दे सकेगा । और वैश्वदेवमें ही इस तरह पांचों यज्ञों का समावेश होजायगा । यदि पृथक् ब्रह्मयज्ञ और श्राद्ध करे तब तो कहना हीं क्या है? इसके बाद उस पात्र में दूसरा अन्न लेकर मण्डल से बाहर पूर्व उत्तर पवित्र भूमि पर प्रत्येक श्लोक से एक एक बलि इस क्रम देवादि को दे—ओं देवा मनुष्याः पशवो वयांसि सिद्धा सयक्षोरगदैत्यसंघाः । प्रेताःपिशाचास्तरवःसमेता येचान्नमिच्छन्ति मयाप्रदत्तम् ॥ इदमन्नं देवादिभ्यो नमः ॥ १ ॥ ओं पिपीलिकाः कीटपतंकाद्याबुभुक्षिताः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर्मनिबन्धबद्धाः । तृप्त्यर्थमन्नंहि मयाप्रदत्तं तेषामिदं ते मुदिता भवन्तु ॥ इदं पिपीलिकादिभ्यो० ॥ २ ॥ ॐ येषां न माता न पिता न बन्धुर्न चान्यसिद्धिर्न यतोन्यदस्ति। तत्तृप्त्येऽन्नं भुविदत्तमेतत्तेषांतुतृप्तिर्मुदिता भवन्तु ॥ इदममातृकादिभ्यो० ॥ ३ ॥ ओं भूतानि सर्वाणि तथान्नमेतदहं च विष्णुर्नयतोऽन्यदस्ति । तस्मादहं भूतनिकायभूतमन्नं प्रयच्छामि भवायतेषाम् ॥ इदं भूतेभ्यो० ॥ ४ ॥ ओं चतुर्दशो भूतगणो यएष तत्रस्थितायेऽखिलभूतसंघाः । तृप्त्यर्थमन्नंहि मया विसृष्टं तेषामिदंते मुदिता भवन्तु ॥ इदं चतुर्दशभूतगणाय० ॥५॥ ओं ऐन्द्रवारुणवायव्याः सौम्या वै नैर्ऋतास्तथा । वायसाः प्रतिगृह्णन्तु भूमावन्नं मयार्पितम् ॥ इदं वायसेभ्यो० ॥ ६ ॥ ओं सौरभेयाः सर्वहिताः पवित्राः पुण्यराशयः । प्रतिगृह्णन्तु मे ग्रासंगावस्त्रैलोक्यमातरः ॥ इदं गोभ्यो० ॥ ७ ॥ ओं श्वानौ द्वौ श्यामशबलौ वैवस्वतकुलोद्भवौ । ताभ्यामन्नं प्रदास्यामि स्यातामेतावहिंसकौ ॥ इदं श्वभ्यान्नमम ॥८॥

इस प्रकार वैश्वदेव पूरा करके पीछे वाली गौ की बलि गौ को, कुत्तों की कुत्तों को और कौवों की उन्हें तथा चींटी आदि की उन सबों को डाल दे। छठें, सातवें और आठवें श्लोकों की बलि क्रम से कौवों, गौ, और कुत्तों की है। वैश्वदेव के बाद उस भूमिको लीप पोतकर स्वच्छ कर दे। परन्तु बलि को उठाकर डालने से पहले एक काम शेष रह जाता है। उसे भी करले। वैश्व देव होम की अग्नि से भस्म लेकर—ओं त्र्यायुषं जमदग्नेः० (३२३) इत्यादि से उसे ललाट आदि में लगाकर अग्नि का विसर्जन करे-ओं गच्छ गच्छ सुरश्रेष्ठ स्वस्थानेपरमेश्वर। यत्रब्रह्मादयोदेवास्तत्रगच्छ हुताशन ॥१॥ ॐ यज्ञ यज्ञंगच्छ० (८४२) ॥२॥ कुश पवित्र रख

CC-0. Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

कर अर्पण करे-ॐ अनेन वैश्वदेवाख्येन कर्मणा श्रीयज्ञना-
रायणस्वरूपी वासुदेवः प्रीयतान्नमम ॥ ॐ तत्सद्ब्रह्मा-
र्पणमस्तु ॥ ॐ यस्यस्मृत्या० ॥ ॐ प्रमादात्कुर्वतां० (१८५)॥
ॐ विष्णवे नमः ३ ॥ यदि अग्नि न हो तो भस्म लगाने और
विसर्जन की बात ही नहीं है। इसके बाद यदि कोई अतिथि होतो उसे
खिलाकर स्वयं परिवार के साथ भोजन करे। इति यजुर्वेदी वैश्वदेव।

सामवेदी वैश्वदेव। कर्त्ता आसन पर पूर्व मुख बैठकर पवि-
त्र धारण, आचमन, प्राणायाम करके संकल्प करे-ॐ अद्य० पञ्च-
सूनाघानिवर्हणद्वारा श्री परमेश्वरप्रीत्यर्थं वैश्वदेवं करिष्ये।
फिर पञ्चभूसंस्कारपूर्वक स्थण्डिल पर अग्नि की स्थापना करे (१८५)
और २०१ पृष्ठोक्त रीतिसे तीन बार अंजलिसेचन और पर्युक्षण करके
चुपचाप घी लगाकर उसमें समिध डाल दे। यदि जल या भूमि
पर ही देना हो तो कोई बात ही नहीं। फिर एक पात्र में भोज-
वाले अन्न में से कुछ अन्न लेकर उसमें घी मिलावे। नमक का संस्पर्श
न हो। अन्न पर जल छिड़ककर आहुतियां दे-ओं भूः स्वाहा
इदमग्नयेनमम ॥ १ ॥ ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे
॥ २ ॥ ॐ स्वः स्वाहा इदं सूर्यायनमम ॥३॥ ओं अग्नये स्वा-
हा इदमग्नये० ॥ ४ ॥ ओं धन्वन्तरये स्वाहा इदं धन्व-
न्तरये० ॥ ५ ॥ ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा इदं विश्वे-
भ्यो देवेभ्यो० ॥ ६ ॥ ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापत-
येनमम ॥ ७ ॥ ओं अग्नयेस्विष्टकृते स्वाहा इदमग्नये-
स्विष्टकृते नमम ॥ ८ ॥ ओं देवकृतस्यैनसोऽवयजनमसि
इदमग्नये० ॥९॥ ९ वें आदि मंत्रों के अन्त में 'स्वाहा' कहने का
निषेध सामवेदी पद्धतियों में है। मगर अन्य पद्धतियों में लिखा है।
ओं पितृकृतस्यैनसोऽवयजनमसि इदमग्नये० ॥ १० ॥
ओं मनुष्यकृतस्यैनसोऽवयजनमसि इदमग्नये० ॥ ११ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jak

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ओं अस्मत्कृतस्यैनसोऽवयजनमसि इदमग्नये० ॥ १२ ॥ ओं यद्दिवाचनक्तंचैनश्चकृम तस्यावयजनमसि इदमग्नये० ॥ १३ ॥ ओं यत्स्वपन्तश्च जाग्रतश्चैनश्चकृम तस्यावयजनमसि इदमग्नये० ॥ १४ ॥ यद्विद्वाँश्चाविद्वाँश्चैनश्चकृम तस्यावयजनमसि इदमग्नये० ॥ १५ ॥ ॐ एनस एनसोऽवयजनमसि इदमग्नये० ॥ १६ ॥ इसके बाद अग्नि में चुपचाप एक समिध डालकर ३५० पृष्ठोक्त रीति से अनुपर्युक्षण और उदकाञ्जलिसेचन कर चमस या जलपात्र का जल गिराकर उसे धो डाले और दूसरा जल भर कर उसपर कुश रख होम के बाद बचे अन्न से बलि दे । अग्नि से पश्चिम थोड़ी सी जगह पोतकर उस भूमि पर पश्चिम से आरंभ कर पूर्वतक जल की पतली धारा हाथ से गिरावे और उस अन्न में से एकही बार चार बलियों के लिये हाथ में लेकर जहां धारा गिराई थी उसी भूमिपर पश्चिम से आरंभ कर पूर्व पूर्व चारों बलि यों दे-(१७) ओं पृथिव्यै नमः इदं पृथिव्यै नमम (१८) ओं वायवे नमः इदं वायवे० (१९) ओं विश्वेभ्यो देवेभ्यो नमः इदं विश्वेभ्यो देवेभ्यो० (२०) ओं प्रजापतये नमः इदं प्रजापतये० ॥ फिर उनके ऊपर उसी तरह धारा गिरावे जिस तरह नीचे गिराई थी । इसीतरह आगे भी नीचे ऊपर धारा गिरानी होगी । तब उन चार बलियों के उत्तर पूर्ववत् जल गिराकर एक ही बार अन्न लेकर चार बलि यों दे-(२१) ओं अद्भ्यो नमः इदमद्भ्यो० (२२) ओं औषधिवनस्पतिभ्यो नमः इदमोषधिवनस्पतिभ्यो० (२३) ओं आकाशाय नमः इदमाकाशाय० (२४) ओं कामायनमः इदं कामाय०॥ इन पर जल गिराकर इनके उत्तर उसी तरह गिरावे और पूर्ववत् अन्न लेकर उसी तरह चार बलि पश्चिम से ही यों दे-(२५) ओं मन्यवे नमः इदं मन्यवे नमम (२६) ओं इन्द्रायनमः इदमिन्द्राय० (२७) ओं वासुकये नमः इदं

Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

वासुकये० (२८) ओं ब्रह्मणे नमः इदं ब्रह्मणे० ॥ इन पर जल गिराकर इनके उत्तर गिरावे और थोड़ा अन्न लेकर एकही बलि दे (२९) ओं रक्षोजनेभ्यो नमः इदं रक्षोजनेभ्यो० ॥ ऊपर से जल डालकर आचमन करे और सभी बलियों के दक्षिण पूर्ववत् पितृतीर्थ से जल गिराकर शेष अन्न में पानी डाल दे और अपसव्य, दक्षिण मुख हो बायां घुटना टेककर उस अन्न को लेके अन्त में पितृतीर्थ से एक बलि दे-(३०) ॐ पितृभ्यः स्वधा इदंपितृभ्यो नमम ॥ और उसके ऊपर भी पितृतीर्थ से जल डालकर सव्य होके हाथ धोवे और आचमन करके अग्नि की ओर हाथ जोड़कर करे- ओं आरोग्यमायुरैश्वर्यं धीर्धृतिः शान्तिः यशः । ओजोवर्चः पशून्वीर्यं ब्रह्म ब्राह्मण्यमेवच ॥ १ ॥ सौभाग्यं कर्मसिद्धिं च कुलज्यैष्ठ्यं सुकर्तृताम् । सर्वमेतत्सर्वसाक्षिन्द्रविणोदरिरीहिनः ॥ २ ॥ इसके बाद अग्नि का विसर्जन ' ओं गच्छ गच्छ० (८६१) से करके वामदेव्य साम का गान करे और बलि को उठाकर वह भूमि पोत डाले यद्यपि इसमें यजुर्वेदियों की पद्धति की सात श्लोकों वाली बलि नहीं लिखी हैं । फिर भी 'ॐपितृभ्यः स्वधा' वाली अन्तिम बलिके बाद वह बलि अवश्य दी जायं । हमने उन्हें पहले ही लिख दिया है । उसी रीति से यहां भी हो । वामदेव्य गान के बाद कर्म को ब्रह्मार्पण करके ओं यस्यस्मृत्या० ॥ ॐ प्रमादात्कुर्वतां० ओं विष्णुः ३-पढ़कर वैश्वदेव कर्म पूरा करे । इति सामवेदीवैश्वदेव ।

७—भोजनविधि ।

यजुर्वेदी वैश्वदेव के बाद अतिथि को भोजन कराके स्वयं भोजन करने जाय । भोजन पात्र आसन के आगे रखने से पहले अन्नादि क्रमसे चौकोना, तिकोना और गोल मण्डल जल, भस्म, [illegible] आदि से बनाकर उस पर भोजनपात्र रक्खे । और उसमें अन्न परोसने पर 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' मंत्र से प्रदक्षिण रीति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पात्र के चारों ओर जल गिरावे । इसे पंक्तिवारण कहते हैं । इसके विना एक पंक्ति में यदि पापी के साथ बैठकर भोजन करे तो उसके पापका भागी होना होता है । तब हाथ जोड़कर अन्न की स्तुति करे-ओंपितु-स्तुतोषम्महो धर्माणन्तविषाम् । यस्य त्रितोव्योजसा वृत्रं विपर्व मर्दयत् ॥ इसके बाद दिन में 'ओं सत्यंत्वर्तेन परिषिञ्चामि' से और रात को 'ओं ऋतंत्वा सत्येन परिषिञ्चामि' मंत्र से अन्नपर जल छिड़के । तब अन्न या पात्र को स्पर्श कर पढ़े- ओं तेजोऽसिशुक्रमस्यमृतमसि धामनामासि । प्रियं देवानामनाधृष्टं देवयजनमसि ॥ फिर पात्रसे ही घृत-मिश्रित अन्न लेकर उससे दक्षिण ओर पूर्व पूर्व या उत्तर उत्तर तीन बलि वैरके आकार की दे- (१) ओं भूपतये स्वाहा नमः (२) ओं भुवनपतये स्वाहा नमः (३) ओं भूतानां पतये स्वाहा नमः ॥ हाथ धोकर आचमन के लिये हाथ में जल लेकर पढ़े- ओं अन्नपतेऽन्नस्यनो देह्यनमीवस्य शुष्मिणः । प्रप्रदातारं तारिष ऊर्ज्जन्नोधेहि द्विपदे चतुष्पदे ॥ और 'ओं अमृतोपस्तरणमसि स्वाहा' पढ़कर आचमन करके हाथ धोडाले । फिर अन्न की वैर जैसी प्राणाहुतियां इन मंत्रों से करे । प्राणाहुति भी नमक रहित अन्न की ही की जाती है-(१) ओं प्राणाय स्वाहा (२) ओं अपानाय स्वाहा (३) ओं व्यानाय स्वाहा (४) ओं समानाय स्वाहा (५) ओं उदानाय स्वाहा ॥ प्राणाहुतियों के बाद बायें हाथ से दोनों आखों में जल लगावे । यही प्राणाचमन है । यहाँ पर आचमन करने की आवश्यकता नहीं है । तब शिखा खोलकर विष्णुस्मरण पूर्वक मौन होके भोजन करे । भोजन के बाद जूठे अन्न की एक बलि (चित्राहुति) पात्र से उत्तर वैर जैसी, पितृतीर्थ से, इस मंत्र से दे-ॐ मद्भक्तोच्छिष्टशेषंये भुञ्जन्ति पितरोऽधमाः । तेषामन्नं मयादत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ और हाथ में जल लेकर-ओं अमृतापिधानमसि

eGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

स्वाहा—मंत्र से आधा जल पीकर आधा उसी चित्राहुति (बलि) पर डाल दे। भोजन से पहले जो आचमन करते हैं वे पूर्वापोशान (शन) और पीछे वाले को उत्तरा पोशान (शन) कहते हैं। फिर बायें हाथ से शिखा बांधकर तथा बलि और चित्राहुति के अन्न को साथ उठाकर उसे कौवों को देडाले और अच्छी तरह हाथ मुंह धोकर सोलह कुल्ली करे। तब चुपचाप आचमन तथा प्राणायाम करके उसी हाथ से दोनों आंखों को छूकर पढ़े-ओं शर्यातिं च सुकन्यां च च्यवनं शक्रमश्विनौ । भोजनान्ते स्मरेन्नित्यं तस्य चक्षुर्नहीयते ॥ फिर पेट पर हाथ घुमाकर पढ़े-ओं अगस्त्यं वैनतेयं च शनिं च वडवानलम् । अन्नस्य परिणामार्थं स्मरेद्भीमं च पंचमम् ॥ और लघुशंका करके चार कुल्लियां तथा हाथ पांव धोकर तुलसी आदि खावे। भोजन के बाद कमसे कम सौ कदम टहलना चाहिये और दस पांच मिनटभी बायीं करवट से सोना चाहिये। भोजन के प्रारंभमें दोनों हाथ, दोनों पांव और मुंह धोवे।

सामवेदी हाथ, पांव, मुख धोकर आसन पर बैठ, पूर्ववत् मण्डल बनाकर, उसीपर अन्नपात्र रख, उसी में अन्न परोसकर पूर्ववत् पंक्ति वारण (८९४) करके गायत्री से उसपर जल छिड़के। फिर दिन में 'ओं सत्यंत्वर्तेन परिषिञ्चामि' और रात में 'ओं ऋतंत्वा सत्येन परिषिञ्चामि' पढ़कर अन्न पर पुनः जल डाले और 'ओं अमृतोपस्तरणमसि' से आचमन कर हाथ धोके पंच प्राणाहुतियां घी मिले और नमक रहित अन्न से इस प्रकार करे। अंगुष्ठ, तजनी, मध्यमा से बेर भर अन्न उठाके (१) ओं प्राणाय स्वाहा (२) अंगुष्ठ, मध्यमा, अनामिका से-ओं व्यानाय स्वाहा (३) अंगुष्ठ, अनामिका, कनिष्ठिका से-ओं अपानाय स्वाहा (४) पांचों से-ओं समानाय स्वाहा (५) तर्जनी छोड़कर शेष चार से-ओं उदानाय स्वाहा ॥ फिर नेत्र में जल लगाकर मौन होके भोजन करे। भोजन करचुकने पर हाथ में आचमन का जल लेकर-ओं अमृतापि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पिधानमसि–पढ़के आधा पीवे और आधा पितृतीर्थ से भूमिपर गिरा दे। फिर उठकर मिट्टी और जल से अच्छी तरह हाथ धोकर मुंह भी धोवे और १६ कुल्ली करके विधिवत् (८४९) आचमन करे और–ओं प्राणानां ग्रन्थिरसिरुद्रोमा विशान्तकः । तेनान्नेनाप्यायस्व–पढ़कर हृदय पर हाथ रक्खे। तथा लघुशंका करके हाथ, पांव धो डाले, चार कुल्ली करके वाम करवट विश्राम करे और परमात्मा को स्मरण करे। इति भोजन विधि।

८–आशौच में कर्म ।

यदि घर में जन्म या मरण का आशौच होजाय तब भी अग्निहोत्र एवं सन्ध्योपासन नहीं छोड़ सकते। हां, स्मार्त्त होम दूसरे ब्राह्मण से करवाते हैं। जैसा कि पुलस्त्य ऋषि के नाम से यह वचन मिलता है कि–सन्ध्यामिष्टिं चरुंहोमं यावज्जीवं समाचरेत्। नत्यजेत्सूतके वापि त्यजन्गच्छत्यधोद्विजः ॥१॥ सूतके मृतके चैव सन्ध्याकर्म न संत्यजेत् । मनसोच्चारयेन्मंत्रान् प्राणायाममृते द्विजः ॥ २॥ इससे स्पष्ट है कि अग्निहोत्र और सन्ध्या के सिवाय शेष तर्पण, वैश्वदेवादि छूट जाते हैं। उन्हें नहीं करते। सन्ध्या का भी जो यह निषेध कात्यायन स्मृति में है कि 'सूतके कर्मणां त्यागः सन्ध्यादीनां विधीयते', उसका अभिप्राय भी ऊपर केही वचन में स्पष्ट है। यानी बोल कर नहीं, मनसे ही अर्घ्यदान और गायत्रीजप कर ले। प्राणायाम भी न करे। कोई कोई कहते है कि प्राणायाम भी विना मंत्र केही कर सकते हैं। मंत्र से प्राणायाम, बोलकर अर्घ्य दान और गायत्री जप इन्हींकानिषेधहै। मार्जन भी करे और नभी करे, यह दोनों पक्ष है। स्नान भी विना मंत्र केही योंहीं करना चाहिये। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि सूर्यार्घ्य के बाद उपस्थान भी कर सकते हैं। बहुत लोग लिखते हैं कि विना कुश और जल केही सन्ध्या करे। अतः इसमें भारी विवाद होने पर भी इतना निश्चित है कि सन्ध्या का त्याग कभी नहीं होना चाहिये। शेष कर्म भलेही छूट जाते हैं। इति आशौचकालिककर्म।

iGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

९-कर्मशेष मंत्रादि ।

प्रायः शिव के अभिषेक में समस्त रुद्राष्टाध्यायी की आवश्यकता होती है । आजकल उसी का नाम रुद्री भी पड़ गया है। सिवाय इसके प्रायः प्रत्येक अध्यायों या उनके मन्त्रों की षोडशोपचार पूजा आदि में आवश्यकता है और श्राद्ध आदि में वे पढ़े जाते हैं । यद्यपि षोडशोपचार के लिये तो केवल पुरुषसूक्त ही काफी है । तथापि अन्य आवश्यकता होती ही है । अतएव संपूर्ण रुद्राष्टाध्यायी का लिखा जाना नितान्त आवश्यक है ।

(१) प्रथमाध्यायः-हरिः ॐ गणानांत्वागणपति ँ हवामहे प्रियाणांत्वा प्रियपति ँ हवामहे निधीनांत्वा निधिपति ँ हवामहे वसोमम । आहमजानि गर्भधमात्वमजासि गर्भधम् ॥ १ ॥ गायत्री त्रिष्टुब्बृहत्यनुष्टुप्पङ्क्त्या सह । बृहत्युष्णिहाककुप्सूचीभिः शम्यन्तु ॥२॥ द्विपदायाश्च चतुष्पदा याश्चषट्पदाः। विच्छन्दा यांश्च सच्छन्दा सूचीभिः शम्यन्तुत्वा ॥ ३ ॥ सहस्तोमाः सहछन्दस आवृतः सप्त प्रमाऋषयः सप्तदैव्याः । पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीरा अन्वालेभिरे रथ्योन रश्मीन् ॥ ४ ॥ यज्जाग्रतो दूरमुदैतिदैवन्तदुसुप्तस्यतथैवैति दूरंगमञ्ज्योतिषां ज्योतिरेकन्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ५ ॥ येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषुधीराः । यदपूर्वं यक्षमन्तः प्रजानान्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ६ ॥ यत्प्रज्ञानमुत चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु । यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ७ ॥ येनेदंभूतं भुवनं भविष्यत्परिगृहीतममृतेन सर्वम् । येन यज्ञस्तायते सप्तहोता तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ८ ॥ यस्मिन्ऋचः सामयजू ँ षि यस्मिन्प्रतिष्ठिता रथनाभाविवाराः । यस्मिँश्चित्तं सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ ९ ॥ सुषारथिरश्वानिवयन्मनुष्यान्नेनीयतेभीशुभिर्वाजिन इव । हृत्प्रतिष्ठं यदजिरंजविष्ठन्तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु ॥ १० ॥ इति प्रथमाध्यायः ॥ इसमें आखिरी ६ मंत्र 'शिवसंकल्प मंत्र 'के नाम से भी प्रसिद्ध हैं ।

द्वितीयाध्यायः—हरिः ॐ सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । स भूमि ँ सर्वतस्पृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥ पुरुषएवेदं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सर्वं यद्भूतं यच्चभाव्यम् । उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥ एतावानस्यमहिमातोज्यायाँश्चपूरुषः । पादोस्य विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥३॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः । ततोविष्वङ् व्यक्रामत्साशनानशने अभि ॥४॥ ततोविराडजायत विराजोऽअधिपूरुषः । सजातोऽअत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥५॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः सम्भृतं वृषदाज्यम् । पशूस्ताँश्चक्रेवायव्यानारण्याग्राम्याश्चये ॥६॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऋचः सामानिजज्ञिरे । छन्दाꣳसिजज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥७॥ तस्मादश्वा अजायन्तयेके चोभयादतः । गावो हजज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥८॥ तं यज्ञं बर्हिषिप्रौक्षन्पुरुषंजातमग्रतः । तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥९॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधाव्यकल्पयन् । मुखंकिमस्यासीत्किंबाहूकिमूरूपादा उच्येते ॥१०॥ ब्राह्मणोऽस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः । ऊरूतदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याꣳ शूद्रो अजायत ॥११॥ चन्द्रमा मनसोजातश्चक्षोः सूर्योअजायत । श्रोत्राद्वायुश्चप्राणश्च मुखादग्निरजायत ॥१२॥ नाभ्या आसीदन्तरिक्षꣳ शीर्ष्णो द्यौः समवर्त्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ अकल्पयन् ॥१३॥ यत्पुरुषेण हविषादेवा यज्ञमतन्वत । वसन्तोऽस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥१४॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिःसप्तसमिधः कृताः । देवायद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥१५॥ यज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्रपूर्वेसाध्याः सन्तिदेवाः ॥१६॥ (यही सोलह मंत्र पुरुषसूक्त के नाम से प्रसिद्ध हैं । इनके बाद के इस अध्याय के शेष ६ मन्त्रों को उत्तरनारायण कहते हैं) । अद्भ्यः संभृतः पृथिव्य रसाच्च विश्वकर्मणः समवर्त्तताग्रे । तस्यत्वष्टाविदधद्रूपमेति तन्मर्त्यस्य देवत्वमाजानमग्रे ॥१७॥ वेदाहमेतं पुरुषं महान्तमादित्यवर्णंतमसः परस्तात् । तमेव विदित्वातिमृत्युमेतिनान्यः पन्थाविद्यतेऽयनाय ॥१८॥ प्रजापतिश्चरतिगर्भे अन्तरजायमानोबहुधा विजायते । तस्ययोनिं परिपश्यन्ति धीरास्तस्मिन्हतस्थुर्भुवनानि विश्वा ॥१९॥ यो देवेभ्य आतपति योदेवानांपुरोहितः । पूर्वो यो देवेभ्योजातोनमो रुचाय ब्राह्मये ॥२०॥ रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा अग्रे तदब्रुवन् । यस्त्वैवंब्राह्मणो विद्यात्तस्यदेवा असन्वशे ॥२१॥ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वेनक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

इष्णन्निषाणामुम्मइषाण सर्वलोकंमइषाण ॥२२॥ इतिद्वितीयाध्यायः।
(इति पुरुषसूक्त और उत्तरनारायण) ।

तृतीयाध्यायः–हरिः ओं आशुः शिशानो वृषभोन भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् । संक्रन्दनोऽनिमिष एकवीरः शतंसेना अजयत्साकमिन्द्रः ॥ १ ॥ संक्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना । तदिन्द्रेण जयत तत्सहध्वं युधोनर इषुहस्तेन वृष्णा ॥२॥ सइषुहस्तैः सनिषङ्गिभिर्वशीस ँ स्रष्टा सयुधइन्द्रो गणेन । सं सृष्टजित्सोमपा बाहुशर्द्ध युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥ ३ ॥ बृहस्पतिः परिदीया रथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः । प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेद्ध्यविता रथानाम् ॥ ४ ॥ बलविज्ञायस्थविरः प्रवीरः सहस्वान्वाजी सहमान उग्रः । अभिवीरो अभिसत्वा सहोजाजैत्रमिन्द्ररथमातिष्ठ गोवित् ॥५॥ गोत्रभिदंगोविदं वज्रबाहुञ्जयन्तमज्मप्रमृणन्तमोजसा । इमँ सजाता अनुवीरयध्वमिन्द्रँ सखायो अनुसँरभध्वम् ॥ ६ ॥ अभिगोत्राणि सहसागाहमानो दयोवीरः शतमन्युरिन्द्रः । दुश्च्यवनः पृतनाषाडयुध्योऽस्माकं सेनाअवतु प्रयुत्सु ॥७॥इन्द्रआसान्नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुरएतुसोमः । देवसेनानामभिभञ्जतीनाञ्जयन्तीनां मरुतोयन्त्वग्रम् ॥८॥ इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानाम्मरुताँशर्द्ध उग्रम् । महामनसाम्भुवनच्यवानां घोषोदेवानां जयतामुदस्थात् ॥ ९ ॥ उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत्सत्वनां मामकानां मनाँसि । उद्वृत्रहन्वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥ १० ॥ अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ताः जयन्तु । अस्माकंवीरा उत्तरे भवन्त्वस्माँउदेवा अवताहवेषु ॥ ११ ॥ अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणांगान्यप्वेपरेहि । अभिप्रेहि निर्दह हृत्सुशोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥ १२ ॥ अवसृष्टापरा पत शरव्ये ब्रह्मसँशिते । गच्छामित्रान्प्रपद्यस्वमामीषां कंचनोच्छिषः ॥ १३ ॥ प्रेताजयतानर इन्द्रोवः शर्म यच्छतु । उग्रावः सन्तुबाहवोनाधृष्या यथासथ ॥ १४ ॥ असौ या सेना मरुतः परेषामभ्यैति नओजसास्पर्धमाना । तां गूहत तमसापव्रतेन यथामी अन्यो अन्यन्नजानन् ॥ १५ ॥ यत्रबाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखाइव । तत्रइन्द्रो बृहस्पतिरदितिः शर्मयच्छतु विश्वाहाशर्म यच्छतु ॥ १६ ॥ मर्माणिते वर्मणाच्छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानुवस्ताम् । उरोर्वा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तीयो वरुणस्तेकृणोतु जयन्तं त्वानुदेवो मदन्तु ॥ १७ ॥ इति तृतीयाध्यायः ॥ इस अध्याय के इन १७ मंत्रों को अप्रतिरथ कहते हैं। और इन्द्रसूक्त भी इसका नाम है, जिसे शक्रसूक्त या शक्रानुवाक भी कहते हैं।

चतुर्थाध्यायः-हरिः ओं विभ्राड् बृहत्पिबतु सोम्यं मद्ध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविहुतम्। वातजूतो योऽभिरक्षतित्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा विराजति ॥ १ ॥ उदुत्यं जातवेदसं देवं वहन्ति केतवः। दृशे विश्वाय सूर्यम् ॥ २ ॥ येनापावकचक्षसा भुरण्यंतञ्जनाँअनु। त्वं वरुण पश्यसि ॥ ३ ॥ दैव्यावध्वर्यू आगतꣳ रथेन सूर्यत्वचा। मध्वा यज्ञꣳ समञ्जाथे। तं प्रत्नथायं वेनश्चित्रं देवानाम् ॥ ४ ॥ तं प्रत्नथा पूर्वथा विश्वथे मथाज्येष्ठतातिं बर्हिषदꣳ स्वर्विदम्। प्रतीचीनं वृजनं दोहसे धुनिमाशुं जयन्तमनुयासुवर्द्धसे ॥ ५ ॥ अयंवेनश्चोदयत्पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसोविमाने। इममपाꣳ संगमे सूर्यस्य शिशुं विप्रामतिभीरिहन्ति ॥ ६ ॥ चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः। आप्राद्यावा पृथिवी अन्तरिक्षꣳसूर्यआत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥७॥ आनइडाभिर्विदथेसुशस्ति विश्वानरः सविता देव एतु। अपि यथा युवानो मत्सथानो विश्वं जगदभिपित्वे मनीषा ॥ ८ ॥ यदद्यकच्चवृत्रहन्नुदगाअभिसूर्य। सर्वन्तदिन्द्रतेवशे ॥ ९ ॥ तरणिर्विश्वदर्शतो ज्योतिष्कृदसिसूर्य। विश्वमाभासि रोचनम् ॥ १० ॥ तत्सूर्यस्य देवत्वं तन्महित्वं मध्याकर्त्तोर्विततꣳ सञ्जभार। यदेदयुक्त हरितः सधस्थादाद्रात्री वासस्तनुते सिमस्मै ॥ ११ ॥ तन्मित्रस्य वरुणस्याभिचक्षेसूर्योरूपं कृणुते द्यौरुपस्थे। अनन्तमन्यद्रुशदस्यपाजः कृष्णमन्यद्धरितः सम्भरन्ति ॥ १२ ॥ बण्महाँ असि सूर्य बडादित्य महाँ असि। महस्ते सतोमहिमा पनस्यतेदादेव महाँअसि ॥ १३ ॥ बट्सूर्यः श्रवसा महाँअसि सत्रादेवमहाँअसि। मन्हादेवानामसुर्य्यः पुरोहितो विभुज्योतिरदाभ्यम् ॥१४॥ आयन्तइव सूर्यविश्वेदिन्द्रस्य भक्षत। वसूनिजाते जनमान ओजसा प्रतिभागन्नदीधिम ॥ १५ ॥ अद्यादेवा उदिता सूर्यस्य निरꣳहसः पिपृता निरवद्यात्। तन्नोमित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उतद्यौः ॥ १६ ॥ आकृष्णेन रजसा वर्त्तमानो निवेशयन्नमृतं मर्त्यं च। हिरण्ययेन सविता रथेना देवोयाति भुवनानि पश्यन्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

श्यन् ॥ १७ ॥ इति चतुर्थाध्यायः ॥ इन १७ मंत्रों में ५, ६ ७ तीन को छोड़कर शेष १४ को सौरसूक्त और विभ्राडनुवाक कहे हैं। अतएव सौरसूक्तके नामपर या अनुवाक के नाम पर इन तीन को छोड़ शेष १४ काही पाठ किया जाता है।

पंचमाध्यायः-हरिः ओं नमस्ते रुद्रमन्यव उतोत इषवे नमः बाहुभ्यामुतते नमः ॥ १ ॥ याते रुद्रशिवातनूरघोरापापकाशिनी तयानस्तन्वाशन्तमयागिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥ २ ॥ यामिषुं गिरि शन्तहस्ते बिभर्ष्यस्तवे । शिवांगिरित्रतां कुरुमाहि ँ सीःपुरुषं जगत् ॥ ३ ॥ शिवेन वचसा त्वागिरिशाच्छावदामसि । यथा सर्वमिज्जगदयक्ष्म ँ सुमना असत् ॥ ४ ॥ अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्योभिषक् । अहींश्च सर्वान् जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान धराचीः परासुव ॥ ५ ॥ असौयस्ताम्रो अरुण उतबभ्रुः सुमंगल येचैन ँ रुद्रा अभितोदिक्षुश्रिताः सहस्रशोवैषा ँ हेडईमहे ॥ ६ ॥ असौयोवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः । उतैनं गोपाअदृश्रन्नदृश्रन्नुद हार्यः सदृष्टो मृडयातिनः ॥ ७ ॥ नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षायमीढुषे । अथोयेअस्य सत्त्वानो हन्तेभ्योऽकरन्नमः ॥ ८ ॥ प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयो रात्न्योर्ज्याम् । याश्चतेहस्त इषवः परा भगवोवप ॥ ९ ॥ विज्यं धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ उत अनेशन्नस्ययाइषव आभुरस्य निषंगधिः ॥ १० ॥ यातेहेतिर्मीढुष महस्ते बभूवतेधनुः । तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥ ११ ॥ परितेधन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः । अथोयइषुधिस्तवारे अस्मन्निधेहितम् ॥ १२ ॥ अवतत्त्यधनुष्ट्व ँ सहस्राक्ष शतेषुधे । निशीर्यशल्ल्यानांमुखा शिवोनः सुमनाभव ॥ १३ ॥ नमस्त आयुधायानातताय धृष्णवे । उभाभ्यामुतते नमो बाहुभ्यान्तवधन्वने ॥ १४ ॥ मानो महान्तमुतमानो अर्भकम्मान उक्षन्तमुतमान उक्षितम् । मानोवधीः पितरमोत मातरम्मानः प्रियास्तन्वोरुद्ररीरिषः ॥ १५ ॥ मानस्तोके तनयेमान आयुषि मानो गोषुमानो अश्वेषुरीरिषः । मानोवीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्मन्तः सदमित्त्वाहवामहे ॥ १६ ॥ नमोहिरण्यबाहवे सेनान्येदिशांच पतयेनमोनमो वृक्षेभ्यः हरिकेशेभ्यः पशूनांपतयेनमो नमः शष्पिञ्जरायत्विषीमते पथीनां पतये नमोनमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानां पतये नमो नमो बभ्लुशाय ॥ १७ ॥ नमोबभ्लुशाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

व्याधिनेऽन्नानां पतयेनमो नमो भवस्यहेत्यै जगतां पतयेनमोनमो
हृद्यावततायिने क्षेत्राणां पतयेनमो नमः सूतायाहन्त्यै पतये वनानां पतये
नमो नमो रोहिताय ॥ १८ ॥ नमोरोहितायस्थपतये वृक्षाणां पतयेनमो
नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनां पतये नमोनमो मंत्रिणे वाणि-
जाय कक्षाणां पतयेनमोनम उच्चैर्घोषायाक्रन्दयते पत्तीनां पतयेनमो
नमः कृत्स्नायतया ॥ १९ ॥ नमः कृत्स्नायतया धावते सत्वनां पतये
नमोनमः सहमानाय निव्याधिन आव्याधिनीनांपतये नमोनमो नि-
षंगिणे ककुभायस्तेनानांपतयेनमोनमो निचेरवे परिचरायारण्यानां
पतये नमोनमोवञ्चते ॥ २० ॥ नमोवञ्चते परिवञ्चते स्तायूनां
पतयेनमोनमो निषंगिणे इषुधिमते तस्कराणां पतये नमो नमः सृका-
विभ्योजिघांसद्भ्यो मुष्णतां पतयेनमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो
विकृन्तानां पतयेनमः ॥ २१ ॥ नमः उष्णीषिणे गिरिचराय कुलु-
ञ्चानां पतयेनमोनम इषुमद्भ्यो धन्वायिभ्यश्चवो नमोनम आतन्वा-
नेभ्यः प्रतिदधानेभ्यश्चवो नमोनम आयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्चवो नमोनमो
विसृजद्भ्यः ॥ २२ ॥ नमो विसृजद्भ्यो विध्यद्भ्यश्चवो नमोनमः
स्वपद्भ्यो जाग्रद्भ्यश्चवो नमोनमः शयानेभ्य आसीनेभ्यश्चवो नमोनम-
स्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्चवो नमोनमः सभाभ्यः ॥ २३ ॥ नमः सभाभ्यः
सभापतिभ्यश्चवो नमोनमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्चवो नमोनम आव्या-
धिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्चवो नमोनम उगणाभ्यस्तृ ँ हतीभ्यश्चवो
नमोनमो गणेभ्यः ॥ २४ ॥ नमोगणेभ्यो गणपतिभ्यश्चवो नमोनमो
व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्चवो नमोनमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्चवो
नमोनमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्चवो नमोनमः सेनाभ्यः ॥ २५ ॥
नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्चवो नमोनमो रथिभ्योऽरथेभ्यश्चवो
नमोनमः क्षत्तृभ्यः संगृहीतृभ्यश्चवो नमोनमो महद्भ्यो अर्भकेभ्यश्चवो
नमः ॥ २६ ॥ नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्चवो नमोनमः कुलाले-
भ्यः कर्मारेभ्यश्चवो नमोनमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्टेभ्यश्चवो नमोनमः
श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्चवो नमोनमः श्वभ्यः ॥ २७ ॥ नमः श्वभ्यः
श्वपतिभ्यश्चवो नमोनमो भवायच रुद्रायच नमः शर्वायच पशुपतये
च नमोनीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च नमः कपर्दिने ॥ २८ ॥
नमः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नमः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च
नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमोमीढुष्टमायचेषुमते च

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

नमो ह्रस्वाय ॥ २९ ॥ नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च
वर्षीयसेच नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोग्र्याय च प्रथमायच नमो
आशवे ॥ ३० ॥ नम आशवेचाजिराय च नमः शीघ्रयाय च शीघ्रियाय
चनम ऊर्म्यायचावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ॥ ३१ ॥
नमोज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नमः पूर्वजायचापरजाय च नमो
मध्यमायचापगल्भ्याय च जघन्याय च बुध्न्याय च नमः सोभ्याय च
॥ ३२ ॥ नमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय
च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नम उर्वर्याय च खल्याय च
नमो वन्याय ॥ ३३ ॥ नमो वन्याय च कक्ष्याय च नमः श्रवाय च
प्रतिश्रवाय च नम आशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय च
भेदिने च नमो बिल्मिने ॥ ३४ ॥ नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो
वर्मिणे च वरूथिनेच नमः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्या
यचाहनन्याय च नमो धृष्णवे ॥ ३५ ॥ नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च
नमो निषंगिणेचेषुधिमतेचनमस्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नमः स्रुत्या
धाय च सुधन्वने च ॥ ३६ ॥ नमः स्रुत्याय च पथ्याय च नमः
काट्याय चनीप्याय च नमः कुल्ल्याय च सरस्यायच नमो नादेयाय च
वैशन्ताय च नमः कूप्याय ॥ ३७ ॥ नमः कूप्याय चावट्याय च नमो
वीध्र्याय चातप्याय च नमो मेघ्याय च विद्युत्याय च नमो वर्ष्याय
चावर्ष्याय च नमो वात्याय ॥ ३८ ॥ नमो वात्याय च रेष्मा
य च नमो वास्तव्याय च वास्तुपाय च नमः सोमाय च रुद्राय
य च नमस्ताम्रायचारुणायचनमः शंगवे ॥ ३९ ॥ नमः शंगवेच पशु
पतये च नम उग्रायच भीमायच नमोऽग्रेवधाय च दूरेवधायचनमो हन्त्रे
च हनीयसे चनमो वृक्षेभ्यो हरिकेशेभ्यो नमस्ताराय ॥ ४० ॥ नमः
शम्भवाय च मयोभवाय चनमः शंकराय च मयस्कराय च नमः
शिवाय च शिवतरायच ॥ ४१ ॥ नमः पार्यायचावार्याय च नमः प्रतर
णाय चोत्तरणाय चनमस्तीर्थ्यायचकूल्याय चनमः शष्प्यायच फेन्या
न्याय च नमः सिकत्याय ॥ ४२ ॥ नमः सिकत्याय च प्रवाह्यायच प्रवाह्य
कि ँ शिलायच क्षयणायचनमः कपर्दिने च पुलस्तये च नम इरिण्या
य च प्रपथ्याय चनमो व्रज्याय ॥ ४३ ॥ नमो व्रज्याय च गोष्ठ्याय
च नमस्तल्प्याय च गेह्याय च नमो हृदय्याय च निवेष्प्याय च नमः
काट्यायच गह्वरेष्ठाय चनमः शुष्क्याय च ॥ ४४ ॥ नमः शुष्क्याय च

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हरित्याय च नमः पा॒शव्याय च रजस्याय च नमो लोप्याय चोलप्याय च नम ऊर्व्याय च सूर्व्यायच नमः पर्णाय ॥४५॥ नमः पर्णायच पर्णशदाय च नम उद्गुरमाणाय चाभिघ्नते चनम आखिदतेच प्रखिदतेच नम इषुकृद्भ्यो धनुष्कृद्भ्यश्चवो नमो नमो वः किरिकेभ्यो देवानां हृदयेभ्यो नमो विचिन्वत्केभ्यो नमो विक्षिणत्केभ्यो नम आनिर्हतेभ्यः ॥४६॥ द्रापेऽअन्धसस्पते दरिद्रन्नीललोहित । आसां प्रजानामेषां पशूनां माभेर्मारोङ् मोचनः किञ्चनाममत् ॥ ४७ ॥ इमा रुद्राय तवसे कपर्दिने क्षयद्वीराय प्रभरामहे मतीः । यथा शमसद्द्विपदे चतुष्पदे विश्वं पुष्टं ग्रामे अस्मिन्ननातुरम् ॥ ४८ ॥ याते रुद्र शिनातनूः शिवा विश्वाह भेषजी । शिवा रुतस्यभेषजी तयानो मृड जीवसे ॥ ४९ ॥ परिनो रुद्रस्य हेतिर्वृणक्तु परित्वेषस्य दुर्मतिरघायोः । अवस्थिरा मघवद्भ्यस्तनुष्व मीढ्वस्तोकाय तनयाय मृड ॥५०॥ मीढुष्टम शिवतम शिवोनः सुमनाभव । परमेवृक्ष आयुधं निधाय कृत्तिं वसान आचर पिनाकं बिभ्रदागहि ॥ ५१ ॥ विकिरिद्र विलोहित नमस्ते अस्तु भगवः । यास्ते सहस्रं हेतयोऽन्यमस्मन्निवपन्तु ताः ॥ ५२ ॥ सहस्राणि सहस्राशो बाह्वोस्तव हेतयः । तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ॥५३॥ (४८ से यहां तक के छ मंत्रों को रुद्रसूक्त कहते हैं) । असंख्याता सहस्राणि ये रुद्रा अधि भूम्याम् । तेषा ँ सहस्रयोजने धन्वानि तन्मसि ॥ ५४ ॥ अस्मिन्महत्यर्णवेऽन्तरिक्षे भवा अधि । तेषा ँ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ॥ ५५ ॥ नीलग्रीवाः शितिकण्ठा दिव ँ रुद्रा उपश्रिताः । तेषां० (६३ वें तक हरेक मंत्रका आधा पहली बार बार आता है, ॥ ५६ ॥ नीलाग्रीवाः शितिकण्ठाः शर्वा अधः क्षमाचराः । तेषां० ॥ ५७ ॥ ये वृक्षेषु शष्पिञ्जरा नीलग्रीवा विलोहिताः । तेषां० ॥ ५८ ॥ ये भूतानामधिपतयो विशिखासः कपर्दिनः । तेषां० ॥ ५९ ॥ ये पथां पथिरक्षय ऐलबृदा आयुर्युधः । तेषां० ॥६०॥ ये तीर्थानि प्रचरन्ति सृकाहस्ता निषंगिणः । तेषां० ॥ ६१ ॥ येन्नेषु विविध्यन्ति पात्रेषु पिबतो जनान् । तेषां० ॥ ६२ ॥ य एतावन्तश्च भूया ँ सश्च दिशो रुद्रा वितस्थिरे । तेषां० ॥ ६३ ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवियेषां वर्षमिषवः । तेभ्यो दश प्राचीर्दशदक्षिणा दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्ध्वाः । तेभ्यो नमो अस्तु तेनोवन्तु तेनो मृडयन्तु ते यद्विष्मो यश्चनोद्वेष्टि तमेषाञ्जम्भेदध्मः ॥ ६४ ॥ नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये-

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

न्तरिक्षे येषांवात इषवः । तेभ्योदशप्राची० (६४ वें मंत्र का ही अ
अध्याय के अन्त तक ६५, ६६ में भी आया है) ॥ ६५ ॥ नमोस्तु
द्रेभ्यो ये पृथिव्यां येषामन्नमिषवः । तेभ्यो दश प्राची० ॥ ६६ ॥
॥ इति पंचमाध्यायः ॥ इस अध्याय कोही रुद्राध्याय और रुद्र
भी कहते हैं और इसके (४८–५३) ६ मंत्रों को अलग छोटा
सूक्त कहते हैं ।

षष्ठाध्यायः–हरिः ओं वयं सोम व्रते तवमनस्तनूषु विभ्रतः । प्र
वन्तः सचेमहि ॥ १ ॥ एषते रुद्र भागः सहस्वस्राम्बिकया । तं
स्व स्वाहैषते रुद्रभाग आखुस्ते पशुः ॥ २ ॥ अवरुद्र मदीमहयव
त्र्यम्बकम् । यथानोवस्य सस्करद्यथा नः श्रेयस्करद्यथानो व्यवस
यात् ॥ ३ ॥ भेषजमसि भेषजं गवेश्वाय पुरुषाय भेषजम् । सुग्रमे
मेष्यै ॥ ४ ॥ त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् । उर्वारुकमि
न्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् (यह आधाही मृत्युंजय मंत्र
ता है) ॥ त्र्यम्बकं यजायहे सुगन्धिं पतिवेदनम् । उर्वारुक
बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ॥ ५ ॥ एतत्ते रुद्रा वसन्तेन परो
वतोतीहि । अवततधन्वा पिनाकवासः कृत्तिवासा अहि
शिवातीहि ॥ ६ ॥ त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् । यद्दे
त्र्यायुषन्तन्नो अस्तुत्र्यायुषम् ॥ ७ ॥ शिवो नामासि स्वधि
पिता नमस्ते अस्तुमा महि सीः । निवर्त्तयाम्यायुषेन्नाद्याय
ननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥ ८ ॥ इतिषष्ठाध्या

सप्तमाऽध्यायः–हरिः ओं उग्रश्चाभीमश्च ध्वान्तश्च धुनिश्च
सह्वाँश्चाभियुग्वाच विक्षिपः स्वाहा ॥ १ ॥ अग्निं हृदयेन
हृदयाग्रेण पशुपतिं कृत्स्नहृदयेन भवं यक्ना । शर्वं मतस्नाभ्या
शानं मन्युना महादेवमन्तः पर्शव्येनोग्रं देवं वनिष्ठुनावसिग्रहनुः
कोश्याभ्याम् ॥ २ ॥ उग्रं लोहितेन मित्रं सौव्रत्येन रुद्रं दौर्व्रत्ये
प्रक्रीडेन मरुतो बलेन साध्यान्प्रमुदा । भवस्य कण्ठ्यं रुद्रस्य
पार्श्व्यं महादेवस्य यकृच्छर्वस्य वनिष्ठुः पशुपतेः पुरीतत् ॥ ३ ॥
स्वाहा लोमभ्यः स्वाहा त्वचे स्वाहा त्वचे स्वाहा लोहिताय
लोहिताय स्वाहा मेदोभ्यः स्वाहा मेदोभ्यः स्वाहा । मा
स्वाहा मा सेभ्यः स्वाहा स्नावभ्यः स्वाहा स्नावभ्यः स्वाहा
स्वाहा स्थभ्यः स्वाहा । मज्जभ्यः स्वाहा मज्जभ्यः स्वाहा ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाहा पायवेस्वाहा ॥ ४ ॥ आयासाय स्वाहा प्रायासाय स्वाहा संयासाय स्वाहा वियासाय स्वाहोद्यासाय स्वाहा । शुचे स्वाहा शोचते स्वाहा शोचमानाय स्वाहा शोकाय स्वाहा ॥ ५ ॥ तपते स्वाहा तप्यते स्वाहा तप्यमानाय स्वाहा तप्ताय स्वाहा घर्माय स्वाहा । निष्कृत्यैस्वाहा प्रायश्चित्त्यैस्वाहा ॥ ६ ॥ यमायस्वाहाऽन्तकायस्वाहा मृत्यवेस्वाहा ब्रह्मणेस्वाहा ब्रह्महत्यायैस्वाहा । विश्वेभ्योदेवेभ्यः स्वाहा द्यावापृथिवीभ्याꣳस्वाहा ॥ ७ ॥ इति सप्तमाध्यायः ॥

अष्टमाध्यायः—हरिः ॐ वाजश्चमे प्रसवश्चमे प्रयतिश्चमे प्रसितिश्चमे धीतिश्चमे क्रतुश्चमे स्वरश्चमे श्लोकश्चमे श्रवश्चमे श्रुतिश्चमे ज्योतिश्चमे स्वश्चमे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ १ ॥ प्राणश्चमेऽपानश्चमे व्यानश्चमेऽसुश्चमे चित्तं चम आधीतंचमे वाक्चमे मनश्चमे चक्षुश्चमे श्रोत्रंचमे दक्षश्चमे बलंचमे यज्ञेन कल्पन्ताम् ॥ २ ॥ ओजश्चमे सहश्चमे आत्मा चमे तनूश्चमे शर्मचमे वर्मचमेऽङ्गानिचमेऽस्थीनिचमेपरूꣳषिचमे शरीराणिचम आयुश्चमे जराचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ३ ॥ ज्यैष्ठ्यंचम आधिपत्यंचमे मन्युश्चमे भामश्चमेऽमश्चमेऽम्भश्चमे जेमाचमे महिमाचमे वरिमाचमे प्रथिमाचमे वर्षिमाचमे द्राघिमाचमे वृद्धंचमे वृद्धिश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ४ ॥ सत्यंचमे श्रद्धाचमे जगच्चमे धनंचमेविश्वंचमे महश्चमे क्रीडाचमे मोदश्चमे जातंचमे जनिष्यमाणंचमे सूक्तंचमे सुकृतंचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ५ ॥ ऋतंचमेऽमृतंचमेऽयक्ष्मंचमेऽनामयच्चमे जीवातुश्चमे दीर्घायुत्वंचमेऽनमित्रंचमेऽभयंचमे सुखंचमे शयनंचमे सूषाश्चमे सुदिनंचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ६ ॥ यन्ताचमे धर्त्ताचमे क्षेमश्चमे धृतिश्चमे विश्वंचमे महश्चमे संविच्चमे ज्ञात्रंचमे सूश्चमे प्रसूश्चमे सीरंचमे लयश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ७ ॥ शंचमे मयश्चमे प्रियंचमे प्रियकामश्चमे कामश्चमे सौमनसश्चमे भगश्चमे द्रविणंचमे भद्रंचमे श्रेयश्चमे वसीयश्चमे यशश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ८ ॥ ऊर्क्चमे सूनृताचमे पयश्चमे रसश्चमे घृतंचमे मधुचमे सग्धिश्चमे सपीतिश्चमे कृषिश्चमे वृष्टिश्चमे जैत्रंचम औद्भिद्यंचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ९ ॥ रयिश्चमे रायश्चमे पुष्टंचमे पुष्टिश्चमे विभुचमे प्रभुचमे पूर्णंचमे पूर्णतरंचमे कुयवंचमेऽक्षितंचमेऽन्नंचमे क्षुच्चमेयज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १० ॥ वित्तंचमे वेद्यंचमे भूतंचमे भविष्यच्चमे सुगंचमे सुपथ्यंचमे ऋद्धंचम ऋद्धिश्चमे क्लृप्तंचमे क्लृप्तिश्चमे मतिश्चमे सुमतिश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ ११ ॥ व्री-

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

हयश्चमे यवाश्चमे माषाश्चमे तिलाश्चमे मुद्गाश्चमे खल्वाश्चमे प्रि
वश्चमेऽणवश्चमे श्यामाकाश्चमे नीवाराश्चमे गोधूमाश्चमे मसूराश्च
यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १२ ॥ अश्माचमे मृत्तिकाचमे गिरयश्चमे पर्वत
श्चमे सिकताश्चमे वनस्पतयश्चमे हिरण्यंचमेऽयश्चमे श्यामं
लोहंचमे सीसंचमे त्रपुचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १३ ॥ अग्निश्चम आयुष्य
मे वीरुधश्चम ओषधयश्चमे कृष्टपच्याश्चमेऽकृष्टपच्याश्चमे ग्राम्याश्च
मे पशव आरण्याश्चमे वित्तंचमे वित्तिश्चमे भूतंचमे भूतिश्चमे यज्ञे
कल्पन्ताम् ॥ १४ ॥ वसुचमे वसतिश्चमे कर्मचमे शक्तिश्चमे अर्थ
एमश्चमे इत्याचमेगतिश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १५ ॥ अग्निश्च
इन्द्रश्चमे सोमश्चम इन्द्रश्चमे सविताचम इन्द्रश्चमे सरस्वतीच
इन्द्रश्चमे पूषाचम इन्द्रश्चमे बृहस्पतिश्चम इन्द्रश्चमे यज्ञेनकल्प
॥१६॥ मित्रश्चम इन्द्रश्चमे वरुणश्चम इन्द्रश्चमे धाताचम इन्द्र
त्वष्टाचम इन्द्रश्चमे मरुतश्चम इन्द्रश्चमे विश्वेचमे देवाश्चम
यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १७ ॥ पृथिवीचम इन्द्रश्चमेऽन्तरिक्षंचम इन्द्र
द्यौश्चम इन्द्रश्चमे समाश्चम इन्द्रश्चमे नक्षत्राणिचम इन्द्रश्चमे दि
श्चम इन्द्रश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ १८ ॥ अंशुश्चमे रश्मिश्चमे
भ्यश्चमऽधिपतिश्चमे उपांशुश्चमेऽन्तर्यामश्चम ऐन्द्रवायवश्चमे
वरुणश्चम आश्विनश्चमे प्रतिप्रस्थानश्चमे शुक्रश्चमे मन्थीचमे
कल्पन्ताम् ॥१९॥ आग्रयणश्चमे वैश्वदेवश्चमे ध्रुवश्चमे वैश्वानरश्च
ऐन्द्राग्नश्चमे महावैश्वदेवश्चमे मरुत्वतीयश्चमे निष्केवल्यश्च
सावित्रश्चमे सारस्वतश्चमे पात्नीवतश्चमे हारियोजनश्चमे यज्ञे
ल्पन्ताम्॥२०॥ स्रुचश्चमे चमसाश्चमे वायव्यानिचमे द्रोणकलशश्च
ग्रावाणश्चमे ऽधिषवणेचमे पूतभृच्चमे आधवनीयश्चमे वेदिश्चमे
श्चमेऽवभृथश्चमे स्वगाकारश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥२१॥ अग्निश्च
धर्मश्चमेऽर्कश्चमे सूर्यश्चमे प्राणश्चमेऽश्वमेधश्चमे पृथिवीचमेऽदि
श्चमे दितिश्चमे द्यौश्चमेऽङ्गुलयः शक्वरयोदिशश्चमे यज्ञेनकल्प
॥ २२ ॥ व्रतंचम ऋतवश्चमे तपश्चमे सम्वत्सरश्चमेऽहोरात्रे उर्वी
बृहद्रथन्तरेचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २३ ॥ एकाचमे तिस्रश्चमे तिस्र
पंचचमे पंचचमे सप्तचमे सप्तचमे नवचमे नवचमे एकादश
एकादशचमे त्रयोदशचमे त्रयोदशचमे पञ्चदशचमे पञ्चदशचमे
दशचमे सप्तदशचमे नवदशचमे नवदशचमे एकविंशतिश्चमे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विꣳशतिश्चमे त्रयोविꣳशतिश्चमे त्रयोविꣳशतिश्चमे पञ्चविꣳशतिश्चमे पञ्चविꣳशतिश्चमे सप्तविꣳशतिश्चमे सप्तविꣳशतिश्चमे नवविꣳशतिश्चमे नवविꣳशतिश्चम एकत्रिꣳशच्चमे एकत्रिꣳशच्चमेत्रयस्त्रिꣳशच्चमे त्रयस्त्रिꣳशच्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम्॥२४॥ चतस्रश्चमेऽष्टौचमेऽष्टौचमे द्वादशचमे द्वादशचमे षोडशचमे षोडशचमे विꣳशतिश्चमे विꣳशतिश्चमे चतुर्विꣳशतिश्चमे चतुर्विꣳशतिश्चमेऽष्टाविꣳशतिश्चमेऽष्टाविꣳशतिश्चमे द्वात्रिꣳशच्चमे द्वात्रिꣳशच्चमे षट्त्रिꣳशच्चमे षट्त्रिꣳशच्चमे चत्वारिꣳशच्चमे चत्वारिꣳशच्चमे चतुश्चत्वारिꣳशच्चमे चतुश्चत्वारिꣳशच्चमेऽष्टाचत्वारिꣳशच्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २५ ॥ त्र्यविश्चमे त्र्यवीचमे दित्यवाट्चमे दित्यौहीचमे पञ्चाविश्चमे पञ्चावीचमे त्रिवत्सश्चमे त्रिवत्साचमे तुर्यवाट्चमे तुर्यौहीचमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥२६॥ प्रष्ठवाट्चमे प्रष्ठौहीचमे उक्षाचमे वशाचम ऋषभश्चमे वेहच्चमेऽनड्वाँश्चमे धेनुश्चमे यज्ञेनकल्पन्ताम् ॥ २७ ॥ वाजायस्वाहा प्रसवायस्वाहाऽपिजाय स्वाहा क्रतवे स्वाहा वसवे स्वाहा ऽहर्पतये स्वाहा ऽह्नेमुध्याय स्वाहा मुग्धायवैनꣳशिनाय स्वाहा विनंशिन आन्त्यायनाय स्वाहा ऽन्त्यायभौवनाय स्वाहा भुवनस्यपतये स्वाहाऽधिपतये स्वाहा प्रजापतये स्वाहा । इयंतेराण्मित्राययन्तासियमन ऊर्जेत्वा वृष्ट्यै त्वा प्रजानांत्वाधिपत्याय ॥ २८ ॥ आयुर्यज्ञेनकल्पतां प्राणो यज्ञेन कल्पतां चक्षुर्यज्ञेन कल्पताꣳश्रोत्रं यज्ञेनकल्पतां वाग्यज्ञेनकल्पतां मनोयज्ञेन कल्पतामात्मा यज्ञेन कल्पतां ब्रह्मा यज्ञेनकल्पतां ज्योतिर्यज्ञेनकल्पतां स्वर्यज्ञेन कल्पतां पृष्ठं यज्ञेन कल्पतां यज्ञोयज्ञेनकल्पताम् । स्तोमश्च यजुश्च सामच बृहच्च रथन्तरंच । स्वर्देवा अगन्मामृता अभूम प्रजापतेः प्रजाअभूमवेट् स्वाहा ॥ २९ ॥ इति अष्टमाऽध्यायोऽष्टाध्यायी च ॥

नवमः शान्त्यध्यायः—हरिः ॐ ऋचं वाचं प्रपद्येमनोयजुः प्रपद्ये सामप्राणं प्रपद्येचक्षुः श्रोत्रं प्रपद्ये । वागोजः सहौजो मयिप्राणापानौ ॥ १ ॥ यन्मेछिद्रं चक्षुषो हृदयस्यमनसोवाति तृणं बृहस्पतिर्मे तद्दधातुशन्नो भवतु भुवनस्य यस्पतिः ॥ २ ॥ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्यधीमहि धियोयोनः प्रचोदयात् ॥ ३ ॥ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कयाशचिष्ठया वृता ॥ ४ ॥ कस्त्वासत्योमदानां मꣳहिष्ठो मत्सदन्धसः । दृढाचिदारुजेवसु ॥ ५ ॥ अभीषुणः

BaiGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

सखीनामविताजरितॄणाम् । शतं भवास्यूतिभिः ॥ ६ ॥ (ये ४,५,६ मंत्रही सामवेदियों के वामदेव्य (साम) सूक्त हैं ।) कयात्वन्न ऊत्या भिप्रमन्दसे वृषन् । कयास्तोतृभ्यआभर ॥७॥ इन्द्रो विश्वस्य राजति। शन्नोअस्तु द्विपदे शंचतुष्पदे ॥ ८ ॥ शन्नोमित्रः शंवरुणः शन्नोभवत्वर्यमा । शन्नइन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो विष्णुरुरुक्रमः ॥ ९ ॥ शन्नोवातः पवताᳬशन्नस्तपतु सूर्यः । शन्नःकनिक्रदद्देवःपर्जन्यो अभिवर्षतु ॥१०॥ अहानि शम्भवन्तुनः शᳬरात्रीः प्रतिधीयताम्।शन्नइन्द्राग्नीभवतामवोभिः शन्नइन्द्रावरुणाराहव्या । शन्नइन्द्रापूषणावाजसातौ शमिन्द्रासोमाविदितायशंयो ॥११॥ शन्नोदेवीरभिष्टयआपो भवन्तुपीतये । शंयोरभिस्रवन्तुनः ॥१२॥ स्योना पृथिविनो भवानृक्षरा निवेशनी । यच्छानः शर्म सप्रथाः ॥ १३ ॥ आपोहिष्ठामयोभुवस्तान ऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥ १४ ॥ योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेहनः । उशतीरिव मातरः ॥१५॥ तस्मा अरंगमामवो यस्यक्षयाय जिन्वथ । आपोजनयथाचनः ॥१६॥ द्यौः शान्तिरन्तरिक्षᳬशान्तिः पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिः । वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्वᳬशान्तिः शान्तिरेव शान्तिः सामाशान्तिरेधि ॥१७॥ दृतेदृᳬहमा मित्रस्यमाचक्षुषासर्वाणि भूतानि समीक्षन्ताम् । मित्रस्याहं चक्षुषासर्वाणि भूतानि समीक्षे मित्रस्यचक्षुषा समीक्षामहे ॥ १८ ॥ दृतेदृᳬह मा संदृशि जीव्यासं ज्योक्ते संदृशिजीव्यासम् ॥१९॥ नमस्ते हरसेशोचिषेनमस्ते अस्त्वर्चिषे । अन्याँस्ते अस्मत्तपन्तु हेतयः पावकोऽअस्मभ्यं शिवोभव ॥ २० ॥ नमस्ते अस्तु विद्युते नमस्तेस्तनयित्नवे । नमस्ते भगवन्नस्तु यतः स्वः समीहसे ॥२१॥ यतोयतः समीहसे ततोनो अभयंकुरु । शन्नः कुरुप्रजाभ्योऽभयन्नः पशुभ्यः ॥ २२ ॥ सुमित्रियानआप ओषधयः सन्तु दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु । योऽस्मान्द्वेष्टि यंचवयं द्विष्मः ॥ २३ ॥ तच्चक्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेमशरदः शतᳬशृणुयाम शरदः शतंप्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्यामशरदः शतंभूयश्च शरदः शतात् ॥ २४ ॥ इतिनवमः शान्तिध्यायः ॥ इसेही शुक्रिय ऋचंवाचं सूक्त कहते हैं ।

(२) ओं कृणुष्वपाजः प्रसितिंन पृथ्वींयाहि राजेवामवँ इभेन । तृष्वीमनुप्रसितिं द्रूणानोऽस्तासि विध्यरक्षसस्तपिष्ठैः ॥१॥ तवभ्रमा आशुया पतन्त्यनुस्पृश धृषताशोशुचानः । तपूᳬष्यग्ने जुह्वा पतङ्गान्

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सन्दितो विसृजविष्वगुल्काः ॥ २॥ प्रतिस्पशो विसृजतूर्णितमोभवापायु-विशो अस्याअदब्धः । योनोदूरे अघशꣳसोयो अन्त्यग्नेमाकिष्टे व्यथिरा-दधर्षीत् ॥ ३॥ उदग्नेतिष्ठ प्रत्यातनुष्वन्यमित्राँ ओषतात्तिग्महेते । योनो अराति ꣳ समिधानचक्रेनीचातंधक्ष्यतसंनशुष्कम् ॥ ४ ॥ ऊर्ध्वोभव प्रतिविध्याध्यस्मदाविष्कृणुष्व दैव्यान्यग्ने । अवस्थिरा तनुहियातुजूनां जामिमजामिं प्रमृणीहि शत्रून् ॥ ५ ॥ इति रक्षोघ्नसूक्त ॥

(३) श्लोकाध्याय-ओं देवसवितः प्रसुवयज्ञं प्रसुवयज्ञपतिंभगाय। दिव्यो गन्धर्वः केतपूः केतंनः पुनातुवाचस्पतिर्वाचंनः स्वदतु ॥ १ ॥ तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो योनः प्रचोदयात् ॥ २ ॥ विश्वानिदेव सवितर्दुरितानि परासुव । यद्भद्रं तन्न आसुव ॥ ३ ॥ विभक्तारꣳहवामहे वसोश्चित्रस्यराधसः । सवितारं नृचक्षसम् ॥ ४ ॥ ब्रह्मणेब्राह्मणं क्षत्रायराजन्यं मरुद्भ्योवैश्यं तपसेशूद्रं तमसेतस्करं नरकायवीरहणं पाप्मनेक्लीबमाक्रयायाअयोगूं कामायपुँश्चलूमतिक्रुशायमागधम् ॥ ५ ॥ नृत्तायसूतं गीतायशैलूषं धर्मायसभाचरम् नरिशायैभीमलं नर्मायरेभ ꣳ हसाय कारिमानन्दायस्त्रीषखं प्रमदेकुमारीपुत्रं मेधायैरथकारं धैर्यायतक्षाणम् ॥६॥ तपसे कौलालं मायायै कर्मार ꣳ रूपायमणिकारꣳ शुभेवपमꣳ शरव्यायाइषुकारꣳ हेत्यैधनुष्कारं कर्मणेज्याकारं दिष्टायरज्जुसर्जं मृत्यवे मृगयुमन्तकायश्वनिनम् ॥७॥ नदीभ्यः पौञ्जिष्ठमृक्षीकाभ्योनैषादं पुरुषव्याघ्राय दुर्मदं गन्धर्वाप्सरोभ्यो व्रात्यं प्रयुग्भ्य उन्मत्त ꣳ सर्पदेवजनेभ्योऽप्रतिपदमयेभ्यः कितवमीर्यतायाअकितवं पिशाचेभ्यो विदलकारीं यातुधानेभ्यः कण्टकीकारीम् ॥ ८ ॥ सन्धयेजारं गेहायोपपतिमात्त्यैपरिवित्तं निर्ऋत्यै परिविविदानमराध्या एदिधिषुः पतिं निष्कृत्यैपेशस्कारी ꣳ संज्ञानाय स्मरकारीं प्रकामोद्यायोपसदं वर्णायानुरुधं वलायोपदाम् ॥ ९ ॥ उत्सादेभ्यः कुब्जं प्रमुदेवामनंद्वार्भ्यः स्राम ꣳ स्वमायान्धमधर्माय बधिरं पवित्रायभिषजं प्रज्ञानायनक्षत्रदर्शमाशित्तायै प्रश्निनमुपशित्ताया अभिप्रश्निनंमर्यादायै प्रश्नविवाकम् ॥ १० ॥ अर्मेभ्योहस्तिपंजवायाश्वपं पुष्ट्यै गोपालं वीर्यायाविपालं तेजसेऽजपालमिरायै कीनाशंकीलायसुराकारं भद्रायगृहपꣳश्रेयसेवित्तधमाध्यक्ष्यायानुक्षत्तारम् ॥ ११ ॥ भायैदार्वाहारं प्रभाया अग्न्येधं ब्रध्नस्यविष्टपायाभिषेकारं वर्षिष्ठायनाकायपरिवेष्टारं देवलोकाय पेशितारं मनुष्यलोकाय

ShriGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gan

प्रकरितारम् ५ सर्वेभ्यो लोकेभ्य उपसेक्तारमव ऋत्यैवधायोपमन्त्रि
मेधाय वासः पल्पूलीं प्रकामाय जरयित्रीम् ॥ १२ ॥ ऋतयेस्तेन
वैरहत्यायपिशुनं विविक्तयेक्षत्तारमौपद्रष्ट्र्याय्यनुक्षत्तारं बलाय
रंभूम्ने परिष्कन्दं प्रियाय प्रियवादिनमरिष्ट्या अश्वसाद ५ स्व
लोकाय भागदुघंवर्षिष्ठायनाकाय परिवेष्टारम् ॥ १३ ॥ मन्यवेप्रम
क्रोधाय निसरं योगाय योक्तार ५ शोकायाभिसर्त्तारं क्षेमायविमो
मुत्कूल निकूलेभ्यस्त्रिष्टिनंवपुषे मानस्कृत ५ शीलायाञ्जनी
निर्ऋत्यै कोशकारीं यमायासूम् ॥१४॥ यमाययमसूमथर्वभ्यो
५ सम्वत्सराय पर्यायिणीं परिवत्सरायाविजातामिदावत्सरायातीं
मिद्वत्सरायातिष्कद्वरीं वत्सरायविजर्जरा ५ संवत्सराय पलिक्नीमु
ऽजिनसन्ध ५ साध्येभ्यश्चर्मम्नम् ॥ १५ ॥ सरोभ्यो धैवरमुपस्थ
भ्योदाशं वैशन्ताभ्यो वैन्दं नड्वलाभ्यः शौष्कं पाराय मांग
वाराय कैवर्त्ततीर्थेभ्य आन्दं विषमेभ्यो मैनालं स्वनेभ्यः पौ
गुह्याभ्यः किरात ५ सानुभ्यो जम्भकं पर्वतेभ्यः किंपूरुषम्
॥ १६ ॥ बीभत्सायै पौल्कसं वर्णायहिरण्यकारं तुलायै वा
पश्चादोषायग्लाविनं विश्वेभ्योभूतेभ्यः सिध्मलं भूत्यै जागरणम
स्वपनमार्त्यै जनवादिनं वृद्ध्या अपगल्भ ५ स ५ शराय प्रच्छि
॥ १७ ॥ अक्षराजाय कितवं कृतायादिनवदर्शं त्रेतायैकल्पिनंद्वापरा
धिकल्पिनमास्कन्दाय सभास्थाणुं मृत्यवेगोव्यच्छमन्तकायग
क्षुधेयोगांविकृन्तन्तंभिक्षमाण उपतिष्ठति दुष्कृतायवरक
पाप्मने सैलगम् ॥१८॥ प्रतिश्रुत्काया अर्त्तनं घोषायभषमन्ताय
दिनमनन्ताय मूक ५ शब्दायाडम्बराघातं महसे वीणावादं क्रोश
णवध्ममवरस्पराय शंखध्मं वनाय वनपमन्यतोऽरण्यायद्वा
॥१९॥ नर्मायपुंश्चलू ५ हसायकारिं यादसे शाबल्यां ग्रामण्यंगण
भिक्रोशकंतान्महसे वीणावादं पाणिघ्नं तृणवध्मंतानृतायान
तलवम् ॥ २० ॥ अग्नयेपीवानं पृथिव्यैपीठसर्पिणं वायवेचाय
मन्तरिक्षायव ५ शनर्त्तिनं दिवेखलति ५ सूर्यायहर्यतं
किर्मिरंचन्द्रमसे किलासमह्नेशुक्लं पिंगाक्ष ५ रात्र्यै कृष्णंपिंग
॥ २१ ॥ अथैतानष्टौविरूपानालभतेऽतिदीर्घंचातिह्रस्वं चाति
चातिकृशं चातिशुक्लं चातिकृष्णंचातिकुल्बंचातिलोमशंच । अ
अब्राह्मणास्ते प्राजापत्याः । मागधः पुंश्चलीकितवः क्लीबोशूद्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ब्राह्मणास्तेप्राजापत्याः ॥ २२ ॥ इति श्लोकाध्याय ॥

(४) मण्डलाध्याय-आं यदेतन्मण्डलं तपति तन्महदुक्थंता ऋचः सऋचांलोकोऽथयदेतदर्चिर्दीप्यते तन्महाव्रतंतानिसामानि ससाम्नांलोकोऽथ यएष एतस्मिन्मण्डले पुरुषः सोऽग्निस्तानियजू ँ षि सयजुषांल्लोकः ॥ १ ॥ सैषात्रय्येवविद्यातपति तद्ध तदप्यविद्वा ँ स आहुस्त्रयीवा एषाविद्यातपतीति वाग्घैवतत्पश्यन्ती वदति ॥२॥ सएष एवमृत्युर्यएषएतस्मिन्मण्डले पुरुषोऽथैतदमृतंयदेतदर्चिर्दीप्यते तस्मान्मृत्युर्न म्रियते मृतेह्यन्तस्तस्मादुन दृश्यते मृतेह्यन्तः ॥ ३ ॥ तदेषश्लोको भवति-अन्तरं मृत्योरमृतमित्यवर ँ ह्येतन्मृत्योरमृतं मृत्यावमृतमाहितमित्येतस्मिन्हिपुरुषएतन्मण्डलं प्रतिष्ठितंतपति मृत्युर्विवस्वन्तंवस्तइत्यसौ वाआदित्योविवस्वानेषह्यहोरात्रे विवस्ते तमेषवस्ते सर्वतोह्येनेन परिवृतोमृत्योरात्मा विवस्वतीत्येतस्मिन्हि मण्डल एतस्यपुरुषस्यात्मैतदेषश्लोकोभवति ॥४॥ तयोर्वा एतयोरुभयोरेतस्य चार्चिष एतस्यच पुरुषस्यैतन्मण्डलं प्रतिष्ठातस्मान्महदुक्थं परस्मै नश ँ सेन्नेदेतां प्रतिष्ठां छिनद्दा इत्येता ँ ह्यसप्रतिष्ठां छिन्तेयोमहदुक्थं परस्मैश ँ सतितस्मादुक्थशसंभूयिष्ठंपरिचक्षते प्रतिष्ठा छिन्नोहि भवतीत्यधिदैवतम् ॥ ५ ॥ अथाधियज्ञम्-यदेतन्मण्डलंतपत्यय ँ सरुक्मोथयदेतदर्चिर्दीप्यत इदंतत्पुष्करपर्णमापोह्येताआपः पुष्करपर्णमथ य एषएतस्मिन्मण्डले पुरुषोयमेव सयोय ँ हिरण्मयः पुरुषस्तदेतदेवै तन्त्रय ँ संस्कृत्येहोपयन्ते तद्यज्ञस्यैवानुस ँ स्थामूर्द्ध्वमुत्क्रामति तदेतमप्येतियएष तपतितस्मादग्निन्नाद्रियेत परिहन्तुममुत्र ह्येषतदा भवतीत्यु एवाधियज्ञम् ॥ ॥ ६ ॥ अथाध्यात्मम्-यदेतन्मण्डलं तपति यश्चैषरुक्म इदंतच्छुक्लमत्तन्नयदेतदर्चिर्दीप्यते येच्चैतत्पुष्करपर्णमिदं तत्कृष्णमक्षन्नथय एषएतस्मिन्मण्डले यश्चैषहिरण्मयोऽयमेवसयोयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषः ॥ ७ ॥ यएषएवलोकं पृणतामेषसर्वोग्निरभिसम्पद्यते तस्यैतन्मिथुनं योय ँ सव्येक्षन् पुरुषोर्धमहैतदात्मनो यन्मिथुनं यदात्रै सहमिथुनेनाथसर्वोथकृत्स्नंकृत्स्नतायै यद्यत्ते द्वैभवतो द्वन्द्व ँ हि मिथुनं प्रजननं तस्माद्द्वेद्वेलोकंपृणे उपधीयेते तस्मादुद्वाभ्यां द्वाभ्यांचितिं प्रणयन्ति ॥८॥ सएषएवेन्द्रः योयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषोथेयमिन्द्राणीताभ्यां देवाएतांविधृतिमकुर्वन्नासिकान्तस्माज्जायाया अन्तेनाश्नीयाद्वीर्यवान्हास्माज्जायते वीर्यवन्तमुहैता जनयति यस्या अन्तेनाश्नाति ॥ ९ ॥ तदेतद्व्रतं ँ राज-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

eGangotri/Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

न्यबन्धवो मनुष्याणामनुतमां गोपायन्ति तस्मादुतेषुवीर्यवान् जा
मृतवाकावयसा ँ साक्षिप्रश्येनं जनयति ॥ १० ॥ तौ हृदयस्या
प्रत्यवेत्य मिथुनीभवतस्तौ यदामिथुनस्यान्तं गच्छतोऽथहैतत्पु
स्वपिति तद्यथाहैवेदम्मानुषस्यमिथुनस्यान्तं गत्वा संविदइवभवत
व ँ हैवैतदसंविद इवभवात दैव ँ ह्येतन् मिथुनं परमोह्येष आ
॥११॥ तस्मादेवं वित्स्वप्यात् । लोक्य ँ हैतेतद्देवते मिथुनेन
धाम्नासमर्द्धयति तस्मादुहस्वपन्तं धुरेवनबोधयेन्नेदेतेदेवते
भवन्त्यौ हिनसानीति तस्मादुहैतत्सुषुपुषः श्लेष्मणमिवमुखं
ते एवतद्देवते रेतः सिञ्चतस्तस्माद्रेतस इद ँ सर्व ँ सम्भवति
दं किञ्च ॥ १२ ॥ सएषएवमृत्युः । यएष एतस्मिन्मण्डले पु
यश्चायं दक्षिणे क्षन्पुरुषस्तस्यहैतस्य हृदये पादावतिहतौ
च्छिद्योत्क्रामति सयदोत्क्रामत्यथ हैतत्पुरुषोम्रियते तस्मादुहैतत्
हुराच्छेद्यस्येति ॥ १३ ॥ एषउएवप्राणः । एषहीमाः सर्वाः
प्रणयति तस्यै तेप्राणाः स्वाः सयदास्वपित्यथैनमेते प्राणाः स्वाश्रि
न्ति तस्मात्स्वाप्ययः स्वाप्ययो हवैत ँ स्वप्न इत्याचक्षते परोक्षमा
कामाहिदेवाः ॥ १४ ॥ सएतैः सुप्तोन कस्यचनवेदन मनसा सं
यति न वाचान्नस्यरसं विजानाति न प्राणेन गन्धं विजानाति न
षापश्यतिन श्रोत्रेण शृणोत्येत ँ ह्येते तदापीता भवन्ति स
सन्प्रजासुबहुधाव्याविष्टस्तस्मादेकासतीलोकम्पृणा सर्वमग्निम
भवत्यथ यदेकएवतस्मादेकः ॥ १५ ॥ तदाहुरेको मृत्युर्बहव
कश्चबहवश्चेति हब्रूयाद्यदहा सावमुत्रतेनैकोथ यदिह प्रजासु
व्याविष्टस्तेनोबहवः ॥ १६ । तदाहुरन्तिके मृत्युर्दूरा इत्यन्तिके
दूरेचेतिहब्रूयाद्यदहायमिहाध्यात्मन्तेनान्तिकेथ यदसावमु
दूरे ॥ १७ ॥ तदेष श्लोकोभवति-अन्नेभात्यपश्रितो रसाना ँ
मृतइति यदेतन्मण्डलंतपतितदन्नमथ यएव एतस्मिन्मण्डले पु
सोत्तास एतस्मिन्नन्ने पश्रितोभातीत्यधिदैवतम् ॥ १८ ॥ अथा
त्मिदमेव शरीरमन्नमथयोयं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषः सोत्ता स एत
न्नन्नेऽपश्रितोभाति ॥ १९ ॥ तमेतमग्निरित्यध्वर्यव उपासते । य
रित्येषहीद ँ सर्व ँ युनक्ति सामेति छन्दोगा एतस्मिन्हीद ँ सर्व ँ
नमुक्थमिति बह्वृचा एषहीद ँ सर्वमुत्थापयति यातुरितिशा
एतेन हीद ँ सर्व ँ यतं विषमिति सर्पाः सर्प इति सर्पविदऊर्णि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

र्थरितिमनुष्या मायेत्यसुराः स्वधेति पितरोदेवजन इति देवजनविदो रूपमिति गन्धर्वागंधइत्यप्सरसस्तं यथायथोपासते तदेवभवति तद्धैना मूत्रावतितस्मादेनमेवविदसर्वैरेवैतैरुपासीतसर्वं ॥ हैतद्भवति सर्वं देवमेतद्भूत्वावति ॥२०॥ सएष त्रीष्टकोऽग्निर्ऋगेका यजुरेका सामैका तद्यांकांचात्रर्चोपदधाति रुक्मएवतस्या आयतनमथयां यजुषा पुरुषएव तस्या आयतनमथया ॥ साम्ना पुष्करपर्णमेवतस्या आयतनमेव त्रीष्टकः ॥ २१ ॥ तेवाएते उभेएष च रुक्म एतच्चपुष्करपर्णमेतं पुरुषपीत उभेह्यृक्सामे यजुरपीत एवम्वेकेष्टकः ॥ २२ ॥ सएषएवमृत्युर्य एष एतस्मिन्मण्डले पुरुषो यश्चायं दक्षिणेऽक्षन्पुरुषः सएष एव विदआत्मा भवति स यदेवंविदस्माल्लोकात्प्रैत्यथैतमेवात्मानमभिसम्भवति सोऽमृतो भवतिमृत्युर्ह्यस्यात्मा भवति ॥ २३ ॥ इतिमण्डलब्राह्मण (मण्डलाध्याय) ॥

(५) सौम्यसूक्तम्-ॐ सोमोधेनुं सोमो अर्वन्तमाशुं सोमोवीरंकर्मण्यं ददाति । सादन्यंविदथ्यं सभेयं पितृश्रवणं यो ददाशदस्मै ॥ १ ॥ त्वमिमा ओषधीः सोमविश्वास्त्वमपो अजनयस्त्वंगाः । त्वमाततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वंज्योतिषा वितमोववर्थ ॥ २ ॥ देवेन नोमनसादेव सोमरायोभाग सहसावन्नभियुध्य । मात्वा तनदीशिषे वीर्यस्योभयेभ्यः प्रचिकित्सा गविष्टौ ॥ ३ ॥ अष्टौव्यख्यत्ककुभः पृथिव्यास्त्रीधन्वयोजना सप्तसिन्धून् । हिरण्याक्षः सवितादेव आगाद्दधद्रत्नानि दाशुषे वार्याणि ॥ ४ ॥ हिरण्यपाणिः सविता विचर्षणिरुभेद्यावापृथिवी अन्तरीयते । अपामीवांबाधतेवेति सूर्यमभिकृष्णेन रजसा द्यामृणोति ॥ ५ ॥ हिरण्यहस्तो असुरः सुनीथः सुमृडीकः स्ववा यात्वर्वाङ् । अपसेधन्रक्षसो यातुधानानस्थाद्देवः प्रतिदोषंगृणानः । ६ ॥ इति सौम्यसूक्त ॥

(६)-कूष्मांड सूक्तम्-ॐ यद्देवादेवहेडनं देवासश्चकृमावयम् । अग्निर्मातस्मादेनसोविश्वान्मुञ्चत्व हसः ॥ १ ॥ यदिदिवा यदि नक्तमेना सिचकृमा वयम् । वायुर्मातस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व हसः ॥ २ ॥ यदि जाग्रद्यदि स्वप्न एना सिचकृमा वयम् । सूर्योमा तस्मादेनसो विश्वान्मुञ्चत्व हसः ॥ ३ ॥ यद्ग्रामेयदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये । यच्छूद्रे यदर्ये यदेनश्चकृमावयं यदेकस्याधिधर्मणि तस्यावयजनमसि ॥ ४ ॥ इति कूष्मांडसूक्त ॥

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

(७) अग्निसूक्तम्-ॐ समास्त्वाग्नऋतवो वर्धयन्तु संवत्सरा ऋषयोयानिसत्या । संदिव्येन दीदिहिरोचनेन विश्वाआभाहि प्रदिशश्चतस्रः ॥ १ ॥ संचेद्धयस्वाग्ने प्रचबोधयैनमुच्चतिष्ठ महते सौभगाय । माचरिष्टुपसत्तातेअग्ने ब्राह्मणास्ते यशसः सन्तुमान्ये ॥ २ ॥ त्वामग्ने वृणते ब्राह्मणा इमेशिवो अग्ने संवरणे भवानः । सपत्नहाभिमातिजिच्च स्वेगये जागृह्यप्रयुच्छन् ॥ ३ ॥ इहैवाग्ने अधिधारयैनमिमा रयिं मात्वानिक्रन्पूर्वचितोनिकारिणः । क्षत्रमग्ने सुयमंतुभ्यमुपसत्ता वर्धतांते अनिष्टृतः ॥ ४ ॥ क्षत्रेणाग्ने स्वायुः सरभसस्व मित्रेणाग्ने मित्रधेये यतस्व । सजातानां मध्यस्था एधिराजा मग्ने विहव्यो दीदिहीह ॥ ५ ॥ अतिनिहो अतिसिन्धोऽत्यचित्तमत्यरातिमग्ने । विश्वाह्यग्ने दुरिता सहस्वाथास्मभ्यꣳसहवीरं रयिंदाः ॥ ६ ॥ अनाधृष्यो जातवेदा अनिष्टृतो विराडग्ने क्षत्रभृद्दीदिहीह । विश्वा आशाः प्रमुञ्चन्मानुषीर्भियः शिवेभिरद्यपरिपाहि वृधे ॥ ७ ॥ बृहस्पते सवितर्बोधयैनꣳ सꣳ शितंचित्संतरां शिशाधि । वर्धयैनं महते सौभगाय विश्व एनमनुमदन्तु देवाः ॥ ८ ॥ अमुत्र भूयादधयद्यमस्य बृहस्पतेरभिशस्तेरमुञ्च । प्रत्यौहतामश्विना मृत्युमस्माद्देवानामग्ने भिषजा शचीभिः ॥ ९ ॥ उद्वयं तमसस्परिस्वः पश्यन्त उत्तरम् । देवं देवत्रा सूर्यमगन्मज्योतिरुत्तमम् ॥ १० ॥ इति अग्निसूक्त ॥ इसे ही जातवेदस सूक्त और जातवेदस अनुवाक भी कहते हैं ।

(८) शान्त्यनुवाकम्—ॐ आनोभद्राः क्रतवो यन्तु० इत्यादि १० मंत्र यजुर्वेदियों के शान्त्यध्याय या शान्त्यनुवाक के नाम से प्रसिद्ध हैं जो ११० पृष्ठ में लिखे हैं ।

यहां पर यह जान लेना होगा कि मण्डप के दक्षिण द्वारपर द्वारपाल और जापक रहते हैं उनके पढ़ने या जपनेकेलिये [illegible] आदि होते हैं । द्वारपाल के लिये तो पूर्वप्रदर्शित रुद्राध्याय (रुद्रसूक्त), पुरुषसूक्त, श्लोकाध्याय, शुक्रियसूक्त, मण्डलाध्याय यही पांच हैं और जापककेलिये अप्रतिरथ (इन्द्रसूक्त), रुद्राध्याय जो रुद्राध्याय के भीतर ही ४८ से ५३ तक के ६ मंत्रों का [illegible] सौम्यसूक्त, कूष्मांडसूक्त, अग्नि (जातवेदस) सूक्त, सौपर्ण (विभ्राडनुवाक) और मूलशान्ति के अभिषेक में लिखा गया [illegible]

RajGuru Math; Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jai

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'ॐ पुनन्तुमापितरः' इत्यादि नौ मंत्रों का यजुर्वेदी और ऋग्वेदी पवमानसूक्त है वह, ये ७ पढ़ने को हैं।

(९) पश्चिमद्वारपर सामवेदी द्वारपाल और जापक होते हैं। उनमें द्वारपाल के लिये ९१० पृष्ठोक्त वामदेव्य सूक्तके सिवाय नीचे लिखे सूक्त हैं।

(१०) बृहत्सामसूक्तम्-ॐ त्वामिद्धि हवामहे सातौवाजस्य कारवः। त्वांवृत्रेष्विन्द्रसत्पतिं नरस्त्वां काष्ठास्वर्वतः ॥ १ ॥ सत्वं नश्चित्रवज्रहस्तधृष्णुयामहःसत्वानो अद्रिवः। गामश्वं रथ्यमिन्द्र-संकिरसत्रावाजंन जिग्युषे ॥ २ ॥

(११) ज्येष्ठसामसूक्तम्—ॐ मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानरमृत आजातमग्निम्। कवि ँ सम्राजमतिथिंजनाना-मासन्नः पात्रं जनयन्तदेवाः ॥ १ ॥ त्वां विश्वे अमृत जायमान ँ शिशुंनदेवा अभिसंनवन्ते। तवक्रतुभिरमृतत्वमायन्वैश्वानरयत्पि-त्रोरदीदेः ॥ २ ॥ नाभिं यज्ञाना ँ सदन ँ रयीणां महामाहावमभि संनवन्त। वैश्वानर ँ रथ्यमध्वराणां यज्ञस्यकेतुं जनयन्तदेवाः ॥३॥

(१२) रथन्तरसूक्तम्-ओं अभित्वाशूरनोनुमोदुग्धा इवधेनवः। ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥ १ ॥ त्वामिद्धि हवामहे सातौवाजस्य कारवः। त्वांवृत्रेष्विन्द्र सत्पतिं नरस्त्वां काष्ठा-स्वर्वतः ॥ २ ॥ अभिप्रवः सुराधसमिन्द्रमर्चयथाविदे। योजरितृ-भ्योमघवा पुरूवसुः सहस्रेणेवशिक्षति ॥ ३ ॥ तंवोदस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः। अभिवत्संनस्वसरेषुधेनव इन्द्रंगीर्भिर्नवामहे ॥ ॥ ४ ॥ तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्र ँ सबाध ऊतये। बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरेहुवे भरंनकारिणम् ॥ ५ ॥ तरणिरित्सिषासति वाजं पुरन्ध्यायुजा। आवइन्द्रं पुरुहूतं नमेगिरानेमिंतष्टेवसुद्रुवम् ॥ ६ ॥ पिबासुतस्य रसिनोमत्स्वानइन्द्रगोमतः। अपिर्नोबोधिसधमाद्ये वृधेऽस्माँ अवन्तु तेधियः ॥ ७ ॥ त्व ँ ह्येहिचेरवे विदाभगं वसु-त्तये। उद्वावृषस्व मघवन्गविष्टय उदिन्द्रश्वमिष्टये ॥ ८ ॥ नहिवश्चर-मंचनवसिष्ठः परिम ँ सते। अस्माकमद्यमरुतः सुते सचाविश्वे पिबन्तु कामिनः ॥ ९ ॥ माचिदन्यद्विश ँ सत सखायोमारिषण्यत। इन्द्रमित्स्तोता वृषण ँ सचासुते मुहुरुक्थाचश ँ सत ॥१०॥ इति ॥

(१३) पुरुषसूक्तम्-ओं सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्र-

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Vasishtha Tripathi Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri
CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2
CC-0. Jangamwadi Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

पात् । सभूमि ँ सर्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥ त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरुषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः । तथा विष्वङ् व्यक्रामदशनाऽनशने अभि ॥२॥ पुरुषएवेद ँ सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । पादोऽस्य सर्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥ तावानस्य महिमाततोज्यायाँश्च पूरुषः उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥ ४ ॥ ततोविराडजायत विराजो अधिपूरुषः । सजातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥ ५ ॥ कयानश्चित्र आभुवदूती सदावृधः सखा । कयाशचिष्ठया वृता ॥ ६ ॥ इति ॥

(१४) रुद्रसूक्तम्—ओं आवो राजानमध्वरस्य रुद्र ँ होतार सत्ययज ँ रोदस्योः । अग्निपुरातनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरथः वसे कृणुध्वम् ॥ १ ॥ इन्धे राजासमर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन । नरोहव्येभिरीडते सबाध आग्निरग्रमुषसामशोचि ॥२॥ इति ।

(१५) आज्यदोह और देवव्रतसूक्त-ओं मूर्द्धानं दिवो० इत्यादि मंत्र तीन बार पढ़े तो उसे आज्यदोह और 'ओं अधिक्षमि मित्रपतये०' इत्यादि वृषोत्सर्ग प्रकरण का वृष के त्यागका तीन बार पढ़े तो उसे देवव्रत कहते हैं ।

(१६) शान्तिकाध्यायः-ओं अवोध्याग्निर्ज्म उदेतिसूर्योऽविपुषाक्षत्रमह्यावे अर्चिषा । आयुक्षातामश्विनायातवेरथं प्रासावीद्देवः सविता जगत्पृथक् ॥१॥ यद्युञ्जाथे वृषणमश्विना रथं घृतेननो मधुनाक्षत्रमुक्षतम् अस्माकं ब्रह्मपृतनासु जिन्वतं वयं धना शूरसाता भजेमहि ॥ अर्वाङ् त्रिचक्रो मधुवाहनोरथो जीराश्वो अश्विनोर्यातुसुष्टुतः त्रिवन्धुरोमघवा विश्वसौभगः शंन आवक्षद्द्विपदे चतुष्पदे ॥ इन तीनों के पहले-ओं अवोध्यग्निः समिधाजनानां प्रतिधेनुमिव यतीमुषासम् । यह्वा इव प्रवयामुज्जिहानाः प्रभानवः सस्रतेनाकमच्छ यह मंत्र तीन बार पढ़देने से शांतिकाध्याय कहाता है ।

(१७) भारुंडसूक्त—ओं इमं स्तोममर्हते जातवेदसेरथमिव संमहेमामनीषया । भद्राहिनः प्रमतिरस्यस ँ सद्यग्ने सख्येमारिषामावयंतव ॥ १ ॥ मूर्द्धानं दिवो० ॥ २ ॥ वित्वदापोन एकमिद्भवन्तीः पृष्ठादुक्थेभिरग्ने जनयन्तदेवाः । तंत्वागिरः सुष्टुतयो वाजयन्तीः जिन्न गिर्वाहो जिग्युरश्वाः ॥ ३ ॥ आवोराजानमध्वरस्य० ॥ इन्धे राजा समर्योनमोभिर्यस्यप्रतीकमाहुतंघृतेन । नरो हव्येभिरीडते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सबाध आग्निरग्रमुषसामशोचि ॥ ५ ॥ प्रकेतुना बृहता यात्यग्निरा-रोदसी वृषभोरोरवीति । दिवश्चिदन्तादुपमामुदानडपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥ ६ ॥ अग्निन्नरोदीधितिभिररण्योर्हस्तच्युतंजनयत प्रशस्तम् । दूरेदृशं गृहपतिमथव्युम् ॥ ७ ॥ इन सातों को तीन बार पढ़ने से भारुण्डसूक्त होता है । मगर इन्हें तीन बार पढ़कर उसके बाद-'ओं भरामेध्मं कृणवामाहवींषि ते चितयन्तः पर्वणापर्वणावयम् । जीवातवे प्रतरां साधयाधियोऽग्ने सख्येमारिषामावयन्तव ॥ १ ॥ शकेमत्वासमिधं साधयाधियस्त्वेदेवाहविरदन्त्याहुतम् । त्वमादित्याँ आवहतान् ह्युश्म स्वग्ने सख्येमारिषामावयन्तव ॥ २ ॥ इन दो को भी पढ़ना होगा । तब भारुंडसूक्त पूरा होगा । सामवेदी जापक के लिये नीचे लिखे सूक्त हैं—

(१८) वैराजसूक्तम्-ओं पिबासोममिन्द्र मन्दतुत्वायंते सुषाव हर्यश्वाद्रिः । सोतुर्बाहुभ्यां सुयतोनार्वा ॥ १ ॥ यस्तेमदोयुज्यश्चारुरस्ति येनवृत्राणिहर्यश्वहंसि । सत्वामिन्द्र प्रभूवसो ममत्तु ॥ २ ॥ बोधासुमे मघवन्वाचमेमां यांते वसिष्ठो अर्चतिप्रशस्तिम् । इमाब्रह्मसधमादे जुषस्व ॥ ३ ॥ इति ॥

(१९) पूर्वोक्त सामवेदी पुरुषसूक्त ।

(२०) सौपर्णसूक्तम्-ओं उद्घेदभिश्रुतामघं वृषभं नर्यापसम् । अस्तारमेषिसूर्य ॥ १ ॥ नवयोनवतिं पुरोबिभेद बाह्वोजसा । अहिं चवृत्रहाऽवधीत् ॥ २ ॥ सन इन्द्रः शिवः सखाश्वावद्गोमद्यवमत् । उरुधारेवदोहते ॥ ३ ॥ इति ॥

(२१) रुद्रसंहिता या रुद्रसूक्त आवोराजानमित्यादि पूर्वोक्त ही है ।

(२२) शैशवसूक्त-ओं उच्चातेजातमन्धसोदिविषद्भूम्याददे । उग्रं शर्ममहिश्रवः ॥ १ ॥ सनइन्द्राय यज्यवे वरुणायमरुद्भ्यः । वरिवोवित्परिस्रव ॥ २ ॥ एनाविश्वान्यर्य आद्युम्नानि मानुषाणाम् । सिषासन्तोवनामहे ॥ ३ ॥ इति ॥

(२३) गायत्रसूक्त-ओं तत्सवितुर्वरेण्यं० इत्यादि गायत्री ॥ १ ॥ सोमानः स्वरणं कृणुहि ब्रह्मणस्पते । कक्षीवन्ताय औशिजः ॥ २ ॥ अग्न आयूंषि पवस आसुवोर्जमिषंचनः । आरेबाधस्वदुच्छुनाम् ॥ ३ ॥

(२४) ज्येष्ठसाम पूर्वोक्त । (२५) वामदेव्य पूर्वोक्त । (२६) बृहत्साम पूर्वोक्त । (२७) सौम्यसाम पूर्वोक्त ।

(२८) रौरवसूक्तम्-ॐ पुनानः सोमधारयापोवसानो अर्षसि ।

CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

आरत्नधायोनिमृतस्यसीदस्युत्सोदेवोहिरण्ययः ॥ १ ॥ दुहान ऊ-
र्दिव्यं मधुप्रियं प्रत्न ँ सधस्थमासदत् । आपृच्छ्यं धरुणं वाजसा-
सिनृभिर्धौतो विचक्षणः ॥ २ ॥ इति ॥

(२९) रथन्तरसूक्त पूर्वोक्त ।

(३०) विकर्णसूक्तम्-ओं विभ्राड्बृहत् पिबतुसोम्यं मध्वायुर्द-
यज्ञपतावविह्रुतम् । वातजूतोयोभिरक्षतित्मना प्रजाः पिपर्त्ति बहु-
विराजति ॥१॥ विभ्राड्बृहत्सुभृतं वाजसातमं धर्मं दिवोधरुणे सत्यमो-
तम् । अमित्रहावृत्रहा दस्युहन्तमंज्योतिर्यज्ञे असुरहा सपत्नहा ॥२॥
इद ँ श्रेष्ठं ज्योतिषांज्योतिरुत्तमं विश्वजिद्धनजिदुच्यते बृहत् । वि-
भ्राड् भ्राजोमहिसूर्योदृशउरुपप्रथे सहओजोअच्युतम् ॥ ३ ॥ इति ।

(३१) रक्षोघ्नसूक्तम्-ओं अग्ने रक्षाणोअ ँ हसः प्रतिस्क-
रीषतः । तपिष्ठैरजरोदह ॥१॥ अग्नेयुंक्ष्वाहि तवाश्वासोदेवसाधन
अरंवहंत्याशवः ॥ २ ॥ इति ॥

(३२) यशःसूक्तम्—ओं बृहदिन्द्रायगायत मरुतो वृत्रहन्त-
येनज्योतिरजनयन्नृता वृधोदेवं देवाय जागृवि ॥ १ ॥

उत्तरद्वारपर अथर्ववेदी द्वारपाल और जापकों के लिये
लिखे सूक्त हैं । द्वारपाल के लिये-(३३) आथर्वणसूक्तम्-ओं अ-
णां पितरं देवबन्धुं मातुर्गर्भं पितुरमुं युवानम् । यइमं यज्ञं
चिकेत प्रणोवोस्तमिहेहब्रवः ॥ १ ॥ इति ॥

(३४) आंगिरसूक्तसम्-ओं अंगिरसोनो पितरोनवग्वा अथर्व-
भृगवः सोम्यासः । तेषांवयं सुमतौ यज्ञियानामपिभद्रे सौ-
स्याम ॥ १ ॥ अंगिरोभिर्यज्ञियैरागहीह यमवैरूपैरिहमादयस्व
विवस्वन्तं हुवे यः पितातेऽस्मिन्बर्हिष्यां निषद्य ॥ २ ॥ इमं यमप्रस्त-
माहिरोहांगिरोभिः पितृभिः संविदानः । आत्वा मंत्राः कविशस्ता
वहन्त्वेनाराजन् हविषो मादयस्व ॥ ३ ॥ इत एत उदारुहन्दिव
ष्टान्यारुहन् । प्रभुर्जयो यथाद्यामंगिरसोययुः ॥ ४ ॥ इति ॥

(३५) नीलरुद्रसूक्तम्-ॐ याते रुद्रइषूमास्यदंगेभ्यो
यच । इदंतामद्यत्वद्वयं विषूचीं विवृहामसि ॥ १ ॥ यास्ते प्रतीच
योङ्गान्यनु विष्ठिताः । तासांते सर्वासां वयं निर्विषाणिहृयामसि
नमस्तेरुद्रास्यते नमः प्रतिहितायैनमो विसृज्यमानायै नमो
तितायै ॥ ३ ॥ इति ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(३६) अपराजितासूक्तम्-ॐ परिवर्त्मानि सर्वतइन्द्रः पूषाच सवतुः । मुह्यन्त्वद्यामूः सेनाअमित्राणां परस्तराम् ॥ १ ॥ मूढाअमित्राअस्तराशीर्षाणइवाहयः । तेषांवो अग्निमूढानामिन्द्रो हन्तुवरंवरम् ॥ २ ॥ ऐषुनह्यवृषाजिनं हरिणस्य मयंकृधि । पराङ् मित्रएषत्वर्वाची गौरुपेषतु ॥ ३ ॥ इति ॥

(३७) मधुसूक्तम्-ॐ मधुवाता० इत्यादि पूर्वोक्त ।

(३८) रोधससूक्तम्-ॐ अभयंद्यावापृथिवी इहास्तुनोऽभयंसोमः सवितानः कृणोतु । अभयंनोऽस्तूर्वन्तरिक्षं सप्तऋषीणां च हविषाभयंनो अस्तु ॥ १ ॥ अस्मैग्रामाय प्रदिशश्चतस्रऊर्जं संभूतं स्वस्ति सवितानः कृणोतु । असाविन्द्रो अभयंनः कृणोत्यन्यत्र राज्ञामभियातुमन्युः ॥ २ ॥ अनमित्रंनो अधरादनमित्रंनो उत्तरात् । इन्द्रामित्रं न पश्चादनमित्रं पुरस्कृधि ॥ ३ ॥ इति ॥

(३९) शान्तिकाध्याय-ॐ शन्नइन्द्राग्नी भवतामवोभिः शन्नइन्द्रावरुणारातहव्या । शमिन्द्रासोमा सुवितायशंयोः शन्नइन्द्रापूषणावाजसातौ ॥ १ ॥ शन्नोभगः शमुनः शंसोअस्तुशंनः पुरंधिः शमुसन्तुरायः । शन्नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शन्नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥ २ ॥ शन्नो धाता शमुधर्तानो अस्तु शंन उरूची -भवतु स्वधाभिः । शंरोदसी बृहती शन्नो अद्रिः शंनो देवानां सुहवानि सन्तु ॥ ३ ॥ शन्नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शन्नो मित्रावरुणावश्विना शम् । शन्नः सुकृतांकृतानि सन्तु शन्न इषिरो अभिवातु वातः ॥ ४ ॥ शन्नोद्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशयेनो अस्तु । शन्न ओषधीर्वनिनोभवन्तु शन्नो रजसपतिरस्तु जिष्णुः ॥ ५ ॥ शन्न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तुशमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः । शन्नो रुद्रो रुद्रेभिर्जलाषः शन्नस्त्वष्टाग्नाभिरिहश्रृणोतु ॥ ६ ॥ शन्नः सोमो भवतु ब्रह्मशन्नः शन्नोग्रावाणः शमुसन्तुयज्ञाः । शन्नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शन्नः प्रस्वः शम्वस्तु वेदिः ॥ ७ ॥ शन्न सूर्य उरुचक्षा उदेतु शन्नो भवन्तु प्रदिशश्चतस्रः । शन्नः पर्वता ध्रुवयो भवंतु शन्नः सिन्धवः शमुसन्त्वापः ॥ ८ ॥ शन्नो अदितिर्भवतु व्रतेभिः शन्नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः । शन्नो विष्णुः शमुपूषानो अस्तु शन्नो भवित्रं शम्वस्तुवायुः ॥ ९ ॥ शन्नो देवः सविताऽत्रायमाणः शन्नोभवन्तूषसो विभातीः । शंनः

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

पर्जन्यो भवतुप्रजाभ्यः शन्नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः ॥ १० ॥ इति द्वारपालसूक्तानि ।

जापकके लिये (४०) शान्तिकपौष्टिकानि–ओंशन्नइन्द्राग्नी इत्यादि।

(४१) पुरुषसूक्तम्–ओं सहस्रबाहुः पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् । सभूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ ॥ १ ॥ विराडिति पद्भिर्द्यामारोहत्पादोऽस्येहाभवत्पुनः । तथा व्यक्राद्विष्वङ्ङशनानशने अभि ॥ २ ॥ तावन्तो अस्य महिमानस्ततो ज्यायाँश्च पूरुषः । पादोस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥ ३ ॥ पुरुषएवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम् । उतामृतत्वस्येश्वरो यदन्येनातिरोहति ॥ ४ ॥ यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधाव्यकल्पयन् । मुखं किमस्य किं बाहू किमूरूपादा उच्यते ॥ ५ ॥ ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्योऽभवत् । मध्यं तदस्ययद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥ ६ ॥ चन्द्रमामनसो जातश्चक्षोः सूर्योअजायत । मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥७॥ नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत । पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ अकल्पयन् ॥ ८ ॥ विराडग्रे समभवद्विराजो अधिपूरुषः । सजातोऽत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥ ९ ॥ यत्पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत । वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥ १० ॥ तं यज्ञं प्रावृषा प्रौक्षन्पुरुषं जातमग्रतः । तेन देवा अयजन्त साध्यावसवश्चये ॥ ११ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः अजायन्तयेचकेचोभयादतः । गावोहजज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाताअजावयः ॥ १२ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः ऋचः सामानिजज्ञिरे । छन्दांसि जज्ञिरेतस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥ १३ ॥ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतः संभृतं पृषदाज्यम् । पशूंस्ताँश्चक्रे वायव्यानारण्यान्ग्राम्याश्च ॥ १४ ॥ सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिसप्तसमिधः कृताः । देवायद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरुषं पशुम् ॥ १५ ॥ मूर्धो देवस्य बृहतो अथर्वा सद्यसप्ततीः । राज्ञः सोमस्याजायन्त जातस्य पुरुषादधि ॥ १६ ॥

(४२) शान्तिसूक्तम्–ॐ शान्ता द्यौः शान्ता पृथिवी शान्तमिदं भुवनन्तरिक्षम् । शान्ता उदन्वतीरापः शान्तानः सन्त्वोषधीः ॥ १ ॥ शांतानि पूर्वरूपाणि शान्तन्नो अकृताकृतम् । शान्तं भूतं च भव्यं च सर्वमेव शमस्तुनः ॥ २ ॥ इयं या परमेष्ठिनी वाग्देवी ब्रह्मसंशिता । यथैव ससृजे घोरं तथैव शान्तिरस्तुनः ॥ ३ ॥ इयं यत्परमेष्ठिनं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वा ब्रह्मसंशितम् । येनैव समृजे घोरं तेनैव शान्तिरस्तुनः ॥ ४ ॥ इमानि यानि पञ्चेन्द्रियाणि मनःषष्ठानिमे हृदि ब्रह्मणा संशितानि । तैरेव समृजे घोरं तैरेव शान्तिरस्तुनः ॥ ५ ॥ शंनो मित्रः शं वरुणः शं विष्णुः शंप्रजापतिः । शन्न इन्द्रो बृहस्पतिः शन्नो भवत्वर्यमा ॥६॥ शन्नो मित्रः शंवरुणः शं विवस्वाञ्छमन्तकः । उत्पाताः पार्थिवान्तरिक्षाच्छंनो दिविचराग्रहाः ॥७॥ शन्नो भूमिर्वेपमाना शमुल्कानिर्हतंचयत् । शंगावो लोहितक्षीराः शंभूमिरवतीर्यती ॥८॥ नक्षत्रमुल्काभिहतं शमस्तुनः शन्नो निवाराःशमुसन्तु कृत्याः । शन्नो निखाता वलगाः शमुल्का देशोपसर्गाः शमुनो भवन्तु ॥९॥ शन्नो ग्रहाश्चद्रमसाः समादित्याश्चराहुणा । शन्नो मृत्युर्धूमकेतुः शंरुद्रास्तिग्मतेजसः ॥ १० ॥ शंरुद्राः शंवसवः शमादित्याः शमग्नयः । शन्नो महर्षयो देवा शं देवी शंबृहस्पतिः ॥ ११ ॥ ब्रह्म प्रजापतिर्धाता लोका वेदासप्तऋषयोऽग्नयः । तैर्मेकृतं स्वस्त्ययनमिन्द्रो मेशर्म यच्छतु ब्रह्मामे शर्म यच्छतु ॥ १२ ॥ विश्वेमेदेवाः शर्म यच्छन्तु सर्वेमेदेवाः शर्म यच्छन्तु यानि कानिचिच्छान्तानि लोके सप्तऋषयो विदुः । सर्वाणि शंभवन्तु मेशंमे अस्त्यभयंमे अस्तु ॥१३॥ पृथिवी शान्तिरन्तरिक्षं शान्तिर्द्यौःशान्तिरापः शान्तिरोषधयः शान्तिर्वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः शान्तिः सर्वेमेदेवाः शान्तिः शान्तिः शान्तिभिः । ताभिः शान्तिभिः सर्वाशान्तिभिः शमयाम्यहं यदिहघोरं यदिह क्रूरं यदिहपापं तच्छान्तं शिवंसर्वमेव शमस्तुनः ॥ १४ ॥ इति शान्तिसूक्तम् ॥

पूर्वद्वार पर ऋग्वेदी द्वारपाल और जापकों में द्वारपाल के सूक्त नीचे लिखे हैं–

(४३) श्रीसूक्तम्–मूलशान्तिके अभिषेक में–ओं हिरण्यवर्णां० इत्यादि १५ मंत्रों की श्रीसूक्त संज्ञा है । वहां प्रत्येक मंत्र के आदि में ओं' और अन्त में 'स्वाहा' होम के लिये लगाया है । उसे छोड़ देना चाहिये । बस, शेषका पाठ करना होगा ।

(४४) पवमानं सूक्तम्–ओं स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोमधारया । इन्द्राय पातवे सुतः ॥ १ ॥ रक्षोहा विचर्षणिरभियोनिमयोहतम् । द्रुणासधस्थमासदत् ॥ २ ॥ वरिवोधातमोभवमंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । पर्षिराधो मघोनाम ॥ ३ ॥ अभ्यर्षमहानां देवानां वीतिमन्धसा । अभिवाजमुतश्रवः ॥ ४ ॥ त्वामच्छाचरामसितदिदर्थं दिवे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

दिवे । इन्द्रोत्वेन आशसः ॥ ५ ॥ पुनातिते परिस्रुतं सोमं सूर्यस्य दुहिता । वारेण शश्वतातना ॥ ६ ॥ तमीमण्वीः समर्य आपो अच्छा योषणो दश । स्वसारः पायदिवि ॥ ७ ॥ तमीं हिन्वन्त्यग्रुवो अच्छा बाकुरं वृतिम् । त्रिधातु वारणं मधु ॥ ८ ॥ अभीममघ्न्या उत श्रीणंति धेनवः शिशुम् । सोममिन्द्राय पातवे ॥ ९ ॥ असर्जि मदेष्वा विश्वावृत्राणि जिघ्नते । शूरो मघा च मंहते ॥१०॥ पवस्व देव वीरति पवित्रं सोम रह्या । इन्द्रमिदो वृषाविश ॥ ११ ॥ आवच्छ्वा महिष्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः । आयोनिन्धर्णसिः सदः ॥ १२ ॥ अ ऋतप्रियं मधुधारा सुतस्यवेधसः । अपोवसिष्ठ सुक्रतुः ॥ १३ ॥ अ न्तंत्वामहीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः । यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥१४॥ अ द्रोअप्सुमामृजे विष्टंभो धरुणोदिवः । सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥ १ अचिक्रदद्वृषाहरिमहान्मित्रोनदर्शतः । संसूर्येण रोचते ॥ १६ ॥ वि स्नइन्दओजसा मर्मज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदायशुंभसे ॥१७॥ अ मदायघृष्वय उलोककृत्नुमीमहे । तवप्रशस्तयोमहीः ॥ १८ ॥ अ भ्यमिन्दमिन्द्रयुर्मध्वः पवस्वधारया । पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ॥ १ गोषाइन्दोनृषा अस्यश्वसावाजसाउत । आत्मायज्ञस्यपूर्व्यः ॥ २ एषदेवो अमर्त्यः पर्णवीरिवदीयति । अभिद्रोणान्यासदम् ॥२१॥ देवोविपाक्रतोतिह्वरांसिधावति । पवमानोअदाभ्यः ॥ २२ ॥ एष विपन्युभिः पवमानऋतायुभिः । हरिर्वाजायमृज्यते ॥२३॥ एषवि निवार्याशूरोयन्निवसत्वभिः । पवमानः सिषासति ॥ २४ ॥ एषदे र्थयतिपवमानोदशस्यति । आविष्कृणोतिवग्वनुम् ॥ २५ ॥ एष रभिष्टतोपोदेवोविगाहते । दधद्रत्नानिदाशुषे ॥२६॥ एषदिवं विध तिरोरजांसिधारया । पवमानः क्रनिक्रदत् ॥ २७ ॥ एषदिवंव्यासर्व रोरजांस्यस्पृतः । पवमानः स्वध्वरः ॥२८॥ एषप्रत्नेनजन्मनादेवोदेवे सुतः । हरिः पवित्रेअर्षति ॥२९॥ एषउस्यपुरुव्रतोजज्ञानोजनयन्वि धारयापवते सुतः ॥ ३० ॥ सनावसोमजेषिच पवमानमहिश्रव अथानोवस्यससस्कृधि ॥ ३१ ॥ सनाज्योतिः सनास्वर्विश्वाचसौभ भगा । अथानोवस्यससस्कृधि ॥३२॥ सनादक्षमुतक्रतुमपसोमसृजोत अथानोवस्यससस्कृधि (यही आगे ४०वें तक बार बार आवेगा) ॥ पवीतारः पुनीतनसोममिन्द्रायपातवे । अथा० ॥ ३४ ॥ त्वंसूर्यक जतवक्रन्वातवोतिभिः । अथा० ॥ ३५ ॥ तवक्रत्वातवोतिभिर्ज्योति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मसूर्यम् । अथा० ॥ ३६ ॥ अभ्यर्षस्वायुधसोमद्विवर्हसंरयिम् । अथा० ॥ ३७ ॥ अभ्यर्षानपच्युतोरयिंसमत्सुसासहिः । अथा० ॥ ३८ ॥ त्वां यज्ञैरवीवृधन्पवमानविधर्मणि । अथा० ॥ ३९ ॥ रयिंनश्चित्रमश्विनमिन्दोविश्वायुमामर । अथा० ॥ ४० ॥ समिद्धोविश्वतस्पतिः पवमानो विराजति । प्रीणन्वृषाकनिक्रदत् ॥ ४१ ॥ तनूनपात्पवमानःशृंगे शिशानोअर्षति । अन्तरिक्षेणरारजत् ॥ ४२ ॥ ईडेन्यःपवमानोरयिर्विराजतिद्युमान् । मधोर्धाराभिरोजसा ॥ ४३ ॥ वर्हिः प्राचीनमोजसापवमानः स्तृणन्हरिः । देवेषुदेवईयते ॥ ४४ ॥ उदातैर्जिहतेबृहद्द्वारोदेवीर्हिरण्ययीः । पवमानेनसुष्टुताः ॥ ४५ ॥ सुशिल्पेबृहतीमहीपवमानोवृषरथति । नक्तोषासानदर्शते ॥ ४६ ॥ उभादेवानृचक्षसाहोतारादैव्याहुवे। पवमानइन्द्रोवृषा ॥ ४७ ॥ भारतीपवमानस्यसरस्वतीडामही । इमंनो यज्ञमागमन्तिस्रोदेवीः सुपेशसः ॥४८॥ त्वष्टारमग्रजांगोपांपुरोयावानमाहुवे। इन्दुरिन्द्रोवृषाहरिः पवमानः प्रजापतिः ॥४९॥ वनस्पतिं पवमानमध्वासमंग्धिधारया । सहस्रवल्शंहरितंभ्राजमानंहिरण्ययम् ॥५०॥ विश्वेदेवाः स्वाहाकृतिंपवमानस्यागत । वायुर्बृहस्पतिः सूर्योग्निरिन्द्रंसजोषसः ॥ ५१ ॥ मन्द्रयासोमधारयावृषापवस्वदेवयुः । अव्योवारेष्वस्मयुः ॥५२॥ अभित्यंमद्यं मदमिंदमिन्द्रइतिक्षर । अभिवाजिनोऽअर्वतः ॥ ५३ ॥ अभित्यंपूर्व्यंमदंसुवानोअर्षपवित्रआ। अभिवाजमुतश्रवः॥५४॥ अनुद्रप्सासन्इदवआपोनप्रवतासरन् । पुनानाइन्द्रमाशत ॥५५॥ यमत्यमिवाजिनंमृजंतियोषणोदश । वनेक्रीडन्तमत्यविम् ॥५६॥ तंगोभिर्वृषणंरसंमदायदेववीतये । सुतंभरायसंसृज ॥ ५७ ॥ देवोदेवायधारयेन्द्रायपवतेसुतः । पयोदयस्यपीपयत् ॥५८॥ आत्मायज्ञस्यरंह्यासुवाणः पवतेसुतः । प्रत्नंनिपातिकाव्यम् ॥ ५९ ॥ एवापुनानइन्द्रयुर्मदंमदिष्ठवीतये । गुहाचिद्दधिषेगिरः ॥६०॥ असृग्रमिन्दवः पथाधर्मन्नृतस्य सुश्रियः । विदानाअस्ययोजनम् ॥ ६१ ॥ प्रधारामध्वोअग्रियोमहीरयो विगाहते । हविर्हविष्णुवन्द्यः ॥ ६२ ॥ प्रयुजोवाचोअग्रियोवृषावचक्रदद्वने । सद्माभिसत्योअध्वरः ॥ ६३ ॥ परियत्काव्याकविर्नृम्णावसानो अर्षति । स्वर्वाजीसिषासति ॥६४॥ पवमानोअभिस्पृधोविशोराजेवसीदति । यदीमृण्वन्तिवेधसः ॥ ६५ ॥ अव्योवारेपरिप्रियोहरिर्वनेषुसीदति। रेभोवनुष्यतेमती ॥६६॥ सवायुमिन्द्रमश्विनासाकं मदेन गच्छति । रणायो अस्य धर्मभिः ॥६७॥ आमित्रावरुणाभगंमध्वः पवन्तऊर्मयः ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gra

विदानाअस्यशक्मभिः ॥६८॥ अस्मभ्यंरोदसीरयिंमध्वोवाजस्यसातये
श्रवोवसूनिसंजितम् ॥ ६९ ॥ एतेसोमाअभिप्रियमिन्द्रस्यकाममक्षरन्
वर्धन्तोअस्य वीर्यम् ॥ ७० ॥ पुनानासश्चमूषदोगच्छन्तोवायुमाविशन्
ना । तेनोधांतुसुवीर्यम् ॥७१॥ इन्द्रस्यसोमराधसेपुनानोहार्दिचोदन
ऋतस्ययोनिमासदम् ॥ ७२ ॥ मृजंतित्वादशक्षिपोहिन्वन्तिसप्तधी
तयः । अनुविप्राअमादिषुः ॥ ७३ ॥ देवेभ्यस्त्वामदायकं सृजानमति
मेष्यः । संगोभिर्वासयामसि ॥ ७४ ॥ पुनानः कलशेष्वावस्त्राण्यव
हरिः । परिगव्यान्यव्यत ॥ ७५ ॥ मधोनआपवस्वनोजहिविश्वा अ
दिशः । इन्द्रोसखायप्राविश ॥ ७६ ॥ वृष्टिंदिवः परिस्रव सु
पृथिव्याअधि । सहोनः सोमपृत्सुधाः ॥ ७७ ॥ नृचक्षसंत्वावयमिन्द
पीतंस्वर्विदम् । भक्षीमहिप्रजामिषम् ॥ ७८ ॥ परिप्रियादिवः कविर्
यांसिनस्योर्हितः । सुवानोयातिकविक्रतुः ॥ ७९ ॥ प्रप्रक्षयायपन्य
जनायजुष्टोअद्रुहे । वीत्यर्षचनिष्ठया ॥ ८० ॥ ससूनुर्मातराशुचि
जातेअरोचयत् । महान्महीऋतावृधा ॥ ८१ ॥ ससप्तधीतिभिर्हितोनदी
जिन्वदद्रुहः । याएकमक्षिवावृधुः ॥ ८२ ॥ ताअभिसंतमस्तृतंमहेयुवान
दधुः । इन्दुमिन्द्रतवव्रते ॥ ८३ ॥ अभिवह्निरमर्त्यःसप्तपश्यतिवावहिः । दि
विर्देवीरतर्पयत् ॥ ८४ ॥ अवाकल्पेषुनःपुमस्तमांसिसोमयोध्य ॥ तानिपु
नजंघनः ॥ ८५ ॥ नूनव्यसेनवीयसेसूक्तायसाधयापथः । प्रत्नवद्रोच
यारुचः ॥ ८६ ॥ पवमान महिश्रवो गामश्वं रासिवीरवत् । सनाद
सनास्वः ॥ ८७ ॥ प्रस्वानासोरथाइवार्वन्तोनश्रवस्यवः । सोमासोर
अक्रमुः ॥ ८८ ॥ हिंवानासोरथाइवदधन्विरेगभस्त्योः । भरासः
रिणामिव ॥ ८९ ॥ राजानोनप्रशस्तिभिः सोमासोगोभिरंजते । यज्ञोन
धातृभिः ॥ ९० ॥ परिसुवानासइंदवो मदायबर्हणागिरा । सुताअ
धारया ॥ ९१ ॥ आपानासोविवस्वतोजनन्तऊषसो भगम् । सूरा
वितन्वते ॥ ९२ ॥ अपद्वारा मतीनां प्रत्नाऋण्वन्ति कारवः । वृ
हरसआयवः ॥ ९३ ॥ समीचीनास आसतेहोतारः सप्तजामयः । पद
कस्यपिप्रतः ॥ ९४ ॥ नाभानाभिंन आददे चतुश्चित्सूर्ये सचा । क
पत्यमादुहे ॥ ९५ ॥ अभिप्रियादिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहाहितम् । द
पश्यतिचक्षसा ॥ ९६ ॥ उपास्मैगायतानरः पवमानायेन्दवे । अभि
इयक्षते ॥ ९७ ॥ अभितेमधुनापयोथर्वाणोअशिश्रयुः । देवंदेवायदेव
॥ ९८ ॥ सनः पवस्वशंगवेशंजनायशमर्वते । शंराजन्नोषधीभ्यः ॥ ९

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बभ्रवेनुस्वतवसेरुणायदिविस्पृशे । सोमायगाथमर्चत ॥ १०० ॥ हस्त-
च्युतेभिरद्रिभिः सुतंसोमंपुनीतन । मधावाधावतामधु ॥ १०१ ॥ नम-
सेदुपसीदत इन्नेदभिश्रिणीतन । इन्दुमिंद्रेदधातन ॥ १०२ ॥ अमित्रहा
विचर्षणिः पवस्वसोमशंगवे । देवेभ्योअनुकामकृत् ॥ १०३ ॥ इन्द्राय
सोमपातवेमदायपरिषिच्यसे । मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥ १०४ ॥ पवमान
सुवीर्यंरयिंसोमरिरीहिनः । इदविंद्रेणनोयुजा ॥ १०५ ॥ सोमाअसृ-
ग्रमिदवः सुताऋतस्यसादने । इन्द्रायमधुमत्तमाः ॥ १०६ ॥ अभि-
विप्राअनूषतगावोवत्संनमातरः । इन्द्रंसोमस्यपीतये ॥ १०७ ॥ मदच्यु-
त्क्षेतिसादनेसिंधोरूर्माविपश्चित् । सोमोगौरीअधिश्रितः ॥ १०८ ॥ दि-
वोनाभाविचक्षणोव्योवारेमहीयते । सोमोयः सुक्रतुः कविः ॥ १०९ ॥ यः
सोमः कलशेष्वाँअन्तः पवित्रआहितः । तमिन्दुः परिषस्वजे ॥ ११० ॥
प्रवाचमिन्दुरिष्यतिसमुद्रस्याधिविष्टपि । जिन्वन्कोशंमधुश्चुतम् ॥ १११ ॥
नित्यस्तोत्रोवनस्पतिर्धीनामन्तःसबर्दुघः । हिन्वानोमानुषायुगा ॥ ११२ ॥
अभिप्रियादिवस्पदासोमोहिन्वानोअर्षति । विप्रस्यधारयाकविः ॥ ११३ ॥
आपवमानधारयरयिंसहस्रवर्चसम् । अस्मेइन्दोस्वाभुवम् ॥ ११४ ॥
इतिपवमानसूक्तम् ॥

(४५) सोमसूक्तम्—ॐ त्वंसोमप्रचिकितोमनीषात्वंरजिष्ठमनुने-
षिपन्थाम् । तवप्रणीतीपितरोनइन्दोदेवेषुरत्नमभजन्तधीराः ॥ १ ॥
त्वंसोमक्रतुभिः सुक्रतुर्भूस्त्वंदक्षैः सुदक्षोविश्ववेदाः । त्वंवृषावृषत्वे-
भिर्महित्वाद्युम्नेभिर्द्युम्न्यभवोनृचक्षाः ॥ २ ॥ राज्ञोनुतेवरुणस्यव्रता-
निबृहद्गभीरंतव सोमधाम । शुचिष्ट्वमसिप्रियोनमित्रोदक्षाय्योअर्यमे-
वासिसोम ॥ ३ ॥ यातेधामानिदिवियापृथिव्यायापर्वतेष्वोषधीष्वप्सु ।
तेभिर्नोविश्वैः सुमना अहेडन्राजन्त्सोमप्रतिहव्यागृभाय ॥ ४ ॥ त्वं
सोमासिसत्पतिस्त्वंराजोत वृत्रहा । त्वंभद्रोअसिक्रतुः ॥ ५ ॥ त्वंचसो-
मनोवशोजीवातुंनमरामहे । प्रियस्तोत्रोवनस्पतिः ॥ ६ ॥ त्वंसोममहे
भगंत्वंयूनऋतायते । दक्षं दधासिजीवसे ॥ ७ ॥ त्वन्नः सोमविश्वतो
रक्षाराजन्नघायतः । नरिष्येत्वावतुः सखा ॥ ८ ॥ सोमयास्तेमयो-
भुवऊतयः सन्तिदाशुषे । ताभिर्नोविताभव ॥ ९ ॥ इमंयज्ञमिदंवचोजुजु-
षाणउपागहि । सोमत्वन्नोवृधेभव ॥ १० ॥ सोमगीर्भिष्ट्वावयंवर्धयामो
वचोविदः । सुमृडीकोनआविश ॥ ११ ॥ ग यस्फानोअमीवहावसुवित्पु-
ष्टिवर्धनः । सुमित्रः सोमनोभव ॥ १२ ॥ सोमरारंधिनोहृदगावोनय-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

वसेष्वा । मर्यइवस्वओक्ये ॥१३॥ यः सोमसख्येतवरारणद्देवमर्त्यः । तंदक्षःसचतेकविः ॥१४॥ उरुष्याणोअभिशस्तेः सोमनिपाह्यं हसः । खासुशेवएधिनः ॥ १५ ॥ आप्यायस्वसमेतुतेविश्वतः सोमवृष्ण्यम् । भवावाजस्यसंगथे ॥ १६ ॥ आप्यायस्वमदिन्तमसोमविश्वेभिरंशुभिः । भवानः सुश्रवस्तमः सखावृधे ॥ १७ ॥ संतेपयांसि समुयन्तुवाजा वृष्ण्यान्यभिमातिषाहः । आप्यायमानोअमृतायसोमदिविश्रवांस्युत्तमानिधिष्व ॥१८॥ यातेधामानिहविषायजन्ति तातेविश्वापरिभूरस्तुयज्ञम् ।गयस्फानः प्रतरणः सुवीरोवीरहाप्रचरा सोमदुर्यान्॥१९॥ सोमोधेनुं सोमोअर्वन्तमाशुं सोमोवीरं कर्मण्यं ददाति । सादन्यं विदथ्यंसभेयंपितृश्रवणं योददाशदस्मै ॥२०॥ अषाडहं युत्सुपृतनासुपप्रिमप्सांवृजनस्यगोपाम् । भरेषुजांसुक्षितिंशुश्रवसंजयन्तंत्वामनुमदेम सोम ॥ २१ ॥ त्वमिमाओषधीः सोमविश्वास्त्वमपोऽअजनयस्त्वंगाः । त्वमाततन्थोर्वन्तरिक्षं त्वंज्योतिषावितमोववर्थ ॥२२॥ देवेननोमनसादेव सोमरायोभागंसहसावान्नभियुध्य । मात्वातनदीशिषे वीर्यस्योमयेन्द्रप्रचिकित्सागविष्टौ ॥ २३ ॥ इतिसोमसूक्तम् ॥

(४६) सुमङ्गलसूक्तम्–ओं कनिक्रदज्जनुषंप्रब्रुवाण इयर्ति वाचमरितेवनावम् । सुमंगलश्चशकुने भवासिमात्वाकाचिदभिभाविष्टगिदत् ॥ १ ॥ मात्वाश्येन उद्वधीन्मासुपर्णोमात्वाविददिषुमान्वीरोअस्ता । पित्र्यामनुप्रदिशंकनिक्रदत्सुमंगलोभद्रवादीवदेह ॥ २ ॥ क्रन्ददक्षिणतोगृहाणां सुमंगलोभद्रवादीशकुन्ते । मानः स्तेनईशतमाघशंसोवृहद्वदेमविदथेसुवीराः ॥ ३ ॥ इति सुमंगलम् ॥

(४७) शान्त्यध्यायः–अथर्ववेदीयशान्तिकाध्याय वाले दसमंडल को ज्योंका त्यों पढ़ उनके बाद पढ़े–शन्नोदेवाविश्वेदेवाभवन्तुशंसरस्वतीसहधीभिरस्तु।शमभिषाचःशमुरातिषाचःशन्नोदिव्याःपार्थिवाःशन्नोअप्याः॥११॥शन्नःसत्यस्यपतयो भवन्तु शन्नोअर्वन्तःशमुसन्तुगावः शन्नऋभवःसुकृतःसुहस्ताःशन्नोभवन्तुपितरोहवेषु॥१२॥शन्नोअजएकपाद्देवोअस्तु शंनोहिर्बुध्न्यः शंसमुद्रः ॥ शंनोअपांनपात्पेरुरस्तुशंपृश्निर्भवतुदेवगोपाः ॥१३॥ आदित्यारुद्रावसवोजुषंतेदंब्रह्मक्रियमाणंजुषध्वम् । वीयः । शृण्वंतुनोदिव्याः पार्थिवासोगोजाताउतयेयज्ञियासः ॥ १४ ॥ येदेवानां यज्ञियायज्ञियानांमनोर्यजत्राअमृताऋतज्ञाः । तेनोरासंतामुरुगायमद्ययूयं पातस्वस्तिभिः सदानः ॥१५॥ इति शान्तिकाध्यायः ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(४८) इंद्रसूक्तम्-ॐयोजात एवप्रथमो मनस्वान्देवोदेवान्क्रतुना पर्यभूषत्। यस्यशुष्माद्रोदसी अभ्यसेतांनृम्णस्यमह्ना सजनासइन्द्रः॥१॥ यः पृथिवींव्यथमानामदृंहद्यः पर्वतान्प्रकुपिताँअरम्णात् । योअन्तरिक्षं विममेवरीयोद्यामस्तभ्नात्सजनास इन्द्रः ॥ २ ॥ योहत्वाहिमरिणात्सप्तसिन्धून्यो गाउदाजदपधावलस्य । यो अश्मनोरन्तरग्निं जजान संवृक्समत्सुसजनासइन्द्रः ॥ ३ ॥ येनेमाविश्वाच्यवनाकृतानि योदासंवर्णमधरं गुहाकः । श्वघ्नीवयो जिगीवाँल्लक्षमाददुर्यः पुष्टानि सजनासइन्द्रः ॥ ४ ॥ यं स्मापृच्छन्ति कुहसेतिघोरयुतेमाहुर्नैषोअस्तीत्येनम् । सो अर्यः पुष्टीर्विजइवामिनातिश्रद्धस्मैधत्तसजनासइन्द्रः ॥५॥ योरध्रस्यं चोदितायः कृशस्ययोब्रह्मणोनाधमानस्यकीरेः । युक्तग्राव्णोयोषितासुशिप्रः सुतःसोमस्य सजनासइन्द्रः ॥ ६ ॥ यस्याश्वासः प्रदिशियस्यगावो यस्यग्रामायस्य विश्वेरथासः । यः सूर्यय उषसंजजानयोऽपांनेता सजनासइन्द्रः ॥ ७ ॥ यंक्रदसी संयती विह्वयेते परेवर उभया अमित्राः । समानं चिद्रथमानस्थिवांसा नाहवेते सजनास इन्द्रः ॥ ८ ॥ यस्मान्नऋतेविजयन्ते जनासोयं युध्यमानाअवसेहवन्ते । योविश्वस्यप्रतिमानंबभूवयो अच्युतच्युत्सजनासइन्द्रः ॥ ९ ॥ यः शश्वतोमह्यंनो दधानानमन्यमानाञ्छर्वाजघान । यः शर्धतेनानुददाति शृध्यांयोदस्योर्हन्तासजनासइन्द्रः ॥ १० ॥ यः शंबरंपर्वतेषुक्षियन्तं चत्वारिंश्यांशरद्यन्वविंदत् । ओजायमानंयो अहिंजघानदानुंशयानंसजनासइन्द्रः ॥ ११ ॥ यः सप्तरश्मिर्वृषभस्तुविष्मानवासृजत्सर्त्तवेसप्तसिन्धून् । योरोहिणमस्फुरद्वज्रबाहुर्द्यामारोहन्तं सजनासइन्द्रः ॥ १२ ॥ द्यावाचिदस्मैपृथिवीनमेते शुष्माचिदस्य पर्वताभयन्ते । यः सोमपानिचितोवज्रबाहुर्योवज्रहस्तः सजनासइन्द्रः ॥ १३ ॥ यःसुन्वन्तमवतियः पचन्तं यः शंसन्तं यः शसमानमूती । यस्यब्रह्मवर्धनं यस्यसोमो यस्येदंराधः सजनासइन्द्रः ॥१४॥ यः सुन्वतेपचते दुध्रआचिद्वाजं दर्दर्षि सक्रिलासिसत्यः । यन्तइन्द्रविश्वहप्रियासःसुवीरासोविदथ मावदेम ॥ १५ ॥ इति ॥

(४९) रक्षोघ्नसूक्तम्—यजुर्वेदियों का ही रक्षोघ्न ऋग्वेदियों का भी है।

ऋग्वेदी जापक के सूक्त ये हैं-(५०) रात्रिसूक्तम्—ओं रात्रीव्यख्यदायतीपुरुत्रादेव्यक्षभिः । विश्वाअधिश्रियोधित ॥ १ ॥ ओर्वप्रा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gov

अमर्त्यानिवतोदेव्युद्वतः । ज्योतिषाबाधते तमः ॥ २ ॥ निरुस्वसा
मस्कृतोषसंदेव्यायती । अपेदुहासते तमः ॥ ३ ॥ सानो अद्यवयं
वयंनिते यामन्नत्रिवृहि । वृक्षेनवसतिंवयः ॥ ४ ॥ निग्रामासो अवि
क्षत निपद्वन्तो निपक्षिणः । निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥ ५ ॥ यावयावृक
वृकंयवयस्तेन मूर्म्ये । अथानः सुतराभव ॥ ६ ॥ उपमापेपिशत्व
कृष्णव्यक्तमस्थित । उपक्षृणेवयातय ॥ ७ ॥ उपते गाइवाकरं
ष्वदुहितर्दिवः । रात्रिस्तोमंन जिग्युषे ॥ ८ ॥ इति ॥

(५१) रुद्रसूक्तम्-ओं इमारुद्राय तवसेकपर्दिनेक्षयद्वीराय प्र
रामहेमतीः । यथाशमसद्विपदेचतुष्पदेविश्वं पुष्टंग्रामेअस्मिन्नन
रम् ॥ १ ॥ मृडानोरुद्रोतनोमयस्कृधि क्षयद्वीरायनमसा विधेमि
यच्छंचयोश्चमनुरायेजेपितातदश्याम तवरुद्रप्रणीतिषु ॥ २ ॥ अ
मते सुमतिंदेवयज्ययात्तयद्वीरस्य तवरुद्रमीढ्वः । सुम्नायनिदि
अस्माकमाचरारिष्टवीराजुहवामतेहविः ॥ ३ ॥ त्वेषंवयंरुद्र यज
धवं कुंकविमवसेनिह्वयामहे । आरेअस्मद्दैव्यंहेडोअस्यतुसुमति
द्वयमस्यावृणीमहे ॥ ४ ॥ दिवोवराहमरुषं कपर्दिनंत्वेषंरूपंन
निह्वयामहे । हस्तेबिभ्रद् भेषजावार्याणि शर्मवर्मच्छर्दिरस्मभ्यं
॥ ५ ॥ इदंपित्र्येमरुतामुच्यतेवाचः स्वादोःस्वादीयो रुद्रायवर्धन
रास्वाचनोअमृतमर्तभोजनंत्मनेतोकायतनयायमृड ॥ ६ ॥ मानोमह
मुतमानो अर्भकंमानउक्षन्तमुतमानउक्षितम् । मानोवधीः पितर
मातरंमानः प्रियास्तनोरुद्ररीरिषः ॥ ७ ॥ मानस्तोके तनयेमान
मानोगोषुमानो अश्वेषुरीरिषः । वीरान्मानो रुद्रभामितोवधीर्हविष्म
सदमित्त्वाहवामहे ॥ ८ ॥ उपतेस्तोमान्पशुपाइवाकरंरास्वापितर
सुम्नमस्मे । भद्राहिसुमतिर्मृडयत्तमाथावयमव इत्तेवृणीमहे ॥
आरेतेगोघ्नमुतपुरुषघ्नंक्षयद्वीरायसुम्नमस्मेते अस्तु । मृडावर
धिचब्रूहि देवाधाचनःशर्मयच्छ द्विबर्हाः ॥ १० ॥ अवोचामनमो
अवस्यवः शृणोतुनोहवं रुद्रो मरुत्वान् । तन्नोमित्रो वरुणोमा
तामदितिः सिन्धुःपृथिवीउतद्यौः ॥ ११ ॥ इति रुद्रसूक्तम् ॥

(५२) पवमानसूक्तम् । (५३) सुमंगलसूक्तम् । ये दो
पहले लिखचुके हैं ।

(५४) पुरुषसूक्तम्—ओं सहस्रशीर्षा० । सभूमिं विश्वतो
त्यतिष्ठद्दशांगुलम् ॥ १ ॥ पुरुषएवेदं० ॥ २ ॥ एतावान० ॥ ३

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विपादूर्ध्व० ॥ ४ ॥ तस्माद्विराडजायतविराजो० ॥ ५ ॥ यत्पुरुषे-
ण हविषा० ॥ ६ ॥ (यजुर्वेदका १४ वां) । तंयज्ञं० (यजु० का ९ वां)
॥ ७ ॥ तस्माद्यज्ञात्० (छठां) ॥ ८ ॥ तस्माद्यज्ञात्० (७ वां)
॥ ९ ॥ तस्मादश्वा० (८ वां) ॥ १० ॥ यत्पुरुषंव्यदधुः० । मुखं
किमस्यकौ बाहूकाऊरूपादा उच्येते ॥ ११ ॥ ब्राह्मणोऽस्य० (११वां)
॥ १२ ॥ चन्द्रमा मनसोजातश्चक्षोः सूर्योअजायत । मुखादिन्द्रश्चा-
ग्निश्चप्राणाद्वायुरजायत ॥ १३ ॥ नाभ्या० (१३ वां) ॥ १४ ॥
सप्तास्यासन्० ॥ १५ ॥ यज्ञेन० ॥ १६ ॥ इति ॥ यजुर्वेदीयपुरुषसूक्त
के ही मंत्रों का क्रम उलट पलट कर और कहीं कहीं शब्द बदलकर
ऋग्वेदीय पुरुषसूक्त बना है अतएव हमने क्रम लिख दिया है और
जहां शब्दभेद है वह भी लिखा है ॥

(५५) वामदेव्यसूक्तम्-(पहले तीन मंत्र तो सामवेदी वामदे-
व्य वाले ही हैं । उनके बाद)-अभीन आववृत्स्व चक्रं नवृतमर्वतः ।
नियुद्भिश्चर्षणीनाम् ॥ ४ ॥ प्रवताहि क्रतूनामाहापदेवगच्छसि ।
अभक्षिसूर्यंसचा ॥५॥ संयत्तइन्द्रमन्यवः संचक्राणिदधन्विरे । अध-
त्वे अधसूर्ये ॥ ६ ॥ उतस्माहित्वामाहुरिन्मद्यवानंशचीपते । दातार-
मविदीधयुम् ॥ ७ ॥ उतस्मासद्य इत्परिशशमानाय सुन्वते ।
पुरूचिन्मंहसे वसु ॥ ८ ॥ नहिष्माते शतंचनराधोवरन्त आ-
मुरः । नच्यौत्नानिकरिष्यतः ॥ ९ ॥ अस्माँ अवन्तुतेशत-
मस्मान्सहस्रमूर्त्तयः ॥ अस्मान्विश्वा अभिष्टयः ॥ १० ॥ अस्माँ
इहावृणीष्व सख्याय स्वस्तये । महोरायेदिवित्मते ॥ ११ ॥ अस्माँ
अविद्धिविश्वहेन्द्र रायापरीणसा । अस्मान् विश्वाभिरूतिभिः ॥१२॥
अस्मभ्यंताँ अपावृधि व्रजाँ अस्तेवगोमतः । नवाभिरिन्द्रोतिभिः ॥१३॥
अस्माकं धृष्णुयारथो द्युमाँ इन्द्रानपच्युतः । गव्युरश्वयुरीयते ॥१४॥
अस्माकमुत्तमं कृधि परिश्रवो देवेषु सूर्य । वर्षिष्ठन्द्यामिवोपरि ॥१५॥
इति वामदेव्यसूक्तम् ॥

(५६) श्राद्ध में पितृब्राह्मणों के लिये पिंडदान से पूर्व अन्न
परोसचुकने पर पढ़ने के पितृमंत्र यह हैं-ओं उदीरतामवरउत्परास
उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः । असुं यईयुरवृका ऋतज्ञास्तेनोवन्तु
पितरो हवेषु ॥ १ ॥ अंगिरसोनः पितरोनवग्वा अथर्वाणोभृगवः सो-
म्यासः । तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपिभद्रे सौमनसे स्याम ॥ २ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

येनः पूर्वे पितरः सोम्यासोऽनूहिरेसोमपीथं वसिष्ठाः । तेभिर्यमः संर
राणो हवी ँ ष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥ ३ ॥ त्व ँ सोम क्रतु
कितो मनीषा त्व ँ रजिष्ठ मनुनेषि पन्थाम् । तव प्रणीती पितरो
इन्दो देवेषु रत्नमभजन्त धीराः ॥ ४ ॥ त्वयाहिनः पितरः सोमपा
कर्माणि चक्रुः पवमान धीराः । वन्वन्नवातः परिधी ँ रयोर्णु वीरेभि
रश्वैर्मघवाभवानः ॥ ५ ॥ त्वं सोमपितृभिः संविदानोऽनुद्यावापृथि
आततन्थ । तस्मैत इन्द्रो हविषा विधेम वय ँ स्याम पतयो
णाम् ॥ ६ ॥ बर्हिषदः पितरऊत्यर्वागिमा वो हव्याचकृमाजुषध्वम्
त आगतावसा शंतमेनाथा नःशंयोरपो दधात ॥ ७ ॥ आहं पितॄन्सु
दत्राँ अवित्सिन पातं च विक्रमणं च विष्णोः । बर्हिषदोये स्वधया सुत
भजन पित्वस्त इहागमिष्ठाः ॥८॥ उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु
धिषु प्रियेषु । त आगमन्तुत इह श्रुवन्त्वधिब्रुवन्तुतेवन्त्वस्मान् ॥
आयन्तु नः पितरः सोम्यासोऽग्निष्वात्ताः पथिभिर्देवयानैः। अस्मिन्
स्वधयामदन्तोधिब्रुवंतु तेवन्त्वस्मान् ॥१०॥ अग्निष्वात्ताः पितरः
गच्छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः । अत्ताहवींषि प्रयतानि बर्हिष्
रयि ँ सर्ववीरं दधातन ॥ ११ ॥ ये अग्निष्वात्ता ये अनग्निष्वा
मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते । तेभ्यः स्वराडसुनीतिमेतां यथा
तन्वं कल्पयाति ॥ १२ ॥ अग्निष्वात्तानृतुमतो हवामहे नाराश
से सोमपीथंय आशुः । तेनो विप्रासः सुहवा भवन्तु वय ँ स्या
पतयो रयीणाम् ॥ १३ ॥ इति पितृमंत्राः ॥

(५७) हविस्तोत्रम्–ओं सप्तव्याधा दशार्णेषु० इत्यादि दोहा

(५८) याज्ञवल्क्यीयगाथा–ओं योगीश्वरं याज्ञवल्क्यं संपूज्य मु
योऽब्रुवन् । वर्णाश्रमेतराणांनो ब्रूहि धर्मानशेषतः ॥ १ ॥ मन्वत्रि
ष्णुहारीतयाज्ञवल्क्योशनोंगिराः । यमापस्तम्बसंवर्त्ताः कात्यायन
बृहस्पती ॥ २ ॥ पराशरव्यासशंखलिखिता दक्षगौतमौ । शातात
वसिष्ठश्च धर्मशास्त्रप्रयोजकाः ॥ ३ ॥ इति ॥

(५९) सप्तार्चिस्तवम्-ओं मूर्तितानाममूर्त्तीनां पितॄणामर्चि
साम् । नमस्यामि सदातेषां ध्यायिनां दिव्यचक्षुषाम् ॥ १ ॥ रुद्रा
जनेतारो दक्षमारीचयोस्तथा । सप्तर्षीणां तथान्येषां तान्नमस्य
कामदान्॥२॥मन्वादीनां जनेतॄँश्च सूर्याचन्द्रमसोस्तथा। तान्नमस्य
हंसर्वान् पितरश्चार्णवेषुच ॥३॥ नक्षत्राणां ग्रहाणां च वाय्वग्नि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा । द्यावापृथिव्योश्च तथा नमस्यामि कृताञ्जलिः ॥ ॥ देवर्षीणां
जनेतॄंश्च सर्वदेवनमस्कृतान् । अभयस्य सदा दातॄन्नमस्येऽहं कृता-ञ्जलिः
॥ ५ ॥ प्रजापतेः कश्यपस्य सोमाय वरुणायच । योगेश्वरेभ्यश्चातथा
नमस्यामि कृतांजलिः ॥ ६ ॥ नमो गणेभ्यः सप्तभ्यस्तथा लोकेषु
सप्तसु । स्वयम्भुवे नमस्यामि ब्रह्मणे योगचक्षुषे ॥ ७ ॥ यदाधारा
पितृगणा योगमूर्तिधराहिते । नमस्यामि ततः सोमं पितरं जगता-
महम् ॥ ८ ॥ अग्निरूपाँस्तथैवान्यान्नमस्यामि पितॄनहम् । अग्नीषो-
मयं विश्वं यतएतद्वशेषतः ॥ ९ ॥ येतु तेजोमयाश्चैते सोमसूर्याग्नि-
मूर्तयः । जगत्स्वरूपिणश्चैव तथा ब्रह्मस्वरूपिणः ॥ १० ॥ तेभ्योऽखि-
लेभ्यो योगिभ्यः पितृभ्यो यतमानसः । नमो नमो नमस्तेमे प्रसीदन्तु
स्वधाभुजः ॥ ११ ॥ इति सप्तर्चिस्तवम् ॥

(६०) सामवेदी श्राद्ध के समय जपने की पितृसंहिता-ओं यद्वा
उविश्पतिः शितःसुप्रीतोमनुषोविशे । विश्वेदग्नि प्रतिरक्षांसिसेधति ॥ १ ॥
सनादग्नेमृणसियातुधानान्नत्वारक्षः सि पृतनासुजिग्युः । अनुहनसह-
मूरान्कयादोमातेहेत्यामुक्षतदैव्यायाः ॥ २ ॥ अक्षन्नमीमदन्त ह्यव-
प्रिया अधूषत । अस्तोषत स्वभावनवोविप्रानविष्ट्यामतीयोजाविन्द्रते
हरी ॥ ३ ॥ अभित्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामङ्गोषिण मवावशन्तवाणीः ।
वनावसानो वरुणोनसिन्धुर्विरत्नधादयते वार्याणि ॥ ४ ॥ अक्रान्त्स-
मुद्र प्रथमेविधर्मञ्जनयन्प्रजा भुवनस्य गोपाः । वृषापवित्रेअधिसानोअ-
व्येवृहत्सोमो वावृधेस्वानोअद्रिः ॥ ५ ॥ कनिक्रन्तिहरिरासज्यमानः
सीदन्वनस्यजठरेपुनानः । नृभिर्यतःकृणुते निर्णिज गामतोमतिं जनयन्त
स्वधाभिः ॥ ६ ॥ इतिपितृसंहिता ॥

(६१) माधुच्छन्दस संहिता-ओं इदं ह्यन्वोजसासुतः राधानपांते ।
पित्रात्वास्यगिर्वण ॥ १ ॥ त्वामिदाह्योनरोऽपीप्यन्वज्रिन्भूर्णयः । सइ-
न्द्रस्तोमवाहस इहश्रुध्युपस्वसरमागहि ॥ २ ॥ स पूर्व्योमहोनां वेनः
क्रतुभिरानजे । यस्य द्वारा मनुः पिता देवेषु धिय आनजे ॥ ३ ॥
तुभ्यमिन्द्रुर्युवा कविरमितौजा अजायत । इन्द्रोविश्वस्य कर्मणोधर्त्ता
वज्री पुरुष्टुतः ॥ ४ ॥ उप प्रक्षे मधुमति क्षियन्तः पुष्येम रयिं धीमहेत
न्द्रः ॥ ५ ॥ पवस्व सोम मधुमां ऋतावाऽपो वसानो अधिसानो अव्ये ।
अव द्रोणानि घृतवन्ति रोह मदिन्तमो मत्सर इन्द्रपानः ॥ ६ ॥ सुरूप-
कृत्नुमूतये सुदुघामिव गोदुहे । जुहूमसि द्यवि द्यवि ॥ ७ ॥ इति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

माधुच्छंद...हता ॥

(६२) ॐ भद्रा अग्नेर्वध्र्यश्वस्यसंदृशोवामीप्रणीतिः सुरणा ते तयः । यदीं सुमित्राविशो अग्रइन्धते घृतेनाहुतो जरतेदविद्युत् ॥ घृतमग्नेर्वध्र्यश्वस्यवर्धनं घृतमन्नंघृतम्वस्य मेदनम् । घृतेनाहुत ऊर्ध्वो विपप्रथेसूर्यइव रोचते सर्पिरासुतिः ॥ २ ॥ यत्ते भनुर्यदुरुसुमित्रः समीधे अग्ने तदिदंनवीयः । सरेवच्छोचसगिरोजुषस्वकृजंदर्षिसइहश्रवोधाः ॥ ३ ॥ यत्वापूर्वमीडितोवध्र्यश्वः समीधे अग्ने इदंजुषस्व । सनस्त्रिपाउतभवातनूपादात्रं रक्षस्वयदिदंतेअस्मे ॥ ४ ॥ भवाद्युम्नीवाध्र्यश्वोतगोपामात्वातारीदभिमातिर्जनानाम् । शृण्वष्ण्युश्च्यवनः सुमित्रः प्रनुवोचंवाध्र्यश्वस्यनाम ॥ ५ ॥ समज्याकृत्वसूनिदासावृत्रारण्यार्याजिगेथ । शूरइवधृष्णुश्च्यवनोजनानांत्वंतृतनायूँरभिष्याः ॥ ६ ॥ दीर्घतंतुर्बृहदुक्षायमग्निः सहस्रस्तरीः शतदा ऋभ्वा । द्युमान्द्युमत्सुनृभिर्मृज्यमानः सुमित्रेषुदीदयो देवयत्सु ॥ ७ ॥ त्वेधेनुः सुदुघाजातवेदोसश्चतेवसमनासबधुक् । त्वंनृभिर्दक्षिणावद्भिरग्नेसुमित्रोभिरिध्यसे देवयद्भिः ॥ ८ ॥ देवाश्चित्ते अमृताजातवेदोहिमानंवाध्र्यश्वप्रवोचन् । यत्संपृच्छंमानुषीर्विशआयन्त्वंनृभिरुस्त्वावृधेभिः ॥ ९ ॥ पितेवपुत्रमबिबभरुपस्थेत्वामग्नेवाध्र्यश्वः सपर्यन् जुषाणो अस्यसमिधं यविष्ठोतपूर्वीं अवनोर्वाधतश्चित् ॥ १० ॥ प्रदग्निर्वध्र्यश्वस्यशत्रून्नृभिर्जिगायसुतसोमवद्भिः । समनंचिदृत्रभानोवाधंतमभिनद्वृधश्चित् ॥ ११ ॥ अयमग्निर्वध्र्यश्वस्यवृत्रनकात्रेद्धोनमसोपवाक्यः । सनोअजामीरुतवा विजामीरिशर्धतो वाध्र्यश्व ॥ १२ ॥ इति

(६३) ॐ इन्द्रं विश्वाअवीवृधन्त्समुद्रव्यचसंगिरः । रथीतमंनां वाजानांसत्पतिंपतिम् ॥ १ ॥ सख्येतइन्द्रवाजिनोमाभेमशचनते । त्वामभिप्रणोनुमोजेतारमपराजितम् ॥ २ ॥ पूर्वीरिन्द्रस्यरातयो नविदस्यंत्यूतयः । यदीवाजस्य गोमतः स्तोतृभ्योमंहतेमघम् ॥ ३ ॥ पुरांभिन्दुर्युवाकविरमितौजाअजायत । इन्द्रोविश्वस्यकर्मणोधीरो जनस्यपुरुहूतः ॥ ४ ॥ त्वंवलस्यगोमतोपावरद्रिवोविलम् । त्वांदेवाअविभ्युषस्तुज्यमानासआविषुः ॥ ५ ॥ तवाहं शूरराातिभिः प्रत्यायंसिन्धुमावदन् । उपातिष्ठन्तगिर्वणो विदुष्टेतस्यकारवः ॥ ६ ॥ अभिभिरिन्द्रमायिनं त्वंशुष्णमवातिरः ॥ विदुष्टे तस्य मे धिरास्तोतारो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ष्युत्तिरः ॥ ७ ॥ इन्द्रमीशानमोजसाभिस्तोमा अनूषत । सहस्रं-
यस्यरातय उतवासन्तिभूयसीः ॥ ८ ॥ इति ॥

(६३) ॐ कद्रुद्रायप्रचेतसेमीढुष्टमायतव्यसे । वोचेमशंतमं-
हृदे ॥ १ ॥ यथानो अदितिः करत्पश्वेनृभ्योयथागवे । यथातोकाय
रुद्रियम् ॥ २ ॥ यथानोमित्रोवरुणोयथारुद्रश्चिकेतति । यथाविश्वेस-
जोषसः ॥ ३ ॥ गाथपतिंमेधपतिं रुद्रं जलाषभेषजम् । तच्छंयो सुम्न-
मीमहे ॥ ४ ॥ य शुक्रइवसूर्योहिरण्यमिवरोचते । श्रेष्ठोदेवानांवसु ॥ ५ ॥
शंनः करत्यर्वतेसुगंमेषायमेष्यै । नृभ्योनारिभ्योगवे ॥ ६ ॥ अस्मेसोम
श्रियमधिनिधेहिशतस्यनृणाम् । महिश्रवस्तुविनृम्णम् ॥ ७ ॥ मानः
सोमपरिबाधोमारातयोजुहुरन्त । आनइन्द्रोवाजेभज ॥ ८ ॥ यास्ते
प्रजाअमृतस्यपरस्मिन्धामन्नृतस्य । मूर्धानाभासोमवेन आभूषंती
सोमवेद ॥ ९ ॥ इति ॥ (६२, ६३, ६४,) मंत्र ६६८ पृष्ठ के हैं ।

(६५) ध्रुवसूक्त–ॐ ध्रुवाद्यौर्ध्रुवा पृथिवीध्रुवं विश्वमिदं जगत् ।
ध्रुवाश्चेमेनगाः सर्वेध्रुवाः पतिकुलेस्त्रियः ॥ १ ॥ ॐ ध्रुवाद्यौर्ध्रुवा पृथिवी
ध्रुवासः पर्वताइमे । ध्रुवं विश्वमिदंजगद्ध्रुवोराजा विशामयम् ॥
॥ २ ॥ ध्रुवंतेराजावरुणो ध्रुवंदेवो बृहस्पतिः । ध्रुवंत इन्द्रश्चाग्निश्च
राष्ट्रं धारयतांध्रुवम् ॥ ३ ॥ ध्रुवं ध्रुवेण हविषाभिसोमं भृशामसि ।
अथोत इन्द्रकेवलीर्विशो बलिस्करत् ॥ ४ ॥ इति ॥

५०९ पृष्ठ में जिन वर्त्तनों का उल्लेख है उन्हें यदि नाम लेकर अलग अलग दान करना चाहें तो उसके लिये उनके संस्कृत नाम कोष्ठों में लिख देते हैं । वे ये हैं; थाली (स्थाली), कटोरी, तश्तरी (पात्री), कटोरा, गिलास (पानपात्र), लोटा (कंस, जलपात्र), झारी, गडुआ (कर्करी), बटली (उखा), कलछी (दर्वी) संड़सी (सन्दंश), चिमटा (अलातग्रह), पिकदान (पतद्ग्रह), तवा (पिष्टपचन), कड़ाही (कटाहिका), कसोरा (शराव), मटका (मणिक), चम्मच (दर्विका) ।

१८० पृष्ठ में जिस इन्द्रध्वजका उल्लेख है, उसकी लम्बाई किसी किसीने २८ हाथ लिखी है । इति कर्मशेष ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

(१०)

लग्न और मुहूर्त्त ।

इस ग्रन्थ में ज्योतिषसम्बन्धी इतना विषय अनिवार्य रूप से आव
श्यक है जिसके विना साधारणतया घरेलू काम कभी कभी रुक जा
हैं और नहीं जाने विना भारी अड़चन आ खड़ी होती है। अतः
इस प्रकरण में हम ज्योतिष की ऐसी ही बातों का संग्रह हिन्दी
करदेंगे । जिन्हें उनके मूलभूत वचन देखने की आवश्यकता हो
संस्कृत के ज्योतिष ग्रन्थों को देखकर अपनी तृप्ति कर सकते हैं।

१—कुछ संकेत ।

साधारणरीति से ज्योतिष दो विभागों में विभक्त है, गणित
फलित । गणित उसे कहते हैं जिसमें हरेक बात की सचाई
सच्चे गणित में आईने की तरह झलकती है और सन्देह को
नहीं रहजाता है और इस प्रकार गणित से जो फल निकलता
वह प्रत्यक्ष ही होता है । जैसे दो और दो का जोड़ चार होता
इसमें किसीके संदेह को स्थान नहीं रहजाता है । उसी तरह
समय पर सूर्य, चन्द्र के ग्रहण होने; बृहस्पति, शुक्र, आदि
तथा अन्यान्य तारों के उदय अस्तादि में किसीको संदेह के
जगह नहीं रह जाती, क्योंकि उसे आंखों देखते हैं । इसी के
जो गणित होता है उससे लेकर उसके समूचे प्रपंच को गणित ज्यो
कहते हैं । व्यवहार के अन्यान्य गणित की तरह यह गणित
व्यवस्थित रीति का है । इसके नियम व्यवहार के अनुसार
हैं । इसके विपरीत फलित ज्योतिष में भी, यद्यपि गणित किया
है । फिर भी, वह अव्यवस्थित है । उसके नियम सर्वमान्य
और इस बात को मानने के लिये एक तटस्थ, निरपेक्ष या विप
वादी को वाध्य नहीं करसकते हैं कि अश्विनी नक्षत्र की यात्रा
है नहीं और भरणी की खराब है; केन्द्र में बृहस्पति अच्छा है
है और ४, ८, १२ वें स्थान में अशुभ है । केन्द्र और ४, ८, १२
स्थानों का अर्थ आगे विहित होगा । ज्येष्ठा, मूल आदि में
का जन्म खराब है और दूसरे नक्षत्रों में उत्तम इत्यादि ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रहणादि के विषय ऐसे हैं कि इन्हें कट्टर विरोधी भी मानने में जरा भी आनाकानी नहीं करेगा। फिर भी, यह नहीं, कि फलित की इन बातों के लिये गणित की आवश्यकता ही न हो। गणित तो बात बात में अपेक्षित है। मगर इसे वही मानते हैं जिनका इसमें पहले से ही विश्वास है।

पञ्चांग, जिसे पत्र, पत्रा या तिथिपत्र भी कहते हैं, इसीलिये नाम पड़ा है कि उसके पांच अंग हैं। अर्थात् तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण ये पांच हीं उसमें प्रधान हैं और शेष इन्हीं का विस्तार है। पञ्चांग जानने की रीति आगे लिखेंगे।

जो चौबीस घंटे दिन रात में होते हैं उनकी जगह पञ्चांगों में और साधारणतया ज्योतिष के व्यवहार में भी, दण्डों से ही काम लिया जाता है। ६० दण्डों का एक दिन रात मानते हैं। इससे एक दण्ड २४ मिनट के बराबर होता है। ज्योतिष ग्रंथों में दण्ड को ही घटी या घटिका (घड़ी) कहते हैं। मगर साधारण बोलचाल और व्यवहार में दो दण्ड यानी ४८ मिनट की घड़ी मानी जाती है। इस दो दण्ड वाली घड़ी को ही ज्योतिषी लोग मुहूर्त्त कहते हैं और आजकल के ज्योतिष में सूर्योदय से सूर्योदय तक दिन दिन रात मानते हैं। तदनुसार रविवार, सोमवार आदि दिन सूर्योदय से सूर्योदय तक माने जाते हैं। हालांकि प्राचीन संस्कृत ग्रंथों में ही दो पक्ष और हैं। एक तो यह कि आधीरात से आधी रात तक दिन माना जाय, जैसाकि अंग्रेजी व्यवहार और तारीखों के लिये माना जाता है। दूसरा यह कि एक पहर (रात का चतुर्थांश) रात शेष रहने पर अगला दिन माना जाता है। दृष्टान्त के लिये रविवार के दिन भर और रात के तीन पहर तक रविवार मानेंगे और उसके बाद सोमवार माना जायगा। इसीके अनुसार अभीतक धर्मशास्त्रों की व्यवस्थायें दी जाती हैं और मरण, जन्म का आशौच माना जाता है। परन्तु व्रत के लिये जब एकादशी आदि तिथियों का विचार करते हैं तो यही देखते हैं कि सूर्योदय के बाद वह कितनी देर तक है और फिर शुद्ध और विद्ध का हिसाब उसी से लगाते हैं। तात्पर्य यह कि, व्रतों के समय सूर्योदय से ही दिन मानते हैं। इससे सिद्ध है कि यद्यपि आधी रात से आधी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

रात तक दिन मानने का भी पक्ष पतञ्जलि महाभाष्यादि के अनुसार प्राचीन ग्रन्थ सिद्ध है । फिर भी उसके अनुसार व्यवहार प्रायः नहीं होता है । तथापि एक पहर रात रहे से और सूर्योदय के समय से दिन मानना यह दोनों पक्ष बराबर जारी हैं, जिनमें पहले को (एक पहर रात वाले को) मरण आदि के आशौच के हिसाब के लिये माना और सूर्योदय वाला व्रत आदि में और ज्योतिष के व्यवहार में काम आता है । दिन और रात मिलाकर जो ३० मुहूर्त या घड़ियां हैं उनमें दिन के १५ और रात के १५ माने जाते हैं । दिन के १५ मुहूर्तों के नाम ये हैं; महादेव, सर्प, मित्र, पितृ, वसु, जल (अंबु), विश्वेदेव, अभिजित् , ब्रह्मा, इन्द्र, इन्द्राग्नी, निर्ऋति (राक्षस), वरुण अर्यमा, भग, और रात्रि के १५ ये हैं; शिव, अजपाद, अहिर्बुध्न्य, पूषा, अश्विनीकुमार, यम, अग्नि, ब्रह्मा, चन्द्र, अदिति, बृहस्पति, विष्णु, सुरेश्वर, त्वष्टा, वायु । इन तीसों में शिव या महादेव और ब्रह्मा दो बार आये हैं । यह स्मरण रखने की बात है कि जो ये ३० मुहूर्त्तों के नाम कहे हैं वे वस्तुतः उन मुहूर्त्तों के पतियों या देवताओं के नाम हैं और यही देवता अश्विनी आदि नक्षत्रों के भी हैं । २७ नक्षत्रों के २७ देवता हैं और अभिजित्का नाम तो देहीदिया है । इस तरह नाम रखने का प्रयोजन यह है कि यदि कोई कार्य किसी नक्षत्र विशेष में करना आवश्यक हो और उस नक्षत्र के आने में देर हो या आने पर भी अन्य कारणों से उसमें न करसकते हों तो उस नक्षत्र के देवता का नाम देखकर उसी नाम से दिन या रात में जो मुहूर्त्त हों उनमें कर सकते हैं । परन्तु यह साधारण नियम नहीं है । किन्तु आवश्यकता पड़जाने के ही लिये है । अभिजित् मुहूर्त्त तो मध्यान्ह में पड़ता है । क्योंकि आठवां है और वह सभी शुभ कार्यों के लिये उत्तम माना जाता है । इन मुहूर्त्तों को ज्योतिषी लोग होरा भी कहते हैं यद्यपि होरा नाम लग्न और लग्न या राशिके आधे का भी कहा जाता है और लग्न का भोग प्रायः दो और ढाई मुहूर्त्त मानते हैं । इसलिये लग्न का आधा प्रायः एक मुहूर्त्त होने से मुहूर्त्त को होरा कहने का अर्थ समझ में आसकता है । फिर भी, इन मुहूर्त्तों के बारे में होरा शब्द रूढ़ या पारिभाषिक (सांकेतिक) है । तात्पर्य यह है कि साधारण रीति से सभी नक्षत्रों और दिनों आदि के भोग अलग अलग हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jak

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

एक में दूसरे का मेल (संमिश्रण) नहीं है । फिर भी, जैसे ग्रहों की महादशा और अन्तर्दशा मानी जाती है । जिसका अभिप्राय यह है कि नौ ग्रहों में से किसी एक के भोग के समय में भी उसी के अन्दर ही थोड़े थोड़े समय तक नवोंग्रहों का भोग रहता है । उसी तरह एक दिनमें ही थोड़ी थोड़ी देर तक सभी दिन भोगलेते हैं और नक्षत्र भी भोग लेते हैं । दृष्टान्त के लिये रविवार को ही रविवार आदि सातों दिनों और २७ नक्षत्रों का भोग होजाता है । इसी तरह सोमवार आदि को भी । यह जो एकही दिन में सबदिनों और नक्षत्रोंका भोग है इसेही होरा नाम ज्योषियों ने दिया है । प्रत्येक के भोग को होरा कहते हैं । इसलिये जैसे नक्षत्रों में किये जाने वाले काम उन नक्षत्रों की होरा यानी पूर्वोक्त मुहूर्त्तों में किये जा सकते हैं । उसी तरह प्रत्येक दिनों में अलग अलग किये जाने वाले काम उन दिनों की होरामें भी आवश्यकता पड़नेपर किये जाते हैं । तदनुसार यद्यपि शनिवार को कोई काम मना हो और सोमवार को किया जाने वाला हो । तथापि शनिवार कोही, सोमवारकी होरा जब आवे तभी, किया जासकता है । यह भी स्मरण रखना चाहिये कि नक्षत्रों की होरा दिन रात में एक ही बार एक नक्षत्र की आती है । केवल आर्द्रा और रोहिणी की होरा दोबार आती है । क्योंकि शिव और ब्रह्मा नामक मुहूर्त्त दो बार आते हैं और शिव हैं आर्द्रा के देवता और ब्रह्मा रोहिणी के । लेकिन दिनों की होरा कई बार आती है । कारण, २८ नक्षत्रों के होने से दिन रात में उनका भोग एकहीबार आसकताहै । दो बार आना असंभव है । क्योंकि दिनरातके ३० ही मुहूर्त होते हैं और एक मुहूर्त्त एक नक्षत्र की होरा होती है । मगर दिन तो ७ ही हैं और एक दिन की होरा ढाई दण्ड (सवा घड़ी या एक घंटा) मानते हैं । अतः एक दिन की होरा कई बार आवेगी । नक्षत्र की होरा निकालने में तो कोई कठिनाई नहीं है, जैसा कि कह चुके हैं । मगर दिन की होरा निकालने में थोड़ी सी कठिनाई है । यद्यपि एक प्रकार से तो यह भी सीधी ही है । यह तो कही चुके हैं कि प्रत्येक होरा का भाग ढाई दंड या १ घंटा होता है और यह नियम है कि जब से दिन शुरू होता है तब से १ घंटे तक उसी दिन की होरा रहती है । उसके बाद दूसरे घंटे में उससे छठें दिन की और तीसरे घंटे में दूसरे से छठें दिन की ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

इसी तरह आगे भी छठें छठें की होरा मानी जाती है। इस के लिये रविवार को पहले घंटे में रविवार की ही होरा होगी दूसरे घंटे में रवि से छठें शुक्रवार की, तीसरे में शुक्र से छठें बुध की, चौथे में बुध से छठें चन्द्रवार की, पांचवें चन्द्रवार से छठें शनिवार की, छठें में शनि से छठें गुरुवार की और सातवें में गुरु से छठें मंगलवार की। फिर आठवें में मंगल से छठें रविवार की और आगे फिर पूर्व कथित ही होरायें बारबार आवेंगी इसी तरह सोमवार को भी पहली होरा सोमवार की होकर छठें छठें का क्रम चलेगा। अन्य दिनों में भी ऐसे ही जानना चाहिये यह तो हुई आसान रीति। यदि कठिन रीति को जानना हो तो उस की रीति यह है कि जितने दण्ड दिन बीतने पर होरा निकालनी हो उसे दूना करके उसमें पांच का भाग दे डाले और जो बच जावे उसे दूना किये में घटाकर तथा शेष में ७ का भाग देकर उस के शेष में जोड़ने से होरावाले दिन का ज्ञान हो जायगा। जैसे रविवारको ६ घटी (घटी) दिन बीतने पर यह जानना हो कि किसकी होरा है तो पहली रीति के अनुसार तो यह तीसरा घंटा होने के कारण बुध की होरा आही गई। मगर दूसरी रीति के अनुसार उस ६ को दूना करने से १२ हुए। उनमें ५ का भाग देने से २ लब्धि आई और ० बचे दो। लब्धि तो बेकार है। मगर २ शेष को दूना किये हुए ४ यानी १२ में से घटाया तो शेष बचे १०, उन में ७ का भाग देने से शेष ३ में एक और जोड़ने से ४ हुए। अब यह देखना चाहिये कि जब रविवार को होरा निकाल रहे हैं तो रवि से चौथा वही बुध हुआ। यदि सोमवार को निकालना हो तो सोम से चौथे को देखें इसी तरह अन्यान्य दिनों में भी समझना चाहिये। इस तरह दिन रात में जब जब प्रत्येक दिन की होरा आवे तब तब उस दिन किया जाने वाला काम आवश्यकता पड़नेपर किया जासकता है।

इस सम्बन्ध में एक सूक्ष्म बात और भी जानने योग्य है। जैसे कहचुके हैं, सूर्योदय से ही सामान्य रूपसे दिन की प्रवृत्ति होती है दिन शुरू होता है। तदनुसार सूर्योदय सेही जितना समय बीतेगा उसीके अनुसार दिनों की होरा निकाली जायगी। यही बात विवाहवृन्दावन नामक ग्रन्थ में लिखीहै। मगर वसिष्ठसंहिताके अनुसार यद्यपि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कामों के लिये वारकी प्रवृत्ति या आरंभ सूर्योदयसे ही मानते हैं। फिर भी होरा निकालने के लिये वारप्रवृत्ति सूर्योदय से नहीं मानी जाती। किंतु या तो सूर्योदय के कुछ देर बाद होती है या पहले और कभी कभी सूर्योदय के समय ही होती है। यह बात आजकल बनने वाले काशी के किसी किसी पञ्चांग में लिखी भी रहती है कि प्रत्येक वार की प्रकृति (आरंभ) रोज रोज कब से होती है। परंतु सब में यह बात नहीं मिलेगी। जहां लिखी है वहां उसेही देख कर उसी समय से ही उस दिन की होरा माननी होगी और जिस वक्त किसी दिन की होरा निकालनी हो वह वक्त पंचांग में लिखी वारप्रवृत्ति के समय से ही लिया जायगा, नकि सूर्योदय से। दृष्टांत के लिये, यदि सूर्योदय रविवार को ५॥ बजे होता हो और रविवार की प्रवृत्ति पञ्चांग में ५ या ६ बजे लिखी हो तो उस ५ या ६ बजे से ही रविवार की होरा शुरू होगी, नकि ५॥ बजे से। इसीलिये उस ५ या ६ बजे से ही अभीष्ट समय तक की होरा निकालेंगे, सूर्योदय से नहीं। यदि पञ्चांग में वारप्रवृत्ति न लिखी हो तो वह निकाली भी जासकती। यह स्मरण रखना होगा कि साधारणतः जब दिन अधिक बड़ा होता है तब सूर्योदय के कुछ देर बाद से ही दिन की प्रवृत्ति मानेंगे और जब अधिक छोटा होता है तब सूर्योदय के पहले ही कुछ देर से वह दिन शुरू होजाता है। परंतु यह बात भूमध्य रेखा से पूर्व के देशों के ही लिये है, नकि पश्चिमवालों के लिये है। उधर तो प्रायः इससे उलटा ही होता है। भूमध्य रेखा का अभिप्राय है लंका, कांची, उज्जैन, कुरुक्षेत्र और सुमेरु से इन स्थानों को, या इनके बीच के जो स्थान हैं उन्हें, भूमध्य रेखा कहते हैं और इनसे पूर्व के स्थानों को भूमध्य से पूर्व और पश्चिम के स्थानों को भूमध्य से पश्चिम कहते हैं। इसके अनुसार काशी भूमध्य से पूर्व और लाहौर पश्चिम है। वारप्रवृत्ति निकालने की रीति यह है कि मध्य रेखा यानी कुरुक्षेत्र, उज्जैन आदि से पूर्व या पश्चिम का कोई स्थान जितने योजन दूर हो उस में से उसका चौथाई घटाने से शेष अर्थात् उसकी तीन चौथाई को १५ में से घटाते हैं यदि वह स्थान पूर्व हो और १५ में तीन चौथाई को जोड़ते हैं यदि वह पश्चिम हो। इसके बाद दिनमान यानी पञ्चांग में लिखे दिन के प्रमाणके आधेसे यदि वह १५ में जोड़ने या घटानेके बादका अंक कम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gr

हो तो जितना कम हो उतने पलों के बाद दिनप्रवृत्ति होगी और अ
अधिक होतो सूर्योदयसे उतनेहीं पल पहलेसेही दिन शुरू हो जायगा।
कल्पना कीजिये कि भूमध्य से ६० योजन (२४० कोस) पूर्व और
इतने हीं पश्चिम दो स्थान हैं और दोनों जगहों का दिनमान ३४ दण्ड
है। दिनमान का आधा १७ हुआ। उस ६० का तीन चौथाई हुआ
४५; इसको पूर्व वाले स्थान के लिये १५ दण्ड में से घटावेंगे और
पश्चिम वाले के लिये १५ में हीं जोड़ेंगे। स्मरण रहे कि यह तीन
चौथाई हमेशा पल ही माना जाता है और १५ दंड में ही उसे
घटाते या जोड़ते हैं। घटाने पर १४ दण्ड १५ पल शेष रहे और जोड़
ने पर १५ दण्ड ४५ पल हुए। अब देखना यह है कि दिन रात के आधे
यानी १७ दण्ड से यह दोनों कितने कम हैं। पहला और दूसरा दोनों
ही कम ही हैं। इस लिये दोनों जगह सूर्योदय के बाद ही दिन की
प्रवृत्ति होगी। कितनी देर बाद होगी यह जानने के लिये उसी १७ दण्ड
से उन दोनों को घटाना होगा। मगर घटाने पर दण्ड और पल
शेष रह कर पल और विपल शेष रहेगा। इस तरह १७ दण्ड में से
१४ दण्ड १५ पल घटाने से २ पल और ४५ विपल शेष हैं। अतः पूर्व
के देश में दो पल ४५ विपल के बाद दिन की प्रवृत्ति होगी। १७ दण्ड
से दूसरे (१५ दण्ड ४५ पल) को घटाया तो १ पल और १५ विपल
शेष रहे। अतः १ पल १५ विपल सूर्योदय के बाद पश्चिमवाले स्थान
में वार की प्रवृत्ति होगी। यदि दिन मान २८ दिन का ही होता तो
उसके आधे यानी १४ से पूर्वोक्त दोनों अङ्क अधिक हैं। इस लिये १४ में
उनमें से ही घटा देने पर पहले में १५ विपल और दूसरे में १ पल
४५ विपल शेष रहे। इसलिये पूर्व वाले में १५ विपल और पश्चिम
वाले में १ पल, ४५ विपल सूर्योदय से पहले ही दिनका आरंभ हो
जायगा। यद्यपि इसमें कोई विशेष अन्तर नहीं पड़ सकता है, यदि
सूर्योदय से ही दिन का आरंभ मान लें। मगर सूक्ष्म विचार के
लिये इसे लिख दिया है।

६० दण्ड एक दिन रात में होते हैं। एक दण्ड में ६० पल, एक
पलमें ६० विपल और एक विपल में ६० प्रतिविपल होते हैं। इससे
स्पष्ट है कि ढाई दण्ड का १ घंटा, ढाई पल का एक मिनट, ढाई वि
पल का एक सेकंड होता है। जिस प्रकार साल १२ महीनों में बंटा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jal

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है और प्रत्येक महीने को चान्द्रमास कहते हैं। क्योंकि चन्द्रमा के ही हिसाब से पूर्णिमा से पूर्णिमा तक महीना माना जाता है। कहीं कहीं अमावस्या से अमावस्या तक महीना मानने की भी रीति है। जैसा कि गुजरात में पाया जाता है। पर, हर हालत में चन्द्रमा के ही हिसाब से माने जाने के कारण यह महीने, जिन्हें हम चैत्र, वैशाख आदि कहते हैं, चान्द्रमासही कहे जाते हैं। इसीप्रकार वर्षको १२ राशियों में बांट कर प्रत्येक को सौर मास कहते हैं। जैसे चान्द्रका अर्थ है चन्द्रमा से सम्बन्ध रखने वाला। उसी तरह सौर का अर्थ है सूर्य से सम्बंध रखने वाला। तात्पर्य यह है, कि यह महीना सूर्य के हिसाब से माना जाता है। जबतक सूर्य एक राशिपर रहता है, तबतक एक सौर मास कहाता है, और जब दूसरी पर जाता है तो दूसरा शुरू होकर उस राशिपर सूर्य के रहने भर में पूरा हो जाता है। इसी तरह तीसरे, चौथे आदि महीनों को भी समझलेना चाहिये। इस सौर मास का व्यवहार बंगाल में अब भी प्रचलित है। अतएव बंगला मास भी इसे कहते हैं। जब एक राशि को पूरा कर दूसरी राशिपर सूर्य जाता है तो उसे संक्रान्ति कहते हैं। जिस समय पहली राशिको पूरा कर दूसरे पर आरंभ करता है ठीक उसी समय का नाम संक्रान्ति या संक्रमण हैं। संक्रमण या संक्रान्ति शब्दका अर्थ है जाना या पांव रखना। इस तरह १२ सौर महीनों की १२ संक्रान्तियां भी होतीं हैं और बंगाल में १२ हों संक्रान्तियों पर लोग व्रत आदि करते हैं। उत्तर भारत में तो केवल दोही संक्रान्तियों की स्मृति रहगई है। एक वैशाख की, जिसे मेष की संक्रान्ति कहते हैं, दूसरी माघ की, जिसे मकर की संक्रान्ति पुकारते हैं। मेष संक्रांति का अर्थ है कि सूर्य मेष राशिपर गया और मकर संक्रान्ति का अर्थ है कि मकर राशि पर पहुँचा। जिस तरह चैत, वैशाख, आदि १२ महीने हैं, उसी तरह उसी हिसाब से १२ संक्रांतियां हैं। मगर संक्रांति का हिसाब यदि चान्द्रमासों से मिलाना हो तो वैशाख से गिनती शुरू करनी होगी। राशियों के क्रमशः नाम हैं मेष, वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, धनुष, (धनु) मकर, कुम्भ, मीन। मेषराशि वैशाख में पड़ती हैं और वृष जेठमें। इसी तरह आगे भी समझना होगा। जिस तरह चान्द्रमास के ३० दिन माने जाते हैं उसी तरह प्रत्येक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

सौर मास या प्रत्येक राशियों के ३० अंश मानते हैं । इसलिये राशि का अंश एक दिन की जगह हुआ । फिर जैसे दिन के ६० दण्ड उसी तरह प्रत्येक अंश की ६० कलाये हैं और प्रत्येक कला की ६० विकलायें तथा प्रत्येक निकला की ६० प्रतिविकलायें । इस तरह दण्ड की जगह कला, पल की जगह विकला, विपल की जगह प्रतिविकला है । इन बातों को याद रखने से आगे समझने में आसानी होगी । विशेषरूप से यह जान लेना चाहिये कि महीने चान्द्र और सौर के सिवाय सावन और नाक्षत्र ये दो प्रकार के और भी होते हैं । यहां प्रथम चान्द्रमास में ३० दिन कहे गये हैं । पर यह तो साधारण बात थी । असल में ३० तिथियों का चान्द्रमास होता है और एक तिथि का एक चान्द्र दिन कहाता है । दोनों (शुक्ल, कृष्ण) पक्षों की १५-१५ तिथियां महीने में हुआ करती हैं । सौर मास एक राशि है और उसका १ अंश एक सौर दिन है । एक नक्षत्र का भोग नाक्षत्र दिन कहाता है और इस प्रकार २७ नक्षत्रों के भोग से नाक्षत्र मास होता है । सूर्य सिद्धान्त में लिखा है कि आकाश में नक्षत्रों (तारों) का एकचक्र ६० दण्ड में होता है । अतएव ६० दण्ड का एक नाक्षत्र दिन और ऐसेही ३० दिनों का नाक्षत्र मास होता है । इससे यद्यपि नक्षत्रों के बीतने में नाक्षत्र मास मानने पर अन्तर होगा । फिर भी याद रहे कि २७ नक्षत्रों में प्रत्येक का भोग ६०ही दंड नहीं है । किन्तु इससे अधिक और कम भी है । इस तरह इन २७ नक्षत्रों केही भोग ६० दण्ड वाले ३० दिन प्रायः पूरे होजाते हैं । अतः विरोध नहीं और यदि विरोध फिर भी रह जाय तो भास्कराचार्य वालाही नाक्षत्र दिन और मास के सम्बन्ध में मान्य है । नाक्षत्र का अर्थ नक्षत्रों (तारों) से सम्बन्ध रखने वाला । सूर्योदय से सूर्योदय पर्यन्त एक सावन दिन और ऐसेही ३० दिनों का सावन महीना होता है । यहां पर सवन का अर्थ है सूर्योदय और उसका सम्बन्धी सावन कहाता है । इसका हिसाब सूर्योदय सेही होता है ।

सूर्य आदि ग्रह आकाश में जिस मार्ग से भ्रमण करते हैं वह उसका कोई स्थूल आकार नहीं है । फिर भी एक आकार कल्पित कर लियागया है । उसेही कक्ष्या कहते हैं । यह कक्ष्या या भ्रमण मार्ग प्रत्येक ग्रह के भिन्न भिन्न हैं । क्योंकि सभी ग्रह एक स्थान पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होकर नीचे ऊपर हैं-एक से ऊपर दूसरा, उससे ऊपर तीसरा इत्यादि। और परस्पर उनके मध्य में लाखों कोसों का अन्तर है। जहां जो ग्रह रहता है वहीं से पृथ्वी के चारों ओर गोल चक्कर लगाया करता है। जैसे कोल्हू के चारों ओर बैल घूमते हैं। इसीसे प्रत्येक का मार्ग भिन्न है। फिर प्रत्येक के मार्ग के १२ बराबर भाग किये गये हैं और इन्हीं को राशि कहते हैं। यही १२ भाग मेष आदि १२ राशियां हैं। प्रत्येक ग्रह अपने मार्ग से चक्कर लगाता हुआ इन बारह राशियों से होकर क्रमशः गुजरता है और जब एक बार बारहों से होकर जा लेता है तो उसका एक चक्कर या भ्रमण पूरा होजाता है। सब ग्रहों की गति बराबर नहीं है। मार्ग की ही तरह गति भी भिन्न भिन्न हीं है। चन्द्रमा एक राशि को सवा दो दिन में भोग लेता है। इस तरह २७ दिन में एक बार १२ राशियों का चक्र पूरा करता है। सारांश यह, कि अश्विनी, भरणी आदि प्रत्येक नक्षत्रों का प्रतिदिन भोग करता है। इसीसे उन्हें चन्द्रनक्षत्र भी कहते हैं और सवा दो नक्षत्रों के भोगने पर एक राशि का भ्रमण पूरा होजाता है। यहां भोगने का अर्थ चलना या भ्रमण है। सूर्य एक महीने में एक राशि को पूरा करता है, मंगल डेढ़ मास में, बुध और शुक्र भी एक एक महीने में हरेक राशि का भ्रमण करते हैं, बृहस्पति १३ मासों में, शनि ३० मासों में और राहु, केतु डेढ़ वर्ष या १८-१८ महीने में एक राशि भोगते हैं। इस तरह बारह राशि के मण्डल या चक्र को चन्द्रमा २७ दिन में, सूर्य, बुध, शुक्र १२ महीने (१ वर्ष) में, बृहस्पति १३ वर्ष में, शनि ३० वर्ष में और राहु केतु १८ वर्ष में पूरा करते हैं। जिस तरह सड़क पर मीलों या कोस वगैरः के पत्थर गड़े होते हैं। उसी तरह १२ राशियों की १२ संक्रान्तियों को समझना चाहिये। यह भी जानना चाहिये कि जैसे मील के भीतर फर्लांग आदि के छोटे छोटे विभागचिन्ह बने होते हैं, उसी प्रकार प्रत्येक राशि के भीतर भी छोटे छोटे विभाग बने हैं। यह विभाग दो प्रकार के हैं; एक तो पूर्वोक्त अंशों के अर्थात् प्रत्येक राशि के ३० सम विभाग हैं, जिनमें प्रत्येक का नाम अंश है। फिर अंशों के कला, विकला, प्रतिविकला आदि विभाग हैं, जिन्हें पहलेही कहचुके हैं। दूसरे प्रकार के विभाग यह हैं कि प्रत्येक राशि को नौ बराबर भागों में बांट दिया है। इस तरह १२ राशियों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

के कुल १०८ भाग हो जाते हैं । इस एक एक भाग को नवांश कहते हैं । नवांशका अर्थ है राशि का नवां अंश या भाग । उधर २७ नक्षत्रों में प्रत्येक के चार भाग करने से उनके भी १०८ भाग हो जाते हैं और राशियों के १०८ भागों पर नक्षत्रों के १०८ भाग रख दिये हैं। तात्पर्य यह है कि समूचे (१२) राशि चक्र को पहले २७ भागों में बांट दिया है और हरेक भाग का नाम एक नक्षत्र है। फिर हर नक्षत्र के चार चार भाग कर दिये हैं । इससे १०८ भाग हो गये और एक राशि में सवा दो नक्षत्र आगये । २७ नक्षत्रों के १०८ टुकड़े क्या हैं गोया फर्लांग वगैरः की तरह चमकते विभाग हैं, जिनसे साफ साफ पता लग जाता है । यह जो १०८ विभाग या प्रत्येक राशि के नौ विभाग हैं और नक्षत्रों के जो चार विभाग हैं, इन्हें याद रखने से आगे बहुत सहायता मिलेगी। नक्षत्रों के चार भाग करने पर प्रत्येक को पाद या चरण कहते हैं, जिसका अर्थ है चौथाई। यह भी स्मरण रखने की बात है कि जो पहले प्रत्येक राशिके ३० अंश कहे गये हैं उनमें १५-१५ को, यानी राशि के आधे को, होरा कहते हैं । १०-१० अंश या राशि के तृतीयांश को द्रेष्काण; ढाई ढाई अंश या राशिके १२ वे भाग को द्वादशांश और ५,५,८,७,५ अंशों को त्रिंशांश कहते हैं । द्वादशांश का अर्थ है १२ वां अंश । मगर त्रिंशांश यद्यपि अक्षरार्थ तीसवां अंश है । फिर भी एक भाग तीसवें अंश का नहीं है । किन्तु तीन भाग ५-५ अंश के हैं, एक ८ का और एक ७ अंश का है । हां, कुल मिलकर तीस अंश होजाते हैं । इसीसे त्रिंशांश कह देते हैं । इनके सिवाय और भी विभाग हैं । मगर ये बहुत प्रसिद्ध हैं । अतएव इन्हें यहां लिख दिया है ।

राशियों के पति या मालिक भी हैं और इन पूर्वोक्त विभागों के भी। मेष का और वृश्चिक का पति मंगल है; वृष, तुला का शुक्र; मिथुन कन्या का बुध; कर्क का चन्द्रमा; सिंह का सूर्य; धनु और मीन का बृहस्पति और मकर, कुम्भ का शनैश्चर है । इस तरह ७ ग्रहों में ही राशियां बंट गईं । अब शेष राहु कन्या का और केतु मिथुन का स्वामी माना जाता है । कहीं कहीं मीन का ही स्वामी केतु लिखा है। यही ठीक भी है । शीघ्रबोध में मिथुन का लिखा है । मगर यह ठीक नहीं है । क्योंकि उसी के लेख से केतु का उच्च स्थान भी मिथुन में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और दूसरे लोग भी मिथुन को ही केतु का उच्च स्थान मानते हैं। फिर यह कैसे होगा कि वही उसका स्थान भी हो और उससे उच्च भी हो। परंतु यह नियम नहीं भी है। अस्तु, जिन जिन राशियों के जो ग्रह स्वामी है। वह राशियां उन ग्रहों के गृह या स्थान भी कही जाती हैं। जिस प्रकार ग्रहों के घर या गृह हैं उसी प्रकार प्रत्येक ग्रह के ऊंचे (उच्च), अत्यन्त ऊंचे (परमोच्च), नीचे (नीच) और अत्यन्त नीच (परमनीच) स्थान भी कहाते हैं। सूर्य का उच्च मेष; परमोच्च मेषका १० वां अंश; चन्द्र का उच्च वृष; परमोच्च वृष का तीसरा अंश, मंगल का उच्च मकर, परमोच्च मकर का २८ वां अंश; बुधका उच्च कन्या; परमोच्च कन्या का १५ वां अंश; बृहस्पति का कर्क उच्च, परमोच्च कर्क का ५ वां अंश; शुक्र का उच्च मीन, परमोच्च मीन का २७ वां अंश; शनि का उच्च तुला, परमोच्च तुला का २० वां अंश; राहु का उच्च मिथुन, परमोच्च मिथुन का २० वां भाग; केतु का उच्च धनु और परमोच्च धनु का छठां अंश है। ग्रहों के जो स्थान (राशियां) ऊंचे हैं, उनसे सातवें स्थान नीचे होते हैं और जितने अंश परमोच्च हैं उतने हीं परम नीच होते हैं। जैसे सूर्य का उच्च स्थान मेष और उसका १० वां अंश परमोच्च है तो मेष से ७ वीं राशि (तुला) सूर्य की नीच राशि और तुला का १० वां अंश परमनीच होगा। इसी तरह चन्द्र आदि का भी समझना चाहिये। ऊंच राशि से गिनती में जो ही सातवीं हो वही नीच राशि होगी। इस तरह मकर जब मंगल की ऊंच राशि है और उसका २८ अंश परमोच्च, तो मकर से ७ वीं कर्क राशि नीच और उसका २८ वां अंश परमनीच होगा। मकर से गिन कर मीन पर पहुंचने के बाद मेष, वृषादि को गिनेंगे, न कि मीन तक ही विश्राम करजायंगे। क्योंकि राशियों का गोल मण्डल या चक्र है। इसलिये कहने को यद्यपि मेष से आरंभ कर मीन पर विश्राम है। मगर चक्र में देखने से कहीं भी विश्राम नहीं है। ग्रह भी मीन पर आकर विश्राम नहीं करते, किन्तु मेष पर चले जाते हैं और इस तरह उनका चक्र जारी रहता है। प्रत्येक ग्रह की मूल त्रिकोण राशियां भी होती हैं। कहा जाता है कि ग्रहों के अपने अपने घर तो हईं। मगर उनकी विश्राम भूमि भी है और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उसी विश्राम स्थान पर पहुँचने पर उनकी थकावट दूर होकर उन्हें प्रसन्नता होती है । वे ही स्थान मूलत्रिकोण कहे जाते हैं। किसी ग्रह का अपना हीं घर मूलत्रिकोण है, तो किसी का दूसरा। इस तरह सूर्य के लिये सिंह राशि के आदि के २० अंश तक मूल त्रिकोण और शेष १० अंश अपने गृह हैं; चन्द्र के वृष के आदि के ३ अंश परमोच्च और शेष २७ अंश मूल त्रिकोण; मंगल के मेष के आदि वाले १२ अंश मूलत्रिकोण और शेष १८ अंश स्वगृह; बुध के कन्या के आदि वाले १५ अंश उच्च; उसके बाद के ५ अंश मूल त्रिकोण और शेष १० अंश स्वगृह; बृहस्पति के धनु के आदि वाले १० अंश मूल त्रिकोण और शेष स्वगृह; शुक्र के तुला के आदि के १५ अंश मूल त्रिकोण और शेष १५ स्वगृह; शनि के कुम्भ के आदि वाले २० अंश मूल त्रिकोण और शेष १० स्वगृह; राहु का मूल त्रिकोण कुम्भ के २० अंश और केतु के सिंह के आदि के ६ अंश मूल त्रिकोण हैं । इससे स्पष्ट है कि केवल चन्द्र, बुध, राहु, केतु इन चार के ही मूल त्रिकोण अपने घर न होकर दूसरे ही हैं । शेष के मूल त्रिकोण स्वगृह ही हैं । मूल त्रिकोण में जाने पर ग्रह अच्छा फल देता है । क्योंकि वहां उसे स्वतः प्रसन्नता रहती है । इस ऊँच नीच विभाग का काम आगे पड़ेगा ।

राशियों की ही तरह उनकी होरा, द्रेष्काण, नवांश द्वादशांश और त्रिंशाश के भी स्वामी ग्रह ही होते हैं । मेष, मिथुन, सिंहादि विषम राशियों में पहली होरा (पहले के १५ अंश) का स्वामी सूर्य और दूसरी होरा (शेष १५ अंश) का स्वामी चन्द्र है। पर वृष, कर्क आदि सम राशियों में उलटा है । अर्थात् पहली का चन्द्र और दूसरी का सूर्य । द्रेष्काण में यह नियम है कि प्रथम द्रेष्काण का पति तो उसी राशि का स्वामी होगा जिसका वह द्रेष्काण है। दूसरे द्रेष्काण का स्वामी उस राशि से पांचवीं राशि का पति होगा और तीसरे का स्वामी उससे नवीं राशि का स्वामी होगा। दृष्टान्त के लिये मेष में १०-१० अंश के तीन द्रेष्काण हैं। उनमें प्रथम का स्वामी तो मेष का ही स्वामी मंगल है. दूसरे का स्वामी मेष से पांचवीं सिंह राशि का स्वामी सूर्य है, तीसरे का स्वामी मेष से नवीं धनु राशि का पति बृहस्पति है। इसी तरह वृष आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jaipur

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के भी द्रेष्काणों के स्वामियों को जान लेना होगा। नवांश की यह रीति है कि मेष राशि के नवों अंश के पति क्रम से वही होंगे जो मेष आदि नौराशियों के हैं। अर्थात् पहले का पति मंगल, दूसरे का शुक्र आदि। वृष राशि के नवों अंशों के स्वामी वही होंगे जो मकर से लेकर नौ राशियों के हैं। अर्थात् पहले का शनि, दूसरे का भी शनि, तीसरे का बृहस्पति, चौथे का मंगल आदि। मिथुन के नवों अंशों के पति तुला से लेकर नवराशियों के स्वामी हीं होंगे-पहले का शुक्र, दूसरे का मंगल आदि। कर्क के नवों अशों के स्वामी वहीं हैं जो कर्क से लेकर नौ राशियों के हैं—पहले का चन्द्रमा, दूसरे का सूर्य आदि। इस तरह मेष से कर्क तक की पहली चार राशियों के जिन जिन नवांशों के स्वामी जो ग्रह हों, सिंह से वृश्चिक तक की दूसरी और धन से मीन तक की तीसरी चार राशियों के भी क्रमशः वहीं होंगे। अर्थात् जैसा मेष में है। वैसा ही सिंह और धनु में भी होगा। इसी तरह वृष के जैसा ही कन्या और मकर में, मिथुन की ही तरह तुला, कुम्भ में और कर्क की तरह वृश्चिक, मीन में होगा। इसका निचोड़ यह है कि पहली मेष राशि के नवांशों के पति मेष से ही शुरू करके नौ राशियों के जो होंगे वही होंगे। फिर नौ के बाद जो दसवीं राशि मकर है उस से शुरू कर नौराशियों के जो पति होंगे वही दूसरी राशि वृष के नवांशों के स्वामी होंगे। इस तरह कन्या तक पहुंच गये। फिर कन्या के बाद तुला से शुरू कर नौ राशियों के ही पति मिथुन के नवांशों के हैं। इस तरह मिथुन तक पहुंच गये। उसके बाद कर्क से नौराशियों के पति ही कर्क के नवांशों के हैं। इसी तरह पहला जहाँ पूरा हो वहाँ से आगे दूसरे का शुरू होता है। द्वादशांश में तो सीधी रीति यह है कि जिश राशि के द्वादशांशों के पति जानने हों उसी राशि के स्वामी से शुरू कर बारहों राशि तक पहुंच जाना चाहिये। सारांश, मेष में पहला द्वादशांश मेष के पति भौम का, दूसरा वृष के पति शुक्र का इत्यादि। वृष में पहला वृष के पति शुक्र का, दूसरा मिथुन के पति बुध का इत्यादि। इसी तरह सभी में जानना होगा। त्रिंशांशका विभाग विषम राशि मेष, मिथुन आदि में इस तरह है, ५, ५, ८, ७, ५, इनके स्वामी क्रम से मंगल,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Gran

शनि, बृहस्पति, बुध, शुक्र हैं। अर्थात् प्रथम पाँच का मंगल। फ
के ५ अंश का शनि। इसी तरह शेष ८, ७, ५ में भी जानना होगा।
सम राशि वृष कर्क आदि में अंश विभाग ही पहले से उलटा
जाता है और उसी से उसके स्वामी भी पहले आजाते हैं। क्रम
विभाग यों है, ५, ७, ८, ५, ५; विषम में जो अन्त में ५ था वह सम
शुरू में है। विषम में जो चौथा ७ था वह सम में दूसरा होगया
इसी तरह ८ आदि की बात है। और स्वामी की भी यह दशा
हो गई कि जो शुक्र विषम में अन्त में था वह सममें शुरू में हो गया
क्योंकि उस के ही ५ अंश पहले आगये हैं। यही बात बुध आदि के
बारे में भी होगई। वहाँ बुध चौथा तो यहाँ दूसरा हो गया इत्यादि
होरा, आदि पांचों, बल्कि राशि, होरा आदि छओं, के विभाग और
उनके पति सभी पञ्चांगों में लिखे रहते हैं। तथापि समझनेके लिये
उनका रहस्य लिख दिया है। इन्हीं ६ को षड्वर्ग कहते हैं। प्रत्येक
राशि के इन ६ ओं वर्गों को देखते हैं और यदि इनमें शुभ ग्रह
होते हैं तो शुभ फल होता है, तथा अशुभ ग्रह होने से अशुभ फल
मिलता है। केवल राशि के ही शुभ ग्रह के होने से काम नहीं
चलेगा। यह देखना होगा कि उस राशि की कौन सी होरा
द्रेष्काण आदि भी शुभ ग्रह युक्त है और कौन नहीं। यदि राशि और
द्रेष्काण आदि सभी शुभ ग्रह युक्त होंगे तभी उत्तम फल और कार्य
सिद्धि होगी। उन में भी यदि उन राशियों आदि के शुभ पति
पर विराजते होंगे तो और भी अच्छा होगा। यदि ६ में से कुछ
पर तो शुभ ग्रह हों और कुछ पर अशुभ, तो दोनों के बलों को जोड़
कर शुभ बल का जोड़ अधिक होने पर अच्छा, सम होने पर
और कम होने पर खराब फल होगा। इसका विशेष विचार आगे
होगा। क्योंकि इसे षड्वर्ग शुद्धि, शोधन या साधन कहते हैं
वह विचार कभी आने वाला है। यह तो तैयारी मात्र है।

जब आधे से कम चन्द्र रह जाता है तब वह, सूर्य,
मंगल, राहु, केतु और दुष्टग्रहों के साथ रहने वाला बुध ये
पापग्रह कहाते हैं। आधे से अधिक चन्द्रमा, पापग्रह
सम्पर्क से रहित बुध, गुरु और शुक्र ये शुभ ग्रह हैं। कहावत
है कि बुध का स्वभाव बालक का है। जैसे बालक पर संग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Ja

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रभाव पड़ता है। वही दशा बुध की भी है। इसीसे दुष्टग्रहों के साथ या मध्य में पड़जाने से वह भी दुष्ट हो जाता है। परन्तु ज्योंहीं उनका संग छूटा, या शुभ ग्रहों का साथ होगया कि, वह शुभ ग्रह हो जाता है। चन्द्रमा तो क्षीण होने पर ही अशुभ माना जाता है। चन्द्रमा की तीन दशायें होजाती हैं। शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा (प्रथम तिथि) से दशमी तक मध्य या साधारण बल वाला होजाता है (इसके बाद १० दिन तक यानी शुक्ल एकादशी से कृष्ण पक्ष की पञ्चमी तक पूर्ण बल वाला होता है। और कृष्णपक्ष की षष्ठी से अमावस्या तक १० दिन तक अल्प या क्षीण बल होता है। इसी से इन्हीं दस दिनों में कोई भी शुभ कार्य करना अच्छा नहीं है (। शेष २० दिन यानी शुक्ल प्रतिपदा से कृष्ण पंचमी तक शुभ कार्य करने के लिये चन्द्रमा ठीक है] हालां कि शुभ चन्द्र तो या तो बीच के दस दिन तक या शुक्ल अष्टमी से कृष्ण सप्तमी तकही रहेगा। परन्तु यदि चन्द्रमाके ऊपर शुभग्रहों की दृष्टि रहे, उसे शुभग्रह देखते हों तो, या बहुतों के मत से, वह सदा ही शुभग्रह कहाता है। दृष्टि का विचार आगे आवेगा।

ग्रहों की गति और राशियों के सम्बन्ध में एक बात और भी विचार करने योग्य है। यद्यपि और ग्रहों से हमें यहां मतलब न होकर केवल सूर्य सेही अभिप्राय है। फिर भी यह निश्चय है कि सभी की दो प्रकार की गति है। एक तो प्रतिदिन पृथ्वी की परिक्रमा कर आना, जैसा कि चन्द्र, सूर्य आदि को देखते हैं कि चक्र लगाकर फिर परि- अपनी जगह पर आजाते हैं। यह तो एक गति हुई। इसी के साथ दूसरी भी गति है। आज जिस स्थान से शुरू कर २४ घंटे में कल उसी समय तक एक चक्र लगावेंगे, फिर कल उसी स्थान से शुरू न कर उससे कुछ आगे या पीछे बढ़ जाँयगे। यह तो चन्द्र, सूर्य, शुक्र आदि की स्थिति देखकर हम समझ सकते हैं कि प्रतिदिन कुछ न कुछ वे खसकते रहते हैं। इस तरह थोड़ा थोड़ा खसकते खसकते राशियों को पूरा करते हैं और यही गति हम पहले कहचुके हैं जिसके अनुसार सूर्य एक महीने में एक राशि का भ्रमण पूरा करता है तथा अन्यान्य ग्रह कम या वेश समय में। परन्तु सूर्य की दूसरी भी गति है। उसके अनु- सार जो २४ घंटे में एक चक्र लगाता है उसमें भी १२ राशियों का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

भोग मानते हैं। अर्थात् जिस तरह एक राशि को १ मास में पहली से पूरा करता है उसी तरह दूसरी गति से २४ घंटे में १२ राशियों को खतम करता है । अर्थात् एक राशि पर प्रायः दो घंटे रहता है। इसलिये में हीं उसका भ्रमण पूरा कर दूसरी पर जाता है । जिस तरह एक मार्ग को कक्ष्या कहते हैं उसी तरह इस प्रति दिन के चक्र वाले मार्ग को क्रान्तिवृत्त कहते हैं । सारांश, सूर्य की गति से राशियों के प्रकार के भोग होते हैं । एक तो एक वर्ष में १२ राशियों का भोग एक चक्र पूरा होता है और दूसरा एक दिन में या प्रतिदिन। इस तरह प्रतिदिन जो प्रायः दो दो घंटे एक एक राशि पर सूर्य रहता उससे यह राशियां उतनी देरतक, प्रायः दो घंटे तक, प्रकाशित रहती हैं और उन्हें लग्न कहते हैं। लग्न और राशि में कोई अन्तर नहीं है १२ राशियां हीं १२ लग्न कहाती हैं। वार्षिक या सालाना सूर्य के विचार से उन्हीं को राशि कहते हैं और प्रतिदिन के विचार से उन्हीं को लग्न कहते हैं । प्रति दिन जब तक जिस राशि पर सूर्य रहेगा तभी तक उसे लग्न कहते हैं । लग्न का अर्थ है लगा हुआ जब सूर्योदय होता है तो हम देखते हैं कि जिस क्रान्ति वृत्त या मार्ग में वह भ्रमण करता है वह उस जगह पर लगा हुआ सा है जहां आकाश और पृथिवी का मेल (लगाव) मालूम होता है। आकाश और पृथिवी के प्रतीत होने वाले मेल को क्षितिज कहते हैं । दूर से प्रतीत होता है कि आकाशने लटक कर गोया पृथिवी को छू लिया है। उसी क्षितिज पर सूर्य को या उसके कल्पित प्रतिदिन के आकाशमार्ग को, जो राशियों में बँटा है, प्रतिदिन में लगा हुआ सा देखते हैं। अतः हम उसे लग्न कहते हैं। इस तरह यद्यपि एकही राशिको लग्न कह लेते हैं। तथापि कुछ दिन आने पर जब सूर्य ऊपर जाता है तो हमें क्षितिज में लगा हुआ नहीं मालूम होने पर भी हम से दूर पश्चिम में को मालूम होगा। इसी तरह ज्यों ज्यों हमारी दृष्टि से ऊपर होता जायगा और आखिरकार कभी अस्त होजायगा त्यों त्यों सुदूर पश्चिम के यूरोपीय देशों और अमेरिका में, जो पृथिवी के नीचे हमारी भाषा में कहा जाता है, क्षितिज में बराबर लगा हुआ मालूम होता ही रहेगा यहदशा सूर्य की २४ घंटे प्रति दिन बनी रहती है। जिस समय भी क्षितिज में लगा हुआ मालूम पडता है उस समय भी हम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्वके जापानादि देशों में ऊपर या मध्याह्न का ही प्रतीत होता होगा । इसी कारण सूर्य के प्रति दिन के क्रान्तिमण्डल, क्रान्ति वृत्त या चक्र भर में जो स्थान स्थान को बांट कर १२ राशियां मानी गई हैं उन बारहों कोही लग्न कहते हैं । अन्तर इतना हो है कि किसी राशि को वह २ घंटे से कम मेंही पूरा कर देता है तो किसी पर चलने में सूर्य को दो घंटे से अधिक भी समय लग जाता है । यह बात सब स्थानों में एक सी नही हैं । केवल लंका में यह समय एक सा रहता है । लंका में मेष का २७८, वृष का २९९, मिथुन का ३२३ पल तक उदय रहता है । फिर इसी को उलट देने से कर्क, सिंह, कन्या का क्रम से ३२३, २९९ और २७८ पल उदय रहता है । इन छ लग्नों का इस तरह जो उदय काल है उसी का उलटा तुला, वृश्चिक, धन, मकर, कुम्भ, मीन का २७८, २९९, ३२३, ३२३, २९९, २७८ पल उदय होता है । मगर अन्यान्य स्थानों में बराबर कुछ न कुछ अन्तर रहता है । अतः उसके जानने की विधि, यदि होसका तो, आगे लिखेंगे ।

इस प्रकार यद्यपि लग्न का ज्ञान होगया । फिर भी, यह जानने की आवश्यकता है कि प्रतिदिन एक समय एक ही लग्न का उदय नहीं रहता । किसी स्थान पर आज यदि प्रातः काल मेष लग्न का उदय है तो ठीक एक महीने बाद उसी समय मेष का उदय न होकर वृष का उदय रहेगा, उस समय वृष लग्न होगी । इसका कारण यह है कि वार्षिक गति से एक राशि पर एक महीने तक सूर्य रहता है और जिस पर इस तरह सक्रान्ति के समय पहुंच कर एक मास रहेगा, वही राशि सूर्योदय के समय एक महीने तक रहेगी और ज्यों-ही महीने के बाद दूसरी संक्रान्ति के समय दूसरी राशि पर सूर्य गया कि फिर उदय काल में पहली न रह का दूसरी ही रहने लगेगी और एक महीने तक बराबर यह सिलसिला रहेगा । फिर सूर्य के दूसरी राशि पर जाने पर उसकाही उदय रहेगा और यह तो कही चुके हैं कि जिस राशि का उदय होता है वह राशिही लग्न कहाती है । सारांश, प्रातःकाल एक महीने तक मेष राशि सेही शुरू कर क्रान्तिमार्ग में १२ राशियों पर घूमकर सूर्य अपने स्थान पर आवेगा । इसीतरह दूसरे महीने भर वृष सेही शुरू किया करेगा और इसी तरह आगे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

मिथुन आदि से। अतएव उदय काल में एक एक महीने के बाद
बदलती रहती हैं। यह भी स्मरण रहे कि सूर्य यद्यपि महीने भर एक
राशि पर रहता है और वहीं से भ्रमण शुरू करता है। फिर भी
राशि का भी एक एक अंश प्रतिदिन खतम करके आगे बढ़ता
है। अतएव पहले दिन यदि प्रायः दो घंटे तक सूर्योदय के
मेष लग्न रहेगी तो दूसरे दिन उसका तीसवाँ अंश या प्रायः
कमहीं रहेगा। इसी तरह कम होते होते महीने भर के बाद
लग्न न रह कर उदय काल में वृष लग्न रहना शुरू होजायगी।
तरह आगे भी जानना चाहिये। जिस समय किसी का जन्म हो
यात्रा आदि करना हो उस समय देख लेंगे कि कौनसी लग्न
आजकल के पञ्चांगों में तो प्रतिदिन के प्रत्येक लग्नों का उदय
घंटा, मिनट के रूप में लिखा रहता है। अतएव आसानी से
लग्न का समय जाना जासकता है। मगर पञ्चांग में नभी लिखा
पर लग्न जानने की समुचित रीति कभी लिखेंगे। इस तरह
समय की लग्न जानकर यह भी जानना चाहिये कि उस
चन्द्रमा किस राशि पर है। यह भी बात पञ्चांग मेंही लिखी
है। लग्न और चन्द्र की राशि जान लेने पर दोनों से गिनती
अलग करके देखेंगे कि उस समय की लग्न से अन्याय
राशियां किन किन संख्याओं पर हैं। इसी तरह चन्द्र की राशि
शेष राशियों कीं संख्या जानेंगे। कल्पना कीजिये कि आज
दिन को या तो किसी का जन्म हुआ या कोई कार्य करना है
उस समय कर्क लग्न का उदय है और मकर राशि का चन्द्रमा
अब यदि कर्क लग्न से गिनती करते हैं तो सिंहका स्थान (क्रमसे
दूसरी (२), कन्या की तीसरी और इसी तरह अन्यान्य राशि
(लग्नों) कीं होती है और मिथुन लग्न १२ वीं हो जाती
तुला ४ थी, मकर ७ वीं, मेष १० वीं होती है। यदि
राशि से गिनते हैं तो कुम्भ दूसरी, मीन तीसरी, मेष चौथी।
तरह गिनते गिनते कर्क ७ वीं, तुला १० वीं और धन ११ वीं
है। इस तरह लग्न और चन्द्रराशि से गिनने पर, जब तक
एक न हों, सदा भेद होताही रहेगा। लग्नसे दूसरा और ही होगा
चन्द्रराशिसे दूसराही। इसीलिये हमेशाही इस प्रकारकी दोनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बनानेके लिये लग्न कुंडली और चन्द्र कुंडली दोनोंहीं बनाते हैं। इसका विशेष विचार अन्यत्र मिलेगा। यहाँ पर इस कथनका अभिप्राय केवल यही है कि इस तरह लग्न और चन्द्र से गिनने पर अलग अलग दूसरी तीसरी आदि क्रमसंख्या या स्थानों में जो राशियाँ पड़ जाती है उन्हें भाव कहते हैं। अकसर जो यह कहा जाता है कि चौथे या ७वें स्थान में बृहस्पति है, या १२ वें सूर्य इत्यादि। उसका अभिप्राय यही है कि जन्म या कार्य के उस समय के लग्न या चन्द्र की राशि से गिनती करने पर चौथी या ७ वीं राशि जो ही पड़ती है उसीपर बृहस्पति तथा १२ वीं जो पड़े उसी पर सूर्य इस समय पञ्चांग के अनुसार हैं। इस प्रकार लग्न या चन्द्र की राशि को १ या पहला मान कर १२ भाव या स्थान होजाते हैं। इन बारहों स्थानों में ग्रहों के रहने से भिन्न भिन्न स्थान के अनुसार भिन्न भिन्न फल होता है। वही ग्रह इस भाव के अनुसार अच्छा और बुरा फल देता है। ग्रह है तो उसी राशि पर। मगर जन्म के लग्न या चन्द्र राशि के भिन्न भिन्न होने से उसकी क्रम संख्या (स्थान या भाव संख्या; भिन्न भिन्न होजाती है। इसीसे किसी को वही अच्छा फल देता है और किसी को बुरा। एक से लेकर इन बारह भावों के भिन्न भिन्न नाम ज्योतिष ग्रन्थों में हैं। पहले तो १ (लग्न या राशि), ३, ७, और १० को केन्द्र, कंटक और चतुष्टय कहते हैं। ये तीनों नाम इन चारों के हैं। ३, ६, १०, ११, को उपचय और शेष १, २, ४, ५, ७, ८, ९, १२ को अपचय कहते हैं। ५, ९, को त्रिकोण कहते हैं। इसके सिवाय १ को लग्न, तनु, मूर्त्ति, देह, अंग, वपु, कल्प, उदय, आद्य, प्रथम इत्यादि कहते हैं। देह के पर्याय जितने शब्द हैं सभी उसके लिये बोले जा सकते हैं। २ को पणफर, द्रव्य, स्व, वित्त, कोश, अर्थ, कुटुम्ब, धन, दितीय आदि कहते हैं। इसमें धन के पर्याय शब्द सभी बोले जासकते हैं। ३ को आपोक्लिम, पराक्रम, सहज, भ्रातृ, दुश्चिक्य, तृतीय आदि कहते हैं। भ्राता के पर्याय बन्धु आदि शब्द भी बोले जा सकते हैं। ४ के सुख, अम्बा, पाताल, तुर्य, हिबुक, गृह, सुहृद, वाहन, यान, बंधु अंबतीर, जल, चतुर्थ आदि नाम हैं। ५ के फणपर, सुत, तनय, बुद्धि, विद्या, आत्मज, वाक, तनु, त्रिकोण, पञ्चम आदि नाम हैं। इसमें पुत्र के के पर्याय सभी आजाते हैं। ६ के आपोक्लिम, त्रिक, शत्रु, रिपु, द्वेष, वैरि, क्षत, षष्ठ आदि हैं। शत्रु के पर्याय सभी शब्द इसमें आजातेहैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

७ के कलत्र, जामित्र, अस्त, स्मर, मदन, काम, द्यून, मद, स्मर आदि। कामदेव के पर्याय सभी इसमें हैं। ८ के फणपर, त्रिक, मृत्यु, रन्ध्र, आयु, छिद्र, याम्य, निधन, लय, अष्टम आदि। मत्यु और मरण के पर्याय सभी इसमें हैं। ९ के आपोक्लिम, त्रिकोण, भाग्य, गुरु, धर्म, शुभ, तप, भार्ग, नवम आदि। १० के राज्य, तात, आज्ञा, मान, कर्म, आस्पद, गगन, नाम, व्योम, मेषूरण, मध्य, व्यापार, दशम आदि। आकाश के सभीपर्याय इसमें आगये। ११ को फणपर, उपचय, लाभ, भव, आगम, प्राप्ति, आय, लब्धि, एकादश आदि। आय (आमद) के पर्याय सभी इसमें आगये हैं। १२ को आपोक्लिम, त्रिक, व्यय, प्रान्त्य, अन्तिम, रिःफ, द्वादश आदि हैं। ४ और ८ को चतुरस्र, तीन और १० को त्र्याश कहते हैं।

पहले जो नवांश कहे गये हैं उनमें यह नियम है कि प्रत्येक राशि के नवांशों में से जो नवांश उस राशि का होगा उसे वर्गोत्तम कहते हैं। दृष्टान्त के लिये मेष राशि में पहलाही नवांश मेष का है। अतः वही वर्गोत्तम कहाता है। इसी तरह वृष राशि में मकरसे शुरू करके पांचवां नवांश वृष का आता है और मिथुन में तुला से शुरू कर नवां नवांश मिथुन का है। अतः वही वर्गोत्तम हैं। इसी तरह आगे के कर्क, सिंह, कन्या तथा तुला वृश्चिक धन, एवं मकर, कुंभ, मीन तीन मेंभी पहले तीन कीही तरह क्रम से प्रथम, पञ्चम और नवां नवांश वर्गोत्तम होते हैं। यह भी जान लेना चाहिये कि जब राशि कोही लग्न कहते हैं तो लग्नों के भी स्वामी वही होंगे जो राशियों के होंगे और राशियों कीही तरह लग्नकी भी होरा, द्रेष्काण नवांश, द्वादशांश और त्रिंशांश होंगे और उनके स्वामी भी वही होंगे जो राशियों में कहे गये हैं। अन्तर यही है कि राशि का भोग देढ़ घंटा होगा। अतएव उसकी होरा, द्रेष्काण आदि अधिक समय तक रहेंगे। इसके विपरीत लग्न का भोग प्रायः दो घंटेही होने से इसी में थोड़ी थोड़ी देर तक होरा, नवांश आदि रहेंगे। इससे इस बात में अधिक विचारने को स्थानही नहीं रह जाता कि अमुक लग्न पर या लग्न में कौन ग्रह है, उसका स्वामी कौन है, उसके नवांश का स्वामी कौन है और किस नवांशपर कौन ग्रह है इत्यादि। क्योंकि पञ्चांग से उन राशियों का पता लग जायगा कि अमुक राशि पर अमुक ग्रह है?

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

फिर उस लग्न में भी वही होगा और उस राशि के जिस नवांश पर जो ग्रह पहुंचा होगा वही ग्रह लग्न के भी उसी नवांश पर होगा। यह भी जान लेना होगा कि जब राशि के ३० अंश हैं और नौ नवांश, तो एक नवांश ३ अंश और २० कला का ही होगा। २७ अंश को ९ जगह बाँटने से एक हिस्से पर ३ अंश और शेष ३ अंश की १८० कलाओं को नौ जगह विभक्त किया तो एक भाग में २० कलायें आईं।

राशियों की चर, स्थिर, और द्विस्वभाव ये तीन संज्ञायें हैं। चर कहते हैं चंचल को, स्थिर का अर्थ है स्थायी-यह एक जगह रहने वाला और द्विस्वभाव कहते हैं मिले स्वभाव वाले को। अर्थात् इस में चर और स्थिर दोनों का अंश मिला रहता है। इसी से उसे मिश्र भी कहते हैं। मेष, वृष, मिथुन को क्रम से चर, स्थिर, द्विस्वभाव कहते हैं। इसी तरह कर्क, सिंह, कन्या आदि तीन तीन में भी क्रम से जान लेना चाहिये। मेष, मिथुन आदि विषम राशियां पुरुष और क्रूर स्वभाव की तथा वृष, कर्क आदि समराशियां स्त्री और कोमल स्वभाव की मानी जाती हैं। धनका पूर्वार्द्ध ही पुरुष माना जाता है। जितनी नर राशियां हैं, जब ये लग्न में पड़जाती हैं अर्थात् जब यही लग्न रहती हैं तो बलवान होती हैं। मेष, वृष, सिंह, धनु का उत्तरार्द्ध और मकर का पूर्वार्द्ध ये चतुष्पद कहाते हैं और १०वें स्थान में पड़ने पर ये बली माने जाते हैं। वृश्चिक को कीट या सरीसृप कहते हैं। वह सातवें स्थान में होने से बलवान होता है। कर्क और मकर का उत्तरार्द्ध ये जलीय या जलराशियां हैं। ये ४ थे स्थान में बलवान होते हैं। कर्क को भी कीट ही कहते हैं। लग्न सदा पूर्व में मानी जाती है अतः १ या प्रथम भाव पूर्व में होता है। चौथा उत्तर में, ७ वां पश्चिम में और १० वां दक्षिण में माना जाता है। अतः १,४, ७, १० कहने से क्रमशः यही दिशायें जानी जाती हैं। राशि चक्र, जिसमें १२ लग्न हैं, सदा पूर्व से पश्चिम घूमता है। इसलिये १, २, ३, आदि पूर्व से शुरू होकर क्रमशः उत्तर, पश्चिम, दक्षिण ओर पड़ जाते हैं। तभी तो पहले जब मेष रहेगा तो उसके आगे अर्थात् दक्षिण ओर होकर पश्चिम ओर क्रमशः बढ़ने के बाद मेष से उत्तर वाला वृष मेष की जगह पूर्व में आजायगा। फिर जब वह भी आगे बढ़ जायगा तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

उससे भी उत्तर का मिथुन उसकी जगह पूर्व में आजायगा। इसी तरह आगेभी होता रहेगा। जैसे सब ग्रह घूमते हैं उसी तरह राशि चक्र भी घूमता है ऐसी कल्पना कीगई है। मेष, वृष, कर्क, धनु, मकर ये पांच पृष्ठोदय राशियां कहाती हैं। पृष्ठोदय का अर्थ है कि जिन का उदय पीठ की ओर से होता हो। मिथुन, सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक, कुंभ ये ६ शीर्षोदय हैं। अर्थात् इनका उदय सिरकी तरफ से होता है। मीन को दोनों स्वभाव का मानकर इसे उभयोदय कहते हैं। मेष आदि १२ राशियों के रंग या वर्ण क्रमशः ये हैं–(१) थोड़ालाल (२) श्वेत (३) हरा (४) श्वेत, रक्त का मिश्रण (५) धूएं की तरह जराजरा श्वेत (६) अनेक रंग (७) काला (८) सोनहला (९) थोड़ा थोड़ा कपिल (पीले, काले का मेल), (१०) श्वेत, कपिल का मिश्रण (११) कपिल (१२) मैला। कालपुरुष के अंगों की कल्पना मेषादि राशियों से इस तरह करते हैं कि (१) सिर (२) मुख (३) बाहु (४) हृदय (५) पेट (६) कमर (७) नाभि के नीचे का भाग (वस्ति) (८) गुह्य (९) दोनों जंघे (१०) दोनों घुटने (११) घुटने से नीचे का भाग वाला भाग (१२) पांव। इन्हीं स्थानों में क्रमशः वे राशियां पड़जाती हैं। मेषादि चार क्रम से क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण वर्ण हैं। इसी तरह सिंहादि चार और धनु आदि चार को भी जानना चाहिये। ग्रह जिस स्थान पर रहते हैं वहाँ से अन्यान्य स्थानों को देखते या उनपर उनकी दृष्टि पड़ती है। वह दृष्टि कभी तो पूरी, कभी तीन चौथाई, कभी आधी और कभी चौथाई होती है। इसेही, पूर्ण, त्रिपाद, द्विपाद और पाददृष्टि भी क्रम से कहते हैं। सूर्य, चन्द्र, बुध और शुक्र अपने से तीसरे और दसवें को पाद दृष्टि से, ५, ९ को (आधी) द्विपाद दृष्टि से, ४, ८, को त्रिपाद दृष्टि से और ७ वें को पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। मंगल ७ वें को एकपाद, ३, १० को द्विपाद; ५, ९ को त्रिपाद और ४, ८ को पूर्ण दृष्टि से देखता है। बृहस्पति, ४, ८ को एकपाद, ७ वें को द्विपाद; ३, १० त्रिपाद और ५, ९ को पूर्ण दृष्टि से तथा शनि ५, ९ को एकपाद; ४, ८ को द्विपाद, ७ को त्रिपाद और ३, १० को पूर्ण दृष्टि से देखता है। राहु की यह दशा है कि वह जहां होता है उसके पीछे (बाईं ओर) के ५, ७, ९ और ११ वें को पूर्ण दृष्टि से, २, १० वें को त्रिपाद दृष्टि से, ३, ४, ६, ८ वें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को द्विपाद दृष्टि से देखता है और जिस स्थान में रहता है उस को और ११ वें को देख नहीं सकता । केतु को अन्धा मानते हैं । अतः उसकी दृष्टि नहीं होती । अन्य ग्रहों केलिये यह सामान्य नियम है कि वे जिस स्थान में रहते हैं उसे तथा द्वितीय, छठें, ग्यारहवें और १२ वें को कभी भी नहीं देखते ।

मेष, सिंह. धनु पूर्व के; वृष, कन्या, मकर दक्षिण के, मिथुन, तुला, कुम्भ पश्चिम के और कर्क, वृश्चिक, मीन उत्तर दिशा के स्वामी हैं । इन राशियों का चन्द्रमा भी इन्हीं दिशाओं में रहता है । सूर्य, शुक्र, मंगल, राहु, शनैश्चर, चन्द्र, बुध, बृहस्पति ये आठ क्रम से पूर्व, अग्नि, दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम, वायव्य, उत्तर और ईशान दिशाओंके स्वामी हैं । अतएव ये जिन राशियों के स्वामी हैं वे राशियां भी इनकी दिशाओं की ही स्वामिनी होंगी । बुध, शनैश्चर नपुंसक; चन्द्र, शुक्र, स्त्री और शेष पुरुष हैं । सबसे दुर्बल शनि और उसके बाद मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र और सूर्य क्रमशः अधिक बल वाले हैं । सूर्य के शत्रु शनि और शुक्र; सम या तटस्थ बुध और शेष चंद्र, मंगल, गुरु मित्र हैं । चंद्र का शत्रु कोई नहीं; मंगल, गुरु, शुक्र, शनि ये चार चन्द्र के सम और सूर्य, बुध मित्र हैं । मंगल का शत्रु बुध; सम शुक्र, शनि दो; गुरु, चंद्र, सूर्य तीन मित्र हैं । बुध का शत्रु चंद्र; सम हैं भौम (मंगल), गुरु, शनि; मित्र सूर्य और शुक्र । गुरु के शत्रु बुध, शुक्र; सम शनैश्चर और मित्र चन्द्र, सूर्य, भौम ये तीन हैं । शुक्र के शत्रु सूर्य, चन्द्र; सम भौम, गुरु, और मित्र बुध, शनि । शनि के चन्द्र, सूर्य, मंगल शत्रु; गुरु सम और बुध, शुक्र मित्र हैं । राहु के सूर्य, चन्द्र, भौम शत्रु; शुक्र, शनि मित्र; गुरु, बुध सम हैं । केतु के शुक्र, शनि शत्रु; सूर्य, चन्द्र, भौम मित्र और गुरु, बुध सम हैं । स्मरण रहे कि यद्यपि सूर्य और चन्द्र के शत्रु केतु, राहु माने गये हैं, यह पुराणों में है । मगर ज्योतिषी लोग ऐसा नहीं लिखते । शायद उन्हें इसका प्रयोजन भी नहीं हैं । क्योंकि शत्रु के गृह में जाने से ग्रह दुर्बल हो जाता है ऐसा मानते हैं । मगर राहु, केतु के जो स्थान हैं वही दूसरे ग्रहों के भी हैं । इसलिये दूसरे ग्रहों की मित्रता या शत्रुता आदि सेही काम चल जायगा । हां, राहु, केतु के शत्रु आदि कौन हैं यह आवश्यक था । इसलिये लिख दिया है । यह मित्रता आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

स्वाभाविक है जिसे नैसर्गिक भी कहते हैं । मगर तात्कालिक मित्रता आदि भी होती है । उसका नियम एकही है और वह यही है कि जिस स्थान में ग्रह रहता है उससे २, ३, ४, १०, ११, १२ स्थानों में जो ग्रह होता है वह तात्कालिक मित्र और १, ५, ६, ७, ८, ९, स्थानों वाला तात्कालिक शत्रु होतो है । तात्कालिक सम, तटस्थ या मध्यस्थ कोई नहीं होता । इसका फल यह होता है कि यदि तात्कालिक मित्र के स्थानमें स्वाभाविक मित्रही पहुंच जाय, तो वह अधिक(परम) मित्र और स्वाभाविक शत्रु पहुंच जानेपर अधिक (परम) शत्रु हो जाता है । इसी तरह यदि मध्यस्थ तात्कालिक मित्र स्थान में पहुंच जाय तो मित्र और शत्रु पहुंचने पर मध्यस्थ होजाता है । एवमेव तात्कालिक शत्रु के स्थान में मध्यस्थ पहुंच जाय तो शत्रु होजाता है और मित्र मध्यस्थ या सम होजाता है । इससे फल में अब अन्तर पड़ जायगा । सूर्यादि सात की जो मूल त्रिकोण राशियां कही गई हैं यदि वहीं उनसे ६, ५, ९, ८, १ और ७ वें स्थान में पड़ जायँ तो वे तात्कालिक रिपु (शत्रु) होजाती हैं । सूर्य को हेलि, भास्वान, दिवाकर, तीक्ष्णांशु, सविता, भानु भी कहते हैं । इसी तरह चन्द्र को शीतरश्मि, शीतकिरण, अमृतकिरण, मृगांक, ग्लौ, शशी आदि । बुध को विद्, विद्या या हेम्नावित्, बोधनज्ञ, आदि । मंगल को आर, वक्र, क्रूरदृक्, क्रूरदृष्टि, वक्रदृष्टि, रक्त, लोहित, अंगारक, आवनेय, कुज, भूमिज, भूसुत आदि । शनि को यम, सूर्यपुत्र, पातंगि सौर, सौरि, छायापुत्र, कोण, मन्द, अर्कि आदि । बृहस्पति को जीव, सुरगुरु, अंगिरा, आंगिरस, इज्य, सुरेज्य, वागीश, वाक्पति, गुरु, इन्द्रमंत्री आदि । शुक्र को भार्गव, भृगु, भृगुसुत, सित, आस्फुजित्, उशना, असुराचार्य आदि । राहु को अगु, तम, स्वर्भानु, असुर, दैत्य आदि । केतुको शिखी कहते हैं । राहु को सैंहिकेय, दानव, अमृतचौर आदि भी कहते हैं । बुधको सौम्य, रौहिणेय, चांन्द्रि, मृगांकतनय आदि भी कहते हैं ।

मकर की संक्रान्ति से कर्क की संक्रान्ति तक ६ महीने उत्तरायण और कर्क की सक्रान्ति से मकर की संक्रान्ति तक दक्षिणायन कहाता है । जब सूर्य क्रमशः दक्षिण ओर बढ़ने लगता है तो दक्षिणायन और उत्तर ओर बढ़ने लगने पर उत्तरायण होता है । मेष की संक्रान्ति से तुला की संक्रान्ति तक ६ महीने को उत्तर या सौम्य गोल और तुला

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से मेष तक को याम्य यो दक्षिणगोल कहते हैं । जब सूर्य भूमध्य रेखा से उत्तर ओर जाकर उधरही रहता है तो सौम्य या उत्तरगोल और उसके दक्षिण ओर जाने पर याम्य या दक्षिणगोल कहाता है । पृथ्वी गोल है और उसके उत्तर दक्षिण दो गोलार्द्ध हैं । इसीसे गोल शब्द आया है । यद्यपि आजकल की संक्रान्तियों में कुछ अन्तर आगया है और जिन जिन का नाम ऊपर लिखा हैं उनसे कुछ पहले ही उत्तरायण आदि वास्तव में होजाता है, जैसा कि दिन घटने बढ़ने और बराबर होने से पञ्चांग सेही विदित होजाता है । जब रातदिन बराबर होजायंगे तभी से उत्तर या दक्षिण गोल का आरंभ समझना चाहिये और जब दिन बड़ा होने लगे तभी से उत्तरायण तथा घटने लगे तभी से दक्षिणायन मानना चाहिये । मगर जब तक कोई भारी ज्योतिषी उनमें परिवर्त्तन करके नयी व्यवस्था नहीं कर देता, तब तक पूर्व व्यवस्थाही से व्यवहार किया जायगा । मगर इस तरह गणित में भी अन्तर न पड़जाय, इसके लिये अयन की व्यवस्था कीगई है । अयन का अर्थ है जाना । अर्थात् ज्योंहीं सूर्यने वास्तविक गति से उत्तर ओर चलना शुरू करदिया कि त्योंही 'अयनेऽर्कः' ऐसा पञ्चांगों में लिखा जाने लगा । इसीलिये हरेक संक्रान्ति के पहले उसका अयन भी पञ्चांग में लिख देते हैं । क्योंकि वस्तुतः तो उस राशि पर सूर्य पहले सेही जाचुका है । तभी तो मकर वा कर्क संक्रान्ति सेभी पहलेही उत्तरायण और दक्षिणायन होजायगा । बराबर पञ्चांगों में देखा जायगा कि हरेक संक्रान्ति से २३, २४ दिन पहलेही अयन लिखा है 'सायनमेषेऽर्कः' या 'मेषेऽयनम्' इत्यादि । इस बात को जनाने के लिये गणित के व्यवहार में अयनांश निकालने की रीति है । इसका अभिप्राय यह है कि संक्रान्ति के समय तक वस्तुतः उस राशि के कितने अंशों में सूर्य का गमन (अयन) होचुका है । उतनेही अंशों का जान लेना अयनांश (अयन + अंश) ज्ञान कहाता है । यह आवश्यक नहीं कि पूरे अंश होगये हों । अंशों के साथ कला भी रहती है । सारांश यही है कि प्रत्येक वर्ष में एक कला, अतएव प्रतिमास ५ विकला, आगे सूर्य बढ़जाया करता है । इस तरह सूर्य के कितने अयनांश अब तक होचुके हैं यह जानने के लिये दो रीतियां हैं । एक तो ग्रहलाघव की है । दूसरी अन्यान्य ग्रन्थकारों की । ग्रहलाघव कीही तरह थोड़ासा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

हेरफेर करके औरों ने भी लिखा है । ग्रहलाघव में लिखा है कि वर्त्तमान शब्द (शाका) में ४४४ घटा देने से जो शेष होगा वही कला होगी । उसमें ६० का भाग देकर अंश बना लेना चाहिये । इसी ४४४ की जगह मानसागरी में ४३५ और भास्वती में ४५० घटाने को लिखा है । दृष्टान्त के लिये वर्त्तमान शक १८४७ मेंसे ४४४ घटाने से १४०३ रहगये । यह कलायें हुईं । इनमें ६० का भाग देने पर २३ अंश २३ कलायें (०।२३।२३।०) अयनांश हुआ । मगर वह हुआ इस मास के आरंभ का । बाद में जितने महीने बीते हों उनके हिसाब से प्रति मास ५ विकला और बढ़ा देना होगा । ४४५ घटाने से २३ कलाओं की जगह २२ ही और ४५० घटाने से १७ ही रह जायगी । मगर अंश तो २३ ही रहेगा । दूसरी रीति अयनांश निकालने की यह है कि जब शक में ४२१ घटाकर शेष को ३ से गुणा करके २०० का भाग देते हैं तो लब्धि अंश आता है और शेष को ६० से गुणा कर २०० का भाग देने पर कला और फिर शेष को ६० से गुणा कर २०० से भाग देकर विकला आदि निकालते हैं । और जितने महीने बीते हों उतने को साढ़े चार से गुणाकर वही पल (विकला) उसमें जोड देने से उस समय का अयनांश आजायगा । इसके सिवाय और भी रीतियें इसकी हैं । मगर उनका लिखना बेकार है ।

ग्रह तीन प्रकार की गतियोंवाले होते हैं और इन्हीं गतियों से उनके नाम भी अलग अलग होगये हैं । वे हैं, मार्गी, वक्री और उभयात्मक । यद्यपि लिखा जाता है दोही प्रकार । फिर भी सुगमता के लिये हमने तीनों लिखा है । मार्गी का अर्थ है मार्ग से चलनेवाला या सीधा चलनेवाला और वक्री का अर्थ है वक्र या उलटा चलने वाला । चन्द्र और सूर्य सदा सीधेही आगे को चले जाते हैं । कभी पीछे को या उलटा नहीं चलते । इसीसे वे मार्गी ग्रह हैं । इनके विपरीत राहु और केतु सदाही उलटे चलते हैं । कभी सीधे मार्ग से चलते नहीं । इसीसे वे वक्री हैं । शेष मंगल, बुध, गुरु, शुक्र और शनि ये पांच कभी तो सीधे चलते हैं और फिर अकस्मात् उलटा चलने लगते हैं । अर्थात् पीछे लौट पड़ते हैं और कुछ देर ऐसा चलकर फिर सीधे हो जाते हैं । इसीसे इन्हें मार्गी और वक्री दोनों (उभयात्मक) कहा है । इनकी सभी प्रकार की (दोनों) गतियों के नियम और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हिसाब हैं कि कब मार्गी और कब वक्री होकर फिर कब मार्गी होजाते हैं। इस बात को यों समझ सकते हैं कि सूर्य और चन्द्र मेष राशि की अश्विनी नक्षत्र से चलना शुरू कर १२ वीं (मीन) राशि के रेवती नक्षत्र तक सीधे चले जाते हैं और रेवती के बाद फिर अश्विनी से यात्रा शुरू करते हैं। मगर राहु, केतु मीन की रेवती सेही यात्रा शुरूकर मेष की अश्विनी तक क्रमशः पहुंचते हैं और फिर रेवती सेही शुरू करते हैं। इसमें भी विशेषता यह है कि जब सूर्य या चन्द्र अश्विनी के प्रथम चरण से शुरू कर रेवती के चौथे चरण पर पहुंच कर एक चक्र पूरा करते हैं, तो राहु, केतु रेवती के चौथे चरण सेही शुरूकर तीसरे, दूसरे आदि पर होते अश्विनी के पहले चरण पर पहुंच कर एक चक्र पूरा करते हैं। परन्तु मंगल, आदि पांच की यह दशा है कि वह भी सूर्य, चन्द्र कीही अश्विनी के प्रथम चरण से यात्रा शुरूकर देतेहैं सही। फिर भी, कुछ दूर जाकर, और मान लीजिये कि पुष्य के चौथे चरण पर पहुंच कर, वक्री होजाते हैं। अब दशा यह होती है कि राहु, केतु की तरह उलटी चाल होगई और पुष्य के चौथे चरण से फिर तासरे, दूसरे, पहले चरण और पुनर्वसु के चौथे, तीसरे आदि चरणपर आगये और नियत समय तक इस तरह चलकर फिर पहले जैसे सीधे ही चलने के लिये लौट पड़ते हैं। फलतः जिन नक्षत्रों के जिन जिन चरणों पर से होकर आये थे उन्हीं पर से होकर फिर वहां पहुंचते हैं जहां से पहली बार लौटे थे और उसके बाद फिर आगे का मार्ग तै करते हैं। इस तरह कुछ नक्षत्रों या उनके चरणों पर इन पाँच ग्रहों को तीन बार चलना पड़ता है।

यदि ग्रह अपने स्थान (राशि), मित्र की राशि, उच्च राशि, अपने मूल त्रिकोण या अपने नवांश में स्थित हो अथवा शुभ ग्रहों की दृष्टि उस पर पड़ती हो तो वह बलवान् होता है। इसके सिवाय अपनी होरा और अपने द्रेष्काण में रहने पर भी बलवान होता है और शुभ फल देता है। मगर यदि अपने शत्रु के स्थान में हो या शत्रु की दृष्टि उस पर पड़ती हो, नीच स्थान में हो तो अशुभ फल देता है। अस्त होने पर भी ग्रह दुर्बल और उदय होने पर सबल होता है। उच्च स्थान में ग्रह हो तो पूरा फल देता है, अपने या शत्रु के स्थान में आधा; नीच स्थान में एक चौथाई और अस्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

होने पर कुछ भी फल नहीं देता । बलके सम्बन्ध में विशेष विचार अन्यत्र मिलेगा । अपनी राशि और उच्च आदि राशियों में जाने के कारण ग्रहों की नौ प्रकार की संज्ञा हो जाती है । उच्चराशि राशि में जानेपर दीप्त, अपनी राशि में स्वस्थ, मित्र राशि में हर्षित, शुभग्रह के नवांशादि षड्वर्ग में शान्त, उदय होने पर शक्त, अस्त होने पर विकल, नीच राशि में जाने पर दीन, पापग्रहों का साथ होने पर क्षुब्ध और पापग्रहों से पीडित होने पर पीड़ित कहाता है ।

बहुतसे पञ्चांगों में 'मिश्रमान' लिख कर उसके आगे दण्ड पल आदि लिखे रहते हैं । यह मिश्रमान दिन रात जानने का कांटा या तराजू है । प्रतिदिन दिनमान (दिन का प्रमाण या विस्तार लम्बाई) कितना है और रात्रि मान कितना है यह जानने के लिये ही मिश्रमान लिखा रहता है । असल में यह दिन और रात्रि मानका मिश्रण (मिलावट) जैसा है । इसीसे इसे मिश्रमान कहते हैं । मिश्रमान के दण्ड पलादि को दूना कर उस में से ६० घटा देने से उस दिनका दिनमान होता हैं और ६० में मिश्रमान से या मिश्रमान में दिनमान को घटा कर शेष को दूना करने से या ६० से दिनमान घटाने से ही उस दिन का रात्रिमान दण्ड, पल के रूप में निकल आवेगा । आधी रात के बाद से दो पहर के दण्ड तक के समय को पूर्वनत और दोपहर के बाद से आधी रात के पहले को पश्चिमनत कहते हैं । जिस समय कोई कार्य करना या पुत्रादि का जन्म हो उसे इष्ट काल कहते हैं । वह सूर्योदय के बाद कितने दण्ड और पल आदि है यह निकाल लेना चाहिये । यन्त्र और पञ्चांग की सहायता से उसे ठीक करलेना चाहिये । इस इष्ट काल के विना नत का ज्ञान नहीं हो सकता और नतज्ञान के बिना द्वितीय, तृतीय आदि पूर्वोक्त भावों का ठीक ठीक पता नहीं लग सकता कि कौनभाव कितनी देरतक-कब से कब तक-था या है और भाव ज्ञान विना दो भावों की सन्धि या मेल के काल का ज्ञान नहीं हो सकता और जब तक लग्न, भाव और उनकी सन्धियों के समय या अंश, कला आदि का ज्ञान न होजाय तब तक ग्रहों का फल ठीक ठीक नहीं घट सकता और न मालूम ही हो सकता है । इसीलिये इन सबों का जानना आवश्यक है । दो भावों के मेल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उनकी सन्धि होती है और जब ग्रह एक भाव से दूसरे पर जाता है तो सन्धि में भी उसे जाना पड़ता है। भावों के अंश, कला आदि की ही तरह सन्धि की भी अंश कला आदि कुछ न कुछ होती ही है। जैसे चारो युगों के सिवाय उनकी चार सन्धियों का भी प्रमाण कुछ वर्ष माना जाता है। यद्यपि इन सब बातों का विचार कभी करेंगे। मगर इन संकेतों का जान लेना पहले से ही आवश्यक है। यद्यपि नत की साधारण बात हम कह चुके हैं। मगर उसके सम्बन्ध में मतभेद है। अतः उसका विशेष विचार आवश्यक है। नीलकंठ लिखते हैं कि दिनमान के आधे में यदि सूर्योदय से दिन की बीती घड़ियां (इष्ट काल) घटजायँ, तो जो शेष होगा वह दिन का पूर्वनत दण्ड, पलात्मक होगा। मगर यदि इष्टकाल (सूर्योदय के बाद बीता समय) दिन मान के आधे से ज्यादा हो तो उसमें से दिनमान का आधा घटा देने पर जो शेष होगा वह दिन का पर (पश्चिम) नत होगा। इसी तरह रात्रिमान के आधे में सूर्योदय के बाद बीती रात की घड़ियां (इष्टकाल) यदि घट जायँ, तो शेष दण्ड, पल रात्रि का पूर्व नत होगा। मगर यदि सूर्यास्त के बाद बीती रात के दण्ड, पल (इष्ट समय) रात्रि मान के आधे से अधिक हों तो रात्रिमान का आधा घटा देने से शेष रात्रि का पश्चिम नत होगा। इस प्रकार जो नत आवेगा उसे ३० में से घटाने से शेष उन्नत होना। पूर्वनत और पश्चिमनत घटाने से पूर्वोन्नत, पश्चिमोन्नत होगा। यह है पहले प्रकार का नत। दूसरे प्रकार का यह है कि आधी रात के बाद का यदि इष्टकाल हो तो हिसाब करने पर जितनी रात शेष हो उसमें दिनमान का आधा जोड़ने से रात्रि का पूर्वनत होता है और यदि आधी रात से पहले का इष्टकाल हो तो सूर्यास्त के बाद जितने दण्ड पल रात के बीते हों उनमें दिन का आधा जोड़ने से रात का पश्चिम नत होता है। यदि दिन का इष्ट काल दो पहर से पहले हो तो उसमें दिन मान के आधे में पहली रीति की ही तरह सूर्योदय के बाद का इष्ट समय घटाने से दिन का पूर्वनत और यदि दोपहर के बाद हो तो उसी में से दिन का आधा घटाने से दिन का पश्चिम नत होगा। उन्नत तो उसी तरह ३० में नत के घटाने से ही होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant

दोनों रीतियों में दिन का पूर्व और पश्चिम नत तो एक
प्रकार से बताया गया है; उसकी रीति एक ही लिखी गई है। मगर
रात्रि के पूर्व और पश्चिमनत में अन्तर है । जहां पहली रीति
के अनुसार आधीरात होने में जितना शेष है वह रात्रि का पूर्वनत
और आधी रात के बाद जितनी रात बीती हो वह रात्रि का
परनत है और ऐसाही दिन में दो पहर होने को जितना शेष
है वह दिनका पूर्वनत और दो पहर के बाद जितना बीता है वह
दिन का परनत है । तहां यद्यपि दिन के बारे में तो यही रीति है
मगर रात्रि के बारे में दो बातें पहली रीति की उलटी हैं। एक
इसमें पूर्वनत आधी रात के बाद और पश्चिमनत आधीरात के
पहले माना है। हालांकि पहली रीति में आधी रात से पहले
पूर्वनत और बाद को पश्चिम या परनत कहा है। दूसरा भेद यह
कि जहां आधीरात के बाद बीती रात को पश्चिमनत कहा है वहां
बीती रात के बाद से दो पहर तक के शेष समय को दूसरी रीति में
पूर्वनत कह दिया है। इसी तरह जहां पहली रीति में आधी रात
होने को जो शेष है वही समय पूर्वनत कहा है वहां दूसरी रीति में
आधीरात के होने में जो समय शेष हो, उससे पहले और दो पहर के
बीच में जितना समय बीता है उसे ही पश्चिमनत कह डाला है।
दूसरी रीति केशवी की है। उनका कहना है कि दिन रात में
और पश्चिम गोल में सूर्य को भ्रमण करना पड़ता है। दोपहर से आधी
रात तक पश्चिम गोल में रहता है और आधी रात से दोपहर तक
पूर्व गोल में। और इस नत से जिस लग्न को साधना है वह नत
हवाली दशमहीं है, जैसा कि अन्यत्र स्पष्ट होगा। अतः यही देखना
कि दिन या रात में पूर्व गोल में रहने पर सूर्य मध्यान्ह से कितना
दूर है और पश्चिम गोल में होने पर उससे कितना आगे चला गया
हैं। यहां पर इतना हीं याद रखना काफी होगा।

पञ्चांगों में प्रायः और ज्योतिष ग्रन्थों में भी 'सारणी' बनी हुई
है। सारणी नाम है ब्योरे के नकशे का। अर्थात् ब्योरे का वह संक्षिप्त
क्रम जिससे कोई चीज आसानी से स्पष्ट हो और समझ में आ जाय
इसे अंग्रेजी में टेबल (Table) कहते हैं। लग्न आदि के सुभीते के
ज्ञान के लिये यह सारणी लिखी जाती है और विना गणित के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के ही उसी की सहायता से आसानी से लग्न आदि का ज्ञान साधारण आदमी को भी हो जाता है। मगर यदि वह उस सारणी को काम में लाने (उपयोग करने) की रीति से पूर्ण परिचित हो। हम इस रीति को कभी लिखेंगे। मगर इससे पहले पञ्चांग समझने की रीति लिख देना उचित है।

२—पञ्चाङ्ग ।

प्रथम कही चुके हैं कि पञ्चांग नाम पांच अंगों के कारण पड़ा है-अर्थात् उसके अंग या प्रधान पदार्थ तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण ये पांच ही हैं और शेष इन्हीं का प्रपञ्च या इन्हीं के सम्बन्ध की बातें हैं, जिनसे इन पर विशेष प्रकाश पड़जाता है। इस प्रकरण में हम पञ्चांग के ही उपयोग करने—उसे ही काम में लाने—की रीति लिखेंगे। हम यह कह देना चाहते हैं कि इस प्रकरण के पढ़ने के समय काशी में छपा कोई पञ्चांग, और हो सके तो जरा अधिक दाम का पञ्चांग, सामने रख लेना चाहिये। अभाव में साधारण पञ्चांग से भी काम चल सकता है। क्योंकि सभी में मुख्य और प्रधान बातें लिखी रहती हैं। काशी का पञ्चांग हम इसलिये कह रहे हैं कि वही उत्तर भारत में मान्य है और हम उसी को सामने रख कर यह लिख रहे हैं। मिथिला वगैरः के पञ्चांग ऐसे पूर्ण होते भी नहीं और उनमें जो बातें लिखी जाती हैं उनका क्रम दूसरे ढंग का होता है। मगर इस प्रकरण की सहायता से यदि काशी का पञ्चांग समझ में आजाय, तो फिर ऐसा कोई भी पंचाङ्ग न होगा जिसके समझने में कठिनाई हो, अस्तु।

सब से पहले यह जान लेना चाहिये कि काशी के पंचांगों में सब प्रकार के वर्ष, साल, सन या सम्वत् लिखे रहते हैं। इनमें पहला जो केवल सम्वत् के नाम से प्रसिद्ध है, जो आज अंग्रेजी सन १९२६ अक्टूबर में १९८३ माना जाता है और दूसरा शक सम्वत्, शकाब्द या शाका के नाम से प्रसिद्ध है, जो आज १८४८ है। आज कल काशी के पंचांगों में इसका आरंभ चैत्र के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से माना जाता है। कहा जाता है कि इन दोनों का आरंभ विक्रमादित्य के ही समय में आगे पीछे हुआ है। सम्वत् तो उन्हीं का चलाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

माना जाता है और शकों को मारकर नष्ट करने की याद में
सम्वत् चलाया गया है । ज्योतिष के गणित में शक सम्वत् की
आवश्यकता होती है और सम्वत् भी माना जाता है । इन दो
सिवाय हिज़री सन या सम्वत् है, जो इस्लाम धर्म के पैगम्बर
मुहम्मद साहब के मक्का से मदीना जाने (हिजरत करने)
मरने के समय से माना जाता है । वह आज १३४६ है । इसे ही
रसी सन भी कहते हैं । चौथा फसली सन या सम्वत् है, जो आश्विन
मास की प्रतिपदा या पहली तिथि से आरंभ होता है और इस
१३३४ है । पांचवां बंगला सन है, जो मेष की संक्रांति से ही
होता है और आज १३३२ है । इन पांचों के सिवाय ईसवी
है जो आज १९२६ है और जिसे ईसाई धर्म के हजरत ईसा
मृत्यु के दिन से चलाया गया मानते हैं । इसे ही अंग्रेजी सन
कहते हैं । इन छ में से सम्वत और शक की तारीखें तो प्रत्येक
की तिथियां हीं हैं । मगर शेष चार की तारीखें पत्रों में अलग
लिखी रहती हैं । क्योंकि उनकी तारीखों का परस्पर या उन तिथि
के साथ मेल नहीं होता है । छओं में हरेक सन या सम्वत् के
महीने होते हैं । जिनमें शक, सम्वत् और फसली के तो यही
आदि महीने ही हैं, जिन्हें सभी हिन्दू जानते हैं और बंगला सन
महीने मेष आदि बारह राशियां ही हैं और उन्हीं के हिसाब
इन्हीं चैत्र, वैशाख आदि बारह महीनों को बंगाल में भी मानते
जिस तरह उत्तर भारत में ये महीने माने जाते हैं उसी तरह बंगाल
भी । मगर अन्तर है यही, कि जहां और लोग हर महीने
कृष्णपक्ष की पहली तिथि से ही उस महीने का आरंभ मानते
वहां बंगाली संक्रान्ति के ही हिसाब से वही मानते हैं । इस
केलिये हम वैशाख के कृष्णपक्ष की प्रतिपदा (पहली तिथि
ही वैशाख का आरंभ मानेंगे । मगर बंगाली उसका आरंभ मेष
संक्रान्ति से मानेगा । अर्थात् मीन राशि के बीतने पर जिस
मेष राशि पर सूर्य गया उस दिन से बंगाल का वैशाख शुरू
और ऐसा होता है कि मेष की संक्रान्ति कभी दो चार दिन
रहे ही पड़ जाती है और कभी दो चार दिन या अधिक दिन
वैशाख बीतने पर पड़ती है । यह भी जान लेना चाहिये कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूर्योदय से पहले संक्रान्ति होगई, तब तो सूर्योदय के बाद से ही उस महीने की बंगला तारीख शुरू होगी । मगर यदि सूर्योदय के बाद संक्रान्ति हुई तो अगले दिन से ही शुरू करते हैं । यही उत्तर भारत और बंगाल के महीनों में अन्तर है । फसली में भी ऐसा नियम है कि चाहे तिथियां घटें या बढ़ें और चाहे एकादशी के बाद द्वादशी का लोप होकर त्रयोदशी होजावे या दो एकादशियां हो जावें । मगर फसली सन में ११ तारीख के बाद १२ और तेरह इत्यादि ही क्रम रहेगा । कभी भी दो ग्यारह या ग्यारह के बाद तेरह न लिखेंगे, जैसा कि तिथियों में होता है । इस तरह १५ के बाद १६, १७ आदि लिखते जाकर २९, ३० या ३१, जैसा हो, लिखेंगे, न कि तिथियों की तरह हर पक्ष में १ से ही शुरू करके १५ तक ही पूरा करेंगे । यही हाल अंग्रेजी और फारसी तारीखों का भी है । अंग्रेजी तारीखें तो नियत हैं कि किस महीने में कितनी होती हैं । मगर फारसी का ठिकाना नहीं है । आरंभ शुक्ल पक्ष की द्वितीया के बाद से हुआ करता है । मुसल्मान लोग हर महीने में द्वितीया का चांद देखकर सके अगले दिन यानी तृतीया से अपने महीने की पहली तारीख मानते हैं । उनके महीने भी चान्द्रमास ही हैं । इसीलिये उनके महीने की तारखें (दिन) घट बढ़ जाती हैं । क्योंकि चन्द्रदर्शन कभी प्रतिपदा को ही हो जाता है तो कभी तृतीया को भी और यह तिथियों के घटने बढ़ने से हुआ करती है । अंग्रेजी महीने और उनकी दिनसंख्या यों है–जनवरी ३१, फरवरी २८, मार्च ३१, अप्रैल ३०, मई ३१, जून ३०, जूलाई ३१, अगस्त ३१, सितम्बर ३०, अक्टूबर ३१, नवम्बर ३०, दिसम्बर ३१ । हर चौथे वर्ष फरवरी २९ दिन का मानाजाता है और बीच में २८ दिनों का । मुसल्मानी या हिजरी महीने ये हैं–मुहर्रम, सफर, रबीउल्अव्वल, रबीउस्सानी, जमादीउल्अव्वल, जमादीउस्सानी, रज्जब, साबान, रमजान, शव्वाल, जीकाद, जिलहिज । इन छओं सनों या सम्वतों के नाम तो प्रायः पृष्ठ के ऊपर ही पृष्ठ पर लिखे रहते हैं । या यदि ऊपर न हुआ तो जहां चैत्र शुक्ल पक्ष शुरू होता है वहीं ऊपर ही लिख देते हैं महीनों के नाम तो जैसे जैसे वे महीने आते जाते हैं वैसे वसे लिखे जाते हैं और यह भी उस महीने के आगे लिखदेते हैं

Rai Guru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant

कि संख्या क्रम से यह कौन है और कभी कभी अंग्रेजी फारसी दोनों महीनों के और कभी केवल अंग्रेजी महीनों के ही लि की संख्या भी उन के नाम के बाद ही लिख दी जाती है।

अब पञ्चांग के मुख्य विषय की ओर आते हैं। यह तो लि ही है कि फाल्गुन की पूर्णिमा को होलिकादाह करने के ५ दि बाद तक वही सम्वत् और शक रहता है। यानी चैत्र कृष्णप अमावास्या तक। और चैत्र शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से ही नये स और शक का आरंभ मानते हैं। अतएव काशी के पञ्चांगों में, अन्यत्र के पञ्चांगों में भी, चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से ही आरंभ करते यद्यपि पञ्चांग बनाने की दो रीतियां हैं, ग्रहलाघवकी और म रन्द की। मगर इन से हमें कोई तात्पर्य नहीं है। कौनसी वाला सब से ठीक है और कौनसी रीति वाला नहीं, इस बा विचार करने वाले ही इसका खोद विनोद कर सकते हैं। हमें केवल उनके जानने और समझने की रीति का ज्ञान कराना है। वह चाहे ग्रहलाघवीय रीति का हो या मकरन्दपक्षीय का यह तो पहले ही कह चुके हैं कि पूर्णिमा से पूर्णिमा तक और अ अमावास्या तक, ये दो रीतियां महीने मानने की हैं। यद्यपि के पञ्चांगों में आमावास्या से अमावास्या तक वाली रीति अ मानी जाती है। फिर भी इतना तो अवश्य ही रहता है कि सभी प में अमावास्या के जनाने के लिये (१५) का अंक न लिखकर लिखते हैं और पूर्णिमा के लिये १५ ही लिखते हैं। इससे स्पष्ट अमावास्या को मास का अन्तिम दिन समझ कर कभी ज लिखने की रीति थी वह नाममात्र के लिये अभी तक चली आ है—लोग उसे बराबर स्मरण कर रहे हैं। अमावास्या के लि लिखने का यही रहस्य है। अस्तु, जब हम पञ्चांग उठाकर देख तो जहां से चैत्र शुक्ल का आरंभ होता है वहां सब से पहले ऊपर नीचे दो रेखाओं (लम्बी लकीरों) के बीच में कुछ लिखा रहता वस्तुतः यह शीर्षक, सिरनामा या हेडिंगवाली पंक्ति है। यही लिखा रहता है कि यहां कौन कौन सी बातें लिखी है। रेखायें नीचे ऊपर पञ्चांग की लम्बाई में प्रायः एक किनारे से किनारे तक खिंची होती हैं उन में कहीं तो दोनों के निकट तक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, J

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कहीं केवल नीचे वाली तक ही बहुत सी रेखाएं (लकीरें) पञ्चांग की चौड़ाई में नीचे से आकर थोड़ी थोड़ी दूर पर मिली होती हैं। या उन्हीं रेखाओं से शुरू होकर नीचे की वैसी एक रेखा तक जाती हैं जो कभी पन्नों के बीचों बीच या कभी उस से थोड़ा और नीचे पन्ने की लम्बाई में ऊपर वाली दो रेखाओं की ही तरह एक सिरे से दूसरे सिरे तक खिंची होती है। बस, इन्हीं सबसे ऊपर और मध्य या कुछ नीचे वाली रेखाओं के बीच में पञ्चांग की प्रधान बातें लिखी रहती हैं। इन दोनों से मिली हुई और कभी कभी तीनों से भी मिली हुई जो लकीरें थोड़ी थोड़ी दूर पर खींची रहती हैं वह विषय विभाग के लिये हैं। उन दो लकीरों के बीच में एकही बात लिखी रहती है और वह अलग मालूम होती है। नहीं तो लकीर के बिना पास पासही लिखी बातें और अंक परस्पर मिल जाते और साफ प्रतीति नहीं होती। इन ऊपर और मध्य की लम्बी लकीरों के मध्य में बीच वाली ऊपर से नीचे तक की छोटी छोटी लकीरों को काटही हुई ऊपर और मध्य वाली लकीरों की ही तरह लम्बी. परन्तु पतली लकीरें पञ्चांग की लम्बाई में आधी दूर या उससे कुछ अधिक दूर तक खिंची होती हैं। इनके कारण छोटे छोटे घर या खाने बहुत से बन जाते हैं। लकीरें इसी हिसाब से और इसी गिनती से खींची जाती हैं कि उनसे उतने हीं घर या खाने बन जावें जितनी तिथियाँ उस पक्ष में होने वाली हैं। यदि १५ हों तो १५ ही और यदि घटने बढ़ने से १४ या १६ हुईं, तो १४ या १६ ही खाने बना लेते हैं। अब पहले सब से ऊपर की दो लम्बी लकीरों के पास जाइये जो पास ही पास नीचे तक एक किनारे से दूसरे किनारे तक खिंची हैं और जरा मोटी हैं और जिनके मध्य में शीर्षक लिखे जाने की बात ऊपर कह चुके हैं। कि सब से बायें और दहिने किनारे पर जो लकीरें ऊपर से नीचे खिंची हैं वह तो सुन्दर मालूम होने के लिये हैं। मगर बायें किनारे की लकीर के बाद जो एक पतली लकीर ऊपर से नीचे को है, वह ऊपर से ऊपर वाली से न खिंची जाकर उसके नीचे वाली लकीर से नीचे को खींची गई है। किसी किसी पंचांग में ऐसी दो लकीरों के बाद और किसी में एक के ही बाद जरा मोटी सी लकीर सब से ऊपर की लम्बी लकीर से मध्य वाली तक रहती है। बायें किनारे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

वाली और इस मोटी लकीर के बीच में जो घर बन जाता है उसे दिन मान, लिखने की रीति है उसके नीचे के सभी (१३, १४, १५ या १६) घरों में प्रत्येक दिन के सामने उसका परिमाण लिखा जाता है कि वह कितने दण्डों और पलों का है । इस लिये शीर्षक के नीचे दो घर होते हैं और किसी पंचांग में तीन भी । दो होने पर पहले में दण्ड और दूसरे में पल लिखते हैं और तीन होने पर तीसरे में विपल भी लिख देते हैं । यह प्रत्येक रविवार, सोमवार आदि दिन की लम्बाई लिखने का घर (खाना) है कि वह कितने दण्ड और कितने पल आदिका है–कितना लम्बा है । इसेही दिन मान कहते हैं मान का अर्थ है परिमाण वा लम्बाई । इसी तरह जहां रात्रि का लिखा मिले वहां रात्रि की लम्बाई दण्ड, पलों में समझनी होगी किसी किसी पंचांग में "दिन मान" शीर्षक के ही घर में उसके नीचे और दंड, पल आदि लिखे जाने के घर के ऊपर पहले 'घ०', बाद में लिखा रहता है, जिसका अर्थ है घटी (दंड) और पल । यानी पहले में दण्ड लिखा जाता है दूसरे में पल । यदि तीसरा हो तो उसमें विपल भी । किसी किसी पंचांग में जगह की कमी के कारण 'दिनमान' लिख कर के 'दि. मा.' या 'दिनम्' लिख देते हैं। मगर इसका अर्थ वही है । यदि इतना न भी लिखा हो तब भी वह घर केवल दिन के ही होते हैं और सदा उसके नीचे के दो या तीन घरों में दिनके होंगे लिखे जाते हैं । दिन मान के बाद का घर 'तिथि' का और उसके बादका 'वार' का होता है और इसी वार के दण्डपल भी पहले दो या तीन घरों में लिखे रहते हैं । किसी किसी पञ्चांग में तिथि और वार वाली लकीरें सबसे ऊपर कीही लकीर से शुरू हो उसी तरह नीचे की मध्य वाली रेखा से मिलती हैं, जसे दिन वाली मोटी लकीर से और उतनी हीं मोटी भी होती तथा शीर्षक की जगह संकेत मात्र पहले घर में 'ति.' और दूसरे में 'वा.' लिख देते हैं और इनके नीचे तिथि में १, २ आदि तिथियां और वार वाले में रविवार के सूचक केवल रवि, चन्द्र, मंगल आदि शब्द या र. चं. मं. संकेत लिख देते हैं । कभी कभी रविवार के लिये 'सू०' या 'सू' लिखते हैं जिसका अर्थ है सूर्यवार । प्रायः प्रत्येक दिन के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पहले अक्षरही से संकेत कर देते हैं और बृहस्पतिवार के लिये 'गुरु' 'गु.' या 'बृ.' लिखते हैं । शुक्र के लिये 'भृगु' या 'भृ.' भी शायद कभी कभी लिख देते हैं । यदि शीर्षक में 'तिथि' और 'वार' नभी लिखा हो तब भी यह दोनों घर क्रम से तिथि और वार केही होते हैं । वार के बाद दो घर, या किसी में तीन घर, ऐसे होते हैं जिनमें वार के पहले लिखी तिथियों के उस दिन के भोग या मान दण्ड, पलों और तीन होने पर दण्ड, पल, विपलों में लिखे जाते हैं मगर इन का शीर्षक ऊपर नहीं होता । इन के बाद एक घर होता है जिस में नक्षत्रों को लिखते हैं और उसके आगे दो या तीन घरों में क्रम से उस दिन के नक्षत्र के भोग या मान के दण्ड, पल और विपल लिखते हैं । यदि तीन घर न हों तो केवल दण्ड और पल केही अंक लिख देते हैं । जैसा कि तिथिभोग में भी किया है । नक्षत्रों की रीति यह है कि अश्विनी, भरणी आदि जिस क्रम से नक्षत्रों को गिनते हैं उसी क्रम से लिखते भी हैं । नक्षत्र ये हैं-अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषक्, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती । यही २७ नक्षत्र हैं । कहीं कहीं अभिजित् को मिला कर २८ भी लिखा है । मगर अभिजित् स्वतंत्र नक्षत्र नहीं है । किन्तु उत्तराषाढा का चौथा चरण और श्रवण के आदि के चार दण्ड को ही अभिजित् कहते हैं । इसी से उत्तराषाढा और श्रवण के बीचमें ही उसे लिखते हैं । किसी किसी विशेष काम में उसे मानते हैं । इसीसे पञ्चांग में २७ ही नक्षत्र लिखते हैं । नक्षत्रों के भोग के लिखने के दो घरों के बाद योगका घर (खाना) आता है । जिस तरह तिथि, वार के भोग से लेकर नक्षत्र भोग तक ऊपर शीर्षक नहीं रहता है । किन्तु घर बनाने वाली ऊपर से नीचे वाली रेखायें केवल दूसरी मोटी लकीर से ही शुरू हुआ करती हैं । किसी किसी पञ्चांग में योग के नाम और उसके बाद उसके भोग के दण्ड और पल के अंक लिखने के दो या तीन घर भी विना शीर्षक केही होते हैं । इनके ऊपर 'दिनमान' की तरह कुछ लिखा नहीं रहता और इनकी लकीरें भी उसी तरह दूसरी लकीर से ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

C-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE

शुरू होकर नीचे को जाती हैं । तीन घरों में से पहले में योग का नाम और दूसरे, तीसरे में उसके उस दिन के भोग या मान के दण्ड और पल लिखे जाते हैं । मगर किसी किसी पञ्चांग में 'योग' यह शीर्षक लिखा रहता है और नक्षत्र के भोग के पल के घर की रेखा को और उसके बाद दो लकीर छोड़ तीसरी को भी सब से ऊपर की लम्बी लकीर से ही वैसेही शुरू करते हैं जैसे दिनमान वाले को । इसी बीच में योग लिख देते हैं । मगर उस शीर्षक के नीचे जो ३ घर होते हैं उनके लिये जो बीच में दो रेखायें ऊपर से नीचे जाती हैं वह दूसरी लकीर से ही शुरू होती हैं, न कि ऊपर वाली पहली से ही । योग के बाद करण का अवसर आता है और उसका भी शीर्षक कहीं लिखा रहता है तो कहीं नहीं, जैसे कि योग का । अब इस 'योग' और 'दिनमान' शीर्षक के बीच में और कहीं कहीं योग और कर्ण का शीर्षक न होने से इनके ऊपर की जो शीर्षक वाली जगह खाली रहती है उसमें 'श्री सम्वत्...शक...' यही लिख देते हैं और किसी किसी में अधिक जगह होने पर सौम्यायन (उत्तरायण), सौम्य या याम्य गोल और वसन्तादि ऋतुओं के नाम भी लिखते हैं । जिन पत्रों में जो ऋतु आती हैं उसके नाम और गोल और अयन भी लिखते हैं । मगर जिन पञ्चांगों में यहां जगह नहीं होती, और प्रायः अधिकांश में नहींही रहती है, उन सबों में यही बातें लिखी रहती हैं । अस्तु, योगों के बाद करण का नाम लिखा है । मगर यह बताना बाकी ही है कि योग कितने और कौन से हैं । वस्तुतः योग दो प्रकार के हैं । एक तो वह हैं तो २७ नक्षत्रों की तरह क्रम से गिनाये गये हैं और उसी क्रम से एक के बाद दूसरा इस तरह २७ योग आया करते हैं । इनके २७ नाम ये हैं- विष्कुम्भ, प्रीति, आयुष्मान्, सौभाग्य, शोभन, अतिगण्ड, सुकर्मा, धृति, शूल, गंड, वृद्धि, ध्रुव, व्याघात, हर्षण, वज्र, सिद्धि, व्यतीपात, वरीयान्, परिघ, शिव, सिद्ध, साध्य, शुभ, शुक्ल, ब्रह्म, ऐन्द्र, और वैधृति। दूसरे प्रकार के २८ हैं और उनके नाम येहैं-आनन्द, कालदण्ड, धूम्र, धाता, सौम्य, ध्वांक्ष, केतु, श्रीवत्स, वज्र, मुद्गर, छत्र, मित्र, मानस, पद्म, लुम्बा, उत्पात, मृत्यु, काण, सिद्धि, शुभ, अमृत, मुसल, गद, मातंग, राक्षस (राक्षस), चर, स्थिर, प्रवर्धमान । पहले २७ तो बार बार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क्रम से लिखे हैं उसी क्रम से आते हैं। मगर ये दूसरे ऐसा नहीं करते। किन्तु अभिजित के सहित यदि २८ नक्षत्र रविवारको आवें तो जिस क्रम से नक्षत्र आवेगी उसी क्रम से ये २८ योग आते जायंगे। यानी अश्विनी आनेपर आनन्द, भरणी आने पर कालदण्ड इत्यादि। यदि सोमवार को मृगशिरा से शुरू कर २८ नक्षत्र आवें तो वही योग होंगे। अर्थात् मृगशिरा आने पर आनन्द, रोहिणी आने पर कालदण्ड, इत्यादि। जैसे पहली बार अश्विनी से शुरू किया है उसी तरह मृगशिरा से ही आनन्दादि शुरू होते हैं। इसी तरह मंगलवार को आश्लेषा; से बुध को हस्त से; गुरुवार को अनुराधा से; शुक्रवार को उत्तराषाढा से; शनि को शतभिषक् से आनन्दादि शुरू होंगे। सारांश, योग तो क्रम से यही रहेंगे। मगर नक्षत्रों के हिसाब कभी अश्विनी से हैं और कभी मृगशिरा आदि से। इस तरह प्रत्येक दिनों में क्रम से अश्विनी, मृगशिरा, आश्लेषादि से एक क्रम से ही शुरू करके २८ नक्षत्रों को एक तरफ गिने और दूसरी ओर आनन्दादि २८ योगों को गिने तो स्पष्ट हो जायगा कि किस दिन कौन नक्षत्र आने से कौन योग पड़ेगा। यह तो हाथ पर ही गिन सकते हैं। इनके सिवाय कुछ योग ऐसे हैं जो इन दोनों प्रकारों से बाहर हैं। उनके बारे में पीछे लिखेंगे। यहां पर तो इतना ही जान लेना चाहिये कि पहले प्रकार के जो २७ योग हैं वही नक्षत्रों के भोग दण्ड और पल के अंकों के बाद के घर में क्रम से लिखे जाते हैं और उनके आगे के दो घरों में उनके दण्ड और पल रूप भोग के अंक लिखे जाते हैं। मगर उन योगों के नाम बड़े और घर छोटे होने से नाम के आदि के 'वि. प्री.' आदि एक ही अक्षर लिख देते हैं, जैसे पूर्वाषाढा आदि नक्षत्रों के नामों में भी केवल 'पू. षा.' लिखते हैं। २७ योगों के बाद करण लिख कर फिर २८ योगों को लिखते हैं। करणों के भी लिये यदि योगों कीही तरह पर्यंक का स्थान हो तो उसमें करण लिख देते हैं और यदि न हो तो कुछ भी नहीं लिखते। मगर योगों के बाद करणों के नाम और उनके भोग अवश्यमेव लिखते हैं। करणों के विषय में एक बात विचारणीय है। यों तो करण ११ हैं। मगर उनमें ७ ऐसे हैं जो बार बार नक्षत्र और दिनों की तरह चक्र लगाया करते हैं और ४ ऐसे हैं जो एकही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant

जगह रहते हैं। वे चक्र नहीं लगाते। अतः ७ को चल या अस्थिर करण और ४ को अचल या स्थिर करण कहते हैं। ७ चल करण ये हैं, बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि। स्थिर चार ये हैं, शकुनि, नाग, चतुष्पद, किंस्तुघ्न। यह भी जानना चाहिये कि एक तिथि में दो करणों का भोग होता है। अर्थात् एक करण आधीही तिथि तक रहता है। इसीसे करणों के नाम और उनके दंड, पल रूप भोग लिखने के लिये ६ घर होते हैं। क्योंकि एक घर तो छोटा होता है। अतः उसीमें दोनों करणों को नीचे ऊपर लिखना और उसके आगे दो घरों में नीचे ऊपर दोनों के भोग के दण्ड, पलों का लिखना असंभव है और एक तिथि में दो का लिखा जाना आवश्यक है। इसीलिये तिथि के पूर्वार्द्ध (पहले आधे) में बीतने वाले करण के नाम के लिये एक और उसके दण्ड, पल रूप भोग के लेख के लिये उसके आगे दो घर बनाकर फिर उसी तिथि के उत्तरार्द्ध (शेष आधे) में आने वाले दूसरे करण के भी लिये पहले कीही तरह तीन घर रखते हैं। इसीसे करण के लिये ६ घर होजाते हैं। यह याद रहे कि दिन मान, तिथि, वार आदि के सामने जो उनके भोग के दण्ड, पलादि लिखे जाते हैं, वह उस दिन सूर्योदय के बाद केही उनके दण्ड, पल रूप भोग होते हैं। अर्थात् उस दिन सूर्योदय के बाद इतने दण्डपलों तक तिथि, नक्षत्र, दिनमान आदि रहते हैं, यही बात उन दण्डपलों के अंकों से जानी जाती है। उसी तरह पहले जो करण लिख कर उनके सामने दंडपलादि लिखते हैं, उसका भी यही अभिप्राय है कि सूर्योदय के बाद इतने दण्डपलों तक वह रहता है। पर, उसके बाद जो उसके सामनेहीं दूसरा करण लिखकर उसका भोग लिखते हैं, उसका अभिप्राय यह है कि पहले करण के पूर्व लिखे दण्ड पलादि के बीतने के बादही से इतने दण्ड, पलों तक उस दिन दूसरे करण का भोग है, नकि दूसरे का भी सूर्योदय से ही उतनी देर तक। क्योंकि जब दूसरा करण तिथि के शेष आधे (उत्तरार्द्ध) में आता है तो वह सूर्योदय से आरंभ करके कैसे भोग कर सकता है? रहने और भोग करने या भोग का एकही अर्थ समझना चाहिये। जैसा पहले कहा है, ७ अस्थिर (चल) और ४ स्थिर (अचल) करण हैं और जब उनमें प्रत्येक का भोग आधीही तिथि तक रहता है, तो इसके अनुसार कृष्णपक्ष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

की चतुर्दशी के उत्तरार्द्ध (आखिरी आधे) में शकुनि, अमावास्या के पूर्वार्द्ध (पहले आधे) में नाग, उत्तरार्द्ध में चतुष्पाद और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा के पूर्वार्द्ध में किंस्तुघ्न, इस तरह चार स्थिर करणों का स्थान और भोग नियत है। ये दूसरी जगह नहीं रहते। मगर सात ७ बार बार चक्र लगाया करते हैं। तदनुसार शुक्लपक्ष की प्रतिपदा के उत्तरार्द्ध में बव आवेगा और द्वितीया के पूर्वार्द्ध में बालव इत्यादि। इसी तरह जिस क्रम से वे लिखे गये हैं उसी क्रम से एक के बाद दूसरे आते जाते हैं और पञ्चांगों में आमने सामने लिखे जाते हैं। यह कृष्ण चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध तक बार बार चक्र लगाते हैं। इस तरह इन ७ करणों के ८ चक्र लगने पर बीच में चार स्थिर करण आजाते हैं, जैसा अभी कहा है और उनके बाद फिर बव से शुरू होकर विष्टि तक के सातों क्रम से आकर चक्र शुरू करते हुए कृष्ण चतुर्दशी तक अपने ८ चक्र पूरा कर डालते हैं। यही क्रम प्रातःकाल जारी रहता है। चल करणों के आदि का बव और अन्त का विष्टि नाम से प्रसिद्ध है। विष्टि नाम है भद्रा का और भद्रा को तो सभी जानते हैं। असल में भद्रा ७ करणों में ही एक है और सभी करणों में केवल भद्रा ही सबसे खराब है। इसमें कोई कार्य नहीं करते। इसीलिये इस भद्रा को करणों के प्रसंग में लिखकर फिर आगे भी लिखते हैं कि कब से कब तक रहती है, ताकि स्पष्ट रूप से इसे जान कर लोग बचें, इसमें कोई शुभ कार्य न कर बैठें। इसीलिये यद्यपि साधारण नियम के अनुसार करणों के चक्र में भद्रा भी आही जाती है। फिर भी इसका भोग कब कब होता है यह बात अलग भी ज्योतिष ग्रन्थों में लिखी है। शुक्लपक्ष की अष्टमी और पूर्णिमा के पूर्वार्द्ध में और चतुर्थी तथा एकादशी के उत्तरार्द्ध में और कृष्णपक्ष की सप्तमी, चतुर्दशी के पूर्वार्द्ध और तृतीया, दशमी के उत्तरार्द्ध में भद्रा रहती है। यद्यपि शुभ कार्य कोई भी भद्रा में नहीं किये जाते हैं। फिर भी आवश्यकता पड़ने पर कभी कभी भद्रा में भी किये जा सकते हैं। मगर इसके नियम हैं। बात यह है कि साधारण नियम के अनुसार यदि तिथियां घटें बढ़ें न, तो सूर्योदय से आरंभ कर सुबह तक प्रत्येक तिथि का भोग रहना चाहिये। इसके अनुसार तिथि का पूर्वार्द्ध दिन में बीतेगा और उत्तरार्द्ध रात में। अतः तिथि के पूर्वार्द्ध

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant

(शुक्ल ८, १५, कृष्ण, ७, १४) की भद्रा दिन में और उसके उत्तरार्द्ध (शुक्ल ११, ४, कृष्ण ३, १०,) की भद्रा रात में होनी चाहिये। इसीसे पहली का नाम दिनभद्रा और क्रमभद्रा और दूसरी का नाम रात्रिभद्रा और क्रमभद्रा पड़गया है। अब यदि तिथियों के घटने या बढ़ने के कारण दिनभद्रा रात में या रात्रिभद्रा हिन में आ जावे तो उसे खराब न मान भद्रदायिनी या शुभ मानते हैं। अतएव आवश्यकता होने पर उसमें कार्य किया जा सकता है। दूसरी बात यह है कि जिस समय भद्रा हो उस समय चन्द्रमा की राशि देखी जाती है कि वह किस राशि का है। इस बात को इसी प्रकरण में आगे बतावेंगे। ऐसा लिखा है कि कुम्भ, मीन, कर्क, सिंह इन चार राशियों का चन्द्रमा रहने पर भद्रा मर्त्य लोक में (पृथ्वी पर): मेष, वृष, मिथुन, वृश्चिक राशियों के चन्द्र के समय स्वर्ग में और कन्या, तुल, धनु, मकर में पाताल में भद्रा रहती है और जहां उसका निवास हो वहीं फल भी माना जाता है। अर्थात् कर्क, सिंह, कुम्भ, मीन इन चार राशियों के चन्द्रमा के समय ही इस पृथिवी पर भद्रा खराब होगी। शेष आठ राशियों में नहीं। अतः उनमें आवश्यकतानुसार शुभ कार्य करेंगे। तीसरी बात यह है कि भद्राको सर्पिणी या वृश्चिकी (बिच्छी) मान कर उसके प्रत्येक अंगों में उसके भोग के ३० दण्डों को बांट दिया है। तदनुसार मुख में ५ दंड, गले में १, छाती में, ११, नाभि में ४, कमर में ६ और पूंछ में ३ दण्ड रहते हैं। अर्थात् उसका मुख ५ दण्ड और पूंछ ३ दण्ड है। इसी तरह गला आदि भी। यह भी मानते हैं कि शुक्लपक्ष की भद्रा सर्पिणी (सांपिन) और कृष्णपक्ष की वृश्चिकी (बिच्छी है) और, जैसा कि नियम है कि सांप का मुख और बिच्छी की पूंछही जहरीली होने से दुखद है। तदनुसार भद्रा में भी शुक्लपक्ष में शुरू की ५ घड़ियां (दण्ड) और कृष्णपक्ष में अन्त की तीन घड़ियां खराब हैं। अतः उन्हीं में कोई शुभ कार्य न कर शेष में कर सकते हैं। यही तीन बातें बहुत प्रचलित हैं। इसके सिवाय भद्रा में आवश्यक शुभ कार्य करने के समय का और भी विचार ज्योतिष ग्रन्थों में है। मगर हम यहां उसे देकर विस्तार नहीं करेंगे। भद्रा में केवल कुछही कामों के करने की आज्ञा है और उनके लिये भद्रा लाभदायक है। वह काम हैं (१) किसी का बध करना (२)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

से बांधना (३) विष देना (४) अग्नि लगाना (५) अस्त्र चलाना (६) मंत्रादि से किसी का उच्चाटन करना (७) घोड़ा, भसा, ऊंट आदि की मस्ती को दूर कर उसे ठीक करना (८) राजदर्शन (९) शत्रु पर आक्रमण (१०) वाद विवाद (११) स्त्री की सेवा (१२) जल में तैरना (१३) युद्ध (१४) वैद्य का आगमन इत्यादि । शेष कार्य भद्रा में वर्जित हैं और आवश्यकता होने पर पूर्वप्रदर्शित तीन ढंग से वे भी किये जा सकते हैं । भद्रा के सिवाय जो १० करण हैं उनमें जन्म होने पर उनका अलग अलग फल कहा गया है । इसके सिवाय प्रत्येक करण कुछ विशेष कार्यों के लिये भी माने गये हैं । अतः जो कार्य यदि उन करणों में किये जायं तो अच्छा है । बव में मंगल के, विजय और पुष्टि के कार्य किये जावें । बालव में धर्मकार्य और द्विजोपकारी कार्य; कौलव में प्रीति (प्रेम) कार्य और सिद्धि के काम; सौभाग्य के और शुभ कार्य तैतिलि में; खेती, बीज बोना या रोपना (वृक्षादि सभी का) और घर बनाना आदि गर में; वणिज में ध्रुव, स्थिर कार्य और वाणिज्य व्यापार; शकुनि में पुष्टि के कार्य और औषधि सेवन; चतुष्पाद में मंत्र साधना और गौ आदि का कार्य; देवता, पितरों के कार्य, क्रूर कर्म आदि नाग में और किंस्तुघ्न में शुभ, वृद्धि और पुष्टि के कार्य किये जायं ।

करणों के बाद फिर दूसरे प्रकार के अट्ठाईस योगों का अवसर आता है और उनके लिये तो सभी पञ्चांगों में ऊपर 'योग' शीर्षक लिखकर उसके नीचे उनके नाम लिख देते हैं । इन योगों का भोग दण्डपलों में कभी भी नहीं लिखा जाता है । केवल नाम ही लिख देते हैं । क्योंकि न इन योगों का भोग तो पूर्व बताई रीति के अनुसार नक्षत्रों के भोग पर ही अवलम्बित है । इसलिये जितनी देर तक वह नक्षत्र उस दिन रहे उतनीही देर तक उनका भोग होगा और उसके बाद दूसरी नक्षत्र के आने से जो योग होता होगा उसका भोग माना जाना चाहिये । यह बात नक्षत्रों के भोग से ही सिद्ध है । इसीलिये नहीं लिखते । मगर आधुनिक पञ्चांगों के ढंग से यही विदित होता है कि इन दूसरे प्रकार के योगों का भोग ६० दण्ड ही या दिन रात रहता है । सभी का भोग बराबर मानते हैं । किसी में कमी वेशी नहीं होती है । पहले प्रकार के योगों, और इन दूसरे प्रकार वालों, के सम्ब-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE, Govt.

न्ध में भी यह जान लेना चाहिये कि उनके जैसे नाम हैं फल भी वैसा ही देते हैं। इसीलिये अशुभ या खराब नाम वालों का अशुभ फल है और शुभ नाम वालों का शुभ फल है। इन २८ में किसी के कथन से १२ और प्रामाणिक कथन से १३ खराब नाम वाले, अतएव खराब हैं। फिर भी आवश्यकतानुसार उनमें बहुतों के तो कुछ ही दण्ड वर्जित हैं और बहुतों का पूरा भोग ही शुभ कार्य में निषिद्ध है। प्रत्येक खराब योगों के नाम और उनके वर्जित दण्डों का ब्योरा यों है- (१) काल दण्ड पूरा या ६० दंड, (२) धूम्र १, (३) ध्वांक्ष ५, (४) वज्र ५, (५) मुद्गर ५, (६) पद्म ४, (७) लुम्ब ४, (८) उत्पात ६०, (९) मृत्यु ६०, (१०) काण २, (११) मुसल २, (१२) गद ७, (१३) रक्त ६०। बहुतों ने पद्म को खराब नहीं लिखा है। विष्कम्भ आदि पहले के २७ योगों में भी खराब योगों के नाम और उनके वर्जित दण्ड ये हैं-(१) विष्कम्भ ३, (२) अतिगण्ड ६, (३) शूल ५, ४) गण्ड ६, (६) व्याघात ९, (६) वज्र ३, (७) व्यतीपात ६०, (८) परिघ ३०, (९) वैधृति ६०। यदि व्यतीपात और वधृति के सिवाय शेष ७ के १५ दण्ड में कोई भी शुभ कार्य न किया जावे तो और भी अच्छा है। यह भी नियम है कि एक दिन यदि दो योगों में एक खराब और दूसरा अच्छा हो, क्योंकि प्रति दिन दो योग तो आते ही हैं, एक पहले और एक बाद को, तो अच्छा योग बुरे के फल को मारकर और उसके बल को नष्ट करके अपने हीं फल से अच्छा ही फल देता है और यदि दोनों ही अच्छे हों तब तो कहना हीं क्या? पर, यदि दोनों हीं खराब हों तभी कोई कार्य करना न चाहिये। एक के खराब होने पर तो कार्य होता ही है।

इस तरह यहां तक तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण का विचार पञ्चांग में करलिया और यही पांच बातें प्रधान हैं। आखिरी योगों के घर के बाद चार घर (खाने) बंगला, अंग्रेजी, फारसी और फसली इन चार तारीखों के लिखने के लिये क्रम से बने होते हैं और उनमें यही चार तारीखें लिखी जाती हैं। चारों के ऊपर यही जनाने के लिये शीर्षक भी लिखे रहते हैं और वे संकेत मात्र होते हैं। बंगला का संकेत 'सौ' या 'सू' लिखकर करते हैं, जिसका अर्थ है सौर या सूर्य मास। क्योंकि बंगला मास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सौर ही मास होता है, जैसा कि पहले अच्छी तरह कह चुके हैं। कभी कभी 'बं' भी लिख देते हैं। इसका अर्थ है 'बंगला'। अंग्रेजी का संकेत 'अं' से करते हैं, या 'ई' लिखते हैं, जिसका अर्थ है 'ईस्वी'। क्योंकि अंग्रेजी सन या वर्ष को ईस्वी भी कहते हैं। कारण, वह ईसा के नाम की यादगार है। मुसल्मानी या फारसी का संकेत कभी 'फा' से करते हैं और कभी 'पा' से। क्योंकि उसे कोई फारसी कहते हैं तो कोई पारसी। फसली का संकेत 'फ' से करते हैं। पहले कौन तारीख लिखी रहती है और उसके बाद कौन यह कोई नियमित बात नहीं है। किसी पञ्चांग में पहले बंगला तारीख होती है तो किसी में अंग्रेजी। बात इतनी हीं है कि आगे पीछे ऊपर की चारों तारीखें लिखी जाती हैं और इस तरह पञ्चांग से प्रति दिन की तिथियों की ही तरह उसी दिन के सामने हीं देखने से अंग्रेजी, बंगला आदि तारीखें भी विदित होजाती हैं। तारीखों के बाद एक बड़ा घर होता है जिसमें चन्द्रमा की राशियां लिखी रहती हैं। इसके जनाने के लिये ऊपर के शीर्षक में या तो 'चन्द्रराशि' लिखते हैं, या 'चन्द्ररा.' से ही और कभी कभी 'चं. रा.' से ही काम चलाते हैं। किसी किसी पञ्चांग में 'चं. रा. प्र.' लिखा होता है, जिसका अर्थ है चन्द्र का राशि में प्रवेश। अर्थात् किस दिन चंद्रमा किस राशि पर प्रवेश करता या जाता है और कब। इस शीर्षक के नीचे जो घर बने हैं उनमें चन्द्रमा जिस राशि पर पहुंचता है उसका नाम पहले लिखते हैं। मगर स्थान की कमी के कारण केवल आदि का अक्षर ही लिख देते हैं जैसे मेष के लिये 'मे.' वृष के लिये 'वृ.' आदि और उसीके सामने उस दिन सूर्योदय के उपरांत जितने दण्ड, पलादि के बाद चन्द्रमा उस राशि में प्रवेश करता है उतने हीं दण्ड और पल और कभी कभी विपल भी लिख देते हैं। जैसे यदि किसी दिन ५ दण्ड और २५ पलों के बाद (उपरान्त) मेष राशि पर चन्द्रमा गया हो तो यों लिखेंगे 'मे. ५। २५' या पलों के बाद १०, २० या कुछ भी विपल हों तो 'मे. '५। २५। १०' ऐसा लिखते हैं। किसी किसी पञ्चांग में एक पंक्ति में जगह की कमी होने से दो पंक्तियों में भी यही बात लिखते हैं। मगर तब यह स्पष्ट जना देने के लिये कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE, Govt.

उस दिन सूर्योदय के बाद इतने दण्डों और पलों के उपरान्त उस राशि पर चन्द्र आया है 'उपरान्त' शब्द का 'उ' लिखदेते हैं। जैसे 'मे. ५' यह पहली पंक्ति में लिखते हैं और दूसरी में '२५ उ.' या विपल हो तो '२५। १० उ.' लिखते हैं। पहली पंक्तिमें दण्ड और दूसरी में पलादि के अंक लिखते हैं। यह तो कही चुके हैं कि सवा दो दिन तक चन्द्रमा एक राशि पर रहकर फिर उसके बाद की राशि पर जाता है। यही क्रम बराबर लगा रहता है। यह भी कही चुके हैं कि चन्द्रमा की राशि के ही हिसाब से यह पता लगता है कि वह किस दिशा में है। जैसे मेष का पूर्व में, वृष का दक्षिण में इत्यादि। इस चन्द्र राशि से एक तो चन्द्रमा की दिशा का ज्ञान करके यात्रा का निश्चय करते हैं। क्योंकि यात्रा में चन्द्रमा या तो सामने हो या दहिने। अर्थात् या तो जिस दिशा में जाना हो उधर ही हो या दहिने। जैसे पूर्व जाने में या तो पूर्व हो या दक्षिण। इसी तरह और भी निश्चय करते हैं। दूसरी बात यह है कि यदि किसी शुभ कार्य का आरंभ करना होता है तो वह किस मुख बैठकर किया जावे, इसके लिये भी चन्द्रराशि से ही चन्द्रमा की दिशा निश्चय करके भरसक चन्द्रमा जिधर मुख करने से सामने पड़े उधर ही मुख करके कार्य का आरंभ करते हैं। या यदि सामने न हो सके तो, कभी कभी, दहिने पड़े ऐसा भी करते हैं। मगर भरसक तो जिधर चन्द्र होगा उधर ही मुख करके कार्य का आरंभ करेंगे। जैसे यदि पूर्व हो तो पूर्व मुख होकर करेंगे, या कभी कभी उत्तर मुख होकर भी करेंगे। कभी कभी यह भी प्रश्न होता है कि अमुक काम को किसके हाथ से शुरू करना है, या वह किस के हाथ से या नाम से बनता है। इसके लिये भी चन्द्र की राशि की आवश्यकता होती है। जिस आदमी के हाथों काम शुरू कराना हो उसकी राशि के नाम से उसकी राशि को जान-कर फिर यह देखते हैं कि उस राशि से चन्द्रमा की राशि संख्या में कौन सी पड़ती है। अर्थात् यदि पुरुष की राशि वृष या मकर हो और चन्द्रमा वृष राशिवाले के समय मीन का हो तो वृष से ११ वां पड़ा और यदि मकर राशि हो और चन्द्रमा की कर्क राशि हो तो मकर से कर्क राशि ७वीं पड़ी। पुरुष की राशि से ही गिनते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इसके बाद देखते हैं कि यदि गिनने पर चन्द्रराशि चौथी, आठवीं या बारहवीं हो जाय तब तो उस पुरुष के हाथ से काम शुरू नहीं कराते। मगर इन तीन के सिवाय और कोई हो जावे तो उसी के हाथ से शुरू कराते हैं। क्योंकि ४, ८, १२ वें स्थान का ही चन्द्रमा खराब माना जाता है। यदि किसी का जन्म हो तो उसकी राशि का निश्चय भी चन्द्रमा की राशि देखकर ही करते हैं और उसी के अनुसार चन्द्र-कुण्डली बनाते हैं। इसी तरह चन्द्र राशि के और भी अनेक फल हैं, जिनका वर्णन, स्थानानुसार हो सका तो, आगे करेंगे। मगर एक तो अत्यन्त आवश्यक बात यह भी चन्द्र राशि से जानी जाती है कि पञ्चक कब से कब तक होगा। पञ्चक नाम है पांच के गरोह या समुदाय का। इसे धनिष्ठा पञ्चक भी कहते हैं। क्योंकि धनिष्ठा से लेकर रेवती तक की पांच नक्षत्रों को ही पञ्चक (पचखा) कहते हैं। यद्यपि धनिष्ठा आधी बीत जाने पर ही पञ्चक शुरू होता है। अतएव धनष्ठिा के बाद की चार नक्षत्रों को और धनिष्ठा के उत्तरार्द्ध को ही उनके साथ मिलाकर पञ्चक कहते हैं। फिर भी पांच नक्षत्र तो हो गईं। साढ़े चार होने सेभी पांच नक्षत्रोंका समुदाय तो हो गया ही। मगर धनिष्ठा का आधा कब पूरा होगा, यह हिसाब लगाने में कठिनाई होती है और सभीलोग ठीकठीक हिसाब नहींलगा सकते। इस लिये सहज और बिलकुल सही रीति यह है कि कुम्भ और मीन के चन्द्रमा को देख लिया जाय और जबसे कुम्भराशि पर चन्द्र जाय तभी से पञ्चक का आरम्भ मान मीन के अन्ततक अर्थात् जब मेष राशि का चन्द्रमा शुरू हो तब तक पंचक होगा। क्योंकि आधी धनिष्ठा बीतने पर ही कुम्भ राशि शुरू होती है और रेवती के अन्त में मीन राशि की पूर्त्ति हो जाती है। अतएव ज्योंही मेष राशि शुरू होगी त्योंही जान लेना होगा कि पंचक बीत गया। इस पंचक में दक्षिण दिशा की यात्रा, लकड़ी का काम, या लकड़ी, घास, भूसा आदि को जमा करना, खटिया बिनना, मृतक का जलाना और मकान की छाजन करना या उसे छाना ये पांच बातें नहीं की जाती हैं। इनमें मृतक के जलाने की बात के सम्बन्ध में विशेष विचार अन्त्येष्टि और शान्ति प्रकरण में मिलेगा। पर, गृह के छाने में दो मत हैं। एक का कहना है कि केवल घास, फूंस और बांस काठ वगैरः घर की छत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant.

पर रखना या इनसे उसे ढंकना ठीक नहीं है । क्योंकि अग्नि का भय रहता है । खपरैल वगैरः से छाने में हर्ज नहीं है । मगर दूसरे पक्ष का कहना है कि बांस काठ रखने से लेकर खपरैल से छा लेने तक के समूचे काम ही पंचक में नहीं होते, न कि केवल बांस काठ आदि का चढ़ाना हीं बन्द रहता है । चन्द्र राशि के सम्बन्ध में आगे अधिक विचार है । चन्द्र राशि के बाद सूर्य के उदय और अस्त के लिखने का अवसर आता है । बहुत से पत्रों में सूर्योदय और सूर्यास्त लिख-कर ही चन्द्र राशि लिखते हैं । मगर ज्यादातर पंचांगों में चन्द्र राशि के बाद ही सूर्योदय लिखते हैं । इसके जानने के लिये ऊपर 'सूर्योदय' या 'सू. उ.' लिखकर उसके नीचे 'घं. मि.' लिखते हैं, जिसका अर्थ है घंटा और मिनट । इसी तरह उसके बाद वाले में सूर्यास्त या 'सू. अ.' लिख कर उसके भी नीचे 'घं. मि.' लिखते हैं । फिर एक घर जो घं. या घंटे के नीचे रहता है उसमें घंटे की संख्या और मि. या मिनट के नीचे वाले दूसरे घर में मिनट की संख्या या अंक लिखते हैं । यदि ५ बजके ३० मिनट पर सूर्योदय होता हो तो घन्टे के घर में ५ और मिनट के घर में ३० लिखते हैं । इसी तरह अस्त के विषय में भी समझना चाहिये । इन उदय और अस्त के घन्टे मिनटों से प्रति दिन यह पता लगता है कि कितने बजे सूर्य का अस्त या उदय होता है । सूर्योदय और सूर्यास्त से पहले किसी किसी पत्रे में वार प्रवृत्ति के दण्ड, पल और विपल लिखते हैं । ऊपर 'वार प्रवृत्ति' लिखकर नीचे तीन घरों में क्रम दण्ड, पल, विपल के अंक लिखते हैं। वार प्रवृत्ति के विषय में पहले ही विचार कर चुके हैं । सूर्यास्त के बाद बहुत से पत्रोंमें मिश्रमान के दण्ड पलादि लिखे रहते हैं । मिश्रमान के बारे में भी पहले ही लिख चुके हैं । ऊपर मिश्रमान के 'मि. मा.' या केवल 'मि.' लेकर उसके नीचे प्रति दिन के दण्ड पलों के अंक और किसी में विपल के अङ्क भी लिखते हैं । किसी किसी में चन्द्र राशि प्रवेश में भी विपल लिख देते हैं । इसके बाद स्पष्ट सूर्य के लिखने का अवसर आता है । स्पष्ट सूर्य का अभिप्राय यह है प्रति दिन की गति या चाल से हरेक राशि पर जाने के बाद उसका एक अंश अथवा उससे कुछ ज्यादा या कम हीं–६१, ५९, ५८–आदि कलाएं सूर्य भोगा करता है और इस तरह भोगते भोगते या चलते चलते उस राशि को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रा करके दूसरी राशि पर जाता है । यही दशा चन्द्र, मंगल, राहु आदि सभी ग्रहों की है । सभी अपनी अपनी दैनिक (प्रति दिन की) गति (चाल) के अनुसार राशि का थोड़ा थोड़ा भाग प्रति दिन भोगा करते हैं और कौन मार्गी ग्रह मेष से आरम्भ कर कितनी राशि-यां भोग कर आज किस राशि के किस अंश, कला, विकला तक भोग चुका है, यह हिसाब ज्योतषियों को निकालना पड़ता है । इसके बिना ग्रहों की स्थिति का पूरा पूरा पता नहीं लग सकता कि किस समय कौन ग्रह कहां है और स्थिति का ठीक ठीक पता लगे विना उस ग्रह के बुरे भले फल का भी यथार्थ ज्ञान नहीं हो सकता । खास कर जन्म कुण्डलियो से फल का ज्ञान ठीक ठीक होही नहीं सकता कि कौन कैसा फल देंगे । क्योंकि स्थान के अनुसार ही ग्रहों का बुरा या भला फल होता है । शुभग्रह भी स्थान के वश बुरा फल देता है और अशुभ ग्रह भी अच्छा फल देता है । अतएव प्रत्येक ग्रह के ठीक ठीक स्थान का पता लगाना चाहिये कि राशिचक्र में वह कहां पर है । सभी ग्रहों का तो मेष की जगह मीन से ही आरंभ कर यह पता लगाया जाता है कि कितनी राशियां, अंश, कला, विकला वे चल चुके हैं । इसी का नाम है ग्रहस्पष्टीकरण या स्पष्टग्रहों का स्पष्टीकरण । यह बालक के जन्म के समय, विवाह के लग्न के समय, या जब चाहें उसी समय कर सकते हैं । कारण, प्रत्येक की दैनिक गति पञ्चांग में दी रहती है । इससे १, २, ३ आदि दिन या १, ५ आदि घंटे और ५, ९, १०, २० आदि मिनटों की भी उनकी गति का हिसाब लगाकर जितने अंश, कला, विकला आदि आवेंगे उसे पञ्चांग में लिखे ग्रह के स्पष्टादि में जोड़देंगे । क्योंकि पञ्चांगों में जो ग्रहों की स्पष्ट राशि, अंश, कला, विकलायें लिखी रहती हैं वह जिस दिन या तिथि को लिखी हों उसदिन सूर्योदय के समय की ही होती हैं और जिस स्था-न में पञ्चांग बनेगा उसी स्थान की होती हैं । अतएव काशी के पञ्चांग में यदि रविवार को ग्रहों की स्पष्ट राशियां आदि लिखी हों तो उस लेख का यही अर्थ होगा कि काशी में रविवार को सूर्योदय के समय वह ग्रह राशिचक्र में उतनी राशि, अंश, कला, विकला आदि पर है । परन्तु प्रायः सभी पञ्चांगों में प्रत्येक पक्ष में बहुधा केवल पांच ही दिन स्पष्ट ग्रह लिखे रहते हैं । हां, अब किसी किसी में प्रति दिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के भी स्पष्टग्रह लिखे जाते हैं। मगर यदि रविवार को स्पष्टग्रह लिखकर फिर अगले रविवार को लिखे हों और बीच मेंहीं सोमवार, बुध या शुक्रवार आदि को लग्न शोधने अथवा जन्म कुण्डली बनाने की आवश्यकता हुई तो गणित करके स्पष्ट करनाहीं होगा। यदि प्रति दिन के भी लिखे हों तो भी सूर्योदय के २, ४, ८, १२, १६, २० आदि घंटे और कुछ मिनटों के बाद ही या पहले ही यदि जन्मादि हुए तो उनके लिये भी स्पष्ट करना हीं होगा। क्योंकि प्रत्येक दिन के प्रत्येक घंटे, मिनट और सेकंड का स्पष्ट ग्रह लिखा जा नहीं सकता। नहीं तो फिर पंचांग का महाभारत हो जायगा। इस तरह जिस दिन के स्पष्ट ग्रह हों उसके बाद जितने दिन, घंटे, मिनट आदि बीतने पर लग्न शोधने या जन्म होने के कारण उन्हें स्पष्ट करना हो, उतने दिन, घंटे, मिनटों को उनकी दैनिक गति से गुणा करने पर जो अंश, कलादि आवें उन्हें ही स्पष्टग्रह में जोड़देंगे तो उस समय का स्पष्टग्रह होजायगा। परन्तु स्मरण रहे कि यदि रविवार का स्पष्टग्रह लिखा हो और उसके बाद फिर दूसरे रविवार का लिखा हो और बीच में शुक्र या शनिवार काही स्पष्ट करना हो, तो पहले रविवार की लिखी गति से शुक्र या शनिवार तक ५ या ६ दिनों से, और यदि कुछ घंटे हों तो उनसे भी, गुणा करके उसफल को पूर्व रविवार को लिखी उस ग्रह की राशियों आदि में जोड़ने की अपेक्षा अगले रविवार को लिखी गति से उससे पहले शुक्र या शनिवार के १ या २ दिनों और घंटों से गुणा कर गुणनफल को अगले रविवार के स्पष्टग्रह में घटा देने में आसानी होगी। क्योंकि ५ या ६ दिनों के गुणनफल निकालने की अपेक्षा १, २ या ३ दिनों के निकालने में आसानी है। अतः बीच के आधे या उनसे कम दिन बीतने पर पहली गति से गुणाकर पहले में जोड़ना और आधे से अधिक बीतने पर अगली गति से गुणा कर अगले स्पष्टग्रह में घटाना चाहिये। यही नियम ज्योतिषियों में प्रचलित है। घंटों की भी बात यही है, यदि प्रतिदिन का स्पष्टग्रह लिखा हो, मगर उसके बीच केही कुछ घंटों के बाद या पहले का निकालना हो तो १२ या उससे कम बीतनेपर पहले दिन की गति से गुणा कर पहले स्पष्टग्रह में जोड़ना होगा और १२ घंटे से ज्यादा बीतने पर अगले दिन की गति से शेष घंटों को गुणा कर अगले दिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के स्पष्टग्रह में गुणनफल घटाना होगा, तो स्पष्ट ग्रह आयेगा। इस तरह गुणाकर गुणनफल को जोड़ने या घटाने को ग्रहचालन कहते हैं और जोड़नेका धनचालन तथा घटाने को ऋणचालन कहते हैं। यह स्मरण रहे कि धनचालन में जितने दिन और घंटे आदि बीते हों उनको पहली गति से गुणा करते हैं और ऋणचालन में शेष दिन आदि की अगली गति से गुणा करते हैं। इस तरह जोड़ने घटाने पर जो राशि, अंश, कला, विकलायें होती हैं उन्हें एक के नीचे दूसरी और उसके नीचे तीसरी इत्यादि क्रम से एक घरमें लिखकर ऊपर उस ग्रह का नाम और नीचे उस ग्रह की गति लिख देते हैं। नीचे ऊपर न लिखकर पहले ग्रह का नाम और उसके बाद उसके सामने हीं स्पष्ट राशि, अंश, कला, विकलाओं के अंक लिखकर उसके आगे अलग घरमें गति लिखने से भी काम चल सकता है। मगर प्रायः नीचे ऊपर ही लिखने की रीति ज्योतिषियों के यहां प्रचलित है। जैसा कि पंचांग के प्रत्येक पत्र में दो और कभी कभी तीन कुण्डलियां बनाकर उनके पास हीं एक सारणी या नकशे में यही बात लिखी रहती है। हां, ग्रहों के पूरे नामों की जगह केवल उनके आदिके ही अक्षर लिखते हैं। सूर्य को सू. या र. इत्यादि। बृहस्पति को बृ. या गु. लिखते हैं और शुक्रको शु. या भृ.। इस तरह जब स्पष्टग्रह अपनी अपनी गतियों के साथ लिखे रहते हैं तो उन्हें "सजवाः स्पष्टाग्रहाः" या "सूर्यादयः स्पष्टाग्रहाः सजवाः" इत्यादि कहते हैं। जव नाम है गति का और गति के सहित स्पष्टग्रहों को सजव स्पष्टग्रह कहते हैं। यही अभिप्राय अन्य शब्दों का भी है। अस्तु, इसी तरह सूर्य को भी काशी में सूर्योदय के समय स्पष्ट करके प्रति दिन लिखा करते हैं और शेष ग्रहों को केवल आठ दिन पर एक दिन। स्पष्टसूर्य का काम प्रति दिन या कभी भी लग्न आदि के निकालने में बराबर पड़ा करता है। इसी से प्रति दिन का स्पष्ट सूर्य लिखना उचित समझा गया है। इतनी आवश्यकता और ग्रहों की नहीं पड़ती। इसी से उन्हें प्रति दिन नहीं लिखते। इस तरह जो प्रति दिन स्पष्ट सूर्य लिखा जाता है उसके ऊपर जनाने के लिये शीर्षक की जगह या तो 'स्पष्ट सूर्य' लिख देते हैं या 'स्प. सू.'। मगर कहीं कहीं 'औ. स्प. सू.' और 'का. स्प. सू.' भी लिखा रहता है। पहले का अर्थ है औदयिक (सूर्यो-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

दय के समय का) स्पष्ट सूर्य और दूसरे का अर्थ है काशी में स्पष्ट सूर्य । इस शीर्षक के नीचे चार घर होते हैं। पहले में मेष से लेकर जितनी राशियां सूर्य तै कर (भोग) चुका है उनके अंक रहते हैं । दूसरे में जिस राशि पर उस समय हो उस राशि के जितने अंश भोग चुका है उनके और इसी तरह तीसरे और चौथे में उस अंश के बाद के अंश की भोगी हुई कला और विकलाओं के अंक लिखते हैं। किसी किसी पत्रे में प्रति विकला भी लिखते हैं। स्पष्ट सूर्य के बाद उसकी प्रति दिन की गति या स्पष्टगति रहती है और ऊपर गति या स्पष्टगति अथवा ग. स्प. लिखकर उसके नीचे प्रति दिन की गति की कलाओं और विकला या प्रतिविकलाओं के अंक लिखे रहते हैं । यह जान लेना चाहिये कि केवल राहु और केतु की प्रति दिन की गति (चाल) एक ही होती है। उसमें कभी घट बढ़ नहीं होती । मगर शेष सात ग्रहों की गति प्रति दिन घटती या बढ़ती रहती है। इसी से गणित करके स्पष्टगति पञ्चांग में लिखनी होती है। जब ग्रह पृथिवी से दूर हो जाते हैं तो उनकी गति बढ़ जाती है, क्योंकि उनके भ्रमण का चक्र बढ़ जाता है और उसे पूरा करना तो नियत समय पर ठहरा ही। इसीसे तेज चलते हैं। मगर जब पृथिवी के निकट आजाते हैं तो भ्रमणचक्र के छोटे हो जाने से धीरे धीरे चलने लगते हैं। इसी से दक्षिणायन में सूर्य की गति क्रम से बढ़ती जाती और उत्तरायण में घटती है। सारांश, कर्क संक्रातिसे बढ़ते बढ़ते मकर संक्रान्ति तक ६१ कला से भी अधिक हो जाती है और उसके बाद घटते घटते कर्क तक ५७ से भी कम हो जाती है। यही दशा बराबर बनी रहती है।

यहां तक तो पञ्चांग में तिथि वारादि के भोगों के अंक लिखे रहते हैं। इसके बाद एक मोटी लकीर ऊपर से नीचे तक खींचकर यह प्रकरण खतम करते हैं और पन्ने का प्रायः आधा जो इसके बाद शेष रहता है उसमें शीर्षकों के सामने दो मोटी रेखाओं के बीच के स्थान में प्रत्येक महीने का नाम लिख कर उसके बाद शुक्ल या कृष्ण (पक्ष) लिख देते हैं और यदि पहले उत्तरायण और दक्षिणायण या उत्तर दक्षिण गोल न लिखा हो तो जो उत्तरायणादि उस समय हो उन्हें लिखदेते हैं और ऋतु के नाम भी प्रायः उनके आगेही लिखकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अंग्रेजी महीना, उसकी संख्या, कि वह गिनती में कौन है, उसकी तारीखों की संख्या कि महीने में कितनी होती हैं और मुसल्मानी महीनों के नाम, उनकी संख्या और तारीखों की गिनती लिख देते हैं। यदि संभव हुआ तो दोनों के सन भी १९२६ आदि लिख देते हैं और जब जब शुक्र तथा बृहस्पति (गुरु) का उदय या अस्त होता है तब तब मोटे अक्षरों में ऊपर ही लिख देते हैं कि अमुक तिथि को अमुक दिन गुरु या शुक्र का उदय या अस्त हुआ है। यह विशेष इससे ऊपर इसलिये लिख देते हैं कि लोग आसानी से इनके जान-कार हो जायं। कारण, विवाहादि शुभ कार्य इनके अस्त में न होकर उदय में हीं होते हैं। यह भी लिख देते हैं कि किस दिशा में उदय और किस दिशा में अस्त हुआ है। क्योंकि शुक्र के सन्मुख और पीछे होने पर यात्रा, और विशेषकर द्विरागमन या दोंगे की यात्रा, नहीं होती। इस तरह इतना शीर्षक के सामने की जगह में लिखकर उसके नीचे की खाली जगह में प्रत्येक तिथि, वार के सामने उसदिन होने वाली विशेष बातों को लिख देते हैं और जिसदिन जितने समय के बाद जो ग्रह जिस राशिपर या जिस नक्षत्र के जिस चरण पर जाता है उस दिन उसी के सामने उस राशि या नक्षत्र के १, २, ३, ४ चरणों को लिखकर आगे उस ग्रह का नाम लिख देते हैं और उसके बाद उन दण्ड पलों को लिख देते हैं जिनके बाद (सूर्योदयोपरान्त) वह ग्रह उस राशि या नक्षत्र के चरण पर गया है। इसी तरह ग्रहों के मार्गी, वक्री, उदय और अस्त होने की भी बात और जितने दण्ड, पलों के बाद जिस दिन मार्गी आदि होते हैं उतने दण्ड, पलादि भी उसी दिन और तिथि के सामने लिख देते हैं और जिस नक्षत्र के जिस चरण पर जाकर मार्गी, वक्री या उदय, अस्त होते हैं उनके भी नाम लिख देते हैं। यद्यपि प्रत्येक पक्ष में बनाई हुई स्पष्टग्रहों की पूर्वोक्त सारणी से पता तो चल ही जाता है कि कौन ग्रह किस राशि के किस अंश पर है और इससे यह भी हिसाब लगा सकते हैं कि किस नक्षत्र के किस चरण पर होगा। मगर इस तरह हिसाब करने में एक तो कठिनाई होती है। दूसरे हिसाब में गलती भी हो सकती है और हिसाब के न जाननेवाले जान ही नहीं सकते। तीसरे, दो सारणियों के बीच में जो आठ दिन का अन्तर हो जाता है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

उसमें ग्रह आगे बढ़ जाते हैं जिससे गणित में और भी कठिनाई हो सकती है । इसी से यहीं लिख देने में सरलता होती है और बीजो-त्ति में जो राहुचक्र निकालने के लिये उसकी नक्षत्र के जानने की आवश्यकता होती है उसका भी ज्ञान सरलतापूर्वक इसीसे हो जाता है कि इस समय अमुक नक्षत्र के अमुक चरण पर राहु है । इस तरह मार्गी और वक्री ग्रह जब जब होते हैं तब तब स्पष्ट ग्रहों की सारणी में मंगल से लेकर शनैश्चर तक पांच ग्रहों की गति लिखकर उसके नीचे मार्गी सूचक मा और वक्री सूचक व लिख देते हैं। इन्हीं पांचों के लिखने का कारण यह है कि यही कभी वक्री और कभी मार्गी होते हैं । अतएव इन्हींके स्पष्ट करने में गड़बड़ी हो सकती है, यदि यह पता न चले कि इस समय मार्गी है या वक्री । क्योंकि वक्री होने पर तो धनचालन की जगह ऋण चालन और ऋण-चालन की जगह धनचालन करते हैं । कारण, उलटी ही गति हो जाती है । इसलिये जहां पहले जोड़ते थे वहां घटावेंगे और जहां घटाते थे वहां जोड़ेंगे । यदि वक्री या मार्गी का पता न हो तो यह कैसे कर सकते हैं ? सूर्य, चन्द्र तो मार्गी ही रहते हैं । इसीसे उनका धन और ऋण चालन पूर्वोक्त रीति से एकसा ही होता रहता है। इसी तरह राहु, केतु सदा वक्री ही हैं । अतएव इनके स्पष्ट करने में सदा ही धनचालन की जगह ऋणचालन और ऋणचालन की जगह धनचालन करेंगे । उसमें विचार की जगह है ही नहीं । इसीलिये सूचना के लिये उन पांचों की गति के नीचे व. या मा. तभी लिखते हैं जब वे वक्री होते हैं और उसके बाद फिर मार्गी होते हैं । नहीं तो साधारण तौर पर तो कुछ भी न लिखकर केवल गति ही लिख देते हैं । अस्तु, प्रत्येक तिथि वारों के सामने ग्रहों की यह बात लिखने के अतिरिक्त किस दिन सूर्योदय के कितने दण्ड पलों के बाद भद्रा होगी और कब तक उस दिन रहेगी, अथवा दूसरे दिन तक यदि चली जाय तो उस दिन कब तक रहेगी यह बात दण्ड पलों में लिख देते हैं । जितने दण्ड पलों के बाद भद्रा होगी उतने दण्ड पल लिखकर उस के बाद उपरान्त का सूचक 'उ.' लिख देते हैं और जितने दण्डों तक रहेगी उतने दण्ड पलों को लिखकर उनके आगे 'या.' लिखते हैं, जिसका अर्थ है यावत् यानी तब तक । अब तो किसी किसी पत्रे में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दण्डपल लिखने के बाद कोष्ठक में घंटे और मिनट भी लिख देते हैं। दण्ड पलादि लिखने में सदा से ही ज्योतिषियों की यही रीति है कि दण्ड के अंकों को लिखकर उन के आगे छोटी सी खड़ी लकीर खींच कर फिर पल के अंक लिखते हैं और फिर वैसी ही लकीर खींचकर विपल के अंक देते हैं। यही बात राशि, अंश, कला, विकला जब सामने सामने लिखी जाय तो की जाती है। पहले राशि के अंक, तब रेखा, तब अंश के अंक, तब रेखा, तब कला के अंक इत्यादि। जिस दिन जो एकादशी, प्रदोष आदि व्रत, विजयदशमी, दशहरा आदि पर्व पड़ते हैं, उन्हें भी उन दिनों के सामने हीं लिख देते हैं और तिथि की घट बढ़ के कारण जिस दिन चन्द्रदर्शन, अमावास्या के बाद, होने को हो उस दिन के सामने लिख देते हैं और यह भी लिख देते हैं कि चन्द्र की दोनों पतली नोंकें ठीक बराबर हैं या उन में कोई जरासा आगे निकली है और यदि निकली है तो उत्तर वाली या दक्षिण की। उस नोंक को शृंग कहते हैं; दक्षिण को याम्य और उत्तर को सौम्य। इसलिये याम्यशृंग, दक्षिणशृंग या याम्योन्नत यह दक्षिण वाली की ऊंची होने पर और उत्तरशृंग, सौम्यशृंग या सौम्योन्नत यह उत्तर वाली की ऊंचाई को लिखते हैं और समान होने पर समशृंग लिखते हैं। दक्षिण का फल दुर्भिक्षादि खराब, उत्तर का सुभिक्षादि शुभ और सम का फल समान होता है, न बुरा न भला। यह भी शृंग लिखने के बाद ही लिख देते हैं। इसी के साथ अन्नादि की सस्ती और महंगी के मुहूर्त्त भी ज्योतिषी लोग मानते हैं और १५, ३०, ४५ ये तीन हीं मुहूर्त्त माने भी जाते हैं। यह भी चन्द्रदर्शन के साथ ही उसी दिन लिखे रहते हैं और उसी दिन से महीने भर के लिये माने जाते हैं। उन में १५ से महंगी (महार्घता), ३० से समानता या सम भाव और ४५ से सस्ती (समर्घता) मानते हैं। अतः इन में जो मुहूर्त्त हो उसका अंक लिख उसके आगे मु. शब्द मुहूर्त्त सूचक लिख कर उस के आगे महार्घता, समता, समर्घता ये फल उस मुहूर्त्त के लिखे रहते हैं। यद्यपि चन्द्र की राशियां पहले लिखी रहती हैं। मगर और ग्रहों के साथ चन्द्रमा भी जब जब एक से दूसरी राशि पर जाता है तब तब उस राशि को लिखकर आगे उन दण्ड पलों को लिख देते हैं जब उस राशि पर जाता है। जब सूर्य की संक्रान्ति होती है,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

अर्थात् एक राशि से दूसरी पर जाता है, तब 'सं०' लिखकर उस राशि का नाम लिखते हैं 'मेषे, वृषे' आदि और उस के बाद 'अर्कः' लिखकर आगे दण्ड पल लिखते हैं। इसका अर्थ है कि सूर्योदय के इतने दण्ड पलोंके बाद संक्रान्ति होती है। 'सं०' का अर्थ है संक्रान्ति और अर्क का अर्थ है सूर्य। यदि नक्षत्र तथा राशि पर एक ही समय सूर्य जाय तो नक्षत्र का भी नाम राशि से पहले ही लिख देते हैं। जैसे 'अश्विन्योर्मेषे चार्कः' इत्यादि और यदि नक्षत्र पर दूसरे दिन जाता है तो नक्षत्र का नाम लिखकर 'चित्रायामर्कः' इत्यादि लिखते हैं। कभी कभी अर्कः की जगह रविः भी लिखते हैं और आगे दण्ड पल लिख देते हैं। जैसा कि पहले ही कह चुके हैं, संक्रान्ति से पहले ही सूर्य का अयन हो जाता है और जिस दिन उस राशि का अयन संक्रान्ति से पहलेही हो जाता है उसी दिनके सामने 'सायन मेषेर्कः,''सं० मेषेऽअयनम्' इत्यादि लिखकर उसके आगे वह दण्ड पल लिखदेते हैं जब से कि वह अयन होता है। इसकी यह भी पहचान है कि स्पष्टसूर्य में जब पूर्वोक्तरीति से निकाला गया उस महीने का अयनांश मिलाने पर अंश, कला, विकला आदि न रहकर केवल राशिही रहजाय तो समझना चाहिये कि उसदिन हीं अयन होगा। यदि प्रातःकाल के स्पष्ट सूर्य में मिलाने पर न पूरा हो तो जितने दण्ड पलादि के बाद के स्पष्ट सूर्य में मिलाने से ऐसा हो जाय उतनी हीं देर बाद अयन की प्रवृत्ति होगी। इसीसे अयन लिखकर उसके बाद दण्ड पल भी लिखे रहते हैं। यह भी जान लेना चाहिये कि सूर्य की प्रत्येक संक्रान्ति के नाम भिन्न भिन्न होते हैं और उसके अनुसार मुहूर्त्त चिन्तामणि के संक्रान्तिप्रकरण में फल लिखा है। इसी प्रकार वाहन, अस्त्र, पुष्प आदि भी होते हैं और उनका फल भी वहीं लिखा होता है। प्रथम जो चन्द्रदर्शन के समय १५, ३०, ४५ मुहूर्त्त लिखे हैं वे संक्रान्ति के भी समय होते हैं। वस्तुतः रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, विशाखा और पुनर्वसु यह छ नक्षत्र बृहत् या उत्तम संज्ञक हैं। मृगशिरा, रेवती, अनुराधा, चित्रा, अश्विनी, अभिजित्, पुष्य, हस्त, धनिष्ठा, श्रवण, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, मूल ये १६ (अभिजित् के छोड़ने पर १५) सम कहाती हैं और आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाती, ज्येष्ठा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रणी ये ६ जघन्य या नीच कहाती हैं । यदि जघन्य नक्षत्र जिसदिन
ो उसदिन सूर्य की संक्रान्ति या द्वितीया के चन्द्रका दर्शन हो तो
ुः सम नक्षत्र में ३० और बृहत् में ४५ मुहूर्त्त माने जाते हैं । इसी
रह संक्रान्ति के समय सूर्य बैठा, सोया, या खड़ा है यह भी मुहूर्त्त-
चिन्तामणि आदि में लिखा है और उसका भी फल महंगी, सस्ती,
वर्षावृष्टि आदि वहीं लिखा है । प्रत्येक सूर्यसंक्रान्ति के नाम भी हैं ।
ुवा, मेष संक्रान्ति को विषुव, विषुवी या विषुवत्संक्रान्ति कहते हैं ।
मिथुन, कन्या, धनु, मीन की संक्रान्ति को षडशीतिमुखा और वृष,
सिंह, वृश्चिक, कुंभवालीको विष्णुपद संक्रान्ति कहते हैं । इसी तरह
ब नक्षत्रों पर सूर्य का प्रवेश होता है तो वह भी संक्रान्तिही है और
सूर्य के सिवाय अन्यग्रह भी जब नक्षत्रों या राशियों पर प्रवेश करते
हैं तब भी संक्रान्ति ही होती है । मगर सूर्य की तरह उनका विशेष
फल न होने से उनको संक्रान्ति, प्रायः साधारण बोलचाल में. नहीं
कहते हैं । सूर्य जब नक्षत्रोंपर प्रवेश करता है तो उसदिन यह लिख
कर प्रवेश के समय के दण्ड पलों को लिखने के बाद स्त्री पुरुष और
चन्द्रसूर्यादि योग तथा नाडी और वाहन भी लिखते हैं । बात यह
है कि आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वभाद्रपदा, रेवती,
अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा
ये १४ चन्द्रमा की नक्षत्र हैं और रोहिणी, मृगशिरा, पूर्वाफाल्गुनी,
उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा. अनुराधा, ज्येष्ठा,
मूल, शतभिषा, उत्तराभाद्रपदा, ये १३ सूर्य की नक्षत्र हैं । इसी तरह
आर्द्रा से लेकर १० नक्षत्र स्त्री, विशाखा, अनुराधा, ज्येष्ठा ये ३ नपुं-
सक और उनके बाद मूल से लेकर शेष १४ पुरुष कहाती हैं । नक्षत्रों
पर सूर्य के प्रवेश के समय यही देखा जाता है कि वह नक्षत्र सूर्य,
चन्द्र, स्त्री, पुरुष, नपुंसक इनमें कौन कौनसा है । इसी तरह उस दिन
के नक्षत्र को भी, जिस दिन सूर्य उस नक्षत्र पर जाता है, देखते हैं कि
सूर्य आदि में किसका और कौनसा है । बस, यही देखकर लिख देते
हैं । यदि दोनों सूर्य या चन्द्र की हों तो सूर्य सूर्य या चन्द्र चन्द्र योग
लिखते हैं और एक सूर्य और दूसरी चन्द्र की हो तो चन्द्र सूर्य योग
लिखतेहैं । इसी प्रकार स्त्री पुरुष का भी समझना चाहिये । सूर्य सूर्य
योग में तो निवर्षण; चन्द्रचन्द्र में अल्पवृष्टि; चन्द्रसूर्य में अच्छी वृष्टि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

होती है। इस में भी यह जानने की बात है कि प्रतिदिन की नक्षत्र तो चन्द्र नक्षत्र कहाती हैं। क्योंकि प्रतिदिन चन्द्रमा नक्षत्रों को ही भोगा करता है। और जिसपर सूर्य हो वह सूर्य नक्षत्र है। इसतरह यदि सूर्य के भोग की नक्षत्र चन्द्रमा की और चन्द्रभोग की नक्षत्र सूर्य की हो तभी अच्छी वृष्टि होती है। यदि सूर्य अपनीहीं नक्षत्रपर जाय और चन्द्रमा भी अपनी हीं पर, तब यह बात नहीं होती है। इसी तरह स्त्री पुरुष योग में महावृष्टि, स्त्रीनपुंसक में अल्पवृष्टि, स्त्रीपुरुष में केवल मेघ दीखते और पुरुष पुरुषमें वह भी नहीं। इसी प्रकार नाड़ी और वाहन का भी फल मानते हैं। यदि वाहन जलप्रेमी हो अर्थात् महिष गज आदि हो और जल या अमृत नाड़ी हो तो अच्छी वृष्टि हो और खर या अश्व वाहन और अग्नि नाड़ी हो तो वृष्टि न हो। यह भी स्मरण रहे कि जिस दिन आधी रात को चतुर्दशी हो उसदिन शिवरात्रि और यदि सूर्यास्त के बाद दो दण्ड के भीतर त्रयोदशी हो तो प्रदोष होता है। यदि चैत्रकृष्णपक्ष की त्रयोदशी को शतभिषा नक्षत्र हो तो वारुणी योग माना जाता है। यदि शनिवार भी उसदिन हो तो महावारुणी और यदि शुभ योग भी हों तो महामहावारुणी कहाती है। इसे भी त्रयोदशी के सामनेहीं लिख देते हैं।

इन सब बातों के सिवाय तीसरे प्रकार के योगों का भी नाम इसी जगह लिखा रहता है। और जबसे जबतक रहते हैं उन दण्ड पलों को भी लिखते हैं। यदि कुछ देर के बाद से दिन रात भर रहते हैं तो उतने दण्डपल के बाद 'उ०' लिखकर छोड़देते हैं। 'उ०' का अर्थ उपरान्त (बाद) है। मगर यदि सम्पूर्ण दिन रात न रहें तो जितने दण्डपलो तक रहें 'उ०' के बाद उन्हें लिखकर उसके बाद 'या' यावत् (तक) के बोधार्थ लिखदेते हैं। जैसे रवियोग ५ दण्ड ३० पल के बाद २० दण्डतक रहे, तो 'रवियोगः ५।३० उ० २०।० या०' ऐसा लिखेंगे और दिनरात रहनेपर '५।३० उ०' लिखकर छोड़देंगे। उन योगोंको जानने से पहले तिथियों के बारे में एक बात जानने योग्य है। नन्दा, भद्रा, जया, रिक्ता और पूर्णा ये पांच नाम क्रमसे प्रतिपदा से पञ्चमी तक की तिथियों के हैं और फिर यही नाम इसी क्रम से षष्ठी से दशमी तक तथा एकादशी से अमावास्या या पूर्णिमा तक की तिथियों के भी हैं। इस तरह १, ६, ११ तिथि को नन्दा कहते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। इसी तरह भद्रा आदि को भी जान लेना होगा। कुछ योग ऐसे हैं जो दिनों में तिथियों के पड़ने से ही होते हैं। जैसे दग्धयोग (या दग्ध तिथि) रविवार को १२ सोम को ११, भौम को ५, बुध को ३, गुरु को ६, शुक्र को ८, शनि को ९ होने से होता है। इसी तरह विषयोग रवि ४, सोम ६, भौम ७, बुध २, गुरु ८, शुक्र ९, शनि ७ को और हुताशन (अग्नि) योग रवि १२, सोम ६, भौम ७, बुध ८, गुरु ९, शुक्र १०, शनि ११ को होते हैं। इसीतरह रविवार आदि को क्रमसे मघा, विशाखा, आर्द्रा, मूल, कृत्तिका, रोहिणी, हस्त इन नक्षत्रों के आने से यमघंट होता है। हस्त, मृगशिरा, अश्विनी, अनुराधा, पुष्य, रेवती, रोहिणी के इन्हीं रविवार आदि ७ दिनों में क्रमशः आने से सिद्धि योग होता है। परन्तु गृहप्रवेश में भौमवार को अश्विनी, यात्रा में शनि को रोहिणी और विवाह में गुरुवार को पुष्य वर्जित है। इसके सिवाय एक प्रकार का योग रवियोग कहाता है और वह सभी दोषों का नाशक माना जाता है। सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उससे जिस दिन की नक्षत्र गिनने पर ४, ६, ९, १०, १३, २० संख्या हो जाय तो उस दिन रवियोग तब से तब तक होगा जब से जब तक वह नक्षत्र रहेगी। इसी प्रकार सर्वार्थ-सिद्धि और अमृतसिद्धि आदि शुभ योग माने जाते हैं और सभी कार्यों में अत्युत्तम फल देते हैं। खराब योगों में भी संवर्त्त, क्रकचा-दि खराब योग मुहूर्त्तचिन्तामणि आदि में लिखे हैं। इसी तरह के खराब योगों में कुलिक, कालवेला, यमघंट और कंटक ये चार हैं। यह यमघंट नक्षत्रवाले यमघंट से निराला ही है। रविवार को १४ वां मुहूर्त्त कुलिक, ८ वां कालवेला, १० वां यमघंट, छठाँ कंटक कहाता है। सोमवार को १२ वें, छठे, ८वें ४ थे मुहूर्त्त; भौमवार को १०, ४, ६, २; बुधवार को ८, २, ४, १४; गुरु को ६, १४, २, १२, शुक्र को ४, १२, १४, १०; शनि को २, १०, १२, ८ वें मुहूर्त्त क्रमसे कुलिक, कालवेला, यमघंट, कंटक कहाते हैं। इनके सिवाय एक अर्धयाम दोष भी है। क्रम से रविवार आदि को ७, ८; १३, १४; ३, ४; ९, १०; १५, १६; ५, ६; ११, १२ ये मुहूर्त्त यामार्ध कहाते हैं। इनमें कोई शुभ कार्य नहीं होता। मगर पूर्व के चार योगों में उनका आधा अर्थात् अन्त का एक दण्ड वर्जित है। परन्तु यदि आगे कही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

रीति के अनुसार लग्न या चन्द्रमा बलवान हो तो ये दुष्ट योग कुछ भी नहीं कर सकते । बृहस्पति, शुक्र, और रविवार को जितने दोष हैं वे रात को नहीं मानेजाते तथा सोम, शनि, मंगल, के दोष दिन को नहीं होते । मगर बुधवार के दोष तो दिन रात में सदाही माने जाते हैं । यदि यात्रा आदि में सामने चन्द्र हो तो सभी दोषों को नष्ट करदेता है और त्रिकोण (५, ९) तथा केन्द्र (१, ४, ७, १०) में रहने वाला गुरु एक लाख, शुक्र १ हजार और बुध सैकड़ों दोषों का नाश करता है। परन्तु यदि ये सभी बलवान हों तभी। निर्बल होने पर तो कुछ नहीं करसकते । विवाह में ७ वें स्थान का बल खराब माना जाता है। और कामों में वह भी अच्छा है। इस तरह ये जितने दोष हैं सभी प्रत्येक तिथि वार के सामने पञ्चांग में लिखे रहते हैं । वहीं देखने से प्रत्येक का ज्ञान हो सकता है। यह भी जान रखना चाहिये कि यद्यपि शनिवार और रिक्तातिथि (४, ९, १४) दोनों ही खराब हैं । फिर भी, शनिवार को रिक्ता होने से सिद्धियोग हो जाता है ।

तिथि और नक्षत्रों के सम्बन्ध में यहीं एकाध बातें और भी जानने योग्य हैं । तिथियों के देवता या स्वामी हैं और नक्षत्रों के भी । अतः अपने अपने देवताओं के नाम से भी ज्योतिष ग्रन्थों में तिथि और नक्षत्रों का उल्लेख रहता है । अतः देवताओं के नाम जान लेना भी उचित है । वे यह हैं–प्रदिपदा के अग्नि, द्वितीया के ब्रह्मा, तृतीया की गौरी, चतुर्थी के गणेश, पंचमी के सर्प, षष्ठी के कार्त्तिकेय, सप्तमी के सूर्य, अष्टमी के शिव, नवमी की दुर्गा, दशमी के यम, एकादशी के विश्वेदेव, द्वादशीके विष्णु, त्रयोदशीके कामदेव, चतुर्दशी के महादेव, अमावास्या के पितर और पूर्णमा के चन्द्रमा। नक्षत्रों देवता क्रम से यह हैं–अश्विनी के दस्र या अश्विनी (अश्विनीकुमार), जिन्हे नासत्य भी कहते हैं । भरणी के यम, कृतान्त, प्रेतराट्, प्रेतपति आदि । कृत्तिका के अग्नि, वह्नि, ज्वलन, अनल, हुतभुक्, हव्यवाहन, हव्यवाट् आदि । रोहणी के ब्रह्मा, धाता, क, पद्मासन, चतुरानन, पद्मयोनि आदि । मृगशिरा के चन्द्र, शशांक आदि । चन्द्रमा के पर्याय पहले गिनाये हैं । आर्द्रा के रुद्र, शिव, शंकरादि महादेव के नाम । पुनर्वसु की अदिति,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रेवमाता आदि। पुष्य के बृहस्पति। इनके नाम भी पहले लिखे गये हैं। आश्लेषा के सर्प, उरग, नाग, द्विजिह्व, चक्षुःश्रव आदि। मघा के पितर। पूर्वाफाल्गुनी के भग। उत्तराफाल्गुनी के अर्यमा। हस्त के रवि, सूर्य। सूर्य के नाम पहले ही लिखे हैं। चित्रा के त्वष्टा। स्वाती के वायु, आशुग, मेघवाहन, अन्तरिक्षचारी, मरुत आदि। विशाखा के इन्द्राग्नी, शक्राग्नि आदि। (इन्द्र और अग्नि के नाम एक साथ)। इसीसे विशाखा को द्विदैवत्य भी कहते हैं। क्योंकि इसके दो देवता हैं। अनुराधा के मित्र। ज्येष्ठा के इन्द्र, शक्र, देवपति, सुरेश, आदि। मूल के निर्ऋति, राक्षस, रक्ष, असप, दस्यादि आदि। पूर्वाषाढा के जल, तोय, उदक, आप, नीर, क आदि। उत्तराषाढा के विश्वेदेव। अभिजित् के विधि। श्रवण के गोविन्द विष्णु, मुरारि, हरि आदि। धनिष्ठा के वसु। शतभिषा के वरुण, तोयप, जलेश, पाशी आदि। पूर्वाभाद्रपदा के अजचरण, अजपात्, अजैकपाद, आदि। उत्तराभाद्रपदा के अहिर्बुध्न्य। रेवती के पूषा। इन देवताओं के सम्बन्ध से नक्षत्रों के बहुत से नाम ज्योतिषग्रन्थों में लिखे मिलते हैं। अतएव इनका अभ्यास रहना चाहिये। एक दो आदि संख्याओं और प्रतिपदा आदि तिथियों के लिये और भी संकेत हैं। जैसे एक (प्रतिपदा) के लिये भूमि, शशी, चन्द्रादि। दो (द्वितीया) के लिये नेत्र, युगल, युग। तीन के लिये गुण आदि। चार के लिये वेद, युग आदि। ५ के लिये बाण, इषु, आदि। ६ के लिये तर्क, अंग, रस आदि। ७ के लिये अश्व, नग, पर्वत आदि। ८ के लिये वसु, नाग, सिद्धि। नौ के लिये इन्द्रिय, गो, नन्द, खंड आदि। १० के लिये अंक, दिक्, दिशा आदि। ११ के लिये रुद्र आय आदि। १२ के लिये सूर्य, रवि, व्यय आदि। १३ के लिये विश्व आदि। १४ के लिये, भूत, मनु आदि। १५ के लिये तिथि आदि। १६ के लिये भूप, अष्टि आदि। इसी तरह नख से २०, दन्त से ३२ आदि का बोध होता है। इनके सिवाय नक्षत्रादि की कुछ और भी संज्ञाएं हैं। (१) उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढा, उत्तराभाद्रपदा, रोहिणी इन चार नक्षत्रों और रविवार को ध्रुव और स्थिर कहते हैं। इनमें स्थिर कार्य और बीज, घर, औषधि, युद्ध, अस्त्र, शान्ति, बागीचे आदि के काम होते हैं। (२) स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषक् ये ५

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

नक्षत्र और सोमवार चर तथा चल कहाते हैं। इनमें हाथी, घोड़े आदि की सवारी, वाटिका में जाना, मंत्रसिद्धि, कृषि, भूषणबनाना इत्यादि काम किये जाते हैं। (३) पूर्वाफाल्गुनी,पूर्वाषाढा,पूर्वाभाद्रपदा,भरणी, मघा ये ५ नक्षत्र और मंगलवार की उग्र तथा क्रूर संज्ञा है। इनमें हत्या, आग लगाना. दुष्टता, जहर देना, शस्त्र से मारना, बाँधना, चोरी आदि काम किये जाते हैं। (४) विशाखा, कृत्तिका ये दो नक्षत्र और बुधवार को मिश्र और साधारण कहते हैं। इनमें अग्निहोत्र, वृषोत्सर्ग, नाच, गान, शिल्पकला, लेखनकला, भूमि और रस का संग्रह, विवाह, अन्न जमा करना और उग्र नक्षत्रों के भी कर्म किये जाते हैं। (५) हस्त, अश्विनी, पुष्य, अभिजित् ये चार नक्षत्र और गुरुवार को लघु और क्षिप्र कहते हैं। इनमें बेंचने के योग्य वस्तु की खरीद, स्त्रीप्रसंग, शास्त्राभ्यास, भूषण और चित्रादि का निर्माण आदि कार्य किये जाते हैं। (६) मृगशिरा, रेवती, चित्रा, अनुराधा ये चार नक्षत्र और भृगुवार को मृदु तथा मैत्र कहते हैं। इनमें गीत, वस्त्र, स्त्री के साथ क्रीडा, मित्र के कार्य आदि किये जाते हैं। (७) मूल, ज्येष्ठा, आश्लेषा ये तीन नक्षत्र और शनिवार इन्हें तीक्ष्ण और दारुण कहते हैं। इनमें मारण, उच्चाटनादि, हत्या, उग्रकार्य और हाथी घोड़े आदि को ठीक करना, ये कार्य किये जाते हैं।

इतनी बातें लिखने के बाद पञ्चांग के पन्नों में आधे से नीचे और कुछ ऊपर भी यदि कहीं जगह शेष रह जाती है तो उसमें ग्रहस्पष्टीकरण, कुण्डली और लग्न सारणी के लिखने के बाद शेष स्थानों में, व्रतों, रामनवमी आदि पर्वों के सम्बन्ध के धर्मशास्त्रों के वचन और ज्योतिष की बहुत से चुटकुली बातें लिखी रहतीं हैं। किसी तिथिविशेष को विवाह, गृहप्रवेश, यात्रा, उपनयनादि की लग्न होती है। उन्हें लिख देते हैं कि अमुक दिन और तिथि को अमुक लग्न में अमुक काम करना चाहिये। इन सब बातों को चतुर आदमी स्वयं देख और जान सकता है और धीरे धीरे इनकी जानकारी प्राप्त कर सकता है। ग्रहों के स्पष्टीकरण के बारे में पहलेही लिख चुके हैं और स्पष्टीकरण की सारणी को बता भी चुके हैं कि वहां क्या लिखा जाता है। हां प्रत्येक स्पष्टग्रह की सारणी के साथ एक कुण्डली भी रहती है और इस तरह प्रत्येक पक्ष में दो कुण्डलियां रहती हैं और किसी किसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में तीन भी । उनका थोड़ासा विवरण जान लेना चाहिये । कुण्डली को ज्योतिषी प्रस्तार या पंक्ति कहते हैं और वर्ष भर में लगभग ५२ के जो कुंडलियां बनी होती हैं उनमें क्रम से १, २, ३, आदि अंक देकर उसके आगे 'पं०' लिखा रहता है । इसका अर्थ पंक्ति हैं । प्रस्तार और कुंडली भी कहते हैं और अंग नाम भी है । प्रत्येक में १२ घर बने होते है और इन्हीं में १२ राशियों के १ से लेकर १२ तक के अंक लिखकर जिस राशि पर उस समय जो ग्रह रहता है उसकी अंक संख्या वाले घर में उस ग्रह का नाम लिख देते हैं । जैसे यदि वृष पर मंगल हो तो २ अंक वाले घर में 'मं. या भौ.' लिख देंगे और यदि दो तीन ग्रह होंगे तो सभी के नामों के आदि के अक्षर उसी घर में लिख देंगे । परन्तु यह कुंडली के देखने सेही स्पष्ट होजायगा कि जिस तरह ग्रह कभी एक घरमें लिखे रहते हैं तो कभी दूसरे में । क्योंकि हमेसा एकही राशि पर न रहकर अन्यान्य राशियों पर जाते रहते हैं। इसलिये जिस राशि पर जब जाते हैं तब उसी राशिके सूचक अंकवाले घर में ग्रह लिखे जाते हैं । उसी तरह राशियों के सूचक अंक भी बदलते रहते हैं । सदा एक घरमें न रहकर कभी एक घर में और कभी दूसरे घरमें लिखे रहते हैं।कभी मेषका सूचक १ अंक ऊपर लिखा रहता है तो कभी बगल में । इसका कारण यह है कि जिस राशि पर सूर्य रहता है प्रातःकाल सूर्योदयके समय उसी राशि पर उदय होताहै और उस समय वही लग्न मानी जाती है जो लग्न पूर्वमें रहती है–अर्थात् जिस लग्न का उदय रहता है वही पूर्व में रहती है और कुण्डली, प्रस्तार, पंक्ति या अंग में पूर्व दिशा की जगह बीच में ही मानी जाती है । इसलिये दोनों कोने से खीची रेखायें जहां एक दूसरी को काटती हैं उसके ऊपर जो एक घर होता है वही पूर्व माना जाता है क्योंकि वही बीच में है और उसके ऊपर इधर उधर जो एक एक घर होते हैं, वे बीच में न होकर बगल में रहते हैं । इस लिये उसी बीच वाले घर में ही उस लग्न का सूचक अंक लिखा जाता है। या यों कहिये कि जिस राशि पर सूर्य रहता है उस राशि का सूचक अंक लिखाजाता है । अर्थात् मेषपर होगा तो वहां एक लिखेंगे और वृष पर होने से २, मिथुन के लिये तीन इत्यादि । और उस अङ्क के बाद के अङ्क उसकी बाईं ओर के घर में लिखकर क्रम से उधर से ही लिखते लिखते १२ तक लिखकर, यदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

शेष घर होते हैं तो उनमें, १, २ आदि लिख डालते हैं। क्योंकि यह पहले ही कह चुके हैं कि राशिचक्र भी पूर्व से पश्चिम को घूमता हैं। इस लिये यदि पूर्व में १ या मेष हो तो उत्तर में ४ या कर्क और इन दोनों के बीच में वृष, मिथुन क्रमशः उत्तर उत्तर रहते हैं। इसी तरह पश्चिम में तुला और उत्तर पश्चिम के मध्य में क्रमशः सिंह कन्या होती हैं और दक्षिण में मकर और पश्चिम दक्षिण के बीच में वृश्चिक, धन क्रम से तथा दक्षिण, पूर्व के मध्य में कुम्भ, मीन क्रमशः रहते हैं और जब कुण्डली में ऊपर पूर्व रहेगा तो उसकी बाईं ओर उत्तर, पीछे पश्चिम और दहिनी ओर दक्षिण रहेगा। यदि पूर्व में मेष की जगह वृष, मिथुन या कर्क हो तो उसी हिसाब से उत्तर, पश्चिम आदि दिशाओं में भी कर्क और तुला की जगह सिंह, कन्या या वृश्चिक, धन आदि आगे की राशियां रहेंगी। इसी तरह जन्म के समय जो लग्न रहती है लग्न कुण्डली में ऊपर मध्य (पूर्व) में उसी का सूचक अङ्क लिखते हैं और फिर क्रम से पूर्वोक्त रीति के अनुसार ही शेष राशियों के अङ्क लिख देते हैं। इसी तरह चन्द्र कुण्डली में ऊपर उस राशि का सूचक अङ्क लिखते हैं जिस पर चन्द्रमा होता है और शेष जगह को लग्न की ही रीति से भर देते हैं। मगर भाव कुण्डली में, यदि वह लग्न के अनुसार हो तो लग्न की जगह, और यदि चन्द्र कुण्डली के अनुसार हो तो चन्द्र राशि की जगह, १ लिखकर उसके बाय २, ३, आदि से लेकर १२ तक के अङ्क लिखकर सभी घरों को भर देते हैं। अथवा यह स्थूल बात हुई। वस्तुतः गणित करके प्रत्येक भावों और उनके सन्धियों को निकालकर ग्रह का जौनसा भाव इस तरह आता है और गिनती में वह जिस राशि पर पड़ता है उसे उसके घर में लिख देते हैं। क्योंकि देखने में किसी राशि पर रहने वाला भी ग्रह भाव के गणित के अनुसार उससे पहले या बाद की राशि का फल दे सकता है। अतः भावकुण्डली में जिसका फल देगा वहीं उसे लिखेंगे। यह कठिन बात है। अतएव इस पर विशेष विचार जन्मपत्र के प्रकरण में अन्यत्र करेंगे, अस्तु। परन्तु केवल कुण्डलियों से यह पता नहीं लग सकता कि कौनसा ग्रह किस राशि के किस अंश, कला आदि पर है। क्योंकि कुण्डली में तो केवल इतना ही लिखा रहता है कि अमुक राशि पर अमुक ग्रह है। इससे अधिक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लिख ही नहीं सकते । मगर इतना जानने से तो काम चल नहीं सकता। सीसे ग्रहों की सच्ची स्थिति जानने के लिये कि उसराशि के किस अंश आदि पर हैं और उस दिन उनकी गति क्या है, प्रत्येक कुण्डली के साथ पंचांग में और जन्मपत्र में भी गति के सहित स्पष्ट ग्रहों की सारणी दे दी जाती है, जिसका विचार हम पहले ही कर चुके हैं और पञ्चाङ्ग की इस स्पष्ट ग्रह सारणी और कुण्डली से ही जन्मपत्र बनाने में सहायता ली जाती है। बहुत से पंचांगों में स्पष्ट ग्रहसारणी में चन्द्रमा की राशि आदि लिखते हैं और बहुतों में छोड़ देते हैं। उसका स्पष्ट करना सहल है और वह बहुत शीघ्र राशियां बदलता है। इसी से बहुतेरे पंचांग वाले उसे छोड़ देते हैं और उस की जगह सूर्य का मंदोच्च और गति की जगह मंद फल लिख देते हैं। ये लिख कर ही सूर्य आदि की स्पष्ट राशियां और अंशादि लिखते हैं। यह इस लिये लिखते हैं कि सूर्यादि की स्पष्ट गति औरराशि आदि के निकालने में सूर्य के मन्दोच्च और मन्द फल की राशि, अंश, कला आदि के जानने की आवश्यकता गणित में होती है। इसीसे सरलता के लिये कोई कोई लिख देते हैं। सब नहीं लिखते हैं। अतः यही समझना चाहिये कि यह सूर्य का मंदोच्च और मंदफल भी एक प्रकार का कांटा या तराजू अथवा सहायक पदार्थ है जो गणित करके निकाला जाता है। मन्दोच्च और मन्दफल आदि ज्योतिषियों की संज्ञायें हैं, इतना ही जान लेना यहां काफी है। विशेष ज्ञान उसके ज्ञातज्ञों के लिये है, नकि सर्वसाधारण के लिये आवश्यक है। प्रत्येक पत्र में दो कुण्डलियां लिखकर स्पष्ट ग्रह इस लिये लिख देते हैं कि ग्रहों की स्थिति आसानी से जानी जा सके और जन्मपत्रादि बनाने में कम परेशानी हो। यदि १५ दिन या एक महीने पर एक कुण्डली लिखते तो लोगों को गणित करने में बड़ा ही क्लेश होता। इसीसे आठवें दिन एक कुण्डली और स्पष्टग्रहसारणी लिख देते हैं। प्रायः ऐसा भी होता है कि इन आठ दिनोंमें ही कोई ग्रह एकराशि से दूसरी में चला भी जाता है और यदि नहीं जाता है तो भी उक्त कारणों से ही बनाते हैं। यदि इस बीच में ही सूर्य की संक्रान्ति हो गई या कोई ग्रह वक्री या वक्री से मार्गी हो गया तो इस की सूचना के लिये किसी किसी पत्र में तीन कुंडलियां भी बन जाती हैं। जिस से गणित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-GoI

में लोग गलती न कर सकें और कुंडली ठीक होजाय । प्रत्येक पंक्ति (कुंडली) के ऊपर उसकी संख्या लिखकर जिस दिन और तिथि की होती है उसका नाम और कहीं कहीं उस महीने का और शुक्ल कृष्ण पक्षका भी नाम लिख देते हैं और पूर्वोक्त मिश्र मान तथा दिन-मान भी दण्ड पलादि के रूप में लिख देते हैं । इस के साथ द्यु गणः या अहर्गणः लिखकर कुछ अंक लिखे रहते हैं । द्यु गण और अहर्गण का अर्थ है दिन समुदाय या दिनों का गण (समूह) । मगर ज्योतिषियों के यहां सूर्य के मन्दोच्चादि की तरह यह भी एक सांकेतिक संज्ञा है, जिससे उन के निर्दिष्ट गणित के अनुसार आये हुए कुछ दिनों के समूह का बोध होता है और इस अहर्गण या द्यु गण से ग्रहों के स्पष्ट करने के गणित में सहायता मिलती है। इसीलिये सरलता के वास्ते गणित करके अहर्गण को लिख देते हैं कि यदि कोई जांचना चाहे तो इसी आधार पर जांच ले। ग्रहादि की स्पष्ट राशि आदि की सारणी और कुंडली के ऊपर ही 'सू. स्प. ग्र.' लिख देते हैं । जिसका अर्थ है सूर्यादि स्पष्ट ग्रह । इस के सिवाय दोनों कुण्डलियों के मध्यमें दैनिक लग्न की सारणी दी हुई रहती है । जिस से उस पक्ष भर के सभी दिनों के २४ घंटों में कितने बजे से कितने बजे तक कौन लग्न रहती है, यह बात जानी जाती है । सबसे ऊपर की पंक्ति में उस पक्ष भर के दिनों और उन के साथ तिथियोंके लिखने का घर बना रहता है और उसमें क्रमसे १, २ आदि तिथियां और उनके साथ ही दिनों के नामों के पहले अक्षर लिखे रहते हैं । दिनों के नाम इसलिये रहते हैं कि तिथियां तो घट बढ़ जाती हैं । मगर वे नहीं घटते बढ़ते । और उनके नीचे 'घं० मि०' लिखते हैं जिसका अर्थ है घंटा, मिनट । बाईं ओर ऊपर से शुरू कर नीचे तक बारह राशियों या लग्नों के नाम एक के नीचे दूसरे लिखे रहते हैं । सूर्योदय के समय जो सेही लग्न का लिखना शुरू करते हैं । इसलिये सूर्योदय के समय जो राशि या लग्न हो वही पहले लिखी जाती है और उस के बाद की उस के नीचे क्रमशः एक के बाद दूसरी लिखी जाती है । ६ लग्न दिन में और ६ रात में बीतती हैं । इसी से जब रात की लग्न शुरू होती है तो ऊपर प्रत्येक घर के सामने 'रा. रा.' लिख देते हैं जिस का अर्थ है रात्रि । यदि पक्ष के बीचमें ही संक्रान्ति होगई और सूर्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दूसरी राशि पर चला गया तो जिस दिन प्रातःकाल उस राशि पर उदय होने से वह लग्न होगी उस से पहले फिर भी नीचे ऊपर इसी से आरंभ करके राशियों को लिख देते हैं और उससे पहले जो राशि सब से पहले सूर्योदय के समय ऊपर लिखी गई थी, अब वह सब से नीचे लिखी जाती है। क्योंकि उसके बाद की राशि के सूर्योदय के समय आ जाने से वह सूर्योदय से पहले हो गई। इस लिये रात की लग्नों के अन्त में सब से नीचे ही उसका लिखा जाना उचित ही है। इस तरह १२ लग्नों के नाम एक के नीचे दूसरा लिख कर प्रत्येक के सामने पहले घर में घंटे का और दूसरे में मिनट का अंक लिख देते हैं और यदि तीसरा घर हो तो सेकंड का भी अंक लिखते हैं। यह घर प्रत्येक दिन के नीचे के घं. मि. आदि के नीचे बने होते हैं। घंटे और मिनट आदि के जो अंक लिखे रहते हैं उनका यही अर्थ है कि उतने घंटे और उतने मिनटों या सेकंडों तक ही उस लग्न का भोग है। उस के बाद अगली लग्न का भोग होता है। दृष्टांत के लिये यदि मेष के सामने ८। १५ लिखे हों तो यह समझना होगा कि मेष लग्न ८ घंटे १५ मिनट तक यानी ८ बजकर १५ मिनट तक रहेगी। इसके बाद वृष लग्न होगी और वह वृष के सामने लिखे घंटे मिनटों के अनुसार उतने बज कर उतने मिनटों तक रहेगी। फिर अगली (मिथुन) आवेगी। इसी तरह सभी लग्नों का हाल जानना चाहिये। रात की लग्नों में भी यही हाल है कि इतने बजकर इतने मिनट रात तक यह लग्न रहेगी। इसके बाद अगली होगी। और रात वाली सबसे आखिरी लग्न के बाद से सूर्योदय के समय वाली शुरू होकर सूर्योदय के बाद उतने बजे तक रहेगी जितना उसके सामने लिखा हो। यही उस लग्नसारणी के देखने की रीति है और इस से प्रत्येक लग्न के भोग का निश्चय कर सकते हैं कि इतने घंटे और इतने मिनट इस का भोग रहा है। इस से उस के हरेक नवांश, द्वादशांश, होरा आदि का भी समय जान सकते हैं कि कौन नवांशादि कब से कब तक या कितने मिनट तक हैं। इस सारणी से पहले का बहुतसा कष्ट दूर होगया जो लग्नों और उन के नवांश आदि के निकालने में होता था। इस सम्बन्ध में कभी और भी लिखेंगे। यहां तक प्रत्येक पञ्चांग की भीतरी बातों का ज्ञान हो सकता है। पञ्चांग के पहले पन्ने के भीतर ही उस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

सम्वत् का नाम, उस के राजा, मंत्री आदि के नाम और उनके फल दिये होते हैं । वर्ष भर में कैसी वृष्टि, फसल, होगी; कैसे फल, फूल और रस होंगे; रोग और मृत्यु आदि कैसी होंगी, यह सभी बातें विस्तार के साथ लिखी होती हैं । इस के आगे यदि उस साल कोई ग्रहण हो तो किस महीने की किस तिथि और वार को कब से शुरू होकर कब तक रहेगा, यह पूरा ब्योरा दण्ड पलों और घंटे मिनटों में लिखा रहता है और उस के नीचे सूर्य या चन्द्रका, जिसका ग्रहण हो, मण्डल गोलासा बनाकर उसमें दिशाओं का चिह्न कर देते और जिधर से जितना ग्रहण होने वाला हो उतना अंश काला कर देते हैं । जब शुरू होता है तो उसे स्पर्श कहते हैं और उसका समय दण्ड पलों तथा घंटा मिनटों में लिख देते हैं । फिर आधा समय बीतने पर मध्य कहाता है । उसका भी समय लिखदेते हैं । जब पूरा हो जाता है और ग्रहण का चिन्ह नहीं रह जाता तो मोक्ष कहते हैं और उसका भी समय लिख देते हैं । स्पर्श से लेकर मोक्षतक जितना समय लगता है उसे पर्व कहते हैं । समूचा चन्द्र या सूर्य मण्डल का ग्रास हो जाने पर ग्रहण का नाम खग्रास कहाता है और थोड़ासा ग्रास होने पर खंडग्रास कहाता है । खग्रास में सम्मीलन और उन्मीलन भी होता है । सम्मीलन के मानी हैं पूर्ण मण्डल का लोप हो जाना, न दीखना और उन्मीलन का अर्थ है दीखने लगना । इन दोनों के समय भी लिख देते हैं । चन्द्रमा उस दिन जिस राशि पर होता है उसी राशिका ग्रहण माना जाता है और उस राशि वाले आदमी के लिये अनिष्टकारी कहाता है । इसी प्रकार उस दिन जो नक्षत्र होता है उसी नक्षत्र पर ग्रहण कहाता है । इसी तरह होलिकादाह के समय चन्द्रकी जो राशिहो उसी राशिपर होलिकादाह मानने की परिपाटी है ।

इसके सिवाय राशियों के द्रेष्काण, होरा आदि तथा १२ भावों के फल भी पञ्चांग में इधर उधर लिखे रहते हैं । और गृहोपयोगी सभी जातकर्म, नामकरण, विवाह, उपनयन, द्वार बनाने, किवाड लगाने आदि के मुहूर्त भी लिखे रहते हैं, जिनमें तिथि, दिन, लग्नादि शोधकर लिख देते हैं । गृहके पिंड बनाने, शल्य निकालने आदि की रीति और ग्रहों की महादशा, अन्तर्दशा आदि की सारिणी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और योगिनी की भी दशाओं के चक्र लिखे रहते हैं। और पञ्चांग के भीतर शुरू में हीं गणना या मेलापक की बात लिखी रहती है। इसके सम्बन्ध में आगे विवाहप्रकरण में लिखेंगे। पञ्चांग के मुख पृष्ठ परही पञ्चशलाका चक्र और सप्तशलाका चक्र लिखकर उसके नीचे खींची लकीरों के आमने सामने नक्षत्रों के नाम लिखे रहते हैं। इन दोनों के बारे में भी विवाहप्रकरण में हीं लिखेंगे। अष्टोत्तरी और विंशोत्तरी मत से आय (लाभ, आमदनी) व्यय (खर्च) का चक्र अलग अलग बना होता है। विन्ध्याचल से उत्तर के देशों में विंशोत्तरी मत और उससे दक्षिण के देशों अष्टोत्तरी मत से आयव्यय का निश्चय करते हैं। प्रत्येक राशि लिखकर उसके नीचे एक घर में आय की संख्या और दूसरे में व्यय की संख्या लिखते हैं। दोनों घरों के सामने 'आयाः' 'व्ययाः' ऐसा लिखा रहता है आयके सामने आय के और व्यय के सामने व्यय के अंक लिखे रहते हैं। इन अंकों से अभिप्राय यह होता है कि इस वर्ष में उतनी आमदनी और खर्च होगा। और इसी के अनुसार बहुत लोग यह देखते हैं कि किसके हाथ से कोई काम शुरू कराना चाहिये। जिसका लाभ अधिक और खर्च कम हो उसे ही काम शुरू करना चाहिये। एतदर्थ हरेक आदमी के राशि के नाम से उसकी राशि निकालकर और इस चक्र में आय व्यय देखकर निश्चय करते हैं कि आय अधिक है या व्यय और आय अधिक होने पर उसीके हाथ से वह कार्य करवाते हैं। आजकल तो यह चाल पड़ गई है कि राशि के नाम की कोई परवाह न कर जोही नाम हो उसी से उसकी राशि की कल्पना करके फल कहदेते हैं। वस्तुतः यह ठीक नहीं है। राशि के ही नाम से यह बात ठीक हो सकती है। मगर कुछ तो मूर्खता वश और कुछ लोगों के संतोष के लिये लोग ऐसाही कर देते हैं। कार्य शुरू करने में जो चन्द्रबल देखने की बात पहले कहचुके हैं उसमें भी ऐसा करडालते हैं। हालां कि वहां भी राशि के ही नाम से देखना चाहिये। जब यह झगड़ा खड़ा होता है कि अष्टोत्तरी मत के अनुसार करें या विंशोत्तरी के अनुसार तो इसके लिये वहीं लिखा है कि विन्ध्याचल से उत्तरके देशों में विंशोत्तरी से और दक्षिण अष्टोत्तरी से विचारते हैं। अथवा दोनों मतों के लाभों और खर्चों को अलग अलग जोड़देते हैं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

और दोनों जोड़ों में यदि लाभ का जोड़ व्यय के जोड़ से अधिक हो तो लाभ अधिक मानना चाहिये । तथा जिस के नाम से ऐसा हो वही शुरू करे । किसी किसी ने ऐसा भी लिखा है कि आय और व्यय दोनों को जोड़कर उसमें से एक घटा दे और शेष में आठ का भाग देने पर यदि १, २, ६, ७ शेषबचे तो अच्छा और ३, ४, ५, ८ या० बचने पर खराब मानते हैं । १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ या० बचने का क्रम से फल यह है (१) लाभ (२) सुख (३) क्लेश (४) रोग (५) लोकनिन्दा (६) सन्मान (७) विजय (८) हानि । और इसेही देखकर अच्छा होने पर उससे शुरू करावेंगे और खराब होने पर नहीं करावेंगे । दृष्टान्त के लिये यदि ८ आय और ५ व्यय हो तो दोने का जोड़ १३ हुआ । इसमें से १ घटाया तो शेष रहे १२, फिर इनमें ८ का भाग देने से ४ शेष बचे और ४ का फल रोग लिखा है । इसलिये यह ठीक नहीं है । इसी तरह सभी में देख सकते हैं । मगर यह आय व्यय को जोड़कर १ घटाने और ८ के भाग देने से फल निकालने की रीति घर के पिंड बनाने के समय जो आय व्यय हो उसके लिये प्रतीत होती है और इसका फल भी ऐसा ही मालूम होता है । उस प्रकरण में यह बात किसी किसी ग्रन्थ में लिखी भी है । फिर भी जैसा विचार हो करे । ऐसे अवसर पर भी इसका प्रयोग करने को लोगों ने लिखा तो है ही और करते भी हैं । जिस तरह जन्म के लग्न के अनुसार जन्मकुण्डली बनती है । उसी तरह मेषराशि पर जिस लग्न में सूर्यप्रवेश करता है उसे जगल्लग्न (संसार भर का लग्न) मानकर उसीके अनुसार जगल्लग्न कुण्डली बनाते और उसका फल संसार भरके लिये कहते हैं । इसी तरह आर्द्रा नक्षत्र पर जिस लग्न में सूर्य जाता है उसके अनुसार आर्द्राप्रवेशांग या कुण्डली बनाकर वृष्टिफल कहते हैं । इसी तरह वृष संक्रान्ति के लग्न से शारद अन्न (खरीफ) और वृश्चिक संक्रान्ति से ग्रैष्म धान्य (रबी) की कुण्डली बनाकर उनका फल भी लिखा रहता है । मिथुन की संक्रान्ति के लग्न से भी कुण्डली बनाकर फल कहते हैं । यह सब कुण्डलियां अब पत्रों के मुखपृष्ठ पर और उसके भीतर बनाई जाती हैं । अंग्रेजी नवरोज (१ जनवरी) का आरंभ जिस लग्न में होता है और नये वर्ष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(सम्वत्) का आरंभ (चैत्र शुक्ल प्रतिपदा) जब होता है उन्हीं
नों के अनुसार नवरोज प्रवेश कुण्डली और नववर्ष प्रवेश
कुण्डली भी पञ्चांगों में बनी रहती है। इन सबों से अलग अलग
फल जानने की रीति ज्योतिष ग्रन्थों में लिखी है। इन कुण्डलियों
के अनुसार ग्रहों की जैसी स्थिति होगी वैसा ही फल भी होगा।
प्रत्येक वर्ष के राजा, मंत्री, धान्य के पति (धान्येश), उसमें भी पूर्व
धान्य (खरीफ) और उत्तरधान्य (रबी) के पति, रसेश, फलेश,
मेघेश, आदि अलग अलग हुआ करते हैं और उनके नाम भी
लिखकर उनके फल पञ्चांग के भीतर शुरू में हीं लिखे होते हैं,
जैसा पहले ही कह चुके हैं। ग्रहों के अरिष्ट (बुरे फल) और
उनकी शान्ति के जप, मंत्र और दान के पदार्थ तथा योगिनी आदि
की शान्ति के उपाय और मंत्रतंत्रादि भी लिखे रहते हैं। यात्रा
के नक्षत्र, चन्द्रमा के १२ स्थानों के फल, दिक्शूलचक्र, योगिनी के
निवास की दिशा और फल आदि तथा हलचक्र, वीजोप्ति का राहु-
चक्र भी लिखा होता है। वीज वोने के समय इतना जानलेना
चाहिये कि वास्तुपुरुष या शेष भादों से शुरू कर तीन तीन मास
पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर सिर करके सोते हैं। इसलिये समूचे खेत
का दो भाग सिर की ओर और तीन भाग पांव की ओर तथा
दहिने बायें आधा आधा जहाँ पड़े वहीं वीज बोना चाहिये।
वही नाभि है।

३–विवाह और वधूप्रवेशादि।

पञ्चांग के साधारण ज्ञान के बाद विवाह आदि शुभ कर्मों के
मुहूर्त्तों और अन्यान्य आवश्यक बातों का ज्ञान भी होना चाहिये।
इसलिये उनका भी संक्षिप्त विचार करेंगे। इनमें विवाह सबसे प्रधान
माना जाता है और गृहस्थाश्रम का मूल है भी। उसके सम्बन्ध में ज्यादा
बातें जानने योग्य भी हैं। अतएव उसीका पहले विचार करना
उचित है। विवाह की अवस्था आदि के सम्बन्ध में तो विवाह प्रयोग
की विधि की भूमिका में अधिक विचार है। अतएव उसका स्पर्श यहां
न कर लग्न मुहूर्त्तादि का ही विचार करेंगे।

यह जान लेना चाहिये कि उत्तरायण में हीं, अर्थात् मकर की

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

संक्रान्ति से शुरू कर कर्क संक्रान्ति केपहले तक के ६ मासोंमेंही, विवाह, उपनयन आदि मंगल कार्य होते हैं। इनमें भी चैत्र मास (मीन की संक्रान्ति से लेकर मेष की संक्रान्ति तक) खर मास माना जाता है और धनकी संक्रान्ति से मकर तक पूस मास भी खरमासही कहाता है। अर्थात् धन और मीन की संक्रान्ति से खर मास का आरंभ मानते हैं और मंगलकार्य तथा अन्यान्य शुभ कार्यों में वह बुरा कहा गया है। इनमें पूस तो दक्षिणायनमें है। अतः केवल चैत्र निकालडालने पर, माघ, फागुन, वैशाख, ज्येष्ठ, आषाढ़ ये पांच महीने हीं विवाहादि के लिये शुभ हैं। ये महीने भी सौरमास ही लिये जाते हैं नकि चान्द्रमास। अतः मकर की संक्रान्ति से शुरू कर प्रत्येक संक्रान्ति से ही आरंभ करके वह महीना अगली संक्रान्ति तक माना जाता है। इसमें भी विष्णु शयन में कोई शुभ कार्य नहीं होता और विष्णुशयन आषाढ़ शुक्ल पक्ष की एकादशी से शुरू होकर कार्तिक शुक्ल एकादशी तक चार मास रहता है। इसीलिये आषाढ़ शुक्ल पक्ष की एकादशी के बाद विवाह वगैरः करना ठीक नहीं है। किसी किसी का वचन है कि जब सूर्य आर्द्रा नक्षत्र पर चला जाय तभी से विवाह, उपनयन आदि शुभ कार्य बराबर दस नक्षत्रों तक, यानी प्रायः ५ महीने नहीं होते। अगहन मास (मार्गशीर्ष या मगसिर) में भी किसी किसी ने विवाह माना है, जो मारवाड़ियों में प्रचलित है, नकि पूर्व और उत्तर भारत में भी। इन विवाह के ५ महीनों में भी यदि शुक्र या बृहस्पति अस्त हो जाय, या उदय होने पर भी बालक या वृद्ध रहें तो विवाह, उपनयन आदि कुछ भी नहीं होते। बृहस्पति का तो एक ही नियम है कि वह पूर्व में एक महीना अस्त रहकर फिर पश्चिम में उदय होता है। हमेशा पूर्व में उदय और पश्चिम में अस्त रहा करता है। पूर्व के उदय में मतभेद होनेपर भी पश्चिम के अस्त में मतभेद नहीं है और वह मतभेद भी केवल समय के बारे में है। यह तो सभी मानते हैं कि पश्चिम में १ मास या ३० दिन अस्त रहता है। मगर पूर्व में उदय ग्रहलाघव के अनुसार साढ़े बारह महीने तथा किसी के अनुसार ग्यारह ही महीने रहता है। परन्तु यह तो पंचांगों से मालूम ही हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ाता है कि कब उदय हुआ और कबतक रहा। इसलिये इस झगड़े
ें हम पड़ना नहीं चाहते कि कितने दिन उदय रहता है। शुक्र के
ोंबन्ध में भी उदय अस्त के सम्बन्ध में मतभेद है। ग्रहलाघव के
नुसार पूर्व दिशा में अस्त होने के दो महीने बाद शुक्र पश्चिम में
दय होता है; पौने नौ महीने रहकर पश्चिम में अस्त हो जाता
८ दिन पश्चिम में अस्त रहकर पूर्व में उदय होता है और
ौने नौ महीने हीं रहकर फिर पूर्व में अस्त होता है। यही क्रम
सका सदा जारी रहता है। किसी ने लिखा है कि पूर्व में ८॥ महीने
दय और २॥ महीने अस्त रहता है। पश्चिम में ९ महीने उदय
ौर ९ दिन अस्त रहता है। दूसरे ने लिखा है कि पूर्व में २५२ दिन
दय और ७२ या ७८ दिन अस्त रहता है। पश्चिम में २१० दिन
दय और ९ दिन अस्त रहता है। गुरु और शुक्र की बाल्य और
द्धावस्था के सम्बन्ध में भी मतभेद है। उदय होने के बाद कुछ
मय तक बाल्यावस्था और अस्त होने से कुछ समय पहले वृद्धा-
स्था रहती है। एक मत है कि दोनों की बाल्य तथा वृद्धावस्था
रावर ही रहती है और दूसरा मत है कि दोनों की बाल्यावस्था के
िन एक समान और वृद्धावस्था के दूसरे होते हैं। मगर दोनों के
मान हीं होते हैं। तीसरा मत है कि शुक्र की बाल्य, वृद्धावस्था
दिन तथा गुरुके बाल्य और वृद्धावस्था के दिन बराबर नहीं होते।
ौथा मत है कि शुक्रके बाल्य और वृद्धावस्थाके दिन कमवेश
ोते हैं मगर बृहस्पति के दोनों बराबर ही होते हैं। पांचवां मत है कि
क्र की पूर्व और पश्चिम की बाल्यावस्था भी बराबर नहीं होती है।
सी तरह वृद्धावस्था भी कम वेश होती है। पहले मत के अनुसार
ोनों की बाल्य और वृद्धावस्था १५ दिन, १० दिन, ७ या ३ दिन
हती है। इन चार पक्षों में ३ दिन वाला पक्ष अत्यन्त आवश्यकता
ोने के समय के लिये है। उससे कम आवश्यक होने पर ७ दिन।
सी तरह १० और १५ दिन समझना चाहिये। १५ दिन वाला पक्ष
ी सर्वोत्तम है। कोई कोई कहते हैं कि विन्ध्याचल के पास १० दिन,
ज्जैन के पास ७ दिन, बंगाल में ६ दिन, हूण देश में ५ दिन और शेष
ों में तीन दिन तक ही मानना चाहिये। दूसरे मत के अनुसार
ोनों की बाल्यावस्था ७ दिन और वृद्धावस्था १० दिन रहती है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

और वृद्धावस्थाही खराब है नकि बालावस्था । क्योंकि बालावस्था में वे क्रमशः वृद्धि (बढ़ती) प्राप्त करते रहते हैं । तीसरे मतके अनुसार बृहस्पति की बाल्य, वृद्धावस्था प्रत्येक १५ दिन रहती है । मगर इस पक्ष में शुक्र की बाल्य और वृद्धावस्था क्रम से ३ और ५ दिन होती है । शुक्रकी पूर्व में उदय होने पर बाल्यावस्था ३ दिन और वृद्धावस्था १५ दिन तथा पश्चिम में उदय होनेपर बाल्यावस्था १० दिन और वृद्धावस्था ५ दिन रहती है । इसी में चौथे और पांचवें मत का समावेश होगा । शुक्रके सम्बन्ध में वसिष्ठ का ५ दिन का, गर्गका ३ दिन का और शौनकका एक दिनका भी मत है कि इतनेही समय तक बाल या वृद्ध रहते हैं और यवनाचार्य ने ५ मुहूर्त्त तक ही माना है । इन पक्षों में जो सब से अधिक दिन (१५ दिन) का है वही साधारण रीति से सर्वमान्य है । शेष तो काम चलाने के ही लिये हैं । चन्द्रमा भी अमावास्या और प्रतिपदा को अस्त होकर उदय के बाद ३० दण्ड बालक और अस्त से पहले ३ दिन वृद्ध माना जाता है । मगर चन्द्रमा की बाल्यावस्था खराब नहीं है । केवल अस्त और वृद्धावस्थाही अशुभ है । अस्तमें विवाह होनेसे कन्या की मृत्यु और वृद्धावस्था में पति की मृत्यु मानी गई है । इसीप्रकार गुरु और शुक्र बालक रहने पर पति का नाश करते हैं और वृद्ध रहने पर कन्याका । जैसा कि पहलेही कह चुके हैं, शुक्लपक्ष के १५ दिन और कृष्णपक्ष के ५, यही २० दिन चन्द्रमा मध्यम बली और पूर्ण बली होते हैं और शेष १० दिन हीनबल । इसीलिये २० दिन तक ही शुभकार्य कियेजाते हैं । किसी किसी के मतसे शुक्लअष्टमीसे कृष्णअष्टमी तकपूर्ण और शेष क्षीण रहते हैं । अतः अष्टमीसे अष्टमी तकही कार्य करना चाहिये । मगर २० दिन वाला पक्ष ही आजकल प्रायः प्रचलित है । यदि अत्यन्त आवश्यकता होने पर कृष्णपञ्चमी के बाद भी कार्य किये जाय तोभी अस्त के दो दिन छोड़ देने होंगे । जिस महीने में संक्रान्ति नहीं पड़ती वह अधिक या अधिमास कहाता है और एक महीने में दो संक्रान्तियोंके होने पर न्यून या क्षय मास होता है । बावड़ी, बागीचे, तालाब, कूपं, गृह इनका आरंभ और प्रतिष्ठा (उत्सर्ग) तथा प्रवेश, व्रतों का आरंभ और समाप्ति, वधूप्रवेश (गमन), तुलादानादि महादान, सोमयाग, अष्टकाश्राद्ध, केशांत संस्कार, नवान्न यज्ञ, प्रपा (प्याऊ या गर्मी में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जल पिलानेका प्रबन्ध), पहला उपाकर्म (श्रावणी), वेदों के पढ़ने के समय के व्रत, कामनापूर्वक नील वृषोत्सर्ग, जिनका समय बीत गया हो ऐसे बालकों के संस्कार, देवप्रतिष्ठा, दीक्षा, उपनयन, विवाह, पहले पहल देवदर्शन या तीर्थयात्रा, संन्यास, अग्निहोत्र के लिये अग्नि का आधान, राजदर्शन, अभिषेक, मुंडन, चातुर्मास्य यज्ञ का आरंभ, समावर्तन, कर्णवेध (कान छिदाना) ये काम गुरु, शुक्र के अस्त रहने पर उनकी बाल्य, वृद्धावस्था में, और अधिमास तथा क्षयमास में वर्जित हैं, नहीं किये जाते ।

विवाह के महीनों के बारे में इतना स्पष्टरूपसे जान लेना चाहिये कि किसीने चान्द्रमास और किसीने सौर मास माना है । अतः दोनों का मेल होने पर ही ठीक है, न तो केवल चान्द्रमास और न सौर मास मानने योग्य है । तुला की संक्रान्ति होने पर कार्तिक को भी किसी ने माना है । मगर वह मध्यम है । हां, द्विरागमन के लिये ठीक है । यह भी जानना चाहिये कि ज्येष्ठ पुत्र और कन्या का विवाह जन्म के महीने, दिन, नक्षत्र और तिथि में नहीं होता और ज्येष्ठ पुत्र, ज्येष्ठ कन्या तथा ज्येष्ठ मास ये तीनों एक साथ नहीं होना चाहिये । अर्थात् ज्येष्ठ में उनका विवाह न करना चाहिये। विवाह ही नहीं, उपनयन, मुण्डन आदि मंगल कार्य कोई भी नहीं किया जाता । मगर अत्यावश्यक होने पर ज्येष्ठमास में पुत्र या कन्या दो में से एक के ज्येष्ठ होने पर विवाहादि कार्य किये जा सकते हैं । अथवा ज्येष्ठ मास में यदि कृत्तिका नक्षत्र पर सूर्य न हो तो भी होसकता है । या जितने दिन कृत्तिका पर हो उतने दिन या १० दिन छोड़कर शेष दिनों में होसकते हैं । यह भी नियम है कि अपने कुल में पुत्र के विवाह के ६ मास के भीतर उसी साल में कन्या का विवाह न करे और न पुत्र या पुत्री के विवाह के ६ मास भीतर उसी वर्ष में मुंडन, उपनयन आदि करे । हां, पुत्री के विवाह के ६ मास के भीतर पुत्र का विवाह हो सकता है । दो सगे भाइयों को सगी बहिनें विवाही न जानी चाहियें और न एक कोही दो सगी बहिनें दीजावें। तुम हमें या हमारे पुत्रादि को अपने घर की लड़की दो तो हम बदले में तुम्हें अपने घर की देंगे यह गोलावट पर पणबन्ध कहाता है । यह भी न होना चाहिये और कन्याविक्रय तो निषिद्ध है ही । इसी तरह दो सगी बहनों या भाइयों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

का विवाह ६ मास के भीतर न होना चाहिये। पुत्र या पुत्री के विवाह के निश्चय होने के बाद अपने कुल में तीन पीढ़ी के भीतर किसी की मृत्यु होजाने पर आशौच के बाद या एक मास के बाद शान्ति करके विवाह करना चाहिये। तीन सगे भाइयों या बहनों का विवाह आदि शुभ कार्य एक मण्डप में नहीं होते। परन्तु दूसरे मण्डमें हो सकते हैं। यदि सगे न हों तब तो कोई बात नहीं। यदि वाग्दान के बाद कन्या या पुत्र के वंश में किसी सपिंड की मृत्यु हो जाय तो वह यदि पुराना रोगी हो, दूर देश में स्थित हो या उदासीन होकर उनसे कोई सम्बन्ध न रखता हो तो मृत्यु से कोई हानि नहीं होती और आशौच के बाद विवाह होता है। और ऐसा न हो तो भी यदि दुर्भिक्ष का समय हो, राष्ट्र में गड़बड़ी हो, माता पिता के मरण की संभावना हो या कन्या युवती हो तोभी दोष नहीं होता। परन्तु यदि ऐसा न हो तब तो साधारणतः पिता के मरनेपर एक वर्ष बाद, माता के मरने पर छ मास बाद, स्त्री के मरनेपर तीनमास और भाई या पुत्र के मरने पर तीन और डेढ़ मास बाद विवाह करना चाहिये। परन्तु विवाह से पूर्व शान्ति की जाती है तभी जब हर हालत में एक मास बाद ही विवाह करना हो। यदि ऐसा न हो तब तो शान्ति की जरूरत भी नहीं है। गणेश की विधिवत् पूजा से ही शान्ति होती है।

रोहिणी, तीनों उत्तरा, रेवती, मूल, मघा, मृगशिरा, स्वाती, अनुराधा, हस्त इन ग्यारह नक्षत्रों में विवाह होता है। मगर, यदि वेध दोष, जिसे अभी कहेंगे, न रहे तभी। तिथियों में रिक्ता (४, ९, १४) और अमावास्या विशेष रूप से वर्जित हैं और गण्डान्त, वार-वेलादि पूर्वोक्त दोष वर्जित हैं। भरसक रवि, मंगल, शनिवार को विवाह नहीं करते हैं। मगर जब लग्न शोधने में कठिनाई पड़ती है तो लग्न कीही प्रधानता मानकर वार, तिथि आदि का कम विचार करते हैं। यों तो यदि सभी ठीक होंतो भरसक ऐसाही करेंगे। मगर ऐसा न होने पर सब से प्रथम लग्न कोही देखते हैं। नक्षत्रों में जो वेध दोष कहा है उसका अभिप्राय यह है कि सन्मुख के नक्षत्र पर कोई ग्रह न रहो प्रत्येक पञ्चांग के ऊपरही दो चक्र बने रहते हैं जिनका नाम पञ्चशलाका चक्र और सप्तशला का चक्र है। वेध होने पर उस नक्षत्र में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई भी शुभ कार्य नहीं होता। अतः नक्षत्रों के वेध के विचार केलिये दो चक्र बनाये गये हैं। इनमें पञ्चशलाका वाला चक्र विवाह के लिये है और शेष शुभ कार्यों के लिये सप्तशलाका चक्र। शलाका अर्थ है सीधी लकीर का। जब नीचे से ऊपर को या ऊपर से नीचे को पांच लकीरें बराबर फासिले पर बराबर लम्बाई की खींचकर उन्हें वैसीही पांच लकीरों से थोड़ा थोड़ा इधर उधर छोड़कर बीच में पांच जगह बराबर फासिले पर काट देते हैं और दो दो लकीरें आमने सामने के दोनों से खींचकर तिरछी एक दूसरी को काटते हैं तो इसे पञ्चशलाका कहते हैं। और जब पांच की जगह सात लकीरें वैसीही खींचकर सामने वाली दो दो नहीं खींचते हैं तब सप्तशलाका कहते हैं। इसके बाद अभिजित् के सहित २८ नक्षत्रों को प्रत्येक रेखा के किनारे पर लिखते हैं। सप्तशलाका में ऊपर सबसे बाईं वाली लकीर के किनारे पर कृत्तिका लिखकर आगे क्रम से रोहिणी आदि को लिखते हैं। पंचशलाका में बाईं ओर की ऊपर वाली कोने की लकीर पर कृत्तिका लिख कर उसके आगे रोहिणी आदि उसी तरह लिखते हैं। यह बात पञ्चांग के ऊपर या शीघ्रबोधादि में बने दोनों चक्रों के देखने से स्पष्ट विदित होजायगी। इस तरह प्रत्येक लकीर के दोनों किनारों पर एक एक नक्षत्र होजाती है। अब इस पर यदि वेध देखना होगा तो यही देखेंगे कि उन नक्षत्रों में किसी पर कोई ग्रह है या नहीं। यह बात पञ्चांग के देखने से मालूम होगी। पञ्चांगों में बराबर यह बात लिखी जाती है कि किस नक्षत्र के किस चरण पर कौन ग्रह है। दृष्टान्त के लिये पञ्चशलाका में रोहिणी और अभिजित् एकही लकीर के दोनों किनारे पर हैं। यही बात सप्तशलाका में भी है। पंचशलाका में कृत्तिका और विशाखा एक रेखा के किनारों पर हैं और सप्तशलाका में कृत्तिका और श्रवण। अब, यदि कृत्तिका पर कोई ग्रह आजाय तो पंचशलाका के अनुसार विशाखा का और सप्तकलाका के अनुसार श्रवण का वेध होगा। इसी तरह विशाखा पर ग्रह के होने से कृत्तिका का पंचशलाका में और सप्तशलाका में श्रवण पर आने से कृत्तिका का वेध होगा। दोनों ही चक्रों में रोहिणी पर आने से अभिजित् का और अभिजित् पर आने से रोहिणी को वेध होगा। अर्थात् वह नक्षत्र वेधयुक्त या विद्ध कही जायगी। यद्यपि रोहिणी नक्षत्र में विवाह करने को लिखा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Chennai

है। मगर यदि अभिजित् पर (उत्तराषाढा के अन्तिम चरण या श्रवण के आदि के १५ वें अंश पर) कोई ग्रह उस दिन हो तो रोहिणी विद्ध होजाने के कारण विवाह योग्य न रही। इसलिये उस दिन विवाह न होगा। इसी तरह प्रत्येक विवह नक्षत्रों के सम्बन्ध में देख सकते हैं। परन्तु प्रत्येक नक्षत्र का काम एक वार तो पड़ता नहीं। हां, यदि एक नक्षत्र पर वेध होने से उसका ठीक न होसका तो दूसरी को देखेंगे। उपनयनादि में भी वेध तो इसी तरह देखा जायगा। मगर कौन नक्षत्र किसके सामने है इसके लिये सप्तशलाका चक्र में देखना होगा नकि पंचशलाका में। वेध के सम्बन्ध में एक और बात विचारणीय है। यदि शनैश्चर आदि क्रूर ग्रहों का वेध हो तब तो उस नक्षत्र में विवाहादि शुभ कार्य नहीं हीं होंगे। मगर शुभ ग्रहोंका वेध होने पर नक्षत्र का केवल एकही चरण छोड़ा जाता है। दृष्टान्त के लिये यदि अभिजित् पर सूर्य, शनि आदि क्रूर ग्रह आजायं तो रोहिणी नक्षत्र भरमें कोई कार्य विवाहादि न होंगे। मगर यदि अभिजित् पर ही गुरु, शुक्र आदि शुभ ग्रह आजायं तो रोहिणी का केवल एक ही चरण छोड़कर शेष तीन में विवाह होगा। उसमें भी यह विचार है कि यदि अभिजित् के पहले चरण पर होगा तो रोहिणी का अन्तिम (चौथा) चरण या प्रायः १५ दण्ड छोड़ देंगे। अर्थात् रोहिणी का जितने दण्ड भोग होगा उसके अन्तिम चतुर्थांश में विवाहादि न होंगे। यदि दूसरे चरणपर होगा तो रोहिणीका तीसरा विद्ध मानकर वर्जित होगा। अभिजित् के तीसरे चरण पर रहने से रोहिणी का दूसरा और चौथे पर होने से पहला छूटेगा। अर्थात् शुरू काही चतुर्थांश विद्ध माना जायगा। यही रीति सर्वत्र है। यह वेध शुभ और अशुभ दोनों ग्रहों का होता है। मगर अशुभ ग्रह यदि उस नक्षत्र पर विद्यमान हो, तुरन्त जाने वाला हो या तुरन्तही उसपरसे हटा हो तब भी वह नक्षत्र वर्जित है। क्योंकि क्रूर ग्रह का नाममात्र का भी संसर्ग ठीक नहीं है। ऐसी नक्षत्रों में विवाह करने से तीन वर्ष के भीतरही कन्या विधवा होती है। परन्तु यदि उस पर चन्द्रमा भोग करके दूसरी नक्षत्र पर चला जाय तो फिर क्रूर के संसर्ग का दोष नहीं मानते। इसमें भी यदि क्रूर ग्रह आने वाला हो या आचुका हो तभी यह बात है। मगर यदि उसी नक्षत्र पर विद्यमान हो तब तो चन्द्र के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भोग से भी वह नक्षत्र शुद्ध नहीं होती । हां, यदि उस नक्षत्र के किसी चरण पर चन्द्रमा हो और दूसरे पर क्रूर ग्रह हो और उन चरणों की राशि भिन्न भिन्न हो तब कोई दोष नहीं है । यह तो कही चुके हैं कि प्रति दिन की नक्षत्र चन्द्र की हैं । अतः चन्द्र उन नक्षत्रोंपर रहता ही है । अगर यदि मृगशिरा के प्रथम या द्वितीय चरण पर चन्द्र हो और तृतीय या चतुर्थ पर क्रूर ग्रह हो तो प्रथम और द्वितीय चरण वृष राशि के और तृतीय चतुर्थ मिथुन के होने के कारण मृगशिरा नक्षत्र पर क्रूर ग्रह के आनेका दोष नहीं होता ।

रिक्ता के सिवाय दग्धादि तिथियों में भी शुभ कार्य नहीं होते, जैसा कि कहीचुके हैं । इसके सिवाय महीने के अन्त की तिथि में, किसी भी तिथि के अन्त के दो दण्डों में और नक्षत्रों के अन्त के तीन दण्डों में विवाह नहीं होता । गण्डान्त में भी विवाह नहीं होता । नक्षत्र गण्डान्त, तिथि गण्डान्त और लग्न गण्डान्त, इस प्रकार गण्डान्त तीन तरह का होता है । रेवती के अन्त और अश्विनी की आदि के दो दो दण्ड, आश्लेषा के अन्त और मघा की आदि के दो दो तथा ज्येष्ठा के अन्त और मूल की आदि के दो दो दण्ड को नक्षत्र गण्डान्त कहते हैं । इस तरह इसका भोग ४ दण्ड होता है । इसी तरह पंचमी, दशमी, पंचदशी के अन्त के एक एक और षष्ठी, एकादशी, प्रतिपदा की आदि के एक एक दण्डको तिथि गण्डान्त कहते हैं । कर्क, वृश्चिक, मीन लग्न के अन्त के आधे आधे और सिंह, धनु, मेष की आदि के आधे आधे दण्ड को लग्न गण्डान्त कहते हैं । विवाह के समय के अन्यान्य दोषों का विचार आगे लग्न के विचार के प्रसंग से करेंगे । यहां तो इतना केवल प्रसंग से लिखा है ।

विवाह में मेलापक की आवश्यकता होती है जिसे भमेलापक और गणना भी कहते हैं । इस मेलापक में वर्ण, वश्य, तारा, योनि, राशिमैत्री, गणमैत्री, भकूट या राशिकूट और नाड़ी इन आठ बातों का विचार करते हैं और यदि ये आठों ठीक हों तो मेलापक उत्तम गिना जाता है और उसमें ३६ गुण होते हैं । क्योंकि वर्णमें १, वश्यमें २, तारा में ३ इत्यादि में बढ़ते बढ़ते नाडी में ८ गुण माने जाते हैं और इनके ठीक होने पर सभी गुणों का जोड़ ३६ होता है । इन आठों में राशिकूट या भकूट यदि ठीक या उत्तम होजायँ तो कुल मिलाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

१६ गुण होने पर मेलापक निन्दित या निकृष्ट माना जाता है और उतने गुणों पर विवाह नहीं होना चाहिये। १७ से लेकर २० तक मध्यम या कामचलाऊ और २१ से ३० तक उत्तम माना जाता है। ३१ से ३६ तक तो सर्वोत्तम कहाता है। पर यदि भकूट खराब हो तो २० गुणों तक निन्दित या निकृष्ट; २१ से २५ तक मध्यम या कामचलाऊ; २६ से ३० तक उत्तम और ३१ से ३६ तक उत्तमोत्तम माना जाता है। इस मेलापक के विचार के लिये पञ्चांग में लिखा होड़ाचक्र या भमेलापक देखना चाहिये और उसी के आधार से इसे आसानी से जान सकते हैं कि ऊपर की आठ बातें कैसी हैं, ठीक या खराब। कन्या और वरकी कुण्डली को देखकर यह मेलापक वाला विचार होता है। क्योंकि इससे इतना ही निश्चय करते हैं कि वर कन्या दोनों के स्वभावों का मेल होगा या नहीं। इसीसे इसे मेलापक कहते हैं। भ नाम है राशि और नक्षत्र का। दोनों के जन्म की नक्षत्रों से उनकी राशि बनाकर मिलान करने के कारण इसे भमेलापक कहते हैं। यदि जन्म कुण्डली न हो। मगर राशि का नाम मालूम हो तो उतने से भी यह मेलापक देखा जा सकता है। मगर यदि राशि का नाम भी विदित न हो तब तो वस्तुगत्या मेलापक का विचार होही नहीं सकता। फिर भी आजकल की यह परिपाटी है कि वर कन्या के व्यावहारिक या पुकारने के नामों से ही मेलापक का विचार करते हैं। मगर इस में भी यही नियम है कि ऐसी दशा में दोनों के पुकारने के ही नामों से राशि की कल्पना करके मेलापक देखना चाहिये न कि एक के राशि के नाम से और दूसरे के पुकारने के नाम से। ऐसा तो कभी न करना चाहिये। या तो दोनों के राशि के नाम हों या दोनों के ही पुकारने के ही हों। यद्यपि इसका रहस्य हम समझ नहीं सकते और इसे ठीक भी नहीं मानते। फिर भी यही रीति आज कल है। पहले कहचुके हैं कि २७ नक्षत्रों में प्रत्येक के चार चरण करने से १०८ चरण होते हैं और प्रत्येक चरण में जन्म होने पर आदि के एक एक अक्षर माने गये हैं। इसलिये जिस नक्षत्र के जिस चरण में जन्म हो उस चरण के अक्षर को आदि में रख कर ही उसके राशि के नाम की रचना होती है। दृष्टान्त केलिये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अश्विनी के पहले चरण का अक्षर 'चू' है। इसलिये उस चरण में जन्म होने पर 'चूड़ामणि' इतना ही राशि का नाम होगा। और इसी चू से अश्विनी के पहले चरण का निश्चय कर उसके अनुसार नवराशि का निश्चय करेंगे। क्योंकि नौ नौ चरणों की एक एक राशि होती है। इसी तरह अन्य अक्षरों से चरण की कल्पना करेंगे। किस चरण का कौन अक्षर है और अश्विनी आदि के चारों चरणों के कौन कौन अक्षर हैं इसके जानने केलिये जो चक्र या सारणी बनी होती है उसे होड़ाचक्र, शतपदचक्र या अवकहड़ाचक्र कहते हैं। यह जान लेना चाहिये कि यदि चरण का अक्षर 'का' हो तो 'का या क' दोनों ही आदि में रखकर कमलापति या काली चरण आदि नाम रखदेंगे। इसी तरह इ ई, उ ऊ, एऐ, ओ औ, को भी समझना चाहिये। ई की जगह इ, उ की जगह ऊ; ए की जगह ऐ, ओ की जगह औ भी रख सकते हैं। इसी तरह ब और व में तथा ख और ख में और श तथा स में भी अन्तर नहीं मानते। वनमाली और बलराम को रोहिणी के दूसरे चरण में ही मानते हैं। इसी तरह षडानन तथा खरारिदत्तको अभिजित् के चतुर्थ चरण में मानेंगे। सहदेव और शारदापति को शतभिषा के द्वितीय चरण में मानेंगे। यदि आदि का अक्षर संयुक्त है, जैसे श्रीपति, व्रजरत्न आदि। तो पहले अक्षर श, और व को ही मानेंगे और र को छोड़देंगे। यद्यपि ङ, ञ, ण ये तीन अक्षर नामों के आदि में नहीं मिलते और न ऐसे शब्द ही मिलते हैं, जिनके आदि में ये अक्षर रहें। फिर भी, आर्द्रा के तीसरे चरण में जन्म होने पर 'ङ' आदि में लेकर ही 'ङकारादि' वगैरः; उत्तराभाद्रपदा के चौथे चरण में होने से 'ञकारादि'; हस्त के तीसरे चरण में, 'णकारादि' वगैरः ही राशि के नाम रखने होंगे। यद्यपि होड़ाचक्रादि पुस्तकों में और पञ्चांग में भी अवकहड़ाचक्र लिखा रहता है। फिर भी, आसानीके लिये हम उन बातों को श्लोकों में लिख देते हैं जिस से याद करने में कम कष्ट होगा। वह ये हैं-चू चे चो ला मता दास्रे लू ले लो तु याम्यभे। आ ई ऊ ए कृत्तिकायां ओ वा वी वू च भे ॥ १ ॥ वे वो का की मृगेप्रोक्ताः कू घ ङ छ च रुद्रभे ॥ के को ही तथादित्ये ह हे हो डा तु पुष्यभे ॥ २ ॥ डी डू डे-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

डो तथा सार्पे मा मी मू मे च पित्र्यभे । मो टा टी टू मता भाद्रे टे टो पाप्यर्यमर्क्षके ॥ ३ ॥ पूषाणाठा तथा हस्ते पे पो रा री तु त्वाष्ट्रभे । रू रे रो ता मताः स्वातौ ती तू ते तो द्विदैवते ॥ ४ ॥ ना नी नू ने मता मैत्रे नो या यी यू तथैन्द्रभे । ये यो भा भी मता मूले भूधा फाढा जलर्क्षके ॥५॥ भे भो जा जी तु वैश्वर्क्षे जू जे जो खा ऽभिजिन्मता । खी खू खे खो श्रुतौ ज्ञेया गा गी गू गे तु धनिष्ठासवे ॥ ६ ॥ गो सा सी सू जलेशर्क्षे से सो दाद्यजपादभे । दू था झ ञोत्तराभाद्रे दे दो चा ची तथान्त्य भे ॥ ७ ॥

राशियों के वर्ण का हिसाब ऐसा है कि मेष से शुरूकर क्रमसे क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, ब्राह्मण हैं और फिर आगे की चार चार राशियों में भी यही क्रम है और इसी हिसाब से एक राशि में जिन जिन नक्षत्रों के जो जो चरण रहेंगे उन चरण वालों का वही वर्ण होगा जो उसराशि का है । मेलापक का नियम यह है कि पति के वर्ण से कन्या का वर्ण ऊंचा न हो । अर्थात् क्षत्रिय वर्ण का वर और ब्राह्मण वर्ण की कन्या हो तो विधवा होगी । यह वर्ण नक्षत्रों के जन्म के अनुसारही जो हो वही लिया जाता है, नकि जाति । फिर भी, यह बात मानी जाती है कि ब्राह्मण जाति वालों का वर्ण दोष होताही नहीं । अतएव उनके वर्ण का विचार अकिञ्चित्कर है । मगर नाड़ी का विचार उनकेही लिये आवश्यक है । नकि क्षत्रियादि के लिये । परन्तु यह बात आधुनिक है । प्राचीन प्रामाणिक ग्रन्थों में इसकी चर्चा नहीं है । वर से कन्या का वर्ण हीन होने पर एक गुण वर्ण का माना जाता है । और समान होने पर भी । पर, कन्या का वर्ण अधिक (ऊंचा) होने पर वर्ण का गुण शून्य होजाता है । इसके जानने के लिये पञ्चांग में वर्णगुण का चक्र सबसे पहले मेलापक के प्रकरण में लिखा होता है । २५ घरों वाला एक चक्र बनाकर उसकी एक बगल में 'वर' और दूसरी में 'कन्या' लिखा होता है। ऐसाही हरेक चक्र में लिखा होता है । फिर सबसे ऊपर और बाईं ओर के चार चार घरों में ब्राह्मणादि चारों वर्ण क्रमसे लिखे होते हैं और दोनों के बीच के कोन में उसी बात के जनाने के लिये 'वर्ण४' व. ४ या ४ व. लिखते हैं, जिस का अर्थ है ४ वर्ण । इसके बाद शेष कोष्ठों (घरों) में या तो १ लिखा होता है या शून्य । इसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अभिप्राय यही है कि वर और कन्या दोनों के वर्णों को उपर और नीचे में देखकर दोनों के सामने के एक कोष्ठ में अंगुली रखने पर यदि वर अधिक वा सम वर्ण का होगा तो १ लिखा होगा और यदि न्यून (नीच) वर्ण का वर और ऊंच वर्ण की कन्या होगी तो शून्य मिलेगा। आगे के वश्य आदि में भी इसी तरह वर कन्या के चतुष्पदादि देखकर दोनों के सामने के एक कोष्ठ पर अंगुली रखना या देखना होगा। जो दोनों के सामने पड़ता हो उसीसे मेलाएक का निश्चय होगा। मगर इस चक्र में देखने से पहले ऊपर लिखे अवकहड़ाचक्र में यह देखलेना होगा कि वर, कन्या के वर्ण आदि क्या हैं। अवकहड़ा या होड़ाचक्र में सबसे ऊपर वाले कोने के कोष्ठ (घर) में 'भानांवर्णाः' लिखा होता है। जिसका अर्थ यह है कि इसके सामने अश्विनी आदि प्रत्येक नक्षत्रों के चारों चरणों के सूचक पूर्वोक्त चू चे आदि अक्षर लिखे हैं। उसके नीचे 'नक्षत्राणि' लिखते हैं, जिससे यह प्रकट होता है कि ऊपर जो अक्षर लिखे हैं उनकी नक्षत्रों के नाम इसके सामने प्रत्येक कोष्ठक में लिखे हैं। उसके नीचे 'वर्ण' लिखा होता है और उसके सामने प्रत्येक नक्षत्रों के वर्ण उनके नीचे के कोष्ठकों में लिखे जाते हैं। वर्ण के नीचे 'वश्य' होता है और उसके सामने चतुष्पद, मानव, जलचर, वनचर और कीट लिखे होते हैं। वश्य का अर्थ है आधीन। पहले यह जानना जरूरी है कि कौन राशि मनुष्य (मानव) है, कौन वनचर, कौन चतुष्पद (चौपाया) आदि है। क्योंकि यह जाने विना किसके आधीन कौन रह सकता है और कौन नहीं, यह ज्ञान हो ही नहीं सकता।

वश्य के नीचे 'योनि' लिखते हैं। वस्तुतः अभिजित् को मिला कर जो २८ नक्षत्र गिनती में हैं, इनमें दो दो की एक योनि मानी जाती है। यद्यपि योनि कहते हैं उत्पन्न करने वाले को और संभव है कि इन नक्षत्रों की उत्पत्ति से अश्व, महिष आदि का कोई संबन्ध भी हो। मगर, यहां बतौर संकेत केही व्यवहार होता है। यह भी नियम नहीं है कि अश्विनी, भरणी आदि नक्षत्रों में क्रमसे दो दो की एक एक योनि हो। किन्तु किन्हीं दो नक्षत्रों की एक योनि है। जैसे अश्विनी और शतभिषा की अश्व योनि है, भरणी और रेवती की योनि हाथी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

(गज) इत्यादि । इस तरह कुल १४ योनियां हैं । उनके नाम हैं: अश्व, गज, मेष (भेंड़ा), सर्प, श्वान, मार्जार (बिड़ाल), मूषक, गौ, महिष (भैंसा), व्याघ्र, मृग, वानर, नकुल (नेवला), सिंह । इनमें दो योनियों के नक्षत्र अभी बता चुके हैं । शेष १२ में मेष के नक्षत्र कृत्तिका, पुष्य; सर्प के रोहिणी, मृगशिरा; श्वान के आर्द्रा, मूल; मार्जार के पुनर्वसु, आश्लेषा; मूषक के मघा, पूर्वाफाल्गुनी; गौ के उत्तराफाल्गुनी, उत्तरा भाद्रपदा; महिषके हस्त, स्वाती; व्याघ्रके चित्रा, विशाखा; मृगके अनुराधा, ज्येष्ठा; वानर के पूर्वाषाढ़ा, श्रवण; नकुल के उत्तराषाढ़ा, अभिजित्; सिंह के धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा । इन चौदहों में परस्पर जिनका वैर है जैसे व्याघ्र और गौ का, अश्व और महिषका इत्यादि, वे दोनों क्रमशः कन्या वर के न होने चाहियें । अर्थात् यदि वर की योनि व्याघ्र हो तो कन्या की गौ या कन्या की योनि व्याघ्र हो तो वर की योनि गौ न होनी चाहिये । इन योनियों की दशा यह है कि कुछ का तो परस्पर वैरभाव है और कुछ का ऐसा न हो कर परस्पर मित्रभाव या समभाव – न मित्रता न शत्रुता–है । यदि कन्या और वरकी एक ही योनि हो तो वह विवाह उत्तम है । यदि भिन्न भिन्न योनि के दोनों का परस्पर वैर न हो तो वह मध्यम है । मगर परस्पर विरोध होने पर विवाह ठीक नहीं है और इस से पति पत्नी की परस्पर कलह और जुदाई होती है । 'योनि' के नीचेही पंचांग में " योनि वैर " या " यो. वै. " लिखा होता है । इसका तात्पर्य यही है कि किस योनि का वैर किस के साथ है और उस के सामने के कोष्ठ में प्रत्येक योनि के नीचे उस के वैरी का नाम लिखा होता है । दृष्टान्त के लिये अश्विनी की योनि अश्व है और उस के नीचे (योनि वैर के सामने) ' महिष' लिखा रहेगा । इसी तरह प्रत्येक में जानना चाहिये ।

योनि वैर के नीचे ' राशीश ' लिख कर उस के सामने के घरों में भौम आदि ग्रह लिखे हैं । राशीश का अर्थ है राशि का पति । जिन राशियों के जो ग्रह पति या स्वामी हैं उन राशियों के सामने योनि वैर के नीचे वाले कोष्ठकों में उन ग्रहों के नाम लिखे होते हैं । किसी किसी ग्रह के नाम के साथ १, २, ३ अंक भी लिखे होते हैं और पूर्व कथित क्षत्रियादि वर्ण के साथ भी ऐसा ही लिखा रहता है । बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह है कि प्रत्येक राशि के स्वामी ग्रह होते हैं और नक्षत्रों के नौ चरणों की राशि होती है। इसलिये जब दो नक्षत्र पूरे हो कर तीसरे का एक चरण लेना होता है तो उसकी सूचना के लिये '१' लिख देते हैं। इसी तरह किसी राशि में एक नक्षत्र के दो और किसी में तीन चरण भी लिये जाते हैं और उनको जनाने के लिये '२' और '३' लिखना पड़ता है। किसी पंचांग में 'नक्षत्राणि' के नीचे और वर्ण के ऊपर-दोनों के मध्य में—एक घर और होता है। जिस में 'रा. राशि या राशयः' लिखा होता है। उस से स्पष्ट हो जाता है कि अमुक अमुक नक्षत्र की अमुक राशि होती है और जहां नक्षत्र के चरण हीं राशि के भीतर आते हैं न कि पूरा नक्षत्र, वहां चरणों को जनाने के ही लिये १, २ ३ अंक राशियों के आगे लिख देते हैं, जैसे मेष १, वृष २ इत्यादि। कृत्तिका नक्षत्र के नीचे के कोष्ठ में 'मे. १ वृ. ३' लिखा रहता है। इस का अर्थ है कि उसका एक चरण मेष और ३ वृषराशि जान लेना चाहिये। बस, ठीक इन्हीं के सामने निचले कोष्ठों में वर्ण और राशीश के सामने भी क्षत्रियादि वर्ण और भौम आदि ग्रहों को लिख कर उसी तरह के अंक लिख देते हैं, जिस से पता लग जाय कि अमुक नक्षत्र के अमुक चरण तक अमुक राशि या अमुक वर्ण है और उसका स्वामी अमुक ग्रह है। इन ग्रहों के भी तीन प्रकार के सम्बन्ध परस्पर पाये जाते हैं। परस्पर मित्रता, शत्रुता और समता। इस का विचार आगे मिलेगा। इतना यहीं जान लेना चाहिये कि कन्या और वर की राशियों के स्वामी परस्पर शत्रु न हों, किन्तु मित्र हों तो बहुत अच्छा। नहीं तो सम ही रहें तब भी काम चल सकता है। जो तीन प्रकार का सम्बन्ध ग्रहों का है, वह वर और कन्या के साथ मिलान करने से ६ प्रकार का हो जाता है। क्योंकि यदि एक ग्रह दूसरे का शत्रु हो तो दूसरा भी पहले का शत्रु ही हो यह नियम नहीं है। दृष्टान्त के लिये मंगल का शत्रु बुध है। मगर बुध का शत्रु केवल चन्द्रमा हीं है, मंगल तो सम है, न शत्रु न मित्र। यही बात मित्रता की भी है। शनि का मित्र बुध है। मगर बुध का मित्र शनि नहीं है किन्तु सम है। इसी तरह मंगल बुध का सम है। मगर बुध मंगल का शत्रु है। जैसा कि नीचे के चक्र से स्पष्ट है:—

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

ग्रह	रवि	चन्द्र	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
मित्र	भौम,गुरु चन्द्र	सूर्य,बुध	सूर्य,चन्द्र गुरु	सूर्य, शुक्र	सूर्य,चन्द्र भौम	बुध,शनि	बुध शुक्र
शत्रु	शुक्र शनि	०	बुध	चन्द्र	बुध, शुक्र	सूर्य चन्द्र	सूर्य,चन्द्र भौम
सम	बुध	भौम,गुरु शुक्र,शनि	शुक्र,शनि	भौम,गुरु शनि	शनि	भौम,गुरु	गुरु

इसलिये यदि वर तथा कन्या के राशीश परस्पर मित्र हों तो उत्तम है। यदि एक दूसरे का मित्र हो और दूसरा पहले का सम हो तो मध्यम है। यदि एक दूसरे का परस्पर सम हो तो कनिष्ट है। परन्तु परस्पर एक दूसरे का शत्रु हो तो उससे मृत्यु होती है। यदि एक दूसरे का शत्रु हो, पर दूसरा पहले का मित्र हो तो पति पत्नी की कलह होती है। यदि एक दूसरे का शत्रु हो और दूसरा पहले का सम, तो वर कन्या का वियोग होता है।

राशीश के नीचे 'गण' लिखकर उसके सामने देव, मनुष्य, राक्षस यही तीन घुमा फिराकर २७ घरों में लिखे रहते हैं तात्पर्य यह है कि तीन हीं प्रकार के जीव होते हैं, पापात्मा, पुण्यात्मा और उभयात्मा यानी पाप पुण्य दोनों से युक्त। अथवा तीन हीं प्रकार की प्रकृति लोगों की होती है, आसुरी (राक्षस), दैवी और उभयात्मिका या मिश्रित। अतः पाप, पुण्य के हिसाब से या राक्षसी, दैवी आदि प्रकृति के हिसाब से वे तीन प्रकार के होते हैं राक्षस, देव और मनुष्य। इतिहास में इन्हीं तीन का गरोह वा समाज प्रसिद्ध है। इसीलिये यही तीन गण कहाते हैं और पति पत्नी के जन्मनक्षत्र से पता चलता है कि वह किस गण के भीतर हैं-किस गण के हैं। क्योंकि २७ नक्षत्रों का तीन भाग करके नौ नौ नक्षत्रों के एक एक गण माने गये हैं। मगर कोई क्रम नहीं है, जिससे यदि एक नक्षत्र का देवगण हो तो उसके बाद का राक्षस या मनुष्य गण। अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य,हस्त,स्वाती, अनुराधा, श्रवण,रेवती ये देव-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गण हैं। तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, आर्द्रा, रोहिणी, भरणी मनुष्यगण और कृत्तिका, आश्लेषा, मघा, धनिष्ठा, ज्येष्ठा, मूल, शतभिषा, चित्रा, विशाखा राक्षसगण हैं। इन तीनों गणों का परस्पर सम्बन्ध भी है। यदि किसी एकही गण के वर और कन्या दोनों हों तो परस्पर अत्यंत प्रेम होता है। यदि एक देव और दूसरा मनुष्य गण हो तो साधारण प्रेम होता है। यदि एक मनुष्य और दूसरा राक्षस हो तो मृत्यु होती है और राक्षस तथा देवगण होने से नित्य दोनों में झगड़ा होता है।

गण के नीचे नाड़ी लिखी रहती है और उसके सामने आदि, मध्य, अन्त्य यही तीन घुमा फिराकर वार वार लिखे रहते हैं। कन्या या वर के जन्म के नक्षत्र से नाड़ी का पता लगता है और नौ नौ नक्षत्र की एक नाड़ी होती है और आदि नाड़ी, मध्य नाड़ी और अन्त्य नाड़ी ये तीन हीं नाड़ियां होती हैं। इनमें नक्षत्रों का क्रम है। एक तरफ से नक्षत्रों को अश्विनी से आरंभ कर गिनते चलिये और दूसरी ओर से आदि, मध्य, अन्त्य, अन्त्य, मध्य, आदि, आदि, मध्य, अन्त्य इसी क्रम से नाड़ियों को गिनते जाइये। नाड़ियों की गिनती में पहले सीधा गिनिये; फिर अन्त्य नाड़ीपर जाकर उलटा गिनिये और आदि पर आकर पुनः सीधा गिनकर अन्त्य से फिर उलटा गिनिये। इसी तरह २७ नक्षत्रों तक चले जाइये तो हरेक नक्षत्र की एक एक नाड़ी हो कर २७ नक्षत्र तीन प्रकार की नाड़ियों में बँट जायँगे। इन तीनों नाड़ियों का फल अच्छा नहीं है। यदि कन्या वर एक नाड़ी के हों तो विवाह नहीं होना चाहिये। क्योंकि यदि आदि नाड़ी एक हो तो दोनों का वियोग होता है और मध्य नाड़ी एक होने से दोनों की मृत्यु हो जाती है। यदि अन्त्य नाड़ी एक हो तो पति की मृत्यु धू स्त्री विधवा हो जाती है। हां, यदि वर कन्या दोनों का ही जन्म एक नक्षत्र में हो, मगर दोनों की राशि दो हो, जैसे कृत्तिका के प्रथम चरण में पुरुष का और द्वितीय चरण में स्त्री का जन्म होने से पहले की मेष राशि और दूसरे की वृष राशि होती है, तब नाड़ीदोष, गणदोष, तारादोष नहीं होता। इसी प्रकार यदि भिन्न भिन्न नक्षत्र में दोनों का जन्म होने पर भी एकही नाड़ी हो तब भी, यदि दोनों की राशि एकही हो तो भी, दोष नहीं होगा। जैसे शतभिषा और पूर्वाभाद्रपदा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

के तीन चरण की कुंभ राशि होती है और दोनों नक्षत्रों की अन्त्य नाड़ी होती है। अतः यहां पर भी नाड़ी दोष न माना जायगा। इसी तरह एकही राशि और एक ही नक्षत्र के वर कन्या दोनों ही के रहने पर भी नक्षत्र के भिन्न भिन्न चरण में दोनों का जन्म होने पर भी नाड़ीदोष न माना जायगा। दृष्टान्त के लिये आर्द्रानक्षत्र के प्रथम चरण में वर का और द्वितीय में कन्या का जन्म होने पर नाड़ी-दोष की निवृत्ति हो जायगी। परन्तु यह किसी प्रकार काम चलाने के लिये है सो भी केवल रोहिणी, आर्द्रा, पुष्य, मघा, विशाखा, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा और रेवती इन्हीं नौ नक्षत्रों के लिये यह बात है। शेष १८ नक्षत्रों में तो चरण का भेद होने पर भी नाड़ी दोष लगता ही है।

यहां तक तो पञ्चांग में लिखी मेलापक क्रिया की ऊपरी बात बताई गई है जिससे वह समझ में आ सके। मगर यह याद रखना चाहिये कि मेलापक में जो ३६ गुण सब मिलकर बताये गये हैं वह पूर्व कथित वर्ण, वश्य आदि नाड़ी पर्यन्त आठ कूटों या समुदायों के गुणों के जोड़ से होते हैं। क्योंकि वर्ण आदि में क्रमशः १, २, ३, ४, ५, ६, ७, ८ गुण माने गये हैं। इन आठों को कूट या समूह इसीलिये कहते हैं कि इन में एक एक कईको मिलाकर बना है। जैसे वर्ण चार हैं, यानी वर्णकूट ब्राह्मण क्षत्रियादि चार को मिलाकर बना है। इसी तरह वश्य पांच मिलकर होता है, जैसा कि पहले ही कह चुके हैं और गण आदि भी विस्तृत रूप से बता चुके हैं। हां, उन में तीसरे कूट का कुछ विवरण नहीं दिया है और सातवें का भी। तीसरे को तारा और सातवें को राशि कूट या भकूट कहते हैं। तारा का अर्थ है नक्षत्र। तारा का विचार यात्रा, विवाह, चौल आदि सभी शुभ कर्मों में होता है और यदि यात्रा का मुहूर्त्त देखना होतो यात्राकर्त्ता के जन्म नक्षत्र से यात्रा के दिन के नक्षत्र को गिन कर उस संख्या में ९ का भाग देने पर जो अंक शेष रह जाते हैं १ से० या ९ तक, उन्हीं को तारा कहते हैं। इसी प्रकार चौल आदि के दिन के नक्षत्र तक भी जन्म के नक्षत्र से ही गिन कर ९ का भाग देते हैं। जिसकी यात्रा आदि देखनी हो उसी के जन्म नक्षत्र से गिनती करेंगे। इसी तरह मेलापक में भी कन्या के जन्म नक्षत्र से वर के जन्म नक्षत्र तक गिन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कर उस संख्या में ९ का भाग देने से शेष अंक वर की तारा और वर के जन्म नक्षत्र से कन्या के नक्षत्र तक गिन कर ९ का भाग देने से शेष अंक कन्या की तारा होती है। यदि शेष कुछ न बचे, शून्य हो, तो उसे नौ ही मानते हैं। इन नवों ताराओं के अलग अलग नाम हैं और क्रम से १ से लेकर ९ तक को जन्म, संपत्, विपत्, क्षेम, प्रत्यरि, साधक, वध, मित्र, परममित्र इन नौ नामों से पुकारते हैं और जैसा नाम है तदनुसार ये शुभ अशुभ हैं। फलतः तृतीय, पंचमी, सप्तमी तारा अशुभ और शेष छ शुभ हैं। यदि वर की अशुभ तारा हो तो उसकी मृत्यु होती है और यदि कन्या की हो तो उसीकी। यदि दोनों की होतो दोनों की ही होगी। इस प्रकार तारा शब्द सांकेतिक सा है।

भकूट का अर्थ है बारह राशियों का समूह। परन्तु यहां पर भकूट शब्द तारा की ही तरह एक प्रकार से सांकेतिक है। क्यों कि इसका प्रयोग बारह राशियों के लिये न किया जा कर केवल छ ही के लिये होता है। मगर वे छ कोई भी हों। उनके लिये कोई नियम नहीं है कि अमुक अमुक ही हों। इसी से संभव है कि संयोग वश कभी कोई और कोई होते होते सभी राशियां पारी पारी से इस कूट के भीतर आजाय। अत एव राशि कूट यह साधारण नाम भी चरितार्थ है। राशि कूट का मेलापक प्रकरण में केवल इतनाहीं अर्थ है कि वर और कन्या की जन्म राशियाँ एक दूसरे से गणना में छठीं, आठवीं; नवीं, पाञ्चवीं और दूसरी, बारहवीं न रहें। नहीं तो परिणाम अच्छा न होगा। दृष्टान्त के लिये यदि कन्या मेष राशि की और वर कन्या राशि का हो या कन्याहीं कन्याराशि की और वर मेष राशिका होतो कन्या की राशि से वर राशि छठीं और वर राशि से कन्या की राशि गणना में आठवीं होगी। अथवा उलटा होने से वर राशि आठवीं और कन्या की राशि छठीं होगी। इसी प्रकार यदि एक की सिंह राशि हो और दूसरे की धनु तो सिंह से धनु पांचवीं और धनु से सिंह ९ वीं होगी। यदि एक की मेष और दूसरे की वृष होतो मेष से वृष दूसरी और वृष से मेष बारहवी होगी। ६। ८ होने से मृत्यु; ९। ५ होने से निस्सन्तानता और २। १२ होने से दरिद्रता होती है। इसीसे इन तीनों को बचाना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt. 2

चाहिये । परन्तु ऐसा रहने पर भी यदि नाड़ी दोष न हो-स्त्री पुरुष की एक नाड़ी न हो-तो दोनों की राशियों के स्वामी जो ग्रह हों उनकी मित्रता होने पर विवाह हो सकता है । यदि उनकी मित्रता न हो तो राशियों के नवाँशों के पतियों के बलवान और परस्पर मित्र होने से भी विवाह होगा । यदि दोनों राशियों के पति एकही हों, पूर्वोक्त तारा दोष न हो, या यदि पुरुष राशिके वश में (वश्य) स्त्री राशि पूर्वोक्त रीति से हो, तो भी विवाह होने में कोई हर्ज नहीं है । इसी प्रकार यदि वर कन्या की राशियों के स्वामियों या उनके नवांशोंके स्वामियों की परस्पर मित्रता हो तो पूर्वोक्त गण दोष नहीं होता । यदि भकूट ठीक होतो वर कन्या के राशिपतियों की परस्पर शत्रुता कुछ नहीं कर सकती और यदि उन ग्रहों की मैत्री हो तो दुष्ट भकूट कुछ कर नहीं सकता । पूर्व में जो नवांश के पति का नाम आया है, वह जन्म के समय के नवांश के लिये है । यों तो राशि के नौ नवांश होते हैं । मगर उनसे यहां अभिप्राय नहीं है ।

इस प्रकार आठों कूटों का अलग अलग बोध हो गया सही और इनमें किसका महत्त्व किस दशामें कितना है यह भी विदित होगया। फिर भी पञ्चांग में इन आठों के गुणों के निश्चय करने की जो आसान रीति है उसे अच्छी तरह समझ लेने से मेलापक में वर कन्या के कुल ३६ गुण आते हैं या कितने इस का पता अच्छी तरह लग सकता है । इसी लिये, जैसा कि प्रथम हीं कह चुके हैं, पञ्चांग में वर्ण, वश्य आदि का ज्ञान पूर्वोक्त रीति से मेलापक प्रकरण में कराकर उसके बाद उसी के नीचे आठ सारणियां या नकशे क्रम से वर्ण, वश्य, तारा, योनि, ग्रह मैत्री, गणमैत्री भकूट और नाड़ीकूट के दिये रहते हैं बस, उन्हेंही देखकर मेलापक के गुणों का पता लग सकता है । जब पूर्व कही रीति से कन्या और वर के राशि के नाम से या कुण्डली देखकर वर्ण आदि आठों का पता लग जाय, तो फिर नकशे में इनके गुण देखे । हर नकशे में एक तरफ 'वर' या 'वरस्य' और दूसरी तरफ 'कन्या' या 'कन्यायाः' लिखा रहता है । जिधर वर लिखा हो उस ओर वर के वर्ण, वश्य आदि देखे और जिधर कन्या लिखीहो उस तरफ कन्या के वर्ण आदि देकर दोनों के सामने के एक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain: Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोष्ठ पर अंगुली रखकर उसमें जो गुणकी संख्या १,२ या शून्य आदि लिखी हो वही गुण उस कूट के मानले । दृष्टान्त के लिये वर्ण के चक्र या नकशे को लीजिये । यदि वर के राशिनाम से पता लग जाय कि वह वैश्य वर्ण है, तो वर की ओर वैश्य जिस घर में लिखा है उस पर दृष्टि रक्खे। फिर कन्या की राशि से यदि उसका शूद्र वर्ण सिद्ध हो तो कन्या की ओर शूद्र वाले घर पर दृष्टि डालकर पुनः उस एक घर या कोष्ठक पर दृष्टि डाले जो वर के वैश्य वर्ण और कन्या के शूद्र वर्ण इन दोनों के सामनेहीं पडता है । अर्थात् जहां पर दोनोंहीं वर्ण ऊपर और सामने से आकर मिलजाते हैं-जो दोनों की सीध में पड़ता है । बस, उस घर (कोष्ठक) में १ लिखा मिलेगा । मगर यदि वैश्य की जगह वर का शूद्र वर्ण और कन्या का वैश्य हो तो दोनों की सीध वाले कोष्ठक में शून्यही लिखा मिलेगा । इसी प्रकार दोनों वर कन्या-के वर्णों को जान कर उनके गुणों को आसानी से जान सकते हैं । ऐसेही वश्य के चक्र में भी देखना चाहिये । वर्ण चारही हैं । इसलिये उसके चक्र में इधर उधर चारही घर बनाकर कोने में 'वर्ण' या 'व०' लिख देते हैं और फिर शेष चार घरों में क्रमशः ब्राह्मणादि वर्णों को अलग अलग वर तथा कन्या की ओर लिख देते हैं । मगर वश्य तो चतुष्पद, मानव (मनुष्य), जलचर, वनचर, कीट ये पांच हैं । इस-लिये दोनों 'पांच पांच घरों के सिवाय कोने में छठां होता है, जिसमें 'वश्य' लिखकर शेष पांचों में दोनों ओर क्रमशः चतुष्पद आदि पांचों वश्यों को लिख देते हैं । अथवा स्थान कम होने से उनके आदि के अक्षर च., मा., ज., व., की. लिखकरही काम चला लेते हैं । वश्य चक्र में भी गुण देखने की रीति वर्ण चक्र कीही तरह है और आगेके शेष ६ चक्रों में भी । वर और कन्या के राशि के नामों से उनके वश्यों को जानकर चक्र में दोनों के ही अपने अपने स्थानों को देखना और फिर दोनों की साध के एक कोष्ठ को देखकर उसमें लिखे अंक को उस कूट का गुण समझना चाहिये । फिर चाहे वह अंक १, २ और आधा (॥) होगा, या वहां शून्यहीं लिखा होगा । इसी प्रकार तारा चक्र में कोने में 'तारा' लिखकर दोनों ओर नौनौ घर रखते हैं और उनमें वर कन्या के १ से लेकर ९ तक तारा सूचक अंकों को लिखते हैं । इन अंकों के निकालने की रीति पहले ही बता चुके हैं । वर-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कन्या की ताराओं के अंकों को निकाल कर चक्र में दोनों को देखे तो दोनों की सीध वाले एक घर में ३, १॥, ० इन तीनों में से एक लिखा मिलेगा । बस, यही ताराका गुण होगा । योनि चक्रमें १५-१५ घर दोनों ओर मिलेंगे, क्योंकि वे पूर्वकथित रीति से १४ हैं और कोने के घर में 'योनि' लिखना हीं होता है । इस तरह १५ कोष्ठक हो गये । चौदहों में वर कन्या दोनों की ओर चौदह योनियों के नाम क्रमशः लिखे रहते हैं । बस, वर कन्या की योनि उन की राशि से जानकर दोनों के सीध वाले घर में लिखे अंक को उस कूट का गुण समझना चाहिये । वह अंक १, २, ३, ४, ० में से कोई होगा । पांचवां ग्रह मैत्री का चक्र है, जिस के कोने में 'ग्रह' या ग्रहाः' लिखकर इधर उधर के सात घरों में क्रमशः सूर्य आदि सात ग्रह लिखे रहते हैं । वर कन्या की राशियों के स्वामी जो जो ग्रह हों उन दोनों के सीध वाले घर में १, ३, ४, ५, ॥, ० अंकों में से जो लिखा मिले वही गुण होगा । गण मैत्री चक्र में भी कोने में 'गणाः' लिखकर दोनों ओर देवता, मनुष्य, राक्षस लिखते हैं और वर कन्या के गणों को उनके नामों से जानकर दोनों के सीध वाले कोष्ठ में उन के गुण की संख्या का पता लगाते हैं । वह संख्या १, ५, ६, ० में से कोई होती है । राशिकूट या भकूट चक्र में 'राशयः' लिख कर दोनों ओर मेष, वृष आदि १२ राशियां लिख देते हैं । फिर कन्या और वर की राशि जान कर दोनों की सीध के कोष्ठ में या तो शून्य पाते हैं या सात का अंक । नाड़ी कूट में तो 'नाड़ी' लिख कर दोनों ओर आदि, मध्य, अन्त्य लिख देते हैं और वर कन्या की नाड़ियां को जान कर दोनों के सीध वाले घर में या तो ८ पाते हैं या शून्य और वही नाड़ी का गुण होता है । इस तरह सरलता से आठों कूटों के गुणों को दो चार मिनटों में जान कर उन्हें जोड़ ले सकते हैं और बता सकते हैं कि उस मेलापक या गणना में कितने गुण आये और जैसा कि पहले बता चुके हैं, उसी जोड़ की संख्या से उस मेलापक को उत्तम, मध्यम, या हीन जान सकते हैं।

मेलापक के सम्बन्ध में हीं दो एक बातें और भी जानने योग्य हैं। पहली बात वर्गों की है । कन्या वर के राशिनामों से उनके वर्गों का पता लग जाता है । समूची वर्णमाला को आठ वर्गों में बांटकर कुल सोलह स्वरों का अवर्ग कहाता है । इसी तरह कवर्ग क से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

क तक; च वर्ग च से ज तक; ट वर्ग ट से ण तक; त वर्ग त से न तक; प वर्ग प से म तक; य वर्ग य से ल तक; और श वर्ग श से ह तक का होता है। इनका विवरण यों प्रत्येक वर्ग के पति वा स्वामी के साथ दिया गया है:-

य १६	क ५	च ५	ट ५	त ५	प ५	य ४	श ४	वर्ग
गरुड़	बिड़ाल	सिंह	श्वान	सर्प	मूषक	मृग	अज	स्वामी

इन वर्गों के स्वामियों में यह विशेषता है कि जिसी को लेकर उस से गिनेंगे तो जो पांचवा आवेगा वही उसका शत्रु है। दृष्टान्त के लिये गरुड़ से पांचवां सर्प या बिड़ाल से पांचवां मूषक गरुड़ और बिड़ाल का दुश्मन है। फलतः इन में कोई भक्षक है और कोई भक्ष्य। इस के सिवाय अज और मृग में कोई वैर न होकर परस्पर सम या उदासीनता का भाव है। अतः यदि वर कन्या दोनों में एक भक्ष्य वर्ग का हो और दूसरा भक्षक वर्ग का तो अच्छा नहीं होता। लेकिन यदि दोनों एक ही वर्ग के या परस्पर सम (उदासीन) वर्ग के हों तो ठीक होता है। यदि वर का नाम में अनुग्रह और कन्या का उत्तरा है तो दोनों अवर्ग के ही हुए और वर का यदुनन्दन तथा कन्या का सुभद्रा नाम होनेसे दोनों सम वर्ग के होंगे। फलतः यह मेलापक अच्छा होगा। पर, वर का नाम केशव और कन्या का पार्वती हो तो वर कवर्ग का और कन्या पवर्ग की हुई। दोनों के स्वामी क्रम से बिड़ाल और मूषक हैं जिनमें बिड़ाल भक्षक और मूषक भक्ष्य है। नतीजा यह होना चाहिये कि वर कन्या की मृत्यु का कारण होगा। इसी से ऐसा विवाह ठीक नहीं है। जिस तरह एक वर्ग से पांचवां उसका शत्रु है, उसी तरह हरेक से चौथा मित्र और तीसरा उदासीन है।

जन्म के नक्षत्रों के भी तीन भाग हैं। रेवती से लेकर मृगशिरा तक ९ का पूर्व भाग; आर्द्रा से अनुराधा तक १२ का मध्य भाग और ज्येष्ठा से उत्तराभाद्रपदा तक ९ का अपर भाग। यदि पूर्व भाग के नक्षत्र में पति का जन्म हो तो उससे स्त्री प्रेम करेगी; पर अपर में स्त्री का जन्म हो तो उससे पुरुष प्रेम करेगा। अर्थात् पहले

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

में पुरुष के आधीन स्त्री होगी और दूसरे में स्त्री के आधीन पुरुष होगा। लेकिन मध्य के १२ नक्षत्रों में यदि पति पत्नी दोनों का जन्म हो तो दोनों परस्पर एक दूसरे के वश में रहेंगे। यह बात मेलापक प्रकरण में पञ्चांगों में लिखी रहती है और जिस चक्र में यह दिखलाया रहता है उसे 'युजिभचक्र' या 'युजाप्रीतिचक्र' कहते हैं। वर्गों का भी चक्र वहीं लिखा रहता है और पांच प्रकार के वश्यों में कौन राशि क्या है यह भी लिख देते हैं। वह इस तरह है–मेष, वृष, धनुका उत्तरार्द्ध और मकर का पूर्वार्द्ध ये चार चतुष्पद हैं। सिंह वनचर है और चतुष्पद तो है ही। मिथुन, कन्या, तुला, धनुका पूर्वार्द्ध ये चार द्विपद या मानव (नर) हैं। कर्क, कुम्भ, मकर, मीन का उत्तरार्द्ध ये चार जलचर हैं। वृश्चिक कीट या सरीसृप कहाता है। ग्रहों की पूर्वोक्त मैत्री और शत्रुता का भी ज्ञान कराने के लिये एक चक्र बना दिया रहता है। जिससे जानकारी सुलभ हो जाती है।

नक्षत्रों के सम्बन्ध में एक बात यह भी है कि यदि वधू के जन्म नक्षत्र से वर का नक्षत्र गिनती में दूसरा पड़े, अर्थात् यदि वर का जन्म भरणी में और कन्या का अश्विनी में इत्यादि, तो पति की मृत्यु मानी जाती है। यही बात सेवक और सेव्य, ऋणदाता और ऋणग्राहक तथा ग्राम और ग्राम में बसनेवाले के बारे में भी मानी जाती है। यदि मालिक के जन्म के नक्षत्र से सेवक का; ऋणग्राहक से ऋणदाता का और ग्राम नक्षत्र से उसमें रहनेवाले का जन्म नक्षत्र दूसरा हो जाय तो नौकर टिक नहीं सकता, ऋण वापस मिल नहीं सकता और ग्रामवासी दरिद्र रहता है। परन्तु इस का एक उपाय भी ज्योतिष ग्रन्थों में कहा है। यदि दोनों नक्षत्रों की राशि एक हो, यदि राशि भिन्न भी होतो दोनों राशियों के स्वामी एक ही हों, या यदि स्वामी भी भिन्न हों तो उनकी मित्रता हो तो यह दोष नहीं लगता।

गणना या मेलापक में एक बात का और भी विचार किया जाता है और बहुत प्रचलित होने के कारण अच्छे अच्छे पञ्चांगों में यह लिख भी देते हैं। इसे यामित्र दोष कहते हैं और साधारण बोल-चाल और व्यवहार में इसे ही मंगलदोष भी कहते हैं। अधिकतर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

न्या की कुंडली में यह बात देखी जाती है। इसीसे कहा जाता है
कि कन्या मंगली है। मंगली कन्या के विवाह में बड़ी कठिनाई होती है।
क्योंकि विना मंगल वरके दूसरेसे उसका विवाह हो ही नहीं सकता।
जैसा कि पहले बताचुके हैं लग्नकुण्डली और चन्द्रकुंडली दोनों से
ग्रहों की स्थितिका विचार किया जाता है और यह भी बता ही
चुके हैं कि लग्न या चन्द्र से सप्तम स्थान को यामित्र कहते हैं।
अतः दोनों ही कुंडलियां में यदि सप्तम स्थान में मंगल आजाय
तो यामित्र दोष वा मंगलदोष समझना चाहिये। यह मंगल जैसा
वरकुंडली में मंगल के होने से वरको है उसी तरह कन्याकुंडली
के होने से कन्या को है। इस दोष का फल यही मानते हैं कि यदि कन्या
मंगली हो तो वर का नाश करती है और वर मंगल हो तो कन्या का
नाशक होता है। इसीलिये जब मंगली कन्या का मंगल वर से विवाह
होता है तो ठीक होता है और दोनों में कोई भी किसी की मृत्यु का
कारण माना नहीं जाता। लेकिन केवल सप्तमस्थान में ही मंगल के
होने से यह दोष होता है यह बात नहीं है। किन्तु, १, ४, ७, ८, १२
स्थानों में से किसी में भी रहने पर वैसाही दोष है। यह भी नहीं कि
केवल मंगल के ही इन स्थानों में रहने से यामित्र दोष होता है।
यदि राहु, केतु, भौम, रवि इनमें से कोई भी बलवान ग्रह इनस्थानों
में हो तो भी दोष होता है। इसी तरह सप्तम स्थान का स्वामी
यदि ६. ८. १२ स्थानों में हो तो भी अनिष्ट है। परन्तु इसका परिहार
यह है कि यदि मंगल उक्त स्थानों में हो तो उसके दोष का वारण तभी
होता जब शनि, रवि, राहु, केतु आदि पापग्रह उन्हीं स्थानों में से
किसी में रहें और वे बलवान हों। अथवा यदि सप्तम स्थान में
शुक्र बृहस्पति और शुक्लपक्ष के (पूर्ण) चन्द्र हों तो विवाह शुभ
होता है। यदि लग्न से ३. ५. ९, ११ स्थानों में शुक्र हो तो भी या-
मित्र दोष का नाशक होता है। इसके सिवाय एक परिहार ऊपर ही
कहा जा चुका है। अर्थात् जैसी कन्या हो वैसाही वर भी हो।
इसी तरह कन्या की कुंडली में जितने भी पापग्रह अनिष्ट स्थानों में
हों यदि उतनेहीं या उनसे भी अधिक पापग्रह वर की कुण्डली में
अनिष्ट स्थान में हों तो कोई भी दोष न होकर शुभ फल ही होता
इस तरह और भी वर और कन्या की कुंडलियों में ग्रहों की स्थिति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt.

देखकर सन्तान, धन और प्रतिष्ठा आदि का निश्चय करके विवाह का निर्णय करना चाहिये ।

विवाह का निश्चय ग्रहस्थिति और मेलापक को देखकर होजाने के बाद उसके होने के समय और नक्षत्र, लग्नादि का निर्णय पीछे से करना चाहिये । सब से प्रथम वर को सूर्य का, कन्या को गुरु का और दोनों को चन्द्र का बल देखना चाहिये कि उनकी कुण्डली के अनुसार वे कब शुभ फल देने वाले होते हैं । यदि विवाह के समय वर के ३, ६, १०, ११ स्थानों में सूर्य रहे तो शुभ होता है; यदि १, २, ५, ७, ९ में हो तो उसकी पूजा करनी होती है । अन्यथा अशुभ फल-दायक होता है । मगर यदि ४, ८, १२ स्थानों में हो तो वर की मृत्यु अवश्य होजाती है । इस प्रकार कन्या के ४ । ८ । १२ स्थानों में यदि गुरु हो तो पूजा करने पर भी विवाहोपरान्त मृत्युकारक हो जाता है । यदि १, ३, ६, १० स्थान में हो तो बहुत पूजा करने परही कन्या का मंगलकारी होता है । परन्तु २, ५, ७, ९, ११ स्थानों में रहने पर शुभकारी होता है । ऐसेही यदि वर कन्या दोनों के प्रथम स्थान में चन्द्र हो तो लक्ष्मी, २ में मनस्तुष्टि, ३ में धनतुष्टि, ४ में कलह, ५ में ज्ञानवृद्धि, ६ में संपत्ति, ७ में राज-सन्मान, ८ में मृत्युभय, ९ में धर्मलाभ, १० में इच्छित फल, ११ में सर्व लाभ और १२ में हानि, यही फल देता है । इस तरह जिस समय तीनों अनुकूल हों वही समय विवाह का होना चाहिये और इस तरह साधारण समय का निश्चय करना चाहिये ।

विवाह के लिये माघ, फागुन, वैशाख, ज्येष्ठ और आषाढ़ ये पांच महीने सर्वसम्मत हैं और अगहन किसी किसी के मत से माना जाता है । पश्चिम के लोग अगहन में भी विवाह करते हैं । मगर काशी के आस पास इन पांच महीनों में ही विवाह होता है । शेष सात सर्वत्र वर्जित हैं । विवाह के नक्षत्र पूर्वोक्त रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, मूल, स्वाती, मृगशिरा, मघा, अनुराधा, और हस्त ये ११ हैं । इन में भी वर और कन्या के जन्म के नक्षत्र कोई हों तो उन्हें छोड़ देना चाहिये । यदि पूर्वोक्त रीति से पंच-शलाका के अनुसार क्रूर ग्रहों का वेध इनमें से किसी पर हो तो उस-को भी छोड़ना हीं होगा । चतुर्थी, नवमी, चतुर्दशी और अमावास्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तिथि और सौरमास के अन्त का दिन विवाह में वर्जित है। इसी प्रकार हरेक तिथि के अन्त के दो दण्ड और नक्षत्र के अन्त के दो दण्ड विवाह में निषिद्ध हैं, उस समय विवाह कदापि न होना चाहिये। भद्रा तो सभी शुभ कामों के लिये वर्जित है और यदि उसमें विवाह हो तो वर कन्या दोनों की मृत्यु होती है। इसके अलावा पूर्वोक्त यम घंट, वार वेला आदि निषिद्ध समय तो विवाह के लिये भी वर्जित हैंहीं। इन दोषों के अतिरिक्त लत्ता, पात, मृत्यु, बाणपञ्चक, एकार्गल, उपग्रह, क्रान्तिसाम्य और दग्धा तिथि आठ दोषों को बचाकर विवाह का समय और लग्न निर्धारित करना चाहिये। क्रान्तिसाम्य को ही महापात भी कहते हैं। जिस नक्षत्र में विवाह का लग्न स्थिर करना हो उससे पीछे १२ नक्षत्र में यदि सूर्य, तीसरे में भौम, छठे में गुरु, नवें में राहु और आठवें में शनि हों तो उस नक्षत्र को लात से मारते हैं। इसी तरह उससे आगे यदि ५ वें में शुक्र, ७ वें में बुध और १२ वें चन्द्रमा हों तो भी लात मारते हैं और यही लत्ता दोष कहाता है। अतः उसमें विवाह नहीं करना चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि रेवती में सूर्य या विशाखा में शुक्र हो तो उत्तराफाल्गुनी में विवाह नहीं होगा। क्योंकि उससे पीछे के १२ वें नक्षत्र में सूर्य के होने से वह उस पर लात मारता है। या उससे आगे के ७ वें नक्षत्र में शुक्र रहने से वह भी उस पर लात मारेगा। इसी प्रकार और ग्रहों को जानना चाहिये। सभी ग्रहों की लत्ता अशुभही होती है, चाहे ग्रह वक्री भी क्यों न हों। यद्यपि राहु की आगे लिखा है। तथापि वह वक्री और आगे या पीठ की ओर लात मारने को लिखा है। ऐसी दशा में जब कि राहु अपनी पीठ की ओर लत्ता मारता है तो उसे विवाह-नक्षत्र से पीछेही रहना चाहिये। तभी उसकी पीठ की ओर विवाह नक्षत्र होगा। और शुक्र, बुध, चन्द्र जब आगे होंगे तभी उनकी पीठ की ओर विवाहनक्षत्र के होने से वे पीठ की ओर लात मारेंगे। यदि तो सन्मुख लात मारते हैं। ऐसी दशा में उनका पीछे रहना ही है।

जिस नक्षत्र पर विवाह के समय सूर्य हो, अर्थात् सूर्य की जो हो उससे चित्रा, अनुराधा, आश्लेषा, मघा, श्रवण और रेवती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नक्षत्र की गणना करने पर जितनी संख्यायें अलग अलग आवें, अश्विनी से विवाह के नक्षत्र के गिनने में भी यदि उनमें से कोई संख्या आजाय तो वह नक्षत्र पातदोष से दूषित मानकर विवाह के अयोग्य समझा जाना चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि मृगशिरा के सूर्य हों तो मृगशिरा से आश्लेषा तक गिनने में ५ संख्या आती है। अतः अश्विनी से पांचवां नक्षत्र जो मृगशिरा है वह यद्यपि विवाह का नभत्र है तथापि उसमें विवाह न होगा, क्योंकि वह पातदोष से दूषित है। इसी प्रकार और भी जानना चाहिये। इसी पातदोष को दूसरे रूप से भी कहा गया है। वह यह है कि साध्य, हर्षण, शूल, वैधृति, व्यतीपात और गंड इन छ योगों का अन्त जिस नक्षत्र के समय हो वह पात से दूषित होता है। पूर्व रीति से गिनने पर जो नक्षत्र आवेगा उस समय इन छ योगों में कोई न कोई अवश्यही रहेगा और उसकी समाप्ति उस नक्षत्र की समाप्ति से पहलेही हो जायगी। यद्यपि साधारणतया सभी पात वाले नक्षत्र विवाह में सर्वत्र वर्जित हैं। फिर भी, सूर्य नक्षत्र से चित्रा के गिनने पर जो पात हो वह विचित्रनाम के देश में विशेष रूप से निन्दित है; अनुराधा, मघा का पात मालवा में; रेवती, श्रवण का उत्तर के देशों में और आश्लेषा का पात सर्वत्र वर्जित है। इसलिये जिस देश में जो पात वर्जित है उसका विचार विशेषतः उसी देश के लिये है। दूसरे देश में तो उसके रहने पर भी काम चल सकता है, यदि आवश्यकता हो। हां, आश्लेषा के पात में कहीं भी विवाह न होना चाहिये।

युति दोष कोही संग्रह भी कहते हैं। प्रतिदिन के नक्षत्र चन्द्र नक्षत्र कहे जाते हैं। अर्थात् उन पर चन्द्रमा का भोग रहता है। उसी नक्षत्र पर याद कोई दूसरा क्रूर ग्रह आजाय तो युति दोष मानते हैं और उसमें विवाह नहीं होता। परन्तु किसी किसी का मत है और यही ठीक भी है कि उस नक्षत्र पर किसी भी शुभ या क्रूर ग्रह के आजाने पर युति दोष होता है, न कि केवल क्रूर ग्रह के रहने पर। किसी किसीने केवल बुध और गुरु इन दो शुभ ग्रहों के रहने का फल अच्छा कहा है और शुक्र का खराब। शीघ्र बोध में जो शुक्र का फल अच्छा कहा है वह निर्मूल है। यदि कई शुभ ग्रह एक साथ हों तो पति बहुत दिनों तक स्त्री को छोड़कर विदेश में रहेगा।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0: In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वेधदोष का निरूपण प्रथमहीं १०१२ पृष्ठ में कर चुके हैं। इसी प्रकार जामित्र दोष भी प्रथमही लिख चुके हैं। शीघ्रबोध में यह भी लिखा है कि यदि लग्न के नक्षत्र से १४ वें नक्षत्र पर कोई क्रूरग्रह हो तो भी जामित्र दोष होता है। परन्तु अन्य ग्रन्थों में, जो प्रामाणिक हैं यह बात नहीं लिखी है।

बाणपञ्चक कोही पञ्चक और बाण दोष भी कहते हैं। पांच दोष होने से पञ्चक कहते हैं और बाण तो इसलिये कहते हैं कि वे पांचों बाण की तरह भय और दुःख देनेवाले हैं। यह बाण दोष दो प्रकार का है। पहला दाक्षिणात्यों का है और वह इस प्रकार है कि जिस लग्न में विवाह करना हो उस लग्न को मेष लग्नसे गिनने पर जितनी संख्या आवे उसमें उस महीने के शुक्लपक्ष की प्रतिपदा से उस दिन तक की तिथियों की संख्या जोड़ दे और उसमें नौ का भाग देनेपर यदि ८ बचे तो रोग, २ बचने पर वह्नि, ४ बचने पर राजा, ६ बचने पर चौर और १ बचने पर मृत्यु नाम का बाण दोष होता है। बाण दोष के ये पांच नाम भिन्न भिन्न दशाओं में होते हैं और इन नामों का यही अर्थ है कि वर कन्या को इन्हीं पांच के जरिये कोई कष्ट होगा। दूसरा बाण अन्य देशों में माना जाता है। उसके जानने का क्रम यह है कि गत संक्रांति के बाद जितने अंश बीत गये हैं, या यों कहिये कि जितने दिन बीत गये हैं, उनको पांच स्थानों में लिखकर उन में क्रम से ६, ३, १, ८, ४ अंकों को जोड़ दे और फिर जोड़ने पर जो पांच आवें उनमें अलग अलग नौ का भाग दे। यदि पहले अंक में पांच शेष बचे तो रोग, दूसरे में ५ बचे तो अग्नि, तीसरे में राजा, चौथे में चोर और पांचवें में ५ बँचने पर मृत्यु नाम का बाण दोष होता है। परन्तु यह बाण काष्ठ वाला समझा जाता है और इससे साधारण कष्ट होता है। लेकिन पांचों में नौ का भाग देने पर जो शेष अंक बचे हैं उन्हें जोड़कर पुनः नौका भाग देने पर यदि पांच शेष बचे तो लोह की नोक वाला बाण समझना चाहिये, जो विशेष कष्टदायक होता है। यदि इस बार पांच न बचें, तो काठ वाला ही समझना होगा और वह साधारण कष्टद होगा।

यह बाण दोष मुहूर्त्त चिन्तामणि और पीयूषधारा के अनुसार,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Govt. of

अतएव, प्रामाणिक है। मगर पीयूषधारा में दो प्रकार से बाण दोष निकालने की विधि और भी लिखी है। पहली यह कि गत पूर्णिमा के बाद बीती तिथि की संख्या में विवाह लग्न की संख्या जोड़कर उस अंक को पांच जगह रक्खे और उसमें क्रमसे १५, १२, १०, ८, ४ मिलादे। तब उन पांच जोड़े हुए अंकों में अलग अलग नौ का भाग देने पर यदि पांच शेष बँचे तो रोग, अग्नि, राजा चोर और मृत्यु नामक पांच बाण होते हैं। दूसरी यह है कि बीती तिथि, रविवार से बीते दिन, अश्विनी से बीते नक्षत्र और मेष से बीते लग्न की संख्या को जोड़कर उन्हें पांच स्थानों में रक्खे और उनमें पूर्वोक्त रीति से ६, ३, १, ८, ४ को जोड़कर नौका भाग देने पर पूर्वोक्त रीति से पांचों बाण होते हैं। इन में पहला मत सप्तर्षिका और दूसरा ज्योतिश्चिन्तामणि का है। मगर शीघ्रबोध में निरालाही राग अलापते हुए पूर्वोक्त मतों की खिचड़ी करदी है। वहां लिखा है कि गत संक्रान्ति के बाद जितने दिन बीते हों उन्हीं में पूर्वोक्त १५, १२, १०, ८, ४ क्रमशः जोड़कर नौ का भाग दे और यदि पांच शेष हो तो पूर्वोक्त रीति से रोग, अग्नि आदि बाण जाने। समझ में नहीं आता कि यह किस आधार पर लिखा है।

इस बाणदोष का परिहार तीन तरह से होता है और लोग उसी से काम चलाते हैं। पहली रीति तो यह है कि रोग और चोर बाण दोष केवल रात में माने जाते हैं; राजा, अग्नि केवल दिन में और मृत्युबाण प्रातः सायं सध्या (संधि) समय। इसलिये दिन में पहले दोनों का और रात में दूसरे दोनों का दोष न होगा। मृत्यु का दोष तो दिन रात की सन्धि छोड़कर और समय लगेगा ही नहीं। दूसरी रीति यह है कि रोगबाण केवल रविवार को, अग्नि, चोर केवल भौम को, राजा केवल शनि को और मृत्यु केवल बुध को निन्दित है। शेष दिन उनके रहने पर भी शुभकार्य विवाह आदि होंगे। तीसरा प्रकार यह है कि रोगबाण केवल यज्ञोपवीत में वर्जित है, अन्यकार्यों में नहीं। इसी तरह केवल घर की छाजन में अग्नि, राजसेवा में राज, यात्रा में चोर और विवाह में मृत्यु बाण वर्जित है, न कि अन्य कार्यों में भी। इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रकार पहले तो कर्म भेद से ही वाण दोष की व्यापकता घटजाती है। मगर यदि किसी कार्य में भी वाणदोष लगजावे, जैसे विवाह में मृत्यु, तब तो उसे मानना ही होगा। क्योंकि उसी में उसका निषेध है। परन्तु उसके लिये दूसरा उपाय यह है कि किसी खास दिन ही कोई खास वाण दोष माना जाता है। इस तरह विवाह में यदि मृत्यु वाण मानेंगे भी तो केवल बुधवार को ही, न कि और दिन भी। यदि खामखाह बुध कोही विवाह हो और उसी दिन मृत्यु वाण भी आधमके तो उस के लिये तीसरा उपाय यही है कि एक दिन में भी दिन रात और सन्ध्या इन तीन समयों के भेद से अलग अलग, वाणदोष माने जाते हैं। इसतरह मृत्युबाण का दोष तो केवल संध्या समय ही माना जाता है। उसके बाद तो मृत्युवाण रहने पर भी विवाह कर सकते हैं। इसतरह काम चलाने के उपाय प्राचीन लोगों ने निकाल दिये हैं। क्योंकि लग्न का संशोधन बड़ाही कठिन काम है। परन्तु यदि और तरह से काम चलजाता है और वाणों के विनाहीं लग्न मिलजाता हो तो इन पूर्वोक्त उपायों के अवलम्बन की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि ये उपाय तो काम न चल सकने पर गुजारा करने के ही लिये हैं। अस्तु, दिनों के बारे में शीघ्रबोध में विपरीत ही लिखा है और मालूम नहीं किस आधार पर ऐसा किया है। वहां लिखा है कि रविको रोग, सोम को राजा, मंगल को अग्नि, शनैश्चर को मृत्यु और शुक्रवार को चोरवाण विवाह में वर्जित है।

एकार्गल कोही खार्जूर दोष भी कहते हैं। जिस दिन व्याघात, शूल, परिघ, व्यतीपात, विष्कम्भ, गंड, अतिगंड, वज्र, वैधृति ये भी दुष्टयोग हों उसदिन जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उससे विषम (तीसरे, पांचवें, सातवें आदि) नक्षत्रपर यदि चन्द्रमा हो। अर्थात् विवाह के दिन का नक्षत्र सूर्य नक्षत्र से विषम (तीसरा आदि) हो तो एकार्गल दोष होता है। इसके आसानी से जानने केलिये जो चक्र बनाते हैं उसे खार्जूर चक्र या एकार्गल चक्र कहते हैं। इस चक्र के बनाने और उसपर नक्षत्र लिखकर विवाह के नक्षत्र को विषम या सम जानने की रीति यह है कि उसदिन २७ योगों में से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जो हो उसे विष्कंभ से गिनकर उसकी संख्या पहले जान ले। यदि संख्या १, ३ आदि विषम हो तो उसमें १ जोड़कर उसका आधा करे। पर, यदि योग की संख्या २, ४ आदि सम हो तो उसमें २८ जोड़कर उसका आधा करे। इस प्रकार आधा करने पर जो संख्या आवे, अश्विनी नक्षत्र से उतनी संख्या पर जो नक्षत्र हो उसका नाम गिनकर जान ले और नीचे लिखे एकार्गल चक्र में जो एक लम्बी रेखा है उसके माथेपर उस नक्षत्र को लिखकर उसके आगे दक्षिणावर्त्त क्रमसे छोटी छोटी लकीरों के किनारेपर उस नक्षत्र के बाद के नक्षत्रों को सिलसिलेवार लिखता जावे और बड़ी लकीर के दूसरे सिरेपर पहुंच उसपर एक नक्षत्र लिखे और उसके बाद छोटी छोटी रेखाओं के दूसरे सिरोंपर भी क्रमशः शेष नक्षत्र लिख कर एकार्गल चक्र पूरा करे। इसचक्र में एक लकीर लम्बी होती है और उसको तेरह बराबर स्थानों पर काटती हुई तेरह लकीरें छोटी छोटी इस तरह खींची जाती हैं कि बड़ी लकीर उनके बीच में पड़ जाती है। इस चक्रमें अभिजित् को मिलाकर २८ नक्षत्र लिखे जाते हैं। किसी किसी में २७ ही लिखा है और अभिजित् को छोड़दिया है। क्योंकि उनका कथन है कि कमठचक्र, फणिचक्र, हलचक्र और त्रिनाड़ीचक्र में अभिजित् की गणना नहीं की जाती, ऐसा प्राचीन लोग मानते हैं। मगर अभिजित के साथ वाला पूर्वपक्षही अधिक माननीय है। इस प्रकार चक्र बन चुकने पर यह देखना चाहिये कि विवाह का जो नक्षत्र है और जिसपर चन्द्रमा उसदिन रहेगा वह नक्षत्र जिस रेखा के एक किनारे पर लिखा हो उसीके दूसरे किनारे पर, अर्थात् उसी के सामने जो नक्षत्र हो, उसपर यदि उस दिन सूर्य हो तो एकार्गल दोष हो गया। क्योंकि सूर्य से विषम नक्षत्र पर चन्द्रमा उस दिन है। विषम का अर्थ ही है आमने सामने। इसी से इसे नयनार्गल दोष भी कहते हैं। क्योंकि चन्द्र सूर्य एक दूसरे को देखते हैं। गिनती में वह नक्षत्र विषम हो यह नियम नहीं है और न इसकी आवश्यकता ही है।

जिस नक्षत्र पर सूर्य हो विवाह नक्षत्र उससे ५, ७, ८, १०, १४, १५, १८, १९, २१, २२, २३, २४ और २५ वां हो तो उपग्रह दोष माना जाता है। परन्तु इस दोषका विचार केवल बाल्हीक और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुरुदेशों में ही होता है, नकि अन्यत्र भी। इस दोष के हाने पर यदि गृहप्रवेश करे तो दरिद्रता, विवाह में मृत्यु और यात्रा में विपत्ति होती है। इन पूर्वोक्त तेरहों नक्षत्रों के अलग अलग नाम भी हैं। ५ वें का विद्युत्, ७ वें का भूकम्प, ८ वें का शूल, १० वें का शनि, १४ वें का निर्घातपात, १५ वें का दण्ड, १८ वें का केतु, १९ वें का उल्का, और २१ से २५ तक क्रम से मोह, निर्घात, कम्प, वज्र और परिवेष। किसी किसी ने केवल ५, ८, १४, १८, १९, २२, २३, २४ इन आठों को ही उपग्रह मानकर इनका नाम क्रम से विद्युत, शूल, शनि, केतु, उल्का, निर्घात, कम्प और वज्र दिया है। शीघ्रबोध में अन्त के २४ को २५ लिख कर वज्र ही नाम लिखा है। इन लोगों ने शेष पाँचों को छोड़ दिया है। इन आठों का अलग अलग फल भी माना है। विद्युत् से पुत्रनाश, शूल से पतिनाश, शनि से वंशनाश, केतु से देवर का नाश, उल्का से द्रव्य नाश, निर्घात से भाई का नाश, कम्प से कपकपी और वज्र से सतीत्व का नाश माना जाता है।

क्रान्ति साम्य कहते हैं चन्द्र सूर्य का आमने सामने आ जाना। इसे ही महापातदोष भी कहते हैं। इसका अभिप्राय और जानने की रीति यह है कि बराबर दूरी पर तीन लकीरें खींचकर उनको तीन स्थानों पर काटने वाली ऐसी तीन लकीरें खींचे जिस से छओं के बराबर चार चार टुकड़े हो जावें, जैसा कि नीचे के चक्र से स्पष्ट है—

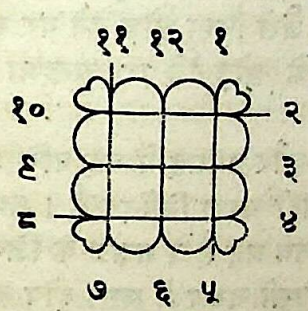

इसके बाद बीच वाली के सिरे पर मीन या १२ वीं राशि का अंक लिखकर उसके आगे क्रम से मेष, वृष आदि के अंक लिख देने से चक्र पूरा हो जाता है जिसमें मेष, सिंह और मीन, कन्या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Chennai

अदि दो दो राशियां सामने सामने पड़ जाती हैं । अब यदि आमने सामने की एक राशि पर उस दिन सूर्य और दूसरी पर चन्द्रमा हो तो क्रांतिसाम्य या महापातदोष होने से विवाहादि कोई भी मंगल कार्य न होगा । दृष्टान्त के लिये यदि मेष पर सूर्य और सिंह पर चन्द्र या सिंह पर सूर्य और मेष पर चन्द्र हो तो महापात दोष होगा । महापात दोष में यदि विवाह हो तो कन्या अवश्य मेव विधवा होती है ।

दग्धा तिथि का वर्णन तो बहुत पहले ही आ गया है । अब इन दोषों में कुछ का समाधान तो काम चलाने के योग्य उनके निरूपण के साथही कर आये हैं । मगर कुछ और भी समाधान प्राचीन लोगों ने लिखे हैं । इन में युतिदोष के लिये और वेध दोष के लिये भी यह लिखा है कि यदि एक वार पहले चन्द्रमा उन नक्षत्रों पर भोग कर चुका हो तो युति और वेध दोष नहीं माना जाता है । जैसे अश्विनी पर शनि या राहु है । अथवा उस पर इन दोनों का वेध है । मगर ये ग्रह तो एक नक्षत्र पर बहुत दिनोंतक रहते हैं । इसलिये इसी बीच में एक वार चन्द्रमा यदि अश्विनी का भोग कर चुका हो तो वह नक्षत्र शुद्ध माना जायगा । मगर यह किसी किसी का मत है न कि सभी का । क्योंकि लोग ऐसा मानते हैं कि जब तक क्रूर ग्रह नक्षत्र पर रहेगा ही, या उसका वेध हीरहेगा तब तक चन्द्र के भोग से भी वह ठीक उसी तरह शुद्ध नहीं हो सकता, जिस तरह शरीर में विष्टा बांधे हुए गंगा स्नान करने से भी शुद्ध नहीं हो सकता । हां, जैसे विष्टा छोड़ देने पर स्नान से शुद्ध होता है, उसी तरह क्रूर ग्रह के छोड़ देने पर चन्द्रमा के भोग से शुद्ध हो जाता है, अस्तु ।

इसी प्रकार पात और उपग्रह में यह परिहार है कि सूर्य नक्षत्र के जिस चरण पर रहे वही चरण निन्दित है । शेष तीन शुभ हैं । इसी प्रकार लत्ता वाले जितने ग्रह हैं वे नक्षत्र के जिस चरण पर रहते हुये लात मारें नक्षत्र के उसी चरण में लत्ता दोष लगता है, नकि चारों में । यही बात एकार्गलदोष में भी है । जिस चरण पर सूर्य रहेगा, चन्द्र नक्षत्र का वही चरण वर्जित होगा । इसी प्रकार दण्ड दोष पूर्वाह्न में, मोह दोष दोपहर बाद दिन में ही, उलूका दोष आधी रात को

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

और कम्प दिन रात वर्जित है । एक समाधान यह भी है कि कम्पके गुरु वाले ६, दण्ड के ७, मोह के १२ और उल्का के १० दण्ड ही निन्दित हैं । शेष दण्ड इन सभी के शुभ माने जाते हैं । दग्ध तिथियों के बारे में यह एक विशेष बात जानने योग्य है कि जब धनु और मीन राशिका सूर्य होता है तो द्वितीया; वृष, कुंभ में चतुर्थी; कर्क, मेष में षष्ठी; कन्या, मिथुन में अष्टमी; सिंह, वृश्चिक में दशमी और मकर, तुला में द्वादशी दग्ध तिथि यद्यपि मानी जाती है । तथापि इसका विचार केवल मध्य देश में हीं होता है नकि अन्य देशों में भी । पात दोष भी केवल वंग और कलिंग देश में माना जाता है और लत्ता दोष केवल सौराष्ट्र तथा शाल्व देश में माना जाता है और पूर्वोक्त मालव देश में भी । हां, वेध दोष सर्वत्र मान्य है । लत्ता, उपग्रहादि उन सम-स्त दोषों का, जो पहले गिनाये गये हैं और आगे भी गिनाये जाँयगे, सब से बड़ा परिहार है लग्नमें चन्द्र और सूर्य का बल । यदि लग्न के समय चन्द्र और सूर्य विहित स्थान में हों, या अपने उच्च और मित्रादि के स्थान में हों तो वे सभी दोषों को उसी तरह नष्ट कर देते हैं जिस तरह सूर्योदय के बाद रात्रि का अंधकार नष्ट हो जाता है । इसी तरह यदि लग्न के समय ५, ९, १, ४, १० स्थानों में बुध, गुरु और शुक्र हों तो भी सभी दोषों को भस्म कर देते हैं । इन स्थानों में रहने पर बुध तीन सौ दोषों का नाशक और शुक्र हजार का नाशक होता है । परन्तु बृहस्पति तो लक्ष दोषों को चौपट कर देता है । यदि लग्न का या लग्न के इष्ट नवांश का स्वामी १, ४, १० और ११ स्थानों में हो तो सभी दोषों की राशिको ठीक वैसेही दग्ध कर देता है जैसे रूई के समूह को अग्नि की चिनगारी । यदि लग्न से ११ वें स्थान में चन्द्र या सूर्य हो तो भी सभी दोषों को भस्म कर देता है । यदि लग्न वर्गोत्तम में हो, जैसे मिथुन में जो मिथुन का नवांश है उसमें विवाह लग्न रक्खा हो, या चन्द्रमा हीं वर्गोत्तम में स्थित हो, तो भी दोषों को दग्ध करदेता है ।

विवाह में मर्मवेध, कंटक, शल्य, छिद्र ये चार दोष और भी माने जाते हैं । यदि लग्न में पापग्रह हों तो मर्मवेध दोष होता है; ५, ९ स्थानों में हो तो कंटक; ४, १० में हो तो शल्य और ७ वें में हो तो छिद्र दोष होता है । मर्मवेध में मृत्यु, कंटक में कुल का नाश;

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

शल्य में राजा से भय और छिद्र में पुत्रनाश होता है। अतएव इन दोषों को बचाना चाहिये। इनके सिवाय गण्डान्त, कर्त्तरी, अष्टम लग्न, अष्टमेश, द्वादशभवन, द्वादशेश, दशयोग, विषघटी आदि दोषों का भी विचार और उनका परिहार आवश्यक है। इनमें गण्डान्त नाम है एक प्रकार की सन्धि का और इसका निरूपण प्रथम हीं कर चुके हैं। यदि लग्न से १२ वें स्थान में स्थित पापग्रह मार्गी और द्वितीय स्थानस्थित वक्री हों तो कर्त्तरी दोष होता है। इस कर्त्तरी का अर्थ है स्त्री पुरुष के गले या प्राण का कतरने वाला। इस कर्त्तरी का फल मृत्यु, दरिद्रता या शोक इनमें कोई या तीनों ही है। परन्तु यदि द्वितीय स्थान के क्रूरग्रह केवल मार्गी या केवल वक्री हों, या दोनों स्थानके क्रूरग्रह केवल मार्गी या केवल वक्री हों तब कर्त्तरी दोष नहीं होता। किन्तु जब १२ वें वाला मार्गी और दूसरे वाला वक्री होगा तभी दोनों मिलकर कर्त्तरी दोष उत्पन्न करेंगे। दृष्टान्त केलिये यदि मिथुन लग्न में विवाह करते हैं और उससे गिनने में बारहवें लग्न वृष पर यदि शनि हो और वह मार्गी हो और मिथुन से दूसरे स्थान कन्या पर मंगल, राहु या केतु वक्री होकर रहें तो कर्त्तरीदोष होगा। परन्तु यदि एक ही स्थान १२ या २ पर कोई क्रूर ग्रह हो और वह मार्गी या वक्री हो अथवा दोनों स्थानों पर क्रूर ग्रह तो हों, परन्तु वे या तो वक्री ही हों या मार्गी ही, तब कर्त्तरी दोष कदापि न होगा। यदि वर कन्या की जन्म राशि या जन्म लग्न से आठवां स्थान हीं विवाह का लग्न हो तो अष्टम लग्न दोष कहाता है और यदि बारहवां स्थान विवाह लग्न हो तो द्वादश लग्न या द्वादशभवन दोष माना जाता है। दृष्टान्त के लिये यदि मेष राशि या लग्न में जन्म हो तो उससे आठवां वृश्चिक स्थान हुआ और बारहवां मीन हुआ। अतः वृश्चिक लग्न में अष्टम लग्न दोष होने से और मीन में द्वादश स्थान दोष होने के कारण इन दोनों लग्नों में विवाह न होगा। अष्टम लग्न में मृत्यु और द्वादश में कलह तथा दरिद्रता फल कहा है। इसी प्रकार यदि अष्टम या द्वादश स्थान का नवांश या उसका स्वामी भी लग्न में हो तो भी ठीक नहीं है। यह अष्टमेश और द्वादशेश दोष कहाता है और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसका फल भी वही है जो अष्टम और द्वादशका। दृष्टान्त केलिये वृश्चिक का स्वामी जो भौम है वही या उसका नवांश लग्न में नहीं रहना चाहिये। इस तरह मेष लग्न में भी विवाह न होगा, क्योंकि मेष का स्वामी भी भौम ही है। और वृश्चिक का नवांश जिन जिन लग्नों में रहेगा उन सभी में उस नवांश के समय विवाह हो नहीं सकता। इसी प्रकार द्वादशेश और उसके नवांश को भी समझ लेना होगा। मीन राशि का स्वामी गुरु है। अतः धनु लग्न में भी विवाह नहीं हो सकता। क्योंकि उसका भी स्वामी वही है। परन्तु यदि जन्म राशि और जन्म लग्न में से किसी एक का और विवाह लग्न का स्वामी एक ही, हो जैसाकि मेष और वृश्चिक का है। या यदि स्वामी एक न भी हो तो भी उन दोनों की परस्पर मित्रता रहने से भी अष्टम या द्वादश लग्न दोष नहीं गिना जाता, वह नष्ट होजाता है। यहां मित्रता से परस्पर दोनों की मित्रता चाहिये, न कि एक तो दूसरे का मित्र हो, मगर दूसरा पहले का मित्र न होकर शत्रु या सम हो। इसके दृष्टान्त हैं सिंह और मीन। इन दोनों के स्वामी सूर्य और गुरु परस्पर मित्र हैं, सूर्य गुरु का और गुरु सूर्य का मित्र है। ऐसी दशा में यदि सिंह राशि या लग्न में जन्म हो तो मीन लग्न उससे आठवां होने पर भी विवाह होगा ही। बारहवें में भी इसी तरह जान लेना होगा।

रेवती, पुनर्वसु, कृत्तिका, मघा नक्षत्रों के ३० दण्ड बीतने पर ४ दण्ड या नौ ३४ दण्डतक विषघटी दोषमाना जाता है। रोहिणी में ४० दण्ड के बाद, आश्लेषा में ३२ के बाद, अश्विनी में ५०, उत्तराफाल्गुनी, शतभिषा में १८, पूर्वाफल्गुनी, चित्रा, उत्तराषाढ़ा, पुष्य में २०, विशाखा, स्वाती, मृगशिरा, ज्येष्ठा में १४, आर्द्रा, हस्त में २१, पूर्वाभाद्रपदा, में १६, उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाषाढ़ा, भरणी में २४, मूल में ५६, और अनुराधा, श्रवण, धनिष्ठा में १० दण्ड के बाद ४ दण्ड तक विषघटी दोष माना जाता है। परन्तु जब हरेक नक्षत्र का भोग ६० दण्ड हो तभी यह दोष चार दण्ड होगा। यदि भोग कम हो या बढ़ जावे तो उसी हिसाब से त्रैराशिक करके ४ दण्ड से कम या अधिक दण्ड तक यह विष घटी दोष माना जाना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

इसके जानने की रीति यह है कि नक्षत्र के भोग को ४ से गुणाकर ६० का भाग देने से जो लब्धि आवेगी उतने हीं दण्ड उस नक्षत्र में विषघटी मानेंगे । विषघटी में विवाह होने से कन्या तीन वर्ष के भीतर विधवा होजाती है । यदि अन्यान्य मंगल कार्य किये जायं तो या तो मृत्यु होती है या दरिद्रता । इसी तरह प्रतिपदा से लेकर १५ तिथियों में भी क्रमशः १५, ५, ८, ७, ७, ५, ४, ८, ७, १०, ३, १३, १४, ७, ८ दण्डों के बाद ४ दण्ड विष घटी मानी जाती है, यदि तिथिभोग ६० दण्ड हो । यदि कम या ज्यादा हो तो नक्षत्र की ही तरह त्रैराशिक से निकाल लेना होगा । रविवार आदि सात दिनों में भी २०, २, १२, १०, ७, ८, २५ दण्डों के बाद ४ दण्ड विष घटी मानी जाती है । इनमें विवाह, उपनयन, चौल, गृहारंभ, गृहप्रवेश, और यात्रा आदि कोई भी शुभ कार्य नहीं होते । इस विषघटी दोष का परिहार यह है कि यदि चन्द्रमा लग्न से ५, ९, ४, ७, १० स्थानों में हो, या लग्न का पति लग्न से १, ४, ७, १० (केन्द्र) में हो, अथवा उस पर मित्र या शुभ ग्रहों की दृष्टि हो तो विषघटी के दोषों का नाशक होता है ।

अश्विनी से सूर्य और चन्द्रमा वाले नक्षत्रों को गिनकर दोनों को जोड़े और उसमें २७ का भाग देने पर यदि ०, १, ४, ६, १०, ११, १५, १८, १९, २० शेष बचें तो दशयोग नामक दोष होता है । ये अंक गिनती में दस हैं । इसी से दोष का नाम भी दशयोग पड़गया है । इन दशों के शेष रहने से क्रमशः वायु, मेघ, अग्नि, राजा, चोर, मृत्यु, रोग, वज्र, वादविवाद (कलह), द्रव्य हानि इन दस बातों से कष्ट होता है । विवाह, जनेऊ, चौल, मन्दिर प्रतिष्ठा, आदि शुभ कार्यों में यह दोष वर्जित है । यदि गुरु लग्न का स्वामी हो, शुक्र बलवान होकर केन्द्र (१, ४, ७, १०) में हो, गुरु और शुक्र दोनों ही लग्न में हों या उनकी दृष्टि लग्न पर हो तो दशयोगयुक्त लग्न भी शुभ ही होता है ।

कुलिक, कंटक, अर्धयाम, और कालवेला दोष, जो प्रथम हीं कहे गये हैं, विवाह में भी निन्दित हैं । मगर विशेषता यह है कि यद्यपि और कार्य में रात्रि में उनका दोष नहीं माना जाता । परन्तु विवाह में तो चौबीस घंटे ही वे दूषित हैं । अतः उनके

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहने पर विवाह का समय अवश्य दूषित होजायगा । यह तो हुआ लग्न दोष । परन्तु ग्रहों की ऐसी स्थिति होजाती है, जिससे किसी किसी वर्ष सभी विवाह रुक जाते हैं । इस तरह यदि सिंह राशि के सिंह नवांश में, जो उसके १३ अंश २० कला से लेकर १६ अंश ४० कलातक होता है, बृहस्पति आजाय तो जब तकवहां रहे विवाह, उपनयनादि कोई शुभ कार्य नहीं होते । परन्तु इसका विचार भी कलिंग, गौड़ और गुजरात देशों मेंहीं होता है । ऐसा किसी का मत है । साधारणतया सिंह राशिका गुरु गंगा गोदावरी के मध्यवर्त्ती देशों मेंहीं वर्जित है । यदि मेष राशि में सूर्य हो तो भी सिंह राशिस्थ गुरु का दोष नहीं माना जाता । इसतरह यद्यपि साधारणतया सिंह राशिस्थ गुरु के होने पर ही शुभकार्य प्राचीन ग्रन्थों में वर्जित हैं । मगर उसके तीन समाधान (परिहार) बताये गये हैं, जिनमें पहला केवल सिंह नवांश काही दोष मानकर, नकि समस्त सिंह राशि का । दूसरा, समस्त दोष भी गंगा गोदावरी के मध्य मेंहीं माननीय हैं । तीसरा, यदि सूर्य मेषराशि का हो तो भी सिंह राशिस्थ गुरु वर्जित न होगा । इसका निचोड़ यही है कि जब सिंह राशि में गुरुहोता है तो मघा और पूर्वा फाल्गुनी के चार चार चरणों और उत्तरा फाल्गुनी के आदि के एक चरण में रहता है । इसतरह जब तक मघा के चार और पूर्वाफाल्गुनी के शुरू के एक इन पांच चरणों में रहेगा तब तक तो वह सभी देशों में विवाहादि के लिये वर्जित है । परन्तु जब चार चरणों में जाने पर भी गंगा गोदावरी के मध्य में तो वर्जित ही है । हां, उस समय गंगा से उत्तर और गोदावरी के दक्षिण वर्त्ती देशों में दोष न होगा । परन्तु जबतक सूर्य मेष राशि में रहेगा तबतक तो गंगा गोदावरी के बीच में भी विवाहादि होंगे ही । परन्तु गौड़ देश (पूर्व बंगाल), गुजरात और कलिंग (उड़ीसा) में तो तबतक शुभकार्य नहीं हीं होगे जबतक सिंह राशि में गुरु होगा ।

इसी तरह मकर राशि में चलेजाने पर भी गुरु निन्दित ही माना जाता है । परन्तु इसका भी उपाय है । जबतक मकर के नवांश में रहेगा तभीतक निन्दित रहेगा और वह नवांश मकर राशि में पहलेही पड़ता है । अतः शेष आठ नवांशों में शुभ है । सरा उपाय

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

यह है कि, मगध, गौड़, सिन्ध और कोंकन में हीं मकरस्थ गुरु निन्दित है और नर्मदा से पूर्व, गण्डक से पश्चिम और सोन के दक्षिण तथा उत्तर के देशों में उसका निषेध नहीं है। मकर राशि गुरुकी नीच राशि है। इसीलिये वर्जित मकरस्थ गुरू को कहीं कहीं नीच या नीचस्थ भी लिखा है। मगर उसका अर्थ मकरस्थ ही है।

जब गुरू वक्री और अतिचारी होजाता है तब भी विवाह आदि शुभकार्य रुकजाते हैं। वक्री का अर्थ तो पहलेही बताचुके हैं। अतिचार कहते हैं कूदकर चलेजाने को। किसी राशिपर गुरुको १३ महीने भोग करना है। पर, उसके बीच मेंही उसे छोड़कर यदि अगली राशिपर वह चला जाय तो अतिचारी कहाता है। जो ग्रह अतिचारी होते हैं वह फिर वक्री भी होते हैं और कभी ऐसा होता है कि अतिचार के बाद वक्र होकर उसी राशिपर लौट आते हैं जहां से अतिचार किया था, छलांग मारी थी। परन्तु कभी कभी उस राशिपर न आकर बीच मेंहीं मार्गी होजाते हैं-लौट जाते हैं। यदि १० या ११ महीने एक राशिपर रहकर बृहस्पति अतिचार करे और फिर वक्री होकर उसराशि पर न भी आवे तो कोई हर्ज नहीं। मगर इससे कम रहकर अतिचार के बाद वक्री होकर यदि उसराशिपर वापस न आवे तो लुप्ताब्द या लुप्तसम्वत्सर दोष होता है। परन्तु यदि मेष, वृष, कुंभ और मीन इन चार राशियोंपर, इनसे पूर्व की राशियों पर से अतिचार करके, आकर फिर उनपूर्व की राशियों पर वापस न भी जाय तो भी लुप्ताब्द दोष नहीं होता है। यह लुप्ताब्द शुभ कार्य में वर्जित है। मगर काम चलाने की बात यह है कि नर्मदा और गंगा के बीच के मध्य देश को छोड़ कर अन्यत्र यह दोष नहीं मानाजाता। केवल वक्री और अतिचारी होने पर भी गुरु निन्दित है। मगर जबसे वक्री या अतिचारी होगा तब से २८ दिनतक ही। उसके बाद शुभकार्य हो सकते हैं। इसीतरह यदि मेष से २, ५, ७, ९, ११ स्थानों में वक्र या अतिचार द्वारा गुरु चला गया हो तो भी वर्जित नहीं है। इसीतरह गुरु और सूर्य यदि एक राशिपर चलेजायं या १३ दिन का पक्ष हो, नकि १५ दिन का, तो भी शुभकार्य वर्जित हैं। जब शुक्र और गुरु एक दूसरे को देखते हों तो विवाहादि शुभकार्य वर्जित हैं। इसे समसप्तकदोष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाते हैं। जब सातवें मे होंगे तो दृष्टि तो पड़ेगीही।

बारह लग्नों की पंगु, अन्धा, बहरा और काना यह चार संज्ञायें मेष, वृष, सिंह दिन में अन्धे और कन्या, मिथुन, कर्क रात में अन्धे मानेजाते हैं। इसीतरह तुला, वृश्चिक दिन में बहरे और मकर रात मे बहरे हैं। कुंभ दिन में और मीन रात मे पंगु गया है। बहरे लग्न मे विवाह करने से दरिद्रता, पंगु में धन-, दिनांध में वैधव्य और निशांध में पुत्र की मृत्यु, ये फल कहे हैं। परन्तु जिस समय जो लग्न अंधे, बहरे आदि बताये गये हैं यदि उसी समय हों तभी दोष मानाजाता है, नकि दूसरे समय। इसतरह दिनांध लग्न में यदि रात में विवाह हो तो कोई हर्ज। दूसरा उपाय यह है कि ये अंधे बहरे लग्नों का दोष केवल और गौड़ देश में ही माना जाता है।

किसी किसी के मतसे वज्र दोष भी वर्जित है। उसके जानने रीति यह है कि शुक्ल प्रतिपदा से लेकर उस दिन की तिथि गिनकर उसमें रविवार से उसदिन तक के दिनों और अश्विनी तेकर उसदिन के नक्षत्र की संख्या जोड़कर ऊपर से नौ संख्या भी मिला दे। इसके बाद सात का उसमें भागदेने पर यदि शेष बचे तो जलवृष्टि, ५ बचे तो आंधी और शून्य या ७ बचे वज्रपात फल कहना चाहिये।

एक राशि से दूसरी राशिपर जब ग्रहों की संक्रान्ति हो तो उस भी कुछ काल के लिये शुभकार्य रुकजाते हैं। संक्रांति के समय निषिद्ध काल उससे पूर्व का और बाद का दोनों मिला करही जाता है। यदि ८ दण्ड हो तो चार दण्ड संक्रान्ति से पूर्व चार दण्ड बाद समझना होगा। सूर्य आदि सात ग्रहों की क्रान्ति के समय जितने दण्ड निषिद्ध हैं वे क्रमशः ३३, २, ९, ६, ९, १६० हैं। इनमें सूर्य का समय तो अत्यन्त निन्दित है। अतः उसे अवश्य बचाना चाहिये। इसी प्रकार सूर्य संक्रमणदोष माना जाता है। तुला, मेष, कर्क, मकर इन चार संक्रान्तियों में उससे पहले, बीच और अन्त के ये तीन दिन निन्दित हैं। अर्थात् क्रान्ति जिस दिन हो उससे अगले और पिछले दिन भी निन्दित। परन्तु शेष आठ संक्रातियों में तो उनसे पहले और बाद के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

१६-१६ दण्ड वर्जित हैं। पहले जो सूर्य के ३३ दण्ड कहे गये हैं वे तुला आदि चार में अत्यत खराब हैं और तीन दिनों में ३३ दण्ड घटाने पर जो शेष दण्ड बचेंगे वे कम निषिद्ध हैं, यही अभिप्राय है। ३२ और ३३ में तो कोई विशेष अन्तर नहीं है।

यहां तक तो सामान्य रूप से विवाहादि शुभ कार्यों में तिथि, नक्षत्र और लग्न वगैरः के दोषों का निरूपण हुआ है। अब शुभ लग्न का विचार भी कर लेना चाहिये। कारण लग्नों का बल सभी दोषों का नाशक माना जाता है और यदि दूसरा कोई भी ग्रह, तारा का बल न हो तो भी केवल लग्न बल से ही समस्त कार्यों की सिद्धि होती है। साधारणतया यही नियम है कि मिथुन, कन्या, तुला और धनुका पूर्वार्द्ध ये चार ही लग्न विवाह के लिये उत्तम हैं और शेष मध्यम। शीघ्रबोध में वृष लग्न और उस के नवांश को भी गिनाया है। मगर यह निर्मूल है। प्रत्युत वसिष्ठ, नारदादि ने उसकी निन्दा की है कि उस लग्न में विवाहित कन्या पशु के शील वाली होती है। परन्तु एक तो कोई भी लग्न स्वतः उत्तम या मध्यम नहीं होते, किन्तु जैसे ग्रहों से उनका सम्बन्ध रहता है वे वैसे ही हो जाते हैं। दूसरे इन चार लग्नों का भी शुद्ध रूप में मिलना कठिन हीं नहीं असंभव है। कारण, पहले कहे गये दोषोंसे बचना आसान बात नहीं है। इसीलिये इन्हीं लग्नों के नवांश चाहे जिस लग्न में मिल जावें उसी लग्न में इन्हीं नवांशों के आने पर विवाह करने की आज्ञा प्राचीन लोगोंने दी है और उसका फल यह बताया है कि कन्या सती होती है। इस नवांश की विधि में दो ही अपवाद (निषेध) हैं। एक तो यह कि यदि किसी लग्न का अन्तिम नवांश इन चारों में से कोई होगा तो विवाह न होगा। जैसे मेष लग्न में अन्तिम नवांश धनुका है, और यद्यपि वह नवांश विवाहोचित है। तथापि लग्न के अन्त में होने के कारण त्याज्य होगया। परन्तु उस में भी यदि वह अन्त का नवांश वर्गोत्तम हो जाय, अर्थात् जिस लग्न का अन्तिम (नवां) नवांश वह हो वह उसी लग्न का ही हो, जैसे मिथुन लग्न का अन्तिम नवांश मिथुन का ही होने से वह वर्गोत्तम हो गया। तो उस अन्तिम नवांश में भी विवाह होगा। नवांशों के बारे में दूसरा निषेध यह है कि यदि चन्द्रमा तुला या मकर राशि का हो तो मेष, कर्क, तुला आदि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर लग्नों में जो चर लग्न का नवांश हो उस में भी विवाह वर्जित है। दृष्टान्त के लिये जब चन्द्र मकर या तुला में हो तो मेष राशि में जो तुला का नवांश सातवां पड़ता है उस में विवाह न होगा। किसी किसी ने चार नवांशों के सिवाय मीन का भी नवांश माना है। मगर यह पक्ष सर्वसम्मत नहीं है और मीन के नवांश में विवाह तभी होता है जब वर की कुंडली से वह बहुत ही गुणवान सिद्ध हो और दूसरा लग्न मिलता ही नहो। अन्यथा कभी न होगा।

जब नवांशों पर ही सब दार मदार है तो फिर उनका अलग अलग फल और उन के ठीक ठीक जानने की विधि से भली भांति अवगत होना आवश्यक है। मेष के नवांश में विवाह होने से कन्या वरों से प्रेम करती है; वृष नवांश में पशु स्वभाव की होती है, मिथुन में धन और पुत्रयुक्त होती है; कर्क में वेश्या होती है; सिंह में पिता के ही घर रह जाती है; कन्या में सुशीला और धनयुक्त होती है; तुला में सर्वगुणसम्पन्न होती है; वृश्चिक में अत्यन्तनिर्धन और दुष्ट स्वभाव वाली होती है; धनु के पूर्वार्द्ध में धनयुक्त और उत्तरार्द्ध में व्यभिचारिणी, मलिन और रोगिणी होती है; मकर में दरिद्र होती है; कुम्भ में पतिरहित और दुबली पतली हो जाती है और मीन में पतियुक्त होने पर भी धनहीन होती है। यदि सभी गुण हों, मगर नवांश ठीक न हो तो सभी गुणों को अकेला नवांश दोषही चौपट कर देता है। इसलिये नवांशों का ठीक विचार करके उनका पक्का समय पञ्चांग और गणित से जान लेना चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि ७ बजके ७ मिनट से लेकर ८ बजके ३७ मिनट तक कुम्भ लग्न का भोग हो तो उसके भोग के कुल ९० मिनट हुए, जो नौ नवांशों में बँटे हैं। अतः प्रत्येक नवांश का भोग १०-१० मिनट हुआ। और जैसा कि पहलेही बता चुके हैं, कुंभ का नवांश तुला से ही शुरू होता है। इसलिये पहला नवांश तुला काही होगा जो ७ बजकर ७ मिनट से १७ मिनट तक रहेगा और यदि चाहें तो इन्हीं १० मिनटों में विवाह कर सकते हैं। उसके बाद २७ मिनट तक वृश्चिक और फिर ३७ तक धनु का नवांश होगा। धनु के नवांश का पहला आधा (पूर्वार्द्ध) विवाह योग्य माना जाता है। अतः २७ मिनट से ३७ मिनट तक मिनट विवाह योग्य ठहरे। इसी तरह होते होते ८

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

बजकर २७ मिनट से लेकर ३७ मिनट तक अन्त में मिथुन का नवांश आवेगा और यद्यपि वह भी विवाह के योग्य है। मगर उसमें विवाह हो नहीं सकता, क्योंकि वह अन्त का नवांश है जो निषिद्ध है और वर्गोत्तम नहीं। यदि वही मिथुन का नवांश मिथुन लग्न के अन्त में होता तो वर्गोत्तम कहा जाता। इस तरह देख रहे हैं कि कमसे कम ५ मिनट तकही नवांश मिलते हैं और यदि कन्या और तुला के नवांश एक साथ मिलादिये जावें, क्योंकि कन्या के बाद ही तुला का आता है, तो भी २० ही मिनट हुए और यदि किसी लग्नका भोग२ घंटे से ज्यादा हुआ तो भी दोनों मिलाकर २५-३० मिनट से ज्यादा तो कभी भी हो नहीं सकते। यह भी देखते हैं कि विवाह संस्कार की क्रिया तो बहुत समय में पूरी होती है। फिर यह कब संभव है कि ५-७ या २५-३० मिनटों में हीं वह पूरी होजाय। ऐसी दशा में विवाह का प्रधान काम जो कन्यादानपूर्वक पाणिग्रहण है वह लग्न को देखकर ठीक समय में होना चाहिये और आगे पीछे की शेष क्रियायें उस लग्न काल से पहले और बाद भी, साधारणतया भद्रा आदि रहित उत्तम समय में की जानी चाहियें। यही लग्नका रहस्य है। लग्न को ठीक ठीक जानने के लिये प्राचीन ज्योतिष ग्रन्थों में घटी-यंत्र वगैरः स्थापित करने को लिखा है। मगर आजकल तो वह क्रिया लुप्तप्राय होरही है और अब लोग उसकी आवश्यकता भी नहीं समझते। अब तो घड़ियों सेही काम चलता है। अब पुराने घटीयंत्रकी जगह नये यंत्रने लेली है। इसलिये घड़ी कीही सहायता से लग्न का पता लगाना चाहिये कि विवाह का नवांश कब से कब तक है और वह आगया या नहीं।

लग्न की उत्तमता के लिये ग्रह स्थिति देखनी होगी। सूर्य, शनि, राहु, केतु यदि लग्न से ३, ११, ८, ६ स्थानों में हों; मंगल ३, ११, ६ में हो; चन्द्रमा २, ३, १ में हो; बुध और गुरु ७, ८, १२ को छोड़कर शेष स्थानों में और शुक्र ३, ६, ७, ८, १२ को छोड़ कर बाकी स्थानों में हो तो ये ग्रह रेखा देने वाले, अर्थात् अत्युत्तम फल देनेवाले होते हैं। यदि शनि १२ में, मंगल १० में, शुक्र ३ में, चन्द्र और पापग्रह लग्न में, लग्न का स्वामी, शुक्र और चन्द्र ६ में; चन्द्र, लग्नस्वामी, शुभग्रह और मंगल ८ में और लग्नस्वामी तथा सभी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सूर्यादि ग्रह ७ में हो तो लग्न को चौपट कर देते हैं और इनका फल बड़ाही अनिष्ट होता है। परन्तु यदि शुक्र अपने शत्रु सूर्य और चन्द्रमा के स्थान सिंह और कर्क में हो, या अपने नीच स्थान कन्या में हो तो षष्ठ स्थान में रहने पर भी उसका दोष नहीं लगता। मंगल यदि अस्त हो, अपने शत्रु बुध के गृह कन्या या मिथुन में हो, अथवा कर्क में हो तो उसके अष्टम स्थानका दोष नहीं होता। चन्द्रमा यदि ऊँच स्थान वृष में हो, या वृष के नवांश में होतो उसके ६, ८, १२ स्थानों में रहने के दोष का वारण होजाता है और कर्त्तरी दोष करने वाले ग्रह यदि अपने शत्रु के स्थान में या अपने नीचे स्थानमें हों या अस्त हों तो कर्त्तरीदोष नहीं लगता।

फल के हिसाब से ग्रह तीन प्रकार के माने जाते हैं, निषिद्ध या खराब फल देने वाले, मध्यम या जो न बुरा ही फल दें न भलाही और उत्तम या रेखादाता जो उत्तम फल दें। हरेक ग्रह स्थानभेद से तीनों प्रकार के हो सकते हैं। इसलिये लग्न विचार के समय सभी ग्रहों की स्थिति देखकर उनके फल से लग्न को उत्तम, मध्यम, निकृष्ट और त्याज्य समझ लेना चाहिये। जैसे मेलापक में गुणों को देखकर उनके जोड़ से गणना या मेलापक को उत्तम, मध्यम, निकृष्ट या त्याज्य मानते हैं वही बात लग्न के भी विषय में है। यहां भी लग्न के रेखादाता (उत्तम) ग्रहों को देखकर उनका फल जोड़ते हैं। इसेही विंशोपक या विश्वा कहते हैं। सारांश, जिस तरह २० विश्वे की बीघा होती है उसी तरह यदि सभी ग्रह रेखादाता या उत्तम स्थान पर हों तो उन सभी का फल २०ही विश्वा होगा। यह तो बहुतही कठिन है कि सभी ग्रहों की स्थिति लग्न में उत्तम ही हो। मगर असंभव नहीं है। आठ ग्रह तो रेखादाता हो सकते हैं। मगर राहु और केतु दोनोंही एक साथ रेखादाता नहीं हो सकते। उनमें यदि एक होगा तो दूसरा नहीं होसकता। विवाह में दोनों का एक साथही रेखादाता होना असंभव है, ऐसा ही ज्योतिषी लोग मानते हैं. अस्तु। अब देखना यह है कि यदि हरेक ग्रह रेखादाता हो तो उसका फल कितना विंशोपक या विश्वा होगा। सूर्य का साढ़े तीन, चन्द्र का ५, मंगल, शनि, राहु, केतु प्रत्येक का डेढ़, बुध, शुक्र प्रत्येक का २ और गुरु का ३ होता है। इस तरह कुल जोड़ने से

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

साढ़े इक्कीस विश्वा होता है । मगर होना चाहिये बीसही विश्वा । परन्तु कही चुके हैं कि राहु और केतु में से एकही एक वार रेखा-दाता होगा । इसलिये एक का डेढ़ निकल जाने पर बीसही विंशोपक रह जाते हैं । इस प्रकार यदि सभी ग्रहों के बल का जोड़ २० हो तो वह लग्न उत्तम कहा जाता है । यदि सभी का जोड़ ५ से कम होतो वह लग्न त्याग करने योग्य है । ५ से ९ तक हो तो निकृष्ट है और दूसरा लग्न न मिलने पर काम चलाऊ है । १० से १४ तक मध्यम और १५ से २० तक उत्तम है । यह तो प्रायः असम्भवही है कि सभी ग्रह रेखादाता हों । ऐसी दशा में यदि अधिकांश ग्रह रेखा-दाता न हुए तो उनका विंशोपक न मिलेगा और एकाधकाही मिलेगा । तो फिर ४ या उससे कम होना अवश्यंभावी है । मगर जब कुछ ज्यादा ग्रह या अकेला चन्द्रमा हीं बलवान होगा तो ५ या उससे ज्यादा विश्वा बल लग्न का मिल सकता है । ग्रहस्थिति का विचार आसान नहीं हैं । किन्तु बहुतही कठिन है । इसलिये ज्योतिषी को चाहिये कि लग्न में ग्रह स्थिति का विचार खूब मनोयोगपूर्वक करे । दृष्टान्त के लिये शुक्र को ले सकते हैं । वह रेखादाता तभी होता है जब लग्न से ३, ६, ७, ८, १२ स्थानों में न हो और यदि अपने शत्रु सूर्य और चन्द्रमा के स्थान सिंह तथा कर्क में हो या अपने नीच स्थान कन्या में हो तो षष्ठ स्थान में रहने पर भी उसका दोष नहीं लगता है । इसका निश्चय यों होगा । कल्पना कीजिये कि मीन लग्न के तृतीय नवांश में जो कन्या का है, विवाह लग्न ठीक है और उससे छठें स्थान सिंह में शुक्र है । या यदि कुम्भ लग्न में विवाह ठीक है और उससे छठें कर्क में ही शुक्र है, तो यह लग्न खराब होनाहीं चाहिये । यदि मेष लग्न के मिथुन नवांश में विवाह करना चाहें और कन्या में शुक्र हो तो भी मेष से छठें होने के कारण निन्दित होना चाहिये । मगर ऐसा न होगा । क्योंकि सिंह या कर्क वाला शुक्र छठें में होकर भी अपने शत्रु के गृह में है और कन्या वाला छठें में हो कर भी नीच स्थान में है । यह भी जान लेना चाहिये कि यदि ग्रह पर शत्रु की दृष्टि हो, शत्रु के स्थान में वह आगया हो या नीच स्थान में हो, अथवा अस्त होगया हो तो लग्न, त्रिकोण और केन्द्रादि में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ने पर भी वह शुभफलदाता नहीं हो सकता । अतः इन्हीं सब बातों का विधिवत् विचार करना होता है ।

ग्रहों का बल तो अलगही है । लेकिन यदि वह न भी हो तो भी लग्न के या नवांश केही बल से सर्व कार्य सिद्धि होती है और सभी दोष निष्फल हो जाते हैं । अतः जिस लग्न के जिस नवांश में विवाहादि शुभ कार्य करना हो उस नवांश का स्वामी यदि उस नवांश को देखता हो, या उस नवांश में ही हो, अथवा यदि नवांश को नहीं तो उस लग्न को ही देखता हो, या उसी लग्न में स्थित हो तो वर के लिये अत्यंत शुभ फलदायक होता है । दृष्टान्त के लिये मेष लग्न को लीजिये । उसका तृतीय नवांश, जो मिथुन का है, विवाह के लिये शुभ है और उसका स्वामी बुध है । वह यदि मेष लग्न में हो तो उससे सातवें स्थान तुला को पूर्ण दृष्टि से देखने के कारण उसमें जो मिथुन का नवांश नवां है उसे भी देखता है । अतः मेष के मिथुनांश में विवाह ठीक होगा । यदि बुध मेष लग्न में रहकर भी मिथुन के नवांश पर न हो तब यह बात होगी । परन्तु यदि वही बुध मेष लग्न में न होकर वृष में हो तो भी उस लग्न के मिथुन नवांश में विवाह वर को शुभ होगा । क्योंकि जब वह वृष राशि पर है तो तब उसके छठें मिथुननवांश पर चला जायगा तो यद्यपि मिथुन के नवांश पर उसकी दृष्टि न होगी । क्यों कि वह तो वृष से सातवें स्थान अधिक पर ही होगी और उसमें मिथुन का नवांश है नहीं । तथापि उस नवांश में स्थित रहने पर ही विवाह होगा । इस प्रकार नवांश का स्वामी चाहे उसे देखे या उसमें रहे, दोनों दशा में विवाह वर के लिये शुभ होगा । इसी तरह यदि नवांश का पति यदि लग्न को भी देखे या उसमें स्थित रहे तो भी वर को शुभ बताया है । यदि कन्या में बुध हो तो मीन लग्न में जो तुला का नवांश है उसमें विवाह होगा । क्यों कि बुध अपने नवांश को तो देखता नहीं, मगर लग्न को देखता है । क्यों कि मीन लग्न कन्या से सातवां है । मीन के जिस तुला के नवांश को देखता है उसका स्वामी वह स्वयं नहीं है । अतः मीन के तुला नवांश में भी केवल मीन लग्न पर बुध की दृष्टि के कारण हीं विवाह होगा । अथवा यदि वही बुध मीन लग्न में आजाय तो भी विवाह होगा ही । इसे ही उदय शुद्धि कहते हैं । लग्न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

स्थान को ही उदय और सातवें को अस्त कहते हैं और इसमें सातवें का नाम नहीं है, किन्तु कन्या के लिये आगे लिखा है। इसीसे यह उदय शुद्धि और कन्या वाली अस्त शुद्धि कहाती है। वह इस प्रकार है। विवाह के लिये जो इष्ट नवांश हो उससे सातवें नवांशका स्वामी उसे ही देखे या उसमें रहे अथवा लग्न से सातवें को देखे या उसमें रहे तो कन्या के लिये शुभ है। इसे यों समझना चाहिये। मिथुन के नवांश से सातवां जो धन का नवांश है उसका स्वामी शुभ यदि सिंह या मेष में रहकर उसे देखता हो या सिंह वा धन पर जा-कर धन के नवांश पर पहुंच गया हो तो भी मिथुन का नवांश शुभ होगा। अथवा यदि बृहस्पति कर्क राशि में अपने नवांश को नहीं देख कर मेष लग्न के सातवें तुला को ही देखता हो या तुला में ही रहे तो भी मेष लग्न का मिथुन नवांश कन्या के लिये शुभफल-दायक होगा।

यदि ऐसा न भी हो और नवांश के स्वामी का मित्र कोई शुभ ग्रह ही नवांश को या लग्न को देखता हो तो वर के लिये शुभ और नवांश से सातवें अंश के स्वामी का मित्र कोई शुभ ग्रह उस अंश या लग्न से सातवें स्थान को देखता हो तो कन्या के लिये शुभ है। परन्तु अशुभ ग्रह मित्र भी हों और उनकी दृष्टि हो तो वर कन्या दोनों के लिये अनिष्ट हैं। दो क्रूर ग्रहों के मध्य में यदि चन्द्र हो तो कन्या का नाश करता है और वर का नाश वह लग्न करता है जो क्रूर ग्रहों के मध्य में हो

ज्योतिषियों ने ऐसा भी कहा है कि यदि सूर्य लग्न के समय बलवान हो तो कन्या के ससुर को, शुक्र हो तो सास को, लग्न बलवान हो तो उसके शरीर को, सातवें स्थान का पति बलवान हो तो कन्या के स्वामी को और चन्द्रमा बलवान हो तो उसके मन को सुख होता है। ग्रह अपने स्थान में, ऊंचे स्थान में, मित्रगृह में और मित्रग्रह की दृष्टि आदि के रहने पर बलवान होते हैं और शत्रु गृह, नीच गृहादि में जाने पर दुर्बल होते हैं। अतः यदि ये दुर्बल हों तो ससुर आदि को सुख न होगा।

जब कोई लग्न न मिले तो गोधूलि लग्न में ही विवाह करना चाहिये। क्यों कि दोषों के कारण लग्नों का अभाव हो जाने पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गोधूली में पूर्वोक्त लग्न, नक्षत्रादि किसी भी दोष का विचार नहीं किया जाता। परन्तु यह अगतिकगति और किसी प्रकार काम चलाने केही लिये है। ऐसी दशा में विवाह ही क्या, सभी शुभ कार्य इसमें किये जा सकते है। परन्तु गोधूली में भी भद्रा, भरणी, कुलिक शान्तिसाम्य आदि साधारण दोषों का विचार तो किया ही जाता है। साधारणतः गान्धर्वादि विवाह में और वैश्य, शूद्र तथा वर्ण-संकरों के विवाह में ही गोधूली लग्न विशेष रूप से माननीय है। यदि ब्राह्मणादि की कन्या युवती हो गई हो और दूसरा लग्न न हो तो गोधूली से भी काम चलता है। कहीं ऐसा न हो कि गोधूली की प्रशंसा पढ़कर लोग उसे ही प्रधान मान बैठें। इसीलिये इतना स्पष्ट करदेना पड़ा है। अगहन से फागुन तक चार महीने तक शाम को सूर्य जब तेज रहित लोहेके लाल पिंड की तरह दीखने लगे तभी गोधूली होती है। उसके बाद चैत से आषाढ़ तक सूर्य का आधा बिम्ब जब दीखता रहे और आधा डूब जावे तब गोधूली होती है। फिर श्रावण से कार्त्तिक तक सूर्यास्त होते ही गोधूलि मानी जाती है। परन्तु यह गोधूली का समय तो अत्यंत अल्प है। इतने में तो शायद ही कोई काम हो। इसलिये जो समय कहा है उस के बाद दो दण्ड तक गोधूली किसी किसी के मत से और दूसरे के मत से उस समय के पहले और बाद आधा आधा दण्ड मानी जाती है। गोधूली का तात्पर्य तो केवल इतनाही है कि जब शाम को जंगल से गायों के घर लौटते समय उन के पांवों से धूली उड़ कर आकाश में छा जाती है। इसी से गोधूली या गोरज इसका नाम पड़ा है। इस गोधूली में भी कुछ विशेष विचार करने को लिखा है। गुरुवार को यदि गोधूली हो तो सूर्यास्त के बाद ही आधा दण्ड मानी जाय, क्यों कि सूर्यास्त से पहले अर्धयाम दोष रहता है। इसी तरह शनिवार को सूर्यास्त से पूर्व ही आधा दण्ड मानी जाती है; कारण, अस्त होने में कुलिक दोष होता है। यदि गोधूली लग्न में या उस से ६, ८, स्थान में चन्द्रमा हो तो कन्या का नाश होता है। मंगल लग्न, ७, ८ स्थान में हो तो वर का नाशक होता है। हां, यदि उस समय लग्न से २, ३, ११ स्थानों में चन्द्र हो तो वही संध्या गोधूली है। नहीं तो केवल धूली (ल) ही समझना चाहिये।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कहीं कहीं लिखा है और प्रायः सर्वत्र माना जाता है कि फाल्गुन मासके शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक होलाष्टक दोष होता है और उस समय विवाहादि शुभ कार्य नहीं होते। परन्तु यह दोष विपाशा (व्यास), शुतुद्रि (सतलज), इरावती इन तीन नदियों के निकटवर्त्ती देशों में और त्रिपुष्कर देश में माना जाता है, जो अजमेर के पास है।

विवाह और उपनयन से पूर्व उसके लिये मण्डपादि बनाये जाते हैं और वेदी का निर्माण, कलशस्थापन, हल्दी, कोहवर आदि काम किये जाते हैं। मगर इनके लिये कोई विशेष विचार नहीं है। विवाह से पूर्व के तीसरे, छठें, नवें दिनों को छोड़ शेष दिनों में ये सभी काम केवल विवाह के ही पूर्वोक्त ११ नक्षत्रों में किये जाते हैं। परन्तु किसी का मत है कि केवल ११ ही नक्षत्रों में नहीं, किन्तु अश्वनी, भरणी, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, चित्रा, विशाखा, शतभिषा, ज्येष्ठा इन दश नक्षत्रों को छोड़कर शेष १७ में पूर्वोक्त सभी काम किये जा सकते हैं। विवाह में जो वेदी बनाई जाती है और जो मण्डप के मध्य में होती है वह कन्या के हाथ से चार हाथ लम्बी चौड़ी और एक हाथ ऊंची होती है। मगर उपनयन में वटु के हाथ से नापी जाती है। ८, १२, १६ हाथ के मण्डप क्रमशः अधम, मध्यम, उत्तम कहाते हैं। आंगन की चौड़ाई के हिसाब से ही ८ से १६ तक का मण्डप बनाया जावे। मध्यम भाग जो जण्डप का है उसी में यह वेदी रहती है और उसके चारों ओर के खम्भे तोरण, वन्दनवार और लकड़ी के बने हंस, शुकादि पक्षियों से सजे होते हैं। मकान के द्वार के सामने यह वेदी कभी न बनाकर दरवाजे से बाईं ओर बनावे। मण्डप में १६ खम्भे रहेंगे। नकि ६ या ४ आदि। विवाह के बाद छठें दिन को छोड़कर, २, ४, ८ आदि सम दिनों में मण्डप का उद्वासन किया जाता है और विषम दिनों में केवल दो ही दिन लिये जाते हैं पांचवां और सातवां। मण्डप के स्तम्भों के गाड़ने में सूर्य की संक्रान्ति के हिसाब से दिशाओं का भी विचार है। सिंह, कन्या, तुला राशियों के सूर्य में ईशान कोन में; वृश्चिक, धनु, मकर में वायव्य में; कुम्भ, मीन, मेष में नैर्ऋत्य में और वृष, मिथुन, कर्क में अग्निकोन में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मण्डपस्तम्भ या बांस गाड़ा जाना चाहिये । एतदर्थ गढ़ा भी उसी हिसाब से खोदा जाना चाहिये । तिलक से वा फल दान से पहले जो वररक्षा होती है उसेही कन्यावरण भी कहते हैं और कहीं कहीं उसे ही सगाई भी कहते हैं, जैसा कि मेरठ आदि जिलों में है । यह वररक्षा भी या तो विवाह के ही नक्षत्रों में की जाती है या कृत्तिका, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाषाढ़ा, पूर्वाभाद्रपदा, अनुराधा, स्वाती, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा इन नौ नक्षत्रों में: मंगलवार के सिवाय अन्य दिनों में, और कृष्ण प्रतिपदा, चतुर्थी, अष्टमी, नवमी, चतुर्दशी तिथियों को छोड़ शेष तिथियों में, चन्दन, माला, फूल, पान और फलादि से की जाती है । वररक्षा के लग्न में यह देखना चाहिये कि अशुभ ग्रह ३, ६, ११, में हों और शुभ ग्रह १, ४, ५, ७, ९, १० में या गुरु (उपचय) ३, ६, १०, ११ में हो और शुक्र लग्न में हो ।

फल दान वा तिलक या तो कन्या का भाई करे, या योई कुलीन ब्राह्मण । तीनों पूर्वा, तीनों उत्तरा, कृत्तिका, रोहिणी इन्हीं नक्षत्रों और गुरु, शुक्रवारादि शुभदिन मेंही फल दान होना चाहिये । वस्त्र, पुष्प, फल, यज्ञोपवीतादि सेही वरण किया जाता है ।

विवाह के बाद वधू प्रवेश और उसके बाद द्विरागमन का समय आता है । वधूप्रवेश को ही गमन या गौना और द्विरागमन को दोंगा कहते हैं । वधूप्रवेश दो प्रकार का होता है, सद्योवधूप्रवेश और विलम्बित प्रवेश । सद्यःप्रवेश वह कहाता है कि विवाह के बाद पति के साथही वधू उसके घर चली आती है और विलम्बित का अर्थ है कि पति ससुराल से बिना पत्नी केही अपने घर आकर फिर दोबारा आता है और पत्नी को लिवा लाना है । विलम्बित प्रवेश में कोई भी नियम नहीं है कि कितने दिनों बाद होवे कभी कभी तो दोचार दिनों के बादही होता है और कभी कभी कई वर्षों के बाद । बस, बरात के साथ एक बार अकेले पति को घर लौट जाने पर जभी दो बारा कन्या लाने का यत्न हुआ कि विलम्बित वधू प्रवेश कहाया । इसी तरह सद्यः प्रवेश यद्यपि साधारण ४-५ दिनों के भीतर ही हो जाता है । मगर कभी कभी ऐसा होता है कि वर ससुराल में ८-१० दिनों तक रह जाता है, अस्तु । इस विचार का यहां इतनाहीं प्रयोजन है कि पाठक जान लें कि नवीन वधू के पति के घर में जाने का विषय कैसा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

है और जो यह कहा जाता है कि वधूप्रवेश केवल अगहन, वैशाख और फागुन में ही होता है वह भी आया ठीक है या नहीं । जब माघ, ज्येष्ठ और आषाढ़ मेंभी विवाह होता है तो फिर तीन हीं मास में क्यों वधू प्रवेश होगा ? यदि कहा जाय कि अच्छा तो, सद्यः प्रवेश भलेहां पांच या ६ मासों में हो, मगर विलम्बित प्रवेश तो तीन ही में होना चाहिये, जैसा कि द्विरागमन भी इन्हीं तीनों में होता है, तो यह भी ठीक नहीं है । क्योंकि जयतुंग में लिखा है । कि अगहन, माघ, वैशाख और ज्येष्ठ में नवीन वधूका प्रवेश होता है । फिर कैसे माना जाय कि केवल तीनहीं मास वधूप्रवेश के हैं ? द्विरागमन की तो बातही निराली है । वह तीन मेंही होता है । अतः इन महीनों में भी यानी पांच में विलम्बित वधूप्रवेश होता है । यदि कहा जाय कि ज्येष्ठ और माघ की तो निन्दा कीगई है । तो इसका उत्तर यह है कि जिस तरह नवीन वधू के प्रवेश में सन्मुख और दहिने शुक्र का जो कहीं कहीं निषेध है वह केवल द्विरागमन के ही लिये है, न कि वधूप्रवेश के लिये । वहां नवीन वधू का अर्थ है युवती स्त्री, नकि प्रथमवार पति के घर आने वाली । उसीतरह नवीन वधू के प्रवेश में जो माघ और ज्येष्ठ की निन्दा है वह भी द्विरागमन के ही लिये है, नकि गमन के लिये । जिसतरह विवाह के साथ ही वधू प्रवेश होने में सन्मुख और दहिने शुक्र का दोष नहीं लगता, क्योंकि विवाह के समय तो सन्मुख और दहिने भी रहता है । उसी तरह विलम्बित प्रवेश में भी नहीं लगना चाहिये । क्योंकि बात तो एक ही है । यह तो कहीं लिखा नहीं है कि विवाह में भी सन्मुख और दहिने शुक्र निषिद्ध है और वधू प्रवेश तो विवाह के साथ होताही है और होनाहीं चाहिये । बस, यही दलील दीजा-सकती है जिससे शुक्रदोष वधू प्रवेश से हटकर द्विरागमन में चला-जाता है । ठीक यही दलील वधूप्रवेश के महीनों के भी विषय में दी जा सकती है । क्योंकि जब ५ या ६ महीनों में विवाह होता ही है तो फिर वधूप्रवेश उन महीनों में क्यों न हो ? फिर चाहे वह प्रवेश सद्यः हो या विलम्बित हो । जब सद्यः में आप उन महीनों में कोई मीन मेष नहीं लगा सकते तो फिर विलम्बित में कैसे लगा-ने चले ? अतः कहीं पर जो माघ और ज्येष्ठ के बारे में मीन मेष-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

मालूम होता है वह भी द्विरागमन केही सम्बन्ध में समझाजाना चाहिये। इसीलिये बृहद्दैवज्ञरंजन में द्विरागमन प्रकरण मेंहीं उन महीनों की निन्दा लिखी है और यही ठीक है भी। अब केवल एक शंका इसपर की जा सकती है कि, तो फिर विलम्बित वधू प्रवेश आषाढ़ में भी उसी तर्क और दलील के आधार पर होना चाहिये। क्योंकि विवाह काल में तो आषाढ़ में भी वधूप्रवेश होता ही है। यहतो कही नहीं सकते कि आषाढ़ में विवाह होताही नहीं। शुक्र अस्त की दशमीतक तो आषाढ़ में भी अवश्य होता है। इसका उत्तर यह है कि न्यायतः अवश्यमेव होना चाहिये। मगर जब पुराने लोगों ने इसे छोड़ दिया है तो इसमें कोई कारण अवश्य होगा। अतएव हमभी उसी कारण से इसे छोड़ देते हैं। यद्यपि ठीक ठीक कह नहीं सकते कि कौन कारण है। इसीलिये मुहूर्त्तचिन्तामणि और पीयूष धारा में वधूप्रवेश के लिये नक्षत्र, दिन, तिथि आदि का विचार करके भी महीने का विचार बिल्कुलही नहीं किया है। हालांकि, फिर आगे चलकर द्विरागमन के प्रकरण में किया है। इसी लिये आषाढ़ के सिवाय अगहन, माघ, फागुन, वैशाख, ज्येष्ठ में तो वधूप्रवेश अवश्यमेव होना चाहिये। हां, आषाढ़ को इसी लिये छोड़दे सकते हैं कि यद्यपि न्यायतः इसमें होनाचाहिये, परन्तु पुराने आचार्यों ने इसे छोड़ दिया है।

वधूप्रवेश के बारे में सौर और चान्द्र मासों का भी विचार होना आवश्यक है। द्विरागमन में तो सभी लोग सौर मासों को ही लिखते हैं। मगर वधूप्रवेश में किसी ने सौर मास लिखा है, तो किसी ने चान्द्र या और किसी ने दोनों ही लिखे हैं। दोनों मासों के लिखने की रीति और पहचान भी यही है कि सौर में अगहन, फागुन और वैशाख के लिये अलि, कुम्भ और मेष लिखते हैं और चान्द्र में ऐसा न लिखकर नाम ही लिखते हैं। क्योंकि फागुन आदि नाम चान्द्रमासों के ही हैं। इसीलिये लोमशसिद्धान्त में यही लिख दिया है कि चान्द्र (ऐन्दव) मासों की ही चैत्र आदि संज्ञा है—"तेषामैन्दवमासानां चैत्राद्याख्याश्च संस्मृताः।" यह भी नहीं कि विवाहादि शुभ कार्यों में सौर मास ही लिया जाता है। क्योंकि यद्यपि विवाह और द्विरागमन में सौर मास ही लेनेकी रीति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है और कहीं ऐसा ही लिखा भी है कि–" विवाहादौ स्मृतः सौरः "– अर्थात् विवाहादि में सौरमास लिये जाते हैं। तथापि यह नियम नहीं है। क्योंकि वधूप्रवेश में तो दोनों ही लिखेगये हैं और ज्योतिषियों ने वसिष्ठ का यह वचन भी लिखा है कि उद्वाह, यज्ञ, उपनयनादि में चान्द्रमास लिया जाता है। जैसा कि–" उद्वाहयज्ञोपनयप्रतिष्ठा-तिथिव्रतक्षौरमहोत्सवाद्यम् । पर्वक्रिया वास्तु गृहप्रवेशः सर्वं हि चान्द्रेण विगृह्यमेतत्" ॥ किसी कीसीने इसका यह उत्तर लिखा है कि यद्यपि विवाह आदिमें सौर और चान्द्र दोनोंही महीने लिखे गये हैं, तथापि विन्ध्याचल के दक्षिण कृष्णा और तापती नदियों के मध्यवर्ती देशों में चांद्र मास लिया जाता है और विंध्याचल से उत्तर के देशों में सौर मास और शेष देशों में दोनों ही लिये जाते हैं। परन्तु एक तो इस व्यवस्था में किन्हीं पुराने ऋषियों और आचार्यों की सम्मति नहीं है। दूसरे वसिष्ठ तो विन्ध्याचल से उत्तर के ही रहने वाले थे और उन्होंने ही चान्द्रमास लिखा है। तीसरी बात यह है कि यदि मान भी लें कि ऋषियों का वचन इस देशव्यवस्था के बारे में नहीं भी है तो भी जिसने यह व्यवस्था की है उसने उन देशों का व्यवहार देख कर ही किया है। तो भी, फिर राजमार्त्तण्ड में भोजराजने वधू प्रवेश में दोनों प्रकार के महीनों को कैसे लिख दिया? वे तो विन्ध्याचल से दक्षिण के ही निवासी थे? यदि तापती के उत्तर रहने के कारण उन्हें उत्तर-देशीयही मानलें तो भी दोनों प्रकार की बातें वे कैसे लिख सकते थे? सो भी पहले चान्द्रमासों को लिखकर पीछे से सौर मासों को लिखा है! उन्हें तो स्वभावतः सौरमासों को ही पहले लिखना चाहिये था; क्योंकि उक्तव्यवस्थापक के मतानुसार उत्तर में सौर का ही प्रचार होना चाहिये और जिस का प्रचार हो वह बात तो पहले ध्यान में आती ही है। इस लिये इन बातों पर बिलकुल ही विश्वास न होकर यही निश्चय होता है कि जहां तक सौर और चान्द्र दोनों मासों का मेल होजावे वहां तक तो विलम्बित वधू प्रवेश सर्वोत्तम है। मगर यदि दोनों का मेल न हो सके तो भी काम चलाने के लिये जैसा ही सौर है वैसा ही चान्द्र भी। अतः दोनों को ही लेकर काम चला सकते हैं। मैं तो इसी परिणाम पर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बहुत विचारने के बाद पहुंचा हूं । परन्तु विद्वन्मण्डली इस विचार से सहमत होगी या नहीं, यह कह नहीं सकता, अस्तु ।

वधू प्रवेश में यह नियम है कि विवाह के बाद सोलह दिनों के भीतर यदि वह होनेको हो तो द्वितीय, चतुर्थ आदि सम दिनों और विषम दिनों में केवल पांचवें, सातवें और नवें में होना चाहिये । फलतः सोलह दिनों के भीतर केवल २, ४, ५, ६, ७, ८, ९, १०, १२, १४, १६ वें दिन होगा । सोलह दिनके बाद महीने भरके भीतर चाहे जिसदिन करे । परन्तु जब महीना बीत गया तब तो एक वर्ष के भीतर यदि किया जाय ३, ५, ७, ९, ११ वें महीने में हीं होगा । इसमे विषम दिन का विचार न होगा । परन्तु यदि एक वर्ष भी बीतजावे तो पांच वर्षों तक तीसरे और पांचवें वर्षही हो सकेगा । परन्तु इसमें विषम महीने और दिन का विचार न होगा, चाहे जिस महीने और दिन में करे । लेकिन जब पांचवर्ष बीतजायं तब तो कोई भी नियम नहीं है । चाहे विषम दिन, महीने और वर्ष में करे या सम में । और जैसा कि कही चुके हैं, इस वधू प्रवेश में सन्मुख और दहिने शुक्र रहने पर कोई दोष नहीं होता । सन्मुख और दहिने का अर्थ यही है कि जब पिता के घर से पति के घर वधू आवे तो उसके सामने या दहिने शुक्र हो । जैसे शुक्र का उदय पश्चिम में हो तो पिता के घर से पश्चिम होने वाले पति के घर में जाने पर शुक्र सन्मुख होगा और उत्तर से दक्षिण जाने में दहिने पड़ेगा ।

वधू प्रवेश के नक्षत्र अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुष्य, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, अनुराधा, मूल, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती ये पन्द्रह हैं । मुहूर्त्तमार्त्तण्ड में मघा भी लिखी है और राजमार्त्तण्ड में पुनर्वसु, शतभिषा को लिखकर और रेवती को छोड़कर १६ लिखा है । फिर भी, पूर्वोक्त १५ नक्षत्र तो प्रायः सर्वमान्य हैं और मघा, पुनर्वसु, शतभिषा ये तीन भी किसी किसी के मत से मान्य होने से १८ होगये । तिथियां भी रिक्ता के सिवाय सभी मानी जाती हैं और मंगल, शनि के सिवाय सभी दिन श्रेष्ठ हैं । कोई कोई कहते हैं कि बुधभी वर्जित है । पर, यह सर्व मान्य पक्ष नहीं है । बल्कि राजमार्त्तण्ड में बुध का विधान है । भरसक रात मेंही वधू प्रवेश उत्तम कहाता है और पुराने मकान में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हीं, नकि बिल्कुल तुरन्त के वने में, जिसमें गृहप्रवेश भी न हुआ हो। स्थिर संज्ञावाले जो लग्न हैं वृष, सिंह, वृश्चिक और कुम्भ इन्हीं में होना चाहिये। साधारणतया यह भी देख लेना चाहिये कि बुध, शुक्र, गुरु केन्द्र या त्रिकोण में हैं।

चौथ भेजने की रीति है किसी किसी देश में। वह भी विवाह केही नक्षत्र, दिन और तिथि में और लग्न में शुभग्रह रहनेपर तथा उससे सातवें स्थान में कन्या राशि के होनेपर की जाती है। उसी समय पति के घर रवाना की जानी चाहिये।

पुरुष और स्त्री समागम का मुहूर्त्त यह है। तीनों उत्तरा. रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, मृगशिरा, चित्रा, स्वाती, धनिष्ठा इन नक्षत्रों में और लग्न से १, ४. ७, १० में कन्या, मिथुन, मीन और वृष राशियों के होने पर और शुभ ग्रहों से युक्त रहने पर तथा पाप ग्रहों के ६, १०, ११ में रहने पर और ७ वें पर शुभग्रह की दृष्टि रहने पर चन्द्र. बुध, गुरु, शुक्र, वार को शुभ योग और करण में ४, ८, ९, १४, १५ तिथियों को छोड़ शेष में स्त्री समागम करना उचित है।

मृगशिरा, तीनों उत्तरा, पुष्य, कृत्तिका, ज्येष्ठा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, रोहिणी, विशाखा, रेवती नक्षत्र; मंगल. रवि से भिन्नदिन और शुभ तिथि में नवीन वधू रसोई का आरंभ करे। यह काम स्थिर लग्न में, चतुर्थ स्थान के शुद्ध रहने पर और सातवें के बलवान होने पर तथा १० वें में किसी ग्रह के न रहने पर ही होना चाहिये।

स्थिर लग्न में और चन्द्र, गुरु, बुध, शुक्रवार को अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, में स्त्रियां यदि चूड़ी पहनें तो शुभ और रोहिणी, तीनों उत्तरा, पुनर्वसु. पुष्य में पहनें तो पति के लिये अशुभ होता है और उसकी मृत्यु होती है। इसलिये उक्त नक्षत्र और लग्नादि मेंही भूषण और वस्त्रादि भी धारण करें।

विवाह के बाद पति के घर आकर पुनः पिता के घर जाने के वर्ष भर के भीतर यदि वधू का द्विरागमन न हो जावे. तो फिर तीसरे, पांचवें, वर्षों मेंही होना चाहिये, न कि दूसरे, चौथे में। पांच वर्ष के बाद तो कोई नियम नहीं है, जैसे वधू प्रवेश में भी नहीं है। परन्तु विन्ध्या-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बल से दक्षिण के देशों मेंहीं समवर्ष का दोष माना जाता है। उत्तर में तो समवर्ष में होता है। अथवा यदि विवाह के समय स्त्री और पुरुष का ग्रन्थिबन्धन होगया हो, तब भी समवर्ष में द्विरागमन या वधू प्रवेश करने में हर्ज नहीं मानते। द्विरागमन वृश्चिक, कुम्भ और मेष पर सूर्य रहने पर ही होता है। जब सूर्य और गुरु शुभ स्थान में रहें तभी चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्रवार को मिथुन, मीन, कन्या, तुला, वृष लग्नों में अश्विनी, पुष्य, हस्त, तीनों उत्तरा, रोहिणी, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती, मूल, मृगशिरा, चित्रा, अनुराधा, रेवती नक्षत्र होने पर भरसक शुक्लपक्ष में शुक्र के दहिने और सन्मुख न रहने पर द्विरागम करे। क्योंकि यदि सन्मुख और दहिने शुक्र के होने पर द्विरागम हो तो पति मर जाता है। यदि गर्भिणी यात्रा करे तो उसका गर्भही गिर जाता है और यदि छोटा बच्चा स्वयं या माता के साथ यात्रा करे तो उसकी मृत्यु हो जाती है। यद्यपि सन्मुख और दहिने शुक्र साधारणतः यात्रा में सभी को वर्जित है। मगर, विशेष यात्रा में और खासकर राजा की यात्रा में उसका अधिक विचार होता है। इसी तरह यदि युवती स्त्री गर्भिणी होनेपर या छोटे बच्चेके साथ दूसरी, तीसरी बार भी जावे तब भी अच्छा नहीं है और केवल बच्चे का जाना भी खराब है और द्विरागमन में तो खराब हैही।

परन्तु सन्मुख और दहिने शुक्र के दोष से बचने के भी बहुत से उपाय आवश्यकता होने पर प्राचीन आचार्यों ने बताये हैं। उनमें पहला यह है कि पिता के ही घर में कन्या युवती होगई और उसकी युवावस्था के चिन्ह प्रगट होगये तो शुक्र का विचार नहीं होता। दूसरी यह है कि भृगु, अंगिरा, वत्स, वसिष्ठ, कश्यप, अत्रि और भरद्वाज के वंश (गोत्र) में उत्पन्न पुरुषों कोभी यह दोष नहीं होता। अतः यदि वरी का गोत्र इनमें कोई होतो हर्ज नहीं होता। नगर में प्रवेश करने, देश और ग्राम में राजा और दुर्भिक्षादिके उपद्रव से दूसरी जगह जाने, विवाह के लिये जाने, देवयात्रा और तीर्थयात्रा करने और राजा की पीड़ा होने पर यात्रा करने में भी यात्रा में सन्मुख, दक्षिण शुक्र का दोष नहीं होता। वधू प्रवेश में दोषाभाव तो पहले ही कहचुके हैं। इसके सिवाय दीवाली के दिन या कोई विशेष दीपोत्सव करके भी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वधू को लाने में शुक्र दोष नहीं होता। इसके सिवाय पति के साथ जाने में भी शुक्र दोष का अभाव किसी किसी ने लिखा है। एक उपाय यह भी लिखा है कि रेवती के आरंभ से लेकर कृत्तिका के पहले चरण पर जब तक चन्द्रमा रहे, अर्थात् प्रायः सवातीन दिन, तब तक शुक्र अन्धा माना जाता है और इसीलिये उसका दोष नहीं होता।

जिस तरह द्विरागमन में शुक्र का विचार है उसी तरह पिता के घर से पति के घर तीसरी बार आने में राहुका विचार होता है। यद्यपि शुक्र का विचार तो यात्रा के लिये सर्व साधारण है, विशेष-कर गर्भिणी या बालकवाली के लिये। तथापि तीसरी बार जाने में विशेष विचार राहु का ही होता है। इसी राहु विचार को द्व्यङ्ग विचार कहते हैं। कारण, राहु और केतु एक ही शरीर के टुकड़े हैं। इसी से वह द्व्यङ्ग कहाता है, जिसका शब्दार्थ है दो टुकड़ों में बँटा या दो अंगवाला। अस्तु, राहु भी सामने और दहिने बुरा है और बायें एवं पीछे शुभ। सामने रहने से पतिका नाश और दहिने पुत्र का नाश करता है। जिस तरह चन्द्रमा मेष, वृष, मिथुन, कर्क आदि राशियों में क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर रहता है ठीक वही दशा राहु की है। विशेषता इतनी हीं है कि चन्द्रमा स्वयं राशिपर जाने से ही उन उन दिशाओं में जाता है। मगर राहु स्वयं तो चाहे किसी भी राशि पर क्यों न हो. किन्तु सूर्य जिस राशि पर जिस महीने में होगा उसी हिसाब से राहु पूर्व, दक्षिणादि दिशाओं में रहेगा। इस तरह मेष, सिंह, धन के सूर्य होने पर पूर्व में; वृष, कन्या, मकर के होने पर दक्षिण; मिथुन, कन्या, कुम्भ के होने पर पश्चिम और कर्क, वृश्चिक, मीन के होने पर उत्तर दिशा में राहु का वास रहा करता है। इसी लिये उसी विचार से तृतीयगमन (तेंगा) करना चाहिये। साधारणतः लोग शुक्र का विचार इसमें नहीं करते। परन्तु जहां तक संभव हो वह भी करना चाहिये, खास कर बालक वाली और गर्भवती के बारे में। यह तृतीय गमन मंगल और शनिवार में नहीं होता और अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, मूल, श्रवण, धनिष्ठा, रेवती इन्हीं नक्षत्रों में किया जाता है। यह भी स्थिर लग्नों में हीं होता है। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यह तृतीय गमन विशेष रूप से धनु, कर्क, मीन, सिंह और कन्या राशि के सूर्य रहने पर ही होता है ।

४–उपनयन, चौलादि ।

ब्राह्मणों के उपनयन (जनेऊ) का मुख्य समय जन्म से या गर्भ में आने से पांचवां या आठवां वर्ष, क्षत्रिय का ६ ठाँ और ११ वाँ, वैश्य का ८ वां और १२ वां है । परन्तु काम चलाऊ या गौण समय क्रमशः १६, २२, २४ वर्ष तक है और उसके बाद तो पतित हो जाते हैं । इसमें भी ५, ६, ८ वर्ष तो तीनों वर्णों के लिये क्रमशः ब्रह्म तेज, शारीरिक बल और धन प्राप्ति की कामना के होने पर माने गये हैं । उपनयन भी उत्तरायण में हीं और शुक्र, गुरु आदि के उदय रहने पर ही होता है, जैसा कि पहले ही कह चुके हैं । ब्राह्मण के उपनयन के मुख्य मास चैत, वैशाख, क्षत्रिय के ज्येष्ठ, आषाढ़ और वैश्यके आश्विन, कार्तिक हैं । यद्यपि आश्विन, कार्तिक दक्षिणायन में हैं । तथापि उत्तरायण औरदक्षिणायन का विचार साधारण महीनों के ही लिये है, नकि विशेष के लिये और तीनों वर्णों के उपनयन के साधारण महीने किसी के मत से माघ से ज्येष्ठ तक पांच हैं और किसी के मत से आषाढ़ के विष्णु शयन से पूर्व के दिनों को भी लेकर छ हैं । वे लोग आषाढ़ के उतने दिनों को भी तभी मानते हैं जब दक्षिणायन न हो जावे । लेकिन यदि संयोग वश आषाढ़ में भी कर्क संक्रान्ति होने से दक्षिणायन हो जावे तो तभी तक के दिन लिये जायँगे जब तक मिथुन की संक्रान्ति रहे । इस ऊपर के कथन से स्पष्ट है कि चैत्र में भी उपनयन होता है हांलाकि विवाहादि में वह निषिद्ध है । यह भी लिखा है कि चैत्र में उपनयन होने से वेद वेदांग का यथार्थ जानकार और मेधावी होता है । यह भी जान लेना चाहिये कि उपनयन में केवल चान्द्र मास ही लिये जाते हैं । अतएव सर्वत्र चान्द्र मासों को ही लिखा है । किसी ने भी सौर मास का नाम नहीं लिया है । इस लिये यह भी नहीं कह सकते कि चैत्र मास में जब तक कुंभ या मेष का सूर्य रहे तभी तक उपनयन होगा । जब सौर मास की बात ही नहीं तो फिर संक्रान्ति का क्या सवाल है ? यह भी तो जान लेना चाहिये कि माघ से ज्येष्ठ या आषाढ़ तक के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

लगा तार ५ या ६ महीने गिनाये हैं और 'माघआदि पांच या आषाढ़ आदि छ' यह स्पष्ट ही लिखा भी है। मुहूर्त्त चिन्तामणि में भी उपनयन के बाद छुरिकाबंधन कर्म में स्पष्टही लिखा है कि चैत्र के अतिरिक्त जो उपनयन के शेष महीने हैं उन्हीं में छुरिकाबन्धन करना चाहिये। पीयूषधारा में भी यही अर्थ किया है और उपनयन में चैत्र के बारे में कई आचार्यों की सम्मति देकर चैत्रको गिनाया है। इस से स्पष्ट है कि उपनयन के लिये चत्र निन्दित नहीं है। ब्राह्मणके लिये वसन्त लिखा है और उस में भी चैत्र आ जाताही है। इस से स्पष्ट है कि जिस तरह उत्तरायण के बाहर दक्षिणायन में भी वैश्य के विशेष मासों का उपनयन के लिये वर्णन है, हालांकि सामान्य विधि दक्षिणायन के विरुद्ध है। ठीक उसी तरह सामान्य विधि शुभ कार्यों के लिये यद्यपि चैत्र में नहीं है, मगर उपनयन के लिये है। इसीलिये द्व्यंग प्रकरण में धनु और मीन की संक्रान्ति और श्रावण आदि मासों में भी तृतीय आगमन लिखा है। अस्तु, किसी किसीने लिखा है कि आर्द्रा से लेकर स्वाती के अन्त तक के दसनक्षत्रों पर जब तक सूर्य रहे तभी तक विवाह, चौल, उपनयन, देव प्रतिष्ठादि शुभ कार्य करना चाहिये।

उपनयन के लिये साधारणतः भरणी, कृतिका, मघा, विशाखा, ज्येष्ठा इन पांच को छोड़ कर शेष २२ नक्षत्र लिखे गये हैं। और शनि, भौमवारों को छोड़ कर शेष ५ दिन तथा शुक्ल पक्षकी २, ३, ५, १०, ११, १२ और कृष्ण पक्षकी १, २, ३, ५ तिथियां बताई गई हैं। दिन के तीन विभाग करके उन्हें क्रमशः पूर्वाह्न मध्याह्न और अपराह्न कहते हैं। इन में अपराह्न उपनयन के लिये निषिद्ध है। दो में भी भरसक पूर्वाह्न में ही करना चाहिये। और लग्न न मिलने पर मध्याह्न में। परन्तु अपराह्न तो सर्वथा वर्जित है। उपनयन के मुख्य नक्षत्र अश्विनी, रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, चित्रा, स्वाती, तीनोंउत्तरा, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, ये चौदह ही माने गये हैं और शेष तेरह में उपनयन की निन्दा की गई है। विशेष रूप से ब्राह्मण को पुनर्वसु में उपनयन करने से मना किया है, चाहे और चन्द्र, तारा, ग्रहादि अनुकूलही क्यों न हों। हां, क्षत्रिय, वैश्य पुनर्वसु में कर सकते हैं। परन्तु जब इन १४ नक्षत्रों में काम न चलसके और उपनयन का काल बीतने

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के कारण वटुक के व्रात्य या पतित होने की संभावना हो तो उन
लिये आठ नक्षत्रों में भी कर सकते हैं जो ऊपर कहे गये हैं। मगर
भरणी आदि उक्त ५ नक्षत्र हो सर्वथा त्याज्य हैं। यह भी स्मरण
रखना चाहिये कि इन विहित नक्षत्रों में भी पूर्वोक्त विवाह की ही
तरह वेध दोष देख कर उसे बचाना चाहिये। विवाह के वेध दोष
में इसमें इतनाहीं अन्तर है कि वह पञ्चशलाका चक्र में देखा जाता
है और यह सप्तशलाका में। इसी प्रकार विवाह के युति, लत्ता, पात
आदि दोषों का भी विचार किया जाता है। क्योंकि वे साधारणतः
सभी शुभ कार्यों के लिये वर्जित हैं। पांच दिनों में भी बुध, गुरु,
शुक्रवार उत्तम और सोम, रवि मध्यम हैं। यह भी लिखा है कि
चन्द्र वार, केवल शुक्ल पक्षमें ही लिया जाना चाहिये न कि कृष्ण
पक्ष में भी। इसी प्रकार यदि बुध अस्त हो या पाप ग्रहों से युक्त
हो तो उसका भी दिन नहीं लेना चाहिये। यद्यपि कहीं कहीं क्रूर
ग्रहों के दिन निषिद्ध हैं और सूर्य भी वैसा ही है। तथापि यदि
सूर्य बलवान हो तो रविवार में उपनयन करना चाहिये और दुर्बल
हो तो न करना चाहिये। इसी प्रकार सामवेदियों के लिये मंगल
वार अत्यंत प्रशस्त लिखा है और जो वटुक जिस शाखाका हो उस
शाखा के स्वामी का दिन, बल और लग्न ये तीनों उसके लिये अत्यंत
प्रशस्त है। शाखा ओं के स्वामी ग्रहों का वर्णन आगे है। वैशाख
और चैत की शुक्ल सप्तमी और त्रयोदशी में भी उपनयन होता है
और माघ की सप्तमी में भी।

ब्राह्मणादि चारों वर्णों और ऋक् आदि चारों वेदों के भी स्वामी
अलग अलग ग्रह हैं। ब्राह्मण के स्वामी गुरु, शुक्र; क्षत्रिय के रवि,
भौम; वैश्य का चन्द्र और सूर्य का बुध है। इसी तरह ऋग्वेद का
स्वामी गुरु, यजुर्वेद का शुक्र, सामवेद का भौम और अथर्व वेद
का बुध है। इस तरह शाखा और वर्ण के स्वामी के दिन और
लग्न में उपनयन दुर्लभ माना जाता है। दृष्टान्त के लिये ऋग्वेद
का स्वामी गुरु है। इस लिये गुरुवार और बृहस्पति के लग्न धन
और मीन में उपनयन अत्यंत श्रेष्ठ है। इसी प्रकार शाखाधिपति
को बलवान होना चाहिये, तभी उपनयन श्रेष्ठ होगा। परन्तु सभी
के लिये सूर्य, चन्द्र और गुरु को बलवान होना चाहिये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

अतः जब तक वे बलवान न हों तब तक उपनयन अत्युत्तम नहीं माना जाता। यदि तीनों बलवान होंगे तो सर्वोत्तम होगा, दो में मध्यम और एक में निकृष्ट। सो भी गुरु का बल विशेष रूप से सभी वर्णों के लिये होना चाहिये। क्यों कि वही विद्या दाता माने जाते हैं। परन्तु यदि गुरु और शुक्र और शाखा तथा वर्ण के स्वामी इनमें से एक या सभी अपने नीच स्थान या उसके नवांश में, या शत्रु गृह और उसके नवांश में हों तो वटुक वेद शास्त्र शून्य और ब्रह्मचर्य भ्रष्ट होजाता है। परन्तु यदि वही ग्रह अपने नवांश में हीं रहते हुए अपने नीच या शत्रु के स्थान में हों या अपने शत्रु और अधिशत्रु आदि के स्थान में रहकर भी अपने उच्च के नवांश में हों तो दोष नहीं होता। दृष्टान्त के लिये शुक्र को ले सकते हैं। उसका नीच कन्या है। मगर कन्या राशि में भी जो वृष का अंश है वह शुक्र का ही है इसलिये कन्या के वृष नवांश में रहने पर शुक्र दोष न होगा। इसी तरह उसके शत्रु रवि और चन्द्र हैं और उनके स्थान सिंह और कर्क हैं। उन में भी जो तुला और वृष का नवांश है वह शुक्र के दोष का नाशक है। वहां रह कर शत्रु स्थान दोष शुक्र का न होगा। इसी प्रकार शुक्र का उच्च मीन है। इसलिये मीन के नवांश जो कर्क और तुला में हैं उनमें जाने पर भी नीच और शत्रु के स्थान का दोष शुक्र को नहीं लगता। यह भी याद रखना होगा कि यद्यपि जन्म के मास, तिथि, लग्न, वार और नक्षत्र में शुभकार्य विवाहादि नहीं होते। तथापि ब्राह्मण के बालक का उपनयन यदि इनमें हो तो वह प्रौढ़ विद्वान होता है और क्षत्रिय वैश्य भी ऐसे ही होते हैं। मगर उन के लिये एक शर्त्त है और वह यह है कि उनके प्रथम गर्भ के बालकों का उपनयन जन्ममासादि में नहीं होना चाहिये। किन्तु द्वितीय आदि गर्भ के ही बालकों का। परन्तु ब्राह्मण के तो प्रथम गर्भ के पुत्र का भी निषेध नहीं है।

लग्न के विचार में यह देखना चाहिये कि जिस लग्न में उपनयन करते हैं उसका स्वामी और शुक्र, गुरु, चन्द्र छठें या आठवें स्थान में तो नहीं हैं। क्योंकि ऐसा होने से मृत्यु होती है। इसी प्रकार यदि चन्द्र और शुक्र बारहवें हों तो भी मृत्यु कारक ही होते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है। यदि पापग्रह लग्न से ५ और ८ में हों तो भी निस्सन्देह मृत्यु होती है। अतः यदि पाप ग्रह ३, ६, ११ में और शुभ ग्रह ६, ८, १२ के अतिरिक्त शेष स्थानों में हों और यदि पूर्ण (शुक्ल पक्षीय) चन्द्र वृष और कर्क राशि का होकर लग्न में हो तभी शुभ होता है। यदि वटुक के २, ५, ७, ९, ११ वें गुरु हो तो शुभ फल दायक और बलवान होता है। यह बात जन्म लग्न कुण्डली से देखीजावे। १, ३, ६, १० में रहने पर गुरु पूजा चाहता है। विना पूजा के अशुभ होता है और ४, ८, १२ में तो सदा निन्दित है। अर्थात् विवाह में जिस तरह गुरु का बल देखा जाता है उसी तरह यहां भी है और उस से इसमें कुछ भी अन्तर नहीं है। यह भी लिखा है कि ४, ८, १२ में दो तीन गुना पूजा करने से गुरु का दोष किसी प्रकार हट जाता है, यही सम्प्रदाय है। परन्तु यदि ४, ८, १२ स्थान में रहने पर भी गुरु कर्क, धन और मीन में हो; मेष या वृष में हो या किसी भी राशि के अपने नवांश यानी धन, मीन के नवांश में हो। इसी प्रकार वर्गोत्तम में यानी वृष आदिराशि के वृष आदिनवांश में हो और पूर्वोक्त कर्क आदि के नवांश में भी हो तो भी शुभ है। परन्तु यदि शुभ भी हो यानी २, ५ आदि स्थानों में भी हो, मगर मकर, मिथुन, कन्या, तुला और वृष राशि का हो तो अशुभ होता है। परन्तु यदि किसी भी प्रकार से ग्रहों की शुद्धि न हो तो चैत्र में मीन राशि के सूर्य होने पर उपनयन करना चाहिये। इसी प्रकार यदि बृहस्पति यदि सूर्य की सिंह राशि के सिंह नवांश में हो या अपनी नीच राशि या उसके नवांश में हो तो भी शुभ है।

कृष्णपक्ष के शेष दस दिनों में, प्रदोष में, अनध्याय में, शनिवार में, रात में, अपराह्न में, प्रातः सन्ध्या में, मेघ गर्जनेपर, और गलग्रह में यानी १३, १४, १५, १, ४, ७, ८, ९ तिथियों में उपनयन नहीं करना चाहिये। यद्यपि प्रदोष रात्रि के आरंभ को कहते हैं। तथापि कुछ सांकेतिक प्रदोष भी माने जाते हैं और उनमें अनध्याय होते हैं और पठन पाठन रुक जाते हैं। एक तो, यही कि जिस दिन शाम को सूर्यास्त के बाद त्रयोदशी हो उस दिन प्रदोष व्रत होता है। इसके सिवाय यदि द्वादशी को आधीरात से पूर्व त्रयोदशी हो-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

जावे, षष्ठी को डेढ़ पहर रात से पहले सप्तमी हो, या तृतीया को एक पहर रात के भीतर चतुर्थी आजावे तो प्रदोष होता है। यह किसी का मत है। दूसरा मत है कि यदि आधीरात के पूर्व नौ दण्ड से पहले ही चतुर्थी हो जावे या आधीरात से पहलेही सप्तमी और त्रयोदशी होजावे तो प्रदोष मानकर उस दिन आधीरात तक न पढ़े। तीसरा मत है कि चतुर्थी में रात को एक पहर, सप्तमी में डेढ़ और त्रयोदशी में आधीरात तक अनध्याय (प्रदोष) रहता है।

लग्नों में जो सूर्य, चन्द्र, आदि सात ग्रहों के नवांश हैं उनमें उपनयन करने से पृथक् पृथक् फल होता है। उन नवांशों के फल क्रमशः ये हैं–क्रूरता, जड़ता, पापाचरण, कुशलता, यजन याजनादि षट्कर्माचरण, यज्ञ करना और मूर्खता। इससे स्पष्ट है कि बुध, गुरु, शुक्र इन ग्रहों की जो राशियां वृष, मिथुन, कन्या, तुला, धन, मीन ये छ हैं, इन्हीं के नवांशों में उपनयन उत्तम है और शेष छ में खराब। यद्यपि चन्द्रमा की राशि जो कर्क है उसका नवांश भी त्याज्य है, तथापि यदि किसी भी राशि में शुभ ग्रह की राशि के नवांश में चन्द्र हो तो उपनयन होनेपर वटुक विद्वान होता है। परन्तु यदि पापग्रहों की राशि मेष, वृश्चिकादि के नवांश में हो तो वह अत्यन्त दरिद्र तथा कर्क के नवांश में हो तो अत्यंत दुःखी होता है। परन्तु श्रवण और पुनर्वसु नक्षत्रों में यदि उपनयन हो तो चन्द्रमा के कर्क के नवांश में रहने पर विद्यार्थी धन, धान्य, समृद्धि युक्त होता है। यदि उपनयन के समय केन्द्र (१, ४, ७, १०) में सूर्य आदि ग्रह हों तो विद्यार्थी क्रमशः राजा का सेवक, व्यापार वाणिज्य का करनेवाला, शस्त्रास्त्र चलानेवाला, अध्यापक, प्रौढ़ विद्वान, धनी और म्लेच्छ का नौकर होता है। यह भी लिखा है कि यदि सूर्य केन्द्र में हो तो विद्यार्थी के वंश का नाश, भौम हो तो शिष्य और आचार्य का नाश, शनि हो तो महारोग और राहु केतु हों तो क्रमशः विद्यार्थी की माता और धन का नाश होता है। इससे स्पष्ट है कि केन्द्र में केवल बुध, गुरु और शुक्र ही उत्तम हैं। लग्न में सूर्य तो कोई उपाय न रहने पर ही लिया जाता हैं। मगर लग्न का चन्द्रमा अच्छा नहीं है। यदि उपनयन के समय शुक्र, गुरु और चन्द्र इन तीन में से किसी के साथ एक स्थान में सूर्य हो तो विद्यार्थी निर्गुण होता

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है भौम हो तो हिंसक और शनि हो तो निर्दय होता है । परन्तु यदि बुध, शुक्र, चन्द्र, गुरु इन चार शुभग्रहों में से किसी के साथ हों तो सब विद्याओं में निपुण होता है । यदि चन्द्रमा वृष, तुला के नवांश में हो और गुरु लग्नमें तथा शुक्र लग्न से ५, ९ स्थान में हो तो वटुक चारों वेदों का ज्ञाता होता है । परन्तु यदि चन्द्र शनि के अर्थात् मकर और कुंभ के नवांश में हो और गुरु लग्न में तथा शुक्र ५, ९ में हो तो अत्यन्त निर्दय होता है । यह भी लिखा है कि यद्यपि उपनयन के लिये सामान्यतः बहुत से नक्षत्र शुभ कहे हैं । फिर भी प्रत्येक वेद वालों के लिये कुछ विशेष नक्षत्र हैं । इस तरह मृगशिरा, आर्द्रा, हस्त, चित्रा, स्वाती, तीनों पूर्वा, मूल ये ९ ऋग्वेदियों के लिये; रोहिणी, मृगशिरा, पुनर्वसु, पुष्य, हस्त, अनुराधा, तीनों उत्तरा, रेवती ये १० यजुर्वेदियों के लिये, अश्विनी, आर्द्रा, हस्त, पुष्य, धनिष्ठा, श्रवण, तीनों उत्तरा ये नौ सामवेदियों के लिये और अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, अनुराधा, पुष्य, पुनर्वसु, धनिष्ठा, रेवती ये ८ अथर्ववेदियों के लिये शुभ हैं । अर्थात् वटु जिस वेदका हो भरसक उसी वेद के नक्षत्रों में उसका उपनयन हो और उसके अभाव में ही अन्य नक्षत्रों में । उपनयन में एक बात और भी जानने योग्य है और यह बात विवाह तथा चौल के लिये भी साधारण है । वह यह है कि यदि उपनयनाद के प्रथम नान्दीश्राद्ध होजाने पर वटुक की माता रजस्वला होगई और दूसरा लग्न ठीक नहीं हो तो लक्ष्मी की पूजारूप शान्ति करके उपनयनादि कर ले । परन्तु, यदि दूसरा लग्न और समय मिलसके तो चौथे दिन माता के शुद्ध होने परही होना चाहिये । लक्ष्मी की पूजा की रीति यह है कि एक मासा सोने की लक्ष्मी की मूर्त्ति बनवा कर और पूर्वोक्त रीति से उसकी प्रतिष्ठा करके श्रीसूक्त से षोडशोपचार पूजा करे और उसी सूक्त कीप्रत्येक ऋचाओं से खीर की आहुति देकर उसीसे लक्ष्मी का अभिषेक करे । अथवा यदि माता एक दिन उपवास कर ले तब भी शुद्ध होजाती है और दोष नहीं होता ।

चौल कर्म गर्भ या जन्म से प्रथम, तीसरे, पाञ्चवें, सातवें आदि विषम वर्षों में ही होता है । इसका समय उत्तरायण है और केवल चैत्र महीना छूट जाता है । १, ४, ६, ८, ९, १२, १४, १५ तिथियों और संक्रान्ति के सिवाय अर्थात् २, ३, ५, ७, १०, ११, १३ तिथियोंमें

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही चौल होता है और सामान्य क्षौर भी इन्हीं में किया जाता है। परन्तु सामान्य क्षौर में ७, १३ भी ग्रलग्रह होने के कारण त्याज्य हैं। सोम, बुध, गुरु, शुक्रवारों में और इन्हीं के नवांशों में यानी कर्क, वृष, मिथुन, कन्या, तुला, धन और मीन के नवांशों में हीं चौल और क्षौर होते हैं। भरसक लग्न भी यही होने चाहियें। कहीं लिखा है कि सोमवार केवल शुक्लपक्ष में हीं शुभ है। परन्तु यह भी लिखा है कि ब्राह्मण के लिये रवि, क्षत्रिय के लिये भौम और वैश्य शूद्रों के लिये शनिवार भी शुभही होता है। लग्नविचार में यह भी है कि जिसका चौल हो उसकी जन्म राशि और जन्म लग्न से चौलका लग्न आठवां या तो होही नहीं, या अगर हो भी तो उसमें शुक्रके सिवाय कोई भी ग्रह न हों। चौलके नक्षत्र हैं अश्विनी, मृगशिरा, हस्त, चित्रा, स्वाती, पुनर्वसु, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, ज्येष्ठा, रेवती। इनके सिवाय जन्मनक्षत्र भी लिया जाता है। यद्यपि वह विवाह, यात्रा आदि में वर्जित है, मगर चौल में नहीं और अन्न प्राशन, उपनयन और अभिषेक मेंही उसका निषेध है। लग्न से ३, ६, ११ स्थानों में क्रूर ग्रहों को रहना चाहिये। यदि केन्द्र में बुध, गुरु, शुक्र हों तो कल्याणकारी होते हैं। मगर यदि क्षीण चन्द्र हो तो मृत्यु; सूर्य हो तो ज्वर; भौम हो तो शस्त्र से मृत्यु और शनि हों तो लंगड़ापन होता है। यदि २, ५, ८, ९, १२ में क्रूर ग्रह हों तो क्षौर ठीक नहीं है। मगर ८ वें को छोड़ शेष में शुभ ग्रह हों तो ठीक है। परन्तु सबसे अधिक विचार पूर्वोक्त तारा का चरना चाहिये और यदि ३, ५, ७ हो तो चौल कभी न करे। यह भी जान लेना चाहिये कि यद्यपि तारा का विचार चौल में विशेष रूप से लिखा है, तथापि तारा का बल कृष्णपक्ष मेंही लिया जाता है। नकि शुक्लपक्ष में भी। हां, यदि शुक्लपक्ष में भी चन्द्रमा दुर्बल हो तब ताराबल अवश्य देखा जायगा। ताराविचार में एक उपाय यह बताया गया है कि यदि जन्मनक्षत्र से चौलादि के करने का नक्षत्र नौ के भीतर हो और वह भी ३, ५, या ७ हो तो समस्त यानी ६० दण्ड तकही अशुभ है। मगर नौ के बाद और १८ के भीतर ३, ५, ७ हो तो क्रमशः आदि, मध्य और अन्त के २० दण्ड अशुभ और शेष शुभ हैं। और जब १८ के बाद ३, ५, ७ हों तो तीनों हीं शुभ हैं। परन्तु यदि इससे भी काम न चले तो ३ के लिये गुड़दान,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

के लिये लवणदान और ७ के लिये सोना और तिलका दान करने से शान्ति लिखी है। यदि चन्द्र ५, ९ स्थानों में हो; वृषराशि में हो; बुध, गुरु, शुक्र के गृह आदि षड्वर्ग में हो; मित्रवर्ग में हो या अपने हीं षड्वर्ग में हो तो भी तारा का दोष नहीं होता। यदि विहित नक्षत्र हों और चन्द्र अपने शुभ स्थानों मेंहो तो भी तारादोष नहीं होता। यदि जिस लड़के का चौल होने को हो वह पांच से कम अवस्था का हो तो उसकी माता के उदर में पांच महीने का गर्भ रहने पर उपनयन हीं होता। हां, गर्भ पांच मास से कम का हो तो कोई हर्ज नहीं। नहीं तो गर्भ की मृत्यु हो जाती है। इसी प्रकार रजस्वला स्त्री के पुत्र का चौलादि कोई भी शुभ कार्य तब तक नहीं होता जब तक वह शुद्ध न होजाय। ज्येष्ठ पुत्र या कन्या का ज्येष्ठमास में, और किसी किसी के मत से अगहन में भी, चौल, विवाहादि शुभ कार्य नहीं होते। इससे यह भी पता लगता है कि द्वितीय पुत्र या कन्या के मंगल कार्य अगहन में होते हैं।

जो लग्न, नक्षत्रादि चौलके लिये हैं वही साधारण क्षौर के भी लिये हैं। क्रूर ग्रहों के दिन शनि, रवि, मंगल को छोड़कर शेष दिनों में करे। क्षौर के नवें दिन पुनः क्षौर न करे। प्रत्येक दिन में क्षौर करनेसे आयु की वृद्धि और ह्रास पूर्व ग्रन्थोंमें लिखे हैं। रविवार में एक मास, भौम में ६मास और शनि में ७मास आयु कम होती है। चन्द्रवार में ७, बुधवार में ५ गुरुवार में १० और शुक्रवार में ११ मास बढ़ती है। इसके सिवाय दुष्ट दिनों में शस्त्र से चोट लगना भी माना है। स्नान, भोजन के बाद भी क्षौर नहीं करना चाहिये। परन्तु यज्ञ, विवाह में आवश्यकता होने पर और मरण होने पर, जेल से बाहर आने पर, तथा राजा के हुक्म से निषिद्ध दिनों में भी क्षौर करना हीं होता है। इसी तरह गर्भिणी स्त्री का पति सात मास का गर्भ हो चुकने पर न तो क्षौर करे, न विदेश या तीर्थयात्रा में जावे, न समुद्रस्नान करे और न श्राद्ध में भोजन या शववहन करे।

बालक के अक्षरारंभ कराने से प्रथम गणेश, विष्णु, सरस्वती और लक्ष्मी की पूजा करके उसे कराना चाहिये। इसके लिये पांचवां वर्ष माना गया है। उत्तरायण में २, ३, ५, १०, ११, १२ तिथियों में; हस्त, पुष्य, अश्विनी, श्रवण, स्वाती, रेवती, पुनर्वसु,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

आर्द्रा, चित्रा, अनुराधा इन नक्षत्रों में; सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार में; मेष, कर्क, तुला, मीन के सिवाय अन्य शुभ लग्नों में अक्षरारंभ कराया जाता है ।

अश्विनी, मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, हस्त, चित्रा, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों पूर्वा, मूल इन सोलह नक्षत्रों में; रवि, बुध, गुरु, शुक्रवार में; २, ३, ५, ६, ११ तिथियों में विद्यारंभ कराना चाहिये । इसके लिये लग्नविचार ऐसा है कि शुभ ग्रहों; १, ४, ५, ७, ९, १० में हों; ८ वें में शुभ अशुभ कोई भी न हों; ३, ६, १०, ११ में अशुभ ग्रह हों । किसी किसी ने रोहिणी, तीनों उत्तरा, रेवती और अनुराधा में भी विद्यारंभ शुभ कहा है । मगर यह धनुर्विद्या केही लिये है । इसी तरह बुध की जो निन्दा की गई है वह भी केवल धनुर्विद्या के ही लिये है। निस्सन्देह विद्यारंभ में गुरुवार सर्वोत्तम है और रवि, बुध, शुक्र मध्यम हैं।

विवाहादि सभी शुभ कर्मों में अंकुरारोपण करने की विधि शास्त्रों में है । यद्यपि यह प्रथा प्रायः लुप्त हो गई है और केवल विजयदशमी के समय यह चाल है कि लोग अंकुर बाँटते हैं । इसीलिये नवरात्र के आरंभ में हीं अंकुर रोपण करते हैं । तथापि विवाहादि सभी शुभ कार्यों में यह होना चाहिये । क्योंकि मांगलिक माना जाता है । इसी लिये उसका भी शुभ मुहूर्त लिखा है, जब वह किया जाता है । केवल गर्भाधान, पुंसवन, सीमन्तोन्नयन, जातकर्म और नामकर्म को छोड़ शेष में यह कृत्य किया जाना चाहिये । वीजोप्तिके जो लग्न, नक्षत्र आगे कहे जाँयगे उन्हीं लग्नों और नक्षत्रों में और शुभग्रहों के दिन में विवाहादि से ३, ५, ७, ९ दिन पूर्व पुण्याहवाचन करके और पताका, तोरणादि से घर का अलंकार करके यह काम करना चाहिये। प्रथम स्त्रियों और बाजा गाजा के साथ घर से ईशान कोन में जाकर बालू मिश्रित शुद्ध मृत्तिका लावे और सूप या मृत्तिका के पात्र में वह मिट्टी रख उसमें जौ, धान, गेहूं आदि अनेक बीजों को डालकर ऊपर पानी डालदे और पुष्पादि से सजा दे । यह काम न तो प्रदोष में करे न रात को और न पूर्वाह्न में । वास्तुशान्ति में तो दिन में ही अंकुरारोपण करते हैं ।

स्त्रियों का प्रथम रजोदर्शन आश्विन, अगहन, माघ, फागुन,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

वैशाख, ज्येष्ठ, श्रावण इन सात महीनों में शुभ और चैत्रादि शेष पांच में अशुभ है । यदि शुक्ल पक्ष में प्रथम रजोदर्शन हो तो उत्तम और कृष्णपक्ष की दशमी तक हो तो मध्यम है। परन्तुदशमी के बाद पांच दिन तक होने से स्त्री वेश्या होती है। सोम, बुध, गुरु शुक्रवार को ही ठीक है, सो भी दिन में ही । इसमें भी विशेषता यह है कि प्रातःकाल ही ठीक है । प्रातःकाल का अर्थ है मध्याह्न से पहले । मध्याह्न और सायाह्न भी निन्दित है । मध्याह्न से पहले होने से धनवती, मध्याह्न में वेश्या, सायंकाल में सब से भोग करने वाली और आधी रात में विधवा होती है। लग्नों में भी जो शुभ ग्रहों के (वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, कन्या, तुला, धन, और मीन) हैं वही शुभ हैं, अथवा किसी भी लग्न में रजोदर्शन हो, मगर उस लग्न में यदि शुभ ग्रह हों या उनकी दृष्टि उस पर हो तो वह शुभ लग्न है । उस में भी यदि पूर्वोक्त सात हों तो अत्युत्तम । यदि कैसा भी अशुभ लग्न हो । मगर उस पर गुरु और शुक्र की दृष्टि पड़ जावे या उस लग्न में वे रहते हों तो शुभ फलदायक ही होता है । नक्षत्रों में भी श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, चित्रा, अनुराधा, मृगशिरा, रेवती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, स्वाती ये उत्तम हैं और मूल, पुनर्वसु, मघा, विशाखा, कृत्तिका ये मध्यम हैं । परन्तु तीनों पूर्वा, भरणी, ज्येष्ठा, आश्लेषा, आर्द्रा ये ७ निन्दित हैं । और क्षौम, नवीन और सफेद वस्त्र पहने रहने पर शुभ है। किसी ने लिखा है कि प्रथम रजोदर्शन के समय यदि वस्त्र पर खून के दो चार आदि सम छींटे हों तो कन्या और विषम हों तो पुत्र की उत्पत्ति होती है। यदि झाड़ू , लकड़ी, तृण, आग, और सूप हाथ में लिये ही रजोदर्शन हो तो वेश्या होती है, और एकान्त में शय्यापर पड़ी हो तो सौभाग्यवती होती है । परन्तु यदि भद्रा, निद्रा, संक्रान्ति अमावस्या, रिक्ता, तीनों संध्यासमय, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी तिथि, वैधृतियोग, रोगावस्था, चन्द्रसूर्यग्रहण, व्यतीपात और महापात, प्रतिपदा और परिघ का पूर्वार्द्ध, इनमें प्रथम रजोदर्शन हो तो अशुभ होता है ।

प्रथम रजोदर्शन के बाद जो स्नान होता है वह इन पूर्वोक्त अशुभ समयों को छोड़कर शेष समय में शुभ तिथि और शुभ दिन में और हस्त, स्वाती, अश्विनी, मृग, अनुराधा, धनिष्ठा, रोहिणी तीनों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उत्तरा और ज्येष्ठा इन ११ नक्षत्रों में होता है। इनमें भी यदि मृग, रेवती, स्वाती, अश्विनी, रोहिणी हस्त, इन छ में स्नान करे तो शीघ्र गर्भ धारण करती है और शेष पांच में देरी से। शतभिषा, आश्लेषा, तीनों पूर्वा ये पांच स्नान के लिये मध्यम श्रेणी की हैं। मगर भरणी, कृत्तिका, मूल, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, मघा, चित्रा, विशाखा, श्रवण, इन १० नक्षत्रों में स्नान करने पर गर्भ धारण होता ही नहीं और ये प्राणनाशक भी हैं।

गर्भाधान में निषिद्ध समयों को बचाना चाहिये। तीनों प्रकार के गण्डान्त, जन्म नक्षत्र से सातवां नक्षत्र, जन्मनक्षत्र, मूल, भरणी, अश्विनी, रेवती, मघा ये पांच नक्षत्र, ग्रहण, पूर्वोक्त पात और वैधृति योग, माता पिता का श्राद्ध दिन, परिघका पूर्वार्द्ध, दिन का समय, जन्मराशि तथा लग्न से आठवां लग्न, पापग्रहों से युक्त लग्न और नक्षत्र, भद्रा, षष्ठी तिथि, पर्व (अष्टमी, चतुर्दशी, अमावास्या, पूर्णिमा, संक्रान्ति) रिक्ता, तीनों सन्ध्या, भौम, रवि, शनिवार और रजोदर्शन से लेकर चार रातें, यही निषिद्ध समय है। शेष रातों में भी यदि पुत्र की इच्छा हो तो विषम रात में करे और कन्या चाहे तो सम रात में करे। इस के लिये शुभ नक्षत्र हैं तीनों उत्तरा, मृग, हस्त, अनुराधा, रोहिणी, स्वाती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, ये ग्यारह। और निषिद्ध नक्षत्र आश्लेषा, मघा रेवती ये तीनही हैं। शेष १३ साधारण हैं। यह भी जान लेना चाहिये कि रजोदर्शन से लेकर चार दिन तक स्त्री स्पर्शयोग्य भी नहीं रहती है। अतएव पांचवें दिन स्नान करने पर ही गर्भाधान होता है। चार दिनों तक एकान्त में पड़ी रहती है और देव पितर आदि के कार्य भी नहीं करती और न स्नान हीं करती है।

साधारणतया गर्भाधान के लग्न वृष, मिथुन, कर्क, सिंह, कन्या, तुला, धन और मीन हैं। परन्तु यदि ग्रहस्थिति ठीक हो तभी। यदि लग्न से १, ४, ५, ७, ९, १०, में शुभ ग्रह और ३, ६, ११ में पाप ग्रह हों और सूर्य, भौम, गुरुकी लग्न पर दृष्टि हो। फिर भी यदि चन्द्रमा विषम राशि मेष, मिथुनादि के नवांश में रहे तभी ठीक है। नहीं तो नहीं।

बालक का जातकर्म और नामकरण पर्व और रिक्ता के अति-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रिक्त तिथियों और ध्रुव, मृदु, क्षिप्र, चर नक्षत्रों में करना चाहिये। यद्यपि जातकर्म तो जन्म के बाद ही नालछेदन से पूर्व ही होता है। अगर यदि किसी कारण से उस समय न हुआ हो तो जब पीछे किया जावे तो इन तिथि नक्षत्रों का विचार किया जाता है। अर्थात् विलम्बित जातकर्म के ही लिये यह नियम है। नामकरण तो बाद को होता ही है। भरसक ग्यारहवें या बारहवें दिनहीं विलम्बित जातकर्म और नामकरण होना चाहिये। यह भी ब्राह्मणों के ही लिये है। क्षत्रियों का तेरहवें दिन, वैश्यों का सोलहवें और शूद्र का ३१ वें दिन होना चाहिये। सारांश, सूतक बीतने पर ही होना ठीक है। यदि नामकरण में भी देर हो जावे तो फिर गुरु, शुक्र और उत्तरायणादि का विचार करके ही करना चाहिये। शुभ दिन और शुभ लग्नों में या उनके नवांशों में करना यह तो अर्थात् सिद्ध ही है।

पुत्र या कन्या के जन्म के बाद प्रसूती को स्नान कराते हैं। हस्त, ज्येष्ठा, पूर्वाफाल्गुनी, स्वाती, धनिष्ठा, रेवती, अनुराधा, मृग, अश्विनी, तीनों उत्तरा, रोहिणी, ये १३ प्रसूती स्नान के लिये उत्तम; आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, भरणी, कृत्तिका, मूल, विशाखा, चित्रा, मघा, श्रवण, ये १० निन्दित और आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा, शतभिषा, पूर्वभाद्रपदा ये चार मध्यम हैं। रवि, भौम, गुरुवार यही तीन श्रेष्ठ हैं। शेष चार खराब हैं। ४, ६, ८, ९, १२, १४ तिथियों में भी स्नान नहीं कराना चाहिये।

भद्रा, वैधृति, पात के सिवाय और रिक्तातिथि के सिवाय शेष योग और तिथियों में और मंगल के अतिरिक्त शेष दिनों तथा मृदु, ध्रुव, क्षिप्र नक्षत्रों में नवीन उत्पन्न बालक बालिका को स्तनपान का आरंभ करना चाहिये। मंगल के अतिरिक्त वारों में शनि साधारण और शेष उत्तम माने जाते हैं।

प्रसूती को काढ़ा वगैरः पिलाने के मुहूर्त्त वही हैं जो साधारणतया औषधिसेवन के। औषधिसेवन अश्विनी, पुष्य, हस्त, चित्रा, मृग, अनुराधा, रेवती, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, स्वाती, पुनर्वसु, मूल इन १३ नक्षत्रों में; रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्रवारों में; मिथुन, कन्या, धन, मीन लग्नों में चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र इन ग्रहों के रहने पर; लग्न से ७, ८, १२ स्थानों में किसी ग्रह के न रहने पर और जन्म

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

नक्षत्र को छोड़ कर तथा रिक्ता और अमावास्या से अन्य तिथियों में करना चाहिये ।

यदि जन्म के प्रथम मास में ही बालक के दांत जम जायँ तो स्वयं मर जाता है । दूसरे में छोटे भाई की मृत्यु, तीसरे में बहिन की, चौथे में माता की और पांचवें में जेठ भाई की मृत्यु होती है । परन्तु छठें से लेकर ग्यारह महीने के भीतर दांत निकलने का फल उत्तम है और वह क्रमशः इस तरह है—छठें में बहुत सुख, सातवें में पिता से सुख, आठवें में शरीर की पुष्टता, नवें में लक्ष्मी, दसवें में सुख और ग्यारहवें में ज्यादा सुख। यदि दांत के साथही जन्म हो तो स्वयं उसकी और माता, पिता और भाई की भी मृत्यु होती है। इसी प्रकार यदि पहले ऊपर वाले ही दांत जमें तो भी उसकी और उसके पिता माता आदि की मौत होती है ।

जन्म के बाद तीसरे या चौथे महीने अथवा १२ वें दिन घर से बाहर निकालते हैं । इसे निष्क्रमण संस्कार कहते हैं । इससे पहले बालक बाहर द्वार वगैरः पर नहीं लाया जाता । इसके लिये शुक्लपक्ष समूचा और कृष्णपक्षकी दशमी तककी तिथियां साधारणतः शुभहैं। इनमें भी ४, ६, ८, ९, १२, १४ ये वर्जित हैं । उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, उत्तराषाढ़ा, श्रवण, धनिष्ठा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, अश्विनी, अनुराधा, पुनर्वसु, पुष्य, रोहिणी ये १४ नक्षत्र और सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार में करना चाहिये। विशेषरूप से मूल, आश्लेषा, कृत्तिका, विशाखा, तीनों पूर्वा, मघा, भरणी इन नक्षत्रों को बचाना चाहिये । शेष साधारण हैं । मेष, वृश्चिक, मीन लग्नों को भी बचाना होगा । शुभ ग्रहों के जो लग्न हैं वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धन और मीन इन में मीन को छोड़कर शेष छ में ही भरसक करना ठीक है। यह भी देखना होगा कि शुभ ग्रह १, ४, ५, ७, ९, १० में और पाप ग्रह ३, ६, ११ में हैं । बालक को बाहर ले जाना मामा का काम है।

बालक को प्रथम बार अन्न खिलाने को अन्नप्राशन कहते हैं। १, ४, ६, ८, ९, ११, १२, १४, अमावास्या (३०), और तिथि क्षय को और शनि, रवि, भौम वारों को छोड़ कर शेष तिथियों और दिनों में कराना चाहिये । बालकों का छ महीने से लेकर ६, ८, १० इत्यादि सम मास में और कन्याओं का ५ से लेकर ५, ७ इत्यादि विषम मास

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

में अन्नप्राशन होता है। चर, स्थिर, मृदु और क्षिप्र संज्ञक नक्षत्रों में ही कराया जाता है । मेष, वृश्चिक, मीन के सिवाय शेष महीनों में कराना चाहिये । मगर यह देखना होगा कि कहीं जन्म राशि और जन्म लग्न से आठवां स्थान हीं तो लग्न नहीं है और यदि अष्टम लग्न नहीं है तो अष्टम लग्न का जो नवांश है वह तो नहीं है। यदि अष्टम लग्न या उसके नवांश का लग्न हो तो उसमें अन्नप्राशन न होगा। मगर गुरु, शुक्र का विचार इन में नहीं किया जाता । ग्रह स्थिति इस प्रकार देखी जाय । लग्न से १, ३, ४, ५, ७, ९ में शुभग्रह और ३, ६, ११ में पापग्रह हों और १० वां ग्रहों से रहित हो और चन्द्रमा १, ६, ८ में न हो । परन्तु यदि पूर्ण चन्द्र लग्न में हो तो कोई दोष नहीं है, वह शुभ होता है । यह भी लिखा है कि यदि शुक्र ७ वें, मंगल ८ वें बुध ९ वें स्थान में होंतो मरण कारक होते हैं ।

बालकों के कान छिदाने को कर्णवेध कहते हैं। यह धन और मीन के सूर्य को छोड़ कर और कार्त्तिक में विष्णु उत्थान के बाद अर्थात् विष्णुशयनी से विष्णुप्रबोधिनी एकादशी तक के चार महीनों को छोड़कर शेष महीनों में वह कराया जाता है। मगर यदि वे महीने जन्म महीने से छठें, सातवें और आठवें हों तभी। इसी प्रकार जन्म से १, ३, आदि विषम वर्षों में ही कराना चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि भादों में जन्म हो तो उससे छठें माघ महीने में कर्णवेध होगा । जन्मनक्षत्र और उससे १० वें, १९ वें, नक्षत्रों में भी नहीं कराना चाहिये । यदि जन्मदिन से १२ वें या १६ वें दिन हो जावें तो भी ठीक नहीं है। सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार को करना ठीक है। नक्षत्रों में श्रवण, धनिष्ठा, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृग, रेवती अश्विनी, पुष्य, हस्त और तीनों उत्तरा इन तेरह नक्षत्रों में करना चाहिये । लग्न विचार में यह देखना होगा कि लग्न से ८ वां स्थान भी ग्रहों से रहित है । यद्यपि एक के मत से वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धन, मीन यह सात लग्न उत्तम; मेष और मकर मध्यम और सिंह, वृश्चिक, कुंभ निन्दित हैं । तथापि मुहूर्त्तचिन्तामणि में लिखा है कि वृष, तुला, धन, मीन इन चार लग्नों में जिस से १, ४, ५, ७, ९, १०, ११ में शुभ ग्रह और ३, ६, ११ में पापग्रह हों और गुरु १, ४, ७, १० में हो उसी लग्न में कर्णवेध शुभ होता है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५–यात्रा और कृषि ।

गृहस्थजीवन में यात्रा का प्रश्न भी कम उपयोगी नहीं है। इस का तो सदाही काम पड़ा करता है और बार बार साधारण से साधारण गृहस्थ भी इसी लिये पुरोहितों के पास दौड़ दौड़ कर जाया करते हैं। अतएव यात्रोपयोगी मुख्य मुख्य बातों का निरूपण करके कृषि सम्बन्धी बातों का दिग्दर्शन करावेंगे। यात्रा दो प्रकार की होती है, समरविजय यात्रा और सामान्य यात्रा। शत्रु के विजय के लिये जो यात्रा की जाती है वह समरविजययात्रा है और साधारणतया किसी कार्यवश, धनादि कमाने के लिये या तीर्थादि के लिये की गई यात्रा सामान्य यात्रा कहाती है। दोनों में ही लग्न, मुहूर्त्तादि के कारण फल में देर, शीघ्रता या अभाव की संभावना रहती है। इस लिये लग्न, मुहूर्त्तादि का विचार किये विना यात्रा ठीक नहीं है। परन्तु साधारणतया यह आरंभ में ही जान लेना चाहिये कि यदि एक ही दिन में किसी स्थान से चलकर दूसरे स्थान पर पहुंच जाने की बात हो तो नक्षत्र, नक्षत्र का शूल, वार (दिक्) शूल, योगिनी और शुक्र आदि सभी बातों का विचार यात्रा के लिये किया ही नहीं जाता। हां, ग्राम में यदि कोई विशेष कार्य के लिये प्रवेश करना हो तो प्रवेश के लग्न, मुहूर्त्तादि का विचार अवश्य करना चाहिये। परन्तु साधारण यात्रा में तो प्रवेश विचार की भी आवश्यकता है नहीं। यह भी जान लेना चाहिये कि यदि एकही दिन के भीतर कहीं जाकर वापस आजाना हो तो भी यात्रा का विचार नहीं करके साधारण भद्रा आदि दोषों काहो विचार कर लेना ठीक है।

यात्रा का फल बताने की सामान्य रीति यह है कि फल पूछने वाले पुरुष से यात्रा करने वाले की जन्मकुण्डली जानकर ग्रह-स्थिति पहले देख ले। पीछे फल कहे और यात्रा का लग्न बतावे। मगर यदि केवल राशि का नाम मालूम हो और जन्म का लग्न भी ज्ञात हो, मगर ग्रह स्थिति जानने के लिये कुंडली न हो तो प्रश्न के लग्न से ही फल जान लेना चाहिये। अर्थात् जिस लग्न में यात्रा का प्रश्न करे उसी लग्न से विचार करना होगा। और साधारण रीति

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से यही देखा भी जाता है कि केवल जन्मराशि का ही पता रहता है जन्म लग्न भी कम हीं लोगों को विदित रहता है। ऐसी दशा में यात्रा पूछने या करने के समय यात्रा करने वाले की जन्म की राशि या जन्म का लग्न हीं हो तो शुभ फल होता है। दृष्टान्त के लिये वृष राशि या वृष लग्न में या दूसरे ही मिथुनादि लग्न में जन्म हो तो प्रश्न के समय वृष या मिथुन लग्न रहने पर और यात्रा के समय भी उसके रहने पर शुभ फल होगा। यदि ऐसा न भी हो तो भी यदि जन्म और जन्म लग्न के स्वामी जो शुभ ग्रह हैं उन का ही लग्न हो तो भी ठीक ही होता है। जैसे वृष राशि और मीन लग्न में जन्म हो तो वृष का स्वामी शुक्र और मीन का गुरु ये दोनों ही शुभ ग्रह हैं। ऐसी दशा में शुक्र के तुला और गुरु के धन लग्न में भी यात्रा और यात्राप्रश्न शुभ फल दायक है। यह दोनों बातें न होने पर यदि तीसरी यह बात हो कि जन्मराशि या जन्म लग्न से ३, ६, ११ लग्न में यात्रा या उसका प्रश्न करे तो भी ठीक ही है। जैसे वृष में जन्म हो ता कर्क, तुला, मीन में ठीक होगा। यदि प्रश्नकर्त्ता और विशेष कर राजा के प्रश्न के समय भूमि सुन्दर हो, वहां मंगल पदार्थ हों, प्रश्नकर्त्ता खूब आदर से प्रश्न करे, या मेष, कर्क, तुला, मकर इन चार लग्नों मे से किसी लग्न में प्रश्न करे और उस लग्न में या तो शुभ ग्रह हो या उस पर उसकी दृष्टि हो तो विजय होती है। परन्तु यदि प्रश्न के लग्न में मंगल और चन्द्रमा हों और उसपर शनि की दृष्टि हो; चन्द्रमा लग्न से ७, ८ में हो और सूर्य लग्न में हो; सूर्य ही ७, ८ में और चन्द्रमा लग्न में हो या लग्न से १, ४, ७, ८ में यदि पापग्रह हों तो शीघ्र ही पराजय या नाश और असफलता होती है। इस प्रकार सामान्यतया प्रश्न के लग्न से ही यात्रा के शुभ अशुभ फल का ज्ञान कर लेना चाहिये।

महत्त्वपूर्ण या विजय यात्रा के लिये धन, मेष, सिंह राशि के सूर्य, यानी यही तीन महीने सर्वोत्तम हैं; वृष, मिथुन, कन्या, तुला, मकर, कुंभ इन छ राशियों के मध्यम या साधारण और कर्क, वृश्चिक, मीन के सूर्य निष्फल होते हैं। यह बात मामूली यात्रा के लिये नहीं है। यात्रा के समय सूर्य यदि पीछे रहे तो उत्तम है। सूर्य के पीछे रहने का विचार तो दो प्रकार से है। एक यह कि जिस तरह

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

लग्न से लेकर बारहों राशियों की दिशाये हैं और जिनका विचार प्रथम हीं इसी प्रकरण में कर चुके हैं उसी तरह उन स्थानों पर सूर्य के रहने से वह भी उन्हीं दिशाओं में रहता है। जैसे, लग्न की दिशा पूर्व और उससे चतुर्थ स्थान की उत्तर है। इसलिये यदि लग्न में रहेगा तो पूर्व होगा, और लग्न से चौथे में होगा तो उत्तर रहेगा। बस, पूर्व रहने पर पश्चिम दिशा की और उत्तर रहने पर दक्षिण दिशा की यात्रा उत्तम होगी। कोनों में भी जाने का विचार इसी तरह होगा। २, ३ में ईशान में रहेगा, तो नैऋत्य में यात्रा करेंगे और ५, ६ में वायव्य में रहने पर अग्निकोन में करेंगे। दूसरा प्रकार यह है कि दिन रात के आठ पहरों में पूर्व से आरंभ करके आठ दिशाओं में सूर्य घूमता है। उनमें ५ दिशायें तो हर समय शान्त कही जाती हैं। मगर जिस दिशा से अगली पर जाता है वह दग्ध कहाती है; जिस पर रहता है वह प्रदीप्त या प्रज्वलित कही जाती है और जिस पर जाने को है वह प्रधूमित कहाती है। इस प्रकार जिस दिशा में सूर्य हो उसके सामने की दिशा में यात्रा ठीक है यानी पूर्व में रहने पर पश्चिम इत्यादि क्रम से। इस तरह पृष्ठगामी सूर्य का विचार करने के बाद तारा का भी विचार आवश्यक है और १, ३, ५, ७ तारायें यात्रा में वर्जित हैं। शुक्लपक्षकी पूर्णिमा, प्रतिपदा और कृष्ण की अमावस्या तो निन्दित है ही। मगर दोनों पक्ष की ४, ६, ८, ९, १२, १४ तिथियां भी वर्जित हैं। इसी प्रकार पूर्व दिशाकी यात्रा में सोम, शनिवार और ज्येष्ठा नक्षत्र; दक्षिण में गुरुवार और पूर्वाभाद्रपदा नक्षत्र; पश्चिम में रवि, शुक्रवार और रोहिणी तथा उत्तर में मंगल, बुधवार और उत्तराफाल्गुनी ये वर्जित हैं। अर्थात् इन दिनों में वारशूल और नक्षत्रों में नक्षत्रशूल माने जाते हैं, और साधारण व्यवहार में इसे ही दिक्शूल भी कहते हैं। शूलवार और नक्षत्र की यात्रा का फल मृत्यु लिखी है। वारशूल का परिहार आवश्यक होने पर इस तरह लिखा है। क्रमशः घी, दूध, गुड़, तिल, दही, जौ, उड़द इनको खाने से रविवार आदि के शूल निवृत्त होते हैं। किसी किसीने इन सातों की जगह क्रमसे पान, चन्दन, मिट्टी, फूल, दही, घी, तिल इनको दान देने, खाने या धारण करने से भी वारशूल की निवृत्ति होना माना है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

यात्रा के नक्षत्र अश्विनी, पुनर्वसु, अनुराधा, मृगशिरा, पुष्य, रेवती, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा ये नौ उत्तम हैं। तीनों उत्तरा, शतभिषा, मूल, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, रोहिणी ये दस मध्यम हैं और भरणी, कृत्तिका, स्वाती, विशाखा, चित्रा. आश्लेषा, मघा, आर्द्रा ये आठ निषिद्ध हैं। इसके अतिरिक्त विशेष रूपसे राजा पूर्वाह्न में ध्रुव, मिश्र नक्षत्रों के रहने पर, मध्यान्ह में तीक्ष्ण के रहने पर, अपराह्न में लघु के रहने पर, आधी रात के प्रथम भाग में मत्र के रहने पर, मध्य रात्रि में उग्र नक्षत्रों के रहने पर और रात्रि के तृतीय भाग में चर नक्षत्रों के रहने पर यात्रा न करे। परन्तु मृग, पुष्य, हस्त और श्रवण में चौबीसों घंटे यात्रा शुभ होती है। यह याद रखना चाहिये कि दिनको और रातको तीन तीन हिस्सों में बाँट दिया है। यदि आवश्यक हो तो निषिद्ध या मध्यम नक्षत्रों में यात्रा करने का उपाय यह है कि तीनों पूर्वा में आदि के १६, कृत्तिका में २०, मघा में ११, भरणी में ७, विशाखा, स्वाती, ज्येष्ठा, आश्लेषा में १४ दण्ड छोड़ कर शेष दण्डों में यात्रा कर सकते हैं। किसी का मत है कि कृत्तिका, स्वाती, मघा का पूर्वार्द्ध, भरणी, चित्रा, आश्लेषा का उत्तरार्द्ध छोड़ दे और तीसरे मत से स्वाती, मघा को सम्पूर्ण त्याग दे।

जिस नक्षत्र को छोड़ कर राहुने उसके पूर्व के नक्षत्र पर प्रस्थान किया है, क्योंकि वह वक्री है, उस नक्षत्र के सहित तेरह नक्षत्र जिन्हें राहु भोग चुका है, जीवपक्ष कहाते हैं और शुभ हैं। राहुवाले नक्षत्र से पीछे के १३ मृतपक्ष कहाते हैं और जिस पर राहु हो वह कर्त्तरी कहाता है। राहु के नक्षत्र से पन्द्रहवां ग्रस्त कहाता है। दृष्टान्त के लिये यदि राहु अश्विनी पर हो तो उसके भोगे भरणी से लेकर चित्रा तक के १३ नक्षत्र जीवपक्ष; अश्विनी से १५ वां स्वाती ग्रस्त; अश्विनी कर्त्तरी, और उससे पूर्वके स्वाती तक १३ नक्षत्र मृतपक्ष होंगे। सारांश यह है कि कर्त्तरी राहुका मुख, ग्रस्त पूंछ, मृत अग्रभाग और जीव पृष्ठ भाग हैं। इनमें जीवपक्ष में यात्रा शुभ और मृत में अशुभ स्वतः सिद्ध है। परन्तु यदि सूर्य मृतपक्ष में हो तभी जीवपक्ष में यात्रा शुभ है और यदि सूर्य ही जीवपक्ष में हो तो मृतपक्ष में यात्रा ठीक नहीं होती। हां, यदि सूर्य जीव में हो तो जीव में यात्रा बहुत ही ठीक है। परन्तु सूर्य के मृत में रहने पर अत्यंत बुरी यात्रा मृत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

पक्ष में होती है । इसी तरह मृत नक्षत्रों से ग्रस्त नक्षत्र कुछ अच्छा है और ग्रस्त से भी कर्त्तरी अच्छा है । यह भी जान लेना चाहिये कि जो राजा अन्य पर आक्रमण करता है वह यायी कहाता है और जिस पर आक्रमण होता है वह स्थायी । केवल राजा की ही बात नहीं है, जोही आक्रमण करे वह यायी और जिसपर करे वह स्थायी है । यायी का अर्थ है धावा करने वाला और स्थायी का अर्थ स्थिर है । यायी का स्वामी चन्द्र और स्थायी का रवि है । यदि सूर्य चन्द्र दोनों ही जीवपक्ष में हों तो सन्धि हो जाती है । यदि दोनों मृत पक्ष में हों तो दोनों की हार होती है । यदि केवल रवि जीवपक्ष में हो तो स्थायी की जीत और केवल चन्द्र जीव पक्ष में हो तो यायी की । अर्थात् रवि जीव में और चन्द्र मृत में हो तो स्थायी की जीत और चन्द्र जीव में और रवि मृत में हो तो यायी की जीत होती है । यदि सूर्य कर्तरी में और चन्द्र ग्रस्त में हो तो यायी की थोड़ी सी जीत और स्थायी की बिल्कुल ही नहीं होती । जब दोनों कर्त्तरी में हों तो दोनों की पराजय और जब दोनों ग्रस्त में हो तो भी सन्धि होती है । यह बात केवल राजा के ही लिये नहीं है । व्यापारादि अन्य कार्यों और मंगल कार्यों की यात्रा में भी इसका विचार अवश्य करना चाहिये । यदि चन्द्र जीव में हो तो यात्रा के कार्य के लिये अमृत है और मृत में हो तो जहर है ।

स्वाती, भरणी, आश्लेषा, पुनर्वसु, धनिष्ठा, रेवती, हस्त, रोहिणी, तीनों उत्तरा, अनुराधा ये १२ नक्षत्र; १, ३, ५ आदि विषम तिथि; रवि, चन्द्र, शनि, गुरु, ये चार दिन, ये सभी अलग अलग अकुल कहाते हैं । बुधवार; मूल, शतभिषा, आर्द्रा, अभिजित्, ये चार नक्षत्र; २, ६, १० तिथियां कुलाकुल और तीनों पूर्वा, अश्विनी, पुष्य, मघा, मृग, श्रवण, कृत्तिका, विशाखा, ज्येष्ठा, चित्रा ये १२ नक्षत्र; शुक्र, मंगलवार ४, १२, १४ तिथियां कुल कहाती हैं । यदि अकुल में युद्ध हो या युद्धयात्रा ही हो तो यायी की जीत; कुल में स्थायी की जीत और कुलाकुल में यात्रा होने से दोनों की जीत यानी सन्धि हो जाती है । अन्य कामों में भी ऐसे ही फल जानने चाहियें । जन्मसमय यदि कुल में जन्म हो तो वह बालक कुल का सर्दार होता है; अकुल में दूसरे के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धन का स्वामी और कुलाकुल में साधारण ।

यात्रा में पथिराहुचक्र का भी विचार होता है । धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, इन चार संज्ञाओं में अश्विनी से लेकर अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को इस तरह बाँटते हैं जैसे नाड़ीचक्र में । अर्थात् इन चारों में क्रम से अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, रोहिणी के बाद फिर मृगशिरा, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य उलटे क्रमसे क्रमशः मोक्ष, काम, अर्थ, धर्म में होंगे । पुनः आश्लेषा आदि अश्विनी की ही तरह रहेंगे । इस प्रकार चक्र बन जाने पर एक्र एक में सात सात नक्षत्र होंगे और उनका फल इस तरह देखा जायगा कि यदि सूर्य धर्म में हो तो चन्द्रमा के अर्थ, मोक्ष में रहने पर; सूर्य अर्थ में हो तो चन्द्र के धर्म, मोक्ष में रहने पर; यदि सूर्य काम में हो तो चन्द्र धर्म, अर्थ, मोक्ष में रह कर और यदि सूर्य मोक्ष में हो तो चन्द्र धर्म में रह कर शुभ है । चन्द्र का धर्म आदि में रहने का अर्थ है यात्रा आदि के समय उन नक्षत्रों का रहना । परन्तु यदि इससे विपरीत हो तो अशुभ फल होता है । हां, थोड़ा बहुत उलटफेर होने से मध्यम होगा ।

यात्रा के दिन को रविवार से गिनकर उसकी; तिथि को शुक्ल प्रतिपदा से गिनकर उसकी और अश्विनी से नक्षत्र को गिनकर उसकी संख्या को एक जगह जोड़कर क्रमसे ७, ८, ३ से भाग देने पर यदि प्रथम में शून्य शेष रहे तो अत्यंत दुःखी; दूसरे में शून्य बचे तो धननाश और तीसरे में शून्य बचने पर मृत्यु होती है । तीनों में अंक शेष रहें तो सुख और जय हो; दो में शून्य रहने पर भी मृत्यु ही होती है और तीनों में शून्य का बचना असंभव है । इसीसे नहीं लिखा है ।

मेष आदि राशियों के लिये क्रमशः मेष, कन्या, कुम्भ, सिंह, मकर, मिथुन, धन, वृष, मीन, सिंह, धन, कुम्भ इन राशियों का चन्द्रमा घातचन्द्र कहाता है । इसी को मेष का प्रथम, वृष का पञ्चम इत्यादि भी कहते हैं । इसका अर्थ है मेष से गिनती में पहला ही, वृष से गिनने में पांचवां इत्यादि । इसका विचार विवाह, उपनयन, अन्नप्राशनादि मंगल में तथा तीर्थयात्रा आदि में न होकर केवल राजसेवा (नौकरी), शिकार, वाद विवाद,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

कलह आदि में हीं होता है । मगर इसे भी सब लोग नहीं मानते। पीयूषधारा में इसे निर्मूल लिखा है और कहा है कि इसका विचार केवल दाक्षिणात्यों में हीं होता है । इसीलिये कोई आर्ष वचन इसमें प्रमाणस्वरूप नहीं लिखा है । इसी प्रकार घात तिथि, घात नक्षत्र, और घात वारों को भी निर्मूल ही बताया है । वृष, कन्या, मीन राशि के लिये ५, १०, १५; मिथुन, कर्क को २, ७, १२; वृश्चिक मेष को १, ६, ११; मकर, तुला को ४, ९, १४ और धन, कुम्भ, सिंह को ३, ८, १३ तिथियां घाततिथि कहाती हैं । मकर को भौम; वृष, सिंह, कन्या को शनि; मिथुन को चन्द्र; मेष को रवि; कर्क को बुध; धनु, वृश्चिक, मीन को शुक्र; और कुम्भ, तुला को गुरुवार यही घातवार हैं । इसी तरह मेषादि को क्रमशः मघा, हस्त, स्वाती, अनुराधा, मूल, श्रवण, शतभिषा, रेवती, भरणी, रोहिणी, आर्द्रा, आश्लेषा ये नक्षत्र घात नक्षत्र हैं । ये घाततिथि, वार, नक्षत्र यात्रा, युद्धादि में दाक्षिणात्यों के ही मत से निन्दित हैं। पर निर्मूल हैं ।

१, ९ तिथि को पूर्व में; ३, ११ को अग्नि में; ५, १३ को दक्षिण में; ४, १२ को नैर्ऋत्य में; ६, १४ को पश्चिम में; ७, पूर्णिमा (१५) को वायव्य में; २, १० को उत्तर में; ८, ३० (अमावास्या) को ईशान में योगिनी रहती है और यात्रा में सामने तथा बायें योगिनी ठीक नहीं है; किन्तु दहिने और पीछे । शीघ्रबोधादि में जो बायें और पीछे पीछे शुभ लिखी है वह निर्मूल है ।

यात्रा में काल और उसके पाश (फांसी की रस्सी) का विचार किया जाता है । शनि को काल कहा है और जहां वह रहता है वहीं कालवास माना जाता है । दिन में उत्तर दिशा से आरम्भ करके उलटी रीति से उत्तर, वायव्य, पश्चिम आदि दिशाओं में क्रमशः रवि, सोम, आदि वारों को काल रहता है और काल की दिशा से पांचवीं या सन्मुख की दिशा में उसका पाश रहता है। रात में ठीक इसका उलटा समझना चाहिये । अर्थात् जिधर पाश दिन में रहता है रात में उधर ही काल और जिधर दिन में काल रहता है, रात में उधर ही पाश रहता है । दृष्टान्त केलिये रविवार को दिन में उत्तर काल और दक्षिण पाश रहता है । मगर रात में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दक्षिण काल और उत्तर पाश रहेगा। इन दोनों का विचार युद्ध और साधारण यात्रा में किया जाता है। यदि काल दहिने और पाश बायें रहें तो ठीक और सामने खराब हैं।

परिघ दण्ड का विचार यात्रा में इस तरह है। एक चौकोना या वर्गाकार चक्र बनाकर अग्नि से वायव्य और नैर्ऋत्य से ईशान कोन तक उसके भीतर दो रेखायें खींचकर उसके चार भाग करके पूर्ववाले में कृत्तिका से आश्लेषा तक सात; दक्षिण में मघा से विशाखा तक सात; पश्चिम में अनुराधा से श्रवण तक अभिजित् को मिलाकर सात और धनिष्ठा से भरणी तक सात नक्षत्रों को स्थापित करने पर परिघ दण्ड होता है। जो लकीर अग्नि से वायु कोन तक खिंची है वही वस्तुतः परिघ दण्ड कहाता है। उससे दक्षिण पश्चिम चौदह और उत्तर पूर्व चौदह नक्षत्र हैं। यदि दक्षिण पश्चिम वाले नक्षत्रों में उत्तर या पूर्व और उत्तर पूर्व वाले में दक्षिण या पश्चिम यात्रा करे तो परिघदण्ड को लंघने के कारण यात्रा ठीक नहीं होती। इसलिये उत्तर पूर्व के नक्षत्रों में केवल उधर ही और दक्षिण पश्चिम वालों में दक्षिण पश्चिम हीं यात्रा उत्तम है। उनमें भी जिस दिशा का नक्षत्र जो हो उसमें उधर ही यात्रा अत्युत्तम है और दक्षिण वालों में पश्चिम या पश्चिम वालों में दक्षिण जावे तो अत्युत्तम न होकर उत्तम है। इसी तरह उत्तर और पूर्व वालोंके विषयमें भी समझ लेना चाहिये। प्रत्येक दिशाओं के नक्षत्रों को अलग अलग गिनने का यह भी प्रयोजन है कि गृह प्रवेश के समय जिस दिशा में गृह का द्वार हो उसी दिशा के नक्षत्रों में उस गृह में प्रवेश करना चाहिये, नकि अन्य नक्षत्र में भी। इस बात का ज्ञान तभी हो सकता है जब दिशाओं के नक्षत्रों का ज्ञान रहे। यदि नक्षत्र शूल न हो और जिस दिशा में जाना हो उसदिशा के लग्नों में उनके स्वामी, या शुभ ग्रह हों; शुभ ग्रहों की उनपर दृष्टि हो; उन लग्नों के नवांश ही ठीक हों या होरा द्रेष्काणादिही ठीक हों तो आवश्यकता होने पर परिघ का लंघन भी कियाजाता है। ऐसी दशा में भी जिस दिशा में जाना हो उसी दिशा के लग्न में यात्रा करना चाहिये। नकि अन्य लग्नों में भी। जिस तरह चन्द्रमा की राशियां पूर्व, दक्षिण आदि दिशाओं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

में मानीजाती हैं; ठीक उसी तरह मेष, वृष आदि लग्न भी पूर्व, दक्षिणादि दिशाओं में क्रमशः माने जाते हैं। यद्यपि चारों दिशाओं के नक्षत्रों को ही गिनाया है, तथापि यदि अग्निकोन में जाना हो तो पूर्व के ही नक्षत्रों में जावे। इसी तरह दक्षिणवालों में नैर्ऋत्य में, पश्चिमवालों में वायव्य में और उत्तर वालों में ईशान में यात्रा करे। यह भी जानलेना चाहिये कि अश्विनी, पुष्य, हस्त, अनुराधा ये चार नक्षत्र सभी के मत से चारों दिशाओं के हैं और किसी किसी के मत से मृग, श्रावण, धनिष्ठा और रेवती भी चारों दिशाओं की मानी जाती हैं। अतएव इन चारों या आठों में परिघ दोष लगताही नहीं, चाहे जिस दिशा में जाइये। परन्तु पहले चार तो सदा के लिये हैं और दूसरे चार आवश्यक होने पर ही हैं। यह भी जान लेना चाहिये कि चाहे इन नक्षत्रों में किसी का कहीं निषेध भी हो, मगर चाहे जिस समय इन नक्षत्रों के रहने पर सभी दिशाओं में जासकते हैं। बहुतसे लोग कहते हैं कि अश्विनी आदि उक्त चार नक्षत्रों में चारों ओर चन्द्रमा रहता है। मगर यह बात निर्मूल है। परन्तु एक बात याद रखने की है कि यदि भौमादि कोई ग्रह वक्री हो और लग्न से १, ४, ७, १० (केन्द्र) में हो; उसका नवांश, द्रेष्काण आदि षड्वर्गही लग्न में हो या उसी ग्रह का दिन हो तो ये तीनों दशायें यात्रा के लिये वर्जित है। बलवान ग्रह के वारादि यात्रा के लिये शुभ और अन्य ग्रहों के अशुभ हैं।

यदि सूर्य चन्द्र दोनोंही उत्तरायण में हों तो उत्तर, पूर्व और यदि दक्षिणायन में हों तो दक्षिण पश्चिम यात्रा करे। यदि सूर्य और चन्द्र भिन्न अयन में हों तो जिधर सूर्य हो उधर दिन में और जिधर चन्द्र हो उधर रातमें यात्रा करे। यदि इसके विपरीत करे तो मृत्यु होती है। इसलिये चन्द्र सूर्य के अयन का विचार करके ही विशेष यात्रा करे।

शुक्र का विचार ज़रा विशेष रूपसे ज्योतिष ग्रन्थों में किया है और वह तीन प्रकार से सन्मुख मानकर हरतरह निषिद्ध ठहराया गया है। इनमें भी जिधर उसका उदय हो उधर तो कदापि यात्रा न करे। हां, शेष दो दशाओं में तो आवश्यकता होनेपर यात्रा कर सकते हैं। मगर यदि उन्हें बचा सकें तो और भी उत्तम है। तीनों में पहली

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रीति तो स्पष्ट है और वह यह है कि पञ्चांग और प्रत्यक्ष दर्शन की सहायता से जिस दिशा में उसके प्रत्यक्ष उदय का ज्ञान होता है उधर जानेमें सन्मुख पड़ता है और यही विशेषरूप से वर्जित है। दूसरी रीति दिशा के नक्षत्रों की है। प्रथम जो नक्षत्र जिस दिशा के कहे हैं उन नक्षत्रों पर जानेपर शुक्र उसी दिशा में माना जाता है और यदि उधर यात्रा हो तो सन्मुख होगा। तीसरी रीति यह है कि मेष से कन्या तक उत्तर गोल और तुला से मीन तक दक्षिण गोल कहाता है। अतः जब उत्तर गोल की राशियों में रहेगा तो उत्तर और दक्षिण गोल वालियों में दक्षिण रहेगा और उस समय उधर जाने से सन्मुख होगा। सन्मुख की ही बात नहीं है। यदि शुक्र के वक्री होने, शत्रुस्थान या नीच गृह में जाने, अस्त रहने, शत्रु ग्रह के साथ होने, शत्रु के नवांश में रहने या शत्रु की दृष्टि पड़ने पर यात्रा करे तो लक्ष्मी, आयु और बल की हानि होती है, और यदि राजा ऐसी दशा में शत्रु पर चढ़ाई करे तो शत्रु के हाथ में पड़ जाता है। बुध की भी यही दशा है। वह भी सन्मुख और दहिने ठीक नहीं है। परन्तु शुक्र के सन्मुख रहने पर यदि बुध पीछे हो, या यदि शुक्र ही अपने उच्च स्थान में होकर सन्मुख या गृहादि में हो तो धनप्रद और विजयकारक होता है। यदि मंगल और बुध के सन्मुख यात्रा करे तो भी पराजय ही होती है। परन्तु यह शुक्र, बुध, भौम का विचार मनुष्यों की प्रथम यात्रा और राजा की युद्ध यात्रा ही में कियाजाता है। और यात्राओं में यह दोष नहीं है। ऐसा किसी किसी ने लिखा है।

लग्नों में कुम्भ और उसमें भी कुम्भ का नवांश विशेष रूप से त्याज्य है। फिर वह नवांश यदि दूसरे लग्न में भी हो तो वहां भी त्याज्य है। इसी प्रकार मीन लग्न में या दूसरे लग्न में मीन के नवांश में भी यात्रा न करे। पहले का फल है धन नाश और दूसरे का फल है रास्ता की गड़बड़ी। परन्तु यदि जन्म लग्न या जन्म राशि के स्वामी शुभ ग्रह यात्रा के लग्न में हों तो शुभ है। परन्तु यदि पापग्रह हो तो ठीक नहीं है। यात्राकारी की जन्म राशि और जन्म लग्न से आठवां या शत्रु के जन्मलग्न और राशि से छठां यदि यात्रा लग्न हो, या उसके स्वामी हों यात्रा के लग्न

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE Grant-2

में हों तो यात्राकारी की मृत्यु होती है और यदि जन्म राशि और लग्न से बारहवां लग्न हो तोभी किसी के मत से यात्राकारी का पराजय होता है। मीन, कुम्भ के अतिरिक्त अन्य लग्न का नवांश या चन्द्र लग्न के वर्गोत्तम में ही यात्रा अभीष्ट सिद्धिकारक होती है। नौका की यात्रा करने में विशेष रूप से यह देखा जाता है कि जल राशियों या उनके नवांश में ही वह यात्रा होजाय। यदि दिशाओं के ही लग्नों में उन उन दिशाओं में यात्रा कीजावे तो विजय और अर्थ की प्राप्ति हो। परन्तु जिस दिशा का लग्न हो ठीक उसकी विपरीत दिशा में यात्रा करने से हानि, नाश और शत्रु से भय होती है। अतः भरसक उसी लग्न में ग्रह स्थिति देखकर अपनी अपनी दिशा मेंही यात्रा ठीक है। यात्राकारी के जन्म की राशि यदि शुभ ग्रह युक्त हो तो वह; यात्राकारी के शत्रु की राशि या जन्म लग्न से आठवीं जो राशि हो वह; या सूर्य की राशि से द्वितीय राशि, जिसे वेशि कहते हैं, यदि लग्न में हो तो तीनों दशाओं में विजय होती है। अथवा जातक प्रकरण प्रतिपादित राजयोग के लग्न में यात्रा होने से भी विजय निश्चित है।

पूर्व से आरम्भ कर पूर्व, अग्नि आदि आठों दिशाओं के स्वामी क्रमशः सूर्य, शुक्र, भौम, राहु शनि, चन्द्र, बुध और गुरु हैं। इसी प्रकार पूर्व दिशा में यात्राकारी को लग्न का सूर्य; अग्निकोण में यात्राकारी को ११, १२ वें शुक्र; दक्षिण में १० वें मंगल; नैर्ऋत्य में ८, ९ वें राहु; पश्चिम में ७ वें शनि; वायव्य में ५, ६ ठें चन्द्र; उत्तर में ४ थे बुध और ईशान में २, ३ में गुरु लालाटिक कहाते हैं। यदि दिशा का स्वामी लालाटिक न हो और केन्द्र (लग्न से १, ४, ७, १०) में हो तो उस दिशा में यात्रा करना चाहिये, विशेष कर राजा को। मगर केन्द्र में रहने पर भी यदि लालाटिक हो तो न यात्रा करे।

यदि मृग में यात्रा करके उसी दिशा में किसी के मकान में ग्राम के भीतरही आर्द्रा में ठहरकर पुनर्वसु में ग्राम से बाहर यात्रा करे; अनुराधा में प्रस्थान कर ज्येष्ठा में ठहरकर मूल में रवाना हो; हस्त में प्रस्थान कर चित्रा, स्वाति में ठहर करके विशाखा में बाहर जावे; या पुष्य, धनिष्ठा, रेवती में प्रस्थान कर ग्रामसीमा पर एक दिन ठहर कर अगले दिन यात्रा करे तो विजय होती है। इन चारों को पर्युषित

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योग कहते हैं। पर्युषित कहते हैं बासी को। यात्रा में एक दो दिन के लिये बीच मेंही रुक जाने के कारणहीं ऐसा नाम पड़ा है। दिन के आठवें मुहूर्त्त (दो खण्ड) को अभिजित् कहते हैं और आधी रात के इधर उधर के एक एक दण्ड मिलाकर निशीथ नाम पड़ा है। यदि पूर्वाह्न में उत्तर, मध्यान्ह में पूर्व अपराह्न में दक्षिण और आधी रात को पश्चिम जावे तो अत्युत्तम होता है और उस समय यात्रा में सर्व दक्षिण माने जाते हैं, जिससे भद्रा, व्यतीपात, वैधृति, अनिष्ट मंगलादि किसी के भी दोष नहीं लगते और कार्य की सिद्धि होती है। यदि ऐसा न भी कर सके तो दिन निकलने से पूर्व (उषःकाल) में पूर्व-दिशा को बचाकर शेष दिशा में; गोधूली में पश्चिम दिशा को बचाकर शेष में; निशीथ में उत्तर के सिवाय अन्य में और अभिजित् में दक्षिण के अतिरिक्त बाकी दिशाओं में यात्रा करना ठीक है। दक्षिण दिशा के अतिरिक्त तीन दिशाओं की यात्रा अभिजित् में करने से इष्ट की सिद्धि अवश्य होती है।

यात्रा के समय यदि लग्न से १, ४, ५, ७, ९, १० में शुभग्रह, ३, ६, १०, ११ में अशुभ ग्रह होंतो शुभ फल देते हैं। परन्तु चन्द्रमा यदि १, ६, ८, १२ वें हो तो अशुभ है। इसी तरह शनि १० में और शुक्र ८ वें अशुभ है। यदि लग्न का स्वामी ६, ७, ८, १२ में हो तो वह भी अनिष्ट कारक है। दृष्टान्त के लिये वृष लग्न में यात्रा करने पर उसका स्वामी शुक्र यदि वृश्चिक में हो तो ७ वें स्थान में रहने के कारण अनिष्ट है। मगर तुला में रहने पर यद्यपि छठवें स्थान में है। परन्तु तुला भी शुक्र काही स्थान है। इसलिये उसका दोष न होगा यही बात अन्य ग्रहों के भी सम्बन्ध में जाननी चाहिये। निष्कर्ष यह है कि यदि एक भी ग्रह यात्रा के लाभ का भंग करने वाला हो, यानी अत्यन्त अनिष्ट स्थान में हो तो यात्रा कभी न करे। यह भी जान लेना चाहिये कि कौन से ग्रह लग्नभंग करनेवाले हैं। १, ८ में चन्द्र, ७ में शुक्र या १० में शनि हो तो प्रत्येक लग्नभंगकारी हैं। फिर चाहे अन्य ग्रह कितनेहीं अच्छे स्थान में क्यों न हों, कभी यात्रा न करे। इस प्रकार यद्यपि सामान्य रूप से ग्रह स्थिति बताई गई है। फिर भी यात्रा में लग्न से लेकर १२ स्थानों में ग्रहोंकी स्थिति का अलग अलग फल इस तरह है। (१) यात्रा लग्न में यदि सूर्य, सोम, भौम, शनि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

हों तो क्षुधा, तृष्णा, अग्नि, विष, आयुध और ज्वर जन्य अनेक कष्ट देते हैं। यदि बुध, गुरु, शुक्र हों तो धन, धान्य, भोग और सुख प्राप्ति होती है। (२) द्वितीय स्थान में यदि बुध, शुक्र हों तो धर्म, अर्थ, काम की प्राप्ति; गुरु हो तो पुत्र, धनसुख, शत्रुनाश; शनि हो तो लम्बी जेल की सजा; भौम हो तो मृत्यु; सूर्य हो तो कोष की हानि; चन्द्र होतो सगे सम्बन्धियों से भेंट और राहु हो तो उत्पात होती है। (३) तृतीयमें यदि भौम, शनि, रवि, राहु, शुक्र, बुध, गुरु और चन्द्रमा हों तो धन, आयु की प्राप्ति, हाथी घोड़े की प्राप्ति, सब बातों की सिद्धि, शत्रु पर विजय होती है। (४) चौथे में शुक्र विपुल भोग, गुरु शत्रु का नाश, बुध महालाभ, शनि हानि, चन्द्रमा वृद्धि और सूर्य, भौम, राहु महादुःख प्राप्ति कराते हैं। (५) पांचवें गुरु, अर्थसिद्धि, शुक्र शत्रु नाश, बुध अर्थसिद्धि; सूर्य, चन्द्र, भौम, शनि, राहु ये पांच अनेक भय करने वाले होते हैं। (६) यदि छठें में कोई भी ग्रह हो तो अर्थलाभ, धर्म, काम की प्राप्ति, शत्रु का नाश आदि अनेक उत्तम फल होते हैं (७) सातवें में सूर्य, भौम, शुक्र, शनि, राहु ये रहने पर शत्रु को वश में करा देते हैं, बुध मित्रों से मिलाप कराता, गुरु स्त्री, धनको लाभ कराता और चन्द्रमा अभीष्ट सुख देता है। (८) आठवें में बुध आरोग्य करता, शुक्र सभी काम और अर्थ की सिद्धि करता, बृहस्पति माता की तरह रक्षक होता; रवि, चन्द्र, राहु शत्रु की वृद्धि करते हैं और भौम, शनि चारों ओर से भय पैदा करते हैं। (९) नवें में शुक्र, गुरु, बुध हों तो अत्यंत सुख, जय और धन लाभ कराते हैं और चन्द्र, सूर्य, भौम, शनि हों तो अनेक दोष करते हैं। (१०) दसवें में सूर्य खूब जय कराता है, चन्द्र पोषक होता है, गुरु शुभकारी है, बुध सर्व कार्य साधक है, शुक्र साम्राज्य की लक्ष्मी देता है, भौम खूब यश बढ़ाता है, राहु वैर दूर करता है और शनि लम्बा रोग पैदा करता है। (११) ग्यारहवें में यदि कोई भी ग्रह हों तो शत्रु का शीघ्र नाश करते हैं और यात्राकारी शत्रुओं में निर्भय विचरता है। (१२) बारहवें में यदि सूर्य, भौम, शनि, चन्द्र और राहु हों तो अपने उत्तम नौकरों में मनमुटाव पैदा करते हैं और बुध, गुरु, शुक्र हों तो क्रमशः शत्रु की जीत, धन का नाश और नौकरों का नाश करते हैं। इससे स्पष्ट है कि यात्रा लग्न से ३, ६, ७, ११ में कोई भी ग्रह रहें तो शुभ फल ही देते

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हैं। दशवें में शनि को छोड़कर शेष अच्छे हैं। केवल शनि खराब है। बारहवें में कोई भी ग्रह हों तो खराब ही फल देते हैं। पांचवें, आठवें, नवें में बुध, गुरु, शुक्र अच्छे और शेष बुरे हैं। आठवें, चौथे और दूसरे बुध, गुरु, शुक्र और चन्द्र अच्छे हैं, शेष बुरे।

इस प्रकार की यात्रा का विचार साधारण है। मगर युद्ध या किसी अन्य आवश्यक कार्य के आजाने पर जब देर तक शुभ मुहूर्त्त और तिथि नक्षत्रादि की प्रतीक्षा असंभव हो जाती है तब जहां तक संभव हो गुण दोषों का विचार करके केवल योग या ग्रहों की नियत स्थिति को देखकर ही जो यात्रा की जाती है उसे योग यात्रा कहते हैं। यदि तिथि वारादि की बिलकुल ही अनुकूलता न हो तो भी योग-यात्रा से ही कार्यसिद्धि हो जाती है। अतएव उसका भी संक्षिप्त ज्ञान अवश्य कर लेना चाहिये। यदि सूर्य लग्न से तृतीय में, चन्द्र दसवें में, शनि, भौम छठे में, शुक्र पञ्चम में और बुध चतुर्थ में तथा गुरु लग्न में हो तो योग यात्रा कहाती है और शीघ्रही विजय एवं कार्यसिद्धि होती है ॥ १ ॥ यदि तीसरे स्थान में शनि, छठे में मंगल, लग्न में गुरु और ग्यारहवें में रवि हो और शुक्रयात्राकारी के पृष्ठ में हो तो भी शीघ्र विजय होती है ॥ २ ॥ यदि लग्न में गुरु, आठवें में चन्द्र, छठे में सूर्य हो तो शीघ्र जय होती है ॥ ३ ॥ लग्न में गुरु और ३, ११ में यदि अन्य ग्रह हों तो भी विजय अवश्य होती है ॥ ४ ॥ चन्द्र सातवें, सूर्य लग्न में और गुरु, शुक्र, बुध, द्वितीय स्थान में हों तो भी शीघ्र विजय होती है ॥५॥ बुध द्वितीय में, सूर्य तृतीय में और शुक्र लग्न में हो तो शत्रुका नाश ऐसे ही हो जैसे अग्नि में पतंगों का ॥ ६ ॥ सूर्य लग्न में, शनि छठे में, चन्द्र दसवें में हो तो भी जय होती है ॥ ७ ॥ लग्न में शनि, मंगल; दसवें में सूर्य; दसवें या ग्यारहवें में बुध और शुक्र हों तो विजय करें ॥ ८ ॥ ३, ६, ११ में से किन्हीं दो में यदि मंगल और शनि हो और बुध, गुरु, शुक्र कहीं हों, मगर बलवान हों तो भी विजय कराते हैं ॥ ९ ॥ लग्न में गुरु, सातवें में चन्द्र; बुध, शुक्र चौथे में और पापग्रह तीसरे में हों तो जीत करावें ॥ १० ॥ बृहस्पति लग्न में, चन्द्र सात में, दस में बुध शुक्र, भौम, शनि तीन में और रवि ग्यारह में हो तो शत्रु पर नौकर की तरह शासन होता है ॥ ११ ॥ गुरु वा चन्द्र लग्न में, बुध ५ में, रवि ६ में, शनि १०

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

में, शुक्र ४ में हो तो विजय होती है ॥ १२ ॥ बलवान बुध लग्न में, गुरु केन्द्र में, निर्बल चन्द्रमा १, ६, ८, ९, १२ में हो तो विजय यात्रा होती है। चन्द्रमा की निर्बलता क्षीण होने, नीच स्थान में जाने, शत्रु गृह में होने आदि से होती है ॥ १३ ॥ अशुभ ग्रह ७, ८, ९ के सिवाय शेष में हों; ३, ४, ११ में शुक्र हो और केन्द्र स्थित गुरुकी उस पर दृष्टि हो तो यात्रा में विजय और विपुल धन लाभ होता है ॥ १४॥ बुध १, ४, ६, १० में किसी में हो और चन्द्र, गुरु, शुक्र रूप शुभ ग्रहों की उस पर दृष्टि हो। तथा १, ७, १२ के अतिरिक्त स्थानों में यदि पाप ग्रह हों तो यात्राकारी को कोई भय नहीं होता और पत्थर बांध कर भी समुद्र पार कर सकता है ॥ १५ ॥ ७ में बुध, शुक्र और ४ में चन्द्र हो तो राज्य प्राप्ति होती है ॥ १६ ॥ ६ में शुक्र, लग्न में गुरु और अष्टम में चन्द्र हो तो विजय हो ॥ १७ ॥ बुध, शुक्र ४ में और चन्द्र ७ में हो तो भी विजय योग होता है और विजयकारी है ॥१८॥ यदि लग्न में गुरु या १० और ११ में पाप ग्रह हों तो राज्य की प्राप्ति होती है ॥ १९ ॥ चन्द्रमा ४ में हो और उसी समय बुध और शुक्र के मध्य में हो तो विजय यात्रा है ॥ २० ॥ लग्न में शुक्र; ६ में भौम, ७में गुरु, ४ में बुध और ३ में शनि हो तो विजययोग हो ॥२१॥ गुरुवार को यदि लग्न में गुरु, ४ में शुक्र, ३ में चन्द्र, ६ में रवि और बुध और ११ में शनि हो तो शत्रु का पराजय हो ॥२२॥ लग्न में गुरु, ३ में भौम, ६ में सूर्य, ७ में बुध, ८ में शुक्र हो तो विजय हो ॥२३॥ गुरुवार को लग्न में गुरु, ३ में चन्द्र, ४ में शुक्र ६ में सूर्य और बुध, १० में भौम और ११ में शनि हो तो विजय हो ॥२४॥ यदि बुध, गुरु, शुक्र में कोई एक १, ४, ५, ७, ९, १० में हो तो योग नामका योग होता है। यदि इन्हीं स्थानों में इनमें से कोई दो हों तो अधियोग कहाता है। यदि ये तीनों इन में किसी एक में एक ही साथ दो तीन स्थान मिलाकर हों, यानी कोई एक में और कोई दूसरे में हो तो योगाधियोग होता है। योग में यात्रा का फल कुशल; अधियोग में कुशल, और शत्रुवध और योगाधियोग में कुशल, शत्रुनाश, यश और पृथिवी की प्राप्ति होती है। यहां योग आदि के सम्बन्ध में यह भी जान रखना चाहिये कि वे कई प्रकार से होंगे। अकेला योगही १८ प्रकार का होगा। क्योंकि तीन ग्रह हैं और छ स्थान और हरेक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ग्रह प्रत्येक स्थान में रहे तो योग होगा ही। इस तरह तीन ग्रहों के १८ स्थानों के कारण प्रत्येक से एक योग अवश्यम्भावी है। इसी तरह अधियोग में १०८ भेद होंगे। क्योंकि तीन ग्रह हैं और उनमें किन्हीं दो का योग मानने से तीन प्रकार का वही होगा बुध शुक्र; बुध गुरु और गुरु शुक्र का। अब यदि केवल बुध शुक्र एक एक स्थान में रहें तो केवल उन्हीं से ६ योग होंगे। इसी तरह बुध गुरु और गुरु शुक्र से भी छ छ होकर कुल १८ होंगे। परन्तु यदि केवल बुध शुक्र एक ही साथ न रह कर बुध किसी स्थान में और शुक्र दूसरे में हो तो छ स्थानों में कुल ३० भेद हो जाँयगे। यही बात बुध गुरु और गुरु शुक्र की भी होगी। इस तरह ये कुल ९० और पूर्व के १८ मिलकर १०८ हो जाँयगे। इसी तरह हिसाब लगाने से योगाधियोग में भी बहुसंख्य भेद हो जाँयगे ॥ २५ ॥ आश्विन शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि विजया दशमी कहाती है और उसमें पराजय कभी भी नहीं होती, यदि यात्रा की जाय। याद श्रवण नक्षत्र हो जाय तब तो और भी प्रशस्त होती है। उस दिन अभिजित् नामक दिनके आठवें मुहूर्त्त में यात्रा करनी चाहिये।

इस प्रकार यात्रा के लग्न और मुहूर्त्तादि के विचार से उत्तमयात्रा होने पर भी शुभ सगुन का विचार किया जाता है और यदि सगुन अच्छे न हों तो यात्रा रोक देनी चाहिये। क्योंकि सगुन स्वयं न कुछ करके केवल भावी अनिष्ट की सूचना दे देते और यात्री को सजग कर देते हैं। परन्तु लग्न, मुहूर्त्त और शुभ सगुन इन दोनों के रहने पर भी यदि यात्रा के समय चित्त प्रसन्न न हो तो यात्रा न करे। क्योंकि चित्त की प्रसन्नता सब से बड़ी चीज है और शुभ सगुन भी उसकी प्रसन्नता में प्रायः सहायक होने के कारण हीं श्रेष्ठ माने जाते हैं। सब कुछ ठीक रहने पर भी उपनयन, विवाह, देव-प्रतिष्ठा, होलिकादि और जन्म या मरण सूतक, इन की समाप्ति से पूर्व यात्रा न करे। इसी तरह यद्यपि सामान्य नवमीका निषेध यात्रा में कह चुके हैं। तथापि उसके अलावे भी दो प्रकार की तिथि नवमी नक्षत्र नवमी और वार नवमी है। उन दोनों को प्रवेश नवमी और प्रयाण नवमी कहते हैं। जिस तिथिको लौटकर घर में आवे उससे नवीं तिथि को यात्रा न करे, क्योंकि वह प्रयाण नवमी कहाती है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

और जिस तिथि को प्रयाण करे उससे नवीं तिथि को प्रवेश न करे, क्योंकि वह प्रवेशनवमी है। दृष्टान्त के लिये यदि द्वितीया को लौट कर घर आवे तो फिर उससे नवीं तिथि दशमी को यात्रा न करे। इसी तरह नक्षत्र और वार में भी प्रवेश और प्रयाणनवमी होती है। जिस नक्षत्र को प्रवेश करे उससे नवें में प्रयाण और प्रयाण के नवें में प्रवेश न करे और जिस दिन में प्रयाण करे उससे नवें दिन प्रवेश और प्रवेश से नवें दिन प्रयाण न करे। यही तिथि, वार, नक्षत्र की नवमी त्रिविध नवमी कहाती है। धनिष्ठापञ्चक में दक्षिण दिशा की यात्रा वर्जित है, यह प्रथम कह चुके हैं। पिता पुत्र की एक साथ और तीन ब्राह्मण की भी एक साथ यात्रा वर्जित है। पीछे रास्ते में आकर तीन ब्राह्मण या पिता पुत्र मिल सकते हैं। मगर घर से एक साथ निकलना ठीक नहीं माना जाता। यात्रा में बाईं नासिका चलती हो तो उत्तम और दहिनी खराब है। यह भी मानते हैं कि जो स्वर (नासिका प्रवाह) चलता है पहले वही पांव उठाया जाना चाहिये। यह भी लिखा है कि पहले दहिना पांव उठाकर उसी दिशा में ३२ कदम जाने के बाद सवारी पर चढ़े। यात्रा का आरंभ देवमन्दिर, गुरुमन्दिर, अपने मकान या प्रधानपत्नी के घर से करे और चलने से पूर्व हविष्य पदार्थ दधि घृतादि भोजन कर ले, तथा मांगलिक पदार्थ देख ले। यात्रा से तीन दिन प्रथम दूध और पांच दिन प्रथम से ही क्षौर न करावे और यात्रा के दिन मधु और तैल का सेवन न करे। यात्री तेल, गुड़, नमक या क्षार और मांस खाकर यात्रा करने पर रोगी होकर वापस आता है और स्त्री या विद्या, तप, शील युक्त ब्राह्मण का तिरस्कार करके यात्रा करने से मृत्यु होती है।

यदि यात्रा के समय किसी कारण यात्रा न करसके तो अपने साथ चलनेवाली कोई चीज यात्रा की दिशा में अपने स्थान से ले जाकर दूसरे स्थान में रख दी जाती है। इसे ही प्रस्थान कहते हैं। प्रस्थान के समय स्वयं भी घर से दूसरे स्थान में जाकर रहजाते हैं और फिर वहां से ही चलते हैं, नकि घर आकर। यदि दैवात् घर लौट आवे तो फिर यात्रा मुहूर्त्त देखना पड़ता है। प्रस्थान का पदार्थ ब्राह्मण के लिये जनेऊ, क्षत्रिय का हथियार, वैश्य का मधु और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शूद्र का नारियल आदि फल माना गया है। अथवा जोही पदार्थ जिसका बहुत प्रिय हो वही प्रस्थान में भेजदे छाता, पगड़ी, आभूषण, वस्त्र, चाबुक, शय्या, आसन आदि। प्रस्थान कितनी दूर करना चाहिये, इस विषय में मतभेद है। गर्ग के मत से अपने घर से दूसरे के घर में ही चले जाने या पदार्थ भेज देने से प्रस्थान हो जाता है। भृगु कहते हैं कि अपने ग्राम की सीमा के बाहर दूसरे ग्राम में प्रस्थान होता है। भरद्वाज कहते हैं कि बलवान आदमी जोर से धनुषपर चढ़ाकर तीर जितनी दूर फेंक सके उतनी दूर प्रस्थान करे। वसिष्ठ का मत यह है कि ग्राम से बाहर चले जानेसे ही प्रस्थान होगया। कोई कहते हैं कि ४ हाथ के धनुष परिमाण के हिसाब से ५०० धनुष या २००० हाथ दूर घर से जाने पर प्रस्थान होता है। दूसरे ८०० हाथ पर ही मानते हैं। तीसरे ४० हाथ ही स्वीकार करते हैं। यदि स्वयं प्रस्थान कर जाय तो उत्तम, नहीं तो कोई चीज ही भेज दे। प्रस्थान कर चुकने पर व्यतीपात, भद्रा, भरणी आदि का दोष नहीं मानते। मगर यदि यात्रा करनेवाला स्वयं ही प्रस्थान करे और उसके बाद जन्मनक्षत्र, अष्टम चन्द्र, या भौम, शनिवार आ जावे तो उस दिन यात्रा न करें। प्रस्थान के बाद राजा १० दिन से अधिक न रुके; सामन्त ६ दिन और साधारण मनुष्य ४ दिनसे अधिक, यानी क्रमशः ११, ७ या ५ दिन न रुके और यदि रुक जावे तो फिर वहीं से या घर आकर नवीन यात्रालग्नादि पूछकर यात्रा करे। यह तो हुई साधारण बात। मगर विशेष बात यह है कि सामान्य रीति से पूर्व दिशा का प्रस्थान ७ दिन तक, दक्षिण का ५ दिन तक, पश्चिम का ३ दिन तक और उत्तर का दो दिन तक रहता है और उसके बाद खराब हो जाता है। इस लिये पूर्वादि दिशाओं में प्रस्थान में बाद ऊपर बताई अवधि के भीतर ही यात्रा कर ले और रास्ते में प्रस्थान के पदार्थ को साथ अवश्य ले ले। यात्रा से एक सप्ताह पूर्व स्त्रीप्रसंग न करे। मगर यात्रा के दिन तो अवश्यमेव न करे। यदि रात में ऐसा करके प्रातःकाल यात्रा करे तो यात्रा निष्फल होती है और कष्टपूर्वक वापस आता है।

यात्रा के समय यदि बुरा सगुन हो जावे तो लौटकर हाथ पांव धोके किसी दूधवाले वृक्ष के नीचे शुभ स्थान में बैठकर तीन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

प्राणायाम करे, या ११० गुरु या २२० लघु अक्षर के उच्चारण के बराबर काल भर विलम्ब करे । ११ प्राण विलम्ब करने को लिखा है और एक प्राण १० गुरु अक्षर (आ आदि) के बराबर होता है या २० लघु अक्षर (अ, इ आदि) के बराबर । फिर दूसरा शुभ सगुन देखकर चले । यदि दूसरी बार भी अशुभ सगुन देखे तो १६ प्राण ठहरे, या ६ प्राणायाम करे, अथवा उतनी देर ठहरे और पीछे शुभ सगुन देखकर यात्रा करे । यदि तीसरी बार फिर अशुभ सगुन दीखे तो उस दिन यात्रा कभी न करे ।

यात्रा में शुभ सगुन ये हैं-विप्र, अश्व, हाथी, फल, अन्न, दूध, दही, गौ, पीली सरसों, कमल, स्वच्छ वस्त्र, वेश्या, बाजा, मोर, चाषपक्षी, नेवला, रस्सी से बँधा पशु, मांस, शुभ शब्द, फूल, ऊख, भरा घड़ा, छाता, मिट्टी, कन्या, रत्न, पगड़ी, श्वेत बैल, शराब, पुत्र-सहित स्त्री, दीप्त अग्नि, शीशा, अंजन, धोया वस्त्र, धोबी, मछली, घी, सिंहासन, रोदन शब्द के विना मुर्दा, ध्वजा, मधु, बकरा, अस्त्र, गोरोचन, भारद्वाजपक्षी, पालकी, वेदोच्चारण, मंगलगीत, अंकुश, और यात्री के पीछे आनेवाला खाली घड़ा जो भरने को जाता हो। इन सबों का दर्शन हो जाना मंगलसूचक है ।

वंध्या, चमड़ा, भूसी, अस्थि, सर्प, नमक, अंगार, ईंधन, नपुंसक, विष्ठा, तेल, पागल, मज्जा, औषध, शत्रु, जटाधारी, दर दर घूमने वाला भिक्षुक, तृण, रोगी, नंगा तेल लगाया आदमी, फैले बालों वाला, पतित, अंगहीन, भूखा, छींक, अतीथ वगैरः, गुड़, मट्ठा, कीचड़, विधवा, कुब्ज, घर में कलह, खून, स्त्रीका रज या मासिकधर्म, छिपकली, अपने घर की आग, बिड़ालकी लड़ाई, कपड़े का गिर जाना, भैंसे की लड़ाई, काले अन्न, कपास, वमन, दहिनी ओर गधेका शब्द, अत्यंत क्रोध, गर्भिणी स्त्री, गंजेसिरवाला, गीला वस्त्र, दुर्वचन, अंधा, बहरा, रजस्वला स्त्री इनका दर्शन या संसर्ग यात्रा में अशुभ है ।

यात्रा में मृग और पक्षी यदि १, ३ आदि विषम संख्या में दहिनी ओर चले जावें तो शुभ हैं और बाईं ओर गधे का शब्द भी शुभ माना जाता है । बाईं ओर कोयले, छिपकली, सूअर, छछुन्दर, शृगाली और हंस, कपोत आदि पक्षी उत्तम हैं । दक्षिण ओर वानर,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कौवे, भालू, कुत्ते आदि शुभ हैं।

इस प्रकार यात्रा के बाद जब बहुत दिनों पर लोग वापस आवें और विशेषकर राजा युद्धयात्रा से लौटे तो घर में उसके प्रवेश करने के उत्तम नक्षत्र मृदु और ध्रुवसंज्ञक हैं और मध्यम नक्षत्र चर और क्षिप्र हैं। यदि विशाखा में प्रवेश करे तो स्त्री का नाश; कृत्तिका में गृहनाश; मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा इन चारों में पुत्र की मृत्यु और तीनों पूर्वा, भरणी, मघा में प्रवेश करने से अपनी मृत्यु होती है। इसी से इनसब बातों का और दिन लग्नादि का विचार करके प्रवेश करना चाहिये।

इस प्रकार यात्राविचार के बाद गृहस्थ के लिये अत्यावश्यक और जीविका के प्रधान साधन कृषि का विचार करलेना चाहिये। कृषि में दो बातें प्रधान हैं हलप्रवहण (हल चलाना) और बीजोप्ति (बीज बोना)। यों तो बार बार हल चलाने में और बीज बोने में मुहूर्त्त का विचार करने से काम चल नहीं सकता। यह बात तो असंभव ही है। मगर खेती का काम कुछ समय तक बन्द हो चुकने पर जब पुनः आरंभ किया जाता और पहली बार हल चलाने एवं बीज बोने की बात होती है तब हलप्रवहण और बीजोप्ति का मुहूर्त्त अवश्य देखा जाता है। या जब एक फसल हो चुकने पर दूसरी की तय्यारी का समय होता है। ऐसा अवसर सालभर में प्रायः दो बार ही आया करता है। एक तो रबी या चैत की फसल के बोने के समय आश्विन और कार्त्तिक में और दूसरा खरीफ या बरसाती फसल के बोने के समय आषाढ़ या ज्येष्ठ में। ये दोनों अवसर प्रधान हैं। अतएव इन दोनों अवसरों पर हलप्रवहण और बीजोप्ति अवश्यमेव देखना चाहिये। विशेष रूप से आषाढ़ वाले में तो अवश्यमेव विचारना पड़ता है। क्योंकि किसानों के लिये वही सालका आरंभ है। आषाढ़ से ही नये खेतों का प्रबन्ध करके सालभर के लिये निश्चिन्त हो जाते हैं। बरसात से कुछ पहले हल जोतना बन्द भी रहता है। इसी लिये हलप्रवहण देखने का वही अवसर ठीक भी है। उसके बाद तो आश्विन कार्त्तिक तक हल चलाने का सिलसिला लगा ही रहता है। अतएव आश्विन कार्त्तिक में हलप्रवहण उतना आवश्यक नहीं है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

फिर भी, उस समय भी भरसक देखना अवश्य चाहिये। मगर शायद न भी देखा जाय तब भी किसी प्रकार ठीक ही है। हां, बीजोप्ति तो वहां भी अवश्य देखना चाहिये। मगर आषाढ़ की बीजोप्ति सब से जरूरी है। कभी कभी ऐसा होता है कि हलप्रवहण और बीजोप्ति का मुहूर्त साथ ही बन जाने से दोनों काम साथ ही कर लेते हैं। मगर यदि ऐसा न हो सके तो कोई हर्ज नहीं है और प्रायः ऐसा होता भी है कि हलप्रवहण का समय दूसरा होता है और बीजोप्ति का अन्य हीं। बीजोप्ति तो कुदाल से भूमि खोद-कर कर दी जाती है। वहां हल से बोना आवश्यक नहीं और न ऐसा कियाही जाता है। अतएव बीजोप्ति से आगे या पीछे जभी हलमुहूर्त्त हो तभी हलप्रवहण किया जाय। कहीं कहीं अ-क्षय तृतीया को ही, जो वैशाख शुक्लपक्षकी तृतीया का नाम है, बीजोप्ति की चाल है और कहीं कहीं यह परिपाटी है कि रोहिणी नक्षत्र पर सूर्य के आने परही की जाती है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है। भरसक रोहिणी में बीजोप्ति मिलजावे या अक्षय तृतीया कोही मिलजाय तो उसी समय करना सर्वोत्तम है। मगर जरा यह कठिन और कभी कभी असंभव होजाता है कि अक्षय तृतीया को उसका मुहूर्त्त मिले। हां, रोहिणी के १५ दिनों में तो प्रायः मिलही जाता है। मगर कभी कभी रोहिणी में भी नहीं मिलता। ऐसी दशा में रोहिणी काही हठ करना ठीक नहीं है। किन्तु भरसक लग्न और मुहूर्त्त देखना चाहिये और जब आजावे तभी करे।

यद्यपि हल प्रवहण और बीजोप्ति में प्रायः सभी बातों के देखने में समानता ही है। दोनों मेंहीं तिथि, लग्न, नक्षत्र और वार आदि का विचार करते हैं। मगर अकसर ऐसा देखा जाता है कि हलप्रवहण में शुक्रोदय भी लेते हैं और बीजोप्ति में नहीं। यदि शुक्र अस्त भी हो तो भी बीजोप्ति करेंगे। मगर प्रथम हल प्रवहण तभी करेंगे जब शुक्रोदय हो। विशेष रूप से आषाढ़ का हलप्रवहण। बहुत से पञ्चांगों में भी यही बात लिखी रहती है और इसी के अनुसार मुहूर्त्त लिखे रहते हैं। मुहूर्त्तचिन्तामणि के हलप्रवहल में शुक्र को मांसल होना लिखा है और पीयूषधारा ने उसका अर्थ उदय लिखा है। बस, इससे ही विशेष रूप से यह परम्परा चल पड़ी है। मगर मेरे जानते यह बात ठीक

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नहीं है। यद्यपि यह ठीक है कि भरसक शुक्रोदय मेंही हल प्रवहण होतो श्रेष्ठ है और वीजोप्ति भी। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि उदय में ही हो। मांसल का अर्थ है पुष्ट या बलवान और ग्रहों का बल केवल उदय में ही नहीं रहता है। किन्तु वे अपने घर में, अपने नवांश आदि में, ऊँचे में, मित्रगृह में या मित्र और शुभ ग्रहों की दृष्टि पड़ने आदि के कारणहीं बलवान होते हैं, सोभी शुक्र जैसे शुभग्रह। इसीलिये पीयूषधारा में जो मुहूर्त्तके इस कथन में प्रमाण उपस्थित किया है उसमें शक्तिशाली होना चन्द्र और शुक्र का लिखा है और शनि, भौम, सूर्य का दुर्बल होना। साथ ही, सभी कृषि कार्य (कृषि क्रिया) के लिये वह विचार है न कि केवल हलप्रवहण के लिये। उसमें तो स्पष्टही कृषिक्रिया लिखी है। फिर वीजोप्ति में इसका विचार क्यों न करेंगे और हलप्रवहणहीं में क्यों करेंगे? मैं मानता हूं कि अस्त रहने पर ग्रह दुर्बल होंगेही। अतः उनका उदय रहना ठीक है। मगर केवल उदय मात्र सेही वे शक्तिशाली नहीं हो सकते। यदि नीच स्थान में या शत्रुगृह में चलेगये, उनपर क्रूर ग्रहों की दृष्टि पड़गई, या उनके शत्रुने उन्हें देखलिया तो उदय होने पर भी शुभ ग्रह दुर्बलही रहेंगे। ऐसी दशा में भी यदि केवल उदय रहने परही कृषिकर्म करना इष्ट हो तो फिर अस्त रहने पर क्यों नहीं? बल्कि अस्त रहने पर तो उतना अनिष्ट न करेंगे जितना उदय होकर नीच आदि स्थानों में जाने पर। परन्तु देखते हैं कि केवल उदय का ही विचार कर लेते हैं और विशेष नहीं देखते। ऐसी दशा में तो अस्त में भी हलप्रवहण कर ही लेंगे और वीजोप्ति भी। यदि शुक्रका विचार करेंगे तो दोनों में हीं और छोड़ेंगे तो दोनों में ही। न कि कभी भी ऐसा करेंगे कि एक में छोड़ेंगे और दूसरे में मानेंगे, अस्तु।

हलप्रवहण और वीजोप्ति के मुहूर्त्त देखने में सबसे पहले यह देख लेना चाहिये कि उस दिन पृथिवी सोती है या जागती। क्योंकि पृथिवी के शयन में कूप, बावड़ी, तालाब का खोदना, बीज बोना और प्रथम हल का जोतना, यात्रा करना, पाठ आरंभ करना और घर का आरंभ करना ये काम अशुभ हैं। हां, चोरों के लिये उसका शयन अच्छा होता है और वे चोरी में सफल होते हैं। सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उससे ५,७,९,१२,१९,२६ वें नक्षत्र में पृथिवी शयन

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करती है। इसमें बीजोप्ति तो और भी बुरी है। परन्तु यदि काम न चलता हो तो इन पूर्वोक्त ६ नक्षत्रों में क्रमशः आदि के ४, ८, ५, ३, ६, ७, दण्ड छोड़कर शेष में काम कर सकते हैं। किसी किसी ने लिखा है कि शुरू के ११, ११, १२, १२, २७, १६ दण्ड क्रमशः इन नक्षत्रों में छोड़कर शेष में काम कर सकते हैं। इसलिये भरसक ५ वें नक्षत्र के ११ दण्ड छोड़े, नहीं तो ४ ही दण्ड। इसी तरह ७ वें के ११ दण्ड छोड़े, नहीं तो ८ दण्ड। ९ वें के १२ दण्ड या ५ ही दण्ड इत्यादि।

हलप्रवहण के नक्षत्र १९ हैं और वे हैं स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, पुष्य, मृग, चित्रा, अनुराधा, रेवती, मूल, विशाखा, मघा। वारों में शनि, रवि को छोड़ शेष सभी अच्छे हैं। षष्ठी, अष्टमी और रिक्ता को छोड़ शेष तिथियां अच्छी हैं। साधारणतः लग्न के बारे में यह देखना चाहिये कि क्रूर ग्रह दुर्बल हों, चन्द्र जलराशि (कर्क, कुंभ, मीन, मकर) में हो और वह तथा शुक्र दोनोंही बलवान हों और बृहस्पति लग्नमें हो तो हलप्रवहण प्रशस्त है। विशेष रूप से सिंह, कुम्भ, कर्क, मेष, मकर और तुला इन लग्नों को छोड़कर शेष लग्नों में ग्रहस्थिति देखकर शुभ लग्न में हल चलाना चाहिये। क्योंकि मेष लग्न में पशु-नाश, कर्क में जल का भय, सिंह में खेती में भय, तुला में हलनाश और मकर में खेती का नाश तथा कुंभ में चोर का भय होता है। इसीसे भरसक इन लग्नों को बचाना उचित है। मगर शेष लग्नों के न मिलने पर उनमें भी ग्रहस्थिति देखकर काम चला सकते हैं। हल जोतने के बैलों को नीरोग और आंडू होना लिखा है, नकि दुबले पतले और नामर्द। अब रह जाती है एक हलचक्र की बात। क्योंकि पूर्वोक्त १९ नक्षत्रों में भी जो हलचक्र में शुभ हों वही लिये जाते हैं। वह हलचक्र इस प्रकार है कि सूर्य जिस नक्षत्र पर हो उससे प्रथम के नक्षत्र से तीन अशुभ, उनके बाद आठ शुभ, उनके बाद के ९ अशुभ और बाद के शेष ८ शुभ होते हैं। इस तरह जिस नक्षत्र पर सूर्य हो वह और उसके आसपास के एक एक ये तीन और आगे के ८ के बाद के नौ, कुल १२ नक्षत्र अशुभ और शेष १६ शुभ हैं। इस तरह कुल २८ हुए। अतएव अभिजित् को मिलाकरही गिनती होनी चाहिये। दृष्टान्त के लिये यदि सूर्य रोहिणी में हो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तो उससे पूर्व की कृत्तिका, स्वयं रोहिणी और बादका मृग ये तीन खराब और मृग के बाद के हस्त तक के आठ अच्छे, उनके बाद अभिजित् तक खराब और शेष भरणी तक आठ अच्छे होंगे।

हल प्रवहण के पूर्वोक्त १९ नक्षत्रों में विशाखा, पुनर्वसु, श्रवण, शतभिषा इन चार को छोड़कर शेष १५ में, और किसी के मत से मघा को भी छोड़कर १४ में हीं, बीजोप्ति की जाती है। अधिक मान्य पक्ष १५ का ही है। दिनों में केवल मंगल वर्जित है और शेष छ शुभ हैं। जब सूर्य आर्द्रा के प्रथम चरण में रहे तो तीन दिनों तक भूमि रजस्वला मानी जाती है। इसलिये उन तीन दिनों में बीज न बोना चाहिये। यह निषेध सभी प्रकार के बीज बोने का है नकि प्रथमबीजोप्ति का ही। हलचक्र की ही तरह बीजोप्ति में फणिचक्र देखा जाता है। राहु जिस नक्षत्र में हो उससे आठ नक्षत्र तक असमीचीन, फिर तीन शुभ, तब एक अशुभ, पुनः तीन शुभ, अनन्तर एक अशुभ, फिर तीन शुभ, पुनः एक अशुभ, फिर तीन शुभ और शेष चार अशुभ हैं। इस प्रकार कुल २७ में १२ शुभ और शेष १५ नक्षत्र अशुभ हैं। लग्नों की विशेष दशा यह है कि यदि पाप ग्रह ३, ६, ११ में और शुभ ग्रह १, ४, ५, ७, ९, १० में हों तो लग्न शुभ होता है और साधारणतया ४, ६, ८, ९, १४ तिथियां वर्जित हैं। यदि संभव हो हलप्रवहण में निषिद्ध मेष आदि लग्नों का यहां भी वारण होना चाहिये। क्योंकि साधारण-तया कृषिकर्म मात्र में ही वे वर्जित हैं। इस प्रकार हलप्रवाह और बीजोप्ति दोनों में कुछ नक्षत्र तो सर्वथा वर्जित हैं। अतः उनमें तो यह काम होही नहीं सकता। मगर जो नक्षत्र विहित हैं उनमें भी हलचक्र और फणिचक्र के अनुसार जो नक्षत्र शुभ हों उन्हीं में हल चलावेंगे और बीज बोवेंगे और जो चक्र में अशुभ होंगे उन्हें भी छोड़ देंगे। बीजोप्ति में एक बात का और भी विचार अत्यावश्यक है। जिस खेत में बीज बोना हो उस समूचे में शेष का शयन मानकर जहां उनकी नाभि हो वहीं बीज बोया जाता है। शेष के शयन का नियम यह है कि भाद्रपद से आरंभ कर कार्त्तिक तक तीन मास उनका पूर्व सिर रहा करता है; अगहन, पूस, माघ में दक्षिण; फाल्गुन, चैत्र, वैशाख में पश्चिम

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

और ज्येष्ठ, आषाढ़, सावन में उत्तर रहा करता है और वह बीच खेत में ही दोनों ओर हाथ और पांव फैलाकर सोते हैं। सिर की ओर तीन भाग और पांव की ओर दो भाग छोड़कर बीच के एक भागमें नाभि होती है और वहीं बीज बोते हैं। दृष्टान्त केलिये जब आषाढ़ में बीज बोवेंगे तो सिर खेत के उत्तर किनारे और पांव दक्षिण किनारे पर रहेगा और दोनों हाथ पूर्व पश्चिम किनारे तक फैले होंगे। अब यदि खेत ५ कट्ठा उत्तर दक्षिण और दो कट्ठा पूर्व पश्चिम लम्बा हो तो पूर्व पश्चिम तो आधा आधा कर देंगे मगर उत्तर दक्षिण में यह बात होगी कि सिर की ओर यानी उत्तर तीन भाग और पांव की ओर दो भाग रक्खेंगे। इस तरह उत्तर में तीन और दक्षिण दो कट्ठा नापने पर और पूर्व, पश्चिम एक एक नापने पर जहां चारों का मेल होगा वहीं नाभि होगी और उसी में बीज डालेंगे। इसी तरह जिधर ही सिर होगा उधर तीन और पांव की ओर दो भाग रखकर और दोनों बगल आधा आधा करने पर जो स्थान होगा वहीं बीज डालना होगा। इसका निश्चय भूमि को ठीक ठीक नाप करलेना चाहिये। हलप्रवहण में भी यही देखा जाता है।

इस प्रकार सामान्यतया बीज बोने के नक्षत्र, तिथि, आदि का विचार किया जा चुका। मगर कहीं कहीं विशेष विशेष पदार्थ के बोने के लिये अलग अलग नक्षत्रादि कहे गये हैं। अतः उनका ज्ञान भी जरूरी है। किसी किसीने यह भी लिखा है कि जेष्ठ और आषाढ़ में तो सभी बीजों के लिये भूमि में रजस्वला धर्म रहता है। अतः सभी बोये जा सकते हैं। मगर शेष महीनों में विशेष विचार करना होगा। वे कहते हैं कि शतभिषा, स्वाति, श्रवण, पुष्य, आश्लेषा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मूल, अनुराधा, हस्त, रेवती, पूर्वाफाल्गुनी यह १४ नक्षत्र बीजोप्ति के लिये उत्तम, और अश्विनी, मृगशिरा, पुनर्वसु, धनिष्ठा ये चार मध्यम हैं। शेष नौ नक्षत्र निषिद्ध हैं। १, ६, ३०, को छोड़कर शेष विषम तिथियां श्रेष्ठ हैं और सम तिथियों में २, ६, १० मध्यम हैं। शेष सभी निन्दित हैं। यदि नवीन भूमि ली हो तो उसमें अनुराधा, अश्विनी, धनिष्ठा, रोहिणी, तीनों उत्तरा, स्वाती, पुष्य, आर्द्रा, भरणी, मघा इन्हीं

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

नक्षत्रों और भौमवार में प्रवेश उत्तम है। तभी हल बैल आदि ले जाना चाहिये। बुध, गुरुवार मध्यम और शेष वार निन्दित हैं। मगर उनमें भी सोमवार में तो कदाचित् भी न प्रवेश करे। मकर, वृष, कर्क, सिंह, मीन लग्नों को कुछ लोग उत्तम; तुला, मिथुन, कुम्भ को मध्यम और शेष को कृषि कर्म में निन्दित मानते हैं। पूर्वोक्त शुभ और अशुभ ग्रहों की स्थिति के सिवाय ऐसा भी लिखा है कि वे २, ३, ४, ५, ७, ९, ११ में शुभ हैं और सभी ग्रह ८ में अशुभ हैं। शुक्र तो ७ वें अशुभ है। शतभिषा नक्षत्र, शनिवार और शनि के लग्न मकर, कुम्भ में काले बीजों को बोवे। गुरुवार और मीन, धन लग्न में लाल बीज, मृगशिरा नक्षत्र और धन, मीन लग्न में धान, भौमवार और मेष, वृश्चिक लग्न में कोदों, भौमवार, मेष लग्न और मृग नक्षत्र में कंगनी (टांगुन); चित्रा नक्षत्र और मीन, धन में मूंग और गुरुवार तथा चन्द्रमा वाले लग्न में शेष बीज बोवे। अश्विनी, रेवती, हस्त, मृग, अनुराधा, स्वाती, पुष्य कृत्तिका, रोहिणी सभी बीजों केलिये प्रशस्त हैं। यदि गुरु कन्या लग्न में या उसके नवांश में हो तो ऊख बोना अत्युत्तम है। परन्तु खेत जोतने या बोने का आरंभ करने से प्रथम क्षेत्रपाल की पूजा १०२ रीति से करके उसे बलि भी दे डाले। यह काम आवश्यक है। और उससे भी प्रथम १६ रीति भूमि, कूर्म, अनन्त और गणेश की भी पूजा करलेना चाहिये। फिर क्षेत्रपाल की पूजा करके हल जोतने का काम शुरू करना चाहिये।

जब अन्न तय्यार होजाता है तब नवान्न भक्षण करते हैं और उसके लिये भी शुभ मुहूर्त्त की आवश्यकता है। प्राचीन समय में जो आग्रयणेष्टि (आग्रहायणी) कर्म होता था, वही नवान्न यज्ञ या नवशस्येष्टि के नाम से विज्ञात था। और जभी किसी को नवीन अन्न भक्षण करना होता था तभी न करके नवान्न यज्ञ प्रथम करते थे और नवीन अन्नकी हवि बनाकर हवनादि कर चुकने और देवताओं को अर्पण कर लेने पर ही भोजन करते थे। परन्तु अब ऐसा तो होता नहीं। साधारण रीति से होम होजाता है और शुभ मुहूर्त्त में भोजन कर लेते हैं। परन्तु आजकल ऐसी भी परिपाटी हैकि चाहेजोही चीज हो सभी के

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

नवान्न का मुहूर्त्त ढूँढ़ा जाता है । हालां कि सावां, जौ, धान और साठी आदि यज्ञिय अन्नों काही नवान्न होम करके भोजन होता है। ऊख, चना, मटर, तिल, तेनी, गेहूं आदि के लिये नवान्न की विधि नहीं है । इन्हें तो जभी चाहें खा सकते हैं । फिर भी आजकल सभी अन्नों के लिये साधारण नियम एक ही है, अस्तु । नवान्न के नक्षत्र स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, हस्त, पुष्य, अश्विनी, अभिजित्, मृग, चित्रा, अनुराधा और रेवती ये १३ हैं । पूस और चैत महीनों (धन, मीन संक्रान्तियों) को छोड़कर शेष महीनों; ४, ६, ११ के सिवाय अन्य तिथियों; शनि, भौम के अतिरिक्त शेष दिनों और विवाह प्रकरणोक्त १०४३ विषघटी के सिवाय अन्य समय में ही नवान्न भक्षण किया जाना चाहिये ।

धान रोपने के लिये रोहिणी, उत्तराफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा, शतभिषा, मूल और विशाखा ये ६ नक्षत्र; शनि, भौमवार के अलावे शेष ५ दिन उत्तम हैं और कृषिकर्म के साधारण लग्नादि को भी समझ लेना चाहिये जो हल प्रकरण में कथित हैं । इसी तरह पेड़ रोपने या बागीचा लगाने के लिये तीनों उत्तरा, शतभिषा, रोहिणी, मूल; ज्येष्ठा, कृत्तिका, श्रवण ये नौ नक्षत्र; सोम, गुरु, शुक्रवार और वृष, कर्क, तुला, धन, मीन लग्न श्रेष्ठ हैं । मगर वराहमिहिर ने तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, चित्रा अनुराधा, रेवती, मूल, विशाखा पुष्य, श्रवण, हस्त, अश्विनी ये चौदह नक्षत्र गिनाये हैं । इसके लिये वृक्षचक्र भी कहा है । सूर्य के नक्षत्र से वृक्ष रोपने के दिन के नक्षत्र तक गिनने पर प्रथम के तीन खराब, फिर तीन अच्छे, तब ६ खराब, पुनः ३ श्रेष्ठ, फिर एक अशुभ, अनन्तर ५ खराब, तब ६ अच्छे माने जाते हैं । एक बात और भी है । जिस दिन बगीचा लगाना हो शुक्ल प्रतिपदा से उस तिथि, रविवार से उस दिन और सूर्य नक्षत्र से उस दिन के नक्षत्र को गिनने के बाद तीनों संख्याओं को जोड़ कर नौका भाग दे । यदि १, २, ३, शेष हों तो खूब फल लगेंगे; ४, ५, में फल न लगेंगे; ६, ८ में लाभ होगा और ७, ९ या शून्य में मरण होगा। वृक्ष रोपने के समय पढ़ने का मंत्र यह है —"वसुधेति च सीतेति पुण्यदेति धरेतिच । नमस्ते सुभगे देवि वृक्षोऽयं वर्द्धतामिति" । घर में चन्द्रवेध (उत्तर दक्षिण लंबाई) ठीक है और ग्राम और बागीचे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में भी। तालाब में सूर्य वेध–पूर्व, पश्चिम लम्बाई-ठीक है। परन्तु वाटिका या बागीचे में भी सूर्य वेध ठीक माना जाता है। अर्थात् उसमें दोनों ही ठीक हैं। इस प्रकार वाटिका के बारे में दोनों मत हैं।

कोल्हू खड़ा करने में साधारणतः कृषिके सामान्य नक्षत्रों को लेना चाहिये। मगर इसमें कोल्हू चक्र का विचार है। सूर्य के नक्षत्र से उसके खड़ा करने के नक्षत्र तक गिनने पर कोल्हू चक्र होता है। परन्तु यहां पर दो मत हैं। पहला जो सर्वमान्य मत है वह केवल २७ नक्षत्रों को ही मानकर है और उसके अनुसार पहले का १ नक्षत्र अशुभ' तब ७ शुभ, फिर ९ अशुभ, पुनः ३ शुभ और अन्त के ७ अशुभ हैं। दृष्टान्त के लिये सूर्य धनिष्ठा में हों और अश्विनी में कोल्हू खड़ा करना हो तो धनिष्ठा से अश्विनी तक गिनने पर ६ नक्षत्र हुए। इनमें पहला १ अशुभ है और बाद के ७ शुभ हैं। यानी धनिष्ठा अशभ है। फिर पूर्वाभाद्रपदा से रोहिणी तक ७ शुभ हैं। इसी के भीतर ही अश्विनी है। अतः शुभ है। परन्तु दूसरे मत मे २८ नक्षत्र माने गये हैं। अतः अभिजित्को भी गिनेंगे। शुभ और अशुभ में भी भेद है। उसके अनुसार प्रथम ४ शुभ, फिर २ अशुभ, तब ३ शुभ, पुनः ६ अशुभ, अनन्तर ५ शुभ, फिर २ अशुभ और अन्त में ६ शभ हैं। अब रही कर्त्ता की मर्जी। चाहे जिस पक्ष के अनुसार करे।

रोहिणी, उत्तराषाढ़ा, उत्तराभाद्रपदा, रेवती, मूल, स्वाती, मृग, मघा, हस्त, इन नौ नक्षत्रों में और विशेष रूप से यदि स्वाती या रोहिणी सोमवार को हो तो खलिहान ठीक करना और उसमें मेंह गाड़ना चाहिये। और मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, पूर्वाभाद्रपदा, हस्त, कृत्तिका, धनिष्ठा, श्रवण, मृग, स्वाती, मघा, तीनों उत्तरा, शतभिषा, भरणी, चित्रा, पुष्य इन १९ नक्षत्रों और शनि, भौम के सिवाय शेष ५ दिनों तथा रिक्ता के सिवाय अन्य तिथियों में खड़ी फसल की कटनी शुरू करे और प्रथम बार काट कर खाने पीने के लिये घर लावे, जिसे कहीं कहीं आलो लाना कहते हैं। आलो शब्द आदि लवन का अपभ्रंश है, जिसका अर्थ है प्रथम बार काटना। काटने के दिन वृष, सिंह, वृश्चिक, कुंभ इनमें कोई लग्न होना चाहिये। परन्तु यदि गुरु या शुक्रवार को कटनी शुरू करे तो और भी उत्तम है। पूर्वाफाल्गुनी, श्रवण, मघा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

मूल, अनुराधा, ज्येष्ठा, उत्तरा फाल्गुनी, रोहिणी, रेवती, इन नौ नक्षत्रों में खलिहान में बैलों के पांव से रौंद कर, जिसे कहीं कहीं दौंरी कहते हैं, या जैसे हो, भूसे से अन्न को अलग कर देना चाहिये। खेती के कामों में साधारणतया शनि और भौम निन्दित है। खेत में से काट कर खलिहान में रखने के लिये और विशेष रूप से खलिहान में अन्न तैयार हो जाने पर उसे घर के कोठे वगैरः में रखने के लिये विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा इन दस के सिवाय शेष १७ नक्षत्र; मेष, कर्क, तुला के अलावे शेष नौ लग्न और सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार श्रेष्ठ हैं। परन्तु लग्नों में यह अवश्य देखना होगा कि चन्द्रमा लग्न से आठवें स्थान में न हो। यदि अन्न औरों को उधार देना हो इस विचार से, कि पीछे सूद सहित या सवाया करके लगें, तो उसके लिये श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, विशाखा, तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुनर्वसु, पुष्य, स्वाती, ज्येष्ठा और अश्विनी ये १३ नक्षत्र श्रेष्ठ हैं। पर बुधवार में रुपया या कोई धन दूसरे को न देना चाहिये।

कर्ज देने के लिये स्वाती, पुनर्वसु, चित्रा, अनुराधा, मृग, रेवती, विशाखा, पुष्य, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी इन ११नक्षत्रों को शुभ माना है। विशेषतः मेष, कर्क, तुला, मकर इन लग्नों में ही कर्ज देना चाहिये। परन्तु जब लग्न से ५, ९ में शुभ ग्रह और ८ वें में कोई ग्रह न हों तभी। भौमवार को ऋण लेना नहीं, किन्तु लौटाना और बुध को ऋण देना नहीं, किन्तु धनसंग्रह करना चाहिये। यदि रविवार को हस्त नक्षत्र हो, संक्रान्तिका दिन हो, वृद्धि योग हो तो भी ऋण न ले। क्यों कि वह वंश में बराबर बना रहता है, कभी चुकता होताही नहीं। इसीलिये उन्हीं समयों में लेने के बजाय ऋण चुकाया जाना उचित है। परन्तु मूल, ज्येष्ठा, आर्द्रा, आश्लेषा, विशाखा, कृत्तिका, तीनों पूर्वा, भरणी, मघा, तीनों उत्तरा, रोहिणी इन १५ नक्षत्रों में यदि किसी के पास जमा किया जाय, उधार दिया जाय, सूद पर दिया जाय, चोरी होजाय या गिर पड़े, तो फिर मिल नहीं सकता। यदि भद्रा, व्यतीपात, महापात, ग्रहण में भी यह बात हो तो यही दशा होती है।

गौ खरीदने और बेंचने के लिये अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशाखा, पुनर्वसु, ज्येष्ठा, शतभिषा, धनिष्ठा ये नौ नक्षत्र और किसी के मत से आवश्यक होने पर इन नवों के सिवाय अनुराधा, मूल, मृग, तीनों पूर्वा ये छ नक्षत्र और भी, माने गये हैं। पशुओं के जो योनि नक्षत्र विवाह प्रकरण में कहे गये हैं उन्हीं नक्षत्रों में पशुओं की रक्षा का प्रबन्ध करना चाहिये। यदि चाहते हों कि किसी कारण विशेष से स्थानान्तर या चरवाहे वगैरः के पास रखने से पशुओं की रक्षा होगी, तो जो पशु रखना हो उसके योनिनक्षत्रों मेंहीं रक्खा जावे। इसके सिवाय स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा मेंहीं ऐसा कर सकते हैं और यह सभी पशुओं के लिये समान है। यह काम वृष, मिथुन, कर्क, कन्या, तुला, धन, मीन लग्नों में हो, जब कि लग्न से आठवें स्थान में कोई भी ग्रह न हों। ४, ८, ६, १४, ३० तिथियों; श्रवण, तीनों उत्तरा, रोहणी, चित्रा इन नक्षत्रों और मंगलवार में न तो पशुओं को घर से बाहर ले जाय और न बाहर से घरमें लावे। किसी किसी ने सोम, बुध, शनिवारों को वर्जित किया है। इस तरह मंगल को लेकर चार दिन निषिद्ध हो जाते हैं। भरसक चारों को माने, नहीं तो दोनों में से किसी पक्ष को मानकर काम चला ले। शीघ्रबोध में लिखा है कि केवल रविवार ही वर्जित है और शेष दिन शुभ हैं। मगर यह निर्मूल है या समूल इसका विचार करने पर मूल का पता नहीं लगता। उन्हों ने पशुओं के क्रय विक्रय में चन्द्र, गुरु, शुक्रवारों को उत्तम बताया है। यद्यपि साधारण रीति से क्रयविक्रय के मुहूर्त्त पशुओं के लिये और गौ के लिये बतादिये हैं। तथापि अन्य वस्तुओं के क्रयविक्रय के मुहूर्त्तों को भी जानलेना आवश्यक है। यह नियम है कि विक्रय के मुहूर्त्त में क्रय न करे और क्रय के मुहूर्त्त में विक्रय भी न करे। विक्रय का अर्थ है दूसरे से बातचीत करके अपनी वस्तु उसके खरीदने के लिये अपने घर या दूकान से अलग करदेना। यह काम विक्रय मुहूर्त्त में हीं होना चाहिये। मगर अलग करदेने से हीं विक्रय नहीं होगया। किन्तु जब उसका मुहूर्त्त हो तो दाम देकर वह पदार्थ लेजाने को क्रय कहते हैं। अश्विनी, स्वाती, चित्रा, श्रवण, शतभिषा, रेवती यहीं क्रय नक्षत्र हैं और तीनों पूर्वा, विशाखा, कृत्तिका, आश्लेषा, भरणी, इनमें विक्रय शुभ है। कुम्भ लग्न को छोड़ शेष लग्नों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

में, जब शुभग्रह केन्द्र में और पापग्रह ३, ६, ११ में हों तो, विक्रय करनो चाहिये । तिथियां भी शुभ हों तभी करे । साधारणतया रिक्ता, अष्टमी, पर्व को छोड़दे । यह मुहूर्त्त घर पर ही क्रय विक्रय करने के बताये गये हैं । मगर यदि बाजार में क्रय विक्रय करना हो तो उसके लिये दो प्रकार के मुहूर्त्त असंभव हैं । अतः एकही प्रकार के मुहूर्त्त लिखते हैं और वे इसप्रकार हैं कि कुम्भ लग्न, भौमवार और रिक्ता तिथि के सिवाय अन्य लग्न, वार, तिथि में और चित्रा, अनुराधा, मृग, रेवती, रोहिणी, तीनों उत्तरा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, नक्षत्रों में वह काम किया जाय । लग्न में ग्रह स्थिति इसतरह हो कि लग्न में चन्द्र, शुक्र हों; ८, १२ में क्रूर ग्रह न हों और २, १०, ११ में शुभ ग्रह रहें । घोड़े के खरीदने आदि के नक्षत्र हैं अश्विनी, पुष्य, हस्त, रेवती, धनिष्ठा, मृग, स्वाती, शतभिषा, पुनर्वसु । रिक्ता के सिवाय शेष तिथियां और भौम के सिवाय अन्य वार ठीक हैं । इन में घोड़े के सम्बन्ध के सभी कार्य किये जासकते हैं । मगर उसपर सवारी करने में इनके सिवाय अश्वचक्र भी देखना होता है । वह यों है कि सूर्य के नक्षत्र से दिन के नक्षत्र तक गिननेपर प्रथम १५ शुभ, फिर ११ अशुभ, तब २ शुभ हैं। अभिजित् को मिलाकर गिनती करना चाहिये । इसीप्रकार हाथी के लिये चित्रा, अनुराधा, मृग, रेवती, अश्विनी, पुष्य, हस्त, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, पुनर्वसु, स्वाती ये नक्षत्र ठीक हैं । इन्ही में उसका क्रय विक्रयादि करसकते हैं । हाथी के ऊपर प्रथमवार अंकुश लेजाने के लिये शुभ ग्रहों के दिन, उन्हीं के लग्न या नवांश, शुभतिथि और शुभ नक्षत्र हैं, जो खलिहान के सम्बन्ध में गिनाये गये हैं । हां, यदि शनि को करना चाहे तो मकर या कुम्भ लग्न या उसके नवांश में करसकता है । हाथी, घोड़ा और रथ की सवारी के लिये सामान्य नक्षत्र हैं रेवती, अश्विनी, शतभिषा, स्वाति, मृग, चित्रा, पुनर्वसु, श्रवण, हस्त, पुष्य, धनिष्ठा और दिन हैं रवि, सोम, बुध, गुरु, शुक्रवार ।

किसी जगह जो पशुओं को घास वगैरः खाने के लिये नांद गाड़ते और भूमि ऊंची करते हैं उसे चरणी कहते हैं । उसके बनाने के लिये शुभ दिन और शुभतिथि, नक्षत्र, लग्नों को तो देखते ही हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु जिस जगह चरणी बनाना हो और जितनी लम्बी चौड़ी, उस जगह की लम्बाई और चौड़ाई को बनाने वाला घरका मालिक अपने ही हाथों नापकर दोनों को जोड़दे । फिर आठ का भाग देनेपर यदि ३, ६, ८ या ० बचे तो शुभ और १, २, ४, ५, ७ बचने पर अशुभ होता है । १ से लेकर शून्यतक शेष बचने के क्रमशः फल हैं (१) पशु हानि (२) पशु नाश (३) पशु लाभ (४) पशुओं की क्षीणता (५) पशु रोग (६) पशु वृद्धि (७) पशुओं की लड़ाई (८) बहुत पशुओं का होना । वृद्धि का अर्थ है बच्चों की संख्या के बढ़ने से बहुत होना । बहुत पशु का अर्थ है खरीद कर बहुत लाना । पशु लाभ का अर्थ है नातेदारी वगैरः में मिलना । पशुहानि कहते हैं चोरी वगैरः से कम होने को । क्षीणता दुर्बलता को और संख्या में कमी को कहते हैं ।

भूसा रखने के लिये भी कृषि केही नक्षत्र शुभ हैं और वही तिथि आदि । केवल भूसा के लिये वूसा चक्र देखलेना चाहिये । जिसदिन भूसा घर या कोठे वगैरः में रखना हो उस दिन के नक्षत्र तक सूर्य के नक्षत्र से गिन ले । गिनती में अभिजित् भी लिया जाय और जिस नक्षत्र पर उससमय सूर्य हो वही सूर्य नक्षत्र पञ्चांग से जाना जासकता है । गिनती में जो पहले १६ नक्षत्र होंगे वे शुभ होंगे । मगर उनके बाद के आठ खराब और फिर शेष ४ अच्छे होते हैं ।

६–वास्तु और प्रकीर्णविषय ।

गृहनिर्माण आदि के सम्बन्ध में जो कुछ भी विचार ज्योतिष ग्रन्थों में किया जाता है उसे वास्तु विचार कहते हैं और ऐसे प्रकरण को वास्तुप्रकरण कहते हैं । वास्तु कहते हैं उस स्थान को जहां बसा या रहाजाय और उस स्थान के अधिष्ठातादेव को भी वास्तुही कहते हैं । वास्तुप्रकरण में भूमि और गृहका विचार करनेसे प्रथम ग्रामकाही विचार करते हैं कि अमुक ग्राम अमुक पुरुष के निवासयोग्य है और इस तरह जब यह देख लेते हैं कि कोई ग्राम रहने योग्य है तब उस ग्राम में किस तरफ रहे इसका भी विचार करते हैं । आखिर कार ग्राम के उत्तर पूर्व आदि भागों या मध्य में कहीं न कहीं तो रहने योग्य होगा ही । क्योंकि जिस तरह सभी ग्राम सभी लो-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गों के निवास योग्य नहीं होते उसी प्रकार ग्राम का सभी भाग भी सबके योग्य नहीं होता । इसी से उस निवास योग्य भाग को जान कर उसी में घर के बनाने के लायक भूमि की तजवीज करेंगे और जिस प्रकार की भूमि लिखी है उस प्रकार की मिल जाने पर कितनी दूर में घर बनाया जाय यह देखेंगे । अर्थात् घरकी लम्बाई चौड़ाई का पता लगावेंगे और उसे ठीक करेंगे । क्योंकि सभी के लिये एक ही लम्बाई चौड़ाई का घर ठीक नहीं होता और लम्बाई चौड़ाई भी मनमानी नहीं होती । किन्तु उसका भी हिसाब है कि जब लम्बाई कितनी हो तो चौड़ाई कितनी हो । या चौड़ाई कितनी हो तो लम्बाई कितनी । इसीलिये गृहभूमि का पिण्ड या क्षेत्रफल पहले निकाल लेना पड़ता है । पीछेसे लम्बाई चौड़ाई ठीक करते हैं । इस प्रकार लम्बाई और चौड़ाई या आयाम (दीर्घता वा दैर्घ्य) और विस्तार का निश्चय कर चुकने पर ही द्वारका निश्चय करते हैं कि किस दिशा में और कहां दरवाजा हो । इस तरह एक के बाद दूसरी चीज का निश्चय करते हैं । परन्तु यदि किसी नये ग्राम में न बसना हो तब तो ग्राम का विचार करना ही बेकार है । केवल भूमि का ही विचार करेंगे कि कौनसी बसने योग्य है । ग्राम के किस भाग में रहें यह भी विचार करने की नौबत शायद ही आती है । क्योंकि जब एक जगह बस गये हैं तो दूसरी दिशा में जाना भी तो आसान नहीं है । परन्तु यदि आवश्यकता हो तो उत्तम भूमि के ख्याल से भी एक भाग से दूसरे में जाना ही पड़ता है । भूमि के देखने में भी दो बातों का विचार करना होता है । एक तो यह कि किधर ऊंची और किधर नीची है और पानी किधर बहेगा । ऊपर पीली है या काली आदि और बालू मिश्रित है या कैसी इत्यादि । दूसरी यह कि उस के भीतर हड्डी वगैरः शल्य तो नहीं है और यदि वह हो तो उस के दूर करने का उपाय करके दूर करना । सारांश भूमि के ऊपर और भीतर दोनों तरह से विचार और संशोधन करना आवश्यक है । मकान रास्ते से कितनी दूर हो और उसके किधर कितनी दूर तक वृक्षादि न हों और किधर कौन वृक्ष हो इत्यादि बातें भी विचारी जाती हैं और इस विचार को वेधविचार कहते हैं । इस प्रकार यदि देखा जाय तो वास्तुविचार बहुत ही क्लिष्ट है । और यदि ऊपर लिखी बातों में कोई भी छोड़ दीजाय तो भविष्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में परिणाम बुरा होता है।

यह भी जान लेना चाहिये कि घर के लिये जो शोध की जाती है उसमें बसनेवाले प्रधान पुरुष और घर के नाम के नक्षत्र से विवाह की ही तरह मेलापक (गणना) किया जाता है और सभी बातें उसी तरह देखी जाती हैं। केवल नाड़ी दोष नहीं माना जाता है। बल्कि एक नाड़ी होने से और भी उत्तम फल माना जाता है। दूसरी बात यह है और यद्यपि मेरे जानते यह उचित नहीं है, फिर भी यह मेलापक राशि के नाम से न किया जाकर पुकारने के ही व्यावहारिक नाम से किया जाता है और ग्राम का भी व्यावहारिक नाम देख कर ही नक्षत्र जानने की चाल है। ग्राम के साथ तो मेलापक नहीं देखा जाता। मगर घर के साथ अवश्य देखा जाता है। नामों से नक्षत्र का ज्ञान तो 'चू चे चो ला अश्विनी' इत्यादि पूर्वोक्त रीति से जाना ही जाता है। मगर नक्षत्रों से राशि बनाने में दो रीतियां हैं। एकतो पूर्वोक्त नौ नौ चरण वाली, जो विवाह, जन्म, उपनयनादि में सर्वत्र प्रचलित है और यही वास्तुप्रकरण में भी सर्वमान्य है और पीयूषधारा वगैरः ने इसे ही माना है। दूसरा पक्ष भी वास्तुशास्त्रों में वर्णित है और उसका उल्लेख पीयूषधारा में भी कर दिया गया है। मगर उसे प्रधान न मानकर यही लिख दिया है कि वास्तुशास्त्र में नवांश का विचार न करने के कारण हीं यह पक्ष लिखा है। परन्तु पीयूषधाराकारने तो नवांश का विचार किया ही है और हम भी उसी मार्ग का अवलम्बन करते हैं। अतएव हम भी प्रथम पक्ष के ही अनुसार कार्य करने की राय देते हैं। फिर भी यदि चाहें तो दूसरे पक्ष के अनुसार भी करने से कोई मना नहीं कर सकता। इसीलिये उसका ज्ञान भी आवश्यक है। वह इस तरह है। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका की मेष राशि; मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी की सिंह और मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा की धन राशि होती। शेष नक्षत्रों में दो दो की क्रमशः एक एक राशि मानते हैं, जैसे रोहिणी, मृग की वृष; आर्द्रा, पुनर्वसु की मिथुन इत्यादि। इस तरह कुल शेष नौ राशियों में बचे बचाये १८ नक्षत्र हो जाते हैं और पूर्वोक्त तीन में नौ और समूचे नक्षत्रों का विभाग १२ राशियों में हो जाता है, अस्तु।

पहले ग्राम में रहने की इच्छावाले के पुकारने के नाम से नक्ष-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

त्र बनाकर उसी से राशि बनावे । इसी तरह ग्राम के भी नाम से नक्षत्र ज्ञान पूर्वक राशिका ज्ञान प्राप्त करना चाहिये । दृष्टान्त के लिये यदि पुरुष का नाम देवदत्त और ग्राम का नाम लीलापुर हो तो पुरुष का रेवती नक्षत्र होने से मीन राशि और ग्राम का भरणी होने से मेष राशि हुई और यह बात राशि जानने के पूर्वोक्त दोनों मतों के अनुसार ही है । हालां कि हम द्वितीय पर विशेष जोर नहीं देते । इस प्रकार दोनों की राशि जान लेने के बाद पुरुष की राशि से गिनने पर ग्राम की राशि यदि २, ५, ६, १०, ११ वीं में से कोई हो तो उस के लिये वह ग्राम शुभ माना जायगा और शेष १, ३, ४ आदि हो तो अशुभ । ग्राम को शुभ अशुभ जानने के लिये दूसरी भी पहचान की जाती है और वह है उत्तमर्ण और अधमर्ण या ऋण देने और लेने वाले का, जिसे वास्तुशास्त्रों में काकिणी कहते हैं । काकिणी नाम है कौड़ी का और साधारण बोली में रुपये पैसे को कौड़ी शब्द से प्रायः व्यवहार किया करते हैं । जिसकी काकिणी कम होती है वह ऋण देने वाला और जिसकी ज्यादा हो वह ऋण लेने वाला या चुकाने वाला माना जाता है । इसी से पुरुष की काकिणी कम और ग्राम की ज्यादा होना हीं ठीक है । इस काकिणी के निकालने की रीति यह है कि जिस नाम की काकिणी निकालनी हो उसके प्रथम अक्षर से पहले उसके वर्ग का विवाहोक्त रीति से पता लगा लें और इस तरह वर्ग की जो संख्या आवे उसे दूना करके दूसरे के वर्ग की संख्या को उसमें जोड़ दे । क्योंकि विना दो के काकिणी का विचार केवल एक के साथ हो ही नहीं सकता । फिर उसमें आठ का भाग देने पर जो शेष बँचे वही काकिणी होती है । दृष्टान्त के लिये ऊपर कहे नामों को ही लीजिये । देवदत्त के दकार से उसका तवर्ग हुआ जो अवर्ग से पांचवां है । इसी तरह लीलापुर के लकार से उसका यवर्ग हुआ जो ७ वां है । अब ५ को दूना करने से १० होने पर उसमें ग्राम के वर्ग की संख्या ७ मिला देने पर १७ हुआ और उसमें ८ का भाग देने पर जो १ शेष बचा वही पुरुष की काकिणी हुई । इसी तरह ग्राम के वर्गांक ७ को दूना करने से १४ होने पर पुरुषवर्ग का अंक ५ उसमें मिलाकर १६ किया और उसमें ८ का भाग देने से जो ३ बचा वही ग्राम की काकिणी हुई ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अब देखते हैं कि पुरुष की काकिणी १ यानी कम और ग्राम की ३ यानी ज्यादा है। इसलिये उस पुरुष के लिये वह ग्राम शुभ है। इस प्रकार इन दोनों तरीकों से जांचने पर यदि ग्राम शुभ हो तभी वहां रहना प्रशस्त होगा। मगर यदि एक प्रकार से ठीक और दूसरी तरह से खराब हो तो किसी तरह काम चलाऊ होगा। मगर उसमें भी काकिणी वाली परीक्षा में ठीक होना चाहिये। क्योंकि यदि काकिणी ठीक नहीं हुई तो उस ग्राम में नीरोगता आदि चाहे भले ही रहे। मगर दरिद्रता हमेशा रहेगी। इसीसे काकिणी पर विशेष दृष्टि रहनी चाहिये। क्योंकि दरिद्रता सब दुःखों की जननी है।

काकिणी निकालने की दूसरी रीति यह है कि विवाहोक्त रीति से पुरुष और ग्राम के जो वर्ग निकाल लिये हैं वे क्रमशः गरुड, बिड़ाल, सिंह, कुत्ता, सर्प, चूहा, हाथी और खरगोश के माने जाते हैं। इनमें यह नियम है हरेक वर्ग का पांचवां उसका शत्रु है। जिस वर्ग को लें उसीसे गिनती शुरू करने पर जोही पांचवां होगा वही उसका शत्रु होगा। यदि सर्प से गिनते हैं तो उससे पांचवां गरुड़ आता है और गरुड़ से पांचवां सर्प है और दोनों का परस्पर वैर है। ऐसी दशा में ग्राम और पुरुष के वर्ग एक दूसरे से पांचवें न हों, एक बात तो यह मोटी है और ध्यान में रखने की है। काकिणी की बात यों है कि ग्राम और पुरुष के वर्गों की संख्याओं में यदि पुरुष की पहले और ग्राम की उसके बाद एक ही साथ लिख दें तो जो अंक बन जायगा उसमें ८ का भाग देने से जो शेष आवेगा वह धन कहा जायगा और ग्राम संख्या पहले तथा पुरुष संख्या बाद को रखने पर जो अंक होगा उसमें ८ का भाग देने पर जो शेष होगा वह ऋण होगा। अब यदि धन अधिक हुआ तब तो ग्रामवास अच्छा और ऋण अधिक हुआ तो बुरा और दरिद्रता का कारण होगा। दृष्टान्त के लिये देवदत्त और लीलापुर को ही लीजिये। पहले का ५ वां और दूसरे का ७ वां है। पहले ५ और उसके बाद ७ रखने से ५७ हुआ और उलटा रखने से ७५ हुआ। अब यदि ५७ में आठ का भाग देते हैं तो १ शेष रहने से १ ही धन हुआ और ७५ में ८ का भाग देने से ३ शेष रहने से ३ हीं ऋण हुआ। जब ऋण हीं ज्यादा हो गया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

तब वह ग्राम अच्छा न होगा । इस प्रकार दोनों रीतियां हैं । यदि दोनों से ठीक हो तब तो कहना हीं क्या ? वह तो सर्वोत्तम होगा । यदि ऐसा न हो तो किसी एक रीति से ही काम चलाना चाहिये । मगर ऐसा न हो कि दोनों के वर्ग एक दूसरे के शत्रु हों । यदि ऐसा हो गया तब तो बहुत ही खराब हो जायगा ।

ग्राम में कहां बसे, इस सम्बन्ध में यही विचार है कि एक तो पूर्वोक्त आठ वर्ग क्रमशः पूर्व, अग्नि आदि दिशाओं में बली हैं। अर्थात् अवर्ग पूर्व में, कवर्ग अग्नि में इत्यादि । इस तरह पुरुष का वर्ग जानकर पहले यह जानना होगा कि वह किस दिशा में बली है । इसके बाद उससे पांचवीं दिशा जो होगी, न तो उस दिशा में वह बसेगा और न मकान का द्वार ही उस दिशा में वह पुरुष बनावेगा । क्योंकि जब अपने वर्ग से पांचवां शत्रु होता है तो जिस दिशा में शत्रु बलवान् हो उसमें घर बनाने या उधर द्वार करने से बलवान शत्रु के हाथ में पड़जाना होगा । इस तरह यदि किसी का अनन्त नाम हो तो वह अवर्ग का है और उसका वर्ग पूर्व में बली है । अब वह पूर्व से पांचवीं दिशा पश्चिम में न तो ग्राम में बसेगा ही और न पश्चिम रुख द्वार ही करेगा । दूसरी रीति यह भी बताई गई है कि जिस ग्राम में बसना हो उसके नौ बराबर हिस्से करने पर मध्य के हिस्से में वृष, मिथुन, सिंह और मकर राशि वाले न बसें । इसी तरह पूर्व, अग्नि आदि के आठ शेष भागों में क्रमशः वृश्चिक, मीन, कन्या, कर्क, धन तुला, मेष, कुंभ इन राशियों वाले न बसें । पुरुष की राशि व्यावहारिक नाम से ही निकाली जायगी। इस तरह पूर्व में वृश्चिक राशि वाला न बसेगा और अग्नि में मीन वाला इत्यादि । जिस तरह वर्ग के हिसाब से निवास की दिशा कहकर द्वार का भी प्रासंगिक वर्णन ऊपर आगया है उसी तरह ब्राह्मण राशि वाले पूर्व, वैश्य राशि के दक्षिण, शूद्र राशि के पश्चिम और क्षत्रिय राशि के उत्तरमुख द्वार न बनावें । जैसा कि पहले ही विवाहप्रकरण में कहचुके हैं, मेष से शुरू करके मेष, वृष, मिथुन कर्क क्रमशः क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र और ब्राह्मण राशियां हैं । इसी तरह फिर सिंह आदि और धन आदि का भी विभाग है ।

ग्रामवास के विचार के बाद घर की लम्बाई चौड़ाई आदि का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विचार किया जाता है। इसमें भी पहले पुरुष के नाम से नक्षत्र बनाकर उसके साथ मेलापक करने के लिये ऐसा नक्षत्र लेते हैं जिसका मेलापक ठीक ठीक हो जाय। बस, वही घर का नक्षत्र कहावेगा। मगर जिस नक्षत्र के साथ मिलान करेंगे उसके लेने में यह भी ध्यान रखना होगा कि कहीं व्यय आय से ज्यादा न हो जाय। यह तो निश्चित ही है कि १ से लेकर ८ तक ही आय होते हैं। उनमें भी १, ३, ५, ७ ये विषम चार ही उत्तम हैं और २, ४ आदि सम अच्छे नहीं हैं। ऐसी दशा में व्यय आय के बराबर न होकर कम ही रहना उत्तम है। अर्थात् यदि आय ७ हो तो व्यय १, ३, ५ में से कोई हो और सात से अधिक तो किसी हालत में नहो। ७ तक तो आयव्यय बराबर रहने से उस मकान में बचत न होगी। मगर व्यय बढ़ने से तो हमेशा ऋणी रहना पड़ेगा। व्यय का नक्षत्र से ही सम्बन्ध है। इसीसे नक्षत्र लेने में व्यय पर ध्यान रखने को कहा है। वह सम्बन्ध ऐसा है कि जो गृहका नक्षत्र मेलापकसे ठीक होगा उसे अश्विनी से गिनकर जितनी संख्या हो उसमें ८ का भाग देने से जो शेष बचेगा वही व्यय होगा। जैसे यदि हस्त नक्षत्र से मालिक का मेलापक होगया तो अश्विनी से वह १३वां है। इस १३ में ८ का भाग देने से जो ५ शेष बचा वही व्यय हुआ। यही व्यय आय से कम होना चाहिये।

यद्यपि १ से लेकर ८ तक ही आय होते हैं और उनमें भी १, ३ आदि विषम ही उत्तम हैं। मगर आय कौनसा होगा यह भी पहले ही ठीक कर लगे। क्योंकि जो चार शुभ आय हैं वे सभी तो एक मकान में हो सकते नहीं। एक में तो एक ही होगा। इस लिये जो मकान बनाने जा रहे हैं उसके लिये इष्ट आय कौन होगा इसका निर्णय दो तरह से होता और आय निर्णय के बादही इससे कम व्यय का निर्णय करेंगे। पहले यह जान लेना चाहिये कि १ से ८ तक आयों के नाम क्रमशः ये हैं,–(१) ध्वज, (२) धूम (३) सिंह (४) कुत्ता (५) गौ (६) गधा (खर) (७) हाथी (गज) (८) कौआ। आय-जानने की पहली रीति यह है कि मकान का द्वार किधर है यह जान ले और द्वार से ही आय का निश्चय करे। क्योंकि द्वार के ही विचार से आय माने जाते हैं। साधारणतया तो ये आठों क्रम से पूर्व, अग्नि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

आदि दिशाओं में रहते हैं। अतः जिधर द्वार होगा उधर वाला ही आय उस मकान का होगा। यदि पूर्व द्वार होगा तो ध्वज यानी १ आय होगा और पश्चिम होगा तो गौ यानी ५ होगा। इसी तरह औरों को भी जानना होगा। परन्तु विशेषता भी है और वह यह है कि १, ३, ५, ७ इन चारों आयों में पूर्व दिशा में; १, ३, ७ में दक्षिण; १, ३, ६, ७ में; पश्चिम और १, ३, ७, में उत्तर द्वार होना चाहिये। इस तरह चारों आयों में पूर्व और पश्चिम द्वार करना होगा और तीन में दक्षिण, उत्तर। इसके सिवाय हाथी के मकान बनाने में १, ७, (ध्वज, गज), घुड़साला बनाने में १, ५, ६, ऊंट शाला में १, ५, ७; पशुशाला में १, ५ और ध्वज या १ तो सभी मकानों के लिये ठीक है। बावड़ी, कूआं, तालाब में ७ (गज), अग्निशाला में या सोनार, लोहार, आदि अग्नि से जीविका करने वालों के मकान में २ (धूम), म्लेच्छादि के मकान में ४ (कुत्ता), वेश्या के घर में ६ (गधा), शेष कुटियों में ८ और कोठे अंटारी आदि में १, ३, ५ आय होना चाहिये। इससे यह भी स्पष्ट है कि साधारणतया जो सम आय निषिद्ध हैं वह विशेष घरों में रक्खे जाते ही हैं। इस प्रकार घरकी दिशा और वह किस के लिये है इसका विचार करके आय का निश्चय करे और फिर उसी आय से कम हीं व्यय हो इसी विचार से ऐसे नक्षत्र के साथ घरके मालिक की गणना ठीक करे जिसकी संख्या में ८ का भाग देने से शेष बचनेवाला जो व्यय है वह ठीक ठीक हो जाय।

इस प्रकार गृह का नक्षत्र जानकर उसकी अश्विनी से गिनती करने पर जो संख्या आवे उसमें १ घटा कर शेष को १५२ से गुणा करके एक जगह रक्खे और पूर्व रीति से जो आय निकाला हो उस में भी एक घटाकर शेष को ८१ से गुणा करने पर गुणनफल को पहले के १५२ के गुणनफल में जोड़ दे और उसमें ऊपर से १७ और भी जोड़ कर जो संख्या बने उसमें २१६ का भाग देने से जो शेष बचे वही घरका पिण्ड या क्षेत्रफल होगा और उसमें यदि चौड़ाई का भाग देंगे तो लम्बाई और लम्बाई का भाग देंगे तो चौड़ाई आ जायगी। तात्पर्य यह है कि घर की लम्बाई और चौड़ाई दोनों में से एक को तो स्वयमेव अनुकूलता देखकर निश्चय कर सकते हैं। उसमें किसी नियम की पाबन्दी नहीं करनी पड़ती। मगर ज्यों ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोनों में एक का निश्चय किया कि दूसरी का निश्चय मन से ही नहीं कर सकते। किन्तु ऊपर की रीति से घरका पिंड (क्षेत्रफल) निकाल उसमें भाग देने से ही वह आवेगी। अर्थात् यदि चौड़ाई पहले निश्चित होगी तो उसी का भाग देकर लम्बाई निकालेंगे और यदि लम्बाई ही निश्चित होगी तो चौड़ाई निकालेंगे। दृष्टान्त के लिये यदि पुरुष कानाम नीलकंठ हो तो उससे घर की नक्षत्र रोहिणी मानने से मिलाप होगा। क्योंकि पुरुष का नक्षत्र अनुराधा होगी। पूर्व द्वार होने से आय हुआ ७ और व्यय तो ४ ही होगा। क्योंकि रोहिणी की संख्या ४ ही है और उसमें ८ का भाग दिया जाने पर ४ ही शेष होगा। इस ४ में से १ घटाने से शेष ३ को १५२ से गुणा करने पर ४५६ हुआ। इसी तरह आय में से १ घटाने पर शेष ६ को ८१ से गुणा किया तो ४८६ हुए। इन दोनों का जोड़ ९४२ हुआ। इसमें १७ मिलाने पर ९५९ हुआ। इसमें २१६ का भाग देने से जो शेष ९५ बचे यही गृह का पिण्ड हुआ। अब यदि घरकी लम्बाई १९ हाथ मानें तो चौड़ाई ५ हाथ होगी। यदि चौड़ाई ही ५ हाथ मानी हो तो लम्बाई १९ हाथ होगी। क्योंकि इसी ९५ में उसका भाग देंगे। इस प्रकार छोटे छोटे घरों की लम्बाई चौड़ाई निकलेगी। मगर यदि बहुत बड़ा घर बनाना हो तो इस प्रकार जो क्षेत्रफल वा पिण्ड आया है उसमें २१६ को इष्ट से आय से गुणा करके जोड़ देने से उसका पिण्ड आ जावेगा। जैसे ९५ जो पिण्ड है इसी में ऊपर के इष्ट आय ७ को २१६ से गुणा करके गुणनफल १५१२ को जोड़ने से १६०७ होगा। अब इसमें बड़े घर की मानी लम्बाई या चौड़ाई का भाग देकर चौड़ाई या लम्बाई निकाल लेनी चाहिये। इसी प्रसंग में यह भी लिखा है कि ब्राह्मण के घर का द्वार पश्चिम में, क्षत्रिय का उत्तर, वैश्य का पूर्व और शूद्र का दक्षिण में द्वार होना चाहिये। इस लिये आय, जाति और जातिकी राशियों के हिसाब से द्वार बनाया जाने का नियम सिद्ध होगया। यदि ये तीनों बातें मिलजायं तो उत्तम समझना चाहिये और दो से मध्यम तथा एक से कनिष्ठ। अभी जो ब्राह्मणादिके लिये पश्चिम आदि का नियम बताया है उसमें यह भी शर्त्त है कि जब ब्राह्मण का ध्वज, क्षत्रिय का सिंह, वैश्यका वृष और शूद्र का गज आय हो तभी पश्चिमादि उक्त दिशाओं के द्वार

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उत्तम माने जाते हैं। यदि पिंड में व्यय को जोड़ कर उसमें १६ प्रकार के गृहों के नामों के अनुसार जो अपने घर का नाम हो उसके अक्षरों की संख्या भी जोड़ दें और उस जोड़ में ३ का भाग दें तो १, २, ३ या शून्य के शेष रहने पर क्रमशः वह इन्द्र, यम और राजा का अंश कहावेगा। अर्थात् १ इन्द्र, २ यम और ३ राजा। इन में यम यानी दो ठीक नहीं माना जाता है। सोलह प्रकार के गृह और उनके अलग अलग नामों का विचार भी अभी कर लेने से ठीक होगा।

बात यह है कि पूर्व कथित शुभ आयों के अनुसार कोने में तो घर का द्वार होता ही नहीं। क्योंकि कोने में खराब आय होते हैं। ज्योतिष ग्रन्थों में ऐसा करने की मनाही भी है। अब रह गईं चार दिशायें। उन्हीं में द्वार बनावेंगे। अब यदि किसी एक ही दिशा में द्वार बनावेंगे तो एक ही प्रकार का घर होगा, चाहे पूर्व द्वार वाला, दक्षिण वाला, पश्चिम वाला या उत्तर वाला। मगर यदि दोनों ओर द्वार रक्खें तो तीन घर होंगे, जैसे पूर्व वाला एक, दक्षिण वाला दूसरा और दोनों ओर वाला तीसरा। इसी तरह यदि तीन ओर रक्खें तो ७ प्रकार के होंगे। पूर्व का एक, दक्षिण का दूसरा, पश्चिम वाला तीसरा, पूर्व दक्षिण दोनों ओर वाला चौथा, पूर्व पश्चिम दोनों ओर वाला पांचवां, दक्षिण पश्चिम दोनों ओर वाला छठां और पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तीनों ओर वाला सातवां। इसीतरह यदि चारों ओर रक्खें तो १५ होंगे। इसीलिये ज्योतिषियों ने नियम बनादिया है कि एक द्वार होनेपर एकही घर होता है। यदि दूसरीओर द्वारहोतो पहलेकादूना यानी दो और भी बढ़जाँयगे। यदि तीसरीओरभी रहे तो दूसरे का दूना यानी ४ और बढ़ेंगे और यदि चौथी ओर भी द्वार हो तो ४ के दूने ८ और भी बढ़ेंगे। इन्हीं १, २, ४, ८ अंकों को, जो क्रमशः एक से दूसरे दूने हैं, शाला या घर का ध्रुवांक कहते हैं। ध्रुवांक शब्द ध्रुव और अंक शब्दों से बना है और इसका अर्थ है निश्चित अंक। अर्थात् द्वार के हिसाब से जो निश्चित संख्या होगी उसीके सूचक ये अंक हैं। अब यदि इन सभी अंकों को जोड़ देते हैं तो १५ हो जाता है। परन्तु एक प्रकार का और भी घर होता है जिसमें आदमी नहीं रहते। किन्तु अन्न या भूसा वगैरः रखते हैं और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जिसका द्वार चारों दिशाओं में न बनाकर ऊपर की ओर बनाते हैं। इसे संस्कृत में कोष्ठी और व्यवहार कोठी, कोठा आदि कहते हैं। इस तरह कुल १६ प्रकार के घर होगये। यद्यपि ज्योतिषग्रंथोंमें पूर्वद्वारका ध्रुवांक १ दक्षिण का २ इत्यादि लिखा रहता है। मगर खामखाह पूर्व से ही तात्पर्य नहीं है। किन्तु केवल एक द्वार वाले से। फिर वह द्वार चाहे जिस ओर हो। सब काम और दिशा का व्यवहार पूर्व से ही शुरू होने के कारण पूर्व का उल्लेख कर दिया है। और लिख दिया है कि शालाओं या गृहों के जो ध्रुवांक हैं उन्हें जोड़कर उन में एक और मिला देने से गृहों के कुल भेदों की संख्या मालूम हो जाती है। इन सोलह घरों के नाम अलग अलग ये हैं (१) ऊपर की ओर द्वार वाले यानी कोठी का ध्रुव, (२) पूर्व वाले का धान्य (३) दक्षिण का जय, (४) पूर्व दक्षिण दोनों ओर वाले का नन्द (५) पश्चिम वाले का खर (६) पूर्व पश्चिम दोनों का कान्त (७) दक्षिण पश्चिम का मनोरम (८) पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तीनों ओर वाले का सुमुख (९) उत्तर वाले का दुर्मुख (१०) पूर्व, उत्तर वाले का उग्र (११) दक्षिण वाले का विपक्ष (१२) पूर्व, दक्षिण, उत्तर द्वार का धनद (धन देने वाला), (१३) पश्चिम उत्तर वाले का नाश, (१४) पूर्व, पश्चिम, उत्तर वाले का आक्रन्द (१५) दक्षिण, पश्चिम, उत्तर वाले का विपुल और (१६) पूर्व, दक्षिण, पश्चिम, उत्तर इन चारों दिशाओं में द्वार वाले का विजय। १, २, ३, ४, ५, ६, १०, १३ ये आठ नाम दो दो अक्षरों के; ८, ९, ११, १२, १४, १५, १६ ये सात तीन तीन अक्षरों के और ७ वां चार अक्षरों का है पहले अंश निकालने के लिये घर के नामों की अक्षर संख्या को जो पिंड में जोड़ने को कहा है उसका अभिप्राय इन्हीं २, ३ या ४ अंकों के जोड़ने से है। क्योंकि सोलह घरों में किसी के नाम दो अक्षरों के हैं और किसी के तीन के और एक का चार का। यद्यपि इतना हीं कह देने से भी काम चल सकता था कि फलां फलां द्वार वालों के नाम में दो अक्षर हैं, फलां में तीन और फलां में चार और उनके नामों के कहने की तो जरूरत अंश निकालने में न थी। मगर यदि नाम न बताते तो यह कैसे पता चलता कि किधर किधर द्वार वाले घर अच्छे हैं और किधर किधर वाले बुरे। जब नाम कह दिया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तब तो नामों से ही अच्छे बुरे का ज्ञान हो जायगा। क्योंकि अच्छे नाम के अच्छे और बुरे नाम के बुरे होंगे। इनमें नाम के ही अनुसार १, २, ३, ६, ७, ८, १२, १५, १६, ये नौ अच्छे और ४, ५, ९, १०, ११, १३, १४ ये ७ बुरे हैं। ध्रुव में धन, धान्य, सुखकी वृद्धि; धान्य में धन; जय में विजय; नन्द में स्त्री की हानि; खर में सम्पत्ति नाश; कांत में पुत्र पौत्र प्राप्ति; मनोरम में लक्ष्मीप्राप्ति; सुमुख में भोग विलास; दुर्मुख में हर वस्तु की विमुखता; क्रूर (उग्र) में सब दुखकी प्राप्ति; विपक्ष में शत्रु भय; धनदमें धन प्राप्ति; नाश में सर्वनाश; आक्रन्द में शोक और रोना; विपुल में लक्ष्मी और यश की प्राप्ति और विजय में धन प्राप्ति। यही फल अलग अलग गृहों के कहे गये हैं, अस्तु। यदि यह जानना हो कि गृह का आय क्या है तो उसके पिंड में आठका भाग देने से जो शेष होगा वही उसका आय होग।

परन्तु एक दूसरा मत भी है जिसके अनुसार घर की उत्तमता जानने के लिये नौ बातें जानी जाती हैं। इन में कुछ तो पूर्वोक्त आय आदि ही हैं और कुछ दूसरे भी हैं। उस मत से आय आदि नवों बातों को जानने की रीति भी दूसरी ही है। वे नौ बातें हैं (१) आय (२) वार (३) अंश (४) धन (५) ऋण (६) नक्षत्र (७) तिथि (८) योग (९) आयु। इनके जानने की रीति यह है कि पूर्वोक्त रीति से घरका पिंड निकालकर, या यदि ऐसा न हो सके तो अपने ही मनसे उसकी लम्बाई चौड़ाई मानकर दोनों के गुणनफल रूप पिंड को नौ स्थानों में अलग अलग रक्खे और उन नवों को क्रमशः ९, ९, ६, ८, ३, ८, ८, ४, ८ से पृथक पृथक् गुणा करे और जो गुणन फल नौ जगह आवें उनमें क्रमशः ८, ७, ९, १२, ८, २७, १५, १२० का अलग अलग भाग दे। इस तरह जो अंक नवों जगह शेष होंगे वही क्रमशः आय, वार, अंश आदि पूर्वोक्त नौ बातें होंगी। पहले में जो शेष होगा वही आय होगा, दूसरे का शेष वार इत्यादि क्रमसे जान लेना चाहिये। इनमें आय की संख्या से आय जान कर यदि विषम होगा तो शुभ और समको अशुभ कहेंगे। जैसा कि पहले ही कह चुके हैं। वार के अंकों से वार जानेंगे। एक से रवि, २ से सोम इत्यादि। इनमें रवि, भौम और मंगलवार में घर में अग्नि का भय रहता है और और शेष वारों में अभीष्ट सिद्धि होती है।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

इस लिये १, ३, ७ या० शेष रहेंगे तो इन्हीं तीनां बारों के सूचक होने से खराब होंगे। अंशका तीसरा अंक है उसमें भाग देने पर १ से ९ तक जो शेष होंगे उन्हीं से १ से ९ तक के नवांशों का ज्ञान होगा कि कौनसा नवांश है। उसमें भी यदि शुभ ग्रह का नवांश होगा तो अच्छा और अशुभ का खराब होगा। इसका पता तो केवल नवांश के अंकों से लग सकता नहीं। कारण, प्रत्येक राशि के नौ ही नवांश होते हैं। फिर कैसे पता लगेगा कि यह नवांश किस राशिका है? एतदर्थ पहले आगे बताई रीति से गृह के नक्षत्र का पता लगा कर उसी से राशि का पता लगाना चाहिये। यद्यपि पूर्वोक्त दूसरे पक्ष में तो किसी राशि के पूरे तीन और किसी के दो नक्षत्र होने के कारण एक नक्षत्र में दो राशियों का झगड़ा नहीं है। इसलिये राशि जानने के बाद उस राशि में कौनसा नवांश किसका है, यह अच्छी तरह जान लेंगे और अंशवाले पूर्वोक्त रीति के शेष को देखकर किस ग्रह की राशि का नवांश है, यह बात सुगमता से बता दे सकेंगे। मगर विवाह की रीति के अनुसार तो कृत्तिकादि नक्षत्रों में दो राशियों का भाग है और यही पक्ष सर्वमान्य है। फिर क्यों कर केवल नक्षत्र से राशि का निश्चय करेंगे? क्या पता है कि कृत्तिका के प्रथम चरण में है, या दूसरे आदि में? यद्यपि कठिनाई है। मगर इसका पता उसी नवांश से लगेगा। यदि कृत्तिका नक्षत्र हो और नवांश का अंक १ही शेष हो तो मेष राशि समझे और २आदि शेष रहनेसे वृष। इसीतरह मृगशिरा होतो २ नवांश होने पर वृष और ३ आदि से मिथुन होगी। पुनर्वसु नक्षत्र में नवांश का अंक ३ होने से मिथुन राशि और ४ आदि होने से कर्क राशि मानेंगे। इसी तरह राशि ज्ञान करके उसका नवांश जानेंगे। दृष्टान्त के लिये यदि मृग नक्षत्र हो और नवांश का अंक ४ शेष आया हो तो मिथुन राशि होगी। क्योंकि कृत्तिका का १, मृग के २, और पुनर्वसु के ३ चरण क्रमशः मेष, वृष और मिथुन में होते और शेष वृष, मिथुन, कर्क में क्रम से होते हैं। इसीलिये नवांश के १, २, ३ आदि अंकों से अभी इन राशियों के ज्ञान की बात कही है। इस तरह मिथुन राशि होने से उसका स्वामी बुध है। अतः राशि भी शुभ ग्रह की हुई तो अच्छी ही है। नक्षत्र के शोधने में जिस तरह प्रथम व्यय आदि की बात

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कही है उसी तरह राशि की भी बात देखी जाती है, अस्तु । अब वृष राशि में चौथा नवांश देखेंगे । क्योंकि नवांश के शेष अंक ४ ही मानकर विचार करते हैं । यह तो प्रथम हीं बताचुके हैं कि वृष राशि में मकर से ही नवांश गणना होती है । अतः उसमें चौथा नवांश मेष का होने से ठीक नहीं है; क्योंकि मेष राशि भौम की है और वह है क्रूरग्रह । इसी तरह किसी भी नवांश के अंक का विचार करलेंगे ।

तीसरे के बाद चौथे और पांचवें अंक हैं । चौथा धन का और पांचवां ऋण का है । इसलिये चौथे अंक में भाग देने पर जो शेष अंक होगा वह धन और पांचवें का शेष ऋण होगा । और यदि धन अंक ऋण के अंक से अधिक होगा, यानी यदि धन ४ और ऋण ३ हो तो शुभ और उलटा होने से अशुभ होगा । क्योंकि प्रथम में धन की वृद्धि और दूसरे में कर्जका आधिक्य होगा । इसीलिये इन दोनों अंकों को मिलाकर एकही साथ फल देखना पड़ता हैं ।

छठां अंक नक्षत्र का है । पहले तो जो अंक भाग देने पर शेष होगा उतनी संख्या अश्विनी से गिनकर पता लगावेंगे कि गृह का नक्षत्र क्या है । यदि १५ शेष होगा तो अश्विनी से १५ वां नक्षत्र स्वाति ही गृहनक्षत्र होगा । अब गृहस्वामी के नाम के नक्षत्र से इस नक्षत्र तक गिनने पर जो अंक हो उस में ९ का भाग देने पर यदि ३, ५, ७ शेष रहे तो घर अशुभ और १, २, ४, ६, ८, ९ रहे तो शुभ । इस तरह नक्षत्र से तारा का ज्ञान करके शुभा शुभ फल विवाहादि की तरह जानते हैं । दृष्टान्त के लिये यदि स्वामी का रोहिणी नक्षत्र हो तो उस से स्वाति १२ वां है और बारह में ९ का भाग देने पर शेष ३ होने के कारण वह गृह अशुभ होगा । परन्तु यदि गृह स्वामी और घरका नक्षत्र एकही हो और दोनों की राशि एक हो तो स्वामी की मृत्यु होती है । घर के नक्षत्र से मकान के आरंभ करने के दिन के नक्षत्र तक गिनकर जो अंक आवे यदि उस में नौका भाग दें, तो ३, ५, ७ शेष रहने पर उस दिन गृहारंभ अशुभ और १, २, ४ आदि शेष रहने पर शुभ होगा । स्वामी के नक्षत्र से घर के नक्षत्र तक गिनने पर जितनी संख्या आवे उस संख्या का भी विभाग करके दूसरे ही प्रकार का एक फल बताते हैं ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वह यह कि २७ नक्षत्रों के ९ भाग करके ३-३ नक्षत्र के एक एक भाग बनाते हैं और उनके फल क्रमशः (१) सर्वनाश (२) पुत्रप्राप्ति (३) धन (४) शोक (५) शत्रुभय (६) राजभय (७) मृत्यु (८) सुख (९) विदेश वास, ये गिनाये हैं। तात्पर्य यह है कि यदि स्वामी के नक्षत्र से घर का ३ तक हो यानी स्वामी का रोहिणी और घर का रोहिणी, मृग, या आर्द्रा हो तो सर्वनाश ही होगा। उसके बाद ३ तक पुत्रप्राप्ति। फिर तीन तक धनप्राप्ति इत्यादि रीति से जानना होगा। पहली रीति से जो नक्षत्र आता है उसमें भी इसका विचार करते हैं। जिस नक्षत्र पर शनि या राहु हो वह भी निन्दित है।

सातवां अंक तिथिका और आठवां योग का है। तिथि वाले में १५ का भाग देने से १, २, आदि से लेकर १५ तक शेष रहनेपर क्रमशः प्रतिपदा आदि तिथियां समझी जायँगी। इनमें ४, ९, १४ और अमावास्या वर्जित हैं। शेष शुभ हैं। इसी प्रकार योग के आठवें अंक में २७ का भाग देने से जो १ से २७ तक शेष होगा उससे उसी क्रम से विष्कम्भ, प्रीति आदि २७ योग समझे जांयगे और योगों में विवाह प्रकरणोक्त व्यतीपात, गण्डादि ९ वर्जित हैं। अतः उनयोगों में से किसी के आनेपर मकान अशुभ और शेष में शुभ होगा। आखिरी अंक आयु का है और १२० का भाग देनेपर जितने अंक शेष रहेंगे उतनेहीं वर्ष तक घर की आयु (स्थिति) रहेगी और स्वामी की वैसीही आयु होगी। इसप्रकार इन नौ बातों के सिवाय पूर्वोक्त व्यय दसवीं बात है, जिसका विचार गृह प्रसंग में किया जाता है और जैसे धन और ऋण दो अभी बताये गये हैं, उसीतरह आय के साथ व्यय भी पूर्वोक्त रीतिसे ही देखा जाता है। ग्यारहवीं बात है गृह के दाता आदि के पहचान की। तात्पर्य यह है कि घरकी लम्बाई और चौड़ाई की संख्याओं को मिलाकर दोनों के जोड़ को ८ से गुणा करे और गुणनफल में ९ का भाग देने पर १ से ९ तक शेष रहने पर क्रमशः वह घर (१) चोर (तस्कर) (२) भोगी (३) विचक्षण (चतुर) (४) दाता (५) नृपति (राजा), (६) नपुंसक (७) धनाढ्य (८) दरिद्र (९) भय-दाता माना जाता है। इनमें १, ६, ८, ९ अच्छे नहीं हैं। शेष २, ३, ४,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

५, ७ अच्छे हैं। इन्हीं अंकों के लिख देने से जानकार जान लेते हैं कि वह गृह कैसा है। यही ग्यारह बातें घर के सम्बन्ध में विचारी जाती हैं और ग्राम या नगर के पूर्व, पश्चिम आदि किस दिशा या भाग में वह घर रहेगा और उसका द्वार किधर रहेगा, यह दो बातें तो पहले ही बता दी गई हैं, जिन में पहली को नगरदिशा और दूसरी को द्वारदिशा कहते हैं। इसतरह लम्बाई, चौड़ाई और पिंड ज्ञान के सिवाय ये तेरह बातें देखी जाती हैं और लम्बाई आदि तीन को मिलाकर कुल सोलह। गृहभूषण आदि में जो गृहसारणी दी गई है उसमें यही सोलह बातें लिखी हैं। और प्रायः उनका क्रम यही है (१) दीर्घता (२) विस्तार (३) पिंड (४) आय (५) वार (६) अंश (७) द्रव्य (८) ऋण (९) ऋक्ष वा नक्षत्र (१०) तिथि (११) योग (१२) आयु (१३) दाता आदि (१४) व्यय (१५) नगर दिशा (१६) द्वारदिशा। बातें यही हैं। कहीं कहीं लिखने में एकाध बातों का क्रम उलट पुलट हो गया है। यदि वह सारणी देखकर लम्बाई चौड़ाई आदि का निश्चय करलें तो सभी कठिनाई दूर होजाती है और पूर्व प्रदर्शित विडम्बना करनी नहीं पड़ती। इसीलिये तो सारणी बनाई जाती है और आजकल वास्तुसारणी के नाम से बहुतसी पुस्तकें केवल इसी बात के लिये छपी मिलती हैं। परन्तु सारणी के न रहने पर भी जानलेने के लिये ऊपर लिखी सारी बातों का लिखना आवश्यक था। यह भी जानलेना चाहिये कि पूरे पूरे हाथ लम्बाई चौड़ाई मानने से आयव्ययादि ठीक न आवें तो कुछ अंगुल घटा बढ़ाकर भी काम चलालेना चाहिये। यदि १५ और १० हाथों से ठीक न हो तो १५ की जगह १४ या १६ और १० की जगह ९ या ११ हाथ आदि करने की अपेक्षा केवल १५ और १० हाथ में से कुछ अंगुल और जौ कम कर डालें या बढ़ा दें और यदि उतने से काम चल जावे तो फिर अधिक कष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। इसी लिये सारणियों में कहीं कहीं अंगुल और जौ देकर भी लंबाई वगैरः लिखते हैं। हरेक ज्योतिषी के पास ऐसी एक सारणी का रहना ठीक है। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि गृह स्वामी अपने हाथों घर के आंगन की लंबाई चौड़ाई नापकर दोनों को जोड़ दे और उसमें ९ का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भाग देने पर जो १ से ९ तक शेष रहे तो क्रमशः दानी (दाता), राजा, खण्ड (खण्डित), तस्कर (चोर), भोगी, भययुक्त (आभीः), विचक्षण दरिद्र और धनद ये नौ नाम होते हैं और नाम के समानहीं उस का फल होता है। इससे ३, ४, ६, ८, ये बुरे हैं और यही बात सारिणी के दाता आदि में लिखी रहती है, नकि पूर्वोक्त तस्कर आदि। जो हो, हमें इसमें विवाद नहीं है। हमतो चाहते हैं कि आंगन से भी निश्चय करे और घर की लम्बाई चौड़ाई से भी और दोनों के ठीक होने से ठीक समझे। कहीं कहीं यह भी लिखा है कि घर के पिंड की ४ से गुणा कर सोलह का भाग देने पर १ से १६ तक शेष बचने पर क्रमशः ध्रुव, धान्य आदि नाम के गृह होंगे।

इसप्रकार गृह के पिंड आदि के विचार के बाद जहां वह बनेगा उसभूमि का भी विचार करना नितान्त आवश्यक है। कारण, भूमि केही प्रसाद से शुभाशुभ फल बहुत कुछ निर्भर हैं। साधारणतया यही नियम है कि सर्वोत्तम भूमि कूर्मपृष्ठ कहाती है और उसमें मकान बनाने पर सदा उत्साह, सुख, धनधान्य और अपार सम्पत्ति की प्राप्ति होती है। जो भूमि बीच में ऊंची और चारों ओर ढालू हो उसेही कूर्मपृष्ठ कहते हैं। यदि ईशान, पूर्व और अग्नि कोन में ऊंची और पश्चिम ओर नीची हो तो वह दैत्यपृष्ठ कहाती है। वहां मकान बनाने पर धन तो मिलता नहीं। प्रत्युत पुत्र, पशु, धन को क्षति होती है। यदि पूर्व, पश्चिम लम्बी और दक्षिण उत्तर दोनों ओर ऊंची हो तो नागपृष्ठ कहाती है। उसमें भी उच्चाटन होता है और स्त्री, पुत्र की हानि और पद पद में शत्रु की वृद्धि होती है। अतः नागपृष्ठ और दैत्यपृष्ठ सर्वथा निन्दित हैं। इनमें कभी भी मकान न बनावे। हां कूर्मपृष्ठ से भी उत्तम गजपृष्ठ को मानते हैं। उसका लक्षण यह है कि दक्षिण, नैर्ऋत्य, पश्चिम और वायु कोन इन चारों दिशाओं में ऊंची और शेष ओर नीची या समान। इसमें मकान बनाने से रहनेवाले चिरायु होते हैं और वह मकान अन्न धन से परिपूर्ण रहता है। साधारणतया उत्तर, ईशान और पूर्व में ढालू भूमि अच्छी मानी जाती है और पश्चिम ओर ढालू भी। ढालू का अर्थ है पानी का बहाव। अर्थात् उधर ही

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

उसका पानी बहता हो। बाकी दिशाओं का बहाव ठीक नहीं। यदि गजपृष्ठ और कूर्मपृष्ठ न मिले. तब यह देखा जाता है और यदि वह मिले तो यह ढालूपन नहीं देखा जायगा। निचाई और ढालू को एक नहीं समझना चाहिये। जरासा भी दबने से ढालू हो सकती है। मगर निचाई उँचाई तो ज्यादा होने से ही होगी। लम्बाई चौड़ाई बराबर होने पर जो समचौकोनी भूमि होती है वह वर्गाकार कहाती है और उसमें घर बनाने से धन प्राप्ति होती है। समचौकोन होने पर भी लम्बाई चौड़ाई एक न हो तो आयताकार होने से सर्वसिद्धि होती है। गोल भूमि में बुद्धि वृद्धि होती है। चक्राकार में दरिद्र का वास, ऊंची नीची (विषम) में शोक, त्रिकोण में राजभय, शकटाकार में धननाश, दण्डाकार बहुत पतली में पशुक्षय, शूर्पाकार में गौनाश, कूर्माकार में बन्धन और पीड़ा, धनुषाकार में महान भय और कुंभाकार में कुष्ट रोग होता है।

भूमि के रंग, गंध, रस आदि से भी शुभाशुभ विचार करते हैं। सफेद मिट्टी वाली ब्राह्मणी, लाल क्षत्रिया, हरी या पीली वैश्या और काली भूमि शूद्रा कहाती है। साधारणतः जैसी भूमि हो उसी वर्ण के निवास योग्य मानी जाती है। ब्राह्मणी भूमि सब सुख देने वाली, क्षत्रिया राज देने वाली, वैश्या धन दात्री और शूद्रा निन्दित है। अतः शूद्रा के सिवाय तीन में आवश्यकतानुसार सभी वर्ण के लोग रह सकते हैं। कुशवाली ब्राह्मणी, सरपतवाली क्षत्रिया, कुशकाशयुक्त वैश्या और सर्वतृणों से युक्त शूद्रा कहाती है। मधुर, कटु, तिक्त और कषाय इन चार रसों की मिट्टी वाली भूमि क्रमशः चार वर्णों केलिये शुभ है। इसी तरह घृत, खून, अन्न और मदकी गन्धवाली भी क्रमशः चारोंवर्णों केलिये मानी जाती है। जिस भूमि में दराड़ फटे हों वह मृत्युकारक, ऊसर धन नाशक, अस्थि आदि शल्यवाली क्लेशदायिनी और वल्मीक (बेमौट) वाली विपत्तिकारक होती है। परन्तु सब से बड़ी बात यह है कि सब कुछ होते हुए भी जिस भूमि को देख कर मन और दृष्टि दोनों को सन्तोष हो जाय वहां अवश्यमेव गृह बनावे। यह सिद्धान्त सभी गर्गादि मुनियों का है। यह भी लिखा है

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कि यदि यह जानना हो कि यह भूमि मृत है या जीवित तो लम्बाई चौड़ाई को जोड़ कर चौगुना करे और उसमें उस ग्राम के नाम के अक्षर संख्या का चौगुना जोड़ कर गृह स्वामी के नाम के अक्षरों की संख्या भी मिला दे और ३ भाग दे डाले। यदि एक बचे तो भूमि जीवित और २ से मृतक होती है। यदि शून्य ही शेष हो तो शून्य समझे अर्थात् पता न लगे कि कैसी है। जिस भूमि पर वृक्ष उगे हों और तृण तथा खेती खूब लगे वह जीवित और उससे भिन्न मृत समझे।

एक बात और भी ज्योतिष ग्रन्थों में प्रायः सर्वत्र लिखी रहती है और वह यह है कि जब घर की लम्बाई ३२ हाथ से जरा भी अधिक हो गई तो उसमें आयव्यय का विचार नहीं किया जाता और उसके आरंभ के महीने, तिथि, वार आदि का भी विचार नहीं करते और न शिलान्यास ही करते हैं। पुराने मकान को फिर से बनवाने और फूंस का घर बनाने में भी यह बातें विचारी नहीं जाती हैं। इसी प्रकार जिस के द्वार चारों ओर हों और जो घर से निकलने के लिये बाहर द्वार पर बनाया गया हो उस घर में तथा घर की शोभा के लिये जो घर के चारों ओर बना हो उसमें भी आयव्ययादिका विचार नहीं किया जाता। क्योंकि वे मकान वास्तुपुरुष के अधिकार के बाहर हैं। परन्तु इसका यह अभिप्राय नहीं है कि सचमुच आय आदि का विचार नहीं हीं करे। जहां तक संभव हो अवश्य ही करे। यह कथन तो केवल काम चलाने के लिये और विशेष जोर न देने के ही लिये है। इस से इतना हीं निकलता है कि इस तरह के मकानों में आयादि के देखने में उतना जोर नहीं दिया जाय जितना और में। और तो विना आयादि की शुद्धि के नहीं हीं बन सकेंगे। मगर ये तो आयादि की शुद्धि विना भी बनसकेंगे।

इस प्रकार ऊपर से भूमि को देखकर उसका विचार कर चुकने के बाद उसके भीतर का भी विचार करते हैं और यह देखते हैं कि उसके भीतर कोई अनिष्ट पदार्थ तो नहीं है और यदि हो तो उसे निकालते हैं। इसे ही शल्योद्धार कहतेहैं। यद्यपि मोटी तौर से शल्यनाम है हड्डी का। मगर भूमिशोधन या वास्तुप्रकरण में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

केवल अस्थि को शल्य नहीं कहते । किन्तु भूमि के भीतर लोहा, कोयला, राख, अस्थि आदि जो भी अनिष्ट पदार्थ हैं सभी को शल्य कहते हैं । शल्य शब्द का अर्थ भी है चुभनेवाला । जो ही चुभे या कष्ट दे वही शल्य है । इस शल्य के संशोधन से पहले दिन शाम को, जिस भूमि पर मकान बनाना हो वहां, जाकर अपने इष्टदेव का स्मरण करके एक या आधा हाथ लम्बा चौड़ा और गहरा गढ़ा खोद कर उसमें लबालब पानी भर दे । दूसरे दिन प्रातःकाल आकर देखने पर यदि उसमें पानी कुछ भी रहे तो वह भूमि उत्तम, और सूखा हो तो मध्यम । पर, सूख कर यदि पेंदी में मिट्टी का पतला पर्दा फटा हो तो खराब माने । इसके बात यह जानने का यत्न करे कि आया इस भूमि में किसी प्रकार का शल्य है या नहीं और यदि है तो किस जगह और कितनी गहराई पर । यदि शल्य है भी तो कौनसी वस्तु है । अस्थि है, कोयला आदि है, या और कुछ । यदि किसी भूमि में रुपये पैसे आदि गड़े हों तो वह भी इसी तरह जाने जाते हैं और फिर उन्हें खोदकर बाहर निकाल लेते हैं । यद्यपि इस बात के लिये कई रीतियां ज्योतिष ग्रंथों में लिखी हैं । मगर सबसे विश्वसनीय और ठीक रीति अहिवलचक्र की है । अतः हम इस ग्रन्थ में केवल अहिवलचक्र की ही रीति लिखेंगे । शेष की रीतियां जानने की इच्छा वालों को अन्यान्य ज्योतिष ग्रन्थ पढ़ना चाहिये ।

सब से प्रथम उस भूमिको जिसमें शल्य का ज्ञान करना है दण्ड वगैरः से नाप कर ठीक करले । जहां द्रव्य का पता लगाना हो वहां भी ऐसाही करे । उसके बाद उस भूमि पर चारों ओर से लकीर खींच कर किनारे किनारे से घेरकर उसके बराबर २८ हिस्से कर डाले । एतदर्थ उसकी लम्बाई और चौड़ाई में लकीरें खींचनी होंगी । मगर लकीरें खींचने में इस बातका हमेशा ध्यान रहे कि यदि बने मकान का संशोधन करना या उसमें से रुपया पैसा निकालना हो तो जिधर उसका द्वार होगा उधर से छ लकीरें और दूसरी ओर से तीन खींची जायँगी । उनके सिवाय चारों किनारे की चारों लकीरें तो रहेंगी ही । इसतरह एक ओर से कुल पांच और दूसरी ओर से कुल ८ लकीरें हो जायँगी । दृष्टान्त के लिये यदि उस मकान का दरवाजा उत्तर या दक्षिण हो तो उत्तर दक्षिण कुल आठ लकीरें और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूर्व पश्चिम कुल पांच होंगी। यदि पूर्व या पश्चिम दरवाजा हो तो पूर्व पश्चिम ८ और उत्तर दक्षिण ५ होंगी। मगर यदि मकान न बना हो और प्रथम हीं बार भूमि शोधना या उसमें से द्रव्य निकालना हो तो उन दिनों जिस दिशा में शेषनाग का सिर हो उधर से ही ८ और दूसरी ओर से पांच खींचे। पहले बता ही चुके हैं कि भादों से लेकर तीन तीन महीने पूर्व आदि दिशाओं में शेष का सिर रहता है। बस, उसी हिसाब से लकीरें करके कुल भूमि के २८ बराबर भाग कर डालेंगे। इस बात का भी ध्यान रहे कि दरवाजे वाला भाग बीच में पड़े और दोनों ओर प्रायः बराबर ही तीन तीन भाग रहजावें। शेष की दिशा में तो बीचमें एक भाग रहेगा ही और ३-३ भाग इधर उधर रहेंगे। इस प्रकार उस भूमि के २८ भाग कर लेने पर अभिजित् को मिलाकर अश्विनी से रेवती तक जो २८ नक्षत्र हैं उनकी स्थापना उन २८ भागों या कोठों में अलग अलग करेंगे। मगर इस बात का ध्यान रहेगा कि कृत्तिका नक्षत्र मध्य के द्वार वाले भाग या शेष नाग की दिशा में बीच केही भाग में पड़ेगी। सारांश वह हर हालत में ही बीच में ही रहेगी और उससे पहले के तीन कोष्ठों में रेवती, अश्विनी, भरणी और बाद के तीन में मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी रहेंगी। इस प्रकार पहली पंक्ति में रेवती, अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी ये सात नक्षत्र होगये। सदा यह स्मरण रहे कि द्वार में प्रवेश करने पर जो भाग दहिने होगा उधरही रेवती, अश्विनी, भरणी और बायें भाग में मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी रहेंगी। शेषनाग की दिशा को भी द्वार मानकर यही हिसाब रक्खेंगे। उसके बाद की दूसरी पंक्ति में रेवती, अश्विनी आदि पूर्वोक्त ७ के सामने क्रमशः उत्तराभाद्रपदा, पूर्वाभाद्रपदा, आर्द्रा, शतभिषा, रोहिणी, आश्लेषा, पुष्य, हस्त, ये नक्षत्र रहेंगे। तीसरी पंक्ति में क्रमशः अभिजित्, श्रवण, धनिष्ठा, मृग, आर्द्रा, पुनर्वसु, चित्रा, ये ७ और चौथी या आखिरी में क्रमशः उत्तराषाढ़ा, पूर्वाषाढ़ा, मूल, ज्येष्ठा, अनुराधा, विशाखा, स्वाती ये ७ होंगे। इस तरह सभी भागों या कोष्ठकों में नक्षत्रों की स्थापना होगई। अहि कहते हैं सर्पको और बल नाम है ऐंठन या फेरे का। जब सांप एक जगह बैठता है तो जैसी बल या फेरा अपने शरीर का लगाकर

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बैठता है ठीक उसी तरह नक्षत्रों की स्थापना की गई है। इसीसे इस चक्र को अहिबल चक्र कहते हैं। वह ऐसा है-

रे.	अ.	भ.	कृ.	म.	पू. फा.	उ. फा.
उ. भा.	पू. भा.	श.	रो.	आश्ले.	पुष्य	हस्त
अभि.	श्रव.	ध.	मृ.	आर्द्रा	पुन.	चि.
उ. षा.	पू. षा.	मू.	ज्ये.	अनु.	विशा.	स्वाती.

चक्र बन चुकने के बाद यह देखा जाता है कि जिस समय प्रश्न कर्त्ताने शल्य निकालने या रुपया पैसा प्राप्त करने के लिये प्रश्न किया है उस समय सूर्य और चन्द्र किस नक्षत्र पर हैं। वे जिस पर होंगे उसी हिसाब से और उसी नक्षत्र के कोष्ठ में शल्य होगा या न होगा और रुपया पैसा भी होगा या न होगा। पहले यह जान लेना भी होगा कि कौन कौन नक्षत्र चन्द्रमा के हैं और कौन कौन सूर्य के। क्योंकि इसकी आवश्यकता शल्य जानने में होगी। अश्विनी, भरणी, कृत्तिका, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा, मघा, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित्, श्रवण, पूर्वाभाद्रपदा और रेवती ये १४ नक्षत्र चन्द्रमा के और शेष १५ सूर्य के हैं। उत्तराषाढ़ा का आखिरी चरण और श्रवण के शुरू के ४ दण्ड को अभिजित कहते हैं। यह पहले ही कह चुके हैं। यद्यपि चन्द्रमा प्रायः एक दिन और सूर्य प्रायः १४, १५ दिन एक ही नक्षत्र पर रहते हैं और यह बात पञ्चांग से ही जानी जाती है। मगर उससे यहां काम नहीं चल सकता। किन्तु दिन की होरा की तरह एक दिन में चन्द्रमा और सूर्य के नक्षत्र भोग की होरा के हिसाब से देखा जाता है कि किस समय वे किस नक्षत्र पर हैं, यानी किस नक्षत्रकी होरा भोग रहे हैं। इसके लिये एक दिन या ६० दण्ड में चन्द्रमा का २७ नक्षत्रों का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भोगमानकर गणित से उसकी होरा का पता लगाना होगा कि उस समय किस नक्षत्रकी होरापर वह है।इसी तरह सूर्यका भी निकालेंगे। मगर वह तो चन्द्रकी तरह प्रतिदिन हरेक नक्षत्र का भोग न करके प्रायः १४ या १५ दिन में करता है। इसीसे उसकी होरा का निकालना कठिन है।इसलिये पहले पञ्चांग देखकर इसका पता लगावेंगे कि जिस नक्षत्र में सूर्य के रहने पर प्रश्न किया गया है उसपर सूर्य कितने दिन भोग करता है और कितने दिन भोग करचुका है। इसके बाद यह देखेंगे कि दिन का एक दण्ड सूर्य के नक्षत्र भोग के कितने दण्डों के बराबर है। क्योंकि उसका पूरे नक्षत्रभोग का समय ६० दण्ड के यानी एकदिन केही मुकाबिले में हैं। अतः पूरे भोग का दण्ड बनाकर उसमें ६० का भाग देने से दिनके एक दण्ड के बराबर सूर्य के दण्ड निकल आवेंगे। फिर यह देखेंगे कि उस नक्षत्र पर जितने दिन सूर्य भोग चुका है उसमें सूर्य के इस दण्ड के हिसाब से दिन के कितने दण्ड हुए। इसके लिये भोग के जो दिन हों उनके दण्ड बनाकर उनमें दिनके एक दण्ड के बराबर के सूर्य के पूर्व रीति से निकाले हुए दण्डों का भाग देंगे और उससे दिन के दण्ड का पता लगजायगा। अब मोटी रीति से त्रैराशिक करके यह बतायेंगे कि जब ६० दण्ड में सूर्य २७ नक्षत्र भोगता है तो अभी आये हुए दण्डों में कितने नक्षत्र भोग चुका होगा। इस तरह जितने नक्षत्र आगये हों उन में सूर्य के पहले भोगे नक्षत्रों की संख्या जोड़ देने से पता लगजायगा कि इतने नक्षत्र आज सूर्य भोगचुका, यानी इतने नक्षत्रों की होरा भोगचुका है। यदि वह संख्या २८ से अधिक हो तो उस में से २८ को घटाकर शेष अंक को अश्विनी से गिनकर नक्षत्र बतादेंगे। परन्तु यह प्रक्रिया लम्बी है। इसी तरह प्रश्न के दिन चन्द्रमा के नक्षत्र के पूरे भोग के दण्ड आदि निकाल लेंगे और उस नक्षत्र का भोग कितना हो गया है यह भी जानलेंगे। फिर यह देखेंगे कि नक्षत्र के पूरे भोग में २७ नक्षत्र भोगना है तो जितनी देर भोगचुका है उतनी देर में कितना भोगेगा। इसतरह से त्रैराशिक द्वारा नक्षत्र भोग निकालकर उसमें भोगे नक्षत्रों की संख्या को मिलालेने से यह मालूम होजायगा कि कितने नक्षत्र पर चन्द्रमा है। पहले जो ६० दण्ड में २७ नक्षत्र भोगने को लिखा है वह नक्षत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का भोग ६० दण्ड मानकर ही । मगर यह स्थूल बात है । असल में कोई नक्षत्र ६० दण्ड से कम भोगता है और कोई ज्यादा और जितनी देर तक वह नक्षत्र होगा उतनी ही देर में २७ नक्षत्रों की होरा होगी, यानी २७ नक्षत्र चन्द्रमा भोगजायगा। इसीप्रकार मोटी तौर से सूर्य के पूरे नक्षत्र भोग को निकालकर और उस नक्षत्र को कितने दिन भोगचुका है यह भी जानकर त्रैराशिक करेंगे कि यदि उस नक्षत्र के पूरे भोग में २७ नक्षत्रों की होरा वह भोगजाता है तो जितने दिन भोगचुका है उसमें कितने की होरा भोगचुका है। फिर इसमें भोगचुके नक्षत्रों की संख्या को मिलादेने से उस नक्षत्र का पता लगजायगा जिसपर, यानी जिसकी होरापर, उस समय होगा । दृष्टान्त के लिये वैशाख शुक्ल प्रतिपदा को भरणी नक्षत्र पर सूर्य आया और उसदिन रविवार था। ५६ दण्ड और ५६ के बाद भरणी का सूर्य होकर ज्येष्ठ कृष्ण प्रतिपदा रविवार को ४१ दण्ड २२ पल के बाद कृत्तिका पर चला गया। इसतरह भरणी नक्षत्र सोमवार से शनिवार तक पूरे तेरह दिन रही और गत रविवार को ५६ दण्ड ५६ पल के उपरान्त केवल ३ दण्ड ४ पल थी। इस रविवार को ४५ दण्ड २२ पल तक रही। इस तरह १३ दिन ४८ दण्ड २६ पल कुल भरणीपर सूर्य का भोग हुआ और इसके पल बनाने से ४९७०६ पल हुए। यदि वैशाख शुक्ल १२ गुरुवार को २५ दण्ड २२ पल दिन बीतने पर कोई शल्योद्धार का प्रश्न करे और उसदिन हस्त नक्षत्र पर चन्द्रमा हो और हस्त का भोग ३६ दण्ड ३७ पल हो। बुधवार को ४० दण्ड ४१ पल के बाद हस्त नक्षत्र हुआ है। अब देखना यह है कि जिस दिन भरणी का सूर्य हुआ उस दिन से प्रश्न के दिन तक कितना समय उसपर भोग करचुका। ३ दण्ड ४ पल तो रविवार कोही रहा और सोमवार से बुधतक १० दिनहुए, एवं गुरुवार को २५ दण्ड २२ पलतक रहा, क्योंकि उसी समय प्रश्न हुआ है। इस तरह कुल १० दिन २८ दण्ड और २६ पल कुल भोग हो चुका है। इसका पल बना लेने से ३७७०६ हुए। इसी प्रकार चन्द्रमा के विषय में भी देखना होगा। बुधवार को जब ४० दण्ड ४१ पल बीतने पर हस्त पर चन्द्र आया तो उसदिन ६० दण्ड में इसे घटाने पर अब केवल १९ दण्ड १९ पल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही रहा था और प्रश्न के दिन गुरुवार की २५ दण्ड २२ पल तक रहा है। इस तरह कुल ४४ दण्ड ४१ पल हस्त को भोग चुका है। हस्त का समूचा भोग १९ दण्ड १९ पल और ३६ दण्ड ३७ पल के मिलाने से विदित होगा। क्योंकि बुध को १९ दण्ड १९ पल और गुरु को ३६ दण्ड ३७ पल ही वह रहा है। इस तरह ५५ दण्ड ५६ पल उस का कुल भोग हुआ। इसके पल बनाये तो ३३५६ पल और ४४ दण्ड ४१ पल का बनाया तो २६८१ पल हुए। ३३५६ पल को भभोग या नक्षत्रभोग कहते हैं, जिसका अर्थ है किसी नक्षत्र का पूरा भोग, अर्थात् वह जितनी देर तक भोगेगा। २६८१ पल को भयात कहेंगे, जिसका अर्थ है नक्षत्र का भुक्त या भोगा जा चुका भाग। अब यदि चन्द्रमा की नक्षत्र होरा को निकालना होगा तो भयात यानी २६८१ को २७ से गुणा करके गुणन फल में भभोग यानी ३३५६ का भाग दे देंगे। इसी तरह सूर्य की होरा में सूर्य के भयात यानी ३७७०६ को २७ से गुणा कर उसके भभोग यानी ४९७०६ से भाग देंगे। बस, दोनों की नक्षत्र होरा निकल आवेगी, जिस से पता लग जायगा कि प्रश्न के समय वे किस नक्षत्र पर हैं। गुणा और भाग में आसानी के लिये दोनों जगह दिन, दण्ड, पल के पल ही बना लिये हैं न कि और कोई प्रयोजन है। प्रथम २६८१ को २७ से गुणा करने पर ७२३८७ और ३७७०६ को २७ से गुणा करने पर १०१८०६२ हुआ। पहले में ३३५६ का भाग देने से २१ नक्षत्र और २२ वाँका ३४ दण्ड १० पल हुआ। यानी २१।३४।१० नक्षत्र हुआ। और दूसरे में ४९७०६ का भाग देने से २०।२८।५४ नक्षत्र हुआ। भाग देने पर भाग फल तो पूरा नक्षत्र होगा और जो शेष होगा उसे ६० से गुणा कर फिर गुणनफल में उसका भाग देने से अगले नक्षत्र का दण्ड भागफल होगा और शेष को फिर ६० से गुणा कर उसी का भाग देने से भागफल उस नक्षत्र का पल होगा। इस तरह चन्द्रमा की नक्षत्र होरा २१।३४।१० और सूर्य की २०।२८।५४ हुई। इसका अर्थ यह है कि जिस नक्षत्र पर उस दिन चन्द्र थे वहां से २१ पूरा करके २२ वें के ३४।१० पर हैं और जहां सूर्य थे वहां से २० नक्षत्र पूरा करके उस दिन २१ वें के २८।५४ पर हैं। इन नक्षत्रों में अश्विनी से उनके नक्षत्रों तक जो बीत चुके हैं उनकी संख्या मिला देने से पता लग जायगा कि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अश्विनी से कितने नक्षत्र पर हैं । मिलाने का कारण यही है कि जिस नक्षत्र पर वे रहते हैं उसी से उनकी होरा शुरू हो जाती है और उस से पहले के नक्षत्र छूटे ही रह जाते हैं और जब हमें सब नक्षत्र जानने हैं तो बीते नक्षत्रों की संख्या मिलानी हीं होगी । अब देखते हैं कि चन्द्रमा हस्त पर आने से पहले अश्विनी से लेकर १२ नक्षत्र भोग चुका है । बस, यही १२ उसके २१।३४।१० में मिलाने से ३३।३४।१० हुआ । यानी अश्विनी से ३३ नक्षत्र भोगकर ३४ के ३४।१० पर चन्द्र उस समय है । अब अश्विनी से ३३ वां नक्षत्र आर्द्रा होगी । क्योंकि रेवती तक २८ और फिर अश्विनी से मृग तक ५, इस तरह ३३ नक्षत्र पूरे हो गये । क्योंकि अभिजित् की भी गणना तो की जायगी ही । अतः चन्द्र मृगशिरा को पूरा करके ३४ दण्ड १० पल भोग चुका है । अर्थात् आर्द्रा में है । इसी तरह सूर्य के २०।२८।५४ में उसके भोगे नक्षत्र की संख्या १ को मिलावेंगे । क्योंकि उस दिन भरणी पर तो सूर्य हई और उसी से २० नक्षत्र पूरा करके २१ वें की होरा में २८ दण्ड ५४ पल भोग चुका है । और भरणी से पहले तो अश्विनी से केवल एक ही नक्षत्र अश्विनी हीं पहले से भोगी जा चुकी है । इस तरह कुल नक्षत्र २१ । २८ । ५४, अर्थात् अश्विनी से २१ नक्षत्र भोगकर २२ वें के २८ । ५४ पर सूर्य है । अब अश्विनी से २१ वां नक्षत्र उत्तराषाढ़ा तो भोग चुका और २२ वें अभिजित् के २८ । ५४ पर सूर्य उसी समय है जिस समय प्रश्न किया है । अतः पूर्व रीति से गणित करने पर प्रश्न के दिन वैशाख शुक्ल १२ गुरुवार को २५ । २२ के समय चन्द्र आर्द्रा पर और सूर्य अभिजित् पर है, इसका पता लग गया ।

अब सबसे पहले यह देखेंगे कि जिस आर्द्रा नक्षत्र पर चन्द्र है वह किस का है, चन्द्र का या सूर्य का और सूर्य वाला भी किसका है। पूर्व कथनानुसार आर्द्रा और अभिजित् दोनों ही चन्द्रमा के हैं । अतः चन्द्र तो अपने नक्षत्र पर है और सूर्य भी चन्द्र नक्षत्र पर ही है। नियम ऐसा है कि यदि सूर्य और चन्द्र दोनों ही प्रश्न के समय चन्द्रनक्षत्र पर हों तो निश्चय ही उस भूमि में धन गड़ा है । यदि दोनों ही सूर्य नक्षत्र पर हों तो भूमि में शल्य अवश्य होगा । यदि दोनों अपने अपने नक्षत्र में होंगे तो उस भूमि में द्रव्य और शल्य

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दोनों होंगे । मगर यदि चन्द्रमा सूर्य के नक्षत्र में और सूर्य चन्द्रमा के नक्षत्र में हों तो न तो धन हीं गड़ा होगा और न शल्य ही होगा । चन्द्र और सूर्य की पूर्वोक्त चार ही दशा हो सकती है और चारों का फल बता ही दिया है । उक्त दृष्टान्त में दोनों ही चन्द्रमा के ही नक्षत्र में हैं । अतः उस भूमि में शल्य नहीं है । केवल रुपया पैसा कहीं अवश्य गड़ा है । इस तरह नक्षत्रों के बल से परीक्षा करने के बाद राशियों से भी इसी तरह परीक्षा करते हैं । जिन जिन नक्षत्रों में चन्द्र और सूर्य हों उनकी राशि बनाकर देखना चाहिये कि वह राशि किस ग्रह की है । यदि वह चन्द्र या सूर्य की होगी तो नक्षत्रों की ही तरह फल देखेंगे । अर्थात् यदि दोनों चन्द्र राशि में होंगे तो धन गड़ा होगा, यदि सूर्य राशि में होंगे तो शल्य, यदि दोनों अपनी अपनी राशि में होंगे तो धन और शल्य दोनों होगा और यदि चन्द्र राशि में सूर्य और सूर्य राशि में चन्द्र हो या दोनों ही दूसरे की राशि में हों तो कुछ भी न होगा । यहां पर आर्द्रा की मिथुन और अभिजित् की मकर राशि है । इनमें मिथुन बुध की और मकर शनि की है । इससे तो यही सिद्ध होता है कि वहां कुछ भी नहीं है । न तो धन ही है और न शल्य ही । हां, यदि नक्षत्र और राशि दोनों से ही सिद्ध होजाय कि धन या शल्य है तब तो ठीक ही है । यदि एक प्रकार से धन और दूसरे प्रकार से शल्य सिद्ध हो तो भी खोदकर देखने से कुछ न कुछ निकलेगा ही ।

इस प्रकार द्रव्य या शल्य का निश्चय करने पर भी वह धन मिलेगा या नहीं इस विचार केलिये यह देखना होगा कि चन्द्र जिस राशि में है वहां क्रूरग्रह है या नहीं । सूर्य और राहु से उसका साथ होगा तो धन गड़ा रहने पर भी न मिलेगा । पर यदि चन्द्रमा गुरु, शुक्र, बुध इनके स्थान में हो तो अन्य स्थान होने पर भी धन अवश्य मिलेगा । यदि पाप ग्रह शनि, केतु, मंगल के स्थान में होगा तब न मिलेगा । यदि चन्द्रमा पुष्ट हो (बलवान हो) तो पूरा धन मिलता है और दुर्बल होने पर थोड़ा । धन में भी कौन मिलेगा इसका विचार ग्रहों की दृष्टि से होता है । यदि चन्द्रमा पर सूर्य की दृष्टि हो तो सोना, चन्द्रमा की दृष्टि हो यानी चन्द्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बलवान हो तो चांदी, भौम की दृष्टि हो तो तांबा, बुधकी दृष्टि हो तो पीतल, गुरु की दृष्टि हो तो रत्न, शुक्र की दृष्टि हो तो कांसा, शनि की दृष्टि हो तो लोहा, राहु की दृष्टि हो तो जस्ता और केतु की दृष्टि हो तो सीसा रहता है। यद्यपि केतु को और जगह अंधा माना है। मगर यहां उसकी भी दृष्टि मानते हैं। ग्रहों की दृष्टि का विचार प्रथम कर चुके हैं। वही बात केतु के लिये भी लागू होगी। यदि कई ग्रहों की दृष्टि चन्द्र पर हो तो कई वस्तु होगी-जो जो देखेंगे उन उन की वस्तु मिलेगी। यदि सभी की दृष्टि हो तो बहुत बड़ा खजाना मिलता है। मगर यदि किसी की दृष्टि न हो तो कुछ भी नहीं मिलेगा। यदि सूर्य, चन्द्र, आदि सात ग्रहों के स्थान में चन्द्रमा हो तो क्रमशः सोने, चांदी, तांबे, पीतल, पत्थर, मिट्टी और लोहे के बर्तनों में रख कर गड़ा धन मिलेगा। अर्थात् उस के बर्तन इन धातुओं के होंगे। सूर्य गृह में सोने का, चन्द्र गृह में चांदी का इत्यादि। इस तरह धन के बारे में चन्द्रमा का विचार चार प्रकार से होगा। पहला यह कि वह अपने नक्षत्र में हो। दूसरा यह कि अपनी राशि में हो। तीसरा यह कि यदि दूसरे की राशि हो तो गुरु आदि शुभ ग्रहों की हो। चौथा यह कि उस पर ग्रहों की दृष्टि हो। यदि चारों का मेल हो जाय तो निश्चय धन प्राप्त होगा। और तीन, दो, एक के मिलने से क्रमशः कम संभावना होगी। पर, संभावना तो एक के भी मिलने से होगी। यदि चन्द्रमा अपने घर या ऊंचे आदि स्थानों में होने के कारण बलवान हो या सभी ग्रहों की उस पर दृष्टि हो तो बहुत धन मिलेगा। कैसे बर्त्तन में गड़ा है, इसका निश्चय यह देखकर करेंगे कि चन्द्रमा किस ग्रह के स्थान में है। कौनसा धन है इसका निश्चय अलग अलग ग्रहों की दृष्टि से किया जायगा। परन्तु शल्य के बारे में तो इतनाहीं देखा जायगा कि सूर्य अपने नक्षत्र में या अपनी राशि में है कि नहीं। यदि है तो निश्चय ही होगा। यदि नक्षत्र और राशि दोनों का मेल हो जाय तो निश्चय ही होगा। मगर एक के मेल से भी संभावना तो अवश्य होगी। परन्तु इस से विपरीत होने पर नहीं।

इस तरह धन या शल्य का निश्चय कर चुकने पर कितनी गहराई के नीचे है इसके जानने की भी विधि है। राशि के जितने अंश चन्द्रमा या सूर्य भोग चुके हों उतने हीं मुठहथ (अरत्नि) नीचे शल्य या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

धन होगा । यदि वे अपनी नीच राशि में हों तो उस से दूने हाथ पर जानना चाहिये । और यदि परम नीच में हों तो खोदते खोदते जहां पानी होगा वहीं मिलेगा । दृष्टान्त के लिये यदि चन्द्रमा मेष राशि का हो और उस के २० अंश पर स्थित हो तो २० मुठहथ नीचे धन होगा । यदि अपनी नीच राशि वृश्चिक में हो तो ४० हाथ नीचे । यदि वृश्चिक के ३ अंश पर हो तो परम नीच होने से पानी तक खोदने पर मिलेगा । मगर यदि ऊंच राशि यानी वृष में हो और उस के २० ही अंश पर तो २० हाथ नीचे न होकर कुछ ऊपर ही होगा । उसका हिसाब यह है कि उस राशि के जितने नवांश पर होगा उतने हीं हाथ ऊपर होगा । अब देखते हैं कि २० अंश के ६ नवांश होते हैं । अतः २० से ६ हाथ ऊपर यानी १४ ही हाथ पर होगा । परन्तु यदि वृष के परम उच्च यानी ३ अंश पर हो तो बिल्कुलही ऊपर यानी जरासा खोदने से ही मिल जायगा । और यदि नक्षत्र के प्रवेश का आरंभ ही हुआ हो, अर्थात् एक नक्षत्र से दूसरे पर पदार्पण का श्रीगणेश ही हो तो दीवार में ही गड़ा होगा । पदार्पण के श्रीगणेश का पता तो आसानी से लग जायगा और अंशका भी पता सहज ही है । जिस नक्षत्र पर वह रहे उस राशि के नक्षत्रों का भोग जोड़ लेना चाहिये । सवा दो नक्षत्रों की राशि होने से उनके भोग के दण्डों को जोड़ कर यह देखना होगा कि जिस नक्षत्र पर वर्त्तमान है उसके कितने दण्ड और पल भोग चुका है । बस, फिर त्रैराशिक से हिसाब लग जायगा । क्योंकि राशिके ३० अंशों के भोगने का समय उतने हीं दण्ड होगा । तो फिर वर्त्तमान नक्षत्र के दण्ड पलों में कितने अंश भोगेगा । वर्त्तमान नक्षत्र के दण्ड पलों में एक यह बात भी देखनी होगी कि वह किसी एक राशि में ही रहते हैं, या दो के मिश्रित हैं । दृष्टान्त के लिये यदि कृत्तिका का कुल भोग ६० दण्ड हो और २० दण्ड तक चन्द्र भोग चुका हो तो १५ दण्ड तक मेष राशि के हुए और शेष ५ ही दण्ड वृष के हुए । ऐसी हालत में वृष राशि के नक्षत्रों के जितने चरण उस राशि में होंगे उनके ही दण्ड और पल निकाल कर ५ ही दण्ड के साथ त्रैराशिक करेंगे और उसी से अंशज्ञान करेंगे । वृष में कृत्तिका के तीन चरण, रोहिणी के चार और मृग के दो रहते हैं । यदि तीनों के भोग ६०-६० दण्ड ही मान लेंगे तो कृत्तिका के ४५,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रोहिणी के ६० और मृग के ३० दण्ड तकही वृषराशि होगी, कारण एक चरण १५ ही दण्ड का हुआ। इस तरह कुल १३५ दण्ड हुए और जब १३५ दण्ड में ३० अंश तो ५ दण्ड में त्रैराशिक से १ अंश और प्रायः ४॥ कला हुए। और ३ अंश २० कला का एक नवांश होने के कारण अभी चन्द्रमा वृषराशि के पहले ही नवांश में माना जायगा। जहां कृत्तिका के २० दण्ड तक चन्द्र का भोग मान कर ऊपर वाला हिसाब लगाया है वहां यदि एक दण्ड भी न होकर एकाध पल भर ही या उससे भी कम एकाध विपल भर ही कृत्तिका पर चन्द्र भोग हुआ हो तो नक्षत्र के भोग का श्रीगणेश ही मानेंगे।

राशि के जितने अंश चन्द्र भोग चुका हो उतनी हीं संख्या द्रव्य की होगी। यही बात सूर्य के हिसाब से शल्य में भी होगी। परन्तु यदि होरा, द्रेष्काण आदि अपने षडवर्गों के बल से युक्त हों तो उस संख्या की दसगुनी संख्या हो जायगी। इसतरह द्रव्य का निश्चय कर लेने पर फिर भी उसके खोदने से प्रथम कुछ अनुष्ठान और पूजा की विधि ज्योतिषियों ने लिखी है। मगर शल्य के लिये तो कुछ भी नहीं लिखा है। उस अनुष्ठान और पूजा के बाद ही शुभ मुहूर्त्त में इष्ट देवता का स्मरण करके खोदने को कहा है। भूमि, लक्ष्मी और महासरस्वती की पूजा तो पुरश्चरण के अनुसार की जाती ही है और इसकी विधि भी पुरश्चर्यार्णवमें लिखी है। उसेही देख कर तदनुसार ही करना चाहिये। मगर एक विशेष बात है और वह यह है कि धन की अधिष्ठात्री जो देवता हो उसकी पूजा और अनुष्ठान आवश्यक है। उसका ज्ञान इस तरह होता है कि चन्द्र का सूर्य आदि नौ ग्रहों में एक एक का साथ होने से क्रमशः ग्रह, मुग्धग्रह, क्षेत्रपाल, मातृका, दीपेश, भीषण, रुद्र, यक्ष और नाग ये नौ देवताओं को धन के रक्षक मानते हैं और यदि इन्हों में दो या तीन प्रभृति ग्रहों के साथ चन्द्र रहेगा तो उतने हीं अधिष्ठाता धन के मानकर उनकी ही पूजा करनी होगी। यदि चन्द्र अकेला ही होगा और उसके साथ कोई ग्रह न होंगे तो मुग्धग्रह की पूजा होगी। क्योंकि चन्द्रमा का चन्द्रमा से ही साथ क्या होगा? ग्रह के लिये होम, मुग्धग्रह के लिये नारायण बलि इत्यादि

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पूजा लिखी गई है। अहिवलचक्र में किसी किसी को शराब और मांस से पूजा करने की जो बात लिखी है वह ठीक नहीं है। उसकी जगह नारियल की बलि दी जानी चाहिये। ज्योतिषकल्पद्रुम में शल्यका विचार इसी रीति से किया गया है। मगर वह रीति उक्तरीति से थोड़ीसी विलक्षण है जो उस ग्रन्थ के पढ़ने वालों को ही विदित होगी। विश्वकर्मप्रकाशादि ग्रन्थों में यह भी लिखा है कि शल्य के विषय में प्रश्न करने से प्रथम "ओं ह्रीं कूष्माण्डि कौमारि मम हृदये कथय कथय ह्रीं स्वाहा" यह मन्त्र जप लेना चाहिये। अतः शल्य के सम्बन्ध में विशेष जानकारी के लिये उन ग्रन्थों को देखना होगा। नया मकान बनाने के समय जितनी भूमि में उसे बनाना हो उस समस्त भूमि को ही खोद डालते हैं और इस क्रिया को खात कहते हैं। यदि कोठा बनाना हो तब तो या तो जहां तक पत्थर की तह मिले वहां तक या कंकड़ की तह तक ही खोदे और यदि दोनों न मिलें तो पानी तक गहरा खोदकर शल्य निकाल डाले। क्योंकि कोठे अंटारी में पत्थर, कंकड़, पानी तक भी यदि शल्य हो तो वह अनिष्टकारी होती है। मगर साधारण मकान में दो या चार हाथ गहरा ही खोदे या अधिक से अधिक एक पुरुष (पोरिसा) तक। जैसा ऊंचा और बड़ा मकान हो वैसा ही करे। मगर एक पुरुष से अधिक गहरा खोदने की आवश्यकता नहीं है। क्योंकि साधारण गृह में एक पुरुष से नीचे यदि शल्य हो तो उससे कोई हर्ज नहीं हो सकता। इस तरह अस्थि, लोहा, कोयला, भूसी की राख या बाल वगैरः कुछ भी हो तो सभी को निकाल देने से भूमि का शोधन हो जाता है और भविष्य में शल्योद्धार की आवश्यकता ही नहीं रहती।

यह खात या तो देवालय बनाने के लिये होता है, या घर बनाने को, अथवा जलाशय के लिये। इसके आरम्भ करने में शेष या राहु का विचार आवश्यक है। राहु का स्वभाव है कि ईशान आदि दिशाओं में सिर कर के कोना कोनी सोता है और ईशान से आरंभ कर वायव्य, नैर्ऋत्य, अग्नि कोण में क्रमशः सिर रखता है। तीन तीन महीने एक दिशा में रहता है। इसमें भी देवालय के विचार में मीन राशि के सूर्य से लेकर वृष तक ईशान में रहता है। इसी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गृह विचार में सिंह से लेकर तीन मास (तुला)तक और जलाशय में मकर से मीन तक रहता है । इसके बाद वायव्य में जाता है। जिधर उसका सिर होगा उससे ठीक सामने पूंछ रहेगी और उसके बाद के कोन में खात का आरम्भ करना होगा। जैसे, जब ईशान में रहेगा तो अग्नि में खात शुरू होगा । क्योंकि जिस कोन में सिर होता है उसके बाद वाले बायें कोन में पेट और उसके बाद पूंछ रहती है। अतः सदा एक ही कोन खाली रहता है जिसमें पीठ रहती है और वही शुभ है। खात के आरम्भ के नक्षत्र अधोमुख (नीचे मुख वाले) यानी मूल, आश्लेषा, कृत्तिका, विशाखा, तीनों पूर्वा, मघा, भरणी ये नौ हैं । खोदने के समय यदि पत्थर, ईंट वा सोना मिले तो उस गृह में समृद्धि होगी । धन मिलने पर अनेक सुख, तांबा आदि धातु से वृद्धि होगी । पर यदि चीटियों की बिल सहित पंखयुक्त चीटियां मिलें, तो वहां घर बनाने पर कर्त्ता ही न रह सकेगा । भूसी, अस्थि, वस्त्र, राख, अंडा, सर्प मिलने पर मृत्यु होती है । कौड़ी से दुःख और कलह होती है। कपास या रूई अत्यन्त दुःख कारक है। कोयला या जले काठ से रोग भय और खपड़े से कलह होती है। यदि लोहा मिले तो कर्त्ता की ही मृत्यु होती है ।

इस तरह खनकर भूमिशोधन के पश्चात् फिर उस भूमिको अच्छी तरह कूट पीट कर दृढ़ कर देना चाहिये और उसके बाद गृहारंभ के लिये नींव या शिला न्यास करना चाहिये । सबसे पहले उसके लिये दिन नक्षत्रादि का विचार करना चाहिये । मंगल, रविवार के अतिरिक्त शेष दिनों और ४, ८, ९, १४, ३० के सिवाय शेष तिथियों एवं धनिष्ठा पञ्चक के सिवाय शेष नक्षत्रों में गृह का आरंभ यानी नींव डालना वगैरः शुभ है । मगर गृह के सम्बन्ध में जो धनिष्ठा-पञ्चक का निषेध है वह केवल खम्भा खड़ा करने के ही लिये और छाजन के वास्ते है । नींव आदि शेष काम अच्छी तरह से किये जा सकते हैं । जिस लग्न के ८, १२ को छोड़ शेष में शुभ ग्रह हों और ३, ६, ११, में पापग्रह हों वही ठीक है । शुभग्रहों का विशेष रूप से १, ४, ५, ७, ९, १० में रहना ठीक है । परन्तु यदि क्रूर ग्रह ८ में हों तो कर्त्ता की मृत्यु होती है । स्थिर और द्विस्वभाव लग्न ही प्रशस्त हैं और जब ये न मिल सकें तभी चर लग्न लिये जा सकते हैं।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

यदि लग्न में शुभ ग्रह हों या उनकी दृष्टि हो और वे १० में हों तो अत्युत्तम है। परन्तु कर्त्ता को जन्म कुण्डली को देखकर भी ग्रहों का विचार करना होगा। यदि कर्त्ता की जन्म राशि या जन्म लग्न के विचार से सूर्य, चन्द्र और गुरु दुर्बल, अस्त, शत्रुस्थान या नीच राशि में हों तो साधारणतया गृह बनाने में दरिद्रता होती है। इसके सिवाय सूर्य का फल मालिक की मृत्यु और चन्द्र का फल उसकी स्त्री की मृत्यु है। गुरु का तो हर हालत में यही फल है कि निर्धनता होती है। प्रथम जो यात्रा प्रकरण में नक्षत्रों की दिशायें परिघ दण्ड के विचार प्रसंग से कही गई हैं उनका यहां भी उपयोग होता है। पूर्वोक्त रीति से जो घर का नक्षत्र आया है वह और चन्द्र का यानी गृहारंभ के दिन का नक्षत्र जिस दिशा में हो उस दिशा या उससे विपरीत या सामने की दिशा में द्वार रहने वाले घर का आरम्भ उस दिन न करे। दृष्टान्त के लिये यदि गृह का नक्षत्र कृत्तिका और दिन का नक्षत्र रोहिणी हो तो दोनों पूर्व दिशा की हैं। अतः पूर्व या पश्चिम मुख द्वार वाले घरों की नींव उस दिन नहीं डालेंगे। यदि दोनों में एक नक्षत्र भी हो तब भी नहीं करेंगे, क्योंकि पूर्व मुख वाले में कर्त्ता का निवास ही उस घर में नहीं रहेगा, वह इधर उधर घूमता ही रहेगा और पश्चिम द्वार वाले में दुष्ट स्वप्न तथा चोरी का भय रहता है। इसी तरह नक्षत्र की हरेक दिशा में कर्त्ता के निवास का अभाव और उससे विपरीत दिशा में चोरी तथा दुष्ट स्वप्न फल कहा है। दिनके नक्षत्र को चन्द्र नक्षत्र और गृह नक्षत्र को वास्तु नक्षत्र भी कहते हैं। किसी किसी ने यह भी लिखा है कि जब लग्न में और सातवें चन्द्रमा हो तो पूर्व और पश्चिम मुख द्वार वाले घर न बनावे और ४, १० में हो तो उत्तर दक्षिण द्वार वाले का शुरू न करे। दूसरे लोग कहते हैं कि जब केवल वास्तु नक्षत्र और चन्द्र नक्षत्र एक हो जावें तभी पूर्वोक्त निषेध माना जाता है। जिस दिशा में वास्तु पुरुष रहता हो उसी दिशा वाले द्वार के घरों का आरंभ उस समय सर्वश्रेष्ठ होता है। वास्तु पुरुष या शेष एक ही वस्तु है।

गृहारम्भ के नक्षत्रों में एक बात और विचारणीय है। उसे वृष-वास्तुचक्र कहते हैं। यद्यपि मुहूर्तचिन्तामणि आदि में इसका

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

विशेष विवरण भी दिया है । तथापि संक्षेप यही है कि जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उसीसे अभिजित् के सहित २८ नक्षत्रों को गिनना चाहिये। यदि गृहारम्भका नक्षत्र सात के भीतर हो तो अशुभ; आठ से अठारह तक के ग्यारह नक्षत्र शुभ और १९ से २८ तक के शेष १० अशुभ हैं। अतः सूर्य नक्षत्र से ८ वें से १९ वें तक कोई भी नक्षत्र गृहारम्भ के लिये शुभ है और शेष सभी निषिद्ध हैं। गृहारम्भ के उत्तम नक्षत्र तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुष्य, अनुराधा, हस्त, चित्रा, स्वाती, धनिष्ठा, शतभिषा, रेवती, मृगशिरा ये तेरह हैं । शेष नक्षत्र साधारण हैं। मगर निषिद्ध कोई भी नहीं है । परन्तु ब्राह्मण के सिवाय क्षत्रियादि तीन वर्णों के लिये सूती गृह बनाने में विशेषता यह है कि वह पुनर्वसु नक्षत्र में बनाया जाय और श्रवण, अभिजित् नक्षत्र में उसमें प्रवेश किया जाय । जब प्रसूती के प्रसव का समय निकट होता है तो उस घर मेंही उसे लेजाते हैं जो नैर्ऋत्य कोन में बना होता है । ब्राह्मण के लिये सूती गृह बनाने में कोई विशेष नियम नहीं है । सूतिकागृह में गर्भके नवें मास में प्रवेश कराया जाता है, सोभी विशेष रूप से शुक्ल पक्ष में । रिक्ता तिथि के सिवाय अन्य तिथियों और चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र, शनिवार में और लग्न से चतुर्थ में शुभ ग्रहों के रहने पर या केन्द्र मेंही रहने पर और पापग्रहों के ३, ६, ११ में रहने पर एवं शुभ ग्रहों की दृष्टि लग्न पर रहने पर शुभ ग्रहों केही नवांश में सूतिका गृह का प्रवेश उत्तम है।

यदि फाल्गुन में कुम्भराशि पर या श्रावण में सिंह और कर्क राशि का सूर्य होतो पूर्व या पश्चिम मुख द्वार वाला गृह बनाने का आरंभ करना ठीक है और यदि पूस में मकर की संक्रान्ति हो तो भी पूर्व पश्चिम द्वार का गृह बनाया जाय । यदि मेष, वृष के सूर्य हों तो वैशाख में और तुला, वृश्चिक के सूर्य होतो अगहन में दक्षिण या उत्तर मुख द्वार का घर बनावे । इस तरह से उस विरोध का परिहार होजाता है जो सौर और चान्द्र मासों के विषय में है। कहीं चान्द्र मास कोही कहा है और कहीं सौर कोही। परन्तु यहां दोनों का मिलान कर दिया है । एकने केवल वैशाख, सावन, अगहन, पूस और फागुन इन पांच चान्द्र महीनों को ही गृहारंभ में श्रेष्ठ और शेष सात को अशुभ माना जाता है। दूसरे ने मेष, वृष, कर्क, सिंह, तुला,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वृश्चिक, मकर, कुम्भ इन आठ सौर मासों को उत्तम और शेष चार को ही निन्दित ठहराया है। प्रत्येक दो के बाद तीसरा यानी द्विस्वभाव राशि खराब है। इनमें भी कर्क, सिंह, मकर, कुम्भ, में पूर्व पश्चिम द्वार और मेष, वृष, तुला, वृश्चिक में उत्तर दक्षिल द्वार का घर श्रेष्ठ माना है। मगर इस विरोध का परिहार द्वार और चान्द्र सौर मासों को मिलाकर पहलेही कर दिया है। दूसरे लोग इस विरोध का परिहार द्वार के हिसाब से न करके इस तरह करते हैं कि मेष के सूर्य में चैत्र मेंभी गृहारंभ ठीक है। चैत्र का निषेध मीन के सूर्य का है। इसी तरह ज्येष्ठ में भी वृष के होने पर ठीक है और ज्येष्ठ का निषेध मिथुन के लिये है। आषाढ़ का निषेध भी मिथुन में ही है और कर्क के सूर्य में आषाढ़ भी ठीक ही है। भाद्रपद में भी यदि सिंह हो तो वह ठीक ही है और उसका निषेध कन्या के सूर्य में ही है। आश्विन का निषेध भी केवल कन्या में ही है। तुला में तो वह शुभ ही है। पूस भी मकर में शुभ और धन राशि में अशुभ है। जो चैत्र और माघ का भी निषेध किसीने किया है वह तो बेकार सा है। अतः उन महीनों में अवश्य गृहारंभ करना चाहिये।

पूर्णिमा से कृष्ण अष्टमी तक पूर्व द्वारका घर न बनावे; कृष्ण नवमी से चतुर्दशी तक उत्तर द्वार का; अमावास्या से शुक्ल अष्टमी तक पश्चिम द्वारका और शुक्ल नवमी से चतुर्दशी तक दक्षिण द्वारका घर न बनावे। साधारणतया शुक्ल पक्ष ही गृहारम्भ के लिये शुभ है। कृष्ण में तो चोर का भय होता है। तिथियों में भी २, ३, ५, ६, ७, १०, ११, १२, १३, १५ यही शुभ हैं। शेष निषिद्ध हैं। इनके सिवाय मकान के द्वार में वेध भी वर्जित है। वेध का अर्थ है सामने रहना। रास्ता, कोन, वृक्ष, कूआं, खम्भा, पनाला, गली, देवस्थान, कीचड, इन सबों के सामने द्वार न बनावे। परन्तु यदि द्वार की उंचाई से दूने फासिले पर ये सब हों तब कोई हर्ज नहीं होता। रास्ता और गली के वेध से नाश; वृक्ष के वेध से बच्चों को कष्ट; कीचड़ से शोक; पनाले से बहुत खर्च; कूप से मिर्गी, देवता से सत्यानाश; खम्भे से स्त्रीनाश और ठीक मध्य में यानी दीवार के बीचों बीच बनाने से कुल नाश होता है। बीच का द्वार तो द्रव्य अन्न का भी नाशक है। हां, देवमन्दिर, विहार, प्रपा (प्याऊ) के मकान और मण्डप के बीच में द्वार रहे तो

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कोई हर्ज नहीं। बल्कि ऐसा ही होना चाहिये। यदि द्वार स्वयं खुल जाया करे तो उन्मादकारक और स्वयं बन्द होजाने वाला कुल नाशक होता है। यदि एक पहर के बाद और दूसरे, तीसरे पहर में दो तीन वृक्षों की छाया द्वार पर आया करे तो सदा दुःख दायिनी होती है। घर की लम्बाई के नौ बराबर भाग करके घर से बाहर निकलने में जो दहिने हो उधर पांच भाग और बायें तीन भाग छोड़ कर बीच के एक भाग में द्वार बनाया जावे। ऐसा वास्तुशास्त्र में लिखा है। द्वार घर की लम्बाई में ही बनाया जाना चाहिये। जो द्वार चौड़ाई या कोन में हो वह दुःख, शोक और भय प्रद होता है। मगर द्वार के सम्बन्ध में वराहमिहिर आदि का सिद्धान्त है कि चारों दिशाओं के द्वार या तो वाम भाग में तीन भाग छोड़कर चौथे में हीं बनाये जायं और दक्षिण भाग में पांच भाग छूटे रहें। या पूर्व में बायें दो भाग छोड़कर तीसरे में, दक्षिण द्वार बायें पांच छोड़कर छठें में और पश्चिम और उत्तर द्वार बायें चार भाग छोड़कर पांचवें में बनावे। उसकी उंचाई हर हालत में चौड़ाई की दूनी होगी। सारांश, यदि घर १८ हाथ लम्बा होतो उसका नौ भाग करने पर दो हाथ चौड़ा और चार हाथ ऊंचा द्वार होगा। इसमें कमी वेशी करने पर धन, सुख आदि का क्षय होता है। इसी लिये नाप जोख ठीक करके द्वार बनाना उचित है। पर वराहमिहिर ने लिखा है कि घर की लम्बाई के पांचवें भाग में १८ जोड़ कर जो संख्या हो उसमें ८ का भाग देने पर जो मिले उस उसी संख्या में जोड़ देने पर उतने हीं अंगुल द्वार की चौड़ाई होगी और चौड़ाई की तिगुनी उंचाई होती है। इस तरह यदि ३० हाथ लम्बा घर हो तो उसके पांचवें भाग ६ में १८ जोड़ने से २४ हुआ। इसमें ८ का भाग देने से ३ लब्ध हुआ। इसे २४ में मिलाने पर २७ अंगुल द्वार की चौड़ाई और ८१ अंगुल उंचाई हुई। यह व्यवस्था उन्होने चारों वर्णों केलिये समान हीं लिखी है। मगर राजा, सेनापति और संकर वर्णों के लिये दूसरी ही रीति है, जो वहीं देखने से विदित होगी।

घर की उंचाई के बारे में यह नियम है कि लम्बाई के सोलहवें भाग में चार जोड़ने देने से पहले घर की उंचाई आजाती

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है । यदि घर के कई महल या तल्ले हों तो यह पहले तल्ले की होगी । इसके बाद जो दूसरा तल्ला होगा वह इस में से इसका बारहवां भाग घटाने से जो शेष होगा उतना ही ऊंचा होगा । इसी तरह दूसरे में उसका १२ वां घटाने से तीसरा और तीसरे में घटाने से चौथा हागा । यही क्रम पांचवें छठें वगैरः के लिये भी है । इसी तरह लम्बाई का सोलहवां भाग दीवार की मोटाई मानी जाती है । अगर ८० हाथ लम्बा घर हो तो उसका १६ वां ५ हुआ । इसमें ४ मिलाकर ९ हाथ घर की उंचाई होगी । यही पहला तल्ला होगा । ९ का बारहवां १८ अंगुल ९ में से घटाकर ८। हाथ दूसरा तल्ला होगा । इसी तरह तीसरे आदि को समझ लेना होगा । दीवार तो ८० के १६ वें भाग के बराबर यानी ५ ही हाथ मोटी होगी । मगर यह समूचा नियम ईंटे के पक्के मकानों केही लिये है । यदि कच्चे ईंटे, मिट्टी या फूस वगैरः के मकान बनाये जायें तो दीवार या उंचाई वगैरः के बारे में कोई नियम नहीं है ।

द्वार बनाने में द्वारचक्र का विचार होता है। यद्यपि गृहारंभ के नक्षत्रों में ही द्वार बनाना चाहिये और गृहारंभके नक्षत्र तो साधारणतया सभी हैं । फिर भी द्वारचक्र से उन नक्षत्रों का संशोधन करते हैं । जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उसी से गिनकर ४ नक्षत्र तक धन प्राप्ति, उनके बाद ८ नक्षत्रों में उद्वास या घर में न रहना, उनके बाद ८ में सुख, उनके अनन्तर ३ में स्वामी की मृत्यु और बाद के शेष ४ में सुख, यही फल बताये गये हैं । अतः सूर्यनक्षत्र से ४ तक, फिर १३ वें से २० तकः, पुनः २४ वें से २७ तक यही १६ नक्षत्र शुभ हैं । द्वार का अर्थ है दरवाजे पर काठ या पत्थर वगैरः चौकठ बाजू लगाना । चौकठ को देहली, बाजू को द्वारशाखा और ऊपरकी लकड़ी को निटाल कहते हैं। दरवाजा लगाने के प्रशस्त नक्षत्र भी गिनाये गये हैं और वे अश्विनी, रोहिणी, तीनों उत्तरा, स्वाती, हस्त, मृग, श्रवण, पुष्य, रेवती यही ११ हैं । यदि ये द्वारचक्र में शुद्ध निकलें तो उत्तमोत्तम समझना चाहिये । किसी किसी ने ज्येष्ठा, चित्रा, पुनर्वसुको गिनाया है । जो नक्षत्र द्वार के हैं वही खम्भा खड़ा करनेके भी हैं । पहला खम्भा अग्नि कोन में ही खड़ा करते हैं और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

साधारणतः शिलान्यासभी उसी कोन में होता है । द्वार के लिये स्थिर और द्विस्वभाव लग्न; गुरु, शुक्र, रवि, सोम, बुध, दिन और नन्दा, जया, पूर्णा ये नौ तिथियां शुभ हैं। किसी किसी ने प्रतिपदा, तृतीया, षष्ठी, दशमी, अमावास्या और पूर्णिमा को भी छांटकर इनमें केवल पंचमी, अष्टमी, त्रयोदशी को ही ठीक माना है ।

मकान के दक्षिण पकड़ी का वृक्ष अशुभ है, मगर उत्तर शुभ। बरगद पश्चिम अशुभ और पूर्व शुभ। गूलर उत्तर अशुभ तथा दक्षिण शुभ है । पीपल पूर्व अशुभ और पश्चिम शुभ है । यदि घर के निकट कांटेदार बैर वगैरः के, वृक्ष होंतो शत्रुभय होता है। दूधवाले मदार आदि हों तो धननाश होता है । फलवाले आम वगैरः वंशनाशक होते हैं । इनकी लकड़ी भी मकान में न लगाई जावे । यदि ऐसे वृक्ष मकान के पास हों तो उन्हें काट देना चाहिये और यदि काट न सकें तो मकान और उनके बीच में अशोक, मौलसिरी, कटहल, शमी और साल के वृक्ष लगा देने से उनका दोष शान्त होजाता है। जिसके मकान में पीपल, कदम्ब, केला और बिजौरा नींबू के वृक्ष हों उसका निर्वंश होजाता है । सफेद फूल के वृक्ष भी घर में न लगाये जावें । हां नारियल, नींब, अनार, जपाकुसुम, नारंगी आदि के वृक्ष शुभ हैं। ताड़ का वृक्ष भी अशुभ है और उसकी लकड़ी भी मकान में लगाने से किसी किसी ने रोका है ।

तीन प्रकार के मकान होते हैं मिट्टी के, ईंटे के और पत्थर के । इन्हीं तीन चीजों की दीवार होने से तीन प्रकार के माने जाते हैं। इनके सम्बन्ध में एक मत है कि मिट्टी के मकान का पिण्ड दीवार छोड़ कर केवल गर्भ का ही माना जाता है । दीवार पिण्ड से बाहर रहती है और उसी पिंड से आयव्ययादि निकाले जाते हैं। दीवार जब ईंटे की हो तो आधी दीवार तक पिंड माना जाता है और आधी दीवार पिण्ड से बाहर होती है। मगर पत्थर के मकान में दीवार को मिलाकर पिण्ड माना जाता है। अर्थात् दीवार भी पिण्ड के भीतरही बनाई जाती है । दूसरा मत है कि कोठे अँटारी में पूरी दीवार पिंड के भीतर रहती है; देवालय में आधी दीवार पिंड में होती है और शेष गृहों में दीवार पिंड से बाहर रहती है। तीसरा मत है कि अंग, वंग, कलिंग, सौराष्ट्र, मगध, मध्य, मरु,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिन्ध और पर्वतीय देशों में दीवार सभी मकानों के पिंड के भीतर ही रहती है। यदि इन देशों में केवल गर्भ का ही पिंड मानें तो बड़ाही अशुभ फल होता है। पिण्ड की लम्बाई चौड़ाई के नापने के सम्बन्ध में भी यही नियम है कि या तो घर के स्वामी के हाथ से नापा जाय, या उसकी बड़ी स्त्री, बड़े लडके या कारीगर के ही हाथ से। कुहनी से अनामिका अंगुली के किनारे तक का हाथ होता है।

आंगन में जो कूआं बनाया जाता है वह यदि पिंड के मध्य में हो तो धन का नाश होता है और यदि ईशान, पूर्व, अग्नि आदि आठदिशाओं में हो तो क्रमशः पुष्टि, धन की वृद्धि, पुत्रनाश, स्त्रीनाश, स्वामी की मृत्यु, सम्पत्ति, पीड़ा, सुख ये फल बताये गये हैं। इस से स्पष्ट है कि केवल ईशान, पूर्व, पश्चिम, उत्तर दिशाओं के कूप अच्छे हैं। यही दशा मकानों की भी है। घरके भीतर जितने छोटे छोटे घर विभिन्न कामों के लिये बनाये जाते हैं उनके लिये भी दिशायें नियत हैं। पूर्व, अग्नि आदि आठ दिशाओं में स्नान, पाक, शयन, अस्त्र, भोजन, अन्नसंग्रह, द्रव्यसंचय, देवता के गृह क्रमशः होते हैं और इन्हीं के मध्य में क्रमशः दही मथने, घृतसंचय, पाखाना, विद्याभ्यास, रोनेगाने, मैथुन, औषधि, शेषपदार्थ संग्रह के घर होते हैं। किसी किसी ने उत्तर में धन संग्रह का मकान और वायव्य में पशुशाला बनाने को लिखा है। दूसरे कहते हैं कि खजाना पूर्व में और जल का घर उत्तर में रहे।

ज्योतिषग्रन्थों में गृहों की लक्ष्मी, दीर्घायु आदि के योग भी आदमियों की ही तरह लिखे हैं और अनेक हैं। यदि गृहारंभ के लग्न में गुरु, ६ में सूर्य, ७ में बुध, ४ में शुक्र और ३ में शनि हो तो सौवर्ष वह मकान ठहरता है। लग्न में शुक्र, ३ में सूर्य, ६ में भौम और ५ में गुरु हो तो दोसौ वर्ष रहे। लग्न में शुक्र, १० में बुध, ११ में रवि, ४, ७ या १० में गुरु हो तो सौ वर्ष रहता है। ४ में गुरु, १० में चन्द्र, ११ में भौम और शनि हो तो अस्सी वर्ष रहे। यदि मीन का शुक्र लग्न में हो तो चिरकाल लक्ष्मी युक्त घर होता है। यदि कर्क का गुरु ४ में हो या तुला का शनि ११ में हो तो भी वही बात होती है। यदि एक भी ग्रह ७ या १० में होकर शत्रु के नवांश में स्थित हों और वर्ग

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

का स्वामी दुर्बल हो तो एक वर्ष के भीतर ही वह मकान शत्रु के हाथ लगजाता है। ब्राह्मणादि वर्णों के स्वामी ग्रहों को प्रथम ही बता चुके हैं। जिस वर्ण का मकान हो उसी वर्ण के स्वामी के दुर्बल होने का यह फल है। पर, यदि स्वामी बलवान हो तो यह बात न होगी। पुष्य, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, श्रवण, आश्लेषा, पूर्वाषाढ़ा इन नक्षत्रों में किसीपर यदि बृहस्पति हो और वही नक्षत्र गुरुवार को पड़जाय या न भी पड़े तो उस दिन गृहारंभ करने पर पुत्र और राज्य की प्राप्ति होती है। विशाखा, अश्विनी, चित्रा, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा, इन नक्षत्रों पर शुक्र हो और वे शुक्रवार को हों या न भी हों तो उस दिन गृहारंभ होनेपर उसमें जन्म लेनेवाला कुबेर-सदृश होता है। हस्त, पुष्य, रेवती, मघा, पूर्वाषाढ़ा, मूल, इनपर मंगल हो तो मंगलवार को गृहारंभ होने से अग्नि से जलता है और उसमें लड़के मर जाया करते हैं। यदि कृत्तिका में सूर्य हो या न भी और उसीमें गृहारंभ हो तो भी अग्नि लगती है। रोहिणी, तीनों उत्तरा, चित्रा, हस्त, अश्विनी इनमें बुध हो तो बुधवार को गृहारंभ धन, पुत्र, और सुख का देने वाला होता है। पूर्वाभाद्रपदा, उत्तराभाद्रपदा, ज्येष्ठा, अनुराधा, रेवती, स्वाती, भरणी में शनि-हो तो शनिवार को गृहारम्भ होनेपर उसमें भूत, प्रेत, यक्ष, राक्षसों का अड्डा रहता है। उसमें धनधान्य की कृपणता रहती है और यदि पुत्र उत्पन्न हो तो भूत प्रेत से ग्रस्त रहता है। इस तरह अभी योगों के सम्बन्ध में जो कहागया है उसमें एकबात का सदा ध्यान रहे कि जिन जिन नक्षत्रों पर बृहस्पति आदि बताये गये हों वह नक्षत्र यदि उन उन दिनों में हों तब तो और भी विशेष फल होगा। मगर नक्षत्रों में गुरु आदि हों और गुरुवार आदि दिनों में अन्य भी नक्षत्र हों तब भी गृहारम्भ होने से ऊपर के फल होंगे ही। दृष्टान्त के लिये यदि पुष्य में गुरु हो और गुरुवार को अश्विनी हो तो उस दिन मकान का आरम्भ होने से पुत्र और राज्य की प्राप्ति होती है। मगर यदि गुरुवार को पुष्य हो तब तो और भी निश्चित रूप से प्राप्ति होगी। इसलिये गृहारम्भ में सबसे पहले आरम्भ के उत्तम नक्षत्रों को देखकर उनका संशोधन पूर्वोक्त वृषवास्तु चक्र के अनुसार करना चाहिये और उसके बाद अभी बताये योगों का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भी विचार करके गृहारम्भ करने पर अवश्यकथित फलों की प्राप्ति होती है।

इसप्रकार गृहनिर्माण करचुकनेपर उसमें प्रवेश का समय आता है। प्रथम वार के गृहप्रवेश को अपूर्व प्रवेश कहते हैं। नवीन गृहप्रवेश उत्तरायण मेंही गुरु, शुक्र के उदय रहने पर और उनकी बाल वृद्ध अवस्था को बचाकर किया जाता है। यह तो प्रथम भी कहा जाचुका है। इसके लिये उत्तम महीने माघ, फाल्गुन, वैशाख और ज्येष्ठ ये चारही हैं और आवश्यक होनेपर अगहन और कार्तिक भी काम चलाने योग्य हैं। इनमें भी शुक्लपक्ष पूरा और कृष्ण पक्ष की दशमी तक ही श्रेष्ठ है। तिथियों में रिक्ता और अमावास्या को छोड़कर शेष तिथियां ठीक हैं। मगर उनमें भी दग्ध तिथि वर्जित है। दिनों में भी रवि और भौम वर्जित हैं। लग्नों में चार यानी मेष, कर्क, तुला, मकर, बस यही और इनके नवांश निषिद्ध हैं। आषाढ़ और चैत्र मास में तो कभी भी गृहप्रवेश कर ही नहीं सकते, चाहे कैसीहू आवश्यकता हो जाय। किसी किस ने लिखा है कि शनिवार के प्रवेश में स्थिरता अवश्य होती है। मगर चोर का भय रहता है। गृहप्रवेश में वास्तुपूजा के नक्षत्र हैं तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, रेवती, अनुराधा स्वाति, पुनर्वसु, श्रवण, धनिष्ठा, शतभिषा, अश्विनी, पुष्य, हस्त, अभिजित् और मूल ये सत्रह। और गृहप्रवेश के केवल तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, रेवती, चित्रा और अनुराधा ये ८ ही हैं। इनमें भी जिस दिशा में दरवाजा हो उसी दिशा वाले ही पूर्वोक्त नक्षत्रों में प्रवेश करना ठीक है। यदि पूर्वमुख का द्वार होगा तो रोहिणी, मृग, इन दो में ही प्रवेश कर सकेंगे। इसी तरह अन्य द्वारों का भी जानना होगा। लग्न के सम्बन्ध में भी एक बात यह आवश्यक है कि कर्त्ता की जन्मराशि या जन्मलग्न से ३, ६, १०, ११ वीं जो राशि हो वही लग्न में रहे और भरसक स्थिर लग्न हो। यदि द्विस्वभाव लग्न हो तो शुभग्रह युक्त होना चाहिये। लग्नशुद्धि का विचार यों करे कि पापग्रह लग्न से ३, ६, ११ में; पूर्ण चन्द्र, बुध, गुरु, शुक्र २, ३, ५, ७, ९, १०, ११ में हो और चन्द्रमा लग्न में न हो और न ६, ८, १२ में ही हो और ४, ८ में कोई भी ग्रह न हो। मगर इस

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

बात का ध्यान रहे कि जन्मराशि या जन्मलग्न से जो आठवीं राशि है वह लग्न में न हो। गृह प्रवेश में सूर्य बांये और शुक्र पीछे या दहिने श्रेष्ठ है। सामने और बायें खराब माना जाता है। जिस तरह इसी प्रकरण में चन्द्रमा की दिशायें कही गई हैं यात्रा के प्रकरण और गृहनिर्माण में, उसी तरह शुक्र की दिशा जानी जायगी नक्षत्रों के ही हिसाब से। मगर सूर्य के वाम दक्षिण जानने की रीति दूसरी है और उसका ज्ञान प्रवेश के लग्न और दिशा से होता है। यदि द्वार पूर्वमुख हो तो जिस लग्न में प्रवेश करेंगे उससे सातवें स्थान के बाद पाच स्थानों में यदि सूर्य रहे तो बायें होगा। दक्षिण द्वार वाले में प्रवेश लग्न से ४ स्थान के बाद पांच स्थानों में; पश्चिम द्वार वाले में लग्न के बाद पांच स्थानों में और उत्तर मुख में लग्न से दस स्थानों के बाद पाच स्थानों में रहने पर सूर्य वाम माना जाता है। दृष्टान्त के लिये यदि घरका द्वार पूर्व हो और वृषलग्न में प्रवेश करना हो तो उससे सातवां स्थान वृश्चिक हुआ। उसके बाद के धन से मेष तक की पांच राशियों का सूर्य बायें होगा। इसी प्रकार पूर्व द्वार वाले में पूर्णा तिथि (५, १०, १५); दक्षिण द्वारवाले में नन्दा (१, ६, ११); पश्चिमवाले में भद्रा (२, ७, १२) और उत्तर मुखमें जया (३, ८, १३) श्रेष्ठ मानी जाती हैं। इस विचार के सिवाय विवाह प्रकरणोक्त जितने दोष हैं सभी का विचार गृह-प्रवेश में अवश्यमेव किया जाना चाहिये।

गृहप्रवेश के नक्षत्रों के बारे में एक बात और रह जाती है। जिस तरह गृहारंभ में वृषवास्तुचक्र में उनका संशोधन कियाजाता है, उसी तरह प्रवेश में कलशवास्तुचक्र में प्रवेशनक्षत्रों को शोधते हैं। वृषवास्तुचक्र में वृष या बैल के शरीर के आकार में जिस तरह नक्षत्रों को स्थापित करते हैं उसी तरह कलश वास्तु में कलश के आकार में। इसी से कलशवास्तुचक्र नाम पड़ा है। अभिजित् को छोड़ कर २७ नक्षत्रों की ही गणना सूर्य के नक्षत्रों से की जाती है। जिस नक्षत्र पर सूर्य हो उसमें प्रवेश का फल अग्निदाह और मृत्यु, उस के बाद के चार नक्षत्र में उद्वास (घर में न रहना), उपरान्त के चार में लक्ष्मी प्राप्ति, अनन्तर के चार में वैर और कलह, फिर चार में गर्भनाश और शोक, और शेष

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

६ में से तीन में स्थिरता और अन्त के तीन में भी स्थिरता और सुख फल कहा है । इससे स्पष्ट है कि सूर्य का नक्षत्र, उससे पांचवें के बादसे १३वें तक, और २१ वें के बाद २७ तक, यही १५ नक्षत्र शुभ हैं, शेष अशुभ । इसलिये सब से पहले गृहप्रवेश के नक्षत्रों को देखेंगे । फिर उनमें भी घर के द्वार के विचार से द्वार वाले नक्षत्र ही लेंगे और उनमें भी यह देखेंगे कि वह कलशवास्तुचक्र के अनुसार ठीक है या नहीं । यदि इतने विचार के बाद नक्षत्र ठीक हो तभी उस में प्रवेश करना चाहिये । प्रवेश के समय जल, पुष्प, फल आदि से पूर्ण घट आगे आगे चले और बाजे गाजे के साथ ब्राह्मण लोग आगे आगे शांतिपाठ करें । प्रवेश का समय दिन हीं ठीक है, नकि रात ।

यह प्रवेशनियम एकदम नये मकान के लिये है । परन्तु यदि पुराने गृह को फिर से नया बनाकर उसमें प्रवेश करना हो तो पूर्वोक्त चार महीनों के सिवाय श्रावण, कार्त्तिक और अगहन में भी प्रवेश किया जाता है । पुराने गृह के लिये ये भी तीन महीने श्रेष्ठ ही हैं । इसी तरह पूर्वोक्त आठ नक्षत्रों के सिवाय शतभिषा, पुष्य, स्वाती, धनिष्ठा इन चार नक्षत्रों में भी प्रवेश करना चाहिये और शुक्र, गुरु के उदय अस्तादि का भी विचार करना आवश्यक नहीं है । इस पुराने गृहप्रवेश को द्वन्द्वाभय प्रवेश और यात्रा से लौटे राजा आदि के गृहप्रवेश को सुपूर्व प्रवेश कहते हैं । परन्तु किसी भी प्रवेश में यदि नक्षत्र क्रूर ग्रहों से आक्रान्त वा विद्ध हो तो वह सर्वथा त्याज्य है ।

इस प्रकार गृह का विचार कर चुकने पर उस के ही सम्बन्ध से कूप, बावड़ी आदि के निर्माण, उस के लिये ईंटा बनाने और उसे पकाने का विचार तथा नाबदान आदि का विचार भी करना हीं होगा । यदि घर में पूर्व ओर नाबदान हो तो शुभ और धनप्राप्ति, अग्निकोन में धनक्षय और मृत्यु, दक्षिण में धनक्षय और रोग भय, नैर्ऋत्य में कलह और क्षय, पश्चिम में पुत्रनाश, वायव्य में भाई से भेंट और सुख, उत्तर में राज्य सम्पत्ति और सर्व सिद्धि, ईशान में धन और सुख की प्राप्ति होती है ।

अश्विनी, तीनों उत्तरा, श्रवण, पुष्य, ज्येष्ठा, रेवती, रोहिणी, हस्त इन दस नक्षत्रों, गुरु, शनि, रविवार और स्थिर लग्न में ईंट बनवाने का और दीवार में मिट्टी या सुर्खी लगाने का आरंभ करना चाहिये ।

RajGuru Math, Shivala; Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ईंट बनाने के सिवाय उसे पकाने और आंवें में से निकालने के भी नक्षत्रादि यही हैं। मगर इनमें भौमचक्र और बुधचक्र से नक्षत्रों का संशोधन करना पड़ता है। बनाने का भौमचक्र यों है कि मंगल जिस नक्षत्र पर हो उससे ५ नक्षत्र में सुख, फिर ३ में मृत्यु, फिर ३ में सुख, तब ५ में मृत्यु, पुनः ७ में सुख और अन्त के ५ में मृत्यु होती है। अभिजित् को मिलाकर २८ नक्षत्रों की गणना होती है। ईंट निकालने में भी मंगल के नक्षत्र से ही देखते हैं। मंगल के नक्षत्र से ७ अशुभ, तब ५ शुभ, फिर ७ अशुभ, पुनः ४ अशुभ और अन्त के ५ शुभ हैं। यहां भी २८ ही हैं। मगर ईंट को आंवें से निकालने में बुधचक्र में देखते हैं। बुध के नक्षत्र से ३ शुभ, फिर ५ अशुभ, तब ३ शुभ, पुनः ७ अशुभ, उपरान्त ५ शुभ और अन्त के ४ अशुभ हैं। यहां अभिजित् को नहीं गिनते हैं।

मकान बना चुकने पर या यों भी रसोई के लिये चूल्हे की जरूरत होती है। इसके लिये केवल चुल्लीचक्र का विचार सूर्य के नक्षत्र से करते हैं। पहले के ६ नक्षत्र शुभ, फिर ४ अशुभ, तब ८ शुभ, पुनः ५ अशुभ, तब दो शुभ और अन्त में २ अशुभ हैं। २७ ही नक्षत्र गिने जाते हैं, न कि अभिजित् भी।

रसोई वगैरः बनाने के लिये जो ईंधन का संग्रह घर में करते हैं उसके लिये धनिष्ठापञ्चक तो वर्जित ही है। उसके लिये रोहिणी, स्वाती, हस्त, मघा, मूल, विशाखा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा, अनुराधा, पुष्य, रेवती, श्रवण ये १४ नक्षत्र और रवि, भौम, बुध, शुक्रवार शुभ हैं। इनमें उपला बनाने का आरम्भ और ईंधनकी लकड़ी काटने का भी आरम्भ कर सकते हैं। ईंधन को घर में रखने के समय इंधनचक्र देखा जाता है, जिसमें सूर्य के नक्षत्र से ही विचार करते हैं। पहले के ६ नक्षत्र शुभ, फिर ६ बहुत ही खराब, पुनः ४ में पाहुन और मित्रों का समागम, फिर ८ अशुभ और शेष ४ शुभ हैं इस तरह आदि के ६ और अन्त के ४ यही १० ठीक हैं और शेष १८ ठीक नहीं है। घर में पाहुनों का बहुत आना भी अच्छा नहीं माना जाता। यदि उसे अच्छा मानें तो १४ शुभ और १४ अशुभ हैं। यहां भी अभिजित् को मिलाकर २८ नक्षत्रों की गणना होती है।

बावड़ी, कूआं और तालाब के आरम्भ करने के साधारण नक्षत्र

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ह अनुराधा, मघा, हस्त, रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, मृग, पुष्य, धनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाषाढ़ा ये तेरह । शुभ ग्रहों के दिन भी ठीक हैं । कूप आदि की बंधाई शुरू करने के लिये पूर्वोक्त नक्षत्रों में हस्त, रेवती, मृग को छोड़कर शेष दस को ही श्रेष्ठ माना है । कूपं के आरम्भ के विशेष नक्षत्र हस्त, चित्रा, स्वाती, धनिष्ठा, शतभिषा, आर्द्रा, मघा, तीनों उत्तरा, रोहिणी यही ग्यारह हैं । वराहमिहिर ने चित्रा, स्वाती, आर्द्रा छोड़कर अनुराधा और पुष्य माना है । परन्तु कूप के आरम्भ में रोहिणीचक्र, भौमचक्र, रविचक्र, और राहुचक्र से नक्षत्रों का संशोधन करने पर यदि चारों चक्रों से शुद्ध होकर उक्त नक्षत्रों में कोई भी मिल जायं तो निर्जल भूमि में भी अवश्य जल निकलेगा । राहुचक्र में अभिजित् के सहित २८ नक्षत्रों की और शेष चक्रों में २७ की गणना होती है । जिस का चक्र देखना हो वह जिस नक्षत्र रह उस समय हो उसी नक्षत्र से गिनना शुरू करते हैं । कूप की आठों दिशायें और उसका मध्य या गर्भ यही नौ स्थान नक्षत्रों के रखने के हैं । मगर भौमचक्र में मध्य को छोड़कर केवल आठ दिशाओं में ही रखकर उनका फल देखते हैं । वे चक्र नीचे लिखे हैं । आगे के तीन कोष्ठों में एक में दिशायें, दूसरे में नक्षत्र और तीसरे में फल लिखा है । रोहिणी चक्र में रोहिणी नक्षत्र से ही गिनते हैं ।

	दिशा	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर,	ईशान	मध्य
राहुचक्र	नक्षत्र	३	३	३	३	३	३	३	३	४
	फल	शोक	खूब जल	स्वामि मृत्यु	दुःख	सजल	बालू	निर्जल	समुद्र वत्	अल्प जल
रविचक्र	नक्षत्र	३	३	३	३	३	३	३	३	३
	फल	जल	खंड जल	सजल	निर्जल	मीठा जल	खारा जल	उत्तम जल	खारा जल	कड़वा जल
भौम चक्र	नक्षत्र	१	५	५	३	३	४	३	४	
	फल	बहुजल	सिद्धि	विजय	रोग	असिद्धि	यश	प्रसिद्धि	जलभंग	

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रोहिणीचक्र

दिशा	मध्य	पूर्व	अग्नि	दक्षिण	नैर्ऋत्य	पश्चिम	वायव्य	उत्तर	ईशान
नक्षत्र	१	२	३	५	६	२	२	३	३
फल	मीठा शीघ्र जल	खंड जल	सजल	निर्जल	अमृत जल	खारा जल	पत्थर	समुद्र वत्	कटु

रोहिणीचक्र में पश्चिम से लेकर चार दिशाओं में क्रमशः शीतल जल, कुलनाश, उत्तम जल, और खारा जल, यह फल भी किसी किसी ने लिखा है। इनमें प्रथम के दो में ही ज्यादा भेद है। उत्तर और ईशान का तो प्रायः एक ही है। इसी प्रकार सूर्यचक्र में भी उत्तर में उत्तम जल की जगह किसी किसी ने पत्थर की प्राप्तिपूर्वक जल-प्राप्ति लिखी है। इन चारों चक्रों को कूपचक्र कहते हैं।

इसी प्रकार तालाब के लिये भी रविचक्रका ही विचार करते हैं। इसमें आठ दिशाओं और मध्य के सिवाय जल आने जाने के मार्ग (वारिवाह या पनाले) में भी नक्षत्र स्थापित करते हैं। इस का नाम तड़ागचक्र है। सूर्य के नक्षत्र से गिनकर पूर्व, अग्नि आदि आठ दिशाओं, मध्य और वारिवाह में से आठों दिशाओं में क्रमशः २-२ नक्षत्र, मध्य में ५ और वारिवाह में ६ रखते हैं। २७ नक्षत्र ही लिये जाते हैं। इनके फल क्रमशः ये हैं–(१) जल शोषण या शोक (२) बहुजल (३) जलनाश (४) अमृत जल (५) बहु जल या मीठा जल (६) जल का शोषण वा निर्जलता (७) उत्तम और स्थायी जल (८) कुत्सित जल (९) शीघ्र वा पूर्ण जल (१०) जलनाश। कहीं कहीं १० वें या वारिवाह वाले नक्षत्र में अमृत जल लिखा है। परन्तु जलनाश ही ठीक प्रतित होता है।

कूआं खोदने के समय यह विचार भी करते हैं कि कहां खोदने से जल निकलेगा और कहां नहीं और कहां कैसी भूमि होगी और उसमें कैसा एवं कितना जल निकलेगा। जल की गहराई कैसी होगी इत्यादि महत्त्वपूर्ण बातों का ज्ञान ज्योतिषी लोग प्रश्न के लग्न से प्राप्त

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

करते हैं। इसका विचार ज्योतिषकल्पद्रुम आदि प्रश्नग्रन्थों में किया गया। वराहमिहिर ने बृहत्संहिता के ५३ वें दकार्गलाध्याय में भी भूमिकी स्थिति से ही जल के सम्बन्ध में कुछ विचार किया है। उन्हों ने इस विषय में प्रश्नकाल के लग्नादिका विचार वहां नहीं किया है। वराहमिहिर का यह विचार बहुत विस्तृत है। अतएव उनकी संहिता देखकर जिज्ञासु अपनी तृप्ति कर ले सकते हैं। अब हम उसे लिखकर निष्प्रयोजन ग्रन्थविस्तार नहीं करेंगे। परन्तु प्रश्नलग्न से जल के विचार की बात संक्षेप से लिख देते हैं, ताकि लोगों का काम निकल चले। इसका विचार करने से प्रथम यहां कुछ संकेतों को जान लेना चाहिये। उदयलग्न तो प्रश्न के ही लग्न का नाम है। जब सूर्य वृष, मिथुन, कर्क, सिंह राशियों के हों तो सूर्य की वीथी मेष राशि होती है अर्थात् मेष की सूर्यवीथी संज्ञा है। वृश्चिक, धन, मकर, मीन में सूर्यवीथी मिथुन राशि और मीन, मेष, कन्या, तुला में सूर्यवीथी वृष राशि होती है। वृष-लग्न को पूर्व स्थापित कर अग्नि में क्रमशः मिथुन, कर्क को; दक्षिण में सिंह को; नैर्ऋत्य में कन्या, तुला को; पश्चिम में वृश्चिक को; वायव्य में क्रमशः धन, मकर को; उत्तर में कुम्भ को और ईशान में मीन, मेष को स्थापित करते हैं। इस क्रम का नाम वृषभोदय लग्न या वृष-भोदय क्रम है। प्रश्न करनेवाला ज्योतिषी के जिस ओर बैठा हो, इस हिसाब से उस दिशा में जो लग्न पड़े उसे, आरूढ़ लग्न कहते हैं। पूर्वोक्त सूर्यवीथी तक इस आरूढ़ लग्न से गिनने पर जितनी संख्या हो प्रश्न कालके तात्कालिक लग्न से उतनी संख्या वाला लग्न छत्र लग्न कहाता है। दृष्टान्त के लिये यदि कर्क लग्न में प्रश्न किया और प्रश्नकर्त्ता ज्योतिषी से दक्षिण हो तो सिंह लग्न आ-रूढ़ लग्न हुआ। यदि प्रश्न के समय सूर्य मेष राशिका हो तो पूर्व कथनानुसार सूर्यवृथी वृष राशि हुई। अब इस वृष तक आरूढ़ लग्न सिंह से गिनने पर १० हुआ। फिर प्रश्न लग्न कर्क से १० वां लग्न मेष हुआ और यही छत्रलग्न हुआ। शुक्र और चन्द्र जलग्रह कहाते हैं। रवि, शुक्र, भौम, राहु, शनि, चन्द्र, बुध, गुरु ये क्रमशः पूर्व, अग्नि आद आठ दिशाओं के स्वामी हैं। कर्क, मकर, मीन, कुंभ ये जलराशियां है। किसी किसी ने वृष, तुला, वृश्चिक, धन और

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कन्या को भी जल राशि माना है। मगर यह सर्वमान्य नहीं होकर एक का मत है। मेष आदि १२ राशियों की क्रमशः ७, ८, ५, ३, ७, ११, २, ४, ६, ८, ८, २७ किरणें मानी जाती हैं और सूर्य से लेकर राहु तक आठ ग्रहों की क्रमशः ५, २१, ७, ९, १०, १६, ४, ४ किरणें हैं। नौ ग्रहों के सिवाय १२ दूसरे भी ग्रह हैं जिन्हें अप्रकाश ग्रह कहते हैं। इनमें बहुतेरों के नाम उन्हीं ग्रहों के हैं। वे ये हैं-सूर्य, धूम, राहु, चन्द्र, शनि, सूक्ष्म, शुक्र, इन्द्रधनुष, बुध, गुरु, मंगल, परिवेष। ये वक्रगति हैं, अर्थात् बायें से घूमते हैं और दो दो घंटे एक एक राशि पर रहकर दिन भर में बारहों राशियों पर घूम आते हैं। प्रति दिन प्रातः काल सूर्य वृष राशि के ३० वें अंश पर रहता है और सूर्य के बायें धूम और उसके बायें राहु इत्यादि उसी क्रम से ग्रह रहते हैं जिस क्रमसे उनका उल्लेख किया है। प्रातःकाल धूम मेष के ३० वें अंश पर, राहु मीन के ३० वें अंश पर इत्यादि जान लेना चाहिये। दो घंटे बाद जब सूर्य मेष पर आ जायगा तो धूम मीन पर चला जायगा। इसी तरह हरेक ग्रह बदलते रहेंगे। और जिस समय प्रश्न होगा उस समय हिसाब करके देख लेंगे कि कौन सा अप्रकाश ग्रह किस राशि पर है। जलज्ञान और शल्यज्ञान के लिये उस भूमि को २८ बराबर हिस्से में पूर्व कथित रीति से बांट देते हैं और अभिजित् सहित २८ नक्षत्रों को उन कोठों में रख देते हैं। परन्तु किस नक्षत्र को किस कोठे में रक्खेंगे, इस बात में यहां कुछ विशेषता है। चक्र बनाने में पूर्व से पश्चिम को आठ और उत्तर दक्षिणवाली पांच लकीरें उस भूमि पर खींच कर उसके २८ बराबर हिस्से कर देते हैं। देखने से मालूम होगा कि सबसे पूर्ववाली पंक्ति में ७ घर हैं और उसके पश्चिम इसी तरह ७-७ घरों की तीन पंक्तियां हैं। यह भी मानते हैं कि ६० दण्ड में २८ नक्षत्रों का भोग एक बार हो जाया करता है और यह भोग कृत्तिका से ही शुरू होता है। प्रतिदिन सूर्योदय के समय कृत्तिका रहती और २$\frac{1}{2}$ दण्ड के बाद रोहिणी हो जाती है और वह भी उतनी ही देर तक रहती है। इसीतरह क्रमशः मृग आदि नक्षत्रों का भोग होता रहता है। इसमें सीधा त्रैराशिक है कि जब २८ नक्षत्र ६० दण्डतक भोगते हैं तो १ कितनी देर तक और ६० में २८ का भाग देनेसे २$\frac{1}{6}$

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

दण्ड या २ दण्ड ८ पल ३४ विपल के करीब भोग एक नक्षत्रका होता है। अब सूर्योदय से जितने दण्ड बीतनेपर प्रश्न होगा उस समय किस नक्षत्र का भोग है, यह इसी २$\frac{१}{७}$ के हिसाब से जाना जायगा और जितने नक्षत्र कृत्तिका के बाद आजायँगे कृत्तिका से उतनी संख्या गिनकर उस नक्षत्र का नाम जान लेंगे। उदाहरण के लिये यदि सूर्योदय के बाद ३१ दण्ड पर प्रश्न हो तो ३० दण्ड में १४ नक्षत्र भोग चुकने पर ३१ वें १५ वें का भोग होगा और कृत्तिका से १५ वीं अनुराधा होगी। अतः उस समय अनुराधा का भोग मानेंगे।

अब रहगई उस नक्षत्रचक्र में नक्षत्रों के स्थापित करने की बात। जैसा कहचुके हैं, सबसे पूर्व के ७ कोठों सबसे उत्तर का जो पहला और उसके दक्षिण दूसरा है, इन दो को छोड़ तीसरे में प्रातः काल कृत्तिका रखते हैं, कारण उस समय उसी का भोग रहता है। उसके दक्षिण रोहिणी और उससे दक्षिण मृग रखकर मृग से पश्चिम दूसरी पंक्ति में आर्द्रा रखकर, उससे उत्तर उत्तर तीन कोठों में क्रमशः पुनर्वसु, पुष्य, आश्लेषा रक्खेंगे और सबसे उत्तर का एक कोठा छोड़देंगे। आश्लेषा के पश्चिम तीसरी पंक्ति में मघा रख उससे दक्षिण के चार कोठों में क्रमशः पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा रक्खेंगे। चित्रा से पूर्व के दो घरों में क्रमशः स्वाती, विशाखा रखकर विशाखा से दक्षिण अनुराधा, उससे पश्चिम ज्येष्ठा आदि क्रमशः रखते हुए शेष कोठों को अभिजित् सहित शेषनक्षत्रों से भरदेंगे; जैसा कि नीचे क्रम है—

पूर्व

	अश्वि०	भरणी	कृ०	रो०	मृग	विशा०	अनु०	
	रेवती	आश्ले०	पुष्य	पुन०	आर्द्रा	स्वाती	ज्ये०	
उ०	उ०भा०	मघा	पू०फा०	उ०फा०	हस्त	चित्रा	मू०	द०
	पू०भा०	शत०	धनि०	श्रवण	अभि०	उ०षा०	पू०षा०	

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

परन्तु प्रश्न के समय यदि कृत्तिका न हो, किन्तु दूसरा नक्षत्र हो जैसा कि३१दण्ड दिन बीतने पर अनुराधा बताई गई है। तो कृत्तिका की जगह अनुराधा रखकर उसके आगे के नक्षत्रोंको वैसेही रक्खें ने जिस तरह कृत्तिका के आगे वालोंको अभी स्थापित किया है और इसतरह चक्र तय्यार होजायगा-

पूर्व

	स्वाती	विशा०	अनु०	ज्ये०	मूल	भरणी	कृत्ति०
	चित्रा	श्रवण	अभि०	उ०षा०	पू०षा०	अश्वि०	रोहि०
४०	हस्त	धनि०	शत०	पू०भा०	उ०भा०	रेवती०	मृग
	उ०फा	पू०फा०	मघा०	आ०	पुष्य	पुन०	आर्द्रा

पश्चिम

प्रश्नकाल में जो लग्न हो और उसका जितना अंश बीता हो उसी हिसाब से उस समय नक्षत्र का ज्ञान हो जाता है कि कौनसा नक्षत्र है। पूर्वोक्त रीति के सिवाय यह दूसरी रीति भी बहुतों ने लिखी है। दृष्टान्त के लिये यदि प्रश्न के समय मिथुन लग्न के २० अंश बीते हों तो ९ चरणों का एक लग्न होने के कारण एक चरण के ३ अंश २० कलायें हुईं। इस तरह २० अंश के ६ चरण हुए और मिथुन राशि मृगशिराके अन्त के दो चरणों, सम्पूर्ण आर्द्रा और पुनर्वसु के तीन चरणों की होती है। इस तरह ६ चरण बीतने का अर्थ है आर्द्रा का चौथा चरण। फलतः उस समय आर्द्रा नक्षत्र मानकर पूर्वोक्त चक्र में कृत्तिका की जगह आर्द्रा रखकर उसी रीति से चक्र को भर देंगे। इस तरह प्रश्न काल में चन्द्रमा को पञ्चांग से देखकर जान लेगें कि किस नक्षत्र पर है और जिस पर वह होगा वह जिस कोष्ठ में होगी उसी में शल्य होगा। यह बात इसी तरह जानी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जाती है। शल्यज्ञान की यह भी एक रीति है, अस्तु। जल के ज्ञान में भी इस रीति से काम लेते हैं, जिसका वर्णन आगे है।

इस प्रकार ऊपर के संकेतों और संज्ञाओं के जानने के बाद इन्हीं के आधार पर जलप्रश्न का विचार करते हैं। यदि प्रश्न लग्न और आरूढ़ लग्न से चतुर्थ स्थान में वृष, कर्क, तुला, वृश्चिक, मकर, कुंभ, मीन इन में कोई एक राशि पड़ जाय तो सोना निकलेगा और यदि इन सात राशियों और आरूढ़ लग्न या उस से चतुर्थ स्थान में चन्द्र या शुक्र हो या दोनों की दृष्टि इन पर हो तो भर पूर जल होगा। पर, यदि इन्हीं में गुरु या बुध हों अथवा इन पर दोनों की दृष्टि हो तो साधारण जल होगा। यदि उदयलग्न, आरूढ़लग्न और इनसे चौथे स्थान में रवि, भौम, शनि हों, या इन की दृष्टि हो तो जल नहीं होगा। परन्तु यदि इन्हीं में राहु हो या वह इन्हें देखता हो तो अपार जल होता है। आरूढ़ लग्न में जल ग्रह (शुक्र, चन्द्र) हों तो बहुत नीचे सोता होगा। पर यदि जलग्रह छत्र लग्न में हों तो नजदीक ही होगा। जिन ग्रहों से सोते का ज्ञान होगा वे जिस दिशा के स्वामी हों उसी दिशा वाला सोता भी होगा। यदि राहु प्रश्नलग्न में हो, जलग्रह आरूढ़ में और शेष ग्रह छत्र लग्न में हों तो भी ऊपर ही सोता मिलेगा। पर, यदि जल ग्रह छत्र में और शेष ग्रह आरूढ़ में हों तो बहुत नीचे सोता होगा। उदय, आरूढ़ और चतुर्थ इन में यदि जल राशि हों और उनमें जलग्रह हों तो थोड़ा ही खोदने से भरपूर जल होगा। पर इन राशियों में जलग्रह के अतिरिक्त ग्रहों के रहने पर बहुत नीचे पानी मिलेगा। चन्द्रमा केन्द्र में हो और वहीं गुरु भी साथ ही हो या उसपर गुरुकी दृष्टिही हो तो अपार जल होगा। मगर यदि शुक्र से युक्त वा दृष्ट हो तो काम चलाऊ पानी मिलेगा। प्रश्नकाल में जिस नक्षत्र पर पञ्चांग के अनुसार गुरु या शुक्र होंगे वह नक्षत्र जिस कोठे में हो उसी में जल होगा। यदि चन्द्र परिवेष से युक्त वा दृष्ट हो और केन्द्र में हो तो अपार जल होगा। परन्तु बुध या गुरु से युक्त वा दृष्ट होने पर वहां खोदने पर पुराना और बेकार कूआं मिलेगा। यदि केन्द्र में शुक्र या चन्द्र हो तो भरपूर जल होगा और यदि इन दोनों पर परिवेष, सूक्ष्म, धूम्र और इन्द्रधनुष की दृष्टि हो तो पुरानी खाई या अल्प जल का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

पुराना तालाब मिलेगा। यदि प्रश्न के केन्द्र (१, ४, ७, १०) में रवि हो या उसपर रविकी दृष्टि हो तो खारी जमीन नीचे होगी; केन्द्र के परिवेष से दृष्ट या युक्त होनेपर कड़ी भूमि मिलेगी; चन्द्र या शुक्र से युक्त वा दृष्ट होने पर शुद्ध जल निकलेगा और यदि शेष ग्रहों से दृष्ट वा युक्त हो तो मैला जल निकलेगा। यदि केन्द्र भौम से दृष्ट या युक्त हो तो खोदने पर सफेद मिट्टी मिलेगी; बुध से युक्त या दृष्ट होने पर नर्म मिट्टी होगी और यदि केन्द्र में मिथुन, कन्या, सिंह राशियां हों तो अगल बगल की सोती (पसेई) निकलेगी। यदि केन्द्र शनि या राहु से युक्त या दृष्ट हो तो अत्यधिक जल का एक सोता मिलेगा। यदि गुरु से युक्त या दृष्ट हो तो खोदने पर पत्थर कंकड़ मिलेगा और अन्य ग्रहों से दृष्ट या युक्त होने पर हड्डियां मिलेंगी।

जिस ग्रह से सोते का निश्चय होगा उसकी किरण और वह जिस राशि पर उस समय हो उसकी किरण को जोड़कर जो अंक हों उतने हीं बालिश्त (बित्ते) गहराई पर जल होगा। परशर्त्त यह है कि वह अपने से उच्च स्थान में रहना चाहिये। यदि अपने हीं घर में हो तो बालिश्त की जगह उतने हीं हाथ गहराई होगी। यदि मित्र गृह में हो तो प्रति हाथ की जगह पुरुष (पोरिसा या पांच हाथ) मानना होगा और यदि नीच राशि या शत्रुघर में हो तो बहुत ज्यादा नीचे पानी मिलेगा। शल्य के विषय में भी गहराई का पता इसी तरह लगता है। यह भी लिखा है कि इस तरह जल की गहराई का पता लगने पर उसके तीन बराबर हिस्से कर डाले। यदि चन्द्रमा से जलज्ञान हुआ हो तो ऊपर वाली पहली तिहाई में जल होगा, बुध से तीसरी या अन्त की में और शेष ग्रहों से बीच की तिहाई में जल होगा।

यदि सूर्य से जल का निश्चय हुआ हो तो कूआं खोदने की जगह जंगल होगा; भौम या शनि से निश्चय होने पर वह जगह कांटों से घिरी है, राहु से निश्चय होने पर वहां चींटी और सांप की बिलें हैं, चन्द्र से वहां केला के वृक्ष हैं। बुध से कटहर, गुरु से नारियल, ताड़, सुपारी, आम के वृक्ष और शुक्र से लता और बेलें होंगी। जिस ग्रह से सोता निश्चित हो वह यदि उच्च गृह, स्वगृह, या मित्रगृह में हो कर शुभ ग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो वह कूआं मालिक के कब्जे में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

रहेगा । परन्तु यदि नीच या शत्रु गृह में होकर पाप ग्रहों से युक्त वा दृष्ट हो तो कूआं दूसरे के अधिकार में चला जायगा । मेष, वृष, मिथुन राशि के सूर्य में कूप के खोदने का आरंभ करने पर बहुत जल मिलता है और लक्ष्मी की प्राप्ति भी होती है; सिंह के सूर्य या कार्त्तिक में थोड़ा जल होता है और शेष महीनों में बहुत ही नाम मात्र जल निकलता है और विपत्ति पड़ती है ।

रेवती, तीनों उत्तरा, रोहिणी, अश्विनी, हस्त, चित्रा, स्वाती, विशाखा, अनुराधा, धनिष्ठा, पुष्य, पुनर्वसु इन्हीं नक्षत्रों, रिक्ता के सिवाय शेष तिथियों और बुध, गुरु, शुक्रवार में नवीन वस्त्र, सुवर्ण, मोती, मूंगा वगैरः पहनना चाहिये । लाल वस्त्र तो भौमवार को भी पहन सकते हैं । स्त्रियों के लिये विशेषता यह है कि पति के जीते जी तीनों उत्तरा, रोहिणी, पुनर्वसु और पुष्य में इन चीजों को धारण न करें और शतभिषा नक्षत्र में स्नान भी न करें ।

स्वाती, ज्येष्ठा, तीनों पूर्वा, आर्द्रा, आश्लेषा इनमें ज्वर या अन्य रोग होने पर अवश्य मृत्यु होती है । अनुराधा और रेवती में होने से दीर्घ काल तक रोग रहता है । भरणी, श्रवण, शतभिषा, चित्रा, में होने से ११ दिन तक; विशाखा, हस्त, धनिष्ठा में १५ दिन तक; मूल, कृत्तिका, अश्विनी में ९ दिन; मघा में २० दिन; उत्तराभाद्रपदा, उत्तराफाल्गुनी, पुष्य, पुनर्वसु, रोहिणी में ७ दिन तक रोग रहता है । भरणी, आश्लेषा, मूल, कृत्तिका, विशाखा, आर्द्रा, मघा में सांप काटे तो अवश्य मृत्यु हो जाती है । परन्तु यह बात तभी होती है जब चन्द्रमा दुर्बल या अशुभ फल दाता हो । बलवान या शुभ फलदाता होने पर मृत्यु न होगी । यदि आर्द्रा, आश्लेषा, ज्येष्ठा, शतभिषा, भरणी, तीनों पूर्वा, विशाखा, धनिष्ठा, कृत्तिका नक्षत्र; शनि, रवि, भौमवार और ४, ६, ९, १२, १४ तिथियों का योग हो जाय और उसी दिन कोई बीमार पड़े तो शीघ्र ही मृत्यु होती है । इस लिये रोगोत्पत्ति में इन तीनों का योग बहुत ही बुरा है । यदि चन्द्रमा रोग के लग्न, ३, १२ या ८ में हो तो और भी निश्चित मृत्यु समझी जानी चाहिये ।

यदि किसी कारण से मृतक का संस्कार मरण के समय न हुआ हो तो अश्विनी, पुष्य, हस्त, आश्लेषा, ज्येष्ठा, मूल, श्रवण, आर्द्रा,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

स्वाती इन नौ नक्षत्रों में ही पुत्तलदाह आदि द्वारा होना चाहिये।

नक्षत्रों की चार संज्ञायें हैं अन्ध, मन्दलोचन, मध्यमलोचन और सुलोचन । धनिष्ठा, पुष्य, रोहिणी, पूर्वाषाढ़ा, विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, रेवती ये सात अन्ध हैं । हस्त, उत्तराषाढ़ा, अनुराधा, शतभिषा, आश्लेषा, अश्विनी, मृग ये सात मन्दलोचन हैं। आर्द्रा, मघा, पूर्वाभाद्रपदा, चित्रा, ज्येष्ठा, अभिजित्, भरणी ये सात मध्यमलोचन और शेष स्वाती, पुनर्वसु, श्रवण, कृत्तिका, उत्तराभाद्रपदा, मूल, पूर्वाफाल्गुनी ये सात सुलोचन हैं । यदि अन्ध नक्षत्र में चोरी हो तो शीघ्र ही वह वस्तु मिल जाती है। मन्दलोचन में यत्न करने पर देर से मिलती है। मध्यलोचन में केवल दूर से सुनाई पड़ता है कि फलां जगह वह चीज है । पर मिलने की आशा प्रायः नहीं ही रहती है । शायद ही मिले । मगर सुलोचन में तो कभी नहीं मिलती । चाहे हजार यत्न कियाजाय ।

सूर्य से लेकर शनि तक सात ग्रह क्रमशः ताम्र (तांवा) वर्ण, श्वेत, अत्यंत लाल, हरे, अत्यंत पीले, चित्रवर्ण, काले वर्णवाले हैं । अथवा इन इन रंगों के वे स्वामी हैं । इसी तरह पूर्व, अग्नि आदि आठ दिशाओं के स्वामी क्रमशः रवि, शुक्र, भौम, राहु, शनि, चन्द्र, बुध और बृहस्पति हैं और ये जिन राशियों के स्वामी हैं उनकी भी वही दिशा है । जैसे मंगल दक्षिण का स्वामी है तो मेष और वृश्चिक की भी वही दिशा है । सूर्य, चन्द्र आदि सात ग्रहों के स्वामी क्रमशः अग्नि, जल, कार्त्तिकेय, विष्णु, इन्द्र, इन्द्राणी और ब्रह्मा हैं । इनकी राशियों के भी यही देवता होंगे ।

इन सब बातों का फल यह है कि जिस लग्न में चोरी होगी उस की दिशामें ही वह वस्तु गई होगी और उसका वर्ण भी इसी से जाना जायगा । तात्पर्य यह है कि जिस लग्न में चोरी हो, पुत्र आदि उत्पन्न हों या कोई वस्तु नष्ट होजाय उस लग्न में जो ग्रह होगा उसी के रंग की वह चीज होगी और बालक का भी रंग वही होगा। यदि उस लग्न में कोई ग्रह न हो तो जिस ग्रह की दृष्टि उस लग्न पर हो उसका ही वर्ण होगा । यदि यह भी न हो—दृष्टि भी न हो तो लग्न में जिस राशि का नवांश उस समय होगा उसी राशि का वर्ण होगा । यदि अनेक ग्रह हों तो अनेक वर्ण और बलवान ग्रह का

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वर्ण सबसे अधिक होगा। अथवा जो सब से बलवान होगा उसी का वर्ण होगा। यदि किसी राशि के स्वामी से वह राशि युक्त या दृष्ट हो और उसी का नवांश उस समय लग्न में हो तो उसी राशि का वर्ण माना जायगा। यही बात दिशा के सम्बन्ध में भी जान लेना चाहिये और इसी क्रम से। राशियों के रंग क्रम से लाल, श्वेत, हरा, कृष्ण मिश्रित रक्त, जरा जरा श्वेत, चित्र, कृष्ण, सोने जैसा, पीला (हल्दी जैसा), शुक्ल कपिल मिश्रित, नेवला सदृश, मत्स्यवर्ण यही बारह हैं। ग्रहों के रस भी हैं क्रम से कटु (मिर्च), नमकीन, तीता (नींब), मिश्रित (षट्रस), मीठा, खट्टा और कसेला। रसका प्रयोजन भोजनादि के प्रश्न में जिस ग्रह का या उसके नवांश का उदय हो या लग्न पर दृष्टि हो वही रस माना जायगा। और चोरी में चोर का नाम वही होगा प्रश्न के समय जिस बलवान ग्रह की दृष्टि या सम्बन्ध लग्न में हो। वही या उसी का पर्याय होगा। पुष्पादि को मन में रखकर मूक प्रश्न करने पर ग्रह या राशि के वर्ण से ही उसके वर्ण का पता पूर्वोक्त रीति से लगेगा।

जिस तरह आदमियों की मेष आदि राशियां होती हैं उसी तरह अन्न, पशु आदि की भी राशियां मानी गई हैं। इसका विचार वाराहीसंहिता के ४० वें अध्याय में इस तरह है कि (१) सोना, गेहूं, जौ, मसूर, राल, कम्बल, ऊनी वस्त्र, दुशाले, पशमीने आदि और सूखी भूमि में उत्पन्न होनेवाली औषधियों की मेष राशि है। (२) वस्त्र, फूल, गेहूं, साठी आदि धान, चावल, जौ, भैंस, बैल की वृष राशि है। (३) बाजरा, ज्वार, मक्की, कपास, रुई, कंगनी, कमल के कंद की मिथुन राशि है। (४) कोदों, केला, दूब, जायफल आदि, कन्द, दालचीनी, तेजपात, नारियल की कर्क राशि। (५) धान, सावां आदि भूसी वाले, षट्रस, सिंह मृगादि के चर्म, चावल, गुड़, खांड़ की सिंह। (६) तीसी, जवासा, मटर, कुलथी, गेहूं, मूंग, तेनी, सेम की कन्या। (७) उड़द, जौ, गेहूं, सरसों, रहर, रेंड़ी की तुला। (८) ऊख, चीनी, गुड़, शक्कर, लोहा, पान, कांसा की वृश्चिक। (९) घोड़ा, हाथी, नमक, धनियां, वस्त्र, तिल, धान, मूली आदि की धन। (१०) वृक्ष, लता, सींचने से होनेवाले, ऊख, कंद, सोना, लोहा की मकर। (११) जल में होने वाले फल

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सिंघाड़े आदि, फूल, रत्न, पोस्ता की कुंभ और (१२) सीप से निकलनेवाले मोती आदि, गजमुक्ता, हीरा, विविध तेल, अतर, मछली से उत्पन्न पदार्थ की मीन राशि। इस जानकारी का पहला लाभ यह है कि यदि हम यह जानना चाहें कि अमुक चीज अमुक आदमी को धारेगी या नहीं तो उस चीज और आदमी की राशि जानकर दोनों की राशियों के स्वामी ग्रहों का विचार करेंगे। यदि दोनों के ग्रह आपस में मित्र हों तो वह अच्छी धारेगी। यदि उदासीन हों तो भी किसी प्रकार काम चलाऊ है। मगर यदि परस्पर शत्रु हों तो निश्चय ही वह चीज नहीं धार सकती। इसके सिवाय इन चीजों की महंगी सस्ती जानकर व्यापार आदि में लाभ हानि का विचार कर सकते हैं। एतदर्थ पदार्थों की राशि देखकर उस समय ग्रहस्थिति देखने से पता लगेगा कि कौन महंगा होगा और कौन सस्ता और किसकी वृद्धि होगी और किसकी घटी। यदि किसी वस्तु की राशि से २, ४, ५, ७, ९, १०, ११ में गुरु, २, ५, ९, १०, ११ में बुध और ६, ७ के सिवाय अन्य में शुक्र हो तो उसकी वृद्धि और सस्ती होगी। मगर शुक्र के ६, ७ में रहने पर हानि होगी। पापग्रह रवि, मंगल, शनि, क्षीण चन्द्र ३, ६, १०, ११ में हों तो वृद्धि और सस्ती और शेष स्थान में हों तो महंगी होगी। पूर्वोक्त शुभ स्थानों में यदि बलवान शुभ ग्रह हों तो वह चीज सस्ती, प्रिय और प्रचुर परिमाण में होती है। मगर यदि ३, ६, १०, ११ के अतिरिक्त शेष स्थानों में बलवान क्रूर ग्रह हों तो वह चीज दुर्लभ और महँगी होती है। ग्रह अपनी राशि, द्रेष्काण, नवांशादि में; अपने मित्र की राशि आदि में; अपने ऊंचे स्थान में जानेपर या शुभ ग्रहों की दृष्टि रहने पर बलवान होता है। यह भी जानना चाहिये कि जो २, ४ आदि शुभ स्थान अलग अलग ग्रहों के बताये हैं, उनके अतिरिक्त स्थान अशुभ हैं। फलतः उनमें रहने पर विपरीत फल होता है। परन्तु यदि शुभ ग्रह अनिष्ट स्थान में हों और बलवान शुभ ग्रहों की उनपर दृष्टि हो तो वह चीज न तो महंगी होगी और न सस्ती। इसी प्रकार यदि उन्हींपर क्रूर ग्रहों की दृष्टि पड़जाय तो वह चीज अत्यंत दुर्लभ और महंगी हो जाती है। यह ग्रह स्थिति भी चीजों के के धारने के प्रश्न के उत्तर में सहायक हो सकती है॥ इति लग्नमुहूर्त्त॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

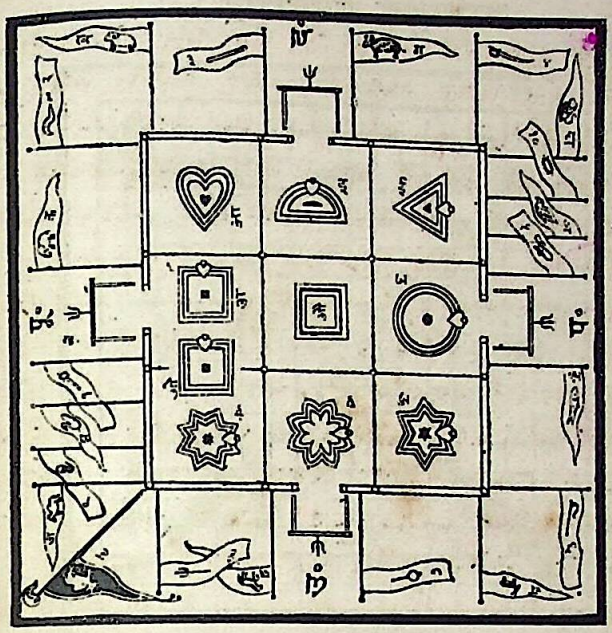

१ से ११ तक की संख्यावाले ध्वज । च से अ तक पताकायें । ट शिखरका महाध्वज । अ से औ तक ६ कुंड । औ प्रधान वेदी ।

एककुंडीपक्ष ।

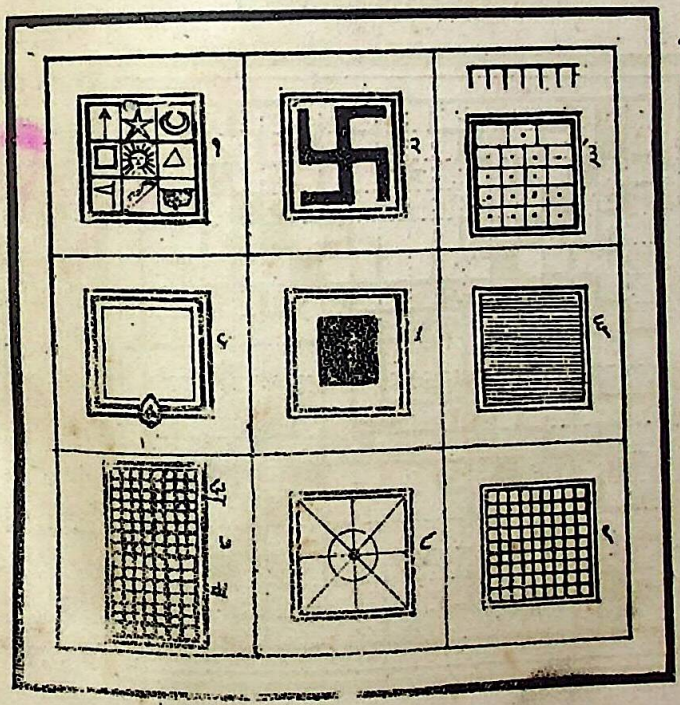

(१) नवग्रहवेदी (२) गणेशवेदी (३) मातृकावेदी और ऊपर वसोर्धारा (४) कुण्ड (५) प्रधानवेदी (६) ब्रह्मासन (७) अ योगिनीमण्डल । वक्षेत्रपाल मण्डल (८) यजमानासन (९) वास्तुवेदी ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कमलयुक्त सर्वतोभद्र ।

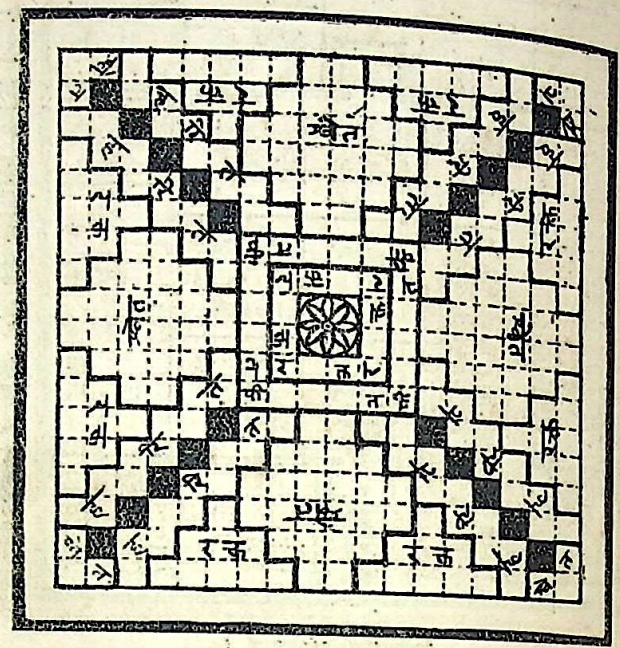

कमलरहित सर्वतोभद्र ।

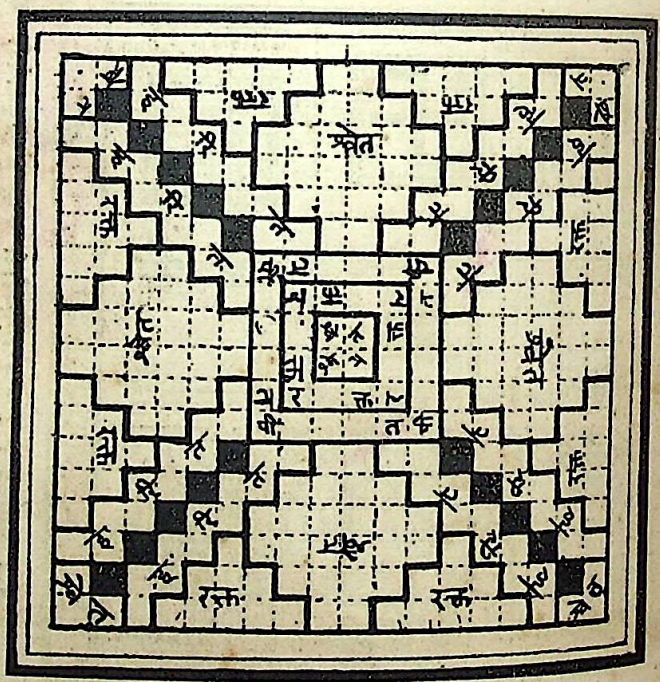

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग्रन्थ पृ० ७७७)

चतुर्लिंगतोभद्र ।

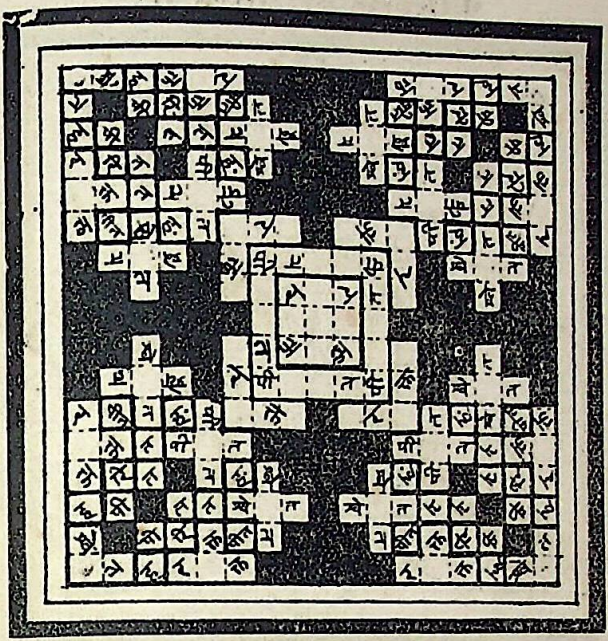

(ग्रन्थ पृ० ६)

पञ्चाग्निकुण्ड ।

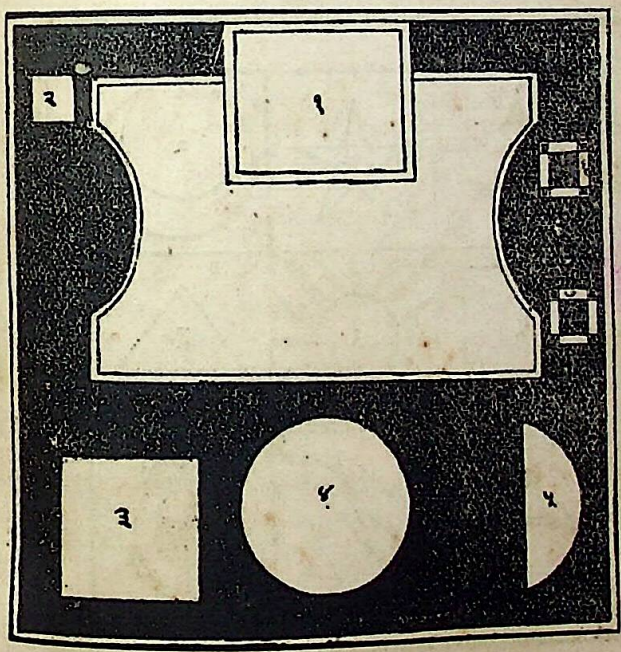

(१) आहवनीयकुण्ड (२) आवसथ्य०
(३) सभ्य० (४) गार्हपत्य (५) दक्षिणाग्नि०
(६) ब्रह्मासन (७) यजमानासन ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग्रन्थ पृ० १५५)

नवग्रहमण्डल कमलाकार ।

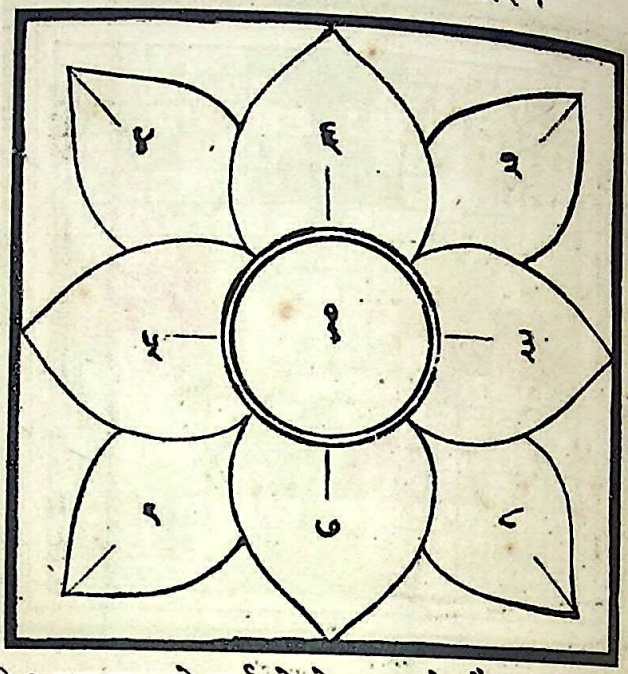

१ से ९ तक क्रम से सूर्य से केतु तक के नौ ग्रहों के स्थान ।

नवग्रह मंडल चतुष्कोण ।

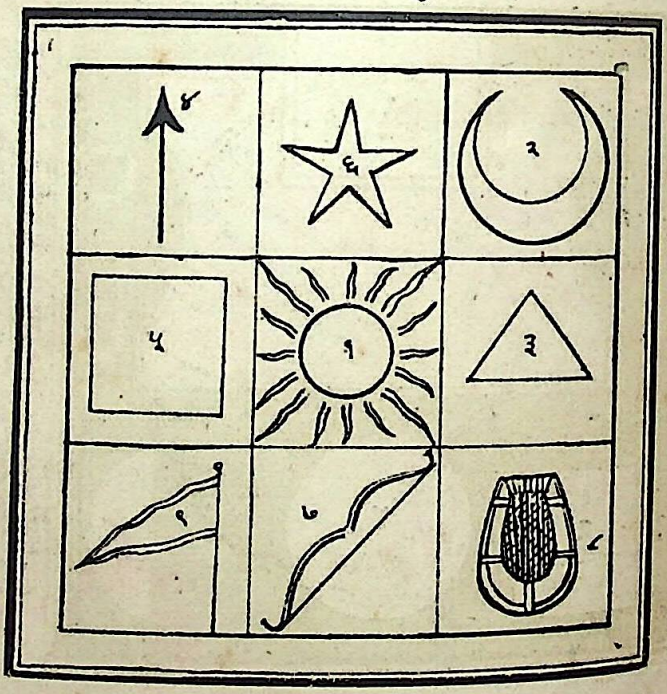

सूर्यादि ग्रहों की आकृति क्रमशः १ से ९ तक ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Graht-2

मूलचक्र ।

मध्य में (१) मूलका स्थान । दहिने (२) ज्येष्ठा का । बायें (३) पूर्वाषाढ़ा का । सामने (४) उत्तराषाढ़ा का और उस के बाद (५) से (२७) तक क्रमशः शेष नक्षत्रों का ।

(ग्रन्थ पृ० ६६०)

आश्लेषाचक्र ।

मध्य में (१) आश्लेषा । दहिने (२) पुष्य [बायें (३) मघा । सामने पूर्व (४) पूर्वाफाल्गुनी ।] शेष ५ से २७ तक शेष नक्षत्र ।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(ग्रन्थ पृ० ९७) ८१ पदवास्तु मण्डल।

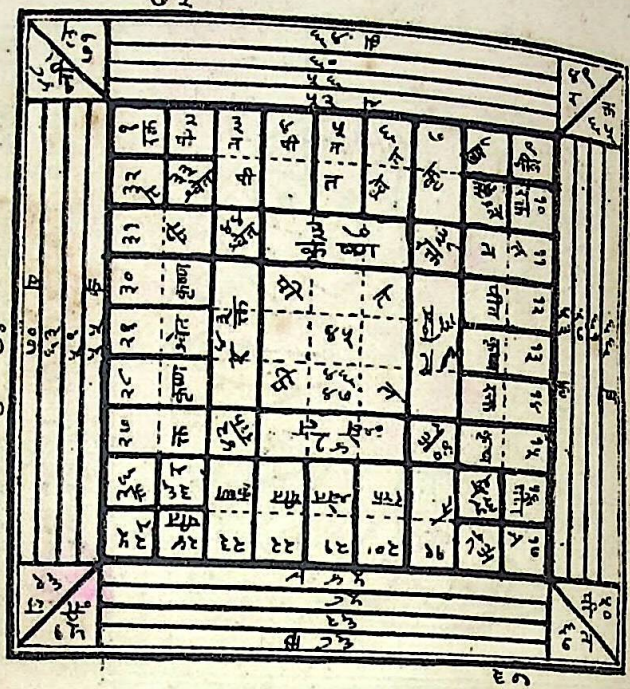

(ग्रंथ पृ० ७५०) षोडशार वारुणमण्डल।

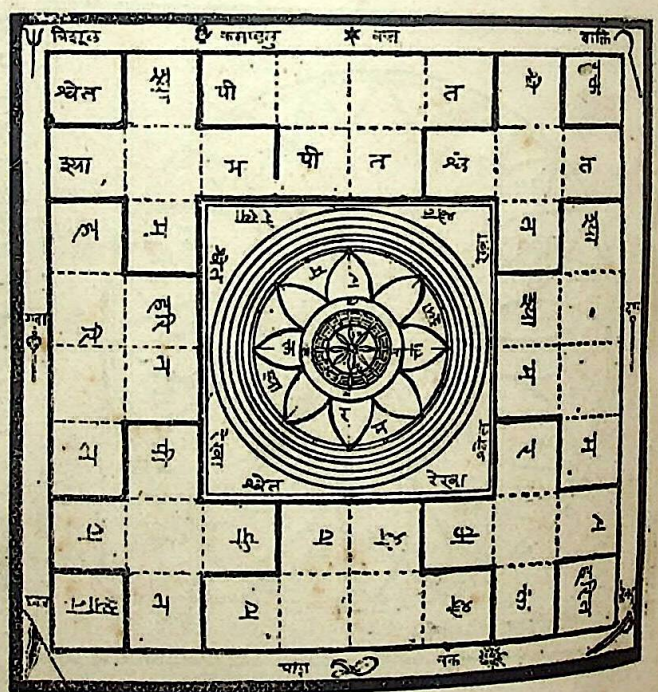

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

वैश्वदेव मण्डल ।

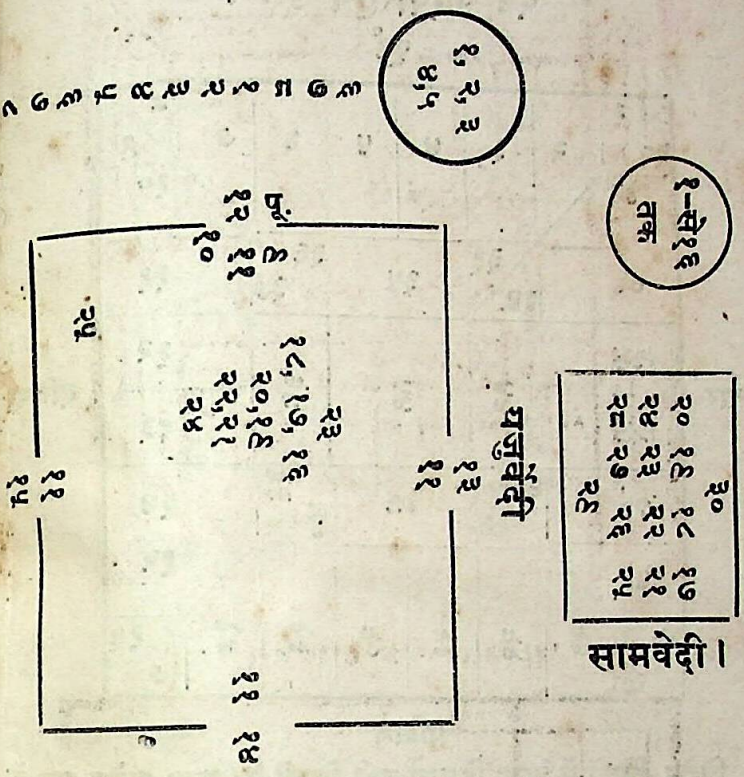

(ग्रंथ पृ० १८६)

पंचभूसंस्कार ।

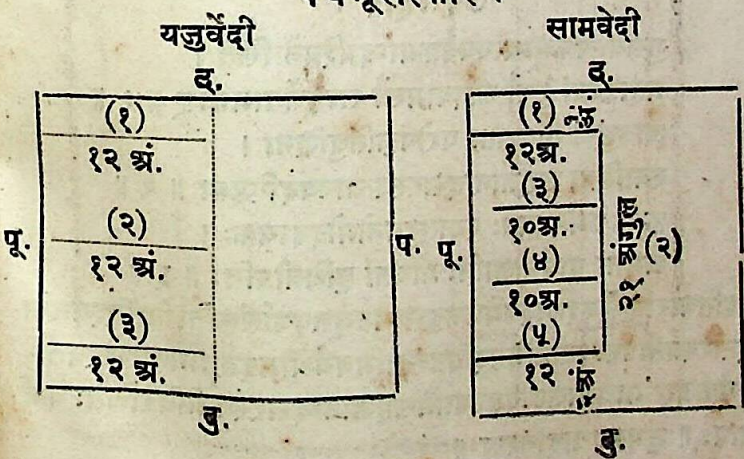

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

११७४ 2

(ग्रंथ पृ० ७७८)

६४ पदवास्तुमण्डल ।

पूर्व

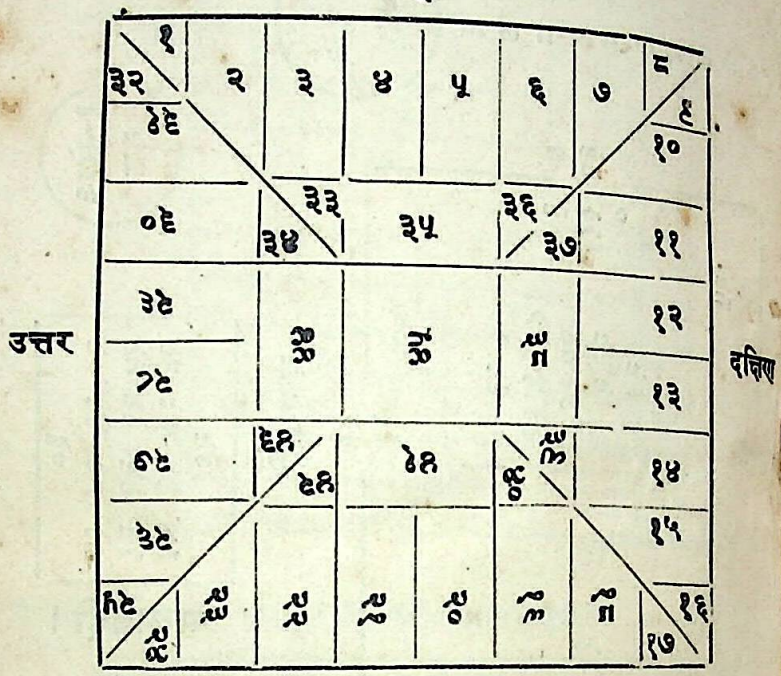

पश्चिम

विशेष-चित्रों में प्रायः दिशायें नहीं लिखी हैं। अतः प्रत्येक पृष्ठ में ऊपर पूर्व, नीचे पश्चिम, दहिने दक्षिण और बायें उत्तर समझना होगा।

उपसंहार ।

गुणवस्वंकभूम्याख्यवैक्रमाब्दाश्विने सिते ।
महाष्टम्यां गुरौ काश्यामसौ सम्पूर्णतामगात् ॥ १ ॥
आवमुक्ते निवसता परोपकृतिबुद्धिना ।
स्वामिना सहजानन्दसरस्वत्याख्यदण्डिना ॥ २ ॥
कृतः कर्मकलापः स्यात्सुमनोमोददायकः ।
अमुना पार्वतीजानिः प्रीयतां पृथिवीपतिः ॥ ३ ॥

इतिवाराणसेयदशाश्वमेधघट्टस्थमठभूतपूर्वालंकृतिश्रीमद्विश्वरूपानन्दसरस्वतीपरम्पराप्रविष्टदण्डिस्वामिवर्यश्रीमदद्वैतानन्दसरस्वतीपादपंकजभृंगायमाणदण्डिस्वामिसहजानन्दसरस्वतीविरचितः कर्मकलापः ॥ शुभम्भूयादनिशम् ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant

RajGuru Math, Shiyala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant 2

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon